श्री गुरु नानक देव जी का दर्शन एवं शिक्षाएँ

*प्रो. पूरन चंद टण्डन

* प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय

शिक्षा अपने अज्ञान की विकसनशील अमूर्त खोज है और भारतीय दर्शन में इसे बखूबी व्यंजनात्मक–आश्रय प्राप्त हुआ है। यह एक प्रमुख कारण भी रहा है कि भारतीय दार्शनिक परंपरा (Indian Philosophical Tradition) में प्रत्येक धर्म एवं सम्प्रदाय (Religion and Sects) ने धार्मिक दर्शन को आधार बनाकर मूलतः विभिन्न शिक्षाओं का ही प्रचार–प्रसार करने का कार्य किया –

''दर्शनाम् मूलः शिक्षादर्शनम्।''

ग्रीक दार्शनिक प्लेटो अपनी पुस्तक ''रिपब्लिक'' (Republic) में यह तक लिखते हैं – 'जो व्यक्ति ज्ञान को प्राप्त करने तथा नई–नई बातों को जानने के लिए रूचि प्रकट करता है तथा जो कभी संतुष्ट नहीं होता, उसे दार्शनिक कहा जाता है।''

अतः भारतीय दर्शन परंपरा में जिन लीजेंड्स (दिव्य–पुरुषों) का नाम स्वर्णाद्वारों से लिखा गया। उनमें भी गुरु नानक देव सिरमौर संत हैं।

सिक्ख परंपरा के वाहक श्री गुरु नानक देव (जन्म सम्वत् 1526 विक्रमी/1469 ई.) निर्गुण संत परंपरा के अग्रज के बतौर 'एक ओंकार' का महात्मय बताते हैं –

एक ओंकार सतनाम, कर्तापुरख, निर्मोह, निर्वैर
अकाल मरत, अजूनी सभं, गुरु परसाद।।
।।जप।।
आद सच, जुगाद सच,
है भी सच, नानक होसे भी सच।।

इसी प्रकार, ''आदर्श पुरुष'' की व्याख्या प्रस्तुत करते हुए कहते हैं –

''ऐसे जन विरले जग अंदरि,
परखि खजाने पाइआ।
जाति वरन ते भए अतीता,
ममता लोभ चुकाइआ।
नामि रते तीरथ से निरमल,
दुखु हउमै मैलु चुकाइआ।
नानकु तिंन के रन पखालै,
जिन गुरमुखि साचा भाइया।।''

गुरु नानक देव जी ब्रह्म की शाश्वता के विषय में एक–सीधे सच्चे–मार्ग के समर्थक थे –

''अकासी पाताली तूं त्रिभवणि रहिआ समाइ।
तू जल थलि महीअलि भरिपूरि
लीणाँ तूं आपे सरब समाणां।।''

गुरु का महात्म्य बतलाते हुए, उसके 'ज्ञान' से 'द्वन्द्व–नाश' की प्राप्ति का वर्णन करते हुए कहते हैं–

''सतगुरु मिलै त दुविधा भागै,
कमल विगासी मनु हरि प्रभ लागै।
जीवतु मरै महा रसु आगै।
गुरि मिलिए मिली अंक समाइया/
करि किरपा धरू महलु दिखाइआ।।''
(नानक वाणी, गउड़ी सबद–9)

मृत्य का अटल सत्य बताकर श्री गुरु नानक देव जी 'मोह–त्याग' तथा 'जीवन की नश्वरता' का बोध कराते नज़र आते हैं –

''खेलु खेह रलाईए ता जीउ केहा होई।
जलिआ सभी सिआणपा उठि चलिआ रोई।।''

लोकमंगल साधना के संदर्भ में आदि गुरु श्री नानक देव जी परमात्मा के नैकट्य का मार्ग प्रशस्त करते दिखते हैं –

''सचु करणि अभ अंतरि सेवा।
मनु तृवतासि अलत्व अभेदा।।''
– (नानक वाणी, पृ. 111)

ज्ञान–भक्ति तथा कर्म की त्रिवेणी श्री गुरु नानक देव जी द्वारा 'मैं' रूपी ''ठग'' के त्याग के साथ ''मानव–सेवा'' का वैश्विक–सूत्र प्रदेय स्वरूप प्रस्तावित किया गया –

''अपने ही सुख सों सब लागे,
क्या दारा क्या मीत।
मेरो मेरो सभी कहत हैं,
हित सों बाध्यों चीत।
अंतकाल संगी नहिं कोऊ,
भह अचरज की रीत।।''

अतः वह इस दिशा में ''नाय सुमिरन'' की श्रेष्ठता सिद्ध करते हुए कहते हैं–

''जिनी नामु धिआइआ, गए मसकति धालि।
नानक ते मुख उजले, केती छुटी नालि।।''
– (जपुजी)

मध्यकालीन भक्ति युग में जब मानव आक्रमणों से बेहद त्रस्त तथा अपने जीवन मूल्यों के प्रति शंका–भाव से भर चुका था। ऐसे में मानवतावाद के पोषक श्री गुरु नानक देव जी मनुष्य के सात्विक जीवन हेतु प्रेमभक्ति का उपदेश देते हैं–

''भाऊ भगति करि नीचु सदाए।
तऊ नानक मोखतरू पाए।''
– (आसा, म. 1)

अस्तु; सद्‌गुरु श्री गुरु नानक देव जी संपूर्ण भारतीय संत परंपरा में इस दृष्टि से भी अपनी विशिष्ट पहचान रखते हैं चूंकि वह अत्यंत विषम मध्ययुगीन दौर में

''दार्शनिकता'' तथा ''शिक्षा–प्रेषण'' के धरातल पर ''व्यावहारिक–ज्ञान'' का अमृत छिड़ककर अखिल विश्व जगत को एकता के सूत्र में पिरोने का श्रेष्ठतम् 'पुरुषार्थ' करते नज़र आते हैं –

''पवणु गुरु, पाणी पिता,
माता धरि महतु।
दिवसु राति दुइ दाई दाइआ,
खेलै सगल जगतु।।''

वर्तमान–जगत में शिक्षा एवं दर्शन की ऐसी प्रासंगिकता अन्यत्र दुर्लभ है.....।

गुरु नानक देव द्वारा रचित आदर्श समाज की संकल्पना

*डॉ. हरप्रीत कौर

* प्राचार्या, माता सुन्दरी कॉलेज फॉर वूमेन, दिल्ली विश्वविद्यालय

प्रस्तावना

आदर्श समाज की संकल्पना एवं स्थापना वांछित है परन्त आज भी हम आदर्श समाज की स्थापना नही कर पाए हैं। आदर्श समाज ऐसी जगह है जहाँ विभिन्न धर्मों, भाषाओं, वर्गों एवं सभ्याचार और अलग–अलग अनुभवों के लोग परस्पर सद्भाव, सौहार्द्र एवं एकता के साथ रहते है। ऐसे वांछित समाज में सभी धर्म, पुरुष और स्त्रियाँ, शक्तिशाली एवं असहाय तथा विभिन्न जातियों से संबंधित लोगों में परस्पर प्रेम एवं भाईचारा होना चाहिए। आदर्श समाज की महत्वपूर्ण बुनियाद आध्यात्मिक विकास की प्राप्ति है। ऐसे आदर्श स्वरूप समाज की नींव आदर्श स्वरूप संस्थाओं पर आधारित है जो कि मूल्यों जैसे न्याय, स्वतंत्रता, बराबरी, सुशासन, गरिमा इत्यादि से प्रेरित हो और जहाँ धर्म, जाति, नस्ल, स्त्री–पुरुष, अमीर–गरीब, ऊँच–नीचे आदि कोई भेदभाव न हो।

व्यक्ति का उत्थान ऐसे समाज का सर्वप्रथम लक्ष्य है। दिव्य पुरुष, गुरु नानक देव जी ने ऐसे ही आदर्श समाज की न केवल संकल्पना ही कि अपितु ऐसे ही आदर्श सकारात्मक बुनियादी सिद्धांतों पर आधारित नवीन आदर्श को करतारपुर नामक स्थान पर व्यवहार में स्थापित किया। यहाँ गुरुदेव ने नवीन जीवनशैली का प्रतिपादित किया जो कि उनके संपूर्ण जीवनकाल में प्रचारित दर्शन के गूढ़ सिद्धांतों का निचोड़ कहा जा सकता है। उनके सिद्धांत मानवीय, धार्मिक, सामाजिक एवं विश्वव्यापी आदर्शों का अनूठा समन्वय है।

सारांश यह है कि गुरु नानक देव जी के आध्यात्मिक एवं लौकिक विचारों में न केवल उस युग में जिस युग में वे अवतरित हुए थे बल्कि वर्तमान और आने वाले युगों के लिए भी एक आदर्श समाज की नींव रखी।

आदर्श समाज की संकल्पना

प्राचीन काल, मध्यकाल एवं वर्तमान में अनेकों कई राजनीतिक एवं धार्मिक महापुरुषों जैसे संतों, ऋषियों, मुनियों, पैगम्बरों, सूफी–औलियों आदि ने सर्वमान्य आदर्श समाज की संकल्पना प्रस्तुत की। समाज की बाह्य असमानताओं एवं विभिन्नताओं के बावजूद उन्होंने सांस्कृतिक, भावात्मक और आध्यात्मिक मूल्यों को प्राथमिकता दी। उस समय में हिंदुस्तान का सामाजिक परिदृश्य छुआछूत, असमानता, अंधविश्वास, राजनैतिक शोषण, नारी का तिरस्कार इत्यादि अनैतिक प्रवृत्तियों से ग्रस्त था। इस तरह के समकालीन सामाजिक व्यवस्था में गुरु जी ने आदेश दिया कि धार्मिकता, प्रांतीयता, जातीयता, सांप्रदायिकता, हिंसा, असहिष्णुता आदि संकीर्ण मनोवृत्तियों से ऊपर उठकर देश में भावात्मक और राजनैतिक एकता की अविरल धारा प्रवाहित होनी चाहिए।

व्यक्ति ऐसे आदर्श समाज में तरह–तरह की गतिविधियों में स्वतंत्रतापूर्वक भाग लेकर अपने व्यक्तित्व को सर्वांगीण विकास कर सकते हैं। ऐसे प्रबुध एवं सशक्त व्यक्तियों का व्यक्तित्व समाज में परिलक्षित होकर समाज की ताकत बन जाता है। ऐसे समाज में विभिन्न समूह एक–दूसरे के साथ मिल–जुल कर रहते है और समृद्ध एवं परिपूर्ण समाज की स्थापना करते हैं। लोक–कल्याण ऐसे समावेशी समाज का सर्वोपरि गुण है। नैतिकता एवं आध्यात्मिकता के भाव–सूत्र में गुँथ कर ही समाज के लोगों को निश्चित सकारात्मक दिशा प्राप्त हो सकती है एवं आदर्श समाज की नींव और भी दृढ़ हो सकती है। नैतिक आदर्शों पर आधारित ऐसे समाज में लोग संकीर्ण मनोवृत्तियों से उठकर भाईचारे, लोक–सेवा, दयालुता, सहानुभूति, विश्व–बंधुत्व आदि की भावना से प्रेरित होकर अपना आचार–विहार करते है।

ऐसे ही समाज की संकल्पना भारतीय संस्कृति की पृष्ठभूमि में समाहित है। इसीलिए भारतीय संस्कृति को आदर्श संस्कृति की पदवी प्राप्त है। ''वसुधैव कुटुम्बकम्'' का आदर्श समस्त संसार के लिए अनुकरणीय है। ग्रीक दार्शनिक, प्लेटो ने दार्शनिक शासक को न्यायपूर्ण समाज की नींव कहा। अरस्तू के अनुसार मानव स्वाभाविक रूप से अच्छाई से परिपूर्ण है और राज्य का कर्त्तव्य लोगों का कल्याण है। गौतम बुद्ध ने मनुष्य के शुद्ध आचरण पर बल दिया।

जे.एस. मिल के अनुसार व्यक्तिगत स्वतंत्रता (लिबर्टी) आदर्श समाज का आधार है। महात्मा गाँधी का अटल कथन था कि धर्म एवं नैतिकता रहित राजनीति मूल्यहीन है। रविन्द्रनाथ टैगोर, जो कि सिखों के प्रशंसक थे ने कहा कि ऐसा समाज टुकड़ों में नहीं बँटा हो, जहाँ मन चिंता रहित हो और सिर ऊँचा हो।

अर्थात् यह है कि वर्तमान में भी इस तरह का समाज दूरगामी वस्तु है जो हमारे समक्ष एक गुत्थी के रूप में खड़ी है। उपरोक्त लिखे और अन्य अनेकों विचारकों के विचार उस समाज के लिए उपयुक्त थे जिस युग में उन्होंने अपना मत रखा। समय, काल और परिस्थितियों के बदलने से आदर्श समाज के लिए उनके विचार यथोचित नहीं रहे और उनमें बदलाव जरूरी हो गया।

विभिन्न धर्मों ने भी आदर्शस्वरूप उत्कृष्ट समाज की परिकल्पना की आवश्यकता को समझा और मनुष्य के उत्थान के लिए ऐसे समाज को जरूरी समझा। बहुमूल्य भारतीय धार्मिक परंपरा में पैगम्बरों, धर्म के प्रवर्तकों, सम्राटों, राजाओं एवं बहुत से महान व्यक्तियों ने समावेशी विचारधारा प्रतिपादित की। इनमें से कुछ विचारकों की विचारधाराएँ अत्यन्त ही प्रचलित हुई और कुछ समय की परतों में विलुप्त हो गई।

गुरु नानक की विचारधारा

दिव्य पुरुष गुरु नानक देव जी ने नवीन एवं अनूठा धार्मिक, सामाजिक और आर्थिक दर्शन दिया जिसमें आज के आदर्श समाज की झलक दिखलाई देती है। धर्म प्रचारकों में गुरु नानक देव जी का स्थान सम्माननीय और अद्वितीय हैं क्योंकि उन्होंने सच्ची कर्मशीलता और आध्यात्मिकता का समन्वय करके व्यक्ति को जीवन जीने का ढंग सिखलाया और नवीन समाज की नींव रखी।

बेईं नदी में स्नान करने के बाद, गुरुदेव ने 'न कोई हिंदु और न कोई मुसलमान' महावाक्य उच्चारित किया जो उनके समस्त दर्शन का निचोड़ कहा जा सकता है। अपनी धार्मिक यात्राओं और उदासियों के दौरान गुरु जी ने इस सत्य को प्रचारित किया और समाज में फैले भेदभाव एवं असमानता को मिटाने हेतु लोगों को समझाया। समाज जो निम्न एवं उच्च जातियों में विभक्त था, को समतल धरातल पर लाने की पुरजोर कोशिश की। धर्म के नाम पर आधारित भेदभाव और घृणा जो सर्वत्र फैली थी को मिटाया और लोगों को प्रेम के सूत्र में बाँधा। गुरु नानक देव जी ने चारों दिशाओं में यात्राएँ की और धार्मिक मतभेदों से ग्रस्त भारतवर्ष में असाम्प्रदायिक उदार मत का प्रचार करने हेतु गुरुदेव ने देश–देशांतर की यात्राएँ की जिन्हें उदासियाँ कहा जाता है। अपनी इन धार्मिक यात्राओं के दौरान गुरुदेव विभिन्न धर्म–स्थानों के गढ़ में गए। गुरु जी हिन्दुओं के धर्म–स्थलों जैसे हरिद्वार, बनारस, काशी, पुष्कर, जगन्नाथ पुरी इत्यादि, मुसलमानों के धार्मिक केंद्रों जैसे, मक्का और बगदाद, मध्य भारत के बीहड़ जंगलों, हिमालय की गगनचुंबी चोटियां जैसे सुमेर पर्वत, नेपाल आदि, समुद्री द्वीपों जैसे श्रीलंका इत्यादि संसार के कई भागों में गए। यहाँ के धार्मिक विचारों से शून्य लोगों को उन्होंने सही राह दिखलाई और वे उनके अनुयायी बन गए। गुरुदेव के आशीर्वाद से लोगों की परेशानी, यातना और दुख दूर हो गए।

गुरु नानक देव जी समकालीन समाज में जनसाधारण पर अत्याचार किए जाते थे और उन्हें अधिकारों से वंचित रखा जाता था। ''उन्होंने अपने समय के धार्मिक, सामाजिक और आध्यात्मिक ही नहीं, राजतंत्र के पापों और अन्यायों के खिलाफ भी आवाज उठाई। पापी राजा–महाराजों, रिश्वतखोर काजियों और उदासीन प्रजा सबके प्रति उनका आक्रोश जागा'' (सिंह, सत्यनारायण, 1969)। गुरु जी ने शोषित को अन्याय के विरुद्ध आवाज उठाने को तैयार किया और जीवन में आने वाली समस्याओं से जूझने की अपार शक्ति प्रदान की।

पवित्र आचरण, परस्पर भाईचारे और निरंकार ओंकार के स्मरण के आदेश को प्रचारित किया और लोगों को इन मूल्यों को अपने जीवन में समाविष्ट करने को कहा। इन्हीं पर आधारित सुदृढ़ समाज की नींव रखी। धर्म, जाति, प्रांत आदि से विभक्त लोगों ने गुरुदेव की वाणी का अनुसरण किया और वे सिख समाज ने स्वतः ही समाविष्ट हुए। गुरुदेव का धर्म अत्यन्त ही व्यवहारिक, सहन और स्वाभाविक था। गुरु नानक देव जी ने दुनिया को ऐसा धर्म दिया जो सत्य, सेवा, सदाचार, समानता, आदर्शवाद और बलिदान की भावना से ओत–प्रोत था। अपने समय के प्रचलित धर्मों की सीमाओं से ऊपर उठकर, वे मानव धर्म के संस्थापक बन गए। इतिहास में ऐसे धर्म प्रवर्तक एवं पथ–प्रदर्शक की मिसाल हमें प्राप्त नहीं होती है जिनके द्वारा प्रतिपादित उपदेश सभी देशों, प्रांतों और बदलने काल में भी मान्य हो। वर्तमान समय के भौतिक समाज से जुड़ी समस्याओं का हल भी हमें गुरु नानक की वाणी में मिलता है क्यांकि उन्होंने जीवन के तत्व को समझ कर लोगों को जीवन जीने की जाँच सिखलाई और जीवन के गूढ़ सत्य से अवगत करवाया।

1. गुरु नानक द्वारा रचित आदर्श समाज के आधारभूत स्तम्भ

गुरु नानक देव जी के आदर्श समाज की संकल्पना में व्यक्ति एवं समाज के उत्थान से संबद्ध आधारभूत तथ्य है जिसकी आधुनिक युग में भी प्रासंगिकता है। व्यक्ति विशेष और मानव समाज के उत्थान में नानक वाणी का योगदान अमूल्य है जो कि निम्नलिखित है –

ईमानदारी और मेहनत से जीवन जीने का उपदेश

गुरु नानक ने अपने समकालीन समाज को क्रांतिकारी दिशा प्रदान की जिस पर चलकर सिख पंथ का विशिष्ट रूप विकसित हुआ। गुरुदेव से पूर्व समाज से पलायन किए हुए योगियों और सन्यासियों का बोलबाला था। बुद्ध धर्म का प्रभुत्व खत्म होते–होते, सन्यासियों ने दूर जंगलों और पहाड़ों में शरण ले ली थी। यह सन्यासियों की श्रेणी हिन्दू एवं मुस्लिम धर्मों के मतभेदों से अपने आप को बचाना चाहते थे। चौदहवीं एवं पन्द्रहवीं शताब्दी तक इन संन्यासियों के अनुनायियों का घेरा बड़ा होता जा रहा था। गुरु नानक ने इस पलायनवादी वृत्ति का पुरजोर खण्डन किया और शिक्षा दी कि व्यक्ति को दुनिया की जिम्मेदारियों से पलायन नही करना चाहिए। ''इस गतिशीलता को गुरु जी ने जीवन दर्शन का प्रमुख तत्व स्वीकार किया'' (कोहली, एस.एस., 1969)। व्यक्ति समाज का अभिन्न अंग है। गुरु जी ने गृहस्थ जीवन को ही ''प्रभु स्मरण करते हुए प्रभु मिलाप का मार्ग दर्शाया'' (जाती, राजेन्द्र सिंह, 2019) और स्वयं भी गृहस्थ जीवन जिया। 'कीरत करो' का उपदेश देकर गुरुदेव ने अपने जीवन के द्वारा इसकी मिसाल रखी।

गुरु नानक के पिता मेहता कालू चाहते थे कि वे दुकानदारी का व्यवसाय अपनाए। यद्यपि गुरु नानक का चित्त तो प्रभु में लीन था, उन्होंने मोदीखाने में कार्य किया और अपनी जीविका ईमानदारी से कमाई। यहाँ कार्य करते हुए अपने हिस्से के अनाज में से व गरीबों की मदद करते और अनाज प्रचुर मात्रा में बाँट दिया करते थे। अपने अंत के पड़ाव करतारपुर में गुरुदेव ने उदासी के वस्त्र (बाँध) उतार कर खेती–बाड़ी का कार्य किया और अपने अनुयायियों को भी खेती का कार्य करने की प्रेरणा दी। यहाँ पर गुरु जी की दिनचर्या बहुत ही संयमित थी। भोर होते ही गुरुदेव 21वीं सदी में स्नान करके और प्रभु स्मरण के पश्चात् गुरुदेव खेतों में अनाज उगाते थे। वहाँ उत्पन्न हुए अनाज को लंकर में उपयोग किया जाता है और गरीबों और जरूरतमंदों की आवश्यकता को पूरा

किया जाता। यहाँ पर ही 'वे बाँट कर खाओ' (वंड छको) के फलसफे को सुदृढ़ किया।

सज्जन ठग वाली साखी भी हमें सत्यनिष्ठा से कमाई करने की प्रेरणा देती है। सज्जन ठग जो मुसाफिरों को अपना भेष बदलकर लूटता था को गुरु के शब्द गायन ने परिवर्तित कर दिया। गुरु जी ने सज्जन ठग को समझाया कि बाहरी दिखावे एवं आडम्बर से कुछ नहीं होता और ईश्वर समाज से ही जन्म–मरण के बँधन से छुटकारा पाया जा सकता है।

एक साखी के अनुसार, गुरु नानक देव जी एक गाँव में पहुँचे। वहाँ उन्होंने पानी पीने की इच्छा जाहिर की। गुरुदेव की प्रसिद्धि चारों ओर फैली थी, अतः गाँव के धनाढ्य व्यक्ति ने लोटे में जल भरा और गुरुदेव की सेवा में उपस्थित हो गया। गुरु नानक देव ने उसके हाथ से पानी पीने से यह कहकर मना कर दिया कि उसके हाथों में मेहनत के निशान नहीं थे। इसके उपरान्त गुरु जी ने पानी उस व्यक्ति के हाथ से पिया जिसके हाथ में मेहनत के निशान मौजूद थे।

सैयदपुर गाँव में गुरु जी ने कथित नीची जाति के भाई लालो के घर रूखी–सूखी रोटी खाना स्वीकार किया और जमींदार मलिक भागों के घर नहीं क्योंकि उसकी कमाई जूल्म द्वारा कमाई हुई थी इसलिए खून से सनी थी। इसके विपरीत, भाई लालो मेहनत–मजदूरी करता था और अपने परिश्रम की कमाई दूसरों में बाँटता भी था।

सच्चे सौदे की घटना में गुरु जी ने गरीब साधुओं को अनाज एवं अन्य जरूरत की चीज़े बाँट कर अनूठी संस्था स्थापित की जो आज भी अविरल चल रही है। लंगर संस्था में अमीर–गरीब, ऊँचे–नीचे, स्त्री–पुरुष इत्यादि कोई भी भेदभाव नं होता और सभी एक पंक्तिमें बैठकर भोजन ग्रहण करते है।

इन सभी जनश्रुतियों में गुरुदेव ने पवित्र कमाई एवं निष्कलुष कर्म पर बल दिया। उनके उपदेश का मूल, 'मेहनत करो, बाँट कर खाओ और नाम जपो' व्यक्ति के जीवन को सहज रूप से एक नियमित बँधन में बाँधता है। गुरु जी नेजो कहा उसे अपने जीवन में ढाल कर लोगों के समक्ष अनूठी मिसाल रखी।

2. व्यक्ति की मुक्ति का राह

प्रवृत्ति मार्ग यानि गृहस्थ अपना कर भी साधना करने वाली प्रणाली को निवृत्ति मार्ग या वन की ओर प्रस्थान करके तप करने की पद्धति को गुरु ने श्रेष्ठ माना। आदर्श पुरुष गृहस्थ को अपना कर भी इससे निर्लिप्त रहते है।

जैसे जल माटिकमल निरातमु भुरगाई नैसाणे।
सुरति सबद भवसागरतरीऐ नानक नाम बखाणे।।
(गुरु ग्रंथ साहिब, पृ. 939)

मायिक प्रपंचों में रहकर भी मोक्ष–प्राप्ति हो सकती है,।
सचि सिमरिऐ होवे परगासु। ताते बिखिआ महि रहे उदासु।
सतिगुरु की ऐसी वडिआई। पुतरू कलज विचे गति पाई।।
(गुरु ग्रंथ साहिब, पृ. 661)

व्यक्ति मोक्ष इसी जीवन में प्राप्त कर सकता है। गुरु नानक देव जी द्वारा प्रतिपादित मोक्ष का राह सद्मार्ग, शुभ कर्मों और सदाचार पर आधारित है। इसी दुनिया की जिम्मेदारियाँ उठाते हुए प्रभु के मार्ग पर चलना ही मोक्ष का मार्ग है। गुरु जी के अनुसार कर्मकांडो, कट्टरता और संकीर्णता का मार्ग त्याग कर, आचार और विचार कर समन्वय करना चाहिए।

मनुष्य के जीवन में सांसारिक पदार्थों की प्रीत की जगह परमात्मा के प्रेम की प्रधानता होनी चाहिए। गुरु नानक देव ने परमात्मा के लिए 'सतिनाम' शब्द का प्रयोग किया। जपुजी साहिब की चौथी पउड़ी में गुरु जी ने उच्चारण किया – अमृत वेला सचु नाउ वडिआई वीचार।

सर्वशक्तिमान परमात्मा ने सारे ब्रह्मांड की रचना की। अन्य धार्मिक सुधारकों से आगे बढ़कर उन्होंने अवतारों की कल्पना का भी खण्डन किया। गुरु जी की विलक्षणता इनमें भी नज़र आती है कि उन्होंने स्वयं भी ईश्वर होने का दावा नहीं किया। उनका कथन था –

गुण इहो होरू नाही कोई।
न को होआ न को होई।
(गुरु ग्रंथ साहिब, पृ. 349)

परमात्मा 'करता पुरख' है जिसके एक हुक्म से समस्त सृष्टि का निर्माण हुआ है। 'कीता पसाऊ एकै कवाओ' (गुरु ग्रंथ साहिब, पृ. 169) एवं 'घट–घट जोत सवई (गुरु ग्रंथ साहिब, पृ. 597)।

सृष्टि का अद्भुत कर्त्ता होने के साथ परमात्मा उसके कण–कण में व्याप्त है एवं समस्त सृष्टि का संचालक भी है। इस सारी सृष्टि का रहस्य भी परमात्मा स्वयं ही जानता है क्योंकि उसी का प्रसार हम समस्त सृष्टि के विस्तार में देखते हैं।

आपे करता पुरखु विधाता। जिनि आपे आपि उपाइ पछाता।
आपे सतिगुर आपे सेवक आपे स्त्रिसटि उपाई हे।
(गुरु ग्रंथ साहिब, पृ. 1025)

''परमात्मा के एकत्व का विश्लेषण करते हुए मल्हार गना में गुरु नानक देव जी का कथन है कि परमात्मा आप ही पट्टी है, आप ही लेखनी है तथा उसके ऊपर लिखा हुआ लेखक भी वह स्वयं ही है।'' (जग्गी, डॉ. गुरशरन कौर, 2002)

परमात्मा 'सरब शक्तिमान, सख सम्रंथ, सरब व्याप्त और सरब रूपी' है। परमात्मा निरवैर यानि वैर रहित है और सदा सलायित निरंकार है। परमात्मा का परम गुण 'अंजुनी' है अर्थात् वह न ही जन्म धारण करता है और न ही मृत्यु को प्राप्त होता है। परमात्मा का वास सापू, पवित्र और सच्चे ह्रदय में होता है। जब माया रूपी पर्दा हटता है, मन पवित्र और सच्चा हो जाता है और ईश्वर ऐसे ही सच्चे ह्रदय में निवास करता है। इस संसार में सदाचारी मनुष्य ही सद्गति को प्राप्त कर सकते है।

राती रूती थिती वार। पवन पाणी अगनी पाताल।
हिल विच धरती थापि ररदो धरम साल।।
(गुरु ग्रंथ साहिब, पृ. 7)

जो व्यक्ति नाम स्मरण करके आनन्दित होता है वह मोक्ष का द्वार पाता है। गुरु जी के उपदेश अनुसार जीवात्मा का मुख्य उद्देश्य है परम तत्व परमात्मा में विलीन होना जो शाश्वत प्रभु की स्तुति करने से प्राप्त होता है। शरीर रूपी जीवन की सफलता चंचलता को त्याग कर, सत्य के मार्ग पर अग्रसर होकर सम्पूर्ण हरि को पाने में है।

गुरमुख एवं मनसुख व्यक्ति में अंतर है, ''दुर्वृतियों में अधिक रूचि रखने वाला व्यक्ति 'मनमुख' है तथा इसके विपरीत सद्वृत्तियों में रूचि रखने वाला एवं

सन्मार्ग पर चलने वाला व्यक्ति 'गुरुमुख' है। (जग्गी, डॉ. गुरशरन कौर, 2002) गुरमुख व्यक्ति वह है जो ईश्वर के समीप रहता है। सच्चरित्रता से आत्मा की शुद्धि होती है और गुरुमुख आध्यात्मिक शिखर पर पहुँच जाता है। गुरु नानक ने गुरमुख एवं मनसुख व्यक्ति के भेद को स्पष्ट रूप से समझाया। गुरमुख व्यक्ति के विपरीत मनसुख व्यक्ति की कड़ी ईश्वर से टूटी होती है। इसलिए जन्म–मरण के फेर में पड़ कर उनको भटकना पड़ता है।

मनमुखि सोझी ना पवै बीछुड़ि चोटा खाइ।

(गुरु ग्रंथ साहिब, पृ. 60)

गुरमुख परम ज्योति को पहचानते है और मनसुख अंधकार में भटकते है। मनुष्य के हृदय में माया का वास होता है।

मनमुखि मूड़ माइआ चित वासु।

(गुरु ग्रंथ साहिब, पृ. 22)

मनसुख का विनाश अवश्यंभावी है।

मनमुखि विनसै आवै जाइ।

(गुरु ग्रंथ साहिब, पृ. 939)

मनमुख आपना सब कुछ हार बैठते है और गुरमुख प्रफुल्लित होते है।

मनमुखि खोइआ गुरमुखि लाधा।

(गुरु ग्रंथ साहिब, पृ. 939)

अतः बुरे एवं अशुभ बंधनकारी कर्म जो विषय–वासनाओं के अधीन किए जाते है, और जो मनुष्य को सांसारिक प्रपंच से बाहर नहीं निकलने देते है, का त्याग करना चाहिए। मनुष्य का जीवन सार्वलौकिक मूल्यों जैसे सच (सत), संतोष एवं विचार पर आधारित होना चाहिए। अपने अहमं को त्याग कर अपने जीवन कर्ता के साथ अटूट सम्बन्ध बनाना चाहिए। संसार में निर्लिप्त रहते हुए मनुष्य को नाम स्मरण में लीन रहना चाहिए। मनुष्य को कमल पुष्प की भाँति होना चाहिए जो यद्यपि गंदले पानी में उगता है, मलीनता से निर्लिप्त रहता है। अपने कर्मों और कथनी में समन्वय करके मनुष्य के आन्तरिक एवं बाह्य स्वरूप में एकात्मिकता स्थापित की जा सकती है। नाम स्मरण, सच्ची साधना और सेवा से मनुष्य अपने लौकिक एवं पार–लौकिक जीवन को सफल बना सकता है। गुरु जी ने समाज में लोगों के चरित्र निर्माण एवं आध्यात्मिक पुनर्जीवन पर बल दिया। व्यक्ति ही मिल–जुल कर समाज का निर्माण करते है। आत्मा को शुद्ध करके और सच्चे आचरण से मनुष्य लौकिक एवं आध्यात्मिक उन्नति के शिखर पर पहुँच जाता है। 'सच कभी पुराना नहीं होता। एक बार मन लग जाए तो फिर कभी पृथक नहीं होता।' (सिंह, जोध 1969) नाम जपने से ही परम तत्व अर्थात् आत्मा सत्य का अनुभव कर सकती है। साधक की प्रगति के मार्ग को सीढ़ी के वर्णन में गुरु नानक की स्वतन्त्र कल्पना दिखलाई देती है। ''सगुण–निर्गुण का विवेचन, योगसाधन, गुण–विकास, नाम–जप वगैरह सबका समन्वय करने में, नानकजीु की कुशलता दिखती है'' (विनोबा, 2010)। परमात्मा के गुण जो कि अमूल्य हैं उन्हें आत्मसात् करके जो कार्य करते है वे अनन्त गुण लेकर ईश्वर में समा जाते हैं। अतः नानक की वाणी से यह प्रेरणा मिलती है कि सतत् परमेश्वर के गुण गाए जाए क्योंकि ईश्वर की कृपा से ज्ञान अर्जित होगा एवं मुक्ति प्राप्त होगी।

गुरु नानक देव जी ने थोथी रस्मों, मूर्ति–पूजा, दिखावे और अनाचार का खण्डन किया। गुरु जी पहले धर्म के प्रवर्तक थे, जिन्होंने सामाजिक जीवन में सारे मनुष्यों की बराबरी का सिद्धांत स्वीकार किया और नीची जात वाले लोगों को अहसास करवाया कि सब ईश्वर की संतान है और सब में ईश्वर की ज्योति समाई हुई है। ''इस तरह हिंदू धर्म मे वर्ण–आश्रम को ही गुरु जी ने सिद्धांतक रूप में अस्वीकृत किया।'' (भट्टी, सुरजीत सिंह, 2014)

वेईं नदी में स्नान करने के पश्चात् उन्होंने कहा, 'न कोई हिन्दू, न कोई मुसलमान' और उन्होंने दोनों धर्मों के आडम्बर और पाखण्ड से दूर रहने को कहा। गुरु जी ने केवल निरंकार ईश्वर की आराधना की और वे जहाँ भी गए उनके बहुत से अनुनायी बन गए।

''बाबा नानक ने कहा कि समाज काजी, ब्राह्मण और जोगियों की दिशा–निर्देश में हैं, परन्तु उन सब का नैतिक पतन हो चुका है।'' इसके साथ, इन तीनों ने अपना नाश दुराचरण द्वारा निश्चित कर लिया था। नानक ने उन्हें आचार का पथ दर्शाया जो कि गुरु की कृपा के बिना संभव नहीं है क्योंकि वह ही एक ईश्वर की महिमा जानता है। वह स्वयं भी पार हो जाता है और अपनी सारी पीढ़ी को भी पार करता है। (हबीब, डॉ. मोहम्मद, 2018)

सच्चे मुसलमान के गुण उन्होंने बतलाए, जो कि धर्म में अटल विश्वास, अहंकार का त्याग और अल्लाह की आज्ञा में रहना है। गुरुदेव ने कहा कि सच्चा मुसलमान वह है जो बुराईयों से दूर है।

मुसलमाणु सोई मल खोवै।

(गुरु ग्रंथ साहिब, पृ. 662)

गुरु जी उन्हें सच्ची शरियत और कलमें को पालन करने को कहा। शरई कर्मकाण्ड को समझाने हेतु उन्होंने वाणी का उच्चारण किया कि –

पंजि लिवाजा वखत पंजि पंजा पंजे नाउ।
पहिला सचु हलालु दुइ तोजा खैर खुदाइ।
चउथी नीअति रास मनु पंजाबी सिफति सनाइ।
करणी कलमा आखि के ता मुसलमाणु सदाइ।
नानक जतै कुड़िआर कूड़े, कूड़ी पाइ।

(गुरु ग्रंथ साहिब, पृ. 141)

एक दिन गुरु नानक देव जी मस्जिद गए। वहाँ नावाब और काज़ी, दोनों को उन्होंने पाखंडों से सचेत किया और समझाया कि अल्लाह के एकाग्र चित्त होकर याद करके ही पाया जा सकता है।

इसी प्रकार गुरुदेव ने हिन्दू धर्म के तीन आधारभूत स्तंभों, पुजारी, जाति और वेद के बारे में आलोचनात्मक रवैया किया (सिंह, सतबीर, 1996)।

समाज के ठेकेदार ब्राह्मणों के धार्मिक पाखंडों को उन्होंने निम्नलिखिता श्लोक में उजागर किया है।

दइआ कपाह संतोखु सूतु जत गंढी सतु वटु।
एहु उनेउ जीआ का हइे न पाइे धतु।
ना ठहु तुटै न मुल लगै न एहु जलै न जाइ।
धनु सु मागस नानका जो गलि चले पाइ।

(गुरु ग्रंथ साहिब, पृ. 471)

गुरु जी अपनी वाणी में बाहरी आचारों और आडम्बरों का खुल कर खण्डन किया और जनसाधारण को इन बेकार की रूढ़ परम्पराओं से दूर रहने को कहा –

मूजि सिला तीरथ बनवासा भरमत डोलत भए उदासा

मनि मैले सूचा किउ होई साचि मिलै पावै पति सोई।
(गुरु ग्रंथ साहिब, पृ. 686)

गुरु नानक देव जी के अनुसार तीर्थ स्थान में स्नान करने जितना पुण्य गुरु के दर्शन करने से प्राप्त हो जाता है।

अठसठि तीरथ मजना गुर दरसु पशपति होई।।
(गुरु ग्रंथ साहिब, पृ. 597)

तीर्थ यथार्थ में लोगों के मन में ही है और आत्मविश्लेषण से पाया जा सकता है।

मनु मंदरू तनु केस कलंदरू घट ही तीरथि नावा।
एकु सबदु मैरे प्रानि बसतु है, बहुड़ि जनमि न आवा।
(गुरु ग्रंथ साहिब, पृ. 795)

गुरुदेव ने योग संबंधी सभी विश्वासों को पाखंडपूर्ण साबित करके अस्वीकार कर दिया। मन के विषय–विकारों को नियंत्रित करके और गुरु शब्द के द्वारा ही आध्यात्मिक आनंद की प्राप्ति हो सकती है। योग साधना नाम साधना के बगैर नहीं हो सकती है।

यौगिक कर्मकाण्ड का खण्डन गुरु नानक देव जी ने इन शब्दों में किया –

मुंदा संतोखु सरम पतु झोली विभाजन की करहि विभूति।
खिंथा कालु कुआरी कारया जुगति डंडा परतोति।
आई पंथी सगल जमाती मनि जीतै जगु जीतु।
(जपुजी, पउडी, 8)

योगियों के ऊपरी दिखावे जैसे कानों में कुण्डल पहनना, बालों को मुंडा लेना एवं शरीर पर भस्म मल लेना इत्यादि व्यर्थ और नाम स्मरण और शब्द द्वारा ही शारीरिक शांति और पारलौकिक मुक्ति प्राप्त हो सकती है। गुरु जी ने योगियों को समझाया कि तांत्रिक चिन्हों को अपनाने एवं असाधारण शक्तियों को दिखाने के स्थान पर आध्यात्मिक और नैतिक गुणों को ग्रहण करने चाहिए। इन कर्मकाण्डों ने जो धर्म की बाहरी प्रक्रियाएँ हैने धर्म के वास्तविक स्वरूप को भुला दिया था।

मानव द्वारा कृत जातिगत मतभेदों का पुरजोर खण्डन किया। गुरुदेव की वाणी में अंकित है –

फकड़ जाती फकडु नॉऊ।
सभना जीआ एका थाउ।।
(गुरु ग्रंथ साहिब, पृ. 83)

गुरु नानक ने कहा कि परमात्मा के हुक्म को पहचान कर उस पर चलना ही सच्चे जीवन का सार है। परमात्मा ने सभी मनुष्यों को बराबर बनाया है।

जागहु जोति न पूछहु जाती आगै जाति न हे।
(गुरु ग्रंथ साहिब, पृ. 349)

परमात्मा के समक्ष जाति–पांति को कोई मतभेद नहीं है। गुरु जी ने कहा कि कृत कर्मो से ही मानव जीवन का विकास होता है और अपने किरत (कृत) कर्म का फल मनुष्य को भोगना पड़ता है। यहाँ तक की मर्यादा पुरुषोत्तम राम को भी अपनी पत्नी ओर भाई का वियोग सहना पड़ा था। अतः कृत कर्मो की प्रधानता है परन्तु फिर भी 'कर्मवाद' का महत्व है क्योंकि मनुष्य की कामनाओं का निपटारा कर्मों पर निर्भर है।

करणी कागदु मनु मसवाणी बुरा भला दुई लेख पए।
जिउ जिउ किरतु चलाए तिउ चलीऐ तउ गुण नाहं अंतु हरे।
(गुरु ग्रंथ साहिब, पृ. 990)

परमात्मा का वास मनुष्य के हृदय में होना चाहिए और परमात्मा को भुलाने से मनुष्य के गुणों का ह्रास हो जाता है।

चित चेतसि की नहीं बावरिआ।
हरि बिसरत तेरे गुण गलिया।। रहाउ।
(गुरु ग्रंथ साहिब, पृ. 99)

गुरु नानक और भाई परदाना का आजीवन साथ यह दर्शाता है कि वह 'मरासी' थे परन्तु जब गुरु जी वाणी का उच्चारण करते थे तो भाई मरदाना रबाब की मधुर धुन बजाते थे। वाणी और रबाब के मेल से सारा वातावरण सुरमयी और स्वर्णिम हो जाता था। भाई लालो जो की नीची जात के थे। के घर गुरुदेव ने रूखा–सूखा खाना पसंद किया क्योंकि उसकी कमाई पवित्र थी। गुरु नानक द्वारा स्थापित लंगर की संस्था ने समाज में एकता स्थापित करने का कार्य किया। करतारपुर में सभी श्रद्धालु एक पंक्ति में बैठकर भोजन ग्रहण करते जो कि बराबरी का व्यवहारिक उदाहरण था।

गुरु नानक देव जी द्वारा स्थापित समाज में ज्ञान का महत्वपूर्ण स्थान था। गुरुदेव का कथन है कि व्यक्ति ब्रह्म ज्ञान द्वारा ही आदर्श समाज की स्थापना कर सकता है। ज्ञान, शिक्षा इत्यादि द्वारा व्यक्ति की क्षमता और आंतरिक शक्ति का संवर्धन होता है। इसके साथ समाज की परिवृद्धि भी होती है। विद्या और परोपकार के सुमेल से मनुष्यों के उत्कृष्ट एवं समाज सेवी व्यक्तित्व का संवर्धन होता है जिसके द्वारा ही समाज का लोक कल्याणकारी स्वरूप संभव है।

गुरु मनुष्य के लिए ज्ञान का माध्यम है। गुरु की महिमा स्पष्ट करते हुए, गुरु नानक देव जी ने कहा कि आध्यात्मिक क्षेत्र में कोई भी कथन गुरु के बगैर संभव नहीं है।

अठसठि तीरथ मनना, गुरु दुस्सु पशपति होई।
(गुरु ग्रंथ साहिब, पृ. 597)

गुरु जी जिज्ञासु के मन के अंधकार को दूर करके ज्ञान का बोध करवा सकता है। गुरु जीवात्मा को परमात्मा से मिलाप का राह दिखलाता है। गुरु के समक्ष समर्पण के बिना सुख प्राप्त करना संभव नहीं है।

बिन गुर भगति नाही सुखु थीआ।
(गुरु ग्रंथ साहिब, पृ. 832)

एवं जो गुरु से मुख फेर लेते है, वे जन्म–मरण के चक्र में फँसे रहते हैं।

गुर ते मुहु फेरे तिन्ह जोति भवाईऐ।
(गुरु ग्रंथ साहिब, पृ. 832)

गुरु के बगैर ज्ञान अर्जित करना संभव नही है।

गिआन का बधा मनु रहै गुर बिनु गिआनु न होई।
(गुरु ग्रंथ साहिब, पृ. 469)

गुरु रूपी बेड़ी पर चढ़ने वाले व्यक्ति भवसागर से पार हो जाते हैं।

गुरु सरू सागर बहिथो गुरु तीरथ दरीआउ।
(गुरु ग्रंथ साहिब, पृ. 17)

बारहमाहां (बारहमासा जो कि वर्ष के बारह महीनों पर आधारित प्रेम–गीत है) में गुरुदेव ने स्वयं को प्रभु की नवविवाहित के रूप में चित्रण किया है। पतिसूचक कई नामों के द्वारा परमात्मा को दम्पत्ति प्रेम के अधीन अति मनमोहक स्वरूप से चित्रित किया। जीवात्मा रूपी स्त्री अपने पति के वियोग में व्याकुल है जो नाम रूपी अमृत गुरु के उपदेश द्वारा ही ग्रहण करती है।

गुरु की प्राप्ति परमात्मा की कृपा दृष्टि द्वारा ही

संभव है। गुरु में परमात्मा के उच्च गुणों का निवास है एवं मानवता का उद्धार गुरु के माध्यम द्वारा ही संभव है। गुरु माध्यम है जिसके द्वारा परमात्मा का मिलन संभव है। सति संगत में नाम स्मरण और कीर्तन प्रभु प्राप्ति के माधव है। सति संगत पारस पत्थर की भाँति है जिसके स्पर्श मात्र से मनमुख रूपी लोहा गुरुमुख रूपी सोने में परिवर्तित हो जाता है। सति संगत में परमात्मा का वास है और जन्म–मरण के बंधन से मुक्ति मिल जाती है।

साध–संगति महि हरि रसु पाईऐ।
गुरि मिलिऐ ऐ जम भउ भागा।
नानक राम नामु जांति गुरमुखि
हरि पाए मसतकि भागा।

नाम साधना से व्यक्ति के दुखों और पापों का विनाश होता है और आवागमन के फेर से मुक्ति प्राप्त करके व्यक्ति भवसागर के पार हो जाता है। साधक निर्लिप्त रह कर एवं साधना में तल्लीन रहकर भवसागर के पार जा सकता है।

सो गिआनी जिनि सबद लिव लाई।
(गुरु ग्रंथ साहिब, पृ. 83)

उपसंहार

गुरु नानक देव जो अलौकिक व्यक्तित्व के धनी थे एवं उनके विचार क्रांतिकारी थे। गुरुदेव के आध्यात्मिक दर्शन ने नवीन समाज की संरचना की जो भेदभाव रहित था। मानव के जीवन में प्रेम, शांति और संतुलन स्थापित करने हेतु नवीन दृष्टि प्रदान की। गुरु नानक जगत गुरु और अमन स्थापित करने वाले थे (सिंह, सुरिंदर, 2019)।

गुरु के उपदेश द्वारा वर्षों से दबे लोगों में आत्म गौरव और नवीन चेतना का संचार हुआ। समाज और धर्म में व्याप्त बुराइयों का समूल विनाश करने के लिए गुरु जी ने धर्मयुद्ध शुरू किया। समाज में व्याप्त बुराइयों जैसे कट्टरता, पाखंड, अंधविश्वास इत्यादि से जन–साधारण को मुक्त किया। अपने अनुयायियों को परमात्मा से जोड़ कर सांसारिक तृष्णा, बैर और भय के बंधन से मुक्ति कर दिया। करतारपुर में बसने के पश्चात् गुरुजी ने अपने द्वारा प्रचारित सिद्धांतों को व्यक्ति के व्यावहारिक जीवन में ढाल कर आदर्श एवं उत्कृष्ट समाज की नींव रखी। जो कि व्यक्तिगत और सामाजिक आचरण और आचार के तत्व एवं मूल्थ कौम के लिए और संसार भर के लिए मार्गदर्शक का कार्य करता है। (कौर, हरप्रीत, 2018)

अतः गुरु नानक देव जी का विलक्षण समन्वयवादी दर्शन मनुष्य के बाहरी आडम्बरों से हटकर एक उत्कृष्ट समाज की रचना करने की प्रेरणा देता है। अलग–अलग धर्मों और सम्प्रदायों को प्रेमपूर्वक जीवन जीने को प्रेरणा देकर, उन्हें बंधुत्व के अमिट बंधन में बाँध कर जीवन जीने की ओर आकृष्ट करता है। गुरु जी के गूढ़ दर्शन का प्रभाव आज भी कायम है और लोगों को आदर्श जीवन जिसकी नींव भाईचारे, आदर्शवाद, सच्चाई, सेवा, सहनशीलता, सद्भावना और बलिदान पर आधारित है की ओर प्रेरित कर रहा है। सिख धर्म के साढ़े पाँच सौ वर्ष का उत्सव 2019 में मनाते हुए, गुरु नानक देव जी की विचारधारा को जन–जन तक पहुँचाना ही मानवता का उद्देश्य होना चाहिए।

संदर्भ

1. सिंह, सत्यनारायण, 'गुरु नानक की सांस्कृतिक देन', गुरु नानक प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, 1969.
2. सिंह, जोध, 'गुरु नानक की सांस्कृतिक देन', गुरु नानक प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, 1969.
3. Kohli, S.S., 'Philosophy of Guru Nanak', Punjab University, Chandigarh-I, 1969.
4. जाली, राजिन्द्र सिंह, 'भूले मारग जिन्हें बताईआ शब्द फाउंडेशन, अमृतसर, 2019.
5. जग्गी, डॉ. गुरशरन कौर, 'गुरु नानक की प्रेम–भक्ति', वेलविश पब्लिशर्स, दिल्ली, 2002.
6. विनोबा, जपुली, 'सर्व–सेवा–संघ प्रकाशन', राजघाट, वाराणसी, तेरहवां संस्करण, 2010.
7. भट्टी, सुरजीत सिंह, 'श्री गुरु नानक देव अते उनां दा समां', संपादक–कौर, डॉ. हरबंस, 'गुरु नानक देव जी : जीवन ते विचारधारा, अरशी पब्लिशर्स, नई दिल्ली, 2019.
8. Habib, Dr. Mohd, 'Guru Nanak : The Pioneer of Universal Values', in Studies in Sikhism and Comparative Religion, Vol. XL, No.1, January-June, 2018.
9. सिंह, सतबीर, बालियो चिरागा (जीवनी गुरु नानक देव जी), न्यू बुक कम्पनी, जालंधर, 1996.
10. Kaur, Harpreet, 'Guru Nanak's Model Community : Kartarpur and its Relevance', in Studies in in Studies in Sikhism and Comparative Religion, Vol. XL, No.1, January-June, 2018.
11. Singh, Surender, 'The Seed of Sikhism : How it Flourished Under The First Five Gurus', in The Sikh Review, Vol. 67:05, No. 785, May 2019.

श्री गुरु नानक देव जी के विचारों की प्रासंगिकता

*डॉ दीपमाला

* सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग, श्री गुरु नानक देव खालसा कॉलेज देव नगर, नई दिल्ली–110005 दिल्ली विश्वविद्यालय

भारत की पावन भूमि पर कई संत–महात्मा अवतरित हुए हैं, जिन्होंने धर्म से विमुख सामान्य मनुष्य में अध्यात्म की चेतना जागृत कर उसका नाता ईश्वरीय मार्ग से जोड़ा है। ऐसे ही एक अलौकिक अवतार गुरु नानकदेव जी हैं। कहा जाता है कि गुरु नानक देवजी का आगमन ऐसे युग में हुआ जो इस देश के इतिहास के सबसे अंधेरे युगों में था। उनका जन्म 1469 में लाहौर से 30 मील दूर दक्षिण–पश्चिम में तलवंडी रायभोय नामक स्थान पर हुआ जो अब पाकिस्तान में है। बाद में गुरुजी के सम्मान में इस स्थान का नाम ननकाना साहिब रखा गया। श्री गुरु नानकदेव को संत, कवि और समाज सुधारक के रूप में जाना जाता है।

गुरु नानक देव एक संत और सन्यासी जरूर थे पर उन्होंने संसार से नाता नहीं तोड़ा था। वह पूर्ण पारिवारिक और सामाजिक जीवन व्यतीत करते हुए भी जीवनमुक्त थे। मायाजन्य विकार उनके पास फटके तक नहीं थे। मध्य युग के आम संतो और भक्तों की तरह उन्होंने वनों में एकांतवास नहीं किया था। जीवन के द्वंद्व और संघर्षों से भयभीत होकर पलायन कर जाना उनके स्वभाव में नहीं था। सिर तली पर रखकर चलने की मानसिकता थी उनमें। वह लोक–जीवन से भलीभांति परिचित थे। भारतीय समाज का कोई भी ऐसा वर्ग या घटक नहीं है जिसकी और उनका ध्यान ना गया हो। उनकी वाणीयां पढ़कर यह स्पष्ट झलकने लगता है कि वह आम आदमी की प्रवृत्तियों और मानसिकताओं की अच्छी पहचान रखते थे। वह बहुत सही अर्थों में भारतीय जन जीवन के चितेरे थे। उनके जीवन का समूचा कार्यकलाप लोकहितैषिता से प्रेरित है। आम गृहस्थों का ही नहीं पंडित–पुरोहितों,पुजारियों, शिक्षकों, समाज–सुधारकों, धर्माचार्यों और यहां तक कि शासकों का भी उन्होंने मार्गदर्शन किया है। धर्मध्वजियों, पाखंडियों, चोरों बदमाशों, ठगों और हत्यारों को भी वह सही मार्ग पर लाए हैं। उनकी वाणी में काव्योचित लालित्य भी है और नए कवियों जैसी सपाटबयानी भी। उनकी व्यंगयोक्तियां पैनी होती हुई भी सौम्यता लिए हुए हैं। उनके द्वारा प्रयुक्त वाक्यांश इतने तथ्यात्मक हैं कि उन्होंने बड़ी सार्थक लोकोक्तियों का दर्जा प्राप्त कर लिया है। उनकी वाणी में किसानों, खेतिहर मजदूरों, कारीगरों, दस्तकारों तथा तरह–तरह के वाणिज्य व्यवसाय करने वालों के सुख–दुख, आशा–आकांक्षा और हास तथा रुदन का अच्छा चित्रण हुआ है। उनकी सहानुभूति का क्षेत्र इतना व्यापक है कि चेतना संपन्न स्त्री–पुरुषों से लेकर कीट–पतंगों और यहां तक की धरती पर पाए जाने वाले मधुर मादक दृश्यों तथा जड़ पदार्थों तक के विवरण उनकी वाणी में आ गए हैं।

गुरु नानक देव जी के सिद्धान्तों व विचारों का गहराई से अध्ययन किया जाए तो वह तत्कालीन समाज में तो प्रासंगिक थे ही, वर्तमान युग में भी उनकी प्रासंगिकता उतनी ही महत्वपूर्ण जान पड़ती है। वह अपने समय में भी जिन विसंगतियों का पुरजोर विरोध करते रहे, वह आज भी हमारे समाज में ज्यों की त्यों बनी हुई है। हमारा समाज आज भी वहीं खड़ा है जहां उनके समय में खड़ा था। वे हालात व परिस्थितियां सभी वैसी है, जैसी वह देख रहे विरोध कर रहे थे। आज भी धर्म के आधार पर, समाज के आधार पर, शिक्षा के आधार पर, गृहस्थ जीवन के आधार पर, और पुरुषार्थ कर्म के आधार पर यदि उनकी वाणी के विचारों को देखा और समझा जाए तो वह आज भी उन्हीं समस्याओं के इर्द गिर्द घूमते दिखते हैं। जो उस समय मौजूद थी। आज श्री गुरु नानक देव जी अपने विचारों से उतने ही प्रासंगिक दिखते हैं जितने कि कबीर या उनके समतुल्य अन्य विचारक हैं।

श्री गुरु नानक देव जी के विचारों की प्रासंगिकता उनकी वाणियों में अभिव्यक्त निम्नलिखित विचारों के आधारों पर आंकी जा सकती हैः–

1.धर्म के आधार पर

गुरु नानक देव जी का आविर्भाव जिन दिनों हुआ था,उन दिनों भारतवर्ष का हिन्दू समाज अनेक प्रकार की जातियों और सम्प्रदायों में विभक्त था। धर्म

काफी समय से थोथी रस्मों और रीति–रिवाजों का नाम बनकर रह गया था। उत्तरी भारत के लिए यह कुशासन और अफरा–तफरी का समय था। सामाजिक जीवन में भारी भ्रष्टाचार था और धार्मिक क्षेत्र में द्वेष और कशमकश का दौर था। न केवल हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच में ही, बल्कि दोनों बड़े धर्मों के भिन्न–भिन्न संप्रदायों के बीच भी। इन कारणों से भिन्न–भिन्न संप्रदायों में और भी कट्टरता और बैर–विरोध की भावना पैदा हो चुकी थी। उस वक्त समाज की हालत बहुत बदतर थी। ब्राह्मणवाद ने अपना एकाधिकार बना रखा था। उसका परिणाम यह था कि गैर–ब्राह्मण को वेद शास्त्राध्यापन से हतोत्साहित किया जाता था। निम्न जाति के लोगों को इन्हें पढ़ना बिलकुल वर्जित था। इस ऊँच–नीच का गुरु नानकदेव पर बहुत असर पड़ा। वे कहते हैं कि ईश्वर की निगाह में सब समान हैं। ऊंच–नीच का विरोध करते हुए गुरु नानकदेव अपनी मुखवाणी 'जपुजी साहिब' में कहते हैं कि 'नानक उत्तम–नीच न कोई' जिसका भावार्थ है कि ईश्वर की निगाह में छोटा–बड़ा कोई नहीं फिर भी अगर कोई व्यक्ति अपने आपको उस प्रभु की निगाह में छोटा समझे तो ईश्वर उस व्यक्ति के हर समय साथ है। यह तभी हो सकता है जब व्यक्ति ईश्वर के नाम द्वारा अपना अहंकार दूर कर लेता है। तब व्यक्ति ईश्वर की निगाह में सबसे बड़ा है और उसके समान कोई नहीं। नानक देव की वाणी में :–

नीचा अंदर नीच जात, नीची हूं अति नीच।
नानक तिन के संगी साथ, वडियां सिऊ कियां रीस।

वर्तमान समय में यदि हम देखें तो आज भी धर्म के आधार पर यह बंटवारे है। जाति पाति यह ब्राह्मणवाद सब वैसा ही मौजूद है। हमारा समाज लाख कोशिशों के बावजूद भी इन सड़ी गली मानसिकताओ से निकल नहीं पाया है। आज भी देश में दलितों के साथ हो रहे अन्याय दलित लड़कियों के साथ हो रहे अन्याय उसी तरह से मौजूद हैं, जिस तरह से उस समाज में थे या गुरु नानक देव जी के समय में थे। आज के मनुष्य को कोई उनके सरीखा ज्ञान देने वाला नहीं है आज का मनुष्य अपनी बुद्धि से चलता है उसके लिए गुरु, महात्मा, ईश्वर जैसे शब्द एक विचारधारा के अलावा और कुछ नहीं है।

धर्म समाज में समानता का परिचायक होता है या यूं कहें मनुष्य धर्म ही सबसे बड़ा धर्म माना गया है पर आज हमारे समाज में धर्म के नाम पर ही सबसे अधिक झगड़े और गलतफहमियां उपजाई जा रही हैं। इन्हें दूर करने का बीड़ा जहां तक हो सकता है, युवाओं पर ही है पर आज का युवा भी ना जाने किन विचारधाराओं या सोशल मीडिया और इन्टरनेट के जाल में फंसा हुआ है, उसे घर और समाज से कुछ लेना–देना नहीं ऐसे में यह आवश्यक हो जाता है कि वह महान पुरुषों के विचारों और अपने इतिहास को पढ़कर समाज कल्याण की भावना को जागृत करें अन्यथा भारत का भविष्य धर्म के नाम पर बटकर रह जाएगा। समाज के आधार पर

श्री गुरु नानक देव दुर्दशाग्रस्त समाज मे मानवता के उद्धार के लिए एक मसीहा के रूप में अवतरित हुए थे। वर्णव्यवस्था का सहारा लेकर देश के कुछ अधिकार प्राप्त सामन्तों ने कथित निम्न जातियों के निरीह श्रमजीवियों पर न केवल जुर्म ही ढ़हाए थे, बल्कि उनके आगे बढ़ने की उन्नति करने के सारे मार्ग भी अवरुद्ध कर रखे थे। उनसे उनका जीने का अधिकार ही छीन लिया था गुरुजी ने सामंती मानसिकता पर करारी चोट की। गुरु नानक देव जी ने कहा "झूठ की काली आंधी सर्वत्र कहर ढा रही है। सच्चाई का चांद कहीं दिखाई नहीं देता। मैं ढूंढ ढूंढ कर थक गया हूं पर संसार पर फैले घटाटोप में कहीं कोई न्याय और सत्य की राह दिखाई नहीं देती अहंग्रस्त मनुष्य अपने विचारों के कारण यातनाएं भोग रहा है। कैसे होगा इसका उद्धार।"

मध्ययुग के संतों का विश्वास था कि मनुष्य मनुष्य के बीच दीवारों का कारण अन्याय और शोषण है। मनुष्य और मनुष्य के बीच कोई भेद नहीं है। सब एक ही धातु से बने हैं। सबकी अंगसंघटना एक जैसी है और सब एक ही अन्न–जल और हवा पानी से पुष्ट होते हैं। मनुष्य प्रभु के अनुकृति पर ही बना है प्रभु की कोई जाति नहीं उसका कोई कुल–परंपरा नहीं। इसलिए न कोई बड़ा है और न कोई छोटा ही। न कोई पवित्र है और न कोई अपवित्र ही। जाति या वर्ण के आधार पर ऊंच–नीच का भाव अव्यवस्थित अस्वस्थ और पगलाए हुए हुए मन का आविष्कार है। गुरु नानक देव जी कहते थे कि चराचर सृष्टि में मूल तत्व तो एक ही है उसी से यह समूचा सृष्टि प्रसार प्रकट हुआ है। इसलिए सब मनुष्य बराबर हैं। उन्होंने कहा है कि सच में पढ़ा हुआ पंडित वह हैं, जो ज्ञान की सच्चाई जानता है कि सब देवों में हरि का वास है जो व्यक्ति सब जीवों में एक प्रभु को ही देखता है उसमें अहंकार तो आ ही नहीं सकता –

सरब जिआ महिए को जाने
ता हऊमै कहै न कोई।

समाज में समानता का नारा देने के लिए नानक देव ने कहा कि ईश्वर हमारा पिता है और हम सब उसके बच्चे हैं और पिता की निगाह में छोटा–बड़ा कोई नहीं होता। वही हमें पैदा करता है और हमारे पेट भरने के लिए खाना भेजता है।

नानक जंत उपाइके, संभालै सभनाह।
जिन करते करना कीआ, चिंताभिकरणी ताहरं

जब हम 'एक पिता एकस के हम वारिक' बन जाते हैं तो पिता की निगाह में जात–पात का सवाल ही नहीं पैदा होता। गुरु नानक देव जी जीवन भर सामाजिक समता का प्रचार करते रहे हैं। वह कहते थे सबका मालिक एक प्रभु है। सबमें उसकी ज्योति जल रही है अतः सब को ऊंचा ऊंचा ही कहना चाहिए। कोई नीच तो है ही नहीं प्रभु ने ही सब भांडे

बनाएं हैं एक ही धातु से और सब में एक ही लौ जल जगमगा रही है।

सभु को ऊंचा आखिये, नीचु न दीसे कोई।
इकने भांडै साजिऐ, इकु चानण तिहु लोई।।

गुरु नानक समाज में जात–पात का विरोध करते हैं। उन्होंने समाज को बताया कि मानव जाति तो एक ही है फिर यह जाति के कारण ऊंच–नीच क्यों? गुरु नानक देव ने कहा कि मनुष्य की जाति न पूछो, जब व्यक्ति ईश्वर की दरगाह में जाएगा तो वहां जाति नहीं पूछी जाएगी। सिर्फ आपके कर्म ही देखे जाएंगे। गुरु नानक देव ने समाज में चल रहे पित्तर–पूजा, तंत्र–मंत्र और छुआ–छूत की भी आलोचना की। हमेशा ऊंच–नीच और जाति–पाति का विरोध करने वाले नानक ने सबको समान समझकर 'गुरु का लंगर' शुरू किया, जो एक ही पंक्ति में बैठकर भोजन करने की प्रथा है। गुरु के लंगर की शुरुआत गुरु नानक देवजी ने जात–पांत को समाप्त करने और सभी को समान दृष्टि से देखने की दिशा में कदम उठाते हुए ही की थी। लंगर में सब छोटे–बड़े, अमीर–गरीब एक ही पंक्ति में बैठकर भोजन करते हैं। आज भी गुरुद्वारों में उसी लंगर की व्यवस्था चल रही है, जहां हर समय हर किसी को भोजन उपलब्ध होता है। इसमें सेवा और भक्ति का भाव मुख्य होता है।

वर्तमान समय में श्री गुरु नानक देव जी द्वारा उठाए गए सभी गंभीर प्रश्न आज भी हमारे समाज में विराजमान है। हम चाहे कितने भी आधुनिक क्यों ना हो जाए हमारे समाज की विसंगतिया जैसे सामंतवाद,अन्याय, शोषण,धर्म के नाम पर झूठ फरेब, पाखंड और दुराचार, महिलाओं के प्रति हिंसा इत्यादि देखा जाए तो जैसी कि तैसी ही है। समाज में बदलाव के लिए नागरिक एक दूसरे पर आरोप मढ़ता है, जबकि वास्तविकता यह है कि हमें खुद में ही परिवर्तन कर,समाज को बदलने का प्रण करना चाहिए, तभी समाज में व्याप्त बुराइयां जिन्हें श्री गुरु नानक देव जी द्वारा अपने समय में ही देख लिया गया था और पुरजोर विरोध भी किया गया था, दूर हो पाएंगी। आज भी बहुत से मनुष्य भाग्य के भरोसे रहकर या मूर्तिपूजा में लीन हो ईश्वर के भरोसे रहने की बात पर बल देते है जिसका नानक जी ने पुरजोर विरोध किया था। वे पुरुषार्थ पर बल देते थे। जिसको आज हर मनुष्य को समझना चाहिए। मानव धर्म ही सच्चा धर्म है यह बात हमें कभी भूलनी नहीं चाहिए।

शिक्षा के आधार पर

श्री गुरु नानक देव जी मनुष्य को सही अर्थो में शिक्षित बनने की प्रेरणा देते है। उनकी शिक्षा की अवधारणा व्यवहारिक और समाज उपयोगी है। वह स्वयं बेशक औपचारिक शिक्षा से निष्णात नहीं थे परंतु व्यवहारिक जीवन तथा अपने समय की धार्मिक, सामाजिक और राजनीतिक परिस्थितियों से उन्हें बड़ी मूल्यवान जानकारियां प्राप्त हुई थी। वह मानव स्वभाव की भी अच्छी जानकारी रखते थे उन्होंने मनुष्य के मन और चित का गहरा अध्ययन किया था। मनुष्य के सामाजिक पारिवारिक कार्यकलाप तथा उस से उत्पन्न होने वाले अच्छे बुरे परिणाम उन्होंने अपनी आंखों से देखें थे। यही कारण है कि उनकी वाणीयों में आध्यात्मिक मूल्यों के विश्लेषण विवेचन के साथ साथ नैतिक मुद्दों का भी विस्तार मिलता है।

गुरु नानक के पास सही दृष्टि थी। एक मौलिक सोच थी और थे, सब समस्याओं के उचित समाधान। सच्चा ज्ञानी वास्तव में वही होता है जो जानकारी प्राप्त कर लेने मात्र से संतुष्ट ना होता हुआ उसके व्यवहारिक पक्षों पर भी विचार करता है। मनुष्य में जब तक उसका मनुष्यत्व वापस नहीं जागता और वह हर बात को विवेक पूर्वक जांच में रखने की क्षमता विकसित नहीं कर पाता तब तक वह शिक्षित नहीं कहा जा सकता। शिक्षा और दृष्टि से ही व्यक्ति ज्ञानी नहीं कहा जा सकता गुरु नानक देव अक्षर ज्ञान और किताबी शिक्षा को महत्व नही देते थे। मुस्लिम शिक्षक को भी उन्होंने देखा था और शास्त्रों के ज्ञाता पंडितों से भी उनका वास्ता पड़ा था और उन्हें लगा था कि दोनों ही सच्चे ज्ञान से हीन है। उन्होंने उनको जीवन मूल्यों और उदारवाद से बहुत दूर पाया था दोनों को केवल शब्द ज्ञान प्राप्त था। जीवन और जगत की पहचान नहीं थी।

श्री गुरु नानक देव जी कहते हैं भले ही मनुष्य सैकड़ों हजारों वेद पढ़ ले पुराणों का पारायण कर ले ध्यान लगाने में पारंगत हो जाए और बहुत सी विधाएं अर्जित कर ले पर जब तक उसके भीतर विवेक नहीं जागता वह पढ़ा लिखा नहीं कहला सकता जरूरत होती है सूझबूझ की जागृति की मात्र शब्द ज्ञान या औपचारिक कर्मकांड से न विद्या प्राप्त होती है और ना धर्म की उपलब्धि होती है अलबत्ता यदि प्रभु कृपा प्राप्त हो जाए तो हमारे नेत्र जरूर खुल जाते हैं प्रभु जिसे अपनाता है उसे ही उसकी प्राप्ति होती है सारी सृष्टि उसके हुक्म में है अतः उसका नाम जपना चाहिए।

कठोपनिषद में भी लगभग यही कुछ कहा गया है–

नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यो न मेधया न बहुना श्रुतेन।
यमेवैष वृणुते तेन लभ्य स्तस्यैष आत्मा विवृणुते तनूं स्वाम्।।

श्री गुरु नानक देव जी कहते हैं कि विद्वान व्यक्ति वह है जिसके व्यवहार और आचरण से प्रकट हो। विद्वान यदि ईर्ष्या, लोभ अभिमान, काम, क्रोध आदि विकृतियों का शिकार बना रहता है तो वह विद्वान नहीं अनपढ़ मूर्ख है वह अपनी इस उक्ति की पुष्टि के लिए रावण का दृष्टांत हमारे सामने रखते हैं वे कहते है कि वह बहुत बड़ा पंडित था, वेदों का ज्ञाता और शास्त्रों का पारंगत था, परंतु उसका आचरण कैसा था? वह अपनी कामासक्ति पर नियंत्रण रख सका? फिर बदले की भावना भी तो उसमें कूट–कूट

कर भरी हुई थी आसुरी वृत्तियों से गिरा मनुष्य विद्वान कैसे कहला सकता है?

वर्तमान समय की शिक्षा प्रणाली को यदि देखें तो यह ज्ञात होता है कि आज का शिक्षक और शिक्षक की भूमिका समाज में किस तरह से निभाई जा रही है। आज शिक्षा केवल व्यापार बनकर रह गई है ज्ञानी व्यक्ति अपना ज्ञान पैसे के लिए बेच रहा है। आज का शिक्षक समाज की भलाई की इच्छा से कार्यरत ना होकर धन उपार्जन की इच्छा से शिक्षा का व्यापार कर रहा है। आज यह बिल्कुल स्पष्ट है श्री गुरु नानक देव जी द्वारा कही गई बातें हैं जिसमें वह कह रहे हैं सच्चा ज्ञानी आचरण से प्रकट होता है उसके ज्ञान से नहीं आज के शिक्षकों और शिक्षा व्यवस्था चलाने वाले ठेकेदारों पर पूर्णतः लागू करने की आवश्यकता है। आज शिक्षक केवल धन की उगाही ही कर रहे है। वह केवल मनुष्य के विकास के लिए कार्यरत नहीं है वे अपने धन के लोभ और लालच से कार्यरत जान पड़ते है। आज शास्त्रबोध और ज्ञानबोध एक दूसरे से बहुत दूर है विद्वता शिक्षक के व्यवहार और आचरण से प्रकट होनी चाहिए जो वर्तमान समय में देखा जाए तो शिक्षकों में न के बराबर है। कुछ शिक्षक गुरू के विचारों से अनुप्राणित भी है और ऐसे शिक्षकों की समाज को अत्यंत आवश्यकता भी है, जो गुरु की शिक्षा को सच्चे अर्थों में स्थापित कर सकते है।

गृहस्थ जीवन के आधार पर

गुरु नानक देव जी नारी को सभ्यता की जन्मदात्री गृहस्थ जीवन का आधार बताते हैं। उनके अनुसार मानव सृष्टि की मूल आधार एवं परिवार की प्रतिष्ठापिका नारी ही है।उसकी महत्ता का प्रतिपादन करते हुए वे कहते हैं कि नारी से मानव अस्तित्व में आता है वही इसे अपने भीतर पालती है। नारी से ही संबंध स्थापित होता है और उसी के साथ पाणीग्रहण होता है। समूचे सृष्टि क्रम की सूत्रधार और व्यवहारिक जीवन की पूर्णता का एकमात्र कारण होने से वह हमारी सबसे बड़ी मित्र है। एक स्त्री के कालकवलित हो जाने पर दूसरी की खोज आरंभ हो जाती है (जीवन यज्ञ को संपन्न करने के लिए नारी का योगदान अपरिहार्य है) स्त्री ही घर और समाज को स्थिर रखती है। उसकी निंदा नहीं की जानी चाहिए, क्योंकि उसके बिना गृहस्थ जीवन के पार उतर पाना असंभव है।

गुरु नानक देव जी के आगमन के समय संसार विचित्र दौर से गुजर रहा था। अज्ञानी वैद्य चारों ओर भरे हुए थे। लोग त्राहि–त्राहि कर रहे थे। कोई निदान नहीं था। कोई उस (अंतर अवस्था) तक नहीं पहुंच पा रहा था, जिसके कारण (दुख) दर्द था। श्री गुरु नानक साहिब ने कहा कि पहले तो मनुष्य और समाज के रोग की पहचान हो। उसके बाद उसका सटीक निदान भी ढूंढ लिया जाए। बिना रोग पहचाने उपचार करने का कोई अर्थ नहीं था। गुरु साहिब ने रोग की पहचान समाज की अज्ञानता के रूप में की। उनके विचार में अज्ञान सबसे बड़ा अंधकार था। इस घोर अंधकार में मनुष्य न स्वयं को देख पा रहा था, न परमात्मा को, जिसके पास शक्ति थी वह मनमानी पर उतारू था। गुरु साहिब का आगमन ऐसे अंधकार को दूर करने वाले प्रकाश की तरह था :–

सतिगुरु नानकु प्रगटिआ,
मिटी धुंधु जगि चानणु होआ।
जिउ करि सूरजु निकलिआ,
तारे छपि अंधेरु पलोआ।

श्री गुरु नानक साहिब जिस ज्ञान के प्रसार के लिए आए, उसने अज्ञान के अंधेरे को इस तरह दूर किया जैसे जब आकाश में सूरज निकलता है तो तारे अलोप हो जाते हैं और अंधकार दौड़ जाता है। भाई गुरदास जी ने इसे स्पष्ट करते हुए आगे कहा कि श्री गुरु नानक देव जी जहां–जहां भी गए वहां लोग उनके अनुयायी बन गए, उनके विचारों को धारण करने लगे। घर–घर में धर्म का प्रकाश फैल गया और लोग परमात्मा के यश का गायन करने में रम गए। यह शायद संसार का सबसे कठिन कार्य था जिसका संकल्प लेकर गुरु साहिब इस धरती पर आए थे।नानक ने एक अनूठे धर्म को जन्म दिया है, जिसमें गृहस्थ और संन्यासी एक हैं। और वही आदमी अपने को सिख कहने का हकदार है, जो गृहस्थ होते हुए संन्यासी हो, संन्यासी होते हुए गृहस्थ हो। सिख होना बड़ा कठिन है। गृहस्थ होना आसान है। संन्यासी होना आसान है, छोड़कर चले जाओ जंगल में। सिख होना कठिन है क्योंकि सिख का अर्थ है– संन्यासी, गृहस्थ एक साथ। रहना घर में और ऐसे रहना जैसे नहीं हो। रहना घर में और ऐसे रहना जैसे हिमालय में हो। करना दुकान, लेकिन याद परमात्मा की रखना। गिनना रुपए, नाम उसका लेना। नानक संसार के विरोध में नहीं हैं। नानक संसार के प्रेम में हैं, क्योंकि वे कहते हैं कि संसार और उसका बनाने वाला दो नहीं। तुम इसे भी प्रेम करो, तुम इसी में उसको प्रेम करो। तुम इसी में उसको खोजो। श्री गुरु नानक देव जी के गृहस्थ जीवन से सामाजिक गृहस्थों को शिक्षा अर्जित कर अपना गृहस्थ जीवन खुशहाल बना लेना चाहिए। श्री गुरु नानक देव जी के निजी जीवन के अनेकों ऐसे उदाहरण हैं जिन्हें याद कर या पढ़कर समाज में रहने वाला व्यक्ति अपनी गृहस्थी से जुड़े सवालों के जवाब ढूंढ सकता है यथा उनके गृहस्थ जीवन के कुछ उदाहरण यहां विचाराधीन हैः–

नानक जब युवा हुए, तब घर के लोगों ने कहा, शादी कर लो। उन्होंने 'नहीं' न कहा। सोचते तो रहे होंगे घर के लोग कि यह नहीं कहेगा। बचपन से ही इसके ढंग अलग थे। नानक के पिता तो परेशान ही रहे। उनको कभी समझ में न आया कि क्या मामला है। भजन में, कीर्तन में, साधु–संगत में...लड़का बिगड़ गया। साधु संगत में बिगड़ा। होश में नहीं है। सोचा

कि शायद स्त्री से बांध देने से राहत मिल जाएगी। अक्सर लोग ऐसा सोचते हैं। सोचने का कारण है क्योंकि संन्यासी स्त्री को छोड़कर भागते हैं तो अगर किसी को गृहस्थ बनाना हो, तो स्त्री से बाँध दो। पर नानक पर यह तरकीब काम न आई क्योंकि यह आदमी किसी चीज के विरोध में न था। पिता ने कहा, 'शादी कर लो।' नानक ने कहा, 'अच्छा'। शादी हो गई, लेकिन उनके ढंग में कोई फर्क नहीं पड़ा। बच्चे हो गए, लेकिन उनके ढंग में कोई फर्क न पड़ा। इस आदमी को बिगाड़ने का उपाय ही न था, क्योंकि संसार और परमात्मा में उन्हें कोई भेद न था। तुम बिगाड़ोगे कैसे? जो आदमी धन छोड़कर संन्यासी हो गया, उसे बिगाड़ सकते हो– धन दे दो। जो आदमी स्त्री छोड़कर संन्यासी हो गया, एक सुंदर स्त्री उसके पास पहुंचा दो, बिगाड़ सकते हो। लेकिन जो कुछ छोड़कर ही नहीं गया, उसको तुम कैसे बिगाड़ोगे। उसके पतन का कोई रास्ता नहीं है। इसीलिए नानक को भ्रष्ट नहीं किया जा सकता। नानक का यह जीवन वास्तव में गृहस्थी के लिए आदर्श स्वरूप है।

श्री गुरु नानक देव जी जब पेशावर के निकट गोरख हटड़ी में पहुंचे तो योगियों ने पूछा, ''आप उदासी हो या गृहस्थी?''

गुरु जी ने उत्तर दिया, ''मैं गृहस्थी हूं।''

योगियों ने कहा कि , ''जैसे नशेड़ी व्यक्ति प्रभु का ध्यान नहीं कर सकता उसी प्रकार माया में फंसा गृहस्थी भी ज्ञान प्राप्त नहीं कर सकता।'' गुरु जी ने उत्तर दिया कि ''ईश्वर सद्गुणों से प्राप्त होता है। गृहस्थी या संन्यासी, जो सद्गुण धारण करेगा वही ईश्वर को प्राप्त कर सकेगा।''

इस प्रकार श्री गुरु नानक देव जी के जीवन के ऐसे अनेक प्रसंग हैं जो मनुष्य को जीने की सही राह दिखाते हैं। श्री गुरु नानक देव जी स्वयं आदर्श सद्गृहस्थ थे और ग्रहस्थों की ग्रहस्थियों को पुष्पित और पल्लवित होते देखना चाहते थे,अतः उन्होंने प्रभु प्राप्ति के इच्छुक भक्तों को घर बार का परित्याग कर के संयासी हो जाने और नारी को विष की पोटली मानकर उससे दूर भागने का उपदेश नहीं दिया। अपने एक पद में वह कहते हैं कि उस सच्चे प्रभु की महानता क्या अद्भुत है कि पुरुष अपनी स्त्री तथा संतान के बीच रहता हुआ ही मुक्ति पा जाता है। जनक सरीखे पुरातन राज ऋषियो तथा अत्री और वशिष्ठ जैसे जीवन मुक्त मुनियों की इस पावन परंपरा का उन्हें पूर्ण ज्ञान था जो हमें देह धारण किए रहने पर भी विदेह बने रहने की हजारों वर्ष से प्रेरणा देती चली आ रही हैं परंतु कुछ लोग अपनी किसी आंतरिक दुर्बलता और दायित्व बोध की कमी के कारण जीवन के संघर्षों का सामना ना कर सकने के कारण पलायनवादी बन जाते हैं। अपनी इस कमजोरी को वे सन्यास या वैराग्य का मुखौटा पहनाकर सुर्खरू होने का प्रयत्न करते हैं। गुरु जी ने हाथ में कमंडल ले, शरीर पर चित्रों का चोला धारण कर, गली गली में डोलते रहने वाले ऐसे सन्यासियों को बढ़ा फटकारा है। दूसरे शब्दों में हम कह सकते है कि ऐसे लोगों में तृष्णा की आंधी तो निरंतर चलती रहती है। अपनी स्त्री का परित्याग कर प्रवास के लिए निकले यह वैरागी कभी भी काम–भाव से मुक्त नहीं हो पाते और पराई स्त्रियों का पीछा करते रहते हैं। गुरु नानक देव जी का कहना है कि मनुष्य को अपनी ब्याहता स्त्री के प्रति सच्चा अनुराग पैदा कर अपने गृहस्थ जीवन को सफल बनाना चाहिए। इससे कामातुरता, विषयान्धता लंपटता आदि विकार समाप्त होते हैं और समाज की नैतिकता सुरक्षित रहती है। अतः यह स्पष्ट है कि गुरु नानक देव जी द्वारा कहीं गई गृहस्थ जीवन की बातें समाज में आज भी अत्यंत उपयोगी व लाभकारी सिद्ध हो सकती हैं। यदि मनुष्य वर्तमान समय में एक बार श्री गुरु नानक देव जी के विचारों पर ध्यान दें तो उसका जीवन गृहस्थ होकर भी मोक्ष की प्राप्ति की ओर अग्रसर हो सकता है।

पुरुषार्थ के आधार पर

श्री गुरु नानकदेव भारतीय समाज को कर्मठ और कर्त्तव्यनिष्ठ बनाकर युग की चुनौतियों को साहसपूर्ण स्वीकार करने की प्रेरणा देते है। भाग्य को उन्होंने अवश्य स्वीकार किया है परंतु इसके भरोसे बैठे रहने वालों की उन्होंने सर्वत्र निंदा की है। भाग्य हमारे हाथ में नही होता इसलिए इस पर विचार करना ही अकारण होगा। पुरुषार्थ अथवा मेहनत हमारे अपने हाथ में होती है,जिस पर विचार कर मनुष्य अपने जीवन को बना और संवार सकता है। श्री गुरु नानक देव जी ने अपनी वाणियों में मनुष्य के कर्म पर गहन चिंतन और मनन कर कर्ममय रहने पर विशेष बल दिया है। उन्होंने वेदों की पौरुष की गुहार, उपनिषदों के बलसंचय के आव्हान, महाभारत के पाणिवाद और गीता के कर्मयोग की एक बार फिर से दुदुंभी बजाकर सोए हुए पुरुषार्थ को जगाने का प्रयास किया है।

अपनी वाणी में उन्होंने कहा है हमे परिश्रम से कभी पीछे नही हटना चाहिए क्योंकि किए हुए का फल अवश्य मिलता है।

जिऊ गोडऊ तिऊ तुम सुख पावहु,
किरतु न मेटिआ जाई।

मनुष्य को अपने कर्मों के फल से डरना नही चाहिए। वह कहते हैं कि सृष्टि का सारा कार्य जीवों के कर्मों के आधार पर ही तय होता है। वह मनुष्य को ईश्वर की 'रज़ा' या प्रभु की इच्छा पर चलने का भी उपदेश देते हैं और यह स्वाभाविक भी है,क्योंकि यह प्रभु इच्छा कोई ऊपर से थोपा गया विधान नही बल्कि मनुष्य के अंत:प्रेरित कर्मो के अनुसार चलने वाली सृष्टि की व्यवस्था है। उन्होंने एक जगह कहा है कि पाप और पुण्य केवल कहने की बातें नही है। मनुष्य जैसा जैसा कर्म करता है वैसा वैसा ही उसका संस्कार बनता है।इस संस्कार को वह साथ लिए

चलता है और इसका फल ही उसे अगले जन्मों में मिलता है। उनके अनुसार ईश्वर ही सबको अपने हुक्म में चलाता है–

सभे मानस देव सभि सभे जोग धिआन,
सभे पुरिआ खण्ड सभि सभे जीअ जहान।
हुकमि चलाए आपणे कर्मी वहै कलाम।

श्रीगुरु नानक जी मनुष्य को हरि नाम स्मरण के साथ साथ अच्छे कर्म करने का उपदेश भी देते हैं। वह कहते हैं कि वेद आदि शास्त्र मनुष्य को बार–बार यही उपदेश देते रहे हैं कि पुण्य और पाप उसे क्रमशः स्वर्ग और नरक दिलाने वाले होते हैं हम वास्तव में जो बोते हैं वही काटते हैं–

वेदों पुकारे पुंनु पापु सुरग नरक का बीच।
जो बीजै सो उगवे खांदा जाणे जीऊ।।

श्री गुरु नानक एक जगह और कहते हैं जो सेवा करता है वह अवश्य फल पाते हैं अपने कष्टों के लिए हम दूसरों को दोषी ठहराते हैं, कर्मों पर विचार नहीं करते नानक कहते हैं मैं जो करता हूं वही पाता हूं, यह भावना मन में रखकर में किसी को बुरा नहीं कहता–

ददै दोसु न देऊ किसै दोसु करमा अपणिआं।
जो मैं कीआ सो मैं पाईआ दोसु न दीजै अवर जनां।।

अतः यह स्पष्ट है कि श्री गुरु नानक जी ने अपनी वाणी में भाग्य और पुरुषार्थ दोनों की सत्ता को एक साथ स्वीकार किए जाने में किसी प्रकार की विसंगति नहीं समझी। भाग्य का विश्वास हमें पुरुषार्थ से विमुख नहीं करता और इसी प्रकार पुरुषार्थ करने वाला व्यक्ति भाग्य की प्रबलता की उपेक्षा नहीं कर सकता। भाग्य और पुरुषार्थ दोनों ही एक दूसरे के पूरक बनकर हमारे साथ रहते हैं। गुरु नानक देव जी की इस मान्यता को झुठलाया नहीं जा सकता कि कोई भी प्राणी इस संसार में बिना भाग्य के कुछ भी प्राप्त नहीं कर सकता, परंतु इसके साथ ही वह मनुष्य की सामर्थ्य की भी भूरी–भूरी प्रशंसा करते हैं वह कहते हैं। कि मनुष्य की बुद्धि इतनी कुशाग्र है कि इसका प्रयोग कर वह बड़े–बड़े रत्न और जवाहर प्राप्त कर सकता है। अपने इस बुद्धि वैभव का प्रयोग करके उसका समुचित लाभ उठाने के लिए उसे जिस प्रेरणा की आवश्यकता होती है वह उसे गुरु से प्राप्त होती है, अतः यह स्पष्ट है कि मनुष्य उत्तम शिक्षा प्राप्त कर अपने में प्रभु भक्ति पैदा करता है और इस प्रभु भक्ति से उसका भाग्य जागता है। परंतु प्रभु भक्ति के लिए नैतिक बल तथा आत्मिक शक्ति की आवश्यकता होती है इसलिए नानक हमें नाम–जप के साथ–साथ निर्मल कर्म करने का उपदेश देते हैं कर्म के लिए सामर्थ्य को जगाने की आवश्यकता तो होती ही है। वेदों में सर्वप्रथम अग्नि देवता की स्तुति की गई है ताकि मनुष्य को अपने में अग्नि की तेजस्विता पैदा करने की प्रेरणा मिले। गुरु नानक देव जी हमें इसी परंपरा को आगे बढ़ाने की प्रेरणा देते हैं। वह हमें योद्धा की मानसिकता से संपन्न करना चाहते हैं ताकि हम अपनी विकृतियों और आसुरी व्यक्तियों से लड़ते हुए अपने जीवन को ऊंचा उठा सकें। जीवन को उन्नत करने तथा प्रभु की भक्ति दोनों के लिए विकारों को मारना पड़ता है। काम आदि पांच तस्करों को मारकर अपने में धीरता, वीरता और गतिशीलता का विकास करना पड़ता है। इसलिए गुरुजी ने कहा है कि 'यदि तुझे प्रभु के साथ प्रेम का खेल खेलने का चाव है तो अपना सिर तली पर रखकर आ। यदि तूने इस मार्ग पर पांव रखा है तो सिर अर्पित करने से मत घबरा'

जऊ तऊ प्रेम खेलण का चाऊ।
सिरु धरि तली गली मेरी आए।।
इतु मारगि पैरु धरीजै ।
सिरु दीजै काणि न कीजै ।।

वर्तमान समय में श्री गुरु नानक देव जी द्वारा पुरुषार्थ कर्म के दिए गए उपदेशों को अपनाने की अत्यंत आवश्यकता है। हमारा समाज आज जो कर्म को प्रधानता ना देकर आसान रास्तों से या यूं कहा जाए, जिसमें मेहनत ना लगती हो धन उपार्जन करना चाहता है। जिस वजह से हमारे समाज में अनेक कुरीतियां उत्पन्न हो गई है। आतंकवाद, चोरी, मारकाट, बलात्कार, निर्बलो का शोषण, पूंजीवाद,सामंतवाद जैसी परिस्थितियां अपने पुरुषार्थ कर्म के मार्ग से भटके हुए मनुष्यों की वजह से ही उत्पन्न हुई है। ऐसे मनुष्य यह स्वीकार ही नहीं करना चाहते कि मेहनत से और ईमानदारी से एक सुनिश्चित जीवन जिया जा सकता है। आज के समय में युवाओं को नानक जी की वाणी से प्रेरणा लें प्रभु भक्ति, नैतिक बल और आत्मिक शक्ति को प्राप्त कर, एक सच्चा मनुष्य बनकर मानवता की रक्षा करनी चाहिए या, यूं कहें अपने मानव धर्म का निर्वाह करना चाहिए। हमारा समाज तभी एक सुशिक्षित और संस्कारी समाज बन पाएगा, जब यहां मनुष्य अपने पुरुषार्थ से और अपनी तेजस्विता से कार्य व्यापार में अग्रसर होगा।

आत्मिक दृष्टि से समर्थ व्यक्ति जीवन संघर्ष में भी सदा विजय शील रहता है आत्मिक शक्ति से ही पुरुषार्थ जागता है तथा देश और मानवता के लिए सर्वस्व निछावर करने की ललक उत्पन्न होती है, और आज हमारे समाज को ऐसे मनुष्यों की अत्यंत आवश्यकता है जो अपने देश और मानवता के लिए सर्वस्व निछावर करने की क्षमता रखते हो।

निष्कर्ष

इस प्रकार हम देखते हैं कि गुरुनानक देव एक महापुरुष व महान धर्म प्रवर्तक थे। जिन्होंने विश्व से सांसारिक अज्ञानता को दूर कर आध्यात्मिक शक्ति को आत्मसात् करने हेतु प्रेरित किया। उनका कथन है– रैन गवाई सोई कै, दिवसु गवाया खाय। हीरे जैसा जन्मु है, कौड़ी बदले जाय। उनकी दृष्टि में ईश्वर सर्वव्यापी है और यह मनुष्य जीवन उसकी अनमोल देन है, इसे व्यर्थ नहीं गंवाना चाहिए। गुरु नानक जी बचपन से ही कुशाग्र बुद्धि के थे। उनके स्वभाव में

चिंतनशीलता थी तथा वह एकांतप्रिय थे। श्री गुरू नानक ने संस्कृत, अरबी व फारसी भाषा का ज्ञान घर पर रहकर ही अर्जित किया। नानकदेव का अधिकांश समय ईश्वर भक्ति और साधना में व्यतीत होता था। वर्तमान समय में श्री गुरु नानक देव जी के विचारों को जानने व समझने की अत्यंत आवश्यकता है। युवा पीढ़ी में हो रहे बदलावों को ध्यान में रखते हुए यह कहना अनुचित न होगा कि आज उनके मार्ग प्रदर्शन के लिए श्री गुरु नानक देव जी के विचार अपना विशेष महत्व व उपयोगिता रखते है। समाज मे चल रहे वैर–भाव, ऊंच–नीच, धर्म, समाज और राजनीति के नाम पर हो रहे अत्याचारों को मिटाने के लिए श्री गुरू ग्रन्थ साहिब सरीखे ग्रंथों को अवश्य पढ़ लेना चाहिए। मानव धर्म ही सर्वश्रेष्ठ धर्म है, श्री गुरु नानक देव जी के विचारों का सार यही है। उनके सिद्धान्तों पर नज़र डालें तो वे कहते हैः– ईश्वर एक है, सदैव एक ही ईश्वर की उपासना करनी चाहिए। जगत का कर्ता सब जगह और सब प्राणी मात्र में मौजूद है। सर्वशक्तिमान ईश्वर की भक्ति करने वालों को किसी का भय नहीं रहता। सभी स्त्री और पुरुष बराबर हैं। ईमानदारी से मेहनत करके उदरपूर्ति करना चाहिए। बुरा कार्य करने के बारे में न सोचें और न किसी को सताएं। सदा प्रसन्न रहना चाहिए। ईश्वर से सदा अपने अवगुणों की क्षमा मांगनी चाहिए। भोजन शरीर को जिंदा रखने के लिए जरूरी है पर लोभ–लालच व संग्रहवृत्ति बुरी है। मेहनत और ईमानदारी से कमाई करके उसमें से जरूरतमंद को भी कुछ देना चाहिए। यदि आज का मनुष्य श्री नानक के इन उपदेशों पर अमल कर ले, तो वह एक सच्चा मानव बनकर अपने समाज, अपने घर और अपने देश की रक्षा कर सकता है।

पांच सौ पचास वर्ष बीत गए। भारतवर्ष के विशाल आकाश के नीचे न जाने कितनी घटनाएं घटी, धरती को न जाने कितनी बार रक्तस्नान से सिक्त होना पड़ा, अन्याय और शोषण ने न जाने कितने तांडव किए, पर कार्तिकी पूर्णिमा का चांद अपनी शोभा उसी प्रकार बिखेरता जा रहा है, गुरु की पवित्र वाणी उतनी ही शीतल ज्योति विकीर्ण कर रही है।

उतरो महागुरु, एक बार फिर उतरो ! हम तुम्हारी ऊंचाई तक नही पहुँच पा रहे हैं। आज भी मनुष्य की क्षुद्र अहमिका भयंकर नृत्य कर रहीं है, आज भी भय और लोभ की आशंका और तृष्णा की धमाचौकड़ी व्याप्त है । एक बार और आओ, रक्षा करो मनुष्यता की, धर्म की, सत्य की। बड़ी आशा और विश्वास से हम तुम्हारा स्मरण कर रहे हैं। जय हो तुम्हारी अमर वाणियों की, जय हो तुम्हारी शरणागति की, जय हो तुम्हारी निर्मल पवित्र स्मृति की, जय हो, जय हो !

संदर्भ ग्रन्थ सूचीः––

1. सिख गुरुओं का पुण्य स्मरण– हज़ारी प्रसाद द्विवेदी
2. भारतीय जन जागरण के महानायक गुरु नानक देव–डॉ सत्यपाल शर्मा
3. गुरु नानक और उनका काव्य–डॉ महीप सिंह, डॉ नरेन्द्र मोहन
4. कबीर ग्रन्थावली, सुमिरण को अंग
5. सन्त गुरु रविदास वाणी–डॉ वेनीप्रसाद शर्मा
6. नानक वाणी–जय राम मिश्र, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦੀ ਬਾਣੀ : ਦਾਰਸ਼ਨਿਕ ਚੇਤਨਾ

* ਡਾ. ਗੁਰਸ਼ਿੰਦਰ ਕੌਰ

* ਅਸਿਸਟੈਂਟ ਪ੍ਰੋਫ਼ੈਸਰ, ਪੰਜਾਬੀ ਅਧਿਐਨ ਵਿਭਾਗ, ਖ਼ਾਲਸਾ ਕਾਲਜ, ਅੰਮ੍ਰਿਤਸਰ

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਸੰਸਾਰ ਦੇ ਸਭ ਤੋਂ ਮਹਾਨ ਧਰਮਾਤਮਾਵਾਂ ਵਿਚੋਂ ਇਕ ਹਨ ਜਿੰਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਸਿੱਖ-ਧਰਮ ਦੇ ਸੰਸਥਾਪਕ ਵਜੋਂ ਭਾਰਤ ਦੇ ਮਹਾਨ ਸਪੁੱਤਰ ਦਾ ਦਰਜਾ ਹਾਸਲ ਕੀਤਾ ਹੈ। ਇਹਨਾਂ ਨੇ ਅਜਿਹੇ ਧਰਮ ਦੀ ਸਥਾਪਨਾ ਕੀਤੀ ਜੋ ਅੱਜ ਵੀ ਲੋਕਾਂ ਦੇ ਵਤੀਰੇ ਅਤੇ ਵਿਚਾਰਾਂ ਨੂੰ ਪ੍ਰਭਾਵਿਤ ਕਰ ਰਹੀ ਹੈ। 'ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦੇ ਧਰਮ ਦੀ ਹੋਰ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ਤਾ ਇਹ ਹੈ ਕਿ ਆਪ ਨੇ ਜਨਤਾ ਦੀ ਨਿਰਾਸ਼ਾ ਨੂੰ ਦੂਰ ਕਰ ਆਸਵੰਦ ਰਹਿਣ ਦਾ ਸਫ਼ਲ ਯਤਨ ਕੀਤਾ। ਸਵੈਮਾਨ ਅਤੇ ਵਿਸ਼ਵਾਸ਼ ਅਤੇ ਉਦਮ ਦੀ ਭਾਵਨਾ ਨੂੰ ਜਗਾਇਆ।'[1] ਮਨੁੱਖੀ ਇਤਿਹਾਸ ਵਿਚ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਵਰਗੇ ਮਹਾਨ ਵਿਅਕਤੀ ਦਾ ਜਨਮ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ ਮਹੱਤਤਾ ਦਾ ਧਾਰਨੀ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਜੀ ਨੇ ਆਪਣਾ ਸਮੁੱਚਾ ਜੀਵਨ ਮਾਨਵਤਾ ਦੀ ਭਲਾਈ ਲਈ ਸਮਰਪਿਤ ਕਰ ਦਿੱਤਾ। ਜਿਸਦੇ ਫਲਸਰੂਪ ਮਾਨਵਤਾ ਵਿਚ ਜਾਗ੍ਰਿਤੀ ਆਈ। ਜਿਸ ਸਮੇਂ ਗੁਰੂ ਜੀ ਦਾ ਜਨਮ ਹੋਇਆ ਭਾਰਤ ਦੇ ਲੋਕ ਬਹੁਤ ਕਠਿਨਾਈਆਂ ਭਰਿਆਂ ਜੀਵਨ ਬਿਤਾ ਰਹੇ ਸਨ, ਕਿਉਂਕਿ ਵਿਦੇਸ਼ੀ ਹੁਕਮਨਾਮਾਂ ਨੇ ਭਾਰਤ ਦੀ ਜਰਖੇਜ਼ ਭੂਮੀ 'ਤੇ ਰਾਜ ਸਥਾਪਤ ਕਰਕੇ ਆਪਣਾ ਤਾਨਾਸ਼ਾਹੀ ਸ਼ਾਸ਼ਨ ਚਲਾਉਣਾ ਸ਼ੁਰੂ ਕੀਤਾ ਹੋਇਆ ਸੀ, ਇਸੇ ਹੀ ਸਮੇਂ ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਮਾਨਵਤਾ ਦੇ ਜੀਵਨ ਪੱਧਰ ਨੂੰ ਉੱਚਾ ਚੁੱਕਣ ਲਈ ਜਿੱਥੇ ਚਾਰ ਉਦਾਸੀਆਂ ਕੀਤੀਆਂ ਉੱਥੇ ਸਮੁੱਚੀ ਮਾਨਵਤਾ ਨੂੰ ੴ ਨਾਲ ਜੋੜਨ ਦਾ ਪ੍ਰਯਤਨ ਵੀ ਕੀਤਾ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਆਪਣੀਆਂ ਸਿੱਖਿਆਵਾਂ ਅਤੇ ਰਚਨਾਵਾਂ ਵਿਚ ਥਾਂ-ਥਾਂ ਈਸ਼ਵਰ ਦੀ ਮਹਾਨਤਾ ਤੇ ਮਹਿਮਾਂ ਦੇ ਗੀਤ ਗਾਏ ਹਨ। ਉਹਨਾਂ ਦੁਆਰ ਰਚਿਤ 'ਜਪੁਜੀ ਸਾਹਿਬ' ਦਾ ਆਰੰਭ ਵਿਚ ਮੂਲ ਮੰਤਰ ਦਿੱਤਾ ਗਿਆ ਹੈ।[2] ਆਪ ਦਾ ਈਸ਼ਵਰ ਦੀ ਹੋਂਦ ਵਿਚ ਅਟੁੱਟ ਵਿਸ਼ਵਾਸ ਹੋਣ ਕਰਕੇ ਆਪਣੀ ਉਮਰ ਦੇ ਮੁੱਢਲੇ ਨੌਂ ਵਰਿਆਂ ਦੌਰਾਨ ਹੀ ਆਪ ਨੇ ਹਿੰਦੂਆਂ ਦੇ ਪਵਿੱਤਰ ਧਾਗੇ ਜਨੇਊ ਪਹਿਨਣ ਤੋਂ ਇਨਕਾਰ ਕਰਦਿਆਂ ਉਸ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਰੂਪੀ ਧਾਗੇ ਨੂੰ ਪਹਿਨਣਾ ਚਾਹਿਆ ਜੋ ਸਾਰੇ ਸੰਸਾਰਕ ਧਰਮਾਂ ਤੋਂ ਸ਼੍ਰੇਸ਼ਟ ਸੀ:

ਦਇਆ ਕਪਾਹ ਸੰਤੋਖ ਸੂਤੁ ਜਤੁ ਗੰਢੀ ਸਤੁ ਵਟੁ।।
ਏਹੁ ਜਨੇਊ ਜੀਆ ਕਾ ਹਈ ਤ ਪਾਂਡੇ ਘਤੁ।। (ਅੰਗ 471)

ਗੁਰੂ ਜੀ ਦਾ ਵਿਚਾਰ ਹੈ ਕਿ ਈਸ਼ਵਰ ਨਿਰੰਕਾਰ ਹੈ ਅਰਥਾਤ ਉਸਦਾ ਕੋਈ, ਆਕਾਰ, ਰੰਗ, ਰੂਪ, ਚਿੰਨ੍ਹ ਨਹੀਂ ਹੈ। ਇਸ ਲਈ ਉਹ ਈਸ਼ਵਰ ਦੀਆਂ ਮੂਰਤੀਆਂ ਦੀ ਪੂਜਾ ਕਰਨ ਦੇ ਵਿਰੁੱਧ ਹਨ। ਉਹ ਇਸ ਵਿਸ਼ਵਾਸ਼ ਦੇ ਧਾਰਨੀ ਸਨ ਕਿ ਮਨੁੱਖ ਵਿਚ ਇੰਨੀ ਸ਼ਕਤੀ ਅਤੇ ਯੋਗਤਾ ਹੀ ਨਹੀਂ ਕਿ ਉਹ ਈਸ਼ਵਰ ਨੂੰ ਪਛਾਣ ਕੇ ਉਸਦੀ ਮੂਰਤ ਬਣਾ ਸਕੇ।

ਅਜਿਹਾ ਕਰਨਾ ਈਸ਼ਵਰ ਦਾ ਅਪਮਾਨ ਕਰਨ ਦੇ ਬਰਾਬਰ ਹੈ।[3] ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੀਆਂ ਕਦਰਾਂ ਕੀਮਤਾਂ ਦੀ ਇਹ ਖੂਬਸੂਰਤੀ ਹੈ ਕਿ ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਅਧਿਆਤਮਕ ਕੀਮਤਾਂ ਨੂੰ ਸਭ ਤੋਂ ਉੱਪਰ ਰੱਖਿਆ ਹੈ ਤੇ ਬਾਕੀਆਂ ਨੂੰ ਇਸਦੇ ਅਧੀਨ ਦਰਸਾਇਆ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਜੀ ਅਨੁਸਾਰ ਨੈਤਿਕ ਕੀਮਤਾਂ ਦੀ ਜੜ੍ਹ ਵੀ ਅਧਿਆਤਮਕ/ਧਾਰਮਿਕ ਜੀਵਨ ਵਿਚ ਹੀ ਨੀਹਿਤ ਹੁੰਦੀ ਹੈ। ਸਮਾਜਿਕ ਨਿਯਮ ਹੀ ਨੈਤਿਕ ਕੀਮਤਾਂ ਦੀ ਪ੍ਰਵਾਨਗੀ ਦਿੰਦੇ ਹਨ। ਜੋ ਵਿਅਕਤੀ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਵਿਚ ਵਿਸ਼ਵਾਸ਼ ਰੱਖਦਾ ਹੈ ਉਹ ਨੈਤਿਕ ਕਦਰਾਂ ਕੀਮਤਾਂ ਦਾ ਵੀ ਪਾਲਣ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਸੱਚਾ ਸੁੱਚਾ ਤੇ ਸਾਦਾ ਜੀਵਨ ਬਤੀਤ ਕਰਨ ਤੇ ਜ਼ੋਰ ਦਿੱਤਾ ਹੈ: ਸਚਹੁ ਓਰੈ ਸਭੁ ਕੋ ਉਪਰਿ ਸਚੁ ਆਚਾਰੁ।। (ਅੰਗ 62) ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਵਿਚ ਮਿਠਤ ਤੇ ਹਲੀਮੀ ਨੂੰ ਗੁਣਾਂ ਅਤੇ ਚੰਗੀਆਈਆਂ ਦਾ ਤੱਤ ਕਿਹਾ ਹੈ। ਇਹ ਨਿਮਰਤਾ ਤੇ ਗਰੀਬੀ ਦਾ ਆਧਾਰ ਗੁਣ ਹੈ ਜੋ ਕਿ ਹੰਕਾਰ ਦਾ ਵਿਰੋਧੀ ਤੱਤ ਹੈ। ਹਲੀਮੀ ਨੂੰ ਧਾਰਨ ਕਰਨ ਨਾਲ ਵਿਅਕਤੀ ਗੁਣਵਾਨ ਹੁੰਦਾ ਹੋਇਆ ਵੀ ਆਪਣੇ ਆਪ ਨੂੰ ਗੁਣਹੀਣ ਹੀ ਸਮਝਦਾ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਜੀ ਨੂੰ ਮਿੱਠਤ ਤੇ ਨਿਰਮਤਾ ਨੂੰ ਚੰਗਿਆਈਆ ਦਾ ਤੱਤ ਮੰਨਿਆ ਹੈ। ਪੰਜ ਤਰ੍ਹਾ ਦੇ ਵਿਕਾਰ ਕਾਮ, ਕ੍ਰੋਧ, ਲੋਭ, ਮੋਹ ਅਤੇ ਹੰਕਾਰ ਨੂੰ ਤਿਆਗਣ ਬਾਰੇ ਕਿਹਾ ਹੈ। ਇਹ ਵਿਕਾਰ ਹਉਮੈ ਦੇ ਕਾਰਨ ਹੀ ਉਪਜਦੇ ਹਨ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਜੋ ਇਲਾਜ ਸੁਝਾਇਆ ਹੈ ਉਹ ਹੈ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਦੇ ਹੁਕਮ ਦੀ ਪਛਾਣ ਕਰਨੀ। ਆਪ ਜੀ ਲਿਖਦੇ ਹਨ: ਨਾਨਕ ਹੁਕਮੈ ਜੇ ਬੁਝੈ ਤ ਹਉਮੈ ਕਹੈ ਨ ਕੋਇ।। ਸਮਕਾਲੀਨ ਰਾਜਨੀਤਿਕ ਹਲਾਤਾਂ ਨੂੰ ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਨਿਡਰ ਹੋ ਕੇ ਇਸ ਵਾਰ ਵਿਚ ਪੇਸ਼ ਕੀਤਾ ਹੈ ਕਿ ਸਾਰੇ ਪਾਸੇ ਝੂਠ ਹੀ ਪ੍ਰਧਾਨ ਸੀ। ਹਾਕਮ ਸ਼੍ਰੇਣੀ ਤੇ ਧਰਮ ਦੇ ਠੇਕੇਦਾਰ ਅੱਤਿਆਚਾਰੀ ਤੇ ਆਚਰਣਹੀਣ ਹੋ ਚੁੱਕੇ ਸਨ। ਹਾਕਮ ਸ਼੍ਰੇਣੀ ਗਰੀਬ ਜਨਤਾ ਨੂੰ ਕਰਾਂ ਰਹੀ ਤੇ ਰਾਜੀ ਮੂਲਾਂ, ਪੰਡਤ, ਜਨਤਾ ਨੂੰ ਵਹਿਮਾਂ-ਭਰਮਾਂ ਵਿਚ ਫਸਾ ਕੇ ਲੁੱਟ ਘਸੁੱਟ ਕਰ ਰਹੇ ਸਨ। ਇਸਲਾਮ ਰਾਜ ਦਾ ਮੁੱਖ ਮੰਤਵ ਇਸਲਾਮ ਦਾ ਪ੍ਰਚਾਰ ਕਰਨਾ ਸੀ। ਉਸ ਸਮੇਂ ਦੀ ਰਾਜਨੀਤਿਕ ਅਵਸਥਾ ਵਿਚ ਕਾਜ਼ੀਆਂ ਤੇ ਮੂਲਾਂ ਨੂੰ ਉਚ-ਪਦਵੀਆਂ ਪ੍ਰਾਪਤ ਸਨ। ਉਹ ਕੁਰਾਨ ਦੀਆਂ ਹਦਾਇਤਾਂ ਅਨੁਸਾਰ ਦੇਸ਼ ਦੀਆਂ ਸਮੱਸਿਆਵਾਂ ਦਾ ਹੱਲ ਕਰਦੇ ਸਨ।

ਇਸਲਾਮ ਹਿੰਦੂ ਮੂਰਤੀ ਪੂਜਾ ਦੀ ਪੁਰ ਜ਼ੋਰ ਵਿਰੋਧਤਾ ਕਰਦਾ ਸੀ। ਮੂਰਤੀ ਪੁਜਾਰੀਆਂ ਲਈ ਦੋ ਰਸਤੇ ਸਨ ਇੱਕ ਮੌਤ ਦੂਸਰਾ ਇਸਲਾਮ ਕਬੂਲ ਕਰਨਾ। ਕਠੋਰ ਸ਼ਾਸ਼ਨ ਪ੍ਰਬੰਧ ਕਰਕੇ ਹਿੰਦੂ ਲੋਕ ਸਹਿਕਦੇ ਤੱਕ ਨਹੀਂ ਸਨ। ਉਹਨਾਂ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਧਰਮ ਨਾਲੋਂ ਜਾਨ ਪਿਆਰੀ ਸੀ। ਹਿੰਦੂ ਆਤਮ-ਰੱਖਿਆ ਲਈ ਕੁਰਾਨ ਆਦਿ ਪੜ੍ਹਦੇ ਸਨ। ਜ਼ਾਲਮ ਇਸਲਾਮੀ ਰਾਜ ਵਿਚ ਹਿੰਦੂ, ਮੁਸਲਮਾਨ ਬਣ ਰਹੇ ਸਨ। ਹਿੰਦੂ ਸਮਾਜ ਰਾਜਨੀਤਿਕ ਅਧਿਕਾਰਾਂ ਤੋਂ ਵਾਂਝਿਆਂ ਰੱਖਿਆ ਸੀ। ਹਾਕਮ ਸ਼੍ਰੇਣੀ ਲੋਕਾਂ ਤੇ ਹਰ ਕਿਸਮ ਦਾ ਜ਼ੁਲਮ ਕਰ ਰਹੀ ਸੀ। ਹਿੰਦੂ ਲੋਕ ਏਨੇ ਗੁਲਾਮ ਹੋ ਗਏ ਸਨ ਕਿ ਤੁਰਕਾਂ, ਪਠਾਣਾਂ ਦੀਆਂ ਸੱਭਿਆਚਾਰਕ ਕਦਰਾਂ-ਕੀਮਤਾਂ ਨੂੰ ਗ੍ਰਹਿਣ ਕਰ ਰਹੇ ਸਨ।

ਰਾਜੇ ਤੇ ਕਾਜ਼ੀ ਗਿਰ ਚੁੱਕੇ ਸਨ। ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਇਹਨਾਂ ਨੂੰ ਮਾਣਸ ਖਾਣੇ ਕਿਹਾ, ਰਾਜ ਵਿਚ ਰਿਸ਼ਵਤ, ਭ੍ਰਿਸ਼ਟਾਚਾਰ ਤੇ ਸੁਆਰਥਪੁਣੇ ਦਾ ਬੋਲਬਾਲਾ ਸੀ। ਸਮਾਜ ਦਾ ਨੈਤਿਕ ਤੇ ਮਾਨਸਿਕ ਤੌਰ ਤੇ ਪਤਨ ਹੋ ਚੁੱਕਾ ਸੀ। ਹਰ ਪਾਸੇ ਕੂੜ ਹੀ ਨਜ਼ਰ ਆ ਰਿਹਾ ਸੀ, ਕੀ ਰਾਜਾ ਕੀ ਪਰਜਾ ਸਭ ਝੂਠ ਦੇ ਸਹਾਰੇ ਹੀ ਖੜ੍ਹੇ ਸਨ। ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਬੜੀ ਨਿਡਰਤਾ ਨਾਲ ਰਾਜਨੀਤਿਕ ਅਵਸਥਾ ਦਾ ਚਿਤਣ ਆਪਣੀ ਬਾਣੀ ਵਿਚ ਪੇਸ਼ ਕੀਤਾ ਹੈ। ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਧਰਮ ਵਿਚ ਆਈਆਂ ਗਿਰਾਵਟਾਂ ਦਾ ਜ਼ਿਕਰ ਕਰਦੇ ਹੋਏ ਗੁਰੂ ਜੀ ਇਹਨਾਂ ਪਾਖੰਡੀਆਂ ਦੇ ਬਾਹਰਲੇ ਪਾਖੰਡਾਂ ਦਾ ਖੰਡਨ ਕੀਤਾ ਤੇ ਕਿਹਾ ਕਿ ਬਾਹਰੀ ਸ਼ੁੱਧੀ ਰਾਹੀਂ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਨੂੰ ਪ੍ਰਾਪਤ ਨਹੀਂ ਕੀਤਾ ਜਾ ਸਕਦਾ। ਆਤਮਿਕ ਸ਼ੁਧੀ ਕਰਕੇ ਪ੍ਰਭੂ ਦੇ ਦਰਸ਼ਨ ਕੀਤੇ ਜਾ ਸਕਦੇ ਹਨ।

ਉਸ ਵਕਤ ਧਰਮ ਅਧਰਮ ਵਲ ਵੱਧ ਚੁੱਕਿਆ ਸੀ। ਧਰਮ ਵਿਚ ਆਈ ਗਿਰਾਵਟ ਦਾ ਜਨ ਜੀਵਨ ਅਤੇ ਸਮਾਜ ਉੱਪਰ ਮਾੜਾ ਅਸਰ ਪਿਆ ਕਿ ਸਾਰਾ ਵਾਤਾਵਰਣ ਹੀ ਗੰਦਾ ਹੋ ਗਿਆ। ਰਾਜਨੀਤਿਕ, ਆਰਥਿਕ ਤੇ ਸਮਾਜਿਕ, ਸਦਾਚਾਰਕ ਹਰ ਪੱਖ ਵਿਚ ਗਿਰਾਵਟ ਆ ਗਈ। ਧਰਮ ਵਿਚ ਆਈ ਗਿਰਾਵਟ ਦਾ ਸਮਾਜ ਉੱਪਰ ਪ੍ਰਭਾਵ ਪੈਣਾ ਲਾਜ਼ਮੀ ਸੀ ਕਿ ਧਰਮ ਅਤੇ ਸਮਾਜ ਬੜੇ ਨਿਕਟ ਅਤੇ ਇੱਕ ਦੂਜੇ ਦੇ ਪੂਰਕ ਹਨ। ਡਾ. ਗੋਬਿੰਦ ਤ੍ਰਿਗਣਾਇਤ ਅਨੁਸਾਰ :

ਸਮਾਜ ਦੀ ਧਾਰਨਾ ਕਰਨ ਵਾਲੇ ਤੱਤ ਧਰਮ ਹਨ
ਅਤੇ ਸਮਾਜ ਆਪਣੇ ਕਰਤੱਵ ਦੀ ਗਿਆਨ
ਰੱਖਣ ਵਾਲੇ ਵਿਅਕਤੀਆਂ ਦਾ ਸਮੁੱਚਾ ਸਮੂਹ ਹੈ।[4]

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਧਰਮ ਦਾ ਮੂਲ ਆਸਾ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਆਤਮਿਕ ਤੌਰ ਤੇ ਉੱਚਾ ਉਠਾਉਣਾ ਹੈ। ਇਸ ਦੀ ਪ੍ਰਾਪਤੀ ਸ਼ੁਭ ਕਰਮਾਂ ਤੇ ਗੁਣਾਂ ਕਰਕੇ ਹੀ ਹੋ ਸਕਦੀ ਹੈ। ਮਨੁੱਖ ਪਦਾਰਥਕ ਸੁੱਖਾਂ ਤੇ ਸ਼ੁਹਰਤ ਲਈ ਕਈ ਆਡੰਬਰ ਰਚਦਾ ਹੈ। ਇਹ ਸ਼ੁਹਰਤ ਤੇ ਸੁਖ ਨਾਸ਼ਵਾਨ ਹਨ। ਮਨੁੱਖ ਨੇ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਦੀ ਦਰਗਾਹ ਵਿਚ ਕੀਤੇ ਕਰਮਾਂ ਦੇ ਆਧਾਰ ਤੇਰੀ ਪਰਖਿਆ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਸੋ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਹਮੇਸ਼ਾ ਚੰਗੇ ਕੰਮ ਕਰਨੇ ਚਾਹੀਦੇ ਹਨ, ਅਜਿਹੇ ਕੁਕਰਮਾਂ ਤੋਂ ਬਚਣਾ ਚਾਹੀਦਾ ਹੈ। ਜਿਸ ਦੀ ਵਜ੍ਹਾਂ ਕਰਕੇ ਅਗਲੀ ਦਰਗਾਹ ਵਿਚ ਖੁਆਰ ਨਾ ਹੋਣਾ ਪਏ।

ਜਹਾ ਘਾਲੇ ਘਾਲਣਾ
ਤੋਵਹੋ ਨਾਉ ਪਚਾਰੀਐ।
ਐਸੀ ਕਲਾ ਨਾ ਖੇਡੀਐ
ਜਿਤੁ ਦਰਗਾਹ ਗਾਇਐ ਗਰੀਐ।[5]

ਇਸ ਬਾਰੇ ਡਾ. ਦੀਵਾਨ ਸਿੰਘ ਲਿਖਦੇ ਹਨ ਅਤੇ ਇਸ ਮੌਤ ਦੀ ਪੁਸ਼ਟੀ ਕਰਦੇ ਹਨ:

ਪਰਮਾਤਮਾ ਤੇ ਗੁਰੂ ਦੇ ਉਤਸ਼ਾਹ ਭਰਪੂਰ 'ਜਸ' ਤੋਂ
ਹੁੱਟ ਇਸ ਵਿਚ ਸਮਾਜਿਕ ਕੁਰੀਤੀਆਂ, ਵਿਸ਼ੇ ਵਿਚਾਰਾਂ
ਪ੍ਰਤੀ ਨਾਇਕ-ਪ੍ਰਸਥਿਤੀਆਂ ਅਤੇ ਅਣ ਸੱਭਿਆਚਾਰਕ
ਹਾਲਤਾਂ ਦੀ ਨਿਖੇਧੀ ਪੁਰਜ਼ੋਰ ਨਾਲ ਦਰਸਾਈ।[6]

ਮੱਧ ਯੁੱਗ ਦੇ ਸੰਤ ਇਸਤਰੀ-ਜਾਤੀ ਦੀ ਨਿੰਦਾ ਕਰ ਰਹੇ। ਨਾਥ ਜੰਗੀਆਂ ਦੀ ਪ੍ਰਵਿਰਤੀ ਇਹ ਸੀ ਕਿ ਇਸਤਰੀ, ਪੁਰਖ ਦੀ ਅਧਿਆਤਮਕਤਾ ਵਿਚ ਸਭ ਤੋਂ ਵੱਡੀ ਰੁਕਾਵਟ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਬਹੁਤ ਨੇੜੇ ਜਾ ਕੇ ਨਾਰੀ ਪ੍ਰਤੀ ਹਮਦਰਦੀ ਪੇਸ਼ ਕਰਦੇ ਹੋ ਨਾਰੀ ਨੂੰ ਰਾਸ਼ਟਰ ਦੀ ਸੱਭਿਅਤਾ ਦਾ ਆਧਾਰ ਮੰਨਿਆ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਆਖਿਆ ਕੀ ਸਾਰਾ ਸੰਸਾਰ ਨਾਰੀ ਤੇ ਨਿਰਭਰ ਹੈ। ਇਸ ਦੀ ਨਿੰਦਾ ਨਹੀ ਸਗੋਂ ਉਸ ਦੀ ਮੱਹਤਤਾ ਦਾ ਜ਼ਿਕਰ ਕਰਦੇ ਹੋਏ ਆਪਣੀ ਬਾਣੀ ਵਿਚ ਆਖਿਆ ਹੈ:

ਭੰਡਿ ਜੰਮੀਐ ਭੰਡਿ ਨਿਮੀਐ, ਭੰਡਿ ਮੰਗਣੁ ਵੀਆਹੁ।।
ਭੰਡਿ ਹੋਵੇ ਦੋਸਤੀ, ਭੰਡਹੁ ਚਲੈ ਰਾਹੁ।।
ਭੜੁ ਮੂਆ ਭੰਡੁ ਭਾਲੀਐ।।
ਭੰਡਿ ਹੋਵੈ ਬੰਧਾਨ।।
ਸੋ ਕਿਉ ਮੰਦਾ ਆਖੀਐ ਜਿਤ ਜੰਮਹਿ ਰਾਜਾਨ।।[7]

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਸੰਸਾਰ ਨੂੰ ਕੂੜਾ ਕਿਹਾ ਹੈ। ਕੂੜ ਰਾਜਾ ਕੂੜ, ਪਰਜਾ ਕੂੜ ਸਭੁ ਸੰਸਾਰ। ਸਮਾਜ ਵਿਚ ਫੋਕੇ ਰਸਮ ਰਿਵਾਜ ਪ੍ਰਚਲਿਤ ਸਨ। ਧਰਮ ਦੇ ਠੇਕੇਦਾਰ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਲੁੱਟ ਰਹੇ ਸਨ। ਸਾਰੀ ਦੁਨੀਆਂ ਇਨ੍ਹਾਂ ਵਿਚ ਹੀ ਜਕੜੀ ਹੋਈ ਸੀ ਤੇ ਆਸਾ ਦੀ ਵਾਰ ਵਿਚ ਇਹਨਾਂ ਬਾਹਰੀ ਅਡੰਬਰਾਂ ਤੇ ਕਰਮਕਾਂਡਾ ਦੀ ਨਿਰਾਥਕਤਾ ਦੱਸਦੇ ਹੋਏ ਇਹਨਾਂ ਦਾ ਵਿਰੋਧ ਕੀਤਾ। ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਇਸ ਬਾਹਰਮੁੱਖੀ ਕਿਰਿਆ ਦਾ ਨਿਰਾ ਖੰਡਨ ਹੀ ਨਹੀਂ ਕੀਤਾ ਸਗੋਂ ਅਮਲੀ ਜਨੈਊ ਪਾਉਣ ਲਈ ਉਪਦੇਸ਼ ਦਿੱਤਾ।

ਉਸ ਸਮੇਂ ਊਚ ਜਾਤੀ ਦਾ ਅਭਿਆਨ ਕੀਤਾ ਜਾਂਦਾ ਸੀ ਤੇ ਨੀਵੀਆਂ ਕੌਮਾਂ ਨੂੰ ਦੁਰਕਾਰਿਆਂ ਜਾਂਦਾ ਸੀ। ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਊਚ ਜਾਤੀ ਨੂੰ ਸੁਚੇਤ ਕੀਤਾ ਤੇ ਕਿਹਾ ਕਿ ਪਰਮਾਤਮਾ ਦੀ ਦਰਗਾਹ ਵਿਚ ਸਭ ਇਕ ਸਨ। ਉਥੇ ਚੰਗੇ ਕਰਮਾਂ ਦੀ ਪਛਾਣ ਕੀਤੀ ਜਾਂਦੀ ਹੈ। ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਸਮਾਜਿਕ ਕੁਰੀਤੀਆਂ, ਇਸਤਰੀ ਦੀ ਨਿੰਦਾ, ਵਹਿਮਾਂ-ਭਰਮਾਂ, ਜਾਤ-ਪਾਤ ਦਾ ਚਿਤਰਣ ਪੇਸ਼ ਕੀਤਾ।

ਸੋ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦਾ ਫ਼ਲਸਫ਼ਾ ਇਹ ਦਰਸਾਉਂਦਾ ਹੈ ਕਿ ਸਾਰੀ ਲੋਕਾਈ ਏਕਤਾ ਨਾਲ ਰਹਿੰਦੀ ਹੋਈ ਅਚਾਨਕ ਜੀਵਨ ਬਤੀਤ ਕਰਨ ਤੇ ਕਰਨਾ ਚਾਹੀਦਾ ਹੈ। ਆਪ ਨੇ ਸੰਦੇਸ਼ ਦਿੱਤਾ ਕਿ ਕਿਰਤ ਕਰੋ, ਵੰਡ ਛਕੋ, ਤੇ ਨਾਮ ਜਪੋ ਆਪ ਜੀ ਨੇ ਆਤਮਾ ਦੇ ਵਿਕਾਸ ਲਈ ਨਾਮ ਜਪਣ ਤੇ ਜ਼ੋਰ ਦਿੱਤਾ। ਇਸ ਲਈ ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਨੇ ਸੰਗਤ, ਪੰਗਤ, ਲੰਗਰ, ਸੇਵਾ ਅਤੇ ਗੁਰਮਤਿ ਗਿਆਨ ਨੂੰ ਆਧਾਰ ਬਣਾਇਆ। ਆਪ ਜੀ ਨੇ ਆਤਮਿਕ ਗਿਆਨ ਦੇ ਵਿਕਾਸ ਦੇ ਨਾਲ ਨਾਲ ਬੌਧਿਕ ਵਿਕਾਸ ਵੱਲ ਵੀ ਧਿਆਨ ਦਵਾਇਆ। ਚੰਗੀਆਂ ਆਦਤਾਂ ਗ੍ਰਹਿਣ ਕਰਨੀਆਂ ਇਸੇ ਨਾਲ ਹੀ ਵਿਅਕਤੀ ਚੰਗੇ ਮਾੜੇ ਵਿਚ ਫ਼ਰਕ ਕਰਨ ਦੇ ਸਮੱਰਥ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਕਿਹਾ ਕਿ ਜਿਵੇਂ ਸੂਰਜ ਨਿਕਲਦਾ ਹੈ ਤਾਂ ਚੰਦਰਮਾ ਤੇ ਹਨ੍ਹੇਰਾ ਛੁੱਪ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਇਸੇ ਤਰ੍ਹਾਂ ਜੇਕਰ ਆਤਮਿਕ ਤੇ ਬੌਧਿਕ ਗਿਆਨ ਹੋ ਜਾਵੇ ਤਾਂ ਗਿਆਨ ਦੇ ਪਸਾਰ ਕਾਰਨ ਅਗਿਆਨਤਾ ਦਾ ਧੁੰਦਲਾਪਨ ਖ਼ਤਮ ਹੋ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਆਪ ਜੀ ਨੇ 'ਗੁਰੂ' ਦੀ ਮਹੱਤਵ ਨੂੰ ਸਵੀਕਾਰ ਕਰਦੇ ਹੋਏ ਗੁਰੂ ਦੀ ਲੋੜ ਤੇ ਬਲ ਦਿੱਤਾ, ਕਿਉਂਕਿ ਇਕ ਆਦਰਸ਼ ਗੁਰੂ ਹੀ ਉਸ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਤੱਕ ਪਹੁੰਚਣ ਦਾ ਰਸਤਾ ਦਿਖਾ ਸਕਦਾ ਹੈ ਅਤੇ ਇਉਂ ਸਹਿਜੇ ਹੀ ਸੱਚੇ ਮਾਰਗ ਰਾਹੀਂ ਉਸ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਨੂੰ ਪ੍ਰਾਪਤ ਕੀਤਾ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ। ਅਸਲੀ ਗੁਰੂ ਉਹ ਹੁੰਦਾ ਹੈ ਜੋ ਨਿਰਸੁਆਰਥ ਹੋ ਕੇ ਵਿਅਕਤੀ ਨੂੰ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਨਾਲ ਜੋੜਦਾ ਹੈ ਕਿ ਉਸ ਸੇਵਾ ਦਾ ਪੁਤਲਾ ਬਣ ਜਾਂਦਾ ਹੈ ਅਤੇ ਸਿਮਰਨ ਉਸਦਾ ਜੀਵਨ ਢੰਗ ਬਣ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਇੰਝ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਆਪਣਾ ਸਾਰਾ ਜੀਵਨ ਦੂਸਰਿਆਂ ਲਈ ਸਮਰਪਿਤ ਕਰ ਦਿੱਤਾ। ਇਹੀ ਕਾਰਨ ਹੈ ਕਿ ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਦੀ ਜੋਤ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ ਦੇ ਰੂਪ ਵਿਚ ਅੱਜ ਵੀ ਬਿਰਾਜਮਾਨ ਹੈ ਤੇ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਸਹੀ ਰਸਤਾ ਦਿਖਾ ਰਹੀ ਹੈ।

ਹਵਾਲੇ ਟਿੱਪਣੀਆਂ

1. ਡਾ. ਕਾਲਾ ਸਿੰਘ ਬੇਦੀ, ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦਰਸ਼ਨ, ਪੰਨਾ 110.
2. ਜਪੁਜੀ ਸਾਹਿਬ, ਮੂਲ ਮੰਤਰ
3. ਉਹੀ, ਪਉੜੀ 5.
4. ਕਬੀਰ ਦੀ ਵਿਚਾਰਧਾਰਾ, ਪੰਨਾ 330.
5. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 47.
6. ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੀ ਸਾਹਿਤਕ ਪ੍ਰਤਿਭਾ ਤੇ ਹੋਰ ਲੇਖ, ਪੰਨਾ 88.
7. ਆਦਿ ਗ੍ਰੰਥ, ਪੰਨਾ 473.

Volume : 6 | Issue :49 | October-December2019 ISSN: 2349-1876 (Print) | ISSN : 2454-1826 (Online)

ਦਾਰਸ਼ਨਿਕ ਚੇਤਨਾ ਅਤੇ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ: ਵਿਸ਼ਵੀ ਪਰਿਪੇਖ 'ਚ

* ਡਾ: ਹਰਜੋਤ ਕੌਰ

* ਅਸਿਸਟੈਂਟ.ਪ੍ਰੋਫ਼ੈਸਰ, ਲਵਲੀ ਪ੍ਰੋਫ਼ੈਸ਼ਨਲ ਯੂਨੀਵਰਸਿਟੀ, ਫਗਵਾੜਾ

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਜੀ ਆਪਣੇ ਸਮੇਂ ਵਿਚ ਹੀ ਉੱਤਰ-ਆਧੁਨਿਕਤਾ ਦੇ ਸਿੱਧਾਂਤ ਦੀ ਪੇਸ਼ਕਾਰੀ ਕਰਦੇ ਹਨ।ਸਮਾਂ /ਸਥਿਤੀ /ਪ੍ਰਸਥਿਤੀਆਂ ਬਦਲਣ ਨਾਲ ਸਮਾਜ ਦੇ ਹਰ ਰੂਪ ਵਿਚ ਤਬਦੀਲੀ ਵਾਪਰੀ ਹੈ।ਮੰਡੀ ਸਿਸਟਮ ਵਿਚ ਪੂੰਜੀਵਾਦ ਅਤੇ ਉਦਾਰਵਾਦ ਦਾ ਵੱਧਦੇ ਪ੍ਰਭਾਵ ਕਾਰਨ ਇਨਸਾਨੀਅਤ ਦਾ ਗਿਰਾਫ ਥੱਲੇ ਹੀ ਜਾ ਰਿਹਾ ਹੈ। ਮੁਨਾਫੇਖੋਰੀ ਦੇ ਇਸ ਜੰਗਲ ਵਿਚ ਰਿਸ਼ਤੇ/ਨੈਤਿਕਤਾ/ਮਾਨਵਤਾ/ਸਬਰ/ਸੰਤੋਖ/ਨਿਮਰਤਾ/ਸੱਚ ਆਦਿ ਅਜਿਹੇ ਪੱਖ ਹਨ ਜਿੰਨ੍ਹਾਂ ਦੀਆਂ ਪ੍ਰਸਥਿਤੀਆਂ ਆਪਣੇ ਮਿਆਰ ਨੂੰ ਗਵਾ ਚੁੱਕੀਆਂ ਹਨ।

ਵਿਸ਼ਵੀਕਰਨ ਦੇ ਕਲੇਵਰ 'ਚ ਆਇਆ ਇਹ ਸਮਾਜ ਧਰਮ ਦੇ ਸਹੀ ਅਰਥ ਤੋਂ ਭਟਕ ਕੇ ਦੇਹਧਾਰੀ ਧਰਮ -ਪਾਖੰਡ ਵਿਚ ਗਵਾਚ ਚੁੱਕਾ ਹੈ।ਇਹ ਖੋਜ ਮਜ਼ਮੂਨ ਇਸ ਲਈ ਹੀ ਹੋਂਦ ਵਿਚ ਆਇਆ ਹੈ।ਵਿਸ਼ਵੀਕਰਨ ਦੇ ਪ੍ਰਸੰਗ ਵਿਚ ਬਾਣੀ ਨੂੰ ਵਿਚਾਰਿਆ ਜਾਵੇਂ ਤਾਂ ਸਾਫ ਸਪੱਸ਼ਟ ਹੋ ਜਾਂਦਾ ਹੈ ਕਿ ਬਾਣੀ ਸਰਬਕਾਲੀ ਹੈ ਅਤੇ ਇਸਦਾ ਮਹੱਤਵ ਕੋਈ ਵੀ ਸਮਾਂ/ਯੁੱਗ ਹੋਵੇ ਘਟਾ ਨਹੀਂ ਸਕਦਾ।ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਜੀ ਦੀ ਸ਼ਖ਼ਸੀਅਤ ਫਿਲਾਸਫਰ ਵਜੋਂ ਪੇਸ਼ ਹੁੰਦੀ ਹੈ।ਇਸ ਲਈ ਹੀ ਉਨ੍ਹਾ ਨੂੰ ਇਕ ਉਤਰ ਆਧੁਨਿਕਤਾ ਦਾ ਸਿਧਾਂਤ ਪੇਸ਼ ਕਰਨ ਵਾਲੇ ਵਜੋਂ ਸੰਬੋਧਨ ਕੀਤਾ ਜਾ ਰਿਹਾ ਹੈ।

ਡਾ. ਅੰਮ੍ਰਿਤ ਕੌਰ ਰੈਣਾ ਅਨੁਸਾਰ:

> ਗੁਰੂ ਜੀ ਦਾ ਇਕ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ ਸਿੱਖਿਆ ਦਰਸ਼ਨ ਹੈ ਤੇ ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਸਿੱਖਿਆ ਦੇ ਖੇਤਰ ਵਿਚ ਮਹਾਨ ਯੋਗਦਾਨ ਦਿੱਤਾ'ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਸਿਖਿਆ ਦੀ ਇਕ ਲਹਿਰ ਚਲਾਈ ਜਿਸਨੂੰ ਬਾਕੀ ਦੇ ਸਿੱਖ ਗੁਰੂਆ ਨੇ ਅੱਗੇ ਤੋਰਿਆ।
>
> (ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦਾ ਸਿਖਿਆ ਦਰਸ਼ਨ,ਭੂਮਿਕਾ)

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਜੀ ਦੀ ਬਾਣੀ ਨੂੰ ਵਿਚਾਰਿਆ ਜਾਵੇ ਤਾਂ ਪਤਾ ਚੱਲਦਾ ਹੈ ਕਿ ਉਹਨਾਂ ਨੇ ਆਪਣੇ ਸਮੇਂ ਦੇ ਲੋਕ ਸਾਹਿਤ ਨੂੰ ਆਧਾਰ ਬਣਾ ਕੇ ਸੰਗੀਤ ਦੇ ਮਾਧਿਅਮ ਰਾਹੀ ਲੋਕ ਭਲਾਈ ਦੀ ਲਹਿਰ ਨੂੰ ਆਰੰਭ ਕੀਤਾ ਸੀ।ਜ਼ਿੰਦਗੀ ਦੇ ਸਫਰ ਨੂੰ 5 ਭਾਗਾਂ ਵਿਚ ਵੰਡ ਕੇ ਨਵਾਂ ਧਰਮ ਆਰੰਭ ਕੀਤਾ।ਇਸ ਧਰਮ ਦਾ ਆਧਾਰ ਸਿਰਫ ਗਿਆਨ ਹੈ ਨਾ ਕਿ ਕੋਈ ਭੇਖਧਾਰੀ ।ਤਰਕ ਅਤੇ ਗਿਆਨ ਨੂੰ ਬੁੱਧੀ ਅਤੇ ਸਮਝਦਾਰੀ ਦਾ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ ਲੱਛਣ ਦੱਸਿਆ ਹੈ।

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ (1469-1539) ਬਹੁਪੱਖੀ ਪ੍ਰਤਿਭਾ/ਆਦਰਸ਼/ਸੰਪੂਰਨ ਸ਼ਖ਼ਸੀਅਤ ਦੇ ਲਖਾਇਕ ਸਨ।ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੁਆਰਾ ਰਚਿਤ ਬਾਣੀ ਦੇ ਅਜੋਕੇ ਵਿਸ਼ਵੀਕਰਨ ਦੇ ਪਰਿਪੇਖ ਵਿਚ ਅਧਿਐਨ ਕੀਤਾ ਜਾਵੇਂ ਤਾਂ ਕਈ ਪ੍ਰਸ਼ਨਾਂ ਦਾ ਉੱਤਰ ਪ੍ਰਾਪਤ ਹੁੰਦਾ ਹੈ।700 ਸਾਲ ਪਹਿਲਾ ਰਚਿਤ ਬਾਣੀ ਦਾ ਹੁਣ ਦੇ ਸਮੇਂ ਵਿਚ ਅਧਿਐਨ ਕਰੀਏ ਤਾਂ ਦੇਖਿਆ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ ਕਿ ਬਾਣੀ ਸਰਬਕਾਲੀ ਹੈ। ਇਸਨੂੰ ਕਿਸੇ ਵਿਸ਼ੇਸ ਧਰਾਤਲ, ਸਮੇਂ, ਸਦੀ ਅਨੁਸਾਰ ਸਾਰਥਿਕਤਾ ਨਹੀਂ ਵਿਚਾਰੀ ਜਾ ਸਕਦੀ, ਬਲਕਿ ਇਹ ਹਰ ਕਾਲ ਵਿਚ ਸਾਰਥਿਕ ਹੈ। ਮਨੁੱਖ ਦੇ ਇਸ ਮੰਡੀ ਸਿਸਟਮ ਵਿਚ ਵਸਤੂਆਂ ਵਿਚ ਗਲਤਾਨ ਹੋਣਾ,ਉਸ ਤੋਂ ਬਚਣ ਲਈ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਨੂੰ ਵਿਚਾਰਨ ਦੀ ਜ਼ਰੂਰਤ ਹੈ।

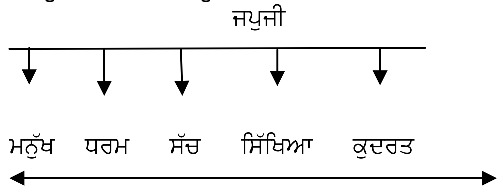

ਵਿਸ਼ਵ ਵਿਆਪੀ ਆਧਾਰ

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ 5 ਖੰਡ ਦਾ ਵਰਣਨ ਕਰਦੇ ਹਨ:

1. ਧਰਮ ਖੰਡ:

   ਕੇਤ ਪਵਣ ਪਾਣੀ ਵੈਸੰਤਰ ਕੇਤੇ ਕਾਹਨ ਮਹੇਸ।
   ਖੇਤੇ ਬਰਮੇ ਘਾੜਤਿ ਘੜੀਅਹਿ ਰੂਪ ਰੰਗ ਕੇ ਵੇਸ

2. ਗਿਆਨ ਖੰਡ :

   ਗਿਆਨ ਖੰਢ ਮਹਿ ਗਿਆਨ ਪਰਚੰਡ
   ਤਿਥੈ ਨਾਦ ਬਿਨੋਦ ਕੋਡ ਆਨੰਦ

3. ਸਰਮ ਖੰਡ :

   ਤਿਥੈ ਘੜੀਐ ਸੁਰਤਿ ਮਤਿ ਮਨਿ ਬੁਧਿ
   ਤਿਥੈ ਘੜੀਐ ਸਾਰਾ_ਸਧਾ ਕੀ ਸੁਧਿ

4. ਕਰਮ ਖੰਡ:

   ਤਿਨ ਮਹਿ ਰਾਮ ਰਹਿਆ ਭਰਪੂਰ
   ਤਿਥੈ ਸੀਤੋ ਸੀਤਾ ਮਹਿਆ
   ਤਾਕੇ ਰੂਪ ਨਾ ਕਥਨੇ ਜਾਹਿ।

5. ਸੱਚਖੰਡ:

   ਸਚਖੰਡ ਵਸੈ ਨਿਰੰਕਾਰ
   ਕਰਿ ਕਰਿ ਵੇਖੈ ਨਦਰਿ ਨਿਹਾਲ।

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਦੇ ਵਿਸ਼ਵ ਵਿਆਪੀ ਆਧਾਰ ਨੂੰ ਦੇਖਿਆ ਜਾਵੇਂ ਤਾਂ ਸਪੱਸ਼ਟ ਹੁੰਦਾ ਕਿ ਵਰਤਮਾਨ ਸਮੇਂ ਨੂੰ ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਆਪਣੇ ਸਮੇਂ ਵਿਚ ਹੀ ਚਿੱਤਰ ਦਿੱਤਾ ਸੀ।ਆਪਣਾ ਫ਼ਰਜ ਪਛਾਣਏ,ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਦੇ ਵਿਸ਼ਾਲ ਪਸ਼ਾਰ/ਸ੍ਰਿਸਟੀ ਦਾ ਅਨੁਭਵ/ਪ੍ਰਭੂ ਨਾਲ ਮਿਲਾਪ ਦੀ ਲਾਲਸਾ ਹੋਰ ਵੱਧਣੀ/ਪ੍ਰਭੂ ਦੀ ਬਖ਼ਸ਼ਿਸ/ਮਿਲਾਪ,ਦਰਸ਼ਨ ਆਦਿ ਦੀ ਵਿਚਾਰਧਾਰਾ ਨੂੰ ਬਾਣੀ ਪ੍ਰਸਤੁਤ ਕਰਦੀ ਹੈ।

ਮਨੁੱਖ ਦਾ ਸੁਭਾਅ/ਧਰਮ/ਸੱਚ/ਸਿੱਖਿਆ ਇਹ ਸਭ ਵਿਸ਼ਵੀਕਰਨ ਦੇ ਵਰਤਾਰੇ ਵਿਚ ਆਪਣਾ ਰੂਪ ਬਦਲ ਚੁੱਕਾ ਹੈ।ਨੈਤਿਕਤਾ,ਸਾਧਨਾ ਦਾ ਸਰੂਪ,ਮਨੁੱਖੀ ਜੀਵਨ ਦਾ ਮਨੋਰਥ/ਕੁਦਰਤ ਆਦਿ ਦਾ ਵਰਣਨ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਕਰਦੀ ਹੈ।ਪਰ

ਅਜੋਕੇ ਸਮੇਂ ਵਿਚ ਉਪਰੋਕਤ ਕਰਮ ਦਾ ਚੱਕਰ ਹੋਰ ਰੂਪ ਅਖਤਿਆਰ ਕਰ ਚੁੱਕਾ ਹੈ।

ਵਿਸ਼ਵੀਕਰਨ ਦੇ ਦੌਰ ਵਿਚ ਪੂੰਜੀਵਾਦੀ ਦੇ ਮਜ਼ਦੂਰ ਦੋ ਵਰਗ ਵਜੋਂ ਪੇਸ਼ ਹੁੰਦੇ ਹਨ।ਪੂੰਜੀਵਾਦੀ ਦਾ ਆਪਣਾ ਇਕ ਵੱਖਰਾ ਸਾਮਰਾਜ ਹੈ ਅਤੇ ਗਰੀਬ ਵਰਗ ਉਸ ਦੇ ਲੋਭ ਲਾਲਚ ਦੀ ਚੱਕੀ ਵਿਚ ਪਿਸ ਰਿਹਾ ਹੈ।ਗੁਰੂ ਜੀ ਦੇ ਸਮੇਂ ਵੀ ਇਹੀ ਹਾਲਾਤ ਸਨ ਪਰ ਉਸ ਸਮੇਂ ਜਿਮੀਦਾਰ –ਮੁਜਾਰਾਸ਼ੇਣੀ ਸੀ। ਇਸ ਹਾਲਾਤ ਵਿਚ ਸਮਾਜਿਕ ਆਰਥਿਕ ਰਾਜਨੀਤਿਕ ਸੱਭਿਆਚਾਰਕ ਧਾਰਮਿਕ ਅਤੇ ਔਰਤ ਦੀ ਸਥਿਤੀ ਬਹੁਤ ਬਦਤਰ ਸੀ।

ਮੱਧਕਾਲ	ਵਰਤਮਾਨ
ਸਮਾਜਿਕ	ਸਮਾਜ ਵਰਗ ਵਿਚ ਵੰਡਿਆ ਹੋਇਆ
ਆਰਥਿਕ	ਪੂੰਜੀਵਾਦੀ – ਕਿਰਤੀ ਵਰਗ
ਰਾਜਨੀਤਿਕ	ਮੁਗਲ ਦੀ ਜਗ੍ਹਾਂ ਲੀਡਰ/ਨੇਤਾ
ਸੱਭਿਆਚਾਰਕ	ਵਿਸ਼ਵੀਕਰਨ ਦੇ ਪ੍ਰਭਾਵ ਅਧੀਨ ਪੂੰਜੀਵਾਦ/ਉਦਾਰਵਾਦ ਦੇ ਅਧੀਨ
ਧਾਰਮਿਕ	ਭੇਖਵਾਦੀ/ਡੇਰਾਵਾਦ
ਔਰਤ ਦੀ ਸਥਿਤੀ	ਦਮਿਤ ਸਥਿਤੀ

ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਇੰਨ੍ਹਾਂ ਸਭ ਸਮੱਸਿਆਵਾ ਪ੍ਰਤੀ ਉਸ ਸਮੇਂ ਹੀ ਆਵਾਜ ਬੁਲੰਦ ਕਰ ਦਿੱਤੀ ਸੀ ।ਜਿਸ ਸਮੇਂ ਸਨਾਤਨੀ ਧਰਮ ਦੇ ਪ੍ਰਭਾਵ ਅਧੀਨ ਹਿੰਦੂ ਅਤੇ ਮੁਸਲਿਮ ਧਰਮ ਤੇ ਸਮਾਜਿਕ ਪੱਧਰ ਉਪਰ ਬੁਰੀ ਤਰਾਂ ਇਕ ਦੂਜੇ ਦਾ ਵਿਰੋਧੀ ਸੀ।ਸ.ਨਰੈਣ ਸਿੰਘ ਅਨੁਸਾਰ,

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਨੇ ਆਪਣੇ ਵਿਸ਼ਾਲ ਪਲਾਨ ਦਾ ਮੁੱਢ'ਨਾ ਕੋਈ ਹਿੰਦੂ
ਨ ਮੁਸਲਮਾਨ'ਦੇ ਹੋਕੇ ਨਾਲ ਬੱਧਾ।ਜਦੋਂ ਭੀ ਕੋਈ ਨਵੀਂ ਲਹਿਰ
ਆਰੰਭ ਕਰਨੀ ਹੋਵੇ ਤਾਂ ਉਸ ਦਾ ਵਿਸ਼ੇਸ ਨਾਅਰਾ ਘੜਿਆ
ਜਾਂਦਾ ਹੈ ਅਤੇ ਵਿਸ਼ੇਸ ਝੰਡਾ ਹੁੰਦਾ ਹੈ,ਜਿਸ ਦੇ ਹੇਠ ਲੋਕ ਇਕੱਠੇ
ਹੋ ਕੇ ਆਪਣਾ ਨਵਾਂ ਨਾਂਅਰਾ ਉੱਚੀ ਆਵਾਜ਼ ਨਾਲ ਆਉਂਦੇ ਹਨ
ਅਤੇ ਲਹਿਰ ਵਿਚ ਜੀਵਨ ਆਉਂਦਾ ਹੈ |

(ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਮਾਰਗ,ਪੰਨਾ 14)

ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਸਮਾਜ ਵਿਚ ਜਾਤੀ ਧਰਮ ਵੰਡ ਨੂੰ ਖਤਮ ਕਰਨ ਦਾ ਸੰਦੇਸ਼ ਦਿੱਤਾ ਅਤੇ ਇਨਸ਼ਾਨੀਅਤ ਦਾ ਸੰਦੇਸ਼ ਦਿੱਤਾ।ਪਰ ਹੁਣ ਦੇ ਸਮੇਂ ਵਿਚ ਮਨੁੱਖ ਸਿਰਫ ਧਰਮ, ਜਾਤ ਦੀ ਵੰਡ ਤੋਂ ਵੱਧ ਕੇ ਜਮਾਤ ਦੀ ਵੰਡ ਵਿਚ ਆ ਗਿਆ ਹੈ।ਆਸਾ ਦੀ ਵਾਰ ਆਪਣੇ ਸਮੇਂ ਦੇ ਸਮਾਜ ਦੀ ਵੰਡ ਨੂੰ ਪ੍ਰਭਾਸ਼ਿਤ ਕਰਦੀ ਹੈ।ਸਮਾਜ ਵਿਚਲੇ ਚਾਰ ਵਰਣ-ਬ੍ਰਾਹਮਣ—ਖੱਤਰੀ --- ਵੈਦ----ਸ਼ੂਦਰ ਸਮਾਜ ਵਿਚਲੇ ਦੋ ਧਰਮ ਹਿੰਦੂ----ਮੁਸਲਿਮ

ਇਨ੍ਹਾਂ ਦੋਹਾਂ ਵੰਡਾਂ ਵਿਚ ਸਮਾਜ ਦੇ ਸਮਾਜਿਕ/ਆਰਥਿਕ/ ਰਾਜਨੀਤਿਕ/ਧਾਰਮਿਕ/ਸਭਿਆਚਾਰਕ ਪਸਾਰਾਂ ਦਾ ਘਾਣ ਹੋ ਰਿਹਾ ਸੀ ਉਸ ਸਮੇਂ ਗੁਰੂ ਹੀ ਦੀ ਵਿਚਾਰਧਾਰਾ ਨਵਾਂ ਗਿਆਨ ਦਾ ਪਸਾਰ ਕਰਦੀ ਹੈ।

ਗੁਰੂ ਬ੍ਰਾਹਮਣ ਕਉ ਲਾਵਹੁ ਗੋਬਿਰ ਤਰਣ ਨ ਜਾਏ
ਧੋਤੀ ਟਿੱਕਾ ਤੇ ਜਪ ਮਾਲੀ ਧਾਨੁ ਮਲੇਛਾ ਪਾਇ।

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਜੀ ਦੀ ਵਿਚਾਰਧਾਰਾ ਸਮਾਜ ਦੀ ਕਰੋਖੀ ਵੰਡ ਉਪਰ ਵਿਅੰਗ ਕਰਦੀ ਹੈ।ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਸਰਬਕਾਲੀ ਹੈ।ਇਸਦੀ ਮਹੱਤਤਾ ਨੂੰ ਕਦੇ ਵੀ ਘਟਾਇਆ ਨਹੀ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ।ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਇਕ ਨਵਾਂ ਮਾਰਗ ਸ਼ੁਰੂ ਕੀਤਾ ਜਿਸ ਵਿਚ ਸਮਾਨਤਾ /ਮਨੁੱਖਤਾ/ਦਿਆ ਭਾਵਨਾ/ਨਿਮਰਤਾ/ਸਬਰ/ਸੰਤੋਖ ਆਦਿ ਮਹੱਤਵਪੂਰਨ ਗੁਣ ਹਨ।

ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਇਕ ਵਿਦਵਾਨ ਦੀ ਤਰ੍ਹਾਂ ਸਮਾਜ ਦਾ ਹਰ ਪੱਖ ਤੋਂ ਅਧਿਐਨ ਕੀਤਾ ਅਤੇ ਆਪਣੀ ਵਿਚਾਰਧਾਰਾ ਦੇ ਰਾਹੀ ਇਸਦੇ ਬੁਰੇ ਪੱਖਾ ਨੂੰ ਸੁਧਾਰਿਆ ।ਜੀਵਨ ਵਿਚ ਪੰਜ ਵੱਖਰੇ –ਵੱਖਰੇ ਪੜਾਵਾਂ ਦੀ ਯਾਤਰਾ ਕੀਤੀ ਹੈ।ਇਸ ਸਫਰ ਨੂੰ ਦੇਖਿਆ ਜਾਵੇਂ ਤਾਂ ਸਾਫ ਪਤਾ ਚੱਲਦਾ ਕਿ ਪੂਰਬ /ਪੱਛਮ/ਉਤਰ/ਦੱਖਣ ਦਿਸ਼ਾ ਵਿਚ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੇਸ਼ ਪ੍ਰਦੇਸ਼ ਦੀ ਯਾਤਰਾ ਇਕ ਅਣਥੱਕ ਯਾਤਰੀ ਵਜੋਂ ਕੀਤੀ ਹੈ।25,000 ਮੀਲ ਦਾ ਸਫਰ ਇਕ ਮਹਾਵਿਦਵਾਨ ਹੀ ਕਰ ਸਕਦਾ ਹੈ।ਨਿੱਜ ਤੋਂ ਪਾਰ ਦੀ ਯਾਤਰਾ ਕਰਦਿਆ ਉਹ ਅਨੇਕਤਾ ਵਿਚ ਏਕਤਾ ਦਾ ਸਫਰ ਤੈਅ ਕਰਦੇ ਹਨ।ਦਾਰਸ਼ਨਿਕ ਫਲਸਫਾ ਵੀ ਇਕ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਦੀ ਗੱਲ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਜੀ ਦੁਆਰਾ ਰਚਿਤ ਮੂਲਮੰਤਰ ਇਸਦੀ ਪ੍ਰਮਾਣਿਕਤਾ ਨੂੰ ਸਿੱਧ ਕਰਦਾ ਹੈ।

ੴ ਸਤਿਨਾਮ ਕਰਤਾ ਪੁਰਖ
ਨਿਰਭਓ ਨਿਰਵੈਰ
ਅਕਾਲ ਮੂਰਤ
ਅਜੂਨੀ ਸੈਭੰ
ਗੁਰਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

ਵਿਸ਼ਵੀਕਰਨ ਦੇ ਕਲੇਵਰ 'ਚ ਆਇਆ ਮਨੁੱਖ ਧਰਤੀ/ਕੁਦਰਤ/ਆਕਾਸ਼/ ਪਾਣੀ/ਹਵਾ ਆਦਿ ਨੂੰ ਇਸ ਪੱਧਰ ਉਪਰ ਦੂਸ਼ਿਤ ਕਰ ਚੁੱਕਾ ਹੈ ਕਿ ਮਨੁੱਖ ਦੀ ਆਉਣ ਵਾਲੀ ਨਸਲ ਅਤੇ ਇਹ ਧਰਤੀ ਵਿਨਾਸ ਦੇ ਅਖੀਰਲੇ ਪੱਧਰ ਉਪਰ ਪਹੁੰਚ ਚੁੱਕਾ ਹੈ।ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਜੀਵਨ ਦੇ ਇਨ੍ਹਾਂ ਵਿਸ਼ੇਸ ਤੱਤਾਂ ਦੀ ਉਸਤਤ ਕਰਦੇ ਹੋਏ ਇਹਨਾਂ ਨੂੰ ਗੁਰੂ,ਪਿਤਾ,ਮਾਤਾ ਦਾ ਦਰਜਾ ਦਿੱਤਾ ਸੀ ਪਰ ਮਨੁੱਖ ਨੇ ਲਾਲਚ ਦੇ ਚੱਕਰ ਵਿਚ ਹਵਾ ਨੂੰ ਜਹਿਰੀਲਾ,ਪਾਣੀ ਨੂੰ ਗੰਧਲਾ,ਧਰਤੀ ਨੂੰ ਬੰਜਰ ਬਣਾ ਦਿੱਤਾ ਹੈ।ਕੁਦਰਤ ਨੂੰ ਖਤਮ ਕਰਨ ਲਈ ਕੰਕਰੀਟ ਦੇ ਜੰਗਲ ਉਸਾਰ ਦਿੱਤੇ ਗਏ ਹਨ।ਅਜੋਕੇ ਸਮੇਂ ਵਿਚ ਗੁਰੂ ਜੀ ਦੀ ਬਾਣੀ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ ਸੰਦੇਸ਼ ਦਿੰਦੀ ਹੈ।ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਬਸ ਉਸਨੂੰ ਸਮਝਣ ਤੇ ਅਮਲ ਕਰਨ ਦੀ ਲੋੜ ਹੈ।

ਸਮੁੱਚੇ ਰੂਪ ਵਿਚ ਵਿਸ਼ਵੀਕਰਨ ਦੇ ਵਿਚ ਬਾਣੀ ਨੂੰ ਮੁੜ ਵਿਚਾਰਨ ਦੀ ਸਖਤ ਜਰੂਰਤ ਹੈ।ਮਨੁੱਖ ਜਿਸ ਪੱਧਰ ਉਪਰ ਧਰਤੀ ਦਾ ਵਿਨਾਸ਼ ਕਰਨ ਵਿਚ ਰੁਝਿਆ ਹੋਇਆ ਹੈ,ਉਸ ਵਿਚ ਬਾਣੀ ਉਸਨੂੰ ਸਹੀ ਮਾਰਗ ਉਪਰ ਲਿਆ ਸਕਦੀ ਹੈ।

ਭਾਰਤੀ ਸੰਸਕ੍ਰਿਤੀ ਅਤੇ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ

*ਡਾ. ਹਰਵਿੰਦਰ ਔਲਖ

*

ਭਾਰਤ ਦੀ ਮਹਾਨ ਸੰਸਕ੍ਰਿਤੀ ਦੁਨੀਆਂ ਦੀ ਸਭ ਤੋਂ ਪੁਰਾਣੀ ਤੇ ਉੱਨਤ ਸੰਸਕ੍ਰਿਤੀ ਹੈ। ਇਸ ਦਾ ਮੁੱਢ ਆਰੀਆ ਲੋਕਾਂ ਦੇ ਆਗਮਨ ਨਾਲ ਹੋਇਆ। ਭਾਵੇਂ ਕਿ ਆਰੀਆ ਲੋਕਾਂ ਦੀ ਆਮਦ ਤੋਂ ਪਹਿਲਾਂ ਵੀ ਇਥੋਂ ਦੇ ਲੋਕਾਂ ਦੀ ਸੰਸਕ੍ਰਿਤੀ ਬਹੁਤ ਵਿਕਸਿਤ ਸੀ। ਮੋਹੰਜੋਦੜੋ ਤੇ ਹੜੱਪਾ ਦੀਆਂ ਖੁਦਾਈਆਂ ਤੋਂ ਇਸ ਦੇ ਪ੍ਰਮਾਣ ਮਿਲਦੇ ਹਨ। ਕਿਹਾ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ ਕਿ ਭਾਰਤ ਵਰਸ਼ ਸਦੀਆਂ ਤੋਂ ਵਿਸ਼ਵ ਦੀ ਸੰਸਕ੍ਰਿਤੀ ਦਾ ਪੰਘੂੜਾ ਬਣਿਆ ਰਿਹਾ ਹੈ। ਭਾਰਤ ਦੀ ਸੰਸਕ੍ਰਿਤੀ ਨੇ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਇਕ ਦੂਜੇ ਨਾਲ ਪਿਆਰ ਕਰਨ, ਮਿਲ ਜੁਲ ਕੇ ਰਹਿਣ, ਆਪਸੀ ਭਾਈਚਾਰੇ ਦੀਆਂ ਗੰਢਾਂ ਪੀਡੀਆਂ ਕਰਨ ਤੇ ਪੂਰੇ ਬ੍ਰਹਮਾਂਡ ਨੂੰ ਆਪਣਾ ਘਰ ਸਮਝਣ ਦਾ ਸੰਦੇਸ਼ ਦਿੱਤਾ। ਭਾਰਤੀ ਸੰਸਕ੍ਰਿਤੀ ਨੇ ਵਿਸ਼ਵ ਬੰਧੁਤਵ ਦਾ ਸੰਦੇਸ਼ ਪੂਰੀ ਮਾਨਵਤਾ ਨੂੰ ਦਿੱਤਾ। ਇਸ ਨੇ ਕਿਸੇ ਖਿਤੇ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ ਵਿਚ ਰਹਿਣ ਵਾਲੇ ਲੋਕਾਂ ਦੀ ਸੁਰਖਿਆ ਤੇ ਕਲਿਆਣ ਦੀ ਗੱਲ ਨਹੀਂ ਕੀਤੀ ਸਗੋ ਪੂਰੇ ਜਗਤ ਦੇ ਕਲਿਆਣ ਦੀ ਗੱਲ ਕੀਤੀ ਹੈ।

ਸ਼ਰਵੇ ਭਵੰਤੂ ਸੁਖੀਨਾ
ਸ਼ਰਵੇ ਸੰਤੂ ਨਿਰਾਮਯਾ
ਸਰਵੇ ਭਦ੍ਰਾਣੀ ਪਸ਼ਯੰਤੂ
ਞਮਾ ਕਸ਼ਚਿਦ ਦੁਖ ਭਾਗ ਭਵੇਤ॥

ਸੰਸਾਰ ਦੇ ਸਾਰੇ ਪ੍ਰਾਣੀ ਸੁਖੀ ਹੋਣ..ਸੁਖੀ ਰਹਿਣ..ਸਾਰੇ ਇਕ ਦੂਜੇ ਨਾਲ ਘੁਲ ਮਿਲ ਕੇ ਰਹਿਣ ਤੇ ਉਨ੍ਹਾਂ ਵਿਚਕਾਰ ਕਿਸੇ ਤਰ੍ਹਾਂ ਦਾ ਕੋਈ ਭੇਦ ਨਾ ਹੋਵੇ। ਉਸ ਦਾ ਮੁੱਖ ਸੁਰ *ਵਸੁਧੈਵ ਕੁਟੰਬਕਮ* ਰਿਹਾ ਹੈ। ਭਾਰਤੀ ਸੰਸਕ੍ਰਿਤੀ ਬੁਨਿਆਦੀ ਤੌਰ 'ਤੇ ਕੇਵਲ ਮਨੁੱਖਾਂ ਦੇ ਕਲਿਆਣ ਦੀ ਗੱਲ ਨਹੀਂ ਕਰਦੀ...ਉਹ ਤਾਂ ਪ੍ਰਾਣੀ ਮਾਤਰ ਦੇ ਕਲਿਆਣ ਦੀ ਗੱਲ ਕਰਦੀ ਹੈ।

ਵੇਦਾਂ, ਉਪਨਿਸ਼ਦਾਂ ਤੇ ਪੁਰਾਣ ਗ੍ਰੰਥਾਂ ਦੇ ਰਚਣਹਾਰੇ ਰਿਸ਼ੀਆਂ ਮੁਨੀਆਂ ਨੇ ਸਰਵ ਹਿਤਕਾਰੀ ਭਾਰਤੀ ਸਮਾਜ ਦੀ ਕਲਪਨਾ ਕੀਤੀ ਸੀ। ਕਿਧਰੇ ਵੀ ਇਹੋ ਜਿਹਾ ਕੋਈ ਉਦਾਹਰਣ ਦੇਖਣ ਨੂੰ ਨਹੀਂ ਮਿਲਦਾ ਜਦੋਂ ਉਨ੍ਹਾਂ ਕਿਸੇ ਇਕ ਵਰਗ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ ਜਾਂ ਸੰਪਰਦਾ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ ਦੇ ਕਲਿਆਣ ਦੀ ਗੱਲ ਕੀਤੀ ਹੋਵੇ। ਵੇਦਾਂਤ ਸਮੇਤ ਛੇ ਦਰਸ਼ਨ ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਨੂੰ ਸ਼ਟ ਦਰਸ਼ਨ ਦੇ ਨਾਂਅ ਨਾਲ ਵੀ ਜਾਣਿਆ ਜਾਂਦਾ ਹੈ...ਰਿਸ਼ੀ-ਮੁਨੀਆਂ ਦੇ ਸਮੇਂ ਦੀ ਸੋਚ ਉਡਾਰੀ ਦੇ ਉਤਲੇ ਅੰਬਰਾਂ ਦੀ ਸ਼ਾਹਦੀ ਭਰਦੇ ਹਨ। ਇਹ ਲੋਕ ਕਿੰਨੀ ਉੱਚੀ ਤੇ ਵੱਡੀ ਸੋਚ ਦੇ ਮਾਲਕ ਸਨ...ਇਸ ਦਾ ਪਤਾ ਚਲ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਵੇਦਾਂਤ ਦਰਸ਼ਨ ਨੇ ਭਾਰਤ ਵਿਚ ਸਰਗੁਣ ਤੇ ਨਿਰਗੁਣ ਭਗਤੀ ਪਰੰਪਰਾ ਦੀ ਨੀਂਹ ਰਖੀ ਸੀ। ਇਨ੍ਹਾਂ ਦਾਰਸ਼ਨਿਕਾਂ ਦਾ ਸਰਬ ਸੰਮਤ ਮਤ ਸੀ ਕਿ ਇਸ ਜਗਤ ਨੂੰ ਚਲਾਉਣ ਵਾਲੀ ਇਕ ਸ਼ਕਤੀ ਹੈ...ਜਿਸ ਨੂੰ ਈਸ਼ਵਰ, ਭਗਵਾਨ ਜਾਂ ਕੁਝ ਵੀ ਕਿਹਾ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ।

ਰਿਸ਼ੀਆਂ-ਮੁਨੀਆਂ ਨੇ ਇਸੇ ਈਸ਼ਵਰ ਨੂੰ ਸਰਬ ਵਿਆਪੀ, ਸਰਬ ਸ਼ਕਤੀਮਾਨ ਤੇ ਬ੍ਰਹਮਾਂਡ ਦਾ ਕਰਣਧਾਰ ਮੰਨਿਆਂ ਹੈ। ਹਰ ਵਿਅਤਕੀ ਜਿੱਦਾਂ ਚਾਹੇ ਉਹ ਪਰਮ ਪੁਰਖ ਦੀ ਉਪਾਸਨਾ ਕਰ ਸਕਦਾ ਹੈ। ਇਹ ਉਸ ਦਾ ਅਧਿਕਾਰ ਹੈ ਤੇ ਰਿਸ਼ੀਆਂ-ਮੁਨੀਆਂ ਨੇ ਇਸ ਉੱਪਰ ਕਿਸੇ ਤਰ੍ਹਾਂ ਦੀ ਬੰਦਸ਼ ਨਹੀਂ ਸੀ ਲਾਈ। ਜਦ ਅਸੀਂ ਸ਼ਟ ਦਰਸ਼ਨ ਦੀ ਗੱਲ ਕਰਦੇ ਹਾਂ ਤਾਂ ਇਹ ਗੱਲ ਸਾਫ ਹੋ ਜਾਣੀ ਚਾਹੀਦੀ ਹੈ ਕਿ ਰਿਸ਼ੀ-ਮੁਨੀ ਕਿਸੇ ਇਕ ਮਤ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ ਦੇ ਧਾਰਨੀ ਨਹੀਂ ਸੀ। ਹਰ ਇਕ ਦਾ ਆਪਣਾ ਮਤ ਸੀ...ਰਿਸ਼ੀ-ਮੁਨੀਆਂ ਨੇ ਘੋਰ ਪਰਿਸ਼ਰਮ ਕਰਕੇ ਇਨ੍ਹਾਂ ਦਰਸ਼ਨਾਂ ਦੀ ਸਥਾਪਨਕ ਕੀਤੀ ਸੀ।

ਰਿਸ਼ੀਆਂ-ਮੁਨੀਆਂ ਨੇ ਜਿਸ ਮਹਾਨ ਤੇ ਉੱਤਮ ਭਾਰਤੀ ਸੰਸਕ੍ਰਿਤੀ ਦਾ ਨਿਰਮਾਣ ਕੀਤਾ, ਉਸ ਉੱਪਰ ਜਿੰਨਾ ਮਾਣ ਕੀਤਾ ਜਾਵੇ ਘੱਟ ਹੈ। ਦੁਨੀਆਂ ਦਾ ਕੋਈ ਹੋਰ ਫਲਸਫਾ ਇਸ ਦੇ ਮੇਚ ਦਾ ਨਹੀਂ ਹੈ। ਜਿੰਨਾਂ ਵਿਚਾਰਾਂ ਦਾ ਆਧੁਨਿਕ ਯੁਗ ਵਿਚ ਪ੍ਰਚਾਰ ਕੀਤਾ ਜਾਂਦਾ ਹੈ...ਜੇਕਰ ਅਸੀਂ ਗਹਿਰਾਈ ਵਿਚ ਜਾਈਏ ਤਾਂ ਸਪਸ਼ਟ ਹੋ ਜਾਵੇਗਾ ਕਿ ਇਹਨਾਂ ਦੀ ਕਲਪਨਾ ਸਾਡੇ ਰਿਸ਼ੀਆਂ ਨੇ ਸਦੀਆਂ ਪਹਿਲਾਂ ਕੀਤੀ ਸੀ। ਜੇਕਰ ਪਾਣੀ ਵਗਦਾ ਨਾ ਰਹੇ ਅਤੇ ਇਕੋ ਥਾਈਂ ਖਲੋਤਾ ਰਹੇ ਤਾਂ ਉਹ ਹੌਲੀ ਹੌਲੀ ਛੱਪੜ ਬਣ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਉਸ ਛੱਪੜ ਨੂੰ ਦੇਖ ਇਹ ਕਲਪਨਾ ਕਰਨੀ ਮੁਸ਼ਕਲ ਹੋ ਜਾਂਦਾ ਹੈ ਕਿ ਕਦੇ ਇਹ ਵੀ ਸਾਫ ਪਾਣੀ ਦਾ ਚਸ਼ਮਾ ਹੋਇਆ ਕਰਦਾ ਸੀ।

ਰਿਸ਼ੀਆਂ-ਮੁਨੀਆਂ ਦਾ ਯੁਗ ਖਤਮ ਹੋਣ ਨਾਲ ਇਨ੍ਹਾਂ ਫਲਸਫਿਆਂ ਦਾ ਹਾਲ ਵੀ ਕੁਝ ਇਹੋ ਜਿਹਾ ਹੋਇਆ ਹੈ। ਕਈ ਤਰ੍ਹਾਂ ਦੀਆਂ ਕੁਰੀਤੀਆਂ ਪੈਦਾ ਹੋ ਗਈਆਂ। ਇਨ੍ਹਾਂ ਕੁਰੀਤੀਆਂ ਦਾ ਰਿਸ਼ੀਆਂ-ਮੁਨੀਆਂ ਦੀ ਮੂਲ ਵਿਚਾਰਧਾਰਾ ਜਾਂ ਸੋਚ ਨਾਲ ਕੋਈ ਲੈਣਾ ਦੇਣਾ ਨਹੀਂ ਹੈ। ਕਈ ਤਰ੍ਹਾਂ ਦੀਆਂ ਰੂੜ੍ਹੀਆਂ ਬਾਅਦ ਦੇ ਸਮੇਂ ਵਿਚ ਸਿਰ ਚੁੱਕਦੀਆਂ ਦਿਸਦੀਆਂ ਹਨ...ਇਨ੍ਹਾਂ ਦਾ ਵੇਦਾਂਤ ਨਾਲ ਕੋਈ ਸਬੰਧ ਨਹੀਂ ਹੈ...ਹਿੰਦੂ ਧਰਮ ਦਾ ਨਾਂਅ ਲੈ ਕੇ ਮਨ ਮਰਜੀ ਦੀਆਂ ਵਿਆਖਿਆਵਾਂ ਜਾਂ ਪਰਿਭਾਸ਼ਾਵਾਂ ਦਿੱਤੀਆਂ ਜਾਂਦੀਆਂ ਹਨ...ਇਹ ਵੇਦਾਂ ਦੀ ਮੂਲ ਭਾਵਨਾ ਨਾਲ ਮੇਲ ਨਹੀਂ ਖਾਂਦੀਆਂ।

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਆਪਣੀ ਬਾਣੀ ਵਿਚ ਭੇਖਾਂ ਤੇ ਪਾਖੰਡਾਂ ਦੀ ਕਰੜੀ ਨਿੰਦਾ ਕੀਤੀ ਹੈ...ਉਨ੍ਹਾਂ ਗਲਤ ਰੂੜੀਆਂ ਦਾ ਖੰਡਨ ਕੀਤਾ। ਕਿਉਂਕਿ ਰਿਸ਼ੀਆਂ-ਮੁਨੀਆਂ ਦੇ ਬਾਅਦ ਕਿਸੇ ਨੇ ਗਿਆਨ ਮਾਰਗ ਉੱਪਰ ਚਲਦਿਆਂ ਏਨੀ ਕਰੜੀ ਸਾਧਨਕ ਨਹੀਂ ਕੀਤੀ। ਸ਼ਾਸਤ੍ਰਾਰਥ ਦੀ ਭਾਵਨਾ ਨੂੰ ਨਕਾਰ ਦਿਤਾ ਗਿਆ। ਇਸ ਲਈ ਬੀਤਦੇ ਸਮੇਂ ਨਾਲ ਇਸ ਖੜੋਤੇ ਪਾਣੀ ਵਿਚ ਕਾਈ ਜੰਮ ਗਈ ਸੀ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਭੇਖਾਂ-ਪਾਖੰਡਾਂ ਤੇ ਰੂੜ੍ਹੀਆਂ ਦੇ ਰੂਪ ਵਿਚ ਜੰਮੀ ਹੋਈ ਕਾਈ ਨੂੰ ਸਾਫ ਕਰਨ ਦਾ ਮਹਾਨ ਕਾਰਜ ਕੀਤਾ ਸੀ ਤਾਂ ਜੋ ਆਮ ਲੋਕਾਈ ਨੂੰ ਧਰਮ ਦੇ ਅਸਲੀ ਸਵਰੂਪ ਦਾ ਪਤਾ ਚਲ ਸਕੇ।

ਡਾ. ਮਹਿੰਦਰ ਕੌਰ ਗਿਲ ਨੇ ਇਸ ਦਾ ਵਰਨਣ ਕਰਦਿਆਂ ਕਿਹਾ ਹੈ, “ਕੁਦਰਤ ਦੀ ਸਾਜਨਾ ਕਰਨ ਤੋਂ ਬਾਅਦ ਉਸ ਨੂੰ ਬਹੁਤ ਪ੍ਰਸੰਨ-ਚਿੱਤ ਹੁਲਾਸ ਵਿਚ ਵੇਖਦਾ ਹੈ। ਇਹ ਸ੍ਰਿਸ਼ਟੀ ਬਹੁਰੰਗੀ ਹੈ। ਵੰਨ-ਸੁਵੰਨਤਾ ਇਸ ਦਾ ਖ਼ਾਸਾ ਹੈ। ਇਕ ਪਾਸੇ, ਬ੍ਰਹਿਮੰਡ ਸਿਰਜਣਾ ਦੇ ਵੇਰਵੇ ਰੂਪਮਾਨ ਹੋਏ ਹਨ। ਦੂਸਰੇ ਪਾਸੇ ਮਨੁੱਖੀ

ਜੀਵਨ ਨਾਲ ਸਬੰਧਤ ਜੀਵਨ-ਸ਼ੈਲੀਆਂ, ਗੁਣ-ਔਗੁਣ, ਕਰਮ-ਅਕਰਮ, ਸਦਾਚਾਰ-ਦੁਰਵਿਚਾਰ ਇਸ ਸਾਰੇ ਵਰਤ-ਵਿਹਾਰ ਵਿਚ ਚਲਾਇ ਮਾਨਤਾ ਤੋਂ ਆਵਾਗਮਨ ਵਰਗੇ ਨੇਮ ਬਣਾ ਦਿੱਤੇ ਗਏ ਹਨ। ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਤੋਂ ਕੋਈ ਚਾਹ ਕੇ ਵੀ ਬਚ ਨਹੀਂ ਸਕਦਾ। ਦੁਨੀਆ ਵਿਚ ਵੱਖੋ ਵੱਖ ਧਰਮ ਦੇ ਪੀਰਰ-ਪੈਗੰਬਰ, ਗੁਰੂ ਅਵਤਾਰ ਸਭ ਉਸੇ ਦੇ ਬਣਾਏ ਹਨ। ਸਭ ਉਸੇ ਦੇ ਅਧੀਨ ਨੇਕ-ਕਰਮ ਕਰ ਰਹੇ ਹਨ। ਸਮੇਂ ਨਾਲ ਹਰ ਮਜ਼ਹਬ ਵਿਚ ਕਰਮ-ਕਾਂਡ ਦਾ ਬੋਲਬਾਲਾ ਹੋ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਮਨੁੱਖ ਨਾ ਤਾਂ ਇਨ੍ਹਾਂ ਵਿਕਾਰਾਂ ਤੋਂ ਬਚ ਸਕਦਾ ਹੈ ਤੇ ਨਾ ਹੀ ਅੰਦਰਲੇ ਪੰਜ ਵਿਕਾਰਾਂ ਤੋਂ ਜੋ ਮਨ ਨੂੰ ਸਦਾ ਭਟਕਾਈ ਰੱਖਦੇ ਹਨ।"

ਲਬੁ ਪਾਪ ਦੁਇ ਰਾਜਾ ਮਹਤਾ ਕੂੜ ਹੋਆ ਸਿਕਦਾਰ।
ਕਾਮੁ ਨੇਬੁ ਸਦਿ ਪੁਛੀਐ ਬਹਿ ਬਹਿ ਕਰੇ ਬੀਚਾਰ।

-ਆਸਾ ਦੀ ਵਾਰ

ਸ਼੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਇਸਤਰੀ ਜਾਤੀ ਦੇ ਗੌਰਵ ਦੀ ਸਥਾਪਨਾ ਕੀਤੀ। ਉਹਨਾਂ ਕਿਹਾ ਕਿ ਇਸਤਰੀ ਜਗਤ ਜਨਨੀ ਹੈ। ਉਸ ਦੀ ਤਾਂ ਉਸਤਤ ਕੀਤੀ ਜਾਣੀ ਚਾਹੀਦੀ ਹੈ। ਇਹ ਇਸਤਰੀ ਹੀ ਹੈ ਜਿਹੜੀ ਵੱਡੇ ਪੀਰ-ਪੈਗੰਬਰਾਂ ਤੇ ਮਹਾਪੁਰਖਾਂ ਨੂੰ ਜਨਮ ਦਿੰਦੀ ਹੈ। ਉਦਾਹਰਣ ਵਜੋਂ..

ਭੰਡਿ ਜੰਮੀਐ ਭੰਡਿ ਨਿੰਦਿਐ ਭੰਡਿ ਮੰਗਣੁ ਵੀਆਹੁ॥
ਭੰਡਹੁ ਹੋਵੈ ਦੋਸਤੀ ਭੰਡਹੁ ਚਲੈ ਰਾਹੁ॥
ਭੰਡੁ ਮੁਆ ਭੰਡੁ ਭਾਲੀਐ ਭੰਡਿ ਹੋਵੈ ਬੰਧਾਨੁ॥
ਸ਼ੋ ਕਿਉ ਮੰਦਾ ਆਖੀਐ ਜਿਤੁ ਜੰਮਹਿ ਰਾਜਾਨ॥
ਭੰਡਹੁ ਹੀ ਭੰਡੁ ਉਪਜੈ ਭੰਡੈ ਬਾਝੁ ਨਾ ਕੋਇ॥
ਨਾਨਕ ਤੇ ਮੁਖ ਉਜਲੇ ਤਿਤੁ ਸਚੈ ਦਰਬਾਰਿ॥

-ਆਸਾ ਦੀ ਵਾਰ

ਸ਼੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦੀ ਬਾਣੀ ਦਾ ਅਧਿਐਨ ਕਰਨ ਸਮੇਂ ਇਕ ਸਧਾਰਨ ਵਿਅਕਤੀ ਦੀ ਸੋਚ ਵਿਚ ਗੁਣਾਤਮਕ ਤਬਦੀਲੀ ਆ ਜਾਂਦੀ ਹੈ। ਉਹਦੀ ਸੋਚ ਕਈ ਗੱਲਾਂ ਨੂੰ ਲੈ ਕੇ ਸਪਸ਼ਟ ਹੋ ਜਾਂਦੀ ਹੈ। ਇਸ ਦੇ ਸਿੱਟੇ ਵੱਜੋਂ ਸਮਾਜ ਵਿਚ ਹੋਰਨਾਂ ਪ੍ਰਤੀ ਉਹਦੇ ਵਤੀਰੇ ਵਿਚ ਸੁਹਿਰਦਤਾ ਦਾ ਸਮਾਵੇਸ਼ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਕਿਸੇ ਨਾਲ ਮੰਦਾ ਨਹੀਂ ਬੋਲਣਾ, ਕਿਸੇ ਨੂੰ ਨੀਵੀਂ ਨਜ਼ਰ ਨਾਲ ਨਹੀਂ ਦੇਖਣਾ, ਕਿਸੇ ਨਾਲ ਵਿਤਕਰਾ ਨਹੀਂ ਕਰਨਾ, ਧੱਕੇਸ਼ਾਹੀ ਨਹੀਂ ਕਰਨੀ ਆਦਿ ਸਿਖਿਆਵਾਂ ਜਿਥੇ ਸਰਬਕਾਲਿਕ ਹਨ, ਉਥੇ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੀ ਦਿਬ ਦ੍ਰਿਸ਼ਟੀ ਦਾ ਝਲਕਾਰਾ ਵੀ ਮਿਲਦਾ ਹੈ।

ਨਾਨਕ ਫਿਕੈ ਬੋਲੀਐ ਤਨੁ ਮਨੁ ਫਿਕਾ ਹੋਇ॥
ਫਿਕੋ ਫਿਕਾ ਸਦੀਐ ਫਿਕੋ ਫਿਕੀ ਸੋਇ॥
ਫਿਕਾ ਦਰਗਾਹ ਸਟੀਐ ਮੁਹਿ ਥੁਕਾ ਫਿਕੇ ਪਾਇ॥
ਫਿਕਾ ਮੂਰਖ ਆਖਿਐ ਪਾਣਾ ਲਹੈ ਸਜਾਇ॥

-ਆਸਾ ਦੀ ਵਾਰ

ਡਾ. ਗੁਰਮੁਖ ਸਿੰਘ ਅਨੁਸਾਰ "ਬਚਪਨ ਤੋਂ ਹੀ ਬਾਬਾ ਜੀ (ਸ਼੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ) ਨੇ ਕਮਾਲ ਕਰ ਵਿਖਾਣੀ ਆਰੰਭ ਕਰ ਦਿੱਤੀ। ਆਪ ਬਾਕੀ ਬਚਿਆਂ ਨਾਲੋਂ ਵੱਖ ਸਨ। ਸਾਰਾ ਦਿਨ ਪਰਮਾਤਮਾ ਦੀ ਯਾਦ ਵਿਚ ਮਗਨ ਰਹਿੰਦੇ। ਸਾਰੀਆਂ ਸਾਖੀਆਂ, ਜੋ ਆਪ ਦੇ ਜੀਵਨ ਨਾਲ ਸੰਬੰਧਤ ਹਨ, ਇਸ ਗੱਲ ਦਾ ਗਿਆਨ ਕਰਵਾਉਂਦੀਆਂ ਹਨ ਕਿ ਆਪ ਨੇ ਰੂੜ੍ਹੀਗਤ ਵਿਚਾਰਾਂ ਦੀ ਆਲੋਚਨਾ ਕੀਤੀ ਤੇ ਨਵਾਂ ਗੁਰਮੁਖ ਗਾਡੀ ਰਾਹ ਚਲਾਇਆ। ਪਾਂਧੇ ਨੂੰ ਰਾਮ ਨਾਮ ਦਾ ਉਪਦੇਸ਼ ਦਿੱਤਾ। ਜੰਜੂ ਰਸਮ ਵੇਲੇ ਅਸਲੀ ਜੰਜੂ ਪਾਉਣ ਦਾ ਉਪਦੇਸ਼ ਦਿੱਤਾ। ਸੱਚਾ ਵਿਉਪਾਰ ਕਰ ਦਿਖਾਇਆ। ਮੁਲਾ ਮੁਲਾਣਿਆਂ ਨੂੰ, ਪੰਡਿਤਾਂ ਨੂੰ, ਦੁਨੀਆਂਦਾਰਾਂ ਨੂੰ ਸੱਚੇ ਮਾਰਗ 'ਤੇ ਚੱਲਣ ਦਾ ਉਪਦੇਸ਼ ਦਿੱਤਾ। ਜੋ ਚੋਰ, ਠੱਗ, ਬਦਮਾਸ਼, ਰਾਖਸ਼, ਭੂਤ, ਪ੍ਰੇਤ, ਕਲਯੁਗ ਆਪ ਨੂੰ ਮਿਲਿਆ ਆਪ ਨੇ ਉਸ ਨੂੰ ਆਪਣੇ ਨਿਰਮਲ ਤੇ ਸ਼ੁਧ ਬਚਨਾਂ ਨਾਲ ਸਾਧ ਕਰ ਦਿਖਾਇਆ। ਮਾਨਸ ਤੋਂ ਦੇਵਤਾ ਕਰ ਦਿਖਾਉਣਾ ਆਪ ਦਾ ਹੀ ਕੰਮ ਸੀ। ਸਿਧਾਂ ਨੂੰ ਰਾਮ ਨਾਮ ਨਾਲ ਜੋੜ ਕੇ 'ਸ਼ਬਦਿ ਸਾਂਤ ਵਾਰਤਾ' ਦਿਖਾਈ। ਗੱਲ ਕੀ ਸਾਰੀ ਉਮਰ ਆਪ ਦਾ ਵਾਹ ਆਮ ਲੋਕਾਂ ਦੇ ਧਾਰਮਿਕ ਆਗੂਆਂ ਨਾਲੋਂ ਵੱਖ ਰਿਹਾ।"[2]

ਸਿੰਮਲ ਰੁਖ ਸਰਾਇਆ ਅਤਿ ਦੀਰਖ ਅਤਿ ਮੁਚੁ॥
ਓਏ ਜਿ ਆਵਹਿ ਆਸ ਕਰਿ ਜਾਹਿ ਨਿਰਾਸੇ ਕਿਤੁ॥
ਫਲ ਫਿਕੈ ਫੁਲ ਬਕਬਕੇ ਕੰਮਿ ਨਾ ਆਵਹਿ ਪਤੁ॥
ਮਿਠਤੁ ਨੀਵੀ ਨਾਨਕਾ ਗੁਣ ਚੀਗਿਆਈਆ ਤਤੁ॥
ਸਭੁ ਕੋ ਨਿਵੈ ਆਪ ਕਉ ਪਰ ਕਉ ਨਿਵੈ ਨਾ ਕੋਇ॥
ਧਾਰਿ ਤਾਰਾਜੁ ਤੋਲੀਐ ਨਿਵੈਂ ਸੁ ਗਉਰਾ ਹੋਇ॥
ਅਪਰਾਧੀ ਦੂਣਾ ਨਿਵੈ ਜੋ ਹੰਤਾ ਮਿਰਗਾਹਿ॥

-ਆਸਾ ਦੀ ਵਾਰ

ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਦਸਾਂ ਨਹੁੰਆਂ ਦੀ ਕਿਰਤ ਕਰਨ ਦਾ ਉਪਦੇਸ਼ ਦਿੱਤਾ ਸੀ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਦਾ ਇਹ ਉਪਦੇਸ਼ ਕੇਵਲ ਪੜ੍ਹਣ ਜਾਂ ਸੁਨਣ ਦੀ ਚੀਜ ਨਹੀਂ ਹੈ। ਇਸ ਉੱਪਰ ਅਮਲ ਕਰਨ ਨਾਲ ਹੀ ਇਕ ਮਨੁੱਖ ਚੰਗਾ ਮਨੁੱਖ ਬਣ ਸਕਦਾ ਹੈ। ਜੇ ਉਹ ਆਪਣੀ ਪੂਰੀ ਈਮਾਨਦਾਰੀ ਨਾਲ ਦਸਾਂ ਨਹੁੰਆਂ ਦੀ ਕਿਰਤ ਕਰਦਾ ਹੈ, ਕਿਸੇ ਦਾ ਹੱਕ ਨਹੀਂ ਮਾਰਦਾ ਤਾਂ ਉਹ ਗੁਰੂ ਜੀ ਦਾ ਸੱਚਾ ਸ਼ਰਧਾਲੂ ਹੈ...ਜੇਕਰ ਉਹ ਇਸ ਉੱਪਰ ਪੂਰਾ ਨਹੀਂ ਉੱਤਰਦਾ ਤਾਂ ਇਹ ਉਸ ਦਾ ਭੇਖ ਪਾਖੰਡ ਹੀ ਹੈ। ਜਦ ਗੁਰੂ ਜੀ ਭੇਖਾਂ ਪਾਖੰਡਾਂ ਦਾ ਖੰਡਨ ਕਰਦੇ ਹਨ ਤਾਂ ਉਹ ਕੇਵਲ ਮਨੁੱਖ ਦੀ ਬਾਹਰੀ ਦਿਖ ਦੀ ਚਰਚਾ ਨਹੀਂ ਕਰ ਰਹੇ ਹੁੰਦੇ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੇ ਵਿਚਾਰ ਅਨੁਸਾਰ ਮਨੁੱਖ ਦੀ ਬਾਹਰੀ ਦਿੱਖ ਵੀ ਅਜਿਹੀ ਹੋਣੀ ਚਾਹੀਦੀ ਹੈ...ਜਿਸ ਤੋਂ ਉਸ ਦੇ ਉਜਲੇ ਕਰਮਾਂ ਦਾ ਝਲਕਾਰਾ ਮਿਲਦਾ ਹੋਵੇ।

ਜੇ ਮਨੁੱਖ ਦੀ ਬਾਹਰੀ ਦਿਖ ਇਕ ਸਾਊ ਬੰਦੇ ਦੀ ਹੈ ਪਰ ਕਿਰਦਾਰ ਪੱਖੋਂ ਉਹ ਸਾਊ ਨਹੀਂ ਹੈ ਤਾਂ ਉਹਦਾ ਕੋਈ ਲਾਭ ਨਹੀਂ। ਮਨੁੱਖ ਦਾ ਅਸਲ ਜੋਰ ਇਕ ਚੰਗਾ, ਸਾਫ ਸੁਥਰਾ ਮਨੁੱਖ ਬਨਣ ਦਾ ਹੋਣਾ ਚਾਹੀਦਾ ਹੈ। ਦਿਖ ਪੱਖੋਂ ਚੰਗਾ ਲੱਗਣਾ ਭਾਵੇਂ ਚੰਗੀ ਗੱਲ ਹੈ ਪਰ ਕਿਰਦਾਰ ਦਾ ਚੰਗਾ ਹੋਣਾ ਵਧੇਰੇ ਮਹੱਤਵਪੂਰਨ ਹੈ।

ਹਉਮੈ ਏਹਾ ਜਾਤਿ ਹੈ ਹਉਮੈ ਕਰਮ ਕਮਾਹਿ॥
ਹਉਮੈ ਏਈ ਬੰਧਨਾ ਫਿਰਿ ਫਿਰਿ ਜੋਨੀ ਪਾਹਿ॥
ਹਉਮੈ ਕਿਥਹੁ ਉਪਜੈ ਕਿਤੁ ਸੰਜਮਿ ਇਹ ਜਾਇ॥
ਹਉਮੈ ਏਹੋ ਹੁਕਮੁ ਹੈ ਪਇਐ ਕਿਰਤਿ ਫਿਰਾਹਿ॥
ਹਉਮੈ ਦੀਰਖੁ ਰੋਗ ਹੈ ਦਾਰੂ ਭੀ ਇਸੁ ਮਾਹਿ॥
ਕਿਰਪਾ ਕਰੇ ਜੇ ਆਪਣੀ ਤਾ ਗੁ ਕਾ ਸਬਦੁ ਕਮਾਹਿ॥
ਨਾਨਕ ਕਹੈ ਸੁਣਹੁ ਜਨਹੁ ਇਤੁ ਸੰਜਮਿ ਦੁਖ ਜਾਹਿ॥

-ਆਸਾ ਦੀ ਵਾਰ

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਮਲਿਕ ਭਾਗੋ ਦੇ ਘਰ ਭੋਜਨ ਕਰਨ ਤੋਂ ਇਨਕਾਰ ਕਰ ਦਿੱਤਾ ਸੀ। ਉਹਨਾਂ ਦਾ ਕਹਿਣਾ ਸੀ ਕਿ ਉਸ ਨੇ ਯੋਗ ਢੰਗ ਨਾਲ ਕਮਾਈ ਨਹੀਂ ਕੀਤੀ...ਵਧੇਰੇ ਕਮਾਉਣ ਜਾਂ ਅਮੀਰ ਬਨਣ ਲਈ ਗਰੀਬ ਲੋਕਾਂ ਨਾਲ ਧੱਕਾ ਕੀਤਾ ਹੈ,,ਉਹ ਗਰੀਬਾਂ ਦੀ ਮਿਹਨਤ ਨੂੰ ਲੁੱਟ ਰਿਹਾ ਹੈ...ਬੇਬਸ ਤੇ ਮਜਬੂਰ ਲੋਕਾਈ ਦੇ ਹੱਕ ਮਾਰ ਰਿਹਾ ਹੈ...;ਉਹਦੀ ਕਮਾਈ ਦਸਾਂ ਨਹੁੰਆਂ ਦੀ ਕਿਰਤ ਨਹੀਂ ਹੈ ਸਗੋਂ ਇਹ ਤਾਂ ਗਰੀਬ, ਲਾਚਾਰ ਤੇ ਮਾਸੂਮ ਲੋਕਾਂ ਦਾ ਲਹੂ ਹੈ, ਇਸ ਹਾਲਤ ਵਿਚ ਉਹ ਉਸ ਦੇ ਮਹਿਲਾਂ ਵਿਚ ਪਧਾਰਕੇ ਕਿਵੇਂ ਭੋਜਨ ਗ੍ਰਹਿਣ ਕਰ ਸਕਦੇ ਹਨ। ਮਲਿਕ ਭਾਗੋ ਨੂੰ ਦਿੱਤਾ ਗਿਆ ਗੁਰੂ ਜੀ ਦਾ ਇਹ ਉਪਦੇਸ਼ ਕੀ ਦਰਸਾਂਦਾ ਹੈ...?

ਮਨੁੱਖ ਦੀ ਕਥਨੀ ਤੇ ਕਰਨੀ ਇਕ ਹੋਣੀ ਚਾਹੀਦੀ ਹੈ...ਗੱਲਾਂ ਕਰਨੀਆਂ ਚੰਗੇ ਆਚਰਨ ਦੀਆਂ ਪਰ ਕਰਤੂਤਾਂ ਭੈੜੀਆਂ ਹਰਨੀਆਂ...ਮਨੁੱਖ ਦੇ ਚਰਿੱਤਰ ਦਾ ਇਹ ਵਿਰੋਧਾਭਾਸ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦੇ ਦ੍ਰਿਸ਼ਟੀਕੋਣ ਤੋਂ ਕਿਸੇ ਵੀ ਹਾਲਤ ਵਿਚ ਸਵੀਕਾਰ ਕਰਨ ਯੋਗ ਨਹੀਂ ਹੋ ਸਕਦਾ। ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਜੋ ਕਿਹਾ ਉਹੀ ਕੀਤਾ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਮਲਿਕ ਭਾਗੋਂ ਦਾ ਨਿਮੰਤਰਣ ਠੁਕਰਾ ਦਿਤਾ ਤੇ ਭਾਈ ਲਾਲੋ ਦੇ ਘਰ ਨੂੰ ਭਾਗ ਲਾਏ...ਕਿਸ ਲਈ...ਭਾਈ ਲਾਲੋ ਦਸਾਂ ਨਹੁੰਆਂ ਦੀ ਕਿਰਤ ਕਰਦਾ ਸੀ। ਉਹਦਾ ਭੋਜਨ ਦੁੱਧ ਦੀ ਨਿਆਈ

ਸੀ...ਜਿਸ ਨੂੰ ਗ੍ਰਹਿਣ ਕਰਕੇ ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੂੰ ਅਸੀਮ ਤ੍ਰਿਪਤੀ ਮਿਲੀ ਸੀ।

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਸਪਸ਼ਟ ਸ਼ਬਦਾਂ ਵਿਚ ਕਿਹਾ ਹੈ... "ਜੇ ਰੱਤ ਲਗੈ ਕਪੜੈ..ਜਾਮਾ ਹੋਇ ਪਲੀਤ...ਜੋ ਰਤੁ ਪੀਣੈ ਮਾਨਸਾ..ਸੇਉ ਕਿਉ ਨਿਰਮਲ ਚੀਤ..!" ਵਿਚਾਰਾਂ ਦੀ ਏਨੀ ਸਪਸ਼ਟਤਾ ਤੇ ਏਨੀ ਗਹਿਰਾਈ ਦੇਖ ਕੇ ਮਨ ਅਸ਼ ਅਸ਼ ਕਰ ਉਠਦਾ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਜੀ ਦੇ ਮਤ ਅਨੁਸਾਰ ਦੂਜੇ ਦਾ ਸ਼ੋਸ਼ਣ ਕਰਨ ਵਾਲਾ ਵਿਅਕਤੀ ਚੰਗਾ ਮਨੁੱਖ ਭਾਵ ਨਿਰਮਲ ਚੀਤ ਹੋ ਹੀ ਨਹੀਂ ਸਕਦਾ...ਉਹ ਗਲਤ ਇਨਸਾਨ ਹੈ...ਤੇ ਜਿੰਨੀ ਦੇਰ ਉਹ ਆਪਣਾ ਕਿਰਦਾਰ ਨਹੀਂ ਬਦਲਦਾ ਉਨੀਂ ਦੇਰ ਉਹ ਚੰਗਾ ਮਨੁੱਖ ਹੋ ਹੀ ਨਹੀਂ ਸਕਦਾ।

ਅੱਜ ਅਸੀਂ ਜਿਹੋ ਜਿਹੇ ਦੌਰ ਵਿਚੋਂ ਲੰਘ ਰਹੇ ਹਾਂ...ਸਾਡੇ ਲਈ ਜਰੂਰੀ ਹੋਰ ਵੀ ਜਰੂਰੀ ਹੋ ਜਾਂਦਾ ਹੈ ਕਿ ਅਸੀਂ ਗੁਰੂ ਜੀ ਦੀ ਬਾਣੀ ਅਤੇ ਉਹਨਾਂ ਦੇ ਮਹਾਨ ਜੀਵਨ ਤੋਂ ਸਹੀ ਦਿਸ਼ਾ ਵਿਚ ਪ੍ਰੇਰਣਾ ਲਈਏ...ਨਿਰਾ ਨਾਮ ਜਪਣ ਲਾਲ ਗੱਲ ਨਹੀਂ ਬਣਨੀ...ਸਾਡਾ ਕਿਰਦਾਰ ਵੀ ਉੱਚਾ ਸੁੱਚਾ ਹੋਣਾ ਚਾਹੀਦਾ ਹੈ।

ਡਾ. ਹਰਬੰਸ ਕੌਰ ਸੱਗੂ ਦੇ ਸ਼ਬਦਾਂ ਵਿਚ "ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦੀਆਂ ਸਿਖਿਆਵਾਂ ਕਿਸੀ ਇਕ ਫਿਰਕੇ ਦੇ ਲੋਕਾਂ ਲਈ ਜਾਂ ਸਿਰਫ ਸਿੱਖਾਂ ਲਈ ਹੀ ਨਹੀਂ ਹਨ ਬਲਕਿ ਪੂਰੇ ਬ੍ਰਹਮੰਡ ਵਾਸਤੇ ਹਨ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਵਾਸਤੇ ਕੋਈ ਹਿੰਦੂ ਤੇ ਕੋਈ ਮੁਸਲਮਾਨ ਨਹੀਂ ਸੀ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੇ ਉਪਦੇਸ਼ ਸਾਰੀ ਲੋਕਾਈ ਲਈ ਸਾਂਝੇ ਸਨ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਵਾਸਤੇ ਚਾਰੇ ਮਜ਼ਹਬ ਤੇ ਚਾਰੇ ਵਰਣ ਬਰਾਬਰ ਸਨ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਵਾਸਤੇ ਕੋਈ ਉਚਾ ਤੇ ਕੋਈ ਨੀਵਾਂ ਨਹੀਂ ਸੀ। ਸਾਰੇ ਬਰਾਬਰ ਸਨ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਆਪਣੇ ਉਪਦੇਸ਼ ਵਿਚ ਮਨੁੱਖੀ ਆਚਾਰ ਨੂੰ ਸੱਭ ਤੋਂ ਉੱਪਰ ਥਾਂ ਦਿੱਤੀ। ਆਪ ਜੀ ਦਾ ਫਰਮਾਨ ਹੈ।3

ਸਚਹੁ ਉਰੈ ਸਭੁ ਕੋ ਉਪਰਿ ਸਚੁ ਆਚਾਰੁ।

(ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ, ਪੰਨਾ 62)

ਭਾਰਤੀ ਸੰਸਕ੍ਰਿਤੀ ਵਿਚ ਪ੍ਰਾਣੀ ਮਾਤਰ ਦੇ ਕਲਿਆਣ ਦੀ ਗੱਲ ਕੀਤੀ ਗਈ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਬਰਾਬਰੀ ਦੀ ਗੱਲ ਕਰਦੇ ਹਨ, ਸਾਰਿਆਂ ਦੇ ਕਲਿਆਣ ਦੀ ਗੱਲ ਕਰਦੇ ਹਨ, ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੀ ਨਜ਼ਰ ਵਿਚ ਕੋਈ ਛੋਟਾ ਕੋਈ ਵੱਡਾ ਨਹੀਂ ਹੈ ਅਤੇ ਨਾ ਹੀ ਉਹ ਕਿਸੇ ਨੂੰ ਨੀਚ ਮੰਨਦੇ ਹਨ।

ਡਾ. ਹਰਬੰਸ ਕੌਰ ਸੱਗੂ ਦੇ ਸ਼ਬਦਾਂ ਵਿਚ "ਗੁਰੂ ਲਹਿਰ ਜਾਂ ਸਿੱਖ ਲਹਿਰ ਦਾ ਮਕਸਦ ਚੌਥੇ ਵਰਗ ਦੇ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਮੁਖਧਾਰਾ ਵਿਚ ਲੈ ਕੇ ਆਉਣਾ ਸੀ। ਇਹੀ ਕਾਰਨ ਹੈ ਕਿ ਆਪ ਜੀ ਨੇ ਜੋ ਬਾਣੀ ਇਕੱਠੀ ਕੀਤੀ ਉਸ ਵਿਚ ਨੀਵੇਂ ਕਹੇ ਜਾਣ ਵਾਲੇ ਭਗਤਾਂ ਦੀ ਬਾਣੀ ਵੀ ਸੀ ਤੇ ਬਾਅਦ ਵਿਚ ਗੁਰੂ ਅਰਜੁਨ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਇਹ ਬਾਣੀ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ ਵਿਚ ਦਰਜ ਕਰਕੇ ਇਸ ਲਹਿਰ ਦੇ ਟੀਚੇ ਨੂੰ ਸਿਖਰਾਂ ਤੇ ਪਹੁੰਚਾਇਆ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਅਗਰ ਹਿੰਦੂ ਮੁਸਲਮਾਨ ਵਿਚ ਫਰਕ ਨਹੀਂ ਕਰਦੇ ਸਨ ਤਾਂ ਹੀ ਤਾਂ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੇ ਜਿੰਦਗੀ ਭਰ ਦੇ ਸਾਥੀ ਭਾਈ ਬਾਲਾ ਤੇ ਭਾਈ ਮਰਦਾਨਾ ਸਨ। ਪਹਿਲਾ ਹਿੰਦੂ ਤੇ ਦੂਜਾ ਮੁਸਲਮਾਨ। ਐਮਨਾਬਾਦ ਵਿਚ ਉਨ੍ਹਾਂ ਮਲਕ ਭਾਗੋ ਦੇ ਘਰ ਰਹਿਣਾ ਪ੍ਰਵਾਨ ਨਾ ਕੀਤਾ ਤੇ ਭਾਈ ਲਾਲੋ ਦੇ ਘਰ ਰਹਿ ਕੇ ਉਸ ਦੀ ਕੋਧਰੇ ਦੀ ਰੋਟੀ ਨੂੰ ਸਵੀਕਾਰਿਆ ਅਤੇ ਮਲਕ ਭਾਗੋ ਦੇ ਪਕਵਾਨਾਂ ਨੂੰ ਅਪ੍ਰਵਾਨ ਕੀਤਾ ਤੇ ਕਿਹਾ

ਹਕ ਪਰਾਇਆ ਨਾਨਕਾ ਉਸ ਸੂਅਰ ਉਸ ਗਾਇ॥

(ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਪੰਨਾ 141)

ਆਪ ਜੀ ਨੇ

ਨੀਚਾ ਅੰਦਰ ਨੀਚ ਜਾਤਿ ਨੀਚੀ ਹੂ ਅਤਿ ਨੀਚੁ
ਨਾਨਕੁ ਤਿਨ ਕੈ ਸੰਗਿ ਸਾਥਿ ਵਡਿਆ ਸਿਉ ਕਿਆ ਰੀ॥

(ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਪੰਨਾ 15)

ਕਹਿ ਕੇ ਗਰੀਬਾਂ, ਲਿਤਾੜੇ ਹੋਏ ਲੋਕਾਂ ਤੇ ਅਛੂਤ ਕਹੇ ਜਾਣ ਵਾਲਿਆਂ ਨੂੰ ਗਲੇ ਲਗਾਇਆ ਤੇ ਕਿਹਾ ਕਿ ਵਡਿਆਂ ਨਾਲ ਸਾਡੀ ਕੋਈ ਦੋਸਤੀ ਨਹੀਂ।"4

"ਭਾਈ ਗੁਰਦਾਸ ਨੇ ਮਨ ਨੂੰ ਨੀਵਾਂ ਕਰਨ ਲਈ ਸੇਵਾ ਨੂੰ ਜਰੂਰੀ ਦਸਿਆ ਅਤੇ ਕਿਹਾ ਕਿ ਨੀਵੀਂ ਤੋਂ ਨੀਵੀਂ ਸੇਵਾ ਦੁਆਰਾ ਮਨ ਵਿਚ ਸਿਦਕ ਤੇ ਸਬੂਰੀ ਆ ਜਾਂਦੀ ਹੈ। ਸੇਵਾ ਸਿੰਮਲ ਸਮਾਨ ਸਾਕਤੀ ਰੁਚੀ ਦਾ ਨਾਅ ਕਰਨ ਦੀ ਸਮਰਥਾ ਰੱਖਦੀ ਹੈ ਤੇ ਸਿੱਟੇ ਵਜੋਂ ਮਨੁੱਖ ਚੰਦਨ ਵਾਂਗ ਦੂਜਿਆਂ ਨੂੰ ਠੰਡਕ ਤੇ ਖੁਸ਼ਬੂ ਦੇਣ ਲੱਗ ਪੈਂਦਾ ਹੈ।"5

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦੀ ਬਾਣੀ ਵਿਚ ਮਹਾਨ ਸਿਖਿਆਵਾਂ ਦਰਜ ਹਨ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਮਨੁੱਖ ਮਾਤਰ ਨੂੰ ਊਚ-ਨੀਚ ਦੇ ਭੇਦ ਤੋਂ ਉੱਪਰ ਉੱਠਣ ਦੀ ਸਿਖਿਆ ਦਿੱਤੀ ਸੀ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਨਾਮ ਜਪਣ, ਵੰਡ ਛਕਣ ਤੇ ਕਿਰਤ ਕਰਨ ਜਿਹੇ ਮਹਾਨ ਸਿਧਾਂਤ ਦਿੱਤੇ। ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਉਨ੍ਹਾਂ ਮਾਨਵ ਜੀਵਨ ਲਈ ਇਕ ਆਦਰਸ਼ ਰਾਹ ਦਿਖਾਇਆ। ਇਸ ਰਾਹ ਉੱਪਰ ਚੱਲ ਕੇ ਹੀ ਨਾ ਕੇਵਲ ਮਨੁੱਖ ਦਾ ਆਪਣਾ ਸਗੋਂ ਪੂਰੇ ਜਗਤ ਦਾ ਕਲਿਆਣ ਹੋ ਸਕਦਾ ਹੈ।

ਹਵਾਲੇ...

1. ਆਸਾ ਦੀ ਵਾਰ-ਡਾ. ਮਹਿੰਦਰ ਕੌਰ ਗਿਲ। ਸਫਾ 7।
2. ਗੁਰਬਾਣੀ ਵਿਚਾਰ-ਡਾ. ਗੁਰਮੁਖ ਸਿੰਘ। ਸਫਾ 9-10।
3. ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਜੀਵਨ ਤੇ ਵਿਚਾਰਧਾਰਾ।ਡਾ. ਹਰਬੰਸ ਕੌਰ ਸੱਗੂ। ਸਫਾ 11।
4. -ਉਹੀ—ਸਫਾ 13।
5. ਗੁਰਬਾਣੀ ਚਿੰਤਨ 9।

Volume : 6 | Issue :49 | October-December2019 ISSN: 2349-1876 (Print) | ISSN : 2454-1826 (Online)

ਭਾਰਤੀ ਸੰਸਕ੍ਰਿਤੀ ਅਤੇ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ

* ਡਾ. ਜਸਪ੍ਰੀਤ ਕੌਰ ਮਾਨ

*

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਭਾਰਤੀ ਸੰਸਕ੍ਰਿਤੀ ਦੇ ਆਦਿ ਕਵੀ ਮੰਨੇ ਜਾਂਦੇ ਹਨ।ਜਿਸ ਯੁਗ ਵਿਚ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਆਪਣੀ ਬਾਣੀ ਦਾ ਉਚਾਰਨ ਕੀਤਾ,ਉਹ ਯੁਗ ਭਾਰਤੀ ਸੰਸਕ੍ਰਿਤੀ ਦੇ ਪਤਨ ਦਾ ਯੁਗ ਸੀ।ਦਵੰਦ ਅਤੇ ਪਾਖੰਡ ਦਾ ਮਾਹੌਲ ਚਾਰੇ ਪਾਸੇ ਫੈਲਿਆ ਹੋਇਆ ਸੀ। ਜੀਵਨ ਦੇ ਹਰ ਖੇਤਰ ਵਿਚ ਖਲਾਅ ਤੇ ਭਟਕਣਾ ਦਾ ਯੁਗ ਚਲ ਰਿਹਾ ਸੀ। ਸੰਸਕ੍ਰਿਤੀ ਦਾ ਆਦਰਸ਼ਕ ਰੂਪ ਕਿਧਰੇ ਵੀ ਨਜ਼ਰ ਨਹੀਂ ਆ ਰਿਹਾ ਸੀ।ਸਮਾਜਕ ਜੀਵਨ ਵਿਚ ਐਸੀ ਤ੍ਰੇੜਾਂ ਆ ਚੁਕੀਆਂ ਸਨ, ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਕਰਕੇ ਸਮਾਜ ਦੀ ਬੁਨਿਆਦੀ ਕਦਰਾਂ ਕੀਮਤਾਂ ਨਾ ਸਿਰਫ ਆਪਣਾ ਮਹੱਤਵ ਹੀ ਗੁਆ ਚੁਕੀਆਂ ਸਨ ਸੰਗੋ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੀ ਥਾਂ ਅਨੈਤਿਕ ਕਦਰਾਂ ਕੀਮਤਾਂ ਨੇ ਲੈ ਲਈਆਂ ਸਨ।ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਅਜਿਹੇ ਮਾਹੌਲ ਵਿਚ ਆਪਣੀ ਬਾਣੀ ਰਚ ਕੇ ਸੰਸਕ੍ਰਿਤਿਕ ਕ੍ਰਾਂਤੀ ਲਿਆਂਦੀ। ਇਸੇ ਕ੍ਰਾਂਤੀ ਨੇ ਮਧਕਾਲ ਵਿਚ ਪੁਨਰ-ਜਾਗਰਣ ਦੀ ਭੂਮਿਕਾ ਤਿਆਰ ਕੀਤੀ। ਅਸਲ ਵਿਚ ਅਜਿਹੀ ਭੂਮਿਕਾ ਰਾਹੀਂ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਧਾਰਮਕ ਪੁਨਰ ਉਥਾਨ ਲਈ ਉਪਜਾਊ ਜ਼ਮੀਨ ਤਿਆਰ ਕਰ ਰਹੇ ਸਨ।ਉਤਰੀ ਭਾਰਤ ਦੇ ਭਗਤੀ ਅੰਦੋਲਨ ਵਿਚ ਅਜਿਹੇ ਯਤਨ ਵਿਲਖਣ ਸੁਰ ਰੱਖਦੇ ਸਨ।ਇਹ ਵਿਲਖਣ ਸੁਰ ਭਾਰਤੀ ਸੰਸਕ੍ਰਿਤੀ ਨੂੰ ਨਵੇਂ ਅਰਥਾਂ ਵਿਚ ਪ੍ਰਸਤੁਤ ਕਰਨ ਲਈ ਸਮਰਥ ਵੀ ਬਣੇ।

ਭਾਰਤ ਧਰਮ ਪ੍ਰਧਾਨ ਦੇਸ਼ ਰਿਹਾ ਹੈ।ਇੱਥੇ ਕਈ ਧਰਮਾਂ ਨੇ ਜਨਮ ਲਿਆ 'ਭਾਰਤੀ ਸੰਸਕ੍ਰਿਤੀ ਧਰਮ ਨੂੰ ਸੱਚ ਨਾਲ ਜੋੜਦੀ ਹੈ। ਪਰ ਸੱਚ ਇਸ ਕਾਲ ਵਿਚ ਕਿਧਰੇ ਵੀ ਨਜ਼ਰ ਨਹੀਂ ਆਉਂਦਾ'[1] ਸੱਚ ਦਾ ਪ੍ਰਚਾਰ ਕਰਨ ਵਾਲੇ ਆਪਣੇ ਧਰਮ ਵਿਚ ਸੱਚ ਨੂੰ ਮੂਲੋਂ ਖਤਮ ਹੀ ਕਰਨਾ ਚਾਹੁੰਦੇ ਸਨ।ਭਾਰਤੀ ਸੰਸਕ੍ਰਿਤੀ ਦੇ ਇਸ ਮੂਲ ਤੱਤ ਦੀ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਪੁਨਰ ਸਥਾਪਨਾ ਕੀਤੀ।[2] 'ਸੱਚ' ਤੋਂ ਵੀ ਉੱਪਰ ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਸਚਿਆਰ ਨੂੰ ਜੀਵਨ ਜਾਚ ਦਾ ਬੁਨਿਆਦੀ ਆਧਾਰ ਮੰਨਿਆ।ਇਹੀ ਆਧਾਰ ਹੀ ਜੀਵਨ ਜਾਚ ਨੂੰ ਵਿਵਹਾਰਕ ਤੇ ਪ੍ਰਯੋਗਾਤਮਕ ਬਣਾਉਂਦਾ ਹੈ।ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦੇ ਸਾਹਮਣੇ ਇਹੀ ਪ੍ਰਸ਼ਨ ਸੀ ਕਿ, ਸੱਚ ਦੀ ਪ੍ਰਾਪਤੀ ਕਿਵੇਂ ਕੀਤੀ ਜਾਵੇ।ਅਤੇ ਪ੍ਰਾਪਤ ਹੋਇਆ ਸੱਚ ਕਿਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਸਮਾਜਕ ਜੀਵਨ ਵਿਚ ਪਹੁੰਚਾਇਆ ਜਾ ਸਕੇ, ਜਿਸ ਦੇ ਨਾਲ ਮਨੁੱਖੀ ਭਾਈਚਾਰੇ ਨੂੰ ਸਹੀ ਦਿਸ਼ਾ ਮਿਲ ਸਕੇ। ਭਾਰਤੀ ਸੰਸਕ੍ਰਿਤੀ ਵਿਚ ਮਨੁੱਖੀ ਜੀਵਨ ਦਾ ਮਹਾਨ ਉਦੇਸ਼ ਸੱਚ ਨੂੰ ਪ੍ਰਾਪਤ ਕਰਕੇ ਜਗਤ ਲਈ ਕਲਿਆਣਕਾਰੀ ਬਣਾਉਂਦਾ ਹੈ।ਭਾਰਤੀ ਸੰਸਕ੍ਰਿਤੀ ਵਿਚ ਸੱਚ ਤੋਂ ਬਿਨ੍ਹਾਂ ਧਾਰਮਕ ਅਤੇ ਸਮਾਜਕ ਜੀਵਨ ਦੀ ਸਹੀ ਸੋਝੀ ਪ੍ਰਾਪਤ ਨਹੀਂ ਹੋ ਸਕਦੀ ਹੈ।ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਆਪਣੀ ਬਾਣੀ ਵਿਚ ਸੱਚ ਨੂੰ ਬੜੀ ਸੂਖਮਤਾ ਦੇ ਨਾਲ ਬਿਆਨ ਕੀਤਾ ਹੈ।

ਗੁਰਮੁਖ ਹੀ ਉਹ ਸੱਚਾ ਇਨਸਾਨ ਹੈ ਜੋ ਗੁਰੂ ਦੇ ਦੱਸੇ ਹੋਏ ਰਾਹ 'ਤੇ ਚਲ ਕੇ ਹੀ ਸੱਚ ਦੀ ਪ੍ਰਾਪਤੀ ਕਰ ਸਕਦਾ ਹੈ।ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਵਿਚ ਵੀ ਸਭਿਆਚਾਰਕ ਮਨੁੱਖ ਦਾ ਸੰਕਲਪ ਸੱਚ ਰਾਹੀਂ ਹੀ ਨੇਪਰੇ ਚੜਿਆ ਦਿਖਾਈ ਦਿੰਦਾ ਹੈ।ਸੱਚ ਸਦਕਾ ਹੀ ਮਨੁੱਖ ਵਿਚ ਸੇਵਾ, ਤਿਆਗ, ਭਗਤੀ, ਦੇ ਭਾਵ ਜਾਗਦੇ ਹਨ।ਸੱਚ ਨੂੰ ਪ੍ਰਾਪਤ ਕਰਨ ਵਾਲਾ ਮਨੁੱਖ ਹੀ ਕਈ ਆਦਰਸ਼ ਸਥਾਪਤ ਕਰਦਾ ਹੈ।ਉਹੀ ਆਦਰਸ਼ ਗੁਰਮੁਖ ਬੰਦਾ ਹੀ ਸੱਚੇ ਰੱਬ ਦੀ ਆਗਿਆ ਵਿਚ ਰਹਿੰਦਾ ਹੈ।

ਆਪ ਜੀ ਦੀ ਆਵਾਗਮਣ ਦੇ ਭਾਰਤੀ ਸੰਸਕ੍ਰਿਤੀ ਵਿਚ ਆਸਥਾ ਰੱਖਦੇ ਹਨ।ਆਪ ਜੀ ਅਨੁਸਾਰ ਹਰ ਵਿਅਕਤੀ ਬਹੁਤ ਸਾਰੀਆਂ ਜੂਨਾਂ ਵਿਚ ਭਟਕਣ ਤੋਂ ਬਾਅਦ ਉਸਨੂੰ ਮਨੁੱਖੀ ਜਨਮ ਪ੍ਰਾਪਤ ਹੋਇਆ।ਇਹ ਜਨਮ ਮੁਕਤੀ ਦੀ ਪ੍ਰਾਪਤੀ ਲਈ ਸਭ ਤੋਂ ਉਤਮ ਅਤੇ ਉੱਚਿਤ ਅਵਸਰ ਹੈ। ਆਪ ਜੀ ਨੇ ਦਸਿਆ ਹੈ ਕਿ ਮਨੁੱਖ ਚੰਗੇ ਕਰਮ ਕਰੇ, ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਦਾ ਨਾਮ ਜਪੇ, ਦੂਸਰੀਆਂ ਦਾ ਭਲਾ ਕਰੇ, ਸਤਿ ਸੰਗਤ ਵਿਚ ਜਾ ਕੇ ਬੈਠੇ ਤਾਂ ਉਸ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਮੁਕਤੀ ਪ੍ਰਾਪਤ ਹੋ ਸਕਦੀ ਹੈ। 'ਮੁਕਤੀ' ਤੋਂ ਭਾਵ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਸਾਹਿਬ ਜੀ ਦੀ ਮੁਰਾਦ ਜਨਮ-ਮਰਨ ਦੇ ਗੇੜ ਤੋਂ ਆਜ਼ਾਦ ਹੋ ਜਾਣਾ ਹੈ।ਮਾਇਆ ਤੋਂ ਨਿਰਲੇਪ ਹੋ ਕੇ ਵੀ ਮਨੁੱਖ ਇਸ ਮੁਕਤੀ ਦੀ ਪ੍ਰਾਪਤੀ ਕਰ ਸਕਦਾ ਹੈ।ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਦਸਿਆ ਹੈ ਕਿ ਰੱਬ ਨੇ ਮਾਇਆ ਦੀ ਸਿਰਜਣਾ ਆਪ ਹੀ ਕੀਤੀ ਹੈ।ਤਾਂ ਜੋ ਸੰਸਾਰ ਦਾ ਕਾਰ ਵਿਹਾਰ ਚਲਦਾ ਰਹੇ।ਮਾਇਆ ਵਿਚ ਲਿਪਤ ਰਹਿਣ ਵਾਲਾ ਵਿਅਕਤੀ ਹਮੇਸ਼ਾ ਹੀ ਕਾਮ, ਕ੍ਰੋਧ, ਲੋਭ, ਮੋਹ, ਹੰਕਾਰ, ਦੇ ਵਿਚ ਫਸਿਆ ਹੀ ਰਹਿ ਜਾਂਦਾ ਹੈ।ਗੁਰੂ ਜੀ ਫਰਮਾਉਂਦੇ ਹਨ ਕਿ:-

ਰੇ ਮਨ ਐਸੀ ਹਰਿ ਸਿਉ ਪ੍ਰੀਤਿ ਕਰ ਜੈਸੀ ਜਲਿ ਕਮਲੇਹਿ
ਲਹਿਰੀ ਨਾਲਿ ਪਛਾੜੀਐ ਭੀ ਵਿਗਸਹਿ ਅਸਨੇਹਿ।।[3]

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਚਿਕੜ ਅਤੇ ਕੰਵਲ ਦੇ ਫੁਲ ਦੇ ਰੂਪਕ ਰਾਹੀਂ ਮਾਇਆ ਤੋਂ ਨਿਰਲੇਪ ਰਹਿਣ ਵਾਲੇ ਵਿਅਕਤੀ ਦੇ ਚਰਿੱਤਰ ਨੂੰ ਪੇਸ਼ ਕੀਤਾ ਹੈ।

ਭਾਰਤੀ ਸੰਸਕ੍ਰਿਤੀ ਵਿਚ ਔਰਤ ਦੀ ਥਾਂ ਕਾਫ਼ੀ ਉੱਚੀ ਹੈ। ਵੇਦਾਂ ਵਿਚ ਵੀ ਕਿਹਾ ਗਿਆ ਹੈ ਕਿ ਜਿੱਥੇ ਇਸਤਰੀ ਦਾ ਸਤਿਕਾਰ ਹੁੰਦਾ ਹੈ ਉੱਥੇ ਹੀ ਦੇਵੀ-ਦੇਵਤੇ ਨਿਵਾਸ ਕਰਦੇ ਹਨ। ਮੱਧਕਾਲੀ ਯੁਗ ਵਿਚ ਇਸਤਰੀ ਦੀ ਨਿੰਦਿਆ ਕੀਤੀ ਜਾਂਦੀ ਸੀ।ਭਗਤ ਕਬੀਰ, ਤੁਲਸੀਦਾਸ ਨੇ ਵੀ ਇਸਤਰੀ ਦੀ ਨਿੰਦਿਆ ਹੀ ਕੀਤੀ ਹੈ।ਕਈ ਸਾਧੂ ਸੰਤਾਂ ਨੇ ਵੀ ਇਸਤਰੀ ਨੂੰ ਹੀ ਬੁਰਾਈ ਦੀ ਜੜ੍ਹ ਮੰਨਿਆ ਹੈ।ਪਰ, ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਇਸਤਰੀ ਨੂੰ ਸਤਿਕਾਰ ਦੀ ਨਜ਼ਰ ਤੋਂ ਵੇਖਿਆ ਹੈ। ਆਪ ਜੀ ਨੇ ਇਸਤਰੀ ਨੂੰ ਵਡਿਆਇਆ ਹੀ ਨਹੀਂ ਸਗੋਂ ਪੂਰੀ ਤਰ੍ਹਾਂ ਨਾਲ ਆਪਣਾ ਸਮਰਥਨ ਵੀ ਦਿੱਤਾ। ਇਸ ਪ੍ਰਸੰਗ ਵਿਚ ਆਪ ਜੀ ਦਾ ਇਕ ਕਥਨ ਵੀ ਹੈ ਜੋ ਇਸ ਪ੍ਰਕਾਰ ਹੈ:-

ਭੰਡਿ ਜੰਮੀਐ ਭੰਡਿ ਨਿਮੀਐ ਭੰਡਿ ਮੰਗਣੁ ਵਿਆਹੁ।
ਭੰਡਹੁ ਹੋਵੈ ਦੋਸਤੀ ਭੰਡਹੁ ਚਲੈ ਰਾਹੁ।
ਭੰਡੁ ਮੁਆ ਭੰਡੁ ਭਾਲੀਐ ਭੰਡਿ ਹੋਵੈ ਬੰਧਾਨ।
ਸੋ ਕਿਉ ਮੰਦਾ ਆਖੀਐ ਜਿਤੁ ਜੰਮਿਹ ਰਾਜਾਨੁ।।[4]

ਇਹ ਸਮਰਥਨ ਇਸਤਰੀ ਦੀ ਕ੍ਰਿਆਸ਼ੀਲ ਭੂਮਿਕਾ ਨੂੰ ਰੇਖਾਂਕਿ1 ਕਰਨ ਵਾਲਾ ਸੀ ਅਤੇ ਨਾਲ ਹੀ ਨਵੀ ਚੇਤਨਾ ਦੇਣ ਵਾਲਾ ਸੀ। ਕੋਈ ਵੀ ਸਮਾਜ ਉਦੋਂ ਤੱਕ ਸਭਿਆਚਾਰਕ ਕਦਰਾਂ-ਕੀਮਤਾਂ ਵਾਲਾ ਨਹੀਂ ਅਖਵਾ ਸਕਦਾ ਜਦ ਤਕ ਇਸਤਰੀ ਜਾਤੀ ਪ੍ਰਤੀ ਨਰੋਇਆ (ਨਵਾਂ) ਦ੍ਰਿਸ਼ਟੀਕੋਣ ਨਹੀਂ ਰੱਖਦਾ। ਭਾਰਤੀ ਸੰਸਕ੍ਰਿਤੀ ਦੇ ਇਸ ਗੁਆਚੇ ਹੋਏ ਮੁੱਲ ਨੂੰ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਨੇ ਆਪਣੀ ਬਾਣੀ ਰਾਹੀਂ ਮੁੜ ਸੁਰਜੀਤ ਕੀਤਾ।

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦੇ ਯੁੱਗ ਵਿਚ ਧਰਮ ਦਾ ਇਕ ਹੋਰ ਰੂਪ ਇਸਲਾਮ ਨਾਲ ਸੰਬਧਤ ਸੀ। ਇਸਲਾਮ ਉਸ ਸਮੇਂ ਦੇ ਹੁਕਮਰਾਨਾਂ ਦਾ ਧਰਮ ਹੋਣ ਸਦਕਾ ਦੂਜੇ ਧਰਮਾਂ ਦੀ ਤੁਲਨਾ ਵਿਚ ਬਿਹਤਰ ਸਥਿਤੀ ਵਿਚ ਸੀ। ਉਸ ਨੂੰ ਹਕੂਮਤ ਦਾ ਸਹਾਰਾ ਮਿਲਿਆ ਹੋਇਆ ਸੀ।ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਨਾਲ ਮੁਸਲਾਮਾਨ ਹਾਕਮਾਂ ਵਿਚ ਆਪਣੇ ਧਰਮ ਨੂੰ ਫੈਲਾਉਣ ਦਾ ਜੋਸ਼ ਕੁਝ ਵਧੇਰੇ ਹੀ ਸੀ। ਸਿੱਟੇ ਵਜੋਂ ਇਸਲਾਮ ਦੇ ਵਾਸਤਵਿਕ ਲੱਛਣ ਹਲੀਮੀ, ਮੁਹਬਤ ਸਮਾਨਤਾ, ਸਮਾਜਕ, ਨਿਆਇ ਅਤੇ ਇਕ ਰੱਬ ਵਿਚ ਵਿਸ਼ਵਾਸ ਕਰਨਾ ਆਦਿ ਪਿਠ-ਭੂਮੀ ਵਿਚ ਚਲੇ ਗਏ ਸਨ। ਅਤੇ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੀ ਥਾਂ ਅਹਿਣਸ਼ੀਲਤਾ,ਆਕ੍ਰਮਕਤਾ, ਹਿੰਸਾ, ਪ੍ਰਤੀਸ਼ੋਧ ਆਦਿੱਕ ਅਗਰਭੂਮੀ ਵਿਚ ਆ ਗਏ ਸਨ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਮੁਸਲਮਾਨਾਂ ਨੂੰ ਆਪਣੇ ਧਰਮ ਦੀ ਇਕ ਨਵੀਂ ਪਹਿਚਾਣ ਨਾਲ ਪਰਿਚਿਤ ਕਰਵਾਇਆ ਇਕ ਸੱਚੇ ਮੁਸਲਮਾਨ ਦੀ ਪਰਿਭਾਸ਼ਾ ਆਪ ਨੇ ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਪੇਸ਼ ਕੀਤੀ:-

ਮਿਹਰ ਮਸਿਤਿ ਸਿਦਕ ਮੁਸਲਾ ਹਕੁ ਹਲਾਲੁ ਕੁਰਾਣਾ।
ਸਰਮ ਸੁੰਨਤਿ ਸੀਲੁ ਰੋਜਾ ਹੋਹ ਮੁਸਲਮਾਣਾ।।[5]

ਭਾਰਤੀ ਸੰਸਕ੍ਰਿਤੀ ਦੇ ਇਸ ਮੁੱਲ ਦੇ ਅੰਤਰਗਤ ਹੀ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਧਾਰਮਿਕ ਰੀਤੀ ਰਿਵਾਜਾਂ, ਪਾਖੰਡ ਅਡੰਬਰਾਂ ਦਾ ਵਿਰੋਧ ਕੀਤਾ। ਪੰਜਾਬ ਵਿਚ ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੂੰ ਸੇਖ਼ ਫਰੀਦ ਜੀ ਦੀ ਬਾਣੀ ਹਾਸਲ ਹੋਈ ਜਿਸ ਵਿਚ ਇਕ ਅਲਾਹ ਨੂੰ ਪ੍ਰੇਮ ਕਰਨ ਦਾ ਉਪਦੇਸ਼ ਦ੍ਰਿੜਾਇਆ ਗਿਆ ਸੀ। ਗੁਰੂ ਦੀ ਮਹੱਤਤਾ ਨੂੰ ਪ੍ਰਗਟ ਕੀਤਾ ਸੀ,ਅਤੇ ਚੰਗੇ ਕਰਮਾਂ ਕਰਕੇ ਵਿਅਕਤੀ ਨੂੰ ਦਰਵੇਸ਼ ਬਣਨ ਦਾ ਉਪਦੇਸ਼ ਦਿੱਤਾ ਗਿਆ ਸੀ।ਫਰੀਦ ਬਾਣੀ ਤੋਂ ਇਲਾਵਾ ਆਪ ਜੀ ਨੂੰ ਭਗਤ ਨਾਮਦੇਵ, ਕਬੀਰ,ਭਗਤ ਰਵਿਦਾਸ ਆਦਿ ਸੰਤਾਂ ਭਗਤਾਂ ਦੀ ਬਾਣੀ ਆਪ ਜੀ ਨੂੰ ਪ੍ਰਾਪਤ ਹੋਈ। ਇਨ੍ਹਾਂ ਭਗਤਾਂ ਨੇ ਬ੍ਰਾਹਮਣਵਾਦੀ ਕਰਮ-ਕਾਡਾਂ ਨੂੰ ਮਿਖਿਆ ਦੱਸਿਆ ਅਤੇ ਪ੍ਰੇਮਾਭਗਤੀ ਨਾਲ ਪ੍ਰਭੂ ਦੀ ਪ੍ਰਾਪਤੀ ਕੀਤੀ ਜਾ ਸਕਦੀ ਹੈ।ਬ੍ਰਾਹਮਣ ਸ਼੍ਰੇਣੀ ਇਨ੍ਹਾਂ ਨੂੰ ਨਿਮਨ ਜਾਤੀ ਦਾ ਸਦੱਸ ਕਹਿ ਕੇ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦਾ ਅਪਮਾਨ ਕਰਦੀ ਸੀ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਇਨ੍ਹਾਂ ਸੰਤਾਂ-ਭਗਤਾਂ ਨਾਲ ਆਪਣੀ ਮਾਨਵੀ ਏਕਤਾ ਦਾ ਸਬੂਤ ਦਿੰਦਿਆ ਹੋਇਆਂ ਆਪਣੇ ਆਪ ਨੂੰ ਨੀਚ ਜਾਤੀ ਦੇ ਸਦੱਸ ਘੋਸ਼ਿਤ ਕੀਤਾ। ਜਿਵੇਂ:-

ਨੀਚਾ ਅੰਦਰ ਨੀਚ ਜਾਤਿ ਨੀਚੀ ਹੂ ਅਤਿ ਨੀਚ
ਨਾਨਕ ਤਿਨ ਕੈ ਸੰਗਿ ਸਾਥਿ ਵਡਿਆ ਸਿਉ ਕਿਆ ਰੀਸ।।[6]

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦੀ ਭਾਰਤੀ ਸੰਸਕ੍ਰਿਤੀ ਨੂੰ ਵੱਡਮੁਲੀ ਦੇਣ ਹੈ। ਸੰਸਕ੍ਰਿਤੀ ਦਾ ਇਨ੍ਹਾਂ ਵਿਸ਼ਾਲ ਚਿਤਰਣ ਹੋਰ ਕਿਸੇ ਸਮਕਾਲੀ ਕਵੀ ਵਿਚ ਨਹੀਂ ਮਿਲਦਾ।ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਦੀ ਸੰਸਕ੍ਰਿਤਕ ਸਾਰਥਕਤਾ ਇਸ ਗੱਲ ਵਿਚ ਹੈ ਕਿ ਅਤੀਤ ਦੀ ਗੌਰਵਤਾ, ਵਰਤਮਾਨ ਦੀ ਗਰਿਮਾ ਅਤੇ ਭਵਿੱਖ ਪ੍ਰਤੀ ਆਸ਼ਾ ਦਾ ਦ੍ਰਿਸ਼ਟੀਕੋਣ ਇਸ ਵਿਚ ਸਮਾਇਆ ਹੋਇਆ ਹੈ।ਭਾਰਤੀ ਸੰਸਕ੍ਰਿਤੀ ਦੀ ਮੂਲ ਚੇਤਨਾ ਦਾ ਅਧਿਆਤਮਕ ਸੰਦਰਭ ਇਸ ਬਾਣੀ ਵਿਚ ਪੂਰੀ ਤਰ੍ਹਾਂ ਇਕਮਿਕ ਹੋਇਆ ਹੈ।ਭਾਵੇਂ ਆਰੀਆ ਦੇ ਆਉਣ ਤੋਂ ਪਹਿਲਾਂ ਭਾਰਤੀ ਸਭਿਆਚਾਰ ਨੇ ਨਿਸ਼ਚਿਤ ਰੂਪ ਧਾਰਨ ਕਰ ਲਿਆ ਸੀ।ਪਰ ਮੱਧਕਾਲ ਤੱਕ ਆਉਦੀਆਂ ਆਉਦੀਆਂ ਬਹੁਤ ਸਾਰੀਆ ਜੜ੍ਹ ਕਦਰਾਂ ਕੀਮਤਾਂ ਇਸ ਦੇ ਰਾਹ ਵਿਚ ਰੋੜਾ ਬਣ ਚੁਕੀਆਂ ਸੀ।ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਇਨ੍ਹਾਂ ਭਾਰਤੀ ਸੰਸਕ੍ਰਿਤੀ ਦੀਆਂ ਨਰੋਈਆਂ ਕਦਰਾਂ ਕੀਮਤਾਂ ਨੂੰ ਮੁੜ ਵਿਚਾਰ ਕਰਕੇ ਪੁਨਰ ਸੁਰਜੀਤ ਕੀਤਾ।ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਨਿਰਭਉ ਅਤੇ ਨਿਰਵੈਰ ਦਾ ਪਾਠ ਪੜਾਇਆ ਅਤੇ ਕਿਰਤ ਰਾਹੀਂ ਆਤਮ ਵਿਸ਼ਵਾਸ ਪ੍ਰਾਪਤ ਕੀਤਾ ਜਾ ਸਕਦਾ ਸੀ।

ਭਾਰਤੀ ਸੰਸਕ੍ਰਿਤੀ ਦੇ ਚਿਤਰਣ ਦਾ ਮੂਲ ਭਾਵ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਵਿਚ ਇਸ ਸੰਕਲਪ ਨੂੰ ਦ੍ਰਿੜ ਕਰਵਾਉਂਦਾ ਹੈ ਕਿ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਸੱਚ ਅਤੇ ਨਿਆਂ ਤੇ ਆਧਾਰਿਤ ਇਕ ਨਵੇਂ ਸਮਾਜ ਦਾ ਸੰਸਕ੍ਰਿਤਕ ਮੁੱਢ ਬੰਨ ਰਹੇ ਸਨ, ਜਿਸ ਵਿਚ ਭਾਰਤੀ ਸੰਸਕ੍ਰਿਤੀ ਦਾ ਮੂਲ ਮੰਤ੍ਰ ਸੱਤਯਮ, ਸ਼ਿਵਮ , ਸੁੰਦਰਮ ਨਵੇਂ ਅਰਥਾਂ ਵਿਚ ਢੱਲ ਰਿਹਾ ਸੀ।

ਹਵਾਲੇ

1. ਹਰਮਿੰਦਰ ਸਿੰਘ ਬੇਦੀ, ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਅਤੇ ਭਾਰਤੀ ਸੰਸਕ੍ਰਿਤੀ, ਪੰਨਾ 49
2. ਉਹੀ,
3. ਪ੍ਰੋ. ਬ੍ਰਹੁਮਜਗਦੀਸ਼ ਸਿੰਘ, ਪ੍ਰੋ. ਰਾਜਬੀਰ ਕੌਰ, ਪੰਜਾਬੀ ਸਾਹਿਤ ਦਾ ਇਤਿਹਾਸ ਪੰਨਾ 151
4. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 154
5. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 148
6. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 149

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦੀ ਬਾਣੀ ਦੇ ਬਹੁਪੱਖੀ ਦ੍ਰਿਸ਼ਟੀਕੋਣ

* ਮਨਪ੍ਰੀਤ ਕੌਰ

* ਖੋਜ ਵਿਦਿਆਰਥਣ, ਲਵਲੀ ਪ੍ਰੋਫੈਸਨਿਲ ਯੂਨੀਵਰਸਿਟੀ ਫਗਵਾੜਾ,(ਜਲੰਧਰ)

ਸਾਰ ਅੰਸ਼:-ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਆਪਣੇ ਜੀਵਨ ਵਿੱਚ ਜੋ ਰਚਨਾ ਕੀਤੀ, ਉਸ ਨੂੰ ਅੱਜ ਦੇ ਸੰਦਰਭ 'ਚ ਵੀ ਉਨੀ ਹੀ ਮਾਨਤਾ ਹੈ, ਜਿੰਨੀ ਉਸ ਸਮੇਂ ਵਿੱਚ ਸੀ। ਉਹਨਾਂ ਦੁਆਰਾ ਕੀਤੀ ਰਚਨਾ ਉਸ ਸਮੇ ਦੇ ਨਾਲ-ਨਾਲ ਅੱਜ ਦੇ ਸਮੇਂ ਵਿੱਚ ਵੀ ਉੰਨੀ ਹੀ ਮਹੱਤਵਪੂਰਨ ਹੈ। ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਨਾਮਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਆਪਣੀਆ ਸਾਰੀਆਂ ਰਚਨਾਵਾਂ ਵਿੱਚ, ਉਸ ਸਮੇਂ ਦੇ ਹਾਲਾਤਾਂ ਦੇ ਨਾਲ ਆਪਣੀ ਬਾਣੀ ਵਿੱਚ ਅਜਿਹੇ ਦ੍ਰਿਸ਼ਟੀਕੋਣਾਂ ਨੂੰ ਛੋਹਿਆਂ ਹੈ, ਜਿੰਨ੍ਹਾਂ ਬਾਰੇ ਉਸ ਸਮੇਂ ਵਿੱਚ ਕਲਪਨਾ ਕਰਨ ਬਾਰੇ ਵੀ ਨਹੀ ਸੋਚਿਆ ਜਾ ਸਕਦਾ ਸੀ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਆਪਣੇ ਸਮੇਂ ਦੇ ਹਰ ਪੱਖ ਨੂੰ ਵਾਚ ਕੇ ਰਚਨਾ ਵਿੱਚ ਥਾਂ ਪ੍ਰਦਾਨ ਕੀਤੀ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਉਸ ਸਮੇਂ ਰਾਜਨੀਤਿਕ, ਧਾਰਮਿਕ, ਸਮਾਜਿਕ ਤੇ ਔਰਤ ਦੀ ਜੋ ਹਾਲਤ ਸੀ, ਨੂੰ ਆਪਣੀ ਬਾਣੀ ਵਿੱਚ ਬਿਆਨ ਤਾਂ ਕੀਤਾ ਹੀ, ਤੇ ਨਾਲ ਹੀ ਓਹਨਾਂ ਨੇ ਇਦ ਪ੍ਰਕਾਰ ਦੇ ਹਾਲਤ ਸਿਸਟਮ ਦੇ ਵਿਰੋਧ ਵਿੱਚ ਸਭ ਤੋ ਪਹਿਲਾਂ ਆਪਣੀ ਆਵਾਜ ਬੁਲੰਦ ਕੀਤੀ।

ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਆਪਣੇ ਸਮੇਂ ਦੇ ਸਭ ਤੋ ਪਹਿਲੇ ਅਜਿਹੇ ਕ੍ਰਾਤੀਕਾਰੀ ਵਿਅਕਤੀ ਸਨ, ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਸਮਾਜ ਵਿੱਚ ਹੋ ਰਹੇ ਅਨਿਆਂ ਤੇ ਗਲਤ ਸਿਸਟਮ ਦੇ ਵਿਰੋਧ ਵਿੱਚ ਆਪਣੀ ਆਵਾਜ ਬੁਲੰਦ ਕਰਕੇ ਅਜਿਹੀ ਰੀਤ ਬਣਾਈ ਜੋ ਪੰਜਾਬੀਆ ਦੇ ਮਨ੍ਹਾਂ ਵਿੱਚ ਧੁਰ ਅੰਦਰ ਤੱਕ ਘਰ ਕਰ ਗਈ। ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਆਪਣਾ ਪੂਰਾ ਜੀਵਨ ਸਮਾਜ ਕਲਿਆਣ ਦੇ ਕਾਰਜਾਂ ਵਿੱਚ ਲਗਾਇਆ ਤੇ ਜਨਤਾ ਨੂੰ ਸਹੀ ਰਸਤੇ ਉਪਰ ਤੋਰਿਆ, ਤਾਂ ਕਿ ਲੋਕ ਆਪਣੇ ਆਪ ਨੂੰ ਸਹੀ ਰਸਤੇ ਉਪਰ ਤੋਰ ਕੇ ਆਂਪਣੇ ਜੀਵਨ ਨੂੰ ਸਫਲ ਬਣਾ ਸਕਣ।

ਸ਼ਬਦ:- ਰਾਜਨੀਤਿਕ ਦਸ਼ਾ, ਸਮਾਜਿਕ ਦਸ਼ਾ, ਅਧਿਕਾਰ, ਅਜਾਬ, ਧਾਵਾ, ਹਕੂਮਤ, ਪਰਜਾ, ਸ਼ਬਦ।

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਦੀ ਬਾਣੀ ਦੇ ਬਹੁ-ਪੱਖੀ ਦ੍ਰਿਸ਼ਟੀਕੋਣ:-ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੂੰ ਸਮਾਜ ਵਿੱਚ ਸਿੱਖ-ਧਰਮ ਦਾ ਬਾਨੀ ਕਹਿ ਕੇ ਸਤਿਕਾਰਿਆ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਸਮਾਜ ਵਿੱਚ ਇੱਕ ਅਜਿਹੀ ਸ਼ਖਸੀਅਤ ਦੇ ਰੂਪ ਵਿੱਚ ਉਭਰ ਕੇ ਸਾਹਮਣੇ ਆਏ, ਉਹਨਾਂ ਨੂੰ ਸਿੱਖ ਧਰਮ ਦਾ ਬਾਨੀ ਕਹਿ ਕੇ ਇੱਕ ਘੇਰੇ ਵਿੱਚ ਬੰਨ੍ਹਣਾ ਅਤਿਕਥਨੀ ਜਿਹਾ ਲੱਗਦਾ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਇੱਕ ਅਜਿਹੀ ਸਖਸ਼ੀਅਤ ਸਨ, ਜਿੰਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਹਰ ਧਰਮ ਦਾ ਸਤਿਕਾਰ ਕੀਤਾ ਤੇ ਹਰ ਧਰਮ ਦੇ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਬਰਾਬਰ ਦਾ ਸਤਿਕਾਰ ਪ੍ਰਦਾਨ ਕੀਤਾ, ਫਿਰ ਅਸੀ ਕਿਸ ਪ੍ਰਕਾਰ ਨਾਨਕ ਨੂੰ ਇਕੱਲੇ ਸਿੱਖ ਧਰਮ ਦਾ ਬਾਨੀ ਕਹਿ ਕੇ ਉਸਨੂੰ ਕਿਸੇ ਘੇਰੇ ਵਿੱਵ ਬੰਨ੍ਹਣ ਦਾ ਫੈਸਲਾ ਕਰ ਸਕਦੇ ਹਾਂ। ਉਹਨਾਂ ਨੇ ਆਪਣੇ ਪੂਰੇ ਜੀਵਨ ਕਾਲ ਵਿੱਚ ਕਦੇ ਵੀ ਸਾਨੂੰ ਕੋਈ ਅਜਿਹਾ ਸੰਕੇਤ ਨਹੀ ਮਿਲਦਾ, ਜਿੱਥੇ ਇਹ ਜਿਕਰ ਹੋਵੇ ਕਿ ਉਹਨਾ ਨੇ ਸਿੱਖ ਧਰਮ ਬਣਾਇਆ, ਸਿੱਖ ਧਰਮ ਦੀ ਨੀਹ ਤਾਂ ਗੁਰੂ ਗੋਬਿੰਦ ਸਿੰਘ ਜੀ ਨੇ ਰੱਖੀ ਸੀ। ਹਾਂ ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਜੀ ਨੂੰ ਉਹਨਾਂ ਦੇ ਪੂਰਵਜਾ ਵਿੱਚ ਸ਼ਾਮਲ ਕੀਤਾ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ। ਜਿੰਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਸੰਸਾਰ ਵਿੱਚ ਮਾਨਵਤਾ ਦੇ ਬੀਜ ਬੀਜੇ ਤੇ ਉਹੀ ਬੀਜ ਪੀੜ੍ਹੀ-ਦਰ-ਪੀੜ੍ਹੀ ਅੱਗੇ ਪਹੁੰਚ ਕੇ ਸਿੱਖ ਧਰਮ ਦੀ ਸਥਾਪਨਾ ਦਾ ਕਾਰਨ ਬਣੇ।

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦੀ ਬਾਣੀ ਤੇ ਉਹਨਾਂ ਦੇ ਜੀਵਨ ਦਰਸ਼ਨ ਨੂੰ ਜੇਕਰ ਧਿਆਂਨ ਨਾਲ ਵਾਚਿਆਂ ਜਾਵੇਂ ਤਾਂ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਸਦਾ ਹੀ ਸਮੁੱਚੀ ਮਾਨਵਤਾ ਦਾ ਭਲਾ ਚਾਹਿਆ, ਤੇ ਸਾਰੀ ਮਾਨਵਤਾ ਨੂੰ ਇੱਕ ਧਾਗੇ ਵਿੱਵ ਪਰੋਣ ਦੀ ਕੋਸ਼ਿਸ ਕੀਤੀ। ਉਹਨਾਂ ਨੇ ਸਾਰੀ ਮਾਨਵਤਾ ਦੇ ਕਲਿਆਣਕਾਰੀ ਕਾਰਜ ਕੀਤੇ ਤੇ ਸਾਰੇ ਸਮਾਜ ਨੂੰ ਏਕੇ ਦੀ ਸ਼ਕਤੀ ਤੇ ਪੂਰੀ ਮਾਨਵਤਾ ਦੀ ਭਲਾਈ ਨਾਲ ਜੋੜ ਕੇ ਸਮਾਜ ਕਲਿਆਨ ਦੇ ਕਾਰਜਾਂ ਵਿੱਚ ਆਪਣਾ ਯੋਗਦਾਨ ਪਾਇਆ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦੇ ਸਮੇਂ ਬਾਰੇ ਸਾਡੇ ਕੋਲ ਵਾਕਫੀਅਤ ਦੇ ਬਹੁਤ ਸਾਰੇ ਸਰੋਤ ਹਨ। ਸਭ ਤੋ ਜਿਆਦਾ ਮਾਨਤਾ ਪ੍ਰਾਪਤ ਤੇ ਭਰੋਸੇਯੋਗ ਸੋਮਾ ਤਾਂ ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਦੀ ਆਪਣੀ ਬਾਣੀ ਹੈ। ਪੰਦਰਵ੍ਹੀ-ਸੋਲ੍ਹਵੀ ਸਦੀ ਵਿੱਚ ਉਸ ਸਮੇਂ ਦੇ ਜੀਵਨ ਪੱਧਰ ਨੂੰ ਬਹੁਤ ਨਜਦੀਕ ਤੋ ਦੇਖਿਆ ਅਤੇ ਉਸ ਵਿੱਚ ਵਿਸ਼ਾਲ ਧਾਰਮਿਕ ਅੰਧਕਾਰ, ਸਮਾਜਿਕ ਗਿਰਾਵਟ ਅਤੇ ਰਾਜਨੀਤਿਕ ਅਨਿਆਂ ਨੂੰ ਚੰਗੀ ਤਰ੍ਹਾਂ ਵਾਚਿਆ ਅਤੇ ਆਪਣੀ ਬਾਣੀ ਵਿੱਚ ਉਸ ਨੂੰ ਸਥਾਨ ਦਿੱਤਾ।

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦੇ ਸਮੇਂ ਵਿੱਚ ਰਾਜਨੀਤਿਕ ਅਧੋਗਤੀ ਦਾ ਸਮਾਂ ਸੀ। ਰੋਜਾਨਾਂ ਦੇ ਲੜਾਈ ਝਗੜਿਆ ਨੇ ਪੰਜਾਬੀਆਂ ਦੇ ਜੀਵਨ ਨੂੰ ਅਜਾਬ ਬਣਾਇਆ ਹੋਇਆ ਸੀ। ਦਿੱਲੀ ਦੇ ਸੁਲਤਾਨ ਦੀ ਸ਼ਕਤੀ ਖਤਮ ਹੋ ਚੁੱਕੀ ਸੀ, ਸੂਬੇ ਜਲਦੀ-ਜਲਦੀ ਸਤੁੰਤਰ ਹੋ ਰਹੇ ਸਨ। ਕੇਂਦਰੀ ਸ਼ਕਤੀ ਨੂੰ ਕਮਜੋਰ ਕਰਨ ਲਈ ਸਭ ਤੋ ਵੱਧ ਯੋਗਦਾਨ ਤੈਮੂਰ ਦੇ ਹਮਲੇ ਦਾ ਸੀ। ਉਸ ਦਾ ਹਮਲਾ ਪੰਜਾਬ ਲਈ ਸਭ ਤੋ ਘਾਤਕ ਸੀ। ਤੈਮੂਰ ਦੇ ਹਮਲੇ ਨੇ ਉਤਰੀ ਭਾਰਤ ਵਿੱਚ ਹਕੂਮਤ ਦਾ ਲਗਭਗ ਖਾਤਮਾ ਹੀ ਕਰ ਦਿੱਤਾ ਸੀ। ਅਸਲੀਅਤ ਵਿੱਚ ਕੇਂਦਰੀ ਸ਼ਕਤੀ ਦੀ ਕਮਜੋਰੀ ਹੀ ਉਸਨੂੰ ਭਾਰਤ ਵਿੱਚ ਖਿੱਚ ਲਿਆਈ ਸੀ। ਉਸਦੇ ਹਮਲੇ ਇੱਕੋ ਕਾਰਨ ਲੁੱਟ ਮਾਰ ਜਾਂ ਰਾਜਸੀ ਸ਼ਕਤੀ ਪ੍ਰਾਪਤ ਕਰਨਾ ਨਹੀ ਸੀ, ਸਗੋ ਮੂਲ ਰੂਪ ਵਿੱਚ ਭਾਰਤ ਵਿੱਚੋ ਮੂਰਤੀ ਪ੍ਰਸਤੀ ਦਾ ਖਾਤਮਾ ਕਰਨਾ ਸੀ। ਉਸ ਦੇ ਹਮਲੇ ਦਾ ਪੰਜਾਬ ਨੂੰ ਬਹੁਤ ਜਿਆਦਾ ਨੁਕਸਾਨ ਹੋਇਆ।

ਪੰਜਾਬ ਉਸ ਸਮੇਂ ਲੜਾਈ ਝਗੜਿਆ ਦਾ ਖੁੱਲ੍ਹਾ ਅਖਾੜਾ ਬਣਿਆਂ ਹੋਇਆ ਸੀ। ਉਸ ਸਮੇਂ ਦੇ ਸਾਰੇ ਹੀ ਹਾਲਾਤਾਂ ਨੂੰ ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਨੇ ਵਾਚਿਆ ਤੇ ਸਭ ਤੋ ਪਹਿਲੀ ਵਾਰ ਹਕੂਮਤ ਦੇ ਵਿਰੁੱਧ ਵਿੱਚ ਆਪਣੀ ਆਵਾਜ ਬੁਲੰਦ ਕੀਤੀ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਆਪਣੇ ਜੀਵਨ ਕਾਲ ਵਿੱਚ ਬਹੁਤ ਸਾਰੀ ਰਚਨਾ ਕੀਤੀ। ਉਹਨਾਂ ਨੇ ਆਪਣੀ ਰਚਨਾ ਵਿੱਚ ਵੀ ਕਿਸੇ ਬਾਰੇ ਕੋਈ ਵਾਰਤਾਲਾਪ ਨਹੀ ਕੀਤੀ, ਸਿਰਫ ਸਮੁੱਚੀ ਮਾਨਵਤਾ ਦੇ ਕਲਿਆਣ ਦੀ ਹੀ ਗੱਲ ਕੀਤੀ। ਉਹਨਾਂ ਦੀਆ ਪ੍ਰਮੁੱਖ ਬਾਣੀਆ ਹਨ, ਜਪੁਜੀ ਸਾਹਿਬ, ਸਿੱਧ ਗੋਸ਼ਟਿ, ਮਾਝ ਦੀ ਵਾਰ, ਆਸਾ ਦੀ ਵਾਰ, ਬਾਰਹਮਾਹ

ਤੁਖਾਰੀ, ਮਲ੍ਹਾਰ ਦੀ ਵਾਰ, ਦਖਣੀ ਓਅੰਕਾਰ ਤੇ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਵਿੱਚ ਪੱਚੇ ਅਤੇ ਕੱਚੀ ਬਾਣੀ।

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਵਿੱਚ ਸਭ ਤੋ ਪਹਿਲਾਂ ਜੇਕਰ ਵਾਚਿਆ ਜਾਵੇ ਤਾਂ ਉਹਨਾਂ ਨੇ ਉਸ ਸਮੇਂ ਸਮਾਜਿਕ ਸਿਸਟਮ ਦੇ ਵਿਰੁੱਧ ਆਪਣੀ ਆਵਾਜ ਬੁਲੰਦ ਕੀਤੀ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਉਸ ਸਮੇਂ ਦਾ ਸਮਾਜਿਕ ਢਾਚਾਂ ਸੀ, ਉਸ ਬਾਰੇ ਆਪਣੇ ਵਿਚਾਰ ਆਪਣੀ ਰਚਨਾ ਵਾਰ ਮਾਝ ਵਿੱਚ ਵੀ ਪੇਸ਼ ਕੀਤੇ ਹਨ। ਉਸ ਸਮੇਂ ਦਾ ਸਮਾਜਿਕ ਢਾਚਾਂ ਬਿਲਕੁਲ ਭ੍ਰਿਸ਼ਟ ਹੋ ਚੁੱਕਿਆ ਸੀ। ਸਮਾਜ ਵਿੱਚ ਕਿਸੇ ਵੀ ਮਾਨਵ ਲਈ ਕੋਈ ਸਹੀ ਰਸਤਾ ਨਹੀ ਸੀ, ਕਿ ਸਮਾਜ ਵਿੱਚ ਕੀ ਹੋ ਰਿਹਾ ਹੈ, ਜਾ ਕਹਿ ਸਕਦੇ ਹਾਂ ਕਿ ਉਹਨਾਂ ਨੂੰ ਸਭ ਕੁਝ ਪਤਾ ਹੁੰਦੇ ਹੋਏ ਵੀ ਉਹ ਆਪਣੇ ਚਹੇਤਿਆਂ ਨੂੰ ਹੀ ਪ੍ਰਮੋਟ ਕਰਦੇ ਸਨ, ਤੇ ਗਰੀਬ ਜਨਤਾ ਲਈ ਉਹਨਾਂ ਕੋਲ ਸਮਾਂ ਨਹੀ ਸੀ। ਸਮਾਜ ਵਿੱਚ ਜਨਤਾ ਭੁੱਖੀ ਮਰ ਰਹੀ ਸੀ, ਤੇ ਹਿੰਦੂ ਲੋਕਾਂ ਦੀ ਹਾਲਤ ਤਾਂ ਉਸ ਤੋ ਜਿਆਦਾ ਦਰਦਨਾਕ ਸੀ, ਕਿਉਕਿ ਉਸ ਸਮੇਂ ਪੰਜਾਬ ਦੀ ਵਾਗਡੋਰ ਅਜਿਹੇ ਰਾਜਨੀਤੀਵਾਨਾਂ ਜਾਂ ਰਾਜਿਆ ਦੇ ਹੱਥਾ ਵਿੱਚ ਸੀ, ਜਿਹੜੇ ਦੇਸ਼ ਨੂੰ ਪੂਰੀ ਤਰ੍ਹਾਂ ਗੁਲਾਮੀ ਦੀਆਂ ਜੰਜੀਰਾ ਵਿੱਚ ਜਕੜ ਕੇ ਆਪਣੇ ਅਧੀਨ ਕਰਨਾ ਚਹੁੰਦੇ ਸਨ। ਪੂਰੀ ਜਨਤਾ ਦੀ ਹਾਲਤ ਤਰਸਯੋਗ ਬਣੀ ਹੋਈ ਸੀ, ਕੋਈ ਵੀ ਆਮ ਮਾਨਵ ਰਾਜੇ ਵਿਰੋਧ ਵਿੱਚ ਨਹੀ ਜਾਣਾ ਚਹੁੰਦਾ ਸੀ, ਕਿਉਕਿ ਉਹਨਾਂ ਨੂੰ ਆਪਣੇ ਘਰ ਪਰਿਵਾਰ ਤੇ ਦੋ ਵਖਤ ਦੀ ਰੋਟੀ ਦਾ ਫਿਕਰ ਹੀ ਇੰਨਾ ਜਿਆਦਾ ਸੀ ਕਿ ਉਹ ਅਜਿਹਾ ਸੋਚ ਵੀ ਨਹੀ ਸਕਦੇ ਸਨ। ਉਸ ਸਮੇਂ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੂੰ ਉਸ ਸਮੇਂ ਦੇ ਹੁਕਮਰਾਨਾਂ ਤੇ ਰਾਜਨੀਤਿਕ ਪ੍ਰਬੰਧ ਕਰਨ ਵਾਲਿਆ ਦੇ ਵਿਰੁੱਧ ਆਪਣੀ ਆਵਾਜ ਬੁਲੰਦ ਕੀਤੀ। ਉਹਨਾਂ ਨੇ ਸਾਰੇ ਸਿਸਟਮ ਦੀ ਸ਼ਖਤ ਸ਼ਬਦਾ ਵਿੱਚ ਨਿੰਦਿਆਂ ਕੀਤੀ, ਉਹ ਆਪਣੀ ਰਚਨਾ ਵਿੱਚ ਲਿਖਦੇ ਹਨ:-

ਕਲ ਕਾਤੀ ਰਾਜੇ ਕਸਾਈ ਧਰਮ ਪੰਖ ਕਰ ਉਡਾਇਆ।
ਕੂੜੁ ਅਮਾਵਸ ਸਚੁ ਚਦ੍ਰਮਾ ਦੀਸੈ ਨਾਹੀ ਕਹ ਚੜ੍ਹਿਆ।

ਤੇ ਨਾਲ ਹੀ ਉਹ ਲਿਖਦੇ ਹਨ:-

ਰਾਜੇ ਸ਼ੀਹ ਮੁਕਦਮ ਕੁਤੇ।
ਜਾਇ ਜਗਾਇਨ ਬੈਠੇ ਸੁਤੇ।
(ਵਾਰ ਮਾਝ ਮਹਲਾ-1)

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਉਸ ਸਮੇਂ ਦੇ ਹਾਲਤ ਵਿੱਚ ਭ੍ਰਿਸਟ ਰਾਜਿਆ ਦੇ ਵਿਰੋਧ ਕਰਕੇ ਸਮੁੱਚੀ ਮਾਨਵਤਾ ਦੇ ਹੱਕ ਵਿੱਚ ਆਪਣੀ ਆਵਾਜ ਬੁਲੰਦ ਕੀਤੀ। ਅਜਿਹਾ ਕਰਨਾ ਹਰ ਕਿਸੇ ਇਨਸਾਨ ਦੇ ਹੱਥ ਵੱਸ ਨਹੀ ਹੁੰਦਾ। ਉਹਨਾਂ ਨੇ ਮਾਨਵਤਾ ਦੇ ਪੱਖ ਵਿੱਚ ਹਾਲਤਾਂ ਨੂੰ ਸੁਧਾਰਨ ਲਈ ਵਿਸ਼ੇਸ ਉਪਰਾਲੇ ਕੀਤੇ। ਉਹਨਾਂ ਨੇ ਮਨੁੱਖਤਾ ਦੇ ਪੱਖ ਵਿੱਚ ਹੀ ਅਜਿਹੇ ਰਾਜਨੀਤਿਕ ਢਾਚੇਂ ਦੇ ਵਿਰੁੱਧ ਆਪਣੀ ਆਵਾਜ ਬੁਲੰਦ ਕੀਤੀ। ਉਹਨਾਂ ਨੇ ਪੂਰੀ ਮਾਨਵਤਾ ਨੂੰ ਇੱਕ ਹੋ ਕੇ ਅਜਿਹੇ ਗਲਤ ਸਿਸਟਮ ਦੇ ਵਿਰੁੱਧ ਆਵਾਜ ਬੁਲੰਦ ਕਰਨ ਦੀ ਪ੍ਰੇਰਨਾ ਵੀ ਦਿੱਤੀ ਤੇ ਜਨਤਾ ਨੂੰ ਆਪਣੇ ਹੱਕਾਂ ਪ੍ਰਤੀ ਸੁਚੇਤ ਵੀ ਕੀਤਾ।

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦੇ ਸਮੇਂ ਸਮਾਜ ਵਿੱਚ ਕੋਈ ਇੱਕ ਵੀ ਅਜਿਹਾ ਵਰਤਾਰਾ ਨਹੀ ਸੀ, ਜਿਸ ਵਿੱਚ ਜਨਤਾ ਨੂੰ ਲੁੱਟਣ ਤੋ ਵਰਜਿਆਂ ਜਾਂਦਾ ਜਾਂ ਜਨਤਾ ਦੀ ਲੁੱਟ ਨਹੀ ਕੀਤੀ ਜਾਂਦੀ ਸੀ। ਉਸ ਸਮੇਂ ਦਾ ਸਭ ਤੋ ਖਤਰਨਾਕ ਤੇ ਅੱਜ ਦੇ ਸਮੇਂ ਵਿੱਚ ਉਸ ਤੋ ਵੀ ਵਧੇਰੇ ਖਤਰਨਾਕ ਵਰਤਾਰਾ ਸੀ ਧਾਰਮਿਕ ਖੇਤਰ। ਧਰਮ ਦੀ ਜੋ ਹਾਲਤ ਅੱਜ ਦੇ ਸਮੇਂ ਵਿੱਚ ਹੈ, ਉਸ ਪ੍ਰਕਾਰ ਦੀ ਹਾਲਤ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦੇ ਸਮੇਂ ਵਿੱਚ ਸੀ। ਉਸ ਸਮੇਂ ਧਰਮ ਸਿਰਫ ਦਿਖਾਵੇ ਮਾਤਰ ਹੀ ਰਹਿ ਗਿਆ ਸੀ, ਤੇ ਉਸਦੀ ਆਤਮਾ ਅਸਲ ਵਿੱਚ ਖਤਮ ਹੋ ਚੁੱਕੀ ਸੀ। ਧਰਮ ਤਾਂ ਕਿਤੇ ਰਹਿ ਹੀ ਨਹੀ ਗਿਆ ਸੀ, ਸਿਰਫ ਧਰਮ ਦੇ ਨਾਂ ਉਪਰ ਜਨਤਾ ਦੀ ਲੁੱਟ ਜਾਰੀ ਸੀ।

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦੇ ਸਮੇਂ ਵਿੱਚ ਧਰਮ ਦੀ ਹਾਲਤ ਇਸ ਪ੍ਰਕਾਰ ਦੀ ਬਣ ਚੁੱਕੀ ਸੀ, ਕਿ ਹਰ ਕੋਈ ਆਪਣੇ ਆਪ ਨੂੰ ਧਰਮ ਦਾ ਰਖਵਾਲਾ ਦੱਸ ਕੇ ਜਨਤਾ ਦੀ ਲੁੱਟ ਕਰਦਾ ਸੀ। ਕਿਸੇ ਨੂੰ ਕੋਈ ਵਰਜਦਾ ਨਹੀ ਸੀ, ਜਿਸ ਦਾ ਜੋ ਦਿਲ ਕਰਦਾ ਸੀ, ਆਪਣੀ ਮਨਮਰਜੀ ਕਰਦਾ ਸੀ (ਆਸਾ ਦੀ ਵਾਰ) ਆਪਣੀ ਰਚਨਾ ਵਿੱਚ ਨਾਨਕ ਨੇ ਧਾਰਮਿਕ ਪਖੰਡੀਆ ਨੂੰ ਚੰਗੀ ਤਰ੍ਹਾਂ ਨੰਗਾ ਕੀਤਾ ਹੈ। ਉਹਨਾਂ ਅਨੁਸਾਰ ਜਨਤਾ ਅਗਿਆਨੀ ਸੀ ਜਿਸ ਕਰਕੇ ਉਹਨਾਂ ਨੂੰ ਅਜਿਹੇ ਕਰਮਕਾਡਾਂ ਕਰਕੇ ਦੀ ਸਮਝ ਨਹੀ, ਭੋਲੀ ਜਨਤਾ ਨੂੰ ਹਰ ਕੋਈ ਵਰਗਲਾ ਕੇ ਆਪਣੇ ਪਿੱਛੇ ਲਾ ਲੈਂਦਾ ਸੀ। ਜਿਸ ਦੇ ਕਾਰਨ ਆਮ ਜਨਤਾ ਦਾ ਵਿਸ਼ਵਾਸ ਟੂਣੇ-ਕਰਨਾ, ਜਾਦੂ, ਤਵੀਤਾ ਤੇ ਅੰਧ-ਵਿਸ਼ਵਾਸਾ ਵਿੱਚ ਵਧੇਰੇ ਰੁਚਿਤ ਹੋ ਗਿਆ ਸੀ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਇਹਨਾਂ ਸਾਰੇ ਕਰਮਕਾਡਾਂ ਤੇ ਅੰਧ-ਵਿਸ਼ਵਾਸਾ ਦੀ ਸ਼ਖਤ ਸ਼ਬਦਾ ਵਿੱਚ ਨਿੰਦਿਆਂ ਵੀ ਕੀਤੀ। ਉਹਨਾਂ ਨੇ ਭੋਲੀ ਤੇ ਅਨਪੜ੍ਹ ਜਨਤਾ ਨੂੰ ਸਮਝਾਇਆ ਕਿ ਧਰਮ ਕਦੇ ਵੀ ਜਨਤਾ ਨੂੰ ਭਰਮ ਭੁਲੇਖਿਆ ਤੇ ਕਰਮਕਾਡਾਂ ਵਿੱਚ ਨਹੀ ਧੱਕਦਾ, ਬਲਕਿ ਧਰਮ ਜਨਤਾ ਨੂੰ ਸਿੱਧੇ ਰਸਤੇ ਪਾਉਣ ਵਾਲਾ ਹੁੰਦਾ ਹੈ।

ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਨੇ ਆਪਣੀ ਰਚਨਾ ਵਿੱਚ ਅਜਿਹੇ ਹੀ ਧਰਮ ਦੀ ਕਲਪਨਾ ਕੀਤੀ ਹੈ ਜੋ ਕਿ ਸੱਚਾ ਤੇ ਨਿਰੰਕਾਰ ਹੋਵੇ, ਜਿਹੜਾ ਹਰ ਸਮੇਂ ਉਸਦੇ ਅੰਗ ਸੰਗ ਰਹੇ, ਉਸ ਨੂੰ ਮਾੜੇ ਕਾਰਜ ਕਰਨ ਤੋ ਸੁਚੇਤ ਕਰਦਾ ਰਹੇ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਜਨਤਾ ਨੂੰ ਸਹੀ ਮਾਰਗ ਵੱਲ੍ਹ ਪ੍ਰੇਰਿਤ ਕੀਤਾ ਤੇ ਕਿਹਾ, ਕਿ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਦਾ ਕੋਈ ਆਕਾਰ ਨਹੀ ਹੁੰਦਾ, ਉਹ ਹਰ ਥਾਂ ਮੋਜੂਦ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਉਹ ਹਰ ਮਨੁੱਖੀ ਆਤਮਾ ਅੰਦਰ ਵਸਦਾ ਹੈ। ਉਹਨਾਂ ਨੇ ਅਜਿਹੇ ਹੀ ਧਰਮ ਦੀ ਕਲਪਨਾ ਕੀਤੀ ਜਿਸ ਵਿੱਚ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਹਰ ਕਿਸੇ ਨੂੰ ਬਿਨ੍ਹਾਂ ਭੇਦ ਭਾਵ ਦੇ ਬਰਾਬਰ ਸਮਝੇ ਤੇ ਹਰ ਮਾਨਵ ਨੂੰ ਸ਼ਕਤੀ ਬਖਸ਼ਿਸ ਕਰੇ ਕਿ ਉਹ ਆਪਣੀ ਗ੍ਰਹਿਸਥੀ ਤੇ ਆਪਣੇ ਪਰਿਵਾਰ ਦਾ ਪਾਲਣ-ਪੋਸਣ ਵਧੀਆ ਢੰਗ ਨਾਲ ਕਰ ਸਕੇ, ਤੇ ਕਿਸੇ ਪ੍ਰਕਾਰ ਦੇ ਕਰਮਕਾਡਾਂ ਵਿੱਚ ਫਸ ਕੇ ਆਪਣੇ ਦੁਆਰਾ ਸ਼ਖਤ ਮਿਹਨਤ ਨਾਲ ਕਮਾਇਆ ਧਨ ਬਰਬਾਦ ਨਾ ਕਰੇ। ਇਸ ਪ੍ਰਕਾਰ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਧਰਮ ਅਤੇ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਦੇ ਸਰੂਪ ਬਾਰੇ ਲਿਖਦੇ ਹਨ:-

ਸਭ ਮਹਿ ਜੀਉ ਹੈ ਸੋਈ ਘਟਿ ਘਟਿ ਰਹਿਆ ਸਮਾਈ।
(ਜਪੁਜੀ ਸਾਹਿਬ ਪੰਨਾ, 1)

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਉਸ ਸਮੇਂ ਦੇ ਸਮਾਜ ਵਿੱਚ ਭਾਈਚਾਰਕ ਸਾਝ ਪੈਦਾ ਕਰਕੇ ਪੂਰੀ ਮਨੁੱਖਤਾ ਨੂੰ ਇੱਕ ਧਾਗੇ ਵਿੱਚ ਪਰੋਅ ਕੇ ਵਿਸ਼ਵ-ਸ਼ਾਤੀ ਸਥਾਪਿਤ ਕਰਨਾ ਚਹੁੰਦੇ ਸਨ। ਇਸੇ ਤਹਿਤ ਉਹਨਾਂ ਨੇ ਜਾਤ-ਪਾਤ ਦਾ ਵੀ ਬਹੁਤ ਸ਼ਖਤੀ ਨਾਲ ਵਿਰੋਧ ਕੀਤਾ, ਉਹਨਾਂ ਨੂੰ ਇਸ ਗੱਲ ਦਾ ਇਲਮ ਸੀ ਕਿ ਜੇਕਰ ਪੂਰੀ ਮਨੁੱਖਤਾ ਨੂੰ ਭਾਈਚਾਰਕ ਤੇ ਸਾਝੀਵਾਲਤਾ ਵਿੱਚ ਜੋੜ ਕੇ ਰੱਖਣਾ ਹੈ ਤਾਂ ਸਮਾਜ ਵਿੱਚ ਜਾਤ-ਪਾਤ ਦਾ ਖਾਤਮਾ ਬਹੁਤ ਜਰੂਰੀ ਹੈ। ਉਹਨਾਂ ਨੇ ਕਦੇ ਵੀ ਕਿਸੇ ਜਾਤ-ਪਾਤ ਬਾਰੇ ਗੱਲ ਨਹੀ ਕੀਤੀ, ਸਗੋ ਸਮੁੱਚੀ ਮਾਨਵਤਾ ਦੇ ਪੱਖ ਦੀ ਗੱਲ ਕੀਤੀ ਤੇ ਉਹ ਸਾਝੇਂ ਵਿਸ਼ਵ-ਵਿਆਪੀ ਭਾਈਚਾਰੇ ਦੇ ਹੱਕ ਵਿੱਚ ਸਨ। ਉਹਨਾਂ ਨੇ ਵੱਖ-ਵੱਖ ਆਗੂਆ ਨਾਲ ਗੋਸ਼ਟੀਆ ਕੀਤੀਆ ਤਾਂ ਕਿ ਮਾਨਵਤਾ ਵਿਚਕਾਰ ਆਪਸ ਵਿੱਚ ਪਾੜਾ ਨਾ ਵਧੇ ਸਗੋ ਉਹ ਸਾਰੇ ਇੱਕ ਦੂਜੇ ਨੂੰ ਸਮਝਣ ਤੇ ਨੇੜੇ ਆਉਣ, ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦੇ ਵਿਚਾਰਾ ਦਾ ਧੁਰਾ ਸੀ, ਉਹ ਲਿਖਦੇ ਹਨ:-

ਮਾਨਸ ਕੀ ਜਾਤ ਸਬੈ ਏਕੈ ਪਹਿਚਾਨਬੋ।

ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਨੇ ਹਮੇਸ਼ਾ ਮਾਨਵਤਾ ਦੇ ਪੱਖ ਵਿੱਚ ਆਪਣੀ ਆਵਾਜ ਬੁਲੰਦ ਕੀਤੀ ਅਤੇ ਸਮਾਜਿਕ, ਰੀਤਾ-ਰਿਵਾਜਾਂ, ਧਾਰਮਿਕ ਕੁਰੀਤੀਆ ਨੂੰ ਬਹੁਤ ਪਿੱਛੇ ਛੱਡ ਕੇ ਉਹਨਾਂ ਨੇ ਇੱਕ ਨਵੇਂ ਸਮਾਜ ਤੇ ਮਾਨਵਤਾ ਦੀ ਗੱਲ ਕੀਤੀ ਤਾਂ ਕਿ ਸਮੁੱਚੀ ਮਨੁੱਖਤਾ ਦੀ ਭਲਾਈ ਹੋ ਸਕੇ। ਉਹਨਾਂ ਨੇ ਸਮਾਜ ਵਿੱਚ ਹਰ ਇੱਕ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਬਰਾਬਰਤਾ ਦਾ ਦਰਜਾ ਪ੍ਰਦਾਨ ਕੀਤਾ, ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੀਆ ਨਜਰਾਂ ਵਿੱਚ ਸਾਰੇ ਹੀ ਇੱਕ ਬਰਾਬਰ ਸਨ, ਕੋਈ ਉਚਾ-ਨੀਵਾਂ ਨਹੀ ਸੀ।

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਆਪਣੇ ਸਮੇਂ ਵਿੱਚ ਬਹੁਤ ਸਾਰੀ ਰਚਨਾ ਕੀਤੀ, ਉਹਨਾਂ ਦੀ ਰਚਨਾ ਵਿੱਚ ਹਰ ਪੱਖ ਵਿਸ਼ੇਸ ਤੇ ਮਹੱਤਵਪੂਰਨ ਸੀ ਤੇ ਉਹਨਾਂ ਨੇ ਨਾਰੀ ਪ੍ਰਤੀ ਆਪਣੇ ਵਿਚਾਰ ਜਾ ਦ੍ਰਿਸ਼ਟੀਕੋਣ। ਉਸ ਸਮੇਂ ਹਾਲਾਤ ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਦੇ ਸਨ ਕਿ ਇਹ

ਸੋਚਿਆ ਹੀ ਨਹੀ ਜਾ ਸਕਦਾ ਸੀ ਕਿ ਨਾਰੀ ਸਮਾਜ ਦਾ ਹਿੱਸਾ ਹੈ ਵੀ ਜਾ ਨਹੀ। ਕਿਤੇ ਵੀ ਨਾਰੀ ਦਾ ਜਿਕਰ ਨਹੀ ਮਿਲਦਾ। ਪਰ ਸਭ ਤੋ ਪਹਿਲੀ ਵਾਰ ਆਪਣੀ ਰਚਨਾ ਵਿੱਚ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਨਾਰੀ ਨੂੰ ਸਮਾਜ ਦਾ ਇੱਕ ਅਜਿਹਾ ਅੰਗ ਮੰਨਿਆ, ਜਿਸ ਦੇ ਬਿਨ੍ਹਾਂ ਪੂਰੀ ਮਾਨਵਤਾ ਅਧੂਰੀ ਸੀ, ਤੇ ਜਿਸ ਤੋ ਬਿਨ੍ਹਾਂ ਸੰਸਾਰ ਦੀ ਕਲਪਨਾ ਕਰਨੀ ਵਿਅਰਥ ਸੀ। ਉਹਨਾਂ ਨੇ ਨਾਰੀ ਨੂੰ ਸਮਾਜ ਵਿੱਚ ਇੱਜਤ ਵਾਲਾ ਦਰਜਾ ਦਿੱਤਾ, ਤੇ ਨਾਰੀ ਨੂੰ ਸੰਸਾਰ ਦੀ ਮਾਂ ਤੇ ਜੱਗ ਜਣਨੀ ਦਾ ਦਰਜਾ ਪ੍ਰਦਾਨ ਕੀਤਾ ਤੇ ਕਿਹਾ:-

ਸੋ ਕਿਉ ਮੰਦਾ ਆਖੀਐ, ਜਿਤੁ ਜੰਮਹਿ ਰਾਜਾਨੁ।
(ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ ਜੀ, ਪੰਨਾ, 470)

ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਨੇ ਉਸ ਸਮੇਂ ਸਮਾਜ ਵੱਲੋ ਨਕਾਰੀ ਜਾਦੀ ਨਾਰੀ ਨੂੰ ਮਹਾਨ ਦਰਜਾ ਪ੍ਰਦਾਨ ਕੀਤਾ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਸਮਾਜ ਦੇ ਪਹਿਲੇ ਅਜਿਹੇ ਕ੍ਰਾਤੀਕਾਰੀ ਵਿਅਕਤੀ ਸਨ, ਜਿੰਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਸਮਾਜ ਦੇ ਅਜਿਹੇ ਸਿਸਟਮ ਦੇ ਵਿਰੁੱਧ ਆਵਾਜ ਉਠਾਈ ਤੇ ਨਾਰੀ ਦੇ ਹੱਕ ਵਿੱਚ ਆਪਣੀ ਆਵਾਜ ਸਭ ਤੋ ਪਹਿਲਾਂ ਬੁਲੰਦ ਕੀਤੀ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੇ ਸਮਕਾਲੀ ਕਵੀਆ ਨੇ ਨਾਰੀ ਨੂੰ ਬਹੁਤ ਭੰਡਿਆ ਸੀ। ਉਸ ਸਮੇਂ ਵਿੱਚ ਨਾਰੀ ਨੂੰ ਜੋਗ ਸਾਧਨਾ ਵਿੱਚ ਭੰਗ ਪਾਉਣ ਵਾਲੀ ਸਮਝਿਆਂ ਜਾਦਾਂ ਸੀ, ਤੇ ਇਸੇ ਕਰਕੇ ਕਈ ਸਾਧੂ ਜੋਗੀ ਆਪਣਾ ਘਰ-ਬਾਰ ਤਿਆਗ ਕੇ ਜੰਗਲਾਂ ਵਿੱਚ ਚਲੇ ਜਾਦੇ ਸਨ, ਤੇ ਨਾਰੀ ਨੂੰ ਭੰਡਦੇ ਸਨ, ਤੇ ਬੁਰਾ ਭਲਾ ਆਖਦੇ। ਉਸ ਸਮੇਂ ਨਾਰੀ ਆਰਥਿਕ ਤੋਰ ਤੇ ਵੀ ਆਜਾਦ ਨਹੀ ਸੀ, ਉਸਨੂੰ ਕਿਸੇ ਪ੍ਰਕਾਰ ਦਾ ਕੋਈ ਹੱਕ ਨਹੀ ਸੀ, ਤੇ ਨਾਰੀ ਧਾਰਮਿਕ ਜੀਵਨ ਲਈ ਰੁਕਾਵਟ ਸਮਝੀ ਜਾਂਦੀ ਸੀ। ਉਸਦੀ ਜਗ੍ਹਾਂ ਸਮਾਜ ਵਿੱਚ ਬਹੁਤ ਨੀਵ੍ਹੀ ਸੀ। ਪਰ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਤੋ ਨਾਰੀ ਪ੍ਰਤੀ ਇਹ ਰਵੱਈਆ ਸਹਿਣ ਨਹੀ ਕੀਤਾ ਗਿਆ। ਤੇ ਉਹਨਾਂ ਨੇ ਨਾਰੀ ਦੇ ਹੱਕ ਵਿੱਚ ਆਵਾਜ ਉਠਾਈ ਤੇ ਕਿਹਾ:_

"ਭੰਡਿ, ਜੰਮੀਐ ਭੰਡਿ, ਨਿਮੀਐ ਭੰਡਿ ਮੰਗਣੁ ਵੀਆਹੁ।
ਭੰਡਹੁ ਹੋਵੈ ਦੋਸਤੀ ਭੰਡਹੁ ਚਲੈ ਗਹੁ।
ਭੰਡੁ ਮੁਆ ਭੰਡੁ ਭਾਲੀਐ ਭੰਡਿ ਹੋਵੈ ਬੰਧਾਨੁ।
ਸੋ ਕਿਉ ਮੰਦਾ ਆਖੀਐ, ਜਿਤੁ ਜੰਮਹਿ ਰਾਜਾਨੁ।
(ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ ਜੀ, ਪੰਨਾ,470)

ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਨੇ ਆਪਣੀ ਰਚਨਾ ਵਿੱਚ ਪ੍ਰਾਕਿਰਤੀ ਬਾਰੇ ਵੀ ਸਾਨੂੰ ਜਾਗਰੂਕਤਾ ਪ੍ਰਦਾਨ ਕੀਤੀ ਹੈ। ਉਹਨਾਂ ਅਨੁਸਾਰ ਪ੍ਰਾਕਿਰਤੀ ਮਾਨਵਤਾ ਦੀ ਸੱਚੀ ਸਾਥੀ ਹੈ, ਕਿਉਕਿ ਮਨੁੱਖ ਨੇ ਪ੍ਰਾਕਿਰਤੀ ਦੇ ਅੰਦਰ ਰਹਿ ਕੇ ਹੀ ਆਪਣਾ ਜੀਵਨ ਬਤੀਤ ਕਰਨਾ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਉਹਨਾਂ ਅਨੁਸਾਰ ਮਾਨਵ ਜਿੰਨ੍ਹਾਂ ਪ੍ਰਾਕਿਰਤੀ ਦੇ ਨਜਦੀਕ ਰਹਿੰਦਾ ਹੈ, ਉਨਾਂ ਹੀ ਉਸਦਾ ਸੁਭਾਅ ਦਿਆਲੂ ਹੋ ਜਾਦਾ ਹੈ। ਉਹਨਾਂ ਅਨੁਸਾਰ ਪ੍ਰਾਕਿਰਤੀ ਤੋ ਬਿਨ੍ਹਾਂ ਮਾਨਵੀ ਜੀਵਨ ਦੀ ਕਲਪਨਾ ਕਰਨੀ ਵਿਅਰਥ ਹੈ। ਉਹਨਾਂ ਮਾਨਵੀ ਜੀਵਨ ਵਿੱਚ ਪ੍ਰਾਕਿਰਤੀ ਨੂੰ ਅਹਿਮ ਸਥਾਨ ਪ੍ਰਦਾਨ ਕੀਤਾ ਹੈ। ਉਹ ਲਿਖਦੇ ਹਨ:-

ਕੁਦਰਤਿ ਦਿਸੈ ਕੁਦਰਤਿ ਸੁਣੀਐ ਕੁਦਰਤਿ ਭਉ ਸੁਖ ਸਾਰੁ।
ਕੁਦਰਤਿ ਪਾਤਾਲੀ ਅਕਾਸੀ ਕੁਦਰਤਿ ਸਰਬ ਆਕਾਰੁ।
ਕੁਦਰਤਿ ਪਾਉਣ ਪਾਣੀ ਬੈਸੰਤਰ ਕੁਦਰਤਿ ਧਰਤੀ ਖਾਕੁ।
ਸਭ ਤੇਰੀ ਕੁਦਰਤਿ ਤੂੰ ਕਾਦਿਰੁ ਕਰਤਾ ਪਾਕੀ ਪਾਈ ਖਾਕੁ।
(ਰਾਗ ਆਸਾ)

ਸੋ ਇਸ ਪ੍ਰਕਾਰ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਆਪਣੀਆ ਰਚਨਾਵਾਂ ਵਿੱਚ ਬਹੁਪੱਖੀ ਦ੍ਰਿਸ਼ਟੀਕੋਣ ਰੱਖੇ ਹਨ। ਹਰ ਰਚਨਾ ਦੂਜੀ ਰਚਨਾ ਨਾਲੋ ਵੱਖਰੀ ਹੈ। ਉਹਨਾਂ ਨੇ ਆਪਣੀਆ ਰਚਨਾਵਾਂ ਵਿੱਚ ਮਾਨਵੀ ਭਾਈਚਾਰੇ ਤੇ ਸਾਂਝੀਵਾਲਤਾ ਦੀ ਗੱਲ ਕੀਤੀ ਤੇ ਨਾਲ ਹੀ ਸਮਾਜ ਵਿਚਲੀਆ ਬੁਰਾਈਆਂ ਦਾ ਵਿਰੋਧ ਕਰਕੇ ਨਵੀਆ ਪਿਰਤਾ ਪਾਈਆ। ਜਿਸ ਵਿੱਚ ਉਹ ਸਫਲ ਮੰਨੇ ਜਾਦੇ ਹਨ। ਉਹਨਾਂ ਨੇ ਆਪਣੇ ਜੀਵਨ ਤੇ ਰਚਨਾ ਰਾਹੀ ਅਮਲੀ ਜੀਵਨ ਉਪਰ ਜੋਰ ਦਿੱਤਾ, ਤਾਂ ਜੋ ਮਨੁੱਖਤਾ ਠੀਕ ਰਾਹੇ ਉਪਰ ਚੱਲ ਕੇ ਉਨ੍ਹਾਂ ਸਭ ਤਾਕਤਾਂ ਦਾ ਜੋ ਸਮਾਜ ਵਿੱਚ ਜਬਰ ਕਰਦੀਆ ਹਨ, ਸ਼ੋਸਣ ਵਿੱਚ ਵਿਸ਼ਵਾਸ ਰੱਖਦੀਆ ਹਨ ਅਤੇ ਇਨਸਾਨ ਨੂੰ ਇਨਸਾਨ ਨਾਲ ਲੜਾਉਦੀਆਂ ਹਨ।

ਹਵਾਲੇ

1. ਹਰਮਿੰਦਰ ਸਿੰਘ ਬੇਦੀ, ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਅਤੇ ਭਾਰਤੀ ਸੰਸਕ੍ਰਿਤੀ, ਪੰਨਾ 49
2. ਉਹੀ,
3. ਪ੍ਰੋ. ਬ੍ਰਹੁਮਜਗਦੀਸ਼ ਸਿੰਘ, ਪ੍ਰੋ. ਰਾਜਬੀਰ ਕੌਰ, ਪੰਜਾਬੀ ਸਾਹਿਤ ਦਾ ਇਤਿਹਾਸ ਪੰਨਾ 151
4. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 154
5. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 148
6. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 149

वर्तमान को आलोकित करता गुरुनानक देव का जीवन और दर्शन

*डॉ. संगीता वर्मा

* सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग, कमला नेहरु कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

"साचा साहिबु साचु नाई ,भाखिया भाउ अपारू।
आखहि मंगहि देहि देहि ,दाति करे दातारू।।"

प्रभु सत्य हैं और उनका नाम सच्चा है। भिन्न दृ भिन्न विचारों,बोलियों में उसे अलग दृअलग नामों से पुकारा गया है। प्रत्येक जीव उस ईश्वर की दया चाहता है और सभी जीव उसकी कृपा के अधिकारी हैं। वह ईश्वर हमें हमारे कर्मों के अनुसार अपनी दया प्रदान करता है। ऐसी पवित्र वाणी कहने वाले गुरुनानक देव जी ने ईश्वर और भौतिकता का जो आलौकिक संगम प्रस्तुत किया ,वह सराहनीय है। इस वर्ष गुरुनानक जी की जन्म जयंती को 550 वर्ष पूर्ण हो रहे हैं। प्रकाश पर्व के रूप में मनाया जाने वाला यह पर्व समाज के हर व्यक्ति को यह सन्देश देता है कि आध्यात्मिकता के साथ एकता,अनुशासन,मेहनतकी कमाई, सेवा भाव बनाए रखने में ही मानव जीवन की सार्थकता है।

भक्ति आंदोलन को मध्ययुगीन भारत में 'नवचेतना' से जोड़कर देखा जाता रहा है। तत्कालीन समय में चारों ओर से भौतिक मानसिक विकारों से घिरी भयग्रस्त जनता को जीने की चाह इस आंदोलन ने ही प्रदान की। मध्य काल के सामंतवादी अंधेरे में भक्ति आंदोलन ने जन जागरण की जो ज्योति जलाई वह सदियों तक जलती रहेगी। मध्यकाल में भारत बाहरी आक्रमणों से त्रस्त था। इसी समय देश में बाहरी आक्रान्ताओं का प्रवेश हुआ। "1520 ईस्वी में बाबर ने भारत पर आक्रमण किया। भारत भू को रक्त से लाल किया गया। धार्मिक स्थल तोड़े गए। नगर के नगर उजाड़े गए। मुगल सिपाहियों ने भारतीयों पर अत्याचार किए। बाबर के सिपाहियों ने हजारों बेकसूर लोगों को मौत के घाट उतारा। एमनाबाद में महिलाओं पर अत्याचार हुए। विदेशी आक्रांता भारत की धन संपदा के जबर मालिक हो गए। गुरु नानक देव जी ने बाबर के नीतियों का विरोध बड़े ही कड़े शब्दों में किया।"भक्तिकाव्य का मूल्यों और सांस्कृतिक कारणों की दृष्टि से विशेष महत्व है । मानवीय सरोकारों से युक्त यह काव्य सामाजिक सरोकारों पर अधिक बल देता है व परंपरा से चली आ रही मान्यताओं को दूर करने का प्रयास करता है। मध्यकालीन बोध एक प्रवृत्ति है जो समूचे युग की मानसिकता और भाव बोध को साथ लेकर चलती है।

गुरुनानक देव की वाणी ने केवल पंजाबी साहित्य ही नहीं अपितु समूचे भक्तिकाल को सुवासित करते हुए संपूर्ण भारतीय साहित्य को समृद्धि करने का सराहनीय प्रयास किया है। गुरुनानक देव कवि, सुधारक,धर्म –उपदेशक आदि विभिन्न रूपों में हमें दिखाई देते हैं। नानक वाणी का अध्ययन करने से हमें पता चलता है कि गुरु नानक की आध्यात्मिक सोच समाज की विकृत मानसिकता को दूर करने का प्रयास करती है। उनकी पवित्र वाणी आज भी उतनी ही प्रासंगिक है जितनी मध्यकाल में थी । गुरुनानक देव की दृष्टि देशकाल से परे केवल युगीन दायरे में ही सिमटकर नहीं रह जाती वरन उनके ज्ञान की अविरल धारा आज के युग को भी आप्लावित किए हुए है। गुरु नानक सिख धर्म के जन्मदाता थे। उनका जन्म ही मानो मानव समुदाय की जातीय विकृतियों के निराकरण के लिए हुआ था। भारतीय समाज की अज्ञानता ने संपूर्ण वातावरण को आडंबरयुक्त और ज्ञानहीन बना दिया था। डॉ. पीताम्बर बड़थ्वाल के अनुसार "वर्ण व्यवस्था आदि जो नियम समाज में शांति मर्यादा व्यवस्था देखने के लिए बनाए गए थे वह समाज में वैमनस्य के विधायक हो गए ।" गुरुनानक देव ने ऐसे समय में निर्भीक होकर समाज के भेदभाव को मिटाने का प्रयास किया और समस्त मनुष्यों की उत्पत्ति को एक ही बताया। भौतिक जीवन के प्रति नितांत उदासीन वृत्ति वाले गुरुनानक देव ने अपनी ज्ञान रुपी ज्योति का जो प्रकाश दिया वह रोशनी आज भी समाज और राष्ट्र का मार्ग प्रशस्त कर रही है। उन्होंने केवल मानव कल्याण की बात पर जोर दिया। सिर्फ मानव कल्याण ही संसार में ज्ञान की ज्योति जला सकता है। गुरुनानक देव जी का विराट व्यक्तित्व है और उनकी वाणी भक्ति ज्ञान और वैराग्य से ओतप्रोत है।

गुरुनानक देव जी का जन्म उस काल में हुआ जब विभिन्न संप्रदायों में जनसामान्य विभाजित था। जाति पांति, श्रेष्ठता के प्रश्न सर्वत्र छाए हुए थे। निर्गुण और सगुण आदि भेद समाज की जड़ों में पैठ जमा चुके थे। ऐसे में गुरु नानक देव ने ऐसी कई शिक्षाएं दी जो आज भी व्यावहारिक रूप से मान्य हैं। साढ़े पांच सौ वर्ष गुजर जाने के बाद भी गुरु नानक देव के अनुयायी न केवल देश वरन विदेश में भी कर्म संदेश की महिमा का गान कर रहे हैं। एकाकार ईश्वर की आराधना ,कर्म की प्रधानता का संदेश और गलत का विरोध करना गुरु नानक देव की वाणी का मूल स्वर है। केवल सत्कर्म ही संसार का मूल मंत्र हो जाए तो सारी समस्याओं का हल

मिल सकता है। गुरु नानक देव जी के न केवल शिक्षा देने का मात्र 'उपदेश' कार्य ही नहीं करते बल्कि अपने जीवन को ही दीपक की तरह प्रकाश देने का काम करते हैं।

गुरुनानक जी ने अपने अनुयायियों को जो उपदेश दिये वह कल भी प्रासंगिक थे और आज भी हैं।उनकी शिक्षा का मूल सार यही है कि ईश्वर एक है। वह अनंत और सर्वव्यापक है। गुरुनानक देव ईश्वर की मूर्ति पूजा के विरोधी हैं। उनका 'नाम स्मरण' ही सर्वोपरि तत्व है और 'नाम' गुरु के द्वारा ही प्राप्त होता है। गुरुनानक देव की शिक्षा आस्था की ज्योति जलाए एक सत्पुरुष पुरुष की शिक्षा है। उनकी वाणी में एक ओर ज्ञान और भक्ति का अद्भुत सम्मिश्रण है वहीं दूसरी और भाषा में चमत्कृत शक्ति देखी जा सकती है। गुरुनानक देव की संपूर्ण वाणी 'श्री गुरु ग्रंथ साहिब' में संकलित हैं। यह 1430 पृष्ठों का ग्रंथ है। उनकेदिव्य व्यक्तित्व का आकलन इस प्रकार किया जा सकता है कि "गुरु नानक देव अपूर्व समाज सुधारक, महान देशभक्त ,प्रचंड रूढ़ि विरोधी और अद्भुत युगपुरुष थे । इसके साथ ही उनके ह्रदय में वैराग्य और भक्ति की मंदाकिनी सदैव प्रवाहित होती रहती थी और मष्तिष्क में विवेक और ज्ञान का मार्तण्ड अहर्निश प्रकाशित रहता था। वे अपूर्व दूरदर्शी थे। उन्होंने स्पष्ट रूप से यह समझ लिया था कि वर्तमान परिस्थिति में कौन सा धर्म भारत के लिए और वह भी विशेषता पंजाब के लिए श्रेयस्कर होगा। ऐसे विचार से उन्होंने अपनी वाणी के द्वारा सिख धर्म की संस्थापना की।यद्यपि मध्ययुग में भारतवर्ष में अनेक समाजसुधारक हुए पर उन्हें वह सफलता प्राप्त नहीं हुई जो गुरुनानक देव जी को हुई ।"3

गुरुनानक देव ने अपने धर्म में सेवा भावना को प्रधानता दी। गरीब वंचित जनों के प्रति सेवा भावना रखना समाज को एकरूप बनाने हेतु प्रयास है। आज भी उनके अनुयायी अहम् को त्याग कर मानव सेवा पर बल देते हुए परमात्म चिंतन की ओर अग्रसर होते हैं। कबीर की भांति गुरु नानक देव ने हिंदू और मुसलमान के कट्टरपन की निंदा की क्योंकि दोनों धर्मों की राह गलत थी। जब गुरुनानक देव जी को पिता कालू ने अपने पुरोहित को बुलाकर यज्ञोपवीत के लिए मुहूर्त निकलवाया तो नानक जी ने कहा " पुरोहित जी मैं यह जनेऊ नहीं पहनूंगा। मुझे इस कपास के धागे की कोई आवश्यकता नहीं। पिताजी की जिद के सामने नानक हंसने लगे और बोले ऐसा धागा दो जो परलोक में भी मेरी मदद करे। जो ना गले, ना टूटे ना सड़े ना मैला हो ,ऐसे जनेउ से धर्म और आत्मा को इच्छानुसार निभाया जा सके।"4 नानक जी हर उस परंपरा के विरोधी थे जो मनुष्य की राह में कांटे बोता है और उसे आगे न बढ़ने देता हो। उनका यह प्रसंग आज के समय में भी लागू होता है कि यदि हम धर्म के नाम पर बाहरी आडंबर को हटा दें तो मनुष्यता का चोला का चोला ओढ़ लें न तो कदाचित हमारी आने वाली संस्कृतियों के लिए एक बेहतर भविष्य का निर्माण हो सकेगा। गुरुनानक देव जी सच्चे मानवतावादी थे। सभी जीवों को उस परमपिता परमात्मा की संतान मानते थे। जाति, वर्ग, संप्रदाय से परे मानवता की सेवा ही उनका एकमात्र उद्देश्य है। जब कालूराम जी ने कहा कि तुम्हारे बिना मेरा संसार में कोई नहीं है। तब गुरुनानक देव जी ने कहा दृ"आप यह क्यों कहते हैं कि मेरा कोई नहीं है। यह आपकी भूल है। आपका ईश्वर है जो सबका स्वामी है ,और फिर मेरा जन्म आपकी सेवा के लिए नहीं हुआ है। मैं तो मानव जाति की सेवा के लिए यहाँ आया हूँ। इसलिए पिताजी ,मुझे आशीर्वाद दीजिये कि मैं मानवजाति की सेवा कर सकूँ।"5

गुरुनानक देव जी को कालूजी पांधा की पाठशाला ले गए।वहां जब पंडित जी ने गुरुनानक देव जी को पटी लिखकर देने को कहा तो उत्तर में नानक ने इवड़ी ,उड़ा, खखै,गगा ,च ,छछै,जजा आदि सभी वर्णों में परम परमात्मा को ही विदित किया और पंडित जी को कहा दृ "पंडित जी मैंने प्रभु महिमा का गीत गाया है आप भगवान का स्मरण करो संसारी विद्या का त्याग ही अच्छा है। आत्म विद्या संसार को सिखाओ। संसारी विद्या बंधन का कारण है और कमाने के लिए सीखी जाती है। और ब्रह्मविद्या बंधनों को काटने वाली है।"6 कहने का तात्पर्य यह है कि जब चारों वेदों की प्रासंगिकता ख़त्म होती जा रही थी और शिक्षा केवल धनोपार्जन का माध्यम भर रह गई थी तब गुरुनानक देव जी ने वेदों की शिक्षा को संसार में फैलाने का पवित्र कार्य किया।

कर्म की प्रधानता और अपनी खुद की पवित्र कमाई का सन्देश गुरुनानक देव ने दिया। इस प्रसंग में उनकी एक कथा एक उल्लेखनीय है जब नानकी ने जयराम जी से कहा की नानक जी को संसारी झंझटों में न डालो तो गुरु जी ने कहा कि बहिन जी पुरुष को सदैव कमाकर ही खाना उचित है। इससे पवित्रता होती है। तब जयराम जी ने उन्हें मोदीखाने में काम पर लगा दिया। इसी प्रकार भागो ने जब नानक को खाने का निमंत्रण दिया तो नानक जी ने निमंत्रण अस्वीकार कर दिया । क्योंकि उसकी कमाई नेक नहीं थी। उन्होंने कहा कि यह हरामखोरी और अन्याय से इकठ्ठा किया हुआ धन है । इस धन का भोजन खाकर बुद्धि भ्रष्ट होती है । इसलिए हमने इस बुद्धि को नष्ट करने वाले और रोग पैदा करने वाले भोजन को खाने से इनकार कर दिया । गुरु जी गरीबों के सच्चे सेवक थे । उन्होंने भाई लाली के घर से सूखी रोटी और भागो मलिक के घर से घी में तला हुआ पूड़ा हाथ से दबाया तो सूखी रोटी से दूध की धार और पूड़े से रक्त बह निकला । इससे स्पष्ट है कि हाथ से की गई मेहनत की पवित्र कमाई को गुरुनानक देव जी ने सर्वोपरि माना। वर्तमान संदर्भों में भी उनके सन्देश प्रासंगिक हैं कि अमीर से अमीर बनने की होड़ में जब पूंजीपति वर्ग द्वारा अत्याचार की सीमाएं पार होने लगती हैं तब गुरुनानक देव जी के जीवन दर्शन को ह्रदयंगम करना बहुत जरूरी है।आज के कई धर्म सुधारक ,समाज सुधारक सैद्धांतिक रूप से चोला तो ओढ़े रहते हैं और व्यावहारिक रूप से भी दिखावा करते हैं किन्तु आत्मीय स्तर पर कभी भी नहीं जुड़ पाते।

कर्म संदेश की महिमा का संदेश उनके जीवन के कई पहलुओं से पता चलता है। एक कथा जनसामान्य में बहुत प्रचलित है। "ग्रीष्म ऋतु समाप्त होते ही सावन–भादो आ गई। महिता कालू जी ने उचित समय को देखते हुए फसल बोने की सोची। यही उचित समय है जब फसल बोई जाए। यह सोच कर नौकर के साथ बैलों की जोड़ी तैयार करके गुरुजी के साथ भेज दिया। गुरुजी ने खुले खुले सियाड़ निकालकर सारा बीज बखेर दिया।

महिता कालू जी ने चार–पांच दिनों के पश्चात खेत में बड़ी हरियाली खड़ी देखी वे बहुत प्रसन्न हुए व गुरु जी की प्रशंसा करने लगे।"7

गुरु नानक देव जी का संदेश नितांत स्पष्ट और मौलिकता को धारण किए हुए हैं। उन्होंने विभिन्न विचारधारा वाले संतों से परिचय प्राप्त किया और जब कट्टर पंथी विचारधाराएं जनसामान्य की मानसिकता को कुंठित कर रही थीं तब उन्होंने उदार मानसिकता का परिचय दिया। वह सत्पुरुषों से लगातार विचार विमर्श करके अपना ज्ञान बढ़ाते रहे और आसपास की विकृत मानसिकता का वाले लोगों के चरित्र को सुधारते रहे। विश्व के भांति भांति के रीति रिवाजों ,संस्कृतियों के दरवाजे उस युग में एक– दुसरे के लिए खुले। गुरुनानक देव जी ने कई देशों की यात्राएँ भी कीं और अपनी पवित्र वाणी से अन्य देशों की धरा को भी पवित्र और सुवासित किया। मुस्लिम तीर्थस्थल मक्का के साथ दृसाथ बग़दाद भी गये तथा हिन्दुओं के तीर्थस्थल जग्गनाथ पुरी,हरिद्वार ,कुरुक्षेत्र की भी यात्रा उन्होंने की।

सेवा को सिख धर्म की नींव माना गया है। गुरु नानक देव स्वयं को भी ईश्वर का सेवक ही मानते हैं। सेवा और साधना उनके जीवन का मूल दर्शन है। सेवा भावना मनुष्यता की चरम कसौटी है। यह मनुष्य के ह्नदय को कलुषता से दूर रखती है। आज भी सिख धर्म के अनुयायी सेवा भावना के लिए विश्व प्रसिद्ध हैं। संसार में जितने भी प्राणी हैं उन्हें सेवा के बिना किसी फल की प्राप्ति नहीं हो सकती दृ

"तेरे जीअ तेते सभी तेरे विणु सेवा फलु किसे नाही"

गुरुनानक देव संसार को ईश्वर के सर्वशक्तिमान रूप के दर्शन कराना चाहते थे। उन्होंने जनसामान्य को ईश्वर के अद्‌भुत अलौकिक आनंद की अनुभूति कराना चाहा। इसके माध्यम से लोग सांसारिक प्रलोभनों को त्याग कर वासना से मुक्ति पा सकते थे। उन्होंने झूठे कर्मकांड का विरोध किया। किसी विशेष धर्म का विरोध करना उनका उद्देश्य कभी नहीं रहा। वे मात्र सभी धर्मों में आपसी प्रेम और सौहार्द्र की भावना बनाए रखना चाहते थे क्योंकि ईश्वर सभी जीवों में समान रूप से व्याप्त हैं। बाह्याडम्बर से ईश्वर की प्राप्ति कभी भी नहीं की जा सकती है। इनकी शिक्षाएं वैज्ञानिक तो हैं ही ,साथ ही सभी युगों के लिए समान रूप से लाभकारी हैं। उन्होंने पाखंड और व्यर्थ के विधि दृविधानों का तीव्र विरोध किया। उन्होंने हिंदुओं के तीर्थ स्थान सूर्य को जल चढ़ाना, छुआछूत आदि की की निंदा की। उन्होंने हिन्दुओं को वास्तविक योगी और मुसलमानों को सच्चा मुसलमान बनने की प्रेरणा दी। इस संदर्भ में एक कथा सर्वविदित है कि हरिद्वार में गुरुजी सुबह–सुबह गंगा स्नान के लिए चल दिए। जब गुरुजी और मरदाना स्नान कर चुके तो उन्होंने देखा कि ब्राह्मण और कई दूसरे लोग सूर्य की ओर मुंह करके जल चढ़ा रहे हैं। यह देख कर गुरुजी साधुओं को गंगाजल में पानी डालते देख खुद भी उलटी तरफ मुंह करके पानी डालने लगे। ऐसा करते देख साधुओं ने यह देखा तो उन्होंने पूछा कि आप यह क्या कर रहे हो तब गुरुजी ने उत्तर दिया कि तलवड़ी वाले खेतों को पानी दे रहा हूं। जब साधुओं ने सुना तो उन्होंने कहा कि भला यहां से इतनी दूर पानी कैसे जा सकता है। तब गुरुजी बोले ऐसे कि यदि तुम्हारा पानी यहां से लाखों–करोड़ों मील की दूरी पर सूर्य के पास पहुंच सकता है तो क्या मेरा पानी सैकड़ों मील की दूरी पर मेरे खेतों तक नहीं पहुंच सकता। इस प्रकार झूठी रस्मों का खंडन उन्होंने व्यावहारिक रूप से किया।

गुरूजी ने सभी धर्मों को बराबर माना। कोई भी धर्म छोटा और बड़ा नहीं है। उनका एक ही सन्देश था दृसब इंसान एक हैं। यहाँ कोई छोटा नहीं ,कोई बड़ा नहीं है।ईश्वर ने सबको बराबर पैदा किया है। ईश्वर एक है। ईश्वर का नाम लेना हर प्राणी का कर्त्तव्य है।

तेरे नाम अनेका ,रूप अनता ,
जेता कीता ,तेरा नाऊ,
बिणु नावै,नाहीं को थाऊ।8

गुरुनानक देव जी ने चोरों को भी भक्ति का सन्देश दिया। एक बार जब गुरु जी आध्यात्मिक यात्रा केलिए निकले तो 'तलबे' पहुँच गए। यह आजकल पकिस्तान के जिला सुलतान पुर में स्थित है। यहाँ एक चोर ने यात्रियों के रात में विश्राम करने हेतु मंदिर और मस्जिद दोनों बनवा रखे थे। यात्रियों की वह धर्म के अनुसार ठहरने की व्यवस्था कर देता था। तत्पश्चात वह रात्रि होने पर यात्रियों को लूट लेते और जान से भी मार देते थे। जब वह रात्रि में गुरु जी के कमरे की ओर बढ़ा तो उसके कदम ठहर गए। उसने देखा कि अंदर से ख़्वाब के साथ–साथ कीर्तन की ऐसी मधुर आवाज़ आ रही थी कि उनकी आत्मा पर मस्ती छाने लगी। एक अनजाना नशा ,जिससे वह सबके सब झूमने लगे। गुरुनानक देव जी की सच्ची और पवित्र वाणी सुनकर चोर का ह्नदय परिवर्तन हो गया। गुरूजी ने उस चोर को कहा कि तुम अमृत प्रचार के लिए हमारी ओर से रहोगे।

अंधविश्वासों और व्यर्थ की प्रथाओं का उन्होंने सदैव विरोध किया। "एक गुरु या शिक्षक के रूप में उन्होंने लोगों के लिए इन सब से बाहर निकलने का एक रास्ता दिखाया उनके लिए कर्म का मतलब अनुष्ठान की बजाए एक अच्छी क्रियाशीलता थी। उन्होंने धार्मिक अनुष्ठानों और अंधविश्वासों का कोई मूल्य नहीं है। उन्होंने समाज के निचले तबके के लोगों को गरिमा की पेशकश करके जोर दिया कि हर कोई बराबर है। लंगर या सामुदायिक रसोई के समतावादी प्रथाओं ने अस्पृश्यता व्यवस्था को सीधे चुनौती दी। पुजारी अप्रासंगिक थे क्योंकि कोई भी भगवान के साथ सीधा जुड़ सकता है। और आगे कहा कि धार्मिक होने का मतलब यह नहीं था कि समाज से अलग हो जाना और साधु बन जाना बल्कि इसके बजाय समुदाय का एक हिस्सा बने रहना और एक अच्छा जीवन व्यतीत करना है।"9

इस प्रकार ईमानदारी, सच्ची मेहनत ,समानता ,सेवा आदि अमूल्य रत्न गुरुनानक देव जी ने अपने अनुयायियों को दिये जो आज भी प्रकाश स्तम्भ बनकर समाज ,देश ,विदेश के लोगों का जीवन आलोकित कर रहे हैं। गुरुनानक देव जी कथनी और करनी में फर्क नहीं था। कार्य का सोचना एक पक्ष हो सकता है किंतु उस पक्ष को व्यावहारिक रुप से करके दिखाना ही सच्ची सिद्धि होती है। केवल कहने मात्र से किसी भी कार्य में सफलता नहीं मिल जाती और न ही किसी तत्व की प्राप्ति हो सकती है। गुरुनानक देविा जी ने आम जनमानस में चेतना लाने के लिए कविता रूप में अपनी वाणी को

सामने रखा। उन्हें जो श्रेष्ठ एवं रुचिकर लगा, उसे सरल भाषा में अपनी वाणी के माध्यम से कह दिया। नानक वाणी ने मानवीय चेतना,मानवीय मूल्यों को नया दृष्टिकोण प्रदान किया है। ईश्वर एक है और सभी मनुष्य समान हैं,का सन्देश उन्होंने दिया। शोषण मुक्त समाज की परिकल्पना नानक वाणी के अनुसरण के बिना पूरी कभी नहीं हो सकती। नानक वाणी की प्रासंगिकता केवल समसामयिक नहीं थी और केवल उसी युग में समाप्त नहीं हो जाती। आधुनिक युग के संघर्ष नानक वाणी से कहीं ना कहीं जाकर जुड़ जाते हैं और उन सभी प्रश्नों के जवाब हमें गुरुनानक देव की वाणी तथा उनके जीवन और दर्शन में मिलते हैं।

सन्दर्भ :—

1. essayhindi.com गुरुदेव नानक
2. डॉ. पीताम्बर बड़थ्वाल,हिंदी काव्य के निर्गुण संप्रदाय ,पृष्ठ —77,अवध पब्लिशिंग हाउस, लखनऊ,
3. डॉ.जयराम मिश्र नानक वाणी ,मित्र प्रकाशनत्र प्राइवेट लिमिटेड, इलाहाबाद , पृष्ठ —15
4 गुरुनानक देव (किशोरों के लिए),नरेन्द्र पाठक, सन्मार्ग प्रकाशन ,दिल्ली पृष्ठ —23
5 वही ,पृष्ठ —48
6 जन्म साखी, गुरुनानक देव जी की, भा.जवाहर सिंह, कृपाल सिंह, पुस्तकां वाले, बाज़ार माई सेवां, अमृतसर, पृष्ठ—32
7 spiritualworld.co.in/tengurus-of-sikhism/ 1-shri-guru-nanak-dev-ji/story-sakhi-kheti-karni/#more-3117
8 गुरुनानक देव (किशोरों के लिए),नरेन्द्र पाठक ,सन्मार्ग प्रकाशन ,दिल्ली , पृष्ठ —54
9 http://hindi,theindiareview.com/ relavance-of-guru-nanak-teaching-to-indians-economic-devolpoment-231118-01

Reviewing position of women in Guru Nanak's philosophy through a contemporary "feminist lens"

* Dr. Shruti Vip

* Assistant Professor, Dept of History, PGDAV (Eve), University of Delhi

Rooted in northern India, Sikhism preached and propagated values of universalism, liberalism, humanism and pluralism in the backdrop of "medieval age." Its teachings were "revealed' by Guru Nanak (1469-1539 AD) who was, in turn, succeeded by nine other Gurus'. His teachings are embodied in the *Adi Granth* compiled by Sri Guru Arjan Dev the 5th Guru. *The present paper is an attempt* to understand the role of Sikh women in medieval India; to comprehend their position in society, their dreams, visions, hopes and spiritual aspirations. It also explores how women, when offered relative equality within a pantheon, perceived themselves and the special societal roles they undertook, making Sikhism a pro women religion.

From 1469 onwards Sikh women transcended the barriers of race, caste, class that ran deep in the Indian psyche by opening their kitchens to all irrespective of caste, creed or class. Guru Nanak addressed women as a friend, companion and the originator of civilization. The Sikh movement developed in a patriarchal milieu, as a product of contemporary patriarchal values that had been super-imposed by the ancient and medieval scriptures.

The impact of oppressive rulers along with the oppressive and dehumanizing impact of the caste system gave a particular direction to the Sikh movement. Involvement of women in the Sikh movement was a pathbreaker in many ways. Despite the absence of their names in Sikh history, Gurus' mothers, wives, sistersand daughters were active participants in the Sikh movement. There were many Sikh women who organised langars, fought alongwith men, against the Mughal armies and foreign invaders.[1] Several women fighters were killed during the *Ghaloogharas* (holocausts) between 1746 C.E. and 1762 C.E. Guru Nanak's legacy was carried forward by Guru Gobind Singh who bestowed both the males as well as females with the *kirpan* .

During guerrilla warfare, Sikh women were imprisoned and made to perform hard labour, but they did not surrender. Ahmed Shah Batalvi has accounted for women who led political and military activities of the *Misals*. Rani Rajinder Kaur was one of the tough fighter of her times. Sahib Kaur the Chief Minister of Patiala in 1793 valiantly fought against the Marathas near Ambala. Aus Kaur diligently handled the administration of Patiala. Guru Nanak's teachings instilled spirit of moral dignity, service and self-sacrifice among masses and women from Sikh history namely Mata Tripta, Bibi Nanaki, Mata Khivi, Bibi Bhani, Mata Sundari, Mai Bhago and Sardarni Sada Kaur were pioneers of women empowerment. Their character displayed gender equality as an ideal as opposed to other religions which have harbored anti-women thoughts and practices.

The pioneer in Sikhism was Mata Tripta, the mother of Guru Nanak Dev who meditated while carrying the child Nanak in her womb and protected him from evil forces. Her warmth and kind heartedness impacted impressionable Nanak's mind who shared his own wealth with saints and *'fakirs'* just like his mother who was ever giving. Her gentle disposition encouraged Nanak to opt for unconventional paths. Nanki, the elder sister of Guru Nanak Dev, was very intelligent and recognized the divine light in her brother and wholeheartedly supported him not only by respecting him like a Guru but also by supporting Guru Nanak's revolutionary ideals as she believed that he had come to redeem people from misconception and superstitions.

Mata Khivi, the wife of the second Guru, Guru Angad Dev was a selfless soul who toiled hard to perform community service. She laboured in the *langar* (community kitchen) and lovingly offered food to all irrespective of caste, colour, and creed. She carried forward the mission of Guru Nanak successfully. Mata Sundari the Mother of Khalsa, was the companion of Guru Gobind Singh. Her life was devoted to the welfare of the Sikh masses. Mai Bhago represented bravery and courage as she remained on Guru Gobind's side even when many male soldiers had deserted him. She set an example

among many brave Sikh women to face death with honor.

Sardarni Sada Kaur the pillar of the Sikh Empire in Punjab, known as Maharaja Ranjit Singh's mother-in-law, was a brave woman who astutely handled court intrigues. She was instrumental in making Maharaja Ranjit Singh, ruler at the tender age of eleven years .

Importance of individual

One of the tenets of Guru Nanak's philosophy was the freedom of the individual. This unleashed new socio economic forces like equality, justice and individual capability that acknowledged gender-free monotheism.[2] In many religions God has been addressed as father but Sikhism introduced the concept of God as both mother and father . The fifth Guru (Guru Arjan Dev) reiterated the high status given to women by the first Guru by placing the feminine name before the name of father. He professed that God is our Mother as well as our Father.

Guru Nanak gave women the right to achieve salvation. As stated in Guru Granth Sahib "In all beings is the Lord pervasive, the Lord pervades all forms male and female".[3] This indicates that the light of God rests equally in all beings and the woman is not considered as a roadblock to man's spirituality.

Sikhism preached equality as women had same rights as men and could lead the congregation. The holy book which is in *Gurmukhi* was not reserved only for the male audience. There was no belief in the caste system and all could attain union with God by following the true Guru. Guru Nanak ridiculed the idea of inferiority and evil associated with women and rejected slavery and social taboos that exploited women. In one of his hymns, he said:

"From woman, man is born; within woman, man is conceived;
to woman he is engaged and married. Woman becomes his friend;
through woman, the future generations come. When his woman dies,
he seeks another woman; to woman he is bound. So why call her bad?
From her, kings are born. From woman, woman is born;
without woman, there would be no one at all. O Nanak, only the True
Lord is without a woman.
That mouth which praises the Lord continually is blessed and beautiful.
O Nanak, those faces shall be radiant in the Court of the True Lord."[4]

Due to such egalitarian principles, Sikh women freely visited the *Gurdwara* and worshipped without inhibitions. The woman were forbidden to veil their faces while entering the *Gurdwara* , a revolutionary concept at a time when purdah had become the usual norm among rest of the communities. Women could also perform the role of a priest or serve at the *Gurudwara* in various capacities. Guru Nanak's revolutionary idea of gender equality entailed that the physical life is transitory, and hence the difference between men and women is ephemeral and insignificant. Due to this defination of reality which was quite different from that of the contemporary Muslims and Hindus, Sikh men and women toiled together in the congregation, the *langar* and participated equally in worship as well as cultural activities.

Institution of marriage

This egalitarianism transformed marriage rules that were redefined by the Sikhs to be monogamous in form and practice for both men and women. Guru Amar Das Ji was vociferous in opposition to common practices of women wearing veils and female infanticide. Sikh gurus reasoned that since men and women were equal in God's domain, the same applied on earth.[5] Sikhism also encouraged female education. Of the Sikh missionaries sent out by the third Guru many were women. Guru Amar Das believed that no teachings could be put into practice until and unless they were accepted by females. The Gurus bestowed the Sikh men and women the same dress. Five symbols *Kes* (hair), *Kara* (an iron bracelet), *Kirpan* (sword), *Kangha* (wooden comb) and *Kacherra* (an under short) were give to both men and women, uttered the same prayers, lived the same way of life and wore the same dress.

"Stay, stay, O daughter-in-law - do not cover your face with a veil. In the end, this shall not bring you even half a shell." [6]

The third Guru, Guru Amar Das banned visiting queens to remain veiled in his presence as the *purdah* system suppressed the personality of women and reflected their inferior status.

"False modesty that suppressed is ended,
Now with the veil cast off am,
I started on the way of devotion".[7]

Sikhism projected the relationship between a husband and wife in a positive light. The Gurus considered marriage a highly respected spiritual stage of life . It was considered an essential stage in the journey towards realization of God , hence the marriage ceremony was referred to as the *Anand Karaj*. *Anand* signifies bliss and *Karaj* means an act and the responsibility of the householder were considered a spiritual act. Guru Nanak rejected the notion of renunciation and celibacy as being essential for religious progress. Guru Granth Sahib revealed,

"They are not said to be husband and wife, who merely sit together.
They alone are called husband and wife, who have one light in twobodies".[8]

As far as her position vis a vis man, Bhai Gurdas, a Sikh scholar who was the scribe of the original holy book as dictated by Guru Arjan Dev during the 16th Century, reveals:

"Woman is one half of the complete personality of man, and is entitled to share secular and spiritual knowledge equally" (*Varan* Bhai Gurdas 5, *Pauri* 16:59)

Guru nanak rejected the notion of the woman being considered inferior to her husband. Issues of fidelity were also tackled by following an egalitarian approach rather than putting the entire responsibility on the shoulder of women. Bhai Kahan Singh in his monograph *Gurmat Martand*, suggested that at the time of marriage the vows of *Patti Brata* (complete fidelity to husband) as well as *Istri Brata* (complete fidelity to wife) had to be made by the couple in the *sangat* (holy congregation).[9]

Marriage however was not considered a rigid institution. Acknowledging marital problems, the Guru states:

'If a piece of bronze or gold or iron breaks,
into bits the smith welds them again in fire.
And the lovers are united with sweet words.
And the Vedas are learnt through true speech
And the dead are united with the living through truth and
Beneficence. Such are the things that unite and mend.
But the fool is mended only on being struck in the face.
Nanak reveals this truth after great thought that
through the Lord's praise are we united with the Lord's court.'[10]

Neither of the two sexes were allowed multiple partners. Remarriage was permissible in case of death or divorce. Guru Nanaks ideology didn't allow marriage to be austentatious and Guru Granth Sahib prohibited idea of dowry as can be gauged from the following couplets in the Guru Granth Sahib.

"Any dowry which the perverse offer for show is only false
egotism and a worthless display.
O my father, please give me the Name of the Lord as
my wedding gift and dowry".[11]

"You have lost your self-discipline, you fool, and you have accepted an offering under false pretenses. The daughter of the alms-giver is just like your own; by accepting this payment for performing the wedding ceremony, you have cursed your own life."[12]

Women's rights and identity

Sikh women have full rights to contest any hereditary claim. No restrictions were found in the Sikh *Rehat Maryada* (Code of Sikh Conduct).The property of the father is equally divisible amongst the children; women married and unmarried, have equal share along with the male progeny. The Guru considered the woman to be capable of having her own identity and since he considered her to be a Princess, she was given the surname Kaur which freed females from adopting their husband's name at the time of marriage. Guru didn't consider women as inadequate in assuming the role of a witness just like men did. In case of a dispute a Sikh could approach the *Panj Pyaras* for a decision and there was no restriction on women membership of *Panj Pyaras.* So Sikh females were not discriminated against due to menstruation and could not be considered as inferior.

'Women and men, all by God are created; all this is God's play. Says Nanak, All thy creation is good, Holy'.[13]

As pointed out by Dr Gurnam Kaur in her work "Current Thoughts in Sikhism", Sikhism propagated the idea that all human beings are equal from birth. Society consisted of only two classes, *manmukh ie those who follow their own path* and *gurmukh* i.e those who follow the path of the Guru and obey him. So any individual could attain a higher spiritual status.[14]

Unlike bhakti saints who considered women to be evil, Guru Nanak didn't discard her as a temptation or a weakness for humanity. Men were expected to raise the standard of their morality by overcoming their weaknesses. *'Vain are the eyes which behold the beauty of another's wife'*[15]

Guru Nanak gave primacy to the spiritual rather than physical journey and hence Gods' name could be uttered even by menstruating , blood stained women. Mensturating women were free to visit the *Gurudwara*, pray and perform *seva* or service. In "The Feminine Principle in the Sikh Vision of the Transcendent", Nikky Guninder Kaur-Singh explained "The denigration of the female body expressed in many cultural and religious taboos surrounding menstruation and child-birth is absent in the Sikhism".[16]

Guru Nanak ridiculed those who associated pollution with women because of menstruation and asserted that pollution lay in the heart and mind of the human and not in the natural process of birth.

"If pollution attaches to birth, then pollution is everywhere (for birth is universal). Cow-dung (used for purifying the kitchen floor by Hindus) and firewood breed maggots; Not one grain of corn is without life; Water itself is a living substance, imparting life to all vegetation. How can we then believe in pollution, when pollution inheres within staple grains? Says Nanak, pollution is not washed away by rituals of purification; Pollution is removed by true knowledge alone".[17]

Sikhism and Mysticism

Guru Nanak ji was apprehensive of the yogis for their aloofness, mysticism and spiritual yearning. Contrary to the yogic aversion to sexuality, Guru Nanak promoted the ideal of householder as he propagated that enlightenment was not to be achieved through austerity. He considered the householders to be ideal and practical devotees as they were the ones who offered community service.[18] Guru Nanak believed that salvation was attained in this world itself. He promoted both marriage and family as in the domestic sphere only humans could fully realize their destiny and in the midst of family members emancipation could be attained.[19]

It was during Guru Amar Das's time that missionaries (manji system) were appointed to extend the message of the Sikh *panth* beyond the immediate surroundings of Goindwal, the seat of his leadership. *Manji's* were leaders of local communities who directly reported to the Guru, and thus represented him. The appointment of women *manjis* conveyed a rising institutionalization of the

female identity in Sikh *panth*. Thus women were active agents in the wider sphere of religion and society.

Reference

1. Jagjit Singh, *The Sikh Revolution: A Perspective View*. New Delhi: Bahri Publications, 4th eprint, 1998, p. 134-35.
2. Ed.R.N Singh, *Social Philosophy and Social Transformation of Sikhs*, Commonwealth Publishers, New Delhi 2003 ISBN 81-7169-705-4 p 3
3. *Shri Guru Granth Sahib* p 605
4. Ibid p 473
5. Ibid p 485
6. *Ibid* p 484
7. Ibid p 931
8. Ibid p 788
9. Bhai Kahn Singh Nabha, *Gurmatt Martand* , S.G.P.C., Second Edition 1978
10. *Shri Guru Granth Sahib* p 143
11. Ibid p 79
12. Ibid p 435
13. Ibid p 304
14. Edited by Dr. Kharak Singh, *Current Thoughts in Sikhism*, by Dr Gurnam Kaur, Published by Institute of Sikh Studies, Chandigarh, 1998 ISBN 81-85815-07-0
15. *Shri Guru Granth Sahib* p269
16. Nikky-Guninder Kaur Singh, *The Feminine Principle in the Sikh Vision of the Transcendent*, Cambridge Studies in Religious Traditions, Publisher: Cambridge University Press 1993, ISBN-10: 0521432871
17. *Shri Guru Granth Sahib* p.472
18. Doris R Jakobsh, *Relocating Gender in Sikh History Transformation, Meaning and Identity*, Oxford University Press New Delhi 2003 ISBN 978-0-19-567919-9 p 24
19. Ed. Dr. S.R Bakshi, Dr. Sangh Mittra, *Encyclopedia of Saints of India, Guru Nanak*, Criterion Publication New Delhi 2002 ISBN 81-7938-013-0 p 14

गुरु नानक और आज का समय

*डॉ. नवाब सिंह

* सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग, रामानुजन कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय

गुरु नानक का आर्विभाव मध्यकालीन पंजाब के रुग्ण सामाजिक–धार्मिक वातावरण में एक 'नयी सुबह', 'नयी दस्तक', 'खुले आकाश', और 'ठण्डी हवा के ताजे झोंके' की तरह आम साधारण जनता के जीवन में आकर्षक गहरी जगह बनाती है। अपनी 'राष्ट्रीय संस्कृति' शीर्षक किताब में आबिद हुसैन ने भारतीय सांस्कृतिक जीवन में गौतम बुद्ध के आविर्भाव के बारे में जो कुछ लिखा, वह लगभग नानक पर भी ज्यों का त्यों लागू होता है। आबिद हुसैन लिखते हैं, ''फिर एक महात्मा का आविर्भाव हुआ जिसके हृदय में मानव मात्र के लिए प्रेम था और जिसका अंतर प्राणि मात्र के प्रति संवेदनाओं से स्पंदित था। भारत का धार्मिक मानस गौतम बुद्ध के रूप में मूर्तिमंद हुआ। उन्होंने दार्शनिकों के अगम, अपार, चिंतन, पुरोहितों के अंधविश्वास, कर्मकाण्ड का विरोध किया। जातीय पूर्वाग्रहों और सामाजिक भेदभाव के विरुद्ध आवाज उठाई, और प्रेम एवं मातृभाव का, नैतिक सरलता और आत्मसंस्कार का संदेश दिया। इन्होंने धार्मिक सुधार का आंदोलन शुरू किया जिसने बाद को एक स्वतंत्र विश्वधर्म का रूप ले लिया।''[1]

मध्यकालीन भारतीय समाज को अगर ध्यान से देखा जाए तो वह अनेक अंतर्विरोधों और बहुविध विशिष्टताओं का समुच्चय था। यह अंतर्द्वन्द्व ही मध्यकालीन साहित्य का अपना वैशिष्ट्य है। मध्यकालीन जीवन, समाज और धर्म अगर एक ओर विभिन्न संकीर्णताओं में जकड़ा हुआ था तो दूसरी ओर उन्हें विभिन्न संकीर्णताओं से मुक्ति दिलाने के लिए अनेक संतपुरुष विभिन्न रूपों में संघर्षशील भी थे। जड़ता और संघर्षशीलता यानी विरूद्धों का अंतर्द्वंद्व मध्यकालीन बोध की केन्द्रीय–मूल थीम है। परस्पर विरोध के द्वारा ही विकास संभव है। प्रतिरोध की यह प्रवृति ही मध्यकालीन चिंतन की कालजयी संस्कृति है। प्रतिरोध की यह संस्कृति ही मध्यकालीन साहित्य को अमरता प्रदान करती है।

धर्म एक निरंतर परिवर्तित होने वाला अनुभव है। आधुनिक काल में धर्म के प्रति दो दृष्टिकोण मिलते हैं एक, आध्यात्मिक चेतना और दूसरा, भौतिकवादी चेतना। अर्थात् ईश्वरवादी और निरीश्वरवादी। दोनों ही मान्यताओं और विचारों को मानने वालों में गहरे मतभेद हैं। धर्म सामंती संरचना का एक महत्त्वपूर्ण अंग है। जिसके द्वारा वह साधारण जनता को भौतिक जीवन के दुःख–दर्द और तकलीफों से मुक्ति के लिए धर्मगुरुओं के माध्यम से परलोक की अदृश्य शक्ति की ओर उन्मुख कर देता है। जनजीवन की निराशा, असंतोष और आक्रोश को ये संतगुरु दूसरी धारा की ओर मोड़कर उनके विद्रोह और क्रोध का शमन कर देते थे। अर्थात् जनता के भौतिक संसार के दुखों से छुटकारा संतगुरु केवल परलोक में दिलाना चाहते हैं इस भौतिक लोक में नहीं। सामाजिक–आर्थिक जीवन की वास्तविक समस्याओं का निदान दार्शनिक और आध्यात्मिक क्षेत्र में करना भोली जनता को बरगलाना ही है। इस कारण से धर्मगुरु सामंती सत्ता के सदैव प्रिय और अनन्य रहे हैं। और सामंतों से उन्हें सर्वोच्च सम्मान और दान मिलता रहा है। इसलिए मध्यकाल में धर्मगुरुओं का सामंती सत्ता से सीधे झगड़ा कम और परमसत्ता से मिलन का भावबोध अधिक तीव्र दिखाई देता है। किंतु फिर भी समय समय पर इस धर्मसत्ता के खिलाफ कोई न कोई विलक्षण तर्कशील और विवेकवान महापुरुष नये धर्म के वाहक रूप में टकराता रहा है। शंभुनाथ के अनुसार, ''धर्मसत्ता से धर्म की टकराहट हमेशा हुई है। कई बार इस टकराहट से नये धर्म बने हैं। बौद्ध, जैन और सिख धर्म इसी प्रक्रिया में बने। भक्ति आंदोलन इसी प्रक्रिया में जनमा। यह भी देखना होगा कि खुद धर्मसत्ता कई बार विभाजित हुई। इसका उदाहरण शैव–वैष्णव संघर्ष है, कैथोलिक – प्रोटेस्टेंट संघर्ष और सिया–सुन्नी संघर्ष है। वैष्णव और शैव ही नहीं, शाक्त भी लड़ते रहे। हर धर्म में एक सामूहिक पक्ष के साथ एक वैयक्तिक पक्ष स्वाभाविक है। इक्कीसवीं सदी में धर्म के वैयक्तिक पक्ष का ह्रास हुआ है, अब जगह–जगह धार्मिक झुंड हैं, ऊँची धार्मिक दीवारें हैं और निर्बुद्धिपरकता जैसे शत्रु हैं। आज बुद्ध या कबीर जैसा आदमी मुश्किल है, जो उस तरह बोले और उसके बोलने का व्यापक असर हो।''[2]

धमसर्त्ता अपने अनुयायी भक्त को यह शिक्षा देती है कि वह तर्कहीन अनुगमन करे। विमर्शहीन अनुगामी हो। पराभिमुख न हो। अन्य की ओर से नेत्र मूंद ले। अपने आसपास न देखे। अपनी इच्छाओं और आकांक्षाओं का दमन करे। बुरे काम का बुरा नतीजा होता है। किसी का बुरा न करें। सत्य की जीत होती है। संतोष ही परम धन है। संतोष या आत्मदमन ही मुक्ति है। अस्मिता का विसर्जन ही मोक्ष है। अस्मिता का विलय ही आत्मगौरव है। परम सत्ता में अपने अस्तित्व और अस्मिता का विसर्जन कर देना। समर्पण में ही मुक्ति है। हृदय में कोई

शंका और संदेह न रखना। मन निर्मल और पवित्र हो। परमशक्ति की कृपा और दया का इंतजार करना। अच्छे दिन आएंगे। बुरे दिन फिरेंगे। दुनिया में हर क्रिया उसकी इच्छा का परिणाम है। परम शक्ति ही उद्धार करेंगे। समय से पहले और भाग्य से ज्यादा नहीं मिलेगा। मनुष्य जीवन उसकी कठपुतली है। वर्णाश्रमधर्म का पालन करें। हमारे कर्मों से ही पूर्वजन्म और पुनर्जन्म का फल जुड़ा हुआ है। जन्म–मरण, हानि–लाभ, यश–अपयश और सुख–दुख सब विधि के हाथ है। इस तरह धर्म और भक्ति मनुष्य को अपना खिलौना बना देती है। उसे बताती है कि उसके जीवन के चाबी कहीं अज्ञातशक्ति के पास है। और विज्ञान और वैज्ञानिकता तथा उससे जुड़ा भौतिक संसार सब झूठा, क्षणिक और मायाजाल है। उससे दूर रहो। अतार्किक लोभ और भय मनुष्य की बुद्धि को कुंद कर देती है। और इस तरह भक्ति की बाढ़ में वैज्ञानिक तर्कशीलता और विवेकशीलता हीन मानव समुदाय निरर्थक कचरे का ढेर हो जाती है। अतः तर्कशील वैज्ञानिक चेतना जहां मनुष्य को आधुनिक–बौद्धिक बनाना चाहती है वहीं धर्म और भक्ति मनुष्य को मध्यकालीन। इन दोनों प्रवृतियों में तीव्र अंतर्संघर्ष आज के समय में भी जारी है। इस तरह धर्मसत्ता एक 'फाउस्टियन पैक्ट' हो जाती है। आलोचक पुरुषोत्तम अग्रवाल के अनुसार, ''फाउस्टियन पैक्ट' की बात करने का आशय है–ऐसी मृगमरीचिका के पीछे भागते मनुष्य की विवेकहीनता की बात करना। 'फाउस्टियन पैक्ट' अर्थात् सुरक्षा की तलाश में या सत्ता की लिप्सा में या किसी प्रलोभन के कारण अपने विवेक को किसी ऐसी महाकाय सत्ता के हवाले कर देना, जो आपको सुरक्षा का आश्वासन दे, लेकिन एक बार 'पैक्ट' हो जाने के बाद आप पाएं कि चाहकर भी आप उससे बाहर नहीं आ सकते। वह सत्ता इतनी सवग्राही हो चुकी है कि उससे पिंड छुड़ाने की गुंजाइश ही नहीं। वह आपके बाह्य अस्तित्व पर काबिज ही नहीं, आपकी आत्मा में भी पैवस्त हो चुकी है। न मुक्ति का कोई मार्ग बाकी है, न संवाद की कोई जगह। आपने सुरक्षा तो पा ली, लेकिन अपने विवेक से ही हाथ धो बैठे। मनमाना सुख संभव करनेवाली 'सत्ता' तो पा ली, लेकिन सुख की पड़ताल करने वाली विवेक–सत्ता, आत्मसत्ता खो दी।''[3] अतः धर्मसत्ता मनुष्य से ऐसा सौदा करती है जिसमें उसे ईश्वरीय भक्ति, मिलन, सुरक्षा, अमरता और मुक्ति की निश्चिंतता के बदले अपनी अस्मिता, अस्तित्व और बौद्धिकता को पूर्णतः समर्पित करना पड़ता है। यह लालसा ही मनुष्य को धर्मसत्ता के अधीन करती है।

आज विज्ञान के असीम विकास से मानव सभ्यता बहुत विकसित हो गई है फिर भी प्राचीन धर्म मनुष्य के जेहन में बहुत गहरे से चिपका हुआ है और वैज्ञानिक दृष्टिकोण की जगह धार्मिक दृष्टिकोण हावी है। इसका कारण के. दामोदरन बताते हैं कि, ''अपने विकास की एक विशेष अवस्था में धर्म सामाजिक गुण प्राप्त कर लेता है और इतिहास की आर्थिक और सामाजिक शक्तियों का प्रतिनिधित्व करने वाला बन जाता है। इसी रूप में आर्यों के देवताओं ने, जो आरंभ में केवल प्रकृति की शक्तियों का मूर्तिकरण थे, सामाजिक महत्व और सामाजिक गुण अर्जित कर लिये। इस रूपांतरण से लोगों को एक हद तक सांत्वना और काल्पनिक सुख भी मिला और जीवन की कठिनाइयां झेलने में उन्हें आसानी महसूस हुई।''[4] धर्म के बहरूपिये रूप को देखकर ही कार्ल मार्क्स ने कहा था कि, ''धर्म वास्तविक पीड़ा की अभिव्यक्ति और वास्तविक पीड़ा के विरुद्ध प्रतिरोध की अभिव्यक्ति की निशानी भी है। धर्म पीड़ित प्राणी की कराह (आह) है वह इस हृदयहीन जगत का हृदय है, ठीक उसी प्रकार जैसे वह आत्माहीन परिस्थितियों की आत्मा है। यह जनता के लिए अफीम है।''[5] अर्थात् धर्म सांसारिक जीवन–जगत के अत्याचार–उत्पीड़न और अन्याय से पीड़ित व्यक्ति की करुण क्रंदन है। धर्म इसी शोषित–दमित प्राणी की आह है। धर्म उसके निःस्सहाय और विकल्पहीन जीवन की अंतिम शरण स्थली है। लेकिन यहां मिलने वाली शांति अस्थायी होती है, क्योंकि इस शरणस्थल में दुख के कारणों को खत्म नहीं किया जाता, सिर्फ उसके एहसास को कुंद कर दिया जाता है। क्या यही काम अफीम नहीं करती है ? वह दर्द को मिटाती नहीं है – उसकी संवेदना को ठप कर देती है। जब हम दर्द को महसूस नहीं कर रहे होते हैं तब हम वास्तव में भ्रांति के शिकार होते हैं।

के. दामोदरन के अनुसार, ''किंतु, धर्म ने अफीम के नशे का ही नहीं, वरन् उत्तेजक का भी काम किया। भक्ति आंदोलन के धार्मिक नेता अन्याय और उत्पीड़न, चिन्ताओं और विपदाओं के मुकाबले मनुष्यों के बीच आध्यात्मिक समानता और भ्रातृत्व का समर्थन करते थे। जिन आदर्शों और मूल्यों का झंडा उन्होंने बुलंद किया, वे यद्यपि उस काल में व्यवहार में नहीं उतारे जा सकते थे, तो भी उन्होंने मनुष्य को शाश्वतता का दर्शन कराया और भविष्य के प्रति उसमें आस्था उत्पन्न की। यह सच है कि भक्ति आन्दोलन के नेता प्रायः ही बिना किसी स्पष्ट सामाजिक–आर्थिक संदर्शन के, भ्रमात्मक संवेदनापूर्ण आवेगों के अंतर्गत, कार्य करते थे और उनके समतावादी तथा मानवतावादी विचारों में निराशावादी रहस्यवाद और वैराग्य के तत्व मौजूद थे। उनका आह्वान आत्मा के लिए होता था, सामाजिक व्यवस्था को बदलने के लिए कार्यरत होने को नहीं।''[6] लेनिन ने भी लिखा है कि, ''निराशावाद, अप्रतिरोध, आत्मा का आह्वान, ऐसे युग में अपरिहार्यतः एक सिद्धान्त के रूप में प्रकट होते हैं, जब समूची पुरानी व्यवस्था अव्यवस्थित हो जाती है और जब आम जनता, जो इसी पुरानी व्यवस्था के अन्तर्गत पली और बढ़ी है, जिसने माँ के स्तनों से दूध पीते समय से ही इस व्यवस्था के सिद्धान्तों, आदतों, परंपराओं और मान्यताओं को ग्रहण किया है, यह नहीं देख पाती और नहीं देख सकती कि किस प्रकार की नई सामाजिक व्यवस्था का उदय हो रहा है, कौन–सी सामाजिक शक्तियां नई व्यवस्था का निर्माण कर रही हैं, कैसे निर्माण कर रही हैं, कौन–सी सामाजिक शक्तियां उस अपरिसीम और अनन्य पीड़ा और दुख से छुटकारा दिला सकती हैं, जो विप्लव के युगों की स्वाभाविक विशिष्टताएं होती हैं।''[7] इस प्रकार धर्मसत्ता को सामाजिक न्याय और सामाजिक आर्थिक विषमता के विरुद्ध आवाज उठाने वाली ताकत के रूप में नहीं देखा जाता है। पहले वह सामंतवाद के साथ थी, अब पूंजीवाद के साथ उसका गठबंधन है। और साम्राज्यवाद से भी मित्रता कर रखी है। जब भारत में ब्रिटिश सत्ता कायम हो गयी, तब ईसाई पादरी साम्राज्यवादियों को यह समझाने नहीं आये कि तुम जो कर रहे हो, वह ईसा मसीह की सीख के विपरीत है,

बल्कि खुद ही भारतवासियों को ईसाई बनाने लगे। यही स्थिति मुगल शासन और इसलाम तथा भारत के अनेक हिंदू शासकों और सनातन–वैष्णव धर्म पर भी लागू होती है।

पंजाब के ही शहीद–ए–आज़म भगत सिंह ने अपने बहुचर्चित लेख 'मैं नास्तिक क्यों हूँ' में समाज के शक्तिशाली उच्चवर्ग द्वारा बनायी शोषकीय धर्म–व्यवस्था पर प्रहार करते हुए जनता को यथार्थवादी बनने के लिए प्रेरित करते हैं,''जिस दिन ऐसी मानसिकता वाले बहुत से लोग हो जायेंगे जो मानव–सेवा और पीड़ित मानवता की मुक्ति को हर चीज़ से ऊपर समझकर उसके लिए अपने आप को अर्पित करेंगे, उसी दिन आज़ादी का युग शुरू होगा। जब वे राजा बनने के लिए नहीं; इहलोक में, अगले जन्म या मृत्यु के उपरान्त स्वर्ग में जाकर कोई अन्य पुरस्कार पाने के लिए नहीं बल्कि मानवता की गर्दन पर रखा जुवा उतार फेंकने के लिए और स्वतंत्रता एवं शांति की स्थापना के लिए दमनकारियों, शोषकों और अत्याचारियों को चुनौती देने की प्रेरणा ग्रहण करेंगे, तभी वे इस मार्ग पर चल सकेंगे जो व्यक्तिगत रूप से उनके लिए भले ही खतरनाक हो लेकिन उनकी महान आत्माओं के लिए एकमात्र गौरवपूर्ण मार्ग है।''[8]

भगतसिंह के अनुसार धर्म–सिद्धांत विशेषाधिकार प्राप्त लोगों के मनगढ़ंत सिद्धांत हैं। वे इन सिद्धांतों के जरिये जबरदस्ती हथियाई हुई अपनी शक्ति, सम्पन्नता और श्रेष्ठता को उचित ठहराते हैं। जीवन–जगत के प्रति वैज्ञानिक तर्कपूर्ण यथार्थवादी दृष्टि रखते हुए भगत सिंह सर्वशक्तिमान के अस्तित्व पर सवाल करते हैं कि, ''मैं पूछता हूँ, जब कोई आदमी पाप या अपराध करना चाहता है तो आपका सर्वशक्तिमान ईश्वर उसे रोकता क्यों नहीं? उसके लिए तो यह बहुत ही आसान काम होगा। उसने जंगबाजों को मारकर या उनके भीतर युद्धोन्माद को मारकर मनुष्यता को विश्वयुद्ध की महाविपत्ति से क्यों नहीं बचाया? वह अंग्रेजों के मन में कोई ऐसी भावना क्यों नहीं पैदा कर देता कि वे हिंदुस्तान को आज़ाद कर दें? वह तमाम पूंजीपतियों के दिलों में परोपकार का ऐसा जज़्बा क्यों नहीं भर देता कि वे उत्पादन के साधनों पर अपने निजी स्वामित्व के अधिकार को त्याग दें और इस प्रकार सारे मेहनतकश वर्ग को ही नहीं बल्कि सम्पूर्ण मानव समाज को पूंजीवाद के बंधन से मुक्त कर दें?''[9] जो धार्मिक संतगुरु हर बात पर ये कहते हैं कि यहां हर चीज़ ईश्वर की इच्छा से है, उन्हें भगत सिंह सीधे वास्तविक यथार्थ से परिचित कराते हुए कहते हैं कि, ''मैं आपको बता दूँ, अंग्रेजों का शासन यहाँ इसलिए नहीं है कि यह ईश्वर की इच्छा है, बल्कि इसलिए है कि उनके पास ताक़त है और हम उनका विरोध नहीं करते। वे ईश्वर की सहायता से नहीं, बल्कि तोपों, बन्दूकों, बमों और गोलियों, पुलिस और फ़ौज तथा हमारी उदासीनता की सहायता से हमें गुलाम बनाये हुए हैं और एक राष्ट्र द्वारा दूसरे राष्ट्र का निर्लज्ज शोषण करने का सबसे धृणित पाप समाज के विरुद्ध सफलतापूर्वक करते चले जा रहे हैं। ईश्वर कहाँ है? वह क्या कर रहा है? क्या वह मानवजाति के इन सब दुखों और तकलीफ़ों का मज़ा ले रहा है? तब तो वह नीरो है, चंगेज़ख़ाँ है, उसका नाश हो!''[10] ईश्वर की उत्पति के बारे में भगतसिंह के विचार हैं कि,''मनुष्य ने जब अपनी कमियों और कमजोरियों पर विचार करते हुए अपनी सीमाओं का अहसास किया तो मनुष्य को तमाम कठिन परिस्थितियों का साहसपूर्वक सामना करने और तमाम ख़तरों के साथ वीरता पूर्वक जूझने की प्रेरणा देने वाली तथा सुख–समृद्धि के दिनों में उसे उच्छृंखल हो जाने से रोकने और नियंत्रित करने वाली सत्ता के रूप, ईश्वर, की कल्पना की।''[11] और ''मैं इस मूल बात से सहमत हूँ कि सभी विश्वास, धर्म, मत और इस प्रकार की समर्थक संस्थाएं अन्ततः दमनकारी तथा शोषक संस्थाओं, व्यक्तियों और वर्गों की समर्थक बनकर ही रहीं। राजा के विरुद्ध विद्रोह करना हर धर्म के मुताबिक पाप है।''[12] इन धार्मिक स्थितियों से मुक्ति के लिए भगतसिंह के पास एक सटीक सुझाव है कि, ''समाज ने जिस प्रकार मूर्तिपूजा और धार्मिक संकीर्णताओं के विरुद्ध संघर्ष किया है, उसी प्रकार उसे इस विश्वास के विरुद्ध भी संघर्ष करना होगा। इसी तरह इन्सान जब अपने पैरों पर खड़े होने की कोशिश करेगा और यथार्थवादी बनेगा, तो उसे अपनी आस्तिकता को झटककर फेंक देना पड़ेगा और परिस्थितियाँ चाहे उसे कैसी भी मुसीबत और परेशानी में डाल दें, उसका सामना मर्दानगी के साथ करना पड़ेगा।''[13]

मध्यकालीन संतपुरुषों का आत्मसंघर्ष समाज में फैले विभिन्न धर्मों के विद्रूप और शोषक रूप से था। संतों का उद्देश्य विभिन्न धर्मों के भ्रष्ट–लोभी पंड़ित–पंडों, मुल्ला–मौलवी और तांत्रिक–योगियों द्वारा समाज में फैलाये अंधविश्वासों, कुरुतियों, आडम्बरों और पाखण्डों से शोषित आमजनता को जागरूक सचेतकर अथवा उबारकर अपने द्वारा बनाये नये पंथ, संप्रदाय अथवा धर्म की ओर उन्मुख करना भी था। अतः निरक्षर भोली जनता को एक धर्मघेरे से निकालकर दूसरे धर्मघेरे में जकड़ देना भी इन संतों का एक विशेष कर्म रहा है। मध्यकालीन संत धर्म और ईश्वर के खिलाफ नहीं थे, वे तो केवल धर्मक्षेत्र और उपासनाक्षेत्र में फैली जड़ता और रुग्णता के विरोधी थे। मध्यकालीन सगुण संत वैष्णव धर्म के ही उपासक थे। वे न तो जनता को वैष्णव धर्म से मुक्ति दिलाना चाहते थे और न ही उन्हें भौतिकवादी चेतना सम्पन्न बनाना चाहते थे। अतः साधारण जनता को सांसारिक भौतिकता के यथार्थ से दूर करके (क्योंकि वह माया है) केवल धर्म और ईश्वर के प्रति गहरी आस्था, निष्ठा और विश्वास को ही वे जनमानस में गहरे बैठाना चाहते थे।

जब समाज के प्रचलित धर्म में अत्यधिक बुराइयाँ आ जाती हैं तब उस धर्म से भिन्न एक नये धर्म का उदय होना स्वाभाविक है। इतिहास में नए धर्म, पंथ और सम्प्रदाय के उदय के ऐसे ढेरों उदाहरण हैं। जो धर्म मनुष्य को मनुष्य न समझे उसे त्याग देना ही अच्छा है। धर्म मनुष्य के लिए है मनुष्य धर्म के लिए नहीं। इसलिए जड़ और रूग्ण धर्म से चिपके रहना बुद्धिमता नहीं है। बुद्धिहीन पुराने धर्म से चिपके रहते हैं किंतु ज्ञानी, चिंतक और प्रबुद्ध नये धर्म की ओर बढ चलते हैं। गुरुनानक धर्मविरोधी नहीं थे। वे धर्म के बहुत ही सचेत और सजग संत थे। मध्यकालीन विभिन्न धर्मों के भीतर फैली बुराइयों, पाखण्डों और कुरीतियों से वे बहुत दुःखी थे। क्योंकि ये धर्म सामान्य मनुष्य को सदाचार, सद्विचार और सद्मार्ग के लिए प्रेरित नहीं कर रहे थे। बल्कि उन्हें पाखण्ड और अंधविश्वासों के गहरे अंधकार में ही धकेल रहे थे। इसीलिए गुरु नानक मानवीय एकता और मानवीय

सद्भावों से युक्त मानवतावादी 'सिख धर्म' की स्थापना करते हैं। सिख मतलब सीखना–सिखाना। इस धर्म की खासियत विवेकशील व्यावहारिकता है, जड़–भ्रामिक सैद्धांतिकता नहीं। गुरुनानक अपने समय में धर्म की स्थिति का बखान करते हुए कहते हैं कि आज के कलयुग में धर्म पंख लगाकर उड़ गया है। चारों ओर गहन अंधकार छा गया है। सत्य का चंद्रमा दिखाई नहीं दे रहा है। ज्ञान की सभी दिशाएं खो गई हैं, अब मनुष्य की क्या गति होगी :

''कलि काते राजे कासाई धरमु पंखु करि उडरिया।
कूडू अमावस सचु चंद्रमा दीसै नाही कह चड़िआ।
हउ भालि बिकुंनी होई। आधेरै राहु न कोई।
बिचि हउमै करि दुखु रोई।
कहु नानक किनि बिधि गति होई।''[14]

जैनियों, मौलवियों, ब्राह्मणों और योगियों की धार्मिक कूपमंडुकता की स्थिति को बड़े ही व्यंग्यात्मक लहजे से नानक उजागर करते हैं। वे कहते हैं कि ऐसी धार्मिक अज्ञानता और पाखण्डता से न तो इन्हें मुक्ति मिल सकती है और न ही ये दूसरे को मुक्तिपथ बता सकते हैं। अंधा व्यक्ति किसी को भी सही राह नहीं बता सकता है। धार्मिक गुरुओं यही स्थिति वर्तमान समय में भी है :

''सिरु खोहाइ पीअहि मलवाणी जूठा मंगि मंगि खाही। फोलि फदीहति मुहि लैनि भड़ासा पाणी देखि सगाही। भेड़ा वागी सिरु खोहाइनि भरीअनि हथ सुआही।
माऊ मीऊ किरतु गवाइनि टबर रोवनि धाही।
ओना पिंडु न पतलि किरिआ न दीवा मुए किथाउ पाही।
अठसठि तीरथ देनि न ढोई ब्रहमण अनु न खाही।
सदा कुचील रहहि दिन राती मथै टिकै नाही।
झुंडी पाइ बहनि निति मरणै दड़ि दीबाणि न जाही।
लकी कासे हथी फुमण अगो पिछी जाही।
न ओइ जोगी ना ओइ जंगम ना ओइ काजी मुला।
दयि बिगोए फिरहि बिगुते फिटा वतै गला।''[15]

निर्गुण संतों का ऐकेश्वरवाद सवर्ण समाज की अश्पृश्यता, छुआछूत और वर्णव्यवस्था में कैद बहुदेववाद के धार्मिक वितण्डावाद को चुनौती देनेवाले इस्लामी सूफीवाद से प्रभावित है। दलित जातियों में निर्गुण संतों का जन्म लेना, इस देश में विदेशी प्रभाव के कारण जन्मी क्रांति का हिस्सा है। इस क्रांति ने ही भारतीय समाज को अपने चिंतन में अपृश्यता और वर्णव्यवस्था की कूपमंडूकता से बाहर आने को मजबूर किया। निर्गुण संतों का ऐकेश्वरवाद किसी प्रतिक्रिया में नहीं बल्कि दलित समाज के विराट हृदय और सूक्ष्म चेतना का ही प्रतिफलन है, इसी वजह से निर्गुण संतों के ईश्वर में विराटता और सूक्षमता के असंख्य गुण व्याप्त हैं जो सवर्ण भक्तों के यहां दुर्लभ हैं।

गुरु नानक निर्गुणपंथी ऐकेश्वरवादी संत हैं। निर्गुण पंथ सगुण पंथ की तरह ढोंगी–कर्मकाण्डी, पाखण्डी और शोषक नहीं है। निर्गुण पंथ समाज के अतिपिछड़े, बहिष्कृत, उपेक्षित, शोषित दलित समाज के संतों द्वारा निर्मित उच्च दार्शनिक चिंतन, खुले विचारों, समतावादी दृष्टि और मानवतावादी जैसे लोकतांत्रिक मूल्यों से समृद्ध पंथ है। सहृदयता, व्यापक मानवीयता, सहानुभूति, सतसंग, आत्मसजगता, आत्मचिंतन, निष्काम कर्म, कर्तव्यबोध, निडरता, विवेकशीलता, सरलता और सरसता आदि निर्गुण संतों के व्यक्तित्व की पूंजी है। निर्गुणसंत अपने इन पवित्र, नेक और उज्ज्वल व्यक्तित्व से ही धर्म में पुनर्नवता लाते हैं। एक तरफ जहां निर्गुणसंत जनसाधारण को मानवीय एकता के मानवतावादी प्रेम का धर्म सिखाते हैं वहीं समाज में व्याप्त भेदभाव, विषमता और शोषण पर कठोर कुठाराघात भी करते हैं। निर्णुण संतों की ईश्वरीय सत्ता की व्याप्ति जगत की समस्त सत्ता में मूत–अमूर्त रूप में निहित है। निर्गुण ईश्वर का विराट स्वरूप नानकजी के अनुसार इस प्रकार है :

''मनु मंदरु तनु वेस कलंदरु घट ही तीरथि नावा।
एकु सबदु मेरै प्रानि बसतु है बाहुड़ि जनमि न आवा।
मनु बेधिआ दइआल सेती मेरी माई।
कउणु जाणै पीर पराई। हम नाही चिंत पराई।
अगम अगोचर अलख अपारा चिंता करहु हमारी।
जलि थलि महीअलि भरिपुरि लीणा घटि घटि जोति तुम्हारी।
सिख मति सभ बुधि तुम्हारी मंदिर छावा तेरे।

तुझ बिनु अबरु न जाणा मेरे साहिबा गुण गावा नित तेरे।

जीअ जंत सभि सरणि तुम्हारी सरब चिंत तुधु पासे।
जो तुधु भावै सोई चंगा इक नानक की अरदासे।''[16]

अर्थात् मेरा मन ही प्रभु का मंदिर है और मेरा शरीर कलंदर का वेश धारण किए हुए है, मैं हृदय–तीर्थ में ही स्नान करता हुँ। केवल एक शब्द 'ब्रह्म' ही मेरे प्राणों में निवास करता है, इसलिए मेरा पुनर्जन्म नहीं होगा अर्थात् मुक्त हो जाऊँगा। मेरा मन उस दयालु परमेश्वर से जुड़ (बिंध) चुका है। उस परमेश्वर के अतिरिक्त पर–पीड़ा को कौन समझ सकता है। इसलिए हम किसी अन्य (देवी–देव) के संबंध में सोचते ही नहीं। हे अगम, अगोचर, अलख, अपार परमेश्वर ! तुम्हीं हमारी चिंता करनेवाले हो। जल में, थल में, पृथ्वी–आकाश में सर्वत्र तुम्हीं व्याप्त हो और घट–घट में तुम्हारा ही प्रकाश है। समस्त जीवों की समझ–बूझ, बुद्धि तुम्हारी ही प्रदान की हुई है, सब जीवों के शरीर में तुम्हारा ही निवास है। हे मालिक ! तुम्हारे अतिरिक्त मैं अन्य किसी को नहीं जानता, मैं तो तुम्हारे ही गुणगान करता हूँ। सब जीव जंतु तुम्हारी ही शरण हैं और तुम्हें ही सबकी चिंता है। नानक की यही प्रार्थना है कि जो तुम्हें अच्छा लगे, उसमें ही मेरी रुचि रहे अर्थात् तुम्हारी रज़ा के अनुकूल चलता रहूँ।''

नानक के धर्म और एकेश्वरवाद की अवधारणा का विवेचन करते हुए ताराचन्द लिखते हैं कि,''नानक की धर्म की अवधारणा अत्यंत व्यावहारिक और कठोर रूप से नैतिक थी। उनका ईश्वर सभी के ऊपर है, वह 'पहुंच से परे, अपनी रचना से एकदम भिन्न है। 'उसकी देहरी पर करोड़ों मुहम्मद, ब्रह्म, विष्णु, महेश, राम करोड़ों तरीकों से और करोड़ों रूपों में उसकी प्रशंसा कर रहे हैं।' वह अगम, अनंत, असंख्य, स्वतंत्र, अमर और निष्क्रिय है। उसकी कोई जाति नहीं है। न तो उसका जन्म होता है और न उसकी मृत्यु होती है। वह स्वयं अस्तित्व में है, उसे किसी का डर नहीं है, कोई संदेह नहीं है.....उसका कोई परिवार नहीं है, उसे कोई भ्रम नहीं है, वह परे से परे है, सारा आकाश उसका है।''[17]

इतिहासकार इरफ़ान हबीब ने अपने प्रसिद्ध लेख 'मध्यकालीन लोकवादी एकेश्वरवाद का मानवीय स्वरूप और उसका ऐतिहासिक परिवेश' में कबीर के बारे में जो लिखा है वह ज्यों का त्यों गुरु नानक पर लागू होता है :''वस्तुतः कबीर एक ऐसे एकेश्वरवाद का विकास करते हैं जिसमें ईश्वर के प्रति पूर्ण समर्पण है तथा जिसमें हर प्रकार के कर्मकाण्ड का अस्वीकार है। यह पुरातनपंथी इसलाम से सर्वथा भिन्न है। कबीर के लिए ईश्वर की एकता मनुष्य की एकता का साधन बन जाती है। इसी

अर्थ में वे जाति की शुद्धता और अपवित्रता की अवधारणा और व्यवहार को नकारते हैं। वे हर प्रकार के बाह्याडम्बर का विरोध करते हैं।''[18] नानक देव अपने एकेश्वरवादी भावना से समस्त मानवजाति को एकसूत्रता में बांधना चाहते थे। और अपने इस परम लक्ष्य के लिए वे सामाजिक–धार्मिक क्षेत्रों के समस्त पाखण्ड, भेदभाव और विषमताओं को भी खत्म कर देना चाहते थे।

सम्पूर्ण भारतीय इतिहास में अगर किसी समुदाय ने सर्वाधिक उत्पीड़न, अन्याय, अत्याचार और शोषण सहा है तो वह है दलित समुदाय। अश्पृश्यता, छुआछूत, जातिभेद और श्रेष्ठता के नाम पर सामंती वर्णव्यवस्था व धर्मसत्ता सदियों से दलित जातियों के साथ अमानवीय पाशविक क्रूरता करता रहा है। दलित समाज की नारकीय स्थिति से क्षुब्ध होकर ही नानकदेव में न्याय, लोकरक्षा और लोककल्याण की भावना बलवती हुई। मनुष्य जीवन की सार्थकता मनुष्य के साथ एकमेक होने में है उससे विच्छिन्न होने में नहीं। धर्मसत्ता के सवर्ण ठेकेदारों के सामने नानकदेव यही खुलकर घोषित करते हैं कि मेरी सच्ची प्रतिबद्धता और निष्ठा इस शोषित दलित समाज के साथ है जिसका तुम सदियों से अनादर और तिरस्कार करते हो। नानक का लोकप्रसिद्ध पद है :

''नीचा अंदरि नीच जाति, अति नीची हू अति नीचु
नानक तिनकै संगि साथि, बड़िआ सिउ किआ रीस।
जिथै नीच समाली अति तिथै नदरि तेरी बखसीस।'

नानक उच्च जातियों के साथ–साथ ही तत्कालीन राजा–सामंतों के अंतर्मन में व्याप्त अन्याय, असमानता, अमानवीयता, लूट–खसोट आदि दुष्प्रवृतियों को मिटाकर न्याय, समता, मानवता, परोपकार, त्याग,अहिंसा, सेवाभाव, अहिंसा आदि सद्प्रवृतियों को अपनी मीठी वाणियों के द्वारा जगाते हैं। 'नानक समाज में न्याय या अदब और लोककल्याण पर बहुत बल देते हैं। उनके अनुसार उनके काल के शासक जनता के रक्षक नहीं, भक्षक हो गए थे। काजी और मुल्लाओं पर रिश्वतखोरी का इल्जाम लगाते हुए वो कहते हैं कि वे ऊपर से नीचे तक सब मुट्ठी गरम करते थे और रैयत (किसान) पर अत्याचार करते थे। उन्होंने बादशाह को नसीहत दी–''ऐ बादशाह, याद रखो संसार के सभी प्राणी उस परमपिता परमेश्वर की संतान हैं। परमात्मा की पवित्र ज्योति का निवास संसार के सभी मनुष्यों के अंदर है। संसार के सभी प्राणियों को अपने ही समान व्यवहार करो। हिंदू और मुसलमान सभी खुदा की प्यारी संतान हैं। तुम दोनों के पालन के लिए समान रूप से जिम्मेदार हो।''[19]

आज के उत्तरआधुनिक समय में मनुष्य जीवन को अर्थतंत्र और बाजारतंत्र ने अपने शिकंजों में कस लिया है। नयी वैश्विक पूंजीवादी मुक्त अर्थव्यवस्था ने मनुष्य को अर्थहीन कर दिया है। उसने मनुष्य की मनुष्यता का हरण कर लिया है। अन्यायी शोषणकारी पूंजीवादी व्यवस्था में विराट मानवता दम तोड़ रही है। अर्थतंत्र और बाजारतंत्र की इस दुष्प्रवृतियों और दुर्वासनाओं के नियंत्रकों–हुकमरानों को भी नानक आग़ाह करते हैं कि ऐ व्यापारियों, व्यापार करिए, लेकिन ऐसे संभल कर करो कि जो सबके साथ निबह सके, क्योंकि परलोक में बड़ा सयाना व्यापारी बैठा है जो केवल सत्य की ही पूंजी देखता है ऐसा न हो कि सदैव रोना पड़े :

''वणजु करहु वणजारिहो वखरु लेहु सभालि।
तैसी वसतु विसाहीऐ जैसी निबहै नालि।
अगै साहु सुजाणु है ऐसी वसतु सभालि।
भाई रे रामु कहहु चितु लाइ।
हरिजसु पखरु लै चलहु सहु देखै पतीआइ।
जिना रासि न सचु है किउ तिना सुखु होइ।
खोटैं वणजि वणंजिऐ मनु तनु खोटा होइ।
फाही फाथे मिरग जिउ दूखु घणो नित रोइ।
खोटे पोतै न पवहि तिन हरिगुर दरसु न होइ।।
खोटे जाति न पति है खोटि न सीझसि कोइ।
खोटे खोटु कमावणा आइ गइआ पति खोइ।
नानक मनु समझाईऐ गुर कै सबदि सालाह।
रामनाम रंगि रतिआ भारु न भरमु तिनाह।
हरि जपि लाहा अगला निरभउ हरि मन माह।।'[20]

वर्तमान समय की राजसत्ता, अर्थसत्ता, बाजारसत्ता, मीडियासत्ता और धर्मसत्ता आदि ने मिलकर मनुष्य की सांस्कृतिक मानवीय प्रवृतियों को संकुचित–संकीर्ण कर दिया। छलकपट, लाभ–लोभ का लालच, आडंबर, पाखण्ड और झूठ बोलना आज मनुष्य की प्रमुख प्रवृति हो गई है। दुखात्मक विडम्बना यह है कि आज का मनुष्य सोचता कुछ है, कहता कुछ है, लिखता कुछ है, करता कुछ है, दिखाता कुछ है, दिखता कुछ है, होता कुछ है। नानक ऐसे बेमेल कथनी–करनी वाले मनुष्य को भी सद्मार्ग पर लाने की सीख देते हैं। उनकी चिंता मनुष्य को सदवाणी, सदविचारी, सदकर्मी और सदमार्गी बनाने की है ताकि यह दुनिया मनुष्यों के रहने लायक बनी रहे :

''अछल छलाई नह छलै नह घाउ कटारा करि सकै।
जिउ साहिबु राखै तिउ रहै इसु लोभी का जिउ टलपलै।
बिनु तेल दीवा किउ जलै।
पोथी पुराण कमाईऐ।
भउ वटी इतु तनि पाईऐ।
सचु बूझणु आणि जलाईऐ।
इहु तेलु दीवा इउ जलै।
करि चानणु साहिबु तउ मिलै।
इतु तनि लागै बाणीआ।
सुखु होवै सेव कमाणीआ।
सब दुनीआ आवण जाणीआ।
बिचि दुनिआ सेव कमाईऐ।
ता दरगह बैसणु पाईऐ।
कहु नानक बांह लुडाईऐ।'[21]

नानक की काव्यदृष्टि जितना उनके अपने समय के जीवन–जगत के भीतर–बाहर, लौकिक–लोकोत्तर, और व्यक्तिक–सामाजिक के अंतर्द्वन्द्वों के सत्यों को उजागर करती है उतना ही आज के समय के सच को भी। नानक की ज्ञानदृष्टि अपने समय की राजसत्ता, धर्मसत्ता, अर्थसत्ता, बाजारसत्ता, प्रकृतिसत्ता और ईश्वरीय सत्ता के आंतरिक सत्य को गहरे संवेदनात्मक अनुभवों के धरातल पर उजागर करते हुए मानवीय चेतना का विस्तार करती हैं। उसे दुष्प्रवृतियों और दुष्कर्मों से सचेतकर सद्मार्ग और सदकर्मों की ओर प्रेरित करती है। नानक की संवेदनात्मक ज्ञानदृष्टि लौकिक जीवन–जगत और परमब्रह्मलोक के बीच निरंतर आवाजाही करती रहती है। अपनी इसी ज्ञानशक्ति से वे राख रूपी मनुष्य को विभूति बनाने के लिए ईश्वरीय साधना करते हैं। नानक की ज्ञानदृष्टि ऐसे अग्रगामी मूल्यों की वाहक है जो न केवल आज के बल्कि भविष्य के मूल्यों को भी पुष्पित और पल्लवित करेगी। ऐसे मूल्यों की वाहक ज्ञानदृष्टि ही विश्वदृष्टि होती है। नानक की विश्वदृष्टि में संवेदनात्मक ज्ञान की व्यापकता और गहराई के दिग्दर्शन होते हैं, क्योंकि यह विश्वदृष्टि ठोस ऐतिहासिक और सामाजिक जीवनानुभवों पर आधारित है। जो ज्ञानदृष्टि ठोस

जीवनानुभवों पर आधारित होती है वह संवेदनात्मक हो जाया करती है। जो ज्ञानदृष्टि संवेदनात्मक अनुभवों से सम्पन्न होती है वह दृष्टि ही विश्वदृष्टि कहलाती है। मुक्तिबोध के शब्दों में अगर कहें तो नानक की विश्वदृष्टि संवेदनात्मक ज्ञान और ज्ञानात्मक संवेदना से परिपूर्ण है।

संदर्भ ग्रंथ

1. भक्तिकाव्य और लोकजीवन : शिवकुमार मिश्र, पृ. 52, अरुणोदय प्रकाशन, दिल्ली, सं. 1991
2. धर्म और धर्मसत्ता : सं. राजकिशोर, पृ.13, वाणी प्रकाशन दिल्ली, सं. 2015
3. अकथ कहानी प्रेम की : पुरुषोत्तम अग्रवाल, पृ. 319, राजकमल प्रकाशन दिल्ली, सं. 2010
4. भारतीय चिंतन परंपरा : के. दामोदरन, पृ. 73, पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस दिल्ली,
5. धर्म के बारे में : मार्क्स एंगेल्स, पृ. 47, राहुल फाउंडेशन लखनऊ, सं. 2008
6. भारतीय चिंतन परंपरा : के. दामोदरन, पृ.490, पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस दिल्ली,
7. उपरोक्त पृ. 490
8. बहरों को सुनाने के लिए : सं. इरफ़ान हबीब, पृ.168 राहुल फाउण्डेशन लखनऊ, सं. 2008
9. उपरोक्त, पृ. 174,
10. उपरोक्त, पृ. 174
11. उपरोक्त, पृ. 175
12. उपरोक्त, पृ. 175
13. उपरोक्त, पृ. 176
14. नानक वाणी : जयराम मिश्र, पद–35, पृ.191, मित्र प्रकाशन, इलाहाबाद
15. उपरोक्त, पद–45, पृ. 198
16. उपरोक्त, पृ. 218–19
17. भारतीय संस्कृति पर इसलाम का प्रभाव : ताराचन्द, पृ.160–61, ग्रंथशिल्पी प्रकाशन दिल्ली, सं.2006
18. भारतीय इतिहास में मध्यकाल : इरफ़ान हबीब, पृ.29, ग्रंथशिल्पी प्रकाशन दिल्ली, सं. 2000
19. हिंदी भक्ति साहित्य में सामाजिक मूल्य एवं सहिष्णुतावाद : सावित्री चंद्र शोभा, पृ. 67, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया, सं. 2007
20. नानक वाणी : जयराम मिश्र, पृ.123, मित्र प्रकाशन, इलाहाबाद
21. उपरोक्त, पृ130

गुरु नानकदेव के काव्य में सांस्कृतिक चेतना

*डॉ. पूनम गुप्ता

* सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग, स्वामी श्रद्धानंद कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय

सांस्कृतिक चेतना के अन्तर्गत समाज का जीवन, उसका रहन–सहन, उसका चिंतन, उसके आदर्श एवं जीवन मूल्य, उसका बौद्धिक, नैतिक, सामाजिक समस्त परिवेश संस्कृति के अन्तर्गत आते हैं। सांस्कृतिक शब्द सम् उपसर्ग के साथ संस्कृत की (ड) कृ (ञ) धातु और इक प्रत्यय से मिलकर बना है जिसका अर्थ है साफ या परिष्कृत करना। 'संस्कृति' शब्द में संस्कार का भाव निहित है। व्यक्ति का परिवेश आचार–विचार सब मिलकर उस पर बीज रूप में जो संस्कार डालते हैं वहीं कालांतर में उस व्यक्ति और उन व्यक्तियों से बनने वाले समाज की संस्कृति के रूप में फलीभूत होते हैं। भारतीय संस्कृति कर्म प्रधान रही है। इसी कर्मगत विशेषता से ही भारतीय समाज का स्वरूप बना है। संस्कृति मानव के जीवन दर्शन का एक विशेष नियामक तत्व है। भौतिकता की आंधी में भटके हुए जीवन को सांस्कृतिक चेतना पग–पग पर सहारा देती है और जीवन की गति के लिए विवेक पैदा करती है। इस प्रकार यह जीवन–दर्शन का निर्माण करती है। सांस्कृतिक चेतना में तत्कालीन राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक परिस्थितियाँ, आचार–विचार, सामाजिक संस्कार, आध्यात्मिक विचार, पौराणिक विश्वास, मानवतावाद, पर्वोत्सव, वेशभूषा, खान–पान, श्रम का महत्व, रीति–रिवाज आदि सम्मिलित है।

गुरु नानक देव का आविर्भाव विलक्षण परिस्थितियों में हुआ था। पूर्ववर्ती संतों ने राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियों का अपने क्रियात्मक जीवन तथा सशक्त साहित्य के माध्यम से ऐसा आलोडन– विलोडन किया हुआ था, जिसमें गुरु नानक जी जैसे नवनीत का उद्भव स्वाभाविक ही था। गुरु नानक देव ने नामदेव की भक्ति को अपनाया, पर सामाजिकता का त्याग करके नहीं, रैदास की विनयिता को अपनाने में संभवतः उनकी सफलता का सबसे बड़ा रहस्य छिपा है, लेकिन आत्मविश्वास एवं दृढ़तापूर्वक उसका समाज में उन्होंने प्रसार किया। कबीर की कटुता, उग्रता एवं प्रहारक प्रकृति का त्याग करके भी उन्होंने समाज को लगभग वही संदेश दिया और उसका प्रसार करने में वे बहुतायत सफल भी हुए। नानक देव ने जातियों और धर्मों के बन्धनों को तोड़कर अपना संदेश मानव मात्र के लिए प्रसारित किया। गुरु नानक की वाणी में हिन्दू–मुस्लिम संस्कृति के संघर्ष की प्रतिक्रिया अनेक स्थलों पर व्यक्त हुई है–

''पाप की जंज लै काबुलहु धइआ।
जोरी मंगे दान ले लालो।
सरमु धरमु दुइ छय खलोए कूडू,
फिरे परधनु ए लालो
काजी ब्राह्मण की गल थकी,
अगद पडै सैतानु वै लालो।''
(नानक वाणी – गुरु नानक–मु.–1 तिलंग)

बाबर ने जब आक्रमण कर दिया और आतंक फैलाकर स्त्री बच्चों तक अपने अत्याचार के कोड़े को फटकारा तब गुरु नानकदेव ने उपर्युक्त पद्य में अपने मन के आक्रोश को अभिव्यक्त किया है कि 'हे लालो। वह (बाबर) पाप की बारात लेकर काबुल से दौड़ा आया है और सबसे बलपूर्वक धन ले रहा है। शर्म और धर्म दोनों छिपकर खड़े हो गये हैं प्रधानता मिथ्या को प्राप्त हो गई है। काजियों और ब्राह्मणों को कोई नहीं पूछता। विवाह के मंत्र शैतान पढ़ते हैं। नानक जी के इस पद से राजनैतिक अधःपत्तन की स्थिति का सही प्रमाण मिल जाता है। राजा और उसके कर्मचारीगण के लिए गुरु नानक ने लिखा है–

''कलिकाती राजे कसाई धरम पंखु करि उडरिया
x x x x
विचि हउमै करि दुखु रोई, कहु नानक किनी विधि गति होई।''
(नानक वाणी–गुरुनानक बार मांझ मं., पृ. 145)

कलियुग घूरे के तुल्य है। राजे कसाई समान हो गये हैं। धर्म अपने पंखों पर उड़ गया है। अब झूठ रूपी अमावस्या का प्राबल्य है। सत्य रूपी चंद्रमा दिखलायी ही नहीं पड़ रहा है। पता नहीं वह कहाँ उदय हुआ है? मैं (पथ ढूँढ ढूँढ) व्याकुल हो गई हूँ। नानक देव कहते हैं कि इस संसार से किस भांति मुक्ति हो। धार्मिक दृष्टि से विभिन्न वर्ग बन गये। बिना आचरण के धर्म पाखण्ड बढ़ रहे थे।

आचार–विचार – गुरु नानक चिन्तक, साधक, महान भक्त एवं सन्त थे। उनके आचार–विचार शुद्ध–सात्विक थे। नानकदेव हृदय की पवित्रता पर बल देते हुए कहतजे हैं कि शुद्ध, निर्मल आचार–व्यवहारपूर्वक एवं सात्विक प्रेम के द्वारा ही प्रीतम से मिलन हो सकता है– 'प्रेम पराइण प्रीतम राउ' उनकी दृष्टि में जो वैष्णव जन होते हुए भी अहंकारी है और आचार–विचार से शुद्ध नहीं है, वह वैष्णव कहलाने का अधिकारी नहीं। गुरु नानक आचरण की शुद्धता पर बल देते हैं। उनकी तथा अन्य गुरुओं की सहानुभूति कृषकों के साथ थी जो जीवन–यापन के लिये

कड़ी मेहनत करते थे। उन्होंने इस विषय में अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा कि एक किसान अपने काम में कैसे सुधार कर सकता है और इनमें धर्मपरायता ला सकता है। उनके पिता ने उनसे काश्त करने का आग्रह किया तब नानक ने उनसे कहा–

'मनहाली किरसानी करनी सरम पाणी तन खेत।
नाम बीज सन्तोख सुहागा रख, गरीबी वेस।'
(गुरु ग्रंथ सा., राग सोरठ, मु. 1, पृ. 595)

अर्थात् मनुष्य का शरीर एक खेत की तरह है जिस पर हल चलाया जाता है, जिसे जोता जाता है। हल चलाने के लिए मन को हलवाला होना चाहिए अर्थात् मन को शरीर पर इस प्रकार नियंत्रण रखना चाहिए जैसे किसान खेत पर रखता है। बोये जाने वाला बीज नाम (सार्वजनिक चेतना) होना चाहिए और खेत पर उद्यम सिंचाई करनी चाहिए। संतोष का पाटा (एक प्रकार का कृषि का औजार) होना चाहिए, इसका अर्थ है इच्छाओं को बेकाबू नहीं बहने देना चाहिए। यदि भूमि का सभी आवश्यक सामग्री बीज, पानी, हल, पाटा का जीवन भर उचित ढंग से प्रयोग किया जाए तो हम सादा किन्तु पवित्र जीवन बिता सकते हैं। जब उनके पिता ने उन्हें दुकान करने या खुदरा व्यापार करने का सुझाव दिया तब वे प्रतिक्रिया स्वरूप कहते हैं–

''हाण हट करि आरजा सचि नाम की वथु।
सुरचि सोच करि भांडसाल तिस विच तिस नो रखु।
वणजारिया सिऊ वणज कर लै लाहा मन हस।''
(गुरु ग्रंथ साहिब – मु.–1, राग सोरठ, पृ. 595)

गुरु नानक जी स्पष्ट करते हैं कि एक सच्चा परचून तभी बहुत लाभ कमा सकल है जब पूंजी बुरे साधनों से प्राप्त धन से मुक्त हो, वह ईमानदारी से सच्ची (सामाजिक रूप से लाभकारी) वस्तु का कारोबार करता हो और अपने शरीर अर्थात् दुकान को व्यापार के प्रति अर्पण करता हो। इस पद का सार है कि लोगों को धोखा देने की बजाय उचित साधनों से अधिक लाभ कमाया जा सकता है। नानक जी इस मत के थे सेवक को अपना काम पूरी निष्ठा के साथ मनुष्य की सेवा को अपना लक्ष्य बनाकर करना चाहिए, उसे भ्रष्ट व्यवहार से परहेज करना चाहिए। भगवान उसके काम से प्रसन्न होकर उसकी पद वृद्धि करेंगे। इस प्रकार नानक देव ने नैतिक आचरण को आर्थिक क्रियाकलाप से जोड़ने का प्रयास किया। जो प्रभु का नाम सुनता है, उस पर चलता है और अंतश्करण से उसकी भक्ति करता है, उसने सारे तीर्थों का स्थान कर लिया और अपने सब पापों को धो डाला। वे प्रभु एक ही कृपा दृष्टि से निहाल कर देते हैं।

'जतु पहारा धीरजु सुनिआरू। अहरणिमति वेदु हथआरू।
भउ खल्ला अगनि तपताउ। भांडा भांड अमृत तितु ढालि।
घडीऐ सबदु सचीटकसाल। जिनकउ नदरि करमु तिनि कार।
नानक नदरी नदरि निहाल।'

नानक के मतानुसार मन के भीतर काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार, स्वार्थ आदि शत्रु छिपे हुए है जो घबराये हुए व्यक्तियों की तरह भागे फिरते हैं। न वे स्वयं टिकते हैं न उनके भीतर ही टिकाव आने देते हैं। वे लोगों को समझाते हुए कहते हैं कि 'हे अंधे जीव। पलभर के काम सुख के लिए तू करोड़ों दिन दुख क्यों सहता है। घड़ी दो घड़ी मौज करने के पश्चात् बार–बार पश्चाताप करना पड़ता है। पराई स्त्री का साथ सर्प के समान खतरनाक है। काम–वासना से मुक्ति के लिए प्रभु बादशाह का स्मरण करो। अहम् के नाश के बाद ही ईश्वर की प्राप्ति की संभावना स्वीकार की है। सिर्फ सद्गुरु द्वारा ज्ञान के चक्षु खोलकर राम आतमराम भक्ति के द्वारा अहम् के भ्रमित बन्धन से छुटकारा मिल सकता है। इस तरह सच्चा सुख परमात्मा की भक्ति में है। गुरु नानक ने निंदक व्यक्ति के विषय में कहा है कि निंदक दूसरों के अनेक जन्मों में किये गये विकारों का मैल धो देता है और अपने कुकर्मों का फल स्वयं भोगता है। ज्यों–ज्यों कोई मनुष्य संतजनों की निंदा करता है त्यों–त्यों संतजन इसमें सुख का अनुभव करते हैं क्योंकि उन्हें अपने को परखने का अवसर मिलता है। संतों को परमात्मा कुकर्म से बचाये रखता है किंतु निंदक पुरुष अपने कुकर्मों से ही अपना जीवन गवाँ देता है। जब किसी व्यक्ति में कुरीतियां, कुसंगति, अपशब्द, अन्धविश्वास, संकीर्णता आदि विकार नहीं रहेंगे तो यह निर्मल मन से सद्गुणों को ग्रहण करने में समर्थ होगा। सद्गुणों के पास से ही मनुष्य का मन निर्मल हो सकता है।

सामाजिक संस्कार

गुरु नानक देव ने सामाजिक संस्कारों के अन्तर्गत द्विजों के लिए आध्यात्मिक जनेऊ धारण करने को कहा है। वह जनेऊ जिसकी कपास दया हो, जिसका सूत संतोष का हो, जिसकी गाँठ संयम हो, जिसकी पूरन सत्वगुण हो, हे पंडित यदि तुम्हारे पास इस प्रकार का जनेऊ हो तो मेरे गले में पहना दो। ऐसा जनेऊ न तो टूटता है, न गंदा होता है, न जलता है और न कभी नष्ट होता है। हे नानक वे मनुष्य धन्य है जो अपने गले में इस प्रकार का जनेऊ पहनकर (परलोक) जाते हैं–

''दइआ कपाह संतोखु सूतु जतु गंढी सतु वटु।
ऐहु जनेऊ जीउ का हई त पाडे धातु।
ना एहु तूटै न मलु लगै न एह जलै न जाइ।
धनु सु माणस नानका जो गलि चले पाइ।
चउकड़ि मुलि अणाइया बहि चड़कै पाइआ।
सिखा कनि चड़ाईया गुरु ब्राह्मनु थिआ।
ओह मुआ ओहु झडि पइआ वे तगा गइआ।
(नानक वाणी – छं.सं. 29, पृ. 346)

नानक ने सामाजिक संस्कारों में जन्म के विषय में सूतक को अग्नि बताया है और कहा है कि सूतक में ही लोग जन्मते हैं और मरते हैं–

'सूतकु अगनि भरवै जगु खाई।
सूतकु जलि थलि सभ ही थाइ।
नानक सूतकि जनमि मरीजै।
गुर परसादी हरि रस पीजै।'
(नानक वाणी – पृ. 282)

पौराणिक विश्वास – गुरु नानक ने अनेक पौराणिक विश्वासों को शब्दायित किया है। इस संबंध में नानक ब्रह्म की उत्पत्ति का उल्लेख करते हुए लिखते हैं–

'नाभि कमल ते ब्रह्म उपजै, वेद पडहि मुखि कंठि संवारि।
ता को अंतु न जाई लखणा, आवत जावत रहै गुबारि।'
(नानक वाणी – पृ. 357)

सांस्कृतिक चेतना के अन्तर्गत नानक ने मनोरंजन के साधनों में मदिरा पान वर्णन आध्यात्मिक संदर्भ में किया है। कलियुग में माया ही मीठी मदिरा है–

'कलि कलवाली माइया मदु मीठा मनु मतवाला पीवतु रहै।
आप रूप करे बहु भांती नानक बपुडा एव कहै।'
(नानक वाणी – पृ. 250)

मेले और पर्वोत्सव – गुरु नानक ने मेले और उत्सवों का वर्णन भी किया है। जन समुदायों और मेलों के माध्यम से

एक व्यक्ति को आदर्श व्यक्ति बनने का प्रशिक्षण दिया जाता था। विचारधारा और विभिन्न कौशलों में प्रशिक्षण के जरिए गुरुओं का उद्देश्य ऐसे व्यक्ति तैयार करना था जो अधिक विश्वसनीय हो सकते थे। इस प्रकार निर्मित किए गए व्यक्ति को गुरमुख कहा जाता था। इसे 'खालसा' अर्थात् पवित्र भी कहा जाता था। दार्शनिक शब्दावली में गुरु नानक ने इस प्रकार के व्यक्ति को ब्रह्म ज्ञानी कहा है। मेलों में खेलों और कुश्ती, तीरंदाजी, तलवार लाठी और भाला चलाने के लिए शारीरिक प्रशिक्षण भी दिया जताा था। इन मेलों में गुरुओं को मनुष्य जीवन के विभिन्न पहलुओं पर अपने विचारों की आवृत्ति और उनका प्रचार करने के लिए अधिक जनसमुदाय मिलता था। नानक ने पर्वों में दशहरा और गुरुपर्व का वर्णन किया है। वे कहते हैं कि नाम ही वास्तविक तीर्थ है शब्द नाम का विचार करना और मन में हरि का ज्ञान होना तीर्थ है। गुरु का सच्चा ज्ञान असली तीर्थ है यही दस पर्व है और यही शाश्वत दशहरा है–

'गुर गिआनु सांचा थानु तीरथ दस पुरब सदा दसाहरा
हउ नामु हरि का सदा जाचउ देहु प्रभु धरणीधरा
संसार रोगी नामु दारू मैलु लागै सच बिना
गुर वाकु निरमलु सदा चानणु नित साचु तीरथु मजना।'
(नानक वाणी – छं. 1, पृ. 420)

वेशभूषा – जहाँ गुरु नानक के हृदय के में वैराग्य भावजनित ज्ञान विचार और भक्ति की गंगा प्रवाहित रही, वहीं समुदाय उत्थान, लोक संग्रह एवं लोकमंगल की भावना ने उन्हें कर्म क्षेत्र में क्रियाशील बनाए रखा। ऐसे विचार उनकी वाणी में यथास्थान मुखर मिलते हैं। इसलिए जहाँ वे अपनी वाणी के 'सिंध गोसटि' प्रसंग में योगियों की वेशभूषा का लंबा–चौड़ा वर्णन करते हैं, वहीं पूर्ववर्ती एवं समवर्ती साधकों की आंतरिक साधना को गौण भी बताते हैं क्योंकि उनके द्वारा बाह्य साधना की स्थूल चर्चा की प्रधानता देना ही मुख्य लक्ष्य रहा है। नानक देव खत्रियों की वेशभूषा का वर्णन करते हुए कहते हैं– ''वे (खत्री) मत्ये में टीका लगाते हैं। कमर में धोती पहनकर काँछ बाँधते हैं, हाथ में (मानो वे) छुरी लिये हुए हैं और जगत के लिए कसाई के समान है। वे नीले वस्त्र पहनकर तुर्क हाकिमों के पास जाते हैं, तभी वे प्रामाणिक समझे जाते हैं। तात्पर्य यह कि नीले वस्त्र पहनकर जाने से ही उन्हें मुसलमान हाकिमों के पास जाने की इजाजत मिलती है। म्लेच्छों से धान्य लेते हैं (रोजी चलते हैं) और फिर भी पुराणों को पूजते हैं।'' गुरु नानक ने योगियों के भगवा वेश, कथा, झोली, तीर्थ–भ्रमण, विभूति धारण, धूनी रमाना, संन्यासियों के मूंड मुडाने तथा कमण्डल धारण करने आदि बाह्य–वेशों एवं तद्गत अहंकारों की तीव्र–भर्त्सना की है–

''झोली गेरु रंग चढाइआ वस्त्र भेख भिखारी।
x x x x
इस्त्री तजि करि कामि विआपिया चितु लाइआ पर नारी।''
(नानक वाणी – मारु, असटपदी 7)

भाग्यवाद और श्रम का महत्व – कबीर यद्यपि विवाहित थे और गृहस्थ जीवन व्यतीत करते थे, फिर भी वैराग्य पर बहुत जोर देते। संतों के त्याग के इस आदर्श ने लोगों में अकर्मण्यता की भावना भर दी। लोक संग्रह के निमित्त कर्म करने का आदर्श लोग भूल गए। लोग हाथ पर हाथ रखकर भाग्यवादी बन गए और काल, कर्म तथा भाग्य पर मिथ्या दोष आरोपित करने लगे। इस प्रकार की अकर्मण्यता से समाज का कर्म पंगु हो गया। ज्ञान चंचु, ज्ञान मात्र रह गया और भक्ति आडम्बरपूर्ण हो गई। नानकदेव ने देशवासियों के दुःखों, क्लेशों अड़चनों का व्यापक अध्ययन किया और युग की नाड़ी को पहचानकर तदनुरूप ही उसका निदान किया। वे मानते हैं कि व्यक्ति को भाग्य के सहारे न बैठकर परिश्रम करना चाहिए। वे परिश्रम से कमाई हुई रोटी को ही श्रेष्ठ मानते हैं। यह सत्य है कि जीव मस्तक पर परमात्मा की ओर से जो कुछ लिखा लाया है उसे कोई नहीं मिटा सकता, वही मनुष्य को देता और लेता है। इसका अर्थ यह नहीं कि व्यक्ति हाथ पर हाथ धरकर बैठा रहे। गुरु नानक ने श्रमजीवी बढ़ई की रोटी को श्रेष्ठ ठहराते हुए कहा कि ''इस गरीब की रोटी में दूध ही दूध है, क्योंकि यह इसके पसीने की कमाई की रोटी है। तुम्हारे जमींदार भागों की रोटी में यह स्वाद और यह पवित्रता कहाँ वह तो जुल्म की कमाई की रोटी है, जो खून से सनी हुई है।'' गुरु नानक ने राजसी ठाट–बाट से रहने वाले मलिक भागों के पकवान–पूर्ण भोजन को अस्वीकार करके उन्होंने अपने श्रम से अर्जित करने वाले भाई लालों के सादे भोजन को अपनाकर कई संदेश दिये। आर्थिक विषमता के कारण धन की दृष्टि से समृद्ध मानव की अपेक्षा उन्होंने निर्धन को अपनाने का प्रयत्न किया। इसके द्वारा उन्होंने सच्चाई और ईमानदारी से आजीविका अर्जित करने का संदेश देकर सांस्कृतिक चेतना जागृत की।

लंगर – सामुदायिक लंगर का उल्लेख भी नानक वाणी में मिलता है। गुरु नानकदेव द्वारा शुरु की गई एक महत्वपूर्ण संस्था सामुदायिक भोजन की थी जो सशक्त समाजवादी गुण से युक्त थी। उस समय यह एक महान परिवर्तन लाना थां इसका उद्देश्य व्यक्तियों में समानता लाना और उन्हें सामाजिक बनाना था ताकि वे अच्छे व्यक्ति बन सकें और अपने कतिपय पूर्वाग्रहों को छोड़ सकें। चाहे कोई अमीर हो, गरीब हो, ऊँची जाति का हो या नीची जाति का, जो गुरु के दर्शन के लिए आता था उससे अपेक्षा की जाती थी कि वह दूसरों के साथ बैठकर समाज भोजन ग्रहण करे।

मानवतावाद – नानकवाणी में मानवतावादी दृष्टिकोण, विश्वमैत्री की भावना, समताभाव सर्वत्र ओत–प्रोत है। गुरु नानक के क्रूरता और असंतोष का जीवन जीने वाले को ब्राह्मण नहीं माना। उदाहरणार्थ–

''सो ब्राह्मणु जो ब्रह्म बीचारै।
आपि तरै सगले कुल तारै।''
(नानकवाणी – मु. 1, राम धनासरी, पृ. 662)

जहाँ एक ओर तो वे सच्चे मुसलमान होने का लक्षण बताते हैं तो वहीं दूसरी ओर ब्राह्मण को पाखंडी क्रूर कर्म छोड़कर ब्रह्म चेतना प्रधान होने की प्रेरणा देते हैं। उन्होंने ऊँच–नीच के भेद को दूर कर मानवतावाद का पैगाम दोहराया है–

''मुदां संतोखु सरमु पतु झोली धिआन की करहि बिभूति।
खिंथा कालु कुंआरी काइआ जुगति डंडा परतीति।
आइ पंथी सगल जमाती मनि जीते जग जितु।
आदेसु तिसे आदेसु आदि अनीलु अनादि अनाहति।
जुगु जुगु एको वेसु।''
(आदि श्री गुरु ग्रंथ साहिब – म. 1, पृ. 6)

गुरु नानकदेव कहते हैं कि मुद्रा पहनने के स्थान पर संतोष धारण करो, झोली पहनने के स्थान पर अपनी इज्जत और लाज संभालकर रखो। शरीर पर भस्म न

लगाकर ध्यान को जगाओ। यह काल के वशीभूत होने वाला शरीर कंथा है, इसीलिए अन्य कथा धारण करने की आवश्यकता नहीं है। अपनी काया को कुमारी रखो अर्थात् कामलिप्त न होने दो। प्रीति और पूर्ण विश्वास के साथ परमात्मा से जुड़ना ही डंडा है। अतः अन्य डंडे की आवश्यकता नहीं है प्रतीति की युक्ति का डंडा ही तुम्हें सहयोग देगा, डिगने नहीं देगा। 'आई' पंथ (योगियों का सम्प्रदाय) यही है कि सबको अपना समझ लो, जिसने मन जीत लिया। आदेश है कि जो आदि, अगणित, अनादि ओर अनाहत है और वह हर युग में एक ही रहता है। यहाँ संतोष द्वारा मानव मात्र को स्वीकार करने की बात कही है। जो अपने मन पर विजय प्राप्त करे वही जगत पर राज कर सकता है। उन्होंने मानव–मानव की एकता और समता के स्वर को समाज में निनादित किया तथा कर्म और व्यवसाय की दृष्टि से किसी प्रकार का भेद स्वीकार नहीं किया। निम्नवर्गीय समाज के साथ रहकर नानकजी लोक सेवा का उपदेश देते हुए कहते हैं कि मानवता की सच्ची सेवा परपीड़ा का निवारण है। परपीड़ा का निवारण 'वास्तविक मानवता' है। मानवता के मार्ग में सबसे बड़े बाधक समाज में परिव्याप्त अन्धविश्वास, पाखण्ड, बाह्य आडम्बर, धार्मिक–सामाजिक विषमताएँ और वैमत्य हैं। इनके निवारण के बिना मानवता का पथ प्रशस्त नहीं हो सकता। वे वर्गहीन, जाति रहित नया समाज स्थापित करना चाहते थे। वे कहते हैं कि गरीबों की सेवा द्वारा मन में जो पवित्र लोकसेवा के मनोभाव उठते हैं, वही हमें परमात्मा के नजदीक ले जाते हैं। अतः लोक सेवा ही सच्ची सेवा, सच्चा कर्तव्य है–

'सचु करणि अभ अंतरि सेवा।
मनु तृपतासि अलख अभेदा।'
(नानक वाणी, पृ. 111)

निष्कर्षतः गुरु नानक देव की वाणी में उनके आचार–विचार, सामाजिक–संस्कार, पौराणिक विश्वास, मेले एवं उत्सव, वेशभूषा, भाग्यवाद, श्रम, खान–पान, मानवतावाद आदि का वर्णन सांस्कृतिक चेतना के अन्तर्गत हुआ है। उन्होंने अनेक स्थलों पर राजनैतिक अधःपतन, सामाजिक एवं धार्मिक संकीर्णता का पर्दाफाश करते हुए सांस्कृतिक चेतना जगाने का प्रयास किया। वे शुद्ध, निर्मल आचरण पर बल देते थे। सद्गुणों के द्वारा ही मनुष्य का मन निर्मल होता है। नानक के अनुसार मनुष्य का मन पर उसी प्रकार नियंत्रण होना चाहिए, जिस प्रकार किसान का खेत पर। उन्होंने नैतिक आचरण को आर्थिक क्रियाकलाप से जोड़ने का प्रयास किया। सच्च सुख परमात्मा की भक्ति में है। सामाजिक संस्कारों में जनेऊ, जन्म–मरण आदि की चर्चा गुरु नानक ने की है। पौराणिक विश्वासों में ब्रह्म की उत्पत्ति, जीव, जगत आदि, मनोरंजन के साधनों, मेले तथा उत्सवों में दशहरा, गुरुपर्व आदि का वर्णन किया है। योगियों और खत्रियों की वेशभूषा के साथ ही श्रम का महत्व प्रतिपादित किया है। भाग्यवाद के सहारे बैठने वालों की कटु आलोचना की है। सच्चाई और ईमानदारी से आजीविका अर्जित करने का संदेश देकर सांस्कृतिक चेतना जागृत की। उन्होंने ऊँच–नीच, अमीर–गरीब का भेदभाव समाप्त कर मानवतावाद का पैगाम दिया। उनके काव्य में सांस्कृतिक चेतना पग–पग पर अभिव्यक्त हुई है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. आदि श्री गुरु ग्रंथ साहिब
2. नानक वाणी – डॉ. जयराम, मिश्र, प्रथम सं. 1993, प्र. हिमाचल पुस्तक भण्डार, गांधी नगर, नई दिल्ली
3. नानक वाणी – डॉ. जयराम मिश्र, सं. श्रीकृष्णदास – प्र. मित्र प्रकाशन प्रा.लि. इलाहाबाद
4. भाषा साहित्य और संस्कृति – सं. विमलेश कान्ति वर्मा और मालती, सं. 2009 प्र. ओरियंट ब्लैकस्वान प्राइवेट लिमिटेड
5. संत सुधा–सार–वियोगी हरि–प्र. सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली
6. स्वामी प्राणनाथ और गुरु नानक एक तुलनात्मक अध्ययन–सुधा सी पौराणा सं. 2008, प्र. जयभारती प्रकाशन, इलाहाबाद

श्री गुरु नानक देव जीः वर्तमान समय के अग्रदूत

*डॉ. वीणा शर्मा

* सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग, गार्गी कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय

भक्ति एक भावना है जो ईश्वर, संसार मानव के पारस्परिक सम्बन्ध को व्याख्यायित करती है। इसका विकास दार्शनिक विचारों पर अवलम्बित है, परन्तु यह उल्लेखनीय है कि हजारों साल तक उपासना करने के पश्चात ही मानव ने भक्ति भावना को दार्शनिक आधार प्रदान किया। जब दार्शनिक विचारधारा पनपी तब ही भक्ति का उदय हुआ। ईश्वर का आश्रय लेते हुए विभिन्न कर्तव्यों का अनुष्ठान, उसके प्रति श्रद्धा, तप संयम एवं व्रत के द्वारा भोगों का त्याग, अहिंसा, आस्त्रेय, अपरिग्रह, सत्य, ब्रह्मचर्य आदि का सेवन, विषयों से निवृत्त होकर मन को अध्यात्म पथ पर चलाना, पवित्रता प्राप्त करना, समस्त कामनाओं को ईश्वर पर केन्द्रित करना आदि भक्ति भावना को दृढ़ करने वाले साधन हैं।

सामाजिक चेतना जब एक विशेष आदर्श से प्रभावित होती है और लोगों में उस आदर्श के कारण एक नवजागरण पैदा होता है। इसी से सामाजिक जागरुकता संभव होती है।लेकिन यह कई तत्वों पर निर्भर करती है। सबसे महत्त्वपूर्ण तत्त्व है एक महान व्यक्तित्व का नेतृत्व। इसके लिए एक महान एवं आदर्शवान व्यक्तित्व की जरूरत होती है। समाज को सही पथ पर आगे बढ़ाने के लिए दो बातों का होना बहुत आवश्यक है– एक महान आदर्श और एक महान व्यक्तित्व। सामाजिक चेतना का लक्ष्य एक साथ चलने और चिंतन करने में है। सन 1604 में श्री गुरु ग्रंथसाहिब में उपलब्ध गुरुओं की वाणी के सार में वर्ग,वर्ण,जाति,पद,धर्म,मज़हब की कोई सीमाएं नही थी।वे ब्रह्म में आस्था रखने के कारण ब्रह्म के समस्त जीवों को समभाव से देखते और प्यार से गले लगाते थे। उनके सम्मुख मनुष्य परमात्मा का एकमात्र जीव था। गुरुवाणी में एक पिता एकस के हम बारिक के भाव को मनुष्यता के मूल धर्म के साथ जोड़ा गया। पडि–पड़ि पंडित वेद बखानहि पाइआ मोह सुआइ अथवा सच कमावै सोए काजी,जो दिल सोधै सोइ काजी।

यहाँ किसी धर्म–मज़हब को बुरा–भला नही कहा गया। सबकी समान महत्ता है। धर्म–मज़हब की मर्यादाओं का पालन करते हुए मानवता के धरातल पर सब के लिए समभाव जैसे–सचहु ओरे सभु को उपरि सचु आचारु। एक औंकार की सर्वसम्मत अवधारणा, लंगर–पद्धति, शब्द–कीर्तन विश्व–भ्रातृत्व के परिचायक है। जहाँ किसी जाति–मज़हब में कोई भेद नही है। गुरु ग्रंथ साहिब का मत पारस्परिक प्रेम, विश्वास,नीति आदि सद्गुणों पर आधारित है।जो वसुधैव कुटुंबकम् का द्योतक है।

सन्त परम्परा में श्री गुरु नानक देव जी अपनी अन्तरदृष्टि और आत्मज्ञान के कारण प्रमुख स्थान रखते हैं। गुरु नानक कबीर के समकालीन रहे हैं। मध्य–युग के भारतीयों में नव–चेतना का संचार करने में और मानवतावाद का संदेश देने में गुरु नानक का महत्त्वपूर्ण स्थान है। डॉ. एस. राधाकृष्णन कहते हैं– हमें यह प्रतीत होता है कि तत्कालीन उत्तर भारत के समस्त सम्प्रदायों और धर्मों का अध्ययन गुरु नानक ने किया था। गुरु नानक भविष्यद्रष्टा थे उन्होंने आध्यात्मिकता और नैतिकता के संदर्भ में संतकवियों की भांति रूढ़ियों,आडम्बरों और स्वार्थ से मुक्त समाज का सपना देखा था। साथ ही सत्य, संतोष, दया, संयम, उदारता ,सहनशीलता, समदर्शिता आदि पर बल दिया।

सबु सभना होइ दारु पाप कढै पलै धोइ
नानक बखाणे बेनती जिनु सच पलै होइ।

तथा

सचहु ओरे सभ को सच पलै होइ।।

× × ×

दइआ कपाह संतोख सत जत गंठी सत वट
एहु जनेऊ जीअ का हई त पांडे घत ।।

गुरु नानक संत भी हैं और सामाजिक चेता भी हैं। सामाजिक हित को प्रभावित करने वाले विषयों के प्रति वह गहरी संवेदना दर्शाते हैं। उन के दौर में सामन्तवादी अत्याचार चरम पर था। बाबर बार–बार हिन्दुस्तान पर आक्रमण कर रहा था। अफगान,उज़्बेक,मंगोल मिल कर हमले कर रहे थे। इन के आक्रमणों को सबसे पहले झेलने वाला प्रदेश पंजाब ही था। इन फौजों ने बड़ी क्रूरता से लूटपाट की। इस क्रूरता को देख कर गुरु नानक का मन द्रवित हो गया। बस्तियाँ जली, कत्लेआम किया गया, नारियों को बेइज्जत किया गया। गुरु नानक ने इस पीड़ा को चार पदों में व्यक्त किया है। वह उस समय के लोधी वंश शासकों के प्रति आक्रोश व्यक्त करते हैं।

खुरासान खसमाना कीआ हिंदुस्तान डराइआ
एती मार पई करलाणै तैं की दरदु न आइआ

सामाजिक व्यवहार में गुरु नानक लोगों को सच्ची भक्ति करने की प्रेरणा देते हैं और समाज में व्याप्त दुराचरण, आडम्बरों पर चोट करते हैं। मन का सूतक

लोभ है जिह्वा सूतक कूड़, नावण चले तीरथी मनि खोटे तनि चोर, बाहरी धोती तूमड़ी अंदरि विसु निकोर, जाणहु जोति न पूछहू जाति आगे जाति न है, सचु संजपु करणे कारां नाव नाउणु जपेहि। उनकी जपुजी,आसां दी वार,रहिरास एवं सोहिला आदि ग्रंथ में संकलित हैं। जहाँ एकेश्वरवाद,परमात्मा की सर्वव्यापकता के प्रति एकनिष्ठा,विश्व–प्रेम,नाम की महत्ता में पूर्ण विश्वास आदि उल्लेखनीय हैं।

अंतरि वसै न बाहरि जाइ।
अम्रितु छोड़ि काहे विखु खाइ।।
ऐसा गिआन जपहु मन मेरे।
होवतु चाकर साचे केरे
गिआनु धिआनु सभु कोइ रवै।
बांधनि बांधिआ सभु जगुं भवै।।

वे हउम या अहंकार को मनुष्य का सबसे बड़ा शत्रु समझते हैं और इसके त्याग के द्वारा ही भगवान की प्राप्ति को सुलभ मानते हैं।

मन रे हउमै छोड़ि गुमानु
हरि गुरु सरवरु सिवि तू पावहि दरगह मान।

गुरु नानक देव को संतगुरुओं में एक अपूर्व स्थान देने वाला तत्त्व है सामाजिक न्याय के लिए उनका गहरा सरोकार और न्यायपूर्ण समाज के लिए उनकी ललक। उनका पहला उदबोधन था– एक ही ब्रह्म है, हिन्दु मुसलमान में कोई भेद नही।

राह दोवें इकु जाणा सोई सिझसी।
कुफर गोअ कुफराणां पइआ दझसी।।
सब दुनिया सुबहानु सचि सभाईए।
सिझै दरि दीवानि आपु गवाईए।।
राह दोवै खसमु एको जाणु।
गुर कै सबद हुकमु पछाणु।।

सामाजिक असमानता के प्रति गुरु नानक का आक्रोश बड़ा तीव्र है और वह बार–बार व्यक्त हुआ है।उन्होंने सामाजिक असमानता पर कई तरह से प्रहार किया है– सिंहासन पर बैठे राजा,अधिकारी,खुशामदी,झूठे धर्म वाले पाखंडी और स्वार्थी उपदेशकों तक का विरोध किया है।लेकिन उनके विरोध में वैर का रूप कतई नही था। सर्वधर्म समभाव की चेतना जगाने में उनकी यात्राओं का बड़ा महत्वपूर्ण योगदान है। इकतीस वर्ष की अवस्था में उनकी पहली यात्रा में मरदाना उनके साथ थे। दूसरी यात्रा में सैदों और धेबी, तीसरी में नासू और सीहा साथ गए। उनकी ये यात्राएँ सामाजिक चेतना जाग्रत करने का एक अभूतपूर्व इतिहास रचती हैं।

वे जहाँ–जहाँ गए वहाँ–वहाँ जनसाधारण के मन में चेतना की लौ जलाते गए। वाराणसी में दृ जे रब्ब मिलदा गंगा नातेआं ते मिलदा डडुआं मछीयाँ। कैलाश मानसरोवर, चीन, मक्का–मदीना, दमिश्क, यरुशलम, अल्लेप्पों, बगदाद में गुरु नानक की वाणी ने जादू जैसा असर किया। उसी जादू में रचित आख्यान आज भी जनसमाज में प्रचलित हैं। वह बगदाद के बहील शाह को सिक्ख धर्म की शिक्षा देते हैं। पाकपत्तन,देयालपुर,कगापुर से जब वह अमीनाबाद पहुँचते हैं तो बाबर के कुकृत्यों की कड़ी आलोचना करते हैं। उनके निकट कोई बड़ा नही और कोई छोटा भी नही है। उनकी वाणियों को पढ़ने उनके अत्यन्त निरीह,निरहंकार और समर्पित चित्त मीठे व्यक्तित्व का परिचय मिलता है। वह कहते हैं दृमालिक मेरे मैं तुझसे यही मांगता हूँ कि जो लोग नीच से भी नीच जाति के समझे जाते है,मैं उनका साथी बनूँ।

नीचा अन्दरि नीच जाति नीची हू अति नीचु
नानकु तिन कै संगि साथि वडिआ सिउ किआ रीस।

जगन्नाथपुरी में जाकर वह इस भ्रम का खंडन करते हैं कि ईश्वरीय चेतना सीमित नही बल्कि विश्वव्यापी है।

गगन में थालु रविचन्द दीपक बने तारिकामंडल जनक मोती।
धूप मलयानलो पवणु चंवरो करे सगल बनराइ फूलन्त जोति।
कैसी आरती होइ भवखण्डना तेरी आरती।।

मलिक भागो और लालो के माध्यम से वह समाज को हक–हलाल की कमाई कमाने के लिए प्रेरित करते है। वह अपने समय में फैले अन्याय एवं अत्याचार का विरोध करते हैं फिर वह हिन्दु की ओर से किया गया हो अथवा मुस्लिम की ओर से। वह लोगों को खोखले बड़प्पन से बचने के लिए आगाह करते हैं। कोरे प्रदर्शन को भ्रम बताते हुए वह कहते हैं–

लख लसकर लख वाजे नैजे लख उठि करहि सलामु
लख उपरि फुरमाइसि तेरी लख उठि रखहि मानु।।
जां पति लेखे ना पवै तां सभि निराफल काम।।

जहाँ काजी झूठ बोल–बोल कर अपना धंधा चलाता है। ब्राह्मण, योगी, राजा अथवा जो कोई भी प्रपंचों से कमाई करता है वह उन्हें चेताते हैं।

कादी कूड़ बैलि मल खाइ। ब्राहमणु नावै जीब धाइ।।
जोगी जुगति न जाणे अंधु। तीने ओजाड़े का बंधु।।

गुरु नानक लोगों को झूठ की कमाई करने से बरजते हैं। ईमानदारी के काम से ही समाज में सदभाव की स्थापना होती है। झूठ की पूँजी और झूठ के व्यापार से समाज में बिगाड़ होता है। गुरु नानक मानवता की एकता पर बल देते हैं। वह ऊँची जाति के दंभी लोगों की भर्त्सना करते हैं। निर्धनों के प्रति मानवता की उच्च भावना से ओत–प्रोत होकर वह निम्न जात के उपेक्षितों को सहारा देते हैं। वह सामाजिक चेतना जगाते हुए उद्घोषणा करते है–सभी में परमात्मा की ज्योति है,सभी की एक जाति है, सब में वह एक ही समाहित है।

खसमु विसारहि ते कम जाति।
नानक नावैं बाझू सनाति।

गुरु नानक स्त्री के प्रति लोगों की मानसिकता को बदलते हैं। वह मानवता की आधी आबादी स्त्री को अपनी व्यापक करुणा से आप्लावित करते हैं। साथ ही उसके प्रति गौण विचार रखने वालों को दुरुस्त करते हैं।

सो क्यूँ मंदा आखिए जिस जनमे राजान।

क्रूर शासकों द्वारा की गई स्त्रियों की दुर्दशा का वर्णन वह अत्यंत मार्मिक शब्दावली में करते हैं। वह नारी के सम्मान को पीड़ा देने वाले निरंकुशों को लताड़ लगाते हैं।

समाज के दबे हुए और सताए हुए वंचितों के प्रति उनके मन में गहरी करुणा है। उनकी व्यक्तित्व की मिठास के कारण ही मरदाना की तरह बहुत सारे लोग उनके मुरीद हो गए थे। गरीबों के ऊपर अत्याचार करने वालों को वह सही राह पर आने का उपदेश देते हैं। भाई लालो की हक–हलाल की सूखी रोटी को झूठ और अत्याचार से कमाई रोटी से बेहतर माना है। गुरु नानक मनुष्य को ब्रह्माण्ड का ही रूप मानते हैं। वह कहते हैं जो जो ब्रह्मांड में है वही–वही इस शरीर में भी है।

जोइ जोइ पिंडे सोइ सोइ ब्रह्मंडे।

इस संसार का सार इस शरीर में ही है। अपनी आत्मा को जगाते ही बाहर का अंधेरा भी मिट जाता है। जैसे ही ज्ञान का उजाला फैलता है वैसे ही आत्मा पर पड़ा अज्ञान का पर्दा हट जाता है। लेकिन वह साथ ही यह भी कहते हैं कि मात्र जानना ही काफी नही है। जानने के साथ उसे अपने जीवन में उतार लेना अधिक महत्वपूर्ण है। ज्ञान को जीवन में अनिवार्य रूप में उतार लेना मुख्य काम है। जहाँ कथनी और करनी में कोई अंतर नही रह जाता।

मन का सूतक लोभु है जिह्वा सूतक कूड़।

वह लोगों की पवित्रता की धारणा पर व्यंग्य करते हुए कहते हैं–

नावण चलै तीरथी मनि खोटे तनि चोर।
इक भाउ लथि नातिआं दुइ भा चढ़ि असु होर।।
बाहरि धोती तूमड़ी अंदरि विसु निकोर।
साध भले अणनातिआं चोर सि चोरा–चोर।।

वर्तमान परिवेश में अगर देखा जाए तो मानवता, उदारवाद और सामाजिक चेतना जगाने की दृष्टि से गुरु नानक युगपुरुष के साथ–साथ वर्तमान समय के अग्रदूत भी सिद्ध होते हैं।

संदर्भ सूचीः–

1 द फिलास्फी ऑफ गुरु नानक (वॉल्यूम 1,2)– ईशर सिंह
2 सिक्ख गुरुओं का पुण्य स्मरण– हजारी प्रसाद द्विवेदी
3 गुरु नानक – गुरबचन सिंह तालिब

विश्व गुरु : नानक देव

*प्रो. सुखदेव सिंह मिन्हास

* स्नातकोत्तर राजकीय महाविद्यालय, चण्डीगढ़

सिख धर्म के संस्थापक गुरु नानक देव एक महान चिन्तक, दार्शनिक, सामाजिक नायक, निडर समाज सुधारक, अपूर्व रहस्यवादी, अथक एवं गतिशील पर्यटक ही नहीं बल्कि एक विद्रोही पुरुष और उत्कृष्ट रचनाकार भी थे. उनके आगमन के समय भारतवर्ष पर लोधी वंश का निरंकुश साम्राज्य था. चारों ओर निराशा का अन्धकार फैला हुआ था. सामंती वर्ग के अत्याचार से जनता त्रस्त थी. सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और धार्मिक दृष्टि से यह युग अधःपतन का युग था. गुरु नानक देव ने हारी हुई, त्रस्त और निराश जनता में नया उत्साह और नई चेतना जगाई. शताबदियों से सुप्त समुदाय को जगाकर भारतीय जनता को ज्ञान, सत्य और नेकी का सन्मार्ग बताया. इकबाल नानक के बारे अपनी एक कविता में यूँ लिखते है–

फिर उठी आखर सदा, तौहीद की पंजाब से
हिन्द को एक मरदि कामिल ने जगाया खाब से

गुरु अर्जुन देव नानक की प्रशंसा में लिखते

गिआन धियानु किछु करमु न जाणा,
सार न जाणा तेरी
सब ते बड्डा सतिगुरु नानकु,
जिनि कल राखी मेरी (गु. ग .स. 102)

नानक का जन्म १५ अप्रैल १४६९ ई. को जिला शेखुपुरा के नगर राय भोई की तलवंडी (अब ननकान साहिब) जो लाहौर से ४० मील की दूरी पर है में हुआ. पिता का नाम मेहता कालू और माता का नाम तृप्ता था. इनकी बड़ी बहन का नाम नानकी था जो नानक से पांच वर्ष बड़ी थी. नानक अपने पिता के इकलौते पुत्र थे और उनका बाल्यकाल बड़े ही लाड़ प्यार से बीता. कुछ बड़े होने पर घरवालों ने ने उन्हें १४७५ ई में गोपाल पंडित के पास हिंदी पढने, १४७८ ई. में ब्रज लाल पंडित के पास संस्कृत और १४८२ ई, में मौलवी कुतुब्दीन के पास फारसी पढने के लिए भेजा, मगर गुरु नानक का मन सांसारिक ज्ञान से कहीं दूर आध्यात्मिक ज्ञान में रमता था. शिक्षकों से पढ़ने की बजाय गुरु नानक ने अपने शिक्षकों को ही आध्यात्मिक ज्ञान का पाठ पढ़ा दिया. बचपन से ही गुरु नानक की सोच विद्रोही, तर्कपूर्ण और लीक से हटकर थी. जब जनेऊ की रस्म अदा करने पंडित को बुलाया गया तो नानक ने जनेऊ पहनने से इनकार कर दिया और ऐसा जनेउ पहनाने के लिए कहा जो ना कभी टूटे, न गन्दा हो और जो दया और संतोष जैसे गुणों से निर्मित हो. नानक कहते है–

दइया कपाह संतोखु सूतु
जातु गंडी सतु बटु
एहु जनेऊ जीअ का
हई ता पांडे घतु
न एहु तुटे न मल लगै
ना एहु जले न जाई (गु.ग.स.471)

नानक का ह्रदय सदा करतार के चिंतन में लींन रहता था. वे सांसारिक कार्य व्यवहार में अधिक ध्यान नहीं देते थे और एकांत प्रिय होते जा रहे थे. घरवाले नानक के इस रवैये से चिंतित थे. उन्होंने नानक का ध्यान बटाने के लिए उन्हें खेतों में पशु चराने के लिए भेजना शुरू किया. वह खेतों में पशु तो ले जाते पर पशुयों का ध्यान नहीं रखते थे और पशु लोगों की फसल चर जाते. लोगों की शिकायत सुनने पर जब खेतों को देखा जाता तो फसल को कोई नुक्सान हुआ दिखाई नहीं देता. नानक के पिता ने उन्हें व्यापर करने के लिए बीस रुपये दिए तो वह बीस रूपये से भूखे साधुयों को भोजन करा के वापिस घर आये. जब पिता की डांट पड़ी तो वह कहने लगे कि आपके कहे अनुसार सच्चा सौदा कर के आया हूँ. किसी बात का नानक पर असर ना होते देख घरवालों नें नानक का विवाह करने का निर्णय लिया कि शायद गृहस्थी के बंधन में बंधकर ही नानक का ध्यान सांसारिक कार्यो की तरफ उन्मुख हो. १४८७ ई. में नानक का विवाह बटाला निवासी भाई मूलचंद की सुपुत्री बीबी सुलखनी से होता है और विवाह उपरांत उनके दो पुत्र श्रीचंद और लख्मीचंद पैदा हुए. इसके बावजूद भी गुरु नानक का ध्यान प्रभु की सोच में ही रमा रहता. वैद को बुलाया जाता है पर वैद नानक के रोग को कैसे पकड़ सकता था

वैद बुलाइया वैदगी पकड़ी ढडोले बांह
भोला वैद न जाणई करक कलेजे मांहि (गु.ग.स .1279)

गुरु नानक को उसकी बहन नानकी के पास सुल्तानपुर भेज दिया जाता है जहाँ बीबी नानकी के पति जयराम दौलत खां लोधी के पास नौकरी करते थे. नानक मोदी खाने में नौकरी करने लगे. अपने परिवार को भी उन्होंने वहां बुला लिया. भाई मर्दाना भी वहीं आकर बस गये. यहाँ गुरु जी दस वर्ष रहे. प्रतिदिन वह प्रातःकाल सेवक के साथ बेईं नदी में स्नान करने जाते. चारों ओर नानक का यश फ़ैल रहा था और लोग उनसे प्रभावित होने लगे थे. मोदीखाने की नौकरी के दौरान वह अक्सर तेरह की गिनती पर रुक जाते और तेरा तेरा बोलते बोलते सामान तोलने लगते. तेरा तेरा का भाव था कि हे ईश्वर सब कुछ तेरा ही है. कुछ लोगों ने इसकी शिकायत की मगर जब जांच पड़ताल की गयी तो सारा हिसाब ठीक पाया गया. इस तरह की बातों से गुरु नानक लोगों का ध्यान आकर्षित करने लगे.

एक दिन प्रातः काल अपने सेवक के साथ नानक बेईं नदी में स्नान करने लगे, डुबकी लगाई पर वापिस ऊपर नहीं आये. वह सचखंड पहुँच गये और ईश्वर ने उन्हें जगत को धर्म के वास्तविक रूप की पहचान कराने का उपदेश दिया. कहने का भाव उस वक्त वह आत्मलीन हो गये थे और उन्हें इस जग में आने के अपने वास्तविक उद्देश्य का आभास हो गया. तत्पश्चात उन्होंने मोदीखाने की नौकरी छोड़कर नाम जपने और संसार का उद्धार करने की योजना बना ली . सचखंड से प्राप्त अमृत को संसार में बाँटने का मन बना लिया. इस कार्य के लिए उन्होंने भिन्न–भिन्न स्थानों की यात्रा कर लोगों के अज्ञान को मिटाने का मन बनाया. उनकी इन यात्रायों को गुरु नानक की उदासियों के नाम से जाना जाता है अर्थात् संसार की ओर से उदासीन होकर प्रभु के प्रेम में मन लगाना और उस अमृत को लोगों में बांटना.

गुरु नानक की पहली यात्रा १४६६ से १५०६ ई. तक चली. यह यात्रा उत्तर और पूर्व भारत की ओर थी. इस यात्रा के दौरान उन्होंने कुरुक्षेत्र, दिल्ली, मथुरा, काशी, पटना, कलकत्ता, मणिपुर, असाम, उज्जैन, द्वारिका आदि स्थानों का भ्रमण किया. उनकी दूसरी उदासी १५१० से लेकर १५१५ ई. तक चली. यह यात्रा दक्षिण भारत की थी. तीसरी उदासी १५१५ से १५१७ ई. तक चली. इस दौरान उन्होंने कश्मीर से हिमालय पर्वत तक की यात्रा की. चौथी और अंतिम उदासी १५१७ से लेकर १५२१ ई. तक थी. इस यात्रा में उन्होंने मक्का, तुर्की, बगदाद, काबुल, पेशावर आदि की यात्रा की. इन यात्रायों के दौरान उन्होंने बड़े अनोखे, नाटकीय और तर्कपूर्ण ढंग से लोगों के मिथ्या भ्रमों, अंधविश्वासों, अज्ञान और ढोंग की पोल खोल कर लोगों को सत्मार्ग पर चलने का उपदेश दिया . चाहे उनका सिद्ध और योगियों से वार्तालाप हो , चाहे गंगा में स्नान करते समय सूर्य की ओर पानी न देकर अपने खेतों की ओर पाने देना हो, चाहे सुलतान पुर में नवाब और काजी के साथ नमाज पढ़ते समय नमाज न पढने की बात हो, चाहे जगन्नाथ पुरी में आरती की बात हो, हर स्थान पर उन्होंने अपने विलक्षण अंदाज में लोगों के प्रश्नों का उत्तर दिया और पाखंड को छोड़कर निर्मल ह्रदय से प्रभु की भक्ति करने और सदमार्ग पर चलने की शिक्षा दी. जब मक्के में काज़ी ने गुरु नानक से पूछा कि हिन्दू बड़ा या मुसलमान. उन्होंने कहा कि जो नेक काम करे वही बड़ा है. जब उनसे पूछा गया कि आप कौन हो? तब उनका जवाब था– पञ्च तत का पुतला, नानक मेरा नाम उनकी ऐसी बातों को सुन कर सब हतप्रभ रह जाते थे।

१५२१ ई. के बाद नानक परिवार समेत करतार पुर में बस गये. इस समय उनकी आयु ५० वर्ष के करीब थी. यहाँ रहकर वह खेती करने लगे और संगतों के लिए लंगर का प्रबंध करते. इसी स्थान पर इनकी मृत्यु २२ सितम्बर १५३६ ईस्वी में हुई. यह काल गुरु नानक देव के जीवन में स्थिरता का काल था. इसी समय उन्होंने 'आसा की वार' और अन्य लम्बी बाणियों की रचना की. गुरु नानक देव जी ने १६ रागों में अपनी वाणी की रचना की जिसमे जपु, पट्टी, राग आसा, सिद्ध गोष्ट, रामकली, दक्खिनी ओंकार, बारह माह तुखारी, आरती, आसा दी वार, मलार दी वार, माझ दी वार, सोदर, अष्टपदियां , सोहले , श्लोक आदि वाणियाँ शामिल हैं. अपनी वाणियों में उन्होंने साधारण लोक भाषा का ही प्रयोग किया है.

गुरु नानक की वाणी की सबसे प्रमुख विशेषता सच को कहने का अद्भुत साहस है. यह साहस ही था जिसके बल पर उन्होंने तत्कालीन राज प्रबंध को भी कोसा जो कि अन्य भक्तों की वाणी में प्रायः नहीं मिलता. उन्होंने तत्कालीन राजाओं, पंडितों, काजियों और जोगिओं के दुराचारों को अपने सच्ची वाणी के माध्यम से खुलकर कोसा. सच्च को दो टूक शब्दों में कहने के बारे में वह फुरमान करते हैं –

सच्च की बाणी नानक आखै, सच सुणाइसी सचु की बेला
गु/ग.स 935

राजायों के दुराचारों के सम्बन्ध में खुलकर बोलते है–

राजे सीह मुकद्म कुत्ते,
जाई जगाइन बैठे सुत्तेप् (गु.ग.स 1288)

बाबर जैसे राजायों के अत्याचार के सामने किसी की क्या मजाल थी कि कोई एक शब्द भी उसके खिलाफ बोल सके. पर यह गुरु नानक ही थे जिन्होंने बाबर बाणी में बाबर को खरी खोटी सुनायी और ईश्वर को भी उलाहना दिया. नानक लिखते हैं–

खुरासान खसमाना कीआ
हिन्दुस्तान डराइया
आपे दोस न देई करता
जमि करि मुग़ल चडाइया
एती मार पई कुर्लाणे
तै की दरदु न आइया (गु.ग.स.936)

तत्कालीन समाज कायरता को ओढ़े हुए था. ब्राह्मण और पंडित अपनी बोली, अपने पहनावे और संस्कारों को

छोड़ कर विदेशी आक्रमणकारियों के रंग में रंग चुके थे. इस बात का खुलासा गुरुनानक इस प्रकार करते है–

नील वस्त्र ले कपड़े पहिरे
तुरक पठाणी अमलु कीआ
नील वस्त्र पहिरि होवहि परवाणु
मलेछ धानु ले पूजहि पुराणु (गु.ग.स.470)

गुरुनानक देव ने बाहरी आडम्बरों और पाखंडी लोगो को भी चेताया है. उन्होंने तीर्थो आदि में जाकर समय बर्बाद करने को बाहरी दिखावा बताया . शरीर को धोने की बजाय मन की मैल उतरना ज्यादा महत्वपूर्ण है. सच्चा और पवित्र वही है जिसके अन्दर प्रभु का निवास है–

अंदरहु झूठे पैज बाहरि, दुनिया अंदरि फैलु
अठसठि तीरथ जे नावहि, उतरे नाही मैलु
सूचे एहि आखिअहि बहनि जि पिंडा धोइ
सूचे सेई नानका जिन मनि बसिया सोई (गु.ग.स.473)

जहाँ भी गुरु नानक को बुराई नज़र आयी वहीं उन्होंने उस पर चोट की चाहे वह काज़ी हो या पंडित दृ

कादी कूड़ बोलि मलु खाई
ब्राह्मण नावें जीआ घाई
जोगी जुगति न जाणे अन्धु
तीनों उजाड़े का बंधु (गु.ग.स.662)

गुरु नानक ने अपनी बाणी में सदाचार पर अत्याधिक बल दिया है. नेक कमाई करने की सलाह दी है. झूठ और फरेब को त्यागने की बात कही है. आचार और व्यवहार की शुद्धता ही उनकी बाणी का केन्द्रीय भाव है. जहाँ कबीर आदि क्रांतिकारी संतों ने धार्मिक आचार व्यवहार पर ही अपने को केन्द्रित रखा वहीँ गुरु नानक जीवन के हरेक पक्ष में सच, ईमानदारी , नेकी और सद व्यवहार की वकालत करते नज़र आते है. हक और हलाल की कमाई करने की सलाह देते हुए कहते हैं –

हकु पराया नानका उसु सूअर उसु गाइ
गुरु पीर हामा ता भरे जा मुरदारु न खाइ (गु.ग.स.141)

जैसा करोगे वैसा ही भरोगे, जैसा बोयोगे वैसा ही फल पायोगे. इस बात की ओर संकेत करते हुए नानक लिखते है–

कपड़ रूप सुहावणा
छडि दुनिया अंदरि जावणा
मंदा चंगा आपणा
आपे ही कीता पावणा (गु.ग.स.470)

उन्होंने तत्कालीन सिद्ध और जोगियों को संसार छोड़ जंगलों और पहाड़ों पर वास करने को मूर्खता और जग में रहते हुए गार्हस्थ्य धर्म का पालन करते हुए और किरत करते हुए प्रभु का नाम जपने की सलाह दी. वह जोगियों से कहते हैं–

जोगी बैसि रहहु दुविधा दुःख भागै
घरि घरि मागत लाज न लागै (गु.ग.स.903)

नेक कमाई करने का उपदेश नानक मलिक भागो को यूँ देते है–

जे रतु लगे कपड़े
जामा होई पलीतु
जे रतु पीवहि माणसा
तिन कउ निर्मल चीतु (गु.ग.स. 656)

अपनी बाणी में स्थान–स्थान पर गुरु नानक लोगों को उपदेश देते नज़र आते हैं ताकि व्यक्ति और समाज में सच का बोल बाला हो, झूठ की हार हो और लोगो को अच्छे बुरे की पहचान हो ताकि एक सुंदर, स्वस्थ और न्याय युक्त समाज का निर्माण किया जा सके. समाज को सुधारने की ललक उनकी बाणी में सर्वत्र व्याप्त है. सच के धारणी होने की बात करते हुए कहते हैं –

कहु नानक सच धिआइए
सुचि होवे ता सचु पाइए

अहंकार मनुष्य का सबसे बड़ा शत्रु है और मानव के आध्यत्मिक और सामाजिक विकास का सबसे बड़ा रोड़ा है. अहंकार को त्यागने की बात बार बार नानक करते हैं. वह हमें चेतावनी देते हुए सावधान करते हैं कि

हउमै दीरघु रोग है दारु भी इस माहि
किरपा करे जे आपणी तां गुरु का शब्द कमाहिं (गु.ग.स.466)

अपना आप खोकर ही प्रभु की भक्ति तथा अन्य सुखों को भोग जा सकता है–

आपु गवाई सेवा करे ता कुछ पाए माणु (गु.ग.स.561)

आज जीवन को सुखमय और सफल बनाने के लिए आर्ट ऑफ़ लिविंग जैसे केंद्र खुल गए हैं जो लोगो को शान्तमय जीवन जीने की कला सिखा रहे हैं. पर गुरु नानक ने शताब्दियों पहले आर्ट ऑफ़ लिविंग का सन्देश पूरी मानवता को दे दिया था. अगर उनकी बाणी का गहराई से अध्ययन किया जाये तो हम पाते हैं कि उनका प्रत्येक पद मानव को सुखी और शांतमयी जीवन व्यतीत करने का मन्त्र देता हुआ प्रतीत होता है. वह लिखते हैं कि हमें मूर्खों के साथ व्यर्थ की बातों में तर्क–वितर्क करके समय बर्बाद नहीं करना चाहिए. समझदारों को मूर्खों से दूरी बना कर रखनी चाहिए और किसी को भला–बुरा कहने से परहेज ही करना उचित है–

मंदा किसे ना आखीए पड़ी अखरु एहु बूझिये
मुरखे नाल न लुझिए (गु.ग.स.473)

और कहते हैं कि मूर्खों के साथ दोस्ती कभी रास नहीं आ सकती–

नालि इआने दोस्ती, कदे न आवे रासि

जीवन में सफलता प्राप्त करने और संबंधों को मधुर बनाने के लिए मृदु भाषी होने की अत्यंत आवश्यकता है–

मिठ्तु नीवी नानका गुण चंगिआइया ततु
नानक फिका बोलिऐ तनु मनु फिका होय.

अच्छे कर्मों की ओर गुरु ही हमें प्रेरित कर सकता है. गुरु के बिना अज्ञानता का अँधेरा कोई ओर दूर नहीं कर सकता.सच की राह पर चलने के लिए गुरु की बांह पकड़नी पड़ती है और उसका आशीर्वाद ग्रहण करना पड़ता है. गुरु के महत्त्व को नानक इस प्रकार रेखांकित करते है–

गियान अंजनु गुरि दीआ
अगियान अंधेर बिनासु

हरि किरपा ते संत भेटिआ
नानक मनि परगासु (गु.ग.स.293)

नानक नाम स्मरण पर भी अन्य समकालीन भक्तों की तरह पूरा बल देते है. अपने सांसारिक कार्य करते हुए भी हमें अपने अंतर्मन में कभी भी प्रभु का नाम नहीं भूलना चाहियें तभी भव सागर से पार हुआ जा सकता है—

नानक सचे नामु बिनु
किया टिक्का किया तगु (गु.ग.स.1017)

जपुजी साहिब की बाणी में प्रश्नोतरी शैली में जीवन को शांत और पवित्र बनाने का अचूक मन्त्र देते हैं—

कीव सचिआरा होइऐ किव कूड़े तुटे पालि
हुकमि रजाई चलणा नानक लिखिआ नालि (गु.ग.स.01)

उस युग में नारी का कोई मान सम्मान नहीं था और उसकी स्तिथि समाज मैं बड़ी ही दयनीय थी. कबीर दास आदि संत कवियों ने नारी को प्रभु प्राप्ति में बाधक माना है. मगर गुरु नानक नारी को अति सम्मान के साथ देखते हैं और उसकी भरपूर प्रशंसा करते हैं. वह लिखते हैं कि

भंडहु होवे दोस्ती भंडहु चले राहु
भंडु मुआ भंडु भालिए भंडहि होवै बंधान
सो किउ मंदा आखिए जितु जमहिं राजान
भंडहु भंड उपजे भंडे बाझु न कोई
नानक भंडे बाहरा एको सचा सोई (गु.ग.स.473)

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि गुरु नानक असाधारण प्रतिभा के धनी एक परम पुरुष थे. वह केवल धार्मिक उपदेशक ही नहीं बल्कि एक महान चिंतक, समाज सुधारक, दार्शनिक, साहसी व्यक्ति और जीवन मन्त्र देने वाले महान युग पुरुष थे जिन्होंने अपने मौलिक विचारों और असाधारण व्यक्तित्व से समाज की अज्ञानता को दूर करने का सार्थक प्रयास किया. आज के भौतिकवादी समय में जब एक बार फिर चारों तरफ कूड़ का साम्राज्य है और अनैतिकता का बोलबाला है ऐसे वातावरण में गुरु नानक की वाणीं की ओट लेकर हम जग की कालिमा से अपने को बचा सकते हैं.

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1 .घुम्मण, बिक्रम सिंह ,गुरु नानकः जीवन, चिंतन और कला, वारिस शाह फाउंडे शन, अमृतसर 2003
2. जग्गी रतन सिंह, गुरु नानक दी विचारधारा, नवयुग, दिल्ली,1969
3. जोध सिंह, गुरु नानक बाणी, नेशनल बुक ट्रस्ट इंडिया, दिल्ली
4. आदि गुरु ग्रन्थ साहिब, शिरोमणि गुरद्वारा प्रबंधक कमेटी, अमृतसर
5. तारन सिंह, गुरु नानक चिंतन ते कला, न्यू बुक कंपनी जालंधर, 1969
6. ब्रह्म जगदीश सिंह, गुरु नानक अते संत बाणी, रूही प्रकशन, अमृतसर 1996
7. तालिब, गुरबचन सिंह,गुरु नानकः व्यक्तित्व और विचार, गुरदास कपूर एंड सन्स, जालंधर,1970

Volume : 6 | Issue :49 | October-December2019 ISSN: 2349-1876 (Print) | ISSN : 2454-1826 (Online)

ਉੱਤਰ ਆਧੁਨਿਕ ਦੌਰ ਵਿਚ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ : ਨੈਤਿਕ ਪ੍ਰਵਚਨ

* ਡਾ. ਮਨੀਸ਼ਾ ਬੱਤਰਾ

* ਅਸਿਸਟੈਂਟ ਪ੍ਰੋਫ਼ੈਸਰ, ਪੰਜਾਬੀ ਵਿਭਾਗ, ਮੈਤ੍ਰੇਈ ਕਾਲਜ, ਦਿੱਲੀ ਯੂਨੀਵਰਸਿਟੀ

ਗਲੋਬਲਾਈਜ਼ੇਸ਼ਨ ਦੇ ਦੌਰ ਵਿਚ ਤਕਨੀਕੀ ਵਿਕਾਸ ਦੇ ਨਾਲ-ਨਾਲ ਮਨੁੱਖੀ ਮਾਨਸਿਕਤਾ ਵਿਚ ਵੀ ਬਹੁ-ਪੱਖੀ ਰੂਪਾਂਤਰਣ ਵਾਪਰ ਰਿਹਾ ਹੈ। ਮੁੱਢਲੇ ਸਮੇਂ ਤੋਂ ਉੱਤਰ ਆਧੁਨਿਕ ਦੌਰ ਤੱਕ ਮਨੁੱਖੀ-ਅਸਤਿੱਤਵ, ਵਿਹਾਰ, ਸੰਵੇਦਨਸ਼ੀਲਤਾ ਅਤੇ ਮਾਨਸਿਕਤਾ ਆਪਣੇ ਸਮਕਾਲੀ ਸਮਾਜਕ/ਸਭਿਆਚਾਰਕ ਪਹਿਲੂਆਂ ਤੋਂ ਪ੍ਰਭਾਵ ਕਬੂਲਦੀ ਰਹੀ ਹੈ। ਉਦਾਰੀਕਰਨ/ਨਿੱਜੀਕਰਨ ਦੀਆਂ ਨੀਤੀਆਂ ਨੇ ਵਿਅਕਤੀ ਨੂੰ ਵਿਭਿੰਨ ਰੂਪਾਂ ਵਿਚ ਆਪਣਾ ਗੁਲਾਮ ਬਣਾ ਲਿਆ ਹੈ। ਨਤੀਜੇ ਵਜੋਂ ਮਨੁੱਖੀ ਸੰਵੇਦਨਸ਼ੀਲਤਾ ਦਾ ਗ੍ਰਾਫ਼ ਦਾ ਨੀਵੇਂ ਪੱਧਰੀ ਮੁੜ ਰਿਹਾ ਹੈ। ਅਜੋਕਾ ਮਨੁੱਖ ਵਿਲਾਸਿਤਾ ਦੇ ਛਲਾਵੇ ਵਿਚ ਖਚਿਤ ਹੁੰਦਾ ਨੈਤਿਕ ਕਦਰਾਂ-ਕੀਮਤਾਂ ਨੂੰ ਗਵਾ ਚੁੱਕਿਆ ਹੈ। ਵਿਸ਼ਵੀਕਰਨ ਨੇ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਸਮਾਜਕ/ਸਭਿਆਚਾਰਕ/ਆਰਥਿਕ ਅਤੇ ਰਾਜਨੀਤਕ ਪੱਖੋਂ ਹਰ ਪ੍ਰਕਾਰ ਦੀ ਖੁੱਲ੍ਹ ਪ੍ਰਦਾਨ ਕੀਤੀ ਹੈ, ਜਿਸ ਕਰਕੇ ਮਨੁੱਖੀ ਵਿਹਾਰ, ਰੁਚੀਆਂ ਤੇ ਸੁਹਜ-ਸੁਆਦ ਵਿਚ ਪਰਿਵਰਤਨ ਵਾਪਰਿਆ ਹੈ। ਵਿਅਕਤੀਵਾਦੀ ਮਾਨਸਿਕਤਾ ਵਿਚਲੇ ਪਰਿਵਤਨ ਕਾਰਣ ਪੂੰਜੀਵਾਦੀ ਪਰਿਵੇਸ਼ ਦਾ ਪ੍ਰਚਾਰ ਤੇ ਪ੍ਰਸਾਰ ਆਪਣੀ ਪ੍ਰਚੰਡ ਅਵਸਥਾ ਵਿਚ ਹੈ। ਮਾਇਆ/ਪੂੰਜੀ ਮਨੁੱਖੀ ਧਰਮ-ਕਰਮ ਬਣ ਚੁੱਕਿਆ ਹੈ। ਭ੍ਰਿਸ਼ਟਾਚਾਰ, ਅਨੈਤਿਕ ਵਿਹਾਰ, ਅਸੰਵੇਦਨਸ਼ੀਲਤਾ ਅਤੇ ਅਯੋਗ ਆਰਥਿਕ ਸ੍ਰੋਤਾਂ ਨੇ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਗੁਮਰਾਹ ਕਰ ਦਿੱਤਾ ਹੈ।

ਵਿਸ਼ਵੀਕਰਨ ਦੀ ਇਸ ਭੌਤਿਕ ਖੇਡ ਅੰਦਰ ਅਜਿਹਾ ਮਹਿਸੂਸ ਹੁੰਦਾ ਹੈ ਕਿ ਉੱਤਰ-ਆਧੁਨਿਕ ਦੌਰ ਵਿਚ 550 ਸਾਲ ਪਹਿਲਾਂ ਜਨਮ ਲੈਣ ਵਾਲੇ 'ਨਾਨਕ' ਤੋਂ 'ਬਾਬਾ ਨਾਨਕ' ਅਤੇ 'ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ' ਤੱਕ ਦਾ ਸਫ਼ਰ ਤੈਅ ਕਰਨ ਵਾਲੇ 'ਗੁਰੁ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ' ਦੀਆਂ ਸਿੱਖਿਆਵਾਂ ਦੀ ਸਾਰਥਕਤਾ ਹੋਰ ਵੀ ਜ਼ਿਆਦਾ ਪ੍ਰਸੰਗਾਤਮਕ ਹੋ ਨਿਬੜਦੀਆਂ ਹਨ। ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਉੱਚੀ-ਸੁੱਚੀ ਤੇ ਬਹੁ-ਪੱਖੀ ਸ਼ਖ਼ਸੀਅਤ ਦੇ ਮਾਲਕ ਸਨ। ਆਪ ਮਹਾਨ ਚਿੰਤਕ, ਸਮਾਜਕ ਕਦਰਾਂ-ਕੀਮਤਾਂ ਦੇ ਨਿਰਮਾਣ ਕਰਤਾ, ਸੁਹਿਰਦ ਉਪਦੇਸ਼ਕ, ਅੱਦੁਤੀ ਰਹੱਸਵਾਦੀ, ਅਣਥੱਕ ਸੈਲਾਨੀ, ਸ਼ਾਇਰ ਅਤੇ ਅਧਿਆਤਮਕ ਗੁਰੂ ਸਨ। ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬਾਨ ਦੁਆਰਾ ਪੇਸ਼ ਗਿਆਨ ਆਪਣੇ ਆਪ ਵਿਚ ਸਾਰਥਕ ਉਪਦੇਸ਼ ਬਣਦੇ ਚਲੇ ਗਏ ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਦੀ ਸਾਰਥਕਤਾ ਨੂੰ ਉੱਤਰ-ਆਧੁਨਿਕ ਸਮਿਆਂ ਵਿਚ ਵੀ ਉਸੀ ਰੂਪ ਵਿਚ ਸਵੀਕਾਰ ਕੀਤਾ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਆਪ ਜੀ ਨੇ ਆਪਣੇ ਸਮਕਾਲੀ ਸਮਾਜ/ਸਭਿਆਚਾਰ ਨਾਲ ਸੰਵਾਦ ਰਚਾਉਂਦਿਆਂ ਪ੍ਰਾਪਤ ਤਜਰਬਿਆਂ ਨੂੰ ਆਪਣੇ ਵਿਚਾਰਾਂ ਰਾਹੀਂ ਮਨੁੱਖੀ ਚੇਤਨਾ ਦਾ ਅੰਗ ਬਣਾਇਆ। ਨਤੀਜੇ ਵਜੋਂ ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਦੁਆਰਾ ਰਚਿਤ ਬਾਣੀ ਦੇ ਵਿਚਾਰਧਾਰਕ ਪਰਿਪੇਖ ਨੂੰ, ਸਮਕਾਲੀ ਦੌਰ ਦੇ ਮਸਲਿਆਂ ਦੇ ਸੰਦਰਭ ਵਿਚ ਉਜਾਗਰ ਕਰਕੇ ਇਸ ਵਿਚਲੀ ਮਨੋਵਿਗਿਆਨਕ-ਦ੍ਰਿਸ਼ਟੀ ਨੂੰ ਸਹਿਜੇ ਹੀ ਸਮਝਿਆ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ। ਆਪ ਦੁਆਰਾ ਉਚਾਰਿਤ ਹਰ ਸ਼ਬਦ ਆਪਣੇ ਆਪ ਵਿਚ ਸਾਰਥਕ ਗ੍ਰੰਥ ਸਥਾਪਤ ਹੋ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਹਰ ਸ਼ਬਦ ਵਿਚਲੀ ਵਿਚਾਰਾਧਾਰਾ ਦਾ ਨੈਤਿਕ ਸਰੋਕਾਰ, ਮਨੁੱਖੀ ਭਲਾਈ ਲਈ ਕਾਰਜਸ਼ੀਲ ਰਿਹਾ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਕਦੇ ਵੀ ਨਿੱਜ ਨੂੰ ਸ੍ਰੇਸ਼ਟ ਨਹੀਂ ਸਮਝਿਆ, ਸਗੋਂ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੁਆਰਾ ਕੀਤਾ ਹਰ ਕਾਰਜ ਮਨੁੱਖੀ ਹਿੱਤਾਂ ਦੀ ਭਵਿੱਖਮੁਖੀ ਤਸਵੀਰ ਨੂੰ ਉਜਾਗਰ ਕਰਦਾ ਹੈ।

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਨੇ ਸਭ ਤੋਂ ਪਹਿਲਾਂ ਸਮਾਵੇਸ਼ੀ ਵਾਤਾਵਰਣ ਦੀ ਸਿਰਜਣਾ ਕੀਤੀ, ਕਿਉਂ ਜੋ ਉਸ ਸਮੇਂ ਵੀ ਸਾਡਾ ਸਮਾਜ ਜਾਤ-ਪਾਤ, ਵਰਗ-ਵੰਡ, ਬ੍ਰਾਹਮਣ-ਸ਼ੂਦਰ ਅਤੇ ਉੱਚੇ-ਨੀਵੇਂ ਧਰਮ ਦੀ ਵਰਗ ਵੰਡ ਤੋਂ ਗੁਜ਼ਰ ਰਿਹਾ ਸੀ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੇ ਜਨਮ ਸਮੇਂ ਧਰਮ ਦੋ ਹਿੱਸਿਆਂ ਵਿਚ ਵੰਡਿਆ ਹੋਇਆ ਸੀ ਅਤੇ ਹਰ ਧਰਮ ਆਪਣੇ ਆਪ ਨੂੰ ਸਰਵੋਤਮ ਸਾਬਤ ਕਰਨ ਵਿਚ ਲੀਨ ਸੀ। ਇਹ ਤੱਥ ਪੂਰੀ ਤਰ੍ਹਾਂ ਨਿਰਧਾਰਤ ਹੈ ਕਿ ਧਰਮ ਨੇ ਹਮੇਸ਼ਾ ਤੋਂ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਬਹੁ-ਗਿਣਤੀ (Majority) ਅਤੇ ਘੱਟ-ਗਿਣਤੀ (Minorities) ਵਰਗਾਂ ਵਿਚ ਵੰਡਿਆ ਹੈ, ਜਿਸ ਕਾਰਣ ਘੱਟ-ਗਿਣਤੀ ਵਰਗ ਹਮੇਸ਼ਾਂ ਅਤਿਆਚਾਰ ਸਹਿੰਦਾ ਰਿਹਾ ਹੈ। ਹਰ ਬਹੁ-ਗਿਣਤੀ ਧਰਮ ਦੇ ਆਗੂ ਆਪਣੇ ਆਪ ਨੂੰ ਉੱਤਮ ਤੇ ਆਪਣੇ ਤੋਂ ਇਲਾਵਾ ਹਰ ਵਿਅਕਤੀ/ਧਰਮ ਨੂੰ ਨੀਵਾਂ ਮੰਨਦੇ ਰਹੇ ਹਨ। ਨਤੀਜੇ ਵਜੋਂ ਸਮਾਜ ਵਿਚਲੇ ਲੋਕਾਂ ਵਿਚ ਮਾਨਸਿਕ ਵਿਕਾਰ ਦੀ ਉੱਤਪਤੀ ਹੋਣ ਲੱਗ ਪਈ। ਤਨਾਉ ਦੇ ਵਿਕਾਰ ਵਿਚ ਘਿਰਿਆ ਮਨੁੱਖ ਉੱਤਮਤਾ (Superiority) ਤੇ ਆਤਮ-ਹੀਣਤਾ (Inferiority) ਵਰਗੀ ਗੁੰਝਲਦਾਰ ਮਨੋਸਥਿਤੀ ਵਿਚੋਂ ਗੁਜ਼ਰ ਰਿਹਾ ਸੀ।

ਅਜਿਹੇ ਵੇਲੇ ਸੁਲਤਾਨਪੁਰ ਲੋਧੀ ਦੀ ਵੇਈਂ ਨਦੀ ਵਾਲੀ ਘਟਨਾ ਦੁਆਰਾ ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਨੇ 'ਨਾ ਕੋ ਹਿੰਦੂ ਨਾ ਮੁਸਲਮਾਨ' ਅਰਥਾਤ ਹਰ ਵਿਅਕਤੀ ਸਮਾਨ ਅਧਿਕਾਰ ਰਖਦਾ ਹੈ ਦਾ ਵਿਚਾਰ ਅਭਿਵਿਅਕਤ ਕੀਤਾ। ਇਹ ਬਚਨ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੀ ਹਰ ਉਦਾਸੀ ਵੇਲੇ ਕੇਂਦਰੀ ਸੰਦੇਸ਼ ਬਣ ਗਿਆ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੀਆਂ ਸਿੱਖਿਆਵਾਂ ਦਾ ਆਧਾਰ ਰੰਗ/ਜਾਤੀ/ਧਰਮ/ਸੰਗਠਨ ਦੇ ਦਾਇਰਿਆਂ ਤੋਂ ਪਾਰ ਮਨੁੱਖਤਾ ਦਾ ਸੁਨੇਹਾ ਦਿੰਦਾ ਹੈ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੀਆਂ ਨਜ਼ਰਾਂ ਵਿਚ ਮਨੁੱਖ ਦੀਆਂ ਦੋ ਕਿਸਮਾਂ ਹਨ- ਗੁਰਮੁਖ (ਪਰਮਾਤਮਾ ਨੂੰ ਪਿਆਰ ਕਰਨ ਵਾਲੇ) ਤੇ ਮਨਮੁਖ (ਸਵੈ ਨੂੰ ਮਾਣ ਦੇਣ ਵਾਲੇ)। ਉਨ੍ਹਾਂ ਅਨੁਸਾਰ ਇਕ ਗੁਰਮੁੱਖ ਵਿਅਕਤੀ ਹੀ ਆਪਣੇ ਆਪ ਨੂੰ ਪਰਮਾਤਮਾ ਨੂੰ ਸਮਰਪਿਤ ਕਰਦਾ ਹੈ, ਉਹ ਸੱਚਾਈ ਦੇ ਰਾਹ ਤੇ ਤੁਰਦਿਆਂ ਮਨੁੱਖਤਾ ਦੀ ਭਲਾਈ ਲਈ ਕੰਮ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬਾਨ ਅਨੁਸਾਰ ਪਰਮਾਤਮਾ ਦੀਆਂ ਨਜ਼ਰਾਂ ਵਿਚ ਹਰ ਵਿਅਕਤੀ ਸਮਾਨ ਹੈ ਤੇ ਕੁਦਰਤ ਦੇ ਕਾਨੂੰਨ ਮੁਤਾਬਕ ਹਰ ਕਿਸੇ ਕੋਲ ਇਕੋ ਜਿਹੇ ਅਧਿਕਾਰ ਹਨ। ਗੁਰੂ ਜੀ ਦੁਆਰਾ ਹਰ ਵਿਅਕਤੀ ਨੂੰ ਇਕ ਸਮਾਨ ਸਮਝਣਾ ਕੋਈ ਸਾਧਾਰਨ ਬਚਨ ਨਹੀਂ ਸੀ, ਸਗੋਂ ਆਪਣੇ-ਆਪ ਵਿਚ ਇਹ ਇਕ ਸੰਪੂਰਣ ਫ਼ਲਸਫ਼ਾ ਸੀ।

ਇਸ ਪ੍ਰਕਾਰ ਇਹ ਤੱਥ ਆਪਣੇ ਆਪ ਵਿਚ ਇਸ ਗੱਲ ਦੀ ਪੁਸ਼ਟੀ ਕਰਦਾ ਹੈ ਕਿ ਉਸ ਸਮੇਂ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ 'ਸਮਾਨ ਮਨੁੱਖੀ ਅਧਿਕਾਰ' (Human Rights for All) ਦੇ ਵਿਚਾਰ ਦੀ

ਨੀਂਹ ਰੱਖੀ। ਜਿਸ ਦੇ ਅੰਤਰਗਤ ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਧਾਰਮਕ ਇਕਸਾਰਤਾ ਅਰਥਾਤ 'ਪਰਮਾਤਮਾ ਇਕ ਹੈ' ਦਾ ਸੁਝਾਅ ਪੇਸ਼ ਕੀਤਾ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦੀ ਮੱਕਾ-ਮਦੀਨਾ ਦੀ ਉਦਾਸੀ ਵੀ ਕੁਝ ਇਸ ਪ੍ਰਕਾਰ ਦੇ ਸੰਕਲਪ ਨੂੰ ਉਭਾਰਦੀ ਹੈ, ਜਿੱਥੇ ਉਹ ਕਾਜ਼ੀ ਨੂੰ ਇਹ ਕਹਿੰਦੇ ਹਨ ਕਿ ਧਰਮ ਕੋਈ ਵੀ ਵੱਡਾ-ਛੋਟਾ ਨਹੀਂ ਹੁੰਦਾ, ਸਗੋਂ ਉਸ ਧਰਮ 'ਤੇ ਵਿਸ਼ਵਾਸ ਕਰਨ ਵਾਲੇ ਲੋਕ, ਉਸ ਧਰਮ ਨੂੰ ਵੱਡਾ-ਛੋਟਾ ਬਣਾਉਂਦੇ ਹਨ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਇਕੋ ਸਮੇਂ ਦੋਹਾਂ ਧਰਮਾਂ ਜਾਂ ਉਸ ਤੋਂ ਵੀ ਜ਼ਿਆਦਾ ਧਰਮਾਂ (Religious Pluralism) ਦੀ ਵਿਆਖਿਆ ਕੀਤੀ। ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬਾਨ ਅਨੁਸਾਰ ਧਰਮ ਵਿਚਲੀ ਵਿਚਾਰਧਾਰਾ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਮਨੁੱਖਤਾ ਦਾ ਸਿੱਧਾਂਤ ਸਿਖਾਉਂਦੀ ਹੈ ਨਾ ਕਿ ਉਸ ਨੂੰ ਆਪਣੇ ਵਰਗੇ ਲੋਕਾਂ ਤੋਂ ਅੱਡ ਕਰਦੀ ਹੈ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਅਨੁਸਾਰ 'ਮਨੁੱਖੀ-ਕਰਮ' ਵਿਅਕਤੀ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ ਨੂੰ ਸਰਵੋਤਮ ਸਾਬਿਤ ਕਰਦੇ ਹਨ।

ਕਰਮ ਨੂੰ ਸਰਵੋਤਮ ਧਰਮ ਦਾ ਨਾਂ ਦਿੰਦੇ ਹੋਏ ਆਪ ਜੀ ਨੇ 'ਕਿਰਤ ਕਰਨੀ, ਵੰਡ ਛੱਕਣਾ, ਨਾਮ ਜਪਣਾ' ਵਰਗੇ ਨੈਤਿਕ ਸੰਕਲਪਾਂ ਨੂੰ ਆਪਣੇ ਉਪਦੇਸ਼ਾਂ ਦੇ ਮਾਧਿਅਮ ਰਾਹੀਂ ਜਨ-ਸਾਧਾਰਣ ਤੱਕ ਪਹੁੰਚਾਇਆ। ਕਿਰਤ ਸੰਬੰਧੀ ਆਪ ਜੀ ਦੇ ਵਿਚਾਰ ਬਿਲਕੁਲ ਸਪਸ਼ਟ ਸਨ। ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਅਨੁਸਾਰ ਮਨੁੱਖੀ ਸਰੀਰ ਉਸ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਦੀ ਸਿਰਜਣਾ ਹੈ, ਜਦੋਂ ਵਿਅਕਤੀ ਜਨਮ ਲੈਂਦਾ ਹੈ ਤਾਂ ਉਸ ਵਿਚ ਨੈਤਿਕ ਸੰਕਲਪ ਪਹਿਲਾਂ ਤੋਂ ਹੀ ਸ਼ਾਮਿਲ ਹੁੰਦੇ ਹਨ ਜਿਵੇਂ ਕਿ; 'ਇਹ ਜੱਗ ਸੱਚੇ ਕੀ ਹੈ ਕੋਠਰੀ ਸੱਚੇ ਕਾ ਵਿਚ ਵਾਸ'। ਉਨ੍ਹਾਂ ਅਨੁਸਾਰ ਮਨੁੱਖੀ ਸਰੀਰ ਦੇ ਸੰਭਾਲ ਲਈ, ਉਸ ਦੀਆਂ ਸਮਾਜਕ/ਆਰਥਕ ਲੋੜਾਂ ਨੂੰ ਪੂਰਾ ਕਰਨਾ ਸਾਡਾ ਨੈਤਿਕ ਕਰਮ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਨੇ ਵਿਅਕਤੀਗਤ ਮਾਨਸਿਕਤਾ ਨੂੰ ਸਮਝਦੇ ਹੋਏ ਉਸ ਦੇ ਨੈਤਿਕ ਕਰਮਾਂ ਨੂੰ ਮਨੁੱਖੀ ਕਿਰਤ ਨਾਲ ਜੋੜ ਕੇ ਪੇਸ਼ ਕੀਤਾ ਹੈ। ਉਹ ਹਮੇਸ਼ਾ 'ਸੱਚ ਵਣਜ' ਦੇ ਹਾਮੀ ਸਨ ਸੋ, ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੀਆਂ ਨਜ਼ਰਾਂ ਵਿਚ ਕੋਈ ਕਿਰਤ ਮਾੜੀ ਨਹੀਂ ਸੀ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਅਨੁਸਾਰ ਮਨੁੱਖੀ ਕਿਰਤ ਭਾਵੇਂ ਕੁਝ ਵੀ ਹੋਵੇ ਉਸ ਦਾ 'ਵਣਜ' ਸੱਚ ਉੱਤੇ ਆਧਾਰਤ ਹੋਣਾ ਚਾਹੀਦਾ ਹੈ। 'ਕਿਰਤ' ਦਾ ਸੰਕਲਪ 'ਵਿਗਾਸ' ਨਾਲ ਸੰਬੰਧਿਤ ਹੈ। ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਉਹ ਹੀ ਕਿੱਤਾ ਅਪਣਾਉਣਾ ਚਾਹੀਦਾ ਹੈ ਜੋ 'ਵਿਗਾਸ' ਪ੍ਰਦਾਨ ਕਰਦਾ ਹੋਵੇ। ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਨੇ ਮਨੁੱਖੀ ਮਨ ਵਿਚ ਅਯਾਸ਼ੀ ਭਾਵ ਪੈਦਾ ਕਰਨ ਵਾਲੀ, ਹੰਕਾਰ ਤੇ ਵਿਤਕਰਾ ਪੈਦਾ ਕਰਨ ਵਾਲੀ ਅਤੇ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਆਤਮਕ ਤੌਰ 'ਤੇ ਖੁਸ਼ਹਾਲ ਹੋਣ ਵਿਚ ਰੁਕਾਵਟ ਪੈਦਾ ਕਰਨ ਵਾਲੀ ਅਨੈਤਿਕ ਕਿਰਤ ਨੂੰ ਸੰਪੂਰਣ ਰੂਪ ਵਿਚ ਅਸਵੀਕਾਰ ਕੀਤਾ ਹੈ। ਇੱਥੇ ਇਕ ਗੱਲ ਧਿਆਨ ਦੀ ਮੰਗ ਕਰਦੀ ਹੈ ਕਿ ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ 'ਕਰਮ' ਨੂੰ 'ਨੈਤਿਕਤਾ' ਨਾਲ ਜੋੜ ਕੇ ਦੇਖਦੇ ਹਨ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਅਨੁਸਾਰ ਨੈਤਿਕਤਾ ਅਧਿਆਤਮਕ ਜੀਵਨ ਦੇ ਨਿਰਮਾਣਕਾਰੀ ਤੱਤਾਂ ਦਾ ਆਧਾਰ ਹੁੰਦੀ ਹੈ। ਜੋ ਵਿਅਕਤੀ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਵਿਚ ਵਿਸ਼ਵਾਸ ਰੱਖਦਾ ਹੈ, ਉਹ ਆਪਣੇ ਜੀਵਨ ਵਿਚ ਨੈਤਿਕ ਕਦਰਾਂ-ਕੀਮਤਾਂ ਦੀ ਪਾਲਣਾ ਨੂੰ ਆਪਣਾ ਪਰਮ ਧਰਮ ਮੰਨਦਾ ਹੈ। ਇਹ ਨੈਤਿਕਤਾ ਹੀ ਹੁੰਦੀ ਹੈ ਜੋ ਮਨੁੱਖ ਵਿਚ ਚੰਗੇ ਵਿਹਾਰਾਂ ਦਾ ਨਿਰਮਾਣ ਕਰਦੀ ਹੈ ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਦੇ ਆਧਾਰ 'ਤੇ ਮਨੁੱਖੀ ਸ਼ਖ਼ਸੀਅਤ ਦਾ ਵਿਕਾਸ ਸੰਭਵ ਹੈ।

ਜੇਕਰ ਅਸੀਂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਵਿਚਲੇ ਵਿਦਿਅਕ ਪ੍ਰਵਚਨ ਦੀ ਉਸਾਰੀ ਨੂੰ ਧਿਆਨ ਵਿਚ ਰਖੀਏ ਤਾਂ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਵਿਚਲਾ ਹਰ ਪੱਖ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਨੈਤਿਕ/ਸਮਾਜਕ ਸਰੋਕਾਰਾਂ ਨਾਲ ਜੋੜਦਾ ਪ੍ਰਤੀਤ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬਾਨ ਇਕ ਅਧਿਆਤਮਕ ਗੁਰੂ ਦੇ ਨਾਲ-ਨਾਲ ਪ੍ਰਕਿਰਤੀ ਵਿਚ ਲੁੱਕੇ ਅਨੁਭਵਾਂ ਵਿਚੋਂ ਉਪਜੇ ਸੰਦੇਸ਼ ਨੂੰ ਮਨੁੱਖ ਤੱਕ ਪਹੁੰਚਾਉਂਦੇ ਹਨ। ਪ੍ਰਕਿਰਤੀ ਨਾਲ ਸੰਬੰਧਿਤ ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਮਹੱਤਪੂਰਣ ਪੱਖਾਂ ਦੀ ਗੱਲ ਅੱਜ ਪੂਰੇ ਵਿਸ਼ਵ ਦੇ ਮੰਚ ਤੋਂ Preserve the environment sources ਜਾਂ Save the earth/Environment ਦੇ ਰੂਪ ਵਿਚ ਕੀਤੀ ਜਾ ਰਹੀ ਹੈ, ਇਸ ਗੱਲ ਨੂੰ ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਸ਼ਤਾਬਦੀਆਂ ਪਹਿਲਾਂ ਹੀ ਆਪਣੀ ਸ਼ਾਹਕਾਰ ਰਚਨਾ *'ਜਪੁਜੀ ਸਾਹਿਬ'* ਦੇ ਅੰਤਲੇ ਸਲੋਕ ਵਿਚ ਪਵਨ ਨੂੰ ਗੁਰੂ, ਪਾਣੀ ਨੂੰ ਪਿਤਾ, ਧਰਤੀ ਨੂੰ ਮਾਤਾ, ਦਿਨ-ਰਾਤ ਨੂੰ ਦਾਈ ਅਤੇ ਖਿਡਾਵਾ ਆਖ ਦੇ ਸੰਪੂਰਣ ਰੂਪ ਵਿਚ ਜਨ-ਸਾਧਾਰਣ ਤੱਕ ਸੰਚਾਰਿਤ ਕਰ ਚੁੱਕੇ ਹਨ:-

ਪਵਣੁ ਗੁਰੂ ਪਾਣੀ ਪਿਤਾ ਮਾਤਾ ਧਰਤਿ ਮਹੁਤ ।।
ਦਿਵਸੁ ਰਾਤਿ ਦੁਇ ਦਾਈ ਦਾਇਆ ਖੇਲੈ ਸਗਲ ਜਗਤੁ ।।

ਇਨ੍ਹਾਂ ਸਤਰਾਂ ਤੋਂ ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਦਾ ਭਵਿੱਖ ਜਾਂ ਆਪਣੀ ਪ੍ਰਕਿਰਤੀ ਪ੍ਰਤੀ ਚੇਨਤੰਤਾ ਦਾ ਭਾਵ ਸਪਸ਼ਟ ਹੋ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਆਪ ਨੇ ਹਰ ਪੱਖੋਂ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਆਪਣੀਆਂ ਸਮਕਾਲੀ ਸਥਿਤੀਆਂ ਦੇ ਨਾਲ-ਨਾਲ ਭਵਿੱਖ ਵਿਚ ਆਉਣ ਵਾਲੀ ਚੇਤਾਵਨੀਆਂ ਤੋਂ ਪਹਿਲਾਂ ਹੀ ਅਵਗਤ ਕਰਾ ਦਿੱਤਾ ਤਾਂਕਿ ਲੋਕ ਆਪਣੇ ਪ੍ਰਕਿਰਤਿਕ ਸੰਸਾਧਨਾਂ ਦੀ ਸੰਭਾਲ ਵੱਲ ਸੁਚੇਤ ਹੋ ਜਾਣ। ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਦੁਆਰਾ ਰਚਿਤ ਬਾਣੀ ਵਿਚਲਾ 'ਪ੍ਰਕਿਰਤੀ ਸੁੱਰਖਿਆ' ਸੰਬੰਧੀ ਸੰਕਲਪ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਪ੍ਰਕਿਰਤੀ ਨਾਲ ਮਿਲ ਕੇ ਚਲਣ ਅਤੇ ਪ੍ਰਕਿਰਤੀ ਪ੍ਰਤੀ ਸਤਿਕਾਰ ਦਾ ਵਿਹਾਰ ਅਪਨਾਉਣ ਲਈ ਪ੍ਰੇਰਿਤ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਕਿਸੇ ਵੀ ਸੁਚੇਤ ਵਾਤਾਵਰਣ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ੱਗ (Environmentalist) ਦੀ ਤਰ੍ਹਾਂ ਨਾਨਕ ਸਾਹਿਬ ਨੇ ਆਪਣੀ ਬਾਣੀ ਵਿਚ ਸਮੁੱਚੀ ਸ੍ਰਿਸ਼ਟੀ ਨੂੰ ਚਿਤਰਿਆ ਹੈ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਅਨੁਸਾਰ ਅਕਾਲ-ਪੁਰਖ ਦੀ ਹੋਂਦ ਪ੍ਰਕਿਰਤੀ ਦੇ ਜ਼ੱਰੇ-ਜ਼ੱਰੇ ਵਿਚ ਮੌਜੂਦ ਹੈ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਅਨੁਸਾਰ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਦੀ ਇਸ ਅਸੀਮ, ਅੰਨਤ ਤੇ ਅਲਖ਼ ਦ੍ਰਿਸ਼ਟਮਾਨਤਾ ਦਾ ਅੰਤ ਨਹੀਂ ਪਾਇਆ ਜਾ ਸਕਦਾ:

ਬਲਿਹਾਰੀ ਕੁਦਰਤਿ ਵਸਿਆ॥
ਤੇਰਾ ਅੰਤੁ ਨਾ ਜਾਈ ਲਖਿਆ॥

ਕੁਦਰਤੀ ਸ੍ਰੋਤਾਂ ਵਿਚੋਂ ਸਭ ਤੋਂ ਬਹੁ-ਮੁੱਲੇ ਪਦਾਰਥ ਬਾਰੇ ਵਿਚਾਰ ਪੇਸ਼ ਕਰਦਿਆਂ ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਨੇ *'ਆਸਾ ਦੀ ਵਾਰ'* ਦੀ ਰਚਨਾ ਕਰਨ ਸਮੇਂ ਪਾਣੀ ਨੂੰ ਜੀਵਨ ਦਾ ਮੌਲਿਕ ਆਧਾਰ ਦੱਸਿਆ। ਇਸ ਗੱਲ ਤੋਂ ਆਪਣੇ ਆਪ ਹੀ ਇਹ ਸਪਸ਼ਟ ਹੋ ਜਾਂਦਾ ਹੈ ਕਿ ਉਨ੍ਹਾਂ ਅਨੁਸਾਰ ਪ੍ਰਕਿਰਤੀ ਤੋਂ ਉਪਜੀ ਹਰ ਸ਼ੈਅ ਅੰਦਰ ਪ੍ਰਾਣਦਾਇਕ ਅੰਸ਼ ਮੌਜੂਦ ਰਹਿੰਦੇ ਹਨ ਜੋ ਜੀਵਨ ਚੱਕਰ ਦੇ ਹਰ ਪਹਿਲੂ ਨੂੰ ਆਪੋ-ਆਪਣੇ ਤਰੀਕੇ ਨਾਲ ਪ੍ਰਭਾਵਿਤ ਕਰਦੇ ਹਨ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੁਆਰਾ ਪੇਸ਼ ਦਾਰਸ਼ਨਿਕ ਵਿਚਾਰਧਾਰਾ ਹਰ ਪੱਖੋਂ ਇਸ ਗੱਲ ਦੀ ਗਵਾਹੀ ਭਰਦੀ ਹੈ ਕਿ; ਹਰ ਜੀਵ/ਵਿਅਕਤੀ ਦਾ ਆਪਣਾ-ਆਪਣਾ ਅਸਤਿੱਤਵ ਹੁੰਦਾ ਹੈ ਜੋ ਕਿ ਸੰਸਾਰਕ ਸੰਰਚਨਾ ਵਿਚ ਮਹੱਤਵਪੂਰਣ ਭੂਮਿਕਾ ਅਦਾ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਇਸ ਲਈ ਕਿਸੇ ਨੂੰ ਉੱਚਾ-ਨੀਵਾਂ ਸਮਝਣਾ ਅਰਥਹੀਨ ਹੈ।

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਦੇ ਨੈਤਿਕ ਪ੍ਰਵਚਨ ਵਿਚਲੀ ਦਾਰਸ਼ਨਿਕਤਾ ਨੇ ਜਨ-ਸਧਾਰਣ ਦੀਆਂ ਨਜ਼ਰਾਂ ਵਿਚ ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੂੰ ਇਕ ਅਧਿਆਪਕ/ਗੁਰੂ/ਫਿਲਾਸਫਰ ਦੇ ਤੌਰ 'ਤੇ ਸਥਾਪਤ ਕਰ ਦਿੱਤਾ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੂੰ ਉੱਤਰ-ਆਧੁਨਿਕ ਦੌਰ ਦਾ ਵਿਚਾਰਕ ਕਹਿਣਾ ਕਿਸੇ ਵੀ ਪ੍ਰਕਾਰ ਦੀ ਅਤਕਥਨੀ ਨਹੀਂ ਹੋਵੇਗੀ। ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਸਮਾਜਕ/ਨੈਤਿਕ ਸਿੱਖਿਆ ਦੇ ਖੇਤਰ ਵਿਚ ਕਈ ਵੱਡਮੁੱਲੇ ਪ੍ਰਤੀਮਾਨ ਸਥਾਪਤ ਕੀਤੇ ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਨੂੰ ਅਜੋਕਾ ਮਨੁੱਖ ਨਿਰੰਤਰ ਰੂਪ ਆਪਣੀ ਜ਼ਿੰਦਗੀ ਦਾ ਹਿੱਸਾ ਬਣਾਉਂਦਾ ਜਾ ਰਿਹਾ ਹੈ। ਜੇਕਰ ਧਿਆਨ ਨਾਲ ਦੇਖਿਆ ਜਾਵੇਂ ਤਾਂ ਅਮਰੀਕਾ ਦੇ ਰਾਸ਼ਟਰਪਤੀ ਇਬਰਾਹਿੰਮ ਲਿੰਕਨ (1809-1865) ਦੁਆਰਾ ਪੇਸ਼ ਲੋਕਤਾਂਤਰਿਕ ਪਰਿਭਾਸ਼ਾ Of the people, by the people, for the people ਨੂੰ ਅੱਜ ਤੋਂ 500 ਸਾਲ ਪਹਿਲਾਂ ਹੀ ਸਥਾਪਤ ਕਰ ਦਿੱਤਾ ਗਿਆ ਸੀ। ਜਦੋਂ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਉਨ੍ਹਾਂ ਸਮਿਆਂ ਵਿਚ ਹੀ ਜਨ-ਸਾਧਾਰਣ ਦੇ ਮੌਲਿਕ ਅਧਿਕਾਰਾਂ ਨੂੰ ਧਿਆਨ ਵਿਚ ਰਖਦਿਆਂ ਇਕ ਨਵੀਨ ਧਰਮ ਦੀ ਸਿਰਜਣਾ ਕੀਤੀ। ਇਸ ਧਰਮ ਦਾ ਆਧਾਰ ਲੋਕਾਂ ਦੀ ਆਪਣੀ ਵਿਚਾਰਧਾਰਕ ਪਰੰਪਰਾ ਅਨੁਸਾਰ ਉਨ੍ਹਾਂ ਹੀ ਦੁਆਰਾ ਰਚਿਤ ਲੋਕ ਸਾਹਿਤ, ਨੂੰ ਲੋਕ ਸੰਗੀਤ ਦੀ ਤਰਜ਼ ਤੇ ਲੋਕ ਧਰਮ ਦੇ ਰੂਪ ਪੇਸ਼ ਕੀਤਾ ਗਿਆ। ਇਸ ਧਰਮ ਦੀ ਬੁਨਿਆਦ ਮਨੁੱਖੀ ਜੀਵਨ ਨਾਲ ਸੰਬੰਧਿਤ ਪੰਜ ਨਵੇਂ ਆਯਾਮਾਂ

ਮਨੁੱਖ, ਧਰਮ, ਸੱਚ, ਸਿੱਖਿਆ ਤੇ ਕੁਦਰਤ ਦੇ ਸਮੀਕਰਣ ਰਾਹੀਂ ਪੇਸ਼ ਹੁੰਦੀ ਹੈ ਤੇ ਇਸ ਨਵੀਨ ਧਾਰਮਮਿਕ ਸਮੀਕਰਣ ਨੂੰ ਅਸੀਂ ਸਭ *'ਜਪੁਜੀ ਸਾਹਿਬ'* ਦੇ ਰੂਪ ਵਿਚ ਸਵੀਕਾਰ ਕਰਦੇ ਆ ਰਹੇ ਹਾਂ।

ਉੱਤਰ-ਆਧੁਨਿਕ ਦੌਰ ਅੰਤਰਗਤ ਮੌਲਿਕ ਅਧਿਕਾਰਾਂ ਤੋਂ ਬਾਅਦ, ਨਾਰੀਵਾਦੀ ਪਰਿਪੇਖ ਅਧੀਨ ਔਰਤਾਂ ਪ੍ਰਤੀ ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਲਿੰਗਕ ਅਧਿਕਾਰਾਂ/ਸਮਾਨਤਾਵਾਂ ਦੀ ਗੱਲ ਅਸੀਂ ਅੱਜ ਕਰਦੇ ਪ੍ਰਤੀਤ ਹੁੰਦੇ ਹਾਂ, ਉਸ ਦੀ ਸਥਾਪਨਾ ਸਦੀਆਂ ਪਹਿਲੇ ਹੀ ਸਾਡੇ ਸਰਵਪ੍ਰਿਅ ਫਿਲਾਸਫਰ/ਆਲੋਚਕ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੁਆਰਾ ਕਰ ਦਿੱਤੀ ਗਈ ਸੀ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਕਾਲ ਵਿਚ ਔਰਤ ਦੀ ਹਾਲਤ ਬਹੁਤ ਮਾੜੀ ਸੀ। ਉਸ ਦੀ ਸਵੈ-ਹੋਂਦ ਨੂੰ ਸਮਾਜ ਵਿਚ ਅਸਵੀਕਾਰਿਆ ਜਾਂਦਾ ਸੀ। ਉਸ ਸਮੇਂ ਦੇ ਕਈ ਧਾਰਮਕ ਆਗੂਆਂ ਨੇ ਵੀ ਔਰਤ ਵਿਰੋਧੀ ਪ੍ਰਵਚਨ ਉਸਾਰਿਆ। ਤੁਲਸੀਦਾਸ ਦੁਆਰਾ ਪੇਸ਼ ਵਿਚਾਰ ਢੋਲ, ਗਵਾਰ, ਸ਼ੂਦਰ, ਪਸ਼ੂ ਨਾਰੀ ਸਭ ਤਾੜਨ ਦੇ ਅਧਿਕਾਰੀ ਨੇ ਔਰਤ ਦੀ ਹਾਸ਼ੀਆਗਤ ਹੋਂਦ ਦਾ ਨਿਰਧਾਰੀਕਰਨ ਕੀਤਾ। ਕਬੀਰ ਜੀ ਨੇ ਵੀ ਇਸ ਵਿਚਾਰ ਦਾ ਅਨੁਸਰਨ ਕਰਦੇ, ਔਰਤ ਨੂੰ ਵਿਸ਼ੇ-ਵਿਕਾਰਾਂ ਦੇ ਪ੍ਰਤੀਬਿੰਬ ਵਜੋਂ ਸੰਬੋਧਿਤ ਕਰ ਵਿਭਿੰਨ ਪ੍ਰਕਾਰ ਦੇ ਨਕਾਰਾਤਮਕ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ਣਾ ਰਾਹੀਂ ਸੰਬੋਧਿਤ ਕੀਤਾ:

"ਨਾਰੀ ਤੋਂ ਹਮਨੇ ਕਰੀ ਕੀਨਾ ਨਹੀਂ ਵਿਚਾਰ
ਜਬ ਜਾਨੀ ਤਬੁ ਪਰਿਹਰੀ ਨਾਰੀ ਬੜਾ ਵਿਕਾਰ"

ਪੂਰਬਲੀਆਂ ਪਰਿਸਥਿਤੀਆਂ ਦੇ ਪ੍ਰਤੀਉੱਤਰ ਵਜੋਂ ਅਜਿਹੇ ਸਮੇਂ ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਨਾਰੀਵਾਦੀ ਵਿਚਾਰਧਾਰਾ ਨਾਲ ਸੰਬੰਧਿਤ ਪਹਿਲੇ ਅਤੇ ਸਥਾਪਤ ਵਿਚਾਰਕ ਦੇ ਤੌਰ 'ਤੇ ਉਭਰਦੇ ਹਨ। ਆਪ ਜੀ ਨੇ ਆਪਣੀ ਬਾਣੀ ਰਾਹੀਂ ਔਰਤ ਦੇ ਹੱਕ ਵਿਚ ਆਵਾਜ਼ ਬੁਲੰਦ ਕੀਤੀ। ਜਿੱਥੇ ਆਪ ਜੀ ਨੇ ਆਪਣੇ ਸਮਕਾਲੀ ਸਮਾਜਕ-ਸੰਰਚਨਾ ਵਿਚਲੀਆਂ ਕੁਰੀਤੀਆਂ 'ਤੇ ਟੀਕਾ-ਟਿੱਪਣੀ ਕੀਤੀ, ਉੱਥੇ ਨਾਲ ਹੀ ਆਪ ਨੇ ਔਰਤ ਦੀ ਨਾਜ਼ੁਕ ਅਤੇ ਤਰਸਯੋਗ ਸਥਿਤੀ ਦਾ ਜ਼ਿਕਰ ਹੀ ਨਹੀਂ ਕੀਤਾ ਸਗੋਂ ਉਸ ਦੀ ਸਮਾਜਕ ਸੁੰਤਰਤਾ, ਹੱਕ ਅਤੇ ਅਸਤਿੱਤਵ ਬਾਰੇ ਆਪਣੇ ਵੱਡਮੁੱਲੇ ਵਿਚਾਰ ਪੇਸ਼ ਕਰਦਿਆਂ ਉਸ ਦੀ ਗੁਆਚੀ ਸਨਮਾਨਿਤ ਸਥਿਤੀ ਨੂੰ ਕੇਂਦਰ 'ਚ ਲਿਆਉਣ ਦਾ ਅਹਿਦ ਸਿਰਜਿਆ:

ਭੰਡਿ ਜੰਮੀਐ ਭੰਡਿ ਨਿੰਮੀਐ ਭੰਡਿ ਮੰਗਣੁ ਵਿਆਹੁ।
ਭੰਡਹੁ ਹੋਵੈ ਦੋਸਤੀ ਭੰਡਹੁ ਚਲੈ ਰਾਹੁ।
ਭੰਡੁ ਮੁਆ ਭੰਡੁ ਭਾਲੀਐ ਭੰਡਿ ਹੋਵੈ ਬੰਧਾਨ।
ਸੋ ਕਿਉ ਮੰਦਾ ਆਖੀਐ ਜਿਤੁ ਜੰਮਹਿ ਰਾਜਾਨੁ।।

ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਨੇ ਔਰਤ ਨੂੰ ਜਨਨੀ ਅਤੇ ਮਰਦ ਦੇ ਬਰਾਬਰ ਦਾ ਹੱਕ ਰੱਖਣ ਵਾਲੀ ਉਪਾਧੀ ਦੁਆਰਾ ਨਿਵਾਜਿਆ। ਮਨੁੱਖ ਦੇ ਜਨਮ ਤੋਂ ਲੈ ਕੇ ਉਸ ਦੇ ਜੀਵਨ ਵਿਚਲੇ ਹਰ ਪ੍ਰਕਾਰ ਦੇ ਵਿਕਾਸ ਵਿਚ ਔਰਤ ਦੇ ਹਰ ਰੂਪ ਭਾਵੇਂ ਉਹ ਮਾਂ/ਧੀ/ਭੈਣ/ਪਤਨੀ ਹੋਵੇ ਦਾ ਪ੍ਰਮੁੱਖ ਸਥਾਨ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਅਜਿਹੀ ਸਥਿਤੀ ਵਿਚ ਔਰਤ ਦੇ ਕਿਸੇ ਵੀ ਰੂਪ ਨੂੰ ਨਿੰਦਣਾ ਜਾਂ ਉਸ ਪ੍ਰਤੀ ਨੀਵਾਂ ਖ਼ਿਆਲ ਮਨ ਵਿਚ ਲਿਆਉਂਣਾ ਆਪਣੇ-ਆਪ ਵਿਚ ਨਿੰਦਣਯੋਗ ਕਿਰਿਆ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਆਪਣੀ ਬਾਣੀ ਵਿਚ ਔਰਤ ਦਾ 'ਸਨਮਾਨਿਤ ਮਾਡਲ' ਪੇਸ਼ ਕੀਤਾ।

ਉੱਤਰ-ਆਧੁਨਿਕ ਦੌਰ ਵਿਚ ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਦੁਆਰਾ ਪੇਸ਼ 'ਸਨਮਾਨਿਤ ਮਾਡਲ' ਦੀ ਸਾਰਥਕਤਾ ਹੋਰ ਵੀ ਜ਼ਿਆਦਾ ਵੱਧ ਜਾਂਦੀ ਹੈ। ਜਦੋਂ ਆਧੁਨਿਕ ਪ੍ਰਸਥਿਤੀਆਂ ਅਧੀਨ ਇਕ ਵਾਰ ਫਿਰ ਔਰਤ ਦੇ ਸਮਮਾਨ ਪ੍ਰਤੀ ਆਵਾਜ਼ ਬੁਲੰਦ ਕਰਨ ਦੀ ਲੋੜ ਪੈ ਰਹੀ ਹੈ। ਅਜੋਕੇ ਸਮੇਂ ਮਨੁੱਖੀ ਸਮਾਜ ਵਿਚ ਔਰਤ-ਮਰਦ ਦੀ ਅਸਮਾਨਤਾ ਦੇ ਨਤੀਜੇ ਵਜੋਂ 'ਭਰੂਣ-ਹੱਤਿਆ' ਵਰਗੀ ਕੁਰੀਤੀ ਨੇ ਸਮਾਜ ਵਿਚ ਆਪਣੀ ਥਾਂ ਸਥਾਪਤ ਕਰ ਲਈ ਹੈ। ਕਈ ਵਾਰੀ ਤਾਂ ਇਹ ਮਹਿਸੂਸ ਹੁੰਦਾ ਹੈ ਕਿ ਇਸ ਕੁਰੀਤੀ ਦੀ ਪ੍ਰਚੰਡਤਾ ਦੇ ਪ੍ਰਤੀਉੱਤਰ ਵੱਜੋਂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਦੀ ਸਾਰਥਕਤਾ ਅਧੀਨ 'ਬੇਟੀ ਬਚਾਉ, ਬੇਟੀ ਪੜ੍ਹਾਉ' ਵਰਗੀ ਸਮਕਾਲੀ ਯੋਜਨਾ ਦਾ ਗਠਨ ਕਰਨਾ ਪਿਆ। ਇਸ ਯੋਜਨਾ ਦਾ ਆਧਾਰ ਵੀ ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਦੁਆਰਾ ਪੇਸ਼ ਨਾਰੀ ਸੁਰੱਖਿਆ ਦੇ ਮਾਡਲ ਨੂੰ ਬਾਣੀ ਦੇ ਪ੍ਰਚਾਰ ਰਾਹੀਂ ਅੱਗੇ ਤੋਰਨਾ ਰਿਹਾ ਹੈ। ਜੇਕਰ ਅਜੋਕਾ ਮਨੁੱਖ ਗੁਰੂ ਜੀ ਦੁਆਰਾ ਪੇਸ਼ ਔਰਤ ਦੀ ਹੱਕਮਈ ਸਥਿਤੀ ਨੂੰ ਧਿਆਨ ਵਿਚ ਰਖਦਾ ਤਾਂ ਸਮਾਜ ਵਿਚ #Metoo ਵਰਗੀ ਸਥਿਤੀ ਦਾ ਨਿਰਮਾਣ ਨਾ ਹੁੰਦਾ। ਵਿਸ਼ਵ ਵਿਚ ਔਰਤ ਦੇ ਹਰ 'ਰੂਪ' ਨੂੰ ਸਮਾਨਤਾ ਦੇ ਅਧਿਕਾਰ ਪ੍ਰਾਪਤ ਹੁੰਦੇ, ਉਸ ਨੂੰ ਵਸਤੂ ਵਾਂਗ ਮੰਡੀ ਸਮਾਜ ਵਿਚ ਵਣਜ (Trade) ਦਾ ਆਧਾਰ ਸਮਝ ਉਸ ਦੀ ਬੋਲੀ ਨਾ ਲਾਈ ਜਾਂਦੀ।

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਸਾਹਿਬ ਦੁਆਰਾ ਪ੍ਰਚਾਰਿਤ ਹਰ ਫ਼ਲਸਫ਼ੇ ਦਾ ਅਹਿਮ ਪਹਿਲੂ ਅੰਤਰ-ਸੰਵਾਦੀ ਮਾਡਲ ਨੂੰ ਜਨਮ ਦਿੰਦਾ ਹੈ। ਸੰਵਾਦ ਦੀ ਪ੍ਰਕਿਰਿਆ ਰਾਹੀਂ ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਹਰ ਵਿਰੋਧੀ ਵਿਚਾਰ ਨੂੰ ਪ੍ਰਭਾਵਿਤ ਕੀਤਾ ਅਤੇ ਹਰ ਵਿਰੋਧੀ ਧਿਰ ਵਿਚ ਸਾਂਝ ਸਥਾਪਤ ਕਰਨ ਦੀ ਕੋਸ਼ਿਸ਼ ਕੀਤੀ। ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਅੰਤਰ-ਸੰਵਾਦ ਦੀਆਂ ਮੂਲ ਸ਼ਰਤਾਂ ਨੂੰ ਸਵੀਕਾਰ ਕਰਦਿਆਂ ਹਰ ਧਰਮ ਅਤੇ ਸਭਿਆਚਾਰ ਦੇ ਲੋਕਾਂ ਵਿਚਲੇ ਦਾਇਰਿਆਂ ਨੂੰ ਪਾਰ ਕੀਤਾ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਸਮਾਜਕ/ਸਭਿਆਚਾਰ ਵਿਚਲੀ ਬਹੁਲਤਾਵਾਂ ਨੂੰ ਸਵੀਕਾਰ ਕਰਦਿਆਂ, ਸੈਲਾਨੀ ਦੇ ਤੌਰ 'ਤੇ ਖੇਤਰੀ/ਪਾਰ-ਖੇਤਰੀ ਸਭਿਆਚਾਰਾਂ ਵਿਚਲੀਆਂ ਡੂੰਘਾਈਆਂ ਨੂੰ ਸਮਝਦਿਆਂ, ਉਨ੍ਹਾਂ ਵਿਚ ਅੰਤਰ-ਸੰਵਾਦ ਦੀ ਪ੍ਰਕਿਰਿਆ ਨੂੰ ਆਰੰਭਿਆ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਹਰ ਸਮਾਜ ਵਿਚਲੀਆਂ ਵੱਖਰਤਾਵਾਂ ਨੂੰ ਸਮਝਦਿਆਂ, ਉਸ ਵਿਚ ਸਾਂਝ ਪੈਦਾ ਕਰਨ ਦੀ ਕੋਸ਼ਿਸ਼ ਕੀਤੀ ਤਾਂ ਜੋ ਸੰਵਾਦ ਦੀ ਸਫ਼ਲਤਾ ਸਮਾਨਤਾਵਾਂ ਨੂੰ ਖੋਜਣ ਵਿਚ ਸ਼ਾਮਿਲ ਹੋ ਸੱਕੇ। ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬਾਨ ਨੇ ਅਸਮਾਨਤਾ ਵਾਲੇ ਔਗੁਣਾਂ ਨੂੰ ਵਿਸਾਰਨ ਤੇ ਬਲ ਦਿੰਦਿਆਂ ਕਿਹਾ:

ਸਾਂਝ ਕਰੀਜੈ ਗੁਣਹ ਕੇਰੀ
ਛੋਡਿ ਅਵਗਣ ਚਲੀਐ॥

ਇਸ ਦੇ ਨਾਲ ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਨੇ ਇਹ ਉਪਦੇਸ਼ ਦਿੱਤਾ ਕਿ ਕਿਸੇ ਵੀ ਸੰਵਾਦ ਨੂੰ ਸਿਰਜਣ ਵੇਲੇ ਹਰ ਧਿਰ ਨੂੰ ਸਮਾਨਤਾ ਦਾ ਅਧਿਕਾਰ ਪ੍ਰਾਪਤ ਹੋਣਾ ਚਾਹੀਦਾ ਹੈ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਸੰਵਾਦ ਦੇ ਮੂਲ ਮੰਤਰ 'ਪਹਿਲਾਂ ਸੁਣਨਾ, ਫਿਰ ਬੋਲਣਾ' ਦਾ ਆਗਾਜ਼ ਕੀਤਾ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੇ ਵਿਚਾਰਾਂ ਅਨੁਸਾਰ ਜੇਕਰ ਵਿਅਕਤੀ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ ਦੇ ਵਿਚਾਰਾਂ ਨੂੰ ਸੁਣਨ ਬਾਰੇ ਪ੍ਰਾਥਮਿਕਤਾ ਨਾ ਦਿੱਤੀ ਜਾਵੇ ਤਾਂ ਅਧਿਕਤਰ ਸਮੇਂ ਉਨ੍ਹਾਂ ਵਿਚਾਰਾਂ ਵਿਚੋਂ ਵਾਦ-ਵਿਵਾਦ ਦੀ ਉੱਤਪਤੀ ਹੁੰਦੀ ਹੈ। ਜਿਸ ਦੇ ਨਤੀਜੇ ਵਜੋਂ ਸੰਵਾਦ ਦੀ ਪ੍ਰਕਿਰਿਆ ਵਿਚ ਰੁਕਾਵਟ ਪੈਦਾ ਹੁੰਦੀ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਜੀ ਦੇ ਇਸ ਭਾਵ ਦੀ ਸਾਰਥਕਤਾ ਸਾਡੀ ਅਜੋਕੀ ਸਮਾਜਕ ਸੰਰਚਨਾ ਦੇ ਨਾਲ-ਨਾਲ ਵਿਦਿਅਕ ਸੰਰਚਨਾ ਵਿਚ ਵੀ ਕਾਇਮ ਹੁੰਦੀ ਨਜ਼ਰ ਆਉਂਦੀ ਹੈ ਜਦੋਂ ਅਸੀ ਸੰਚਾਰੀ ਰੁਕਾਵਟਾਂ (Communication Barriers) ਦੀ ਗੱਲ ਕਰਦੇ ਹਾਂ। ਅਸੀਂ ਅੱਜ ਵੀ ਚਾਹੇ-ਅਣਚਾਹੇ ਤਰੀਕੇ ਨਾਲ ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਦੇ ਬਚਨਾਂ ਤੋਂ ਹੀ ਸਿੱਖਿਆ ਗ੍ਰਹਿਣ ਕਰ ਰਹੇ ਹਾਂ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਦਾ ਸੰਚਾਰੀ ਮਾਡਲ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੇ ਇਨ੍ਹਾਂ ਬਚਨਾਂ ਦੁਆਰਾ ਸਹਿਜੇ ਹੀ ਸਮਝਿਆ ਤੇ ਪਰਖਿਆ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ:

ਜਬ ਲਗੁ ਦੁਨੀਆ ਰਹੀਐ ਨਾਨਕ
ਕਿਛੁ ਸੁਣੀਐ ਕਿਛੁ ਕਹੀਐ॥

ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਨੇ ਸੰਚਾਰਕ ਪ੍ਰਕਿਰਿਆ ਸੰਬੰਧੀ ਨਵਾਂ ਤਜ਼ਰਬਾ ਪੇਸ਼ ਕੀਤਾ ਹੈ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਆਪਣੀਆਂ ਸਭਿਆਚਾਰਕ ਹੱਦਾਂ ਤੋਂ ਪਾਰ-ਸਭਿਆਚਾਰਕ ਸੰਵਾਦ ਨੂੰ ਸਥਾਪਤ ਕੀਤਾ। ਅਜਿਹੇ ਸਮੇਂ ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਨਿਰੋਲ ਸਭਿਆਚਾਰਕ ਸੰਪਰਕ ਹੀ ਕਾਇਮ ਨਹੀਂ ਕੀਤਾ ਸਗੋਂ ਭਾਸ਼ਾਈ ਰੂਪਾਂਤਰਣ ਨੂੰ ਵੀ ਆਪਣੇ ਬਚਨਾਂ ਵਿਚ ਸਥਾਨ ਦਿੱਤਾ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਬੰਧਨ ਤੇ ਸਰਹਦੀ ਸੀਮਾ ਦੀ ਅਵਹੇਲਨਾ, ਭਾਸ਼ਾਈ ਸੰਚਾਰ, ਸਮਾਜ, ਸੰਸਕ੍ਰਿਤੀ ਅਤੇ ਵਿਚਾਰਾਂ ਵਿਚਲੇ ਅੰਤਰ-ਸੰਵਾਦ ਦੀ ਪ੍ਰਕਿਰਿਆ ਰਾਹੀਂ ਮਨੁੱਖ-ਮਾਤਰ ਵਿਚਕਾਰ ਸਾਂਝ ਲਈ ਪ੍ਰੇਰਣਾ ਸ੍ਰੋਤ ਮੁਹਇਆ ਕਰਵਾਏ।

ਸੰਖੇਪ ਵਿਚ ਕਿਹਾ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ ਕਿ ਰੂਹਾਨੀਅਤ ਦੇ ਮੁਜੱਸਮੇ ਦੀ ਯਥਾਰਥਕ ਸ਼ਖ਼ਸੀਅਤ ਦੇ ਮਾਲਕ, 'ਨਾਨਕ' ਤੋਂ

'ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ' ਜੀ ਦਾ ਸਾਰਾ ਜੀਵਨ ਨਿੱਜ ਦੀ ਭਾਵਨਾ ਤੋਂ ਪਾਰ ਮਨੁੱਖੀ ਸਰਬ ਸਾਂਝੀਵਾਲਤਾ ਨੂੰ ਸਮਰਪਿਤ ਰਿਹਾ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਨੇ ਸਮੁੱਚੀ ਲੋਕਾਈ ਨਾਲ ਸੰਵਾਦ ਰਚਾਉਂਦਿਆਂ, ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੂੰ ਆਪਣਾ ਸਰੋਤਾ ਬਣਾਉਣ ਖ਼ਾਤਰ ਮਨੁੱਖਤਾ ਵਿਚਕਾਰ ਪਈਆਂ ਸਮਾਜਕ/ਸਭਿਆਚਾਰਕ/ਧਾਰਮਕ ਹੱਦਾਂ ਨੂੰ ਤੋੜਿਆ ਅਤੇ ਉਨ੍ਹਾਂ ਵਿਚ ਸਾਂਝ ਸਥਾਪਤ ਕਰਨ ਦੀ ਕੋਸ਼ਿਸ਼ ਕੀਤੀ। ਬਹੁਪੱਖੀ ਸ਼ਖ਼ਸੀਅਤ ਅਤੇ ਵਿਸ਼ਾਲ ਪ੍ਰਤਿਭਾ ਦੇ ਮਾਲਕ ਹੋਣ ਕਰਕੇ ਆਪ ਜੀ ਧਰਮ, ਵਿਦਿਅਕ, ਅਤੇ ਦਰਸ਼ਨ ਸ਼ਾਸਤਰ ਦੇ ਖੇਤਰ ਵਿਚ ਵਿਲੱਖਣ ਤੇ ਮਹਾਨ ਕ੍ਰਾਂਤੀਕਾਰੀ ਸਨ। ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਦੁਆਰਾ ਨਿਰਮਿਤ ਸਮਾਵੇਸ਼ੀ ਗਤੀਵਿਧੀਆਂ, ਮਨੁੱਖੀ ਸਮਾਨਤਾ, ਧਾਰਮਕ ਬਰਾਬਰੀ, ਔਰਤ ਦਾ ਸਤਿਕਾਰ, ਵਾਤਾਵਾਰਣ ਦੀ ਸੁਰੱਖਿਆ ਅਤੇ ਨੈਤਿਕ ਮਾਡਲ ਆਦਿ ਦੀ ਸਾਰਥਕਤਾ ਹਰ ਪੱਖੋਂ ਵਿਸ਼ਵ ਪੱਧਰ 'ਤੇ ਸਿੱਧ ਹੋਈ ਹੈ। ਅੱਜ ਹਰ ਭਾਰਤੀ/ਪੱਛਮੀ ਸਮਾਜ/ਸਭਿਆਚਾਰ ਵਿਚਲੀਆਂ ਬਹੁ-ਪੱਖੀ ਵਿਵਸਥਾਵਾਂ ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਦੁਆਰਾ ਸੰਚਾਰਿਤ ਨੈਤਿਕ ਵਿਚਾਰਾਂ 'ਤੇ ਕਾਰਜਸ਼ੀਲ ਹਨ।

ਜੇਕਰ ਧਿਆਨ ਨਾਲ ਦੇਖਿਆ ਜਾਵੇ ਤਾਂ ਉੱਤਰ ਆਧੁਨਿਕ ਦੌਰ ਦੀਆਂ ਸਥਿਤੀਆਂ, ਮੁੱਢਕਾਲੀ ਪਰਿਸਥਿਤੀਆਂ ਨੂੰ ਦੁਹਰਾ ਰਹੀਆਂ ਹਨ, ਬਲਕਿ ਅਜੋਕੀ ਸਮਾਜਕ ਸੰਰਚਨਾ ਮੁੱਢਲੇ ਸਮੇਂ ਤੋਂ ਜਿਆਦਾ ਗ੍ਰਸਤ ਹੋ ਚੁੱਕੀ ਹੈ। ਪਰ ਇਸ ਸਭ ਦੇ ਬਾਵਜੂਦ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਸਾਹਿਬ ਦੀ ਵਿਚਾਰਧਾਰਾ ਸਦਾ ਨਵੇਕਲੀ ਹੈ ਅਤੇ ਜਦੋਂ ਤੱਕ ਇਹ ਸ੍ਰਿਸ਼ਟੀ ਤੇ ਮਨੁੱਖੀ ਜੀਵਨ ਅਸਤਿੱਤਵ ਵਿਚ ਰਹੇਗਾ ਉਦੋਂ ਤੱਕ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਦੀ ਸਾਰਥਕਤਾ ਇਸ ਪ੍ਰਕਾਰ ਹੀ ਕਾਇਮ ਰਹੇਗੀ।

ਹਵਾਲੇ ਅਤੇ ਟਿੱਪਣੀਆਂ :

1. ਡਾ. ਰਣਜੀਤ ਸਿੰਘ ਖੜਗ, *ਨਾਨਕ ਸ਼ਾਇਰ ਇਵ ਕਹਿਆ*, ਚੇਤਨਾ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ਨ ਪੰਜਾਬੀ ਭਵਨ, ਲੁਧਿਆਣਾ, 2010,
2. ਪ੍ਰੋ. ਬ੍ਰਹਮਜਗਦੀਸ਼ ਸਿੰਘ ਅਤੇ ਪ੍ਰੋ. ਰਾਜਬੀਰ ਕੌਰ, *ਪੰਜਾਬੀ ਸਾਹਿਤ ਦਾ ਇਤਿਹਾਸ*, ਵਾਰਿਸਸ਼ਾਹ ਫ਼ਾਉਂਡੇਸ਼ਨ, ਅੰਮ੍ਰਿਤਸਰ
3. Sahib Singh (Prof.) *Guru Nanak Dev and his teachings*, Lok Sahit Parkashan, 2002
4. ਬਿਕਰਮ ਸਿੰਘ ਘੁੰਮਣ (ਸੰਪਾ.), *ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦਾ ਰਚਨਾ ਸੰਸਾਰ*, ਰੂਹੀ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ਨ, ਅੰਮ੍ਰਿਤਸਰ
5. ਸਾਹਿਬ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦੇ 550 ਸਾਲਾ ਪ੍ਰਕਾਸ ਪੁਰਬ ਨੂੰ ਸਮਰਪਿਤ ਸੱਚੇ ਪਾਤਸ਼ਾਹ ਪੱਤ੍ਰਿਕਾ, ਅੰਕ-2019
6. *Encyclopedia of Religion and Ethics*, Vol. XI, P. 650.
7. ਬਲਦੇਵ ਸਿੰਘ ਬੱਧਨ (ਸੰਪਾ.), *ਗੁਰਬਾਣੀ ਵਿਚਾਰਧਾਰਾਈ ਪਰਿਪੇਖ*, ਲੋਕਗੀਤ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ਨ 1989
8. ਡਾ. ਜਗੀਰ ਸਿੰਘ ਢੇਸਾ ਅਤੇ ਚਰਨਜੀਤ ਸਿੰਘ, (ਸੰਪਾ.) *ਨਵਰੰਗ ਸਾਹਿਤਕ ਖੋਜ ਪੱਤ੍ਰਿਕਾ*, ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ ਅੰਕ, ਅੰਕ-ਪਹਿਲਾ, ਅਕਤੂਬਰ-ਦਸੰਬਰ 2015

ਵੈੱਬ ਲਿੰਕ

- http://thelinkpaper.ca/?p=51374
- https://www.sikhiwiki.org/index.php/Sikhism_and_the_environment
- https://akalisingh-sikhsociety.ca/AKKudratL.html
- https://www.toppr.com/guides/business-correspondence-and-reporting/communication/barriers-in-communication/

गुरु नानक देव : चिन्तन के आयाम

*डॉ. अजीत कुमार पुरी

* हिन्दी विभाग, पी.जी.डी.ए.वी. कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय

भारतीय मनीषा के लिए विक्रम की 15 वीं शताब्दी का समय राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक दृष्टि से एक परीक्षा का काल रहा है। यह वह समय था जब भारत की उत्तरी पश्चिमी सीमा से आक्रमणकारियों का ऐसा ताँता लगा हुआ था कि जो समाप्त होने का नाम ही नहीं ले रहा था। भारतीय नरेश अपनी पूरी क्षमता से इन बर्बर आक्रमणकारियों का सामना कर रहे थे किंतु काल की गति ही कुछ ऐसी थी कि भारतीय नरेश अपना सब कुछ झोंकने के बाद भी इनके वेग को थाम नही सके। कालांतर में भारतभूमि का कुछ हिस्सा इन आक्रमणकारियों के अधीन हो गया और फिर शुरू हो गया मजहबी उत्पीड़न,स्त्रियों पर अत्याचार, पुस्तकालयों का जलाया जाना,मतांतरण का खेल। भारत की जनता इन अत्याचारों से कराह उठी, जन जन का ह्रदय करुणा से आंदोलित हो उठा। शत्रधारी योद्धा तो इस परिस्थिति से जूझ ही रहे थे किन्तु ऐसे विषम समय में भारत ने अपने सांस्कृतिक जागरण से भी इन आक्रमणकारियों का प्रतिकार किया।

आलवार संतो द्वारा भक्ति और ज्ञान का जो प्रवाह दक्षिण से उठा था 15 वीं शताब्दी तक आते आते उत्तर भारत में भी उसका व्यापक प्रचार प्रसार हो गया था। रामानुज,रामानंद आदि के उपदेशों से समाज को कुछ ढाढस बंधा। कालांतर में इन संतो के वचनों द्वारा एक मौलिक साहित्य सहज ही सृजित होना प्रारम्भ हो गया। इस संबंध में अपना मत व्यक्त करते हुए प्रो. नंदकिशोर पाण्डेय ने लिखा है कि "संत साहित्य की धारा विक्रम की सातवीं शताब्दी से प्रवाहित होती है। यह अपने मार्ग में आने वाले अनेक प्रवाहों से प्रवाहित होती हुई तथा कुछ को अपने में समेटती हुई पंद्रहवीं शताब्दी में विराट रूप धारण कर लेती है। इस दीर्घ जीवन काल में इसके क्षेत्र का विस्तार अखिल भारतीय हो जाता है। इसके रचयिताओं में महाराष्ट्र के संत नामदेव हैं तो तो पंजाब के संत गुरुनानक देव भी।"

जहाँ तक इस्लाम में दीक्षित आक्रमणकारियों की बात है तो उनका उद्देश्य स्पष्ट था उनकी प्रबल इच्छा थी कि " काफ़िर हिन्दुस्थान को पैगम्बर साहिब द्वारा प्रचारित सच्चे मजहब के अंतर्गत लाया जाए। इस प्रकार कृ तनिश्चय होकर इस्लाम ने भारत में प्रवेश किया। उसका लक्ष्य था तबाही मचाना और तबाह हो चुकी वस्तु का स्थान ग्रहण करना। किसी रिक्ति की पूर्ति उसका लक्ष्य न था।" इस प्रकार जिहादी इस्लाम को मानने वाले सारे आक्रमणकारी खुदाई मुजाहिद के रूप में संगठित हो काफिरों के विरुद्ध जिहाद कर रहे थे। उनके आर्थिक और मजहबी हित एक दूसरे से ऐसे जुड़ गए थे कि जिन्हें अलग कर पाना संभव् नहीं रहा। जो कार्य उन्होंने मिश्र,पश्चिम एशिया आदि में किया वही भारत में दुहराया अर्थात अंधाधुंध लूटपाट, पूजा स्थलों को गिराना, हत्या, मतांतरण आदि को व्यापक रूप में चलाया जिस कारण भारत में यकायक गंभीर संकट की स्थिति उत्पन्न हो गयी। एक योद्धा के रूप में एक ओर भारतीय नरेश इस संकट से जूझे तो संतो ने अपनी विचार चेतना से इस संकट का प्रतिकार किया। उत्तर भारत में कबीर के समकालीन जिन संत महात्माओं ने समाज का सांस्कृतिक नेतृत्व किया उनमे गुरु नानक देव का प्रमुख स्थान बनता है।

गुरुनानक के विचारों का स्रोत

गुरु नानकदेव के मत का अध्ययन करने वाले विद्वान बहुधा इस फेर में पड़ जाते हैं कि गुरु नानकदेव के वे विचार जिन्होंने भारतीय समाज, विशेषकर पंजाब को इतनी गहराई से आंदोलित किया, उसका मूल भारतीय परम्परा में माना जाए या इस्लामी प्रभाव था याकि उन्होंने कोई नया मत स्थापित किया। सबसे पहले तो यह निर्विवाद है कि " गुरु नानकदेव एक हिंदू परिवार में उत्पन्न हुए थे और उसी वातावरण में उनका भरण पोषण भी हुआ था। उनके जीवन काल में मुसलमानों के आक्रमण होते जा रहे थे और देश के भिन्न – भिन्न भागों में बसते हुए वे हिंदू जनता के विचारों तथा आचरणों पर किसी–न–किसी प्रकार अपना प्रभाव भी डाले जा रहे थे।" इस प्रकार आक्रमणकारियों के रहन सहन का प्रभाव पड़ना स्वाभाविक कहा जा सकता है। हिंदू परिवार में उत्पन्न हुए गुरुनानक को जीवन के प्रारंभिक समय से ही हिंदू कर्मकांडों से पग – पग पर सामना हुआ। वह समय ऐसा था कि हिदू समाज इस्लाम के मतांतरण से बचने के लिए अपने को कर्मकांडों की जमघट से बांध लेना चाहता था। इसका परिणाम यह हुआ कि सामान्य जनता के लिए धर्म जटिल और महंगे का सौदा हो गया।

गुरुनानक की जन्मभूमि राय भोई का तलवंडी गाँव बहुत घना बसा हुआ नहीं था। उसके आसपास की भूमि पर पुराने वन खंड के अवशेष विद्यमान थे। एकांत प्रेमी नानक को इस वन भूमि ने आकर्षित किया, यही नानक

ने ध्यान की अवस्था में आकर तत्कालीन होकर धार्मिक, सामाजिक और राजनीतिक परिस्थितियों पर गहन चिंतन मनन किया होगा। इस तरह नानक को कालांतर में यह बोध हो गया कि धार्मिक क्षेत्र में जो अराजकतापूर्ण स्थिति है उसके मूल में धर्म नहीं अपितु उसके मौलिक उद्देश्य को न समझ पाने के कारण ही चौतरफा भ्रम की स्थिति है। वास्तव में धर्म अपने प्रारंभिक समय में व्यापक ही रहता है, समय व्यतीत होने के साथ जटिलताये आ जाना स्वाभाविक है। नानक का ध्यान इस ओर था कि थोथी जटिलताओं से धर्म के वास्तविक स्वरुप को बाहर निकाल कर उसे जनता के सम्मुख सरल और सरस रूप में रखा जाए।

गुरु नानकदेव की बाहरी वेशभूषा और उनके एकेश्वरवाद पर जोर देने के कारण बहुधा विदेशी विद्वान उन्हें इस्लाम से प्रभावित दिखाने लगते हैं। यथा फ्रेडरिक पिकट जैसे लोगो ने गुरु नानक के रहन सहन अथवा वेशभूषा के आधार पर अपनी धारणा बना ली। मेकालिफ ने तो दि सिक्ख रिलिजन नामक पुस्तक की भूमिका में नानक को भिन्न मत का प्रचारक ही घोषित कर दिया है। हजारों वर्ष प्राचीन भारत की बहुआयामी चिंतनधारा को न समझ पाने के कारण अथवा भारतीय समाज में भेद दिखाने के लिए, जो भी हो, विदेशियों का उपर्युक्त मत मान्य नहीं हो सकता। वस्तुतः भारत में एको अहम् विप्रा वहुधा वदन्ति की परंपरा बहुत प्राचीन है। श्रुतियो और स्मृतियों में आचरण की महत्ता पर बहुत बल दिया गया है। आचारहीन न पुनन्ति वेदाः का उद्घोष भी इसी का परिचायक है। इसी तरह ईश्वर के साकार और निराकार उपासना की प्रणाली भी भारत में साथ –साथ चलती रही है। इसलिए नानक के चिंतन में भारतीय ज्ञान परम्परा का योग स्वतः सिद्ध है। दिनकर से सहमत होते हुए कह सकते हैं कि –" सच्ची बात तो यह है कि सिक्ख–धर्म के दर्शन और इस्लाम के दर्शन में, विशेषतः, ईश्वर के स्वरुप को लेकर वही भिन्नता है जो कुरान और वेदांत के बीच मिलती है।" इस तरह गुरु नानक की प्रसिद्ध रचना 'जपु जी' का मनन करने से स्पष्ट हो जाता है कि गुरु नानक का मंतव्य प्रपंचों में फंसे हुए मनुष्य को उसके मिथ्या आचरण दिखाकर, उसके भूल का एहसास कराकर सन्मार्ग की ओर प्रेरित करना था। " गुरुनानक ने अपनी अनोखी उक्तियों द्वारा क्रमशः यह सिद्ध किया कि हमारी वर्तमान परिवर्तित मनोवृति के ही कारण सारे अनर्थ हो जाया करते हैं। उसे फिर से सुधारकर नवीन रूप देने का उन्होंने एक नवीन मार्ग भी सुझाया है।" गुरुनानक ने जो संत मार्ग सुझाया तत्कालीन परिस्थिति में उसकी महत्ता इस दृष्टि से है कि इसके लिए उन्होंने कहीं भी अपने समकालीन किसी हिंदू अथवा मुस्लिम मत का अन्धानुकरण नहीं किया है, इस आधार पर नानक को एक तटस्थ मौलिक चिन्तक कहा जा सकता है।

चिंतन के आयाम

गुरुनानक का चिंतन बहुआयामी था क्या धार्मिक क्या सामाजिक क्या राजनीतिक, उनकी वाणी ने सभी पक्षों को स्पर्श किया।

सामाजिक उद्बोधन

राजनीतिक परिस्थितियों में अंतर आने पर सामाजिक दशा भी प्रभावित हुए बिना नहीं रह रह सकतीद्य गुरुनानक कालीन राजनीतिक दशा उथल पुथल से भरी थी। मुसलमान आक्रान्ता हिंदू समाज का इस्लामीकरण करने पर तुले हुए थे। इसके लिए अपने विजित प्रदेशों में इन शासकों ने तीर्थयात्रा आदि पर कर लगाए तो वहीँ धार्मिक जुलूसों आदि पर प्रतिबंध सामान्य बात थी। हिदुओं के उपासना स्थल सुरक्षित नहीं थे। राजनीतिक अस्तव्यस्तता से सामाजिक परस्थितियां विषम हों गई। हिन्दुओं का वर्णाश्रम धर्म शिथिल होने लगा। इस आपाधापी के दौर में ब्राह्मण और क्षत्रिय मर्यादाएं टूटने लगी। गुरुनानक की वाणी में इस परिस्थिति का स्पष्ट आभास मिलाता है,यथा –

" कालु नाही जोगु नाही नाही सतु का ढबु।
थानासट जग भरिसट होए डूबता इव जगु।
खत्रिया त धरम छोडिआ मलेछ भाखिआ गही।
सृसटी सभ एक बरन होई धरम की गति रही।"

कहने का आशय यह है कि गुरुनानक ने देखा कि किस प्रकार समाज में लोकाचार के श्रेष्ठ तरीके अब नहीं रह गए है योग का सच्चा स्वरुप भष्ट हो चुका है लोग दिखावे में मगन हैं। जो राजे लोग अभी हाल तक मलेछों का सामना डटकर करते थे, वे अब दासता में फंसकर उन्ही की भाषा सीखने लगे हैं। कुलमिलाकर स्थिति ऐसी हो गयी थी कि समाज गतिहीन सा हो रहा था। जाति–– पाति के बंधन कड़े होकर मनुष्य की आध्यात्मिक उन्नति में बाधक हो रहे थे ऐसे समय में गुरुनानक ने उद्घोष किया –

जाणहु जोति न पूछहु जाती आगे जाति न हे।

अर्थात मनुष्य मात्र में परमात्मा की ज्योति का निवास है। हे मानव तू जाति–पाति के बखेड़े में क्यों पड़ता है। यह निश्चित समझ लो कि पहले से इस प्रकार का जाति –पाति का कोई भी बखेड़ा नहीं था।

भारत में स्त्रियों का प्राचीन काल से ही बहुत सम्मान रहा। ऐसी मान्यता रही की जहाँ स्त्रियों का मान होता है वहाँ देवता निवास करते हैं। मुसलमानों के आगमन के पूर्व यहाँ पर्दा प्रथा आदि के कोई चिन्ह नहीं थे। लडके और लडकियों की शिक्षा पर समान बल था किन्तु आक्रान्ताओं के अत्याचार जब बढे तो स्त्री घर में कैद हो गई। नानक ने ऐसी दशा का चित्र खींचते हुए लिखा –'रना होईआ बोधिआ पुरुस होए सईआद' अर्थात स्त्रियाँ मूर्ख और पुरुष शिकारी जैसे अत्याचारी हो गए हैं।

गुरुनानक ने स्त्री का सम्मान वापस दिलाते हुए कहा कि स्त्री महान है क्योकि स्त्री से ही मनुष्य जन्म पाता है, उसके गर्भ में ही प्राणी का शरीर बनता है, स्त्री से ही सगाई और विवाह आदि संपन्न होता है। जगत की उत्पति का क्रम भी स्त्री से ही संचालित होता है। यहाँ तक कि एक स्त्री के मरने के बाद दूसरे की खोज की जाती है। यही हमें सामाजिक बंधनों में बांधे रखती है। इसलिए इसकी निंदा क्योंकर की जाए ? इसी से बड़े बड़े राजा लोग जन्म लेते हैं। इस संसार में कोई भी जीव स्त्री के अभाव में उत्पन्न ही नहीं हो सकता। हे नानक, एक सच्चा ईश्वर ही है जो स्त्री से नही जन्मा। यथा–

भंडी जमीऐ भंडी निमिऐ भंडी मंगणु वीआहु।

भंडहू होवै दोसती भंडहू चले राहु।
भंडु मुआ भंडु भालिए भंडी होवै बंधानु।
सो किउ मंदा आखिए जितु जन्मही राजान।
भंडहू ही भंडु उपजे भंडे बाझु न कोई।
नानक भंडै बाहरा एको सच्चा सोइ।

नानककालीन भारतीय समाज इस्लाम की बर्बरता से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सका। सर्वत्र अविश्वास की गहरी खाई खुद गई थी। मनुष्य जीवन की सहजता लुप्त सी होती जा रही थी। नानक ने निष्ठुर मनुष्य की दशा का वर्णन करते हुए कहा –

नानक फीके बोलिऐ तनु मनु फिका होई।
फिको फिका सदीऐ फिके फिकी सोई।
फिका दरगह सटीऐ मुहि थुका फिके पाइ।
फिका मूरखु आखीऐ पाणा लहै सजाइ।

अर्थात हे नानक, यदि कोई मनुष्य निरंतर कड़ुवी वाणी बोलता रहे तो उसके तन और मन दोनो कड़वे हो जाते हैं अर्थात उसमे रुखापन आ जाता है। स्वाभाविक सरसता चली जाती है। ऐसा मनुष्य संसार में अप्रिय वचन बोलने के कारण अप्रियभाषी के नाम से प्रसिद्ध हो जाता है। ऐसा मनुष्य परमात्मा के दरबार से बाहर निकाल दिया जाता है और उसके मुह पर थूक पड़ती है, कहने का आशय यह है कि उसे धिक्कारा जाता है। इस तरह प्रेम से रिक्त रूखे मनुष्य को मूर्ख मानना चाहिए जिसे अंततः जूतों की सजा मिलती है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि नानक मनुष्य का आतंरिक संस्कार करना चाहते थे। उसके ह्रदय से सुखते जा रहे करुणा, दया और प्रेम के भाव को जागृत कर सच्चे अर्थों में उसे परमात्मा का भक्त बनाना चाहते थे। इस दृष्टि से गुरुनानक की वाणी का महत्त्व निर्विवाद है।

धार्मिक मंतव्य

गुरुनानक का उद्देश्य किसी नए मत को प्रवर्तन करने का नहीं था किन्तु उनके विचार तत्कालीन परस्थितियों में इतने मौलिक थे कि उनका मत कालांतर में सिक्ख मत के नाम से जाना गया।

धार्मिक दृष्टि से यह समय अशांति का काल था। नानक् की माने तो शरम और धरम दोनों इस संसार से विदा हो चुके हैं। झूठ की प्रमुखता है, मानवों के विवाह अब शैतान करवाता है। उस उथल पुथल भरे वातावरण में गोमाता पर भीषण अत्याचार शुरू हो गया था, उसकी हत्या रोज ही हो रही थी। ब्राह्मणों और तीर्थों पर कर लगाए जा रहे थे। इस विषम दशा को देखकर नानक का ह्रदय करुणा से भर गया, उन्होंने कहा –

गऊ विराहमण कउ करू, लावहु गोबरि तरणु न जाई।
धोती टिका तै जपमालो धानु मलेछां खाई।
अंतरि पूजा पडहि कतेबा संजुम तुरका भाई।
छोड़ोले पाखंडा। नामि लइऐ जाहि तरंदा।

अर्थात ' एक ओर तुम गौ और ब्राह्मण पर कर लगाते हो दूसरी और गौ के गोबर से गौरी गणेश की मूर्ति बनाकर, उसकी उपासना कर भव सागर तरना चाहते हो। जो कि संभव नहीं हो सकता। धोती पहनते हो, टीका लगाते हो, गले में माला पहनते हो फिर अन्न तो मलेछो का ही खाते हो। मुसलमानों को प्रसन्न करने के लिए कुरान पढ़ते हो और सारा आचरण तुर्कों के समान करते हो। वास्तव में यदि मुक्ति चाहते हो तो इन पाखंडों को छोडो और नाम का स्मरण करो ताकि भवसागर से तर सको।

अन्य समकालीन सन कवियों की भांति नानक के यहाँ भी नाम स्मरण पर बहुत जोर दिया गया है। नानक ने नाम के प्रति बहुत भारी श्रद्धा व्यक्त की है। उनके अनुसार नाम नामी का प्रतीक है। सतनाम ही कर्त्तापुरुष और एक ओंकार है। सम्पूर्ण सृष्टि की रचना नाम से ही हुई है। समस्त स्थानों में यह नाम विराजमान है। इसलिए नाम को छोड़कर स्थान का कोई महत्त्व नहीं। जप, तप, संयम का सार नाम ही है। यहाँ तक कि बिना नाम के मुक्ति भी संभव नहीं। नाम के साथ नानक ने सद्गुरु की महिमा भी गाई है। कबीर की भांति नानक ने भी एक ओर सद्गुरु की महिमा गाई है तो दूसरी ओर असद्गुरु की तीव्र भर्त्सना भी की है। ऐसा गुरु अपने साथ ही दूसरों को भी कुमार्ग पर चलाकर नष्ट कर डालता है। ऐसे गुरु की निंदा करते हुए नानक ने कहा है –

कुडू बोलि मुरदारु खाई। अवरी नो समझावण जाई।
मुठा आपि मुहाए साथे। नानक ऐसा आगू जापे।

नानक ने कर्ममार्ग, ज्ञानमार्ग, भक्तिमार्ग और योगमार्ग सबमें गुरु की महत्ता स्वीकार करते हुए सद्गुरु और परमात्मा में अभिन्नता भी दिखाई है।

गुरुनानक के अनुसार सारा संसार माया – मोह के वश में है। उन्होंने कर्म के दो प्रकार बताए 1. बंधन में बांधने वाले कर्म जो कि कर्मकांडयुक्त, अहंकारयुक्त और त्रिगुणी विविध कर्म हैं। 'जनमि मरे त्रैगुण हितकारू' कहकर नानक कहा है कि ऐसा कर्म करने वाला बार बार जन्म मरण के चक्कर में फंसता है। 2. मोक्षप्रद कर्म की बात करते हुए नानक ने हरि–कीरत कर्म, अध्यात्म कर्म और हुकम–रजाई कर्म की बात की है।नानक के अनुसार किरत कर्म के फल भुगतने ही पड़ते है। कीरत कर्म वे है जिनका अभ्यास जीवात्मा को कई जन्मों से है जो अच्छे और बुरे दोनों हो सकते हैं। हरि –कीरत कर्म के द्वारा ही कीरत कर्मो के बन्धनों से छुटकारा पाया जा सकता है। हरि कीरत कर्म अर्थात परमात्मा के नाम का गुणगान। इस नाम स्मरण से मनुष्य के सारे मल धुल जाते हैं। इसी प्रकार आध्यात्मिक कर्म वे हैं जो जीवात्मा को स्वयं उसके अस्तित्व का और परमात्मा का बोध कराते हैं 'अधिआतम करम करे ता साचा' कहकर नानक ने अध्यात्म कर्म को सच्चा माना है। वहीं परमात्मा की प्रेरणा अथवा इच्छा से होने वाले कर्मो को नानक ने 'हुकम–रजाई कर्म' कहा है इसके लिए गुरु की महान कृपा भी होनी चाहिए। शुद्ध ह्रदय में प्रभु की अंतर्ध्वनि जब सुनाई पड़ती है, तब जाकर ऐसे कर्म का होना संभव हो पाता है। 'हुकम रजाई

जो चले, सो पावे खजाने' कहकर नानक ने इस कर्म की महत्ता स्थापित की है। कहने का आशय यह है कि साधक को फिर किसी और कर्म की आवश्यकता नहीं रह जाती, उसे मोक्ष की प्राप्ति हो जाती है।

राजनीतिक परिस्थितियों का उद्घाटन

अपने समकालीन संत कवियों में गुरुनानक कदाचित ऐसे पहले संत कवि हैं जिन्होंने देश की तत्कालीन दुर्दशा पर आंसू बहाए हैं। बाबर, गुरुनानक का समकालीन था। भारतभूमि पर उसने कई बार आक्रमण किए। 1521 में अमीनाबाद पर आक्रमण कर उसने उस नगर का विध्वंस कर दिया। नानक ने इस आक्रमण को अपनी आँखों से देखा था। उस दुरावस्था पर वे मौन नहीं रह सके। अपने परमात्मा से उलाहने के अंदाज में उन्होंने कहा –

खुरासान खसमाना किया हिन्दुसतानु डराइआ।
आपै दोसु न देई करता जम करि मुगलु चढ़ाईआ।
एती मार पई कुरलाण तै कि दरदु न आइआ।

अर्थात हे परमात्मा, बाबर ने खुरासान पर भी आक्रमण किया पर तूने उसे अपना मानकर बचा लिया और भारत को नष्ट हो जाने दिया। हे अकाल पुरुष तू ही इन सब प्रपंचो का उत्तरदाई है किन्तु अपने ऊपर दोष नहीं लेकर तूने मुगलों को यमराज के रूप में बनाकर इस भारतभूमि पर आक्रमण करा दिया। इतनी भयंकर मारकाट हुई कि प्रजा करुणा से चीख उठी, किन्तु हे प्रभु, तुझे क्या तनिक भी दर्द नहीं हुआ।

कहा जाता है कि बाबर ने गुरुनानक को भी बंदी बना लिया था और उस अवस्था में भी नानक ने ईश्वर भजन नहीं छोड़ा। कालांतर में इन्हें छोड़ दिया गया। अपने समय की राजनीतिक परिस्थितियो का नानक को पूरा बोध था। वे देख रहे थे कि मलेच्छों के निरंतर आक्रमण से सामाजिक ताना बाना टूट रहा है। किस प्रकार आक्रमणकारी स्त्री जाति का अपमान कर रहे हैं। उन्हें घसीटा जा रहा है,सिंदूर से सुसज्जित स्त्रियों के केश कैंची से काट दिए जा रहे हैं। अपने पतियों के साथ सदा सुशोभित रहने वाली इन स्त्रियों के धन और यौवन आज इनके बैरी हो गए हैं। इस विषम अवस्था में नानक तत्कालीन राजाओं की अकर्मण्यता पर उन्हे चेताते हुए कहते है –

अगो दे जे चेतिए ता काइतु मिले सजाई।
सांहा सुरति गवाईयां रंगि तामसै चाइ।
बाबर वाणी फिरि गई कुइरु न रोटी खाई।

अर्थात यदि राजा लोग पहले से चेतते और परमात्मा का नाम स्मरण करते हुए जीवन बिताते तथा सैर सपाटे और तमाशो की चाव में यदि परमात्मा को नहीं भूलते तो आज यह दशा नहीं होती। परमात्मा विमुख इनकी दशा क्या कही जाए। इन अकर्मण्य लोगो ने बाबर जैसे आतताई का डटकर मुकाबला भी नहीं किया। आज बाबर की चल रही है और कुमारों को रोटियाँ भी खाने को नसीब नही हो पा रही।

'कलि होई कुते मुही खाजु होआ मुरदारु' कहकर नानक ने तत्कालीन राजनीतिक अराजकता का वर्णन किया है। कलियुग के माध्यम से अपनी युग की विषमता से पर्दा हटाते हुए नानक कहते हैं कि इस युग में लोग कुत्ते के मुह वाले हो गए हैं। और उनका भोजन मुरदे का मांस हो गया है। घोर लालच फंसे लोग रिश्वत और चोरी से पैसे खाते हैं। वे झूठ बोलकर मानो कुत्ते की भांति भूंकते रहते है। इस प्रकार धर्म अधर्म का विचार अब समाप्त हो गया है।

इस प्रकार देखा जाए तो नानक की दृष्टि अपने समय की राजनीतिक दशा पर बहुत पैनी थी। एक संत कवि होने के कारण नानक और कर ही क्या सकते थे। समाज को अकर्मण्यता से निकालने के लिए एक ओर उन्होंने लोगो को चेताया तो वही अपने प्रभु से विनती भी की कि वह अपने भक्तो की रक्षा करे।

इस प्रकार नानक् की संपूर्ण वाणियो में भक्ति की ऐसी अजस्र गंगा बही है कि जिसने, तत्कालीन युग में भारतीयों विशेषकर पंजाब को एक ऐसी उत्कट जिजीविषा से भर दिया कि जिसके बल पर समाज अपने धर्म पर खड़ा रह सका। नानक को जो शब्द जहाँ से मिला उन्होंने उसे वही से उठा लिया क्योंकि उस युग के संत साहित्य की यह विशेषता थी कि उसमे " भाषा की कोई सजावट नहीं दीखती, न इसीसे उनमे प्रयास अथवा अभ्यास –जनित समुचित शब्द विन्यास, सुव्यवस्थित वाक्य रचना अथवा सुन्दर अलंकार– से विधान की ओर उन्मुख किसी प्रयास का ही पता चलता है "इन सबके बावजूद नानक की वाणियो को हम विविध रागों में बंधा पते है और यही कारण है कि इन वाणियो की जीवनी शक्ति अब भी बची हुई है और जब तक उनके शिष्य इस धरा पर उपस्थित हैं तब तक वह उनके कंठों से उच्चरित होती रहेगी।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. आचार्य परशुराम चतुर्वेदी –उत्तरी भारत की संत परंपरा . भारत भारती भंडार,प्रयाग, द्वितीय संस्करण सं. 2021 वि.
2 आचार्य परशुराम चतुर्वेदी –संत साहित्य के प्रेरणा के स्रोत, राजपाल एंड संस, प्रथम संस्करण 1975 ई.
3 ए.एम. मेकालिफ –दि सिक्ख रिलिजन, संस्करण, 1909
4 जयराम मिश्र –नानक वाणी, मित्र प्रकाशन प्रा. लि., प्रयाग, संस्करण, सं 2018 वि.
5 भाई जोध सिंह – नानक वाणी, नेशनल बुक ट्रस्ट आफ इंडिया, संस्करण 1971
6 नंदकिशोर पाण्डेय – संत – साहित्य की समझ, यश पब्लिकेशंस, दिल्ली, संस्करण 2018 ई.
7 रामधारी सिंह दिनकर –संस्कृति के चार अध्याय –लोक भारती, संस्करण 2003 ई.

Volume : 6 | Issue :49 | October-December2019 ISSN: 2349-1876 (Print) | ISSN : 2454-1826 (Online)

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦਾ ਜੀਵਨ,ਦਰਸ਼ਨ ਅਤੇ ਅੰਤਰ ਧਰਮ ਸੰਵਾਦ

*ਅਮਰਜੀਤ ਕੌਰ

*AisstYNt poPYsr mwqw suMdrI kwlj, id`lI XUnIvristI

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਇਕ ਅਨੋਖੇ ਸਰਬ-ਸਾਂਝੇ ਮਤ ਦੇ ਸੰਚਾਲਕ ਹੋਣ ਤੋਂ ਇਲਾਵਾ ਇਕ ਯੁਗ-ਪੁਰਸ਼ ਵੀ ਹਨ।ਸਿੱਖ ਧਰਮ ਦੇ ਬਾਨੀ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਆਪਣੀ ਬਾਣੀ ਰਾਹੀਂ ਜਿਸ ਜੀਵਨ-ਦਰਸ਼ਨ ਜਾਂ ਵਿਚਾਰਧਾਰਾ ਦਾ ਮੁੱਢ ਬੰਨ੍ਹਿਆ,ਉਸੇ ਵਿਚੋਂ ਹੀ ਗੁਰਮਤਿ ਦੇ ਬੀਜ ਪੁੰਗਰੇ ਹਨ।ਅਸਲ ਵਿਚ ਜੀਵਨ,ਜਗਤ ਅਤੇ ਮਨੁੱਖ ਬਾਰੇ ਅਪਣਾਇਆ ਗਿਆ ਇਹ ਦ੍ਰਿਸ਼ਟੀਕੋਣ,ਏਕਤਾ ਅਤੇ ਵਿਚਾਰਧਾਰਾਈ ਇਕਸੁਰਤਾ ਦਾ ਲਖਾਇਕ ਹੈ ਜੋ ਸਿੱਧੇ ਜਾਂ ਅਸਿੱਧੇ ਤੌਰ ਤੇ ਆਪਣੇ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ ਸਮੇਂ ਅਤੇ ਸਥਾਨ ਨਾਲ ਜੁੜਿਆ ਹੋਇਆ ਹੈ।ਇਹ ਵੀ ਕਹਿ ਸਕਦੇ ਹਾਂ ਕਿ ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਆਪਣੇ ਅਤੀਤ ਜਾਂ ਵਰਤਮਾਨ ਨਾਲ ਅੰਤਰ ਸੰਵਾਦ ਰਚਾ ਕੇ ਜਿੱਥੇ ਆਪਣੀ ਸਿਰਜਨਾਵੀ ਵਿੱਲਖਣਤਾ ਦਾ ਪ੍ਰਮਾਣ ਪੇਸ਼ ਕੀਤਾ ਹੈ ਉੱਥੇ ਵਰਤਮਾਨ ਤੇ ਭਵਿੱਖਮੁਖੀ ਸਿਰਜਣਾਤਮਕ ਪੈੜਾਂ ਵੀ ਸਿਰਜੀਆਂ ਹਨ।ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੇ ਜੀਵਨ ਸੰਬੰਧੀ ਵੇਰਵੇ ਮੁੱਖ ਤੌਰ'ਤੇ ਜਨਮਸਾਖੀਆਂ ਵਿਚੋਂ ਮਿਲਦੇ ਹਨ।ਜਨਮਸਾਖੀਆਂ ਅੰਦਰ ਅਸਲ ਵਿਚ ਲੋਕ ਮਨ ਵਿਚ ਵਸੇ ਹੋਏ ਨਾਨਕ-ਬਿੰਬ ਦੀ ਹੀ ਪੁਨਰ ਉਸਾਰੀ ਹੋਈ ਦਿਸਦੀ ਹੈ ਜਿਸਦੀ ਆਪਣੀ ਖ਼ਾਸ ਅਹਿਮੀਅਤ ਹੈ।ਇਨ੍ਹਾਂ ਤੱਥਾਂ ਨੂੰ ਤਰਕ ਨਾਲ ਨਿਖੇੜਦਿਆਂ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦੇ ਜੀਵਨ ਬਾਬਤ ਪ੍ਰਮਾਨਿਕ ਵੇਰਵਿਆਂ ਵਿਚੋਂ ਸੰਵਾਦ ਵਾਪਰਦਾ ਤੇ ਲੋਕ ਮਨਾਂ ਤੀਕ ਪ੍ਰਵਾਹਿਤ ਹੁੰਦਾ ਨਜ਼ਰੀਂ ਪੈਂਦਾ ਹੈ।ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਆਪਣੇ ਅਮਲੀ ਜੀਵਨ ਵਿਚ ਆਮ ਤੌਰ ਤੇ ਬਾਣੀ ਰਾਹੀਂ ਅਧਿਆਤਮਕ ਚਿੰਤਨ ਦੇ ਨਾਲ-ਨਾਲ ਜਿੱਥੇ ਸਮਕਾਲੀ ਪ੍ਰਬੰਧ ਨਾਲ ਰਾਬਤਾ ਕਾਇਮ ਕੀਤਾ ਹੈ ਉੱਥੇ ਪਤਨਮੁਖੀ ਸਮਾਜ,ਸਥਿਤੀਆਂ ਅਤੇ ਕਿਰਦਾਰਾਂ ਵਾਸਤੇ ਤਿੱਖੀ ਪ੍ਰਤਿਕਿਰਿਆ ਦਾ ਮੁਜ਼ਾਹਰਾ ਵੀ ਕੀਤਾ ਹੈ।

ਮੱਧਕਾਲ ਦੀ ਪ੍ਰਧਾਨ ਚੇਤਨਾ-ਵਿਧੀ ਮਨੁੱਖੀ ਸਰੋਕਾਰਾਂ ਨੂੰ ਧਾਰਮਿਕ ਪ੍ਰਸੰਗ ਵਿਚ ਪੇਸ਼ ਕਰਨ ਵੱਲ ਰੁਚਿਤ ਹੈ।ਇਸ ਲਈ ਗਿਆਨ-ਵਿਗਿਆਨ ਤੇ ਵਰਤਮਾਨ ਸੰਦਰਭ ਵਿਚ ਇਸਦੀ ਪ੍ਰਗਟਾਉ-ਵਿਧੀ ਪੁਨਰ ਵਿਅਖਿਆ ਦੀ ਮੰਗ ਕਰਦੀ ਹੈ।ਮਨੁੱਖ ਪ੍ਰਕਿਰਤੀ ਦੇ ਇਸ ਵਿਰਾਟ ਸੰਸਾਰ ਵਿਚ ਵਿਚਰਦਾ ਹੋਇਆ ਵੀ ਆਪਣੀ ਸਿਰਜਣਾਵੀ ਪ੍ਰਤਿਭਾ ਰਾਹੀਂ ਅਰਥਾਂ ਅਤੇ ਮੁੱਲਾਂ ਦਾ ਇਕ ਨਿਵੇਕਲਾ ਸੰਸਾਰ ਰਚ ਲੈਂਦਾ ਹੈ।ਸਮਾਜ-ਸਭਿਆਚਾਰਕ ਜੀਵ ਹੋਣ ਦੇ ਨਾਤੇ ਉਹ ਆਪਣੀ ਜ਼ਿੰਦਗੀ ਦੇ ਮੂਲ ਸਰੋਕਾਰਾਂ ਨਾਲ ਸੰਵਾਦ ਰਚਾ ਲੈਂਦਾ ਹੈ।ਭਾਰਤੀ ਹਿੰਦੂ ਜਾਂ ਆਰੀਆਈ ਸਮਾਜ ਨਾਲ ਮੁੱਢਲੇ ਟਕਰਾਉ ਵਿਚੋਂ ਲੰਘਦਿਆਂ ਸੰਵਾਦ ਦੀ ਸਥਿਤੀ ਤੇ ਅਪੜੇ ਭਾਰਤੀ ਸਮਾਜ ਅਤੇ ਸਭਿਆਚਾਰਕ ਜੀਵ ਨਾਲ ਜੁੜੇ ਮਨੁੱਖੀ ਸਰੋਕਾਰਾਂ ਬਾਰੇ ਨਵੀਂ ਚੇਤਨਾ ਸੰਚਾਰਨ ਦਾ ਕਾਰਜ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਬਾਖ਼ੂਬੀ ਕਰਦੇ ਹਨ।ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੇ ਜੀਵਨ ਅਤੇ ਬਾਣੀ ਦੇ ਅਮਲ ਵਿਚੋਂ ਗੁਜ਼ਰਦਿਆਂ ਅਸਲ ਵਿਚ ਸਾਨੂੰ ਉਹ ਇਕ ਦੂਜੇ ਨੂੰ ਪੂਰਦੇ ਹੋਏ ਨਜ਼ਰ ਆਉਂਦੇ ਹਨ ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਦਾ ਮੂਲ ਆਧਾਰ ਤਰਕ ਅਤੇ ਸੰਵਾਦ ਦੀ ਇਕ ਪੁਖਤਾ ਅਨੋਖੀ ਆਧਾਰਸ਼ਿਲਾ ਉੱਤੇ ਟਿਕਿਆ ਵੇਖਿਆ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ।ਆਪਦਾ ਸਮੁੱਚਾ ਜੀਵਨ ਸਬਰ,ਸਹਿਜ,ਤੇ ਸਾਰੀ ਲੋਕਾਈ ਵਿਚ ਨਿਮਰਤਾ,ਨਿਰਵੈਰਤਾ,ਨਿੱਡਰਤਾ ਤੇ ਏਕਤਾ ਦਾ ਸੰਦੇਸ਼ ਦੇਣ ਵਾਲਾ ਇਤਿਹਾਸ ਰਚਦਾ ਹੈ।ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੀ ਸਮੁੱਚੀ ਜੀਵਨ-ਯਾਤਰਾ,ਇਤਿਹਾਸ ਤੇ ਬਾਣੀ ਵਿਚ ਬਾਲਪਣ,ਇਤਿਹਾਸਕ ਵੇਰਵੇ,ਸਮਾਜਿਕ ਸਥਿਤੀਆਂ ਅਤੇ ਉਦਾਸੀਆਂ ਦੇ ਦੌਰਾਨ ਸਥਾਪਤੀ ਜਾਂ ਲੋਕਾਈ ਦੇ ਨਾਲ ਜੀਵੰਤ ਰਾਬਤਾ ਕਾਇਮ ਹੁੰਦਾ ਹੈ।ਇਵੇਂ ਮੈਂ ਜਦੋਂ ਵੀ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦੇ ਜੀਵਨ ਸਫ਼ਰ ਤੇ ਬਾਣੀ ਨੂੰ ਵੇਖਦੀ ਹਾਂ ਤਾਂ ਇਹੋ ਮਹਿਸੂਸ ਹੁੰਦਾ ਹੈ ਕਿ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦਾ ਜੀਵਨ-ਬਿਰਤਾਂਤ ਚਹੁੰਦਿਸ਼ਾਵੀ ਆਪਣੇ ਪੈਰੀ ਚਲਕੇ ਕਮਾਏ ਅਮਲ ਰਾਹੀਂ ਬਾਣੀ ਦੇ ਅੰਗ-ਸੰਗ ਵਿਚਰਦਿਆਂ ਲੋਕ-ਮਨਾਂ ਨਾਲ ਸਹਿਵਨ ਆਪਣਾ ਨਾਤਾ ਕਾਇਮ ਕਰਦਾ ਹੈ।ਇਸ ਸੰਬੰਧ ਵਿਚ ਭਾਈ ਗੁਰਦਾਸ ਜੀ ਦੀ ਪਹਿਲੀ ਵਾਰ ਦੀ 27ਵੀਂ ਪਉੜੀ ਅੰਦਰ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦੇ ਅਗਮਨ ਤੋਂ ਲੈ ਕੇ ਲੋਕਾਈ ਤੀਕ ਵਿਚਰਨ ਦੇ ਅਮਲ ਦਾ ਜ਼ਿਕਰ ਕਰਨਾ ਵਾਜਿਬ ਜਾਪਦਾ ਹੈ:

> ਸਤਿਗੁਰੁ ਨਾਨਕੁ ਪ੍ਰਗਟਿਆ ਮਿਟੀ ਧੁੰਧੁ ਜਗਿ ਚਾਨਣੁ ਹੋਆ॥
> ਜਿਉ ਕਰਿ ਸੂਰਜ ਨਿਕਲਿਆ ਤਾਰੇ ਛਪਿ ਅੰਧੇਰੁ ਪਲੋਆ॥ [1]

ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਦੇਸ-ਪਰਦੇਸ ਦੀ ਕਈ ਹਜ਼ਾਰਾਂ ਮੀਲਾਂ ਦੀ ਚਹੁੰਦਿਸ਼ਾਵੀ ਕੀਤੀ ਪੈਦਲ ਯਾਤਰਾ ਤੇ ਲੋਕਾਂ ਦੇ ਦੁਖ ਦਰਦ,ਜ਼ੁਲਮ, ਹਨ੍ਹੇਰਿਆਂ,ਪਰੇਸ਼ਾਨੀਆਂ ਤੇ ਦੁਸ਼ਵਾਰੀਆਂ ਨਾਲ ਆਪਣਾ ਜੀਵੰਤ ਸਰੋਕਾਰ ਜੋੜਿਆ।ਭਾਈ ਗੁਰਦਾਸ ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੂੰ ਅਜਿਹੇ ਗਿਆਨੀ ਗੁਰਮੁਖ ਮੰਨਦੇ ਹਨ ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਦੇ ਕਲਜੁਗ ਵਿਚ ਆਉਂਦਿਆਂ ਹੀ ਅਗਿਆਨ ਦਾ ਹਨ੍ਹੇਰਾ ਛੁਪਦਾ ਵੇਖਿਆ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ।ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਮੱਧਕਾਲ ਅੰਦਰ ਧਰਮ ਪ੍ਰਚਾਰ ਦਾ ਮੂਲ ਸੋਮਾ ਵਿਚਾਰ ਵਟਾਂਦਰੇ ਦਾ ਕਿਹਾ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ।ਆਪਣੀ ਵਿਚਾਰਧਾਰਾ ਨੂੰ ਸਪੱਸ਼ਟ ਕਰਨ ਲਈ ਬਹਿਸ ਜਾਂ ਸੰਵਾਦ ਰਾਹੀਂ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਅਜਿਹੇ ਵਿਖਿਆਨ ਦਿੰਦੇ ਸਨ ਕਿ ਦੂਸਰਾ ਵਿਅਕਤੀ ਉਨ੍ਹਾਂ ਤੋਂ ਪ੍ਰਭਾਵਿਤ ਹੋਏ ਬਗ਼ੈਰ ਨਹੀਂ ਰਹਿ ਸਕਦਾ ਸੀ।ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਦਾ ਸਿਲਸਿਲਾ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੀ ਸਾਰੀ ਬਾਣੀ ਵਿਚੋਂ ਨਿਰੰਤਰ ਕਾਰਜਸ਼ੀਲ ਹੁੰਦਾ ਦਿਸਦਾ ਹੈ।ਆਪ ਜੀ ਦੀ ਸ਼ਖ਼ਸੀਅਤ ਦਾ ਇਹ ਗੁਣ ਬਾਲਪਣ ਤੋਂ ਹੀ ਨਜ਼ਰੀ ਆਉਂਦਾ ਹੈ।ਇਸ ਦੀ ਸਭ ਤੋਂ ਪਹਿਲੀ ਅਹਿਮ ਗਵਾਹੀ ਪਾਂਧੇ ਕੋਲ ਪੜ੍ਹਨੇ ਪਾਉਣ ਵਾਲੀ ਘਟਨਾ ਵਿਚੋਂ ਮਿਲਦੀ ਹੈ।ਗੁਰੂ

ਜੀ ਨੂੰ ਜਦੋਂ ਪਾਂਧਾ ਆਖਦਾ ਹੈ ਕਿ,ਤੂੰ ਪੜ੍ਹਦਾ ਕਿਉਂ ਨਹੀਂ?ਤਾਂ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੇ ਮੂੰਹੋਂ ਅਜਿਹੇ ਬੋਲ ਸਾਹਮਣੇ ਆਉਂਦੇ ਹਨ:

ਸਸੈ ਸੋਇ ਸ੍ਰਿਸਟਿ ਜਿਨਿ ਸਾਜੀ ਸਭਨਾ ਸਾਹਿਬੁ ਏਕੁ ਭਇਆ॥
ਸੇਵਤ ਰਹੇ ਚਿਤੁ ਜਿਨ੍ ਕਾ ਲਾਗਾ ਆਇਆ ਤਿਨ੍ ਕਾ ਸਫਲੁ ਭਇਆ॥[2]

ਜੋ ਆਸਾ ਮਹਲਾ 1 ਪਟੀ ਲਿਖੀ;ਬਾਣੀ ਅੰਦਰ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ ਵਿਚ ਸ਼ਾਮਿਲ ਹਨ।ਪਾਂਧੇ ਦੇ ਨਾਲ ਸੰਵਾਦ ਕਰਦੇ ਹੋਏ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੇ ਰਵਾਇਤੀ ਅੰਦਾਜ਼ ਤੋਂ ਹਟਵੇਂ ਵਤੀਰੇ ਕਰਕੇ ਪਾਂਧਾ ਗੁਰੂ ਜੀ ਦੇ ਦੈਵੀ ਅਨੋਖੇ ਅਮਲੀ ਗੁਣਾਂ ਤੋਂ ਜਾਣੂੰ ਹੋ ਜਾਂਦਾ ਹੈ।ਪਾਂਧੇ ਦੇ ਨਾਲ ਸੰਵਾਦ ਰਚਾਉਂਦੇ ਹੋਏ ਰਵਾਇਤੀ ਸਿੱਖਿਆ ਬਾਰੇ ਪ੍ਰਸ਼ਨ ਕਰਦੇ ਹਨ।ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਆਪਣੀ ਮੁਢੱਲੀ ਸਿੱਖਿਆ ਪਿੰਡ ਦੇ ਪੰਡਿਤ ਗੋਪਾਲ ਪਾਸੋਂ ਪ੍ਰਾਪਤ ਕੀਤੀ।ਬਾਦ ਵਿਚ ਇਨ੍ਹਾਂ ਨੂੰ ਸੰਸਕ੍ਰਿਤ ਪੜ੍ਹਨ ਲਈ ਪੰਡਿਤ ਬ੍ਰਿਜ ਲਾਲ ਤੇ ਫ਼ਾਰਸੀ ਪੜ੍ਹਨ ਲਈ ਮੌਲਵੀ ਕੁਤਬਦੀਨ ਪਾਸ ਭੇਜਿਆ ਗਿਆ।[3] ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੇ ਸੁਭਾਉ ਅੰਦਰ ਵੱਧ ਰਹੀ ਗੰਭੀਰਤਾ,ਵਿਚਾਰਾਂ ਦੀ ਵਿਲੱਖਣਤਾ ਅਤੇ ਦੁਨਿਆਵੀ ਧੰਦਿਆਂ ਤੋਂ ਉਪਰਾਮਤਾ ਨੇ ਮਾਪਿਆਂ ਤੇ ਸਾਕ-ਸੰਬੰਧੀਆਂ ਨੂੰ ਸੋਚੀਂ ਪਾ ਦਿੱਤਾ।ਪਿਤਾ ਕਾਲੂ ਜੀ ਵੈਦ ਨੂੰ ਬੁਲਾ ਲਿਆਏ।ਵੈਦ ਨੇ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਜੀ ਦੀ ਨਬਜ਼ ਦੇਖੀ ਤਾਂ ਉਸ ਸਮੇਂ ਗੁਰੂ ਜੀ ਨਾਲ ਤਕਰਾਰ ਹੁੰਦੀ ਹੈ:

ਵੈਦੁ ਬੁਲਾਇਆ ਵੈਦਗੀ,ਪਕੜਿ ਢੰਢੋਲੇ ਬਾਂਹ॥
ਭੋਲਾ ਵੈਦੁ ਨ ਜਾਣਈ ਕਰਕ ਕਲੇਜੇ ਮਾਹਿ॥1॥[4]

ਜਿਸ ਦੀ ਸੰਜੀਦਗੀ ਨੂੰ ਸਭ ਤੋਂ ਪਹਿਲਾਂ ਆਪਦੀ ਭੈਣ ਬੇਬੇ ਨਾਨਕੀ ਤੇ ਸ਼ਹਿਰ ਦੇ ਹਾਕਮ ਰਾਇ ਬੁਲਾਰ ਤੋਂ ਸਿਵਾ ਕੋਈ ਹੋਰ ਬਹੁਤਾ ਸਮਝ ਨਹੀਂ ਸਕਿਆ।ਇਸੇ ਤਰ੍ਹਾਂ ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਬਚਪਨ ਵਿਚ ਜਨੇਊ ਦੀ ਰਸਮ ਸਮੇਂ ਪੰਡਿਤ ਹਰਦਿਆਲ ਦੇ ਨਾਲ ਤਕਰਾਰ ਕੀਤੀ।ਇਨ੍ਹਾਂ ਵਿਚਕਾਰ ਸੰਵਾਦ ਹੋਇਆ।ਜਿਥੇ ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਅਜਿਹੇ ਦੁਨਿਆਵੀ ਸੰਸਕਾਰ ਦੀ ਨਿਸ਼ੇਧੀ ਕੀਤੀ ਅਤੇ ਜਨੇਊ ਦਾ ਰੂਪਾਂਤਰਣ ਕਰਦੇ ਹੋਏ ਆਚਾਰ ਵਿਹਾਰ ਦੇ ਨਾਲ ਸੰਬੰਧ ਜੋੜਿਆ; ਉੱਥੇ ਨਵੇਂ ਜਨੇਊ ਦੀ ਕਲਪਨਾ ਕਰਦੇ ਕਹਿੰਦੇ ਹਨ ਕਿ ਆਤਮਕ ਜਨਮ ਲਈ ਆਤਮਕ ਜਨੇਊ ਹੀ ਚਾਹੀਦਾ ਹੈ ਜੋ ਬੰਦੇ ਦੇ ਮਰਨ ਤੋਂ ਬਾਦ ਵੀ ਅੰਗ-ਸੰਗ ਰਹੇ:

ਦਇਆ ਕਪਾਹ ਸੰਤੋਖੁ ਸੂਤੁ ਜਤੁ ਗੰਢੀ ਸਤੁ ਵਟੁ॥
ਏਹੁ ਜਨੇਊ ਜੀਅ ਕਾ ਹਈ ਤ ਪਾਡੇ ਘਤੁ॥[5]

ਗੁਰੂ ਦੇ ਚਮਤਕਾਰੀ ਸਰੂਪ ਨੂੰ ਚਿਤਰਣ ਵਾਲੀ ਕਾਰਜੀ ਜੁਗਤ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੇ ਮੂੰਹ ਤੋਂ ਉਚਾਰੀ ਬਾਣੀ ਹੈ।ਉਨ੍ਹਾਂ ਦਾ ਆਤਮ-ਚਿੰਤਨ ਕਾਵਿਮਈ ਬਾਣੀ ਦੁਆਰਾ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ਮਾਨ ਹੁੰਦਾ ਹੈ ਜੋ ਚਾਨਣ ਦਾ ਪ੍ਰਤੀਕ ਹੈ।ਅਜਿਹੇ ਆਤਮ-ਚਿੰਤਨ ਨੂੰ ਲੋਕਾਈ ਤਕ ਸੰਚਾਰਨ ਵਾਸਤੇ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਦੇ ਆਲੇ-ਦੁਆਲੇ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦਾ ਆਪਣਾ ਪਰਿਵਾਰ-ਸੰਸਾਰ,ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੇ ਨਾਲ ਰੂਹਾਨੀ ਤੌਰ ਤੇ ਜੁੜੀਆਂ ਹੋਈਆਂ ਅਹਿਮ ਹਸਤੀਆਂ,ਭੈਣ ਬੇਬੇ ਨਾਨਕੀ,ਭਾਈਆ ਜੈਰਾਮ,ਰਾਇ ਬੁਲਾਰ,ਭਾਈ ਮਰਦਾਨਾ ਤੇ ਅਗੇਰੇ ਜਾ ਕੇ ਭਾਈ ਲਹਿਣਾ ਜੀ ਵੀ ਸ਼ਾਮਿਲ ਸਨ।ਇਕ ਪਾਸੇ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੀ ਪ੍ਰਵਿਰਤੀ ਮਾਰਗ ਨਾਲ ਵਚਨ-ਬੱਧਤਾ ਤੇ ਉਸਦੇ ਨਾਲ ਜੁੜੇ ਹੋਏ ਪਾਤਰ ਤੇ ਸਥਿਤੀਆਂ ਸਨ।ਦੂਜੇ ਪਾਸੇ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦਾ ਮੂਲ ਮਨੋਰਥ ਦੂਰ ਕਿਤੇ ਰਚੀ-ਵਸੀ ਭੁੱਲੀ ਭਟਕੀ ਕੁਰਾਹੇ ਪਈ ਦੇਸੀ-ਵਿਦੇਸੀ ਰਾਜਿਆਂ ਜਰਵਾਣਿਆਂ ਦੇ ਜ਼ੁਲਮਾਂ ਤੋਂ ਸਤਾਈ ਲੋਕਾਈ ਵਾਲੇ ਮਨੁੱਖੀ ਸਮਾਜ ਨੂੰ ਸੱਚ ਦਾ ਮਾਰਗ ਦਰਸਾਉਣਾ ਸੀ।ਇਵੇਂ ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਕਉਡੇ ਵਰਗੇ ਰਾਖਸ਼,ਭੂਮੀਏ ਵਰਗੇ ਚੋਰ,ਚਤੁਰਦਾਸ ਵਰਗੇ ਪੰਡਤ,ਮਲਕ ਭਾਗੋ ਜਿਹੇ ਸਰਮਾਏਦਾਰ ਅਤੇ ਰਿੱਧੀਆਂ-ਸਿੱਧੀਆਂ ਦੇ ਮਾਲਕ,ਸੱਜਣ ਵਰਗੇ ਠੱਗ ਨੂੰ ਅਜਿਹੇ ਵਿਚਿੱਤਰ ਢੰਗ ਤੇ ਸੰਵਾਦੀ ਅੰਦਾਜ਼ ਰਾਹੀਂ ਮੋਹ ਲਿਆ।ਇਸੇ ਤਰ੍ਹਾਂ ਗੁਰੂ ਜੀ ਦੇ ਜੀਵਨ ਵਿਚ ਆਉਣ ਵਾਲੇ ਵੱਖੋ-ਵੱਖਰੇ ਖਿੱਤੇ,ਪਾਤਰਾਂ,ਸਥਿਤੀਆਂ ਉੱਤੇ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੀ ਅਨੋਖੀ ਹਸਤੀ ਦਾ ਅਜਿਹਾ ਅਸਰ ਪਿਆ ਕਿ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੇ ਅੰਦਰ ਕਾਰਜਸ਼ੀਲ ਨਕਾਰੀ ਸ਼ਕਤੀਆਂ ਨੂੰ ਲਗਾਮ ਪਈ:

ਉਜਲੁ ਕੈਹਾ ਚਿਲਕਣਾ ਘੋਟਿਮ ਕਾਲੜੀ ਮਸੁ॥
ਧੋਤਿਆ ਜੂਠਿ ਨ ਉਤਰੈ ਜੇ ਸਉ ਧੋਵਾ ਤਿਸੁ॥[6]

ਗੁਰੂ ਜੀ ਦੀ ਨਜ਼ਰ ਵਿਚ ਅਸਲੀ ਸੱਜਣ ਉਹ ਹਨ ਜੋ ਗੁਰੂ ਦੇ ਦੱਸੇ ਮਾਰਗ ਤੇ ਚਲਦੇ ਹਨ।ਜਿੱਥੇ ਪਰਖ ਦੀ ਲੋੜ ਹੋਵੇ ਉੱਥੇ ਸੱਚੇ ਸਾਬਤ ਹੁੰਦੇ ਹਨ।ਸੱਜਣ ਠੱਗ ਦੀ ਸ਼ਖ਼ਸੀਅਤ ਦਾ ਰੁਪਾਂਤਰਣ ਠੱਗ ਤੋਂ ਸੱਜਣ ਵਿਚ ਹੁੰਦਾ ਹੈ ਜਿਸਦੀ ਇਹ ਢੁੱਕਵੀ ਮਿਸਾਲ ਕਹੀ ਜਾ ਸਕਦੀ ਹੈ।ਨਤੀਜਨ ਅਜਿਹੇ ਲੋਕ ਸਦਾ ਲਈ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੇ ਹੀ ਮੁਰੀਦ ਹੋ ਗਏ ਤੇ ਆਪਣੇ ਮੰਦੇ ਕੰਮ ਛੱਡ ਕੇ ਗੁਰੂ ਦੇ ਹੀ ਉਦੇਸ਼ ਤੇ ਸੰਦੇਸ਼ ਨੂੰ ਅਪਨਾਉਣ ਤੇ ਪ੍ਰਚਾਰਨ ਲਗ ਪਏ।ਉਨ੍ਹਾਂ ਦਾ ਮਿੱਠਾ ਸੁਭਾਅ,ਅਦੁੱਤੀ ਸ਼ਖ਼ਸੀਅਤ ਤੇ ਦਿਲ-ਖਿੱਚਵੀਂ ਬਾਣੀ ਹੈ।ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੀ ਜੁੱਰਅਤ ਤੇ ਸ਼ਰਾਫ਼ਤ,ਨਿਮਰਤਾ ਤੇ ਮਿਠਾਸ, ਕਥਨੀ ਤੇ ਕਰਨੀ,ਕਾਵਿ ਤੇ ਸੰਗੀਤ,ਪਹਿਰਾਵੇ ਤੇ ਪ੍ਰਚਾਰ ਦੇ ਢੰਗ ਨੇ ਰਾਹ-ਜਾਂਦਿਆਂ ਨੂੰ ਵੀ ਕੀਲ ਲਿਆ।ਇਵੇਂ ਮਨੁੱਖੀ ਹੋਂਦ ਦੇ ਮੂਲ ਸਰੋਕਾਰਾਂ ਤੇ ਅਮਲੀ ਜੀਵਨ ਦੇ ਤੁਲਨਾਤਮਕ ਪਰਿਪੇਖ ਦੀ ਉਸਾਰੀ ਕਰਦਿਆਂ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਗੁਰਮਤਿ ਜੀਵਨ-ਜੁਗਤ ਦੇ ਮਹੱਤਵ ਨੂੰ ਉਜਾਗਰ ਕਰਦੇ ਹਨ।ਅਜਿਹੇ ਸਮੇਂ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੀ ਰੂਹ ਤੋਂ ਇਕ ਅਜਿਹਾ ਮਾਨਵੀ-ਸਮਾਨਤਾ ਦਾ ਇਕ-ਈਸ਼ਵਰੀ ਨਾਦ ਗੂੰਜਿਆ।ਜਿੱਥੋਂ ਉਹ'ਸਰਬਤ ਦੇ ਭਲੇ'ਨੂੰ ਮੁੱਖ ਰੱਖਦਿਆਂ,ਪਿੰਡੋਂ-ਪਿੰਡ,ਸ਼ਹਿਰੋਂ-ਸ਼ਹਿਰ ਤੇ ਦੇਸੋਂ-ਦੇਸ ਆਪਣੇ ਮਿਸ਼ਨ ਦੀ ਪੂਰਤੀ ਵਾਸਤੇ ਅਦੁੱਤੀ ਸਫ਼ਰ (ਉਦਾਸੀਆਂ)ਤੇ ਨਿਕਲ ਪਏ।ਪੂਰਬ ਤੋਂ ਪੱਛਮ,ਉੱਤਰ ਤੋਂ ਦੱਖਣ ਤਕ ਚਹੁੰਦਿਸ਼ਾਵੀਂ ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਦੂਰ-ਦੂਰ ਤਕ ਪੈਦਲ ਯਾਤਰਾ ਕੀਤੀਆਂ ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਨੂੰ ਸਿੱਖ ਇਤਿਹਾਸ ਅੰਦਰ ਉਦਾਸੀ ਦੀ ਉਪਮਾ ਦਿੱਤੀ ਗਈ ਹੈ।ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਜੀ ਦੀਆਂ ਆਪਣੇ ਮਿਸ਼ਨ ਦੇ ਪ੍ਰਚਾਰ ਅਧੀਨ ਕੀਤੀਆਂ ਦੂਰ ਦੁਰਾਡੇ ਅਧਿਆਤਮਿਕ ਯਾਤਰਾਵਾਂ ਨੂੰ'ਉਦਾਸੀਆਂ'ਦਾ ਨਾਂ ਦਿੱਤਾ ਗਿਆ ਹੈ।ਗੁਰੂ ਜੀ ਦੀਆਂ ਮੁੱਖ ਤੌਰ ਤੇ ਚਾਰ ਉਦਾਸੀਆਂ ਮੰਨੀਆਂ ਜਾਂਦੀਆਂ ਹਨ।ਪੁਰਾਤਨ ਜਨਮਸਾਖੀ ਅਨੁਸਾਰ ਇਹ ਉਦਾਸੀਆਂ ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਚੌਹਾਂ ਦਿਸ਼ਾਵਾਂ ਵੱਲ ਵੱਖ-ਵੱਖ ਭੇਖਾਂ ਵਿਚ ਕੀਤੀਆਂ। ਭਾਈ ਗੁਰਦਾਸ ਜੀ ਅਨੁਸਾਰ ਉਦਾਸੀ ਦੀ ਪਿਰਤ ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਪਾਈ,'ਬਾਬੇ ਭੇਖ ਬਣਾਇਆ ਉਦਾਸੀ ਕੀ ਰੀਤ ਚਲਾਈ'। ਸਾਡਾ ਮੂਲ ਸਰੋਕਾਰ ਗੁਰੂ ਜੀ ਦੀਆਂ ਉਨ੍ਹਾਂ ਅਦੁੱਤੀ ਯਾਤਰਾਵਾਂ ਨਾਲ ਹੈ ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਅੰਦਰ ਵਿਚਰਦਿਆਂ ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੂੰ ਜੋ ਜੀਵਨ ਅਨੁਭਵ ਹਾਸਲ ਹੋਏ ਅਤੇ ਉਹ ਭਾਈ ਮਰਦਾਨੇ ਦੇ ਸੰਗੀਤਮਈ ਸਾਥ ਰਾਹੀਂ ਸਿਰਜੀ ਬਾਣੀ ਅੰਦਰ ਸਾਕਾਰ ਹੋਏ।ਜੇ ਗੁਰੂ ਜੀ ਦੀ ਜੀਵਨ ਕੈਨਵਸ ਨੂੰ ਦੇਖਿਆ ਜਾਵੇ ਤਾਂ ਆਪਣੇ ਵਡੇਰਿਆਂ ਤੇ ਮਾਂ-ਪਿਉ ਦੇ ਆਗਿਆਕਾਰੀ,ਆਪਣੇ ਆਲੇ-ਦੁਆਲੇ ਪਸਰੀ ਲੋਕਾਈ ਬਾਰੇ ਸਚੇਤ ਅਤੇ ਅੰਤਰਮਨ ਤੋਂ ਸੱਚ ਤੇ ਨੇਕੀ ਬਾਰੇ ਰੁਝਾਨ ਸਪਸ਼ਟ ਰੂਪ ਵਿਚ ਨਜ਼ਰ ਆਉਂਦਾ ਹੈ।ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੀ ਭੈਣ ਬੇਬੇ ਨਾਨਕੀ ਇਨ੍ਹੀ ਦਿਨ੍ਹੀਂ ਤਲਵੰਡੀ ਆਏ ਹੋਏ ਸਨ,ਉਹ ਆਪਣੇ ਛੋਟੇ ਭਰਾ ਨਾਨਕ ਨੂੰ ਸੁਲਤਾਨਪੁਰ ਲੈ ਗਏ ਅਤੇ ਭਾਈਆ ਜੈਰਾਮ ਦੇ ਰਸੂਖ ਨਾਲ ਨਵਾਬ ਦੌਲਤ ਖ਼ਾਨ ਦੇ ਮੋਦੀਖਾਨੇ ਵਿਚ ਨੌਕਰ ਕਰਵਾ ਦਿੱਤਾ।ਮੁੱਢਲੀ ਜ਼ਿੰਦਗੀ ਦਾ ਦੂਜਾ ਹਿੱਸਾ ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਇਥੇ ਹੀ ਗੁਜ਼ਾਰਿਆ।

ਲਗਭਗ 10 ਸਾਲ ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਸੁਲਤਾਨਪੁਰ ਗੁਜ਼ਾਰੇ।ਜਿਸ ਦੌਰਾਨ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦਾ ਰੋਜ਼ਾਨਾ ਦਾ ਨਿਤਨੇਮ ਮੂੰਹ ਹਨ੍ਹੇਰੇ ਵੇਈਂ ਨਦੀ ਵਿਚ ਇਸ਼ਨਾਨ ਕਰਨਾ ਤੇ ਸ਼ਾਮ ਨੂੰ ਬਾਣੀ/ਕੀਰਤਨ ਤੇ ਸੰਤਸੰਗ ਚਲਦਾ ਸੀ।ਇਸ ਦੌਰਾਨ ਆਪਣੀ ਨੌਕਰੀ ਇਮਾਨਦਾਰੀ ਨਾਲ ਨਿਭਾਈ।‘ਤੇਰਾ-ਤੇਰਾ’ਕਰਕੇ ਧਾਰਨਾ ਤੋਲਦੇ ਸਨ ਤੇ ਸੁਲਤਾਨਪੁਰ ਦੇ ਆਲੇ-ਦੁਆਲੇ ਵਿਚ ਉਹ ਪ੍ਰਸਿੱਧ ਹੋ ਗਏ।ਅਜਿਹੀ ਨੇਕਨਾਮੀ ਤੋਂ ਈਰਖਾਵਸ ਰਿਸ਼ਵਤਖੋਰ ਕਰਮਚਾਰੀਆਂ ਨੇ ਨਵਾਬ ਦੌਲਤ ਖ਼ਾਨ ਕੋਲ ਸ਼ਿਕਾਇਤ ਕਰ ਦਿਤੀ।ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਮੋਦੀਖਾਨੇ ਦੀ ਨੌਕਰੀ ਦੌਰਾਨ ਲੋੜਵੰਦਾਂ ਦੀ ਸਹਾਇਤਾ ਕਰਦੇ ਸਨ।ਫਿਰ ਇਕ ਦਿਨ ਅਜਿਹੀ ਘਟਨਾ ਵਾਪਰੀ ਕਿ ਸਾਰੇ ਸ਼ਹਿਰ ਵਿਚ ਇਹ ਭਿਆਨਕ ਖ਼ਬਰ ਫੈਲ ਗਈ ਕਿ ਬਾਬਾ ਨਾਨਕ ਵੇਈਂ ਨਦੀ ਵਿਚ ਡੁੱਬ ਗਏ ਹਨ।ਅਜਿਹੇ ਸਮੇਂ ਹਿੰਦੂ,ਮੁਸਲਮਾਨ,ਨਵਾਬ,ਪੰਡਤ ਤੇ ਕਾਜ਼ੀ ਵੀ ਦੁਖੀ ਹੋ ਗਏ ਕਿਉਂ ਜੋ ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਲੋਕਾਂ ਦੇ ਮਨਾਂ ਵਿਚ ਆਪਣੀ ਖ਼ਾਸ ਥਾਂ ਬਣਾ ਲਈ ਸੀ।ਸਾਰਾ ਸੁਲਤਾਨਪੁਰ ਸ਼ੋਕ ਦੀ ਲਹਿਰ ਵਿਚ ਡੁੱਬ ਗਿਆ।ਮਗਰੋਂ ਇਹ ਪਤਾ ਲਗਾ ਕਿ ਬਾਬਾ ਨਾਨਕ ਮੜ੍ਹੀਆਂ ਵਿਚ ਬੈਠਾ ਹੈ ਅਤੇ ਮੂੰਹੋਂ,‘ਨਾ ਕੋਈ ਹਿੰਦੂ ਨਾ ਮੁਸਲਮਾਨ’ਦੇ ਬੋਲ ਇਕਰਸ ਉਚਾਰ ਰਿਹਾ ਹੈ।ਦੋਵੇਂ ਧਿਰਾਂ ਬਾਬੇ ਦੀ ਹਾਲਤ ਵੇਖ ਕੇ ਕਹਿਣ ਲੱਗੀਆਂ ਕਿ ਫ਼ਕੀਰੀ ਰੁਚੀਆਂ ਹੋਣ ਕਰਕੇ ਇਹ ਦੀਵਾਨਾ ਹੋ ਗਿਆ ਹੈ।ਇਸ ਚਰਚਾ ਸਮੇਂ ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਮਾਰੂ ਰਾਗ ਵਿਚ ਇਹ ਸ਼ਬਦ ਉਚਾਰਿਆ:

ਕੋਈ ਆਖੈ ਭੂਤਨਾ ਕੋ ਕਹੈ ਬੇਤਾਲਾ॥
ਕੋਈ ਆਖੈ ਆਦਮੀ ਨਾਨਕੁ ਵੇਚਾਰਾ॥ [7]

ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ 28 ਸਾਲ ਦੀ ਉਮਰ ਵਿਚ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਜੀ ਨੇ ਉਦਾਸੀ ਰੂਪ ਵਿਚ ਸੰਸਾਰ-ਰਟਨ ਲਈ ਤਿਆਰੀ ਕੀਤੀ।ਇਸ ਉਦਾਸੀ ਸਮੇਂ ਮਰਦਾਨਾ ਰਬਾਬੀ ਗੁਰੂ ਜੀ ਦਾ ਸਾਥੀ ਬਣਿਆ।ਇਥੋਂ ਤੱਕ ਗੁਰੂ ਜੀ ਘਰ-ਗਹ੍ਰਿਸਥੀ ਤੇ ਸੰਸਾਰਕ ਸਾਥ ਨਿਭਾਉਂਦੇ ਤੇ ਨਾਮ-ਬਾਣੀ ਦੇ ਨਾਲ ਜੁੜੇ ਹੋਏ ਨਜ਼ਰ ਆਉਂਦੇ ਹਨ।ਇਥੋਂ ਤਕ ਪਹੁੰਚ ਕੇ ਇਹ ਕਿਹਾ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ ਕਿ ਉਸ ਵੇਲੇ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦੀ ਉਮਰ 28 ਸਾਲ ਦੀ ਸੀ ਤੇ ਜਦੋਂ ਉਹ ਪਹਿਲੀ ਉਦਾਸੀ ਵਾਸਤੇ ਘਰੋਂ ਨਿਕਲੇ।ਇਵੇਂ ਆਪਣੀ ਗ੍ਰਹਿਸਥੀ ਮਾਰਗ ਨਾਲ ਜੁੜੀਆਂ ਜ਼ਿੰਮੇਵਾਰੀਆਂ ਨੂੰ ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਬਕਾਇਦਾ ਧਿਆਨ ਵਿਚ ਵੀ ਰਖਿਆ ਤੇ ਆਪਣੇ ਅਗਲੇ ਪੜਾਅ (ਉਦਾਸੀਆਂ) ਵਲ ਰੁਖ਼ ਕੀਤਾ।ਜੇ ਗੌਰ ਨਾਲ ਦੇਖਿਆ ਜਾਵੇ ਤਾਂ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਦੇ ਜੀਵਨ ਦੇ ਇਤਿਹਾਸਕ ਪੱਖੋਂ ਤਿੰਨ ਪੜਾਅ ਕਹੇ ਜਾ ਸਕਦੇ ਹਨ:ਪਹਿਲਾ ਹਿੱਸਾ 1469 ਤੋਂ 1497 ਈ.ਤਕ,28 ਸਾਲ ਦਾ ਬਚਪਨ ਤੋਂ ਲੈ ਕੇ ਉਦਾਸੀਆਂ ਤਕ ਘਰ ਗ੍ਰਹਿਸਥ ਵਾਲਾ ਜੀਵਨ,ਦੂਜਾ ਪੜਾਅ 1497 ਤੋਂ 1521 ਈ. ਤਕ ਉਦਾਸੀਆਂ ਵਾਲਾ ਰਮਤਾ ਜੀਵਨ ਹੈ।ਤੀਜਾ ਪੜਾਅ 1521 ਤੋਂ 1539 ਈ.ਤਕ ਦੇ 18 ਸਾਲ ਕਰਤਾਰਪੁਰ ਵਾਲਾ ਜੋ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦਾ ਅਮਲੀ ਜੀਵਨ ਹੈ।ਜਿਸ ਅੰਦਰ ਗੁਰੂ ਜੀ ਦੇ ਕਈ ਹਜ਼ਾਰਾਂ ਮੀਲਾਂ,ਦੇਸ਼-ਦੇਸ਼ਾਂਤਰ ਤੋਂ ਕਮਾਏ ਤਜਰਬੇ ਹਨ।ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਰੂਹਾਨੀ ਗਿਆਨ ਦੇ ਆਧਾਰ ਤੇ ਕਰਤਾਰਪੁਰ ਰਹਿ ਕੇ ਅਜਿਹੀ ਘਾਲ ਕਮਾਈ ਕੀਤੀ ਜਿਸਨੂੰ ਸੰਗਤੀ ਜੀਵਨ(ਸੰਗਤ ਤੇ ਪੰਗਤ,ਨਾਮ ਜਪਣਾ)ਕਿਹਾ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ।ਗੁਰੂ ਜੀ ਦੀ ਜ਼ਿੰਦਗੀ ਦਾ ਦੂਜਾ ਅਹਿਮ ਯਾਦਗਾਰੀ ਦੌਰ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੀਆਂ ਅਦੁੱਤੀ ਯਾਤਰਾਵਾਂ/ਉਦਾਸੀਆਂ ਵਾਲਾ ਹੈ ਜਿਸ ਵਿਚ ਆਪ ਦੀਆਂ ਮੁੱਖ ਤੌਰ ਤੇ ਚਾਰ ਉਦਾਸੀਆਂ ਮੰਨੀਆਂ ਜਾਂਦੀਆਂ ਹਨ।ਇਨ੍ਹਾਂ ਦਾ ਸਮਾਂ 1497 ਤੋਂ 1521 ਈ. ਤਕ 24 ਸਾਲ ਦਾ ਮੰਨਿਆਂ ਜਾਂਦਾ ਹੈ।ਜਨਮਸਾਖੀ ਦੇ ਅੰਦਰ ਇਨ੍ਹਾਂ ਉਦਾਸੀਆਂ ਦਾ ਸਮਾਂ ਪੂਰਬ ਤੋਂ ਪਛੱਮ ਅਤੇ ਉੱਤਰ ਤੋਂ ਦੱਖਣ ਦਿਸ਼ਾ ਮੁਤਾਬਕ ਬਿਆਨਿਆ ਗਿਆ ਹੈ।ਗਿਆਨੀ ਲਾਲ ਸਿੰਘ ਨੇ ਆਪਣੇ ਖੋਜ-ਪੱਤਰ ਅੰਦਰ ਇਹ ਵੰਡ ਸਮੇਂ ਅਨੁਸਾਰ ਕੀਤੀ ਹੈ:

ਪਹਿਲੀ ਉਦਾਸੀ 1497 ਤੋਂ 1509 ਈ.ਤੱਕ
ਦੂਜੀ ਉਦਾਸੀ 1510 ਤੋਂ 1515 ਈ.ਤੱਕ
ਤੀਜੀ ਉਦਾਸੀ 1515 ਤੋਂ 1517 ਈਂ ਤੱਕ
ਚੌਥੀ ਉਦਾਸੀ 1517 ਤੋਂ 1521 ਈ.ਤੱਕ [8]

ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੇ ਜੀਵਨ ਦਾ ਇਹ ਦੂਜਾ ਪੜਾਅ ਪਹਿਲੀ ਉਦਾਸੀ ਤੇ ਜਾਣਾ ਹੈ ਜੋ ਤਕਰੀਬਨ ਸਵਾ ਅੱਠ ਸਾਲ ਦੀ ਮੰਨੀ ਜਾਂਦੀ ਹੈ।ਪ੍ਰੋ.ਸਾਹਿਬ ਸਿੰਘ ਨੇ ਗੁਰੂ ਜੀ ਪਹਿਲੀ ਉਦਾਸੀ ਦੇ ਪੈਂਡੇ ਦਾ ਅੰਦਾਜ਼ਾ ਸੁਲਤਾਨਪੁਰ ਤੋਂ ਸ਼ੁਰ ਹੋ ਕੇ ਹਰਿਦੁਆਰ, ਅਯੁਧਿਆ, ਗੋਹਾਟੀ, ਢਾਕਾ, ਜਗਨਨਾਥਪੁਰੀ, ਰਾਮੇਸ਼ਵਰ ਤੱਕ ਅਤੇ ਸਿੰਘਲਾਦੀਪ ਦੇ ਇਕ ਸਾਲ ਦਾ ਸਫ਼ਰ ਛੱਡ ਕੇ ਕੋਚੀਨ ਤੱਕ ਜਹਾਜ਼ ਤੇ, ਕੋਚੀਨ ਤੋਂ ਨਲਿਗਿਰੀ,ਪੂਨੇ ਤੋਂ ਨਾਸਿਕ, ਸੋਮਨਾਥ ਤੋਂ ਅਜਮੇਰ,ਪਾਨੀਪਤ ਤੋਂ ਕੁਰਸ਼ੇਤਰ 6500 ਮੀਲ ਦੇ ਕਰੀਬ ਮੰਨਿਆ ਹੈ।ਸੋ ਪਹਿਲੀ ਉਦਾਸੀ 3015 ਦਿਨਾਂ ਦੀ ਦੱਸੀ ਹੈ। [9] ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਪਹਿਲੀ ਉਦਾਸੀ 1497 ਵਿਚ ਸੁਲਤਾਨਪੁਰ ਲੋਧੀ ਤੋਂ ਸ਼ੁਰੂ ਹੁੰਦੀ ਹੈ।ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਆਪਣੇ ਮਿਥੇ ਟੀਚੇ ਅਨੁਸਾਰ ਹਿੰਦੂ ਤੀਰਥਾਂ ਵਲ ਰੁਖ਼ ਕੀਤਾ।ਭਾਈ ਗੁਰਦਾਸ ਜੀ ਨੇ ਇਸ ਬਾਬਤ ਆਪਣੀ ਪਹਿਲੀ ਵਾਰ ਵਿਚ ਇਵੇਂ ਲਿਖਿਆ ਹੈ:

ਬਾਬਾ ਆਯਾ ਤੀਰਥੀਂ,ਤੀਰਥ-ਪੁਰਬ ਸਭੈ ਫਿਰ ਦੇਖੈ॥ [10]

ਇਨ੍ਹਾਂ ਕੇਂਦਰੀ ਧਰਮ ਅਸਥਾਨਾਂ ਤੇ ਪੁੱਜ ਕੇ ਖੋਖਲੀਆਂ ਰੀਤਾਂ,ਮਨੌਤਾਂ ਅਤੇ ਭਰਮਾਂ ਦਾ ਖੰਡਨ ਕੀਤਾ।ਖਾਣ-ਪੀਣ ਤੇ ਪਾਬੰਦੀਆਂ,ਪਿਤਰ-ਪੂਜਾ,ਬੁੱਤ-ਪੂਜਾ,ਅਜਿਹੇ ਬੰਧਨਾਂ ਉੱਤੇ ਆਪ ਜੀ ਨੇ ਸੁਝਾਉ ਤੇ ਉਸਾਰੂ ਟਿੱਪਣੀ ਕੀਤੀ।ਉਹ ਸਭ ਤੋਂ ਪਹਿਲਾਂ ਹਰਿਦੁਆਰ,ਵਿਸਾਖੀ ਦੇ ਮੌਕੇ ਪੁੱਜੇ ਜਿਹੜਾ ਹਿੰਦੂਆਂ ਦਾ ਪਿਤਰ-ਪੂਜ ਤੀਰਥ ਹੈ।ਉਥੇ ਆਪ ਜੀ ਨੇ ਸੂਰਜ ਨੂੰ ਪਾਣੀ ਦੇ ਰਹੇ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਸੋਝੀ ਦੇਣ ਲਈ ਆਪ ਪੱਛਮ ਵਾਲੇ ਪਾਸੇ ਪਾਣੀ ਦੇਣ ਲੱਗ ਪਏ।ਇਸ ਘਟਨਾ ਨੂੰ ਵੇਖ ਉੱਥੇ ਇੱਕਠੇ ਹੋਏ ਲੋਕ ਤੇ ਪੰਡਤਾਂ ਨੇ ਇਸ ਵਰਤਾਰੇ ਨੂੰ ਵੇਖਿਆ ਤੇ ਹੈਰਾਨ ਹੋਏ।ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਸਵਾਲ ਕੀਤਾ ਕਿ ਉਹ ਕਿਸ ਨੂੰ ਪਾਣੀ ਦੇ ਰਹੇ ਹਨ?ਜਵਾਬ ਵਿਚ ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਕਿਹਾ,ਉਹ ਆਪਣੇ ਕਰਤਾਰਪੁਰ ਖੇਤਾਂ ਨੂੰ ਪਾਣੀ ਦੇ ਰਹੇ ਹਨ।ਜਵਾਬ ਵਿਚ ਪੰਡਤਾਂ ਨੇ ਇਤਰਾਜ਼ ਕੀਤਾ ਕਿ ਸੈਂਕੜੇ ਮੀਲ ਦੂਰ ਪਾਣੀ ਕਿਵੇਂ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ?ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਤਰਕ ਦਾ ਸਹਾਰਾ ਲੈਂਦੇ ਹੋਏ ਇਹ ਕਿਹਾ ਕਿ ਜੇ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦਾ ਪਾਣੀ ਕਰੋੜਾਂ ਮੀਲ ਪਤਾ ਨਹੀਂ ਕਿਥੇ ਸੰਸਾਰ ਤਿਆਗੇ ਪਿੱਤਰਾਂ ਨੂੰ ਪੁੱਜ ਸਕਦਾ ਹੈ ਪਰ ਮੇਰੀ ਖੇਤੀ ਤਾਂ ਕੁਝ ਸੈਂਕੜੇ ਮੀਲ ਦੂਰ ਹੈ।ਬਾਣੀ ਅੰਦਰ ਇਸ ਰਸਮ ਬਾਰੇ ਤਰਕ ਦੇ ਆਧਾਰ ਤੇ ਇਵੇਂ ਨਕਾਰਿਆ ਹੈ:

ਜੇ ਮੋਹਾਕਾ ਘਰ ਮੁਹੈ ਘਰੁ ਮੁਹਿ ਪਿਤਰੀ ਦੇਇ॥
ਅਗੈ ਵਸਤੁ ਸਿਞਾਣੀਐ ਪਿਤਰੀ ਚੋਰ ਕਰੇਇ॥ [11]

ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਮਥੁਰਾ ਤੋਂ ਦਿੱਲੀ ਦੇ ਰਸਤੇ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜਦੋਂ 36 ਦਿਨਾਂ ਦਾ ਪੈਂਡਾਂ ਤਹਿ ਕਰਕੇ ਵੈਸ਼ਨਵਾਂ ਦੇ ਗੜ੍ਹ ਤੀਰਥ ਸਥਾਨ ਕੁਰਸ਼ੇਤਰ ਪਹੁੰਚੇ ਤਾਂ ਅਜਿਹੇ ਸਮੇਂ ਸੂਰਜ ਗ੍ਰਹਿਣ ਲੱਗਿਆ ਹੋਇਆ ਸੀ।ਉਸ ਸਮੇਂ ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਭਾਈ ਮਰਦਾਨਾ ਨੂੰ ਭੋਜਨ ਬਣਾਉਣ ਲਈ ਕਿਹਾ ਤੇ ਉੱਥੇ ਪੰਡਤਾਂ ਦੇ ਨਾਲ ਬਹਿਸ ਹੋਈ।ਅਜਿਹੇ ਸਮੇਂ ਮਾਸ ਖਾਣ ਬਾਰੇ ਚਰਚਾ ਵੀ ਹੋਈ ਜਿਸਦਾ ਆਪ ਜੀ ਨੇ ਤਾਰਕਿਕ/ਵਿਗਿਆਨਿਕ ਢੰਗ ਨਾਲ ਸਪੱਸ਼ਟੀਕਰਨ ਦਿੱਤਾ:

ਹਕੁ ਪਰਾਇਆ ਨਾਨਕਾ ਉਸੁ ਸੂਅਰ ਉਸੁ ਗਾਇ॥
ਗੁਰੁ ਪੀਰੁ ਹਾਮਾ ਤਾ ਭਰੇ ਜਾ ਮੁਰਦਾਰੁ ਨ ਖਾਇ॥[12]

ਇਸੇ ਦੌਰਾਨ ਜਦੋਂ ਗੁਰੂ ਜੀ ਜਗਨਨਾਥ(ਪੁਰੀ) ਗਏ ਸਨ,ਉੱਥੇ ਬ੍ਰਾਹਮਣ-ਪੁਜਾਰੀਆਂ ਵੱਲੋਂ ਮੰਦਰ ਵਿਚ ਠਾਕੁਰ ਦੀ ਮੂਰਤੀ ਅੱਗੇ ਸੰਧਿਆਂ ਸਮੇਂ ਥਾਲ-ਦੀਵਿਆਂ ਦੀ ਸਮੱਗਰੀ ਵਾਲੀ ਕੀਤੀ ਗਈ ਆਰਤੀ ਦੇ ਸਮਾਨੰਤਰ ਵਿਸ਼ਵ-ਵਿਆਪੀ ਕਾਇਨਾਤ ਅੰਦਰ ਵਾਪਰਨ,ਕੁਦਰਤ ਦੀ ਗੋਦ ਵਿਚ ਵਿਚਰਨ ਵਾਲੀ ਆਰਤੀ ਦੀ ਪੇਸ਼ਕਾਰੀ ਕੀਤੀ।ਇਵੇਂ ਰੂਪਾਂਤਰਿਤ ਸਰਲ-ਸਹਿਜ ਪ੍ਰਕਿਰਤਕ ਆਰਤੀ ਦੀ ਰੂਪ-ਰੇਖਾ ਅਤੇ ਜੁਗਤ ਦੱਸੀ ਹੈ ਜਿਥੇ ਜਨ ਮਾਨਸਿਕਤਾ ਵਿਚ ਵਿਆਪਕ ਪਰੰਪਰਾਗਤ ਰੂੜ੍ਹੀਆਂ ਦੀ ਅੰਧ-ਵਿਸ਼ਵਾਸੀ ਪਰੰਪਰਾ ਨੂੰ ਮੁੜ ਵਿਚਾਰਨ ਲਈ ਪ੍ਰੇਰਣਾ ਦਿੱਤੀ:

ਗਗਨ ਮੈ ਥਾਲੁ ਰਵਿ ਚੰਦ ਦੀਪਕ ਬਨੇ ਤਾਰਿਕਾ ਮੰਡਲ ਜਨਕ ਮੋਤੀ॥
ਧੂਪ ਮਲਆਨਲੋ ਪਵਣੁ ਚਵਰੋ ਕਰੇ ਸਗਲ ਬਨਰਾਇ ਫੂਲੰਤ ਜੋਤੀ॥
ਕੈਸੀ ਆਰਤੀ ਹੋਇ ਭਵਖੰਡਨਾ ਤੇਰੀ ਆਰਤੀ॥
ਅਨਹਤਾ ਸਬਦ ਵਾਜੰਤ ਭੇਰੀ॥1॥[13]

ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਪਰੰਪਰਾਈ ਆਰਤੀ ਕਰਦਿਆ ਪਰਮਾਤਮਾ ਦੀ ਉਸਤਤੀ ਦੇ ਅਨੇਕ ਦਿਸ਼ਾਵੀਂ ਅਰਥ ਪ੍ਰਦਾਨ ਕੀਤੇ ਅਤੇ ਅੰਤਰ ਸੰਵਾਦ ਦੀ ਜੁਗਤ ਰਾਹੀਂ ਤਰਕਹੀਣ ਵਿਸ਼ਵਾਸ ਅਤੇ ਸਾਰਹੀਣ ਕਿਰਿਆਵਾਂ ਦਾ ਖੰਡਨ ਕੀਤਾ ਹੈ।ਇਸੀ ਉਦਾਸੀ ਦੌਰਾਨ ਗੁਰੂ ਜੀ ਦੀ ਅਹਿਮ ਵਾਰਤਾਲਾਪ ਆਸਾ ਦੇਸ ਵਿਚ ਸ਼ੇਖ ਫ਼ਰੀਦ ਦੇ ਨਾਲ ਹੁੰਦੀ ਹੈ ਜਿਸਦਾ ਪੁਰਾਤਨ ਜਨਮਸਾਖੀ ਵਿਚ ਹਵਾਲਾ ਮਿਲਦਾ ਹੈ ਤੇ ਉੱਥੇ ਪਹੁੰਚ ਕੇ ਸ਼ੇਖ ਫ਼ਰੀਦ ਨੇ'ਅਲਹੁ ਅਲਾ ਦਰਵੇਸ'ਕਹਿ ਕੇ ਸੰਬੋਧਨ ਕੀਤਾ ਤੇ ਜਵਾਬ ਵਿਚ ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਕਿਹਾ:

ਅਲਹ ਫ਼ਰੀਦ ਜ਼ੁਹਦੀ,ਹਮੇਸ ਆਉ ਸ਼ੇਖ ਫ਼ਰੀਦ ਜ਼ੁਹਦੀ,ਅਲਹ ਅਲਹ।[14]

ਫਿਰ ਦੋਵੇਂ ਦਸਤਪੰਜਾ ਲੈ ਕੇ ਆਪਸ ਵਿਚ ਵਿਚਾਰ-ਵਟਾਂਦਰਾ ਕਰਦੇ ਹਨ।ਸ਼ੇਖ ਫ਼ਰੀਦ ਦੀ ਲੰਮੀ ਬਹਿਸ ਪਿੱਛੇ ਜ਼ਿਕਰਯੋਗ ਪ੍ਰਾਪਤ ਬਾਣੀ ਅੰਦਰ ਲਲਿਤ ਰਾਗ ਵਿਚ ਸ਼ਬਦ ਦਰਜ ਹੈ:

ਬੇੜਾ ਬੰਧਿ ਨ ਸਕਿਓ ਬੰਧਨ ਕੀ ਵੇਲਾ॥
ਭਰਿ ਸਰਵਰੁ ਜਬ ਊਛਲੈ ਤਬ ਤਰਣੁ ਦੁਹੇਲਾ॥[15]

ਜਵਾਬ ਵਿਚ ਇਸੇ ਤਰ੍ਹਾਂ ਸੂਹੀ ਰਾਗ ਵਿਚ ਦੂਸਰੇ ਸ਼ਬਦ ਦੀ ਉਦਾਹਰਣ ਮਿਲਦੀ ਹੈ:

ਜਪ ਤਪ ਕਾ ਬੰਧ ਬੇੜੁਲਾ ਜਿਤੁ ਲੰਘਹਿ ਵਹੇਲਾ॥
ਨਾ ਸਰਵਰੁ ਨਾ ਊਛਲੈ ਐਸਾ ਪੰਥ ਸੁਹੇਲਾ॥[16]

ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਕਾਫੀ ਲੰਮੀ ਵਾਰਤਾਲਾਪ ਤੋਂ ਮਗਰੋਂ ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਬਾਬੇ ਨਾਨਕ ਤੇ ਸ਼ੇਖ ਬ੍ਰਹਮ ਦੇ ਨਾਲ ਦਰਵੇਸ਼ੀ ਕੀਤੀ ਅਤੇ ਇਕੋ ਰੱਬ ਦੇ ਨਾਲ ਜੁੜੇ ਰਹਿਣ ਦਾ ਵਚਨ ਕੀਤਾ।ਇਸੇ ਉਦਾਸੀ ਦੇ ਅਖੀਰ ਵਾਪਸੀ ਮਗਰੋਂ ਆਪ ਨੇ ਭਾਈ ਕਰੋੜੀਏ ਤੇ ਭਾਈ ਦੋਦੇ ਦੀ ਬੇਨਤੀ ਮੰਨ ਕੇ ਕਰਤਾਰਪੁਰ ਸ਼ਹਿਰ ਵਸਾਇਆ ਜਿਥੇ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦਾ ਪਰਿਵਾਰ ਵੀ ਸ਼ਾਮਲ ਹੋ ਜਾਂਦਾ ਹੈ।ਇਸ ਤੋਂ ਮਗਰੋਂ ਕਰਤਾਰਪੁਰ ਵਿਖੇ ਪਰਿਵਾਰ ਅੰਦਰ ਵਿਸਮਾਦੀ ਸੰਗੀਤਮਈ ਜੀਵਨ ਸ਼ੁਰੂ ਹੋ ਜਾਂਦਾ ਹੈ।ਹਰ ਉਦਾਸੀ ਵੇਲੇ ਨਿਕਲਦੇ ਤੇ ਪੂਰੀ ਹੋਣ ਤੇ ਵਾਪਸੀ ਵੇਲੇ ਇਥੇ ਹੀ ਟਿਕਦੇ ਰਹੇ।

ਦੂਜੀ ਉਦਾਸੀ ਕਰਤਾਰਪੁਰ ਤੋਂ 1510 ਈ. ਦੱਖਣ ਦੇਸ ਵਲ ਸ਼ੁਰੂ ਹੁੰਦੀ ਹੈ ਜੋ ਜੈਨ ਤੇ ਬੁੱਧ ਧਰਮ ਦੇ ਤੀਰਥਾਂ ਦੇ ਨਾਂ ਨਾਲ ਪ੍ਰਸਿੱਧ ਹੈ।ਇਸ ਦੌਰਾਨ ਆਪ ਬੀਕਾਨੇਰ, ਹੈਦਰਾਬਾਦ, ਮਦਰਾਸ, ਰਾਮੇਸ਼ਵਰ ਤੇ ਲੰਕਾਂ ਆਦਿ ਦਿਸ਼ਾਵਾਂ ਵੱਲ ਗਏ ਅਤੇ ਬੰਬਈ,ਸੋਮਨਾਥ, ਕੱਛ,ਬਹਾਵਲਪੁਰ ਆਦਿ ਵਾਪਸੀ ਦੇ ਮੁੱਖ ਟਿਕਾਣੇ ਰਹੇ।ਇਸ ਉਦਾਸੀ ਦਾ ਸਮਾਂ ਪੰਜ ਸਾਲ ਦਾ ਕਿਹਾ ਜਾਂਦਾ ਹੈ।ਇਸ ਉਦਾਸੀ ਸਮੇਂ ਸਰੋਹੀ ਤੇ ਕੋਹ ਅਬੂ ਜੈਨ ਧਰਮ ਦੇ ਪ੍ਰਸਿੱਧ ਸਥਾਨਾਂ ਤੇ ਪਹੁੰਚਦੇ ਹਨ ਜਿੱਥੇ ਬਹੁਤ ਸਾਰੇ ਜੈਨ ਸਾਧੂ ਮੱਠਾਂ ਵਿਚ ਨਿਵਾਸ ਕਰਦੇ ਸਨ।ਇਸੇ ਤਰ੍ਹਾਂ ਦੂਜੀ ਉਦਾਸੀ ਵਿਚ ਜੈਨ ਤੇ ਬੁੱਧ ਅਚਾਰੀਆਂ ਨਾਲ ਚਰਚਾ ਕੀਤੀ ਅਤੇ ਆਪਣੇ ਸਿਧਾਂਤ ਨੂੰ ਨਿਖੜਵੇਂ ਰੂਪ ਵਿਚ ਪੇਸ਼ ਕੀਤਾ।ਇਸ ਤੋਂ ਅਗਲਾ ਅਹਿਮ ਪੜਾਅ ਗੁਰੂ ਜੀ ਦਾ ਵਿਚਾਰ-ਵਟਾਂਦਰਾ,ਵਾਰਤਾਲਾਪ,ਗੋਸਟਿ ਜਾਂ ਅੰਤਰ ਸੰਵਾਦ ਦਾ ਹੈ ਜਿਸਦੇ ਅਧੀਨ ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ ਅੰਦਰ ਰਚੀ ਦਰਜ ਬਾਣੀ ਰਾਗ ਰਾਮਕਲੀ ਵਿਚ"ਸਿੱਧ ਗੋਸਟਿ"ਖ਼ਾਸ ਤੌਰ ਤੇ ਵਰਣਨ ਯੋਗ ਹੈ।ਇਹ ਕੋਈ ਮਾਮੂਲੀ ਗੱਲਬਾਤ ਜਾਂ ਵਾਰਤਾਲਾਪ ਨਹੀਂ।ਇਸ ਲਿਖਤ ਦੀਆਂ ਜੜ੍ਹਾਂ ਸਾਡੀ ਪ੍ਰਾਚੀਨ ਭਾਰਤੀ ਪਰੰਪਰਾ ਅੰਦਰ ਰਚੀ ਵਸੀ ਤੁਰੀ ਆ ਰਹੀ ਵਿਚਾਰ-ਵਟਾਂਦਰੇ ਤੇ ਗਿਆਨ ਦੇ ਆਦਾਨ-ਪ੍ਰਦਾਨ ਵਾਲੀ ਗੰਭੀਰ ਪਰੰਪਰਾ ਵਿਚ ਮੌਜੂਦ ਹਨ।ਜਿਸਦੇ ਬਾਰੇ"ਸਿੱਧ ਗੋਸਟਿ"ਬਾਬਤ ਵਿਚਾਰ ਕਰਦੇ ਹੋਏ ਆਪਣੇ ਖੋਜ-ਪੱਤਰ ਅੰਦਰ ਪਿਆਰਾ ਸਿੰਘ ਪਦਮ ਨੇ ਅਜਿਹੀ ਭਾਰਤੀ ਦਾਰਸ਼ਨਿਕ ਸਾਹਿਤ ਦੀ ਪਰੰਪਰਾ ਬਾਰੇ ਸੰਕੇਤ ਕੀਤਾ ਹੈ।ਪੁਰਾਣੇ ਸ਼ਾਸਤ੍ਰਾਂ ਵਿਚ ਇਕ ਆਮ ਰੀਤ ਹੈ ਕਿ ਕਿਸੇ ਗੁੰਝਲਦਾਰ ਮਸਲੇ ਉੱਤੇ ਵਾਦੀ-ਪ੍ਰਤਿਵਾਦੀ ਮਿਥ ਕੇ ਸ਼ੰਕਾਵਾਂ ਖੜ੍ਹੀਆਂ ਕਰਦੇ ਹਨ ਤੇ ਫਿਰ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦਾ ਨਿਪਟਾਰਾ ਆਪਸੀ ਅੰਤਰ ਸੰਵਾਦ ਰਾਹੀਂ ਹੁੰਦਾ ਹੈ।ਯੂਨਾਨੀ ਫਿਲਾਸਫ਼ਰ ਸੁਕਰਾਤ ਦੇ ਸਿਧਾਂਤ ਵਿਚ ਵੀ ਇਸੇ ਵਾਰਤਾਲਾਪ ਸ਼ੈਲੀ ਵਿਚ ਇਹ ਵਿਧੀ ਨਜ਼ਰ ਆਉਂਦੀ ਹੈ ਜਿੱਥੇ ਕੁਝ ਚੇਲੇ ਸਵਾਲ ਕਰਦੇ ਹਨ ਤੇ ਗੁਰੂ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦਾ ਨਿਰਣਾ ਕਰਕੇ ਵਿਵੇਕ ਪੂਰਵਕ ਢੰਗ ਨਾਲ ਉੱਤਰ ਦੇਂਦਾ ਹੈ।ਗੋਸਟਿ-ਸਾਹਿਤ ਵਿਚ ਲਗਭਗ ਅਜਿਹੀ ਵਿਧੀ ਅਪਣਾਈ ਗਈ ਹੈ ਜਿਸਦਾ ਫਲਰੂਪ ਕਿਸੇ ਸਿਧਾਂਤ/ਮਤ ਬਾਰੇ ਬੌਧਿਕ ਦ੍ਰਿਸ਼ਟੀ ਤੋਂ ਸੂਖ਼ਮ ਤੋਂ ਸੂਖ਼ਮ ਨੁਕਤਿਆਂ ਦਾ ਵਿਸਲੇਸ਼ਣ ਤੇ ਨਿਰਣਾ ਵੀ ਹੋ ਜਾਂਦਾ ਹੈ।ਇਵੇਂ ਜਗਿਆਸੂ ਵੀ ਆਪਣੇ ਮਨ ਵਿਚ ਇਕ ਤਸੱਲੀ ਮਹਿਸੂਸ ਕਰਦਾ ਹੈ।ਇਸੇ ਸੰਬੰਧ ਵਿਚ ਲੇਖਕ ਨੇ ਪ੍ਰਾਚੀਨ ਹਿੰਦੀ ਤੇ ਪੰਜਾਬੀ ਸਾਹਿਤ ਵਿਚ ਹੋਈਆਂ ਕਈ ਗੋਸਟਿਾਂ ਦਾ ਹਵਾਲਾ ਦਿੱਤਾ ਹੈ।ਜਿਵੇਂ ਮਹਾਦੇਵ ਗੋਰਖ ਗੋਸਿਟ,ਗੋਰਖ ਗਣੇਸ਼ ਗੋਸਿਟ, ਗੋਰਖ ਦੱਤ ਗੋਸਿਟ।[17] ਮੁੱਖ ਤੌਰ ਤੇ ਇੱਥੇ ਸਾਡਾ ਸੰਬੰਧ ਸਿੱਧਾਂ ਨਾਲ ਹੋਏ ਵਿਚਾਰ-ਵਟਾਂਦਰੇ/ਗੋਸਟਿ ਨਾਲ ਹੈ ਜੋ ਰਾਮਕਲੀ ਰਾਗ ਵਿਚ ਆਦਿ ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ ਵਿਚ"ਸਿੱਧ ਗੋਸਟਿ"ਦੇ ਰੂਪ ਵਿਚ ਦਰਜ ਹੈ।ਇਸ ਬਾਰੇ ਭਾਈ ਕਾਨ੍ਹ ਸਿੰਘ ਨੇ ਮਹਾਨ ਕੋਸ਼ ਅੰਦਰ ਸਿੱਧਾਂ ਨੂੰ ਗਿਆਨ ਦੇਣ ਲਈ ਪ੍ਰਸ਼ਨੋਤਰੀ ਸ਼ੈਲੀ ਦੇ ਅੰਦਰ ਸਿੱਧ ਗੋਸਟਿ ਦੀ 73 ਪਦਾਂ ਦੀ ਰਚਨਾ ਦਾ ਹਵਾਲਾ ਦਿੱਤਾ ਹੈ।[18] ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਆਪਣੀ ਚਾਰ ਉਦਾਸੀਆਂ ਵੇਲੇ ਵੱਖ-ਵੱਖ ਸਮੇਂ ਸਿੱਧਾਂ ਜੋਗੀਆਂ ਦੇ ਨਾਲ ਵਿਚਾਰ-ਵਟਾਂਦਰਾ/ਗੋਸਟਿ ਕੀਤੀਆਂ।ਆਪ ਜੀ ਦੀ ਤੀਜੀ ਉਦਾਸੀ ਨੂੰ; ਜੋ ਕਿ ਉੱਤਰ ਦਿਸ਼ਾ ਵੱਲ ਸੀ,ਖ਼ਾਸ ਤੌਰ ਤੇ'ਸਿੱਧ ਮੱਠਾਂ ਦੀ ਉਦਾਸੀ'ਦੇ ਨਾਂ ਨਾਲ ਜਾਣਿਆ ਜਾਂਦਾ ਹੈ ਜੋ 1515 ਤੋਂ 1517 ਈ.ਤਕ ਦੋ ਸਾਲਾਂ ਵਿਚ ਪੂਰੀ ਹੋਈ।ਇਹ ਗੱਲ ਵੱਖਰੀ ਹੈ ਕਿ ਉਹ ਚੌਥੀ ਉਦਾਸੀ ਦੇ ਮਗਰੋਂ ਵੀ ਅਚਲ ਬਟਾਲੇ ਸਿੱਧਾਂ ਨਾਲ ਮੁਲਾਕਾਤ ਕਰਦੇ ਹਨ।ਇਤਿਹਾਸਕਾਰਾਂ ਨੇ ਗੁਰੂ ਜੀ ਨਾਲ ਚਾਰ ਮੁਲਾਕਾਤਾਂ ਦਾ ਖ਼ਾਸ ਤੌਰ ਦਾ ਜ਼ਿਕਰ ਕੀਤਾ ਹੈ।ਇਹ ਮੁਲਾਕਾਤਾਂ ਜੋ ਗੋਰਖ ਮਤਾ (ਜੋ ਹੁਣ ਨਾਨਕ ਮਤਾ ਹੈ),ਸੁਮੇਰ ਪਰਬਤ,ਗੋਰਖ ਹਟੜੀ(ਪੇਸ਼ਾਵਰ

ਸ਼ਹਿਰ ਦੇ ਇਕ ਬਜ਼ਾਰ ਦਾ ਨਾਂ ਹੈ)ਅਤੇ ਅਚਲ ਬਟਾਲਾ ਨਾਂ ਦੇ ਸਥਾਨਾਂ ਤੇ ਹੋਈਆਂ ਦੱਸੀਆਂ ਗਈਆਂ ਹਨ।

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦੀਆਂ ਇਹ ਮੇਲ-ਮੁਲਾਕਤਾਂ ਵੱਖੋ-ਵੱਖਰੀਆਂ ਉਦਾਸੀਆਂ ਦੌਰਾਨ ਸਿੱਧਾਂ ਜੋਗੀਆਂ ਨਾਲ ਹੁੰਦੀਆਂ ਹਨ। ਜਿਵੇਂ ਪਹਿਲੀ ਉਦਾਸੀ ਅੰਦਰ ਪੀਲੀਭੀਤ ਗੋਰਖ ਮਤੇ ਵਾਲੀ ਮੁਲਾਕਾਤ ਹੁੰਦੀ ਹੈ ਜੋ ਸਥਾਨ ਸਿੱਧਾਂ ਜੋਗੀਆਂ ਦਾ ਭਾਰੀ ਗੜ੍ਹ ਮੰਨਿਆ ਜਾਂਦਾ ਸੀ। ਉੱਥੇ ਸਭ ਤੋਂ ਮਹਤੱਵਪੂਰਨ ਨਕਾਰਕ ਰੀਤ ਰਾਜੇ ਵਲੋਂ ਚੰਡੀ ਦੇਵੀ ਦੀ ਮੂਰਤੀ ਅੱਗੇ ਮਨੁੱਖਾਂ ਦੀ ਬਲੀ ਚੜ੍ਹਾਉਣ ਲਈ ਮਸ਼ਹੂਰ ਸੀ। ਉੱਥੇ ਆਪ ਨੇ ਜੋਗੀਆਂ ਨੂੰ ਇਹ ਸਮਝਾਉਣ ਦੀ ਕੋਸ਼ਿਸ਼ ਕੀਤੀ ਕਿ ਨਾ ਤਾਂ ਮੂਰਤੀ ਅੱਗੇ ਮਨੁੱਖਾਂ ਦੀ ਬਲੀ ਦੇਣਾ ਜਾਇਜ਼ ਹੈ ਸਗੋਂ ਘੋਰ ਪਾਪ ਹੈ ਕਿਉਂ ਜੋ ਪ੍ਰਭੂ ਤਾਂ ਮਨੁੱਖਾਂ ਵਿਚ ਵਸਦਾ ਹੈ ਨਾ ਕੇ ਬਾਹਰੀ ਭੇਖਾਂ ਤੋਂ ਖੁਸ਼ ਹੁੰਦਾ ਹੈ:

ਜੋਗੁ ਨ ਖਿੰਥਾ ਜੋਗੁ ਨ ਡੰਡੈ ਜੋਗੁ ਨ ਭਸਮ ਚੜਾਈਐ॥
ਜੋਗ ਨ ਮੰਦੀ ਮੰਡਿ ਮੁਡਾਇਐ ਜੋਗ ਨ ਸਿੰ ੀ ਵਾਈਐ॥ [19]

ਇਸੇ ਤਰ੍ਹਾਂ ਦੂਜੀ ਉਦਾਸੀ ਦੇ ਦੌਰਾਨ ਸਮੁੰਦਰ ਦੇ ਕਿਨਾਰੇ ਮਛੰਦਰ,ਗੋਰਖ ਨਾਥ ਦੇ ਨਾਲ ਮੁਲਾਕਾਤ ਹੁੰਦੀ ਹੈ। ਪੁਰਾਤਨ ਜਨਮ ਸਾਖੀ ਅੰਦਰ ਇਹ ਮੁਲਾਕਾਤ ਆਪਸੀ ਵਾਰਤਾਲਾਪ ਰਾਹੀਂ ਇਨ੍ਹਾਂ ਮੂਲ ਪ੍ਰਸ਼ਨਾਂ ਦੁਆਰਾ ਹੁੰਦੀ ਹੈ: "ਗੋਰਖ ਨਾਥ!ਇਹ ਕਉਣੁ ਆਂਵਦਾ ਹੈ ਦਰੀਆਉ ਵਿਚਿ?ਤਬ ਗੋਰਖਨਾਥ ਆਖਿਆ:'ਜੀ ਏਹੁ ਨਾਨਕ ਹੈ'।ਤਬ ਬਾਬਾ ਜਾਇ ਪ੍ਰਗਟਿਆ:'ਆਦੇਸੁ ਆਦੇਸ'ਕਰਿ ਕੈ ਬੈਠਿ ਗਇਆ।ਤਬ ਮਿਛੰਦ੍ਰ ਪੁੱਛਿਆ, ਆਖਿ ਉਸੁ:'ਨਾਨਕ ਸੰਸਾਰ ਸਾਗਰੁ ਕੇਹਾ ਕੁ ਡਿਠੋ?ਕਿਤੁ ਬਿਧਿ ਦਰੀਆਉ ਤਰਿਉ?[31]

ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਯੋਗ ਲੈਣ ਦੀ ਥਾਵੇਂ ਸੱਚੇ ਜੋਗੀ ਦੀ ਪਹਿਚਾਣ ਦ੍ਰਿੜ੍ਹ ਕਰਵਾਈ ਜੋ ਆਪਣੇ ਨਾਲ ਸਾਰੀ ਲੋਕਾਈ ਨੂੰ ਵੀ ਤਾਰਦਾ ਹੈ। ਇਸ ਤੋਂ ਬਾਦ ਇਕ ਦੂਜੇ ਦਾ ਭਲਾ ਮੰਗਦੇ ਤੇ ਉਹ ਦਸਤਪੰਜਾ ਲੈਂਦੇ ਹਨ ਤੇ ਅਗਲੀ ਅਹਿਮ ਮੁਲਾਕਾਤ ਤੀਜੀ ਉਦਾਸੀ ਦੌਰਾਨ ਸੁਮੇਰ ਪਰਬਤ ਉੱਤੇ ਹੁੰਦੀ ਹੈ। ਇਹ ਉਦਾਸੀ ਉੱਤਰ ਦਿਸ਼ਾ ਵੱਲ ਸੀ ਜੋ ਸਭ ਤੋਂ ਛੋਟੀ ਉਦਾਸੀ ਮੰਨੀ ਗਈ ਹੈ। ਇਹ 1515-1517 ਈ.ਦੋ ਸਾਲ ਵਿਚ ਪੂਰਨ ਹੋਈ। ਇਸ ਦੌਰਾਨ ਆਪ ਕਰਤਾਰਪੁਰ ਚਲੇ ਗਏ। ਜੰਮੂ,ਕਸ਼ਮੀਰ, ਸ਼ਿਵਾਲਕ ਦੀਆਂ ਪਹਾੜੀਆਂ,ਗੜ੍ਹਵਾਲ,ਬਦਰੀਨਾਥ,ਰਾਮਪੁਰ,ਤਬਤ,ਭੁਟਾਨ,ਨੇਪਾਲ ਤੱਕ ਦਾ ਸਫ਼ਰ ਕਰਕੇ ਵਾਪਸ ਕਰਤਾਰਪੁਰ ਪਹੁੰਚੇ। ਉੱਤਰੀ ਭਾਰਤ ਵਿਚ ਇਸ ਸਮੇਂ ਜੋਗ ਮਤ ਦਾ ਕਾਫੀ ਜ਼ੋਰ ਸੀ ਤੇ ਪਹਾੜੀ ਇਲਾਕਿਆਂ ਵਿਚ ਜੋਗੀਆਂ,ਸਿੱਧਾਂ ਤੇ ਲੋਹਾਰੀਪਾ ਦੇ ਟਿਕਾਣੇ ਸਨ। ਦੇਸ਼ ਦੇ ਬਹੁਤੇ ਲੋਕ ਇਨ੍ਹਾਂ ਦੇ ਪ੍ਰਭਾਵ ਅਧੀਨ ਘਰ ਗ੍ਰਹਿਸਥੀ ਤਿਆਗ ਰਹੇ ਸਨ। ਇਸ ਵਰਤਾਰੇ ਦੇ ਖ਼ਿਲਾਫ਼ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਨੇ ਆਵਾਜ਼ ਉਠਾਈ। ਆਪ ਨੇ ਖ਼ਾਸ ਤੌਰ ਤੇ ਸੁਮੇਰ ਪਰਬਤ ਤੇ ਸਿੱਧਾਂ ਨਾਲ ਮੁਲਾਕਾਤ ਕੀਤੀ। ਇਹ ਉਦਾਸੀ'ਸੁਮੇਰ ਪਰਬਤ ਦੀ ਉਦਾਸੀ'ਦੇ ਨਾਂ ਨਾਲ ਜਾਣੀ ਜਾਂਦੀ ਹੈ। ਇੱਥੇ ਸਿੱਧਾਂ ਨਾਲ ਪ੍ਰਸ਼ਨੋਤਰੀ ਦੇ ਰੂਪ ਵਿਚ ਔਰਤ ਦੀ ਸਥਿਤੀ ਉੱਤੇ ਸੰਵਾਦ/ਵਾਰਤਾਲਾਪ ਹੋਇਆ:

ਗੋਰਖ ਨਾਥ   ਦਾਮ ਕਾਢ ਬਾਘਣ ਲੈ ਆਇਆ,
ਮਾਊ ਕਹੈ ਮੇਰਾ ਪੂਤ ਵਿਆਇਆ।
ਗੀਲੀ ਲਕੜੀ ਕੋ ਘੁਨ ਲਾਇਆ,
ਤੀਨ ਡਾਲ ਮੂਲ ਸਣ ਖਾਇਆ। [20]

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ   ਭੰਡਿ ਜੰਮੀਐ ਭੰਡਿ ਨਿੰਮੀਐ ਭੰਡਿ ਮੰਗਣੁ ਵੀਆਹੁ॥
ਭੰਡਹੁ ਹੋਵੈ ਦੋਸਤੀ ਭੰਡਹੁ ਚਲੈ ਰਾਹੁ॥
ਭੰਡੁ ਮੁਆ ਭੰਡੁ ਭਾਲੀਐ ਭੰਡਿ ਹੋਵੈ ਬੰਧਾਨੁ॥
ਸੋ ਕਿਉ ਮੰਦਾ ਆਖੀਐ ਜਿਤੁ ਜੰਮਹਿ ਰਾਜਾਨ॥ [21]

ਇਥੇ ਨਾਥ ਜੋਗੀਆਂ ਦੀ ਵਿਚਾਰਧਾਰਾ ਅਨੁਸਾਰ ਔਰਤ ਦੀ ਸਥਿਤੀ ਬਾਰੇ ਵੀ ਸੰਵਾਦ ਰਚਾਉਂਦਿਆਂ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਸਿੱਧਾਂ ਦੀ ਵਿਕਾਰਗ੍ਰਸਤ ਭੋਗ-ਸਾਧਨਾ ਦਾ ਵਿਰੋਧ ਕੀਤਾ। ਇਵੇਂ ਨਾਰੀ ਨਿੰਦਿਆਂ ਦੇ ਸਮਾਂਨੰਤਰ ਔਰਤ ਦੀ ਹਸਤੀ ਦਾ ਬਹੁਪਾਸਰੀ ਨਵਾਂ ਸੰਦਰਭ ਖੋਲ੍ਹ ਦਿੱਤਾ। ਸਿੱਧਾਂ ਦੇ ਨਾਲ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੀ ਇਹ ਮੁਲਾਕਾਤ ਸਿੱਧਾਂ ਨੂੰ ਪ੍ਰਭਾਵਿਤ ਕਰਦੀ ਹੈ। ਵਾਪਸੀ ਤੇ ਗੁਰੂ ਜੀ ਦੀ ਗੋਰਖ ਹਟੜੀ ਪਹੁੰਚਦੇ ਹਨ। ਜੋਗੀ ਚਰਪਟ ਵੀ ਨੌਂ ਨਾਥਾਂ ਵਿਚੋਂ ਇਕ ਮੰਨੇ ਗਏ ਹਨ। ਗੋਰਖ ਹਟੜੀ ਦੇ ਇਹ ਜੋਗੀ,ਗੋਰਖ ਪੰਥੀ ਕਾਫੀ ਕਮਾਈ ਵਾਲੇ ਹਸਤੀ ਹੋਏ ਹਨ ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਦੀ ਗੱਦੀ ਵੀ ਲੰਮੇ ਸਮੇਂ ਤਕ ਚਲੀ ਆ ਰਹੀ ਹੈ। ਇਸ ਕਰਕੇ ਇਹ ਵੀ ਮੰਨਿਆ ਗਿਆ ਹੈ ਕਿ ਗੋਰਖ ਹਟੜੀ ਵਾਲੀ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਮੁਲਾਕਾਤ ਸਿੱਧ ਗੋਸਟਿ ਦੀ ਰਚਨਾ ਦਾ ਆਧਾਰ ਹੈ। ਸਿੱਧ ਗੋਸਟਿ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦੀ ਰਚਨਾ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੀ ਮਗਰਲੀ ਉਮਰ ਦੀ ਗੰਭੀਰ ਗਿਆਨਮਈ ਰਚਨਾ ਹੈ ਜਿਸਨੂੰ ਪੰਜਾਬੀ ਸਾਹਿਤ ਦੇ ਇਤਿਹਾਸ ਵਿਚ ਜਪੁਜੀ ਵਾਂਗ ਇਕ ਦਾਰਸ਼ਨਿਕ ਰਚਨਾ ਮੰਨਿਆ ਗਿਆ ਹੈ। ਇਸਦੇ ਵਿਚ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੇ ਸਾਹਮਣੇ ਗੁਰਮਤਿ ਦਾ ਦ੍ਰਿਸ਼ਟੀਕੋਣ ਸਪੱਸ਼ਟ ਕੀਤਾ ਗਿਆ ਹੈ ਜੋ ਕਿ ਪ੍ਰਸ਼ਨੋਤਰੀ ਸ਼ੈਲੀ ਵਿਚ ਹੈ:

ਕਵਨ ਮੂਲ ਕਵਣ ਮਤਿ ਵੇਲਾ॥
ਤੇਰਾ ਕਵਣੁ ਗੁਰੂ ਜਿਸ ਕਾ ਤੂ ਚੇਲਾ॥
ਕਵਨ ਕਥਾ ਲੈ ਰਹਹੁ ਨਿਰਾਲੇ॥
ਬੋਲੈ ਨਾਨਕੁ ਸੁਣਹੁ ਤੁਮ ਬਾਲੇ॥ [22]
ਪਵਨ ਅਰੰਭੁ ਸਤਿਗੁਰ ਮਤਿ ਵੇਲਾ,
ਸਬਦੁ ਗੁਰੂ ਸੁਰਤਿ ਧੁਨਿ ਚੇਲਾ॥
ਅਕਥ ਕਥਾ ਲੈ ਰਹਉ ਨਿਰਾਲਾ,
ਨਾਨਕ ਜੁਗਿ ਜੁਗਿ ਗੁਰ ਗੋਪਾਲਾ॥ [23]

ਪਹਿਲਾ ਸਿੱਧਾਂ ਵਲੋਂ ਸਵਾਲ ਅੰਕਿਤ ਹਨ ਤੇ ਤਰਤੀਬ ਵਾਰ ਜਵਾਬ ਦਿੱਤੇ ਗਏ ਹਨ। ਵਿਰੋਧ ਵਿਕਾਸ ਦੀ ਇਹ ਪ੍ਰਕਿਰਿਆ ਆਪਸੀ ਅੰਤਰ ਸੰਵਾਦ ਰਾਹੀਂ ਅੱਗੇ ਤੁਰਦੀ ਹੈ। ਮੁੱਢਲੀ ਜਾਣ-ਪਛਾਣ ਵਾਲੇ ਪ੍ਰਸ਼ਨਾਂ ਤੋਂ ਸ਼ੁਰੂ ਹੋਕੇ ਜੀਵਨ-ਵਿਧੀ ਦੇ ਕੇਂਦਰੀ ਮਸਲਿਆਂ ਨਾਲ ਜਾ ਜੁੜਦੀ ਹੈ। ਜਿੰਨ੍ਹੇ ਤਿੱਖੇ ਪ੍ਰਸ਼ਨ ਅਤੇ ਉਨੀ ਹੀ ਤਿੱਖੀ ਸ਼ੈਲੀ ਵਿਚ ਉੱਤਰ ਬਾਣੀ/ਕਾਵਿ ਸਾਰਥਕਤਾ ਦਾ ਮੀਰੀ ਗੁਣ ਹਨ। ਅੰਤ ਵਿਚ ਸਾਰੇ ਸਵਾਲਾਂ ਦਾ ਇਕੋ ਇਕ ਅਨੁਭਵੀ ਜਵਾਬ ਹੈ ਕਿ ਨਾਮ ਤੋਂ ਬਿਨਾਂ ਯੋਗ ਸੰਪੂਰਨ ਨਹੀਂ ਤੇ ਨਾ ਹੀ ਮੁਕਤੀ ਮਿਲਣੀ ਸੰਭਵ ਹੈ। ਸੋ ਸਿੱਧ ਗੋਸ਼ਟਿ ਦਾ ਸਾਰੰਸ਼ ਹਠਯੋਗ ਦਾ ਤਿਆਗ ਕਰ ਕੇ ਨਾਮ ਮਾਰਗ ਧਾਰਨ ਕਰਨਾ ਹੈ।

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦੇ ਅੰਤਰ ਸੰਵਾਦ ਦੀ ਅਹਿਮ ਕੜੀ ਚੌਥੀ ਉਦਾਸੀ ਦੌਰਾਨ ਸਾਹਮਣੇ ਆਉਂਦੀ ਹੈ ਜੋ ਪਛੱਮ ਦਿਸ਼ਾ ਵੱਲ ਦੀ ਹੈ। ਇੱਥੇ ਆਪ ਇਸਲਾਮ ਦੇ ਕੇਂਦਰੀ ਸਥਾਨ ਖ਼ਾਸ ਕਰਕੇ ਮੱਕਾ ਮਦੀਨੇ ਪਹੁੰਚੇ। ਇੱਥੇ ਪਹੁੰਚਦੇ ਨੀਲੇ ਬਸਤਰ,ਹੱਥ ਵਿਚ ਸੋਟਾ,ਮੋਢੇ ਉੱਤੇ ਮੁਸੱਲਾ ਤੇ ਬਗ਼ਲ ਵਿਚ ਕਿਤਾਬ,ਮੁਸਲਮਾਨੀ ਵੇਸ ਧਾਰਨ ਕੀਤਾ। ਹਾਜੀਆਂ ਤੇ ਭਾਈ ਮਰਦਾਨਾ ਦੀ ਸੁਹਬਤ ਵਿਚ ਆਪ ਨੇ ਕਰਤਾਰਪੁਰ ਜਾ ਕੇ ਡੇਰਾ ਗਾਜੀਖਾਨ ਤੋਂ ਹੁੰਦੇ ਹੋਏ ਸਿੰਧ ਦੇ ਰਸਤੇ ਕਾਬਲ ਤੋਂ ਮੱਕੇ ਪਹੁੰਚਦੇ ਹਨ। ਮੱਕਾ ਮਦੀਨਾ, ਬਗ਼ਦਾਦ,ਮਿਸਰ,ਤੁਰਕੀ,ਈਰਾਨ,ਕੰਧਾਰ ਤੇ ਅਫਗਾਨਿਸਤਾਨ ਤੋਂ ਹੁੰਦੇ ਹੋਏ ਕਾਬਲ ਦੇ ਰਸਤੇ ਅੱਟਕ ਦਰਿਆ ਪਾਰ ਕਰਕੇ ਹਸਨ

ਅਬਦਾਲ (ਪੰਜਾ ਸਾਹਿਬ) ਰਾਹੀਂ 1521 ਈਂ ਵਿਚ ਕਰਤਾਰਪੁਰ ਵਾਪਸ ਆਏ। ਇਸ ਗੋਸਟਿ ਵਿਚ ਮੱਕੇ ਮਦੀਨੇ ਦੀ ਗੋਸਟਿ ਦੀ ਸਭ ਤੋਂ ਮਹਤੱਵਪੂਰਨ ਗੱਲ ਇਹ ਹੈ ਕਿ ਇਹ ਗੋਸਟਿ ਵੱਖ-ਵੱਖ ਥਾਵਾਂ ਤੇ ਉਚਾਰੀ ਗਈ। ਜੇ ਪੁਰਾਤਨ ਉੱਥੇ ਪਹੁੰਚ ਕੇ ਗੁਰੂ ਜੀ ਥੱਕੇ ਹੋਏ ਜਦੋਂ ਆਰਾਮ ਲਈ ਲੇਟ ਜਾਂਦੇ ਹਨ ਤਾਂ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੇ ਪੈਰ ਕਾਬ੍ਹਾ ਵਲ ਹੁੰਦੇ ਹਨ। ਉਦੋਂ ਪੇਸ਼ੀ ਦੀ ਨਮਾਜ਼ ਅਦਾ ਕਰਨ ਦੇ ਵਕਤ ਕਾਜ਼ੀ ਰੁਕਨਦੀਨ ਆਏ ਤਾਂ ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਇਸ ਖ਼ੁਦਾ ਦੇ ਬੰਦੇ ਨੂੰ ਰੱਬ ਦੇ ਘਰ ਵਲ ਪੈਰ ਕੀਤੇ ਵੇਖੇ ਤੇ ਹੈਰਾਨੀ ਹੋਈ: 'ਏ ਬੰਦੇ ਖੁਦਾਇ ਕੇ!ਤੂੰ ਜੋ ਪੈਰ ਖੁਦਾਇ ਕੇ ਘਰਿ ਵਲਿ ਕੀਤੇ ਹੈਨਿ,ਅਤੇ ਕਾਬੈ ਕੀ ਤਰਫਿ,ਸੋ ਕਿਉਂ ਕੀਤੇ ਹੈਨਿ?'[24]

ਤਾਂ ਬਾਬੇ ਨਾਨਕ ਨੇ ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੂੰ ਗੁਜ਼ਾਰਿਸ਼ ਕੀਤੀ ਕਿ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੇ ਪੈਰ ਜਿਸ ਦਿਸ਼ਾ ਵਲ ਕਾਬ੍ਹਾ(ਗੁਰੂ ਦਾ ਘਰ)ਨਹੀਂ ਉਸ ਵਲ ਫੇਰ ਦਿੱਤੇ ਜਾਣ। ਜਦੋਂ ਕਾਜ਼ੀ ਨੇ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੇ ਪੈਰ ਫੇਰੇ ਤਾਂ ਉਸ ਨੂੰ ਹਰ ਪਾਸੇ ਕਾਬ੍ਹਾ ਨਜ਼ਰ ਆਇਆ। ਰੁਕਨਦੀਨ ਹੈਰਾਨ ਹੋਏ ਤੇ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦਰਵੇਸ਼ ਦਾ ਨਾਂ ਪੱਛਿਆ। ਜਵਾਬ ਵਿਚ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਨੇ ਕਿਹਾ ਕਿ ਉਹ ਰੱਬ ਦੇ ਬੰਦੇ ਹਨ ਜਿਸ ਖ਼ੁਦਾ ਨੇ ਜ਼ਮੀਨ,ਬਨਸਪਤੀ ਤੇ ਇਨਸਾਨ ਪੈਦਾ ਕੀਤੇ ਹਨ। ਇਹ ਗੱਲ ਵੱਖਰੀ ਹੈ ਕਿ ਪੁਰਾਤਨ ਜਨਮ ਸਾਖੀ ਵਿਚ ਇਹ ਹਵਾਲਾ ਆਇਆ ਹੈ ਪਰ ਇੱਥੇ ਗੱਲ ਰੁਕਨਦੀਨ ਤੇ ਬਾਬਾ ਨਾਨਕ ਜੀ ਦੇ ਸੰਵਾਦ ਨਾਲ ਜੁੜਦੀ ਹੈ। ਇਹ ਵੀ ਕਿਹਾ ਗਿਆ ਹੈ ਕਿ ਸਾਰੇ ਦਿਨ ਦੇ ਵਾਰਤਾਲਾਪ ਦੇ ਦੌਰਾਨ 360 ਸਵਾਲ ਜਵਾਬ ਕੀਤੇ ਗਏ। ਉਸ ਸਮੇਂ ਕਾਫੀ ਲੋਕ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇ ਮੁਰੀਦ ਬਣ ਗਏ। ਇਸੇ ਤਰ੍ਹਾਂ ਮਦੀਨੇ ਹਜ਼ਰਤ ਮੁਹੰਮਦ ਜੀ ਦੀ ਕਬਰ ਤੇ ਪਹੁੰਚ ਕੀਤੀ। ਇੱਥੇ ਬੈਠ ਕੇ ਕੀਰਤਨ ਕੀਤਾ। ਇਸਲਾਮੀ ਜਗਤ ਵਿਚ ਕੀਰਤਨ/ਸੰਗੀਤ ਦੀ ਆਵਾਜ਼ ਦਾ ਉਸ ਵੇਲੇ ਕਾਫੀ ਵਿਰੋਧ ਹੋਇਆ। ਭਾਈ ਗੁਰਦਾਸ ਜੀ ਨੇ ਇਸ ਬਾਰੇ ਪਹਿਲੀ ਵਾਰ ਦੀ 35ਵੀਂ ਪਉੜੀ ਵਿਚ ਇਵੇਂ ਚਰਚਾ ਕੀਤੀ:

ਫਿਰਿ ਬਾਬਾ ਗਾਇਆ ਬਗਦਾਦ ਨੋ ਬਾਹਰਿ ਜਾਇ ਕੀਆਅਸਥਾਨਾ॥
ਇਕ ਬਾਬਾ ਅਕਾਲ ਰੂਪ ਦੂਜਾ ਰਬਾਬੀ ਮਰਦਾਨਾ॥[25]

ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਇਹ ਕਿਹਾ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ ਕਿ ਮੱਕੇ-ਮਦੀਨੇ ਦੀ ਗੋਸਟਿ ਵਿਚ ਸਭ ਤੋਂ ਮਹਤੱਵਪੂਰਨ ਕੜੀ ਗੁਰੂ ਜੀ ਵਲੋਂ ਉਥੋਂ ਦੇ ਆਲੇ-ਦੁਆਲੇ ਵਸਦੇ ਇਸਲਾਮ ਜਗਤ ਨਾਲ ਸੰਵਾਦ ਰਚਾਉਣਾ ਹੈ।

ਇਨ੍ਹਾਂ ਉਦਾਸੀਆਂ ਦੇ ਅੰਤਰ ਸੰਵਾਦੀ ਪੜਾਅ ਤੋਂ ਮਗਰੋਂ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦਾ ਕਰਤਾਰਪੁਰ ਵਿਚ 1521 ਤੋਂ 1539 ਈ.ਤਕ 18 ਵਰ੍ਹਿਆਂ ਦਾ ਸੰਗਤੀ ਜੀਵਨ ਹੈ। ਆਪਣੇ ਉਦਾਸੀਆਂ ਦੇ ਲੰਮੇ ਸਮੇਂ ਦੇ ਤਜਰਬੇ ਮਗਰੋਂ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਨੇ ਇਹ ਮਹਿਸੂਸ ਕੀਤਾ ਕਿ ਜਿਥੋਂ ਤਕ ਭਾਰਤ ਦੇ ਸਿਹਤਮੰਦ ਭਾਈਚਾਰੇ ਦਾ ਸੰਬੰਧ ਹੈ ਇਸ ਲਈ ਸਮਾਜਿਕ,ਨੈਤਿਕ ਤੇ ਹਰ ਤਰ੍ਹਾਂ ਦੀਆਂ ਕਮੀਆਂ ਵਿਚੋਂ ਨੈਤਿਕ ਨਿਆਂ ਨੂੰ ਦ੍ਰਿੜ੍ਹ ਕਰਵਾਉਣਾ ਤੇ ਸਮੁੱਚੇ ਭਾਰਤਵਾਸੀਆਂ ਨੂੰ ਸਾਂਝੇ ਮਾਨਵੀ ਜੀਵਨ ਦੀ ਪ੍ਰੇਰਣਾ ਦੇਣਾ ਲਾਜ਼ਮੀ ਹੈ। ਸਭ ਤੋਂ ਪਹਿਲੀ ਕਮਜ਼ੋਰੀ ਭਾਰਤੀਆਂ ਦਾ ਜਾਤਾਂ ਵਰਣਾਂ ਵਿਚ ਵੰਡਿਆ ਹੋਣਾ ਹੈ। ਇਸੇ ਤੋਂ ਪਰਦਾ ਉਠਾਣ ਲਈ ਗੁਰੂ ਜੀ ਏਮਨਾਬਾਦ ਭਾਈ ਲਾਲੋ ਦੇ ਘਰ ਗਏ ਤੇ ਨੀਵਾਂ ਸਮਝਣ ਵਾਲੇ ਦੇ ਘਰ ਵਿਚ ਇਸ਼ਨਾਨ ਤੇ ਨਿਵਾਸ ਕੀਤਾ। ਏਮਨਾਬਾਦ ਦੇ ਹਾਕਮ ਮਲਕ ਭਾਗੋ ਵਰਗੇ ਅਭਿਮਾਨੀਆਂ ਨੂੰ ਝੰਜੋੜਣ ਲਈ ਸਿਰੀ ਰਾਗ ਵਿਚ'ਨੀਵਿਆਂ'ਦੀ ਅਹਿਮੀਅਤ ਨੂੰ ਇਵੇਂ ਬਿਆਨ ਕੀਤਾ ਹੈ:

ਨੀਚਾ ਅੰਦਰਿ ਨੀਚ ਜਾਤਿ ਨੀਚੀ ਹੂ ਅਤਿ ਨੀਚੁ॥
ਨਾਨਕੁ ਤਿਨ ਕੈ ਸੰਗਿ ਸਾਥਿ ਵਡਿਆ ਸਿਉ ਕਿਆ ਰੀਸ॥
ਜਿਥੈ ਨੀਚ ਸਮਾਲੀਅਨਿ ਤਿਥੈ ਨਦਰਿ ਤੇਰੀ ਬਖਸੀਸ॥[26]

ਇਥੇ ਤੀਕ ਪੁਜਦਿਆਂ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦਾ ਮਾਨਵੀ ਜਜ਼ਬਾ ਚਰਮ ਸੀਮਾ ਤੇ ਪਹੁੰਚਿਆ ਦੇਖ ਸਕਦੇ ਹਾਂ। ਅਜਿਹੇ ਵੇਲੇ ਹੀ ਏਮਨਾਬਾਦ ਤੇ ਬਾਬਰ ਦਾ ਹਮਲਾ ਹੁੰਦਾ ਹੈ ਜਿਸ ਵਿਚ ਆਪਨੇ ਮੁਗ਼ਲਾਂ ਤੇ ਪਠਾਣਾਂ ਦੀ ਟੱਕਰ ਨੂੰ ਅੱਖੀਂ ਵੇਖਿਆ। ਮਾਸੂਮ ਲੋਕਾਈ,ਇਸਤ੍ਰੀਆਂ,ਬੱਚਿਆਂ ਤੇ ਨਿਦੋਸ਼ਿਆਂ ਨੂੰ ਇਸ ਜ਼ੁਲਮ ਦਾ ਸ਼ਿਕਾਰ ਹੁੰਦੇ ਦੇਖਿਆ। ਅਜਿਹੇ ਸਮੇਂ ਆਪ ਦਾ ਮਾਨਵੀ ਪਿਆਰ ਤੇ ਦੇਸ਼ ਭਗਤੀ ਨਾਲ ਭਰਪੂਰ ਕੋਮਲ ਹਿਰਦਾ ਇਸ ਘੋਰ ਅਨਿਆਂ ਤੇ ਅਤਿਆਚਾਰ ਨੂੰ ਸਹਾਰ ਨਹੀਂ ਸਕਿਆ ਉਥੇ ਰੱਬ ਨੂੰ ਵੀ ਮਿੱਠਾ ਉਲਾਂਭਾ ਦਿੱਤਾ:

ਖੁਰਾਸਾਨ ਖਸਮਾਨਾ ਕੀਆ ਹਿੰਦੁਸਤਾਨ ਡਰਾਇਆ॥
ਆਪੈ ਦੋਸੁ ਨ ਦੇਈ ਕਰਤਾ ਜਮੁ ਕਰਿ ਮੁਗਲੁ ਚੜਾਇਆ॥
ਏਤੀ ਮਾਰ ਪਈ ਕੁਰਲਾਣੇ ਤੈਂ ਕੀ ਦਰਦੁ ਨ ਆਇਆ॥[27]

ਆਪਣੇ ਜੀਵਨ ਦੇ ਤੀਸਰੇ ਅਹਿਮ ਪੜਾਅ ਤੇ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਕਰਤਾਰਪੁਰ ਵਿਖੇ ਆਪਣੇ ਬਚਪਨ ਤੋਂ ਲੈ ਕੇ ਅਦੁੱਤੀ ਉਦਾਸੀਆਂ ਦੇ ਸਫ਼ਰ ਰਾਹੀਂ ਕਮਾਏ ਗਿਆਨ ਨੂੰ ਅਮਲੀ ਜਾਮਾ ਪਹਿਨਾਉਂਦੇ ਹਨ। ਇਸ ਸਮੇਂ ਇਨ੍ਹਾਂ ਦੀ ਗੰਭੀਰ ਗਿਆਨਮਈ ਪ੍ਰਤਿਭਾ ਰਾਹੀਂ ਦੋ ਦਾਰਸ਼ਨਿਕ ਰੂਹਾਨੀ ਗਿਆਨ ਦੇ ਨਾਲ ਜੁੜੀਆਂ ਲਿਖਤਾਂ ਸਾਹਮਣੇ ਆਉਂਦੀਆਂ ਹਨ। ਇਕ ਜਪੁਜੀ ਸਾਹਿਬ ਤੇ ਦੂਸਰਾ ਸਿੱਧ ਗੋਸਟਿ ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਦਾ ਆਧਾਰ ਜੀਵਨ ਦੇ ਮੂਲ ਰਹੱਸਾਂ ਨਾਲ ਜੁੜੀਆਂ ਗਿਆਨ-ਗੁੰਝਲਾਂ ਨੂੰ ਸੁਲਾਝਾਉਣਾ ਹੈ। ਆਪਸੀ ਸੰਵਾਦ ਦੀ ਪੁਰਾਣੀ ਤੇ ਅਮੀਰ ਪਰੰਪਰਾ ਨੂੰ ਅੱਗੇ ਤਰਕ ਦੇ ਮੂਲ ਅੰਤਰ ਧਰਮ ਆਧਾਰ ਨਾਲ ਜੋੜਨਾ ਹੈ।

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਕਰਤਾਰਪੁਰ ਵਿਖੇ ਜੀਵਨ ਨਿਵਾਸ ਦੌਰਾਨ ਆਪਣੇ ਜੀਵਨ ਅਮਲ ਤੇ ਵਿਚਾਰਾਧਾਰਾ ਨੂੰ ਤਿੰਨ ਮੂਲ ਨੁਕਤਿਆਂ ਤੇ ਟਿਕਾਉਂਦੇ ਹਨ ਜੋ ਗੁਰਮਿਤ ਤੇ ਨਾਨਕ ਮੱਤ ਦੇ ਮੂਲ ਥੰਮ੍ਹ ਹਨ। ਇਨ੍ਹਾਂ ਦੇ ਸੁਨਹਿਰੀ ਅਮਲ ਨਾਮ ਜਪਣਾ(ਜੋ ਸਮੁੱਚੀ ਮਨੁੱਖਤਾ ਨੂੰ ਆਤਮਕ ਤ੍ਰਿਪਤੀ ਪ੍ਰਦਾਨ ਕਰਦਾ ਹੈ),ਕਿਰਤ ਕਰਨਾ(ਆਰਥਕ ਸੰਤੁਸ਼ਟਤਾ ਲਈ ਦਸਾਂ ਨੌਹਾਂ ਦੀ ਕਮਾਈ),ਵੰਡ ਛਕਣਾ(ਸਮਾਜਕ ਭਲਾਈ ਲਈ)ਦੀ ਅਦੁੱਤੀ ਸਰਬ ਸਾਂਝੀ ਜੀਵਨ-ਜਾਚ ਦੱਸੀ। ਜਿਸ ਧਰਮ ਦੀ ਨੀਂਹ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਰੱਖੀ,ਉਹ ਤਾਂ ਅੱਜ ਵੀ ਆਪਣੀ ਰੋਜ਼ਾਨਾ ਅਰਦਾਸ ਇਨ੍ਹਾਂ ਸ਼ਬਦਾਂ ਨਾਲ ਤੋਰਦਾ ਹੈ। ਈਸ਼ਵਰ-ਭਗਤੀ ਤੇ ਸਰਬ ਸਾਂਝੇ ਮਨੁੱਖੀ ਜਗਤ ਦੀ ਚੜ੍ਹਦੀ ਕਲਾ ਲਈ ਅਜਿਹੀ ਵਿਸ਼ਵਵਿਆਪੀ ਬੁਨਿਆਦੀ ਸੋਚ ਪੇਸ਼ ਕੀਤੀ: ਨਾਨਕ ਨਾਮ ਚੜ੍ਹਦੀ ਕਲਾ,ਤੇਰੇ ਭਾਣੇ ਸਰਬਤ ਦਾ ਭਲਾ॥[28]

ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਨੇ ਗੁਰਮਤਿ ਕਾਵਿ ਵਿਚ ਹੀ ਨਹੀਂ ਸਗੋਂ ਆਪਣੇ ਵੇਲੇ ਦੀਆਂ ਕ੍ਰਾਂਤੀਕਾਰੀ ਸਾਹਿਤਕ ਅਤੇ ਸਭਿਆਚਾਰਕ ਲਹਿਰਾਂ ਨਾਲ ਆਪਣਾ ਅੰਤਰ ਸੰਵਾਦੀ ਸਰੋਕਾਰ ਜੋੜਿਆ। ਅਧਿਆਤਮਕ ਸਾਹਿਤ ਤੇ ਮਾਨਵੀ ਸਭਿਆਚਾਰ ਨੂੰ ਅਮੀਰ ਬਣਾਉਣ ਵਿਚ ਪ੍ਰਮੁੱਖ ਭੂਮਿਕਾ ਨਿਭਾਈ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਦਾ ਸਮੁੱਚਾ ਸਾਹਿਤ (ਬਾਣੀ) ਮਨੁੱਖੀ ਕਦਰਾਂ-ਕੀਮਤਾਂ ਨਾਲ ਉਤ-ਪ੍ਰੋਤ ਹੈ। ਧਾਰਮਿਕ ਸੰਕੀਰਣਤਾ ਤੋਂ ਉਪਰ ਉਠ ਕੇ ਅੰਤਰ-ਧਰਮੀ ਮਾਨਵੀ ਸੰਵਾਦ ਰਾਹੀਂ ਸਾਂਝੀਵਾਲਤਾ ਦਾ ਸੰਦੇਸ਼ ਸੰਚਾਰਿਤ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਇਹੀ ਕਾਰਣ ਹੈ ਕਿ ਗੁਰਬਾਣੀ ਜਾਂ ਗੁਰਮਤਿ ਕਾਵਿ ਕੇਵਲ ਮੱਧਕਾਲ ਜਾਂ ਆਧੁਨਿਕ ਕਾਲ ਵਾਸਤੇ ਹੀ ਨਹੀਂ ਸਗੋਂ ਹਰ ਦੌਰ ਲਈ ਪ੍ਰਸੰਗਿਕ ਤੇ ਸਾਰਥਕ ਹੈ।

ਟਿਪਣੀਆਂ ਤੇ ਹਵਾਲੇ

1. ਭਾਈ ਗੁਰਦਾਸ ਜੀ,ਵਾਰ 1,ਪਉੜੀ 27,ਪੰਨਾ-18.
2. ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ ਜੀ,ਰਾਗ ਆਸਾ ਮਹਲਾ 1,ਅੰਕ-432.
3. ਰਤਨ ਸਿੰਘ ਜੱਗੀ(ਡਾ.),ਪੰਜਾਬੀ ਸਾਹਿਤ ਦਾ ਸਰੋਤ-ਮੂਲਕ ਇਤਿਹਾਸ,ਭਾਗ ਦੂਜਾ,ਪੰਨਾ-9.
4. ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ ਜੀ,ਰਾਗੁ ਮਲਾਰ ਛੰਤ ਮਹਲਾ 1,ਅੰਕ-1279.
5. -----ਉਹੀ-----,ਆਸਾ ਦੀ ਵਾਰ,ਮਹਲਾ 1,ਅੰਕ-471.
6. -----ਉਹੀ-----,ਸੂਹੀ ਮਹਲਾ 1,ਅੰਕ-729.
7. -----ਉਹੀ-----,ਮਾਰੂ ਮਹਲਾ 1,ਅੰਕ-991
8. ਗਿਆਨੀ ਲਾਲ ਸਿੰਘ,"ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਜੀਵਨ ਤੇ ਰਚਨਾ"ਨਾਨਕ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ ਪੱਤ੍ਰਿਕਾ(ਸੰਪਾ),ਸਰਬਜਿੰਦਰ ਸਿੰਘ,ਪੰਨਾ-81.
9. ਸਾਹਿਬ ਸਿੰਘ,"ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਜੀ ਜੀਵਨ-ਬਿਤ੍ਰਾਂਤ ਦਾ ਸੰਖੇਪ"ਨਾਨਕ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ ਪਾਤ੍ਰਿਕਾ,ਪੰਨਾ-52.
10. ਭਾਈ ਗੁਰਦਾਸ ਜੀ,ਵਾਰ 1,ਪਉੜੀ 25,ਪੰਨਾ-18.
11. ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ ਜੀ,ਆਸਾ ਦੀ ਵਾਰ,ਅੰਕ-472.
12. -----ਉਹੀ-----,ਰਾਗ ਮਾਝ ਵਾਰ,ਮਹਲਾ 1,ਅੰਕ-141.
13. -----ਉਹੀ-----,ਆਰਤੀ,ਧਨਾਸਰੀ ਮਹਲਾ 1 ਅੰਕ-663.
14. ਭਾਈ ਵੀਰ ਸਿੰਘ,ਸ਼ੇਖ ਫ਼ਰੀਦ,"ਆਸਾਦੇਸ,ਸ਼ੇਖ ਫਰੀਦ ਨਾਲ ਗੋਸ਼ਟ"ਪੁਰਾਤਨ ਜਨਮ ਸਾਖੀ,ਪੰਨਾ-80
15. ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ ਜੀ,ਸੂਹੀ ਲਲਿਤ ਅੰਕ-794.
16. -----ਉਹੀ-----,ਸੂਹੀ ਮਹਲਾ 1,ਅੰਕ-729
17. ਪਿਆਰਾ ਸਿੰਘ ਪਦਮ(ਪ੍ਰੋ.).ਸਿੱਧ ਗੋਸਟਿ,ਖੋਜ ਪ੍ਰਤਿਕਾ,ਪੰਨਾ-107.
18. ਭਾਈ ਕਾਨ੍ਹ ਸਿੰਘ ਨਾਭਾ, ਗੁਰਸ਼ਬਦ ਰਤਨਾਕਰ ਮਹਾਨ ਕੋਸ਼,ਭਾਸ਼ਾ ਵਿਭਾਗ,ਪੰਜਾਬ,ਪੰਨਾ-759.
19. ਭਾਈ ਵੀਰ ਸਿੰਘ,ਪੁਰਾਤਨ ਜਨਮ ਸਾਖੀ,ਪੰਨਾ-142.
20. ਗੋਰਥ ਨਾਥ,ਪ੍ਰਾਣ ਸੰਗਲੀ,ਪੰਨਾ-32.
21. ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ ਜੀ,ਆਸਾ ਦੀ ਵਾਰ,ਮਹਲਾ 1,ਅੰਕ-473.
22. -----ਉਹੀ-----,ਰਾਮਕਲੀ ਮਹਲਾ,ਸਿਧ ਗੋਸਿਟ,ਪਉੜੀ-42.ਅੰਕ-948.
23. -----ਉਹੀ----,ਰਾਮਕਲੀ ਮਹਲਾ,ਸਿਧ ਗੋਸਿਟ,ਪਉੜੀ-43.ਅੰਕ-949.
24. ਭਾਈ ਵੀਰ ਸਿੰਘ,ਪੁਰਾਤਨ ਜਨਮਸਾਖੀ,ਪੰਨਾ-165.
25. ਭਾਈ ਗੁਰਦਾਸ ਜੀ,ਵਾਰ 1,ਪਉੜੀ 35,ਪੰਨਾ-25.
26. ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ ਜੀ,ਸਿਰੀ ਰਾਗ,ਅੰਕ-15.
27. -----ਉਹੀ-----,ਆਸਾ ਦੀ ਵਾਰ,ਮਹਲਾ 1,ਅੰਕ-360.
28. ਅਰਦਾਸ ਦੀ ਅੰਤਿਮ ਪੰਕਤੀ

Volume : 6 | Issue :49 | October-December2019 ISSN: 2349-1876 (Print) | ISSN : 2454-1826 (Online)

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਵਿਚ ਪਰਿਆਵਰਨ ਚੇਤਨਾ

*ਅਰਸ਼ਦੀਪ ਕੌਰ

* ਖੋਜਾਰਥਣ, ਪੰਜਾਬੀ ਵਿਭਾਗ, ਦਿੱਲੀ ਯੂਨੀਵਰਸਿਟੀ, ਦਿੱਲੀ

ਹਰ ਮਨੁੱਖ ਆਪਣੇ ਆਲੇ-ਦੁਆਲੇ ਦੇ ਕੁਦਰਤੀ ਪਸਾਰੇ ਨੂੰ ਦੇਖ ਕੇ ਅਨੇਕ ਤਰ੍ਹਾਂ ਦੀਆਂ ਕਲਪਨਾਵਾਂ ਵਿਚ ਗੁਆਚ ਕੇ ਆਪਣੀਆਂ ਸੰਵੇਦਨਾਵਾਂ ਤੋਂ ਕਈ ਪ੍ਰਕਾਰ ਦੇ ਅਨੁਭਵ ਗ੍ਰਹਿਣ ਕਰਦਾ ਹੈ ਪਰ ਬਹੁਤ ਘੱਟ ਅਜਿਹੀਆਂ ਸ਼ਖ਼ਸੀਅਤਾਂ ਹੁੰਦੀਆਂ ਹਨ ਜਿਹੜੀਆਂ ਇਹਨਾਂ ਕਲਪਨਾਵਾਂ ਤੇ ਸੰਵੇਦਨਾਵਾਂ ਤੋਂ ਪ੍ਰਾਪਤ ਅਨੁਭਵ ਨੂੰ ਸ਼ਬਦਾਂ ਦਾ ਅਮਲੀ ਜਾਮਾ ਪਹਿਨਾਉਣ ਦੇ ਸਮੱਰਥ ਹੋਣ। ਕੁਦਰਤ ਪ੍ਰੇਮੀਆਂ, ਕਲਾਕਾਰਾਂ ਲਈ ਇਹ ਕੁਦਰਤ/ਪਰਿਆਵਰਨ ਹਮੇਸ਼ਾਂ ਹੀ ਇਕ ਅਦੁੱਭਤਮਈ ਰਹੱਸਮਈ ਵਰਤਾਰਾ ਬਣਿਆ ਰਿਹਾ ਹੈ। ਚਿੱਤਰਕਾਰਾਂ ਦੇ ਚਿੱਤਰਾਂ ਵਿਚ, ਕਵੀਆਂ ਦੀਆਂ ਕਵਿਤਾਵਾਂ ਵਿਚ, ਸਾਹਿਤਕਾਰਾਂ ਦੀਆਂ ਰਚਨਾਵਾਂ ਵਿਚ ਕੁਦਰਤ ਦੇ ਬਿੰਬ ਪ੍ਰਤੀਬਿੰਬ ਹਮੇਸ਼ਾ ਹੀ ਰੂਪਮਾਨ ਰਹੇ ਹਨ। ਕੁਦਰਤ ਨੇ ਆਪਣੇ ਪਲ-ਪਲ ਬਦਲਦੇ ਜਲਵਿਆਂ ਨਾਲ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਨਵੀਆਂ ਬੌਧਿਕ ਵਿਧਾਵਾਂ (Dimension) ਪ੍ਰਦਾਨ ਕੀਤੀਆਂ ਹਨ, ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਵਿਚੋਂ ਮਨੁੱਖੀ ਚਿੰਤਨ ਦਾ ਵਿਕਾਸ ਪ੍ਰਮੁੱਖ ਹੈ।

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਸਾਹਿਬ ਦੀ ਬਾਣੀ ਵਿਚੋਂ ਵੀ ਅਜਿਹੇ ਸੰਕੇਤ ਸਪੱਸ਼ਟ ਤੌਰ 'ਤੇ ਮਿਲ ਜਾਂਦੇ ਹਨ, ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਤੋਂ ਇਹ ਅੰਦਾਜ਼ਾ ਸਹਿਜੇ ਹੀ ਲਗਾਇਆ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ ਕਿ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਸਾਹਿਬ ਆਪਣੇ ਆਲੇ-ਦੁਆਲੇ ਦੇ ਕੁਦਰਤੀ ਜਲਵੇ ਤੋਂ ਬਹੁਤ ਪ੍ਰਭਾਵਿਤ ਸਨ ਹਾਲਾਂਕਿ ਉਹਨਾਂ ਦੀ ਮੰਜ਼ਿਲ ਇਸ ਦੁਨਿਆਵੀ ਆਡੰਬਰਾਂ ਤੋਂ ਪਰੇ ਕਿਤੇ ਦੂਰ ਸੀ ਪਰ ਫਿਰ ਵੀ ਉਹ ਇਸ ਦ੍ਰਿਸ਼ਟਮਾਨ ਪਰਿਆਵਰਨ/ਕੁਦਰਤ ਨਾਲੋਂ ਟੁੱਟੇ ਨਹੀਂ ਰਹੇ। ਪੌਣਾਂ, ਰੁੱਤਾਂ, ਦਰਿਆਵਾਂ, ਰੁੱਖਾਂ, ਤੱਟਾਂ, ਧਰਤੀ, ਹਵਾਵਾਂ, ਖੇਤਾਂ ਅਤੇ ਧੁੱਪਾਂ-ਛਾਵਾਂ ਨੂੰ ਉਹਨਾਂ ਨੇ ਧੁਰ ਅੰਦਰ ਤੱਕ ਮਾਣਿਆ ਅਤੇ ਇਸ ਕੁਦਰਤੀ ਪਸਾਰੇ ਨੂੰ ਆਧਾਰ ਬਣਾ ਕੇ ਬਾਣੀ ਸਿਰਜਣਾ ਵੀ ਕੀਤੀ।

ਧਾਰਮਿਕ ਵਿਦਵਾਨ ਸਿੱਖ-ਧਰਮ ਦੇ ਧਾਰਮਿਕ ਗ੍ਰੰਥ 'ਸ਼੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ' ਅਤੇ ਵਿਗਿਆਨ ਦੀਆਂ ਥਿਊਰੀਆਂ ਨੂੰ ਮਨੁੱਖ ਦੀ ਵਿਰਾਸਤ ਮੰਨਦੇ ਹਨ। ਉਹਨਾਂ ਦਾ ਮੰਨਣਾ ਹੈ ਕਿ ਵਿਗਿਆਨ ਇਸ ਸ੍ਰਿਸ਼ਟੀ ਵਿਚ ਲੁਕੇ ਹੋਏ ਡੂੰਘੇ ਭੇਤਾਂ ਨੂੰ ਉਜਾਗਰ ਕਰਨ ਦਾ ਇਕ ਹੀਲਾ ਮਾਤਰ ਹੈ ਅਤੇ ਪਾਵਨ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ ਇਨ੍ਹਾਂ ਭੇਤਾਂ ਦੀਆਂ ਸੰਭਾਵਨਾਵਾਂ ਉੱਤੇ ਝਾਤ ਪਾਉਣ ਵਿਚ ਸਹਾਇਕ ਸਿੱਧ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਸਾਹਿਬ ਕੁਦਰਤੀ ਸਚਾਈਆਂ, ਅੱਟਲ ਨਿਯਮਾਂ ਜਾਂ ਵਿਗਿਆਨਿਕ ਸਿਧਾਂਤਾਂ ਦਾ ਜ਼ਿਕਰ ਕਿਸੇ ਤਰ੍ਹਾਂ ਦਾ ਕੋਈ ਸਬੂਤ ਦੇਣ ਲਈ ਨਹੀਂ ਕਰਦੇ। ਇਹ ਜ਼ਿਕਰ ਤਾਂ ਉਹਨਾਂ ਦੇ ਧੁਰ ਅੰਤਹਕਰਣ ਦੀ ਆਵਾਜ਼, ਬਾਣੀ ਨੂੰ ਸਾਹਿਤਕ ਰੰਗਣ ਦੇਣ ਲਈ ਅਤੇ ਆਪਣੇ ਸਿਧਾਂਤਾਂ ਨੂੰ ਤਰਕ ਦਾ ਬਲ ਦੇਣ ਲਈ ਕੀਤਾ ਜਾਂਦਾ ਹੈ।

ਇਸ ਸ੍ਰਿਸ਼ਟੀ/ਬ੍ਰਹਿਮੰਡ ਦਾ ਆਰੰਭ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਸਾਹਿਬ "ਕਵਾਓ" ਆਵਾਜ਼ ਤੋਂ ਹੋਇਆ ਮੰਨਦੇ ਹਨ। ਸ੍ਰਿਸ਼ਟੀ ਦੀ ਉੱਤਪਤੀ ਕਿਵੇਂ ਹੋਈ? ਉਸ ਸੱਚੇ ਪਾਤਸ਼ਾਹ ਅਕਾਲ ਪੁਰਖ ਤੋਂ ਹਵਾ, ਹਵਾ ਤੋਂ ਪਾਣੀ "ਸਾਚੇ ਤੇ ਪਵਨਾ ਭਇਆ, ਪਵਨ ਤੇ ਜਲ ਹੋਇ"[1] ਦੀ ਗੱਲ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਸਾਹਿਬ ਆਪਣੀ ਬਾਣੀ ਵਿਚ ਕਰਦੇ ਹਨ। ਪਵਣ (ਹਵਾ), ਜਲ (ਪਾਣੀ) ਮਨੁੱਖੀ ਜੀਵਨ ਦਾ ਆਧਾਰ ਹਨ। ਇਸੇ ਲਈ ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਨੇ ਜੁਪਜੀ ਦੇ ਅੰਤਲੇ ਸਲੋਕ ਵਿਚ ਪਵਨ ਨੂੰ ਗੁਰੂ, ਪਾਣੀ ਨੂੰ ਪਿਤਾ, ਧਰਤੀ ਨੂੰ ਮਾਤਾ, ਦਿਨ-ਰਾਤ ਨੂੰ ਦਾਈ ਅਤੇ ਖਿਡਾਵਾ ਆਖਿਆ ਹੈ:-

ਪਵਣੁ ਗੁਰੂ ਪਾਣੀ ਪਿਤਾ ਮਾਤਾ ਧਰਤਿ ਮਹਤੁ ।।
ਦਿਵਸੁ ਰਾਤਿ ਦੁਇ ਦਾਈ ਦਾਇਆ ਖੇਲੈ ਸਗਲ ਜਗਤੁ ।।[2]

ਇਸੇ ਤਰ੍ਹਾਂ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਸਾਹਿਬ ਸਮੁੱਚੇ ਪਰਿਆਵਰਨ/ਬ੍ਰਹਿਮੰਡ ਦੀ ਉਸਤਤ ਕਰਦੇ ਹੋਏ 'ਆਸਾ ਦੀ ਵਾਰ' ਵਿਚ ਵੀ ਜਲ ਨੂੰ ਜੀਵਨ ਦਾ ਆਧਾਰ ਦੱਸਦੇ ਹਨ :-

ਜੇਤੇ ਦਾਣੇ ਅੰਨ ਕੇ ਜੀਆ ਬਾਝ ਨ ਕੋਈ,
ਪਹਿਲਾ ਪਾਣੀ ਜੀਉ ਹੈ ਜਤਿ ਹਰਿਆ ਸਭਿ ਕੋਈ ।।[3]

ਅਰਥਾਤ ਪਾਣੀ ਵਿਚ ਬੈਕਟੀਰੀਆ ਹਨ ਅਤੇ ਗੋਬਰ, ਕਣਕ ਅਤੇ ਲਕੜੀ ਵਿਚ ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਕੀੜਿਆ ਦੀ ਹੋਂਦ ਸਵੀਕਾਰ ਕਰਦੇ ਹਨ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਸਾਹਿਬ ਆਪਣੀ ਬਾਣੀ ਵਿਚ ਫਰਮਾਉਂਦੇ ਹਨ ਕਿ ਇਹ ਬ੍ਰਹਿਮੰਡ/ਪਰਿਆਵਰਨ ਰੱਬੀ ਗਾਇਨ ਵਿਚ ਲੀਨ ਹਨ। ਸਭ ਉਸ ਸਰਬ ਪਰਮਾਤਮਾ ਦੀ ਉਸਤਤ ਕਰਨ ਵਿਚ ਲੱਗੇ ਹੋਏ ਹਨ। ਇਸ ਪ੍ਰਕਿਰਤੀ ਦੀ ਹਰ ਸ਼ੈਅ ਉਸ ਗਾਇਨ ਪ੍ਰਕਿਰਿਆ ਵਿਚ ਸ਼ਾਮਿਲ ਹੈ ਜੋ ਰੱਬ ਦੀ ਉਸਤਤ ਕਰਦੀ ਹੈ। ਉਹ ਪਰਮ-ਪਰਮਾਤਮਾ ਵੀ ਆਪਣੀ ਬਣਾਈ ਸਾਰੀ ਸ੍ਰਿਸ਼ਟੀ ਦੀ ਉਸਤਤ ਕਰਦੀ ਹੈ ਅਤੇ ਇਸ ਉਸਤਤ ਜਾਂ ਸੰਗੀਤਾਤਮਿਕ ਗਾਇਨ ਨੂੰ ਸਿਰਫ਼ ਕੋਈ ਸੰਗੀਤਕਾਰ ਹੀ ਸਮਝ ਸਕਦਾ ਹੈ। ਇਸ ਸੰਦਰਭ ਵਿਚ ਆਲੋਚਕ ਬਾਵਾ ਬੁੱਧ ਸਿੰਘ ਲਿਖਦੇ ਹਨ:-

"ਸਾਰੀ ਕੁਦਰਤ ਇਕ ਰਾਗ ਹੈ। ਆਕਾਸ਼ ਵਿਚ ਸ਼ਬਦ,
ਸਾਡੇ ਅੰਦਰ ਸ਼ਬਦ, ਸਦੀਵਕਾਲ ਰਾਗ ਹੋ ਰਿਹਾ ਹੈ।"[4]

ਤਦੇ ਉਸ ਇਲਾਹੀ ਕਵੀ (ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ) ਨੇ ਉਚਾਰਿਆ ਹੈ:-

ਗਾਵਿਨ ਤੁਧਨੋ ਪਵਣ ਪਾਣੀ ਬੈਸੰਤਰ ਗਾਵੈ ਰਾਜਾ ਧਰਮੁ ਦੁਆਰੇ।।
ਗਾਵਿਨ ਤੁਧਨੋ ਖੰਡ ਮੰਡਲ ਬ੍ਰਹਮੰਡਾ ਕਰਿ ਕਰਿ ਰਖੇ ਤੇਰੇ ਧਾਰੇ।।[5]

ਭਾਵ ਕਿ ਹਵਾ, ਪਾਣੀ ਅਤੇ ਅੱਗ ਵੀ ਉਸ ਪਰਮਾਤਮਾ ਦੇ ਗੁਣ ਗਾਉਂਦੇ ਹਨ ਅਤੇ ਧਰਮਰਾਜ (ਇਨਸਾਫ਼ ਕਰਨ ਦਾ ਮਿਥਿਹਾਸਿਕ ਦੇਵਤਾ) ਤੇਰੇ ਬੂਹੇ ਉੱਤੇ ਖੜ੍ਹਾ ਤੇਰੀ ਵਡਿਆਈ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਇੱਥੋਂ ਤੱਕ ਕਿ ਖੰਡ (ਟੋਟੇ ਧਰਤੀ ਦੇ, ਭਾਵ ਸਾਰੀਆਂ ਧਰਤੀਆਂ), ਮੰਡਲ (ਹਰ ਮੰਡਲ ਵਿਚ ਇਕ ਸੂਰਜ, ਇਕ ਚੰਦ ਤੇ ਇਕ ਧਰਤੀ ਹੁੰਦੀ ਹੈ), ਵਰਭੰਡ (ਸਾਰਾ ਸੰਸਾਰ) ਕਿ ਜੋ ਤੂੰ ਬਣਾ-ਬਣਾ ਕੇ ਇਕ ਧਾਰ (ਸੂਤਰ ਨਿਯਮ) ਵਿਚ ਰੱਖੇ ਹੋਏ ਹਨ, ਗੱਲ ਕੀ ਸਾਰਾ ਪਰਿਆਵਰਨ ਤੇਰੀ (ਪਰਮਾਤਮਾ) ਮਹਿਮਾ ਦਾ ਜਸ ਗਾਇਨ ਕਰ ਰਿਹਾ ਹੈ।

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਉਪਦੇਸ਼ ਦੇ ਉਲਟ ਪੱਛਮੀ ਵਿਦਵਾਨ ਵਧੇਰੇ ਕਰਕੇ ਪੂਰੀ ਕਾਇਨਾਤ/ਪਰਿਆਵਰਨ ਨੂੰ ਠੋਸ ਤੇ ਕਠੋਰ ਹਕੀਕਤ ਤੋਂ ਜ਼ਿਆਦਾ ਹੋਰ ਕੁਝ ਨਹੀਂ ਮੰਨਦੇ। ਪੱਛਮੀ ਚਿੰਤਕ ਨੀਤਸ਼ੇ ਕੁਦਰਤ/ਪਰਿਆਵਰਨ ਨੂੰ ਵਿਅਰਥ ਖਲਾਰਾ ਕਹਿੰਦਾ ਹੈ, ਉਸ ਅਨੁਸਾਰ ਕੁਦਰਤ ਬੇਹੱਦ ਬੇਪ੍ਰਵਾਹ ਹੈ, ਜਿਸਦਾ ਕੋਈ ਮੰਤਵ ਨਹੀਂ, ਕੋਈ ਜ਼ਰੂਰਤ ਨਹੀਂ। ਉਸ ਅਨੁਸਾਰ ਇਹ ਪ੍ਰਕਿਰਤੀ/ਪਰਿਆਵਰਨ ਨਾ ਤਰਸ ਕਰਦੀ ਹੈ ਤੇ ਨਾ ਇਨਸਾਫ਼। ਇਸਦੀ ਕਰੋਪੀ ਸਭ ਕੁਝ ਨਸ਼ਟ ਕਰ ਦਿੰਦੀ ਹੈ ਪਰ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਪੱਛਮੀ ਚਿੰਤਕਾਂ ਦੇ ਇਸ ਦ੍ਰਿਸ਼ਟੀਕੋਣ ਨੂੰ ਰੱਦ ਹੀ ਨਹੀਂ ਕਰਦੀ ਬਲਕਿ ਇਸਦਾ ਵਿਰੋਧ ਵੀ ਕਰਦੀ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਫਰਮਾਉਂਦੇ ਹਨ ਕਿ ਸਮੁੱਚੇ ਪਰਿਆਵਰਨ ਨੇ ਬੇਇਨਸਾਫੀ ਤਾਂ ਕੀ ਕਰਨੀ ਹੈ ਸਗੋਂ ਇਹ ਆਪਣੇ ਦੈਵੀ ਵਿਧਾਨ ਦੁਆਰਾ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਉਚ ਇਖ਼ਲਾਕ ਵੱਲ ਪ੍ਰੇਰਦੀ ਹੈ। ਇਸ ਲਈ ਪਰਿਆਵਰਨ/ਕੁਦਰਤ ਕੋਈ ਜਿੰਦਜਾਨ-ਰਹਿਤ, ਬੇਤਰਸ ਜਾਂ ਵਿਨਾਸ਼ਕਾਰੀ ਵਰਤਾਰਾ ਨਹੀਂ, ਇਹ ਤਾਂ ਰੱਬੀ ਉਸਤਤ ਦੀ ਸੱਚੀ-ਸੁੱਚੀ ਕਿਰਤ ਹੈ। ਇਸ ਲਈ ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਫਰਮਾਉਂਦੇ ਹਨ:-

ਪਾਣੀ ਪ੍ਰਾਣ ਪਵਣਿ ਬੰਧਿ ਰਾਖੇ ਚੰਦੁ ਸੂਰਜੁ ਮੁਖਿ ਦੇਇ।।
ਮਰਣ ਜੀਵਣ ਕਉ ਧਰਤੀ ਦੀਨੀ ਏਤੇ ਗੁਣ ਵਿਸਰੇ।।[6]

ਸੋ: ਕਿਹਾ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ ਕਿ ਵਿਸ਼ਵ ਪ੍ਰਕਿਰਤੀ/ਪਰਿਆਵਰਨ ਵਿਚ ਸੁੰਦਰਤਾ ਹੈ, ਜਿੰਦਜਾਨ ਹੈ, ਜਜ਼ਬਿਆਂ ਦੀ ਧੜਕਣ ਹੈ। ਧਰਤੀ ਤੇ ਆਕਾਸ਼ ਦੀ ਖਿੜਾਓ ਦੀ ਅਵਸਥਾ ਸਮੁੱਚੇ ਪਰਿਆਵਰਨ ਕਾਰਨ ਹੈ। ਇਹ ਸਭ ਪਰਿਆਵਰਨ ਦੇ ਸਰਬਕਲਾ ਭਰਪੂਰ ਹੋਣ ਕਰਕੇ ਹੀ ਸੰਭਵ ਹੋ ਸਕਿਆ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਵਿਚਾਰਦੇ ਵੀ ਹਨ ਕਿ - "ਬਸੰਤ ਦੇ ਆਗਮਨ ਤੋਂ ਪਹਿਲਾਂ ਅਕਾਲਪੁਰਖ ਆਪ ਖਿੜਿਆ" (ਭਾਵ ਉਸਦੇ ਖਿੜਾਅ ਤੋਂ ਹੀ ਬਸੰਤ ਖਿੜਦੀ ਹੈ) ਇਹ ਸਮੁੱਚਾ ਪਰਿਆਵਰਨ ਉਸ ਅਕਾਲ ਮੂਰਤਿ ਪਰਮਾਤਮਾ ਦੀ ਨਿਰੰਤਰ ਉਸਤਤਿ ਕਰਨ ਵਿਚ ਲੱਗਾ ਹੋਇਆ ਹੈ।

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਸਾਹਿਬ ਕੁਦਰਤ/ਪਰਿਆਵਰਨ ਦੇ ਸਮੁੱਚੇ ਵਰਤਾਰੇ ਨੂੰ ਕਾਦਰ ਦੀ ਅਟੱਲਤਾ ਉੱਤੇ ਆਧਾਰਿਤ ਮੰਨਦੇ ਹਨ। ਕੁਦਰਤ ਦਾ ਪਸਾਰਾ ਅਟੱਲ ਹੈ, ਇਸ ਸੰਸਾਰ ਦੇ ਕਣ-ਕਣ ਵਿਚ ਪਰਮਾਤਮਾ ਦਾ ਵਾਸਾ ਹੈ। ਵਿਗਿਆਨੀਆਂ ਨੇ ਸਮੇਂ-ਸਮੇਂ ਕੁਦਰਤ/ਪਰਿਆਵਰਨ ਦਾ ਨਿਰੀਖਣ ਕੀਤਾ ਹੈ। ਜਿਸ ਨਾਲ ਬਹੁਤ ਸਾਰੇ ਕੁਦਰਤੀ ਨਿਯਮਾਂ ਦੀ ਪ੍ਰਤੀਤੀ ਹੋਈ ਹੈ ਪਰ ਕੁਦਰਤ ਇਕ ਰਹੱਸਮਈ ਵਰਤਾਰਾ ਹੋਣ ਕਰਕੇ ਇਸਦੀਆਂ ਅਧਿਐਨ ਪ੍ਰਣਾਲੀਆਂ ਵਿਚ ਕਈ ਕਿਸਮ ਦੀਆਂ ਊਣਤਾਈਆਂ ਰਹਿ ਜਾਂਦੀਆਂ ਹਨ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਵਿਚ ਕਾਦਰ ਦੀ ਸਮੁੰਦਰ ਨਾਲ ਅਤੇ ਮਨੁੱਖ ਦੀ ਮੱਛਲੀ ਨਾਲ ਇੰਝ ਉਪਮਾ (ਤੁਲਨਾ) ਕੀਤੀ ਗਈ ਹੈ:-

ਤੂੰ ਦਰੀਆਉ ਦਾਨਾ ਬੀਨਾ ਹੈ ਮਛੁਲੀ ਕੈਸੇ ਅੰਤੁ ਲਹਾ।।
ਜਹ ਜਹ ਦੇਖਾ ਤਹ ਤਹ ਤੂ ਹੈ ਤੁਝ ਤੇ ਨਿਕਸੀ ਫੂਟਿ ਮਰਾ।।[7]

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਅਨੁਸਾਰ ਕੁਦਰਤ/ਪਰਿਆਵਰਨ ਦੇ ਨਿਯਮ ਮਨੁੱਖ ਲਈ ਇਕ ਅਟੱਲ ਸੱਚਾਈ ਹੈ ਪਰ ਉਸ ਪਰਮਾਤਮਾ ਦੀ ਰਜ਼ਾ ਅਨੁਸਾਰ ਇਹਨਾਂ ਨਿਯਮਾਂ ਵਿਚ ਤਬਦੀਲੀ ਸੰਭਵ ਹੈ। ਅੱਗ ਵਿਚ ਡਿੱਗਣ ਨਾਲ ਜਾਂ ਪਾਣੀ ਵਿਚ ਡੁੱਬਣ ਨਾਲ ਹਰ ਸੰਸਾਰੀ ਜੀਵ ਦਾ ਅੰਤ ਨਿਸ਼ਚਿਤ ਹੈ ਪਰ ਜੇਕਰ ਉਸ ਪਰਵਰ-ਦਿਗਾਰ ਦੀ ਮਰਜ਼ੀ ਹੋਵੇ ਤਾਂ ਪਰਿਆਵਰਨ ਆਪਣੇ ਅਟੱਲ ਨਿਯਮਾਂ ਵਿਚ ਪਰਿਵਰਤਨ ਕਰ ਦਿੱਤਾ ਹੈ ਜਿਵੇਂ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ ਵਿਚ ਭਗਤ ਪ੍ਰਹਿਲਾਦ ਦੀ ਗਾਥਾ ਨੂੰ ਬਾਰ-ਬਾਰ ਦੁਹਰਾਇਆ ਗਿਆ ਹੈ ਕਿ ਹਰਨਾਖ਼ਸ਼ ਦੇ ਲੱਖ ਪ੍ਰਯਤਨਾਂ ਦੇ ਕਾਰਨ ਵੀ ਪ੍ਰਹਿਲਾਦ ਦਾ ਵਾਲ ਤੱਕ ਵਿੰਗਾ ਨਹੀਂ ਹੋਇਆ ਕਿਉਂਕਿ ਉਸਦੀ ਪਰਮਾਤਮਾ ਤੇ ਉਸਦੀ ਸਿਰਜੀ ਸਮੁੱਚੀ ਕਾਇਨਾਤ ਵਿਚ ਸੱਚੀ ਸ਼ਰਧਾ ਸੀ। ਇਹ ਉਦਾਹਰਨ ਪਰਮਾਤਮਾ ਦੀ ਅਪਾਰ ਸ਼ਕਤੀ ਦੇ ਸਬੂਤ ਦੀ ਧਾਰਨੀ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਅਨੁਸਾਰ ਇਹ ਵੀ ਸੱਚ ਨਹੀਂ ਕਿ ਸਮੁੱਚਾ ਪਰਿਆਵਰਨ ਆਪ-ਮੁਹਾਰਾ ਹੈ ਜੇਕਰ ਉਹ ਵਾਹਿਗੁਰੂ ਚਾਹੇ ਤਾਂ ਅਣਹੋਈਆਂ ਘਟਨਾਵਾਂ ਵੀ ਮਨੁੱਖੀ ਹੋਣੀ ਵਿਚ ਤਬਦੀਲ ਹੋ ਜਾਂਦੀਆਂ ਹਨ।

ਕੁਦਰਤ/ਪਰਿਆਵਰਨ ਅਥਾਹ ਹੈ। ਧਰਮ ਚਿੰਤਕਾਂ ਅਤੇ ਤਾਰਾ ਵਿਗਿਆਨਿਆਂ ਨੇ ਸਵੀਕਾਰ ਕੀਤਾ ਹੈ ਕਿ ਤਾਰਿਆਂ-ਸਿਤਾਰਿਆਂ ਦੀ ਦੁਨੀਆਂ ਤੋਂ ਪਾਰ ਕੋਈ ਅਜਿਹੀ ਸ਼ਕਤੀ ਜ਼ਰੂਰ ਸਕ੍ਰਿਆ ਹੈ, ਜਿਸਦਾ ਇਹਨਾਂ ਦੀਆਂ ਗਤੀਵਿਧੀਆਂ ਉੱਪਰ ਪੂਰਾ ਕੰਟਰੋਲ ਹੈ। ਪਰਮਾਤਮਾ ਆਪ ਗ੍ਰਹਿ-ਉਪਗ੍ਰਹਿ ਦੇ ਪਥਾਂ ਨੂੰ ਨਿਰੰਤਰ ਪਰਿਕਰਮਾ ਵਿਚ ਬੰਨਦਾ ਹੈ। ਜੇਕਰ ਬ੍ਰਹਮੰਡ ਦੇ ਖੰਡਾਂ, ਮੰਡਲਾਂ ਦੇ ਨੁਕਤੇ ਨੂੰ ਵੀ ਨਜ਼ਰ ਅੰਦਾਜ਼ ਕਰ ਦਿੱਤਾ ਜਾਵੇ ਤਾਂ ਇਸ ਧਰਤੀ ਉੱਤੇ ਵਰਤ ਰਹੇ ਰਾਗ-ਰੰਗ ਕੁਦਰਤ ਵੱਲੋਂ ਮਨੁੱਖ ਲਈ ਇਕ ਵੱਡੀ ਦੇਣ ਹਨ। ਫੁੱਲਾਂ ਦੀ ਖੁਸ਼ਬੂ, ਪੰਛੀਆਂ ਦਾ ਚਹਿਕਣਾ, ਘਣੇ ਰੁੱਖ ਸਾਰਾ ਪਰਿਆਵਰਨ ਮਨੁੱਖ ਦੇ ਮਾਣਨ ਲਈ ਪਰਮਾਤਮਾ ਦੁਆਰਾ ਸਿਰਜਿਆ ਗਿਆ ਹੈ। ਰੰਗ-ਬਰੰਗੇ ਫੁੱਲ, ਪੰਛੀ, ਜੀਵ-ਜੰਤੂ, ਰੁੱਖ ਸਮੁੱਚਾ ਪਰਿਆਵਰਨ ਉਸ ਪਰਮਾਤਮਾ ਦੀਆਂ ਨਿਸ਼ਾਨੀਆਂ ਹਨ, ਜਿਹਨਾਂ ਰਾਹੀਂ ਕੁਦਰਤ ਮਨੁੱਖ ਨਾਲ ਰੱਬ ਦਾ ਰਿਸ਼ਤਾ ਜੋੜ ਰਹੀ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਅਨੁਸਾਰ ਮਨੁੱਖੀ ਆਤਮਾ ਬ੍ਰਹਿਮੰਡੀ ਆਤਮਾ ਨਾਲ ਇਕਸੁਰ ਹੈ। ਸਮੁੱਚਾ ਆਲਾ-ਦੁਆਲਾ/ਪਰਿਆਵਰਨ ਮਨੁੱਖੀ ਸ਼ਖ਼ਸੀਅਤ ਦੀ ਪੂਰਤੀ ਕਰਦਾ ਹੈ ਉਸਨੂੰ ਪਰਮਾਤਮਾ ਦੀ ਪ੍ਰਾਪਤੀ ਲਈ ਪ੍ਰੇਰਦਾ ਹੈ। ਕੁਝ ਵਿਦਵਾਨਾਂ ਅਨੁਸਾਰ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਪਰਿਆਵਰਨ, ਮਨੁੱਖ ਤੇ ਕਾਦਰ ਵਿਚਕਾਰ ਪੁਲ ਦਾ ਕੰਮ ਕਰਦਾ ਹੈ:- "ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇ ਵਿਚਾਰ ਅਨੁਸਾਰ ਮਨੁੱਖ ਸੰਸਾਰ ਦਾ ਇਕ ਅਧੂਰਾ ਅੰਸ਼ ਨਹੀਂ। ਮਨੁੱਖ ਵਿਚ ਸਾਰੀ ਸ੍ਰਿਸ਼ਟੀ ਦਾ ਮਰਮ ਤੇ ਰਹੱਸ ਪ੍ਰਵੇਸ਼ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਮਨੁੱਖ ਨੀਵੀਂ ਤੇ ਉੱਚੀ ਜ਼ਿੰਦਗੀ ਦਾ ਸਾਖੀ ਹੈ। ਉਸਦੇ ਅੰਦਰ ਸਵੈ-ਵਿਰੋਧੀ ਸ਼ਕਤੀਆਂ ਟਕਰਾਉਂਦੀਆਂ ਰਹਿੰਦੀਆਂ ਹਨ ਅਤੇ ਮਾਨਵ ਸ੍ਰਿਸ਼ਟੀ ਨੂੰ ਭੇਦ ਭਰਿਆ ਬਣਾ ਦਿੰਦੀਆਂ ਹਨ। ਜੀਵਨ ਦੀ ਸਮੱਸਿਆ ਤਾਹੀਓਂ ਹੱਲ ਹੋ ਸਕਦੀ ਹੈ ਜੇਕਰ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਪਰਮਾਤਮਾ ਤੇ ਵਿਸ਼ਵ ਨਾਲ ਸੰਬੰਧਤ ਸਮਝ ਕੇ ਉਸਦਾ ਦਾ ਅਧਿਐਨ ਕੀਤਾ ਜਾਵੇ। ਮਨੁੱਖ ਦਰਅਸਲ ਸੰਸਾਰ ਤੇ ਪਰਮਾਤਮਾ ਦੇ ਦਰਮਿਆਨ ਇਕ ਪੁਲ ਵਾਂਗ ਸਾਂਝ ਪਾਣ ਵਾਲੀ ਕੜੀ ਹੈ। ਪਰਮਾਤਮਾ ਸੰਸਾਰ ਤਕ ਆਪਣੀ ਆਵਾਜ਼ ਮਨੁੱਖ ਰਾਹੀਂ ਪਹੁੰਚਾਂਦਾ ਹੈ।[8]

ਭਾਵ ਕਿ ਮਨੁੱਖ ਲਈ ਕੁਦਰਤ/ਪਰਿਆਵਰਨ ਜਣਨੀ ਹੈ ਜੋ ਆਪਣੇ ਬੱਚਿਆਂ ਵਿਚ ਜੋਧਿਆਂ, ਸੂਰਬੀਰਾਂ ਵਾਂਗ ਲੜਨ ਦੀ ਸ਼ਕਤੀ ਭਰਦੀ ਹੈ। ਪਰਮਾਤਮਾ ਨੇ ਕੁਦਰਤ ਰਾਹੀਂ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਬਹੁਤ ਸਾਰੀਆਂ ਸੁੱਖ-ਸੁਵਿਧਾਵਾਂ ਨਾਲ ਨਿਵਾਜਿਆ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦਾ ਸੰਦੇਸ਼ ਹੈ ਕਿ ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਮਨੁੱਖਾਂ ਨੇ ਕਾਦਰ ਨੂੰ ਮਨ ਵਿਚ ਵਸਾਇਆ ਹੈ ਉਹਨਾਂ ਨੂੰ ਕੁਦਰਤ ਕੋਈ ਰਹੱਸ ਨਹੀਂ ਸਗੋਂ ਇਕ ਆਨੰਦਮਈ ਵਰਤਾਰਾ ਜਾਪਦੀ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਸਾਹਿਬ ਆਪਣੀ ਬਾਣੀ ਵਿਚ ਥਾਂ-ਪੁਰ-ਥਾਂ ਸੰਕੇਤ ਕਰਦੇ ਹਨ ਕਿ ਇਹ ਪਰਿਆਵਰਨ (ਹਵਾ, ਪਾਣੀ, ਅੱਗ, ਅਨਾਜ) ਆਦਿ ਪਦਾਰਥਕ ਵਸਤਾਂ ਹੀ ਮਨੁੱਖੀ ਹਸਤੀ ਦੀ ਹੋਂਦ ਨੂੰ ਬਣਾਈ ਰੱਖਣ ਵਿਚ ਸਹਾਈ ਹਨ ਉਹ ਫਰਮਾਉਂਦੇ ਹਨ:-

ਜੇਤੇ ਦਾਣੇ ਅੰਨ ਕੇ ਜੀਆ ਬਾਝੁ ਨ ਕੋਇ।।
ਪਹਿਲਾ ਪਾਣੀ ਜੀਉ ਹੈ ਜਿਤੁ ਹਰਿਆ ਸਭੁ ਕੋਇ।।[9]

ਪਰਿਆਵਰਨ ਆਪਣੇ ਅਨੇਕਾਂ ਰੰਗਾਂ, ਰੁੱਤਾਂ ਤੇ ਰਾਗਾਂ ਰਾਹੀਂ ਮਨੁੱਖ ਦੀ ਸੌਂਦਰਯ ਭੁੱਖ ਤ੍ਰਿਪਤ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਹਵਾਵਾਂ, ਬੱਦਲਾਂ, ਝੀਲਾਂ-ਝਰਨਿਆਂ ਰਾਹੀਂ ਤੇ ਕਦੀ ਤਾਰਿਆਂ ਨਾਲ ਓਤਪੋਤ ਹੋਈਆਂ ਰਾਤਾਂ ਰਾਹੀਂ ਕੁਦਰਤ ਉਸ ਸਿਰਜਣਹਾਰ ਪਰਮਾਤਮਾ ਦਾ ਸੰਦੇਸ਼ ਨਿਰੰਤਰ ਮਨੁੱਖ ਤੱਕ ਪਹੁੰਚਾਉਂਦੀ ਰਹਿੰਦੀ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਦਾ ਮੰਨਣਾ ਹੈ ਕਿ ਜਿਵੇਂ ਬਹੁਤ ਭੈਭੀਤ ਕਰਨ ਵਾਲੇ ਤੂਫ਼ਾਨ ਆਉਂਦੇ ਹਨ ਜੋ ਨਿੱਕੀਆਂ ਖਿਲਖਲਾਉਂਦੀਆਂ ਕਲੀਆਂ ਦੀ ਮੁਸਕਰਾਹਟ, ਪੰਛੀਆਂ ਦੀ ਮਧੁਰ ਚਿਹਚਿਲਾਹਟ ਨੂੰ ਖਾਮੋਸ਼ ਕਰ ਜਾਂਦੇ ਹਨ, ਇਹ ਸਭ ਕੁਦਰਤ ਦੇ ਸਾਖਿਅਤ ਲੱਛਣ ਹਨ, ਜਿਹਨਾਂ ਨੂੰ ਮਨੁੱਖ ਖੁੱਲ੍ਹੀਆਂ ਅੱਖਾਂ ਨਾਲ ਤੱਕ ਸਕਦਾ ਹੈ। ਉਵੇਂ ਹੀ ਕੁਦਰਤ ਦੇ ਮਾਧਿਅਮ ਰਾਹੀਂ ਕਾਦਰ (ਪਰਮਾਤਮਾ) ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਅਤੇ ਮਨੁੱਖ ਪਰਮਾਤਮਾ ਨੂੰ ਤੱਕਣ ਦੀ ਸ਼ਕਤੀ ਰੱਖਦਾ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਦਾ ਸਿਧਾਂਤ ਹੈ ਕਿ ਪਰਮਾਤਮਾ ਤੇ ਕੁਦਰਤ ਦੋਵੇਂ ਇਕ ਹੀ ਸ਼ਕਤੀ ਦੇ ਦੋ ਨਾਮ ਹਨ। ਇੱਥੇ ਐਡਮੰਡ ਬਲਡੰਨ ਦਾ ਕਥਨ ਬਹੁਤ ਢੁੱਕਵਾਂ ਹੈ {Through nature to nature'S God} ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਨੇ ਕੁਦਰਤ ਦਾ ਵਰਣਨ ਕੇਵਲ ਵਰਣਨ ਕਰਨ ਦੇ ਉਚੇਚ ਨਾਲ ਹੀ ਨਹੀਂ ਕੀਤਾ ਸਗੋਂ ਕਿਸੇ ਸੰਦਰਭ ਵਿਚ ਕੋਈ ਖ਼ਿਆਲ ਦੇਣ ਲਈ ਕੀਤਾ ਹੈ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੂੰ ਉਸ ਜਗਨਨਾਥ ਦੀ ਆਰਤੀ ਸਮੁੱਚੇ ਪਰਿਆਵਰਨ ਵਿਚੋਂ ਹੁੰਦੀ ਦਿਸ ਰਹੀ ਹੈ:-

ਗਗਨ ਮੈਂ ਥਾਲੁ ਰਵਿ ਚੰਦ ਦੀਪਕ ਬਨੇ,
ਤਾਰਿਕਾ ਮੰਡਲ ਜਨਕ ਮੋਤੀ।।
ਧੂਪੁ ਮਲਆਨਲੋ, ਪਵਨ ਚਵਰੁ ਕਰੇ,
ਸਗਲ ਬਨਰਾਇ ਫੂਲੰਤ ਜੋਤੀ।।
ਕੈਸੀ ਆਰਤੀ ਹੋਇ ਭਵ ਖੰਡਨਾ ਤੇਰੀ ਆਰਤੀ
ਅਨਹਤਾ ਸ਼ਬਦ ਵਾਜੰਤ ਭੇਰੀ।। ਰਹਾਉ।।[10]

ਭਾਵ ਕਿ ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਦਾ ਮੰਨਣਾ ਹੈ ਕਿ ਹੇ। ਮਨੁੱਖ ਤੈਨੂੰ ਬਨਾਵਟੀ ਪਦਾਰਥਾਂ ਨਾਲ ਪਰਮਾਤਮਾ ਦੀ ਆਰਤੀ ਕਰਨ ਦੀ ਕੋਈ ਜ਼ਰੂਰਤ ਨਹੀਂ ਹੈ ਕਿਉਂਕਿ ਸਮੁੱਚੀ ਕਾਇਨਾਤ ਆਪਣੀ ਹੋਂਦ ਗ੍ਰਹਿਣ ਕਰਨ ਤੋਂ ਹੀ ਆਪਣੇ ਪ੍ਰਭੂ ਪਤੀ ਦੀ ਆਰਤੀ ਵਿਚ ਰੁਝੀ ਹੋਈ ਹੈ। ਸਾਰਾ ਆਸਮਾਨ ਥਾਲ ਬਣ ਗਿਆ ਹੈ। ਜਿਸ ਵਿਚ ਚੰਦਰਮਾ, ਤਾਰੇ ਦੀਪਕ (ਦੀਵਾ) ਦਾ ਕਾਰਜ ਕਰ ਰਹੇ ਹਨ ਅਤੇ ਪਰਬਤਾਂ ਤੋਂ ਆ ਰਹੀਆਂ ਠੰਡੀਆਂ ਤੇ ਸਵੱਛ ਹਵਾਵਾਂ ਅਗਰਬੱਤੀ ਦਾ ਕੰਮ ਕਰ ਰਹੀਆਂ ਹਨ। ਇਸ ਲਈ ਤੈਨੂੰ (ਮਨੁੱਖ) ਖੁਦ ਪਰਮਾਤਮਾ ਦੁਆਰਾ ਰਚਾਈ ਮਹਿਮਾ ਦੇ ਜਲੌਅ ਦਾ ਆਨੰਦ ਮਾਨਣਾ ਚਾਹੀਦਾ ਹੈ। ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਕੁਦਰਤ ਦੇ ਇਸ ਨਜ਼ਾਰੇ ਤੋਂ ਬਲਿਹਾਰੀ ਜਾਂਦੇ ਹਨ।

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਅਨੁਸਾਰ ਕੋਈ ਦੇਵਤਾ ਜਾਂ ਮਹਾਂਪੁਰਸ਼ ਸ੍ਰਿਸ਼ਟੀ-ਸਿਰਜਣਾ ਕਰਨ ਦੇ ਸਮਰੱਥ ਨਹੀਂ ਹੈ। ਦੇਵਤਿਆਂ ਦੀ ਰਚਨਾ ਵੀ ਉਸ ਪਰਮਾਤਮਾ ਨੇ ਆਪ ਕੀਤੀ ਹੈ। ਸੰਸਾਰ ਵਿਚ ਜੋ ਵਿਚਰ ਰਿਹਾ ਹੈ, ਉਹ ਇਸ ਸੰਸਾਰ ਨੂੰ ਰਚਣ ਵਾਲੇ ਪਰਮਾਤਮਾ ਦਾ ਰਚਾਇਆ ਖੇਲ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਵਿਚ ਰੱਬ ਦੇ ਰਚਨਾਤਮਕ ਸਰੂਪ ਦਾ, ਪ੍ਰਕਿਰਤੀ ਦੇ ਸਿਧਾਂਤ ਨਾਲ ਟਾਕਰਾ ਕਰਦੇ ਹੋਏ, ਡਾ. ਵਜ਼ੀਰ ਸਿੰਘ ਲਿਖਦੇ ਹਨ:- " ਕਿਉਂਕਿ ਸਿੱਖ ਫਲਸਫ਼ੇ ਵਿਚ ਰੱਬ ਦਾ ਅਗੋਚਰ ਪੱਖ ਵੀ ਪਰਵਾਨ ਹੈ ਜੋ ਉਸਨੂੰ ਕੁਦਰਤ ਦਾ ਕਾਦਰ-ਕਰਤਾ ਅਤੇ ਕੁਦਰਤ ਤੋਂ ਉਚੇਰੀ ਹਸਤੀ ਦੇ ਰੂਪ ਵਿਚ ਪੇਸ਼ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਸਿੱਖ ਸਿਧਾਂਤ ਦਾ ਰੱਬ ਵਾਈਟਹੈਡ ਦੇ ਸੰਕਲਪ ਨਾਲ ਵਧੇਰੇ ਮੇਲ ਖਾਂਦਾ ਹੈ, ਜਿਸ ਅਨੁਸਾਰ ਰੱਬ ਦੇ ਦੋ ਪੱਖ ਹਨ। ਇਕ ਪਰਾ-ਪੂਰਬਲਾ ਪੱਖ ਹੈ ਜੋ 'ਸੰਭਾਵਨਾਵਾਂ' ਦਾ ਮੰਡਲ ਹੈ। ਦੂਸਰਾ ਸਿੱਟਾ-ਪਰਕ ਪੱਖ ਹੈ ਜੋ 'ਵਾਸਤਵਿਕਤਾ ਦਾ ਮੰਡਲ' ਹੈ। ਇਹ ਕਿਰਪਾ-ਸਰੂਪ ਰੱਬ ਹੈ, ਜਿਸਨੂੰ ਕੁਦਰਤ ਦੀ ਸੁੰਦਰਤਾ, ਇਸਦੀ ਵਿਕਾਸ ਪ੍ਰਕਿਰਿਆ ਵਿਚ ਮਾਣਿਆ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ।"[11]

ਸੋ: ਉਪਰੋਕਤ ਵਿਚਾਰ-ਚਰਚਾ ਤੋਂ ਬਾਅਦ ਇਹ ਹੀ ਸਿੱਟਾ ਕੱਢਿਆ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ ਕਿ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਸਾਹਿਬ ਨੇ ਆਪਣੀ ਬਾਣੀ ਰਾਹੀਂ ਸਮੁੱਚੇ ਪਰਿਆਵਰਨ ਨੂੰ ਉਸ ਪਰਮਾਤਮਾ ਦੀ ਸਿਰਜਣਾ ਦੱਸਦੇ ਹੋਏ, ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਸੁਚੇਤ ਕੀਤਾ ਹੈ ਕਿ ਇਸ ਸ੍ਰਿਸ਼ਟੀ ਦੇ ਕਣ-ਕਣ ਵਿਚ ਪਰਮਾਤਮਾ ਦਾ ਵਾਸਾ ਹੈ ਅਤੇ ਜੇਕਰ ਮਨੁੱਖ ਆਤਮਾ ਤੇ ਪਰਮਾਤਮਾ ਦਾ ਮੇਲ ਚਾਹੁੰਦਾ ਹੈ ਤਾਂ ਉਸਨੂੰ ਆਪਣੇ ਪਰਿਆਵਰਨ ਦੀ ਸੰਭਾਲ ਅਤੇ ਉਸ ਨਾਲ ਪਿਆਰ ਕਰਨਾ ਚਾਹੀਦਾ ਹੈ। ਆਓ ਨਾਨਕ ਸਾਹਿਬ ਦੀਆਂ ਦਿੱਤੀਆਂ ਸਿੱਖਿਆਵਾਂ ਨੂੰ ਰਲ-ਮਿਲ ਕੇ ਅਮਲੀ ਜਾਮਾ ਪਹਿਨਾਈਏ।

ਹਵਾਲੇ ਤੇ ਟਿੱਪਣੀਆਂ

1. ਡਾ. ਰਣਜੀਤ ਸਿੰਘ ਖੜਗ, ਨਾਨਕ ਸ਼ਾਇਰ ਇਵ ਕਹਿਆ, ਚੇਤਨਾ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ਨ ਪੰਜਾਬੀ ਭਵਨ, ਲੁਧਿਆਣਾ, 2010, ਪੰਨਾ-175
2. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ-177
3. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ-178
4. ਹਰਪਾਲ ਸਿੰਘ ਪੰਨੂ, ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦਾ ਕੁਦਰਤ ਸਿਧਾਂਤ, ਪਬਲੀਕੇਸ਼ਨ ਬਿਊਰੋ, ਪੰਜਾਬੀ ਯੂਨੀਵਰਸਿਟੀ ਪਟਿਆਲਾ, 1987, ਪੰਨਾ-6
5. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ-7
6. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ-74
7. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ-76
8. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ-112
9. ਸ਼੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ, ਪੰਨਾ-482
10. ਨਾਨਕ ਸ਼ਾਇਰ ਇਵ ਕਹਿਆ, ਪੰਨਾ-82
11. ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦਾ ਕੁਦਰਤ ਸਿਧਾਂਤ, ਪੰਨਾ-84

ਆਸਾ ਦੀ ਵਾਰ: ਇਕ ਅਧਿਐਨ

* ਬੇਅੰਤ ਕੌਰ

* ਰਿਸਰਚ ਸਕਾਲਰ, ਪੰਜਾਬੀ ਵਿਭਾਗ, ਦਿੱਲੀ ਯੂਨੀਵਰਸਿਟੀ, ਦਿੱਲੀ

'ਵਾਰ' ਇੱਕ ਕਵਿਤਾ ਦਾ ਇੱਕ ਭੇਦ ਹੈ, ਇਸ ਵਿੱਚ ਬਹਾਦਰ ਜਾਂ ਸੂਰਮੇ ਦੀ ਬਹਾਦਰੀ ਦਾ ਜਸ ਗਾਇਆ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਤੋਂ ਪਹਿਲਾਂ ਕਈ ਸੂਰਮਿਆਂ ਦੇ ਨਾਵਾਂ ਉੱਤੇ ਵਾਰਾਂ ਪ੍ਰਚੱਲਤ ਸਨ। ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ ਵਿੱਚ ਕੁੱਲ 22 ਅਧਿਆਤਮਕ ਵਾਰਾਂ ਹਨ, ਜਿੰਨ੍ਹਾਂ ਨੂੰ 9 ਧੁਨੀਆਂ ਉੱਤੇ ਗਾਇਆ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ ਵਿੱਚ ਦਰਜ ਵਾਰਾਂ ਵਿਚੋਂ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦੀਆਂ ਤਿੰਨ ਵਾਰਾਂ ਹਨ: ਰਾਗ ਆਸਾ, ਰਾਗ ਮਾਝ ਤੇ ਰਾਗ ਮਲਾਰ। ਆਸਾ ਦੀ ਵਾਰ ਦਾ ਮਹੱਤਵ ਇਸ ਕਰਕੇ ਹੈ, ਕਿਉਂਕਿ ਨਿੱਤਨੇਮ ਵੇਲੇ ਹਰ ਗੁਰਦੁਆਰੇ ਵਿੱਚ ਇਸ ਵਾਰ ਦਾ ਕੀਰਤਨ ਹੁੰਦਾ ਹੈ । ਮੇਰੇ ਪੇਪਰ ਦਾ ਮਨੋਰਥ ਆਸਾ ਦੀ ਵਾਰ ਦਾ ਅਧਿਐਨ ਕਰਨਾ ਹੈ।

"ਵਾਰ ਸ਼ਬਦ ਦਾ ਮੁੱਢ ਵਿ (ਸੰਸਕ੍ਰਿਤ) ਧਾਤੂ ਤੋਂ ਹੈ, ਜਿਸ ਤੋਂ ਭਾਵ ਹੈ, ਵਾਰੀ ਜਾਂ ਵੈਰੀ (ਬਹਾਦਰ, ਦੁਸ਼ਮਨ) ਅਰਥਾਤ ਵਾਰ ਕਰਨ ਵਾਲਾ ਜਾਂ ਵਾਰ ਰੋਕਣ ਵਾਲਾ, ਵਾਹਰ (ਕਿਸੇ ਦੂਸਰੇ ਉੱਤੇ ਹੱਲਾ ਕਰਨ ਲਈ ਜਾਂ ਪਰਾਏ ਹੱਲੇ ਨੂੰ ਰੋਕਣ ਲਈ ਜਮ੍ਹਾਂ ਹੋਏ ਮਨੁੱਖਾਂ ਦਾ ਇਕੱਠ) ਅਤੇ ਵਾਹਰੀ ਜਾਂ ਵਾਹਰੂ ਸ਼ਬਦ ਬਣੇ ਹਨ । ਅੱਗੇ ਚੱਲ ਕੇ ਡਾਕਟਰ ਸਾਹਿਬ ਪੰਜਾਬੀ ਵਿੱਚ ਵਰਤੇ ਜਾਂਦੇ ਇਸ ਸ਼ਬਦ ਦੇ ਭਿੰਨ-ਭਿੰਨ ਅਰਥਾਂ ਦੀ ਸੂਚੀ ਇੰਜ ਲਿਖਦੇ ਹਨ, ਪੰਜਾਬੀ ਬੋਲੀ ਵਿੱਚ 'ਵਾਰ' ਸ਼ਬਦ ਅਨੇਕਾਂ ਅਰਥਾਂ ਵਿੱਚ ਆਇਆ ਹੈ, ਜਿਵੇਂ ਕਿ ਵੈਰ ਕੱਢਣਾ, ਹੱਲਾ ਕਰਨਾ, ਸੱਟ ਮਾਰਨਾ (ਵਾਰ ਕਰਨਾ) ਜੁਧ-ਜੰਗ ਵਿੱਚ ਘੇਰਾ ਜਾਂ ਵਲਗਣ ਬਣਾਉਣਾ, ਰੋਕ ਪਾਉਣਾ, ਵਾੜ ਦੇਣਾ (ਵਾਰ ਮਾਰਨਾ), ਬਦਲਾ ਲੈਣਾ (ਵਾਰੀ ਲਾਹੁਣਾ), ਦਰਵਾਜ਼ਾ ਭੇੜਨਾ (ਵਾਰ ਜਾਂ ਬਾਰ ਬੰਦ ਕਰਨਾ), ਕੁਰਬਾਨ ਜਾਂ ਨਿਛਾਵਰ ਕਰਨਾ (ਵਾਰਨਾ), ਬਾਰ, ਬਾਰੀ (ਕਈ ਤੇ ਕਿਤਨੀ ਵਾਰੀ) ਦਿਨ (ਸੋਮਵਾਰ, ਮੰਗਲਵਾਰ) ਆਦਿ"।[1]

ਵਾਰ ਪੰਜਾਬੀ ਦਾ ਉਹ ਕਾਵਿ-ਰੂਪ ਹੈ ਜਿਸ ਵਿਚ ਕਿਸੇ ਯੁੱਧ ਦੀ ਬਹਾਦਰੀ ਦਾ ਚਿਤਰਨ ਕੀਤਾ ਜਾਂਦਾ ਹੈ ।

"'ਵਾਰ' ਸ਼ਬਦ ਦਾ ਅਰਥ ਹੈ, ਸਾਹਮਣਾ ਕਰਨਾ, ਪਿੱਛੇ ਧੱਕਣਾ, ਪਰੇ ਹਟਾਣਾ, ਰੋਕਣਾ ।ਇਹ ਸੰਸਕ੍ਰਿਤ ਦੇ ਸ਼ਬਦ 'ਵਾਰਣਾ' ਦਾ ਪੰਜਾਬੀ ਤਦਭਵ ਰੂਪ ਹੈ" ।[2]

ਸਾਧਾਰਨ ਸ਼ਬਦਾਂ 'ਚ 'ਵਾਰ' ਦਾ ਅਰਥ ਉਹ ਵਾਰਤਾ ਹੈ, ਜੋ ਆਪਣੇ ਕਿਸੇ ਹੱਲੇ ਜਾਂ ਟੱਕਰ ਦਾ ਜ਼ਿਕਰ ਰੱਖਦੀ ਹੋਵੇ ਅਤੇ ਪਾਠਕਾਂ ਜਾਂ ਸਰੋਤਿਆਂ ਨੂੰ ਉਤਸ਼ਾਹਤ ਕਰੇ ।

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਰਚਿਤ ਆਸਾ ਦੀ ਵਾਰ ਦੀਆਂ 24 ਪੌੜੀਆਂ ਅਤੇ 55 ਸਲੋਕ ਹਨ ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਵਿੱਚੋਂ 40 ਸਲੋਕ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦੇ ਅਤੇ 15 ਸਲੋਕ ਗੁਰੂ ਅੰਗਦ ਦੇਵ ਜੀ ਦੇ ਹਨ।22 ਵਾਰਾਂ ਵਿੱਚੋਂ ਕੇਵਲ ਇਹੋ ਇੱਕ ਵਾਰ ਹੈ, ਜਿਸ ਦੇ ਆਰੰਭ ਵਿੱਚ ਪੂਰਾ ਮੂਲ ਮੰਤਰ ਦਿੱਤਾ ਗਿਆ ਹੈ। ਇਸ ਵਾਰ ਦੀਆਂ ਪੌੜੀਆਂ ਤੋਂ ਪਹਿਲਾਂ ਬਹੁਤੇ ਸਲੋਕ ਵੀ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦੇ ਉਚਾਰਨ ਕੀਤੇ ਹੋਏ ਹਨ। ਇਹ ਵਾਰ, ਇਸ ਸਿਰਲੇਖ ਨਾਲ ਆਰੰਭ ਹੁੰਦੀ ਹੈ : ਵਾਰ ਸਲੋਕਾ ਨਾਲਿ ਸਲੋਕ ਭੀ ਮਹਲੇ ਪਹਿਲੇ ਕੇ ਲਿਖੇ ਟੁੰਡੇ ਅਸ ਰਾਜੈ ਕੀ ਧੁਨੀ॥[3]

ਆਸਾ ਦੀ ਵਾਰ ਨੂੰ ਟੁੰਡੇ ਅਸਰਾਜੇ ਦੀ ਧੁਨੀ ਤੇ ਗਾਇਆ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਇਸ ਵਾਰ ਦਾ ਪ੍ਰਮੁੱਖ ਵਿਸ਼ਾ ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਮਨੁੱਖੀ ਜੀਵਨ ਦੀ ਉਸਾਰੀ ਕਰਕੇ, ਉਸ ਨੂੰ ਹੁਕਮੀ ਬੰਦਾ, ਸੱਚਾ ਸੇਵਕ ਤੇ ਵਾਹਿਗੁਰੂ ਦੀ ਰਜ਼ਾ ਵਿੱਚ ਚੱਲ ਕੇ ਆਵਾਗਵਨ ਦੇ ਜਾਲ ਨੂੰ ਕੱਟਣ ਵਾਲਾ ਜਿਊੜਾ ਬਣਾ ਦਿੱਤਾ ਹੈ। ਵਾਰ ਵਿੱਚ ਇਸ ਗੱਲ ਵੱਲ ਵੀ ਸੰਕੇਤ ਕੀਤਾ ਗਿਆ ਹੈ ਕਿ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਸਤਿਗੁਰੂ ਦੀ ਲੋੜ, ਗੁਰੂ ਦੀ ਸਿੱਖਿਆ ਉੱਤੇ ਚੱਲ ਕੇ ਜਾਤ-ਅਭਿਮਾਨ, ਫੋਕਟ ਕਰਮਾਂ ਤੇ ਹਉਮੈ ਆਦਿ ਦਾ ਤਿਆਗ ਕਰਕੇ ਦੈਵੀ ਗੁਣਾਂ ਨੂੰ ਧਾਰਨ ਕੀਤਾ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ। ਆਸਾ ਦੀ ਵਾਰ ਵਿੱਚ ਕੁਦਰਤ ਦਾ ਚਿਤਰਨ ਬਹੁਤ ਹੀ ਅਨੋਖੇ ਢੰਗ ਨਾਲ ਪੇਸ਼ ਕੀਤਾ ਗਿਆ ਹੈ, ਜਿਵੇਂ :

ਆਪੀਨ੍ਹੈ ਆਪੁ ਸਾਜਿਓ ਆਪੀਨ੍ਹੈ ਰਚਿਓ ਨਾਉ ॥
ਦੁਯੀ ਕੁਦਰਤਿ ਸਾਜੀਐ ਕਰਿ ਆਸਣੁ ਡਿਠੋ ਚਾਉ ॥[4]

ਆਸਾ ਦੀ ਵਾਰ ਦਾ ਆਰੰਭ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਦੀ ਉਸਤਤ ਤੋਂ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਸਾਹਿਬ ਨੇ ਬਿਆਨ ਕੀਤਾ ਹੈ ਕਿ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਨੇ ਆਪਣੇ ਆਪ ਤੋਂ ਇਹ ਸੰਸਾਰ ਰਚਿਆ। ਆਪ ਹੀ ਆਪਣਾ ਨਾਂ ਰਚਿਆ। ਆਪ ਹੀ ਕੁਦਰਤ ਸਾਜੀ। ਉਹ ਕਰਤਾ ਹੈ, ਦਾਤਾ ਹੈ, ਬਖਸ਼ਿੰਦ ਹੈ, ਬੇਪਰਵਾਹ ਹੈ। ਰੱਬੀ ਸ਼ਕਤੀ ਸੱਚ ਦਾ ਨਿਬੇੜਾ ਆਪ ਕਰਨ ਵਾਲੀ ਹੈ, ਕੂੜਿਆਰਾਂ ਨੂੰ ਸਜ਼ਾ ਦੇਣ ਵਾਲੀ ਹੈ, ਉਸ ਦੇ ਨਾਮ ਵਿਚ ਰੱਤੇ ਮਨੁੱਖ ਉਸ ਦੀ ਕਿਰਪਾ ਨਾਲ ਇਹ ਜੀਵਨ ਖੇਡ ਜਿੱਤ ਜਾਂਦੇ ਹਨ। ਹਰ ਚੰਗੇ-ਮੰਦੇ ਕਰਮਾਂ ਦਾ ਫੈਸਲਾ ਰੱਬ ਦੇ ਆਪਣੇ ਹੱਥ ਵਿਚ ਹੈ ।

ਬਲਿਹਾਰੀ ਗੁਰ ਆਪਣੇ ਦਿਉਹਾੜੀ ਸਦ ਵਾਰ ॥
ਜਿਨਿ ਮਾਣਸ ਤੇ ਦੇਵਤੇ ਕੀਏ ਕਰਤ ਨ ਲਾਗੀ ਵਾਰ ॥[5]

ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਨੇ ਇਸ ਗੱਲ ਵੱਲ ਵੀ ਇਸ਼ਾਰਾ ਕੀਤਾ ਹੈ ਕਿ ਮਨੁੱਖ ਨੇ 'ਮਾਣਸ ਤੋਂ ਦੇਵਤੇ' ਦੇ ਦਰਜੇ ਤੀਕ ਪੁੱਜਣਾ ਹੈ। ਇਹ ਪ੍ਰਾਪਤੀ ਗੁਰੂ ਦੀ ਕਿਰਪਾ ਨਾਲ 'ਗਿਆਨ' ਦੁਆਰਾ ਹੋ ਸਕਦੀ ਹੈ।ਗਿਆਨਵਾਨ ਪੁਰਸ਼ ਦੈਵੀ ਪੁਰਸ਼ ਹੈ।ਉਸ ਦੈਵੀ ਪੁਰਸ਼ ਦਾ ਸਰੂਪ ਹਰ ਪਉੜੀ ਤੇ ਉਸ ਦੇ ਨਾਲ ਦਿੱਤੇ ਸਲੋਕਾਂ ਵਿੱਚ ਦੱਸਿਆ ਹੈ।ਇਹ ਇਸ ਵਾਰ ਦਾ ਅਸਲ ਭਾਵ ਹੈ ।

ਵਾਰ ਵਿੱਚ ਗੁਰੂ ਦੀ ਮਹਾਨਤਾ ਤੇ ਜ਼ੋਰ ਦਿੱਤਾ ਗਿਆ ਹੈ।'ਗੁਰੂ ਬਿਨਾ ਗਤ ਨਹੀਂ, ਸ਼ਾਹ ਬਿਨਾ ਪੱਤ ਨਹੀਂ' ਅਖਾਣ ਅਨੁਸਾਰ ਗੁਰੂ ਤੋਂ ਬਿਨਾਂ ਮੁਕਤੀ ਦੀ ਪ੍ਰਾਪਤੀ ਨਹੀਂ ਹੁੰਦੀ।ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਅਤੇ ਮਨੁੱਖ ਵਿਚਕਾਰ ਵਿਚੋਲੇ ਦੀ ਕੜੀ ਦਾ ਕੰਮ ਗੁਰੂ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਇਸ ਵਿਚਾਰ ਵੱਲ ਗੁਰੂ ਅੰਗਦ ਦੇਵ ਜੀ ਦਾ ਸਲੋਕ ਵੀ ਇਸ਼ਾਰਾ ਕਰਦਾ ਹੈ, ਜਿਵੇਂ :

ਜੇ ਸਉ ਚੰਦਾ ਉਗਵਹਿ ਸੂਰਜ ਚੜਹਿ ਹਜਾਰ ॥
ਏਤੇ ਚਾਨਣ ਹੋਦਿਆਂ ਗੁਰ ਬਿਨੁ ਘੋਰ ਅੰਧਾਰ ॥[6]

ਜੇਕਰ ਅਸਮਾਨ ਉੱਪਰ ਸੌ ਚੰਦਰਮਾਂ ਤੇ ਹਜ਼ਾਰ ਸੂਰਜ ਚੜ੍ਹਨ ਭਾਵ ਬਹੁਤ ਜ਼ਿਆਦਾ ਰੌਸ਼ਨੀ ਪੈਦਾ ਹੋ ਜਾਵੇ, ਫਿਰ ਵੀ ਇੱਕ ਗੁਰੂ ਦੀ ਹੋਂਦ ਤੋਂ ਬਿਨਾਂ ਘੁੱਪ ਹਨੇਰਾ ਹੀ ਜਾਪੇਗਾ । ਗੁਰੂ ਮਨੁੱਖੀ ਜੀਵਨ ਨੂੰ ਅਗਿਆਨਤਾ ਦੇ ਹਨੇਰੇ ਵਿੱਚੋਂ ਕੱਢ ਕੇ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਨਾਲ ਮੇਲ ਕਰਾ ਦਿੰਦਾ ਹੈ। ਉਦਾਹਰਣ ਵਜੋਂ, ਜਿਵੇਂ ਗ੍ਰਹਿਸਥੀ ਜੀਵਨ ਵਿੱਚ ਜਿਵੇਂ ਪਤੀ-ਪਤਨੀ ਦਾ ਮੇਲ ਇੱਕ ਸੰਸਾਰਕ ਵਿਚੋਲਾ ਕਰਵਾਉਂਦਾ ਹੈ, ਉਸੇ ਤਰ੍ਹਾਂ ਹੀ ਮਨੁੱਖ ਰੂਪੀ ਜੀਵ ਨੂੰ ਪ੍ਰਭੂ-ਪ੍ਰਮੇਸ਼ਰ ਰੂਪੀ ਪਤੀ ਨਾਲ ਗੁਰੂ ਮਿਲਾ ਦਿੰਦਾ ਹੈ ।

ਆਸਾ ਦੀ ਵਾਰ ਵਿੱਚ ਮਨੁੱਖ ਦੇ ਕਰਤੱਵ, ਫਰਜ਼ ਨੂੰ ਵੀ ਸਮਝਾਉਣ ਦੀ ਗੱਲ ਕੀਤੀ ਹੈ ਕਿ ਮਨੁੱਖ ਸੱਚਾ ਸੇਵਕ ਬਣੇ ਅਤੇ ਸੱਚੀ ਸੇਵਾ ਕਰੇ। ਸਬਰ ਸੰਤੋਖ ਵਿਚ ਰਹਿ ਕੇ ਪ੍ਰਭੂ ਪਰਮੇਸ਼ਰ ਨੂੰ ਯਾਦ ਕਰੇ। ਮੰਦੇ ਕਰਮ ਕਰਨ ਦੀ ਬਜਾਏ ਧਰਮ ਦੀ ਕਮਾਈ ਕਰੇ। ਜਗਤ ਵਿੱਚ ਰਹਿ ਕੇ ਵੀ ਜਗਤ ਤੋਂ ਨਿਰਲੇਪ ਰਹੇ। ਦੁਨੀਆਂ ਦੇ ਝੂਠੇ ਪਦਾਰਥਾਂ ਵਿਚ ਖਚਿਤ ਨਾ ਹੋਵੇ, ਸਗੋਂ ਮੁਸਾਫਰਾਂ ਵਾਂਗ ਜੀਵਨ ਬਿਤਾਏ। ਪ੍ਰਭੂ ਪਰਮੇਸ਼ਰ ਦੇ ਦਰ ਉੱਤੇ ਕੇਵਲ ਨਾਮ ਸਿਮਰਨ ਨੇ ਹੀ ਸਹਾਇਤਾ ਕਰਨੀ ਹੈ। ਸਭ ਕੁਝ ਦੁਨਿਆਵੀ ਰਿਸ਼ਤੇ-ਨਾਤੇ, ਮਾਇਆ ਤੇ ਸੰਸਾਰਕ ਪਦਾਰਥ ਸਭ ਇੱਥੇ ਹੀ ਰਹਿ ਜਾਣੇ ਹਨ। ਇਹ ਜੀਵਨ ਨਾਸ਼ਮਾਨ ਹੈ । ਸਭ ਕੁਝ ਪ੍ਰਭੂ ਪਰਮੇਸ਼ਰ ਨੇ ਹੀ ਦਿੱਤਾ ਹੈ। ਮਨੁੱਖ ਦਾ ਕਰਤਵ ਹੈ ਕਿ ਨੇਕ ਕਰਮ ਕਰੇ, ਨਿਮਰਤਾ ਵਿੱਚ ਰਹਿ ਕੇ ਹੰਕਾਰ ਦਾ ਤਿਆਗ ਕਰੇ। ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਦੱਸਦੇ ਹਨ ਕਿ ਮਨੁੱਖੀ ਸਰੀਰ ਨੇ ਇਕ ਦਿਨ ਨਾਸ਼ ਹੋ ਜਾਣਾ ਹੈ।ਇਸ ਨਾਸ਼ਮਾਨਤਾ ਨੂੰ ਪਾਉੜੀ ਵਿੱਚ ਇੰਝ ਬਿਆਨ ਕੀਤਾ ਹੈ :

ਕਪੜੁ ਰੂਪੁ ਸੁਹਾਵਣਾ ਛਡਿ ਦੁਨੀਆ ਅੰਦਰਿ ਜਾਵਣਾ ॥
ਮੰਦਾ ਚੰਗਾ ਆਪਣਾ ਆਪੇ ਹੀ ਕੀਤਾ ਪਾਵਣਾ ॥
ਹੁਕਮ ਕੀਏ ਮਨਿ ਭਾਵਦੇ ਰਾਹਿ ਭੀੜੈ ਅਗੈ ਜਾਵਣਾ ॥
ਨੰਗਾ ਦੋਜਕਿ ਚਾਲਿਆ ਤਾ ਦਿਸੈ ਖਰਾ ਡਰਾਵਣਾ ॥
ਕਰਿ ਅਉਗਣ ਪਛੋਤਾਵਣਾ ॥[7]

ਇਹ ਕੱਪੜੇ ਰੂਪੀ ਸੁੰਦਰ ਤੇ ਸੋਹਣਾ ਸਰੀਰ ਇਸ ਜਗਤ ਵਿੱਚ ਹੀ ਛੱਡ ਕੇ ਤੁਰ ਜਾਣਾ ਹੈ।ਹਰੇਕ ਮਨੁੱਖ ਰੂਪੀ ਜੀਵ ਆਪੋ ਆਪਣੀ ਕੀਤੇ ਹੋਏ ਚੰਗੇ ਤੇ ਮੰਦੇ ਕਰਮਾਂ ਦਾ ਫਲ ਆਪ ਭੋਗਦਾ ਹੈ।ਜਿਸ ਮਨੁੱਖ ਨੇ ਮਨ-ਮਾਨੀਆਂ ਕੀਤੀਆਂ ਹਨ, ਉਸ ਨੂੰ ਅਗਾਂਹ ਔਖੀਆਂ ਘਾਟੀਆਂ ਵਿੱਚੋਂ ਲੰਘਣਾ ਪਵੇਗਾ । ਮਨੁੱਖ ਦੁਆਰਾ ਕੀਤੇ ਹੋਏ ਮਾੜੇ ਕਰਮਾਂ-ਪਾਪਾਂ ਦਾ ਨਕਸ਼ਾ ਉਸਦੇ ਸਾਹਮਣੇ ਰੱਖਿਆ ਜਾਂਦਾ ਹੈ, ਦੋਜ਼ਕ ਦੀ ਅੱਗ ਵਿੱਚ ਧੱਕਿਆ ਜਾਂਦਾ ਹੈ ਤੇ ਉਸ ਵੇਲੇ ਉਸ ਨੂੰ ਆਪਣੇ ਆਪ ਨੂੰ ਬੜਾ ਡਰਾਵਨਾ ਰੂਪ ਦਿਸਦਾ ਹੈ। ਮਾੜੇ ਕਰਮ ਕਰਕੇ ਅੰਤ ਨੂੰ ਪਛਤਾਉਣਾ ਪੈਂਦਾ ਹੈ ।

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਆਸਾ ਦੀ ਵਾਰ ਵਿੱਚ ਪ੍ਰਭੂ ਪ੍ਰਾਪਤੀ ਲਈ ਮਨੁੱਖ ਦੇ ਚੰਗੇ ਆਚਾਰ ਜਾਂ ਵਿਵਹਾਰ ਭਾਵ ਨੈਤਿਕ ਗੁਣਾਂ ਉੱਤੇ ਜ਼ੋਰ ਦਿੱਤਾ ਹੈ।ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਹਉਮੈ, ਛਲ, ਕਪਟ ਤੇ ਈਰਖਾ ਨੂੰ ਨਿੰਦਦੇ ਹੋਏ; ਸੰਤੋਖ, ਸੇਵਾ, ਹੰਕਾਰ, ਨਿਮਰਤਾ, ਮੌਤ, ਇਸ਼ਕ, ਸੇਵਕ ਆਦਿ ਵਿਸ਼ਿਆਂ ਉੱਤੇ ਸੁਚੱਜੇ ਢੰਗ ਨਾਲ ਚਾਨਣਾ ਪਾਇਆ ਹੈ ।

ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਆਪਣੀ ਰਚਨਾ ਵਿੱਚ ਹਉਮੈ ਦਾ ਜ਼ਿਕਰ ਕਈ ਥਾਵਾਂ 'ਤੇ ਕੀਤਾ ਹੈ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਦਾ ਵਿਚਾਰ ਹੈ ਕਿ ਹਉਮੈ ਹੀ ਇਨਸਾਨ ਨੂੰ ਪ੍ਰਭੂ ਪ੍ਰਮੇਸ਼ਰ ਤੋਂ ਵੱਖ ਕਰਦੀ ਹੈ, ਜਿਸ ਦਾ ਸਦਕਾ ਉਹ ਵਾਰ-ਵਾਰ ਜਨਮ ਮਰਨ ਦੇ ਚੱਕਰਾਂ ਵਿੱਚ ਭਟਕਦਾ ਫਿਰਦਾ ਹੈ । ਹਉਮੈ ਦੇ ਤਿਆਗ ਨਾਲ ਮਨੁੱਖ ਪ੍ਰਭੂ ਨੂੰ ਪਾ ਸਕਦਾ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਹਉਮੈ ਦੇ ਕਈ ਪ੍ਰਕਾਰ ਦੱਸੇ ਹਨ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਅਨੁਸਾਰ ਕਈ ਲੋਕ ਗ੍ਰੰਥ ਤਾਂ ਭਾਵੇਂ ਬਹੁਤ ਪੜ੍ਹਦੇ ਹਨ, ਪਰ ਉਨ੍ਹਾਂ ਉੱਪਰ ਅਮਲ ਨਹੀਂ ਕਰਦੇ । ਅਜਿਹੇ ਲੋਕ ਵਿੱਦਿਆ ਸਬੰਧੀ ਹੰਕਾਰ ਸਦਕਾ ਹਉਮੈ ਦਾ ਸ਼ਿਕਾਰ ਹੋ ਜਾਂਦੇ ਹਨ।ਜਿਵੇਂ:

ਪੜਿ ਪੜਿ ਗਡੀ ਲਦੀਅਹਿ ਪੜਿ ਪੜਿ ਭਰੀਅਹਿ ਸਾਥ ॥
ਪੜਿ ਪੜਿ ਬੇੜੀ ਪਾਈਐ ਪੜਿ ਪੜਿ ਗਡੀਅਹਿ ਖਾਤ ॥
ਪੜੀਅਹਿ ਜੇਤੇ ਬਰਸ ਬਰਸ ਪੜੀਅਹਿ ਜੇਤੇ ਮਾਸ ॥
ਪੜੀਐ ਜੇਤੀ ਆਰਜਾ ਪੜੀਅਹਿ ਜੇਤੇ ਸਾਸ ॥
ਨਾਨਕ ਲੇਖੈ ਇਕ ਗਲ ਹੋਰੁ ਹਉਮੈ ਝਖਣਾ ਝਾਖ ॥[8]

ਇਨ੍ਹਾਂ ਪੰਗਤੀਆਂ ਵਿੱਚ ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਬਾਹਰੀ ਦਿਖਾਵੇ ਜਾਂ ਪਾਖੰਡ ਕਰਨ ਵਾਲਿਆਂ ਦਾ ਖੰਡਨ ਕਰਦੇ ਹਨ। ਦਿਖਾਵੇ ਲਈ ਪੜ੍ਹੀਆਂ ਗਈਆਂ ਲੱਖਾਂ-ਕਰੋੜਾਂ ਪੁਸਤਕਾਂ ਵੀ ਬੇਕਾਰ ਹਨ, ਜੇਕਰ ਉਨ੍ਹਾਂ ਪੁਸਤਕਾਂ ਨੂੰ ਪੜ੍ਹ ਕੇ ਸਾਨੂੰ ਗਿਆਨ ਦੀ ਪ੍ਰਾਪਤੀ ਨਹੀਂ ਹੁੰਦੀ।ਸਾਡੇ ਮਨਾਂ ਵਿੱਚ ਵੈਰ, ਵਿਰੋਧ, ਈਰਖਾ, ਦਵੈਤ, ਮੋਹ, ਮਾਇਆ ਵਰਗੇ ਦੁਰਗੁਣਾਂ ਦਾ ਵਾਸਾ ਹੁੰਦਾ ਹੈ । ਮਨੁੱਖ ਦੇ ਲੇਖੇ ਵਿੱਚ ਸਿਰਫ਼ ਪ੍ਰਭੂ ਪਰਮੇਸ਼ਰ ਦਾ ਨਾਮ ਸਿਮਰਨ ਹੀ ਆਉਣਾ ਹੈ। ਪ੍ਰਭੂ ਪਰਮੇਸ਼ਰ ਦੀ ਵਡਿਆਈ ਕਰਨ ਤੋਂ ਬਿਨਾਂ ਹੋਰ ਕੋਈ ਵੀ ਉੱਦਮ ਕਰਨਾ, ਆਪਣੀ ਹਉਮੈ ਵਿੱਚ ਭਟਕਣਾ ਹੈ।

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਆਪਣੇ ਸਮਕਾਲੀ ਸਮੇਂ ਦੇ ਪ੍ਰਚੱਲਤ ਧਰਮਾਂ ਵਿੱਚ ਵਾਪਰ ਰਹੇ ਪਖੰਡਾਂ ਦੀ ਆਲੋਚਨਾ ਕੀਤੀ ਹੈ।ਬ੍ਰਾਹਮਣਾਂ ਨੇ ਜੋ ਬਾਕੀ ਹਿੰਦੂਆਂ ਨੂੰ ਨੀਵੇਂ ਦਰਸਾ ਕੇ ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੂੰ ਜਾਤੀ-ਭੇਦ, ਜੰਞੂ, ਸਰਾਧ, ਬਾਹਰਲੀ ਪੂਜਾ, ਸਰਾਧ, ਸੂਤਕ-ਪਾਤਕ ਤੇ ਹੋਰ ਅਨੇਕਾਂ ਫੋਕਟ ਕਰਮਾਂ ਤੇ ਰਸਮਾਂ ਦੇ ਜਾਲ ਵਿੱਚ ਫਸਾ ਕੇ ਲੁੱਟਣ ਦਾ ਪਖੰਡ ਰਚਿਆ ਹੋਇਆ ਸੀ।ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਪਖੰਡਾਂ ਦਾ ਵਿਰੋਧ ਕੀਤਾ ਤੇ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੇ ਕਰਮ-ਕਾਂਡ ਅਤੇ ਭੇਖ ਵਾਲੀ ਹਉਮੈ ਦੀ ਨਿਖੇਧੀ ਕੀਤੀ ਹੈ।ਇਹ ਧਾਰਮਿਕ ਤੇ ਭਾਈਚਾਰਕ ਤਰੁੱਟੀਆਂ ਦੂਰ ਕਰਕੇ ਤੇ ਨਿਮਰਤਾ, ਮਿੱਠਤ, ਆਨੰਦ ਗੁਣ ਧਾਰਨ ਕਰਨ ਦੀ ਪ੍ਰੇਰਨਾ ਕਰਕੇ ਮਨੁੱਖੀ ਆਚਰਣ ਦੀ ਉਸਾਰੀ ਕੀਤੀ ਹੈ।ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਨੇ ਆਸਾ ਦੀ ਵਾਰ ਵਿਚ ਉਸ ਸਮੇਂ ਦੀ ਭਾਈਚਾਰਕ ਤੇ ਰਾਜਨੀਤਕ ਅਵਸਥਾ ਉੱਤੇ ਵੀ ਚਾਨਣਾ ਪਾਇਆ ਹੈ ।

ਗੁਰੂ ਜੀ ਦੇ ਜੀਵਨ ਸਮੇਂ ਜਨੇਊ ਧਾਰਨ ਕਰਨਾ ਇੱਕ ਮਹੱਤਵਪੂਰਨ ਰੀਤ ਸੀ। ਇਹ ਬੱਚੇ ਦੇ 9 ਸਾਲ ਦੀ ਉਮਰ ਵਿੱਚ ਕੀਤੀ ਜਾਂਦੀ ਸੀ। ਵੱਖ-ਵੱਖ ਵਰਗਾਂ ਲਈ ਵੱਖ-ਵੱਖ ਰੰਗ ਦੇ ਜਨੇਊ ਪਾਉਣ ਦਾ ਰਿਵਾਜ ਸੀ। ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਨੇ ਇਸ ਰੀਤ ਨਾਲ ਸਬੰਧਤ ਸੁੱਚੀ ਭਾਵਨਾ ਨੂੰ ਕਿਰਦਾਰ ਵਿੱਚ ਲਿਆਉਣ ਦਾ ਤੇ ਕੇਵਲ ਧਾਗੇ ਦਾ ਜਨੇਊ ਕਰਨ ਦੀ ਥਾਂ ਧਾਰਨ ਕਰਨ ਦੀ ਥਾਂ ਦਇਆ, ਸੰਤੋਖ, ਜਤ-ਸਤ ਵਰਗੇ ਸਦਾਚਾਰਕ ਗੁਣਾਂ ਨੂੰ ਧਾਰਨ ਕਰਨ ਦਾ ਉਪਦੇਸ਼ ਦਿੱਤਾ। ਜਿਵੇਂ :

ਦਇਆ ਕਪਾਹ ਸੰਤੋਖੁ ਸੂਤੁ ਜਤੁ ਗੰਢੀ ਸਤੁ ਵਟੁ ॥
ਏਹੁ ਜਨੇਊ ਜੀਅ ਕਾ ਹਈ ਤ ਪਾਡੇ ਘਤੁ ॥
ਨਾ ਏਹੁ ਤੁਟੈ ਨ ਮਲੁ ਲਗੈ ਨਾ ਏਹੁ ਜਲੈ ਨ ਜਾਇ ॥
ਧੰਨੁ ਸੁ ਮਾਣਸ ਨਾਨਕਾ ਜੋ ਗਲਿ ਚਲੇ ਪਾਇ ॥[9]

ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਨੇ ਪੰਡਤ ਨੂੰ ਅਜਿਹੇ ਉਪਦੇਸ਼ ਦਿੱਤੇ ਕਿ ਅਜਿਹਾ ਜਤ-ਸਤ, ਸੰਤੋਖ, ਸਬਰ ਵਾਲਾ ਜਨੇਊ ਧਾਰਨ ਕਰੋ, ਜੋ ਕਦੇ ਵੀ ਨਾ ਟੁੱਟੇ ਤੇ ਨਾ ਹੀ ਮਲੀਨ ਹੋਵੇ, ਨਾ ਹੀ ਸੜਦਾ ਹੋਵੇ ਤੇ ਨਾ ਹੀ ਗੁਆਚਦਾ ਹੋਵੇ।ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਦੀ ਉਸਤਤ ਦਾ ਸਿਮਰਨ ਰੂਪੀ ਜਨੇਊ ਜਿਸ ਮਨੁੱਖ ਨੇ ਧਾਰਨ ਕਰ ਲਿਆ ਉਹ ਭਾਗਾਂ ਵਾਲੇ ਹੁੰਦੇ ਹਨ ।

"ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਉਸ ਸਮੇਂ ਦੀ ਧਾਰਮਿਕ ਤੇ ਸਮਾਜਿਕ ਸਥਿਤੀ ਉੱਪਰ ਡੂੰਘੀ ਝਾਤ ਮਾਰੀ ਤੇ ਦੇਖਿਆ ਕਿ ਵੈਸ਼ਨਵ ਨੱਚਣ-ਕੁੱਦਣ ਵਿੱਚ ਲੀਨ ਸਨ, ਮੁਸਲਮਾਨ ਫੋਕਟ ਕਰਮਾਂ ਵਿੱਚ ਮਗਨ, ਜੈਨੀ ਮਲੀਨਤਾ ਵਿੱਚ ਸੁਲਗਨ, ਜੋਗੀ ਦਿਖਾਵੇ ਦੀਆਂ ਸੁੰਨ-ਸਮਾਧੀਆਂ ਵਿੱਚ ਲੱਗੇ ਹੋਏ, ਪੰਡਤ ਕਿਤਾਬੀ ਗਿਆਨ ਦੇ ਚੱਕਰ ਤੇ ਹੰਕਾਰ ਵਿੱਚ ਫਸੇ ਹੋਏ ਸਨ।ਰਾਜੇ ਰਾਣੀਆਂ ਕੂੜ ਵਿੱਚ ਰੁੱਝੇ ਹੋਏ, ਪੁਜਾਰੀ ਸ਼੍ਰੇਣੀਆਂ ਵਹਿਮਾਂ, ਪਾਖੰਡਾਂ ਤੇ ਰਸਮਾਂ ਵਿੱਚ ਰੁੱਝੇ ਹੋਏ ਅਤੇ ਭਗਤ ਜਨ ਮੂਰਤੀ ਪੂਜਾ ਤੇ ਬਗਲਾ ਸਮਾਧੀਆਂ ਵਿੱਚ ਜੁੜੇ ਹੋਏ ਸਨ।ਧਾਰਮਿਕ ਖੇਤਰ ਵਿੱਚ ਸਦਾਚਾਰਕ (ਇਖ਼ਲਾਕੀ) ਤੇ ਸੱਭਿਆਚਾਰਕ (ਤਹਿਜ਼ੀਬੀ) ਗਿਰਾਵਟ ਆ ਚੁੱਕੀ ਸੀ।ਸਤਿਗੁਰੂ ਨੇ ਇਨ੍ਹਾਂ ਇਖ਼ਲਾਕੀ ਗਿਰਾਵਟਾਂ ਦਾ ਚਿੱਤਰ ਯਥਾਰਥ ਢੰਗ ਨਾਲ ਆਸਾ ਦੀ ਵਾਰ ਵਿੱਚ ਪੇਸ਼ ਕੀਤਾ ਹੈ"।[10]

ਆਸਾ ਦੀ ਵਾਰ ਵਿੱਚ ਦੱਸਿਆ ਗਿਆ ਹੈ ਕਿ ਉਸ ਸਮੇਂ ਸਮਾਜ ਦੀ ਹਾਲਤ ਤਰਸਯੋਗ ਸੀ।ਉਸ ਸਮੇਂ ਦੇ ਰਾਜੇ ਸ਼ੇਰਾਂ ਦਾ ਅਤੇ ਕਾਜੀ ਬਘਿਆੜਾਂ ਦਾ ਰੂਪ ਧਾਰ ਕੇ ਆਮ ਜਨਤਾ ਦਾ ਲਹੂ ਪੀ ਰਹੇ ਸਨ।ਉਸ ਵੇਲੇ ਸਮਾਜ ਵਿੱਚ ਲੋਕਾਂ ਨੇ ਆਪਣੀਆਂ ਲਾਲਸਾਵਾਂ ਦੀ ਪੂਰਤੀ ਲਈ ਝੂਠ ਤੇ ਠੱਗੀ ਨੂੰ ਬੜਾ ਮਹੱਤਵ ਦੇਣਾ ਸ਼ੁਰੂ ਕਰ ਦਿੱਤਾ ਸੀ।ਉਹ ਲੋਕ ਇਸ ਨੂੰ ਸ਼ਹਿਦ ਨਾਲੋਂ ਵੀ ਮਿੱਠਾ ਅਨੁਭਵ ਕਰਨ ਲੱਗ ਪਏ ਸਨ।ਇਸ ਅਨੁਭਵ ਨੂੰ ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਇੰਝ ਵਿਅਕਤ ਕੀਤਾ ਹੈ :

ਕੂੜੁ ਮਿਠਾ ਕੂੜੁ ਮਾਖਿਉ ਕੂੜੁ ਡੋਬੇ ਪੂਰੁ ॥
ਨਾਨਕੁ ਵਖਾਣੈ ਬੇਨਤੀ ਤੁਧੁ ਬਾਝੁ ਕੂੜੋ ਕੂੜੁ ॥[11]

ਉਸ ਸਮੇਂ ਸਮਾਜ ਵਿੱਚ ਕੋਈ ਵੀ ਆਪਣੇ ਹੱਕ ਜਾਂ ਸੱਚ 'ਤੇ ਸਥਿਰ ਨਹੀਂ ਸੀ । ਬੇਗਾਨਾ ਹੱਕ ਖਾਣ ਨੂੰ ਸਾਧਾਰਨ ਸਮਝਿਆ ਜਾਂਦਾ ਸੀ । ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਨੇ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਪਰਾਇਆ ਹੱਕ ਖਾਣ ਤੋਂ ਵਰਜਿਤ ਕੀਤਾ । ਇਸ ਸਬੰਧੀ ਉਹ ਆਪਣੀ ਬਾਣੀ ਵਿੱਚ ਲਿਖਦੇ ਹਨ :

ਹਕੁ ਪਰਾਇਆ ਨਾਨਕਾ ਉਸੁ ਸੂਅਰ ਉਸੁ ਗਾਇ ॥
ਗੁਰੁ ਪੀਰੁ ਹਾਮਾ ਤਾ ਭਰੇ ਜਾ ਮੁਰਦਾਰੁ ਨ ਖਾਇ ॥[12]

ਪਰਾਇਆ ਹੱਕ ਮੁਸਲਮਾਨਾਂ ਲਈ ਸੂਰ ਤੇ ਹਿੰਦੂਆਂ ਲਈ ਗਾਂ ਖਾਣ ਦੇ ਬਰਾਬਰ ਹੈ।ਗੁਰੂ ਪੈਗੰਬਰ ਤਾਂ ਹੀ ਸਿਫ਼ਾਰਸ਼ ਕਰਦਾ ਹੈ, ਜੇਕਰ ਮਨੁੱਖ ਪਰਾਇਆ ਹੱਕ ਨਾ ਵਰਤੇ।

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦੀ ਬਾਣੀ 'ਆਸਾ ਦੀ ਵਾਰ' ਵਿੱਚ ਅਨੇਕ ਅਟੱਲ ਸੱਚਾਈਆਂ ਹਨ, ਜੋ ਮਨੁੱਖੀ ਜੀਵਨ ਦੇ ਹਰੇਕ ਪਹਿਲੂ ਨਾਲ ਸੰਬੰਧਿਤ ਹਨ।ਇਹ ਸੱਚਾਈਆਂ ਲੋਕਾਂ ਵੱਲੋਂ ਰੋਜ਼ਾਨਾ ਕੰਮ ਕਰਦੇ ਗੁਣਗਾਨ ਕਰਦੀਆਂ ਨਜ਼ਰ ਆਉਂਦੀਆਂ ਹਨ, ਜਿਵੇਂ :

ਰੋਟੀਆ ਕਾਰਣਿ ਪੂਰਹਿ ਤਾਲ ॥[13]
ਹਉਮੈ ਦੀਰਘ ਰੋਗੁ ਹੈ ਦਾਰੂ ਭੀ ਇਸੁ ਮਾਹਿ ॥[14]
ਹੋਇ ਇਆਣਾ ਕਰੇ ਕੰਮੁਆਣਿ ਨ ਸਕੈ ਰਾਸਿ ॥[15]
ਮਿਠਤੁ ਨੀਵੀ ਨਾਨਕਾ ਗੁਣ ਚੰਗਿਆਈਆ ਤਤੁ ॥[16]
ਕਪੜੁ ਰੂਪੁ ਸੁਹਾਵਣਾ ਛਡਿ ਦੁਨੀਆ ਅੰਦਰਿ ਜਾਵਣਾ ॥[17]
ਨਾਨਕ ਫਿਕੈ ਬੋਲਿਐ ਤਨੁ ਮਨੁ ਫਿਕਾ ਹੋਇ ॥[18]
ਜੋ ਆਇਆ ਸੋ ਚਲਸੀ ਸਭੁ ਕੋਈ ਆਈ ਵਾਰੀਐ ॥[19]

ਸਮੁੱਚੇ ਰੂਪ ਵਿੱਚ ਕਹਿ ਸਕਦੇ ਹਾਂ ਕਿ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਵਿੱਚ ਸੱਚ ਦਾ ਭਾਵ ਦੂਜਿਆਂ ਦੇ ਭਲੇ ਲਈ ਸੇਵਾ ਪਰਉਪਕਾਰ ਤੇ ਪੁੰਨਦਾਨ ਕਰਨਾ ਹੈ । ਇਸੇ ਸੱਚ ਦੀ ਧਾਰਨਾ ਦਰਸ਼ਨ ਵਾਲੀ ਨਾ ਹੋ ਕੇ ਵਿਵਹਾਰਕ ਹੈ ਅਤੇ ਮੌਲਿਕ ਵੀ। ਇਸੇ ਕਾਰਨ ਬਾਅਦ ਵਿੱਚ ਸਿੱਖ ਧਰਮ ਵਿੱਚ ਸੇਵਾ ਤੇ ਵੰਡ ਛਕਣ ਦੀ ਮਹਾਨਤਾ ਕਰਕੇ ਹੀ ਸਿੱਖਾਂ ਨੇ ਆਪਣੇ ਭਾਈਚਾਰੇ ਦੀ ਪਹਿਚਾਣ ਬਣਾ ਲਈ ਹੈ।ਸਿੱਖ ਜਿੱਥੇ ਵੀ ਗਏ, ਉੱਥੇ ਸੇਵਾ ਤੇ ਲੰਗਰ ਦੀ ਪਰੰਪਰਾ ਨਾਲ ਲੈ ਕੇ ਗਏ ।

ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਦੁਆਰਾ ਦਰਸਾਏ ਆਦਰਸ਼ ਅੱਜ ਵੀ ਮਨੁੱਖਤਾ ਲਈ ਉਤਨੇ ਹੀ ਕਲਿਆਣ ਕਰ ਰਹੇ ਹਨ ਜਿਵੇਂ ਕਿ 16ਵੀਂ ਸਦੀ ਵਿੱਚ ਸਨ।ਅਜੋਕੇ ਦੌਰ ਵਿੱਚ ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬਾਨ ਦੁਆਰਾ ਦੱਸੇ ਗਏ ਮਾਰਗ ਦਰਸ਼ਨ ਮਨੁੱਖੀ ਜੀਵਨ ਲਈ ਸੇਧ ਬਣਿਆ ਹੈ।

ਹਵਾਲੇ ਅਤੇ ਟਿੱਪਣੀਆਂ

1. ਸੰਪਾਦਿਤ, ਡਾ. ਗੰਡਾ ਸਿੰਘ, ਪੰਜਾਬ ਦੀਆਂ ਵਾਰਾਂ, ਪੰਨਾ ਨੰ :6
2. ਡਾ. ਰਤਨ ਸਿੰਘ ਜੱਗੀ, ਵਿਚਾਰਧਾਰਾ, ਪੰਨਾ ਨੰ :173
3. ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ, ਅੰਗ :462
4. ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ, ਅੰਗ :463
5. ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ, ਅੰਗ :462
6. ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ, ਅੰਗ :463
7. ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ, ਅੰਗ :470–71
8. ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ, ਅੰਗ :467
9. ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ, ਅੰਗ :471
10. ਡਾ.ਕਾਲਾ ਸਿੰਘ ਬੇਦੀ, ਵਾਰਕਾਰ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ, ਪੰਨਾ ਨੰ :29
11. ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ, ਅੰਗ :468
12. ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ, ਅੰਗ :141
13. ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ, ਅੰਗ :465
14. ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ, ਅੰਗ :466
15. ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ, ਅੰਗ :474
16. ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ, ਅੰਗ :470
17. ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ, ਅੰਗ :470
18. ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ, ਅੰਗ :473
19. ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ, ਅੰਗ :473

Volume : 6 | Issue :49 | October-December2019 ISSN: 2349-1876 (Print) | ISSN : 2454-1826 (Online)

गुरु नानकदेव की वाणी और भारतीय जीवन मूल्य

*डॉ. लखन लाल खरे

* प्राचार्य, शासकीय महाविद्यालय, करैरा, शिवपुरी, मध्यप्रदेश

हिन्दी साहित्य के मध्यकाल में भक्तों और संत कवियों की वाणियों ने जिस अमृत का वर्षन किया, उससे कुम्हलाते जा रहे भारतीय जीवन–मूल्यों के प्राणों को नव संचार प्राप्त हुआ। सामयिक क्षितिज पर इन संतों का उदय, पीड़ित–शोषित, दिग्भ्रमित मानवता के लिए एक अलौकिक और आकस्मिक वरदान से कम न था। इस काल के सैकड़ों संतों ने पतित होते जा रहे जीवन मूल्यों को संवारने का स्तुत्य कार्य किया। किसी भी संत और भक्त को न्यूनाधिक नहीं कहा जा सकता। फिर भी रामानंद नामदेव, कबीर, रैदास और नानकदेव जी के नाम अग्रपंक्ति में रखे जा सकते हैं। इनमें भी सौम्यता, सहजता, सरलता और निजता जैसे तत्वों की दृष्टि से नानक देव जी का नाम अग्रगण्य है।

भारतीय जीवन मूल्यों के अन्तर्गत– भारतीय संस्कृति, धर्म, दर्शन, साहित्य आदि समस्त तत्व समाहित हो जाते हैं। भारतीय सभ्यता और संस्कृति के रेशे–रेशे से भारतीय जीवन मूल्यों का निर्माण हुआ है। मानवीय मूल्य, जीवन मूल्य, सामाजिक मूल्य, धार्मिक मूल्य, सांस्कृतिक मूल्य – ये सब विश्लेषणपरक दृष्टि से भले ही पृथक–पृथक हों, पारिभाषिक दृष्टि से इनमें भिन्नता परिलक्षित हो, परन्तु तात्विक दृष्टि से प्रायः एक ही है, ये परस्पर गुंफित हैं। मनुष्य से परिवार, परिवार से समाज और समाज से राज्य – राष्ट्र का निर्माण होता है। ममता, त्याग, स्नेह, करुणा, प्रेम, सहयोग जैसे तत्व मनुष्य को परिवार से ही हस्तांतरित होते हैं। तब ये मानवीय मूल्य के रुप में होते हैं। जब इन मूल्यों को मनुष्य अपने जीवन में धारण करता है, तब ये जीवन मूल्य बन जाते हैं। समूचे समाज में इनका प्रसार होने पर ये सामाजिक मूल्य की संज्ञा से अभिहित होते हैं। आगे चलकर इनका विस्तार राष्ट्रीय मूल्य और वैश्विक मूल्य तक होता है तब इनमें कुछ और तत्व समाहित हो जाते हैं। जीवन मूल्य समाज द्वारा स्वीकृत वे लक्ष्य होते हैं जिन्हें समाजीकरण की प्रक्रिया के द्वारा धारण किया जाता है। विवेकयुक्त चिंतन, लोक कल्याण बोध, परिवेश बोध, जीवन के प्रति आस्था, वैयक्तिक उदारीकरण अथवा आंतरिक उन्नयन सामाजिक मूल्य के अन्तर्गत आते हैं।''1 इन तत्वों में विवेकयुक्त चिंतन, लोककल्याण बोध तथा आंतरिक उन्नयन जैसे तत्वों के विकास पर संतों ने अधिक बल दिया है।

गुरु नानकदेव जी की वाणी कबीर आदि संतों की अपेक्षा अधिक कोमल रही है। इतना ही नहीं, कोमलता के साथ–साथ इनकी वाणी में कोई आडम्बर, चमत्कार अथवा बौद्धिक प्रदर्शन नहीं है। डॉ0 शिवकुमार शर्मा इनकी वाणी के महत्व को प्रतिपादित करते हुए लिखते हैं कि ''हिंदू–मुसलिम एकता के लिए तथा ब्रह्म की प्राप्ति के लिए इन्होंने सीधे–सादे उपदेश दिये। उनमें कहीं भी वक्रता और खंडनात्मकता नहीं है।''2 इनकी वाणी की सादगी का एक उदाहरण :

गुरु सेवे सो ठाकुर जानै। दुखु मिटै सचु सबदि पछानै।
रामु जपहु मेरी सखी सखैनी। सतिगुरु सेवि देखहु प्रभु नैनी।
बंधन मात पिता संसारि। बंधन सुत कंनिया अरु नारि।।
बंधन करम धरम हउ कीआ। बंधन पुतु कलतु मनि बीआ।
बंधन फिरखी करहि किरसान। हउमै इनुं सहै राजा मंगै दान।
बंधन सउदा अण बीचारी। तिपति नाही माइआ मोह पसारी।
बंधन साह संचहि धनु जाइ। बिनु हरि भगति न पवइ थाइ।
बंधन बेदु बादु अहंकार। बंधनि बिनसै मोह विकार।।
नानक राम नाम सरणाई। सतिगुरि राखे बंधु न पाई। 3

जीवन मूल्य के तत्वों की रक्षार्थ विवेकयुक्त चिंतन आवश्यक है। नानक जी ने अपने भौतिक चक्षुओं से संसार को देखा परन्तु उसे परखा दिव्य चक्षुओं से। इस परख में उन्होंने पाया कि जाति–वर्ग के और ऊँच नीच के सारे झगड़े व्यर्थ हैं। मनुष्य मनुष्य समान हैं, फिर क्या हिंदू और क्या मुसलमान, क्या ब्राह्मण और क्या शूद्रः

जाति का गरबु न करीअहु कोई। ब्रह्म बिंदे सो ब्राह्मणु होई।।
जाति का गरबु न करि मूरख गबारा
इसु गरब ते चलहि बहुतु विकारा।।
चारे वरन आखै सभु कोई। ब्रह्म बिंद ते सभ ओपति होई।।
माटी एक सगल संसारा। बहु बिधि भांडे घड़ै कुम्हारा।।
पंच ततु मिलि देही का आकारा। घटि वधि को करै बीचारा।4

भारतीय जीवन मूल्य का दूसरा तत्व है – लोक कल्याण बोध। नानक जी के अनुसार मानव–मानव एक है। इसमें भेद करना व्यर्थ है। ऊँच–नीच का भेद किये बिना लोक की सेवा करने का भाव मनुष्य में होना

चाहिए। यह भावना मनुष्य में तभी आ पाती है जब उसे लगे कि परमेश्वर पृथक– पृथक नहीं है, अपितु एक ही है। यह एक परमेश्वर समस्त जातियों से परे है। यह परमेश्वर अजन्मा है, कालातीत है, अयोनि है। उसे किसी से न कोई लगाव है और न उसके सम्मुख कोई भ्रम है :

अलख अपार अगम अगोचर ना तिसु कालु न करमा।
जाति अजाति अजोनी संभउ ना तिसु भाउ न भरमा।। 5

नानकदेव जी ने स्थान–स्थान पर भोजनालय की व्यवस्था की जहाँ सभी बिना किसी भेद भाव के एक साथ, एक जगह भोजन करते। यात्रियों को रुकने के लिए धर्मशालाओं का निर्माण कराया। भोजन व्यवस्था और रुकने की व्यवस्था की परिपाटी अब भी गुरुद्वारों में लंगर के रुप में चल रही है।

आत्मचिंतन अथवा आत्मबोध प्राप्त हो जाने से व्यक्ति द्वन्द्वातीत हो जाता है। जीवन मूल्य का यह महत्वपूर्ण सोपान है। आत्मबोध बिना गुरु की कृपा के संभव नहीं है। नानक देव जी का मानना है कि गुरु के उपदेश द्वारा प्रबोधन होता है और मन शांत होता है। गुरु के द्वारा प्राप्त ज्ञान से परमात्मा की प्राप्ति होती है। परमात्मा सृष्टि का निर्माण करता है और संहार करता है। सद्गुरु जिनकी रक्षा करता है, वे बड़े भाग्यशाली होते हैं। इसीलिए गुरु के चरणों का आश्रय ग्रहण करना श्रेयस्कर है :

गुरुमुखि गिआनु धिआनुमति मानु।
गुरमुखि महली महल पछानु।।
गुरमुखि सुरति सबद नीसानु।
ऐसे प्रेम भगति बीचारी।
गुरुमुखि साचा नामु मुरारी।।
अहिनिसि निरमलु थानु सु थानु।
तीन भवन निहकेवल गिआनु
साचे गुर ते हुकमु पछानु
साचा हरखु नाही तिसु सोगु
अमृत गिआनु महारस भोगु।।
पंच समाई सुखी सभु लोगु
सगली जोति तेरा सभु कोई।
आपे जोड़ि बिछोड़े सोई।।
आपे करता करे सु होई
ठाहि उसारे हुकमि समावै।
हुकमो वरतै जो तिसु भावै।।
गुर बिनु पूरा कोई न पावै
बालक विरधि न सुरति परानि।
भरि जोवनि बूडै अभिमानि।।
बिनु नावै किआ लहसि निदानि
जिसका अनु धनु सहसि न जाना।
भरमि भुलाना फिरि पछुताना।।
गलि फाहा बउय वउराना
बूडत जगु देखिआ तउ डरि भागे।
सतिगुरि राखे से वडभागे।।
नानक गुर की चरणी लागे।। 6

नानकदेव जी ने मनुष्य की आंतरिक शुचिता पर सर्वाधिक बल दिया। आंतरिक शुचिता से मनुष्य की मति निर्मल होती है। फलतः वह दोषों को नहीं करता। इसलिए जो निज स्वरूप को जान लेता है, वह ईश्वर रूपी हीरे को परख सकता है :

आपु वीचारै सु परखे हीरा।
एक दृष्टि तारेगुर पूरा
गुरु मानै मन ते मनु धीरा
ऐसा साहु सराफी करै।
साचि नदरि एक लिव तरै।। रहाऊ।।
पूंजी नामु निरंजन सारु।
निरमलु साचिरता पैकारु
सिफति सहज घरि गुरु करताऊ
आसा मनसा सबदि जलाए।
राम नराइणु कहै कहाए।
गुरते वाट महतु घरु पाए
कंचन कइआ जोति अनूपू।
त्रिभवण देवा सगल सरूपु
मै सो धनु पलै साचु अखूड।।
पंच तीनि नव चरि समावै।
घरणि गगनु कल धारि रहावै।।
बाहरि जातउ डलाति परावै।।
मुरखु घेइ न आखी सूझै।
जिहवा रसु नही कहिआ बूझे।।
विखु का माता जग सिउ लूझै।।
उत्तम संगति ऊतम होवै।
गुण कउ धावै अवगण धोवै।।
विनु गुर सेवे सहजु न होवै
हीरा नामु जवेहर लालु।
मनु मोती है तिस का भालू
नानक परखै नदरि निहालु।। 7

नानक जी की वाणी प्रेरणादायी है। ऐसी अलौकिक वाक् शक्ति मध्यकाल के अन्य संतों में नहीं है। हजारी प्रसाद द्विवेदी को उद्धृत करते हुए डॉ0 शिवकुमार शर्मा लिखते हैं कि – ''जिन वाणियों से मनुष्य के अन्दर इतना बड़ा अपराजेय आत्म बल और कभी समाप्त न होने वाला साहस प्राप्त हो सकता है, उनकी महिमा निःसंदेह अतुलनीय है। सच्चे हृदय से निकले हुए भक्त के अत्यन्त सीधे उद्गार और सत्य के प्रति दृढ़ रहने के उपदेश कितने शक्तिशाली हो सकते हैं, यह नानक की वाणियों ने स्पष्ट कर दिया है।'' 8

गुरुनानक जी की वाणी प्रेम का वर्षन करती है। मनुष्य जीवन में यदि प्रेम करूणा, दया, ममता, समता आदि मूल्यों का प्राधान्य नहीं है तो वह मनुष्य ही नहीं है। जीवन वही है जिसमें परोकार की भावना हो, लोक कल्याण की भावना हो और दूसरों को प्रसन्नता बांटने की प्रबल भावना हो।

नानकदेव जी की वाणी आज भी प्रासंगिक है। आज व्यक्ति जब स्वार्थ में लिप्त है, आतंक, हिंसा और विद्वेष जीवन मूल्यों को समाप्त करते चले जा रहे हैं, तब इन

मूल्यों का संरक्षण नानकदेव जी की वाणी ही कर सकती है।

संदर्भ

01. समकालीन हिंदी कहानी में सांस्कृतिक मूल्य : डॉ0 पद्मा शर्मा ; पृ0 36
02. हिंदी साहित्य : युग और प्रवृत्तियाँ : डॉ0 शिवकुमार शर्मा ; पृ0 158
03. नानकवाणी ; पृ0 291
04. श्री गुरुग्रंथ साहिब महला 3 ; पृ0 1127–1128
05. वही ; महला 1
06. नानकवाणी ; पृ0 286
07. वही ; पृ0 284
08- हिंदी साहित्य : युग और प्रवृत्तियाँ : डॉ0 शिवकुमार शर्मा ; पृ0 210

 ISSN: 2349-1876 (Print) | ISSN : 2454-1826 (Online)

गुरु नानक देव का काव्य : सामाजिक चेतना

*डॉ. डिम्पल गुप्ता

* हिन्दी विभाग, पी.जी.डी.ए.वी. कॉलेज (सांध्य), दिल्ली विश्वविद्यालय

गुरु नानक जी का जन्म उन विषम परिस्थितियों में हुआ जब सम्पूर्ण भारतवर्ष में अफरा–तफरी का माहौल था। शासक रक्षक के स्थान पर भक्षक बन बैठे थे। उन्हें केवल साम्राज्य की चिंता थी, प्रजा की नहीं। केवल शक्ति का ही वर्चस्व बचा था, जिस प्रकार जंगल राज में केवल शक्तिशाली का ही प्रभुत्त्व बचा रहता है, कमजोर का नहीं, यही स्थिति समाज की भी थी। बेचारी गरीब जनता हर और से अत्याचार एवं शोषण का शिकार हो रही थी। एक तरफ तो देश में आपसी फूट और कलह विद्यमान थी तो दूसरी और विदेशी शासक इन अवसरों का लाभ उठा रहे थे।

अनादिकाल काल से ही भारतीय भूमि ऋषि–मुनियों की पावन धरती रही है और धर्म केन्द्रीय बिन्दु। धर्म का पालन करके ही हमारे यहाँ मानव–जाति का विकास हुआ है। भारतवर्ष ने सदैव विश्व को भी धर्म–मार्ग दिखाया है। 'हिन्दू धर्म' का तो आदिकाल से यही सिद्धान्त रहा है कि 'जीओ और जीने दो'। इस धर्म ने सब धर्मों का आदर–सत्कार किया। दया–धर्म, त्याग, सत्य अहिंसा, परोपकार जैसे मूल्यों को सर्वोपरि माना लेकिन हज़रत मुहम्मद द्वारा चलाये गये इस्लाम धर्म ने हिन्दु–धर्म को गहरा–आघात पहुँचाया। 'इनका मानना था कि इस धर्म को तलवार की शक्ति से फैलाने की आज्ञा हमें अल्लाह के घर से मिली है' इनके अनुसार– ''तलवार स्वर्ग और नरक की कुंजी है मुसलमानों के लिए खून की एक बूँद धर्म के लिए बहाने और रणक्षेत्र में एक रात काटनी, महीनों के रोजे (व्रत) और नमाजों से अधिक लाभदायक है। जो मुसलमान युद्ध के मैदान में मरते हैं वे सीधे स्वर्ग जाते हैं स्वर्ग में उन्हें हूरे (परिया) मिलती हैं वहाँ पर ये बहादुर सदा आनन्द का जीवन व्यतीत करते हैं उन्हें वहाँ जीवन के सुख की हर चीज मिलेगी।

अरब के मरुस्थल के रहने वाले बेकार और गुलामों के लिए यह चीज उनकी सोई राक्षसी भावनाओं को जगाने के लिए काफी थी और परिणाम स्वरूप अरबों ने भारत जैसे सुन्दर और धार्मिक देश पर आक्रमण किये यहाँ का धन लूटा कत्लेआम किया और स्त्रियों को साथ ले गये। लाखों लोगों को आजीवन गुलाम बनाकर रखा गया और इस प्रकार सारे– भारतवर्ष का अमनपूर्ण सुख–चैन रूदन और हाहाकार में बदल गया इसके पश्चात् यहाँ अफगान सरदारों के आक्रमण हुए। मुहम्मद गजनी ने हजारों बेगुनाह भारतवासियों को बेदर्दी से मृत्यु के घाट उतार दिया। इसके उपरान्त कुतुबउद्दीन ऐबक खिलजी और सिकन्दर के हमलों ने लाखों मन्दिरों को तोड़कर मस्जिदों का निर्माण कराकर भारतीय संस्कृति को जड़ से उखाड़ने का प्रयास किया। लेकिन अत्याचारों और जुल्मों ने धर्म की महानता को और बढ़ावा दिया। इनमें अनेक साधु, संत और कवियों ने मन्दिरों से निकलकर गाँव–गाँव में धर्म का प्रचार किया और एक अलग मार्ग चुना जिनका उद्देश्य मात्र समाज–कल्याण ही था इन्हीं महान संतों की श्रेणी में गुरु नानक देव जी का महत्त्वपूर्ण स्थान है।

संत परम्परा में नानक देव जी का स्थान अग्रणी है, नानक जी एक महान युग दृष्टा, समाज–सुधारक, विचारक एवं सिक्ख–धर्म के प्रवर्तक हैं। इनकी वाणियों एवं विचारधारा से प्रेरित होकर ही देश के एक विशिष्ट समुदाय ने सिक्ख धर्म ग्रहण किया और धीरे–धीरे सारे देश में इसका प्रचार–प्रसार हो गया। इनका प्रमुख ग्रंथ 'गुरुग्रन्थ साहब' मानवीय मूल्यों को दर्शाता है। यह ग्रंथ पंजाबी भाषा और गुरुमुखी लिपि में है।

निश्चित रूप से गुरू नानक मध्य युग के एक महान् लोकनायक थे। वे एक गंभीर एवं प्रतिभाशाली चिंतक थे। जिस समय उनका अवतरण हुआ उस समय सर्वत्र अंधकारमय परिस्थितियाँ थी और इन परिस्थितियों को छिन्न–भिन्न करने के लिए किसी युग–पुरुष की आवश्यकता थी। जनता हताश थी, निराश थी। गुरु नानक जी ने इस सिसक रही जनता को अपने शब्दामृत से सींचा जिसका परिणाम यह हुआ कि उनकी इस भावभक्ति ने दुःखांत को सुखांत में परिवर्तित कर दिया। इस प्रकार उनके जन्म के समय जो समाज एवं धर्म की त्रासद् एवं विषम परिस्थितियाँ थी, उनके देहांत के समय

उनमें पर्याप्त सुधार हुआ और दशम गुरू तक तो समाज और धर्म ने अपना सारा स्वरूप ही बदल दिया।

गुरू नानक देव ने सही अर्थों में हिंदू–मुस्लिम धर्मों की कुरीतियों को त्याज्य बताकर मानव–धर्म की प्रतिष्ठा की है। उन्होंने सदैव आचरण की शुद्धता एवं सच्चरित्रता का ही संदेश दिया। संत नानक मध्यकाल के लोकनायक थे जिन्होंने सुप्त समाज को झकझोरकर जनजागृति का बिगुल बजाया। डॉ. नगेन्द्र के शब्दों में– ''लोकनायक के रूप में उन्होंने समस्त उत्तर भारत में सामाजिक–चेतना जगाकर जनजागृति का मंत्र फूँका और अन्याय एवं अत्याचार के विरुद्ध जनता को संगठित किया, आध्यात्मिक गुरू के रूप में उन्होंने निराश जनता की चेतना में आत्मविश्वास और ईश्वर–विश्वास की भावना की पुनः प्रतिष्ठा की। गुरु नानक व्यक्ति नहीं थे, संस्था शब्द भी उनके संपूर्ण कृतित्व का अर्थ वहन नहीं कर सकता। वे एक समग्र देशकाल की चेतना के प्रतीक थे।[1]

गुरु नानक जी ने भी अन्य संतों की भाँति साम्प्रदायिकता को दूर करने के सराहनीय प्रयास किए। उस समय हिन्दू–मुस्लिमों में परस्पर शत्रुता, कट्टरता, ईर्ष्या एवं द्वेष की भावना व्याप्त थी लेकिन नानक जी ने सदैव दोनों धर्मों के बीच समन्वय स्थापित करने की चेष्टा की। इसलिए उन्होंने सहज मार्ग के द्वारा दोनों धर्मों की पारस्परिक अच्छाइयों को ग्रहण किया–

एक और जहाँ सच्चे मुसलमान बनने की विधि बताई–
मिहर मसीति सिदकु मुसला हकु हलालु कुराणु।
सरम सुनति सीलु रोजा होहु मुसलमाणु।।[2]
तो दूसरी और सच्चे ब्राह्मण की भी विधि बताई–
'सो ब्राह्मणु जो ब्रहमु बीचारै। आपि तरै सगले कुल तारे'[3]

सच्चा कवि वह जो युगीन परिस्थितियों पर तीखी दृष्टि रखकर कटु सत्य को कहने का साहस रखता है यह अदम्य साहस गुरू नानक जी में विद्यमान था इसलिए उन्होंने प्रजा पर राजाओं एवं मन्त्रियों द्वारा किए गए शोषण को सशक्त अभिव्यक्ति दी तत्कालीन राजाओं की हिंसक प्रवृत्ति एवं मंत्रियों की लोभीवृत्ति को समाज के सामने रखा–

राजे सीह मुकदम कुते। जाइ जगाइन बैठे सुते।
चाकर नहदा पाइन्हि घाउ। रतु पितु कुतिहो चटि जाहु।।
जिभै जीआं होसी सार। नकीं वढ़ीं लाइतबार।।[4]

अर्थात् राजा सिंह के समान हिंसक प्रवृत्ति के हो गए किस प्रकार ये वर्ग सोती हुई प्रजा को जगाकर उसका भक्षण कर रहे हैं। लेकिन जब इनके कर्मों की छानबीन होगी, वहाँ इन लाइतबारों की नाक काट दी जाएगी।

इस प्रकार गुरू नानक देव ऐसे पहले धार्मिक सन्त हैं, जो राजनीतिक दुर्व्यवस्था को सहन न कर सके। उन्होंने इसके विरुद्ध आवाज उठायी।

अपनी वाणी में गुरू नानक जी ने स्थान–स्थान पर मूर्तिपूजा का निषेध किया है– जो लोग मूर्तिपूजा करते हैं ऐसे व्यक्तियों को नानक मूर्ख कहते हैं और कहते हैं कि ये मूर्ख और गँवार पत्थर लेकर पूज रहे हैं। हे भाई जिन पत्थरों की तुम पूजा करते हो, यदि वे स्वयं ही पानी में डूब जाते हैं, तो उन्हें पूज कर तुम संसार–सागर से किस प्रकार तर सकते हो।

नानक जी ने मिथ्या धर्म का प्रदर्शन करने वालों की सदैव निन्दा की है। उनका मानना है कि केवल पुस्तकें पढ़ना, संध्या करना, पत्थरों की पूजा करना और बगुले की भाँति झूठी समाधि लगाना व्यर्थ है–

''पड़ि पुस्तक संधिआ वादं।
सिल पूजसि बगुलसमाधं।।
मुखि झूट विभूखराा सारं।[5]

गुरु नानक जी ने सदैव धर्म के आन्तरिक भावों को ग्रहण करने के निमित बल दिया। उन्होंने भ्रातृभाव, सह्रदयता, सहिष्णुता, सत्य, संयम, दया, लज्जा आदि गुणों को अपनाने पर बल दिया जिससे मानवता का कल्याण हो।

गुरु नानक जी के धर्म की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वह प्रवृत्तिमूलक है दूसरा यह धर्म पाखण्डों और बाह्याडम्बरों का जोरदार खण्डन करता है तीसरा इनके धर्म में समाज के उत्थान के प्रति उदात्त विचार प्राप्त होते हैं। चौथा इनका धर्म किसी निश्चित परम्परा में नहीं बँधा।

भारतीय धर्म–समाज में गुरू का स्थान बड़ा उच्च, गौरवपूर्ण और समादृत रहा है। उपनिषदों और श्रीमद्भगवद्गीता में भी गुरु की महत्ता मानी गयी है। तंत्र साधकों, योगियों, नाथपंथियों, वज्रयानियों ने भी गुरु की महिमा का गुणगान किया है। संत कबीर ने गुरु को गोविन्द से भी पहले पूजनीय माना तो जायसी ने भी माना कि गुरु वह पंडित है जो सही मार्ग दिखाता है–

गुरु नानक जी ने भी स्थान–स्थान पर गुरू की महत्ता को स्वीकार किया। गुरू जी ने कर्मयोग, योगमार्ग ज्ञानमार्ग और भक्ति मार्ग सभी में गुरु का महत्त्व माना है और सद्गुरु और परमात्मा में अभिन्नता दिखाई है–

ऐसा हमारा सखा सहाई।
गुर हरि मिलिआ भगति हड़ाई।।[6]

गुरु नानक जी ने न केवल समाज में फैली कुरीतियों एवं आडम्बरों का खंडन किया बल्कि धर्म के नाम पर चल रही अंध–परम्पराओं का भी खुलकर विरोध किया। उन्होंने मन का अहंकार मिटाने के लिए प्रार्थना, नियन्त्रित करने के लिए साधना और संकल्पवान बनाने के लिए उपासना का मार्ग सुझाया है। गुरुनानक देव एक महापुरुष व महान धर्म–प्रवर्तक थे। उन्होंने माना कि ईश्वर सर्वव्यापी है और मनुष्य जीवन उसकी अनमोल देन है, इसलिए इसे व्यर्थ नहीं गंवाना चाहिए।

गुरु नानक जी ने समाज को समझाया कि ईश्वर एक है। सभी धर्मों का उद्देश्य– मनुष्य को ईश्वर के स्वरूप से साक्षात्कार कराना एवं उसके समीप पहुँचाना ही है। धर्म का यथार्थ स्वरूप बाह्य पूजा, कर्मकाण्ड एवं परम्पराओं में नहीं है वरन् स्वयं को जीतना और इन्द्रियों

को वश में रखना, सुख–दुःख, हानि लाभ में एक सा भाव रखना ही धर्म का सबसे बड़ा लक्षण है।

उस युग में एक विकृति यह भी कि हर धर्म के अनुयायी अपने–अपने धर्म के प्रचार–प्रसार में लगे थे लेकिन गुरू नानक जी ने सभी धर्मों को समान महत्त्व दिया, उनकी दृष्टि में सभी धर्म महान थे और संसार में ईश्वर ने सब इन्सानों को बराबर पैदा किया है। ईश्वर भी एक ही है। ऐकेश्वरवाद की प्रतिष्ठा करते हुए उसकी सर्वव्यापकता पर बल दिया। ईश्वर किसी एक स्थान पर कैद नहीं। वह तो हर स्थान पर माजूद है। वह सबका सच्चा साथी है और हमारे जीवन का मात्र एक ही उद्देश्य होना चाहिए वह है उसका नाम लेना–

तेरे नाम अनेका, रूप अनता।
जेता कीता, तेरा नाऊ।
बिणु नावै, नाही को थाऊ।।[7]

वर्तमान समय में अहंकार मनुष्य का प्रबल शत्रु है अहंकार में लिप्त होकर ही मनुष्य ईश्वर के स्वरूप से साक्षात्कार नहीं कर पाता। नानक जी ने अनेक प्रकार के अहंकार को ईश्वर प्राप्ति के मार्ग में बाधक माना। अहंकार चाहे धार्मिक हो, विद्यागत अथवा कर्मकांड संबंधी या जाति अथवा धन–सम्पत्ति संबंधी। इसका त्याग किए बिना मुक्ति संभव नहीं। जाति–संबंधी अहंकार का वर्णन करते हुए गुरु नानक जी ने लिखा है– ''मैं ब्राह्मण हूँ, मैं क्षत्रिय हूँ, मैं कुलीन हूँ'' आदि का अहंकार मनुष्यों के बीच में ऐसी खाई खोद देता है, कि वह शताब्दियों तक नहीं पटती। इसलिए उन्होंने माना कि ''जीव मात्र में परमात्मा की ज्योति समझो। जाति के संबंध में प्रश्न न करो, क्योंकि आगे किसी भी प्रकार की जाति नहीं थी।''

''जाणहु जोति न पूछहु जाती आगै जाति नहे।''[8]

वर्तमान युग उपभोक्तावादी संस्कृति एवं धन–संचय की प्रवृत्ति का युग है लेकिन गुरू नानक जी धन–सम्पत्ति को तुच्छ मानते थे। उनके जीवन में साधु–संतों का इतना महत्त्व था कि वे उनकी सेवा को ही सब–कुछ मानते थे। कहा जाता है कि एक–बार पिता ने इन्हें व्यापार हेतु कुछ रुपए दिए थे जो इन्होंने साधु–संतों की सेवा में खर्च कर दिए थे इनका मत है कि इससे बढ़कर लाभकारी सौदा कुछ और नहीं हो सकता।

नारी सदैव हमारे समाज की आदर्श रही है। धार्मिक संरक्षण से लेकर संस्कारों के अनुपालन में नारी की अहं भूमिका रही है। 'दुर्गासप्तशती' में नारी को शक्ति कहा गया है। नारी के अनेक रूप है। उसे शक्ति सामर्थ्य, उत्साह, प्रेम, करुणा, साहस और सहिष्णुता की प्रतिमूर्ति माना गया। 'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता' अर्थात् नारी को पूजनीय माना गया लेकिन दुर्भाग्य वैदिक युग की यह पूजनीय नारी मध्ययुग तक आते–आते पुरुष के वैभव–विलास एवं वासना की पूर्ति का माध्यम बनकर रह गई। उसे 'नरक का मूल' कहा गया सामाजिक दृष्टि से उसका तिरस्कार किया जाने लगा लेकिन संत नानद देव ने समाज में उपेक्षित इस नारी को सम्मान की दृष्टि से देखा।

संत नानक ने नारी के माँ, बहन, पत्नी आदि स्वरूप और त्याग को देखकर पुरुष से ऊँचा दर्जा दिया। उन्होंने माना कि स्त्री से ही जगत की उत्पत्ति का क्रम चलता है, स्त्री से ही बड़े–बड़े राजागण जन्म लेते हैं। नारी को पुरुष की अर्धांगिनी स्वीकार किया गया है और नानक जी ने भी माना कि मनुष्य के इस आधे अंग की उपेक्षा करने से समाज एंव राष्ट्र का न तो उत्थान हो सकता है और न ही कल्याण।

भारत में सामाजिक जीवन के अभाव का बड़ा कारण भारत–वासियों का विभन्न जातियों में वर्गीकृत होना है। इस दुर्बलता का अनुभव कराने के लिए नानक जी निम्न जाति के भाई लालो के घर गए जिससे उच्च जाति वालों ने बड़ा बुरा माना। और इसी मिथ्या अभिमान को झँझोडने के लिए ही इन्होंने पद्य गायन के माध्यम से मनुष्य को सावधान होने की प्रेरणा दी और बताया कि परमात्मा का ठिकाना अत्यन्त निम्न श्रेणी के लोगों में होता है और उसकी कृपा निम्नता में भी उतर आती है–

नीचा अंदरि नीच जाति नीची हू अति नीचु।
नानकु तिन कै संगि साथि वडिआ सिउ किआरीस।
जिथै नीच समाली अनि तिथै नदरि तेरी व्यखसीस।

गुरुजी के दिव्य ज्ञान की झलक बचपन से ही उनमें विद्यमान थी। यज्ञोपवीत (जनेऊ) संस्कार के समय केवल नौ वर्ष की अवस्था में ही नानक जी ने इसे पहनने से इंकार कर दिया पण्डित जी ने जब इसे पहनने के लिए कहा तो उन्होंने स्पष्ट कहा कि उन्हें ऐसा धागा चाहिए जो न गले, न सडे, न मैला हो और जो परलोक में भी उनकी मदद करे–

दइया कपाह, सतोखु, सुतु जती गडी सतोवरो
एहो जनेऊ जिया का हई ता पाडे
न ऐहो तुटै न मलो लगै न ऐहो जलै न जाई
धनुसु माणस नानक। जो गले चली भाइ।[9]

आज के समय में 'मैं' प्रबल हो गया है हमारी भारतीय संस्कृति में अनादिकाल से 'सर्वे भवन्तु सुखिनः' पर बल दिया गया अर्थात् सभी सुखी हो। लेकिन वर्तमान में सब के स्थान पर 'मैं' अर्थात् समष्टि के स्थान पर व्यष्टि प्रधान हो गया। त्याग, बलिदान, करुणा जैसे मूल्य धराशायी होते जा रहे हैं। व्यक्ति सिर्फ अपने बारे में सोचता है, लेकिन गुरू जी का जीवन त्याग और बलिदान से परिपूर्ण भा। कहा जाता है कि एक बार वे सईदपुर से तलवडी अपने गाँव आए लेकिन घर न गए तब निराश पिता कालूजी और उनके भाई उन्हें घर लिवाने आए तब गुरू जी ने मानवतावाद का संदेश देते हुए कहा था– मैं केवल आपका ही पुत्र नहीं, मैं सर्वप्रथम अपने स्वामी ईश्वर का पुत्र हूँ । मुझे आपकी सेवा के लिए नहीं भेजा गया, बल्कि सारे संसार में अधर्म फैल रहा है, मुझे मानवता धर्म की रक्षा करनी है, जो मैं घर बैठकर नहीं कर सकता xxx मेरा ईश्वर सबका स्वामी है, वह सबका

दाता है, वही मेरा करतार है। वही आपका और मेरे बच्चों का ख्याल रखेगा, वह इनकी रक्षा करेगा।

समाज को चेताने के लिए मुख्य धार्मिक स्थानों पर पहुँच कर नानक जी ने निरर्थक रीतियों, रूढ़ मान्यताओं और भ्रमों का खंडन किया। खाने–पीने के बंधनों, पितृ–पूजा, मूर्ति–पूजा और पूजा–सामग्री की कठोर विधियों के सम्बन्ध में नानक जी ने सृजनात्मक एवं आलोचनात्मक दृष्टिकोण प्रस्तुत किया। गुरू नानक जी हिंदू और मुसलमान में एक सेतु के समान हैं। हिंदू और मुस्लमान दोनों में उनकी प्रतिष्ठा है। हिंदू जहाँ उन्हें सच्चे गुरू के रूप में देखते हैं। तो मुसलमान पीर के रूप में मानते हैं। उन्होंने सदैव समाज में समानता का नारा दिया और इसी उद्देश्य के लिए 'गुरु का लंगर' शुरू किया, जिसके एक ही पंक्ति में सामूहिक रूप से बैठकर भोजन खाने की प्रथा है।

ऊँच–नीच का विरोध करते हुए गुरु नानकदेव अपनी मुखवाणी 'जपुही साहिब' में कहते हैं कि 'नानक उत्तम नीच न कोई' जिसका भावार्थ है कि ईश्वर की निगाह में छोटा–बड़ा कोई नहीं फिर भी अगर कोई व्यक्ति अपने आपको उस प्रभु की निगाह में छोटा समझे तो ईश्वर उस व्यक्ति के हर समय साथ है। और यह तभी संभव है जब वह अपना अहंकार समाप्त करता है।

कबीर की भाँति नानक जी ने भी कभी शास्त्रीय ज्ञान को महत्त्व नहीं दिया। वे किसी शास्त्र को नहीं जानते थे, उनके अनुसार जीवन और इसके अनुभव ही सच्चे शास्त्र हैं। शास्त्र पुराने पड़ जाते हैं, लेकिन जीवन के अनुभव कभी पुराने नहीं पड़ते।

गुरु नानक जी के समय केवल हिन्दू–मुस्लिम वैमनस्य ही नहीं अपितु जातिवाद के नियम भी बहुत कड़े थे। शूद्रों को नीच समझा जाता था। उन्हें अधिकारों से वंचित रखा गया, वेद एवं शास्त्रों का अध्ययन उनके लिए त्याज्य बताया गया। अन्त्यजों की दशा तो और भी अधिक शोचनीय थी। उनका मन्दिरों में प्रवेश वर्जित था। उनकी छाया के स्पर्श मात्र से उच्च वर्ग के हिन्दुओं का शरीर अपवित्र समझा जाता था। सर्वत्र जातिगत अहंकार का प्राबल्य था–

जाणहु जोति न पूछहु जाती आगै जाति न हे।[10]

नानक जी ने स्पष्ट कहा कि– मनुष्य को जाति–पाँति के टंटे–बखेड़े में न पड़कर मनुष्य में स्थित परमात्मा की ज्योति को ही समझना चाहिए।

गुरू नानक जी का विचार था कि खोखले पाखंडों को त्यागकर ईश्वर का नामस्मरण करने से ही प्राणिमात्र तर सकता है अर्थात् उसका उद्धार संभव है केवल धोती पहनने, टीका लगाने और गले में जय की माला धारण करना व्यर्थ है–

गऊ बिराहमण कउ करु, लावहु गोबरि तरणु न जाई।
धोती टिका तै जपमाली धानु मलेछां खाई।।
अंतरि पूजा पड़हि कतेबा संजमु तुरका भाई।
छोडीले पाखंडा। नामि लइऐ जाहि तरंदा।।[11]

गुरू नानक जी की वाणी और भजन–कीर्तन का इतना प्रभाव था कि अनेक दुर्जन लोगों का ह्रदय परिवर्तन हुआ। माना जाता है कि एक बार नानक जी दिल्ली पहुँचे थे तो उस समय सिकन्दर लोदी का शासन था वह हिन्दू धर्म का सबसे बड़ा शत्रु था। अनेक हिंदू साधुओं को उसने जेल में बन्द कर रखा था और वहाँ उन्हें भयावह नारकीय यातनाएँ दी जा रही थी, नानक जी को भी उसने बन्दी बना लिया। वहाँ अन्याय और अत्याचार के विरुद्ध उन्होंने कविता की तलवार उठाई और अपने साथी मरदाना को ख्वाब बजाने के लिए कहा– और ईश्वर–भक्ति के पाठ से कैदियों एवं पहरेदारों को भक्ति के रंग में रंग दिया और अन्त में नानक जी के उपदेशों का बादशाह पर इतना प्रभाव पड़ा कि सिकंदर लोदी उनके चरणों में गिर पड़ा और अपनी भूल के लिए क्षमा माँगने लगा और उसने उसी समय सभी साधुओं एवं नानक जी को आदर के साथ जेल से मुक्त कर दिया, इसी प्रकार उन्होंने सज्जनमल जैसे ठग एवं हत्यारे को भी सद्मार्ग दिखाया एवं उसके जीवन की दिशा ही बदल दी।

निश्चित रूप से मध्यकालीन संत परम्परा में संत नानक देव का साहित्य सामाजिक चेतना की दृष्टि से आज भी प्रासंगिक है 15वीं शताब्दी में संत नानक भारतीय समाज व्यवस्था में व्याप्त छूआछूत, धार्मिक कट्टरता, नारी शोषण और समाज में बढ़ती लोभी प्रवृत्ति पर प्रहार करने वाले एक क्रांतिकारी समाज सुधारक, महान देश भक्त और अद्भुत युग–पुरुष के रूप में सामने आते हैं। मानवतावादी सामाजिक समरसता के कारण ही वे सिक्खों के प्रथम गुरू कहलाए। उनकी कथनी और करनी में कोई अन्तर नहीं था। उन्होंने अपने प्रत्येक उपदेश को पहले अपने आप पर लागू किया, उसके अनुसार अपने जीवन को ढाला और जब उससे उदिृष्ट फल की प्राप्ति होनी सिद्ध हो गई, तो उसको मनुष्यता के उपयोग के लिए प्रसारित किया। वे एक स्वतन्त्र चिंतक थे क्योंकि उन्होंने केवल वही कुछ ही नहीं अपनाया जो मानवता के विकास के लिए पुरातनता में श्रेष्ठ था, अपितु उन्होंने एक नवीन दर्शन का प्रचलन भी किया। जिसका आधार पुस्तक ज्ञान नहीं था, अपितु अनुभूति–जनित ज्ञान पर आधारित एक मानव–दर्शन था।

नानक जी इस रूप में वर्तमान में कितने प्रासंगिक है। क्योंकि आज इस प्रकार के महान गुणों से युक्त गुरू मिलना दुर्लभ है, जो समाज को सही मार्ग पर ले जा सके। वर्तमान में गुरू भी अपने पथ से भ्रष्ट होकर वासना, लोभ और मद में लिप्त हो चुके हैं और वे समाज को नैतिक पतन की ओर ही ले जा रहे हैं, ऐसे विषम और त्रासद् समय में गुरू जी के वचन संजीवनी बूटी का कार्य सिद्ध हो सकते हैं। आवश्यकता है केवल उनके सिद्धान्तों, आदर्शों एवं मूल्यों के स्वरूप से परिचित होने की।

संदर्भ–

1. भक्तिकालीन कविताः भारतीय संस्कृति के विविध आयाम, हरीश अरोड़ा, भाग–2, पृष्ठ 130
2. नानक वाणी, डॉक्टर जयराम मिश्रा, पृष्ठ 18
3. वही, पृष्ठ 18
4. वही, पृष्ठ 5
5. वही, पृष्ठ 12
6. वही पृष्ठ 72
7. वही पृष्ठ 54
8. वही पृष्ठ 53
9. गुरू नानक रचनावली, डॉ. रत्नसिंह जग्गी, पृष्ठ 15
10. गुरू नानक देव, नरेन्द्र पाठक, पृष्ठ 24
11. नानक वाणी, डॉक्टर जयराम मिश्र, पृष्ठ 10

Volume : 6 | Issue :49 | October-December2019 ISSN: 2349-1876 (Print) | ISSN : 2454-1826 (Online)

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ: ਜੀਵਨ ਮੁੱਲ ਅਤੇ ਦਰਸ਼ਨ

* ਡਾਦੇਵਿੰਦਰ ਕੌਰ

* ਯੂ.ਕੇ.

ਜੀਵਨ ਮੁੱਲਾਂ ਦਾ ਅਰਥ ਉਨ੍ਹਾਂ ਵਿਚਾਰਾਂ ਦੇ ਅਮਲ ਤੋਂ ਹੈ ਜਿਸ ਵਿਚ ਕੋਈ ਇਨਸਾਨ ਵਿਸ਼ਵਾਸ ਰੱਖਦਾ ਹੈ। ਮੁੱਲਾਂ ਦਾ ਇਸ ਵਿਸ਼ਵਾਸ ਦਾ ਸੰਬੰਧ ਉਸ ਵਿਚਾਰਧਾਰਾ ਨਾਲ ਹੁੰਦਾ ਹੈ ਜੋ ਇਨ੍ਹਾਂ ਜੀਵਨ-ਮੁੱਲਾਂ ਦੇ ਜੀਣ ਦਾ ਆਧਾਰ ਹੁੰਦੀ ਹੈ। ਵਿਚਾਰਧਾਰਾ ਦਾ ਸੰਬੰਧ ਜੀਵਨ ਦੇ ਆਰਥਿਕ, ਰਾਜਨੀਤਿਕ, ਸਮਾਜਿਕ ਨੈਤਿਕ ਅਤੇ ਅਧਿਆਤਮਕ ਕਿਸੇ ਵੀ ਖੇਤਰ ਨਾਲ ਹੋ ਸਕਦਾ ਹੈ। ਸਾਧਾਰਣ ਤੌਰ ਤੇ ਵਿਚਾਰਧਾਰਾ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ ਜੀਵਨ-ਮੁੱਲਾਂ ਦਾ ਸਮੂਹਿਕ ਸਿਸਟਮ ਹੁੰਦੀ ਹੈ।

ਜੇਕਰ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੀ ਬਾਣੀ ਦਾ ਅਧਿਐਨ ਕਰੀਏ ਤਾਂ ਪਤਾ ਲੱਗਦਾ ਹੈ ਕਿ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੀ ਵਿਚਾਰਧਾਰਾ ਜਾਂ ਜੀਵਨ ਦਰਸ਼ਨ ਭਾਵੇਂ ਰੱਬ ਦੇ ਸੰਕਲਪ ਨਾਲ ਸੰਬੰਧਿਤ ਹੈ ਪਰੰਤੂ ਇਸ ਵਿਚਾਰਧਾਰਾ ਦੇ ਕੇਂਦਰ ਵਿਚ ਮਨੁੱਖ ਹੈ। ਉਸਦਾ ਕਾਰਨ, ਰੱਬ ਦੀ ਪ੍ਰਾਪਤੀ ਜਾਂ ਅਧਿਆਤਮਕ ਜੀਵਨ ਦੀ ਪ੍ਰਾਪਤੀ ਮਨੁੱਖ ਨੇ ਕਰਨੀ ਹੈ। ਇਸ ਲਈ ਮਨੁੱਖ ਦੇ ਜੀਵਨ-ਮੁੱਲਾਂ ਦੀ ਸਮੁੱਚੀ ਯਾਤਰਾ ਦੀ ਮੰਜ਼ਿਲ ਭਾਵੇਂ ਅਧਿਆਤਮਕ ਹੈ ਲੇਕਿਨ ਉਸ ਦੇ ਜੀਵਨ-ਸਫ਼ਰ ਦੀ ਸਮੁੱਚੀ ਪ੍ਰਕਿਰਿਆ ਮਨੁੱਖ ਨੇ ਤੈਅ ਕਰਨੀ ਹੈ।

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੀ ਬਾਣੀ ਦੇ ਜੀਵਨ-ਮੁੱਲਾਂ ਵਿਚ ਰੱਬ ਦਾ ਸੰਕਲਪ ਬੜਾ ਸਪੱਸ਼ਟ ਹੈ। ਉਹ ਇਕ ਰੱਬ ਵਿਚ ਵਿਸ਼ਵਾਸ ਰੱਖਦੇ ਹਨ ਅਤੇ ਉਸ ਦੀ ਪ੍ਰਾਪਤੀ ਲਈ ਕਿਸੇ ਕਰਮ-ਕਾਂਡ ਜਾਂ ਪੰਡਿਤ ਦੀ ਲੋੜ ਮਹਿਸੂਸ ਨਹੀਂ ਕਰਦੇ ਅਤੇ ਇਸ ਧਰਤੀ ਤੇ ਵੱਸਣ ਵਾਲਾ ਕੋਈ ਵੀ ਮਨੁੱਖ ਬਿਨਾਂ ਕਿਸੇ ਧਰਮ, ਜਾਤ ਜਾਂ ਲਿੰਗ ਦੇ ਵਿਤਕਰੇ ਤੋਂ ਉਸ ਸੱਚੇ ਪਰਮਾਤਮਾ ਦੀ ਪ੍ਰਾਪਤੀ ਲਈ ਯਤਨ ਕਰ ਸਕਦਾ ਹੈ। ਰੱਬ ਦੇ ਸਰੂਪ ਨੂੰ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਨੇ ਜਪੁਜੀ ਬਾਣੀ ਦੇ ਮੂਲ ਮੰਤਰ ਵਿਚ ਸਪੱਸ਼ਟ ਕੀਤਾ ਹੈ। ਵੈਸੇ ਤਾਂ ਹਿੰਦੂ ਧਰਮ ਵਿਚ ਓਮ ਦਾ ਸੰਕਲਪ ਬੜਾ ਪੁਰਾਣਾ ਹੈ। ਲੇਕਿਨ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਨੇ ਉਸ ਨਾਲ ਏਕਾ ਲਾ ਕੇ ਇਹ ਸਿੱਧ ਕੀਤਾ ਹੈ ਕਿ ਰੱਬ ਇੱਕ ਹੈ ਅਤੇ ਉਹ ਨਿਰਗੁਣ ਵੀ ਹੈ ਅਤੇ ਸਰਗੁਣ ਵੀ। ਏਥੇ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦਾ ਜੀਵਨ ਦਰਸ਼ਨ ਹਿੰਦੂ ਧਰਮ ਵਰਗਾ ਹੋ ਕੇ ਵੀ ਉਸ ਤੋਂ ਵੱਖਰਾ ਹੋ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਹਿੰਦੂ ਧਰਮ ਵਿਚ ਏਕਾ ਬ੍ਰਹਮ ਦੁਤੀਆ ਨਾਸਤੀ ਦਾ ਵਿਚਾਰ ਕਾਰਜਸ਼ੀਲ ਹੈ, ਅਰਥਾਤ ਇਕ ਬ੍ਰਹਮ ਹੈ, ਦੂਸਰੀ ਦੁਨੀ ਹੈ। ਏਥੇ ਬ੍ਰਹਮ ਅਤੇ ਦੁਨੀਆ ਵਿਚ ਦਵੈਤ ਵਾਲਾ ਸਿਧਾਂਤ ਕਾਰਜਸ਼ੀਲ ਹੈ। ਹਿੰਦੂ ਧਰਮ ਵਿਚ ਅਵਤਾਰਵਾਦ ਦਾ ਸਿਧਾਂਤ ਬੜਾ ਮਹੱਤਵਪੂਰਣ ਹੈ। ਏਥੋਂ ਤੱਕ ਕੇ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਨੂੰ ਵੀ ਤਿੰਨ ਹਿੱਸਿਆਂ, ਬ੍ਰਹਮਾਂ, ਵਿਸ਼ਨੂੰ ਮਹੇਸ਼ ਵਿਚ ਵਿਭਾਜਤ ਕੀਤਾ ਗਿਆ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਨੇ ਰੱਬ ਨੂੰ ਬ੍ਰਹਮਾ ਵਿਸ਼ਨੂੰ ਅਤੇ ਮਹੇਸ਼ ਦਾ ਸਿਰਜਕ ਮੰਨਿਆ ਹੈ:-

"ਕਰਤਾ ਬਕਤਾ ਆਪ ਅਗੋਚਰੁ ਆਪੇ ਅਲਖੁ ਲਖਾਇਦਾ
ਜਾ ਤਿਸੁ ਭਾਣਾ ਤਾ ਜਗਤ ਉਪਾਇਆ
ਬਾਝੁ ਕਲਾ ਆਡਾਣੁ ਰਹਾਇਆ
ਬ੍ਰਹਮਾ ਬਿਸਨੁ ਮਹੇਸੁ ਉਪਾਏ ਮਾਇਆ ਮੋਹੁ
ਵਧਾਇਦਾ।"(1036)

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਨੇ ਨਿਰਗੁਣ ਆਪ ਸਰਗੁਣ ਵੀ ਉਹੀ ਦਾ ਸਿਧਾਂਤ ਪੇਸ਼ ਕਰਕੇ ਰੱਬ ਅਤੇ ਸੰਸਾਰ ਵਿਚ ਅਦਵੈਤੀ ਰਿਸ਼ਤਾ ਕਾਇਮ ਕਰ ਦਿੱਤਾ ਹੈ ਇਸ ਤੋਂ ਇਲਾਵਾ ਰੱਬ ਦਾ ਨਾਮ ਸੱਚਾ ਅਰਥਾਤ ਹਮੇਸ਼ਾ ਰਹਿਣ ਵਾਲਾ ਹੈ, ਉਹ ਦੁਨੀਆ ਦਾ ਕਰਤਾ ਹੈ, ਉਸਦਾ ਰੂਪ ਅਕਾਲ ਹੈ ਅਰਥਾਤ ਉਹ ਤਿੰਨੋਂ ਕਾਲਾਂ ਵਿਚ ਰਹਿਣ ਵਾਲਾ ਹੈ, ਅਮਰ ਹੈ, ਅਮਿੱਟ ਹੈ, ਉਸਦਾ ਜਨਮ ਕਿਸੇ ਦੂਜੇ ਸਰੀਰ ਵਿਚੋਂ ਨਹੀਂ ਹੁੰਦਾ, ਉਹ ਸੁੱਤੇ ਸਿੱਧ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ ਹੈ। ਉਹ ਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ਹੈ, ਸ੍ਰਿਸ਼ਟੀ ਦੇ ਆਦਿ ਵਿਚ ਵੀ ਸੱਚਾ ਸੀ, ਜੁਗਾਂ ਜੁਗਾਂ ਤੋਂ ਸੱਚਾ ਹੈ, ਤੇ ਹਮੇਸ਼ਾ ਸੱਚਾ ਅਰਥਾਤ ਹਮੇਸ਼ਾ ਰਹਿਣ ਵਾਲਾ ਹੈ। ਏਥੇ ਰੱਬ ਦਾ ਸਰੂਪ ਜੋ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੀ ਬਾਣੀ ਵਿਚੋਂ ਮਿਲਦਾ ਹੈ, ਉਸਦਾ ਸੰਬੰਧ ਸਮੁੱਚੀ ਕਾਇਨਾਤ ਨਾਲ ਹੈ। ਉਹ ਕਾਇਨਾਤ ਦਾ ਸਿਰਜਕ ਹੈ, ਬਾਕੀ ਦੇਵੀ ਦੇਵਤੇ ਸਭ ਉਸਦੇ ਬਣਾਏ ਹੋਏ ਹਨ। ਉਸਦਾ ਧਰਮ ਸਰਬ ਧਰਮ ਅਰਥਾਤ ਉਹ ਸਾਂਝੀਵਾਲਤਾ ਦਾ ਨੁਮਾਇੰਦਾ ਹੈ। ਸਾਰੇ ਜੀਵ ਉਸਦੀ ਸੰਤਾਨ ਹਨ।

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇ ਦਰਸ਼ਨ ਵਿਚਲੇ ਰੱਬ ਦੇ ਸੰਕਲਪ ਵਿਚੋਂ ਹੀ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੇ ਜੀਵਨ ਮੁੱਲਾਂ ਦੀ ਪਛਾਣ ਕੀਤੀ ਜਾ ਸਕਦੀ ਹੈ। ਇਕ ਰੱਬ ਦੇ ਸੰਕਲਪ ਵਿਚੋਂ ਹੀ 'ਏਕ ਨੂਰ ਤੇ ਸਭੁ ਜਗੁ ਉਪਜਿਆ' ਵਾਲਾ ਵਿਚਾਰ ਉਜਾਗਰ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਇਹ ਐਸਾ ਵਿਚਾਰ ਹੈ ਜੋ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਕਿਸੇ ਇਕ ਕੌਮ ਨਾਲ ਜਾਂ ਇਕ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ ਮਜ਼ਹਬ ਨਾਲ ਨਹੀਂ ਸਗੋਂ ਇਸ ਧਰਤੀ ਦੇ ਸਾਰੇ ਜੀਵਾਂ ਨਾਲ ਜੋੜ ਕੇ ਵੇਖਦਾ ਹੈ। ਐਸੀ ਸੋਚ ਦੁਨੀਆ ਉਪਰ ਮਨੁੱਖਾਂ ਨਾਲ ਵਿਚਤਕਰੇ ਵਾਲਾ ਭਾਵ ਨਹੀਂ ਰੱਖਦੀ ਸਗੋਂ ਸਾਂਝੀਵਾਲਤਾ ਦਾ ਸੰਦੇਸ਼ ਦੇਂਦੀ ਹੈ। ਸਾਂਝੀਵਾਲਤਾ ਦੇ ਸੰਦੇਸ਼ ਵਿਚ ਪ੍ਰੇਮ ਦੀ ਭਾਵਨਾ ਜੀਵਨ ਦਾ ਆਧਾਰ ਬਣਦੀ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੀ ਬਾਣੀ ਜਿਥੇ ਰੱਬ ਨੂੰ ਸੱਚ ਨਾਲ ਜੋੜਦੀ ਹੈ ਓਥੇ ਸੱਚ ਦਾ ਸੰਬੰਧ ਮਨੁੱਖੀ ਆਚਾਰ ਨਾਲ ਵੀ ਜਾ ਜੁੜਦਾ ਹੈ। ਗੁਰਬਾਣੀ ਦਾ ਸਿਧਾਂਤ, 'ਸਚਹੁ ਓਰੈ ਸਭੁ ਕੋ ਉਪਰਿ ਸਚੁ ਆਚਾਰੁ' ਅਰਥਾਤ ਰੱਬ ਦੇ ਸੱਚੇ ਨਾਮ ਨਾਲ ਮਨੁੱਖ ਦਾ ਆਚਾਰ, ਵਿਹਾਰ ਵੀ ਸੱਚਾ ਹੋਣਾ ਚਾਹੀਦਾ ਹੈ। ਸੋ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦਾ ਜੀਵਨ ਦਰਸ਼ਨ ਰੂਹਾਨੀ, ਸਮਾਜਿਕ ਅਤੇ ਰਾਜਨੀਤਿਕ ਵਿਹਾਰ ਐਸਾ ਪਲੇਟਫ਼ਾਰਮ ਸਿਰਜਦਾ ਹੈ ਜਿਥੇ ਮਨੁੱਖ ਦਾ ਮਨੁੱਖ ਨਾਲ ਪਿਆਰ ਦਾ ਰਿਸ਼ਤਾ, ਰੱਬ ਨਾਲ ਪ੍ਰੇਮ ਦਾ ਸੰਬੰਧ, ਅਤੇ ਸੱਚੀਆਂ ਨੈਤਿਕ ਕੀਮਤਾਂ ਦਾ ਧਾਰਨ ਕਰਨਾ ਹੀ ਜ਼ਿੰਦਗੀ ਦਾ ਲਕਸ਼ ਹੋ ਨਿਬੜਦਾ ਹੈ।

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੀ ਸ਼ਖ਼ਸੀਅਤ ਬਾਰੇ ਪ੍ਰਮੁੱਖ ਗੱਲ ਇਹ ਹੈ ਕਿ ਉਨ੍ਹਾਂ ਜੀਵਨ ਵਿਚ ਕਦੇ ਵੀ ਤਰਕ ਦਾ ਪੱਲਾ ਨਹੀਂ ਛੱਡਿਆ। ਗ਼ਲਤ ਕੀਮਤਾਂ ਦੇ ਖ਼ਿਲਾਫ਼ ਉਨ੍ਹਾਂ ਆਪਣਾ ਵਿਦਰੋਹ ਹਮੇਸ਼ਾ ਦਰਜ ਕਰਵਾਇਆ। ਇਸ ਲਈ ਹਿੰਦੂ ਧਰਮ ਵਾਲੇ ਪਰਵਾਰ ਵਿਚ ਜਨਮ ਲੈਣ ਦੇ ਬਾਵਜੂਦ ਵੀ ਉਨ੍ਹਾਂ ਜਨੇਊ ਪਾਉਣ ਤੋਂ ਇਨਕਾਰ ਕਰ ਦਿੱਤਾ। ਇਸ ਦਾ ਮਤਲਬ ਇਹ ਨਹੀਂ ਉਹ ਜਨੇਊ ਦੇ ਖ਼ਿਲਾਫ਼ ਸਨ ਸਗੋਂ ਉਨ੍ਹਾਂ ਜਨੇਊ ਦਾ ਸੱਚਾ ਅਤੇ ਆਂਤਰਿਕ ਅਰਥ

ਆਪਣੀ ਬਾਣੀ ਵਿਚ ਸਮਝਾਇਆ। ਧਾਗੇ ਦੇ ਬਣੇ ਹੋਏ ਜਨੇਊ ਪਾਉਣ ਦੀ ਥਾਂ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦਇਆ, ਸੰਤੋਖ, ਜਤਿ ਸਤਿ ਦੀਆਂ ਭਾਵਨਾਵਾਂ ਧਾਰਨ ਕਰਨ ਵਾਲੇ ਅੰਤਰੀਵ ਜਨੇਊ ਧਾਰਨ ਕਰਨ ਦਾ ਸੰਦੇਸ਼ ਦਿੱਤਾ। ਇਹ ਇਕ ਐਸਾ ਜੀਵਨ ਮੁੱਲ ਹੈ ਜੋ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਭੇਖਧਾਰੀ ਨਹੀਂ ਸਗੋਂ ਸੱਚੇ ਜੀਵਨ ਮੁੱਲਾਂ ਨੂੰ ਜੀਉਣ ਵਾਲਾ ਇਨਸਾਨ ਬਣਾਉਂਦਾ ਹੈ। ਇਸ ਸੰਦਰਭ ਵਿਚ ਜਨੇਊ ਬਾਰੇ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੇ ਵਿਚਾਰਾਂ ਨੂੰ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੀ ਬਾਣੀ ਵਿਚੋਂ ਹੀ ਮਿਸਾਲ ਦੇ ਤੌਰ ਤੇ ਲਿਆ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ:-

"ਦਇਆ ਕਪਾਹ ਸੰਤੋਖੁ ਸੂਤੁ ਜਤੁ ਗੰਢੀ ਸਤੁ ਵਟੁ॥
ਏਹੁ ਜਨੇਊ ਜੀਅ ਕਾ ਹਈ ਤ ਪਾਡੇ ਘਤੁ॥
ਨਾ ਏਹੁ ਤੁਟੈ ਨ ਮਲੁ ਲਗੈ ਨਾ ਏਹੁ ਜਲੈ ਨ ਜਾਇ॥
ਧੰਨੁ ਸੁ ਮਾਣਸ ਨਾਨਕਾ ਜੋ ਗਲਿ ਚਲੇ ਪਾਇ॥(471)

ਇਸੇ ਤਰ੍ਹਾਂ ਉਨ੍ਹਾਂ ਕਾਜ਼ੀ ਨਾਲ ਮਸੀਤ ਵਿਚ ਜਾ ਕੇ ਨਮਾਜ਼ ਪੜ੍ਹਣ ਤੋਂ, ਮੰਦਰ ਵਿਚ ਆਰਤੀ ਕਰਨ ਤੋਂ, ਤੇ ਕਰਤਾਰਪੁਰ ਵਿਚ ਪਿੱਤਰਾਂ ਨੂੰ ਪਾਣੀ ਦੇਣ ਤੋਂ ਇਨਕਾਰ ਕਰ ਦਿੱਤਾ। ਇਸ ਦਾ ਮਤਲਬ ਇਹ ਨਹੀਂ ਕਿ ਉਹ ਇਨ੍ਹਾਂ ਧਰਮਾਂ ਦੇ ਖ਼ਿਲਾਫ਼ ਸਨ ਸਗੋਂ ਅਸਲ ਗੱਲ ਇਹ ਕਿ ਉਹ ਜ਼ਿੰਦਗੀ ਦੇ ਅਮਲੀ ਮੁੱਲਾਂ ਵਿਚ ਵਿਸ਼ਵਾਸ ਰੱਖਦੇ ਸਨ ਅਤੇ ਉਨ੍ਹਾਂ ਹਰ ਪ੍ਰਕਾਰ ਦੇ ਕਰਮ ਕਾਂਡ ਪ੍ਰਤੀ ਆਪਣਾ ਵਿਦਰੋਹ ਦਰਜ ਕਰਾ ਕੇ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਸੱਚੇ ਕਰਮ ਕਰਨ ਵਾਲੇ ਜੀਵਨ ਨਾਲ ਜੋੜਿਆ। ਕਰਮ ਕਾਂਡੀ ਆਰਤੀ ਦੀ ਥਾਂ ਉਨ੍ਹਾਂ 'ਗਗਨ ਮੈ ਥਾਲੁ ਰਵਿ ਚੰਦੁ ਦੀਪਕ ਬਨੇ ਤਾਰਿਕਾ ਮੰਡਲ ਜਨਕ ਮੋਤੀ' ਵਾਲੀ ਵਿਸ਼ਾਲ ਆਰਤੀ ਦੀ ਰਚਨਾ ਕੀਤੀ, ਜਿਸਨੂੰ ਬਾਅਦ ਵਿਚ ਰਬਿੰਦਰ ਨਾਥ ਟੈਗੋਰ ਨੇ ਅੰਤਰ-ਰਾਸ਼ਟਰੀ-ਗਾਣ ਦਾ ਦਰਜਾ ਦਿੱਤਾ। ਕਾਜ਼ੀ ਨਾਲ ਨਮਾਜ਼ ਨਾ ਪੜ੍ਹਣ ਦਾ ਇਹ ਮਤਲਬ ਨਹੀਂ ਕਿ ਉਨ੍ਹਾਂ ਨਮਾਜ਼ ਦਾ ਵਿਦਰੋਹ ਕੀਤਾ ਸਗੋਂ ਐਸੀ ਨਮਾਜ਼ ਦਾ ਵਿਰੋਧ ਕੀਤਾ ਜਿਸ ਵਿਚ ਵਖਾਵਾ ਸੀ ਪਰ ਮਨ ਦੀ ਇਕਾਗਰਤਾ ਸ਼ਾਮਿਲ ਨਹੀਂ ਸੀ।

ਇਨ੍ਹਾਂ ਸਾਰੀਆਂ ਗੱਲਾਂ ਤੋਂ ਇਹ ਪਤਾ ਲੱਗਦਾ ਹੈ ਕਿ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਦਾ ਇਕ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਵਾਲਾ ਸਿਧਾਂਤ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੇ ਜੀਵਨ ਮੁੱਲਾਂ ਦਾ ਆਧਾਰ ਬਣਦਾ ਹੈ। ਇਕ ਰੱਬ ਨੂੰ ਮੰਨ ਕੇ ਇਨਸਾਨ ਸਾਰੇ ਕਰਮ ਕਾਂਡਾਂ ਤੋਂ ਮੁਕਤੀ ਹਾਸਿਲ ਕਰ ਲੈਂਦਾ ਹੈ, ਕਿਉਂਕਿ ਰੱਬ ਨਾਲ ਪ੍ਰੇਮ ਕਰਮ ਕਾਂਡ ਰਾਹੀਂ ਨਹੀਂ, ਉਸ ਦੇ ਨਾਮ ਨੂੰ ਆਪਣੇ ਮਨ ਵਿਚ ਵਸਾਉਣ ਨਾਲ ਹੁੰਦਾ ਹੈ:-

"ਮਨਹੁ ਨ ਨਾਮੁ ਵਿਸਾਰਿ ਅਹਿਨਿਸਿ ਧਿਆਈਐ
ਜਿਉ ਰਾਖਹਿ ਕਿਰਪਾ ਧਾਰਿ ਤਿਵੈ ਸੁਖੁ ਪਾਈਐ॥(752)

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇ ਜੀਵਨ ਮੁੱਲਾਂ ਵਿਚ ਸਾਰੇ ਧਰਮਾਂ ਦੇ ਲੋਕ ਬਰਾਬਰ ਦਾ ਦਰਜਾ ਰੱਖਦੇ ਹਨ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਅਨੁਸਾਰ ਕੋਈ ਧਰਮ ਉੱਚਾ ਜਾਂ ਨੀਵਾਂ ਨਹੀਂ। ਇਸ ਲਈ ਉਨ੍ਹਾਂ ਇਹ ਦੱਸਿਆ ਕਿ ਇਕ ਮੁਸਲਮਾਨ ਸੱਚਾ ਮੁਸਲਮਾਨ, ਇਕ ਕਾਜ਼ੀ ਸੱਚਾ ਕਾਜ਼ੀ, ਇਕ ਪੰਡਿਤ ਸੱਚਾ ਪੰਡਿਤ, ਇਕ ਜੋਗੀ ਸੱਚਾ ਜੋਗੀ ਕਿਵੇਂ ਹੋ ਸਕਦਾ ਹੈ। ਇਸ ਵਿਚਾਰ ਦੀ ਪੁਸ਼ਟੀ ਲਈ ਅਸੀਂ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੀ ਬਾਣੀ ਵਿਚੋਂ ਮਿਸਾਲਾਂ ਪੇਸ਼ ਕਰ ਸਕਦੇ ਹਾਂ:-

"ਮੁਸਲਮਾਣੁ ਕਹਾਵਣੁ ਮੁਸਕਲੁ ਜਾ ਹੋਇ ਤਾ ਮੁਸਲਮਾਣੁ ਕਹਾਵੈ॥
ਅਵਲਿ ਅਉਲਿ ਦੀਨੁ ਕਰਿ ਮਿਠਾ ਮਸਕਲ ਮਾਨਾ ਮਾਲੁ ਮੁਸਾਵੈ॥
ਹੋਇ ਮੁਸਲਿਮੁ ਦੀਨ ਮੁਹਾਣੈ ਮਰਣ ਜੀਵਣ ਕਾ ਭਰਮੁ ਚੁਕਾਵੈ॥
ਰਬ ਕੀ ਰਜਾਇ ਮੰਨੇ ਸਿਰ ਉਪਰਿ ਕਰਤਾ ਮੰਨੇ ਆਪੁ ਗਵਾਵੈ॥
(141)

"ਤਾ ਤੂ ਮੁਲਾ ਤਾ ਤੂ ਕਾਜੀ ਜਾਣਹਿ ਨਾਮੁ ਖੁਦਾਈ ॥
ਜੇ ਬਹੁਤੇਰਾ ਪੜਿਆ ਹੋਵਹਿ ਕੋ ਰਹੈ ਨ ਭਰੀਐ ਪਾਈ॥
ਸੋਈ ਕਾਜੀ ਜਿਨਿ ਆਪੁ ਤਜਿਆ ਇਕੁ ਨਾਮੁ ਕੀਆ ਆਧਾਰੋ॥

ਹੈ ਭੀ ਹੋਸੀ ਜਾਇ ਨਾ ਜਾਸੀ ਸਚਾ ਸਿਰਜਣਹਾਰ॥
ਪੰਜ ਵਖਤ ਨਿਵਾਜ ਗੁਜਾਰਹਿ ਪੜਹਿ ਕਤੇਬ ਕੁਰਾਣਾ॥
ਨਾਨਕ ਆਖੈਗੋਰ ਸਦੇਈ ਰਹਿਓ ਪੀਣਾ ਖਾਣਾ॥(24)

"ਪੜਿ ਪੜਿ ਪੰਡਿਤੁ ਬਾਦਿ ਵਖਾਣੈ॥
ਭੀਤਰਿ ਹੋਦੀ ਵਸਤੁ ਨ ਜਾਣੈ
ਹਉ ਨ ਮੂਆ ਮੇਰੀ ਮੁਈ ਬਲਾਇ॥
ਓਹੁ ਨ ਮੂਆ ਜੋ ਰਹਿਆ ਸਮਾਇ॥
ਖਹੁ ਨਾਨਕ ਗੁਰਿ ਬ੍ਰਹਮ ਦਿਖਾਇਆ॥
ਮਰਤਾ ਜਾਤਾ ਨਦਰਿ ਨ ਆਇਆ॥(152)

"ਜੋਗ ਨ ਖਿੰਥਾ ਜੋਗੁ ਨ ਡੰਡੈ ਜੋਗੁ ਨ ਭਸਮ ਚੜਾਈਐ॥
ਜੋਗੁ ਨ ਮੁੰਡੀ ਮੂੰਡਿ ਮੁਡਾਇਐ ਜੋਗੁ ਨ ਸਿੰਙੀ ਵਾਈਐ॥
ਅੰਜਨ ਮਾਹਿ ਨਿਰੰਜਨਿ ਰਹੀਐ ਜੋਗ ਜੁਗਤਿ ਇਵ ਪਾਈਐ॥
(730)

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਦੇ ਜੀਵਨ ਮੁੱਲਾਂ ਵਿਚ ਨਾਮ ਜਪਣ ਦੇ ਨਾਲ ਨਾਲ ਕਿਰਤ ਕਰਨ ਅਤੇ ਵੰਡ ਛੱਕਣ ਵਾਲਾ ਸਿਧਾਂਤ ਵੀ ਕਾਰਜਸ਼ੀਲ ਹੈ। ਜਿਥੇ ਨਾਮ ਜਪਣ ਨਾਲ ਮਨੁੱਖ ਦਾ ਮਨ ਇਕਾਗਰ ਹੁੰਦਾ ਹੈ, ਓਥੇ ਕਿਰਤ ਕਰਨ ਨਾਲ ਮਨੁੱਖ ਅੰਦਰ ਆਤਮ-ਵਿਸ਼ਵਾਸ ਪੈਦਾ ਹੁੰਦਾ ਹੈ ਅਤੇ ਉਹ ਗ਼ੁਲਾਮੀ ਅਤੇ ਅਨਿਆਇ ਤੋਂ ਮੁਕਤੀ ਹਾਸਿਲ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਵੰਡ ਕੇ ਛਕਣ ਨਾਲ ਮਨੁੱਖ ਅੰਦਰ ਭਰਾਤਰੀ ਭਾਵ ਪੈਦਾ ਹੁੰਦਾ ਹੈ ਅਤੇ ਮਨੁੱਖਤਾ ਪਤੀ ਉਸ ਦੇ ਮਨ ਅੰਦਰ ਪ੍ਰੇਮ ਅਤੇ ਸੇਵਾ ਭਾਵਨਾ ਜਾਗ੍ਰਿਤ ਹੁੰਦੀ ਹੈ। ਏਥੇ ਸਪੱਸ਼ਟ ਹੈ ਕਿ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇ ਜੀਵਨ ਮੁੱਲਾਂ ਵਿਚ ਨਿਸਾਨ ਦੀ ਇਨਸਾਨ ਨਾਲ ਕੋਈ ਦਵੈਤ ਨਹੀਂ। ਮਨੁੱਖ ਦੀ ਪਛਾਣ ਉਹਦੇ ਅਮਲਾਂ ਵਿਚੋਂ ਕੀਤੀ ਜਾ ਸਕਦੀ ਹੈ। ਇਸੇ ਲਈ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਸ਼ੁਭ ਅਮਲਾਂ ਬਾਝੋਂ ਕਿਸੇ ਵੀ ਹਿੰਦੂ ਜਾਂ ਮੁਸਲਮਾਨ ਨੂੰ ਤਰਜੀਹ ਨਹੀਂ ਦੇਂਦੇ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੀ ਨਜ਼ਰ ਵਿਚ ਨਾ ਕੋਈ ਮਨੁੱਖ ਉੱਚਾ ਹੈ ਅਤੇ ਨਾ ਹੀ ਨੀਵਾਂ। ਸ਼ੁਭ ਅਮਲਾਂ ਬਾਝੋਂ ਦੋਵੇਂ ਰੋਂਦੇ ਹਨ।

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇ ਜੀਵਨ ਦਰਸ਼ਨ ਦੀ ਇਕ ਗੱਲ ਬੜੀ ਮਹੱਤਵਪੂਰਨ ਹੈ ਕਿ ਉਹ ਰੂਹਾਨੀਅਤ ਨੂੰ ਹਾਸਿਲ ਕਰਨ ਲਈ ਸੰਸਾਰ ਦਾ ਤਿਆਗ ਕਰਨ ਤੇ ਬਲ ਨਹੀਂ ਦੇਂਦੇ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਅਨੁਸਾਰ ਸੰਸਾਰ ਵਿਚ ਰਹਿੰਦਿਆਂ ਹੀ ਮੁਕਤੀ ਹਾਸਿਲ ਕੀਤੀ ਜਾ ਸਕਦੀ ਹੈ। ਜੋਗ ਮੱਤ ਦੇ ਸੰਸਾਰ ਤਿਆਗਣ ਵਾਲੇ ਵਿਚਾਰ ਨਾਲ ਸੰਵਾਦ ਰਚਾਉਂਦੇ ਹੋਏ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਲਿਖਦੇ ਹਨ:-

"ਅੰਜਨੁ ਮਾਹਿ ਨਿਰੰਜਨੁ ਰਹੀਐ॥
ਜੋਗ ਜੁਗਤਿ ਇਵ ਪਾਈਐ॥ (730)

ਇਸੇ ਤਰ੍ਹਾਂ ਬ੍ਰਾਹਮਣ ਦੀ ਪਰਿਭਾਸ਼ਾ ਦੇਂਦੇ ਹੋਏ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਲਿਖਦੇ ਹਨ:-

"ਸੋ ਬ੍ਰਾਹਮਣੁ ਜੋ ਬਿੰਦਹਿ ਬ੍ਰਹਮੁ॥
ਜਪੁ ਤਪੁ ਸੰਜਮੁ ਕਮਾਵੈ ਕਰਮੁ॥
ਸੀਲ ਸੰਤੋਖ ਕਾ ਰਖੈ ਧਰਮੁ॥
ਬੰਧਨ ਤੋੜੈ ਹੋਵੈ ਮੁਕਤੁ॥
ਸੋਈ ਬ੍ਰਾਹਮਣ ਪੂਜਣ ਜੁਗਤੁ॥(1411)

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਦੀ ਬਾਣੀ ਵਿਚ ਮਨੁੱਖਤਾ ਨਾਲ ਪਿਆਰ ਵਾਲਾ ਸਿਧਾਂਤ ਕਾਰਜਸ਼ੀਲ ਹੈ। ਇਸੇ ਲਈ ਉਹ ਜਿਥੇ ਵੀ ਮਨੁੱਖ ਨਾਲ ਜ਼ੁਲਮ ਹੁੰਦਾ ਦੇਖਦੇ ਹਨ, ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੀ ਭਾਸ਼ਾ ਵਿਚ ਆਲੋਚਨਾ ਦਾ ਤੱਤ ਕਾਰਜਸ਼ੀਲ ਹੋ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਜਦੋਂ ਉਹ ਰਾਜੇ ਅਤੇ ਉਹਦੇ ਵਜ਼ੀਰਾਂ ਦੇ ਕਿਰਦਾਰ ਵਿਚ ਆ ਚੁੱਕੀ ਗਿਰਾਵਟ ਨੂੰ ਦੇਖਦੇ ਹਨ ਤਾਂ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੀ ਕਲਮ ਵਿਚ ਆਲੋਚਨਾ ਦਾ ਰੰਗ ਆ ਜਾਂਦਾ ਹੈ ਤੇ ਭਾਸ਼ਾ ਵਿਚ ਵਿਅੰਗ ਮਈ ਸ਼ਕਤੀ ਆ ਜਾਂਦੀ ਹੈ:-

"ਰਾਜੇ ਸ਼ੀਂਹ ਮੁਕਦਮ ਕੁਤੇ
ਜਾਇ ਜਗਾਇਨਿ ਬੈਠੇ ਸੁਤੇ
ਚਾਕਰ ਨਹਦਾ ਪਾਇਨ ਘਾਉ
ਰਤੁ ਪਿਤੁ ਕੁਤਿਹੋ ਚਟਿ ਜਾਹੁ॥(1288)

ਲੇਕਿਨ ਇਸ ਆਲੋਚਨਾ ਦਾ ਆਧਾਰ ਨਫ਼ਰਤ ਨਹੀਂ ਸਗੋਂ ਮਨੁੱਖਤਾ ਪ੍ਰਤੀ ਪਿਆਰ ਦੀ ਭਾਵਨਾ ਹੈ। ਇਸ ਲਈ ਜਦੋਂ ਉਹ ਮਨੁੱਖ ਨਾਲ ਹੋ ਰਹੀ ਜ਼ਿਆਦਤੀ ਦੇਖਦੇ ਹਨ ਤਾਂ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੀ ਕਲਮ ਵਿਚ ਤਿੱਖਾਪਣ ਆ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਉਹ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਮਨੁੱਖ ਨਾਲ

ਪਿਆਰ ਦੀ ਭਾਸ਼ਾ ਵਿਚ ਬੋਲਣ ਵਿਚ ਵਿਸ਼ਵਾਸ ਰੱਖਦੇ ਹਨ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਅਨੁਸਾਰ ਫਿੱਕਾ ਬੋਲਣ ਨਾਲ ਮਨੁੱਖ ਦੀ ਆਤਮਾ ਵਿਚ ਵੀ ਫਿੱਕਾਪਣ ਆ ਜਾਂਦਾ ਹੈ:-

"ਨਾਨਕ ਫਿਕੈ ਬੋਲਿਐ ਤਨੁ ਮਨੁ ਫਿਕਾ ਹੋਇ
ਫਿਕੋ ਫਿਕਾ ਸਦੀਐ ਫਿਕੇ ਫਿਕੀ ਸੋਇ
ਫਿਕਾ ਦਰਗਹ ਸਟੀਐ ਮੁਹਿ ਥੁਕਾ ਫਿਕੇ ਪਾਇ॥(473)

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇ ਜੀਵਨ ਮੁੱਲਾਂ ਵਿਚ ਇਸਤ੍ਰੀ ਦਾ ਸਤਿਕਾਰ ਸ਼ਾਮਿਲ ਹੈ। ਉਹ ਉਸਨੂੰ ਮੰਦਾ ਆਖਣ ਦੇ ਖ਼ਿਲਾਫ਼ ਹਨ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਅਨੁਸਾਰ ਉਹ ਮਨੁੱਖ ਦੀ ਜਣਨੀ ਹੈ, ਉਸ ਦੇ ਰਾਹੀਂ ਜੀਵਨ ਦਾ ਸਾਰਾ ਕਾਰ ਵਿਹਾਰ ਚਲਦਾ ਹੈ, ਇਸ ਲਈ ਉਸ ਦੀ ਇੱਜ਼ਤ ਕਰਨਾ ਮਨੁੱਖ ਦਾ ਫ਼ਰਜ਼ ਹੈ:-

"ਭੰਡਿ ਜੰਮੀਐ ਭੰਡਿ ਨਿੰਮੀਐ ਭੰਡਿ ਮੰਗਣੁ ਵੀਆਹੁ
ਭੰਡਹੁ ਹੋਵੈ ਦੋਸਤੀ ਭੰਡਹੁ ਚਲੈ ਰਾਹੁ
ਭੰਡ ਮੁਆ ਭੰਡ ਭਾਲੀਐ ਭੰਡਿ ਹੋਵੈ ਬੰਧਾਨੁ
ਸੋ ਕਿਉ ਮੰਦਾ ਆਖੀਐ ਜਿਤੁ ਜੰਮਹਿ ਰਾਜਾਨੁ॥ "(473)

ਏਥੇ ਹੀ ਬਸ ਨਹੀਂ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇ ਜੀਵਨ ਮੁੱਲਾਂ ਵਿਚ ਸਾਦਾ ਖਾਣ, ਸਾਦਾ ਪਾਣ ਦਾ ਵੀ ਬੜਾ ਮਹੱਤਵ ਹੈ। ਗੁਰਬਾਣੀ ਦਾ ਮੂਲ ਦਰਸ਼ਨ ਕਿਉਂਕਿ ਪਰਭੂ ਭਗਤੀ ਹੈ, ਨਾਮ ਸਿਮਰਨ ਹੈ ਇਸ ਲਈ ਸਾਦੀ ਖ਼ੁਰਾਕ ਅਤੇ ਸਾਦਾ ਪਹਿਰਨ ਦੀ ਲੋੜ ਹੈ ਤਾ ਕਿ ਨਾਮ ਸਿਮਰਨ ਵਿਚ ਬਾਧਾ ਨਾ ਪਵੇ। ਬੀਮਾਰ ਇਨਸਾਨ ਰੱਬ ਦੀ ਭਗਤੀ ਨਹੀਂ ਕਰ ਸਕਦਾ, ਨਾ ਹੀ ਉਹ ਮਨੁੱਖਤਾ ਲਈ ਕੁਝ ਭਲਾ ਕਰ ਸਕਦਾ ਹੈ:-

"ਬਾਬਾ ਹੋਰੁ ਖਾਣਾ ਖੁਸੀ ਖੁਆਰੁ
ਜਿਤੁ ਖਾਧੈ ਤਨੁ ਪੀੜੀਐ ਮਨ ਮਹਿ ਚਲਹਿ ਵਿਕਾਰ॥ "(16)

ਇਸ ਦੇ ਨਾਲ ਨਾਲ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਜਵਾਨੀ ਦੀ ਉਮਰ ਵਿਚ ਹੀ ਨਾਮ ਨਾਲ ਜੁੜਨ ਦੀ ਪ੍ਰੇਰਨਾ ਦੇਂਦੇ ਹਨ, ਕਿਉਂਕਿ ਬੁਢਾਪੇ ਦੀ ਅਵਸਥਾ ਵਿਚ ਸਰੀਰ ਮਨੁੱਖ ਦਾ ਸਾਥ ਨਹੀਂ ਦੇਂਦਾ, ਅਰਥਾਤ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਅਨੁਸਾਰ ਮਨੁੱਖ ਦਾ ਫ਼ਰਜ਼ ਹੈ ਕਿ ਮੁੱਢਲੀ ਅਵਸਥਾ ਤੋਂ ਹੀ ਉਹ ਨਾਮ ਨਾਲ ਜੁੜ ਕੇ, ਮਨੁੱਖਤਾ ਦੇ ਭਲੇ ਲਈ ਆਪਣਾ ਜੀਵਨ ਬਿਤਾਏ। ਸੋ ਜ਼ਾਹਿਰ ਹੈ ਕਿ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦਾ ਜੀਵਨ ਦਰਸ਼ਨ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਰੱਬ ਨਾਲ ਵੀ ਜੋੜਦਾ ਹੈ ਅਤੇ ਸਮਾਜ ਲਈ ਚੰਗਾ ਮਨੁੱਖ ਬਣਨ ਦੀ ਪ੍ਰੇਰਨਾ ਵੀ ਦੇਂਦਾ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦਾ ਮਨੁੱਖ ਭੇਖੀ ਮਨੁੱਖ ਨਹੀਂ, ਕਰਮ ਕਾਂਡ ਵਿਚ ਵਿਸ਼ਵਾਸ ਰੱਖਣ ਵਾਲਾ ਮਨੁੱਖ ਨਹੀਂ ਮਜ਼ਹਬ ਦੇ ਨਾਂ ਤੇ ਮਨੁੱਖ ਵਿਚ ਵੰਡੀਆਂ ਪਾ ਕੇ ਵੇਖਣ ਵਾਲਾ ਮਨੁੱਖ ਨਹੀਂ ਸਗੋਂ ਸਮੁੱਚੀ ਮਨੁੱਖਤਾ ਨਾਲ ਆਪਣਾ ਰਿਸ਼ਤਾ ਜੋੜਣ ਵਾਲਾ ਮਨੁੱਖ ਹੈ।

Volume : 6 | Issue :49 | October-December2019 ISSN: 2349-1876 (Print) | ISSN : 2454-1826 (Online)

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦੀ ਬਾਣੀ ਦੇ ਬਹੁ-ਪੱਖੀ ਦ੍ਰਿਸ਼ਟੀਕੋਣ

* ਡਾ. ਗੁਰਪ੍ਰੀਤ ਕੌਰ

* ਮਾਤਾ ਸੁੰਦਰੀ ਕਾਲਜ, ਦਿੱਲੀ ਯੂਨੀਵਰਸਿਟੀ ncweb

ਸਾਹਿਤ, ਮਨੁੱਖੀ ਭਾਵਾਂ, ਵਿਚਾਰਾਂ, ਮਨ ਦੀਆਂ ਤਰੰਗਾਂ ਆਦਿ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੇ ਪ੍ਰਗਟਾਵੇ ਦਾ ਸਾਧਨ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਪੰਜਾਬੀ ਸਾਹਿਤ ਦੀ ਮੱਧਕਾਲ ਦੀ ਸਭ ਤੋਂ ਪ੍ਰਮੁੱਖ ਗੁਰਮਤਿ ਕਾਵਿਧਾਰਾ ਦੇ ਪਹਿਲੇ ਕਵੀ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਮੰਨੇ ਜਾਂਦੇ ਹਨ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਸਾਹਿਬ ਤੋ ਪਹਿਲਾਂ ਕਈ ਸੂਫ਼ੀ, ਨਾਥ, ਜੋਗੀ ਆਦਿ ਹੋਏ ਹਨ।ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਨੇ ਜਦੋਂ ਅਵਤਾਰ ਧਾਰਿਆ, ਉਦੋਂ ਸਮਾਜ ਦੀ ਬਹੁਤ ਬੁਰੀ ਹਾਲਤ ਸੀ ਪੂਰਾ ਸਮਾਜ ਅੰਧ-ਵਿਸ਼ਵਾਸਾਂ ਅਤੇ ਪਾਖੰਡਾਂ ਦੇ ਘੇਰੇ ਵਿਚ ਧਸਿਆ ਹੋਇਆ ਸੀ। ਸਮਾਜ ਨੂੰ ਇਨ੍ਹਾਂ ਵਿਚੋਂ ਕੱਢਣ ਲਈ ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਆਪਣੀ ਰਚਨਾ ਰਾਹੀਂ ਨਾਥਾਂ/ ਜੋਗੀਆਂ ਨਾਲ 'ਸੰਵਾਦ' ਰਚਾਇਆ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਵਿਚ ਮਨੁੱਖਤਾ ਨਾਲ ਜੁੜੇ ਕਈ ਵਿਸ਼ੇ ਮਿਲਦੇ ਹਨ ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਨਾਲ ਆਦਰਸ਼ਕ ਜੀਵਨ ਜੀਉਣ ਦੀ ਸੋਝੀ ਮਿਲਦੀ ਹੈ।

ਜਦੋਂ ਅਸੀਂ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਸਾਹਿਬ ਜੀ ਦੁਆਰਾ ਰਚਿਤ ਸਾਹਿਤ ਦੀ ਗੱਲ ਕਰਦੇ ਹਾਂ ਤਾਂ, ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੀ ਕੁੱਲ ਰਚਨਾ- ਜਪੁਜੀ , ਆਸਾ ਦੀ ਵਾਰ, ਸਿਧ ਗੋਸ਼ਟਿ, ਬਾਰਾਮਾਹ ਤੁਖਾਰੀ, ਸ਼ਬਦ, ਸਲੋਕ, ਪੱਟੀ, ਰਾਗ ਮਾਝ, ਰਾਗ ਮਲਾਰ, ਸੋਹਿਲਾ, ਅਲਾਹੁਣੀਆਂ, ਬਾਬਰਬਾਣੀ, ਅਸ਼ਟਪਦੀਆਂ ਆਦਿ 20 ਰਾਗਾਂ ਵਿਚ ਦਰਜ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਸਾਹਿਬ ਦੀ ਬਾਣੀ ਸਮਾਜ ਦੇ ਕਲਿਆਣ, ਭਲਾਈ, ਨੈਤਿਕਤਾ ਦੇ ਅਧਾਰਿਤ 'ਤੇ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਸਾਹਿਬ ਦੀ ਬਾਣੀ ਦਾ ਮੁੱਖ ਸੰਕਲਪ 'ਇਕ ਈਸ਼ਵਰਵਾਦ' ਹੈ।ਤਾਂ ਹੀ ਉਨਾਂ ਨੇ ੴ ਦਾ ਸਿਧਾਂਤ ਦਿੱਤਾ। ਇੱਥੇ ਅਸੀਂ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਸਾਹਿਬ ਦੀ ਬਾਣੀ ਵਿਚਲੇ ਕੁਝ ਪੱਖਾਂ 'ਤੇ ਚਰਚਾ ਕਰਨ ਜਾਂ ਰਹੇ ਹਾਂ।

ਉਚ-ਨੀਚ ਦਾ ਖੰਡਨ- ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਸਾਹਿਬ ਦੀ ਬਾਣੀ ਦਾ ਅਧਿਐਨ ਕਰਦੇ ਹਾਂ ਤਾਂ ਇਸ ਵਿਚ ਸਾਨੂੰ ਕਈ ਥਾਵਾਂ ਤੇ ਸਮਾਜਕ ਪੱਖ ਦੇ ਕਈ ਉਦਾਹਰਣ ਵੇਖਣ ਨੂੰ ਮਿਲਦੇ ਹਨ। ਜਦੋਂ ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਨੇ ਅਵਤਾਰ ਧਾਰਿਆ ਤਾਂ ਉਸ ਸਮੇਂ ਦੇ ਸਮਾਜ ਵਿਚ ਬ੍ਰਾਹਮਣਵਾਦ ਦਾ ਦਬਦਬਾ ਸੀ।ਕੁਝ ਜਾਤਾਂ ਦੇ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਨੀਚਾ ਸਮਝਿਆ ਜਾਂਦਾ ਸੀ ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੂੰ ਸਮਾਜ ਵਿਚ ਸਮਾਨਤਾ ਦਾ ਹੱਕ ਨਹੀਂ ਦਿੱਤਾ ਜਾਂਦਾ ਸੀ।ਉਦੋਂ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਸਾਹਿਬ ਨੇ ਲੋਕ ਭਲਾਈ ਲਈ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਸਮਝਾਇਆ ਕਿ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ, ਜਾਤ-ਪਾਤ, ਉਚ ਨੀਚ ਵਿਚ ਵਿਤਕਰਾ ਨਹੀਂ ਕਰਦਾ, ਇਸ ਦੇ ਨਾਲ ਹੀ ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਨੇ ਸਾਂਝੀਵਾਲਤਾ ਦਾ ਉਪਦੇਸ਼ ਦਿੱਤਾ। ਤੇ ਉਚ-ਨੀਚ ਦੇ ਵਿਤਕਰੇ ਨੂੰ ਖ਼ਤਮ ਕਰਨ ਲਈ ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਨੇ ਕਿਹਾ।

ਨੀਚਾ ਅੰਦਰ ਨੀਚ ਜਾਤਿ
ਨੀਚੀ ਹੂ ਅਤਿ ਨੀਚ।।
ਨਾਨਕ ਤਿਨ ਕੇ ਸੰਗਿ ਸਾਥਿ
ਵਡਿਆ ਸਿਉ ਕਿਆ ਰੀਸ।।(ਆਸਾ ਦੀ ਵਾਰ)

ਸਭ ਮਹਿ ਜੋਤਿ ਜੋਤਿ ਹੈ ਸੋਇ
ਤਿਸ ਦੈ ਚਾਨਣਿ
ਸਭ ਮਹਿ ਚਾਨਣ ਹੋਇ।।(ਧਨਾਸਰੀ ਮਹਲਾ 1)

ਮੂਰਤੀ ਪੂਜਨ ਦਾ ਵਿਰੋਧ-ਲੋਕ ਮੂਰਤੀ ਪੂਜਨ ਤੇ ਦੇਹਧਾਰੀ ਗੁਰੂਆਂ ਤੇ ਪਾਖੰਡਾਂ ਵਿਚ ਵਿਸ਼ਵਾਸ ਰੱਖਦੇ ਸੀ।ਸਮਾਜ, ਦੇਹ ਧਾਰੀ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਹੀ ਗੁਰੂ ਮੰਨਦਾ ਸੀ।ਉਸ ਸਮੇਂ ਦੇ ਲੋਕ ਕਈ ਤਰ੍ਹਾਂ ਦੇ ਪਾਖੰਡ ਕਰਦੇ ਸੀ ਅਤੇ ਵੱਖ ਵੱਖ ਤਰੀਕਿਆਂ ਨਾਲ ਦੇਵੀ-ਦੇਵਤਿਆਂ ਦੀ ਮੂਰਤੀਆਂ ਨੂੰ ਪੂਜਿਆ ਜਾਂਦਾ ਸੀ।ਅਤੇ ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੂੰ ਖੁਸ਼ ਕਰਨ ਲਈ ਕਈ ਮਨੁੱਖਾਂ ਅਤੇ ਜਾਨਵਰਾਂ ਦੀ ਬਲੀ ਵੀ ਦਿੱਤੀ ਜਾਂਦੀ ਸੀ। ਉੱਥੇ ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਨੇ ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੂੰ ਇਸ ਵਹਿਮ ਵਿਚੋਂ ਕੱਢਣ ਲਈ ਇਕ ਈਸ਼ਵਰਵਾਦ ਦਾ ਸੰਕਲਪ ਦਿੱਤਾ। ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਅਨੁਸਾਰ ਸ੍ਰਿਸ਼ਟੀ ਦਾ ਸਿਰਜਕ, ਵਿਨਾਸ਼ਕ, ਅਤੇ ਕੁੱਲ ਕਾਇਨਾਤ ਦਾ ਰਖਵਾਲਾ ਇਕੋ ਇਕ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਹੈ। ਇਸ ਸ੍ਰਿਸਟੀ ਦਾ ਪੱਤਾ ਪੱਤਾ ਵੀ ਉਸਦੇ ਹੁਕਮ ਦਾ ਗੁਲਾਮ ਹੈ।ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਨੇ ਸਮਝਾਇਆ ਕਿ ਹੁਕਮਿ ਅੰਦਰ ਸਭ ਕੋ ਬਾਹਰ ਹੁਕਮਿ ਨ ਕੋਈ(ਜਪੁ ਜੀ ਸਾਹਿਬ)

ਇਸਤਰੀ ਜਾਤੀ ਦਾ ਸਨਮਾਨ- ਭਾਵੇਂ ਹਿੰਦੂ ਧਰਮ ਗ੍ਰੰਥਾਂ ਵਿਚ ਇਸਤਰੀ ਨੂੰ ਉੱਚਾ ਸਥਾਨ ਦਿੱਤਾ ਗਿਆ ਹੈ। ਪਰ, ਅਸਲ ਵਿਚ ਔਰਤ ਨੂੰ ਪੈਰ ਦੀ ਜੁੱਤੀ ਸਮਝਿਆ ਜਾਂਦਾ ਸੀ। ਉਸਨੂੰ ਕਿਸੇ ਵੀ ਪ੍ਰਕਾਰ ਦੀ ਖੁੱਲ੍ਹ ਨਹੀਂ ਦਿੱਤੀ ਜਾਂਦੀ ਸੀ। ਔਰਤ ਜ਼ਾਤ ਨਾਲ ਧਾਰਮਕ ਤੇ ਸਮਾਜਕ ਦੋਵੇਂ ਵਿਤਕਰੇ ਕੀਤੇ ਜਾਂਦੇ ਸਨ।ਇਸਤਰੀ ਜਾਤ ਨੂੰ ਅਪਵਿਤਰ ਕਹਿ ਕੇ ਨਿਕਾਰ ਦਿੱਤਾ ਜਾਂਦਾ ਸੀ।ਗੋਰਖ ਮਤੀਆ ਨੇ ਜਿੱਥੇ ਔਰਤ ਨੂੰ "ਦਾਮਿ ਕਾਢਿ ਬਾਘਨ ਲੈ ਆਇਆ।ਮਾਉ ਕਹੈ ਮੇਰਾ ਪੂਤ ਬਿਹਾਇਆ।, ਕਿਹਾ ਉੱਥੇ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਸਾਹਿਬ ਨੇ ਔਰਤ ਜ਼ਾਤ ਦੀ ਇਜ਼ੱਤ ਕਰਦੇ ਹੋਏ ਉਸਨੂੰ ਸਮਾਜ ਵਿਚ ਪੂਰਾ ਬਰਾਬਰ ਦਾ ਹੱਕਦਾਰ ਮੰਨਿਆ ਤੇ ਫੁਰਮਾਇਆ ਸੋ ਕਿਉ ਮੰਦਾ ਆਖੀਐ ਜਿਤੁ ਜੰਮਹਿ ਰਾਜਾਨ.(ਆਸਾ ਦੀ ਵਾਰ) ਇਸ ਤੁਕਾਂ ਰਾਹੀਂ ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਤਿੱਖੇ ਵਿਅੰਗ ਨਾਲ ਪੁਛਦੇ ਹਨ, ਕਿ ਜੇ ਇਸਤਰੀ ਅਪਵਿਤਰ ਹੈ ਤਾਂ ਤੁਸੀਂ ਉਸਦੇ ਜਾਮੇ'ਚੋਂ ਜਨਮ ਲੈਣ ਵਾਲੇ ਪਵਿਤਰ ਕਿਵੇਂ ਹੋ ਗਏ।

ਮੁਕਤੀ ਦਾ ਸੰਕਲਪ- ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਸਹਿਬ ਦੇ ਸਮੇਂ ਨਾਥ-ਜੋਗੀਆਂ ਦਾ ਬਹੁਤ ਬੋਲ ਬਾਲਾ ਸੀ ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਮੁਕਤੀ ਦਾ ਰਾਹ ਬ੍ਰਹਮਚਾਰੀ ਜੀਵਨ ਨੂੰ ਮੰਨਿਆ ਤੇ ਮੁਕਤੀ ਦੇ ਰਾਹ ਵਿਚ ਔਰਤ ਨੂੰ ਸਭ ਤੋਂ ਵੱਡੀ ਅੜਚਨ ਮੰਨਿਆ ਜਾਂਦਾ ਸੀ।ਅਰਥਾਤ ਉਸ ਸਮੇਂ ਲੋਕ ਮੋਕਸ਼ ਪ੍ਰਾਪਤ ਕਰਨ ਦੇ ਲਈ ਘਰ ਛੱਡ ਕੇ ਜੰਗਲਾਂ ਤੇ ਪਹਾੜਾ ਵਿਚ ਚਲੇ ਜਾਂਦੇ ਸੀ।ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਇਸ ਵਹਿਮ ਵਿਚੋਂ ਕਢਣ ਲਈ ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਨੇ ਫੁਰਮਾਇਆ ਜੋਗੁ ਨ ਖਿੰਥਾ ਜੋਗੁ ਨ ਡੰਡੈ ਜੋਗੁ ਨ ਭਸਮੁ ਚੜਾਈਐ।।(ਸੂਹੀ ਮਹਲਾ 1) ਉਸ ਸਮੇਂ ਦੇ ਸਮਾਜ ਵਿਚ ਮੁਕਤੀ ਦਾ ਸਿਧਾਂਤ ਪਹਿਲਾਂ ਤੋਂ ਹੀ ਸੀ, ਪਰ ਉਹ ਮੌਤ ਤੋਂ ਬਾਅਦ ਦੀ ਮੁਕਤੀ ਵਿਚ ਵਿਸ਼ਵਾਸ ਰੱਖਦੇ ਸਨ।ਪਰ ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ

ਆਵਾਗਵਣ ਵਿਚ ਵਿਸ਼ਵਾਸ ਰੱਖਦੇ ਸੀ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦਾ ਮੰਨਣਾ ਸੀ, ਕਿ ਮਨੁੱਖ ਕਈ ਜੂਨਾਂ ਤੋਂ ਭਟਕ ਕੇ ਇਸ ਜੂਨ ਵਿਚ ਆਇਆ ਹੈ। ਤੇ ਇਸ ਅਵਾਗਵਣ ਤੋਂ ਆਜ਼ਾਦ ਹੋਣਾ ਹੀ ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਅਨੁਸਾਰ ਅਸਲ ਵਿਚ ਮੁਕਤੀ ਪਾਉਣਾ ਸੀ। 'ਮੁਕਤੀ' ਸੰਸਾਰ ਵਿਚ ਰਹਿ ਕੇ ਸੰਸਾਰਿਕ ਤੇ ਨਾਸ਼ਵਾਨ ਚੀਜਾਂ ਤੋਂ ਮੁਕਤ ਰਹਿਣ ਅਤੇ ਵਿਕਾਰਾਂ ਤੋਂ ਮੁਕਤ ਰਹਿਣ ਤੇ ਮਿਲਦੀ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਸਾਹਿਬ ਨੇ ਫੁਰਮਾਇਆ: ਜੈਸੈ ਜਲ ਮਹਿ ਕਮਲ ਨਿਰਾਲਮੁ, ਮੁਰਗਾਈ ਨੈਸਾਣੇ।।ਸੁਰਤਿ ਸਬਦਿ ਭਵ ਸਾਗਰੁ ਤਰੀਐ ,ਨਾਨਕ ਨਾਮੁ ਵਖਾਣੇ।।(ਰਾਮਕਲੀ ਮਹਲਾ 1ਸਿਧਗੋਸ਼ਟਿ)

ਕਿਰਤ ਕਰੋ,ਨਾਮ ਜਪੋ,ਵੰਡ ਛਕੋ ਦਾ ਆਦੇਸ਼- ਮਿਹਨਤ ਦੀ ਕਮਾਈ ਦਾ ਕਿਤੇ ਵੀ ਨਾਮੋ-ਨਿਸ਼ਾਨ ਨਹੀਂ ਸੀ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਹਲਾਤਾਂ ਵਿਚ ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਨੇ ਕਿਰਤ ਕਰੋ, ਨਾਮ ਜਪੋ, ਵੰਡ ਛਕੋ, ਦੇ ਤਿੰਨ ਉਪਦੇਸ਼ ਦਿੱਤੇ।ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਨੇ ਉਸ ਸਮੇਂ ਦੇ ਜ਼ੁਲਮਾਂ ਵਿਰੁਧ ਆਵਾਜ਼ ਉਠਾਈ।ਦਸਾਂ ਨਹੁੰਆਂ ਦੀ ਮਿਹਨਤ ਹੀ ਅਸਲ ਕਮਾਈ ਕਹੀ ਅਤੇ ਇਸਦੇ ਨਾਲ ਹੀ ਵੰਡ ਕੇ ਛਕਣ ਦਾ ਵੀ ਉਪਦੇਸ਼ ਦਿੱਤਾ।ਹੱਕ ਦੀ ਕਮਾਈ ਨੂੰ ਹੀ ਅਸਲ ਕਮਾਈ ਦਾ ਦਰਜਾ ਦਿੱਤਾ ਗਿਆ।ਹਕੁ ਪਰਾਇਆ ਨਾਨਕਾ, ਉਸੁ ਸੂਅਰ ਉਸੁ ਗਾਇ।।(ਸਲੋਕ ਮਹਲਾ 1 ਵਾਰ ਮਾਝ141)

ਕਿਰਤ ਕਰੋ ਨਾਲ ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਨੇ ਨਾਮ ਸਿਮਰਨ'ਤੇ ਵੀ ਜ਼ੋਰ ਦਿੱਤਾ। ਨਾਮ ਜਪਣ ਨਾਲ ਮਾਨਸਿਕ ਅਤੇ ਆਤਮਿਕ ਸ਼ਾਤੀ ਮਿਲਦੀ ਹੈ। ਨਾਮ ਜਪਣ ਦੇ ਨਾਲ ਇਹ ਲੋਕ ਅਤੇ ਪਰਲੋਕ ਸਵਰ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਇਸ ਸੰਸਾਰ ਵਿਚ ਸਭ ਕੁਝ ਨਾਸ਼ਵਾਨ ਹੈ, ਖ਼ਤਮ ਹੋ ਜਾਣਾ ਹੈ ਇਸ ਲਈ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਇਸਦਾ ਤਿਆਗ ਕਰਨਾ ਚਾਹੀਦਾ ਹੈ ਅਤੇ ਇਹ ਨਾਮ ਜਪਣ ਨਾਲ ਇਨ੍ਹਾਂ ਨਾਸ਼ਵਾਨ ਚੀਜਾਂ ਤੋਂ ਮਨੁੱਖ ਦਾ ਮੁਕਤ ਹੋਣਾ ਸੰਭਵ ਹੋ ਸਕਦਾ ਹੈ ।ਨਾਮ ਜਪਣ ਨਾਲ ਮਨ ਦੇ ਸਾਰੇ ਰੋਗਾਂ ਦਾ ਇਲਾਜ ਹੋ ਜਾਂਦਾ ਹੈ ਤੇ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਆਤਮਿਕ ਸ਼ਕਤੀ ਦੀ ਪ੍ਰਾਪਤੀ ਹੁੰਦੀ ਹੈ।

ਰਾਜੀਨਿਤਕ ਪੱਖ-ਭਾਰਤ ਦੇ ਇਤਿਹਾਸ ਵੱਲ ਨਜ਼ਰ ਕਰੀਏ, ਤਾਂ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਸਾਹਿਬ ਦੇ ਸਮੇਂ ਲੋਧੀ ਪਠਾਣਾਂ ਦਾ ਰਾਜ ਸੀ, ਅਤੇ ਪਠਾਣਾ ਦੇ ਜ਼ੁਲਮਾਂ ਤੋਂ ਸਾਰੇ ਹਿੰਦੂ ਦੁਖੀ ਹੋ ਚੁਕੇ ਸਨ ਪਰ, ਕਿਸੇ ਵਿਚ ਵੀ ਉਸ ਜ਼ੁਲਮ ਦੇ ਵਿਰੁਧ ਕੁਝ ਵੀ ਕਹਿਣ ਜਾ ਕਰਨ ਦੀ ਹਿੰਮਤ ਨਾ ਹੋਈ। ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਨੇ ਇਸ ਜ਼ੁਲਮ ਦੇ ਵਿਰੁੱਧ ਜ਼ਬਰਦਸਤ ਆਵਾਜ਼ ਉਠਾਈ। ਉਸ ਜ਼ੁਲਮ ਤੋਂ ਪਰੇਸ਼ਾਨ ਹੋ ਕੇ ਲੋਕ ਆਪਣਾ ਧਰਮ ਤਿਆਗ ਰਹੇ ਸਨ ਅਤੇ ਦੂਸਰੇ ਧਰਮ ਨੂੰ ਅਪਣਾ ਰਹੇ ਸਨ। ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਨੇ ਸਮਝਾਉਣ ਦਾ ਸਫ਼ਲ ਯਤਨ ਕੀਤਾ ਕਿ ਕਿਸੇ ਵੀ ਪ੍ਰਜਾ ਦੇ ਰਾਜੇ ਦਾ ਕੰਮ ਸੱਚ ਦਾ ਸਾਥ ਦੇਣਾ ਅਤੇ ਨਿਆਂ ਕਰਨਾ ਹੁੰਦਾ ਹੈ।ਜੋ ਸੱਚ ਦਾ ਸਾਥ ਦਿੰਦਾ ਹੈ ਉਹੀ ਅਸਲ ਵਿਚ ਰਾਜਾ ਦੇ ਤਖ਼ਤ 'ਤੇ ਬੈਠਣ ਦਾ ਹੱਕਦਾਰ ਹੈ ਇਸ ਗੱਲ ਨੂੰ ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਬੜੇ ਹੀ ਸ਼ਾਤਮਈ ਤਰੀਕੇ ਨਾਲ ਸਮਝਾਉਂਦੇਂ ਹਨ ਤਖ਼ਤਿ ਰਾਜਾ ਸੋ ਬਹੈ ਕਿ ਤਖ਼ਤੈ ਲਾਇਕ ਹੋਈ।।ਜਿਨੀ ਸਚ ਪਛਾਣਿਆ ਸਚੁ ਰਾਜੇ ਸੇਈ।

ਵਾਤਾਵਰਣ ਦੀ ਅਹਿਮਅਤ- ਗੁਰਮਤਿ ਅਨੁਸਾਰ ਇਹ ਸ੍ਰਿਸ਼ਟੀ ਪੰਜ ਤੱਤਾਂ-ਪਉਣ, ਪਾਣੀ, ਅਗਨੀ, ਅਕਾਸ਼ ਅਤੇ ਧਰਤੀ ਦਾ ਸੁਮੇਲ ਹੈ। ਇਸ ਦੁਨੀਆ ਵਿਚ ਕਈ ਪ੍ਰਕਾਰ ਦੇ ਜੀਵ-ਜੰਤੂ ਹਨ ਅਤੇ ਸਾਰੇ ਜੀਵਾਂ ਦਾ ਜੀਵਨ ਇਨ੍ਹਾਂ ਪੰਜ ਤੱਤਾਂ ਦੇ ਆਧਾਰ 'ਤੇ ਕਾਇਮ ਹੈ।ਇਨ੍ਹਾਂ ਜੀਵਾਂ ਵਿਚੋਂ ਮਨੁੱਖ ਵੀ ਇਕ ਹੈ। ਅੱਜ ਦੇ ਦੌਰ ਵਿਚ ਜਿੱਥੇ ਪਰਯਾਵਰਣ/ਵਾਤਾਵਰਣ ਦੀ ਸੰਭਾਲ ਲਈ ਵੱਖੋ ਵੱਖਰੇ ਉਪਰਾਲੇ ਕੀਤੇ ਜਾ ਰਹੇ ਹਨ। ਕਿਤੇ ਪਾਣੀ ਬਚਾਉਣ ਦੀ ਗੱਲ ਹੋ ਰਹੀ ਹੈ ਅਤੇ ਕਿਤੇ ਹਵਾ ਨੂੰ ਸ਼ੁਧ ਰੱਖਣ ਦੇ ਸੰਦੇਸ਼ ਦਿੱਤੇ ਜਾ ਰਹੇ ਹਨ ਅਤੇ ਕਿਤੇ ਰੁੱਖ ਲਗਾਉਣ ਬਾਰੇ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਚੇਤੰਨ ਕੀਤਾ ਜਾ ਰਿਹਾ ਹੈ। ਇਸੇ ਪਰਯਾਵਰਣ/ ਵਾਤਾਵਰਣ ਦੀ ਅਹਿਮਿਅਤ ਨੂੰ ਗੁਰੂ ਸਹਿਬ ਨੇ ਇਨ੍ਹੇ ਵਰ੍ਹੇ ਪਹਿਲਾਂ ਪਵਣ ਗੁਰੂ ਪਾਣੀ ਪਿਤਾ ਮਾਤਾ ਧਰਤੁ ਮਹਤੁ(ਜਪੁ ਜੀ ਸਾਹਿਬ) ਦਾ ਉਪਦੇਸ਼ ਦਿੱਤਾ।ਇਨ੍ਹਾਂ ਪੰਜ ਤੱਤਾਂ ਦਾ ਸੰਤੁਲਨ ਅਤੇ ਇਨ੍ਹਾਂ ਨੂੰ ਸ਼ੁੱਧ ਰੱਖਣ ਲਈ ਸੰਜਮ ਤੇ ਸੰਤੋਖ ਦੀ ਬਹੁਤ ਲੋੜ ਹੈ।ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਦੀ ਬਾਣੀ ਪ੍ਰਕਿਤੀ ਨਾਲ ਮਿਲ ਕੇ ਚਲਣ ਲਈ ਅਤੇ ਉਸਦਾ ਸਤਿਕਾਰ ਕਰਨ ਲਈ ਪ੍ਰੇਰਦੀ ਹੈ।

ਪੰਜਾਬੀ ਸਾਹਿਤ ਦੇ ਚਿੰਤਕ ਹਰਿਭਜਨ ਸਿੰਘ ਅਨੁਸਾਰ ਨਾਨਕਬਾਣੀ ਦੀ ਯਾਤ੍ਰਾ ਮਨੁੱਖਤਾ ਤੇ ਚੰਗੇਰੀ ਮਨੁੱਖਤਾ ਵੱਲ ਨਹੀਂ, ਸੰਸਾਰਕਤਾ ਤੋਂ ਅਧਿਆਤਕਮਤਾ ਵੱਲ ਹੈ। ਉਸ ਦਾ ਬਲ ਮਨੁੱਖ ਦੇ ਪ੍ਰਕਿਤੀ- ਪਰਿਵਰਤਨ ਉਪਰ ਹੈ, ਮਾਤ੍ਰ ਪਰਿਵਰਤਨ ਉਪਰ ਨਹੀਂ।(ਹਰਿਭਜਨ ਸਿੰਘ, ਪਾਰਗਾਮੀ ਪੰਨਾ 73) ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਦੀ ਬਾਣੀ ਬਹੁਪੱਖੀ ਦ੍ਰਿਸ਼ਟੀ ਵਾਲੀ ਹੈ ਜਿਸ ਵਿਚ ਸਾਨੂੰ ਧਾਰਮਕ, ਸਮਾਜਕ, ਸਭਿਆਚਾਰਕ ਅਤੇ ਰਾਜਨੀਤਕ ਪੱਖ ਵੇਖਣ ਨੂੰ ਮਿਲਦੇ ਹਨ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਸਾਹਿਬ ਦੀ ਬਾਣੀ ਕਿਸੇ ਇਕ ਕੌਮ, ਦੇਸ਼ ਜਾਂ ਧਰਮ ਦੇ ਲੋਕਾਂ ਲਈ ਹੀ ਨਹੀਂ ਬਲਕਿ ਕੁਲ ਮਨੁੱਖਤਾ ਦੇ ਵਿਕਾਸ ਲਈ ਹੈ।ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਦੀ ਸਾਰੀ ਬਾਣੀ ਕਰਮ-ਕਾਂਡਾਂ, ਜਾਤਾਂ-ਪਾਤਾਂ, ਅੰਧ-ਵਿਸ਼ਵਾਸਾਂ ਦੇ ਵਿਰੁੱਧ, ਅਤੇ ਸਾਂਝੀਵਾਲਤਾ ਦਾ ਸੰਦੇਸ਼ ਦਿੰਦੀ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਦੀ ਬਾਣੀ ਚੜ੍ਹਦੀਕਲਾ ਵਿਚ ਰਹਿਣ ਲਈ ਪ੍ਰੇਰਿਤ ਕਰਦੀ ਹੈ। ਸੇਵਾ ਤੇ ਪਿਆਰ ਨਾਲ ਸਰਬਤ ਦਾ ਭਲਾ ਮੰਗਣ ਦੀ ਜਾਚ ਸਿਖਾਉਂਦੀ ਹੈ।'ਨਾਨਕ ਨਾਮ ਚੜਦੀ ਕਲਾ ਤੇਰੇ ਭਾਣੇ ਸਰਬਤ ਦਾ ਭਲਾ।।

ਸਹਾਇਕ ਪੁਸਤਕ ਸੂਚੀ

1. ਪ੍ਰੋ.ਬ੍ਰਹਮਜਗਦੀਸ਼ ਸਿੰਘ ਅਤੇ ਪ੍ਰੋ. ਰਾਜਬੀਰ ਕੌਰ ਪੰਜਾਬੀ ਸਾਹਿਤ ਦਾ ਇਤਿਹਾਸ,ਵਾਰਿਸਸ਼ਾਹ ਫ਼ਾਉਂਡੇਸ਼ਨ,ਅੰਮ੍ਰਿਤਸਰ
2. ਹਰਿਭਜਨ ਸਿੰਘ, ਅਧਿਅਨ ਅਤੇ ਅਧਿਆਪਨ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਯੂਨੀਵਰਸਿਟੀ, ਅੰਮ੍ਰਿਤਸਰ
3. ਉਹੀ, ਪਾਰਗਾਮੀ, ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਯੂਨੀਵਰਸਿਟੀ, ਅੰਮ੍ਰਿਤਸਰ

Volume : 6 | Issue :49 | October-December2019 ISSN: 2349-1876 (Print) | ISSN : 2454-1826 (Online)

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਵਿੱਚ ਮਨੁੱਖੀ ਚੇਤਨਾ

* ਹਰਪ੍ਰੀਤ ਕੌਰ ਖਾਲਸਾ

* ਖੋਜਾਰਥਣ, ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਅਧਿਐਨ ਵਿਭਾਗ, ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਯੂਨੀਵਰਸਿਟੀ, ਅੰਮ੍ਰਿਤਸ

ਮਨੁੱਖ ਕੁਦਰਤ ਦੀ ਇੱਕ ਅਦਭੁੱਤ ਰਚਨਾ ਹੈ। ਇਸੇ ਲਈ ਦੁਨੀਆ ਦਾ ਹਰ ਫ਼ਲਸਫ਼ਾ ਹਰ ਗਿਆਨ ਮਾਨਵ ਹੋਂਦ ਦੇ ਜ਼ਿਕਰ ਨਾਲ ਪ੍ਰੋਤ ਹੈ। ਮਨੁੱਖ ਜਿੱਥੇ ਦੈਵੀ ਚੇਤਨਾ ਦਾ ਪ੍ਰਤੀਕ ਹੈ, ਉੱਥੇ ਇਕ ਚੇਤਨ ਪ੍ਰਾਣੀ ਦੇ ਰੂਪ ਵਿੱਚ ਅਨੰਤ ਦੀ ਸੰਪੂਰਨ ਹੋਂਦ ਦਾ ਵਾਰਸ ਵੀ ਹੈ। ਪਰ ਮਨੁੱਖ ਦੀ ਅਸਲ ਹੋਂਦ ਕੀ ਹੈ, ਇਸਦਾ ਸਿਧਾਂਤਕ ਪਿਛੋਕੜ ਕੀ ਹੈ, ਕਿਹੜੇ ਮੂਲ ਅਰਥਾਂ ਵਿੱਚ ਮਨੁੱਖ ਦੀ ਸੰਪੂਰਨਤਾ ਦਾ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ ਅਧਿਐਨ ਕੀਤਾ ਜਾਵੇ, ਵਰਗੇ ਪ੍ਰਸ਼ਨ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਵਿੱਚ ਆਦਰਸ਼ ਮਾਨਵ ਦਾ ਮੁਹਾਂਦਰਾ ਉਲੀਕਦੇ ਹਨ।

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਦਾ ਮੂਲ ਸੁਭਾਅ ਅਧਿਆਤਮਵਾਦੀ ਹੈ, ਜੋ ਅਨੁਭਵ ਤੇ ਪਰਮ ਯਥਾਰਥ ਦੀਆਂ ਭੂਮਿਕਾਵਾਂ ਨੂੰ ਸਨਮੁਖ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਇਸੇ ਲਈ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਜਦੋਂ ਅਨੰਤ, ਅਨਾਦੀ, ਪਰਾ-ਭੌਤਿਕ ਸੱਤਾ ਦੀ ਵਿਆਖਿਆ ਕਰਦੀ ਹੈ ਤਾਂ ਉਸ ਵਿੱਚ ਮਨੁੱਖ ਦੀ ਹਸਤੀ ਨੂੰ ਇਸ ਬ੍ਰਹਿਮੰਡੀ ਅਮਲ ਦੀ ਇਕ ਨਿਗੁਣੀ ਜਿਹੀ ਜਾਤ ਹੀ ਕਬੂਲਦੀ ਹੈ, ਜਿਸ ਦੀ ਹੋਂਦ ਜਨਮ-ਮਰਣ ਦੇ ਬੰਧਨ ਅਧੀਨ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਸਾਹਿਬ ਫੁਰਮਾਉਂਦੇ ਹਨ:

ਸਤਿਗੁਰੂ ਵੇਪਰਵਾਹੁ ਸਿਰੰਦਾ॥
ਨਾ ਜਮ ਕਾਣਿ ਨ ਛੰਦਾ ਬੰਦਾ॥
ਜੋ ਤਿਸੁ ਸੇਵੇ ਸੋ ਅਬਿਨਾਸੀ ਨਾ ਤਿਸੁ ਕਾਲੁ ਸੰਤਾਈ ਹੈ॥ [1]

ਮੂਲ ਰੂਪ ਵਿੱਚ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਮਨੁੱਖ ਦੀ ਹੋਂਦ ਦਾ ਆਦਿ ਬਿਆਨਦਿਆਂ ਜੀਵਨ ਦੇ ਜਿਸ ਸੱਚ ਨਾਲ ਵਾਸਤਾ ਘੜਨ ਦੀ ਕੋਸ਼ਿਸ਼ ਕਰਦੀ ਹੈ, ਉਸਦਾ ਸੰਬੰਧ ਕੇਵਲ ਵਿਅਕਤੀ ਦੀ ਭੌਤਿਕ ਸੱਚਾਈ ਨਾਲ ਹੀ ਨਹੀਂ ਹੁੰਦਾ ਬਲਕਿ ਉਸ ਵਿੱਚੋਂ ਜਗਤ ਨੂੰ ਵੇਖਣ ਪਰਖਣ ਅਤੇ ਸਮਝਣ ਦਾ ਦ੍ਰਿਸ਼ਟੀਕੋਣ ਵੀ ਪ੍ਰਾਪਤ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਇਹੀ ਸੱਚ, ਨਾਲ ਵਾਸਤਾ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਵੀ ਬਿਆਨਦੀ ਹੈ।

ਮੁਕਾਮੁ ਤਿਸਨੋ ਆਖੀਐ ਜਿਸੁ ਸਿਸਿ ਨ ਹੋਵੀ ਲੇਖੁ॥
ਅਸਮਾਨੁ ਧਰਤੀ ਚਲਸੀ ਮੁਕਾਮੁ ਓਹੀ ਏਕੁ॥ [2]

ਜੇਕਰ ਮਨੁੱਖੀ ਹੋਂਦ ਦੇ ਚਿੰਤਨ ਬਾਰੇ ਗੱਲ ਕਰਨ ਦਾ ਯਤਨ ਕਰੀਏ ਤਾਂ ਇਸ ਓਹਲੇ ਦੀ ਸੱਚਾਈ ਨੂੰ ਖੰਘਾਲਦਿਆਂ ਮਨੁੱਖੀ ਸੁਰਤ ਹੈਰਾਨ ਹੋ ਜਾਂਦੀ ਹੈ। ਇਹ ਇਕ ਵਿਗਿਆਨਕ ਸੱਚ ਹੈ ਕਿ ਤੱਥਾਂ ਮੁਤਾਬਿਕ ਜਦੋਂ ਮਰਦ ਦਾ ਇਕ ਕੋਸ਼ਾ ਇਸਤ੍ਰੀ ਦੀ ਕੁੱਖ ਅੰਦਰ ਲੁਕ ਬਹਿੰਦਾ ਹੈ ਤਾਂ ਜ਼ਿੰਦਗੀ ਦੇ ਆਸਾਰ ਨਾਲ ਮਨੁੱਖੀ ਹੋਂਦ ਅਤੇ ਵਜੂਦ ਦੇ ਮੁਕਾਬਲੇ ਦਾ ਸਿਲਸਿਲਾ ਉਸ ਪਲ ਤੋਂ ਅਰੰਭ ਹੋ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਬੇਸ਼ਕ ਮਨੁੱਖ ਦੀ ਸਰੀਰਕ ਹੋਂਦ ਕਾਇਆ, ਹੱਡ, ਚਰਬੀ, ਰਕਤ, ਮਿੱਝ, ਮਾਸ ਤੇ ਮਨੁੱਖੀ ਅੰਗਾਂ ਦੀ ਪ੍ਰਾਣਧਾਰੀ ਏਕਤਾ ਦਾ ਪਰਸਪਰ ਵਰਤਾਰਾ ਹੈ। ਊਰਜਾ ਮਨਫ਼ੀ ਹੋ ਜਾਵੇ ਤਾਂ ਪ੍ਰਾਣਾਂ ਦਾ ਬਲ ਛੁੜਕ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਰਕਤ ਤੇ ਪਾਣੀ ਦਾ ਸੰਚਾਰ ਥੰਮ ਜਾਵੇ ਤਾਂ ਹੱਡਾਂ ਦੀ ਆਪਸੀ ਪਕੜ ਛੁਟਿਆਉਣ ਲਗ ਪੈਂਦੀ ਹੈ। ਮਨੁੱਖੀ ਸਰੀਰਕ ਬਲ ਮਨਫ਼ੀ ਹੋ ਜਾਂਦਾ ਹੈ ਅਤੇ ਮਨੁੱਖ ਕੇਵਲ ਮਿੱਟੀ ਦੀ ਢੇਰੀ, ਪ੍ਰਾਣਹੀਣ, ਮ੍ਰਿਤਕ ਘੋਸ਼ਿਤ ਹੋ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਫਿਰ ਸਵਾਲ ਇਹ ਪੈਦਾ ਹੁੰਦਾ ਹੈ ਕਿ ਆਖਿਰ ਇਸ ਪ੍ਰਾਣਧਾਰੀ ਸਰੀਰ ਦਾ ਸੁਆਮੀ ਕੌਣ ਹੈ ਜੋ ਸਮੁੱਚੇ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਕੇਂਦਰਿਤ ਕਰ ਜੀਵਨ ਦੀ ਸਾਖ ਪ੍ਰਦਾਨ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਇਸ ਦਾ ਜੁਆਬ ਦਿੰਦੀ ਹੈ।

ਕਾਇਆ ਮਹਲੁ ਮੰਦਰੁ ਘਰੁ ਹਰਿ ਕਾ
ਤਿਸੁ ਮਹਿ ਰਾਖੀ ਜੋਤਿ ਆਪਾਰ॥ [3]

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਕੇਵਲ ਪ੍ਰਾਣਧਾਰੀ ਸਰੀਰ ਹੀ ਨਹੀਂ ਦਰਸਾਉਂਦੀ ਬਲਕਿ ਇਸਦੀ ਗੁੰਜਾਇਸ਼ ਪੰਜ ਤੱਤਾਂ ਦੇ ਪਹਿਰਨ ਨੂੰ ਧਾਰਨ ਕਰਦਿਆਂ ਇਸ ਤੋਂ ਵੀ ਪਰੇ ਦੀ ਹੈ।

ਤਨ ਮਹਿ ਮਨੂਆ ਮਨ ਮਹਿ ਸਾਚਾ ਸੋ ਸਾਚਾ ਮਿਲਿ ਸਾਚੇ
ਰਾਚਾ॥ [4]

ਭਾਰਤੀ ਦਰਸ਼ਨਧਾਰਾ[5] ਮਨੁੱਖ ਦੇ ਸੰਕਲਪ ਨੂੰ ਦੋ ਆਧਾਰਾਂ ਬਾਹਰੀਕਰਣ ਤੇ ਅੰਦਰੂਨੀਕਰਨ ਤੇ ਆਧਾਰਿਤ ਬਹੁਪਰਤੀ ਹੋਂਦ[6] ਦੇ ਰੂਪ ਵਿੱਚ ਤਸੱਵਰ ਕਰਦੀ ਹੈ। ਪਰ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਇਸ ਵਾਰਤਾ ਨੂੰ ਅੱਡਰੇ ਢੰਗ ਨਾਲ ਬਿਆਨਦੀ ਹੈ। ਅਸਲ ਵਿੱਚ ਮਨੁੱਖ ਚੇਤਨ ਸਰੂਪ ਹੈ। ਇਹ ਨਾ ਕੇਵਲ ਸਰੀਰ ਅਤੇ ਨਾ ਹੀ ਕੇਵਲ ਮਨ। ਇਹ ਤਾਂ ਸ਼ਾਇਦ ਇਸ ਤੋਂ ਵਧੇਰੇ ਕੁਝ ਹੋਰ ਹੈ, ਜੋ ਅਨੇਕਾਂ ਰੂਪ ਵਿੱਚ ਗੁਆਚਿਆ, ਲੱਭਿਆ ਤੇ ਫਿਰ ਗੁਆਚਿਆ ਹੈ।[7] ਉਛਾੜਾਂ ਉਹਲੇ ਗੁਆਚਿਆ ਮਨੁੱਖ ਆਪਣੇ ਅਸਲੇ ਤੋਂ ਇਸ ਕਦਰ ਭਟਕਿਆ ਕਿ ਅੰਦਰ ਵੇਖਣਹਾਰ ਦੇ ਨਾਲ ਵਾਸਤਾ ਪਾ ਹੀ ਨਾ ਸਕਿਆ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਇਸ ਸੱਚ ਨੂੰ ਸਨਮੁਖ ਕਰਦੀ ਹੈ।

ਐ ਜੀ ਜਨਮਿ ਮਰੈ ਆਵੈ ਫੁਨਿ ਜਾਵੈ ਬਿਨੁ ਗੁਰ ਗਤਿ ਨਹੀ
ਕਾਈ॥
ਗੁਰਮੁਖਿ ਪ੍ਰਾਣੀ ਨਾਮੇ ਰਾਤੇ ਨਾਮੇ ਗਤਿ ਪਤਿ ਪਾਈ॥ [8]

ਅਸਲ ਵਿੱਚ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਮਨੁੱਖੀ ਚੇਤਨਾ ਦੇ ਦੋ ਪਹਿਲੂ ਦਰਸਾਉਂਦੀ ਹੈ - ਇਕ ਸਰੀਰ ਤੇ ਦੂਜੀ ਆਤਮਾ। ਦੋਹਾਂ ਦਾ ਅਸਲਾ ਇੱਕ ਹੈ। ਇਕ ਸਥੂਲ ਹੈ ਤਾਂ ਦੂਜਾ ਸੂਖਮ। ਇਕ ਪ੍ਰਕਿਰਤੀ ਦੀ ਭੂਮਿਕਾ ਦਾ ਅਸਰਅੰਦਾਜ਼ ਕਬੂਲਦਾ ਹੈ ਅਤੇ ਦੂਸਰਾ ਆਤਮ ਤੱਤ ਦਾ ਅਨੁਸਰਣ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਇਕ ਦੈਵੀ ਗੁਣ ਦਾ ਪ੍ਰਤੀਕ ਹੈ ਅਸਲਾ ਹੈ ਅਤੇ ਦੂਸਰਾ ਮਾਦੀ ਤੱਤਾਂ ਦੀ ਅਗਵਾਈ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਅਸਲ ਵਿੱਚ ਆਤਮਾ ਦੇ ਪ੍ਰਾਕਿਰਤਿਕ ਤੱਥਾਂ ਦਾ ਇਹ ਸੰਜੋਗ ਹੀ ਮਾਨਵ ਹੈ, ਅਜਿਹਾ ਮਾਨਵ ਜੋ ਚੇਤਨ ਹੈ। ਇਸ ਮਾਨਵੀ ਚੇਤਨਤਾ ਦੇ ਸੱਚ ਦੀ ਥਾਹ ਪਾਉਣਾ ਹੀ ਮਨੁੱਖਾ ਜਨਮ ਦਾ ਆਦਰਸ਼ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਇਸ ਤੱਥ ਦੀ ਵਿਆਖਿਆ ਕਰਦੀ ਹੈ।

ਇਹੁ ਮਾਨਸ ਜਨਮੁ ਦੁਲੰਭੁ ਸਾ ਮਨਮੁਖ ਸੰਤਾਪੇ॥
ਜਿਸੁ ਆਪਿ ਬੁਝਾਏ ਸੋ ਬੁਝਸੀ ਜਿਸੁ ਸਤਿਗੁਰੁ ਥਾਪੇ॥ [9]

ਹੁਣ ਸਵਾਲ ਇਹ ਹੈ ਕਿ ਜੇਕਰ ਮਨੁੱਖਾ ਜਨਮ ਦੁਰਲੱਭ ਹੈ, ਤਾਂ ਇਹ ਚੇਤਨ ਪ੍ਰਾਣੀ ਵਿਕਾਰਾਂ ਦੀ ਹਨੇਰੀ ਵਿੱਚ ਕਿਵੇਂ ਉਲਝ ਜਾਂਦਾ ਹੈ? ਆਪਣੇ ਅਸਲੇ ਤੋਂ ਮੂੰਹ ਫੇਰਦਿਆਂ ਕਿਵੇਂ ਆਤਮੇ ਅਤੇ ਸਰੀਰ ਅੰਦਰ ਨਿਰੰਤਰ ਵਰਤਦੇ ਨੂੰ ਭੁੱਲ ਜਾਂਦਾ ਹੈ? ਆਖ਼ਰ ਇਸ ਮਿੱਟੀ, ਅਗਨੀ, ਪਉਣ, ਅੱਗ ਤੇ ਖ਼ੁਲਾਅ ਦਰਮਿਆਨ ਦੇ ਵਰਤਾਰੇ ਵਿੱਚ ਅਜਿਹਾ ਕੀ ਵਰਤ ਜਾਂਦਾ ਹੈ, ਜਿਸ ਵਿੱਚ ਉਲਝਿਆ ਮਨੁੱਖ ਆਪਣੀ ਹੋਂਦ ਦੇ ਸੱਚ ਤੋਂ ਕਿਨਾਰਾ ਕਰ ਬੈਠਦਾ ਹੈ। ਜੇ ਇਸ ਨੂੰ ਸਮਝਣਾ ਹੋਵੇ ਤਾਂ ਅਸੀਂ ਇਹ ਕਹਿ ਸਕਦੇ ਹਾਂ ਕਿ ਸਰੀਰ ਤੇ ਆਤਮਾ ਦੋਹਾਂ ਦਰਮਿਆਨ ਦਾ ਵਾਰਤਾਕਾਰ ਮਨ ਹੈ। ਇਹ ਮਨ ਅਸਲ ਵਿੱਚ ਆਤਮੇ ਦਾ ਸਾਖ਼ਿਆਤਕਾਰ ਹੈ।

ਪੰਚ ਤਤੁ ਮਿਲਿ ਕਾਇਆ ਕੀਨੀ॥
ਤਿਸ ਮਹਿ ਰਾਮ ਰਤਨੁ ਲੈ ਚੀਨੀ॥[10]

ਸੰਸਾਰਿਕਤਾ ਦੀ ਧੁੰਦ ਵਿੱਚ ਮਨੁੱਖ ਚੰਚਲ ਮਤ ਦੀ ਅਗਵਾਈ ਵਿੱਚ ਆਪਣੇ ਦੁਆਲੇ ਖਾਹਿਸ਼ਾਂ ਦਾ ਫ਼ਰਜ਼ੀ ਦਾਇਰਾ ਸਿਰਜ ਲੈਂਦਾ ਹੈ। ਇਹ ਫ਼ਰਜ਼ੀ ਦਾਇਰਾ ਸੰਸਾਰਕ, ਮਾਨਸਿਕ ਤੇ ਸਰੀਰਕ ਪਕੜਾਂ ਨਾਲ ਭਰਪੂਰ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਖਾਹਿਸ਼ਾਂ ਤੇ ਗੁੰਜਾਇਸ਼ਾਂ ਦੇ ਇਸ ਫ਼ਰਜ਼ੀ ਦਾਇਰੇ ਵਿੱਚ ਉਲਝਿਆ ਮਨੁੱਖ ਹੌਲੀ-ਹੌਲੀ ਇਸ ਨੂੰ ਅਸਲ ਸਮਝਣ ਦਾ ਭੁਲੇਖਾ ਪਾਲ ਬੈਠਦਾ ਹੈ। ਆਪਣੇ ਅਸਲ ਦਾ ਇਹ ਭੁਲੇਖਾ ਗਿਆਨ ਦੇ ਭਰਮ ਨੂੰ ਜਨਮ ਦਿੰਦਾ ਹੈ। ਇੱਥੇ ਇਹ ਕਹਿਣਾ ਉਚਿੱਤ ਹੈ ਕਿ ਮਨੁੱਖ ਦੇ ਨਿੱਜ ਵਿਚ ਹਉਂ ਦੀ ਪਕੜ ਇਤਨੇ ਗਹਿਰੇ ਤਲ ਤੇ ਵਾਸ ਕਰਦੀ ਹੈ ਕਿ ਉਹ ਰੂਪ ਵਟਾਉਣ ਵਿੱਚ ਵੀ ਪ੍ਰਬੀਨ ਹੋ ਜਾਂਦੀ ਹੈ। ਕਿਉਂਕਿ ਉਹ ਮਨੁੱਖ ਦੇ ਆਪੇ ਸਿਰਜੇ ਹੋਏ ਫਰਜੀ ਦਾਇਰੇ ਤੋਂ ਚੰਗੇਰੀ ਤਰਾਂ ਵਾਕਿਫ਼ ਹੋਣ ਕਾਰਨ ਉਸਦੇ ਸੁਭਾਅ ਨੂੰ ਚੰਗੀ ਤਰਾਂ ਜਾਣਦੀ ਹੋਈ ਉਸਨੂੰ ਧੋਖਾ ਦੇਣ ਵਿੱਚ ਮਾਹਰ ਹੋ ਜਾਂਦੀ ਹੈ।ਇਹ ਫ਼ਰਜ਼ੀ ਦਾਇਰਾ ਵਧੇਰੇ ਖਤਰਨਾਕ ਹੈ, ਕਿਉਂਕਿ ਪਹਿਲਾਂ ਜੋ ਕੇਵਲ 'ਹਉਂ' ਦੀ ਪਕੜ ਨਾਲ ਪੈਦਾ ਹੋਇਆ, ਸਮਾਜਿਕ, ਸਰੀਰਕ ਤੇ ਮਾਨਸਿਕ ਹੋਂਦ ਤੇ ਨਿਰਭਰ ਸੀ, ਹੁਣ ਉਹ ਹੋਂਦ ਦੇ ਨਵੇਂ ਪਸਾਰ, ਗਿਆਨ ਦੇ ਦਾਅਵੇ ਤੇ ਨਿਰਭਰ ਹੋ ਗਿਆ ਹੈ। ਲੋੜ ਇਸ ਦੂਜੇ ਆਪੇ ਦੀ ਪਕੜ ਤੋਂ ਛੁਟਣ ਦੀ ਹੈ।

ਪੜਿ ਥਕੇ ਸੰਤੋਖੁ ਨ ਆਇਓ ਅਨਦਿਨੁ ਜਲਤ ਵਿਹਾਇ॥
ਕੂਕ ਪੁਕਾਰ ਨ ਚੁਕਈ ਨ ਸੰਸਾ ਵਿਚਹੁ ਜਾਇ॥[11]

ਗਿਆਨ ਦੀ ਪਕੜ ਵਾਲਾ ਗਿਆਨੀ ਉਦੋਂ ਛੁੱਟਦਾ ਹੈ, ਜਦੋਂ ਆਤਮ ਗਿਆਨੀ ਪੈਦਾ ਹੁੰਦਾ ਹੈ।

ਆਪੁ ਬੀਚਾਰੇ ਸੁ ਗਿਆਨੀ ਹੋਇ॥[12]

ਇੱਥੇ ਪਹੁੰਚ ਕੇ ਦ੍ਰਿਸ਼, ਦ੍ਰਿਸ਼ਟਾ, ਤੇ ਦਰਸ਼ਨ 'ਚ ਫ਼ਰਕ ਮਿਟ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਤੇ ਆਤਮ ਗਿਆਨੀ, ਅੰਦਰਲੇ ਤੇ ਬਾਹਰਲੇ ਮਨੁੱਖ ਨਾਲ ਵਾਰਤਾਲਾਪ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਇਉਂ ਵਾਰਤਾਲਾਪ ਨਾਲ ਅਨੇਕਾਂ ਪਰਦਿਆਂ (ਬਹੁ ਪਰਤੀ ਹੋਂਦ) ਵਿੱਚ ਗੁਆਚਿਆ ਅਤੇ ਭਰਮਾਂ ਵਿੱਚ ਉਲਝਿਆ ਮਨੁੱਖ ਲੱਭ ਪੈਂਦਾ ਹੈ।

ਫੂਟੋ ਆਂਡਾ ਭਰਮ ਕਾ ਮਨਹਿ ਭਇਓ ਪਰਗਾਸੁ॥
ਕਾਟੀ ਬੇਰੀ ਪਗਹ ਤੇ ਗੁਰਿ ਕੀਨੀ ਬੰਦ ਖਲਾਸੁ॥[13]

ਆਤਮ ਚੀਨਣ ਨਾਲ ਹੀ ਆਪਣੇ ਆਪ ਦੀ ਤਲਾਸ਼ ਸੰਭਵ ਹੈ। ਤੇ ਆਪੇ ਦੀ ਤਲਾਸ਼ ਨਾਲ ਹੀ ਪਰ ਤੇ ਨਿੱਜ ਦੇ ਖੱਪੇ ਨੂੰ ਪੂਰਿਆ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ। ਦੈਵੀ ਰਹਿਮਤ, ਮਿਹਰ, ਨਦਰ ਤੋਂ ਬਿਨਾਂ ਇਸ ਖੱਪੇ ਨੂੰ ਪੂਰਨਾ ਅਸੰਭਵ ਹੈ। ਕਿਉਂਕਿ ਦੈਵੀ ਬਖਸ਼ਿਸ਼ ਤਾਂ ਸਾਡੇ ਹਰ ਸੁਆਸ ਓਹਲੇ ਵਰਤ ਰਹੀ ਹੈ। ਪਰ ਉਸ ਵਰਤਾਰੇ ਨੂੰ ਚੇਤੇ ਰੱਖਦਿਆਂ ਹੀ, ਆਤਮਿਕ ਵਿਕਾਸ ਦੇ ਪੈਡਿਆਂ ਨੂੰ ਸਰ ਕੀਤਾ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ।

(ਜਪੁਜੀ ਸਾਹਿਬ ਵਿੱਚ ਆਏ ਪੰਜ ਖੰਡ-ਧਰਮ ਖੰਡ, ਗਿਆਨ ਖੰਡ, ਕਰਮ ਖੰਡ, ਸਰਮ ਖੰਡ, ਤੇ ਸਚਖੰਡ ਨੂੰ ਆਤਮਿਕ ਵਿਕਾਸ ਦੇ ਪੜਾਅ ਵਜੋਂ ਸਮਝਿਆ ਤੇ ਵਿਚਾਰਿਆ ਜਾਂਦਾ ਹੈ।)

ਧੰਧੈ ਧਾਵਤ ਜਗੁ ਬਾਧਿਆ ਨ ਬੂਝੈ ਵੀਚਾਰੁ॥[14]

ਅਤੇ ਇਹ ਤਬਦੀਲੀ ਮਨੁੱਖ ਦੇ ਅੰਦਰ 'ਹਉਮੈ' ਨੂੰ ਸਿਰਜ ਨੂੰ ਹੋਰ ਪਕੇਰਾ ਕਰ ਦਿੰਦੀ ਹੈ।

ਮਨੁ ਚੰਚਲੁ ਧਾਵਤੁ ਫੁਨਿ ਧਾਵੈ॥
ਸਾਚੇ ਸੂਚੇ ਮੈਲੁ ਨ ਭਾਵੈ॥[15]

ਮਨ ਦੀ ਮੱਤ ਦੇ ਪਿੱਛੇ ਲੱਗਿਆ ਮਾਨਸਿਕ ਜਿਉੜਾ ਇਉਂ ਆਪਣੇ ਅਸਲ ਆਪੇ ਤੋ ਸੰਬੰਧ ਨਿਖੇੜ ਲੈਂਦਾ ਹੈ।

ਮੋਹ ਠਗਉਲੀ ਹਉ ਮੁਈ ਸਾ ਵਰਤੈ ਸੰਸਾਰਿ॥[16]

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਸਾਹਿਬ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਆਪਾ ਸੰਭਾਲਣ ਦੀ ਤਾਕੀਦ ਕਰਦਿਆਂ ਮੁੜ ਆਪਣੇ ਅਸਲੇ ਵੱਲ ਪਰਤ ਆਉਣ ਦਾ ਸੁਨੇਹਾ ਦਿੰਦੇ ਹਨ। ਕਿਉਂਕਿ ਬਿਬੇਕ ਬੁੱਧ ਨੂੰ ਤਿਲਾਂਜਦਿਆਂ, ਮਨ ਦੀ ਮਤ ਨੂੰ ਅਪਨਾਉਣ ਵਾਲਾ ਜਿਉੜਾ ਦਵੈਤ ਦੀ ਸਿਰਜਣਾ ਕਰਦਿਆ ਪਸੂ ਬਿਰਤੀ ਵਾਲਾ ਜੀਵਨ ਜਿਉਣ ਦਾ ਸੰਤਾਪ ਪਾਲਦਾ ਹੈ।

ਤਿਨ ਮੁਖਿ ਨਾਮੁ ਨ ਊਪਜੈ ਦੂਜੈ ਵਿਆਪੈ ਚੋਰ ਜੀਉ॥
ਮੂਲੁ ਨ ਬੁਝਹਿ ਆਪਣਾ ਸੇ ਪਸੂਆ ਸੇ ਢੋਰ ਜੀਉ॥[17]

ਪਸੂ ਬਿਰਤੀ ਵਾਲਾ ਜੀਵਨ ਕੇਵਲ ਮੂਲ-ਪਰਵਿਰਤੀਆਂ ਨੂੰ ਪੂਰਨ ਕਰਨ ਦੀ ਪਹੁੰਚ ਤਕ ਹੀ ਸੀਮਤ ਰਹਿੰਦਾ ਹੈ। ਮਨੁੱਖ ਕਿਉਂਕਿ ਚੇਤਨ ਸਰੂਪ ਜਾਗ੍ਰਿਤ ਮਾਨਵ ਹੈ, ਇਸ ਲਈ ਜ਼ਰੂਰੀ ਹੈ ਕਿ ਉਹ ਗਿਆਨ ਦੀ ਅਗਵਾਈ ਵਿੱਚ ਆਪਣੇ ਆਪ ਨੂੰ ਮੂਲ ਮਨੋਰਥ ਵਲ ਕੇਂਦਰਿਤ ਕਰੇ। ਇਹ ਮੂਲ ਮਨੋਰਥ ਹਉਮੈ ਦੇ ਨਾਸ ਹੋਣ ਨਾਲ ਡਰ, ਮੋਹ, ਲਾਲਚ, ਈਰਖਾ, ਦਵੈਸ਼ ਆਦਿਕ ਦਾ ਤਿਆਗ ਕਰਦਿਆਂ ਸਦਗੁਣਾਂ ਨੂੰ ਧਾਰਨ ਕਰਨ ਦੀ ਪ੍ਰਵਿਰਤੀ ਹੈ।

ਇਹੁ ਮਨੁ ਸਾਚਿ ਸੰਤੋਖਿਆ ਨਦਰਿ ਕਰੇ ਤਿਸੁ ਮਾਹਿ॥
ਪੰਚ ਭੂਤ ਸਚਿ ਭੈ ਰਤੇ ਜੋਤਿ ਸਚੀ ਮਨ ਮਾਹਿ॥[18]

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਹਉਮੈ ਦੇ ਤਿਆਗ ਰਾਹੀਂ ਮਾਨਵ ਜੀਵਨ ਨੂੰ ਸੇਵਾ, ਪਰਉਪਕਾਰ, ਸਿਮਰਨ, ਭਰੋਸੇ ਤੇ ਕੇਂਦਰਿਤ ਕਰਨ ਦਾ ਢੰਗ ਸਿਖਾਲਦੀ ਹੈ।

ਹਉਮੈ ਜਾਈ ਤਾਂ ਕੰਤ ਕਮਾਈ॥
ਤਉ ਕਾਮਨਿ ਪਿਆਰੇ ਨਵ ਨਿਧਿ ਪਾਈ॥[19]

ਹਉਮੈ ਤਿਆਗ ਸਦਕਾ ਮਨੁੱਖ ਸਦਾਚਾਰ ਗੁਣਾਂ ਦਾ ਧਾਰਨੀ ਬਣਦਾ ਹੈ।

ਕਰਿ ਆਚਾਰੁ ਸਚੁ ਸੁਖੁ ਹੋਈ॥[20]

ਸਦਗੁਣਾਂ ਨੂੰ ਧਾਰਨ ਕਰਦਿਆਂ ਹੁਕਮ ਦੀ ਸੋਝੀ ਹੁੰਦੀ ਹੈ। ਹੁਕਮੀ ਬੰਦਾ ਗਿਆਨ ਦੇ ਫੋਕੇ ਦਾਅਵੇ ਨੂੰ ਤਿਆਗ ਦਿੰਦਾ ਹੈ।

ਆਪੁ ਬੀਚਾਰੇ ਸੁ ਗਿਆਨੀ ਹੋਇ॥[21]

ਨਿਮਰਤਾ ਨੂੰ ਧਾਰਨ ਕਰਦਿਆਂ, ਭਰੋਸੇ ਤੇ ਟੇਕ ਰਖਦਿਆਂ ਸਤ ਤੇ ਸੰਤੋਖ ਦਾ ਪਾਤਰ ਬਣਦਾ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਇਸ ਆਤਮਿਕ ਸੁੰਦਰਤਾ ਨੂੰ ਬਿਆਨ ਕਰਦੀ ਹੈ।

ਤੁਧਨੋ ਨਿਵਣੁ ਮੰਨਣੁ ਤੇਰਾ ਨਾਉ॥
ਸਾਚੁ ਭੇਟ ਬੈਸਣ ਕਉ ਥਾਉ॥
ਸਤੁ ਸੰਤੋਖੁ ਹੋਵੈ ਅਰਦਾਸਿ॥
ਤਾ ਸੁਣਿ ਸਦਿ ਬਹਾਲੇ ਪਾਸਿ॥[22]

ਅਜਿਹੀ ਆਚਰਨਕ ਸੁੰਦਰਤਾ ਨੂੰ ਧਾਰਣ ਕਰਨ ਵਾਲਾ ਮਨੁੱਖ ਸੰਸਾਰਕ ਪੱਧਰ ਤੇ ਗੁਰਮੁਖ ਪਦ ਦਾ ਪਾਤਰ ਬਣਦਾ ਹੈ। ਅਜਿਹੇ ਗੁਰਮੁਖ ਜਨ ਹੀ ਸਰਬ-ਵਿਆਪਕ ਸੱਚ ਨਾਲ ਅਭੇਦ ਹੋਣ ਦੀ ਪੂਰਨਤਾ ਪ੍ਰਾਪਤ ਕਰਦੇ ਆਦਰਸ਼ ਮਾਨਵ ਦੀ ਭੂਮਿਕਾ ਨਿਭਾਉਂਦੇ ਹਨ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਅਜਿਹੇ ਸੱਚ ਨੂੰ ਤਸਲੀਮ ਕਰਦੀ ਹੋਈ ਬਿਆਨਦੀ ਹੈ।

ਸਚਾ ਤੇਰਾ ਹੁਕਮੁ ਗੁਰਮੁਖਿ ਜਾਣਿਆ॥
ਗੁਰਮਤੀ ਆਪੁ ਗਵਾਇ ਸਚੁ ਪਛਾਣਿਆ॥
ਸਚੁ ਤੇਰਾ ਦਰਬਾਰੁ ਸਬਦੁ ਨੀਸਾਣਿਆ॥
ਸਚਾ ਸਬਦੁ ਵੀਚਾਰਿ ਸਚਿ ਸਮਾਣਿਆ॥[23]

ਅਜਿਹਾ ਆਦਰਸ਼ ਮਾਨਵ ਸੰਸਾਰ ਵਿਚ ਰਹਿੰਦਿਆਂ ਵੀ ਸੰਸਾਰਿਕਤਾ ਤੋਂ ਨਿਰਲੇਪ ਰਹਿੰਦਾ ਹੈ।

ਜੈਸੇ ਜਲ ਮਹਿ ਕਮਲੁ ਨਿਰਾਲਮੁ ਮੁਰਗਾਈ ਨੈ ਸਾਣੇ॥

ਸੁਰਤਿ ਸਬਦਿ ਭਵ ਸਾਗਰੁ ਤਰੀਐ ਨਾਨਕ ਨਾਮੁ ਵਖਾਣੇ॥[24]

ਆਤਮਿਕ ਵਿਕਾਸ ਤੇ ਪੈਂਡਿਆਂ ਦਾ ਰਾਹੀ[25] ਬਣਦਿਆਂ ਪਰਮ ਆਦਰਸ਼ ਦੀ ਪ੍ਰਾਪਤੀ ਦੇ ਯੋਗ ਹੋ ਜਾਂਦਾ ਹੈ ਅਤੇ ਮੁਕਤ ਮਾਨਸਿਕ ਅਵਸਥਾ ਦਾ ਪਾਤਰ ਬਣਦਾ ਹੈ।

ਨਿਰਮਲ ਜੋਤਿ ਤਿਨ ਪ੍ਰਾਣੀਆ
ਓਇ ਚਲੇ ਜਨਮ ਸਵਾਰਿ ਜੀਓ॥[26]

ਹਵਾਲੇ ਤੇ ਟਿੱਪਣੀਆਂ

1. ਰਾਗ ਮਾਰੂ, ਮ: 1, ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ, ਪੰਨਾ 1024.
2. ਸਿਰੀਰਾਗੁ, ਮ: 1, ਘਰ 2, ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 64.
3. ਰਾਗ ਮਲਾਰ ਮ: 1, ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 1256.
4. ਰਾਗ ਧਨਾਸਰੀ, ਮ: 1, ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 686.
5. ਛਿਅ ਘਰ ਛਿਅ ਗੁਰ ਛਿਅ ਉਪਦੇਸ॥
   ਰਾਗ ਆਸਾ ਮ: 1, ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ, ਪੰਨਾ 12.
6. ''ਮਨੁੱਖ ਇਕ ਬਹੁਪਰਤੀ ਹੋਂਦ ਹੈ, ਕਈ ਉਛਾੜਾ ਵਿੱਚ ਲਪੇਟੀ ਹੋਈ।
   ਅਨੇਕਾਂ ਉਛਾੜ ਇਸਦੀ ਹਕੀਕਤ ਉਪਰ ਪਰਦਾ ਪਾ ਕੇ ਇਸਨੂੰ ਲੁਕੋਈ ਬੈਠੇ ਹਨ।''
   ਡਾ. ਜਸਵੰਤ ਸਿੰਘ ਨੇਕੀ, ਗੁਰਮਤਿ ਮਨੋਵਿਗਿਆਨ, ਪੰਨਾ 11.
7. ਕਈ ਜਨਮ ਭਏ ਕੀਟ ਪਤੰਗਾ॥ ਕਈ ਜਨਮ ਗਜ ਮੀਨ ਕੁਰੰਗਾ॥
   ਕਈ ਜਨਮ ਪੰਖੀ ਸਰਪ ਹੋਇਓ॥ ਕਈ ਜਨਮ ਹੈਵਰ ਬ੍ਰਿਖ ਜੋਇਓ॥
   ਰਾਗ ਗਉੜੀ ਗੁਆਰੇਰੀ, ਮ: 5, ਸ੍ਰੀ ਗੁਰ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ, ਪੰਨਾ 176.
8. ਰਾਗ ਗੂਜਰੀ, ਮ: 1, ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 504.
9. ਮ: 1, ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 789.
10. ਰਾਗ ਮਾਰੂ, ਮ: 1, ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 1030.
11. ਮ: 3, ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 647.
12. ਰਾਗ ਗਉੜੀ, ਮ: 1, ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 152.
13. ਰਾਗ ਮਾਰੂ ਮ: 5, ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 1002.
14. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 1010.
15. ਰਾਗ ਗਉੜੀ ਗੁਆਰੇਰੀ, ਮ: 1, ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 222.
16. ਸਿਰੀਰਾਗ, ਮ: 1, ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 61.
17. ਰਾਗ ਸੂਹੀ, ਮ: 1, ਘਰ 1, ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 751.
18. ਸਿਰੀਰਾਗ, ਮ: 1, ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 19.
19. ਰਾਗ ਸੂਹੀ, ਮ: 1, ਅਸਟਪਦੀਆਂ, ਘਰ 1, ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 750.
20. ਰਾਗ ਰਾਮਕਲੀ, ਮ: 1, ਦੱਖਣੀ, ਉਅੰਕਾਰ, ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 931.
21. ਰਾਗ ਗਉੜੀ, ਮ: 1, ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 152.
22. ਰਾਗ ਰਾਮਕਲੀ, ਮ: 1, ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 878.
23. ਮ: 1, ਪਉੜੀ, ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 144.
24. ਰਾਗ ਰਾਮਕਲੀ, ਮ: 1, ਸਿਧ ਗੋਸਟਿ, ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 938.
25. ਜਪੁਜੀ ਸਾਹਿਬ ਵਿਚ ਪੰਜਾਂ ਖੰਡਾ-ਧਰਮ ਖੰਡ, ਗਿਆਨ ਖੰਡ, ਕਰਮ ਖੰਡ, ਸਰਮ ਖੰਡ ਤੇ ਸਚਖੰਡ ਨੂੰ ਆਤਮਿਕ ਵਿਕਾਸ ਦੇ ਪੈਡਿਆਂ ਵਜੋਂ ਸਮਝਿਆ ਗਿਆ ਹੈ।
26. ਸਿਰੀ ਰਾਗ ਮ: 1, ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 73.

ਸਮਕਾਲੀ ਚਿੰਤਨ ਅੰਦਰ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਦੀ ਪ੍ਰਾਸੰਗਿਕਤਾ

ਪਰਮਿੰਦਰ ਸਿੰਘ

ਪਹਿਲੇ ਵਿਸ਼ਵ ਯੁੱਧ ਦੌਰਾਨ ਲਿਖੀ ਗਈ ਆਪਣੀ ਸੰਸਾਰ ਪ੍ਰਸਿੱਧ ਕਿਤਾਬ "The Decline of the West" ਅੰਦਰ ਨਾਮਵਰ ਚਿੰਤਕ ਓਸਵਾਲਡ ਸਪੈਂਗਲਰ ਨੇ ਇਹ ਐਲਾਨ ਕੀਤਾ ਸੀ ਕਿ ਜਿਸ ਦੌਰ ਅੰਦਰ ਅਸੀਂ ਹੁਣ ਰਹਿ ਰਹੇ ਹਾਂ, ਉਸ ਦੌਰ ਵਿਚ ਪੱਛਮੀ ਸੰਸਕ੍ਰਿਤੀ ਅਤੇ ਇਸ ਦੇ ਪ੍ਰਬਲ ਮੁੱਲਾਂ ਦਾ ਅੰਤ ਹੋਣ ਜਾ ਰਿਹਾ ਹੈ। ਇਸ ਦਾ ਪ੍ਰਮੁੱਖ ਕਾਰਨ ਬਿਆਨਦੇ ਹੋਏ ਉਹ ਆਖਦੇ ਹਨ ਕਿ ਹੁਣ ਮਨੁੱਖੀ ਸਮਾਜ ਨੂੰ ਇਕ ਸੂਤਰ ਵਿਚ ਬੰਨ੍ਹਣ ਵਾਲੀਆਂ ਪਰੰਪਰਾਵਾਂ ਅਤੇ ਬੰਧਨ ਟੁੱਟ ਰਹੇ ਹਨ ਤੇ ਨਾਲ ਹੀ ਵਿਚਾਰ ਅਤੇ ਸਭਿਅਤਾ ਦੀ ਏਕਤਾ ਸਹਿਤ ਜੀਵਨ ਦੀਆਂ ਏਕਾਤਮਿਕਤਾਵਾਂ ਵੀ ਬਿਖ਼ਰ ਰਹੀਆਂ ਹਨ। ਇਸ ਦੇ ਨਾਲ ਹੀ ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਇਹ ਸਥਾਪਨਾ ਵੀ ਕੀਤੀ ਕਿ ਆਪਣੇ ਸੁਭਾਵਿਕ ਚੱਕਰ ਵਿਚੋਂ ਗੁਜ਼ਰਨ ਵਾਲੀ ਹਰ ਹੋਰ ਸੰਸਕ੍ਰਿਤੀ ਦੇ ਸਮਾਨ ਹੀ ਪੱਛਮ ਵੀ ਆਪਣੇ 'ਪ੍ਰਬੋਧਨ' ਜਾਂ 'ਪੁਨਰ-ਜਾਗਰਣ' ਦੇ ਸਰਦ-ਕਾਲ[1] ਵਿਚੋਂ ਲਾਜ਼ਮੀ ਰੂਪ ਵਿਚ ਨਿੱਕਲ ਕੇ ਵਿਅਕਤੀਵਾਦ ਅਤੇ ਸੰਸਕ੍ਰਿਤਕ ਨਾਸਿਤਵਾਦ ਅੰਦਰ ਆ ਗਿਆ ਹੈ।

ਇਸ ਸਥਾਪਨਾ ਦੇ ਤਕਰੀਬਨ ਚਾਰ ਦਹਾਕੇ ਬਾਅਦ ਸੀ. ਰਾਈਟ ਮਿਲਜ਼ ਨੇ ਘੋਸ਼ਣਾ ਕੀਤੀ ਸੀ ਕਿ ਅਸੀਂ ਆਧੁਨਿਕ ਯੁਗ ਦੇ ਅੰਤ ਦੀ ਕਾਗ਼ਾਰ ਉੱਪਰ ਹਾਂ।[2] ਅਜਿਹਾ ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਇਸ ਲਈ ਆਖਿਆ ਸੀ ਕਿ ਇਸ ਯੁਗ ਦਾ ਸਥਾਨ ਉਤਰਆਧੁਨਿਕ ਕਾਲ ਲੈ ਰਿਹਾ ਹੈ। ਜਿਸ ਅੰਦਰ ਉਹ ਇਤਿਹਾਸਕ ਉਮੀਦਾਂ, ਜਿਹੜੀਆਂ ਕਿ 'ਪੱਛਮੀ ਸਭਿਅਤਾ' ਨੂੰ ਪਰਿਭਾਸ਼ਿਤ ਕਰਦੀਆਂ ਰਹੀਆਂ ਹਨ, ਹੁਣ ਪ੍ਰਾਸੰਗਿਕ ਨਹੀਂ ਰਹਿ ਗਈਆਂ ਹਨ। ਜਿਸ ਦੇ ਕਾਰਨ ਹੀ ਤਰਕ ਅਤੇ ਸੁਤੰਤਰਤਾ ਦੀ ਸੰਯੁਕਤ ਪ੍ਰਣਾਲੀ ਅੰਦਰ ਪ੍ਰਬੋਧਨ ਸਿਧਾਂਤ ਅਤੇ ਇਸ ਸਿਧਾਂਤ ਅੰਦਰ ਸ਼ਾਮਲ ਦੋ ਹੋਰਨਾਂ ਪ੍ਰਮੁੱਖ ਸਿਧਾਂਤਾਂ- ਉਦਾਰਵਾਦ ਅਤੇ ਸਮਾਜਵਾਦ 'ਵਿਸ਼ਵ ਦੇ ਵੱਲ ਸਾਡੀ ਲੋੜੀਂਦੀ ਵਿਆਖਿਆ ਨੂੰ ਕਰ ਪਾਉਣ ਵਿਚ ਅਸਫ਼ਲ ਹੋ ਗਏ ਹਨ।' ਜਿਸ ਦਾ ਅਰਥ ਇਹ ਨਿੱਕਲਦਾ ਹੈ ਕਿ ਇਸ ਸਮਾਜ ਅੰਦਰ ਜੇ. ਐੱਸ. ਮਿਲ ਅਤੇ ਕਾਰਲ ਮਾਰਕਸ ਦੋਵੇਂ ਹੀ ਹੁਣ ਸਾਮਾਨ ਰੂਪ ਵਿਚ ਵੇਲਾ ਵਿਹਾਅ ਚੁੱਕੇ ਹਨ। ਹਾਲਾਂਕਿ ਮਾਰਕਸ ਦੀਆਂ ਸਿਧਾਂਤਕ ਪਛਾਣਾਂ ਨਵ-ਬਸਤੀਵਾਦ, ਨਵ-ਸਾਮਾਰਜਵਾਦ ਜਾਂ ਪੂੰਜੀਵਾਦ ਦੇ ਲਗਾਤਾਰ ਡੂੰਘੇ ਹੋ ਰਹੇ ਸੰਕਟਾਂ ਦੇ ਸਨਮੁੱਖ ਅਜੇ ਵੀ ਆਪਣੀ ਇਤਿਹਾਸਕ ਭੂਮਿਕਾ ਨੂੰ ਨਿਭਾਉਣ ਦੀ ਸਿਧਾਂਤਕ ਵਿਆਖਿਆ ਜ਼ਰੂਰ ਰੱਖਦੀਆਂ ਹਨ, ਪਰ ਵਿਵਹਾਰਿਕਤਾ ਅੰਦਰ ਸੋਵੀਅਤ ਸੰਘ ਨੇ ਵਿਘਟਨ ਨੇ ਇਸ ਸਿਧਾਂਤ ਦੀਆਂ ਅਮਲੀਕਰਨ ਸੰਬੰਧੀ ਭੂਮਿਕਾਵਾਂ ਉੱਪਰ ਇਕ ਵੱਡਾ ਪ੍ਰਸ਼ਨ-ਚਿੰਨ੍ਹ ਵੀ ਲਗਾਇਆ ਹੈ। ਜਿਸ ਨੂੰ ਕਿ ਅਸੀਂ ਫ੍ਰੈਂਚ ਚਿੰਤਕ ਯਾੱਕ ਦੈਰਿਦਾ, ਮਿਸ਼ੈਲ ਫ਼ੂਕੋ ਅਤੇ ਟੈਰੀ ਈਗਲਟਨ ਤੋਂ ਇਲਾਵਾ ਨਵ-ਮਾਰਕਸਵਾਦ ਦੇ ਸਿਧਾਂਤਕ ਪ੍ਰਬੰਧ ਵਿਚੋਂ ਆਸਾਨੀ ਨਾਲ ਦੇਖ ਸਕਦੇ ਹਾਂ। ਭਾਵੇਂਕਿ ਟੈਰੀ ਆਪਣੀ ਕਿਤਾਬ "After Theory" ਅੰਦਰ ਇਸ ਗੱਲ ਨੂੰ ਉਭਾਰਦੇ ਹਨ ਕਿ ਜਿਸ ਕਾਲ ਅੰਦਰ ਅਸੀਂ ਹੁਣ ਰਹਿ ਰਹੇ ਹਾਂ, ਇਸ ਕਾਲ ਵਿਚ 'ਥਿਊਰੀ' ਦਾ ਸੁਨਿਹਰੀ ਸਮਾਂ ਗੁਜ਼ਰ ਚੁੱਕਾ ਹੈ, ਜਿਸ ਕਾਰਨ ਦੈਰਿਦਾ ਦਾ ਚਿੰਤਨ ਹੁਣ ਕੋਈ ਬਹੁਤੀ ਅਹਿਮੀਅਤ ਨਹੀਂ ਰੱਖਦਾ, ਪਰ ਇਸ ਨਾਲ ਇਕ ਹੋਰ ਗੱਲ ਇਹ ਵੀ ਸਪਸ਼ਟ ਹੁੰਦੀ ਹੈ ਕਿ ਇਸ ਯੁਗ ਅੰਦਰ ਮਨੁੱਖ ਦੀਆਂ ਅੰਦਰੂਨੀ ਅਤੇ ਬਾਹਰੀ ਜ਼ਰੂਰਤਾਂ ਅਤੇ ਉਦੇਸ਼ਾਂ ਦੀ ਪੂਰਤੀ ਹਿਤ ਕਿਸੇ ਪ੍ਰਕਾਰ ਦਾ ਕੋਈ ਹੋਰ ਚਿੰਤਨ-ਪ੍ਰਬੰਧ ਵੀ ਆਪਣੀ ਮਹੱਤਤਾ ਦਰਸਾਉਣ ਵਿਚ ਅਸਫ਼ਲ ਸਾਬਤ ਹੋਇਆ। ਸ਼ਾਇਦ ਇਸੇ ਲਈ ਟੈਰੀ ਆਪਣੀ ਆਸਥਾ ਨੂੰ ਮਾਰਕਸਵਾਦ ਤੋਂ ਪਰ੍ਹੇ ਲਿਜਾਂਦੇ ਹੋਏ, ਕੈਥੋਲਿਕ ਈਸਾਈਅਤ ਨਾਲ ਜੋੜਦੇ ਹਨ। ਜਿਹੜੀ ਕਿ ਸ਼ਾਇਦ ਉਨ੍ਹਾਂ ਅਨੁਸਾਰ, "After Theory" ਤੋਂ ਪਾਰਲੀ ਅਵਸਥਾ ਦਾ ਇਕ ਸਰਬੋਤਮ ਕੇਂਦਰ ਸਾਬਤ ਹੋ ਸਕਦੀ ਹੈ, ਪਰ ਟੈਰੀ ਦੀ ਇਸ ਮਾਨਤਾ ਤੋਂ ਇਨਕਾਰੀ ਚਿੰਤਕਾਂ ਦਾ ਇਹ ਖ਼ਿਆਲ ਹੈ ਕਿ ਜਿਸ ਸੰਸਾਰ ਅੰਦਰ ਅਸੀਂ ਮੌਜੂਦਾ ਸਮਿਆਂ ਵਿਚ ਵਿਚਰ ਰਹੇ ਹਾਂ, ਉਹ ਪੂਰੀ ਤਰ੍ਹਾਂ ਉਸ ਦੌਰ ਦੀ ਇਕ ਭਰਵੀਂ ਤਸਵੀਰ ਪੇਸ਼ ਕਰਦਾ ਹੈ, ਜਿਸ ਨੂੰ 'ਵਿਗਿਆਨਮਈ ਜਗਤ' ਦਾ ਨਾਮ ਦਿੱਤਾ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ।

ਹਾਲਾਂਕਿ ਇਸ 'ਕਲਪਨਾਮਈ ਵਿਗਿਆਨਕ ਜਗਤ' ਦੀ ਸਮਕਾਲੀ ਚਿੰਤਨ ਅੰਦਰ ਮਾਨਵਤਾ ਪ੍ਰਤੀ ਨਿਭਾਈ ਜਾਣ ਵਾਲੀ ਭੂਮਿਕਾ ਉਸ ਸਮੇਂ ਰੱਦ ਹੋ ਕੇ ਰਹਿ ਜਾਂਦੀ ਹੈ, ਜਿਸ ਵਕਤ ਸੰਸਾਰ ਪ੍ਰਸਿੱਧ ਲੇਖਕ ਜੇ. ਡੀ. ਬਰਨਾਲ ਆਪਣੀ ਪੁਸਤਕ "The Social Function of Science" ਵਿਚ ਇਸ ਗੱਲ ਦੀ ਪ੍ਰੋੜ੍ਹਤਾ ਕਰਦੇ ਹਨ ਕਿ ਵਿਗਿਆਨ ਦਾ ਇਸਤੇਮਾਲ ਆਸਾਨੀ ਨਾਲ ਵਿਨਾਸ਼ ਅਤੇ ਬਰਬਾਦੀ ਦੇ ਉਦੇਸ਼ਾਂ ਦੀ ਪੂਰਤੀ ਲਈ ਕੀਤਾ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ, ਕਿਉਂਕਿ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੀ ਇਹ ਸਪਸ਼ਟ ਮਾਨਤਾ ਹੈ ਕਿ ਵਿਗਿਆਨ ਹੁਣ ਖ਼ੁਸ਼ਹਾਲ ਮਾਲਕਾਂ ਦੇ ਸਮਰਥਨ ਨਾਲ ਚੱਲਣ ਵਾਲਾ ਇਕ ਉਦਯੋਗ ਬਣ ਚੁੱਕਾ ਹੈ। ਜਿਸ ਵਿਚੋਂ ਨਿਰਸੰਦੇਹ ਕਦੀ ਵੀ ਮੁਨਾਫ਼ਾ ਰਹਿਤ ਮਨੁੱਖੀ ਹਿਤਾਂ ਦੀ ਸਾਧਨਾ ਦਾ ਭਾਵ ਪੈਦਾ ਨਹੀਂ ਹੋ ਸਕਦਾ।[3] ਇਸ ਸਭ ਨੂੰ ਵੇਖਦੇ ਹੋਏ ਹੀ ਬਰਨਾਲ ਇਸ ਨਤੀਜੇ 'ਤੇ ਪੁੱਜਦੇ ਹਨ ਕਿ ਵਿਗਿਆਨ ਖ਼ੁਦ ਪਹਿਲੀ ਵਾਰ ਪੁਨਰ-ਜਾਗਰਣ ਕਾਲ ਤੋਂ ਬਾਅਦ ਖ਼ਤਰੇ ਵਿਚ ਨਜ਼ਰ ਆ ਰਿਹਾ ਹੈ। ਇਸ ਲਈ ਸਾਡਾ ਮੰਨਣਾ ਹੈ ਕਿ ਉਤਰਆਧੁਨਿਕ ਚਿੰਤਨ ਪ੍ਰਬੰਧ ਤੱਕ ਪ੍ਰਾਪਤ ਸਮੂਹ ਵਿਚਾਰ-ਦ੍ਰਿਸ਼ਟੀਆਂ ਅਤੇ ਵਿਗਿਆਨ ਦੀਆਂ ਸਮਕਾਲੀ ਭੂਮਿਕਾਵਾਂ ਦੇ ਸਨਮੁੱਖ ਅਜੋਕੇ ਮਨੁੱਖ ਦੀ ਸਭ ਤੋਂ ਵੱਡੀ ਸਮੱਸਿਆ ਇਹ ਬਣ ਚੁੱਕੀ ਹੈ ਕਿ ਹੁਣ ਉਸ ਕੋਲ ਅਜਿਹਾ ਕਿਹੜਾ ਮਾਰਗ ਬਾਕੀ ਰਹਿ ਗਿਆ ਹੈ, ਜਿਸ ਦੇ ਰਾਹੀਂ ਸੰਸਾਰ ਦੇ ਨਵ-ਨਕਸ਼ਾਂ ਦੀ ਸਿਰਜਣਾ ਹਿਤ ਉਹ ਆਪਣੇ ਕਦਮ ਵਧਾ ਸਕਦਾ ਹੈ। ਅਜਿਹੇ ਚਿੰਤਨਸ਼ੀਲ ਸਮਿਆਂ ਅੰਦਰ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਦਾ ਆਪਣਾ ਇਕ ਮਹੱਤਵਪੂਰਨ ਰੋਲ ਸਾਡੇ ਸਾਹਮਣੇ ਆਉਂਦਾ ਹੈ।

ਜਿਸ ਦਾ ਬਹੁ-ਆਯਾਮੀ ਦ੍ਰਿਸ਼ਟੀ ਅਧੀਨ ਕੀਤਾ ਗਿਆ ਵਿਸਤ੍ਰਿਤ ਅਧਿਐਨ ਇਸ ਗੱਲ ਦੀ ਭਰਪੂਰ ਸ਼ਾਹਦੀ ਭਰਦਾ ਹੈ ਕਿ ਸਭਿਅਤਾਵਾਂ, ਵਾਦਾਂ, ਗਿਆਨ-ਪਾਠਾਂ ਅਤੇ ਹਿਤਾਂ ਦੇ ਟਕਰਾਅ ਭਰੇ ਇਸ ਸਮਕਾਲੀ ਦੌਰ ਅੰਦਰ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਆਪਣੀ ਗਿਆਨ-ਮੂਲਕ ਪ੍ਰਤੀਨਿਧਤਾ ਦੇ ਰਾਹੀਂ ਸੰਸਾਰ ਨੂੰ ਇਕ ਅਜਿਹੀ ਅਰਥ-ਸਾਰਥਿਕਤਾ ਵੱਲ ਲੈ ਤੁਰਦੀ ਹੈ, ਜਿਸ ਦੇ ਨਤੀਜ਼ੇ ਵਜੋਂ ਪ੍ਰਗਟ ਹੋਣ ਵਾਲੀ 'ਗੁਰਮੁਖ' ਦੀ ਚਿਰਕਾਲੀ ਪ੍ਰਾਸੰਗਿਕਤਾ ਦਾ ਸਿਧਾਂਤਕ ਅਤੇ ਵਿਵਹਾਰਕ ਅਮਲ, ਮਨੁੱਖੀ ਤਰਜ਼ੇ-ਜ਼ਿੰਦਗੀ ਦੀਆਂ ਬਹੁ-ਪੱਖੀ ਸੰਰਚਨਾਵਾਂ ਨੂੰ ਇਕ 'ਵਿਸਮਾਦੀ' ਅਧਾਰ ਪ੍ਰਦਾਨ ਕਰਦਾ ਹੋਇਆ, ਵਿਸ਼ਵ-ਭਾਈਚਾਰੇ ਦੀਆਂ ਨਵ-ਸਥਾਪਨਾਵਾਂ ਵੱਲ ਤੁਰਦਾ ਹੈ।

ਇਨ੍ਹਾਂ ਨਵ-ਸਥਾਪਨਾਵਾਂ ਦੇ ਰਾਹ ਉੱਪਰ ਅਸੀਂ ਵੇਖਦੇ ਹਾਂ ਕਿ ਆਧੁਨਿਕ ਪੱਛਮੀ ਗਿਆਨ-ਸ਼ਾਸਤਰ ਦੀਆਂ ਉਪਭੋਗਮਈ ਪ੍ਰਵਿਰਤੀਆਂ ਦੀ ਬਦੌਲਤ ਹੋਂਦ ਵਿਚ ਆਏ ਸਮੂਹ ਗਿਆਨ-ਅਨੁਸ਼ਾਸਨਾਂ ਤੋਂ ਪ੍ਰਭਾਵਿਤ ਸਮਕਾਲੀ ਗਿਆਨ-ਪ੍ਰਬੰਧ ਅਤੇ ਚਿੰਤਨ ਦੁਆਰਾ 'ਧਰਮ' ਦੀ ਪ੍ਰਾਸੰਗਿਕਤਾ ਤੋਂ ਇਨਕਾਰੀ ਹੋਣ ਦੇ ਜਿਸ ਰੁੱਖੇ ਅਮਲ ਦੀ ਚਰਚਾ ਨੂੰ ਆਪਣਾ ਕੇਂਦਰ ਬਣਾਉਂਦੇ ਹੋਏ, ਯੂਟੋਪੀਅਨ ਪਰਿਕਲਪਨਾਵਾਂ ਦੇ ਆਧਾਰ 'ਤੇ ਮਨੁੱਖੀ ਸਿਰਜਣਾ ਦੇ ਨਵ-ਨਕਸ਼ ਉਭਾਰਨ ਦੀਆਂ ਕੋਸ਼ਿਸ਼ਾਂ ਕੀਤੀਆਂ ਜਾ ਰਹੀਆਂ ਹਨ, ਉਨ੍ਹਾਂ ਕੋਸ਼ਿਸ਼ਾਂ ਵਿਚੋਂ ਮਨਫ਼ੀ ਹੋਏ ਦਮਿਤ ਮਨੁੱਖ ਦੇ ਹਿਤ ਦੀ ਅਹਿਮੀਅਤ ਨੂੰ ਦ੍ਰਿੜਾਉਂਦੇ ਹੋਏ, ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਸਾਹਿਬ ਦੁਆਰਾ ਜਿਸ ਵਕਤ *"ਵਿਦਿਆ ਵਿਚਾਰੀ ਤਾ ਪਰਉਪਕਾਰੀ"*[5] ਦਾ ਵਿਚਾਰ ਸਾਹਮਣੇ ਲਿਆਂਦਾ ਜਾਂਦਾ ਹੈ, ਉਸ ਵਕਤ ਉਹ ਸਾਡੇ ਸਮੁੱਚੇ ਅਜੋਕੇ ਗਿਆਨ-ਸ਼ਾਸਤਰਾਂ ਦੀ ਭੂਮਿਕਾ ਉੱਪਰ ਇਕ ਵੱਡਾ ਪ੍ਰਸ਼ਨ-ਚਿੰਨ੍ਹ ਲਗਾਉਂਦੇ ਹਨ, ਕਿਉਂਕਿ ਉਤਰਆਧੁਨਿਕ ਕਾਲ ਦੀਆਂ ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਦ੍ਰਿਸ਼ਟੀਆਂ ਦੀ ਬਦੌਲਤ ਆਧੁਨਿਕ ਮਨੁੱਖ ਆਪਣੀਆਂ ਵਿਅਕਤੀਗਤ ਸੀਮਾਵਾਂ ਤੱਕ ਮਹਿਦੂਦ ਹੋ ਕੇ ਰਹਿ ਗਿਆ ਹੈ, ਉਸ ਨੇ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਜਿਸ ਪ੍ਰਕਾਰ ਮਨੁੱਖ ਵੱਲੋਂ ਵਿਯੋਗਿਆ ਹੈ, ਗਿਆਨ ਦਾ ਆਧੁਨਿਕ-ਪ੍ਰਬੰਧ ਉਸ ਵਿਯੋਗਤਾ ਨੂੰ ਹੋਰ ਡੂੰਘੇਰਾ ਕਰਦਾ ਹੋਇਆ, ਬੇਹੱਦ ਗੁੰਝਲਦਾਰ ਬਣਾ ਸੁੱਟਦਾ ਹੈ। ਇਸ ਲਈ ਅਜਿਹਾ ਵਿਸ਼ਵਾਸ਼ ਪ੍ਰਗਟਾਇਆ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ ਕਿ ਗਿਆਨ ਦੀਆਂ ਇਨ੍ਹਾਂ ਵਿਅਕਤੀਗਤ ਹਿਤਕਾਰੀ ਭੂਮਿਕਾਵਾਂ ਨੂੰ ਉਸੇ ਸਮੇਂ ਹੀ ਸਹੀ ਮਾਰਗ ਹਾਸਲ ਹੋ ਸਕਦਾ ਹੈ, ਜਦੋਂ ਗਿਆਨ ਦੀ ਅਜੋਕੀ ਵਿਵਹਾਰਿਕਤਾ ਨਾਲ ਮਨੁੱਖੀ ਪਰਉਪਕਾਰ ਦੇ ਵਿਸਮਾਦੀ ਚਿੰਤਨ ਦਾ ਸੁਮੇਲ ਨਹੀਂ ਹੋ ਜਾਂਦਾ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਦੇ ਇਸ ਪ੍ਰਗਟਾਅ ਮੁਤਾਬਿਕ ਗਿਆਨ ਅਤੇ ਪਰਉਪਕਾਰਤਾ ਦਾ ਇਹ ਸੁਮੇਲ ਹੀ ਮਨੁੱਖੀ ਸਮਾਜ ਦੇ ਹਰ ਇਕ ਕਾਲ ਅੰਦਰ ਗਿਆਨ ਦੀਆਂ ਭੂਮਿਕਾਵਾਂ ਦਾ ਅਸਲ ਮਨੋਰਥ ਪ੍ਰਗਟ ਕਰਨ ਵਿਚ ਸਹਾਇਕ ਸਿੱਧ ਹੋ ਸਕਦਾ ਹੈ। ਇਸ ਲਈ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਸਾਹਿਬ ਦੀ ਇਹ ਮਾਨਤਾ ਹੈ ਕਿ ਜਦੋਂ ਤੱਕ ਮਨੁੱਖੀ ਅਮਲ ਗਿਆਨ ਅਤੇ ਉਸ ਦੁਆਰਾ ਪ੍ਰਗਟ ਨੈਤਿਕ ਵਿਵਹਾਰ ਨੂੰ ਮਨੁੱਖੀ ਆਚਰਣ ਦਾ ਇਕ ਦ੍ਰਿੜ ਅੰਗ ਬਣਾ ਕੇ ਸਾਹਮਣੇ ਨਹੀਂ ਲਿਆਂਦਾ ਜਾਂਦਾ, ਉਸ ਵਕਤ ਤੱਕ ਸਾਡੀ ਹਾਲਤ ਕੁਝ ਇਸ ਪ੍ਰਕਾਰ ਦੀ ਹੀ ਰਹੇਗੀ:

ਗਲੀ ਅਸੀ ਚੰਗੀਆ ਆਚਾਰੀ ਬੁਰੀਆਹ॥
ਮਨਹੁ ਕੁਸੁਧਾ ਕਾਲੀਆ ਬਾਹਰਿ ਚਿਟਵੀਆਹ॥[6]

ਸੰਸਾਰ ਚਿੰਤਨ ਦੀਆਂ ਸਮਕਾਲੀ ਭੂਮਿਕਾਵਾਂ ਅੰਦਰ ਚਿੰਤਨ ਅਤੇ ਵਿਹਾਰ ਦੀ ਜਿਸ ਖਾਈ ਦੀ ਬਦੌਲਤ ਮਨੁੱਖੀ ਚੇਤਨਾ ਆਪਣੀ ਕਰੂਪਤਾ ਨੂੰ ਪ੍ਰਗਟ ਕਰਦੀ ਹੋਈ ਨਜ਼ਰ ਪੈਂਦੀ ਹੈ, ਉਸ ਖਾਈ ਨੂੰ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਦਾ ਉਪਰੋਕਤ ਕਥਨ ਭਲੀ-ਭਾਂਤ ਭਰਨ ਦੀ ਸਮਰੱਥਾ ਰੱਖਦਾ ਹੈ। ਇਸ ਵਿਚ ਕੋਈ ਦੋ ਰਾਵਾਂ ਨਹੀਂ ਕਿ ਉਤਰਆਧੁਨਿਕ ਕਾਲ ਤੱਕ ਦਾ ਸਾਡਾ ਚਿੰਤਨ ਜਿਸ ਪ੍ਰਕਾਰ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਉਪਭੋਗਤਾ ਦਾ ਸ਼ਿਕਾਰ ਬਣਾ ਕੇ, ਨੈਤਿਕ ਅਮਲ ਤੋਂ ਵਾਂਝਾ ਰੱਖਣ ਵਿਚ ਸਫ਼ਲ ਹੋ ਰਿਹਾ ਹੈ, ਉਸ ਦੀ ਬਦੌਲਤ ਕਾਫ਼ੀ ਹੱਦ ਤੱਕ ਇਕ ਅਜਿਹੇ ਮਨੁੱਖ ਦਾ ਨਿਰਮਾਣ ਹੋ ਚੁੱਕਾ ਹੈ, ਜਿਸ ਅੰਦਰ ਨੈਤਿਕ ਅਮਲ ਅਤੇ ਸ਼ਿਸ਼ਟਾਚਾਰ ਦੀਆਂ ਮਾਨਵੀ ਭਾਵਨਾਵਾਂ ਦੀ ਇਕ ਭਰਪੂਰ ਅਣਹੋਂਦ ਪਾਈ ਜਾ ਰਹੀ ਹੈ। ਜਿਸ ਨੂੰ ਕਿ ਪੂੰਜੀਵਾਦੀ ਅਰਥ-ਵਿਵਸਥਾ ਦੀਆਂ ਲਾਲਸਾਮਈ ਨੀਤੀਆਂ ਨੇ ਹੋਰ ਵਧੇਰੇ ਡੂੰਘਾ ਕਰਨ ਵਿਚ ਆਪਣਾ ਇਕ ਅਹਿਲ ਰੋਲ ਅਦਾ ਕੀਤਾ ਹੋਇਆ ਹੈ। ਇਸ ਦੇ ਸਿੱਟੇ ਵਜੋਂ ਹੀ ਮਨੁੱਖ ਆਪਣੇ ਨਿੱਤਾਪ੍ਰਤੀ ਦੇ ਜੀਵਨ ਅੰਦਰ ਅਜਿਹੇ ਸਾਧਨਾਂ ਦੀ ਵਰਤੋਂ ਕਰਨ ਉੱਪਰ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ ਜ਼ੋਰ ਦੇਣ ਲੱਗਾ ਹੈ, ਜਿਹੜੇ ਕਿ ਉਸ ਦੇ ਰੋਜ਼ਾਨਾ ਨਿਰਬਾਹ ਲਈ ਕਦੀ ਵੀ ਲਾਜ਼ਮੀ ਅੰਗ ਵਜੋਂ ਆਪਣੀ ਹੋਂਦ ਨਹੀਂ ਰੱਖਦੇ। ਸੰਸਾਰ ਪ੍ਰਸਿੱਧ ਚਿੰਤਕ ਨੌਮ ਚੌਮਸਕੀ ਜਿਸ ਸਮੇਂ ਆਪਣੀਆਂ ਪੂੰਜੀਵਾਦੀ ਸਮਾਜ ਸੰਬੰਧੀ ਧਾਰਨਾਵਾਂ ਦੀ ਚਰਚਾ ਕਰਦਾ ਹੈ, ਉਸ ਵਕਤ ਉਹ ਇਸ ਗੱਲ ਉੱਪਰ ਵੀ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ ਜ਼ੋਰ ਦਿੰਦਾ ਹੈ ਕਿ ਉਪਭੋਗਤਾਮਈ ਵਾਤਾਵਰਣ ਦੇ ਇਸ ਸਮਕਾਲੀ ਦੌਰ ਅੰਦਰ ਮਨੁੱਖ ਹਰ ਉਸ ਵਸਤੂ ਦਾ ਉਪਭੋਗ ਕਰਨ ਵਿਚ ਆਪਣੀ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ ਦਿਲਚਸਪੀ ਦਿਖਾਉਂਦਾ ਹੈ, ਜਿਹੜੀ ਕਿ ਉਸ ਦੇ ਸਾਹਮਣੇ ਅਜੋਕੇ ਤਕਨੀਕ ਜਗਤ ਅਤੇ ਸਾਧਨਾਂ ਦੁਆਰਾ ਪ੍ਰਸਤੁਤ ਕੀਤੀ ਜਾਂਦੀ ਹੈ। ਇਸ ਉਪਭੋਗਮਈ ਪ੍ਰਵਿਰਤੀ ਦਾ ਉਪਭੋਗ ਕਰਨ ਹਿਤ ਮਨੁੱਖ ਉਨ੍ਹਾਂ ਹਰ ਪ੍ਰਕਾਰ ਦੇ ਸਾਧਨਾਂ ਨੂੰ ਅਪਣਾਉਣ ਵੱਲ ਰੁਚਿਤ ਹੁੰਦਾ ਹੈ, ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਦੇ ਰਾਹੀਂ ਉਸ ਦੀਆਂ ਪਦਾਰਥਿਕ ਖਾਹਿਸ਼ਾਂ ਸੰਤੁਸ਼ਟ ਹੋ ਸਕਦੀਆਂ ਹਨ। ਇਸ ਮਨੋਰਥ ਦੀ ਪੂਰਤੀ ਲਈ ਉਹ ਆਪਣੇ ਦੁਆਰਾ ਅਚੇਤ ਜਾਂ ਸੁਚੇਤ ਰੂਪ ਵਿਚ ਦੂਸਰੇ ਮਨੁੱਖਾਂ ਦਾ ਸ਼ੋਸਣ ਕਰਦਾ ਹੈ, ਕਿਉਂਕਿ ਇਸ ਸ਼ੋਸ਼ਣ ਦੀ ਅਣਹੋਂਦ ਅੰਦਰ ਅਜੋਕੇ ਸੰਸਾਰ ਅਰਥ-ਪ੍ਰਬੰਧ ਦੇ ਰਾਹੀਂ ਸਮਾਜ ਦੇ ਇਕ ਖ਼ਾਸ ਤਬਕੇ ਪਾਸ ਧਨ ਦੀ ਇਕੱਤਰਤਾ ਦਾ ਬੇਰੋਕ ਭੰਡਾਰ ਕਾਇਮ ਹੋ ਜਾਣਾ ਕਿਸੇ ਵੀ ਪ੍ਰਕਾਰ ਸੰਭਵ ਹੀ ਨਹੀਂ ਜਾਪਦਾ, ਇਸ ਲਈ ਮਨੁੱਖ ਦੀ ਇਸ ਸ਼ੋਸਣਕਾਰੀ ਪ੍ਰਵਿਰਤੀ ਨੂੰ *"ਪਾਪਾ ਬਾਝਹੁ ਹੋਵੈ ਨਾਹੀ ਮੁਇਆ ਸਾਥ ਨ ਜਾਈ"*[6] ਦੇ ਵਾਕ ਰਾਹੀਂ ਪ੍ਰਗਟ ਕਰਦੇ ਹੋਏ, ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਸਾਹਿਬ ਇਹ ਸਪਸ਼ਟ ਕਰਦੇ ਹਨ, ਜਿਸ ਸਮੇਂ ਮਨੁੱਖ ਆਪਣੀਆਂ ਨਿੱਜੀ ਜ਼ਰੂਰਤਾਂ ਤੋਂ ਜ਼ਿਆਦਾ ਦੀ ਮੰਗ ਅਤੇ ਉਮੀਦ ਰੱਖਦਾ ਹੋਇਆ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ ਤੌਰ 'ਤੇ ਯਤਨਸ਼ੀਲ ਹੁੰਦਾ ਹੈ, ਉਸ ਵਕਤ ਮਨੁੱਖੀ ਸ਼ੋਸ਼ਣ ਦਾ ਆਰਥਿਕ ਅਤੇ ਸਮਾਜਿਕ ਪੱਖ ਬੇਹੱਦ ਤੇਜ਼ੀ ਨਾਲ ਗਤੀਸ਼ੀਲ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਮਨੁੱਖ ਦੀ ਇਸੇ ਗਤੀਸ਼ੀਲਤਾ ਨੂੰ ਪੂਰਬੀ ਅਤੇ ਸਾਮੀ ਧਾਰਮਿਕ ਮੁਹਾਵਰੇ ਦੇ ਰਾਹੀਂ ਨੈਤਿਕ-ਚਿੰਤਨ ਜੋੜਦੇ ਹੋਏ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਸਾਹਿਬ ਆਖਦੇ ਹਨ ਕਿ:

ਹਕ ਪਰਾਇਆ ਨਾਨਕਾ ਉਸ ਸੂਅਰ ਉਸ ਗਾਇ॥[7]

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਸਾਹਿਬ ਦੀ ਇਹ ਮਾਨਤਾ ਮੱਧਕਾਲੀ ਧਾਰਮਿਕ ਪ੍ਰਵਚਨ ਦੀਆਂ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ਤਾਈਆਂ ਦਾ ਇਕ ਬਿਹਤਰੀਨ ਉਦਾਹਰਨ ਪੇਸ਼ ਕਰਦੀ ਹੈ। ਇਸ ਤੋਂ ਇਲਾਵਾ ਇਸ ਪ੍ਰਮਾਣ ਅੰਦਰ ਸਮਕਾਲੀ ਚਿੰਤਨ-ਜਗਤ ਦੀਆਂ ਉਨ੍ਹਾਂ ਸੀਮਤਤਾਈਆਂ ਦੀ ਪੇਸ਼ਕਾਰੀ ਵੀ ਸਾਡੇ ਸਾਹਮਣੇ ਆਉਂਦੀ ਹੈ, ਜਿਹੜੀ ਕਿ ਜਨ-ਸਾਧਾਰਨ ਦੇ ਭਾਸ਼ਾਗਤ ਮੁਹਾਵਰੇ ਅਤੇ ਸਮਝ ਤੋਂ ਨਿਰਲੇਪ ਰਹਿੰਦੀ ਹੋਈ, ਆਪਣਾ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ ਵਰਗ ਆਧਾਰਿਤ ਚਿੰਤਨ ਸਿਰਜ ਕੇ, ਉਸ ਨੂੰ ਕਥਿਤ ਰੂਪ ਵਿਚ ਮਨੁੱਖੀ ਮੁਕਤੀ ਦੇ ਸੰਦਰਭਾਂ ਨਾਲ ਜੋੜਦੀ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਸਾਹਿਬ ਦੁਆਰਾ ਉਚਾਰੇ ਗਏ ਉਕਤ ਪ੍ਰਮਾਣ ਦੀ ਅਹਿਮੀਅਤ ਇਸ ਗੱਲ ਵਿਚ ਵੀ ਹੈ ਕਿ ਅਜੋਕੇ ਗਿਆਨ-ਸ਼ਾਸਤਰਾਂ ਅਤੇ ਪ੍ਰਵਚਨਾਂ ਦੇ ਉਲਟ ਇਹ ਜਿਸ ਧਿਰ ਨੂੰ ਸੰਬੋਧਿਤ ਹੁੰਦੀ ਹੈ, ਉਸੇ ਧਿਰ ਦੇ ਚਿੰਤਨ-ਪ੍ਰਬੰਧ ਅਤੇ ਸੰਕਲਪਨਾ ਨੂੰ ਆਪਣਾ ਆਧਾਰ ਬਣਾ ਕੇ, ਉਸ ਉੱਪਰ ਪ੍ਰਸ਼ਨ-ਚਿੰਨ੍ਹ ਲਗਾਉਂਦੀ ਹੋਈ, ਇਕ ਪ੍ਰਕਾਰ ਦੇ ਨੈਤਿਕ ਸੁਹਜ ਦੀ ਬਦੌਲਤ, ਨਵ-ਚੇਤਨਾ ਦੀ ਸਿਰਜਣਾ ਕਰਦੀ ਹੈ, ਹਾਲਾਂਕਿ ਇਹ ਚੇਤਨਾ ਕਦੀ ਵੀ ਇਕ ਖ਼ਾਸ ਧਿਰ ਜਾਂ ਵਰਗ ਨੂੰ ਸੰਬੋਧਿਤ ਨਾ ਹੋ ਕੇ, ਆਪਣਾ ਵਿਸਥਾਰ ਬਹੁ-ਆਯਾਮੀ ਕਰ ਲੈਂਦੀ ਹੈ।

ਉਤਰ-ਉਤਰਆਧੁਨਿਕ ਦੌਰ ਅੰਦਰ ਜਿਸ ਵਕਤ ਅਸੀਂ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਦੀ ਪ੍ਰਾਸੰਗਿਕਤਾ ਦੀ ਗੱਲ ਕਰਦੇ ਹਾਂ, ਉਸ ਸਮੇਂ ਇਹ ਵੀ ਸਪਸ਼ਟ ਹੁੰਦਾ ਹੈ ਕਿ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇ ਸਰੋਕਾਰ ਮਨੁੱਖੀ ਜਗਤ ਦੇ ਉਨ੍ਹਾਂ ਪ੍ਰਾਣੀਆਂ ਨਾਲ ਡੂੰਘੇ ਰੂਪ ਵਿਚ ਜੁੜੇ ਹੋਏ ਹਨ, ਜਿਹੜੇ ਕਿ ਪ੍ਰਾਪਤ ਸਮਾਜਿਕ ਢਾਂਚੇ ਅਤੇ ਅਮਲ ਅੰਦਰ ਪੂਰੀ

ਤਰ੍ਹਾਂ ਹਾਸ਼ੀਏ 'ਤੇ ਧੱਕੇ ਹੋਏ ਹਨ। ਹਾਲਾਂਕਿ ਇਸ ਗੱਲ ਵਿਚ ਕੋਈ ਦੋ ਰਾਵਾਂ ਨਹੀਂ ਕਿ ਸੰਸਾਰ ਚਿੰਤਨ ਜਗਤ ਅੰਦਰ ਹੋਰ ਵੀ ਕਈ ਅਜਿਹੀਆਂ ਵਿਚਾਰ-ਦ੍ਰਿਸ਼ਟੀਆਂ ਸਾਨੂੰ ਪ੍ਰਾਪਤ ਹੁੰਦੀਆਂ ਹਨ, ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਅੰਦਰ ਦਮਿਤ ਵਰਗਾਂ ਦੇ ਉੱਥਾਨ ਦੀ ਗੱਲ ਹੋਈ ਹੈ, ਪਰ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਦੀ ਅਹਿਮੀਅਤ ਇਸ ਗੱਲ ਵਿਚ ਹੈ ਕਿ ਇਸ ਦੁਆਰਾ ਪ੍ਰਤਿਪਾਦਤ ਉੱਥਾਨ ਦੀ ਸੰਕਲਪਨਾ ਅੰਦਰ ਮਾਤਰ ਮਨੁੱਖ ਦੇ ਸੰਸਾਰਿਕ ਜੀਵਨ ਜਾਂ ਉਸ ਦੇ ਬਾਹਰੀ ਆਪੇ ਦੀ ਥਾਂ, ਉਸ ਦੇ ਅੰਦਰੂਨੀ ਆਪੇ ਨੂੰ ਵੀ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ ਸਥਾਨ ਪ੍ਰਦਾਨ ਕੀਤਾ ਗਿਆ ਹੈ। ਜਿਸ ਦੀ ਬਦੌਲਤ ਹੀ ਅਕਾਲ-ਪੁਰਖ ਦੀ ਬਖ਼ਸ਼ਿਸ਼ ਦੇ ਪਾਤਰ ਉਨ੍ਹਾਂ ਮਨੁੱਖਾਂ ਨੂੰ ਸਵੀਕਾਰਿਆ ਗਿਆ ਹੈ, ਜਿਹੜੇ ਕਿ ਦਮਿੱਤ ਵਰਗਾਂ ਨਾਲ ਆ ਖੜ੍ਹਦੇ ਹਨ।

ਨੀਚਾ ਅੰਦਰਿ ਨੀਚ ਜਾਤਿ ਨੀਚੀ ਹੂ ਅਤਿ ਨੀਚ॥
ਨਾਨਕੁ ਤਿਨ ਕੈ ਸੰਗਿ ਸਾਥਿ ਵਡਿਆ ਸਿਉ ਕਿਆ ਰੀਸ॥
ਜਿਥੈ ਨੀਚ ਸਮਾਲੀਅਨ ਤਿਥੈ ਨਦਰਿ ਤੇਰੀ ਬਖਸੀਸ॥ [8]

ਇੱਥੇ ਇਹ ਜ਼ਰੂਰ ਧਿਆਨ ਵਿਚ ਰੱਖਣਾ ਚਾਹੀਦਾ ਹੈ ਕਿ ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਦਾ ਇਹ ਬਿਆਨ ਸਿਰਫ਼ ਭਾਰਤੀ ਸਮਾਜ ਅੰਦਰ ਪ੍ਰਾਪਤ ਵਰਣ ਜਾਂ ਜਾਤੀ-ਵਿਵਸਥਾ ਦੀ ਮਿੱਥ ਨੂੰ ਅਧਿਆਤਮਿਕ ਧਰਾਤਲ ਉੱਪਰ ਹੀ ਰੱਦ ਨਹੀਂ ਕਰਦਾ, ਸਗੋਂ ਵਰਤਮਾਨ ਵਿਸ਼ਵ ਦੇ ਸਨਮੁੱਖ ਪੇਸ਼ ਆ ਰਹੀਆਂ ਨਵੀਆਂ ਸਮੱਸਿਆਵਾਂ, ਜਿਵੇਂਕਿ ਨਸਲਵਾਦ, ਖ਼ੇਤਰਵਾਦ, ਅੱਤਵਾਦ ਅਤੇ ਫ਼ਾਸ਼ੀਵਾਦ ਆਦਿ ਦੀਆਂ ਧਾਰਨਾਵਾਂ ਦੇ ਸਨਮੁੱਖ ਵੀ ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੂੰ ਪੂਰੀ ਤਰ੍ਹਾਂ ਰੱਦ ਕਰਦਾ ਹੋਇਆ ਨਕਾਰ ਸੁੱਟਣ ਦੀ ਗੱਲ ਕਰਦਾ ਹੈ।

ਜਿਵੇਂਕਿ ਅਸੀਂ ਉੱਪਰ ਗੱਲ ਕਰ ਆਏ ਹਾਂ ਪ੍ਰਬੋਧਨ ਕਾਲ ਤੋਂ ਲੈ ਕੇ ਹੁਣ ਤੱਕ 'ਧਰਮ' ਦੀ ਨਾਂਹ-ਪੱਖੀ ਭੂਮਿਕਾ ਨੂੰ ਉਭਾਰਦੇ ਹੋਏ ਜਿਸ ਪ੍ਰਕਾਰ ਸੰਸਾਰ ਸਾਹਿੱਤ ਚਿੰਤਨ ਅੰਦਰ 'ਧਰਮ' ਦੀ ਪ੍ਰਾਸੰਗਿਕਤਾ ਤੋਂ ਮੁਨਕਰ ਹੋਣ ਅਤੇ ਇਸ ਨੂੰ ਖ਼ਤਮ ਕਰਨ ਦੀ ਗੱਲ ਕੀਤੀ ਜਾਂਦੀ ਹੈ, ਉਸ ਨੂੰ ਖ਼ਿਆਲ ਨੂੰ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਅੰਦਰ ਇਕ ਬੇਹੱਦ ਸੰਤੁਲਿਤ ਤਰੀਕੇ ਰਾਹੀਂ ਪ੍ਰਗਟ ਕੀਤਾ ਗਿਆ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਸਾਹਿਬ ਦੀ ਮਾਨਤਾ ਹੈ ਕਿ ਧਰਮ ਮਨੁੱਖ ਦੇ ਕਿਰਦਾਰ ਅੰਦਰ ਸ਼ਾਮਲ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਜਿਸ ਵਕਤ ਮਨੁੱਖ ਉਸ ਕਿਰਦਾਰ ਤੋਂ ਇਨਕਾਰੀ ਹੋ ਕੇ ਆਪਣਾ ਜੀਵਨ ਗੁਜ਼ਾਰਨ ਲੱਗਦਾ ਹੈ, ਧਰਮ ਉਸੇ ਵਕਤ ਉਸ ਵਿਚੋਂ ਮਨਫ਼ੀ ਹੋ ਜਾਂਦਾ ਹੈ, ਪਰ ਅਸੀਂ ਵੇਖਦੇ ਹਾਂ ਕਿ ਧਰਮ ਦੀ ਇਸ ਹੋਂਦ ਅਤੇ ਅਣਹੋਂਦ ਦੀ ਗੱਲ ਉਤਰਆਧੁਨਿਕ ਚਿੰਤਨ ਤੱਕ ਪ੍ਰਾਪਤ ਸਮੁੱਚੇ ਵਿਚਾਰ-ਦਰਸ਼ਨ ਵਿਚ ਲਗਭਗ ਹਾਸ਼ੀਏ 'ਤੇ ਹੀ ਰਹੀ ਹੈ। ਇਸ ਦੇ ਉਲਟ ਇਸ ਚਿੰਤਨ-ਪ੍ਰਬੰਧ ਦੁਆਰਾ ਜਿਸ ਗੱਲ ਉੱਪਰ ਵਾਰ-ਵਾਰ ਜੋਰ ਦਿੱਤਾ ਗਿਆ ਹੈ, ਉਹ ਧਰਮ ਦੀ ਮੁੱਢੋਂ ਹੀ ਕਿਸੇ ਪ੍ਰਕਾਰ ਦੀ ਕੋਈ ਜ਼ਰੂਰਤ ਨੂੰ ਰੱਦ ਕਰਦੀ ਹੈ, ਜਦੋਂਕਿ ਦੁਨੀਆ ਭਰ ਅੰਦਰ ਧਰਮ ਦੀ ਬਹੁ-ਪੱਖੀ ਭੂਮਿਕਾ ਦਾ ਆਪਣਾ ਇਕ ਅਲਹਿਦਾ ਇਤਿਹਾਸ ਰਿਹਾ ਹੈ ਅਤੇ ਦੁਨੀਆ ਭਰ ਵਿਚ ਜਨ-ਸਾਧਾਰਨ ਦੁਆਰਾ ਕਿਧਰੇ ਵੀ ਕੋਈ ਅਜਿਹੀ ਮੰਗ ਨਹੀਂ ਕੀਤੀ ਗਈ ਕਿ ਉਸ ਨੂੰ 'ਧਰਮ' ਤੋਂ ਮੁਕਤੀ ਚਾਹੀਦੀ ਹੈ। ਇਸ ਦੇ ਉਲਟ ਧਰਮ ਦੇ ਖ਼ਾਤਮੇ ਨੂੰ ਲੈ ਕੇ ਤੁਰੀਆਂ ਕਈ ਵਿਚਾਰਧਾਰਾਵਾਂ ਖ਼ੁਦ ਅਜੋਕੇ ਚਿੰਤਕਾਂ ਦੁਆਰਾ 'ਧਰਮ' ਦੇ ਘੇਰੇ ਅੰਦਰ ਲਿਆਂਦੀਆਂ ਜਾ ਰਹੀਆਂ ਹਨ। ਇਸ ਲਈ ਧਰਮ ਦੇ ਕ੍ਰਾਂਤੀਕਾਰੀ ਅਤੇ ਅਧਿਆਤਮਿਕ ਪੱਖ ਦੇ ਇਤਿਹਾਸ ਨੂੰ ਧਿਆਨ ਵਿਚ ਰੱਖਦੇ ਹੋਏ ਤੇ ਉਸ ਦੀ ਗਤੀਸ਼ੀਲਤਾ ਨੂੰ ਨਿਰੰਤਰ ਕਾਇਮ ਰੱਖਣ ਹਿਤ ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਇਹ ਸਥਾਪਨਾ ਕਰਦੇ ਹਨ ਕਿ:

ਕਾਦੀ ਕੂੜੁ ਬੋਲਿ ਮਲੁ ਖਾਇ॥ / ਬ੍ਰਾਹਮਣ ਨਾਵੈ ਜੀਆ ਘਾਇ॥
ਜੋਗੀ ਜੁਗਤਿ ਨ ਜਾਣੈ ਅੰਧੁ॥ / ਤੀਨੇ ਓਜਾੜੇ ਕਾ ਬੰਧੁ॥ [9]

ਆਪਣੀ ਇਸ ਸਥਾਪਨਾ ਅੰਦਰ ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਧਰਮ ਦੇ ਨਾਮ ਉੱਪਰ ਕਾਰਜਸ਼ੀਲ ਸਮੂਹ ਵਿਅਕਤੀਆਂ ਦੀ ਅਹਿਮੀਅਤ ਨੂੰ ਰੱਦ ਕਰਦੇ ਹੋਏ, ਸੰਸਾਰ ਚਿੰਤਨ ਅੰਦਰ ਪ੍ਰਾਪਤ ਧਰਮ ਦੀਆਂ ਸਮੁੱਚੀਆਂ ਪਰਿਭਾਸ਼ਾਵਾਂ ਦੇ ਉਲਟ ਇਕ ਅਜਿਹੀ ਧਾਰਮਿਕਤਾ ਦਾ ਉਪਦੇਸ਼ ਦਿੰਦੇ ਹਨ, ਜਿਸ ਦੀਆਂ ਸੁਰਾਂ ਨੂੰ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੇ ਇਸ ਸ਼ਬਦ ਵਿਚੋਂ ਭਲੀਭਾਂਤ ਮਹਿਸੂਸ ਕੀਤਾ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ:

ਮਿਹਰ ਮਸੀਤਿ ਸਿਦਕੁ ਮੁਸਲਾ ਹਕੁ ਹਲਾਲੁ ਕੁਰਾਣੁ॥
ਸਰਮ ਸੁੰਨਤਿ ਸੀਲੁ ਰੋਜਾ ਹੋਹੁ ਮੁਸਲਮਾਣੁ॥
ਕਰਣੀ ਕਾਬਾ ਸਚੁ ਪੀਰੁ ਕਲਮਾ ਕਰਮ ਨਿਵਾਜ॥
ਤਸਬੀ ਸਾ ਤਿਸੁਭਾਵਸੀ ਨਾਨਕ ਰਖੈ ਲਾਜ॥ [10]

ਇਸ ਪ੍ਰਕਾਰ ਅਸੀਂ ਵੇਖਦੇ ਹਾਂ ਕਿ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਅੰਦਰ ਅਧਿਆਤਮਿਕ ਅਤੇ ਵਿਵਹਾਰਿਕ ਅਨੁਭਵਤਾਵਾਂ ਦੇ ਪ੍ਰਗਟਾਵੇ ਲਈ ਪ੍ਰਚੱਲਿਤ ਧਾਰਮਿਕ ਵਿਧਾਨਾਂ ਨੂੰ ਜਿੱਥੇ ਪੂਰੀ ਤਰ੍ਹਾਂ ਰੱਦ ਕੀਤਾ ਗਿਆ ਹੈ, ਉੱਥੇ ਹੀ ਉਸ ਦੇ ਸਮਾਨਾਂਤਰ ਅਜਿਹੀਆਂ ਸਥਾਪਨਾਵਾਂ ਵੀ ਪੇਸ਼ ਕੀਤੀਆਂ ਗਈਆਂ ਹਨ, ਜਿਹੜੀਆਂ ਕਿ ਸਾਡੇ ਅਜੋਕੇ ਗਿਆਨ-ਸ਼ਾਸਤਰਾਂ ਦੁਆਰਾ ਸਿਰਜਿਤ ਪਾਠਾਂ ਸਾਮਾਨ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੀਆਂ ਇਕਹਿਰੀਆਂ ਭੂਮਿਕਾਵਾਂ ਦੀ ਥਾਂ, ਆਪਣੀ ਬਹੁ-ਆਯਾਮਤਾ ਨੂੰ ਪ੍ਰਗਟ ਕਰਦੀਆਂ ਹਨ, ਕਿਉਂਕਿ ਉਤਰਆਧੁਨਿਕ ਚਿੰਤਨ ਪ੍ਰਬੰਧ ਅਤੇ ਇਸ ਦੀਆਂ ਪੂਰਵਕਾਲੀ ਚਿੰਤਨ-ਦ੍ਰਿਸ਼ਟੀਆਂ ਦੁਆਰਾ ਸਿਰਜਿਤ ਪਾਠ ਦੇ ਜਿਹੜੇ ਸਵੀਕ੍ਰਿਤ ਮਾਡਲ ਦੇਕਾਰਤੇ ਦੀ ਧਾਰਨਾ ਮੁਤਾਬਿਕ ਪ੍ਰਾਕਿਰਤੀ ਅੰਦਰ 'ਮਨੁੱਖ' ਦੀ ਸ਼੍ਰੇਸ਼ਠਤਾ ਨੂੰ ਕਾਇਮ ਕਰਨ ਲਈ ਸਿੱਧੇ ਜਾਂ ਅਸਿੱਧੇ ਰੂਪ ਵਿਚ ਯਤਨਸ਼ੀਲ ਹੁੰਦੇ ਹੋਏ ਕੁਦਰਤ ਉੱਪਰ ਆਪਣੇ ਗ਼ਲਬੇ ਦੀ ਪ੍ਰਧਾਨਤਾ ਨੂੰ ਪ੍ਰਗਟ ਕਰ ਰਹੇ ਹਨ, ਬਦਲ ਰਹੀਆਂ ਵਾਤਾਵਰਣਿਕ ਕੀਮਤਾਂ ਦੇ ਇਸ ਕੁਹਜ ਭਰੇ ਦੌਰ ਅੰਦਰ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਆਪਣੇ ਵਿਸਮਾਦੀ ਚਿੰਤਨ ਦੁਆਰਾ ਉਨ੍ਹਾਂ ਸਮਿਆਂ ਅੰਦਰ ਮਨੁੱਖ ਦੀ ਉੱਤਮਤਾ ਦਾ ਐਲਾਨ ਕਰਦੀ ਹੋਈ ਵੀ, ਕੁਦਰਤ ਦੇ ਸਮੁੱਚੇ ਪਾਸਾਰ ਅੰਦਰ ਉਸ ਨੂੰ ਪੁਨਰ-ਵਿਸ਼ਲੇਸ਼ਿਤ ਕਰਨ ਦਾ ਵਡੇਰਾ ਕਾਰਜ ਕਰਦੀ ਹੋਈ ਸਾਹਮਣੇ ਆਉਂਦੀ ਹੈ। ਜਿਸ ਨੂੰ ਦੇਖਦੇ ਹੋਏ ਸਾਡਾ ਮੰਨਣਾ ਹੈ ਕਿ ਉਤਰ-ਉਤਰਆਧੁਨਿਕ ਚਿੰਤਨ ਦੇ ਇਸ ਕਾਲ ਅੰਦਰ 'ਪ੍ਰਧਾਨਤਾ' ਦੇ ਬਹੁ-ਪੱਖੀ ਮਾਡਲਾਂ ਨੂੰ ਰੱਦ ਕਰ ਕੇ, ਇਕ ਵਿਸਮਾਦੀ ਸਮਾਜ ਦੀ ਸਿਰਜਣਾ ਹਿਤ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਦਾ ਸਾਹਮਣੇ ਆਉਣਾ ਮਨੁੱਖਤਾ ਲਈ ਇਕ ਸ਼ੁਭ-ਸਮਾਚਾਰ ਸਾਮਾਨ ਹੈ।

ਹਵਾਲੇ ਤੇ ਟਿੱਪਣੀਆਂ

1. ਜਿਸ ਨੂੰ ਪ੍ਰਸਿੱਧ ਪੱਛਮੀ ਚਿੰਤਕ ਅਲੈਨ ਮਿਕਸਿੰਸ ਵੁੱਡ ਨੇ ਪਹਿਲਾਂ ਹੀ ਤਬਾਹਕੁੰਨ ਮੰਨਿਆ ਹੈ।
2. We are at the ending of what is called The Modern Age. https://monthlyreviewarchives.org/index.php/mr/article/view/MR-047-03-1995-07_1/3559
3. It used to be believed that the results of scientific investigation would lead to continuous progressive improvements in conditions of life; but first the war then the economic crisis have shown that science can be used as easily demanding the cessation of scientific research as the only means of preserving a tolerance civilization... Science has ceased to be the occupation of curious gentleman or of ingenious minds supported by large industrial monopolies and by the State. Imperceptibly this has altered the character of science from an individual to a collective basis, and has enhanced the importance of apparatus and administration.
   J.D.Bernal, The Social Function of Science, George Routledge&Sons, London, 1945, pp. Xiii
4. ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ, ਅੰਕ-356
5. ਉਹੀ, 85
6. ਉਹੀ, 417
7. ਉਹੀ, 141
8. ਉਹੀ, 15
9. ਉਹੀ, 662
10. ਉਹੀ, 140

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਵਿਚ ਸਭਿਆਚਾਰ ਦੀ ਪੇਸ਼ਕਾਰੀ: ਵਰਤਮਾਨ ਪ੍ਰਸੰਗਿਕਤਾ

* ਡਾ. ਭਾਰਤਬੀਰ ਕੌਰ ਸੰਧੂ

* ਅਸਿ.ਪ੍ਰੋ. ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਅਧਿਐਨ ਵਿਭਾਗ, ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਯੂਨੀਵਰਸਿਟੀ ਅੰਮ੍ਰਿਤਸਰ

ਮਨੁੱਖ ਦੇ ਨਿਰਮਾਣ ਦਾ ਮੁੱਖ ਤੱਤ ਸਭਿਆਚਾਰਕ ਵਾਤਾਵਰਣ ਹੈ। ਜਿਸ ਸਮੂਹ ਵਿਚ ਵਿਅਕਤੀ ਰਹਿੰਦਾ ਹੈ, ਉਸ ਦੇ ਸਭਿਆਚਾਰਕ ਵਾਤਾਵਰਣ ਅਤੇ ਉਸ ਦੇ ਸਭਿਆਚਾਰਕ ਆਦਰਸ਼ ਨਿਸ਼ਚਿਤ ਕਰਦੇ ਹਨ ਕਿ ਵਿਅਕਤੀ ਕਿਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਦੀਆਂ ਮਨੋਬਿਰਤੀਆਂ, ਵਿਚਾਰਾਂ, ਆਦਤਾਂ ਅਤੇ ਸਮਾਜਿਕ ਮੁੱਲਾਂ ਵਿੱਚ ਪ੍ਰਤੀਸ਼ਿਠਤਾ ਪੈਦਾ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਸਭਿਆਚਾਰਕ ਵਾਤਾਵਰਣ ਹੀ ਵਿਅਕਤੀ ਨੂੰ ਸੱਭਿਯ ਜਾਂ ਅਸੱਭਿਯ ਬਣਾਉਂਦਾ ਹੈ।[1]

ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬਾਨ ਮੱਧਕਾਲੀਨ ਯੁਗ ਵਿਚ ਜਨਮੇ ਅਤੇ ਵਿਚਰੇ। ਉਹਨਾਂ ਨੇ ਸਮਕਾਲੀਨ ਸਭਿਆਚਾਰ ਦੇ ਸਾਕਾਰਾਤਮਕ ਅਤੇ ਨਕਾਰਾਤਮਕ ਪੱਖਾਂ ਦਾ ਪ੍ਰਤੱਖਣ ਕੀਤਾ ਅਤੇ ਪੰਜ ਸਦੀਆਂ ਦੇ ਸਮਾਜਿਕ ਸੱਭਿਆਚਾਰ ਨੂੰ ਆਪਣੀ ਬਾਣੀ ਵਿਚ ਕਿਸੇ ਨਾ ਕਿਸੇ ਰੂਪ ਵਿਚ ਕਲਮਬੱਧ ਕੀਤਾ ਹੈ। ਸਿੱਖ ਧਰਮ ਦੇ ਆਗਾਜ਼ ਨਾਲ ਇਕ ਨਵਾਂ ਸੱਭਿਆਚਾਰ ਆਪਣੀ ਹੋਂਦ ਅਖ਼ਤਿਆਰ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਜਿਸ ਦੀ ਨੀਂਹ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਸਾਹਿਬ ਰੱਖਦੇ ਹਨ। ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬਾਨ ਦਾ ਸਮਕਾਲੀਨ ਸਭਿਆਚਾਰ ਅਨੇਕਾਂ ਪ੍ਰਕਾਰ ਦੀਆਂ ਕੁਰੀਤੀਆਂ, ਵਿਕਾਰਾਂ, ਫੋਕਟ ਆਡੰਬਰਾਂ ਅਤੇ ਧਾਰਮਿਕ ਅੰਧ ਵਿਸ਼ਵਾਸਾਂ ਵਿਚ ਗ੍ਰਸਿਤ ਸੀ। ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬਾਨ ਨੇ ਅਜਿਹੀ ਕੋਝੀ ਜੀਵਨ ਜਾਚ ਵਿਰੁੱਧ ਨਵੀਨ ਕਦਰਾਂ ਕੀਮਤਾਂ ਵਾਲੀ ਜੀਵਨ ਜੁਗਤ ਨੂੰ ਨਿਸ਼ਚਤ ਕੀਤਾ ਹੈ। ਗੁਰਬਾਣੀ ਮਨੁੱਖ ਦੀ ਰੂਹਾਨੀ ਉੱਚਤਾ ਦੇ ਨਾਲ-ਨਾਲ ਉਸ ਦੇ ਸਭਿਆਚਾਰਕ ਰਹਿਣ-ਸਹਿਣ ਨੂੰ ਵੀ ਨਿਸ਼ਚਿਤ ਕਰਦੀ ਹੈ।

ਮੱਧਕਾਲੀਨ ਸਮੇਂ ਨੂੰ ਗੁਲਾਮੀ ਅਤੇ ਦਾਸਤਾਂ ਦਾ ਯੁਗ ਕਿਹਾ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਇਸ ਸਮੇਂ ਤੱਕ ਸਾਰੇ ਭਾਰਤ ਵਿਚ ਮੁਸਲਿਮ ਸ਼ਾਸਨ ਸਥਾਪਿਤ ਹੋ ਚੁੱਕਾ ਸੀ। ਮੁਗਲਾਂ ਦੇ ਭਾਰਤ ਵਿਚ ਆਉਣ ਤੋਂ ਪਹਿਲਾਂ ਹੀ ਦੇਸ਼ ਦੀ ਹਾਲਤ ਚਿੰਤਾਜਨਕ ਸੀ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਸਮੇਂ ਲੋਧੀ ਵੰਸ਼ ਦੇ ਬਾਦਸ਼ਾਹ ਨੇ ਜਨਤਾ 'ਤੇ ਬਹੁਤ ਅੱਤਿਆਚਾਰ ਕੀਤੇ। ਸੋਲ੍ਹਵੀਂ ਸਦੀ ਦੇ ਮੱਧ ਵਿਚ ਜਦੋਂ ਬਾਬਰ ਨੇ ਹਮਲਾ ਕੀਤਾ ਤਾਂ ਉਸ ਸਮੇਂ ਸੁਤੰਤਰ ਪ੍ਰਦੇਸ਼ਿਕ ਰਾਜ ਸਥਾਪਿਤ ਹੋ ਚੁੱਕੇ ਸਨ। ਬਾਬਰ ਨੇ 1526 ਈਸਵੀ ਵਿਚ ਲੋਧੀ ਸ਼ਾਸਕਾਂ ਨੂੰ ਹਰਾ ਕੇ ਮੁਗ਼ਲ ਰਾਜ ਦੀ ਸਥਾਪਨਾ ਕੀਤੀ।[2] ਬਾਬਰ ਦੀ ਇਸ ਜਿੱਤ ਨਾਲ ਭਾਰਤੀ ਜਨਤਾ ਭੈ ਭੀਤ ਹੋ ਗਈ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਮੁਗ਼ਲਾਂ ਦੇ ਅੱਤਿਆਚਾਰਾਂ ਦੀ ਸਖਤ ਆਲੋਚਨਾ ਕੀਤੀ:

ਪਾਪ ਕੀ ਜੰਞ ਲੈ ਕਾਬਲਹੁ ਧਾਇਆ ਜੋਰੀ ਮੰਗੈ ਦਾਨੁ ਵੇ ਲਾਲੋ॥
ਸਰਮੁ ਧਰਮੁ ਦੁਇ ਛਪਿ ਖਲੋਏ ਕੂੜੁ ਫਿਰੈ ਪਰਧਾਨੁ ਵੇ ਲਾਲੋ॥
ਕਾਜੀਆ ਬਾਮਣਾ ਕੀ ਗਲ ਥਕੀ ਅਗਦੁ ਪੜੈ ਸੈਤਾਨੁ ਵੇ ਲਾਲੋ॥[3]

ਉਸ ਸਮੇਂ ਸਮਾਜ ਵਿਚ ਹਿੰਦੂ ਜਨਤਾ ਤਾਂ ਅੱਤਿਆਚਾਰਾਂ ਨਾਲ ਪੀੜਿਤ ਸੀ। ਮੁਸਲਮਾਨਾਂ ਦੇ ਸ਼ੇਖ ਅਤੇ ਸੁੰਨੀ ਦੋ ਵਰਗ ਸਨ, ਜਿਹਨਾਂ ਵਿਚ ਅਕਸਰ ਲੜਾਈ ਰਹਿੰਦੀ ਸੀ। ਸ਼ਾਸਕ ਵਰਗ ਵਿਚ ਵੀ ਰਾਜ ਪ੍ਰਾਪਤੀ ਲਈ ਹੱਤਿਆਵਾਂ ਦਾ ਸਿਲਸਿਲਾ ਜਾਰੀ ਰਹਿੰਦਾ ਸੀ। ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬਾਨ ਨੇ ਆਪਣੇ ਸਮਕਾਲੀਨ ਰਾਜਨੀਤਿਕ ਪ੍ਰਬੰਧ ਨੂੰ ਤਬਦੀਲ ਕਰਨ ਲਈ ਮਾਡਲ ਪ੍ਰਦਾਨ ਕੀਤਾ। ਜਿਸ ਵਿਚ ਜ਼ੁਲਮੀ ਅਤੇ ਤਸ਼ੱਦਦ ਕਰਨ ਵਾਲੇ ਬਾਦਸ਼ਾਹਾਂ ਨੂੰ 'ਕਸਾਈ'[4] ਮੰਨ ਕੇ ਪਰਮਾਤਮਾ ਨੂੰ 'ਸੱਚੇ ਪਾਤਸ਼ਾਹ' ਦੇ ਰੂਪ ਵਿਚ ਪੇਸ਼ ਕੀਤਾ ਹੈ। ਡਾ. ਜਗਬੀਰ ਸਿੰਘ ਅਨੁਸਾਰ ਝੂਠੇ ਪਾਤਸ਼ਾਹਾਂ ਦੇ ਪ੍ਰਤਿ ਨਾਬਰੀ ਜ਼ਾਹਰ ਕਰਨ ਵਾਲਾ ਇਹ ਸੰਕਲਪ ਰਾਜ ਸੱਤਾ ਨੂੰ ਆਪਣੇ ਫਰਜ਼ ਦੀ ਪਛਾਣ ਕਰਾਉਣ ਦਾ ਲਖਾਇਕ ਹੈ। ਹੱਕ, ਸੱਚ, ਨਿਆਂ ਦੀਆਂ ਕਦਰਾਂ ਕੀਮਤਾਂ ਨੂੰ ਆਦਰਸ਼ ਰਾਜਸੱਤਾ ਦੀ ਬੁਨਿਆਦ ਮੰਨਿਆ ਗਿਆ ਹੈ।[5] ਮਨੁੱਖੀ ਸ਼ਖ਼ਸੀਅਤ ਦੇ ਵਿਕਾਸ ਲਈ ਮਾਨਵ ਹਿਤਕਾਰੀ ਅਤੇ ਉਚਿਤ ਨਿਆਂ ਵਾਲਾ ਰਾਜ ਪ੍ਰਬੰਧ ਹੋਣਾ ਲਾਜ਼ਮੀ ਹੈ।

ਮੁਸਲਮਾਨਾਂ ਦੀ ਆਮਦ ਤੋਂ ਪਹਿਲਾਂ ਭਾਰਤ ਵਿਚ ਆਰੀਆਈ ਧਰਮ ਸੀ। ਮੁਸਲਮਾਨ ਹੁਕਮਰਾਨਾਂ ਨੇ ਆਰੀਆਈ ਧਰਮ ਅਤੇ ਇਸ ਦੀਆਂ ਸੰਪ੍ਰਦਾਵਾਂ ਨੂੰ ਕੁਚਲ ਕੇ ਏਕਾ-ਕੇਂਦਰਿਤ ਮੁਸਲਮਾਨੀ ਹਕੂਮਤ ਸਥਾਪਿਤ ਕਰਨ ਦੀ ਜੱਦੋ ਜਹਿਦ ਕੀਤੀ। ਜਿਸ ਨਾਲ ਦੋ ਧਾਰਮਿਕ ਸੱਭਿਆਚਾਰਾਂ ਵਿਚ ਟਕਰਾਉ ਦੀ ਸਥਿਤੀ ਉਤਪੰਨ ਹੋ ਗਈ। ਜਿਸਦਾ ਚਿਤਰਣ ਭਾਈ ਗੁਰਦਾਸ ਜੀ ਦੀ ਪਹਿਲੀ ਵਾਰ ਵਿਚ ਕੀਤਾ ਮਿਲ ਜਾਂਦਾ ਹੈ:

ਚਾਰਿ ਵਰਨ ਚਾਰਿ ਮਜਹਬਾ ਜਗ ਵਿਚਿ ਹਿੰਦੂ ਮੁਸਲਮਾਣੇ॥
ਖੁਦੀ ਬਖੀਲਿ ਤਕਬਰੀ ਖਿਚੋਤਾਣਿ ਕਰੇਨਿ ਧਿਙਾਣੇ॥
ਗੰਗ ਬਨਾਰਸਿ ਹਿੰਦੂਆਂ ਮਕਾ ਕਾਬਾ ਮੁਸਲਮਾਣੇ॥
ਸੁੰਨਤਿ ਮੁਸਲਮਾਣ ਦੀ ਤਿਲਕ ਜੰਞੂ ਹਿੰਦੂ ਲੋਭਾਣੇ॥
ਰਾਮ ਰਹੀਮ ਕਹਾਇਦੇ ਇਕੁ ਨਾਮੁ ਦੁਇ ਰਾਹ ਭੁਲਾਣੇ॥
ਬੇਦ ਕਤੇਬ ਭੁਲਾਇਕੈ ਮੋਹੇ ਲਾਲਚ ਦੁਨੀ ਸੈਤਾਣੇ॥
ਸਚੁ ਕਿਨਾਰੇ ਰਹਿ ਗਇਆ ਖਹਿ ਖਹਿ ਮਰਦੇ ਬਾਹਮਣ ਮਉਲਾਣੇ॥
ਸਿਰੋ ਨਾ ਮਿਟੇ ਆਵਣ ਜਾਣੇ॥1॥21॥[6]

ਗੁਰਬਾਣੀ ਭਾਰਤੀ ਸੱਭਿਆਚਾਰ ਦੇ ਵਿਚਾਰਧਾਰਾਈ ਵਿਰੋਧਾਂ ਵਿਚ ਉਸ 'ਸੱਚੇ ਸੁੱਚੇ ਆਦਰਸ਼ ਜੀਵਨ' ਦਾ ਪ੍ਰਵਚਨ ਸਿਰਜਦੀ ਹੈ ਜੋ ਇਹਨਾਂ ਸੱਭਿਆਚਾਰਾਂ ਦੇ ਆਪਸੀ ਟਕਰਾਉ ਨਾਲ ਧਰਮਾਂ ਵਿਚੋਂ ਮਨਫ਼ੀ ਹੋ ਗਿਆ ਸੀ। ਹਿੰਦੂ ਮੁਸਲਮਾਨ ਸ਼ਾਸਕਾਂ ਤੋਂ ਡਰਦੇ ਪਹਿਰਾਵਾ, ਬੋਲੀ ਤੇ ਬਾਹਰੀ ਤੌਰ 'ਤੇ ਇਸਲਾਮੀ ਰਹੁ ਰੀਤਾਂ ਨਿਭਾਉਂਦੇ ਸਨ। ਇਸ ਪ੍ਰਕਾਰ ਉਹ ਬਾਹਰੀ ਰਸਮਾਂ ਵਿਚ ਉਲਝ ਕੇ ਆਪਣੇ ਅਸਲੀ ਆਸ਼ੇ ਤੋਂ ਖੁੰਝ ਗਏ ਸਨ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਇਸ ਦਾ ਜ਼ਿਕਰ ਇਸ ਪ੍ਰਕਾਰ ਕਰਦੇ ਹਨ:

ਨੀਲ ਬਸਤ੍ਰ ਲੇ ਕਪੜੇ ਪਹਿਰੇ
ਤੁਰਕ ਪਠਾਣੀ ਅਮਲੁ ਕੀਆ॥[7]

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਮੁਸਲਮਾਨ ਸ਼ਾਸਕਾਂ ਵਾਂਗ ਕਿਧਰੇ ਵੀ ਪ੍ਰਚੱਲਿਤ ਧਰਮਾਂ ਨੂੰ ਦੂਸਰੇ ਧਰਮਾਂ ਵਿਚ ਤਬਦੀਲ ਕਰਨ ਜਾਂ ਨਿੱਜੀ ਧਰਮ ਨੂੰ ਛੱਡਣ ਦੀ ਮਾਨਤਾ ਨਹੀਂ ਦਿੱਤੀ। ਉਹਨਾਂ ਨੇ ਕਿਸੇ ਧਰਮ ਦਾ ਸਥਾਨ ਲੈਣ ਦੀ ਕੋਸ਼ਿਸ਼ ਕਰਨ ਨਾਲੋਂ ਅਧਿਆਤਮਿਕ ਸੱਚ ਨੂੰ ਪ੍ਰਚਾਰਨ ਤੇ ਪ੍ਰਸਾਰਨ ਦੀ ਅਵਾਜ਼ ਬੁਲੰਦ ਕੀਤੀ । ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਦਾ ਮਕਸਦ ਕੇਵਲ ਹੁਕਮਰਾਨਾਂ ਦੇ ਜ਼ੁਲਮ ਨੂੰ ਨਸ਼ਰ ਕਰਨਾ ਹੀ ਨਹੀਂ ਸੀ ਸਗੋਂ ਲੋਕਾਂ ਅੰਦਰ ਆਪਣੇ ਹੱਕਾਂ ਲਈ ਲੜਨ ਲਈ ਉਹਨਾਂ ਵਿਚ ਉਤਸ਼ਾਹ ਭਰਨਾ ਵੀ ਸੀ ਜਿਸ ਨਾਲ ਉਹ ਇੱਜ਼ਤ ਆਬਰੂ ਨਾਲ ਆਪਣਾ ਜੀਵਨ ਬਸਰ ਕਰਨ ਦੇ ਕਾਬਿਲ ਹੋ ਸਕਣ।

ਜੇ ਜੀਵੈ ਪਤਿ ਲਥੀ ਜਾਇ॥ ਸਭੁ ਹਰਾਮੁ ਜੇਤਾ ਕਿਛੁ ਖਾਇ॥[8]

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਸਾਹਿਬ ਅਤੇ ਉਹਨਾਂ ਦੇ ਉੱਤਰਾਧਿਕਾਰੀ ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬਾਨ ਨੇ ਵੱਖ ਵੱਖ ਕੌਮਾਂ, ਭਾਸ਼ਾਵਾਂ ਅਤੇ ਸੱਭਿਆਚਾਰਾਂ ਨਾਲ ਸ਼ਸ਼ੋਭਿਤ ਭਾਰਤ ਦੇਸ਼ ਦੀ ਬਹੁ-ਕੇਂਦਰਿਤ ਸੱਭਿਆਚਾਰਕ ਹੋਂਦ ਨੂੰ ਪ੍ਰਵਾਨ ਕੀਤਾ। ਧਾਰਮਿਕ ਕੱਟੜਤਾ ਦੀ ਜਗ੍ਹਾ ਮਨੁੱਖਤਾ ਨੂੰ ਇਕੋ ਸਿਰਜਕ ਦੀ ਸਿਰਜਨਾ ਪੇਸ਼ ਕੀਤਾ ਹੈ। ਅਲੱਗ-ਅਲੱਗ ਧਰਮ ਆਪਣੀ ਸਮਝ ਅਨੁਸਾਰ ਇਕੋ ਹੀ ਪਰਮਾਤਮਾ ਨੂੰ ਅਲੱਗ ਅਲੱਗ ਨਾਵਾਂ ਨਾਲ ਸਿਮਰ ਰਹੇ ਹਨ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਅਨੁਸਾਰ:

ਮੁਸਲਮਾਨਾ ਸਿਫਤਿ ਸਰੀਅਤਿ ਪੜਿ ਪੜਿ ਕਰਹਿ ਬੀਚਾਰੁ॥
ਬੰਦੇ ਸੇ ਜਿ ਪਵਹਿ ਵਿਚਿ ਬੰਦੀ ਵੇਖਣੁ ਕਉ ਦੀਦਾਰੁ॥
ਹਿੰਦੂ ਸਾਲਾਹੀ ਸਾਲਾਹਨਿ ਦਰਸਨਿ ਰੂਪਿ ਅਪਾਰੁ॥
ਤੀਰਥਿ ਨਾਵਹਿ ਅਰਚਾ ਪੂਜਾ ਅਗਰ ਵਾਸੁ ਬਹਕਾਰੁ॥
ਜੋਗੀ ਸੁੰਨਿ ਧਿਆਵਨਿ ਜੇਤੇ ਅਲਖ ਨਾਮੁ ਕਰਤਾਰੁ॥
ਸੂਖਮ ਮੂਰਤਿ ਨਾਮੁ ਨਿਰੰਜਨ ਕਾਇਆ ਕਾ ਆਕਾਰੁ॥[9]

ਧਾਰਮਿਕ ਕੱਟੜਤਾ ਦੇ ਟਕਰਾਉ ਕਾਰਨ ਹਿੰਦੂ ਅਤੇ ਮੁਸਲਮਾਨ ਆਪਣੇ ਧਰਮ ਦੇ ਅਸਲੀ ਮਾਅਨਿਆਂ ਨੂੰ ਸਮਝਣ ਦੇ ਸਮਰੱਥ ਨਹੀਂ ਰਹੇ ਸਨ। ਗੁਰਬਾਣੀ ਧਰਮ ਦੀ ਦ੍ਰਿਸ਼ਟੀ ਤੋਂ ਹਿੰਦੂ ਨੂੰ ਚੰਗਾ ਤੇ ਉੱਚਾ ਹਿੰਦੂ ਬਣਨ ਦੀ ਤਾੜਨਾ ਕਰਦੀ ਹੈ ਅਤੇ ਮੁਸਲਮਾਨ ਨੂੰ ਕਾਮਲ ਮੁਸਲਮਾਨ ਬਣਨ ਦੀ ਤਾਕੀਦ ਕਰਦੀ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਵਿਚ ਸਪੱਸ਼ਟ ਕੀਤਾ ਗਿਆ ਹੈ ਕਿ ਮੁਸਲਮਾਨ ਦੇ ਰੂਹਾਨੀ ਚਿੰਨ੍ਹ ਉਸ ਦੇ ਅਮਲੀ ਜੀਵਨ ਵਿਚੋਂ ਗਵਾਚ ਗਏ ਸਨ ਅਤੇ ਹਿੰਦੂ ਵੀ ਕਰਮਕਾਂਡ ਦੀ ਬਾਹਰਮੁਖਤਾ ਵਿਚ ਉਲਝ ਕੇ ਰਹਿ ਗਿਆ ਸੀ। ਇਹ ਦੋਵੇਂ ਧਰਮ ਨਿਰਜਿੰਦ ਹੋ ਚੁੱਕੇ ਸਨ:

ਤਉ ਨਾਨਕ ਸਰਬ ਜੀਆ ਮਿਹਰੰਮਤਿ ਹੋਇ ਤ ਮੁਸਲਮਾਣੁ ਕਹਾਵੈ॥[10]
ਸੋ ਬ੍ਰਾਹਮਣ ਜੋ ਬ੍ਰਹਮੁ ਬੀਚਾਰੈ॥[11]

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਅਨੁਸਾਰ ਆਪਣੀ ਅਸਲੀਅਤ ਤੋਂ ਖੁੰਝੇ ਅਤੇ ਫੋਕਟ ਧਰਮ ਮਾਨਵਤਾ ਦੇ ਨਸ਼ਟ ਦਾ ਕਾਰਨ ਬਣਦੇ ਹਨ :

ਕਾਦੀ ਕੂੜੁ ਬੋਲਿ ਮਲੁ ਖਾਇ॥ ਬ੍ਰਾਹਮਣੁ ਨਾਵੈ ਜੀਆ ਘਾਇ॥
ਜੋਗੀ ਜੁਗਤਿ ਨ ਜਾਣੈ ਅੰਧੁ॥ ਤੀਨੇ ਓਜਾੜੇ ਕਾ ਬੰਧੁ॥[12]

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦੇ ਸਮੇਂ ਵਿਚ ਲੋਕ ਕਈ ਤਰ੍ਹਾਂ ਦੇ ਵਹਿਮਾਂ ਭਰਮਾਂ ਵਿਚ ਉਲਝੇ ਹੋਏ ਸਨ। ਜਿਵੇਂ ਕਿ ਸੂਤਕ ਪਾਤਕ, ਪਿੱਤਰਾਂ ਦੀ ਪੂਜਾ, ਸਰਾਧ ਆਦਿ। ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਨੇ ਤਰਕ ਦੇ ਆਧਾਰ 'ਤੇ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਇਹਨਾਂ ਵਹਿਮਾਂ ਭਰਮਾਂ ਤੋਂ ਨਿਜ਼ਾਤ ਦਵਾ ਕੇ ਸੱਚ ਨਾਲ ਵਾਬਸਤਾ ਕਰਾਇਆ ਅਤੇ ਸੁਚੱਜਾ ਜੀਵਨ ਜਿਊਣ ਦੀ ਸੇਧ ਦਿੱਤੀ।

ਦੁਬਿਧਾ ਨ ਪੜਉ ਹਰਿ ਬਿਨੁ ਹੋਰੁ ਨ ਪੂਜਉ ਮੜੈ ਮਸਾਣਿ ਨ ਜਾਈ॥
ਤ੍ਰਿਸਨਾ ਰਾਚਿ ਨ ਪਰ ਘਰਿ ਜਾਵਾ ਤ੍ਰਿਸਨਾ ਨਾਮਿ ਬੁਝਾਈ॥[13]

ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਦਾ ਸਮਕਾਲੀਨ ਸਮਾਜ ਚਾਰ ਵਰਨਾਂ ਵਿਚ ਵਿਭਾਜਿਤ ਕੀਤਾ ਗਿਆ ਸੀ ਅਤੇ ਹਰੇਕ ਵਰਨ ਨੂੰ ਆਪਣਾ ਕਰਮ ਕਰਨ ਦੀ ਤਾਕੀਦ ਕੀਤੀ ਗਈ ਸੀ। ਇਹਨਾਂ ਵਰਨਾਂ ਦੇ ਆਧਾਰ 'ਤੇ ਜਾਤ-ਪਾਤ ਦੀ ਪ੍ਰਥਾ ਤੇ ਭਿੱਟ ਦੀ ਅਲਾਮਤ ਨੇ ਹੋਂਦ ਗ੍ਰਹਿਣ ਕੀਤੀ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਅਜਿਹੇ ਸਮਾਜ ਦੀ ਨੀਂਹ ਰੱਖਦੇ ਹਨ ਜਿਸ ਵਿੱਚ ਇਹ ਜਾਤ-ਪਾਤ ਦਾ ਭੇਦ ਭਾਵ ਮਨਫ਼ੀ ਹੈ:

ਜਾਤੀ ਦੈ ਕਿਆ ਹਥਿ ਸਚੁ ਪਰਖੀਐ॥
ਮਹੁਰਾ ਹੋਵੈ ਹਥਿ ਮਰੀਐ ਚਖੀਐ॥[14]

ਧਰਮ ਅਤੇ ਮੁਕਤੀ ਦੇ ਸਾਧਨ ਬ੍ਰਾਹਮਣਾਂ ਤੱਕ ਹੀ ਸੀਮਿਤ ਸਨ। ਗੁਰਬਾਣੀ ਦੇ 'ਉਪਦੇਸੁ ਚਹੁ ਵਰਨਾ ਕੋ ਸਾਝਾ'[15] ਹੋਣ ਕਾਰਨ ਇਸ ਦੀ ਸਰਬ ਸਾਂਝੀ ਬਾਣੀ ਜਾਤਾਂ, ਨਸਲਾਂ, ਰੰਗਾਂ, ਦੇਸ਼ਾਂ, ਕੌਮਾਂ ਦੀਆਂ ਸੀਮਿਤ ਹੱਦਾਂ ਤੋਂ ਮੁਕਤ 'ਆਪੇ ਲਏ ਮਿਲਾਇ ਜੀਉ'[16], 'ਸਭੇ ਸਾਝੀਵਾਲ ਸਦਾਇਨਿ'[17] ਵਾਲੇ ਸਾਂਝੇ ਸਭਿਆਚਾਰ ਦੀ ਨਿਸ਼ਾਨਦੇਹੀ ਕਰਦੀ ਹੈ। ਇਸ ਨਾਲ ਭਾਰਤੀ ਸੱਭਿਆਚਾਰ ਵਿਚ ਸਭ ਤੋਂ ਅਹਿਮ ਕ੍ਰਾਂਤੀ ਇਹ ਆਈ ਕਿ ਹਾਸ਼ੀਏ ਤੇ ਰੱਖੇ ਹੋਏ ਨਿਮਾਣੇ ਨਿਤਾਣੇ ਜਿਹਨਾਂ ਨੂੰ ਹਮੇਸ਼ਾਂ ਦੁਰਕਾਰਿਆ ਜਾਂਦਾ ਸੀ, ਨੂੰ ਕੇਂਦਰ ਵਿਚ ਥਾਂ ਮਿਲੀ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਧਰਮ ਨੂੰ ਜਨ ਸਾਧਾਰਨ ਦੀ ਸੰਪਤੀ ਬਣਾ ਦਿੱਤਾ। ਸਮੁੱਚੇ ਸਮਾਜ ਦੇ ਨਿਰਮਾਣ ਲਈ ਸਾਧਾਰਨ ਮਨੁੱਖ ਦਾ ਆਤਮਿਕ ਤੌਰ 'ਤੇ ਵਿਕਾਸ ਲਾਜ਼ਮੀ ਸੀ। ਇਤਿਹਾਸਕਾਰ ਇੰਦੂਭੂਸ਼ਣ ਬੈਨਰਜ਼ੀ ਅਨੁਸਾਰ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਸਾਹਿਬ ਮਾਨਵਤਾ ਦੀ ਸਦੀਵੀ ਏਕਤਾ ਦੀ ਹਾਮੀ ਭਰਦੇ ਸਨ।[18] ਸੰਗਤ ਤੇ ਪੰਗਤ ਦੀ ਸ਼ੁਰੂਆਤ ਵੀ ਇਸ ਵਿਚਾਰਧਾਰਾ ਨੂੰ ਵਿਹਾਰਕਤਾ ਪ੍ਰਦਾਨ ਕਰਦੀ ਹੈ। ਇਸ ਲਈ ਸਿੱਖ ਲਹਿਰ ਨੇ ਇਕ ਨਿਰੰਤਰ ਅਮਲੀ ਪ੍ਰਬੰਧ ਦੀ ਸਥਾਪਤੀ ਕੀਤੀ। ਇਸ ਤੋਂ ਇਲਾਵਾ ਸਮਕਾਲੀਨ ਧਾਰਮਿਕ ਪਰੰਪਰਾਵਾਂ ਦੇ ਉਲਟ ਬਾਣੀਕਾਰਾਂ ਨੇ ਵਿਅਕਤੀਗਤ ਰੁਚੀਆਂ ਦਾ ਤਿਆਗ ਕਰਕੇ ਸਮੂਹਿਕ ਭਗਤੀ ਦੁਆਰਾ ਸਮੂਹਿਕ ਮੁਕਤੀ ਦਾ ਜ਼ਿਕਰ ਕੀਤਾ ਹੈ:

ਆਪਿ ਤਰਹਿ ਸਗਲੇ ਕੁਲ ਤਾਰੈ॥[19]
ਸਾਚੁ ਵਖਰੁ ਧਨੁ ਪਲੈ ਹੋਇ॥
ਆਪਿ ਤਰੈ ਤਾਰੇ ਭੀ ਸੋਇ।[20]

ਸਾਧਸੰਗਤਿ, ਗੁਰਮਤਿ, ਬ੍ਰਹਮ ਗਿਆਨੀ, ਸਰਬੱਤ ਦਾ ਭਲਾ ਆਦਿ ਸ਼ਬਦ ਸਮੂਹਿਕ ਮੁਕਤੀ ਅਤੇ ਏਕਤਾ ਦਾ ਪ੍ਰਗਟਾਵਾ ਕਰਦੇ ਹਨ। ਗੁਰਬਾਣੀ 'ਜਾਣਹੁ ਜੋਤਿ ਨ ਪੂਛਹੁ ਜਾਤੀ ਆਗੈ ਜਾਤਿ ਨ ਹੇ'[21] ਦਾ ਪ੍ਰਵਚਨ ਸਿਰਜਦੀ ਹੈ ਅਤੇ ਇਸ ਨੂੰ ਵਿਵਹਾਰਕਤਾ ਵੀ ਪ੍ਰਦਾਨ ਕਰਦੀ ਹੈ ਜਿਸ ਦੀ ਗਵਾਹੀ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ ਦੇ ਬਾਣੀਕਾਰਾਂ ਤੋਂ ਸਹਿਜੇ ਹੀ ਮਿਲ ਜਾਂਦੀ ਹੈ। ਗੁਰਬਾਣੀ ਸਭ ਪ੍ਰਕਾਰ ਦੇ ਵਿਤਕਰਿਆਂ ਨੂੰ ਮੇਟ ਕੇ 'ਸਰਬ ਧਰਮ ਮਹਿ ਸ੍ਰੇਸਟ ਧਰਮੁ॥ ਹਰਿ ਕੋ ਨਾਮੁ ਜਪਿ ਨਿਰਮਲ ਕਰਮੁ'[22] ਤੇ 'ਏਕੁ ਪਿਤਾ ਏਕਸ ਕੇ ਹਮ ਬਾਰਿਕ' ਦੀ ਭਾਈਚਾਰਕ ਸਾਂਝ ਦੀ ਸਥਾਪਤੀ ਲਈ ਅਗਰਸਰ ਹੈ।

ਪਰਿਵਾਰਿਕ ਜੀਵਨ ਜੁਗਤ ਲੋਕ ਸੱਭਿਆਚਾਰ ਦੀ ਸਰਬ ਪ੍ਰਵਾਨਿਤ ਰੂੜੀ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਸੰਨਿਆਸੀਆਂ ਦੁਆਰਾ ਘਰ ਬਾਰ ਤਿਆਗਣ ਦੀ ਪ੍ਰਵਿਰਤੀ ਦੀ ਨਿੰਦਿਆ ਕੀਤੀ ਹੈ। ਮੰਗ ਖਾਣ ਅਤੇ ਪਰਾਈਆਂ ਇਸਤਰੀਆਂ ਨੂੰ ਮੰਦੀ ਨਜ਼ਰ ਨਾਲ ਵੇਖਣ ਵਾਲੇ ਪਰਮਾਤਮਾ ਨੂੰ ਪਾਉਣ ਦੇ ਅਸਮਰੱਥ ਰਹਿੰਦੇ ਹਨ:

ਹਾਥ ਕਮੰਡਲੁ ਕਾਪੜੀਆ ਮਨਿ ਤ੍ਰਿਸਨਾ ਉਪਜੀ ਭਾਰੀ॥
ਇਸਤ੍ਰੀ ਤਜਿ ਕਰਿ ਕਾਮਿ ਵਿਆਪਿਆ ਚਿਤੁ ਲਾਇਆ ਪਰ ਨਾਰੀ॥[23]

ਗੁਰਬਾਣੀ ਵਿਚ ਭਾਂਜਵਾਦੀ ਰੁਚੀਆਂ ਦੇ ਤਿਆਗ ਦਾ ਪ੍ਰਵਚਨ ਸਿਰਜਿਆ ਗਿਆ ਹੈ। ਗੁਰਬਾਣੀ ਨਿਰਵਿਰਤੀ ਉੱਤੇ ਨਹੀਂ ਪਰਵਿਰਤੀ ਉੱਪਰ ਬੱਲ ਦਿੰਦੀ ਹੈ। ਅਲੱਗ-ਅਲੱਗ ਤਰ੍ਹਾਂ ਦੇ ਸਾਧੂਆਂ, ਜੋਗੀਆਂ, ਸੰਨਿਆਸੀਆਂ ਆਦਿ ਨਾਲ ਸੰਵਾਦ ਰਚਾ ਕੇ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਸਾਹਿਬ ਨੇ ਗ੍ਰਹਿਸਥ ਆਸ਼ਰਮ ਦੀ ਪ੍ਰੋੜਤਾ ਕੀਤੀ ਹੈ। ਗੁਰਬਾਣੀ ਅਨੁਸਾਰ:

ਜੋਗੁ ਨ ਭਗਵੀ ਕਪੜੀ ਜੋਗੁ ਨ ਮੈਲੇ ਵੇਸਿ॥
ਨਾਨਕ ਘਰਿ ਬੈਠਿਆ ਜੋਗੁ ਪਾਈਐ ਸਤਿਗੁਰ ਕੈ ਉਪਦੇਸਿ॥[24]
ਹਸੰਦਿਆ ਖੇਲੰਦਿਆ ਪੈਨੰਦਿਆ ਖਾਵੰਦਿਆ ਵਿਚੇ ਹੋਵੈ ਮੁਕਤਿ॥[25]

ਸੰਸਾਰ ਵਿਚ ਰਹਿੰਦਿਆਂ ਕਿਰਤ ਕਰਨ, ਵੰਡ ਛਕਣ, ਨਾਮ ਜਪਣ ਦਾ ਸੰਦੇਸ਼ ਦਿੱਤਾ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਨੇ ਨਾ ਕੇਵਲ ਉਪਦੇਸ਼ ਦਿੱਤਾ ਬਲਕਿ ਦਸਾਂ ਨਹੁੰਆਂ ਦੀ ਕਿਰਤ ਕਰਨ ਦੇ ਮਾਰਗ ਨੂੰ ਵਿਹਾਰਕ ਤੌਰ 'ਤੇ ਆਪਣੀ ਜ਼ਿੰਦਗੀ ਤੇ ਵੀ ਲਾਗੂ ਕੀਤਾ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦੁਆਰਾ ਕਰਤਾਰਪੁਰ ਰਹਿ ਕੇ ਆਪਣੇ ਹੱਥੀਂ ਖੇਤੀ ਕਰਨਾ ਇਸ ਤੱਥ ਦੀ ਪ੍ਰੋੜਤਾ ਕਰਦਾ ਹੈ।

ਗੁਰਬਾਣੀ ਧਰਮ ਦੀ ਆੜ ਲੈ ਕੇ ਮੰਗ ਖਾਣ ਦਾ ਵਿਰੋਧ ਕਰਦੀ ਹੈ[26]।ਅਜਿਹਾ ਕਰਨ ਨਾਲ ਮਨੁੱਖ ਸੰਸਾਰ ਤੇ ਬੋਝ ਬਣਦਾ ਹੈ ਅਤੇ ਨਿਕੰਮਾ ਬਣਦਾ ਹੈ। ਹੱਥੀਂ ਕਿਰਤ ਕਰਨ ਨਾਲ ਸਰੀਰ ਰਿਸ਼ਟ ਪੁਸ਼ਟ ਰਹਿੰਦਾ ਹੈ। ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਘਾਲ ਕਮਾਈ ਅਤੇ ਉੱਦਮ ਕਰਨ ਦਾ ਸੰਦੇਸ਼ ਦਿੱਤਾ ਗਿਆ ਹੈ।

ਉਦਮੁ ਕਰੇਦਿਆ ਜੀਉ ਤੂੰ ਕਮਾਵਦਿਆ ਸੁਖ ਭੁੰਚੁ॥ [27]

ਕਿਰਤ ਵਿਚੋਂ ਦਸਵੰਧ ਦੇਣ ਨਾਲ ਮਨੁੱਖ ਨਿਆਸਰਿਆਂ ਦਾ ਆਸਰਾ ਬਣਦਾ ਹੈ। ਇਸ ਕਰਕੇ ਦਾਨ ਦੇਣ ਦੇ ਮਹੱਤਵ ਨੂੰ ਗੁਰਬਾਣੀ ਵਿਚ ਉੱਤਮ ਮੰਨਿਆ ਗਿਆ ਹੈ:

ਘਾਲਿ ਖਾਇ ਕਿਛੁ ਹਥਹੁ ਦੇਇ॥ ਨਾਨਕ ਰਾਹੁ ਪਛਾਣਹਿ ਸੇਇ॥ [28]

ਗੀਤਾ ਵਾਂਗ ਗੁਰਬਾਣੀ ਵੀ ਕਰਮਯੋਗ ਦੀ ਹਾਮੀ ਭਰਦੀ ਹੈ। 'ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬਾਨ ਨੇ ਪੰਜਾਬੀ ਸੱਭਿਆਚਾਰ ਨੂੰ ਸਦੀਵੀ ਜੀਵਨ ਕੀਮਤਾਂ ਪ੍ਰਦਾਨ ਕਰਨ ਲਈ ਦੋ ਤਰ੍ਹਾਂ ਦੀ ਨੀਤੀ ਅਪਣਾਈ। ਇਕ ਨੀਤੀ ਤਾਂ ਸ਼ੁੱਧ ਉਪਦੇਸ਼ ਦੀ ਨੀਤੀ ਸੀ ਜਿਸ ਨੂੰ ਉਹਨਾਂ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ ਦੇ ਰੂਪ ਵਿਚ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਭੇਂਟ ਕੀਤਾ। ਦੂਸਰੀ ਵਿਧੀ ਆਪਣੀ ਜੀਵਨ ਸ਼ੈਲੀ ਅਤੇ ਕਰਮ ਕਰਨ ਦੀ ਵਿਧੀ।[29] ਉਦਹਾਰਣ ਦੇ ਤੌਰ 'ਤੇ ਮਲਕ ਭਾਗੋ ਅਤੇ ਭਾਈ ਲਾਲੋ ਵਾਲੀ ਸਾਖੀ ਵਿਚ ਕਿਰਤ ਦੀ ਮਹੱਤਤਾ ਨੂੰ ਸਥਾਪਿਤ ਕਰਨ ਦੇ ਨਾਲ-ਨਾਲ ਜਾਤੀ 'ਤੇ ਆਧਾਰਿਤ ਦਰਜਾਬੰਦੀ ਨੂੰ ਵੀ ਨਿਖੇਧਿਆ ਹੈ।

ਸਮਾਜ ਵਿਚ ਬਰਾਬਰਤਾ ਦੇ ਸੰਕਲਪ ਨੂੰ ਸਿਰਜਿਆ ਗਿਆ। ਜਿਸ ਵਿਚ ਮਨੁੱਖੀ ਮਾਨਸਿਕਤਾ ਨੂੰ ਚੰਗੇਰੇਪਨ ਦੀ ਕਸਵੱਟੀ ਮੰਨਿਆ ਗਿਆ। ਸ਼ੁਭ ਨੀਅਤ ਅਤੇ ਸ਼ੁਭ ਕਰਮ ਨਾਲ ਹੀ ਮਨੁੱਖ ਅਧਿਆਤਮਿਕ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਨੇ ਵਿਤਕਰੇ ਨਾਲੋਂ ਅਮਲ ਨੂੰ ਤਰਜ਼ੀਹ ਦਿੱਤੀ ਹੈ। ਨਾਮ ਸਿਮਰਨ ਅਤੇ ਇਨਸਾਨੀਅਤ ਨਾਲ ਜ਼ਰਖੇਜ਼ ਗੁਣਾਂ ਨੂੰ ਕੇਂਦਰੀ ਸਥਾਨ ਪ੍ਰਦਾਨ ਕੀਤਾ ਗਿਆ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਅਨੁਸਾਰ:

ਨੀਚਾ ਅੰਦਰਿ ਨੀਚ ਜਾਤਿ ਨੀਚੀ ਹੂ ਅਤਿ ਨੀਚੁ॥
ਨਾਨਕ ਤਿਨ ਕੈ ਸੰਗਿ ਸਾਥ ਵਡਿਆ ਸਿਉ ਕਿਆ ਰੀਸ॥
ਜਿਥੈ ਨੀਚ ਸਮਾਲੀਅਨਿ ਤਿਥੈ ਨਦਰਿ ਤੇਰੀ ਬਖਸੀਸ॥ [30]

ਗੁਰਬਾਣੀ ਸਿਧਾਂਤਕ ਪੱਧਰ ਤੇ ਹੀ ਨਹੀਂ ਸਗੋਂ ਵਿਹਾਰਕ ਪੱਧਰ 'ਤੇ ਵੀ ਇਸ ਤੇ ਅਮਲ ਕਰਦੀ ਹੈ। ਗੁਰਬਾਣੀ 'ਸਭ ਮਹਿ ਜੋਤਿ ਜੋਤਿ ਹੈ ਸੋਇ'[31] ਦੀ ਹਾਮੀ ਭਰਦੀ ਹੋਈ, ਹਰ ਤਰ੍ਹਾਂ ਦੇ ਵਖਰੇਵਿਆਂ ਦੇ ਆਧਾਰ ਤੇ ਉਪਜੀ ਆਪਸੀ ਦਵੈਤ ਨੂੰ ਨਕਾਰਦੀ ਹੈ। 'ਨਾ ਕੋ ਬੈਰੀ ਨਹੀ ਬਿਗਾਨਾ ਸਗਲ ਸੰਗਿ ਹਮ ਕਉ ਬਨਿ ਆਈ'[32] 'ਤੇ ਅਮਲ ਕਰਕੇ ਅਨੇਕਤਾ ਵਿਚ ਏਕਤਾ ਦਾ ਪ੍ਰਵਚਨ ਸਿਰਜਦੀ ਹੈ। ਵੈਰ ਵਿਰੋਧ ਦਾ ਖਾਤਮਾ ਮਿਲ ਬੈਠ ਕੇ ਸੰਵਾਦ ਨਾਲ ਕੀਤਾ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ।

ਹੋਇ ਇਕਤ੍ਰ ਮਿਲਹੁ ਮੇਰੇ ਭਾਈ ਦੁਬਿਧਾ ਦੂਰਿ ਕਰਹੁ ਲਿਵ ਲਾਇ॥ [33]
ਪਰ ਕਾ ਬੁਰਾ ਨ ਰਾਖਹੁ ਚੀਤ॥ ਤੁਮ ਕਉ ਦੁਖੁ ਨਹੀ ਭਾਈ ਮੀਤ॥ [34]

ਹਰ ਮਸਲੇ ਦਾ ਸਮਾਧਾਨ ਆਪਸੀ ਸੰਵਾਦ ਨਾਲ ਨਜਿੱਠਣ ਅਤੇ ਦੱਬੇ ਕੁਚਲੇ ਲੋਕਾਂ ਵਿਚ ਚੇਤਨਾ ਭਰ ਕੇ 'ਪਤਿ ਸੇਤੀ ਜਾਵੈ'[35] ਦਾ ਸੰਦੇਸ਼ ਦਿੱਤਾ ਹੈ। ਗੁਰਬਾਣੀ ਵਿਚ ਹਲੇਮੀ ਰਾਜ ਦਾ ਸੰਕਲਪ ਪੇਸ਼ ਕੀਤਾ ਗਿਆ ਹੈ, ਜਿਸ ਵਿਚ ਸਭ ਦੇ ਹੱਕ ਬਰਾਬਰ ਹੋਣ ਤੇ ਕਿਸੇ ਨਾਲ ਕੋਈ ਵਧੀਕੀ ਤੇ ਬੇਇਨਸਾਫ਼ੀ ਨਾ ਹੋਵੇ। ਇਹ ਸ਼ਕਤੀ ਦੀ ਥਾਂ ਨਿਮਰਤਾ ਅਤੇ ਸੇਵਾ-ਭਾਵਨਾ ਦਾ ਰਾਜ ਹੈ।[36]ਗੁਰਬਾਣੀ ਅਨੁਸਾਰ:

ਹੁਣਿ ਹੁਕਮੁ ਹੋਆ ਮਿਹਰਵਾਣ ਦਾ॥ ਪੈ ਕੋਇ ਨ ਕਿਸੈ ਰਞਾਣਦਾ॥
ਸਭ ਸੁਖਾਲੀ ਵੁਠੀਆ ਇਹੁ ਹੋਆ ਹਲੇਮੀ ਰਾਜੁ ਜੀਉ॥ [37]

ਮਨੁੱਖ ਦੀ ਬੋਲ ਬਾਣੀ ਵੀ ਸਭਿਆਚਾਰ ਦਾ ਅੰਗ ਹੈ। ਜਿਹੋ ਜਿਹੇ ਸਮਾਜ ਸਭਿਆਚਾਰ ਵਿਚ ਮਨੁੱਖ ਵਿਚਰਦਾ ਹੈ ਉਹੋ ਜਿਹਾ ਚੱਜ ਅਚਾਰ ਉਹ ਗ੍ਰਹਿਣ ਕਰ ਲੈਂਦਾ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਵਿਚ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਸੰਜੀਦਗੀ ਅਤੇ ਮਿੱਠਤ ਜਿਹੇ ਅਮਲਾਂ ਨੂੰ ਆਪਣੀ ਬੋਲ ਚਾਲ ਦਾ ਅੰਗ ਬਣਾਉਣ ਦੀ ਤਾਕੀਦ ਕੀਤੀ ਗਈ ਹੈ:

ਜਿਥੈ ਬੋਲਣਿ ਹਾਰੀਐ ਤਿਥੈ ਚੰਗੀ ਚੁਪ॥ [38]
ਬਹੁਤਾ ਬੋਲਣੁ ਝਖਣੁ ਹੋਇ॥ [39]
ਨਾਨਕ ਫਿਕੈ ਬੋਲਿਐ ਤਨੁ ਮਨੁ ਫਿਕਾ ਹੋਇ॥ [40]
ਗੰਢੁ ਪਰੀਤੀ ਮਿਠੇ ਬੋਲ॥ [41]

ਵਰਤਮਾਨ ਸਮੇਂ ਵਿਚ ਅੱਜ ਕੱਲ ਦੀ ਪੀੜੀ ਨਸ਼ਿਆਂ ਵਿਚ ਗ਼ਲਤਾਨ ਹੈ। ਹਰ ਰੋਜ ਨਸ਼ੇ ਦਾ ਸੇਵਨ ਕਰਨ ਨਾਲ ਹੋਈਆਂ ਜਵਾਨ ਮੌਤਾਂ ਅਖਬਾਰਾਂ ਦੀਆਂ ਖਬਰਾਂ ਬਣਦੀਆਂ ਹਨ। ਗੁਰਬਾਣੀ ਵਿਚ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਅਜਿਹੇ ਨਸ਼ਿਆਂ ਦਾ ਸੇਵਨ ਕਰਨ ਦੀ ਮਨਾਹੀ ਕੀਤੀ ਗਈ ਹੈ ਜਿਸ ਨਾਲ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਚੰਗੇ ਮਾੜੇ ਦੀ ਸੋਝੀ ਨਹੀਂ ਰਹਿੰਦੀ, ਸਰੀਰ ਨੁਕਸਾਨਿਆ ਜਾਂਦਾ ਹੈ ਅਤੇ ਮਨ ਵਿਕਾਰਾਂ ਵਿਚ ਵਿਚਲਿਤ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਅਨੁਸਾਰ:

ਬਾਬਾ ਹੋਰੁ ਖਾਣਾ ਖੁਸੀ ਖੁਆਰੁ॥
ਜਿਤੁ ਖਾਧੈ ਤਨੁ ਪੀੜੀਐ ਮਨ ਮਹਿ ਚਲਹਿ ਵਿਕਾਰ॥ [42]

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਅਨੁਸਾਰ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਪਹਿਰਾਵਾ ਵੀ ਆਪਣੇ ਮਾਨਸਿਕ ਅਤੇ ਸਰੀਰਿਕ ਅਰਾਮ ਨੂੰ ਮੱਧੇ ਨਜ਼ਰ ਰੱਖ ਕੇ ਗ੍ਰਹਿਣ ਕਰਨ ਦੀ ਤਾਕੀਦ ਕੀਤੀ ਹੈ ਤਾਂ ਜੋ ਮਨੁੱਖ ਆਪਣੇ ਸਰੀਰਿਕ ਸੁਖ ਦੇ ਨਾਲ ਨਾਲ ਮਨ ਨੂੰ ਵੀ ਸਕੂਨ ਵਿਚ ਰੱਖਣ ਦੇ ਸਮਰੱਥ ਹੋਵੇ।ਬਾਣੀ ਅਨੁਸਾਰ:

ਬਾਬਾ ਹੋਰੁ ਪੈਨਣੁ ਖੁਸੀ ਖੁਆਰੁ॥
ਜਿਤੁ ਪੈਧੈ ਤਨੁ ਪੀੜੀਐ ਮਨ ਮਹਿ ਚਲਹਿ ਵਿਕਾਰ॥ [43]

ਸਮੁੱਚੇ ਤੌਰ 'ਤੇ ਕਿਹਾ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ ਕਿ ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਨੇ ਪੁਰਾਣੀਆਂ ਖੋਖਲੀਆਂ ਹੋ ਚੁੱਕੀਆਂ ਕਦਰਾਂ ਕੀਮਤਾਂ ਦੀ ਥਾਂ ਨਰੋਈਆਂ ਅਤੇ ਉਚੇਰੀਆਂ ਕਦਰਾਂ-ਕੀਮਤਾਂ ਸਿਰਜੀਆਂ ਹਨ। ਜਿਸ ਵਿਚ ਧਾਰਮਿਕ ਸਿਧਾਂਤਾਂ ਨੂੰ ਜਾਨਣ ਦੇ ਨਾਲ-ਨਾਲ ਉਹਨਾਂ ਤੇ ਅਮਲ ਕਰਨ ਦੀ ਤਾਕੀਦ ਕੀਤੀ ਕਿਉਂਕਿ ਅੰਤ ਅਮਲਾਂ ਤੇ ਹੀ ਨਿਬੇੜਾ ਹੋਣਾ ਹੈ:

ਸਭਨਾ ਕਾ ਦਰਿ ਲੇਖਾ ਸਚੈ ਛੂਟਸਿ ਨਾਮਿ ਸੁਹਾਵਣਿਆ॥ [44]
ਸਭਨਾ ਕਾ ਦਰਿ ਲੇਖਾ ਹੋਇ॥ ਕਰਣੀ ਬਾਝਹੁ ਤਰੈ ਨ ਕੋਇ॥ [45]

ਅਜਿਹੇ ਆਦਰਸ਼ ਮਨੁੱਖ ਦੀ ਸਿਰਜਨਾ ਕੀਤੀ ਗਈ ਹੈ ਜੋ ਅਧਿਆਤਮਕ ਤੌਰ 'ਤੇ ਉੱਪਰ ਉੱਠ ਚੁੱਕੇ ਇਨਸਾਨ 'ਸਭੁ ਕੋ ਊਚਾ ਆਖੀਐ ਨੀਚੁ ਨ ਦੀਸੈ ਕੋਇ[46]' ਦੀ ਭਾਵਨਾ ਨੂੰ ਅਪਨਾ ਲੈਂਦੇ ਹਨ। ਇਸ ਬ੍ਰਹਿਮੰਡ ਨੂੰ ਸਿਰਜਕ ਦੀ ਸਿਰਜਨਾ ਪੇਸ਼ ਕਰਕੇ ਹਰੇਕ ਤਰ੍ਹਾਂ ਦੀਆਂ ਵੱਖਰਤਾਵਾਂ ਚਾਹੇ ਉਹ ਧਰਮਾਂ, ਵਰਣਾਂ, ਜਾਤਾਂ ਜਾਂ ਲਿੰਗ[47] ਦੇ ਆਧਾਰ 'ਤੇ ਹਨ ਨੂੰ ਖ਼ਤਮ ਕਰਨ ਦਾ ਸੰਦੇਸ਼ ਦਿੱਤਾ ਗਿਆ ਹੈ। ਇਹਨਾਂ ਸਾਰੀਆਂ ਭਿੰਨਤਾਵਾਂ ਨੂੰ ਰੂਹਾਨੀ ਏਕਤਾ ਨਾਲ ਜੋੜਨ ਦਾ ਉਪਰਾਲਾ ਕੀਤਾ ਗਿਆ ਹੈ।

ਸਮਾਜ ਦੀ ਸੱਭਿਆਚਾਰਕ ਵਡਿਆਈ ਉਸ ਨਾਲ ਸੰਬੰਧਿਤ ਲੋਕਾਂ ਦੇ ਨੈਤਿਕ ਜੀਵਨ ਤੋਂ ਪਰਖੀ ਜਾਂਦੀ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਅਨੁਸਾਰ ਦੋ ਤਰ੍ਹਾਂ ਦੀ ਜੀਵਨ-ਜਾਚ ਮੰਨੀ ਗਈ ਹੈ, ਗੁਰਮੁਖ ਅਤੇ ਮਨਮੁਖ ਜੀਵਨ-ਜਾਚ। ਗੁਰਮੁਖ ਜੀਵਨ-ਜਾਚ ਨੂੰ ਅਪਨਾ ਕੇ ਮਨੁੱਖ ਸਮਾਜਿਕ, ਸਦਾਚਾਰਕ ਅਤੇ ਸੱਭਿਆਚਾਰਕ ਪੱਖ ਤੋਂ ਉਚਿਤਾ ਪ੍ਰਾਪਤ ਕਰ ਸਕਦਾ ਹੈ। ਗੁਰਬਾਣੀ ਵਿਚ ਆਪਸੀ ਵੈਰ-ਵਿਰੋਧ ਦਾ ਖਾਤਮਾ ਕਰਕੇ, ਖੁਦ ਭੈ ਮੰਨਣ ਅਤੇ

ਦੂਸਰਿਆਂ ਨੂੰ ਭੈ-ਭੀਤ ਕਰਨ[48] ਦੀ ਪ੍ਰਵਿਰਤੀ ਨੂੰ ਨਿਖੇਧ ਕੇ ਭਰਾਤਰੀ ਭਾਵ ਦਾ ਸੁਨੇਹਾ ਦਿੱਤਾ ਹੈ। ਜਿਸ ਨਾਲ ਧਰਮਾਂ, ਜਾਤਾਂ ਦੇ ਨਾਮ 'ਤੇ ਹੋ ਰਹੇ ਖੂਨ ਖਰਾਬੇ ਤੇ ਫਿਰਕਾਪ੍ਰਸਤੀ ਨੂੰ ਰੋਕਿਆ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ। ਪਰਮਸਤਿ ਨੂੰ ਵੀ 'ਆਪੇ ਮਿਹਰ ਦਇਆਪਤਿ ਦਾਤਾ ਨਾ ਕਿਸੈ ਕੋ ਬੈਰਾਈ ਹੇ'[49] ਦੇ ਰੂਪ ਵਿਚ ਪੇਸ਼ ਕਰਕੇ ਕਿਸੇ ਵੀ ਤਰ੍ਹਾਂ ਦੀ ਬੇਗਾਨਗੀ ਨੂੰ ਨਿਖੇਧਿਆ ਹੈ। ਗੁਰਬਾਣੀ ਵਿਚ 'ਤਖਤਿ ਬਹੈ ਤਖਤੈ ਕੀ ਲਾਇਕ'[50] ਦੇ ਪ੍ਰਵਚਨ ਰਾਹੀਂ ਸਵੱਸਥ ਨਿਆਂ ਪ੍ਰਬੰਧ ਅਤੇ ਰਾਜਨੀਤਿਕ ਅਵਸਥਾ ਨੂੰ ਸਿਰਜਨ ਦੀ ਤਾਕੀਦ ਕੀਤੀ ਗਈ ਹੈ। ਇਕ ਸਿਹਤਮੰਦ ਸਮਾਜ ਦੀ ਕਲਪਨਾ ਕਰਦਿਆਂ ਹੋਇਆਂ ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਨੇ ਇਸ ਜਗਤ ਨੂੰ ਧਰਮ ਕਮਾਉਣ ਦੀ ਜਗ੍ਹਾ ਮੰਨਿਆ ਹੈ।

ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਸ਼ੁਭ ਅਮਲ ਅਤੇ ਨੇਕੀ ਕਰਨ ਦੀ ਪ੍ਰੇਰਨਾ ਦਿੱਤੀ ਗਈ ਹੈ। ਪਦਾਰਥਵਾਦ ਅਤੇ ਮਾਇਆ ਤੋਂ ਨਿਜਾਤ ਪਾਉਣ ਦਾ ਸੰਦੇਸ਼ ਦਿੱਤਾ ਗਿਆ ਹੈ। ਗੁਰਬਾਣੀ ਵਿਚ ਕਾਮ, ਕ੍ਰੋਧ, ਅਹੰਕਾਰ[51], ਨਿੰਦਾ[52], ਲਬ ਲੋਭ[53] ਆਦਿ ਕੂੜ ਕਬਾੜੇ[54] ਨੂੰ ਛੱਡਣ ਲਈ ਕਿਹਾ ਗਿਆ ਹੈ। ਸ਼ੁਭ ਅਮਲ ਸਤ, ਸੰਤੋਖ, ਖਿਮਾ[55] ਨੂੰ ਆਪਣੀ ਜੀਵਨ-ਜਾਚ ਦਾ ਭਾਗ ਬਣਾ ਕੇ ਭਾਣੇ ਵਿਚ ਰਹਿਣ ਦਾ ਸੰਦੇਸ਼ ਦਿੱਤਾ ਹੈ। ਇਸ ਵਾਸਤੇ ਦਿਨ ਰਾਤ ਅਧਿਆਤਮਕ ਕਰਮ[56] ਕਰਨ ਲਈ ਕਿਹਾ ਗਿਆ ਹੈ। ਇਹ ਕਰਮ ਨਾਮ ਸਿਮਰਨ, ਪਰਮਾਤਮਾ ਅੱਗੇ ਆਤਮ ਸਮਰਪਣ ਅਤੇ ਆਤਮ ਚੀਨਣ ਲਈ ਕਿਹਾ ਗਿਆ ਹੈ।[57] ਇਸ ਪ੍ਰਕਾਰ ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਦੁਆਰਾ ਸਿਰਜਿਤ ਸਰਬ ਸਾਂਝੇ ਸਭਿਆਚਾਰਕ ਮਾਡਲ ਦੀ ਪ੍ਰਸੰਗਿਕਤਾ ਤ੍ਰੈਕਾਲੀ ਹੈ।

ਹਵਾਲੇ ਅਤੇ ਟਿੱਪਣੀਆਂ:

1. ਡਾ. ਗੁਰਜੀਤ ਸਿੰਘ, ਸਭਿਆਚਾਰ ਦਾ ਫਲਸਫਾ, ਪਬਲੀਕੇਸ਼ਨ ਬਿਊਰੋ, ਪੰਜਾਬੀ ਯੂਨੀਵਰਸਿਟੀ, ਪਟਿਆਲਾ, 2009, ਪੰਨਾ 37.
2 ਡਾ. ਭਾਰਤਬੀਰ ਕੌਰ ਸੰਧੂ, ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਤੇਗ਼ ਬਹਾਦਰ ਬਾਣੀ ਦਾ ਚਿਹਨ ਪ੍ਰਬੰਧ, ਲੋਕ ਗੀਤ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ਨ, ਚੰਡੀਗੜ੍ਹ, 2010, ਪੰਨਾ 67.
3 ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ, ਪੰਨਾ 722.
4 ਕਲਿ ਕਾਤੀ ਰਾਜੇ ਕਾਸਾਈ ਧਰਮੁ ਪੰਖ ਕਰਿ ਉਡਰਿਆ॥ (ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 145).
5 ਵਿਸਮਾਦੁ ਨਾਦ,ਅੰਕ 1, ਜਨਵਰੀ 1994, ਪੰਨਾ 129
6 ਭਾਈ ਗਰਦਾਸ, ਵਾਰ ਪਹਿਲੀ, ਪਉੜੀ 21ਵੀਂ
7 ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ, ਪੰਨਾ 470.
8 ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 142.
9 ਉਹੀ, ਪੰਨੇ 465-466.
10. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 141.
11. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 662.
12. ਉਹੀ
13· ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 634
14. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 162.
15. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 747.
16. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 72.
17. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 97.
18 . ਇੰਦੂਭੂਸ਼ਣ ਬੈਨਰਜੀ ਅਨੁਵਾਦਕ ਪ੍ਰੀਤਪਾਲ ਸਿੰਘ, ਖਾਲਸੇ ਦੀ ਉਤਪਤੀ (ਜਿਲਦ ਪਹਿਲੀ), ਪਬਲੀਕੇਸ਼ਨ ਬਿਊਰੋ ਪੰਜਾਬੀ ਯੂਨੀਵਰਸਿਟੀ, ਪਟਿਆਲਾ, 2008, ਪੰਨਾ 66
19. ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ, ਪੰਨਾ 117
20. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 944.
21. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 349.
22. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 266.
23. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 1013
24. ਉਹੀ, ਪੰਨੇ 1421.
25. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 522.
26. ਗੁਰੁ ਪੀਰ ਸਦਾਏ ਮੰਗਣ ਜਾਇ ਤਾ ਕੈ ਮੂਲਿ ਨ ਲਗੀਐ ਪਾਇ॥ (ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 1245)
27. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 422
28. ਉਹੀ
29. ਡਾ. ਸੁਦਰਸ਼ਨ ਗਾਸੋ, ਪੰਜਾਬੀ ਸਭਿਆਚਾਰ ਸਿਧਾਂਤ ਤੇ ਸਰੂਪ, ਪੰਨਾ 58.
30. ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ, ਪੰਨਾ 15.
31. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 13.
32 ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 1299.
33. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 1184
34. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 386
35. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 76
36. ਸਿਮਰਜੀਤ ਸਿੰਘ(ਸੰਪਾ.), ਗੁਰਮਤਿ-ਦਰਸ਼ਨ ਅਤੇ ਸਿੱਖ-ਸੱਭਿਆਚਾਰ, ਸ਼੍ਰੋਮਣੀ ਗੁਰਦੁਆਰਾ ਪ੍ਰਬੰਧਕ ਕਮੇਟੀ, ਸ੍ਰੀ ਅੰਮ੍ਰਿਤਸਰ, 2010, ਪੰਨਾ 84
37. ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ, ਪੰਨਾ 74
38. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 149
39. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 661
40. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 473
41. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 143
42. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 16
43. ਉਹੀ
44 · ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 109
45. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 942
46. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 62
47. ਆਪੇ ਪੁਰਖੁ ਆਪੇ ਹੀ ਨਾਰੀ॥ (ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 1020)
48. ਭੈ ਕਾਹੂ ਕਉ ਦੇਤ ਨਹਿ ਨਹਿ ਭੈ ਮਾਨਤ ਆਨ॥ ਕਹੁ ਨਾਨਕ ਸੁਨਿ ਰੇ ਮਨਾ ਗਿਆਨੀ ਤਾਹਿ ਬਖਾਨਿ॥ (ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 1427)
49. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 1022.
50. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 1039.
51. ਕਾਮ ਕ੍ਰੋਧ ਅਹੰਕਾਰ ਨਿਵਾਰੇ॥ (ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 1022)
52. ਛੋਡਹੁ ਨਿੰਦਾ ਤਾਤਿ ਪਰਾਈ॥ (ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 1026)
53. ਲਬੁ ਲੋਭੁ ਤਜਿ ਹੋਹੁ ਨਿਚਿੰਦਾ॥ (ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 1041)
54. ਛੋਡਹੁ ਪ੍ਰਾਣੀ ਕੂੜ ਕਬਾੜਾ॥ (ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 1025)
55. ਸਤ ਸੰਤੋਖਿ ਰਹਹੁ ਜਨ ਭਾਈ॥ ਖਿਮਾ ਗਹਹੁ ਸਤਿਗੁਰ ਸਰਣਾਈ॥ (ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 1030)
56. ਅਧਿਆਤਮ ਕਰਮ ਕਰੇ ਦਿਨੁ ਰਾਤੀ॥ (ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 1039)
57. ਆਤਮੁ ਚੀਨਿ ਪਰਾਤਮੁ ਚੀਨਹੁ ਗੁਰ ਸੰਗਤਿ ਇਹੁ ਨਿਸਤਾਰਾ ਹੇ॥ (ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 1030)

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਵਿਚ ਸਮਾਜ ਸੁਧਾਰਕ ਅੰਸ਼

* ਡਾ. ਰਾਜਬੀਰ ਕੌਰ

* ਅਸਿਸਟੈਂਟ ਪ੍ਰੋਫ਼ੈਸਰ, ਖਾਲਸਾ ਕਾਲਜ, ਅੰਮ੍ਰਿਤਸਰ।

15ਵੀਂ ਸਦੀ ਵਿਚ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਨੇ ਪੰਜਾਬੀ ਵਿਚ ਬਹੁਪੱਖੀ ਕਾਵਿ-ਰਚਨਾ ਰਾਹੀਂ ਇਸ ਨੂੰ ਅਮੀਰੀ ਬਖਸ਼ੀ। ਸਿੱਖ ਪੰਥ ਦੇ ਮੋਢੀ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਨੇ ਆਪਣੀ ਬਾਣੀ ਰਾਹੀਂ, ਗੋਸ਼ਟਾਂ ਰਾਹੀਂ ਆਪਣਾ ਮੂਲ ਮੰਤਵ ਪੇਸ਼ ਕੀਤਾ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਮਨੁੱਖੀ ਜੀਵਨ ਨਾਲ ਸੰਬੰਧਿਤ ਲਗਭਗ ਹਰੇਕ ਵਿਸ਼ੇ ਬਾਰੇ ਘੋਖ ਕੀਤੀ ਅਤੇ ਆਪਣੇ ਵਿਚਾਰ ਸਪੱਸ਼ਟ ਰੂਪ ਵਿਚ ਬਿਆਨ ਕੀਤੇ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਨੇ ਆਪਣੀ ਬਾਣੀ ਦੁਆਰਾ ਇਕ ਨਵੇਂ ਤੇ ਨਰੋਏ ਸਮਾਜ ਦੀ ਅਧਾਰਸ਼ਿਲਾ ਰੱਖੀ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਸਦਾਚਾਰ ਨੂੰ ਰੱਬ ਨਾਲੋਂ ਵੀ ਵੱਧ ਦਰਜਾ ਦਿੱਤਾ। ਅਸਲ ਵਿਚ ਸਦਾਚਾਰ ਹੀ ਤੇ ਮਾਨਵਤਾ ਦੀ ਪੱਕੀ ਨੀਂਹ ਹੈ ਜਿਸ ਉੱਪਰ ਸ਼ੁਭ ਤੇ ਦੈਵੀ ਗੁਣਾਂ ਨਾਲ ਬੁਲੰਦ ਇਮਾਰਤ ਬਣਾਈ ਜਾ ਸਕਦੀ ਹੈ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਦਾ ਬਲ ਇਸ ਹਕੀਕਤ ਉੱਪਰ ਸੀ ਕਿ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਚਾਹੀਦਾ ਹੈ ਕਿ ਖ਼ੁਦ ਨੂੰ ਇਕ ਅਸਲੀ ਅਰਥਾਂ ਵਾਲਾ ਇਨਸਾਨ ਬਣਾਇਆ ਜਾਵੇ ਜਿਹੜਾ ਕਿ ਦੂਜੇ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਇਨਸਾਨ ਸਮਝਕੇ ਉਨ੍ਹਾਂ ਨਾਲ ਇਨਸਾਨੀਅਤ ਦਾ ਵਿਵਹਾਰ ਕਰੇ।

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਨੇ ਆਪਣੀ ਰਚਨਾ ਨੂੰ ਮੁਕਤਕ ਕਾਵਿ ਵਿਚ ਪੇਸ਼ ਕੀਤਾ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਵਿਚ ਵਰਤੇ ਗਏ ਪ੍ਰਮੁੱਖ ਕਾਵਿ-ਰੂਪ ਹਨ : ਸ਼ਬਦ (ਪਦੇ, ਦੁਪਦੇ, ਚਉਪਦੇ, ਅਸ਼ਟਪਦੀਆਂ, ਸੋਦਰ, ਆਰਤੀ, ਸੁਚੱਜੀ, ਕੁਚੱਜੀ, ਪਾਉੜੀਆਂ, ਛੰਤ, ਪਹਿਰੇ, ਕਾਫ਼ੀ, ਪਟੀ, ਅਲਾਹੁਣੀ, ਸੋਹਿਲੇ ਆਦਿ। ਇਨ੍ਹਾਂ ਕਾਵਿ-ਰੂਪਾਂ ਦੁਆਰਾ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਨੇ ਬ੍ਰਹਮ ਅਤੇ ਬ੍ਰਹਿਮੰਡ ਵਿਗਿਆਨ ਤੋਂ ਲੈ ਕੇ ਜੀਵ-ਆਤਮਾ, ਸਮਾਜ-ਸ਼ਾਸਤਰ, ਰਾਜਨੀਤੀ, ਧਰਮ ਅਤੇ ਸਦਾਚਾਰਕਤਾ ਤਕ ਬਹੁਤ ਸਾਰੇ ਵਿਸ਼ਿਆਂ ਨੂੰ ਆਪਣੀ ਰਚਨਾ ਦਾ ਆਧਾਰ ਬਣਾਇਆ ਹੈ। ਮੇਰੇ ਹਥਲੇ ਖੋਜ-ਪੇਪਰ ਦਾ ਵਿਸ਼ਾ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਨੂੰ ਸਮਾਜ-ਸੁਧਾਰਕ ਦੇ ਰੂਪ ਵਿਚ ਪੇਸ਼ ਕਰਨਾ ਹੈ।

ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਦਿਨਾਂ ਵਿਚ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਧਰਮ-ਸੁਧਾਰ, ਭੁਲੇ-ਭਟਕਿਆਂ ਨੂੰ ਸਿੱਧੇ ਰਸਤੇ ਪਾਉਣ, ਅਧਰਮ ਦਾ ਨਾਸ਼ ਕਰਨ, ਰਾਜਨੀਤੀ ਤੇ ਸਮਾਜ ਨੂੰ ਨਵਾਂ ਰੂਪ ਦੇਣ ਲਈ ਕਾਰਜ ਖੇਤਰ ਵਿਚ ਉਤਰੇ, ਉਸ ਵੇਲੇ ਭਾਰਤ ਬੜੇ ਹੀ ਨਾਜ਼ਕ ਦੌਰ ਵਿਚੋਂ ਗੁਜ਼ਰ ਰਿਹਾ ਸੀ। ਗੁਰੂ ਨੇ ਭਾਰਤ ਵਿਚ ਚੌਮੁਖੀ ਸੁਧਾਰ ਕੀਤਾ। ਗਰੀਬੀ ਦੂਰ ਕਰਨ ਲਈ ਆਰਥਿਕ ਸੁਝਾਅ ਦਿੱਤੇ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਸੱਚ ਦੇ ਪੁਜਾਰੀ ਸਨ। ਦੁਨੀਆਂ ਦੀ ਕੋਈ ਵੀ ਸ਼ਕਤੀ ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੂੰ ਸੱਚ ਪੇਸ਼ ਕਰਨ ਤੋਂ ਨਹੀਂ ਰੋਕ ਸਕੀ। ਮਨੁੱਖ ਦਾ ਆਚਾਰ ਬਣਾਉਣ ਵਿਚ ਸਮਾਜ ਅਤੇ ਉਸਦੇ ਸਮਾਜਿਕ ਚੌਗਿਰਦੇ ਦਾ ਬਹੁਤ ਹਿੱਸਾ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਕਾਵਿ ਦਾ ਮੂਲ ਮੰਤਵ ਚੰਗੇਰੇ ਸਮਾਜ ਦੀ ਸਿਰਜਨਾ ਅਤੇ ਉੱਤਮ ਨਾਗਰਿਕ ਪੈਦਾ ਕਰਨਾ ਸੀ। ਇਹ ਆਚਾਰ ਨੀਤੀ ਮਨੁੱਖੀ ਕਰਮ ਪ੍ਰਤਿਕਰਮ ਨਾਲ ਸੰਬੰਧਿਤ ਹੈ। ਕਰਮ ਨੂੰ ਚੰਗੇ-ਮੰਦੇ ਦੀ ਕਸੌਟੀ ਤੇ ਪਰਖਣ ਨਾਲ ਹੀ ਉਘੱਤਮ ਮਨੁੱਖ ਦੀ ਪਛਾਣ ਹੋ ਸਕਦੀ ਹੈ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਕਾਵਿ ਵਿਚ ਸਮਾਜ ਅਤੇ ਵਿਅਕਤੀ ਦੇ ਆਚਰਣ ਨੂੰ ਅਜਿਹੀ ਉੱਚਤਾ ਦੇਣ ਦਾ ਸੰਕਲਪ ਕੀਤਾ ਗਿਆ ਹੈ ਜੋ ਸੱਚ ਨਾਲੋਂ ਉਚੇਰੀ ਹੈ। ਜਿਵੇਂ ਕਿ:

ਸਚਹੁ ਓਰੈ ਸਭੁ ਕੋ ਉਪਰਿ ਸਚੁ ਆਚਾਰੁ।[1]

ਮਨੁੱਖੀ ਜੀਵਨ ਨੂੰ ਗੁਰਮਤਿ ਵਿਚ ਉੱਤਮ ਪ੍ਰਵਾਨ ਕੀਤਾ ਗਿਆ ਹੈ। ਮਾਨਸ ਜਨਮ ਦੁਰਲੱਭ ਹੈ। ਇਹ ਬਾਰ ਬਾਰ ਨਹੀਂ ਮਿਲਦਾ। ਇਸ ਲਈ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਆਪਣੇ ਲਕਸ਼ ਪ੍ਰਤਿ ਸੁਚੇਤ ਹੋਣਾ ਜ਼ਰੂਰੀ ਹੈ। ਮਨੁੱਖ ਲਈ ਉੱਦਮ, ਮਿਹਨਤ ਕਰਨਾ ਜ਼ਰੂਰੀ ਹੈ। ਹਰ ਮਨੁੱਖ ਲਈ ਜ਼ਰੂਰੀ ਹੈ ਕਿ ਉਹ ਹੱਥੀਂ ਕਿਰਤ ਕਰਕੇ ਰੋਜ਼ੀ ਕਮਾਵੇ। ਗੁਰਮਤਿ ਵਿਚ ਨਾ ਹਉਮੈ ਨੂੰ ਜਗ੍ਹਾ ਮਿਲੀ ਹੈ ਤੇ ਨਾ ਹੀ ਕੌੜਾ ਬੋਲਣ ਨੂੰ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਮਿੱਠਾ ਬੋਲਣ ਤੇ ਨਿਮਰ ਰਹਿਣ ਨੂੰ ਸਮੂਹ ਚੰਗਿਆਈਆਂ ਦਾ ਤੱਤ ਮੰਨਦੀ ਹੈ :

ਮਿਠਤੁ ਨੀਵੀਂ ਨਾਨਕਾ ਗੁਣ ਚੰਗਿਆਈਆਂ ਤੱਤ।[2]

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਵਿਚ ਸ਼ੁਭ ਗੁਣ ਧਾਰਨ ਦੀ ਆਵੱਸ਼ਕਤਾ ਦੱਸੀ ਗਈ ਹੈ। ਮਨ ਨੂੰ ਮੈਲ ਤੋਂ ਰਹਿਤ ਕਰਨਾ ਬੁਨਿਆਦੀ ਕਰਮ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਨੇ ਦੋਹਾਂ ਨੋਹਾਂ ਦੀ ਕਮਾਈ ਦੀ ਸ਼ਲਾਘਾ ਕੀਤੀ ਹੈ ਅਤੇ ਪਰਾਇਆ ਹੱਕ ਖਾਣ ਨੂੰ ਹਰਾਮ ਦਾ ਖਾਣਾ ਦੱਸਿਆ।ਹਕੁ ਪਰਾਇਆ ਨਾਨਕਾ ਉਸੁ ਸੂਅਰ ਉਸੁ ਗਾਇ।

ਗੁਰੁ ਪੀਰ ਹਾਮਾ ਤਾ ਭਰੇ ਜਾ ਮੁਰਦਾਰ ਨਾ ਖਾਇ।
ਗਲੀ ਭਿਸਤਿ ਨਾ ਜਾਈਐ ਛੁਟੈ ਸਚੁ ਕਮਾਇ।
ਮਾਰਣ ਪਾਹਿ ਹਰਾਮ ਮਹਿ ਹੋਇ ਹਲਾਲ ਨ ਜਾਇ।
ਨਾਨਕ ਗਲੀ ਕੂੜੀਈ ਕੂੜੋ ਪਲੈ ਪਾਇ।[3]

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਮਨੁੱਖੀ ਹਉਮੈ ਦੀ ਨਿੰਦਾ ਕਰਦੀ ਹੈ। ਮਨੁੱਖ ਲਈ ਆਪਣੀ ਹਉਮੈ ਘਟਾਉਣਾ ਬਹੁਤ ਜ਼ਰੂਰੀ ਹੈ ਤਾਂ ਜੋ ਹਿਰਦੇ ਵਿਚ ਸਦਭਾਵਨਾ ਤੇ ਉਚੇਰੀ ਚੇਤਨਤਾ ਜਗ੍ਹਾ ਬਣਾ ਸਕੇ। ਸੱਚੇ ਪ੍ਰਭੂ ਦਾ ਸੱਚਾ ਨਾਮ ਸੱਚੇ ਸਰੀਰ ਰੂਪੀ ਭਾਂਡੇ ਵਿਚ ਹੀ ਸਮਾਉਂਦਾ ਹੈ। ਪਰ ਆਮ ਤੌਰ ਤੇ ਮਨੁੱਖ ਦੀ ਕਥਨੀ ਤੇ ਕਰਨੀ ਵਿਚ ਅਸਪਸ਼ਟਤਾ ਪਾਈ ਜਾਂਦੀ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇ ਅਨੁਸਾਰ ਮਨੁੱਖ ਦੇ ਅਨੈਤਿਕ ਜਾਂ ਮੰਦੇ ਕਰਮ ਭਵਿਖਤ ਦੇ ਬੰਧਨ ਅਤੇ ਦੁੱਖ ਦਾ ਕਾਰਨ ਬਣਦੇ ਹਨ। ਇਸ ਤੋਂ ਉਲਟ ਨੈਤਿਕਤਾ ਬੰਧਨ ਤੋਂ ਮੁਕਤ ਕਰਦੀ ਹੈ। ਦੁਨਿਆਵੀ ਚੱਜ ਆਚਾਰ, ਸਿਆਣਪਾਂ, ਚੁਤਰਾਈ, ਰੂਪ, ਧਨ, ਮਾਲ, ਜੋਬਨ, ਬੁੱਧੀ ਆਦਿ ਇਹ ਸਾਰੇ ਅੱਕ ਦੀ ਛਾਂ ਹਨ। ਇਨ੍ਹਾਂ ਦਾ ਹੰਕਾਰ ਨਹੀਂ ਕਰਨਾ ਚਾਹੀਦਾ। ਇਹ ਸਥਿਰ ਨਹੀਂ ਬਲਕਿ ਨਾਸ਼ਵਾਨ ਹਨ :

- ਧਨ ਜੋਬਨੁ ਅਰੁ ਫੁਲੜਾ ਨਾਠੀਅੜੇ ਦਿਨ ਚਾਰਿ।[4]
- ਧਨ ਜੋਬਨੁ ਆਕ ਕੀ ਛਾਇਆ ਬਿਰਧਿ ਭਏ ਦਿਨ ਪੁੰਨਿਆ।[5]

ਜਦ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਆਪੇ ਦੀ ਸੋਝੀ ਹੋ ਜਾਂਦੀ ਹੈ ਉਹ ਜਨਮ ਬਾਜੀ ਨੂੰ ਜਿੱਤ ਲੈਂਦਾ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਮਿਸ਼ਨ ਮਨੁੱਖਤਾ ਨੂੰ ਸੱਚੀ ਤੇ ਸੁਚੱਜੀ ਜੀਵਨ-ਜਾਂਚ ਦਾ ਸਬਕ ਪੜਾਉਂਦਾ ਸੀ। ਜਿਸ ਨਾਲ

ਕੌਮਾਂ ਜਾਤਾਂ, ਭੇਖਾਂ, ਧਰਮਾਂ ਤੇ ਦੇਸ਼ਾਂ ਦੀ ਕੰਧ ਨੂੰ ਤੋੜ ਕੇ ਅਮੀਰੀ-ਗਰੀਬੀ ਦਾ ਖੱਪਾ ਪੂਰਿਆ ਜਾ ਸਕੇ।

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇ ਸਮੇਂ ਰਾਜਨੀਤਿਕ ਪਰਿਸਥਿਤੀ ਵਿਚ ਬਹੁਤ ਨਿਘਾਰ ਆ ਚੁੱਕਾ ਸੀ। ਸਿਕੰਦਰ ਲੋਧੀ (1489-1517 ਈ.) ਦੇ ਪ੍ਰਸੰਗ ਵਿਚ ਇਤਿਹਾਸਕਾਰ ਫ਼ਰਿਸ਼ਤਾ ਲਿਖਦਾ ਹੈ : *ਮੁਸਲਮਾਨ ਬਹੁਤ ਪੱਖਪਾਤੀ ਸਨ। ਹਿੰਦੂਆਂ ਅਤੇ ਬ੍ਰਾਹਮਣਾਂ ਨੂੰ ਮਿੱਟੀ ਵਾਂਗ ਸਮਝਦੇ ਸਨ। ਤੀਰਥ ਯਾਤਰੀਆਂ ਨੂੰ ਤੰਗ ਕੀਤਾ ਜਾਂਦਾ ਸੀ।*[6]

ਸਮੇਂ ਦੇ ਕਰਮਚਾਰੀ ਜਨਤਾ ਨੂੰ ਬਹੁਤ ਤੰਗ ਕਰਦੇ ਸਨ। ਉਹ ਵਿਲਾਸਤਾ ਵਿਚ ਡੁਬੇ ਹੋਏ ਸਨ। ਰਿਸ਼ਵਤ ਲੈਣ ਤੋਂ ਬਿਨ੍ਹਾਂ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦਾ ਗੁਜ਼ਾਰਾ ਨਹੀਂ ਸੀ ਚਲਦਾ। ਅਜਿਹੇ ਅਤਿਆਚਾਰੀ ਅਤੇ ਧਰਮਹੀਨ ਯੁੱਗ ਦੀ ਆਲੋਚਨਾ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਨੇ ਨਿਧੜਕ ਹੋ ਕੇ ਕੀਤੀ :

1. ਕਲਿ ਕਾਤੀ ਰਾਜੇ ਕਸਾਈ। ਧਰਮ ਪੰਖ ਕਰਿ ਉਡਰਿਆ।[7]
2. ਰਾਜੇ ਸੀਂਹ ਮੁਕਦਮ ਕੁਤੇ॥[8]

ਇਵੇਂ ਹਿੰਦੋਸਤਾਨ ਵਿਚ ਮਜ਼੍ਹਬ ਦੇ ਨਾਂ ਤੇ ਫੌਜੀ ਸ਼ਾਸਕ ਪਰਜਾ ਉੱਤੇ ਅਤਿਆਚਾਰ ਕਰਦੇ ਸਨ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੀ 'ਬਾਬਰ-ਬਾਣੀ' ਵਿਚ ਉਸ ਵੇਲੇ ਦੇ ਦਰਦਨਾਕ ਦ੍ਰਿਸ਼ ਮਿਲਦੇ ਹਨ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਨੇ ਬਾਬਰ ਦੀ ਸੈਨਾ ਨੂੰ 'ਪਾਪ ਦੀ ਜੰਞ' ਕਿਹਾ ਹੈ ਅਤੇ ਉਸ ਦੇ ਵੱਲੋਂ ਜੋਰ ਜਬਰੀ ਕਰ ਲੈਣ ਵਿਰੁੱਧ ਵਾਕ ਕਹੇ ਹਨ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਨਾਲ ਹੀ ਜਨਤਾ ਨੂੰ ਕਰਮਯੋਗੀ ਅਤੇ ਸੂਰਬੀਰ ਬਣ ਜਾਣ ਦਾ ਉਪਦੇਸ਼ ਵੀ ਦਿੱਤਾ ਹੈ:

ਕਰਮ ਖੰਡ ਕੀ ਬਾਣੀ ਜੋਗ
ਤਿਥੈ ਹੋਰ ਨਾ ਕੋਈ ਹੋਰ।
ਤਿਥੈ ਜੋਧ ਮਹਾਂ ਬਲ ਸੂਰ।
ਤਿਨ ਮਹਿ ਰਾਮੁ ਰਹਿਆ ਭਰਭੂਰ॥[9]

ਮਾਨਵ ਸ਼ਖ਼ਸੀਅਤ ਦਾ ਮਹੱਤਵਪੂਰਨ ਪੱਖ ਉਸਦਾ ਸਮਾਜਕ ਨੈਤਿਕ ਪੱਖ ਹੈ। ਅਸਲ ਵਿਚ ਮਾਨਵ ਸ਼ਖ਼ਸੀਅਤ ਦਾ ਮੂਲ ਆਧਾਰ ਹੀ ਉਸਦੀ ਸਮਾਜਕਤਾ ਹੈ।[10] ਸਮਾਜ ਵਿਚ ਰਹਿੰਦਿਆਂ ਅਤੇ ਇਸ ਦੀਆਂ ਕਦਰਾਂ ਦੇ ਗੁੰਝਲਦਾਰ ਤਾਣੇ ਪੇਟੇ ਅੰਦਰ ਹੀ ਮਾਨਵ ਸ਼ਖ਼ਸੀਅਤ ਦਾ ਉਦੈ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਕੇਵਲ ਮਨੁੱਖ ਹੀ ਨੈਤਿਕ ਜੀਵ ਹੈ ਕਿਉਂਕਿ ਕੇਵਲ ਉਹੋ ਹੀ ਆਪਣੇ ਨਿੱਜੀ ਲਾਭ ਤੋਂ ਉਚੇਰਾ ਉਠ ਸਕਣ ਦੀ ਸੰਭਾਵਨਾ ਰੱਖਦਾ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਮਾਨਵ ਸ਼ਖ਼ਸੀਅਤ ਦੇ ਇਸ ਮਹੱਤਵਪੂਰਨ ਪੱਖ ਪ੍ਰਤੀ ਚੇਤੰਨ ਸਨ।

ਜੀਵਨ ਮਨੁੱਖਾਂ ਦੇ ਆਪਸੀ ਸੰਬੰਧਾਂ ਦਾ ਤਾਣਾ ਪੇਟਾ ਹੈ।[11] ਇਨ੍ਹਾਂ ਸੰਬੰਧਾਂ ਦੀ ਸਹੀ ਦਿਸ਼ਾ ਨਿਰਧਾਰਿਤ ਕਰਨ ਲਈ ਨੈਤਿਕ ਗੁਣ ਧਾਰਣ ਕਰਨੇ ਜ਼ਰੂਰੀ ਹਨ। 15ਵੀਂ ਸਦੀ ਵਿਚ ਭਾਰਤ ਦੀ ਨੈਤਿਕ ਅਵਸਥਾ ਦਾ ਵੀ ਨਿਘਾਰ ਹੋਇਆ ਪਿਆ ਸੀ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਨੇ ਹਰ ਸਮਾਜਕ ਬੁਰਾਈ ਵਿਰੁੱਧ ਆਵਾਜ਼ ਉਠਾਈ। ਤਤਕਾਲੀਨ ਸਮਾਜ ਜਾਤ-ਪਾਤ ਦੇ ਬੰਧਨਾਂ ਵਿਚ ਗ੍ਰਸਤ ਸੀ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੇ ਸਮੇਂ ਭਾਰਤੀ ਸਮਾਜ ਦੋ ਪ੍ਰਮੁੱਖ ਵਰਗਾਂ (ਹਿੰਦੂ ਅਤੇ ਮੁਸਲਿਮ) ਵਿਚਕਾਰ ਵੰਡਿਆ ਹੋਇਆ ਸੀ। ਉਸ ਸਮੇਂ ਮੁਸਲਮਾਨਾਂ ਦਾ ਪਲੜਾ ਭਾਰੀ ਸੀ। ਉਹ ਹਰ ਖੇਤਰ ਵਿਚ ਕਾਬਜ ਸਨ। ਇਸ ਲਈ ਹਿੰਦੂਆਂ ਨੂੰ ਜਾਂ ਤਾਂ ਮੁਸਲਮਾਨ ਬਣਨਾ ਪਿਆ ਤੇ ਜਾਂ ਮੁਸਲਮਾਨਾਂ ਵਾਂਗ ਰਹਿਣਾ ਪਿਆ। ਕੱਟੜ ਹਿੰਦੂ ਮੁਸਲਮਾਨਾਂ ਨੂੰ ਮਲੇਛ ਕਹਿ ਕੇ ਦੂਰ ਕਹਿੰਦੇ ਸਨ ਤੇ ਮੁਸਲਮਾਨ ਹਿੰਦੂਆਂ ਨੂੰ ਕਾਫ਼ਿਰ ਕਹਿ ਕੇ ਨਫ਼ਰਤ ਕਰਦੇ ਸਨ। ਫ਼ਲਸਰੂਪ ਹਿੰਦੂ ਆਪਣਾ ਗੁੱਸਾ ਆਪਣੇ ਤੋਂ ਕਮਜ਼ੋਰ ਤੇ ਹੀਣੇ ਲੋਕਾਂ ਤੇ ਕੱਢਦੇ ਸਨ। ਜਿਵੇਂ ਮੁਸਲਮਾਨਾਂ ਨੇ ਹਿੰਦੂਆਂ ਤੇ ਜ਼ੁਲਮ ਢਾਹੇ ਉਵੇਂ ਹੀ ਹਿੰਦੂਆਂ ਨੇ ਅੱਗੋਂ ਸ਼ੂਦਰਾਂ ਤੇ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੂੰ ਨੀਚ ਜਾਤ ਕਹਿ ਕੇ ਦੂਰ ਰੱਖਿਆ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੂੰ ਫਿਟਕਾਰਿਆ ਗਿਆ। ਪਰੰਤੂ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਨੂੰ ਇਸ ਜਾਤ-ਪਾਤ ਅਤੇ ਊਚ-ਨੀਚ ਨਾਲ ਨਫ਼ਰਤ ਸੀ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਅਨੁਸਾਰ :

1. "ਫਕੜ ਜਾਤਿ ਫਕੜੁ ਨਾਉ।
ਸਭਨਾ ਜੀਆ ਇਕਾ ਛਾਉ॥"[12]

2. "ਪ੍ਰਣਵੈ ਨਾਨਕ ਜਾਤਿ ਕੈਸੀ॥"[13]

ਗੁਰੂ ਦੇਵ ਦੇ ਧਰਮ ਦੀ ਇਕ ਹੋਰ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ਤਾ ਇਹ ਹੈ ਕਿ ਉਸ ਵਿਚ ਮਾਨਵਤਾ ਨੂੰ ਮੁੱਖ ਰੱਖ ਕੇ ਹਿੰਦੂ ਧਰਮ ਅਤੇ ਇਸਲਾਮ ਨੂੰ ਇਕ ਰੂਪ ਵਿਚ ਮਿਲਾਉਣ ਦਾ ਯਤਨ ਕੀਤਾ ਹੈ। ਭਾਵ ਹਿੰਦੂ ਅਤੇ ਮੁਸਲਮਾਨ ਇਕ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਦੀ ਔਲਾਦ ਹਨ। ਇਹ ਆਪਸੀ ਘ੍ਰਿਣਾ ਨੂੰ ਦੂਰ ਕਰਨ ਦਾ ਯਤਨ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਮਨੁੱਖ ਦੀ ਜਾਤ ਨੂੰ ਕੋਈ ਮਹੱਤਵ ਨਹੀਂ ਦਿੰਦੇ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਅਨੁਸਾਰ ਇਨਸਾਨ ਆਪਣੇ ਕੰਮਾਂ ਕਾਰਾਂ ਤੋਂ ਪਛਾਣਿਆ ਜਾਣਾ ਚਾਹੀਦਾ ਹੈ ਨਾ ਕਿ ਜ਼ਾਤ ਤੋਂ।

ਜਾਤਿ ਜਨਮੁ ਨਹ ਪੁਛੀਐ ਸਚ ਘਰੁ ਲੇਹੁ ਬਤਾਇ॥
ਸਾ ਜਾਤਿ ਸਾ ਪਤਿ ਹੈ ਜੇਹੇ ਕਰਮ ਕਮਾਇ॥
ਜਨਮ ਮਰਨ ਦੁਖੁ ਕਾਟੀਐ ਨਾਨਕ ਛੂਟਸਿ ਨਾਇ॥[14]

_ਰੂ ਨਾਨਕ ਦੀ ਰਚਨਾ ਵਿਚ ਦ੍ਰਿੜਤਾ ਨਾਲ ਜੀਵਨ ਜਿਊਣ ਨੂੰ ਤਰਜੀਹ ਦਿੱਤੀ ਗਈ ਹੈ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਦਾ ਮਾਨਵ ਏਕਤਾ ਪ੍ਰਤੀ ਕੀਤਾ ਪ੍ਰਚਾਰ ਖੇਰੂੰ ਖੇਰੂੰ ਹੋਏ ਭਾਰਤੀ ਸਮਾਜ ਨੂੰ ਸੰਗਠਿਤ ਕਰਨ ਵਿਚ ਮਹੱਤਵਪੂਰਨ ਭੂਮਿਕਾ ਨਿਭਾਉਂਦਾ ਹੈ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਊਚ ਨੀਚ ਤੋਂ ਰਹਿਤ ਸਮਾਜ ਦੀ ਉਸਾਰੀ ਕੀਤੀ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੁਆਰਾ ਚਲਾਈ ਗਈ ਸੰਗਤ ਅਤੇ ਪੰਗਤ ਦੀ ਪ੍ਰਥਾ ਇਸ ਗੱਲ ਦੀ ਗਵਾਹੀ ਭਰਦੀਆਂ ਹਨ। ਜਿਸ ਵਿਚ ਨੀਵੇਂ ਤੋਂ ਨੀਵਾਂ ਉੱਚੇ ਤੋਂ ਉੱਚੇ ਦੇ ਸਮਾਨ ਬੈਠਦਾ ਸੀ।

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਨੇ ਕਰਮ ਕਾਂਡਾਂ ਦਾ ਵੀ ਵਿਰੋਧ ਕੀਤਾ ਹੈ। "ਪੁਰਾਣਾਂ ਵਿਚ ਪੂਜਾ ਦਾ ਪੁਜਾਰੀਆਂ ਦੇ ਪ੍ਰਭਾਵ ਹੇਠ ਵਿਸਥਾਰ ਸਹਿਤ ਵਰਣਨ ਹੈ। ਨਰਕਾਂ ਦਾ ਡਰ ਅਤੇ ਸੁਰਗ ਦੀ ਖਿੱਚ ਕਰਮ ਕਾਂਡਾਂ ਵੱਲ ਪ੍ਰੇਰਿਤ ਕਰਦੀ ਹੈ। ਸਭ ਤੋਂ ਵੱਧ ਜ਼ੋਰ ਤੀਰਥ ਯਾਤਰਾ ਤੇ ਹੈ। ਬਰਤ ਨੇਮ ਅਤੇ ਮੂਰਤੀ ਪੂਜਾ ਤੇ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ ਜ਼ੋਰ ਦਿੱਤਾ ਹੈ।"[15] ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਨੇ ਮੰਦਰਾਂ ਵਿਚ ਜਾ ਕੇ ਪੁਜਾਰੀਆਂ ਤੇ ਬ੍ਰਾਹਮਣਾਂ ਨੂੰ ਚੜ੍ਹਾਵੇ ਤੇ ਚੰਦੇ ਦੇਣ ਦੀ ਮਨਾਹੀ ਕੀਤੀ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਸਾਰੇ ਫੋਕੇ ਵਹਿਮ ਜੋ ਨਾਨਕ ਦੇ ਸਮੇਂ ਦੇ ਲੋਕਾਂ ਦੇ ਧਰਮ ਦਾ ਹਿੱਸਾ ਬਣੇ ਹੋਏ ਸਨ ਅਤੇ ਪਰੋਹਿਤਾਂ ਤੇ ਹੋਰ ਧਾਰਮਿਕ ਆਗੂਆਂ ਦੀ ਖਾਧ-ਖੁਰਾਕ ਸਨ, ਉਨ੍ਹਾਂ ਦਾ ਖੰਡਨ ਕੀਤਾ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਨੇ ਸ਼ਰਾਧ, ਜਨੇਊ ਤੇ ਸੂਤਕ ਆਦਿ ਦੇ ਵਹਿਮਾਂ ਦੀ ਜ਼ੋਰਦਾਰ ਸ਼ਬਦਾਂ ਵਿਚ ਨਿਖੇਧੀ ਕੀਤੀ।

ਦਇਆ ਕਪਾਹ ਸੰਤੋਖੁ ਸੂਤ ਜਤੁ ਗੰਢੀ ਸਤੁ ਵਟੁ।
ਏਹੁ ਜਨੇਊ ਜੀਅ ਕਾ ਹਈ ਤਾ ਪਾਡੇ ਘਤੁ।[16]

ਹਿਮਾਂ-ਭਰਮਾਂ ਦੇ ਨਾਲ ਨਾਲ ਉਨ੍ਹਾਂ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਵੀ ਪ੍ਰਭਾਵਸ਼ਾਲੀ ਸ਼ਬਦਾਂ ਵਿਚ ਤਾੜਨਾ ਕੀਤੀ ਗਈ ਜਿਹੜੇ ਅਨਜਾਣ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਪੁੱਠੇ ਰਸਤੇ ਪਾ ਰਹੇ ਸਨ।

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਵਿਚ ਬਹੁਤ ਜਗ੍ਹਾ ਬੁੱਤ ਪੂਜਾ ਜਾਂ ਮੂਰਤੀ ਪੂਜਾ ਦੀ ਜੋਰਦਾਰ ਨਿਖੇਧੀ ਕੀਤੀ ਮਿਲਦੀ ਹੈ। ਨਾਲ ਹੀ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਇਹ ਸਮਝਾਇਆ ਹੈ ਕਿ ਇਹ ਮੂਰਤੀ ਪੂਜਾ ਦਾ ਵਿਸ਼ਵਾਸ ਮਹਿਜ਼ ਇਕ ਪਾਖੰਡ ਤੇ ਫੋਕਾ ਕਰਮਕਾਂਡ ਹੈ। ਇਹ ਬੇਜ਼ਾਨ ਮੂਰਤੀਆਂ ਮਨੁੱਖ ਦਾ ਕੁਝ ਨਹੀਂ ਸੰਵਾਰ ਸਕਦੀਆਂ। ਸੋ ਇਨ੍ਹਾਂ ਦੀ ਪੂਜਾ ਵਿਅਰਥ ਹੈ ਇਨ੍ਹਾਂ ਪਿਛੇ ਪ੍ਰਚਲਿਤ ਲੋਕ ਧਾਰਨਾਵਾਂ ਸਭ ਗਲਤ ਤੇ ਕੁਰਾਹੇ ਪਾਉਣ ਵਾਲੀਆਂ ਹਨ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਸੰਕੇਤ ਕਰਦੇ ਹਨ :

ਅੰਧੇ ਗੂੰਗੇ ਅੰਧ ਅੰਧਾਰੁ। ਪਾਥਰ ਲੇ ਪੂਜਹਿ ਮੁਗਧ ਗਵਾਰੁ।
ਓਹਿ ਜਾ ਆਪਿ ਡੁਬੇ ਤੁਮ ਕਹਾ ਤਾਰਣਹਾਰੁ।[17]

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਨੇ ਸਿੱਖਿਆ ਦਿਤੀ ਹੈ ਕਿ ਅਵਤਾਰਾਂ, ਦੇਵੀ-ਦੇਵਤਿਆਂ ਦੀਆਂ ਮੂਰਤੀਆਂ ਚਿਤ ਨੂੰ ਇਕਾਗਰ ਨਹੀਂ ਕਰ ਸਕਦੀਆਂ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਹਿੰਦੂ ਧਰਮ ਦੀਆਂ ਦਾਰਸ਼ਨਿਕ ਨੀਤੀਆਂ ਦੇ ਬਾਹਰਲੇ ਪੱਖਾਂ ਅਤੇ ਰੂੜ੍ਹੀਆਂ ਦਾ ਡੱਟ ਕੇ ਵਿਰੋਧ ਕਰਦੀ ਹੈ ਅਤੇ ਮਨੁੱਖ ਦੀ ਅੰਤਰ ਆਤਮਾ ਦੀ ਸੱਚੀ ਪੂਜਾ ਤੇ ਵਿਕਾਸ ਉਤੇ ਜ਼ੋਰ ਦਿੰਦੀ ਹੈ। ਇਵੇਂ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਨੇ ਆਪਣੀ

ਬਾਣੀ ਰਾਹੀਂ ਨਵੇਂ ਅਧਿਆਤਮਕ ਵਿਸ਼ਵਾਸਾਂ ਦੀ ਸਿਰਜਣਾ ਕੀਤੀ।

ਸਮਾਜ ਮਨੁੱਖਾਂ ਦਾ ਸਮੂਹ ਅਤੇ ਸੰਜੋਗ ਹੈ ਜਿਸ ਵਿਚ ਪਰਸਪਰ ਰਹਿਣ-ਸਹਿਣ, ਵਰਤ-ਵਰਤਾਰਾ, ਖਾਣ-ਪੀਣ ਅਤੇ ਪਹਿਨਣ ਦੀ ਭਾਵਨਾ ਪ੍ਰਫੁਲਿਤ ਹੁੰਦੀ ਹੈ। ਘਰ ਪਰਿਵਾਰ ਵੀ ਸਮਾਜ ਦਾ ਇਕ ਅੰਗ ਹੈ। ਘਰ-ਪਰਿਵਾਰ ਦੀ ਸੁਖਾਵੀਂ ਨੀਂਹ ਪਤੀ-ਪਤਨੀ ਦੇ ਆਪਸੀ ਰਿਸ਼ਤੇ ਦੇ ਸੁਖੈਨ ਹੋਣ ਦੋਂ ਬੱਝਦੀ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਨੇ ਗ੍ਰਹਿਸਥ ਜੀਵਾਂ ਨੂੰ ਸਭ ਤੋਂ ਵੱਧ ਮਹੱਤਤਾ ਦਿੱਤੀ ਹੈ। ਗ੍ਰਹਿਸਥ ਜੀਵਨ ਵਿਚ ਮਨੁੱਖ ਘਰ ਪਰਿਵਾਰ ਨਾਲ ਜੁੜਿਆ ਹੋਇਆ ਧਰਮ-ਕਿਰਤ ਨਾਲ ਉਪਜੀਵਿਕਾ ਕਮਾਉਂਦਾ ਹੈ। ਉਸਦੇ ਅੰਦਰ ਪਰਉਪਕਾਰ ਦੀ ਭਾਵਨਾ ਜਾਗ੍ਰਿਤ ਰਹਿੰਦੀ ਹੈ। ਅਸਲ ਵਿਚ ਜੋ ਸੰਸਾਰਿਕ ਧੰਦਿਆਂ ਨੂੰ ਚੰਗੀ ਤਰ੍ਹਾਂ ਕਰਦੇ ਹੋਏ ਪਰਮਾਤਮਾ ਨੂੰ ਯਾਦ ਰੱਖਦੇ ਹਨ, ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੂੰ ਉੱਤਮ ਗ੍ਰਹਿਸਥੀ ਕਿਹਾ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇ ਜੀਵਨ ਫ਼ਲਸਫ਼ੇ ਦਾ ਇਕ ਮਹੱਤਵਪੂਰਨ ਆਧਾਰ ਗ੍ਰਹਿਸਥ ਨੂੰ ਨਿਭਾਉਂਦਿਆਂ ਦੁਨਿਆਵੀਂ ਮੋਹ ਤੋਂ ਉੱਪਰ ਉੱਠ ਕੇ ਪ੍ਰਭੂ ਪ੍ਰਾਪਤੀ ਲਈ ਯਤਨ ਕਰਨਾ ਹੈ। ਮਾਇਆ ਰੂਪੀ ਦੁਨੀਆ ਵਿਚ ਵਿਚਰਦਿਆਂ ਹੋਇਆਂ ਵੀ ਇਸ ਦੇ ਮੋਹ ਮਾਇਆ ਤੋਂ ਉੱਪਰ ਉੱਠ ਕੇ ਪ੍ਰਭੂ ਭਗਤੀ ਰਾਹੀਂ ਪਾਰਬ੍ਰਹਮ ਦੇ ਮਿਲਾਪ ਦਾ ਰਾਹ ਇਵੇਂ ਦੱਸਿਆ ਹੈ :

ਜੈਸੇ ਜਲ ਮਹਿ ਕਮਲੁ ਨਿਰਾਲਮ ਮੁਰਗਾਈ ਨੈਸਾਣੇ॥
ਸੁਰਤ ਸਬਦਿ ਭਵ ਸਾਗਰ ਤਰੀਐ ਨਾਨਕ ਨਾਮੁ ਵਖਾਣੇ॥ [18]

ਇਸਦੇ ਨਾਲ ਹੀ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਨੇ ਦੇਸ਼ ਪ੍ਰੇਮ ਦੇ ਅਸਲੀ ਅਰਥ ਸਮਝਾਏ। ਇਸਨੂੰ ਧਰਮ ਦਾ ਹੀ ਇਕ ਅੰਗ ਮੰਨਿਆ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਇਹ ਸਪੱਸ਼ਟ ਕੀਤਾ ਕਿ ਦੇਸ਼ ਪ੍ਰੇਮ ਤੋਂ ਭਾਵ ਕੇਵਲ ਇਹ ਨਹੀਂ ਕਿ ਆਪਣੀ ਜਨਮ ਭੂਮੀ ਨਾਲ ਪਿਆਰ ਕੀਤਾ ਜਾਵੇ, ਸਗੋਂ ਇਸ ਦਾ ਮਤਲਬ ਇਹ ਹੈ ਕਿ ਦੇਸ਼ ਵਾਸੀਆਂ ਨਾਲ ਪ੍ਰੇਮ ਕੀਤਾ ਜਾਵੇ, ਉਨ੍ਹਾਂ ਲਈ ਕੁਰਬਾਨੀਆਂ ਕੀਤੀਆਂ ਜਾਣ। ਆਪਣੇ ਨਿੱਜੀ ਸੁੱਖਾਂ ਦੀ ਪਰਵਾਹ ਕੀਤੇ ਬਿਨਾਂ ਦੂਜੇ ਲੋਕਾਂ ਦਾ ਭਲਾ ਕੀਤਾ ਜਾਵੇ। ਸਾਰਿਆਂ ਨੂੰ ਬਰਾਬਰ ਸਮਝਿਆ ਜਾਵੇ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਮਰਦ ਤੇ ਇਸਤਰੀ ਦੀ ਬਰਾਬਰਤਾ ’ਤੇ ਵੀ ਜ਼ੋਰ ਦਿੱਤਾ। ਉਸ ਸਮੇਂ ਸਤੀ ਪ੍ਰਥਾ, ਬਾਲ ਵਿਆਹ, ਅਨਪੜ੍ਹਤਾ ਅਤੇ ਅਰਖਿਆ ਦੇ ਕਾਰਣ ਨਾਰੀ ਜਾਤੀ ਦੀ ਹਾਲਤ ਦੁਖ-ਭਰੀ ਸੀ। ਨਾਥ ਜੋਗੀਆਂ ਅਤੇ ਕਈ ਸੰਤਾਂ ਨੇ ਨਾਰੀ ਜਾਤੀ ਨੂੰ ਮਾਇਆ ਦੀ ਮੂਰਤ ਸਮਝ ਕੇ ਉਸ ਦੀ ਬਹੁਤ ਨਿੰਦਾ ਕੀਤੀ ਸੀ। ਮਧ ਯੁਗ ਦੇ ਸਾਹਿਤ ਵਿਚ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਨੇ ਪਹਿਲੀ ਵਾਰ ਨਾਰੀ ਜਾਤੀ ਪ੍ਰਤਿ ਪਵਿੱਤਰ ਭਾਵਨਾਵਾਂ ਪ੍ਰਗਟ ਕੀਤੀਆਂ ਸਨ। ਉਹ ਨਾਰੀ ਨੂੰ ਸਮਾਜ ਵਿਚ ਉੱਚਾ ਸਥਾਨ ਦੇਣ ਦੇ ਸਮਰਥਕ ਸਨ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਸਮਾਜ ਵਿਚ ਇਸਤਰੀਆਂ ਦੀ ਬਰਾਬਰੀ ਮੰਨਣ ਲਈ ਇਵੇਂ ਉਪਦੇਸ਼ ਦਿੱਤਾ :

ਭੰਡਿ ਜੰਮੀਐ ਭੰਡਿ ਨਿੰਮੀਐ ਭੰਡਿ ਮੰਗਣੁ ਵੀਆਹੁ।
ਭੰਡਹੁ ਹੋਵੈ ਦੋਸਤੀ ਭੰਡਹੁ ਚਲੈ ਰਾਹੁ॥
ਭੰਡੁ ਮੁਆ ਭੰਡੁ ਭਾਲੀਐ ਭੰਡਿ ਹੋਵੈ ਬੰਧਾਨ।
ਸੋ ਕਿਉ ਮੰਦਾ ਆਖੀਐ ਜਿਤੁ ਜੰਮਹਿ ਰਾਜਾਨ॥ [19]

ਇਵੇਂ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਅਧਿਆਤਮਕ ਆਗੂ ਹੋਣ ਦੇ ਨਾਲ ਨਾਲ ਨਿਰਭਉ ਅਤੇ ਦਲੇਰ ਸਮਾਜ ਸੁਧਾਰਕ ਵੀ ਹੈ ਜਿਸ ਨੇ ਸਮਾਜਕ, ਰਾਜਨੀਤਿਕ ਅਤੇ ਧਾਰਮਿਕ ਜੀਵਨ ਵਿਚ ਪ੍ਰਚਲਿਤ ਗਲਤ ਕੀਮਤਾਂ ਦਾ ਸਖ਼ਤ ਸ਼ਬਦਾਂ ਵਿਚ ਵਿਰੋਧ ਕੀਤਾ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਤਾਂ ਅਮੀਰਾਂ, ਵਜ਼ੀਰਾਂ ਅਤੇ ਰਾਜਿਆਂ ਵੱਲੋਂ ਕੀਤੇ ਗਏ ਜ਼ੁਲਮਾਂ ਵਿਰੁੱਧ ਆਵਾਜ਼ ਉਠਾਈ। ਬ੍ਰਾਹਮਣ ਸ਼੍ਰੇਣੀ ਵੱਲੋਂ ਸਾਧਾਰਣ ਜਨਤਾ ਨੂੰ ਅੰਧਵਿਸ਼ਵਾਸਾਂ ਦੇ ਜਾਲ ਵਿਚ ਫਸਾ ਕੇ ਲੁੱਟੇ ਜਾਣ ਵਿਰੁੱਧ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਸੁਚੇਤ ਕੀਤਾ।

ਹਵਾਲੇ ਅਤੇ ਟਿੱਪਣੀਆਂ

1. ਆ. ਗ੍ਰੰ. ਮ : 1, ਪੰਨਾ 2.
2. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 470.
3. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 141.
4. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 23.
5. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 689.
6. ਤਰੀਖ਼ ਫ਼ਰਿਸ਼ਤਾ, ਪੰਨਾ 12.
7. ਮਲਾਰ, ਪੰਨਾ 145.
8. ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ, ਪੰਨਾ 1288.
9. ਜਪੁਜੀ ਸਾਹਿਬ, ਪੰਨਾ 37.
10. Meclver and Page, "Society an Introductory Analysis", PP. 47-48.
11. Encyclopedia of Religion and Ethics, Vol. XI, P. 654.
12. ਸਿਰੀ ਰਾਗ, ਵਾਰ, ਸਲੋਕ 3.
13. ਰਾਮ ਆਸਾ, ਸ਼ਬਦ 33.
14. ਆਦਿ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ, ਪ੍ਰਭਾਤੀ, ਪੰਨਾ 1330.
15. ਡਾ. ਰਤਨ ਸਿੰਘ ਜੱਗੀ ; “ਦਸਮ ਗ੍ਰੰਥ ਦਾ ਪੌਰਾਣਿਕ ਅਧਿਐਨ (ਪੰਜਾਬੀ), ਪੰਨਾ 186.
16. ਆਦਿ ਗ੍ਰੰਥ, ਪੰਨਾ 472.
17. ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ, ਵਾਰ ਬਿਹਾਗੜਾ, ਮ: 1, ਪੰਨਾ 556.
18. ਆਦਿ ਗ੍ਰੰਥ, ਪੰਨਾ 938.
19. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 473.

Guru Nanak Dev and Guru Dev Rabindranath Tagore

*Dr. Anubhuti Mishra

* Assistant Professor, Dept of English, PGDAV (Eve), University of Delhi

Both Guru Nanak Dev and Guru Dev Rabindranath Tagore were saint-poets who had spread the message of love and fraternity in the human civilization. These great minds were the offspring of the Indian philanthropic tradition of love and compassion. While the nation recognized Nanak as a Guru because of his generosity and propagation of love among fellow human beings, Mahatma Gandhi, 'the father of the nation,' acknowledged the importance of Tagore by addressing him as Guru Dev.

Tagore's thoughts are actually a culmination of the greatest elements of the Indian Tradition. In order to concretise his ideas, Tagore has often relied on the Ancient and the Medieval Indian tradition of thoughts, such as the *Upanishadas*, the sayings of Buddha and the Medieval Saints. Tagore has a unique perspective of perceiving and interpreting 'Bharatvarsh.' He definitely acknowledges the role of *The Ramayana* and *The Mahabhata* in the formation of the Indian tradition but he eulogises the *Upanishadas*, Buddha and the Medieval saints such as Kabirdas, Nanak, Dadudayal and Rajjab as the messengers who made their philanthropic ideals universal. In the broad perspective of Medieval Indian philosophy Tagore has acknowledged and has assessed the importance of Guru Nanak Dev.

Tagore was aware of the ideals of Guru Nanak Dev and the tradition of Sikh sect from his early childhood. The Tagore family had a much loved domestic help, named Lanu, who was a Sikh by religion. The very sight of Lanu used to evoke in the young Tagore's mind the stories of Sikh velour, sacrifice and the renunciation of worldly desires. While returning from his visit to the Himalayas , Tagore had stayed in Amritsar almost for a month with his father Maharshi Devendranath Tagore. At that period he regularly attended the morning prayers at the Swarna Mandir with his father. Tagore was enamoured by the hymns chanted in the temple. In his memoir he has recorded that how being enthralled by the chanting, Maharshi Devendranth used to sing along. Tagore's fascination with Sikh Bhajans is evident in his Bengali translations of the Bhajans mentioned below:

1. E Hari Sundara E Hari Sundara
   Tero Charan Par Sir Naven
2. Baaday Baaday Ramya Veena Baaday
3. Gagan Men Thalu Ravi-Chandra Deepak Bane
   Tarika Mandal Janak Moti (Mishra,134)

Moreover, Tagore has written a concise Nanak biography in Bengali entitled *Kajer Lok Kay* (Who is the Man of Deeds). In this biography Tagore has also recorded the popular tales about Nanak. The Nanak-biography is a part of the collection of Tagore's historical accounts entitled *History*.

Maharshi Devendranath Tagore had been close to Raja Ram Mohan Roy, the pioneer of Bangal Renaissance, since his childhood. Maharshi converted to Brahma Dharma, propounded by Ram Mohan Roy and made significant contributions to religious and social reformations. The Medieval saints like Kabir, Nanak, Dadu and etc gained a special importance in the Brahma Dharma because of their belief in the incorporeal Supreme Being. Maharshi rejected the Upanayan Samskar of Hinduism and felt that the Singh surname of Sikhs should be adopted by all. Maharshi has recorded this thought in his autobiography. Tagore being born and brought up in a Brahma religious atmosphere of his family had been well acquainted with the importance and the specialities of the Medieval saints (Dasgupta R.K. 206).

Tagore had a unique vision of perceiving the nation. He sees the Medieval tradition of devotion to be a continuation of the Ancient Indian tradition and views Ram Mohan Roy from the Modern Era in this same tradition of devotion. In Tagore's views, the Medieval Saints are the real successors of the Ancient Indian saints. He writes: They are the real Indians because they did not depend on any external stimulus to find solutions to the problems that the nation was facing, rather they unified the Hindus and the Muslims by promoting affinity and congeniality and by celebrating the idea of merging the self with the other. Through their devotion they reflected the Vedic Rishi's sayings : one who surrenders his ego

and finds his self in every other being, knows the ultimate truth.

Tagore sees the history of the nation as a history of coexistence and synthesis between different groups of people. It has witnessed the union of the Aryans and the Non-Aryans. Buddhism tied the entire Middle East in a single strand. The Medieval saints celebrated the idea of harmony though their meditation and devotion. The Medieval saints kept the Indian tradition of *Sadhna* alive through their songs, sayings and prayers. As a result this tradition is continued in the Modern Age as well – Some great personalities such as Raja Ram Mohan Roy, Swami Dayanand, Keshavchandra Sen, Ramkrishna Paramhamsa, Swami Vivekanand and Shivnarayan Swami dedicated their lives to the nation in their struggles to bring harmony within disharmony and to find the finite within the infinite. The history of India thus from the Ancient times to the present day is not an incoherent, disorganized narrative but rather every chapter in Indian history is an organized whole that proceeds in a coherent manner (Tagore 452).

In Tagore's vision, the Medievel saints are the successors of the Ancient Indian Tradition of Sadhna, and Ram Mohan Roy is the Modern representative of that tradition. Therefore while talking about the saints he mentions the *Upanishadas* and Ram Mohan and while talking about Ram Mohan or the *Upanishada*s he refers to the Medieval Saints : The tradition of *Sadhna* of the Indian saints is reflected in the life of Ram Mohan in the present days. By adopting the Upanishadic vision of homogeneity, he developed a truthful vision which accepted all, there was no question of rejection. In the present day, the birth of Ram Mohan Roy in our nation proves that the tradition of *Satya-Sadhna* borne by Kabir, Nanak and Dadu still runs through our veins (Sen 9).

Tagore thus believes that in the strife for achieving harmony , the path shown by the Medieval saints is an exemplary one. In every religion, the achievement of a harmonious existence is possible by following the path of love shown by the saints rather than by the application of any political solution. This path of love has been intrinsic to the identity of India as a nation. Therefore, without a knowledge of the history of medieval saints, the knowledge of Indian history is incomplete. This is the reason why Tagore disapproves of the texts of Indian History written by foreigners. These texts do not represent an authentic image of India according to Tagore because the Indian history is not only a history of conflicts but also a history of harmonious coexistence:

From the history written by foreign historians, it is evident that there was no concept of India as a nation. Only the Mughals and the Pathans were vandalizing the land and were roaming around with their flag of victory. The concept of the nation is as ancient as the concept of foreign lands. Otherwise how were Kabir, Nanak, Chaitanaya and Tukaram were born amidst such nuisance? Not only Delhi and Agra thrived at that time but also Kashi and Navadwip did. In history we do not find accounts of the flow of life that was running through the veins of Bharatvarsha, the waves of struggle that were vibrating throughout the nation, the social reforms that were taking place at that time (Tagore, Rabindra Rachanavali 378).

In Tagore's views the Medieval Saints did not only dream of freedom. Their vision of freedom was actually the freedom of the entire human race. This freedom could be achieved through a harmonious existence among different groups of people. Guru Nanak strived to bind the entire world in a single strand. While evaluating the history of Sikhs and Marathas, Tagore speaks about Guru Nanak. According to Tagore, the pioneer of Martaha Empire Shivaji's ambition of a pan-Hindu empire was only a political aspiration, but Baba Nanak's perception of freedom was not similar to that of national freedom; his idea of freedom was not limited to any particular nation, race or custom. Nanak's spiritual consciousness did not limit his mind to any such ideals that cannot be accepted universally, irrespective of space, religion, caste, creed and customs. His mind had been free from the clutches of the narrow Puranic religious practices and he had dedicated his life in preaching the ideals of freedom (Tagore, Itihaas 60).

Moreover, Tagore finds similarities between his own spiritual consciousness and that of Nanak. He used to hum Nanak's *Bhajans* in moments of crisis. In one of his lectures Tagore says,

From yester evening
a song keeps on recurring in my mind:
Baaje Baaje Ramya Veena Baje.
Amal Kamal-majhe, Jyotsna-rajani Majhe,
Kusum Surabhi Majhe Beena Ranan Suni Je
Preme-preme Baaje.

I am not able to forget this song in any way. Last night when I was standing on the rooftop alone I realised from the depth of my heart that "Baaje Baaje Ramya Veena Baaje" is not only the imagination of a poet but this tune is perpetually played, penetrating all boundaries of time and space (Tagore, "Santiniketan" 485).

Sri Yatindra Mohan Sing in his text *Saakaar and Nirakaar* has propounded that the worship of the incorporeal being is not possible. While criticizing this book, Tagore has placed Nanak as an evidence in support of his arguments in favour of the worship of the Incorporeal Supreme Being: " No one can dare to say that Nanak is not one of the greatest *Bhakts* of this world. There is no doubt that he was not a *So-aham Brahmawadi*. He preached the belief of worshiping the Incorporeal Being by rejecting the custom of idol worshipping(Tagore, "Adhunik Sahitya" 513).

Tagore sees Nanak as the epitome of integrationist principles. In Nanak-biography *Kajer Lok Kay* (Who is a Man of Deeds), Tagore writes that Nanak was inclined towards spirituality since early childhood. He was indifferent towards the

duties of mundane life. His family considered him to be worthless and had no expectations from him. But his talent and high religious morals were gradually recognised by the people. Nanak's religious consciousness was reflected in his demeanours and his actions. While discussing about Nanak's nature Tagore writes in the biography, "Nanak was travelling everywhere helping people in distress and preaching his religious ideals. He loved Hindus and Muslims equally. He was an unbiased critic of both the religions and yet the Hindus and Muslims loved him alike."

Tagore further reflects upon Nanak's life after marriage and notes that even after marriage there was no change in his ascetic tendencies: After travelling to various lands, Nanak came back home and was tied to the worldly duties of life. But even during his stay at home, he devoted all his time to preaching. He believed neither in the Quran nor in the Puran. He advised people to believe only in one God, to have faith in religion, to forgive and love everyone unconditionally.

Tagore acknowledges here that it is because of Guru Nanak that our nation has been blessed with the birth of a great religious sect, i.e. Sikhism. He records: Before Nanak, the Sikh religion did not exist. This noble religion is born out of Nanak's great philosophical thoughts and visions. As a result of Nanak's religious preaching this Nation has found a sect of courageous men with brave hearts who hold their heads high and their greatness is reflected in their every action and gesture. Nanak's father Kalu earned great wealth which he consumed himself but the spiritual treasure that Nanak had discovered is being consumed by the entire human race since the last four hundred years. So who is a man of deeds!

Thus Tagore sees Nanak's vision as an exemplary one which has guided the entire human race in moments of crisis and turmoil and has provided the human heart with courage to face and overcome all odds that poses a threat to their harmonious existence. Nanak's visions thus have inspired us to seek and find love, compassion and peace in every difficult situation.

Works Cited

1. Dasgupta, R.K. "Bengal Men Sikh Dharma Ka Prabhav." *Gurunanak: Jeevan, Yug Evam Sikshaen*.Ed. Gurumukh Nihal Singh. New Delhi :National Punlishing House, 1970. Print.
2. Mishra, Rameshwar. *Madhyayugin Hindi Sant Sahitya Aur Rabindranath*.Varanasi: Visvavidyalay Prakashan,1989.Print.
3. Sen, Kshitimohan. Introduction. "Dadu."Rabindra Rachanavali. 10.Kolkata: Visva-Bharati Granthalaya,1961.Print.
4. Sen, Kshitimohan. Introduction. "Raja-Praja."Rabindra Rachanavali.4. Kolkata: Visva-Bharati Granthalaya, 1961.Print.
5. Tagore, Rabindranath. "Adhunik Sahitya." *Rabindra Rachanavali*.9.Kolkata:Visva-Bharati Granthalaya.1961.Print.
6. Tagore, Rabindranath. *Itihaas*. Kolkata: Visva-Bharati Granthalay, 1955.Print.
7. Tagore, Rabindranath. "Santuniketan." *Rabindra Rachanavali*.13.Kolkata:Visva-Bharati Granthalaya.1961.Print.

ਵਿਸ਼ਵ ਵਿਆਪੀ ਸੰਦਰਭਾਂ ਵਿਚ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਦੇ ਵਿਚਾਰਾਂ ਦੀ ਪ੍ਰਸੰਗਿਕਤਾ

* ਸਿਮਰਨ ਸੇਠੀ

* ਰਾਮਾਨੁਜਨ ਕਾਲਜ, ਦਿੱਲੀ ਯੂਨੀਵਰਸਿਟੀ

ਮਾਨਵ ਜਾਤੀ ਦੀ ਇਹ ਖ਼ਾਸੀਅਤ ਰਹੀ ਹੈ ਕਿ ਹਰ ਦੌਰ ਅੰਦਰ ਇਹ ਆਪਣੀ ਵਿਰਾਸਤ/ਵਿਰਸੇ ਵੱਲ ਪਿੱਛਲ-ਝਾਤ ਮਾਰਨ, ਉਸਨੂੰ ਚਿੰਤਨ ਦੀ ਪ੍ਰਕਿਰਿਆ ਵਿਚ ਪਾਉਣ ਅਤੇ ਫਿਰ ਉਸੇ ਵਿਚੋਂ ਹੀ, ਬਲਕਿ ਉਸਦੇ ਆਧਾਰ ਤੇ ਹੀ ਪੁਨਰ- ਸਿਰਜਣਾ ਕਰਨ ਦੇ ਮਸਲੇ ਨਾਲ ਨਿਰੰਤਰ ਜੂਝਦੀ ਰਹੀ ਹੈ।ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੇ ਅਜਿਹਾ ਕਰਨ ਪਿੱਛੇ ਜੋ ਵਿਚਾਰ ਕਾਰਜਸ਼ੀਲ ਰਹਿੰਦਾ ਹੈ, ਉਹ ਹੈ ਕਿ ਹਰ ਸਮਾਜ/ ਸਭਿਆਚਾਰ ਦੇ ਕੋਕਾਂ ਦੀ ਸਵੈ-ਪਛਾਣ ਦੇ ਮੂਲ ਆਧਾਰ ਵਿਰਾਸਤ ਅੰਦਰ ਹੀ ਗਹਿਰੇ ਛੁਪੇ ਹੁੰਦੇ ਹਨ। ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਨੂੰ ਵਰਤਮਾਨ ਦੀ ਧਰਾਤਲ ’ਤੇ ਖੜੋ ਕੇ ਗਹੁ ਨਾਲ ਵੇਖਣਾ/ ਵਿਚਾਰਨਾ ਅਤੇ ਨਾਲ ਲੈ ਕੇ ਚੱਲਣਾ ਸਮੇਂ ਦੀ ਮੰਗ ਬਣ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਪਰ ਸ਼ਰਤ ਇਹ ਹੈ ਕਿ ਨਾ ਤਾਂ ਵਰਤਮਾਨ ਤੋਂ ਮੂੰਹ ਮੋੜ ਕੇ ਕੇਵਲ ਅਤੇ ਕੇਵਲ ਅਤੀਤ ਦੀ ਸਿਮਰਤੀ ਅੰਦਰ ਹੀ ਵਾਸ ਕਰ ਲਿਆ ਜਾਵੇ ਅਤੇ ਨਾ ਹੀ ਆਪਣੇ ਅਤੀਤ/ ਵਿਰਸੇ ਨੂੰ ਅੱਖੋਂ ਪਰੋਖੇ ਕੀਤਾ ਜਾਵੇ। ਰਸੂਲ ਹਮਜ਼ਾਤੋਵ ਆਪਣੀ ਪੁਸਤਕ ‘ਮੇਰਾ ਦਾਗਿਸਤਾਨ’ ਦੀ ਭੂਮਿਕਾ ਅੰਦਰ ਅਬੂਤਾਲਿਬ ਦੇ ਹਵਾਲੇ ਨਾਲ ਲਿਖਦਾ ਹੈ :“ ਜੇ ਬੀਤੇ ਉੱਤੇ ਪਿਸਤੌਲ ਨਾਲ ਗੋਲੀ ਚਲਾਓਗੇ, ਤਾਂ ਭਵਿੱਖ ਤੁਹਾਨੂੰ ਤੋਪ ਨਾਲ ਫੁੰਡੇਗਾ। ”[1]

ਇਸੇ ਪ੍ਰਕਾਰ ਇਕ ਸ਼ਾਇਰ ਨੇ ਵੀ ਕਿਹਾ ਹੈ ਕਿ :-

ਜਿਹੜਾ ਢੋਲ ਟੁਟ ਜਾਵੇ,
ਉਹਦਾ ਡੱਗਾ ਵੀ ਨਹੀਂ ਰਹਿੰਦਾ।
ਜਿਹੜਾ ਪਿੱਛਾ ਭੁੱਲ ਜਾਵੇ,
ਉਹਦਾ ਅੱਗਾ ਵੀ ਨਹੀਂ ਰਹਿੰਦਾ।

ਇਸ ਲਈ ਜਦੋਂ ਵੀ ਵਰਤਮਾਨ ਦੀਆਂ ਬਰੂਹਾਂ ’ਤੇ ਖੜੇ ਹੋ ਕੇ ਅਤੀਤ ਨਾਲ ਸੰਵਾਦ ਰਚਾਇਆ ਜਾਵੇਗਾ ਤਾਂ ਉੱਜਲੇ ਭਵਿੱਖੀ ਸਫ਼ਰ ਦੀ ਤਿਆਰੀ ਵਿਵੇਕਪੂਰਨ ਢੰਗ ਨਾਲ ਕੀਤੀ ਜਾ ਸਕੇਗੀ।

ਅੱਜ ਜਦੋਂ ਮਾਨਵ ਜਾਤੀ ਵਿਸ਼ਵੀਕਰਨ ਦੇ ਦੌਰ ਵਿਚੋਂ ਗੁਜ਼ਰ ਰਹੀ ਹੈ, ਜਿੱਥੇ ਪੂਰੇ ਵਿਸ਼ਵ ਨੂੰ ਇਕ ਪਿੰਡ ਵਜੋਂ ਜਾਂ ਇੰਜ ਕਹਿ ਲਵੋ ਕਿ ਇਕ ਪਿੰਡ ਨੂੰ ਪੂਰੇ ਵਿਸ਼ਵ ਵਜੋਂ ਵਿਤਵਿਆ ਜਾ ਰਿਹਾ ਹੈ, ਜਿੱਥੇ ਵੱਖੋ - ਵੱਖਰੇ ਸਮਾਜਾਂ / ਸਭਿਆਚਾਰਾਂ ਨੂੰ ਵੱਡੇ ਕੈਨਵਸ ਉੱਪਰ ਇਕ-ਦੂਜੇ ਦੇ ਰੂਬਰੂ ਕਰਨ ਦੀ ਬਾਤ ਪਾਈ ਜਾ ਰਹੀ ਹੈ ਤਾਂ ਇਸ ਪੱਧਰ ’ਤੇ ਵਿਚਾਰਧਾਰਾਈ ਅੰਤਰ-ਵਿਰੋਧ ਹੋਣਾ ਸਭਿਾਵਿਕ ਹੈ। ਇਸਦੇ ਨਾਲ ਹੀ ਤਕਨੀਕ ਅਤੇ ਸੰਚਾਰ ਮਾਧਿਅਮਾਂ ਦੀ ਕੁੜਿੱਕੀ ਵਿਚ ਜਦੋਂ ਹਰ ਮਨੁੱਖ ਬੁਰੀ ਤਰ੍ਹਾਂ ਫਸ ਚੁੱਕਾ ਹੈ ਤਾਂ ਇਹ ਸਥਿਤੀ ਕਿਸੇ ਜਾਨਲੇਵਾ ਵਿਸਫ਼ੋਟ ਤੋਂ ਰਤਾ ਵੀ ਘੱਟ ਨਹੀਂ। ਸ਼ਕਤੀਸ਼ਾਲੀ ਮੁਲਕਾਂ ਦੁਆਰਾ ਵਿਸ਼ਵੀਕਰਨ ਅੰਦਰ ਸਮਾਨਤਾ ਦੇ ਰਾਗ ਹੇਠ ਜੋ ਪ੍ਰਪੰਚ ਰਚਿਆ ਜਾ ਰਿਹਾ ਹੈ, ਉਹ ਸਭਿਆਚਾਰ, ਆਰਥਿਕ, ਰਾਜਨੀਤਿਕ ਪੱਧਰਾਂ ਦੇ ਨਾਲ-ਨਾਲ ਗਿਆਨ ਖੇਤਰ ਨੂੰ ਵੀ ਪ੍ਰਭਾਵਿਤ ਕਰ ਰਿਹਾ ਹੈ।ਇਹੋ ਜਿਹੀ ਤਬਾਹਕੁੰਨ ਸਥਿਤੀ ਅੰਦਰ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ / ਵਿਚਾਰ ਸਮੁੱਚੀ ਮਾਨਵ ਜਾਤੀ ਨੂੰ ਆਪਣੇ ਕਲੇਵਰ ਵਿਚ ਲੈਂਦੀ ਹੋਈ ਰਾਹ ਦਸੇਰਾ ਬਣਦੀ ਹੈ। ਉਹੀ ਨਾਨਕ, ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਨੂੰ ਭਾਰਤੀ ਲੋਕ ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ, ਸ੍ਰੀ ਲੰਕਾ ਵਿਚ ‘ਨਾਨਕ ਅਚਾਰੀਆ’, ਤਿੱਬਤ ਵਿਚ ‘ਨਾਨਕਲਾਮਾ’, ਸਿੱਕਮ ਅਤੇ ਭੂਟਾਨ ਵਿਚ ‘ਗੁਰੂ ਰਿੰਪੋਚੀਆ’, ਰੂਸ ਵਿਚ ‘ਨਾਨਕ ਕਦਮਦਰ’, ਈਰਾਕ ਵਿਚ ‘ਬਾਬਾ ਨਾਨਕ’, ਨੇਪਾਲ ਵਿਚ ‘ਨਾਨਕ ਰਿਸ਼ੀ’, ਬਗ਼ਦਾਦ ਵਿਚ ‘ਨਾਨਕ ਪੀਰ’, ਮਿਸਰ ਵਿਚ ‘ਨਾਨਕ ਵਲੀ’, ਚੀਨ ਵਿਚ ‘ਬਾਬਾ ਫੂਸਾ’, ਮੱਕਾ ਵਿਚ ‘ਵਲੀ ਹਿੰਦ’ ਅਤੇ ਮਜ਼ਹਰ ਸ਼ਰੀਫ਼ ਵਿਚ ‘ਪੀਰ ਬਾਲਗਦਾਨ’ ਨਾਵਾਂ ਨਾਲ ਅੱਜ ਵੀ ਯਾਦ ਕਰਦੇ ਹਨ।

ਮੱਧਕਾਲ ਅੰਦਰ ਨਾਨਕ ਦੀ ਬਾਣੀ ਸਮਕਾਲੀ ਸਮਾਜ/ਸਭਿਆਚਾਰ ਨੂੰ ਸਾਹਮਣੇ ਰੱਖਦੇ ਹੋਏ ਕ੍ਰਾਂਤੀਕਾਰੀ ਪ੍ਰਵਚਨ ਸਿਰਜਦੀ ਹੈ ਫਿਰ ਚਾਹੇ ਉਹ ਜਾਤ-ਪਾਤ ਦੇ ਵਿਰੋਧ ਵਿਚ ਹੋਵੇ, ਦਮਨ ਤੇ ਸ਼ੋਸ਼ਣ ਦੇ ਖ਼ਿਲਾਫ਼ ਹੋਵੇ, ਬ੍ਰਾਹਮਣਵਾਦੀ ਕਰਮਕਾਂਡ, ਸਮਾਜਿਕ ਦਰਜੇਬੰਦੀ ਦੇ ਵਿਰੁੱਧ ਹੋਵੇ। ਧਿਆਨ ਨਾਲ ਵੇਖਿਆ ਜਾਵੇ ਤਾਂ ਅੱਜ ਜਦੋਂ ਅਸੀਂ ਪੂਰੇ ਵਿਸ਼ਵ ਅੰਦਰ ਬਾਬੇ ਨਾਨਕ ਦਾ 550ਵਾਂ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ ਵਰ੍ਹਾ ਬੜੇ ਉਤਸਾਹ ਨਾਲ ਮਨਾ ਰਹੇ ਹਾਂ ਤਾਂ ਇਸ ਸਮੇਂ ਅੰਦਰ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਦੀ ਪ੍ਰਸੰਗਿਕਤਾ ਦਾ ਸਭ ਤੋਂ ਵੱਡਾ ਕਾਰਨ ਇਹ ਵੀ ਹੈ ਕਿ ਆਪਣੇ ਮਨੁੱਖੀ ਜੀਵਨ ਨਾਲ ਜੁੜੀਆਂ ਤਮਾਮ ਸਮੱਸਿਆਵਾਂ ਦੇ ਨਾਲ-ਨਾਲ ਹਰ ਸਮੇਂ/ ਸਥਾਨ ਅਤੇ ਸਥਿਤੀ ਨੂੰ ਜਵਾਬ ਦੇਣ ਵਾਲੇ ਮਾਨਵੀ ਮਨ ਨਾਲ ਇਕ ਸਾਂਝ ਪਾਈ। ਜਿਸ ਅੰਦਰ ਉਨ੍ਹਾਂ ਸਭ ਤੋਂ ਪਹਿਲਾਂ ਸਮਾਜਿਕ ਦਰਜੇਬੰਦੀ ਨੂੰ ਨਕਾਰਦੇ ਹੋਏ ਦੱਬੇ-ਕੁਚਲੇ ਲੋਕਾਂ ਦੇ ਹੱਕ ਵਿਚ ਸਿਰਫ਼ ਆਵਾਜ਼ ਹੀ ਨਹੀਂ ਉਠਾਈ ਸਗੋਂ ਆਪ ਵੀ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੇ ਸੰਗ ਜਾ ਖੜੇ ਹੋਏ। ਭਾਰਤੀ ਸੰਦਰਭ ਵਿਚ ਭਾਵੇਂ ਦਲਿਤ/ਸ਼ੂਦਰ ਸ਼ਬਦ ਵਰਣ-ਵੰਡ ਦੇ ਅੰਤਰਗਤ ਜਾਤ-ਪ੍ਰਥਾ ਦੇ ਹਵਾਲੇ ਵਜੋਂ ਅਰਥ ਗ੍ਰਹਿਣ ਕਰਦਾ ਹੈ ਪਰ ਅੱਜ ਇਸਦੇ ਅਰਥ ਵਿਸ਼ਵੀ ਵਰਤਾਰੇ ਅੰਦਰ ਬੇਹੱਦ ਗਹਿਰੇ ਉਤਰ ਚੁੱਕੇ ਹਨ। ਨਾਨਕ ਜਦੋਂ ਕੁਲੀਨ / ਹਾਕਮ ਵਰਗ ਨਾਲੋਂ ਇਕ ਵਿੱਥ ਸਥਾਪਿਤ ਕਰਦਿਆਂ ਮਾਨਵੀ ਹੱਕਾਂ ਦਾ ਨਾਹਰਾ ਲਾਉਂਦੇ ਹਨ ਤਾਂ ਇਹ ਇਕ ਸਮਾਜਿਕ ਕ੍ਰਾਂਤੀ ਹੋ ਨਿਬੜਦਾ ਹੈ। ਅੱਜ ਸੋਚਣ ਵਾਲੀ ਗੱਲ ਇਹ ਹੈ ਕਿ ਅਜੋਕੇ ਵਿਸ਼ਵੀ ਸੰਦਰਭ ਅੰਦਰ ਜਦੋਂ ਇਸ ਸੰਕਲਪ ਨੂੰ ਵੇਖਿਆ ਜਾਂਦਾ ਹੈ ਤਾਂ ਇਸਦਾ ਪ੍ਰਤੱਖ ਜਾਂ ਪਰੋਖ ਰੂਪ ਨਜ਼ਰੀਂ ਪੈਂਦਾ ਹੈ।

ਡਾ. ਜਗਬੀਰ ਸਿੰਘ ਅਨੁਸਾਰ, “ ਜਾਤੀ ਉੱਤਮਤਾ ਦੀ ਮਿੱਥ ਵਾਂਗ ਨਸਲੀ ਉੱਤਮਤਾ ਦੀ ਮਿੱਥ ਵੀ ਸ਼ੋਸ਼ਣ ਅਤੇ ਦਮਨ ਦਾ ਉਪਕਰਣ ਬਣ ਕੇ ਸਾਮ੍ਹਣੇ ਆਉਂਦੀ ਹੈ ਅਤੇ ਮਨੁੱਖ ਮਨੁੱਖ ਵਿਚਕਾਰ ਮਸਨੂਈ ਵੰਡੀਆਂ ਪਾ ਕੇ ਵਿਭਿੰਨ ਭਾਈਚਾਰਿਆਂ ਨੂੰ ਨਾ-ਬਰਾਬਰੀ ਅਤੇ ਵਿਤਕਰੇ ਦਾ ਸ਼ਿਕਾਰ ਬਣਾਉਂਦੀ ਹੈ। ”[2]

ਫਿਰ ਦਲਿਤ / ਸ਼ੂਦਰ ਦੀ ਵਿਆਖਿਆ ਕੇਵਲ ਸੀਮਿਤ ਵਰਗਾਂ ਤੱਕ ਹੀ ਨਹੀਂ ਰੁਕਦੀ ਸਗੋਂ ਅਲਪਸੰਖਿਅਕ ਕੌਮਾਂ ਨੂੰ ਵੀ ਆਪਣੇ ਘੇਰੇ ਵਿਚ ਲੈਂਦੀ ਹੈ। ਫਿਰ ਇਸਦੇ ਆਧਾਰ ਤੇ ਚਾਹੇ

ਅਫਰੀਕਾ ਦੇ ਕਬੀਲਿਆਂ ਨੂੰ ਇਸਦਾ ਸ਼ਿਕਾਰ ਹੋਣਾ ਪਵੇ, ਚਾਹੇ ਯਹੂਦੀਆਂ ਦੇ ਮਹਾਂਵਿਨਾਸ਼ ਦੀ ਘਟਨਾ ਹੋਵੇ, ਚਾਹੇ ਭਾਰਤ ਅੰਦਰ ਵੱਖ-ਵੱਖ ਸਮੇਂ ਹੋਏ ਕਤਲੇਆਮ ਦੀ ਗੱਲ ਹੋਵੇ ਅਤੇ ਚਾਹੇ ਵਿਸ਼ਵ ਸ਼ਕਤੀ ਵਜੋਂ ਜਾਣੇ ਜਾਣ ਵਾਲੇ ਮੁਲਕਾਂ ਅਮਰੀਕਾ ਅਤੇ ਇੰਗਲੈਂਡ ਵਿਚ ਹੁਣ ਵਾਲੇ ਨਸਲੀ ਵਿਤਕਰਿਆਂ ਦੀ ਗੱਲ ਹੋਵੇ। ਇਹੇ ਜਿਹੀਆਂ ਸਥਿਤੀਆਂ ਅੰਦਰ ਬਾਬੇ ਨਾਨਕ ਦੇ ਵਿਚਾਰਾਂ ਉੱਪਰ ਚੱਲਣ ਨੂੰ ਪ੍ਰਮੁੱਖਤਾ ਦੇਣਾ ਲਾਜ਼ਮੀ ਹੋ ਨਿਬੜਦਾ ਹੈ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਸਾਰੇ ਵਿਤਕਰਿਆਂ ਤੋਂ ਉੱਪਰ ਉੱਠ ਕੇ ਮਾਨਵ ਜਾਤੀ ਨੂੰ ਇਕ ਨੂਰ ਤੋਂ ਪੈਦਾ ਹੋਈ ਮੰਨਿਆ। ਇਸਦੇ ਨਾਲ ਹੀ ਕਿਸੇ ਵੀ ਸਮਾਜ ਦੀ ਅਹਿਮ ਧਿਰ ਨਾਰੀ ਨੂੰ ਜਦੋਂ ਨਰਕ ਦਾ ਦੁਆਰ, ਪਸ਼ੂਆਂ ਸਮਾਨ, ਬਘਿਆੜਨ, ਭੰਡ ਕਹਿ ਕੇ ਤ੍ਰਿਸਕਾਰਿਆ ਗਿਆ ਤਾਂ ਉਸ ਨਾਰੀ ਵਿਰੋਧੀ ਮਾਹੌਲ ਅੰਦਰ ਮਾਨਵੀ ਹੱਕ ਹੀ ਨਹੀਂ ਦਿਵਾਇਆ ਸਗੋਂ ਮਰਦ ਦੀ ਪੂਰਕ ਮੰਨਦੇ ਹੋਏ ਸਨਮਾਨਿਤ ਕੀਤਾ। ਜਿਵੇਂ :-

"ਭੰਡਿ ਜੰਮੀਐ ਭੰਡਿ ਨਿੰਮੀਐ ਭੰਡਿ ਮੰਗਣੁ ਵੀਆਹੁ॥
ਭੰਡਹੁ ਹੋਵੈ ਦੋਸਤੀ ਭੰਡਹੁ ਚਲੈ ਰਾਹੁ॥
ਭੰਡੁ ਮੁਆ ਭੰਡੁ ਭਾਲੀਐ ਭੰਡਿ ਹੋਵੈ ਬੰਧਾਨੁ॥
ਸੋ ਕਿਉ ਮੰਦਾ ਆਖੀਐ ਜਿਤੁ ਜੰਮਹਿ ਰਾਜਾਨੁ॥ "[3]

ਹੁਣ ਜਦੋਂ ਮਨੁੱਖੀ ਸਮਾਜ ਅੰਦਰ ਹਾਸ਼ੀਏ 'ਤੇ ਪਈ ਔਰਤ ਹਰ ਖੇਤਰ ਵਿਚ ਮਰਦ ਦੇ ਬਰਾਬਰ ਖੜੀ ਹੋ ਰਹੀ ਹੈ ਚਾਹੇ ਉਹ ਖੇਤਰ ਸਿੱਖਿਆ ਦਾ, ਵਿਗਿਆਨ ਦਾ, ਖੇਡਾਂ ਦਾ ਜਾਂ ਫਿਰ ਰਾਜਨੀਤੀ ਦਾ ਹੀ ਕਿਉਂ ਨਾ ਹੋਵੇ। ਭਾਵੇਂ ਅੱਜ ਵੀ ਕਿਤੇ ਕਿਤੇ ਇਹ ਵਿਤਕਰਾ ਵੇਖਣ ਨੂੰ ਮਿਲਦਾ ਹੈ ਪਰ ਜਦੋਂ ਕੁੜੀਮਾਰਾਂ ਵਜੋਂ ਜਾਣੇ ਜਾਣ ਵਾਲੇ ਲੋਕ ਧੀਆਂ ਦੇ ਜੰਮਣ ਸਮੇਂ ਖੁਸ਼ੀ, ਧੀਆਂ ਦੀ ਲੋਹੜੀ ਮਨਾਈ ਜਾਂਦੀ ਹੈ ਤਾਂ ਇੱਥੇ ਬਾਬੇ ਨਾਨਕ ਦੀਆਂ ਸਿੱਖਿਆਵਾਂ ਦੀ ਪ੍ਰਸੰਗਿਕਤਾ ਨਜ਼ਰੀਂ ਪੈਂਦੀ ਹੈ।ਅਜੋਕੇ ਸਮੇਂ ਅੰਦਰ 'ਬੇਟੀ ਬਚਾਉ ਬੇਟੀ ਪੜਾਉ' ਦਾ ਨਾਹਰਾ ਨਾਨਕ ਦੇ ਸਾਢੇ ਪੰਜ ਸੌ ਸਾਲ ਪਹਿਲਾਂ ਉਚਾਰੇ ਪ੍ਰਵਚਨ ਤੋਂ ਸੇਧ ਲੈਂਦਾ ਹੋਇਆ ਕਾਰਜਸ਼ੀਲ ਹੁੰਦਾ ਹੈ।ਇਸੇ ਕਾਰਨ ਬਾਬੇ ਨਾਨਕ ਦੀ ਬਾਣੀ ਦਾ ਪੂਰਾ ਪ੍ਰਸੰਗ ਵਿਅਕਤੀਗਤ ਪੱਧਰ ਤੋਂ ਅੱਗੇ ਜਾ ਕੇ, ਨਿੱਜ ਤੋਂ ਉੱਪਰ ਉੱਠ ਕੇ ਮਾਨਵ ਜਾਤੀ ਦੀ ਮੁਕਤੀ ਦਾ ਪ੍ਰਵਚਨ ਉਸਾਰਦਾ ਹੋਇਆ ਸਭਨਾਂ ਅੰਦਰ ਵਾਸ ਕਰਦੀ ਇਕ ਜੋਤ ਦੇ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ ਦੀ ਗੱਲ ਕਰਦਾ ਹੈ।ਜਿਵੇਂ :-

"ਸਭਿ ਮਹਿ ਜੋਤਿ ਜੋਤਿ ਹੈ ਸੋਇ ॥
ਤਿਸ ਕੈ ਚਾਨਣ ਸਭ ਮਹਿ ਚਾਨਣੁ ਹੋਇ ॥[4]

ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦੇ ਵਿਚਾਰਾਂ ਦੀ ਪ੍ਰਸੰਗਿਕਤਾ ਇਸ ਪੱਧਰ ਤੋਂ ਵੀ ਆਪਣਾ ਪੱਖ ਪੂਰਦੀ ਹੈ ਕਿ ਆਪ ਨੇ ਸਿਧਾਂਤ ਅਤੇ ਅਮਲ ਵਿਚਲੇ ਪਾੜੇ ਨੂੰ ਮਿਟਾਉਣ ਲਈ ਇਕ ਯੋਧੇ ਵਾਂਗ ਆਪਣਾ ਫ਼ਰਜ਼ ਨਿਭਾਇਆ ਅਤੇ ਅਮਲ ਨੂੰ ਪਰਮ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਨਾਲੋਂ ਵੀ ਮਹਾਨ ਦੱਸਦਿਆਂ ਸਾਰੀਆਂ ਵੰਡੀਆਂ ਨੂੰ ਰੱਦ ਕਰਦਿਆਂ ਪੰਗਤ ਅਤੇ ਸੰਗਤ ਨੂੰ ਅਮਲੀ ਰੂਪ ਦੇ ਕੇ ਅਜਿਹੀਆਂ ਸੰਸਥਾਵਾਂ ਦੀ ਨੀਂਹ ਰੱਖੀ, ਜੋ ਸਾਂਝੇ ਸਭਿਆਚਾਰ ਦੇ ਸੰਕਲਪ ਦੀਆਂ ਪ੍ਰਤੀਬਿੰਬ ਬਣਕੇ ਸਾਹਮਣੇ ਆਈਆਂ। ਆਪਜੀ ਨੇ ਸਾਰੇ ਧਰਮਾਂ ਦਾ ਸਤਿਕਾਰ ਕਰਦਿਆਂ ਆਪਣੀ ਬਾਣੀ ਵਿਚ ਥਾਂ-ਥਾਂ ਤੇ ਹਿੰਦੂ ਨੂੰ 'ਚੰਗਾ ਹਿੰਦੂ' ਅਤੇ ਮੁਸਲਮਾਨ ਨੂੰ 'ਚੰਗਾ ਮੁਸਲਮਾਨ' ਬਣਨ ਦਾ ਉਪਦੇਸ਼ ਦਿੱਤਾ। ਅੱਜ ਜਦੋਂ ਵਿਸ਼ਵੀ ਪੱਧਰ ਉੱਪਰ ਅਣਗਿਣਤ ਦੁਨਿਆਵੀ ਮਸਲਿਆ ਨੂੰ ਨਜਿੱਠਣ ਵਜੋਂ ਸੰਯੁਕਤ ਰਾਸ਼ਟਰ ਸੰਘ ਵਿਚ ਆਪਸੀ ਸਹਿਮਤੀ/ਸਰਬੱਤ ਦੇ ਭਲੇ ਦੀ ਗੱਲ ਹੁੰਦੀ ਹੈ ਤਾਂ ਇਸਦੀ ਕਾਰਜ ਪ੍ਰਣਾਲੀ ਕਿਸੇ ਨਾ ਕਿਸੇ ਰੂਪ ਵਿਚ ਨਾਨਕ ਦੇ ਸਾਂਝੀਵਾਲਤਾ ਦੇ ਸੰਕਲਪ ਨਾਲ ਜਾ ਜੁੜਦੀ ਹੈ। ਭਾਰਤ ਅਤੇ ਪਾਕਿਸਤਾਨ, ਦੋਵਾਂ ਮੁਲਕਾਂ ਦੇ ਆਪਸੀ ਮਤਭੇਦ ਭਾਵੇਂ ਕਿਸੇ ਵੀ ਪੱਧਰ ਤੇ ਕਿਉਂ ਨਾ ਹੋਣ ਪਰ ਗੱਲ ਜਦੋਂ ਕਰਤਾਰਪੁਰ ਲਾਂਘੇ ਦੀ ਆਉਂਦੀ ਹੈ, ਗੱਲ ਜਦੋਂ ਹਿੰਦੂਆਂ ਦੇ ਗੁਰੂ ਅਤੇ ਮੁਸਲਮਾਨਾਂ ਦੇ ਪੀਰ ਕਹੇ ਜਾਣ ਵਾਲੇ ਨਾਨਕ ਦੇ ਵਾਰਿਸਾਂ ਦੀ ਆਪਣੇ ਰਹਿਬਰ ਦੀ ਜਨਮ-ਭੋਂਇ ਪ੍ਰਤੀ ਸ਼ਰਧਾ ਦੀ ਆਉਂਦੀ ਹੈ ਤਾਂ ਇੱਥੇ ਦੋਵੇਂ ਮੁਲਕ ਸਤਹੀ / ਧਰਾਤਲੀ ਮਤਭੇਦ ਮਨਫ਼ੀ ਕਰਕੇ ਭਾਈਚਾਰਕ ਸਾਂਝ ਸਦਕਾ ਇਸ ਮਾਮਲੇ ਉੱਪਰ ਸਹਿਮਤੀ ਪ੍ਰਗਟਾਉਂਦੇ ਹਨ।ਇਹੀ ਨਾਨਕ ਦੇ ਵਿਚਾਰਾਂ ਦੀ ਪ੍ਰਸੰਗਿਕਤਾ ਦਾ ਜਿਉਂਦਾ ਜਾਗਦਾ ਸਬੂਤ ਹੈ। ਵੇਖਿਆ ਜਾਵੇ ਤਾਂ 'ਨਾ ਕੋ ਹਿੰਦੂ ਨਾ ਮੁਸਲਮਾਨ' ਦਾ ਹੋਕਾ ਦੇਣ ਵਾਲਾ ਬਾਬਾ ਨਾਨਕ ਜਦੋਂ ਨੀਵੀਂ ਜਾਤ ਦੇ ਮਰਦਾਨੇ ਨੂੰ ਆਪਣਾ ਹਮਸਫ਼ਰ ਬਣਾਉਂਦੇ ਹਨ ਤਾਂ ਇਹ ਸਮਕਾਲੀ ਸਮਾਜਿਕ ਦਰਜੇਬੰਦੀ ਨੂੰ ਰੱਦਦਿਆਂ ਮਨੁੱਖੀ ਸਾਂਝ ਦੇ ਸੰਕਲਪ ਨੂੰ ਇਕ ਵਿਸ਼ਾਲ ਕੈਨਵਸ ਉੱਤੇ ਲਿਆ ਖੜਾ ਕਰਨ ਦੀ ਸਰਵੋਤਮ ਮਿਸਾਲ ਹੋ ਨਿਬੜਦਾ ਹੈ।

ਇਸੇ ਪ੍ਰਕਾਰ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਦੀ ਪ੍ਰਸੰਗਿਕਤਾ ਦਾ ਇਕ ਅਹਿਮ ਪੱਖ ਕਿਸੇ ਵੀ ਸਭਿਆਚਾਰ ਦੀ ਵਿਸ਼ਾਲ ਸੰਸਥਾ ਧਰਮ ਨਾਲ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ ਰੂਪ ਵਿਚ ਜੁੜਦਾ ਹੈ। ਬਾਬੇ ਨਾਨਕ ਨੇ ਸਮਕਾਲੀ ਸਮਾਜ ਅੰਦਰ ਜਦੋਂ ਅਖੌਤੀ ਧਰਮ ਦੇ ਠੇਕੇਦਾਰਾਂ ਨੂੰ ਤਰਕ ਅਧਾਰਿਤ ਵੰਗਾਰਿਆ ਅਤੇ ਨਿਮਾਣੀ ਲੋਕਾਈ ਦੇ ਮਨਾਂ ਅੰਦਰ ਜਿਊਣ ਦੀ ਹਿੰਮਤ ਅਤੇ ਸਵੈਮਾਨ ਦੀ ਚਿਣਗ ਜਗਾਈ ਤਾਂ ਉਗਰ ਪ੍ਰਤੀਕਿਰਿਆ ਦਾ ਹੋਣਾ ਸੁਭਾਵਿਕ ਸੀ। ਅਜੋਕੇ ਵਰਤਾਰੇ ਅੰਦਰ ਜਦੋਂ ਡੇਰਾ ਸਭਿਆਚਾਰ ਫਿਰ ਤੋਂ ਅਸੰਤੁਸ਼ਟ ਲੋਕਾਈ ਨੂੰ ਆਕਰਸ਼ਿਤ ਕਰ ਰਿਹਾ ਹੈ ਅਤੇ ਧਰਮ ਹੁਣ ਵਿਉਪਾਰ ਅਤੇ ਰਾਜਨੀਤੀ ਦਾ ਮਿਸ਼ਰਣ ਬਣ ਚੁੱਕਾ ਹੈ ਤਾਂ ਸਥਿਤੀ ਪਹਿਲਾਂ ਨਾਲੋਂ ਵੀ ਭਿਆਨਕ ਜਾਪਦੀ ਹੈ।ਨਾਨਕ ਨੇ ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਧਾਰਮਿਕ ਰੀਤੀ-ਰਿਵਾਜ਼ਾਂ, ਕਰਮ-ਕਾਂਡਾਂ ਨੂੰ ਨਿਰਾਰਥਕ ਦੱਸਿਆ, ਅੱਜ ਉਹ ਦੁੱਗਣੀ ਤਾਕਤ ਨਾਲ ਸਿਰ ਚੁੱਕ ਕੇ ਖੜੇ ਹਨ। ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਦੀ ਪ੍ਰਤੱਖ ਤਸਵੀਰ ਸਾਨੂੰ ਬਜ਼ੁਰਗਾਂ ਦੇ ਦੇਹਾਂਤ ਪਿੱਛੋਂ ਕੀਤੇ ਜਾਣ ਵਾਲੇ ਫਾਲਤੂ ਖਰਚਿਆ ਅਤੇ ਭੋਗਾਂ ਦੇ ਨਾਂ ਤੇ ਕੀਤੇ ਜਾਣ ਵਾਲੇ ਆਡੰਬਰਾਂ ਸਦਕਾ ਆਪਣੀ ਵਾਹ ਵਾਹ ਕਰਵਾਉਣ ਦੇ ਰਿਵਾਜ ਸਮੇਂ ਵੇਖੀ ਜਾ ਸਕਦੀ ਹੈ।ਜਿਸ ਬਾਰੇ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਵਿਚ ਕਿਹਾ ਗਿਆ ਹੈ :-

"ਜੀਵਣਾ ਮਰਣਾ ਜਾਇ ਕੈ ਏਥੈ ਖਾਜੈ ਕਾਲਿ॥
ਜਿਥੈ ਬਹਿ ਸਮਝਾਈਐ ਤਿਥੈ ਕੋਇ ਨ ਚਲਿਓ ਨਾਲਿ॥
ਰੋਵਣ ਵਾਲੇ ਜੇਤੜੇ ਸਭਿ ਬੰਨਹਿ ਪੰਡ ਪਰਾਲਿ॥
ਸਭੁ ਕੋ ਆਖੈ ਬਹੁਤੁ ਬਹੁਤੁ ਘਟਿ ਨ ਆਖੈ ਕੋਇ॥
ਕੀਮਤਿ ਕਿਨੈ ਨ ਪਾਈਆ ਕਹਿਣ ਨ ਵਡਾ ਹੋਇ॥ [5]

ਇਸੇ ਪ੍ਰਕਾਰ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਦਾ ਗੁਰਮੰਤਰ 'ਕਿਰਤ ਕਰੋ, ਵੰਡ ਛਕੋ, ਨਾਮ ਜਪੋ' ਅਕਾਲ ਪ੍ਰਵਚਨ ਦੀ ਹਾਮੀ ਭਰਦਾ ਹੈ। ਸਮਾਜ ਅੰਦਰ ਕਿਰਤੀ ਵਰਗ ਨੂੰ ਨੀਵੇਂ ਦਰਜ਼ੇ ਉੱਪਰ ਰੱਖਿਆ ਗਿਆ।ਪਰ ਨਾਨਕ ਵਲੋਂ ਮਹਾਂਸਫ਼ਰ ਲਈ ਜਾਣ ਤੋਂ ਪਹਿਲਾਂ ਭਾਈ ਲਾਲੋ ਵਰਗੇ ਸੱਚੇ ਕਿਰਤੀ ਦੇ ਦਰਸ਼ਨ ਕਰਨਾ ਵਧੇਰੇ ਕਾਰਗਰ ਸਾਬਿਤ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਜਿਸ ਆਦਰਸ਼ਕ ਸਮਾਜ ਅਤੇ ਆਦਰਸ਼ਕ ਮਨੁੱਖ ਦਾ ਬੀੜਾ ਆਪਜੀ ਵਲੋਂ ਉਠਾਇਆ ਗਿਆ, ਉਸ ਅੰਦਰ ਸੱਚੀ ਸੁੱਚੀ 'ਕਿਰਤ' ਅਤੇ 'ਕਿਰਤੀ' ਵਿਚ ਸਾਂਝ ਪੈਦਾ ਕਰਕੇ ਆਰਥਿਕ ਅਤੇ ਆਤਮਿਕ ਦੋਹਾਂ ਖੇਤਰਾਂ ਨੂੰ ਮਹਾਨਤਾ ਬਖ਼ਸ਼ੀ। ਇਸੇ ਕਾਰਨ ਝੂਠ, ਫ਼ਰੇਬ, ਧੋਖੇ ਨਾਲ ਕੀਤੀ ਕਮਾਈ ਕਰਨ ਵਾਲੇ ਦੀ ਤੁਲਨਾ ਮੁਰਦਾਰ ਖਾਣ ਵਾਲੇ ਨਾਲ ਕੀਤੀ। 'ਕੂੜ ਬੋਲਿ ਮੁਰਦਾਰ ਖਾਇ' ਅਤੇ 'ਹੱਕ ਪਰਾਇਆ ਨਾਨਕਾ, ਉਸ ਸੂਅਰ ਉਸ ਗਾਇ' ਦਾ ਪ੍ਰਵਚਨ ਉਸਾਰਦੇ ਹੋਏ ਆਪ ਜੋਗੀਆਂ, ਸੰਨਿਆਸੀਆਂ ਨੂੰ ਵੀ ਕਿਰਤੀ ਬਣਨ ਅਤੇ ਸਾਫ਼ ਨੀਅਤ ਨਾਲ ਦੂਜਿਆਂ ਲਈ ਕੁਝ ਕਰ ਸਕਣ ਵਾਲੇ ਪੂਰਨ ਮਨੁੱਖ ਬਣਨ ਦਾ ਸੰਦੇਸ਼ ਦਿੱਤਾ। ਵਿਸ਼ਵੀ ਸੰਦਰਭ ਵਿਚ ਜਦੋਂ ਕਿਰਤ ਕਰਨ, ਵੰਡ ਛਕਣ ਦੀ ਪ੍ਰਥਾ ਖਾਸ ਕਰ ਪੰਜਾਬੀ ਭਾਈਚਾਰੇ ਅੰਦਰ ਵੇਖਣ ਨੂੰ ਮਿਲਦੀ ਹੈ ਤਾਂ ਨਾਨਕ ਦੇ ਵਿਚਾਰਾਂ ਦੀ ਪ੍ਰਸੰਗਿਕਤਾ ਦਾ ਪ੍ਰਮਾਣ ਸਾਫ਼ ਨਜ਼ਰ ਆਉਂਦਾ ਹੈ।

ਆਧੁਨਿਕ ਦੌਰ ਅੰਦਰ ਵਿਸ਼ਵੀ ਕੈਨਵਸ ਉੱਪਰ ਮਨੁੱਖ ਜਦੋਂ ਆਪਣੇ ਆਪ ਨੂੰ ਬ੍ਰਹਿਮੰਡ ਦਾ ਸਰਵਉੱਚ ਪ੍ਰਾਣੀ ਸਮਝ ਚੁੱਕਾ ਹੈ ਤਾਂ ਕੁਦਰਤ ਅਤੇ ਕੁਦਰਤੀ ਸਰੋਤਾਂ ਦਾ ਨਿਰੰਤਰ ਹੋ ਰਿਹਾ ਸ਼ੋਸ਼ਣ ਇਕ ਚਿੰਤਾ ਦਾ ਵਿਸ਼ਾ ਬਚ ਰਿਹਾ ਹੈ। ਤਰੱਕੀ ਅਤੇ ਵਿਉਪਾਰ ਦੇ ਗ਼ਲਬੇ ਹੇਠ ਵਾਤਾਵਰਣ ਦਾ ਸੰਕਟ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਵਿਚਲੇ ਪ੍ਰਸੰਗ ਨੂੰ ਪੁਨਰ-ਵਿਚਾਰਨ ਵੱਲ ਸੰਕੇਤ ਕਰ ਰਿਹਾ ਹੈ। ਧਰਤੀ ਦੇ ਸੁਹੱਪਣ ਪਿੱਛੇ ਛੁਪੇ ਪਾਣੀ ਦੇ ਰਾਜ਼ ਨੂੰ ਜਿੱਥੇ ਹਰ ਧਰਮ ਅੰਦਰ

ਸਤਿਕਾਰਿਆ ਗਿਆ, ਪੂਜਿਆ ਗਿਆ ਉੱਥੇ ਹੀ ਬਾਬੇ ਨਾਨਕ ਨੇ ਪਾਣੀ ਨੂੰ ਪਿਤਾ ਦਾ ਦਰਜ਼ਾ, ਧਰਤੀ ਨੂੰ ਮਾਂ ਦਾ ਦਰਜ਼ਾ ਅਤੇ ਪਵਣੁ ਨੂੰ ਗੁਰੁ ਦਾ ਦਰਜ਼ਾ ਦੇ ਕੇ ਸਨਮਾਨ ਦਿੱਤਾ। ਪਰ ਜਦੋਂ ਵਿਸ਼ਵੀ ਪੱਧਰ ਉੱਪਰ ਇਨ੍ਹਾਂ ਸਰੋਤਾਂ ਸਬੰਧੀ ਸੰਕਟ ਉਭਰ ਰਹੇ ਹਨ ਤਾਂ ਸੰਤ ਬਲਬੀਰ ਸਿੰਘ ਸੀਚੇਵਾਲ ਵਲੋਂ ਚਲਾਈ ਮੁਹਿੰਮ ਸੱਚੇ ਅਤੇ ਸੁੱਚੇ ਕਾਰਜ ਦਾ ਆਗ਼ਾਜ਼ ਮੰਨੀ ਜਾ ਰਹੀ ਹੈ।

ਇਸੇ ਪ੍ਰਕਾਰ ਵਿਸ਼ਵੀ ਸੰਦਰਭ ਵਿਚ ਨਾਨਕ ਦੇ ਵਿਚਾਰਾਂ ਦੀ ਉਸ ਵੇਲੇ ਸਖ਼ਤ ਲੋੜ ਮਹਿਸੂਸ ਹੋ ਰਹੀ ਹੈ ਜਦੋਂ ਤਕਨੀਕ ਅਤੇ ਪਦਾਰਥਵਾਦ ਰੁਚੀਆਂ ਵਿਚ ਗ੍ਰਸਿਆ ਮਨੁੱਖ ਇਕੱਲਤਾ, ਮਾਨਸਿਕ ਤਣਾਅ, ਬੀਮਾਰੀਆਂ ਦਾ ਸ਼ਿਕਾਰ ਹੁੰਦਾ ਜਾ ਰਿਹਾ ਹੈ। ਆਪਣੇ ਆਪ ਵਿਚ ਲਿਪਟਿਆ ਉਹ ਸੰਵਾਦ ਦੀ ਪ੍ਰਕਿਰਿਆ ਤੋਂ ਦੂਰੀ ਸਥਾਪਿਤ ਕਰ ਰਿਹਾ ਹੈ।ਇਹੋ ਜਿਹੇ ਮਕਾਨਕੀ ਵਾਤਾਵਰਣ ਅੰਦਰ ਮਨੁੱਖੀ ਜਾਤੀ ਹੌਲੀ-ਹੌਲੀ ਭਾਵਨਾਵਾਂ ਦੇ ਦਾਇਰੇ ਉਲੰਘਦੀ ਹੋਈ ਇਕ ਗੁੰਮਨਾਮ ਹਨੇਰੇ ਅੰਦਰ ਧੱਸ ਰਹੀ ਹੈ। ਬਾਬੇ ਨਾਨਕ ਨੇ ਸਮਕਾਲੀ ਸਮਾਜ ਅੰਦਰ ਸੰਵਾਦ ਦੀ ਮਹੱਤਤਾ ਉੱਪਰ ਜ਼ੋਰ ਦਿੰਦਿਆਂ ਹਰ ਸਥਿਤੀ, ਵਿਚਾਰਧਾਰਾ ਨਾਲ ਇਕ ਤਰਕ ਅਧਾਰਿਤ ਸੰਵਾਦ ਰਚਾਇਆ। ਆਪ ਦਾ ਕਹਿਣਾ ਹੈ :-

"ਜਬ ਲਗੁ ਦੁਨੀਆ ਰਹੀਐ ਨਾਨਕ
ਕਿਛੁ ਸੁਣੀਐ ਕਿਛੁ ਕਹੀਏ॥[6]

ਸੰਵਾਦ ਅੰਦਰ ਦੂਜੀ / ਵਿਰੋਧੀ ਧਿਰ ਨੂੰ ਆਪਣਾ ਪੱਖ ਰੱਖਣ ਦੀ ਪੂਰੀ ਖੁੱਲ ਦਿੱਤੀ ਜਾਂਦੀ ਹੈ ਭਾਵ ਇਕ ਦੂਜੇ ਦਾ ਤਹਿ ਦਿਲੋਂ ਸਤਿਕਾਰ ਕਰਦੇ ਆਪਣੇ ਵਿਚਾਰ ਰੱਖਣਾ। ਵਿਚਾਰਾਂ ਵਿਚ ਵੱਖਰਤਾਵਾਂ ਹੁੰਦੇ ਵਿਰੋਧੀ ਧਿਰ ਜਦੋਂ ਨਾਨਕ ਦੇ ਰੂਬਰੂ ਹੁੰਦੀ ਹੈ ਤਾਂ ਆਪ ਬੜੀ ਹਲੀਮੀ, ਪਿਆਰ ਨਾਲ ਗਿਆਨ ਤੋਂ ਵਿਹੂਣੀਆਂ , ਹੰਕਾਰ ਨਾਲ ਭਰੀਆਂ ਆਤਮਾਵਾਂ ਨੂੰ ਸੱਚੇ ਗਿਆਨ ਦੀ ਚਿਣਗ ਲਗਾਉਂਦੇ ਹਨ।

ਡਾ. ਸੁਖਵਿੰਦਰ ਸਿੰਘ ਅਨੁਸਾਰ, " ਬੁਰਾਈ ਵੀ ਸ਼ੁੱਧ ਰੂਪ ਵਿਚ ਬੁਰਾਈ ਨਾ ਹੋ ਕੇ, ਮਨੁੱਖੀ ਮਾਨਸਿਕਤਾ ਦੁਆਰਾ ਸਮੇਂ-ਸਥਾਨ ਦੀਆਂ ਲੋੜਾਂ / ਮਜ਼ਬੂਰੀਆਂ ਅਤੇ ਸਮਾਜਿਕ ਸਭਿਆਚਾਰਕ ਉਲਾਰਾਂ / ਦਰ ਤਹਿਤ ਆਪਣੇ ਅਸਤਿਤਵੀ ਅਰਥਾਂ ਨੂੰ ਜਿਉਂਦਾ ਰੱਖਣ ਲਈ ਲਿਆ ਗਿਆ ਸੁਰੱਖਿਆਤਮਕ ਪੈਂਤੜਾ ਹੈ।"[7]

ਇਸੇ ਸੰਵਾਦ ਦੀ ਰੀਤ ਨੂੰ ਉਨ੍ਹਾਂ ਮਿਠਤੁ ਨਾਲ ਜੋੜ ਕੇ ਮਾਨਵ ਤੋਂ ਪਰਮ ਮਨੁੱਖ ਬਣਨ ਤੱਕ ਦੇ ਸਫ਼ਰ ਉੱਪਰ ਚੱਲਣ ਦਾ ਉਪਦੇਸ਼ ਵੀ ਦਿੱਤਾ ਕਿਉਂਕਿ ਹਾਕਮ / ਸ਼ਾਸ਼ਕ ਦੀ ਅਵਾਜ਼ ਨੂੰ ਹੁਕਮ ਦੀ ਅਵਾਜ਼ ਮੰਨਦਿਆਂ ਇਸ ਦੇ ਵਿਰੋਧ ਵਿਚ ਮਿਠਤੁ, ਨਿਮਰਤਾ ਦਾ ਸੰਕਲਪ ਉਭਾਰਿਆ। ਅੱਜ ਵਿਸ਼ਵੀ ਵਰਤਾਰੇ ਅੰਦਰ ਜਦੋਂ ਸਵੈ-ਕੇਂਦਰਿਤ ਮਨੁੱਖ ਦੂਜੀ ਧਿਰ ਨੂੰ ਸੁਨਣਾ ਹੀ ਨਹੀ ਚਾਹੁੰਦਾ, ਉੱਥੇ ਪਿਆਰ, ਆਜ਼ਿਜ਼ੀ, ਅਪਣੱਤ ਉਹ ਗੁਣ ਹਨ ਜੋ ਹੰਕਾਰ, ਅਨਿਆਂ ਦਾ ਨਾਸ਼ ਕਰਦੇ ਬੇਝਿਜਕ ਆਪਣੀ ਗੱਲ ਕਹਿਣ ਅਤੇ ਮਨਵਾਉਣ ਦੀ ਤਾਕਤ ਰੱਖਦੇ ਹਨ। ਮਿਥਿਹਾਸਕ ਹਵਾਲੇ ਦਿੰਦਿਆਂ ਆਪ ਸੰਸਾਰ ਨੂੰ ਜਿੱਥੇ ਚਲਾਇਮਾਨ ਆਖਦੇ ਹਨ ਉੱਥੇ ਹੀ ਬਲਸ਼ਾਲੀ, ਧਨਵਾਨ ਮਨੁੱਖ ਦੇ ਵੀ ਹੋਰਨਾਂ ਵਰਗੇ ਅੰਤ ਦੀ ਗੱਲ ਆਖਦੇ ਹਨ ਅਤੇ ਅਨੈਤਿਕ ਕਾਰਜਾਂ ਨੂੰ ਤਿਆਗ ਕੇ ਮਿਠਤੁ ਨੂੰ ਅਪਣਾਉਣ ਦਾ ਸੰਦੇਸ਼ ਦਿੰਦੇ ਹਨ :-

"ਮੋਰੀ ਮੋਰੀ ਕੈਰਉ ਕਰਤੇ ਦੁਰਜੋਧਨ ਸੇ ਭਾਈ
ਬਾਰਹ ਜੋਜਨ ਛਤ੍ਰ ਚਲੈ ਥਾ ਦੇਹੀ ਗਿਰਝਨ ਖਾਈ॥[8]

ਸਮੁੱਚੇ ਤੌਰ ਤੇ ਕਿਹਾ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ ਕਿ ਜਦੋਂ ਅਸੀਂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ/ਵਿਚਾਰਾਂ ਨੂੰ ਅਜੋਕੇ ਵਿਸ਼ਵ ਵਿਆਪੀ ਸੰਦਰਭਾਂ ਵਿਚ ਰੱਖਕੇ ਵੇਖਦੇ ਹਾਂ ਤਾਂ ਨਾਨਕ ਇਕ ਯੁਗ ਪੁਰਸ਼, ਸੰਵੇਦਨਸ਼ੀਲ, ਨਿਮਾਣਿਆਂ ਦੇ ਮਾਣ, ਬੇਹੱਦ ਸਾਹਸੀ, ਸਮਾਜ ਸੁਧਾਰਕ, ਮਹਾਂਯੋਗੀ, ਕਾਦਰ ਦੇ ਨਾਲ ਨਾਲ ਕੁਦਰਤ ਨੂੰ ਅਥਾਹ ਪਿਆਰ ਕਰਨ ਵਾਲੇ, ਇਕ ਕ੍ਰਾਂਤੀਕਾਰੀ ਸੰਸਥਾ ਦੇ ਰੂਪ ਵਿਚ ਨਜ਼ਰ ਆਉਂਦੇ ਹਨ। ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਜਿੱਥੇ ਸਮਕਾਲੀ ਬ੍ਰਾਹਮਣਵਾਦੀ ਸਮਾਜਿਕ ਦਰਜੇਬੰਦੀ ਨਾਲ ਟੱਕਰ ਲੈਂਦਿਆਂ, ਸੰਵਾਦ ਰਚਾਉਂਦਿਆਂ ਦੂਜੀਆਂ ਵਿਚਾਰਧਾਰਾਵਾਂ ਨੂੰ ਤਰਕ ਦੇ ਆਧਾਰ ਤੇ ਰੱਦਣ ਦੀ ਹਿੰਮਤ ਕੀਤੀ, ਜੋ ਮਨੁੱਖ ਮਨੁੱਖ ਅੰਦਰ ਅੰਤਰ ਕਰਨ ਨੂੰ ਪਹਿਲ ਦਿੰਦਾ ਹੈ। ਉੱਥੇ ਹੀ ਬਾਬਰ ਨੂੰ ਜਾਬਰ ਕਹਿ ਕੇ ਪਰਮ ਸ਼ਕਤੀ ਨੂੰ ਮਿਹਣਾ ਮਾਰਨ ਦੀ ਹਿੰਮਤ ਵੀ ਨਾਨਕ ਵਰਗਾ ਮਹਾਂਯੋਧਾ ਹੀ ਕਰ ਸਕਦਾ ਹੈ। ਅੱਜ ਵਿਸ਼ਵੀਕਰਨ ਅਤੇ ਬਾਜ਼ਾਰੀਕਰਨ ਦੀ ਪ੍ਰਕਿਰਿਆ ਨੇ ਅਜਿਹੀ ਸੋਚ ਨੂੰ ਜਨਮ ਦਿੱਤਾ ਹੈ ਜੋ ਬਿਹਤਰ ਜ਼ਿੰਦਗੀ ਜੀਊਣ ਦੀ ਇੱਛਾ ਰੱਖਣ ਵਾਲੇ ਸੰਜੀਦਾ ਵਿਅਕਤੀਆਂ ਦੇ ਵਿਚ ਗਹਿਰੀ ਖਾਈ ਪੈਦਾ ਕਰਕੇ ਪੂੰਜੀ ਅਧਾਰਿਤ ਅਮਾਨਵੀ ਦਿਖਾਵੇ ਦੇ ਦੁਆਰਾ ਇਕ ਸੁਪਨਮਈ ਸੰਸਾਰ ਦਾ ਨਿਰਮਾਣ ਕਰ ਰਹੀ ਹੈ। ਅਜਿਹੇ ਸਮੇਂ ਅੰਦਰ ਬਾਬੇ ਨਾਨਕ ਦੇ ਵਿਚਾਰ ਮਾਰਗ ਦਰਸ਼ਨ ਬਣ ਸਕਦੇ ਹਨ। ਅਮਨੁੱਖੀ ਸਭਿਆਚਾਰਕ ਸਾਮਰਾਜਵਾਦੀ ਸਥਿਤੀ ਵਿਚ ਸਾਢੇ ਪੰਜ ਸੌ ਸਾਲ ਪਹਿਲਾਂ ਬਾਬੇ ਨਾਨਕ ਨੇ 'ਨੀਲ ਬਸਤਰ ਲੈ ਕਪੜੇ ਪਹਿਰੇ ਤਰਕ ਪਠਾਣੀ ਅਮਲ ਕੀਆ' ਵਰਗੇ ਸੰਦੇਸ਼ਾਂ ਦੁਆਰਾ ਚੇਤੰਨ ਹੀ ਨਹੀਂ ਕੀਤਾ ਸਗੋਂ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਮਾਨਵ / ਸਰਵਉੱਚ ਪ੍ਰਾਣੀ / ਸਚਿਆਰਾ ਬਣਾਉਣ ਦਾ ਆਦਰਸ਼ ਵੀ ਸਿਰਜਿਆ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੀ ਵਿਸ਼ਵ ਵਿਆਪੀ ਵਿਚਾਰਧਾਰਾ ਧਰਮ ਦੇ ਖੇਤਰ ਵਿਚ ਆਦਰ ਪੂਰਵਕ ਜੀਵਨ ਬਤੀਤ ਕਰਨ ਦੇ ਲਈ 'ਪਤਿ ਵਿਣੁ ਪੂਜਾ ਸਤੁ ਵਿਣੁ ਸੰਜਮ' ਅਤੇ 'ਜੇ ਜੀਵੈ ਪਤਿ ਲੱਥੀ ਜਾਇ, ਸਭ ਹਰਾਮ ਜੇਤਾ ਛਿਡੁ ਖਾਇ' ਦਾ ਉਪਦੇਸ਼ ਵੀ ਦ੍ਰਿੜ ਕਰਵਾਉਂਦੀ ਹੈ। ਇਸੇ ਕਾਰਨ ਨਾਨਕ ਦਾ ਦਰਸ਼ਨ ਵੀ ਨਾਨਕ ਵਾਂਗ ਅਕਾਲ ਹੈ ਜੋ ਹਰ ਸਮੇਂ, ਸਥਾਨ ਅਤੇ ਸਥਿਤੀ ਵਿਚ ਪ੍ਰਸੰਗਿਕ ਹੈ।

"ਮਨ ਤੂ ਜੋਤ ਸਰੂਪ ਹੈ
ਆਪਣਾ ਮੂਲ ਪਛਾਣ॥[9]

ਦਾ ਉਪਦੇਸ਼ ਇਕ ਅਜਿਹੇ ਵਿਸ਼ਵ - ਵਿਆਪੀ ਵਰਤਾਰੇ ਦੇ ਦਰਸ਼ਨ ਕਰਵਾਉਂਦਾ ਹੈ ਜੋ ਮਾਨਵਤਾਵਾਦ, ਸਾਂਝੀਵਾਲਤਾ, ਨਿਆਂ, ਮਿਠਾਸ, ਮਿਨਰਤਾ, ਬਰਾਬਰੀ ਅਤੇ ਸਰਵਉੱਚ ਮਾਨਵੀ ਗੁਣਾਂ ਨੂੰ ਆਪਣੇ ਅੰਦਰ ਜਜ਼ਬ ਕਰਕੇ ਆਪਣੇ ਆਪ ਨਾਲ ਸੰਵਾਦ ਰਚਾਉਣ ਅਤੇ ਸਚਿਆਰਾ ਬਣਨ ਦਾ ਰਾਹ ਦੱਸਦਾ ਹੈ। ਇਹ ਸੰਕਲਪ ਮਨੁੱਖ ਮਨੁੱਖ ਦੇ ਦਰਮਿਆਨ ਬਟਵਾਰੇ, ਭਿੰਨਤਾ, ਵੈਰ - ਵਿਰੋਧ, ਈਰਖਾ ਦੀ ਬਜਾਇ ਪ੍ਰੇਮ, ਸਹਿਯੋਗ, ਸਦਭਾਵਨਾ, ਸ਼ੁਭ ਕਰਮਾਂ ਨੂੰ ਅਪਣਾਉਣ ਦਾ ਸੰਦੇਸ਼ ਹੈ। ਜਿਸਨੂੰ ਆਪਣੇ ਜੀਵਨ ਦਾ ਆਧਾਰ ਬਣਾ ਕੇ ਬਾਬੇ ਨਾਨਕ ਨੇ ਇਕ ਮਿਸਾਲ ਕਾਇਮ ਕੀਤੀ। ਸੋ ਅਜੋਕੇ ਸਮੇਂ ਅੰਦਰ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਮਾਨਸ ਤੋਂ ਦੇਵਤਾ ਬਣਾਉਣ ਦਾ ਦੈਵੀ ਵਿਸ਼ਵੀਕਰਨ ਹੈ ਜੋ ਇਕ ਅੰਤਰ ਸਭਿਆਚਾਰਕ ਅਤੇ ਅੰਤਰ - ਧਾਰਮਿਕ ਸੰਵਾਦ ਦਾ ਵੱਡਮੁੱਲਾ ਮਾਡਲ ਪੇਸ਼ ਕਰਦੀ ਜਿੱਥੇ ਵਿਸ਼ਵ ਭਾਈਚਾਰੇ ਦੀ ਬਾਤ ਪਾਉਂਦੀ ਹੈ ਉੱਥੇ ਹੀ ਬੇਹੱਦ ਸਾਰਥਕ ਅਤੇ ਪ੍ਰਸੰਗਿਕ ਵੀ ਹੋ ਨਿਬੜਦੀ ਹੈ।

ਹਵਾਲੇ ਅਤੇ ਟਿੱਪਣੀਆਂ

22- ਰਸੂਲ ਹਮਜ਼ਾਤੋਵ, ਮੇਰਾ ਦਾਗ਼ਿਸਤਾਨ, ਪੰਜਾਬ ਬੁੱਕ ਸੈਂਟਰ ਚੰਡੀਗੜ੍ਹ 1998, ਪੰਨਾ 6
23- ਡਾ. ਜਗਬੀਰ ਸਿੰਘ, ਗੁਰਮਤਿ ਕਾਵਿ : ਸਿਧਾਂਤ ਤੇ ਵਿਹਾਰ, ਚੇਤਨਾ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ਨ ਲੁਧਿਆਣਾ 2010, ਪੰਨਾ 73
24- ਆਦਿ ਗ੍ਰੰਥ, ਪੰਨਾ 473
25- ਧਨਾਸਰੀ ਮ: 1, 663
26- ਸਿਰੀਰਾਗੁ ਮ: 1, 15
27- ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ, ਪੰਨਾ 661
28- ਡਾ. ਸੁਖਵਿੰਦਰ ਸਿੰਘ, ਉਦਾਸੀ : ਪਰਿਭਾਸ਼ਾ ਅਤੇ ਪ੍ਰਕਿਰਤੀ (ਦਾਰਸ਼ਨਿਕ ਪਰਿਪੇਖ) ਪੰਜਾਬੀ ਯੂਨੀਵਰਸਿਟੀ ਪਟਿਆਲਾ, ਪੰਨਾ 106
29- ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ, ਪੰਨਾ 693
30- ਆਸਾ ਮ: 3, ਅੰਕ 441

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਦੀ ਬਾਣੀ : ਸਮਾਜਕ ਦ੍ਰਿਸ਼ਟੀਕੋਣ

* ਡਾ. ਰਜਨੀਸ਼ ਕੌਰ

* ਅਸਿਸਟੈਂਟ ਪ੍ਰੋਫ਼ੈਸਰ, ਖਾਲਸਾ ਕਾਲਜ, ਅਮ੍ਰਿਤਸਰ।

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਦਾ ਸਮੁੱਚਾ ਜੀਵਨ ਲੋਕ ਭਲਾਈ, ਸਾਂਝੀਵਾਲਤਾ ਦਾ ਸੰਦੇਸ਼, ਸਬਰ ਤੇ ਸਹਿਜ ਵਿਚ ਦ੍ਰਿੜ੍ਹ ਵਿਸ਼ਵਾਸ ਵਾਲਾ ਸੀ। ਉਹ ਸਮੁੱਚੀ ਕਾਇਨਾਤ ਨੂੰ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਦਾ ਸਰੂਪ ਮੰਨਦੇ ਸਨ। ਉਹਨਾਂ ਦੀ ਸ਼ਖ਼ਸੀਅਤ ਇਕ ਸੰਪੂਰਨ ਸੰਸਥਾ ਸੀ ਤੇ ਇਹ ਸੰਸਥਾ ਸਿਰਫ਼ ਅਧਿਆਤਮਕ ਪੱਧਰ ਤੱਕ ਹੀ ਸੀਮਿਤ ਨਹੀਂ ਸੀ, ਸਗੋਂ ਲੋਕ ਜੀਵਨ ਦੇ ਸਾਰੇ ਪੱਖਾਂ ਸਮਾਜਿਕ, ਰਾਜਨੀਤਕ, ਆਰਥਿਕ, ਧਾਰਮਿਕ, ਘਰੇਲੂ ਜੀਵਨ ਵਿਚ ਸਥਿਰਤਾ ਅਤੇ ਪਰਿਵਰਤਨ ਲਿਆਉਣ ਵਾਲੀ ਤੇ ਸਮੁੱਚੀ ਮਾਨਵਤਾ ਦੇ ਕਲਿਆਣ ਦੇ ਸੰਕਲਪ ਵਾਲੀ ਸੀ। ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ, ਮੱਧ ਯੁੱਗ ਦੇ ਮਹਾਨ ਕ੍ਰਾਂਤੀਕਾਰੀ, ਸੁਧਾਰਕ, ਅਦੁੱਤੀ ਯੁੱਗ ਨਿਰਮਾਤਾ, ਮਹਾਨ ਦੇਸ਼ ਭਗਤ, ਦੀਨ ਦੁਨੀਆ ਦੇ ਪਰਮ ਹਿਤੈਸ਼ੀ ਤੇ ਦੂਰਅੰਦੇਸ਼ੀ ਰਾਸ਼ਟਰ ਨਿਰਮਾਤਾ ਹੋਣ ਦੇ ਨਾਲ ਨਾਲ ਇਕ ਨਿਪੁੰਨ ਸੰਗੀਤਕਾਰ ਤੇ ਮਹਾਕਵੀ ਵੀ ਸਨ।[1] ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਨੇ ਮੱਧਕਾਲ ਦੀ ਸਭਿਆਚਾਰਕ ਜਾਗ੍ਰਤੀ ਲਹਿਰ ਨੂੰ ਇਕ ਨਵਾਂ ਮੋੜ ਦਿੱਤਾ ਤੇ ਆਪਣੀ ਸਿੱਖਿਆਵਾਂ ਰਾਹੀਂ ਲੋਕਾਂ ਵਿਚ ਜਾਗਰੂਕਤਾ ਫੈਲਾਈ। ਉਹਨਾਂ ਨੇ ਆਪਣੀ ਬਾਣੀ ਰਾਹੀਂ ਸਮਾਜ ਵਿਚ ਫੈਲੀ ਅਰਾਜਕਤਾ, ਤਾਨਾਸ਼ਾਹੀ ਆਦਿ ਦਾ ਬਿਉਰਾ ਪੇਸ਼ ਕੀਤਾ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੀ ਬਾਣੀ ਮੂਲ ਰੂਪ ਵਿਚ ਧਾਰਮਿਕ ਕਾਵਿ ਹੈ। ਇਸ ਦੇ ਸਿਰਜਿਤ ਸੰਸਾਰ ਵਿਚ ਸਾਹਿਤ, ਸੰਗੀਤ, ਧਰਮ ਅਤੇ ਨੈਤਿਕਤਾ ਦਾ ਵਿਚਿਤ੍ਰ ਸੰਜੋਗ ਦ੍ਰਿਸ਼ਟੀਗੋਚਰ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਮੱਧਕਾਲ ਦੀ ਪ੍ਰਧਾਨ ਚੇਤਨਾ ਵਿਧੀ ਦੇ ਅਨੁਕੂਲ ਇਹ ਮਨੁੱਖੀ ਸਰੋਕਾਰਾਂ ਨੂੰ ਧਾਰਮਿਕ ਮੁਹਾਵਰੇ ਰਾਹੀਂ ਵਿਅਕਤ ਕਰਨ ਵੱਲ ਰੁਚਿਤ ਹੈ।[2] ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਨੇ ਜਾਤ-ਪਾਤ ਤੋਂ ਉੱਪਰ ਉੱਠ ਕੇ ਹਿੰਦੂਆਂ ਤੇ ਮੁਸਲਮਾਨਾਂ ਦੋਹਾਂ ਦੇ ਧਰਮ ਦੀਆਂ ਕੁਰੀਤੀਆਂ ਨੂੰ ਸਭ ਦੇ ਸਾਹਮਣੇ ਰੱਖਿਆ।

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਨਾਲ ਸੰਬੰਧਿਤ ਬਹੁਤ ਸਾਹਿਤ ਜੁੜਿਆ ਹੋਇਆ ਹੈ ਜਿਸ ਤੋਂ ਉਹਨਾਂ ਦੇ ਜੀਵਨ ਬਾਰੇ ਜਾਣਕਾਰੀ ਪ੍ਰਾਪਤ ਕੀਤੀ ਜਾਂਦੀ ਹੈ ਜਿਵੇਂ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਦੁਆਰਾ ਰਚਿਤ ਬਾਣੀ, ਉਦਾਸੀਆਂ, ਜਨਮਸਾਖੀਆਂ ਆਦਿ। ਜਨਮਸਾਖੀਆਂ ਵਿਚੋਂ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਦੇ ਜੀਵਨ ਬਾਰੇ ਬਹੁਤ ਕੁਝ ਪ੍ਰਾਪਤ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਭਾਵੇਂ ਕਿ ਇਸ ਵਿਚੋਂ ਉਹਨਾਂ ਦੀਆਂ ਸ਼ਖ਼ਸੀਅਤ ਪੂਰੀ ਤਰ੍ਹਾ ਉਭਰ ਕੇ ਸਾਹਮਣੇ ਨਹੀਂ ਆਉਂਦੀ ਕਿਉਂਕਿ ਸਾਖੀਆਂ ਨੂੰ ਕਲਪਨਾ ਦਾ ਆਧਾਰ ਵੀ ਸਮਝ ਲਿਆ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਅੱਜ ਵਿਗਿਆਨ ਦਾ ਯੁੱਗ ਹੈ ਤੇ ਉਹ ਪਰਾਸਰੀਰਕ ਅੰਸ਼ ਨੂੰ ਪ੍ਰਵਾਨ ਨਹੀਂ ਕਰਦਾ। ਜਨਮਸਾਖੀਆਂ ਵਿਚ ਪਰਾਸਰੀਰਕ ਅੰਸ਼ ਦੀ ਭਰਮਾਰ ਹੈ। ਇਹਨਾਂ ਵਿਚ ਵਾਸਤਵਿਕ ਅਤੇ ਕਾਲਪਨਿਕ ਦੋਹਾਂ ਘਟਨਾਵਾਂ ਦਾ ਸੁਮੇਲ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਪਰ ਫਿਰ ਵੀ ਅਸੀਂ ਇਸ ਤੋਂ ਮੁਨਕਰ ਨਹੀਂ ਹੋ ਸਕਦੇ ਕਿਉਂਕਿ ਇਹਨਾਂ ਵਿਚ ਗੁਰੂ ਦੇ ਜੀਵਨ ਬਾਰੇ ਬਹੁਤ ਸਾਰੀ ਜਾਣਕਾਰੀ ਪ੍ਰਾਪਤ ਹੁੰਦੀ ਹੈ।

ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਇਸ ਦੁਨੀਆਂ ਨੂੰ ਵਹਿਮਾਂ-ਭਰਮਾਂ, ਅਵਤਾਰਵਾਦ, ਕਰਾਮਾਤਾਂ ਆਦਿ ਵਿਚੋਂ ਕੱਢਣਾ ਚਾਹੁੰਦੇ ਸਨ ਜਿਸ ਕਰਕੇ ਉਹਨਾਂ ਨੇ ਸਾਰੇ ਧਰਮਾਂ ਦਾ ਸਤਿਕਾਰ ਕਰਦੇ ਹੋਏ ਸਾਂਝੀਵਾਲਤਾ ਦਾ ਉਪਦੇਸ਼ ਦਿੱਤਾ। ਰੱਬ ਨੂੰ ਇਕ ਓਅੰਕਾਰ ਨਾਲ ਜੋੜਿਆ। ਪੈਦਲ ਯਾਤਰਾਵਾਂ ਕੀਤੀਆਂ ਤੇ ਚਾਰੇ ਦਿਸ਼ਾਵਾਂ ਵਿਚ ਜਾ ਕੇ ਲੋਕਾਂ ਦਾ ਮਾਰਗ ਦਰਸ਼ਨ ਕੀਤਾ। ਪਰ ਕੁਝ ਸਾਖੀਕਾਰਾਂ ਨੇ ਉਹਨਾਂ ਦੀ ਸ਼ਖ਼ਸੀਅਤ ਦੀ ਪੇਸ਼ਕਾਰੀ ਕਰਦੇ ਸਮੇਂ ਉਹਨਾਂ ਨੂੰ ਮਿਥਿਹਾਸ ਦੀਆਂ ਸਾਖੀਆਂ ਨਾਲ ਵੀ ਜੋੜ ਕੇ ਪੇਸ਼ ਕੀਤਾ। ਇਸ ਨਾਲ ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਦੀ ਕ੍ਰਾਂਤੀਕਾਰੀ ਸਿਖਿਆ ਤੇ ਇਸ ਦਾ ਉਲਟ ਅਸਰ ਵੀ ਪੈ ਸਕਦਾ ਹੈ। ਅਸਲ ਵਿਚ ਕੁਝ ਸਾਖੀਕਾਰ ਗੁਰੂ ਨੂੰ ਹਿੰਦੂ ਸਾਧ ਸ਼੍ਰੇਣੀ ਨਾਲ ਸੰਬੰਧਿਤ ਕਰਕੇ ਦੇਖਦੇ ਸਨ। ਉਸ ਸਮੇਂ ਸਾਖੀਕਾਰ ਖ਼ੁਦ ਆਪ ਧਰਮ ਦੇ ਦਬਾਏ ਹੋਏ ਪ੍ਰਤੀਤ ਹੁੰਦੇ ਹਨ ਅਤੇ ਉਹਨਾਂ ਨੇ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੂੰ ਕਰਾਮਾਤਾਂ ਨਾਲ ਜੋੜਣਾ ਸ਼ੁਰੂ ਕਰ ਦਿੱਤਾ।

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦੇ ਜਨਮ ਤੋਂ ਪਹਿਲਾਂ ਲੋਕੀਂ ਫੋਕੇ ਕਰਮ ਕਾਂਡ, ਜਾਤ-ਪਾਤ, ਵਹਿਮ-ਭਰਮ, ਛੂਤ-ਛਾਤ, ਜਾਦੂ-ਟੂਣੇ, ਕਰਾਮਾਤਾਂ ਆਦਿ ਵਿਚ ਫਸੇ ਹੋਏ ਸਨ। ਬ੍ਰਾਹਮਣਵਾਦ ਦਾ ਪੂਰਾ ਬੋਲ-ਬਾਲਾ ਸੀ। ਬ੍ਰਾਹਮਣਵਾਦ ਦਾ ਵਿਰੋਧ ਹੋਇਆ ਤੇ ਇਸ ਦੇ ਵਿਰੋਧ ਵਜੋਂ ਹੀ ਭਗਤੀ ਲਹਿਰ ਉਤਪੰਨ ਹੋਈ। ਇਸ ਦੇ ਵਿਰੋਧ ਵਿਚ ਰਾਮਾਨੰਦ, ਰਵੀਦਾਸ, ਕਬੀਰ, ਨਾਮਦੇਵ ਤੇ ਹੋਰ ਭਗਤ ਕਵੀਆਂ ਨੇ ਬ੍ਰਾਹਮਣਵਾਦ ਦੇ ਖਿਲਾਫ਼ ਆਵਾਜ਼ ਉਠਾਈ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਨੂੰ ਵੀ ਇਸ ਦੇ ਮੋਢੀ ਵਜੋਂ ਦੇਖਿਆ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਭਗਤੀ ਲਹਿਰ ਦੇ ਤਹਿਤ ਬ੍ਰਾਹਮਣਵਾਦ ਦਾ ਵਿਰੋਧ ਕੀਤਾ ਤੇ ਸਿੱਖ ਧਰਮ ਦੀ ਨੀਂਹ ਰੱਖੀ। ਗੁਰੂਆਂ ਨੇ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਵਹਿਮ-ਭਰਮ, ਫੋਕੇ ਕਰਮ-ਕਾਡਾਂ ਤੇ ਹੀਣ ਭਾਵਨਾ ਵਿਚੋਂ ਕੱਢ ਕੇ ਉਹਨਾਂ ਅੰਦਰ ਆਤਮ-ਵਿਸ਼ਵਾਸ ਅਤੇ ਰੱਬ ਦੀ ਭਗਤੀ ਨਾਲ ਜੋੜਿਆ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਨੇ ਇਹਨਾਂ ਸਿੱਖਿਆਵਾਂ ਦੀ ਸ਼ੁਰੂਆਤ ਕੀਤੀ। ਸਾਂਝੀਵਾਲਤਾ ਅਤੇ ਭਾਈਚਾਰਕ ਸਾਂਝ ਉੱਪਰ ਜ਼ੋਰ ਪਾਇਆ। ਉਹਨਾਂ ਨੇ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਨਾਮ ਜਪਾਇਆ, ਸੱਚ ਦਾ ਰਾਹ ਦੱਸਿਆ, ਧਰਮ ਦਾ ਉਪਦੇਸ਼ ਦਿੱਤਾ ਤੇ ਆਪ ਹੱਥੀਂ ਸੇਵਾ ਕਰਦੇ ਰਹੇ। ਲੰਗਰ ਦੀ ਪ੍ਰਥਾ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਦੁਆਰਾ ਚਲਾਈ ਗਈ ਤੇ ਆਪਣੇ ਹੱਥੀ ਲੰਗਰ ਵਿਚ ਸੇਵਾ ਕਰਦੇ ਰਹੇ।

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਦੇ ਸਮੇਂ ਸਮਾਜ ਦੋ ਵਰਗਾਂ ਵਿਚ ਵੰਡਿਆ ਹੋਇਆ ਸੀ, ਹਿੰਦੂ ਅਤੇ ਮੁਸਲਮਾਨ ਵਰਗ। ਹਿੰਦੂ ਵਰਗ ਅੱਗੇ ਚਾਰ ਵਰਗਾਂ-ਬ੍ਰਾਹਮਣ, ਖਤ੍ਰੀ, ਵੈਸ਼ ਤੇ ਸ਼ੂਦਰ ਵਿਚਕਾਰ ਵੰਡਿਆ ਹੋਇਆ ਸੀ। ਮੁਸਲਿਮ ਧਰਮ ਨੂੰ ਉੱਤਲਾ ਅਤੇ ਹਿੰਦੂ ਧਰਮ ਨੂੰ ਹੇਠਲਾ ਦਰਜ਼ਾ ਦਿੱਤਾ ਹੋਇਆ ਸੀ। ਮੰਦਿਰਾਂ ਦੀ ਹਾਲਤ ਬਹੁਤ ਖਸਤਾ ਸੀ ਜਦ ਕਿ ਰਾਜ ਵਿਚ ਮਸਜਿਦਾਂ ਦੀ ਉਸਾਰੀ ਆਮ ਸੀ। ਇਸ ਕਰਕੇ ਹੀ ਉਹਨਾਂ ਨੇ ਜਾਤ-ਪਾਤ ਦਾ ਵਿਰੋਧ

ਕੀਤਾ। ਕਿਉਂਕਿ ਉਸ ਸਮੇਂ ਵਿਚ ਵਿਅਕਤੀ ਦੀ ਪਰਖ ਦਾ ਆਧਾਰ ਉਸ ਦੇ ਗੁਣ ਔਗੁਣ ਨਾ ਹੋ ਕੇ ਕੇਵਲ ਜਾਤ-ਪਾਤ ਹੀ ਸੀ। ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਸਮਾਜ ਧਰਮਾਂ ਵਿਚ ਵੰਡਿਆ ਹੋਇਆ ਸੀ। ਬ੍ਰਾਹਮਣ ਅਤੇ ਸ਼ੂਦਰ ਦੀ ਬਰਾਬਰੀ ਦਾ ਬਹੁਤ ਵੱਡਾ ਪਾਪ ਸਮਝਿਆ ਜਾਂਦਾ ਸੀ। ਗੁਰੂ ਜੀ ਅਨੁਸਾਰ ਧਰਮ ਕਿਸੇ ਵੀ ਜਾਤ ਲਈ ਕੋਈ ਮਹੱਤਵ ਨਹੀਂ ਰੱਖਦਾ ਸੀ ਚਾਹੇ ਉਹ ਹਿੰਦੂ ਸੀ ਜਾਂ ਫਿਰ ਮੁਸਲਮਾਨ। ਗੁਰੂ ਜੀ ਇਕ ਨਵੇਂ ਧਰਮ ਦੀ ਸ਼ੁਰੂਆਤ ਕਰਕੇ ਇਕ ਨਵੇਂ ਮਨੁੱਖ ਦੀ ਸਿਰਜਣਾ ਦੀ ਕਲਪਨਾ ਕਰ ਰਹੇ ਸਨ। 'ਨਾ ਕੋ ਹਿੰਦੂ ਨਾ ਮੁਸਲਮਾਨ' ਕਥਨ ਨੂੰ ਜੇਕਰ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਨਾਲ ਜੋੜ ਕੇ ਦੇਖਿਆ ਜਾਵੇ ਤਾਂ ਇਸ ਦਾ ਭਾਵ ਹੈ ਕਿ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਦੀ ਕੋਈ ਜਾਤ ਨਹੀਂ। ਨਾ ਉਹ ਹਿੰਦੂ ਹੈ ਅਤੇ ਨਾ ਹੀ ਉਹ ਮੁਸਲਮਾਨ। ਇਹ ਵੀ ਇਕ ਨਵਾਂ ਸੰਕਲਪ ਆਮ ਮਨੁੱਖਾਂ ਦੇ ਸਨਮੁੱਖ ਹੋਇਆ ਸੀ।

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਦਾ ਸਮਕਾਲੀ ਬਾਬਰ ਬਾਦਸ਼ਾਹ ਸੀ। ਉਹ ਇਕ ਕੱਟੜ ਮੁਸਲਿਮ ਬਾਦਸ਼ਾਹ ਸੀ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਨੂੰ ਕੁਰਾਨ ਸ਼ਰੀਫ਼ ਅਤੇ ਪਵਿੱਤਰ ਹਦੀਸਾਂ ਦੀਆਂ ਸਿਖਿਆਵਾਂ ਅਤੇ ਮੁਸਲਮਾਨ ਹਾਕਿਮਾਂ ਦੇ ਕਾਰ ਵਿਹਾਰ ਵਿਚ ਧਰਤੀ ਆਕਾਸ਼ ਦਾ ਅੰਤਰ ਨਜ਼ਰ ਆਉਂਦਾ ਸੀ। ਬਾਬਰ ਦਾ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਪ੍ਰਤੀ ਰਵੱਈਆ ਨਫ਼ਰਤ ਅਤੇ ਦੁਰ ਵਿਹਾਰ ਵਾਲਾ ਸੀ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਚਾਹੁੰਦੇ ਸਨ ਕਿ ਜੇਕਰ ਕੋਈ ਮੁਸਲਮਾਨ ਹੈ ਤਾਂ ਉਹ ਸੱਚੇ ਅਰਥਾਂ ਵਿਚ ਮੁਸਲਮਾਨ ਬਣਨ। ਉਹ ਮੁਸਲਮਾਨਾਂ ਨੂੰ ਇਕ ਵਧੀਆ ਇਨਸਾਨ ਅਤੇ ਨਿਰਮਲ ਹਿਰਦੇ ਵਾਲਾ ਬਣਨ ਦਾ ਉਪਦੇਸ਼ ਦਿੰਦੇ ਸਨ 'ਮੁਸਲਮਾਣੁ ਮੋਮ ਦਿਲ ਹੋਵੈ। ਅੰਤਰ ਕੀ ਮਲੁ ਦਿਲ ਤੇ ਧੋਵੈ।' ਮੁਸਲਮਾਨਾਂ ਦੀ ਕਥਨੀ ਤੇ ਕਰਨੀ ਦੇ ਅੰਤਰ ਕਾਰਣ ਹੀ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਪੁਕਾਰ ਉਠੇ ਸਨ-"ਨਾ ਕੋਈ ਹਿੰਦੂ ਹੈ ਨਾ ਕੋ ਮੁਸਲਮਾਨ।" ਉਹ ਇਸਲਾਮ ਜਾਂ ਇਸਲਾਮੀ ਸ਼ਰ੍ਹਾਂ ਦੇ ਵਿਰੋਧੀ ਨਹੀਂ ਸਨ ਸਗੋਂ ਤਤਕਾਲੀ ਮੁਸਲਮਾਨਾਂ ਨੂੰ ਆਪਣੀ ਸ਼ਰ੍ਹਾਂ ਸਰੀਅਤ ਤੇ ਸਾਬਿਤ-ਕਦਮ ਰਹਿਣ ਲਈ ਪ੍ਰੇਰਿਆ। ਕੁਰਾਨ ਸ਼ਰੀਫ਼ ਮੁਸਲਮਾਨਾਂ ਨੂੰ ਸੁਚੱਜੀ ਜੀਵਨ ਜਾਂਚ ਦੀ ਸਿਖਿਆ ਦਿੰਦੀ ਹੈ। ਚੰਗੇ ਕਰਮਾਂ ਵਾਲਿਆਂ ਨੂੰ ਜੰਨਤ ਅਤੇ ਮੰਦੇ ਕੰਮ ਕਰਨ ਵਾਲਿਆਂ ਨੂੰ ਦੋਜ਼ਖ਼ ਦੀ ਅੱਗ ਵਿਚ ਸੜਨਾ ਪੈਂਦਾ ਹੈ। ਇਸਲਾਮ ਧਰਮ ਦੀ ਆੜ ਹੇਠ ਹੋ ਰਹੀ ਲੁੱਟ-ਖੋਹ ਵੇਖ ਕੇ ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਹਲਾਲ ਤੇ ਹਰਾਮ ਦੀ ਕਮਾਈ ਵਿਚ ਫ਼ਰਕ ਦੱਸਦਿਆਂ ਕਿਹਾ ਕਿ ਦਸਾਂ ਨੌਹਾਂ ਦੀ ਕਮਾਈ ਕਰ ਕੇ ਖਾਣਾ ਹਲਾਲ ਹੈ ਅਤੇ ਪਰਾਇਆ ਹੱਕ ਖੋਹਣਾ ਹਰਾਮ ਹੈ :

ਹਕੁ ਪਰਾਇਆ ਨਾਨਕਾ ਉਸੁ ਸੂਅਰ ਉਸ ਗਾਇ।
ਗੁਰੁ ਪੀਰੁ ਹਾਮਾ ਤਾ ਭਰੇ ਜਾ ਮੁਰਦਾਰੁ ਨਾ ਖਾਇ।
ਗਲੀ ਭਿਸਤਿ ਨ ਜਾਈਐ ਛੁਟੈ ਸਚੁ ਕਮਾਇ।
ਮਾਰਣ ਪਾਹਿ ਹਰਾਮ ਮਹਿ ਹੋਇ ਹਲਾਲੁ ਨ ਜਾਇ।
ਨਾਨਕ ਗਲੀ ਕੂੜੀਈ ਕੂੜੋ ਪਲੈ ਪਾਇ।[3]

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਨੇ ਕੁਰਾਹੇ ਪਏ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਸਹੀ ਰਸਤਾ ਦਿਖਾਇਆ। ਮੁਸਲਮਾਨਾਂ ਦੀ ਬਹੁ-ਗਿਣਤੀ ਨੂੰ ਇਸਲਾਮ ਦੇ ਸਹੀ ਰਸਤੇ ਤੇ ਚਲਣ ਲਈ ਉਹਨਾਂ ਦਾ ਮਾਰਗ ਦਰਸ਼ਨ ਕੀਤਾ। ਇਸਲਾਮ ਇਕ ਚੰਗਾ ਧਰਮ ਹੈ ਪਰੰਤੂ ਉਸ ਦੇ ਕੁਝ ਸ਼ਾਸਕਾਂ ਨੇ ਉਸ ਦੀ ਰੱਜ ਕੇ ਦੁਰਵਰਤੋਂ ਕੀਤੀ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਨੇ ਉਹਨਾਂ ਦੇ ਇਸ ਰਵੱਈਏ ਨੂੰ ਆਪਣੀ ਬਾਣੀ ਵਿਚ ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਪੇਸ਼ ਕੀਤਾ ਹੈ :

ਖੁਰਾਸਾਨ ਖਸਮਾਨਾ ਕੀਆ ਹਿੰਦੁਸਤਾਨ ਡਰਾਇਆ।
ਆਪੈ ਦੋਸੁ ਨ ਦੇਈ ਕਰਤਾ ਜਮੁ ਕਰਿ ਮੁਗਲੁ ਚੜਾਇਆ।
ਏਤੀ ਮਾਰ ਪਈ ਕਰਲਾਣੇ ਤੈਂ ਕੀ ਦਰਦੁ ਨਾ ਆਇਆ।
ਕਰਤਾ ਤੂੰ ਸਭਨਾ ਕਾ ਸੋਈ।
ਜੇ ਸਕਤਾ ਸਕੇਤ ਕਉ ਮਾਰੇ ਤਾ ਮਨਿ ਰੋਸੁ ਨ ਹੋਈ।੧। ਰਹਾਉ।
ਸਕਤਾ ਸੀਹੁ ਮਾਰੇ ਪੈ ਵਗੈ ਖਸਮੈ ਸਾ ਪੁਰਸਾਈ।
ਰਤਨ ਵਿਗਾੜਿ ਵਿਗੋਏ ਕੁਤੀ ਮੁਇਆ ਸਾਰ ਨ ਕਾਈ।
ਆਪੇ ਜੋੜਿ ਵਿਛੋੜੇ ਆਪੇ ਵੇਖੁ ਤੇਰੀ ਵਡਿਆਈ।[4]

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਬਾਣੀ ਵਿਚੋਂ ਸਮਾਜ ਵਿਚ ਔਰਤ ਦੀ ਹਾਸ਼ੀਆਗਤ ਸਥਿਤੀ ਦ੍ਰਿਸ਼ਟੀਗੋਚਰ ਹੁੰਦੀ ਹੈ। ਮੱਧਕਾਲੀ ਸਮਾਜ ਵਿਚ ਔਰਤ ਦੀ ਸਥਿਤੀ ਮਾੜੀ ਸੀ ਤੇ ਉਸ ਨੂੰ ਮਰਦ ਦੇ ਬਰਾਬਰ ਦਾ ਦਰਜ਼ਾ ਹਾਸਿਲ ਨਹੀਂ ਸੀ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਔਰਤ ਨੂੰ ਸਮਾਜ ਵਿਚ ਉੱਚਾ ਸਥਾਨ ਦੇਣ ਦੇ ਸਮਰਥਕ ਸਨ। ਗੁਰੂ ਜੀ ਕਹਿੰਦੇ ਹਨ, "ਸੋ ਕਿਉਂ ਮੰਦਾ ਆਖੀਐ ਜਿਤੁ ਜੰਮਹਿ ਰਾਜਾਨ।" ਭਾਵ ਕਿ ਇਸਤਰੀ ਨੂੰ ਮਾੜਾ ਨਹੀਂ ਕਹਿਣਾ ਚਾਹੀਦਾ। ਇਸਨੇ ਰਾਜਿਆਂ ਨੂੰ ਵੀ ਜਨਮ ਦਿੱਤਾ ਹੈ। ਇਸਲਾਮ ਵਿਚ ਵੀ ਔਰਤ ਨੂੰ ਮਾਣਯੋਗ ਸਥਾਨ ਹਾਸਿਲ ਹੈ। ਹਜ਼ਰਤ ਮੁਹੰਮਦ ਵੀ ਨਾਰੀਆਂ ਦਾ ਬਹੁਤ ਆਦਰ ਸਤਿਕਾਰ ਕਰਦੇ ਸਨ। ਮੁਗ਼ਲਾਂ ਦੀ ਸੈਨਾ ਜਦ ਵੀ ਭਾਰਤ ਤੇ ਹਮਲਾ ਕਰਦੀ ਤਾਂ ਸਭ ਤੋਂ ਵੱਧ ਔਰਤਾਂ ਤੇ ਵਧੀਕੀਆਂ ਕੀਤੀਆਂ ਜਾਂਦੀਆਂ। ਉਹਨਾਂ ਦੀ ਇੱਜ਼ਤ ਨਾਲ ਖਿਲਵਾੜ ਕੀਤਾ ਜਾਂਦਾ। ਔਰਤਾਂ ਉੱਪਰ ਹੋ ਰਹੀਆਂ ਵਧੀਕੀਆਂ ਬਾਰੇ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਕਰੁਣਾਮਈ ਸੁਰ ਵਿਚ ਕਹਿੰਦੇ ਹਨ :

ਜੈਸੀ ਮੈ ਆਵੈ ਖਸਮ ਕੀ ਬਾਣੀ ਤੈਸੜਾ ਕਰੀ ਗਿਆਨੁ ਵੇ ਲਾਲੋ।
ਪਾਪ ਕੀ ਜੰਞ ਲੈ ਕਾਬਲਹੁ ਧਾਇਆ ਜੋਰੀ ਮੰਗੈ ਦਾਨੁ ਵੇ ਲਾਲੋ।
ਸਰਮੁ ਧਰਮੁ ਦੁਇ ਛਪਿ ਖਲੋਏ ਕੂੜੁ ਫਿਰੈ ਪਰਧਾਨੁ ਵੇ ਲਾਲੋ।
ਕਾਜੀਆ ਬਾਮਣਾ ਕੀ ਗਲ ਥਕੀ ਅਗਦੁ ਪੜੈ ਸੈਤਾਨੁ ਵੇ ਲਾਲੋ।[5]

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਦੇ ਸਮੇਂ ਮੁਸਲਮਾਨ ਸ਼ਾਸਕਾਂ ਨੇ ਗ਼ੈਰ-ਮੁਸਲਿਮਾਂ ਉੱਤੇ ਬਹੁਤ ਅਤਿਆਚਾਰ ਕੀਤੇ। ਉਹ ਉਹਨਾਂ ਨੂੰ ਜਬਰੀ ਧਰਮ ਪਰਿਵਰਤਨ ਵਾਸਤੇ ਉਕਸਾਉਂਦੇ। ਜੇਕਰ ਕੋਈ ਧਰਮ ਪਰਿਵਰਤਨ ਤੋਂ ਮਨਾਹੀ ਕਰਦਾ ਤਾਂ ਮੁਸਲਿਮ ਸ਼ਾਸਕ ਉਹਨਾਂ ਤੇ ਅੱਤਿਆਚਾਰ ਕਰਵਾਉਂਦੇ। ਉਹ ਕੱਟੜ ਮੁਸਲਮਾਨੀ ਸਨ, ਜਿਸ ਕਰਕੇ ਉਹ ਦੂਸਰੇ ਧਰਮ ਨੂੰ ਵੱਧਦਾ-ਫੁੱਲਦਾ ਨਹੀਂ ਦੇਖ ਸਕਦੇ ਸਨ। ਤੱਤਕਾਲੀ ਮੁਸਲਮਾਨ ਹਾਕਿਮਾਂ ਦੇ ਗ਼ੈਰ-ਇਸਲਾਮੀ ਵਤੀਰੇ ਕਾਰਣ ਹੀ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਨੇ 'ਰਾਜੇ ਸੀਂਹ ਮੁਕਦਮ ਕੁੱਤੇ' ਵਾਲਾ ਵਾਕ ਫ਼ਰਮਾਇਆ ਸੀ।

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਨੇ ਕਈ ਮੁਸਲਮਾਨਾਂ, ਕਾਜ਼ੀਆਂ ਨੂੰ ਸਿਰਫ਼ ਦਿਖਾਵੇ ਜਾਂ ਉਪਚਾਰਿਕ ਤੌਰ ਤੇ ਨਮਾਜ਼ ਪੜ੍ਹਦੇ ਅਤੇ ਬੁਰੇ ਕੰਮ ਕਰਦੇ ਵੇਖਿਆ ਸੀ। ਨਮਾਜ਼ ਦੇ ਸੰਦਰਭ ਵਿਚ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਉਹਨਾਂ ਨੂੰ ਸਮਝਾਉਂਦੇ ਹੋਏ ਕਹਿੰਦੇ ਹਨ :

ਪੰਜਿ ਨਿਵਾਜਾ ਵਖਤ ਪੰਜਿ ਪੰਜਾ ਪੰਜੇ ਨਾਉ।
ਪਹਿਲਾ ਸਚੁ ਹਲਾਲੁ ਦੁਇ ਤੀਜਾ ਖੈਰ ਖੁਦਾਇ।
ਚਉਥੀ ਨੀਅਤਿ ਰਾਸਿ ਮਨੁ ਪੰਜ ਵੀ ਸਿਫਤਿ ਸਨਾਇ।
ਕਰਣੀ ਕਲਮਾ ਆਖਿ ਕੈ ਤਾ ਮੁਸਲਮਾਣੁ ਸਦਾਇ।
ਨਾਨਕ ਜੇਤੇ ਕੂੜਿਆਰ ਕੂੜੈ ਕੂੜੀ ਪਾਇ।[6]

ਪਹਿਲੀ ਨਮਾਜ਼ ਸੱਚ ਤੇ ਕਾਇਮ ਰਹਿਣਾ ਹੈ। ਦੂਜੀ ਨਮਾਜ਼ ਹਲਾਲ ਦੀ ਕਮਾਈ ਖਾਣਾ ਹੈ। ਤੀਜੀ ਨਮਾਜ਼ ਰੱਬ ਤੋਂ ਸਭ ਦੀ ਖ਼ੈਰ ਜਾਂ ਭਲਾ ਮੰਗਣਾ ਹੈ। ਚੌਥੀ ਨਮਾਜ਼ ਨੀਅਤ ਅਤੇ ਮਨ ਨੂੰ ਸਾਫ਼ ਰਖਣਾ ਹੈ ਅਤੇ ਪੰਜਵੀਂ ਨਮਾਜ਼ ਪ੍ਰਭੂ ਦੀ ਸਿਫ਼ਤ ਸ਼ਲਾਘਾ ਕਰਨਾ ਹੈ।

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਨੇ ਇਸਲਾਮ ਦੀ ਸਿਖਿਆਵਾਂ, ਫ਼ਿਲਾਸਫ਼ੀ ਨੂੰ ਸਮਝ ਲਿਆ ਸੀ ਅਤੇ ਆਪਣੇ ਸਮਕਾਲੀ ਮੁਸਲਮਾਨਾਂ ਨੂੰ ਦਿਖਾਵੇ ਦੇ ਨਹੀਂ ਸਗੋਂ ਸੱਚੇ ਮੁਸਲਮਾਨ ਬਣਨ ਲਈ ਕਿਹਾ। ਇਸਲਾਮ ਪ੍ਰਤਿ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਦੀ ਨੀਤੀ ਨੂੰ ਬਾਕੀ ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬਾਨ ਨੇ ਵੀ ਅਪਨਾਇਆ ਅਤੇ ਪ੍ਰਚਾਰਿਆ। ਉਹਨਾਂ ਨੇ ਨਿਰਵੈਰ ਤੇ ਨਿਡਰ ਹੋ ਕੇ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੇ ਧਰਮ ਦੇ ਔਗੁਣ ਦੱਸੇ ਤੇ ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੂੰ ਸਹੀ ਮਾਰਗ ਤੇ ਚਲਣ ਦਾ ਰਾਹ ਦਸਿਆ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇ ਧਰਮ ਦਾ ਸਭ ਤੋਂ ਪਹਿਲਾ ਤੇ ਮੁੱਖ ਸਿਧਾਂਤ ਇਹ ਹੈ ਕਿ 'ਇਕ ਅਕਾਲ ਪੁਰਖ' ਅਰਥਾਤ ੴਕਾਰ ਦੀ ਪੂਜਾ ਤੇ ਉਸ ਵਿਚ ਅਟੱਲ ਵਿਸ਼ਵਾਸ। ਉਸ ਸੱਚੇ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਦਾ ਨਾਮ ਜਪਣਾ ਜੋ ਸੱਚ ਹੈ ਤੇ ਜੋ ਸਦਾ ਅਟੱਲ ਹੈ। ਜੋ ਕਰਤਾ ਪੁਰਖ ਹੈ ਤੇ ਅਕਾਲ ਮੂਰਤ ਹੈ ਜੋ ਜੂਨਾਂ ਤੋਂ ਰਹਿਤ ਹੈ ਤੇ ਜੋ ਗੁਰੂ ਦੀ ਕਿਰਪਾ ਨਾਲ ਮਿਲਦਾ ਹੈ।

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਵਿਚ ਮਿਥ ਦਾ ਵਿਸਥਾਪਨ ਦਾਰਸ਼ਨਿਕ ਪੱਧਰ ਤੇ ਹੋਇਆ ਹੈ। ਜਪੁਜੀ ਸਾਹਿਬ ਵਿਚ ਇਸ ਦਾ ਉਲੇਖ ਮਿਲਦਾ ਹੈ। ਮਿਥ ਪ੍ਰਤਿ ਦਾਰਸ਼ਨਿਕ ਤੇ ਤਰਕਮਈ ਦਲੀਲ ਦਿੰਦਿਆਂ ਮਿਥ ਨੂੰ ਨਕਾਰਿਆ ਵੀ ਹੈ। ਪ੍ਰਾਚੀਨ ਮਿਥ ਵਿਸ਼ਵਾਸ ਅਨੁਸਾਰ ਧਰਤੀ ਬਲਦ ਦੇ ਸਿੰਗਾਂ ਉੱਪਰ ਟਿਕੀ ਹੋਈ ਹੈ।

ਸੁਣਿਐ ਧਰਤੀ ਧਵਲ ਆਕਾਸ।[7]

ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਇਸ ਵਿਚਾਰ ਦਾ ਖੰਡਨ ਕਰਦੇ ਹਨ ਅਤੇ ਇਸ ਨੂੰ ਗਲਤ ਸਾਬਿਤ ਕਰਨ ਲਈ ਆਪਣੀ ਦਲੀਲ ਵੀ ਪੇਸ਼ ਕਰਦੇ ਹਨ :

ਧੌਲੁ ਧਰਮੁ ਦਇਆ ਕਾ ਪੂਤੁ।
ਸੰਤੋਖ ਥਾਪਿ ਰਖਿਆ ਜਿਨਿ ਸੂਤਿ।
ਜੇ ਕੋ ਬੁਝੈ ਹੋਵੈ ਸਚਿਆਰੁ।
ਧਵਲੈ ਉਪਰਿ ਕੇਤਾ ਭਾਰੁ।
ਧਰਤੀ ਹੋਰੁ ਪਰੈ ਹੋਰੁ ਹੋਰੁ।
ਤਿਸਤੇ ਭਾਰ ਤਲੈ ਕਵਣ ਜੋਰੁ।[8]

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਕਹਿੰਦੇ ਹਨ ਜੇਕਰ ਧਰਤੀ ਧੌਲ ਦੇ ਸਿੰਗਾਂ ਉੱਪਰ ਟਿਕੀ ਹੋਈ ਹੈ ਤਾਂ ਬਲਦ ਕਿਸ ਦੇ ਆਸਰੇ ਟਿਕਿਆ ਹੋਇਆ ਹੈ ਅਸਲੀਅਤ ਇਹ ਹੈ ਕਿ 'ਧੌਲ' ਦਾ ਵਰਣਨ ਮਿਥ ਵਿਚ ਰੂਪਕੀ ਹੈ। ਧਰਮ ਜਿਸ ਦਾ ਵਿਵਹਾਰ ਦਇਆ ਵਾਲਾ ਹੈ ਹਕੀਕਤ ਵਿਚ ਇਹੋ ਹੀ ਧੌਲ ਹੈ।[9]

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਦੀ ਬਾਣੀ ਵਿਚ ਸੱਚ ਦੀ ਪੇਸ਼ਕਾਰੀ ਹੋਈ ਹੈ। ਜਿਵੇਂ ਬਾਬਰਬਾਣੀ ਵਿਚ ਜਿਹੜਾ ਸੱਚ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਦਰਸਾਇਆ ਹੈ ਉਹ ਅਜੋਕੇ ਸਮੇਂ ਵਿਚ ਵੀ ਸਾਡੇ ਨਾਲ ਵਾਪਰ ਰਿਹਾ ਹੈ। ਜਿਵੇਂ ਕਿ ਉਹ ਲਿਖਦੇ ਹਨ :

ਕਾਜੀਆ ਬਾਮਣਾ ਕੀ ਗਲ ਥਕੀ,
ਅਗਦੁ ਪੜੈ ਸੈਤਾਨੁ ਵੇ ਲਾਲੋ।।
ਪਾਪ ਕੀ ਜੰਞ ਲੈ ਕਾਬਲਹੁ ਧਾਇਆ,
ਜੋਰੀ ਮੰਗੈ ਦਾਨੁ ਵੇ ਲਾਲੋ॥[10]

ਇਸੇ ਤਰ੍ਹਾਂ ਉਹਨਾਂ ਨੇ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਸੱਚ ਦੇ ਕਰਤੱਵ ਤੋਂ ਭੱਜੇ ਹੋਏ ਦਰਸਾਇਆ ਹੈ ਜਿਵੇਂ ਉਹ ਲਿਖਦੇ ਹਨ :

ਅਗੋ ਦੇ ਜੇ ਚੇਤੀਐ ਤਾਂ ਕਾਇਤੁ ਮਿਲੈ ਸਜਾਇ॥[11]

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਦੀ ਵਿਚਾਰਧਾਰਾ ਨੇ ਪੰਜਾਬ ਦੇ ਇਤਿਹਾਸਕ ਵਿਕਾਸ ਨੂੰ ਨਵੀਂ ਦਿਸ਼ਾ ਪ੍ਰਦਾਨ ਕੀਤੀ। ਇਸ ਨਾਲ ਭਾਰਤ ਤੋਂ ਇਲਾਵਾ ਪੂਰੇ ਸੰਸਾਰ ਵਿਚ ਇਕ ਅਸਲੋਂ ਨਵਾਂ ਕ੍ਰਾਂਤੀਕਾਰੀ ਜੀਵਨ-ਦ੍ਰਿਸ਼ਟੀਕੋਣ ਹੋਂਦ ਵਿਚ ਆਇਆ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਨੇ ਸਮਾਜਕ ਦਸ਼ਾ ਨੂੰ ਬਦਲਿਆ। ਲੋਕਾਂ ਦੀ ਸੋਚ ਵਿਚ ਬਦਲਾਉ ਆਇਆ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਅਜਿਹੀ ਕ੍ਰਾਂਤੀਕਾਰੀ ਵਿਚਾਰਧਾਰਾ ਦੀ ਸੰਵਾਹਕ ਹੈ ਜਿਸ ਵਿਚਲੀਆਂ ਜੀਵਨ-ਕੀਮਤਾਂ, ਆਦਰਸ਼ ਅਤੇ ਜੀਵਨ ਆਧਾਰ-ਵਿਧੀਆਂ ਮਨੁੱਖੀ ਸਭਿਅਤਾ ਦੇ ਨਿਰੰਤਰ ਵਿਕਾਸ ਅਤੇ ਪਾਸਾਰ ਦੀਆਂ ਉਨ੍ਹਾਂ ਬੁਨਿਆਦੀ ਕੀਮਤਾਂ ਨਾਲ ਸੰਬੰਧਿਤ ਹਨ, ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਤੋਂ ਬਿਨਾਂ ਮਨੁੱਖ ਅਤੇ ਮਨੁੱਖੀ ਸਮੂਹ ਦੇ ਸਰਵਪੱਖੀ ਵਿਕਾਸ ਦੀ ਕੋਈ ਸੰਭਾਵਨਾ ਨਹੀਂ ਰਹਿੰਦੀ।[12] ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਨੇ ਆਪਣੀ ਬਾਣੀ ਰਚਨਾ ਕਰਦੇ ਸਮੇਂ ਮੱਧਕਾਲੀਨ ਸਮਾਜਿਕ-ਯਥਾਰਥਕ ਰੂਪ ਤੇ ਬਹੁਪਰਤੀ ਸਾਂਸਕ੍ਰਿਤਿਕ ਸਿਰਜਣਾ ਦੇ ਗੁੰਝਲਦਾਰ ਵਰਤਾਰੇ ਦਾ ਪਰਿਸਥਿਤੀਮੂਲਕ ਅਧਿਐਨ ਕੀਤਾ। ਗੁਰੂ ਨੇ ਸਮਾਜ ਵਿਚ ਪ੍ਰਚਲਿਤ ਵਿਭਿੰਨ ਮੱਤਾਂ, ਧਰਮਾਂ, ਸੰਸਥਾਵਾਂ ਨੂੰ ਲੈ ਕੇ ਪ੍ਰਤੀਕ, ਰੂੜੀਆਂ, ਵਿਸ਼ਵਾਸਾਂ, ਬਿੰਬਾਂ ਤੇ ਧਾਰਨਾਵਾਂ ਨੂੰ ਆਪਣੀ ਬਾਣੀ ਵਿਚ ਵਰਤਿਆ ਤੇ ਸਮਾਜਕ ਹਾਲਾਤਾਂ ਤੇ ਕਟਾਖ਼ਸ਼ ਕੀਤਾ।

ਹਵਾਲੇ ਤੇ ਟਿੱਪਣੀਆਂ

1. ਜਯ ਰਾਮ ਮਿਸ਼ਰ, ਨਾਨਕਬਾਣੀ, ਭੂਮਿਕਾ, ਪੰਨਾ 1.
2. ਡਾ. ਜਗਬੀਰ ਸਿੰਘ, ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਵਿਚ ਸਭਿਆਚਾਰਕ ਕ੍ਰਾਂਤੀ ਦਾ ਸੰਕਲਪ, ਗੁਰਬਾਣੀ ਵਿਚਾਰਧਾਰਾਈ ਪਰਿਪੇਖ (ਸੰਪਾ. ਬਲਦੇਵ ਸਿੰਘ ਬੱਧਨ), ਪੰਨਾ 161.
3. ਆ. ਗ੍ਰੰ. ਮ: 1, ਪੰਨਾ 142.
4. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 360.
5. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 122.
6. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 142.
7. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 2.
8. ਉਹੀ
9. ਡਾ. ਕੁਲਵੰਤ ਸਿੰਘ, 'ਗੁਰਮਤਿ ਕਾਵਿ ਅਤੇ ਮਿਥ', ਖੋਜ ਪਤ੍ਰਿਕਾ, ਪੰਨਾ 295.
10. ਤਿਲੰਗ ਮਹਲਾ 1, ਪੰਨਾ 722.
11. ਆਸਾ ਮਹਲਾ 1, ਪੰਨਾ 427.
12. ਓਮ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ ਵਿਸਿਸ਼ਟ, ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ : ਚਿੰਨ੍ਹ - ਵਿਗਿਆਨਕ ਪਹੁੰਚ ਵਿਧੀ, ਨਾਨਕ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ ਪਤ੍ਰਿਕਾ ਸਿੱਖ-ਅਧਿਐਨ ਅੰਕ), ਪੰਨਾ 67.

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਬਾਣੀ : ਅਧਿਆਤਮਕ ਚੇਤਨਾ

*ਰਜਨੀ 'ਰੱਜੂ'

* ਹਿਸਾਰ

ਜਦੋਂ ਵੀ ਸੰਸਾਰ ਅੰਧਵਿਸ਼ਵਾਸਾਂ, ਵਿਸ਼ੇ-ਵਿਕਾਰਾਂ, ਹਉਮੈ ਅਤੇ ਅਗਿਆਨਤਾ ਵਿਚ ਫੱਸ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਤਾਂ ਲੋਕਾਈ ਨੂੰ ਇਹਨਾਂ ਕਰਮ ਕਾਂਡਾ ਦੇ ਬੰਧਨਾ ਤੋਂ ਮੁਕਤ ਕਰਨ ਲਈ ਰੱਬ ਦੇ ਭੇਜੇ ਦੂਤ ਸੰਤ-ਮਹਾਤਮਾਂ ਦਾ ਰੂਪ ਧਾਰ ਕੇ ਧਰਤੀ ਤੇ ਜਨਮ ਲੈਂਦੇ ਹਨ। ਇਹਨਾਂ ਸੰਤਾ-ਮਹਾਤਮਾਂ ਵਿਚੋਂ ਹੀ ਇਕ ਸਿਰ ਕੱਢ ਨਾਂ ਹੈ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦਾ। ਜਦੋਂ ਲੋਕ ਧਰਮ ਦੇ ਨਾਂ ਤੇ ਆਪਸ ਵਿਚ ਭਾਈਚਾਰੇ ਨੂੰ ਖਤਮ ਕਰ ਰਹੇ ਸਨ, ਲੋਕ ਇੱਕ ਦੂਜੇ ਦੇ ਧਰਮ ਦਾ ਪੱਲਾ ਫੜ ਕੇ ਲੁੱਟ-ਘਸੁੱਟ ਕਰ ਰਹੇ ਸਨ। ਅਜੋਕੇ ਅਗਿਆਨਤਾ ਦੇ ਹਨੇਰੇ ਨੂੰ ਦੂਰ ਕਰਨ ਲਈ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦਾ ਜਨਮ 15 ਅਪ੍ਰੈਲ 1469 ਨੂੰ ਰਾਵੀ ਨਦੀ ਦੇ ਕਿਨਾਰੇ ਵੱਸੇ ਪਿੰਡ ਤਲਵੰਡੀ ਵਿਚ ਮਹਿਤਾ ਕਾਲੂ ਤੇ ਤ੍ਰਿਪਤਾ ਦੇ ਘਰ ਹੋਇਆ। ਅੱਗੇ ਜਾ ਕੇ ਤਲਵੰਡੀ ਦਾ ਨਾਂ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਜੀ ਦੇ ਨਾਂ ਤੇ ਨਨਕਾਣਾ ਪੈ ਗਿਆ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਜੀ ਜਾਤ ਦੇ ਖੱਤਰੀ ਸਨ। ਉਹਨਾਂ ਦੇ ਪਿਤਾ ਮਹਿਤਾ ਕਾਲੂ ਪਟਵਾਰੀ ਸਨ। ਅਤੇ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦੀ ਭੈਣ ਦਾ ਨਾਂ ਨਾਨਕੀ ਸੀ। ਜਦੋਂ ਉਹਨਾਂ ਦੀ ਉਮਰ ਪੜਣ-ਲਿਖਣ ਦੀ ਆਈ ਤਾਂ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਆਪਣੇ ਮਾਤਾ-ਪਿਤਾ ਦਾ ਮਾਣ ਰੱਖਣ ਲਈ ਪਾਂਧੇ ਕੋਲ ਜਾਣ ਲਈ ਰਾਜੀ ਹੋ ਗਏ। ਪਰ ਉਹਨਾਂ ਦੀ ਵਿਚ ਕੋਈ ਰੁਚੀ ਨਹੀਂ ਸੀ। ਅਤੇ ਉਹਨਾਂ ਨੇ ਆਪਣਾ ਗਿਆਨ ਵਿਖਾ ਕੇ ਪਾਂਧੇ ਨੂੰ ਨਿਹਾਲ ਕਰ ਦਿੱਤਾ। ਅਤੇ ਉਹਨਾਂ ਦੀ ਵੱਡੀ ਭੈਣ ਨਾਨਕੀ ਨੇ ਉਹਨਾਂ ਦੇ ਅੰਦਰ ਦੇ ਚਾਨਣ ਨੂੰ ਬਹੁਤ ਪਹਿਲੇ ਹੀ ਪਹਿਚਾਣ ਲਿਆ ਸੀ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੂੰ ਕਈ ਭਾਸ਼ਾਵਾਂ ਦਾ ਵੀ ਗਿਆਨ ਸੀ। 1487 ਵਿਚ ਉਹਨਾਂ ਦਾ ਵਿਆਹ ਬੀਬੀ ਸੁਲਖਨੀ ਨਾਲ ਹੋਇਆ ਅਤੇ ਉਹਨਾ ਦੇ ਘਰ ਦੋ ਰਤਨਾ ਨੇ ਜਨਮ ਲਿਆ। ਵੱਡਾ ਪੁੱਤਰ ਸ਼੍ਰੀ ਚੰਦ ਅਤੇ ਛੋਟਾ ਲਖਮੀਦਾਸ ਸੀ। 22 ਸਤੰਬਰ 1539 ਨੂੰ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਜੀ ਕਰਤਾਰਪੁਰ ਵਿਖੇ ਜੋਤੀ ਜੋਤ ਸਮਾਂ ਗਏ; ਕਰਤਾਰਪੁਰ ਜੋ ਕਿ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦੁਆਰਾ ਵਸਾਇਆ ਗਿਆ ਪਿੰਡ ਸੀ।

ਗੁਰੂ ਜੀ ਦੇ ਮੁੱਖ ਉਪਦੇਸ਼

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੂੰ ਫਾਰਸੀ, ਪੰਜਾਬੀ, ਸਿੰਧੀ, ਸੰਸਕ੍ਰਿਤ, ਮੁਲਤਾਨੀ, ਅਰਬੀ ਆਦਿ ਭਾਸ਼ਾਵਾਂ ਦਾ ਗਿਆਨ ਸੀ। ਜਿਸ ਕਰਕੇ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੀ ਭਾਸ਼ਾ 'ਵਹਿੰਦਾ ਨੀਰ' ਮੰਨੀ ਗਈ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਉਪਦੇਸ਼ ਦਿੱਤਾ ਕਿ ਪਰਮਾਤਮਾ ਇੱਕ ਹੈ ਅਤੇ ਉਹ ਹਰ ਜਗ੍ਹਾਂ ਮੌਜੂਦ ਹੈ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਉਪਦੇਸ਼ ਦਿੱਤਾ ਕਿ ਸਾਨੂੰ ਆਪਨੀ ਕਮਾਈ ਦਾ ਦਸਵੰਦ ਦੂਜਿਆਂ ਦੇ ਭਲੇ ਅਤੇ ਆਪਨੇ ਰੋਜ ਦੇ ਸਮੇਂ ਦਾ ਦਸਵੰਦ ਪਰਮਾਤਮਾ ਦੇ ਸਿਮਰਨ ਤੇ ਲਾਣਾ ਚਾਹੀਦਾ ਹੈ। ਇਸਤਰੀ ਜਾਤੀ ਦਾ ਸਨਮਾਨ ਕਰਨਾ ਚਾਹੀਦਾ ਹੈ ਕਿਉਂਕਿ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦੇ ਅਨੁਸਾਰ ਇਸਤਰੀ ਤੋਂ ਹੀ ਰਾਜਿਆਂ ਨੇ ਜਨਮ ਲਿਆ ਹੈ।

ਸੋ ਕਿਉ ਮੰਦਾ ਆਖੀਐ
ਜਿਤੁ ਜੰਮਹਿ ਰਾਜਾਨ॥

ਚਾਰ ਉਦਾਸੀਆਂ

1500 ਤੋਂ 1520 ਤੱਕ ਦਾ ਸਮਾਂ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦੇ ਰੂਹਾਨੀ ਉਪਦੇਸ਼ ਦੇ ਪ੍ਰਚਾਰ ਦਾ ਮੰਨਿਆ ਗਿਆ ਹੈ। ਅਤੇ ਇਨ੍ਹਾਂ ਯਾਤਰਾਵਾਂ ਨੂੰ ਚਾਰ ਉਦਾਸੀਆਂ ਦਾ ਨਾਂ ਦਿੱਤਾ ਗਿਆ ਹੈ। ਕਿਹਾ ਜਾਂਦਾ ਹੈ ਕਿ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਆਪਣੀਆਂ ਇਨ੍ਹਾਂ ਯਾਤਰਾਵਾਂ ਦੌਰਾਨ ਪਹਿਰਾਵਾ ਧਾਰਨ ਕੀਤਾ ਸੀ। ਪੈਰੀ ਖੜਾਵਾਂ, ਪਗੜੀ, ਸੋਟੀ, ਰੱਸੀ, ਚਮੜੇ ਦੀ ਜੁੱਤੀ ਆਦਿ ਦਾ ਪ੍ਰਯੋਗ ਲੋਕਾ ਮੁਤਾਬਿਕ ਕੀਤਾ। ਮੱਕੇ ਦੀ ਯਾਤਰਾਂ ਦੌਰਾਨ ਤਾਂ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦਾ ਨੀਲਾ ਲਿਬਾਸ ਪਾਏ ਜਾਣ ਦੇ ਸਬੂਤ ਮਿਲਦੇ ਹਨ। ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਹਰ ਥਾਂ ਅਤੇ ਹਰ ਜਾਤਿ ਦੇ ਲੋਕਾਂ ਨਾਲ ਬਹੁਤ ਜਲਦੀ ਘੁਲ-ਮਿਲ ਜਾਂਦੇ ਸਨ। ਜੋ ਕਿ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੇ ਉਪਦੇਸ਼ ਪ੍ਰਚਾਰ ਦੇ ਢੰਗ, ਤਰੀਕੇ ਦਾ ਨਤੀਜਾ ਸੀ। ਪਰ ਇਨ੍ਹਾਂ ਚਾਰ ਵੱਖ-ਵੱਖ ਉਦਾਸੀਆਂ ਦਾ ਕੋਈ ਨਿਸ਼ਚਿਤ ਸਮਾਂ ਨਹੀਂ ਮਿਲਦਾ। ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਜੀ ਮਨੁਖੀ ਜੂਣ ਨੂੰ ਹੀ ਸਿਰਫ ਇਕੋ ਉਹ ਦਰਵਾਜਾ ਮੰਨਦੇ ਹਨ, ਜਿਸ ਚੋ ਲੰਘ ਕੇ ਚੁਰਾਸੀ ਲੱਖ ਜੂਨਾਂ ਦੇ ਜੇਲਖਾਨੇ ਤੋਂ ਛੁਟਕਾਰਾ ਪਾਇਆ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ। ਮਨੁੱਖੀ ਜੂਣੀ ਪੂਰੀ ਕਾਇਨਾਤ ਵਿੱਚ ਸਭ ਤੋਂ ਉੱਚੀ ਮੰਨੀ ਗਈ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਜੀ ਉਪਦੇਸ਼ ਦਿੰਦੇ ਹਨ ਕਿ ਮਨੁੱਖੀ ਕਾਇਆ ਇੱਕ ਕਿਲੇ ਸਮਾਨ ਹੈ, ਜਿਸ ਵਿਚ ਪਰਮ ਪਿਤਾ ਪਰਮੇਸਵਰ ਸੁਲਤਾਨੀ ਰੂਪੀ ਧਾਰ ਕੇ ਤਖਤ ਤੇ ਵਿਰਾਜਮਾਨ ਹਨ।ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਫਰਮਾਉਂਦੇ ਹਨ ਕਿ ਮਨੁੱਖੀ ਸਰੀਰ ਉੱਤਮ ਤੋਂ ਉੱਤਮ ਹਰਿਮੰਦਰ ਹੈ। ਜਦੋਂ ਮਨੁੱਖ ਦਾ ਧਿਆਨ ਗਿਆਨ ਰੂਪੀ ਨੋ ਦਰਵਾਜਿਆ ਤੋਂ ਨਿਕਲ ਕੇ ਦੱਸਵੇਂ ਦਰਵਾਜੇ ਵਿੱਚ ਦਾਖਿਲ ਹੋ ਕੇ ਪਰਮਾਤਮਾ ਦੀ ਪ੍ਰਾਪਤੀ ਕਰਾ ਸਕਦਾ ਹੈ। ਜਦੋਂ ਅਸੀ ਪਰਮਾਤਮਾ ਦਾ ਨਾਮ ਸਿਮਰਨ ਕਰਦੇ ਹਾਂ, ਤਾਂ ਉਸ ਦੀ ਮਿਹਰ ਸਦਕਾ ਮਨੁੱਖ ਦੱਸਵੇਂ ਦਰਵਾਜੇ ਤੋਂ ਲੰਘ ਕੇ ਪਰਮਾਤਮਾ ਦੀ ਪ੍ਰਾਪਤੀ ਕਰਦਾ ਹੈ ਅਤੇ ਅਗਿਆਨਤਾ ਦੇ ਹਨੇਰੇ ਤੋਂ ਦੂਰ ਹੋ ਕੇ ਰੂਹਾਨੀ ਚਾਨਣ ਨੂੰ ਪ੍ਰਾਪਤ ਕਰਦੇ ਹਾਂ।

ਦੇਹੀ ਨਗਰੀ ਊਤਮ ਥਾਨਾ॥ ਪੰਚ ਲੋਕ ਵਸਹਿ ਪਰਧਾਨਾ॥
ਊਪਰਿ ਏਕੰਕਾਰੁ ਨਿਰਾਲਮੁ ਸੁੰਨ ਸਮਾਧਿ ਲਗਾਇਆ॥
ਦੇਹੀ ਨਗਰੀ ਨਉ ਦਰਵਾਜੇ॥ ਸਿਰਿ ਸਿਰਿ ਕਰਣੈਹਾਰੈ ਸਾਜੇ॥
ਦਸਵੈ ਪੁਰਖੁ ਅਤੀਤੁ ਨਿਰਾਲਾ ਆਪੇ ਅਲਖੁ ਲਖਾਇਆ॥ 63

ਪਰਮਾਤਮਾ ਮਨੁੱਖ ਦੇ ਅੰਦਰ ਵਸਦਾ ਹੈ:-

ਗੁਰੂ ਜੀ ਦੇ ਅਨੁਸਾਰ ਪਰਮਾਤਮਾ ਹਰ ਮਨੁੱਖ ਦੇ ਅੰਦਰ ਵੱਸਦਾ ਹੈ। ਪਰ ਉਸ ਦੇ ਦਰਸ਼ਨ ਉਹ ਹੀ ਮਨੁੱਖ ਕਰ ਸਕਦਾ ਹੈ ਜੋ ਕਰਮ ਕਾਂਡਾ ਅਤੇ ਅਗਿਆਨਤਾ ਦੇ ਹਨੇਰੇ ਤੋਂ ਨਿਰਲੇਪ ਹੋਵੇ। ਪਰਮਾਤਮਾ ਦੀ ਪ੍ਰਾਪਤੀ ਲਈ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਅੰਨਤਰ ਸੁਖ ਮਨ ਨੂੰ ਇਕਾਗਰ ਕਰਕੇ ਅਤੇ ਨਾਮ ਸਿਮਰਨ ਕਰਕੇ ਕੀਤਾ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ।

ਕਾਇਆ ਅੰਦਰਿ ਆਪੇ ਵਸੈ ਅਲਖੁ ਨ ਲਖਿਆ ਜਾਈ॥

ਮਨਮੁਖ ਮੁਗਧੁ ਬੂਝੈ ਨਾਹੀ ਬਾਹਰਿ ਭਾਲਣਿ ਜਾਈ॥

ਪੁਹਪ ਮਧਿ ਜਿਉ ਬਾਸੁ ਬਸਤੁ ਹੈ ਮੁਕਰ ਮਾਹਿ ਜੈਸੇ ਛਾਈ॥
ਤੈਸੇ ਹੀ ਹਰਿ ਬਸੇ ਨਿਰੰਤਰਿ ਘਟ ਹੀ ਖੋਜਹੁ ਭਾਈ॥

ਗੁਰ ਪਰਸਾਦੀ ਵੇਖੁ ਤੂ ਹਰਿ ਮੰਦਰੁ ਤੇਰੈ ਨਾਲਿ॥

ਗੁਰੂ ਜੀ ਦੇ ਅਨੁਸਾਰ ਅਸਲ ਵਿਚ ਪਰਮਾਤਮਾ ਸਧੂਲ ਸਰੀਰ ਦਾ ਅੰਗ ਨਹੀਂ ਹੈ। ਜਿਸ ਨੂੰ ਕਿ ਸਰੀਰ ਕੱਟ ਕੇ ਦੇਖਿਆ ਜਾ ਸਕੇ।

ਗੁਰੂ ਦਾ ਮਹੱਤਵ

ਮਨੁੱਖ ਲਈ ਇਹ ਬਹੁਤ ਖੁਸ਼ੀ ਦੀ ਗੱਲ ਹੈ ਕਿ ਪਰਮਾਤਮਾ ਮਨੁੱਖ ਦੇ ਦੁੱਖਾਂ ਤੋਂ ਜਾਣੂ ਹੈ। ਅਤੇ ਇਸ ਲਈ ਹੀ ਮਨੁੱਖਾਂ ਦੇ ਦੁੱਖਾਂ ਨੂੰ ਦੂਰ ਕਰਨ ਲਈ ਪਰਮਾਤਮਾ ਨੇ ਸਾਧੂ-ਸੰਤਾਂ, ਫਕੀਰਾਂ ਨੂੰ ਧਰਤੀ ਤੇ ਲੋਕਾਈ ਸੁਧਾਰ ਲਈ ਭੇਜਿਆ ਹੈ। 84 ਲੱਖ ਜੂਣਾ ਤੋਂ ਛੁਟਕਾਰੇ ਲਈ ਹਰ ਮਨੁੱਖ ਲਈ ਸਤਿਗੁਰੂ ਲਾਜਮੀ ਮੰਨ੍ਹਿਆ ਹੈ।

ਦੇਹਿ ਦੇਹਿ ਆਖੈ ਸਭੁ ਕੋਈ ਜੈ ਭਾਵੈ ਤੈ ਦੇਇ॥
ਗੁਰੂ ਦੁਆਰੈ ਦੇਵਸੀ ਤਿਖਾ ਨਿਵਾਰੈ ਸੋਇ॥90

ਇਸ ਨਾਲ ਇਹ ਗੱਲ ਵੀ ਲਾਜ਼ਮੀ ਹੈ ਕਿ ਮਨੁੱਖ ਮਾਤਲੋਕ ਤੋਂ ਦੂਜੇ ਲੋਕ ਵਿਚ ਜਾ ਚੁੱਕੇ ਮੂਰਦਾ ਤੋਂ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ ਨਹੀ ਲੈ ਸਕਦਾ। ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਦੂਜੇ ਲੋਕ ਤੋਂ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ ਲੈਣ ਲਈ ਉਸ ਲੋਕ ਵਿਚ ਖੁਦ ਜਾਣਾ ਪਵੇਗਾ।

ਗੁਰੂ ਅੰਗਦ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਵੀ ਮਨ ਨੂੰ ਕੋਠਾ, ਸਰੀਰ ਨੂੰ ਛੱਤ ਕਿਹਾ ਹੈ। ਮਾਇਆ ਨੂੰ ਤਾਲਾ ਅਤੇ ਗੁਰੂ ਨੂੰ ਉਸ ਤਾਲੇ ਦੀ ਚਾਬੀ ਮੰਨਿਆ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਅੰਗਦ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਸਮਝਾਇਆ ਹੈ, ਕਿ ਜੇਕਰ ਮਨੁੱਖ ਨੇ ਇਸ ਮਾਇਆ ਰੂਪੀ ਜਾਲ[3] ਚੋਂ ਨਿਕਲਣਾ ਹੈ, ਤਾਂ ਉਸ ਲਈ ਗੁਰੂ ਧਾਰਣ ਕਰਣਾ ਅਤਿ ਜਰੂਰੀ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਤੋਂ ਬਿਨਾਂ ਇਸ 84 ਲੱਖ ਜੂਣੀਆ ਦੇ ਚੱਕਰ ਤੋਂ ਹੋਰ ਕੋਈ ਬਾਹਰ ਨਹੀ ਕੱਢ ਸਕਦਾ।

ਗੁਰੂ ਕੁੰਜੀ ਪਾਹੂ ਨਿਵਲੁ ਮਨੁ ਕੋਠਾ ਤਨੁ ਛਤਿ॥
ਨਾਨਕ ਗੁਰੂ ਬਿਨ ਮਨ ਦਾ ਤਾਕੁ ਨ ਉਘੜੇ ਅਵਰ ਨ ਕੁੰਜੀ ਹਥਿ॥97

ਸਾਦਾ ਅਤੇ ਸਰਲ ਜੀਵਨ

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਅਨੁਸਾਰ ਜੇਕਰ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਰੂਹਾਨੀ ਤਰੱਕੀ ਕਰਕੇ ਪਰਮਾਤਮਾ ਦੀ ਪ੍ਰਾਪਤੀ ਕਰਣੀ ਹੈ, ਤਾਂ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਸਾਦਾ ਅਤੇ ਸਰਲ ਜੀਵਨ ਹੀ ਜੀਣਾ ਪਵੇਗਾ। ਕਿਉਂਕਿ ਜੇਕਰ ਮਨੁੱਖ ਸਰਲ ਜੀਵਨ ਅਤੇ ਕੇਵਲ ਜੀਣ ਲਈ ਨਹੀਂ ਖਾਵੇਗਾ ਤਾ, ਉਸ ਲਈ ਰੂਹਾਨੀ ਮਾਰਗ ਤੇ ਚਲਣਾ ਔਖੇ ਤੋਂ ਔਖਾ ਹੁੰਦਾ ਜਾਵੇਗਾ। ਰੂਹਾਨੀ ਮਾਰਗ ਤੇ ਚਲਣ ਲਈ ਨਿਮਰਤਾ ਅਤੇ ਨਰਮਿਆਈ ਰੂਪੀ ਗੁਣਾ ਨੂੰ ਧਾਰਣ ਕਰਣਾ ਵੀ ਲਾਜਮੀ ਹੈ। ਅਤੇ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਚਾਹੀਦਾ ਹੈ ਕਿ ਉਹ ਦਸਾਂ ਨੌਹਾ ਦੀ ਨੇਕ ਕਮਾਈ ਕਰਕੇ ਆਪਣਾ ਅਤੇ ਆਪਣੇ ਪਰਿਵਾਰ ਦਾ ਪੇਟ ਭਰੇ। ਅਤੇ ਭੋਜਨ ਬਨਾਉਂਦੇ ਸਮੇਂ ਵੀ ਪਰਮਾਤਮਾ ਦਾ ਸਿਮਰਨ ਚਲਦਾ ਰਹਿਣਾ ਚਾਹੀਦਾ ਹੈ। ਕਿਉਂਕਿ ਨਰਮ ਅਤੇ ਨੇਕ ਮਨ ਨਾਲ ਕਮਾਇਆ ਅਤੇ ਪਕਾਇਆ ਭੋਜਨ ਰੂਹਾਨੀ ਤਰੱਕੀ ਵਿੱਚ ਅੱਗੇ ਵਧਣ ਲਈ ਸਹਾਇਕ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਜੀ ਦੀ ਇਕ ਸਾਖੀ ਜੋ ਕਿ ਡਾ. ਅਜੀਤ ਸਿੰਘ ਔਲਖ ਦੀ ਨਾਮਕ ਕਿਤਾਬ ਵਿੱਚੋਂ ਲਈ ਗਈ ਹੈ ਅਤੇ ਇਹ ਸਾਖੀ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਸਰਲ ਅਤੇ ਸਾਦਾ ਜੀਵਨ ਜੀਣ ਲਈ ਪ੍ਰੇਰਿਤ ਕਰਦੀ ਹੈ। ਇਹ ਸਾਖੀ ਸੰਸਾਰਿਕ ਕਰਮਕਾਂਡਾ ਦਾ ਵਿਰੋਧ ਕਰਦੀ ਹੈ, ਜੋ ਕਿ ਇਸ ਪ੍ਰਕਾਰ ਹੈ- ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦੇ ਮਾਤਾ-ਪਿਤਾ ਪੁਰਾਣੇ ਸਮੇਂ ਤੋਂ ਚਲਦੀ ਆ ਰਹੀ ਪਰੰਪਰਾ ਨੂੰ ਅੱਗੇ ਤੋਰਦੇ ਹੋਏ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੂੰ ਜਨੇਉ ਪਾਉਣ ਲਈ ਉਹਨਾ ਦੀ ਨੌਂ ਸਾਲ ਦੀ ਉਮਰ ਵਿੱਚ ਪੰਡਿਤ ਨੂੰ ਬੁਲਾਇਆ। ਤਾਂ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਜਨੇਉ ਪਾਉਣ ਤੋਂ ਸਾਫ ਇਨਕਾਰ ਕਰ ਦਿੱਤਾ ਅਤੇ ਕਿਹਾ, ਕਿ ਅਜਿਹੀਆਂ ਰਸਮਾਂ ਕੇਵਲ ਧਰਮ ਦੇ ਨਾਮ ਤੇ ਅੰਡਬਰ ਹਨ। ਇਸ ਦਾ ਵਿਰੋਧ ਕਰਦੇ ਹੋਏ ਉਹਨਾਂ ਨੇ ਕਿਹਾ, ਕਿ ਜੇਕਰ ਜਨੇਉ ਧਾਰਣ ਕਰਨਾ ਹੀ ਹੈ ਤਾਂ ਦਇਆ, ਸੰਤੋਖ, ਜਤਿ, ਸਤਿ ਦਾ ਬਣਿਆ ਜਨੇਉ ਪਾਉਣਾ ਚਾਹੀਦਾ ਹੈ। ਜਿਹੜਾ ਕਿ ਜਿਉਂਦੇ ਜੀ ਵੀ ਤੁਹਾਡੇ ਨਾਲ ਅਤੇ ਮਰਣ ਤੋਂ ਬਾਅਦ ਵੀ ਤੁਹਾਡੇ ਨਾਲ ਜਾਵੇਗਾ। ਇਹ ਅਜਿਹਾ ਜਨੇਉ ਹੈ, ਜੋ ਕਦੇ ਮੈਲਾ ਵੀ ਨਹੀਂ ਹੁੰਦਾ।

ਰੱਬ ਹਰ ਜਗਾ ਵਿਰਾਜਮਾਨ ਹੈ

ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਕਹਿੰਦੇ ਸਨ, ਕਿ ਪਰਮਾਤਮਾ ਅਕਾਲਿ ਮੂਰਤ ਹੈ, ਅਰਥਾਤ ਪਰਮਾਤਮਾ ਉਹ ਮੂਰਤ ਹੈ, ਜੋ ਕਿ ਕਿਸੇ ਇਕ ਕਾਲ ਜਾਂ ਸਮੇਂ ਦੇ ਬੰਧਨਾ ਵਿੱਚ ਨਹੀਂ ਬੱਝਿਆ ਹੋਇਆ। ਉਹ ਸੰਸਾਰ ਦੇ ਕਣ-ਕਣ ਵਿੱਚ ਵੱਸਿਆ ਹੋਇਆ ਹੈ। ਪਰ ਉਸ ਨੂੰ ਪਾਉਣ ਲਈ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਸੱਚੇ ਮਨ ਨਾਲ ਉਸ ਦਾ ਸਿਮਰਨ ਕਰਨਾ ਚਾਹੀਦਾ ਹੈ, ਨਾ ਕਿ ਪਰਮਾਤਮਾ ਨੂੰ ਕਿਸੇ ਵਿਸ਼ੇਸ ਥਾਂ ਜਾਂ ਸ਼ਹਿਰ ਨਾਲ ਸਬੰਧੰਤ ਮੰਨ ਕੇ ਉਸ ਥਾਂ ਦੀ ਪੂਜਾ ਜਾਂ ਵਡਿਆਈ ਕਰਨੀ ਚਾਹੀਦੀ ਹੈ। ਮੱਕੇ ਦੀ ਯਾਤਰਾ ਦੌਰਾਨ ਜਦੋਂ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਆਪਣੇ ਸਾਥੀ ਮਰਦਾਨੇ ਨਾਲ ਥਕਾਵਟ ਹੋਣ ਕਰਕੇ ਆਰਾਮ ਫਰਮਾ ਰਹੇ ਸਨ ਤਾਂ ਕੁਝ ਮੁਸਲਮਾਨਾਂ ਨੂੰ ਉਹਨਾਂ ਦੇ ਪੈਰ ਮੱਕੇ ਸ਼ਹਿਰ ਵੱਲ ਕਰਕੇ ਆਰਾਮ ਕਰਨਾ ਚੰਗਾ ਨਹੀਂ ਲਗਿਆ ਅਤੇ ਉਹਨਾਂ ਮੁਸਲਮਾਨਾਂ ਨੇ ਇਸ ਨੂੰ ਮੱਕੇ ਦੀ ਬੇਇਜੱਤੀ ਸਮਝਿਆ ਉਹਨਾਂ ਨੇ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੂੰ ਇਸ ਕਾਰਜ ਲਈ ਗੁੱਸੇ ਨਾਲ ਟੋਕਿਆ। ਤਾਂ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਬੜੀ ਹੀ ਨਰਮਿਆਈ ਨਾਲ ਉਹਨਾਂ ਨੂੰ ਜਵਾਬ ਦਿੱਤਾ ਕਿ ਅੱਲਾ ਦੇ ਪਿਆਰੇ ਬੰਦੇਉ! ਮੈਂ ਬਹੁਤ ਥਕਾਵਟ ਮਹਿਸੂਸ ਕਰ ਰਿਹਾ ਹਾਂ, ਜੇਕਰ ਤੁਹਾਨੂੰ ਮੇਰੇ ਪੈਰ ਸਹੀ ਦਿਸ਼ਾ ਵਿੱਚ ਰੱਖੇ ਨਹੀਂ ਲਗ ਰਹੇ, ਤਾਂ ਤੁਸੀ ਮੇਰੇ ਪੈਰ ਚੁੱਕ ਕੇ ਉਸ ਦਿਸ਼ਾ ਵੱਲ ਕਰ ਦੇਉ, ਜਿਸ ਪਾਸੇ ਰੱਬ ਨਹੀਂ ਵਸਦਾ। ਜਦੋਂ ਉਹਨਾਂ ਮੁਸਲਮਾਨਾਂ ਨੇ ਗੁਰੂ ਜੀ ਦੇ ਪੈਰ ਚੁੱਕ ਕੇ ਦੂਜੀ ਦਿਸ਼ਾ ਵੱਲ ਘੁਮਾਏ ਤਾਂ ਮੁਸਲਮਾਨ ਇਹ ਦੇਖ ਕੇ ਹੈਰਾਨ ਹੋ ਗਏ ਕਿ ਕਾਅਬਾ ਉਸ ਦਿਸ਼ਾ ਵੱਲ ਹੀ ਘੁੰਮ ਗਿਆ, ਜਿਸ ਦਿਸ਼ਾ ਵੱਲ ਗੁਰੂ ਜੀ ਦੇ ਪੈਰ ਘਸੀਟ ਕੇ ਕੀਤੇ ਗਏ ਸਨ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਉਹਨਾਂ ਨੂੰ ਸਮਝਾਇਆ ਕਿ 'ਹੇ ਰੱਬ ਦੇ ਪਿਆਰੇ ਬੰਦਿਉ! ਰੱਬ ਕਿਸੇ ਇੱਕ ਥਾਂ ਜਾਂ ਸ਼ਹਿਰ ਵਿੱਚ ਨਹੀਂ ਬਲਕਿ ਰੱਬ ਸ੍ਰਿਸ਼ਟੀ ਦੇ ਹਰ ਕਣ-ਕਣ ਵਿੱਚ ਵੱਸਦਾ ਹੈ। ਉਹ ਕਿਸੇ ਇਕ ਧਰਮ ਜਾਂ ਮਜ਼ਹਬ ਨਾਲ ਨਹੀਂ ਜੁੜਿਆ ਹੋਇਆ, ਬਲਕਿ ਪਰਮਾਤਮਾ ਸਭ ਦਾ ਸਾਂਝਾ ਹੈ। ਇਹ ਗੱਲ ਸੁਣ ਕੇ ਸਾਰੇ ਮੁਸਲਮਾਨ ਖਾਮੋਸ਼ ਹੋ ਕੇ ਨੀਵੀਂ ਪਾ ਕੇ ਉੱਥੋਂ ਤੁਰ ਗਏ।[5]

ਗ੍ਰਿਹਸਤ ਜੀਵਨ ਸਭ ਤੋਂ ਉੱਚਾ ਤੇ ਸੁੱਚਾ ਜੀਵਨ ਹੈ

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਅਨੁਸਾਰ ਰੱਬ ਦੀ ਪ੍ਰਾਪਤੀ ਲਈ ਇਹ ਜਰੂਰੀ ਨਹੀਂ, ਕਿ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਜੰਗਲਾਂ, ਪਹਾੜਾਂ ਤੇ ਜਾ ਕੇ ਭਗਤੀ ਕਰਨੀ ਪਵੇਗੀ। ਅਤੇ ਘਰ-ਬਾਰ ਦਾ ਤਿਆਗ ਕਰਨਾ ਪਵੇਗਾ। ਉਹਨਾਂ ਨੇ ਉਪਦੇਸ਼ ਦਿੱਤਾ ਕਿ ਰੱਬ ਦੀ ਪ੍ਰਾਪਤੀ ਗ੍ਰਿਹਸਤੀ ਵਿੱਚ ਰਹਿ ਕੇ ਵੀ ਕੀਤੀ ਜਾ ਸਕਦੀ ਹੈ। ਮਨੁੱਖ ਗ੍ਰਿਹਸਤ ਵਿੱਚ ਰਹਿ ਕੇ ਸਰਲ ਅਤੇ ਸੁੱਚਾ ਜੀਵਨ ਜਿਉਂਦੇ ਹੋਏ, ਦਸਾਂ ਨੌਹਾਂ ਦੀ ਕਮਾਈ ਕਰਦੇ ਹੋਏ, ਵੰਡ ਕੇ ਛਕਦੇ ਹੋਏ ਅਤੇ ਪਰਮਾਤਮਾ ਦਾ ਸਿਮਰਨ ਕਰਕੇ ਵੀ ਪਰਮਾਤਮਾ ਨੂੰ ਪਾ ਸਕਦਾ ਹੈ। ਉਹਨਾਂ ਦੇ ਇਸ ਉਪਦੇਸ਼ ਨਾਲ ਇਕ ਸਾਖੀ ਵੀ ਜੁੜੀ ਹੋਈ ਹੈ- ਕਿ ਇਕ ਅਚਲ ਨਾਮ ਦਾ ਮੰਦਰ ਹੈ, ਜੋ ਕਿ ਜ਼ਿਲਾ ਗੁਰਦਾਸਪੁਰ ਵਿੱਖੇ ਹੈ, ਇਹ ਮੰਦਰ ਤਾਲਾਬ ਦੇ ਵਿਚੋਂ ਵਿੱਚ ਬਣਿਆ ਹੋਇਆ ਹੈ। ਅਤੇ ਹਰ ਸਾਲ ਇੱਥੇ ਸ਼ਿਵਰਾਤਰੀ ਦੇ ਅਵਸਰ ਤੇ ਇੱਕ ਬਹੁਤ ਵੱਡਾ ਮੇਲਾ ਲਗਦਾ ਹੈ। ਇਸ ਮੌਕੇ ਤੇ ਕਈ ਸਾਧੂ-ਜੋਗੀ ਕੱਠੇ ਹੁੰਦੇ ਸਨ, ਅਤੇ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਕਰਾਮਾਤਾਂ ਵਿਖਾ ਕੇ ਲੁਟਦੇ ਸਨ।ਜਦੋਂ ਇਸ ਬਾਰੇ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੂੰ ਪਤਾ ਲਗਿਆ, ਤਾਂ ਉਹਨਾਂ ਨੇ ਮਰਦਾਨੇ ਅਤੇ ਕੁਝ ਹੋਰ ਸਾਥੀਆਂ ਨਾਲ ਵਿਚਾਰ ਕਰਕੇ ਉੱਥੇ ਜਾਣ ਦੀ ਤਿਆਰੀ ਕੀਤੀ। ਉੱਥੇ ਪੁੱਜ ਕੇ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਦੇਖਿਆ ਕਿ ਬਹੁਤ ਸਾਰੇ ਸਾਧੂ-ਜੋਗੀ ਉੱਥੇ ਇਕੱਠੇ ਹੋ ਕੇ ਚੌਂਕੜਾ ਮਾਰ ਕੇ ਬੈਠੇ ਸਨ, ਅਤੇ ਲੋਕੀ ਉਹਨਾਂ ਨੂੰ ਮੱਥਾ ਟੇਕ ਕੇ ਚੜ੍ਹਾਵੇ ਚੜ੍ਹਾ ਰਹੇ ਸਨ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦੇ ਆਉਣ ਦੀ ਖ਼ਬਰ ਸੁਣ ਕੇ ਸੰਗਤ ਉਹਨਾਂ ਵੱਲ ਨੂੰ ਤੁਰ ਪਈ,

ਜਿਸ ਕਰਕੇ ਉਹ ਜੋਗੀ ਅਤੇ ਸਾਧੂ ਈਰਖਾ ਨਾਲ ਭਰ ਗਏ। ਉਹ ਜੋਗੀ ਸਾਰੇ ਇਕੱਠੇ ਹੋ ਕੇ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਕੋਲ ਆਏ ਅਤੇ ਕਹਿਣ ਲੱਗੇ ਕਿ ਤੁਸੀ ਇਹ ਕੀ ਪਾਖੰਡ ਕਰ ਰਹੇ ਹੋ, ਤੁਸੀ ਜਵਾਨੀ ਵੇਲੇ ਤੇ ਪੂਰੀ ਦੁਨਿਆ ਘੁੰਮ ਅਤੇ ਉਦਾਸੀਆਂ ਕਰਕੇ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਉਪਦੇਸ਼ ਦਿੱਤੇ, ਅਤੇ ਹੁਣ ਬੁਢਾਪੇ ਵੇਲੇ ਗ੍ਰਹਿਸਤੀ ਬਣ ਗਏ ਹੋ। ਕਿ ਇਹ ਉਚਿਤ ਹੈ? ਇਹ ਸੁਣ ਕੇ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਉਹਨਾਂ ਨੂੰ ਬੜੇ ਪਿਆਰ ਅਤੇ ਨਿਮਰਤਾ ਨਾਲ ਸਮਝਾਇਆ ਕਿ ਤੁਸੀ ਸਭ ਗ੍ਰਹਿਸਤ ਛੱਡ ਕੇ ਲੋਕਾਂ ਦੇ ਘਰੋਂ ਹੀ ਮੰਗ ਕੇ ਖਾਂਦੇ ਹੋ, ਇਸ ਤਰਾਂ ਮੰਗਤੇ ਬਣ ਕੇ ਰਹਿਣਾ ਤੁਹਾਨੂੰ ਸ਼ੋਭਾ ਨਹੀਂ ਦਿੰਦਾ। ਕਿਉਂਕਿ ਗ੍ਰਹਿਸਤ ਜੀਵਨ ਹੀ ਉੱਚਾ ਅਤੇ ਸੁੱਚਾ ਜੀਵਨ ਹੈ, ਇਸ ਵਿੱਚ ਰਹਿ ਕੇ ਵੀ ਪਰਮਾਤਮਾ ਦੀ ਪ੍ਰਾਪਤੀ ਕੀਤੀ ਜਾ ਸਕਦੀ ਹੈ। ਇਹ ਸੁਣ ਕੇ ਉਹ ਜੋਗੀ ਚੁੱਪ ਕਰ ਗਏ ਅਤੇ ਉਹਨਾਂ ਨੇ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੂੰ ਪ੍ਰਸ਼ਨ ਕੀਤਾ ਕਿ ਤੁਸੀ ਕਿਹਨਾਂ ਦੇ ਚੇਲੇ ਹੋ, ਤੁਹਾਡਾ ਗੁਰੂ ਕਿਹੜਾ ਹੈ? ਤਾਂ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਜਵਾਬ ਦਿੱਤਾ ਕਿ ਸ਼ਬਦ ਹੀ ਮੇਰਾ ਗੁਰੂ ਹੈ, ਉਹ ਸ਼ਬਦ ਦੀ ਧੁਨ ਨੂੰ ਸੁਨਣ ਵਾਲੀ ਸੁਰਤਿ ਉਸ ਦਾ ਚੇਲਾ ਹੈ। ਤਾਂ ਜੋਗੀਆਂ ਨੇ ਫੇਰ ਪ੍ਰਸ਼ਨ ਕਰਦੇ ਹੋਏ ਕਿਹਾ ਕਿ ਅਸੀਂ ਤਾਂ ਤੁਹਾਨੂੰ ਅਤੇ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਕਈ ਕਰਾਮਾਤਾਂ ਵਿਖਾ ਚੁੱਕੇ ਹਾਂ, ਤੁਸੀ ਵੀ ਸਾਨੂੰ ਕੋਈ ਕਰਾਮਾਤ ਦਿਖਾਉ। ਤਾਂ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਅੱਗੋਂ ਮੁਸਕਰਾਉਂਦੇ ਹੋਏ ਜਵਾਬ ਦਿੱਤਾ ਕਿ "ਪਰਮਾਤਮਾ ਦਾ ਨਾਮ ਹੀ ਸਭ ਤੋਂ ਵੱਡੀ ਕਰਾਮਾਤ ਹੈ। ਪਰਮਾਤਮਾ ਦੀ ਭਗਤੀ ਅਤੇ ਨਾਮ ਸਿਮਰਨ ਦੀ ਪ੍ਰਾਪਤੀ ਹੀ ਕਰਾਮਾਤ ਹੈ। ਇਸ ਲਈ ਤੁਹਾਨੂੰ ਸਭ ਨੂੰ ਵੀ ਇਹ ਚਾਹੀਦਾ ਹੈ, ਕਿ ਤੁਸੀ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਲੁੱਟਣ ਦੀ ਥਾਂ ਲੋਕਾਂ ਦੀ ਸੇਵਾ ਕਰੋ। ਗਰੀਬ ਅਤੇ ਲਾਚਾਰ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਭੁੱਖਾ ਨਾ ਰਹਿਣ ਦਿਉ। ਕਿਉਂਕਿ ਭੁੱਖਿਆਂ ਨੂੰ ਰਜਾਉਣਾ ਹੀ ਸੱਚੀ ਸੇਵਾ ਹੈ। ਇਹ ਸੁਣ ਕੇ ਉਹ ਜੋਗੀ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੂੰ ਮੱਥਾ ਟੇਕ ਕੇ ਉੱਥੋਂ ਤੁਰ ਗਏ।[7]

ਅਹਿੰਸਾ ਅਤੇ ਸ਼ਾਕਾਹਾਰੀ ਭੋਜਨ

ਭਾਰਤ ਵਿੱਚ ਪ੍ਰਾਚੀਨ ਕਾਲ ਤੋਂ ਹੀ ਸ਼ਾਕਾਹਾਰੀ ਭੋਜਨ ਤੇ ਮਹਾਪੁਰਖਾਂ ਵਲੋਂ ਜੋਰ ਦਿੱਤਾ ਗਿਆ ਹੈ। ਜਿਨਾਂ ਵਿਚੋਂ ਮਹਾਤਮਾ ਬੁੱਧ, ਭਗਵਾਨ ਮਹਾਂਵੀਰ ਆਦਿ। ਅਜੋਕੇ ਹੀ ਵਿਚਾਰਾਂ ਦੇ ਧਾਰਨੀ ਸਨ- ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਉਹਨਾਂ ਨੇ ਸੰਗਤ ਨੂੰ ਉਪਦੇਸ਼ ਦਿੱਤਾ ਕਿ ਜਿਸ ਤਰਾਂ ਜੇਕਰ ਇਕ ਇਨਸਾਨ ਦੂਜੇ ਇਨਾਸਾਨ ਦਾ ਮਨ ਵੀ ਦੁਖਾਉਂਦਾ ਹੈ, ਤਾਂ ਉਹ ਹਿਸੰ ਦਾ ਹੀ ਰੂਪ ਹੈ, ਉਸੇ ਤਰਾਂ ਜੀਵ ਨੂੰ ਮਾਰ ਦੇ ਖਾਣਾ ਵੀ ਹਿੰਸਾ ਦਾ ਹੀ ਰੂਪ ਹੈ। ਕਿਉਂਕਿ ਜੇਕਰ ਮਨੁੱਖ ਬੁਰਾ ਖਾਏਗਾ ਤਾਂ ਉਸ ਦੇ ਵਿਚਾਰ ਅਤੇ ਉਸ ਦੀ ਸੋਚ ਤੇ ਵੀ ਉਸ ਦੇ ਬੁਰੇ ਭੋਜਨ ਦਾ ਅਸਰ ਪਵੇਗਾ।

ਅਸੰਖ ਗਲਵਡ ਹਤਿਆ ਕਮਾਹਿ॥ ਅਸੰਖ ਪਾਪੀ ਪਾਪੁ ਕਰਿ ਜਾਹਿ॥
ਅਸੰਖ ਕੂੜਿਆਰ ਕੂੜੇ ਫਿਰਾਹਿ॥ ਅਸੰਖ ਮਲੇਛ ਮਲੁ ਭਖਿ ਖਾਹਿ॥103

ਇਸ ਸ਼ਾਕਾਹਾਰੀ ਭੋਜਨ ਨੂੰ ਪ੍ਰਥਾਨਤਾ ਦਿੰਦੇ ਹੋਏ ਹੀ ਗੁਰੂ ਘਰ ਦੇ ਲੰਗਰ ਵਿੱਚ ਵੀ ਸ਼ਾਕਾਹਾਰੀ ਭੋਜਨ ਪ੍ਰਸ਼ਾਦਿ ਵਜੋਂ ਪਰੋਸਿਆ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਕਿਉਂਕਿ ਵੱਡੇ ਵਡੇਰਿਆਂ ਦੁਆਰਾ ਵੀ ਫਰਮਾਇਆ ਗਿਆ ਹੈ ਕਿ ਖਾਵੇ ਜੈਸਾ ਅੰਨ ਵੈਸਾ ਬਣੇ ਮਨ। ਸ਼ਾਕਾਹਾਰੀ ਭੋਜਨ ਕਰਨ ਵਾਲਾ ਮਨੁੱਖ ਗੁਰੂਆਂ ਦੇ ਦੱਸੇ ਮਾਰਗ ਤੇ ਚਲਦਾ ਹੈ, ਅਤੇ ਗੁਰੂ ਦੇ ਦੱਸੇ ਮਾਰਗ ਤੇ ਚੱਲਣ ਵਾਲੇ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਪਰਮਾਤਮਾ ਦੀ ਪ੍ਰਾਪਤੀ ਦਾ ਰਸਤਾ ਮਿਲਦਾ ਹੈ। ਅਤੇ ਭਜਨ-ਸਿਮਰਨ ਰਾਹੀਂ ਮਨੁੱਖ ਉਸ ਰਸਤੇ ਤੇ ਚਲਦਾ ਹੋਇਆ ਪਰਮਾਤਮਾ ਦੀ ਪ੍ਰਾਪਤੀ ਕਰਕੇ ਚੌਰਾਸੀ ਲੱਖ ਜੂਨਾਂ ਦਾ ਚੱਕਰਾਂ ਤੋਂ ਛੁਟਕਾਰਾ ਪਾਉਂਦਾ ਹੈ।

ਸ਼ਹਾਇਕ ਪੁਸਤਕਾਂ ਦੀ ਸੂਚੀ

1. ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦਾ ਰੂਹਾਨੀ ਉਪਦੇਸ਼, ਪ੍ਰੋ.ਜੇ ਆਰ ਪੁਰੀ, 63
2. ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦਾ ਰੂਹਾਨੀ ਉਪਦੇਸ਼, ਪ੍ਰੋ.ਜੇ ਆਰ ਪੁਰੀ, 89
3. ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦਾ ਰੂਹਾਨੀ ਉਪਦੇਸ਼, ਪ੍ਰੋ.ਜੇ ਆਰ ਪੁਰੀ, 90
4. ਗੁਰੂ ਦੀਆਂ ਸਾਖੀਆਂ, ਡਾ. ਅਜੀਤ ਸਿੰਘ ਔਲਖ, 12
5. ਗੁਰੂ ਦੀਆਂ ਸਾਖੀਆਂ, ਡਾ. ਅਜੀਤ ਸਿੰਘ ਔਲਖ, 07
6. ਪੰਜਾਬੀ ਲੇਖ ਬਲੋਗ ਸਪੋਟ, ਗੁਗਲ ਦਾ ਅੰਸ਼
7. ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦਾ ਰੂਹਾਨੀ ਉਪਦੇਸ਼, ਪ੍ਰੋ.ਜੇ ਆਰ ਪੁਰੀ, 63

गुरु नानक देव का काव्यः मानवीय चेतना

* डॉ0 कोमल

* मैथोडिस्ट गर्ल्स (पी0जी0) कालेज रुडकी (हरिद्वार)

सणी पुकार दातार प्रभु, गुरु नानक जग माहि पठाया।

किसी वरदान स्वरुप गुरु नानक जी महाराज का जन्म भारत की पवित्र भूमि पर हुआ था। कहा जाता है कि गुरु नानक देव जी का आगमन ऐसे युग में हुआ जो इस देश के इतिहास के सबसे अंधेरे युग मे था। उत्तरी भारत मे यह राजनीतिक अस्थिरता का युग था। और धार्मिक क्षेत्र मे द्वेष और कशमकश का दौर था। यह द्वेष भावना केवल इन (हिन्दु और मुसलमानो) दो बडे धर्मो के बीच ही नही थी बल्कि दोनो बडे धर्मो के भिन्न – भिन्न सम्प्रदायों के बीच भी एक बैर और विरोध की भावना उत्पन्न हो चुकी थी।

धर्म जिसका उद्देश्य मानवीय सद्भावाना और सम्वेदना की जाग्रति होना चाहिए था वही जातिवाद और बाह्याडम्बरों के दलदल मे फसकर स्वार्थ वर्गभेद और सामाजिक अन्नाय का अड्डा बन गया। हिन्दु धर्म मे ब्राहम्णवाद का एकाधिकार बना हुआ था। निम्न जातियों के लिए वेदाध्ययन वर्जित था।

इस प्रकार गुरु नानक देव का प्रादुर्भाव उस समय हुआ जब धर्म में मानवीय संवेदनाओं के स्थान पर थोथी रस्मों और रीति रिवाजों को प्रमुखता मिलती थी तथा मानवीय अधिकारों का हनन किया जाता था। इस वातावरण का बहुत गहरा प्रभाव गुरु नानक देव जी पड़ा और उन्होने धर्म के बाह्य पक्ष को छोडकर उसके अन्तरिक पक्ष पर विचार किया। उन्होने एक ऐसी विचारधारा को जन्म दिया जिसने जातिगत ऊचनीच और भेदभाव के नाम पर सामाजिक अन्याय और अत्याचार का बहिष्कार कर एक ऐसे वातावरण का निर्माण किया जिसमें सब और प्रेम, दया, करुणा, सद्भाव और समानता की पवित सरिता लहराने लगी।

सिक्ख धर्म की संस्थापना कर 20 अगस्त 1507 को वे सिक्खों के प्रथम गुरु के पद पर आसीम हुए। सरल और स्वाभाविक भाषा में अभिव्यक्त उनकी वाणी ने मानवीय चेतना को जाग्रत किया और मानव को स्वंय अपने और अपने आसपास के तत्वों का बोध कर उन्हें समझने और उनका मूल्यांकन करने की शक्ति प्रदान की तथा धार्मिक और सामाजिक क्षेत्र में आयी जड़ता को समाप्त कर एक स्वस्थ वातावरण का निर्माण किया। प्रस्तुत शोध पत्र मे हम मानव के उत्थान और मानवीय चेतना को जाग्रत करने मे गुरु नानक जी के काव्य के योगदान पर विचार करेगें।

कूट पद– मानवीय चेतना, गुरु वाणी, सामाजिक अन्याय और अत्याचार, निगुर्ण काव्यधारा

हिन्दी साहित्य के पूर्व मध्यकाल (भक्तिकाल) की निगुर्ण काव्यधारा के ज्ञानश्रयी (संत काव्यधारा) शाखा के महत्वपूर्ण कवि, सिक्ख धर्म के प्रवर्तक, समाज सुधारक, अध्यात्म पुरूष गुरु नानक देव जी महाराज का जन्म 1469 मे लाहौर से 30 मील दूर दक्षिण–पश्चिम में तलवंडी रायभोय नानक स्थान पर हुआ, जो अब पाकिस्तान में है। बाद में गुरुजी के सम्मान में इस स्थान का नाम ननकाना साहिब रखा गया। उन्होंने अपनी शिक्षा से मानव समाज को इस प्रकार प्रकाशित किया की उनका जन्म दिवस आज प्रकाश उत्सव के रूप मे मनाया जाता है।

उनके जीवन पे कुछ प्रकाश डालते हुए डॉ0 ए0के0 चतुर्वेदी लिखते है "भक्ति आदोलन के प्रमुख संतो में नानक का नाम अग्रणी है। उन्होंने समन्वयवाद का उपदेश दिया और हिन्दू–मुस्लिम एकता के द्वारा सामाजिक सौहार्द्र स्थापित करने का कार्य किया था। उनका जन्म 1469 ई0 को गुरु पूर्णिमा के दिन रावी नदी के तट पर स्थित तलवण्डी गाँव में हुआ था। वह खत्री परिवार के थें उनके पिता का नाम मेहता कालूचन्द था और वह गाँव के पटवारी थें। बाल्यवास्था में नानक को सस्कृत, हिन्दी और फारसी की शिक्षा प्राप्त हुए थी। बचपन से ही नानक चिन्तनशील थे और उन्हें सांसारिक जीवन के प्रति रुचि नही थी। उनको कपूरथला के नवाब के दफतर मे नौकरी दी गई लेकिन बैरागी प्रवृति के कारण उन्होने उसे छोड दिया इसके बाद उन्होने गृहस्त जीवन का भी परित्याग कर दिया और अपना समय साधु–सतों की संगति मे व्यतीत करने लगें। वह अपना समय साधना, उपदेशों मे लगाते थे। कबीर के विपरीत नानक संस्कृत सुशिक्षित व्यक्ति थें लेकिन कबीर के समान वह मानते थे कि परिवारिक जीवन ईश्वर की साधना मे बाधक नही था"।[1]

मानवीय चेतना के संन्दर्भ में गुरु नानक देव जी के काव्य की महत्ता को समझने से पूर्व यह जान लेना आवश्यक है कि मानवीय चेतना क्या है। अगर हम विज्ञान की दृष्टि से देखें तो सोचने समझने महसूस करने की शक्ति को चेतनता कहते हैं। स्वंय अपने आस पास के तत्वो का बोध होने उन्हें समझने तथा उनकी बातों का मूल्यांकन करने की शक्ति का नाम चेतना है। ये जितना

ज्यादा बदलती चली जाती है उतने ही हम चैतन्य होते जाते है।

इसी चेतना शक्ति को कुछ लोग ईश्वर कहते हैं क्योकि इस चेतना का गुण यह है कि इसका अस्तित्व अनादिकाल से था है और रहेगा जोकि ईश्वर का भी एक प्रमुख गुण है मानव स्थित इस चेतना शक्ति को जाग्रत और परिश्कृत करने मे गुरु नानक देव जी की पवित्र वाणियों की भूमिका अतुलनीय है जिसको निम्नलिखित सन्दर्भो मे देखा जा सकता है।

ईष्वर की एकता और सर्वव्यापकता की अनुभूति

गुरु नानक देव ने ईश्वर की एकता, अखण्डता और अनान्यता का उपदेश किया उन्होंने अवतारवाद को नकार दिया क्योकि वह ईश्वर की अनेक रुपता की और इशारा करता है। उन्होने कहा– ''साहिबु मेरा एको है। एको है भाई एको है''।[2]

गुरु नानक देव उस परमात्मा को कण–कण में सर्वत्र व्याप्त मानते हैं। वह ईश्वर को परम ज्योति स्वरुप मानते हैं। अतः उसका रुप वैविध्य उन्हें स्वीकार नही है।

गुरु नानक देव जी प्रभु परमेश्वर को सर्वव्यापक साक्षात तथा सर्व शक्तिमान तथा मानव से अभिन्न मानते हैं। केवल अभिमान या अहभाव से ही व्यक्ति अपने से प्रभु को दूर मान लेता है। इस संन्दर्भ में गुरु नानक लिखते है कि –

''एको एकु कहै सभु कोई हउमै गरबु विआपै।।
अतंरि बाहारि एकु पछाणै इउ घरु महलु सिञापै।।
प्रभु नेडै हरि दूरि न जाणहु एको स्रिसटि सबाई।।
एकंकारु अवरु नही दूजा नानक एकु समाई।।[3]

ब्राह्याडम्बरों और रुढियों के प्रति मनुष्य में सजगता और चेतनता का विकास

गुरु नानक के युग में रुदियों और कर्मकाण्डों ने अपने पैर जमा रखे थे अंधश्रद्धा और अंधविश्वास ने मनुष्य की तर्क शक्ति और जिज्ञासा को पराजित कर दिया था ऐसे समय मे गुरु नानक देव ने धार्मिक मान्यताओं और विश्वासों में एक क्रान्तिकारी परिवर्तन उपस्थित किया और पंडितों तथा मुल्लाओं के स्वार्थ का साधन बनी सामान्य जनता को एक स्वतन्त्र और वैज्ञानिक विचारधारा से अवगत कराया उन्होंने अपनी यात्राओं के माध्यम से तीर्थ स्थानों से सम्बन्धित मान्यताओं का खण्डन किया।

ज्वालामुखी के मंदिर के सन्दर्भ में जो मान्यताएँ प्रचलित हैं उनके सम्बन्ध मे गुरु नानक ने अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा कि यह कोई दैवी चमत्कार नहीं बल्कि एक प्राकृतिक घटना है। इसमें किसी देवी देवता का प्रकट होना मानकर केवल अंधविश्वास को बढ़ावा दिया जाता है। इस प्रकार मनुष्य कर्म कांण्डो के जाल मे फंसकर अपना जीवन नष्ट करता है वे निरंकार के सिमरन को ही सार्थक पूजा मानते हैं।

पूजा कीचै नामु धिआईए बिनु नावै पूज न होई।
बाहरि देव पंखा ली अहि जे मनु धोवै कोई।।[4]

एक बार अपनी यात्रा के दौरान कुरूक्षेत्र में गुरु नानक देव जी ने सरोवर के किनारे अपना डेरा डाला और वहाँ सूर्य ग्रहण के दिन उन्होंने लंगर के लिए भोजन पकाना प्रारम्भ किया तो कुछ पंडितो ने जिनको यह भी शंका थी कि वे लंगर में मांस पका रहे हैं उनका विरोध किया 'तब गुरु नानक देव जी ने उनको समझाते हुए बताया कि सूर्य ग्रहण और चन्द्र ग्रहण इत्यादि यह सब ग्रहों की गति से होने वाली सामान्य प्रतिक्रिया भर हैं। और ऐसे अवसर मे आग जलाने तथा भोजन पकाने से कोई अधर्म नहीं होता। वे जीव हिंसा के विरोधी थे। किन्तु मांस भक्षण को पाप मानने वाले ऐसे अत्याचारी मनुष्यों से जो मानव का शोशण करते हैं, वे ऐसे माँसाहारी को श्रेष्ठ मानते है जो मानव मात्र को प्रेम करता है इस सन्दर्भ में उन्होंने लिखा है।

''मासु मासु करि मूरखु झगडे गिआनु धिआनु नही जाणौ।।
कउणु मासु कउणु सागु कहावै किसु महि पाप समाणे।।
गैंडा मारि होम जग कीए देवताओ की बाणे।।
मसु छोडि बैसि नकु पकडहि राती माणस खाणे।।''[5]

इस संदर्भ में गुरु नानक देव जी की एक अन्य यात्रा के सम्बन्ध में डा0 जसबीर सिंह। लिखते हैं कि ''श्री गुरु नानक देव जी दौलताबाद से खण्डवा जिले की और प्रस्थान कर गए। खण्डवा के निकट मान्धाता नामक स्थान पर नर्मदा नदी कई घुमाव – फिराव के कारण दो बार घोडों की नाल के भाँति बहती हुई आगे बढती है जिस से वहाँ ओम जैसे आकार के अक्षर के समान एक द्वीप की उत्पत्ति हो गई है। स्थानीय लोगों ने पौराणिक किवदन्दियों के अनुसार वहाँ पर एक मंदिर बना रखा है। जिसे वे ओंकारेश्वर जी का मंदिर कहते हैं। ओंकारेश्वर मन्दिर मे ओंकार के सिद्धान्त के विरुद्ध साकार की उपासना होती देखकर गुरुदेव क्षुब्ध हुए। उन्होने कहा प्राचीन ऋशि – मुनियो ने अति श्रेष्ठ दार्शनिक सिद्धान्त मानव कल्याण हेतु प्रस्तुत किया हैं, किन्तु पुजारी लोगों ने फिर से वही घुमा – फिराकर मानवता को कुए मे धकेलने का मार्ग अपना लिया है। वहां पर पुजा के लिए ब्रह्मा, विश्णु तथा महेश (शिव) आदि तीन अलग – अलग मन्दिर बनवाकर अलग – अलग पुजारी जनता को अपनी और आकृष्ट कर रहे थे। उन मन्दिरों मे मुख्य शिव मन्दिर था जहाँ शिवलिगं की पुजा हो रही थी। पुजारी वर्ग वास्तव मे अपनी रोजी रोटी के चक्रव्यूह में घिरे हुए थें। उन को यथार्थ का ज्ञान होते हुए भी जनता को गुमराह करने मे ही अपना भला जान पडता था। अतः वह इन तीनों शक्तियों के स्वामी, ओंकार दिव्य निराकार परम ज्योति के विषय मे जिज्ञासुओं को नही बताना चाहते थे। उनका तर्क था की जनसाधारण इतनी सूक्ष्म बुद्धि नही रखता कि उसे परम तत्व के विषय में ज्ञान दिया जाए। अतः हम इसी प्रकार जन्ता को अपना ग्रहक जानकर अपनी – अपनी दुकानदारी चलाते थे। इस पर गुरुदेव ने पुजारी वर्ग (पण्डों) को चुनौती दी और कहा, ''रुदिवादी प्रथा चलने से तुम स्वय भी प्रभु की दृश्टि में अपराधी हो क्योकि सत्य ज्ञान को न बता कर केवल व्यक्तिगत स्वार्थ सिद्धि हेतु जनता के भालेपन का अनुचित लाभ उठाना जानते हों तथा अपने कर्तव्य से मुह मोडकर प्रभु के सन्मुख कैसे होंगे। क्योकि गलत विधि विधान से मोक्ष सम्भव नहीं''।।

केते गुर चेले फुनि हू आ।।
काचे गुर ते मुक्ति न हुआ।।[6]

इस प्रकार विभिन्न तीर्थो की यात्रा करते हुए गुरु नानक जी ने ईश्वर के वास्तविक स्वरूप को प्रकट किया अपनी तर्क बुद्धि और अटूट विश्वास से उन्होंने मानव और ईश्वर को अभिन्न सिद्ध किया अपनी जन्म साखी में वे कहते हैं–

''सगल जोति महि जाकी जोति।। बिझापि रहिआ सुआमी ओति

जिउ कासट मैं अगनिक रहाइ ।। दूध बीच घी रहिओ समाई।।
सागर महि बुदबुदा हरे।। कनक कटक घट माटी करे।।
नानक तिउ जग वहम मझार।। सतिगुरु मिले ता देइ दिखार।।''[7]

जब गुरु नानक देव जी यह कह देते है कि वह ई''वर रूपी दिव्य ज्योति आपके भीतर उसी प्रकार समाई हुई है जिस प्रकार दूध में घी तब ईश्वर को बाहर खोजने और उसे प्रसन्न करने के लिए बाह्य कर्मकाण्ड करने की आव''यकता ही नहीं रह जाती।

व्रत उपवास और हठ साधना को भी वे महत्व नही देते वे हिन्दुओं के व्रत और मुस्लमानों के रोजो को व्यर्थ का कर्मकाण्ड बताते है। ईश्वर प्राप्ति मे प्रेम, दया वि''वास और उनके सदाचरण ही सहयोग करते हैं न कि इस प्रकार की हठ साधना ।

पर्यावरण से मानव के घनिष्ठ सम्बन्ध – गुरु नानक जी प्रकृति और मानव के सम्बन्ध का महत्व भली प्रकार समझते हैं अनेक स्थानों पर प्रकृति का मानव के प्रति प्रेमभाव उन्होंने प्रकट किया है। इस सम्बन्ध मे वे एक स्थान पर लिखते हैं–

''पवण गुरु पाणी पिता
माता धरति महतु
दिवस राति दुई दाई
दाइआ खेलै सगल जगतु।''[8]

अर्थात हवा वह गुरु है जो आदमी के जीवन को चलायमान न करता है। पानी पिता और पृथ्वी मां सदृष्य है। इन्हीं दोनों के मेल से सारे घास फूस पौधे पत्ते जन्म लेते हैं। तब दिन और रात लोगों को खेल, काम पुरूषार्थ कराने वाले सेवक और सेविकायें है।

गुरु नानक जी महाराज ने प्रकृति को एक महान और विराट सत्ता स्वीकार किया है उसके सौन्दर्य को वे वास्तविक सौन्दर्य मानते हैं।

और उसकी विशालता का वर्णन करते हुए लिखते हैं–

''कुदरति दिसै कुदरति सुणीऐ कुदरति भउ सुख सारू।।
कुदरति पाताली आकासी कुदरति सरब आकार।।
कुदरति वेद पुराण कतेबा, कुदरति सरब वीचारू।।
कुदरति खाणा पीणा पैनणु कुदरति सरब पिआरू।।
कुदरति जाती जिनसी रंगी कुदरति जीउ जहान।।''[9]

अन्य अनेक स्थानों पर भी उन्होंने प्रकृति को उपदे''िका के रूप में चित्रित किया है। वह किस प्रकार मनुष्य के जीवन को प्रेम, त्याग और विनम्रता से भरती है यह गुरु नानक जी के काव्य में सहज ही देखने को मिल जाता है।

धैर्य, धर्म, सत्य, संतोष, दया का महत्व इन पाँचों गुणों का उल्लेख करते हुए वे लिखते है–

''पंच परवाण पंच परधानु।
पंचे पावहि दरगाहि मानुं।
पंचे सोहहि दरि राजानु।
पंचा का गुरु एकु धिआनु।''[10]

जो व्यक्ति पाँच गुणों धैर्य धर्म सत्य संतोष एवं दया को अपने जीवन में ढालता है उसे ही प्रभु स्वीकार कर अपनाते हैं वही आदमी मान प्रतिष्ठा पाता है। इन पाँच गुणों से युक्त संत महात्मा ही सर्वदा प्रभु के ध्यान मे लीन रहते हैं। प्रभु के अतिरिक्त वे कभी किसी अन्य चीज की तरफ नही झुकते हैं।

नानक देव के काव्य में धार्मिक, सामाजिक और साम्प्रदायिक एकत्व की अनुभूति–

गुरु नानक देव के समय के समाज में धर्म और सम्प्रदाय को लेकर एक भेदवाद और विषमता की प्रधानता रही। कबीर और नानक आदि सन्तों ने यह स्पष्टतः देखा कि मानव–मानव के बीच भेद करने वाली शक्तियाँ विघटनकारी हैं। वस्तुतः सब उस एक ज्योति से उत्पन्न हुए हैं, इस कारण सब एक समान हैं। कबीर ने इस सन्दर्भ में कहा था–

एक बूँद एकै मल मूतर एक चाम एक गूदा।
एक जाति थैं सब उपजा, कौन ब्राम्हन कौन सूदा।।[11]

गुरु नानक देव जी की विचारधारा भी उक्त पद का अनुसरण करती नज़र आती है। सन्तों को भारतीय समाज में व्याप्त विषमता की भावना से अभेद स्थापना के लिए लम्बे समय तक जूझना पडा। वास्तव में सन्तों का अध्यात्मवादी द''ान भौतिकता से जुडा हुआ था उन्होंने मानवता के मार्ग में आने वाली सभी बाधाओं और समस्याओं पर विचार किया तथा उनके निवारण में अपना सार्थक योगदान दिया।

जाति और धर्मगत भेदभाव ने समाज की व्यवस्था और विकास में जो अवरोध उत्पन्न किए थे गुरु नानक देव उनसे भली भाँति परिचित थे। अतः गुरु नानक देव ने हिन्दू धर्म में सुधार करके इससे आडम्बरों तथा जाति प्रथा को समाप्त करना अपना उद्दे''य बना लिया। उन्होंने जिस निर्गुण की उपासना का मार्ग प्र''ास्त किया उसमें सभी जातियों को समानता का अधिकार प्राप्त हुआ।

साम्प्रदायिकता पर उनके योगदान के सम्बन्ध में डॉ0 ए0के चतुर्वेदी लिखते है–

''नानक ने समस्त भारत का भ्रमण किया था। कहां जाता है कि उन्होंने मध्य ए''िाया,चीन,बर्मा, लंका, अरब, मिस्र आदि दे''ों की यात्रा की थी। उन्होंने अनेक मुस्लिम सन्तों जैसे– पानीपत के शेख फरीद, मुलतान के पीर और पाक पट्टन के शेख इब्राहिम से आध्यात्मिक समस्याओं पर विचार विम''ा किया था। विस्तृत भ्रमण के परिणाम स्वरूप वह अनेक सम्प्रदाय के लोगों के सम्पर्क में आये और उन्हें गहन ज्ञान प्राप्त हुआ। अंत में वह करतारपुर में बस गये। 1539 ई0 में उनकी मृत्यु हुई। उनके पदों तथा गीतों को बाद में आदि ग्रन्थ में संकलित कर दिया गया। उन्होंने पंजाब में धर्म का उपदेश उस समय दिया था जब मुस्लिम कट्टरता के कारण किसी प्रकार का उपदेश देना सम्भव नहीं था। नानक की मुख्य देन यही है कि एसी विपरीत परिस्थितियों में उन्होंने भक्ति और वैराग्य का उपेदश देकर हिन्दू धर्म की रक्षा की।'' कबीर के समान नानक वेदों या कुरान की सत्ता स्वीकार नहीं करते थे उनका विचार था कि धार्मिक संकीर्णता से मतभेद उत्पन्न होते हैं अतः मनुष्य को व्यापक तथा उदारवादी दृष्टिकोण अपनाना चाहिए। एक स्थान पर उन्होंने कहा ''इक द जीभउ लख दोय लख बीस। लख लख गेड़ा आखिये एक नमा जगदी''ा।''[12] अतः नामों की भिन्नता के कारण मनुष्य को भ्रम में नहीं पडना चाहिए।

गुरु नानक देव हिन्दू और मुसलमानों में एक सेतु के समान हैं हिन्दू उन्हें गुरु और मुसलमान पीर के रूप में मानते हैं गुरु नानक साहिब ने सब धर्म और जातियो को एक समान मानकर समानता का भाव सबमें जाग्रत करने के लिए ''गुरु का लंगर'' शुरू किया जिसमें सभी लोग समान रूप से एक ही पंक्ति में जमीन पर बैठकर भोजन करते हैं और परस्पर आत्मीयता का अनुभव करते हैं।

क्षणभंगुरता के बोध से अहंकार का निवारण–

गुरु नानक इस संसार को रैन बसेरा मानते रहे हैं। वे कहते हैं कि इस शरीर का, धन का, सम्पत्ति का अहंकार नहीं करना चाहिए क्योंकि ये शा''वत नहीं हैं शा''वत केवल प्रभु की सत्ता है आचार्य राम चन्द्र शुक्ल ने नानक जी के इस विचार पर प्रका''ा डालते हुए लिखा है– ''संसार की अनित्यता, भगवद्भक्ति और संत स्वभाव के सन्दर्भ में उदाहरणस्वरूप दो पद दिये जाते हैं–

''इस दम दा मैनूँ कीबे भरोसा, आया आया, न आया न आया।
यह संसार रैन दा सुपना, कहीं देखा, कहीं नाहि दिखाया।
सोच विचार करे मत मन मैं, जिसने ढूँढा उसने पाया।
नानक भक्तन दे पद परसे निसदिन राम चरन चित लाया।।
जो नर दुख में दुख नहिं मानै।
सुख सनेह अरु भय नहीं जाके, कंचन माटी जानै।।
नहिं निंदा नहिं अस्तुति जाके, लोभ मोह अभिमाना।
हरष सोक तें रहै नियारो, नाहि मान अपमाना।।
आसा मनसा सकल त्यागि कै जग तें रहै निरासा।
काम, क्रोध जेहि परसे नाहि न तोहिं घट ब्रह्य निवासा।।
गुरु किरपा जेहि परसे नाहि न तोहि घट ब्रहन निवासा
नानक लीन भयो गोबिंद सो ज्यों पानी संग पानी।।''[13]

नानक का मत है कि जीवन की असारता को जान लेने पर कभी व्यक्ति को अहंकार नहीं होता। और जब मन की समस्त इच्छाएं समाप्त हो जाती हैं उसके काम क्रोध सब समाप्त हो जाते है तो उसे ई''वर प्राप्ति हो जाती है।

निष्कर्ष

गुरु नानक जी के काव्य का परम लक्ष्य मानव और मानवता रहा है। वास्तव में उनकी जो प्रभु शक्ति और ई''वर सम्बन्धी अवधारणाएं हैं वह मानव केन्द्रित हैं। मानव को वे सृष्टि की श्रेष्ठतम कृति मानते हैं। और उसी मानव को ई''वर का सर्वत्र अनुभूति कराने उसे संग्रहवृत्ति, लोभ, अहंकार चिन्ता आदि मनोविकारों पर विजय दिलाने, उसमें प्रेम, परिश्रम, परोपकार, सेवाभाव आदि मानवीय श्रेष्ठताओं का संचार करने हेतु उन्होंने अपना पूरा जीवन समर्पित कर दिया है।

मानवता के लिए उक्त सभी कार्य कबीर ने भी किए हैं किन्तु उनकी प्रवृत्ति खण्डनात्मक रही है और योगसाधना को लेकर उनके वर्णन भी सर्वग्राह्य नहीं थे किन्तु गुरु नानक देव जी महाराज की वाणी तो जैसे अमृत की खान है बडी ही सहजता और प्रेम के साथ उन्होंने मानव जाति को अपने अमूल्य सन्देश दिए। उन्होंने सहज धर्म का उपदेश दिया और आडम्बरों का विरोध किया। उन्होंने जाति प्रथा का विरोध किया और सभी जाति के लोगों को यहाँ तक की अछूतो को भी अपना शिष्य बनाया अस्पृष्यता को मिटाकर उन्होंने भ्रातृत्व की स्थापना की। स्त्रियों को सम्मानपूर्वक स्थान दिलाने में गुरु नानक देव जी का महत्वपूर्ण योगदान है। उन्होंने स्त्रियों के आध्यात्म साधना के अधिकारों को स्वीकार किया।

नानक जी का उद्देश्य सम्पूर्ण मानवता का उत्थान करना था। अतः उन्होंने भक्ति के साथ सेवा कार्य को विशेष महत्व दिया और ''िाष्यों को आदेश दिया कि वे प्राणी मात्र की सेवा करें उनका कहना था कि पापी से नहीं बल्कि पाप से धृणा करनी चाहिए। अतः पतितों से प्रेम करना और सन्मार्ग पर लाना मनुष्य का परम धर्म है। उन्होंने पवित्रता, त्याग पर बल देते हुए नेक कमाई करने का आदेश दिया। नानक गृहस्थ धर्म को श्रेष्ठ मानते थे और उनका विचार था कि गृहस्थ जीवन में मनुष्य मोक्ष प्राप्त कर सकता है। नानक की मृत्यु 1538ई0 में हुई।

नानक के उपदेशों ने क्रमशः एक सम्प्रदाय का रूप धारण कर लिया। उनके शिष्य सिक्ख कहलाये। उन्होंने मुस्लिम धर्मांधता का विरोध करने तथा हिन्दू धर्म की रक्षा के लिए सैनिक सम्प्रदाय का रूप धारण कर लिया।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. डॉ0 ए0के0 चतुर्वेदीः भारत का इतिहास, पृ''ठ–78।
2. गुरु नानक देवः राग आसा, पृष्ठ– 350।
3. गुरु नानक देव : राग रामकली, पृष्ठ–930
4. गुरु नानक : राग गूजरी, पृ0 489।
5. गुरु नानक देव राग मलार, पृ0 1289।
6. स0 जसबीर सिंध : जीवन वृतान्त श्री गुरु नानक देव जी पृ0 130
7. स0 जसबीर सिंध जीवन वृतान्त श्री गुरु नानक देव जी पृ0 130
8. नानक के दोहेः https://karmabhumi.org
9. गुरु नानक देव : राग आसा, पृ0 – 464
10. गुरु नानक के दोहेः https://karmabhumi.org
11. कबीर : ग्रन्थवली पृ0 31
12. डॉ0 ए0के0चतुर्वेदी : पृ0 79
13. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल : हिन्दी साहित्य का इतिहास पृ0सं0 79

IMPACT OF GURUNANAK DEV JI'S TEACHING ON 21ST CENTURY'S WOMEN AND THEIR EMPOWERMENT

* DR. MONIA SINGH

* Assistant Professor, Deptt. Of English, Methodist Girls Degree College, Roorkee, Haridwar UTTRAKHAND

ABSTRACT

As Siri Guru Nanak Dev ji was the fifth guru of Sikhs. If we turn over the history so we will found that he tell us about peace and quality education but we find some different culture soon women came in shell and in the modern era they need protection to walk away. The saddest condition we found of women in modernity. But as we know that "GRASPING AT STRWAS'' guru ji thought gave a light in this foggy culture and gave a new path of prosperity of to all the women of country. Such a mind blowing achievement . Guru dev ji's teaching is incomparable, different from our holy bboks as 'RAMAYAN, BHAGWAT GEETA, BIBLE, AND QURAN'' ofcourse these holy books support woman respect and regard but if we will talk about guru nanak dev ji so he told and give equal position to man and woman in sikkhism. On the other hand in rest religion women are equal to god as MA SEETA, MA DURGA, MOTHER MARRY ETC.

Introduction

As we know that today's era women are securing a strongest and equal position to men not only in Hindu's religion but also in Sikhism we found many different rights and found their spiritual position. Guru Nannak Dev Ji is the founder of Sikhism and in fifteen century he talked about the equal status of women. As according to Sarup Dass Bhalla, Mahima Prakash, Guru Amar dass disfavored the use of the veil by women. He assigned women to supervise some communities of disciples and preached against the custom of sati. he also raised his voice of the present bitter curse oh society infanticide [1] According to Sikhism man and women are the two face of a coin. This can be called a human coin which interrelate and make a relationship in between both. Both having equal responsibilities to run the society.[2]

In 1499 Gurunanak dev ji said that "it is the women who keeps the raise going" and that we should not "consider women cursed and condemned from women are born leaders and kings(20). We can easily see the impact of his bright thought in present century. This is not a glimpse but having its own aura in which women are performing for their dignity and they are securing their own reputation and earning their regards. We can see that today's women are more stronger then the women of ancient era. They wear the sixteen ornament of beauty which is highly demand of society but they carry their own face and identification being the women they are comparable with Sati.

Siri Guru Nanak Sahib stated "From women, man is born; within women, man is conceived; to a women he is engaged and married. Women becomes his fried; through women, the future generation come. When his women dies he seeks another women to women he is bound. So why call her bad from whom kings are born from women, women is born; without women there would be no one at all. O Nanak only the creator is without a women. That mouth which praises the creator continually is blessed and beautiful. Oh Nanak those faces shall be radient the court of the creator." translated English from Gurumukhi. Siri Guru Nanak in Raag Aasaa, Siri Guru Granth Sahib. pp 473[3]

Women in Sikhism and Their Position in Present Society

In 21st century women are securing a high designation. Not only in Sikh scriptures they are presenting well. The Sikh principal state that women have a same souls as men and thus possess an equal rights to cultivate the spirituality.[4] They are participating in each religion and taking parts in Akhand Path, Keertan and work as a Granthis. "Guru Nanank proclaimed the equality of men and women, and both he and the gurus that succeeded him encouraged men and women to take a full part in all the activities of Sikh worship and practice.[5][6]

There are many stories and facts which are recorded the role of women in bravery their services, devotion and sacrifice (7). They are several women such as Mata Gujri, Mai Bhago, Mata Sundri, Rani Saheb Kaur, Rani Sada Kaur and Maharani Jind Kaur.

Historical State of Women

There are two most proclaimed Prathas in Indian history, Purdah and Sati Pratha. The both

Prathas are from 1500 BCE known as Vedic period when Upanayana the right of initiation was open to them [8].

Women Rights and Sikhism

Mai Bhago participated in the battle of Muktsar; December 1705.

In 15th century many Sikh gurus and Sikh Sants did much progress for women rights. They insure a new equal state for women [9] the Gurus [10] made no distinction between gender and they announced them equal to participate in Sangat and Pangat. As Guru Govind Singh "he instructed very clearly to Khalsas to not to interfere or associate with Kanyapapi. And he was also strongly against the objectification of women.[11] and the Guru gave those women who were baptized in to the Khalsa with the sir name of Kaur, the princess [12].

The Position of Women in 18th Century

Women have many faces: mother, sister, daughter, Godess etc. in the beginning of 18th century when Sikh were fiercely persecuted have had a strong impact in modern society and who recount their stories in their Ardas: [1]

"Our mothers and sisters they repeat every time in their prayers; who plied handmils in the jails of Mannu [the Mughal governor of Lahore (1748 – 53)], griding daily a maund – and – a – quarter of corn each, who saw their children being hacked to the pieces in front of their eyes, but who uttered not a moan from their lips and remained steadfast in their Sikh faith – recall their spirit of fortitude and sacrifice, and say, Vahe Guru Glory be to God!".

In 18th century the condition of women were very much critical. They were facing society curse like female infanticide, child marriage, dowry system, Pardha system [13]. But due to efforts of Ram Singh Namdhari, achieved his goals and found success on higher standards of literacy and remarriage of widows [14][15]. There is one more practice in the society in 18th century that was dowry system, extra expenditure during marriage so the Sabha of Sikh also raised their voice for the same. 18th century was the dominating century for women and making the day challenging. They were believing in sutak and celibacy. On the words of Guru Nanak Dev Ji (15th century) followers of Sikhism take this superstition of sutak and celibacy and declared that

" The impurity of the mind is greed , and the impurity of the tongue is flashood . the impurity of the eyes is to gaze upon the beauty of another man's wife and his wealth. The impurity of the ears is to listen to the slander of others . O Nanak , the mortal's soul goes, bound and gagged , to the city of death . All impurity comes from doubt and attachment to duality. Birth and death are subject to the command of the lord's will; through His will we come and go'' (SGGS, 472)[16] Guru Nanak Dev Ji always gave and awake about the idealism of women and get secured them by their wordings. This was the honorable fact for the woman that in ancient era people took women with the grace presents and given respect in their culture. Many cultural saints speak about the holy and religious value of women in the Bahi Gurudas paid tribute in early Sikhism; " A woman , is the favorite in her parental home, loved dearly by her father and mother. In the home of her in-laws she is the pillar of the family , the guarantee of its good fortune ….. sharing in spiritual wisdom and enlighten and with noble qualities endowed a woman, the other half of man, escorts him to the door of libration.'' (varan,v16)[17]

Dignity and Current Statues of Women in 21st Century

India is a democratic country carrying its own rights and political aspects. The women of present society are challenging man in each field such as education, culture, political etc. presently they are not in cut shell and not performing for men. They are carrying their own space and securing their future. Somewhere they have participated in new India and carrying the respectable thought and teaching of Guru Nanak dev Ji. In ancient time women were thoughtful but now they are leading with man and proving their best efforts. This we can the changing India again with new colors, boundaries are different, aims are set. The vision is very clear women are supporting the past and religious facts and simply carrying the teaching of Siri Guru Nanak dev ji. In the same Siri Guru nanak sahib , the founding guru of the Sikh faith, emphasized the dignity of women in a way that was ahead of his time. As in 15th century they were totally in favor of women rights and rules and women are taking it graciously and giving a positive raise and result to the society. Mean while we were waiting for long of this glory which glimpse is shinning in the sky of success with path of religion, ancient teaching, and words.

Guru Nanak Dev Ji founded Sikhhism and made a committee to oblige and treat women as equals and genders discrimination in Sikh society has no religious basis. Few portions are difficult to reach as gender ratio and equality but yet they are moving toward of it man making it easy by doing day today practice.

Conclusion

Though equality for woman, their position, their status, equality, dignity always been a major issue for the society and a major attribute of Sikhism and a great number of women have made significant contributors. In 2019, still people are working on such burning issues. Not only women are fighting or doing job but also men are performing for their better condition and position.

In the same few Notable woman in Sikhism who contributed

- Sada kaur, chief of the Khalsa Kanhiya Misl from 1789 to 1821
- Rani Jindan, wife of Ranjit Singh
- Princess Sophia Duleep Singh, Prominent suffragette of woman civil rights movements in the United Kingdom

- Mata Tripta , mother of Guru Nanak
- Babe Nanaki, elder sssister of Guru Nanak (24)
- Mai Bhago, prominent Sikh Warrior

In the same the Sikh Nari Munch UK has written to Jathedar Sahib and has strongly recommended that following five names of the Sikh historical woman must be included in the Nanakshahi calander.

1. Jagat Mata – Mata Tripta ji.
2. Mother of Khalsa – Mata Sahib Kaur Ji
3. The Great mother of martyrs – Mata guru Ji
4. The only women written about in any sacred religious book – Mata Khivi Ji
5. First Sikh woman General – Mata Bhag Kaur Ji

Bibliography:

1. Gill, Manmohan (2003). Punjab's society: Perspectives and challenges. Concept Publishing Company. P.44 ISBN 9788180690389
2. Aad Guru Granth Sahib, Amritsar: Shiromani Gurudwara Parbandhak Committee 198
3. "Sri Guru Granth Sahib" (PDF) retrieved September 24, 2018
4. "Sikhism: What is the role and status of women in Sikh Society?" WWW.realsikhism.com retrieved 2015 – 11 – 07
5. Talib Gurubacchan Singh. " Women in Sikhism". Encyclopedia & Sikhism. Punjabi University Patiala Retreived 18 March 2013.
6. Kaura, Bhupindar (2000). Status of women in Sikhism, Shiromani Gurudwara Parbandhak Committee P.56.
7. Holm Jean; Bowker, John (January 1994). Women in Religion ISBN 9780826453044.
8. Singh, Jagraj (2009). A complete guide to Sikhism. Unistar Book. P. 285 ISBN. 9788171427543
9. http://www.sikhs.org/women.html
10. Singh, Nikky – Gunindar (2012). Birth of the Khalsa, he: A feminist – Re – Memory of sikh identity. Sunny Press, P. 57 ISBN 9780 791482667
11. Wilcockson, Michael (2015). 9.4. The Khalsa Religious Studies for Common Entrance 13+ Revision Guide. London: Hodder Education ISBN. 9781471850905.
12. The Punjab Past and Present, Department of Punjab Historical Studies, Punjabi University. 7:149 1973.
13. Missing or empty/title = (help)
14. Clarkee, Peter (2004). Encyclopedia of New Religious Movements oxon Routledge P 425 ISBN 9781134499700
15. Grewal, Gurdial (1991). Freedom Struggle of India by Sikhs and Sikhs in India. The Facts World Must Know Volum 1 Sant Isher Singh Rarewala Education Trust P. 146
16. Siri Guru Granth Sahib P 472
17. Varan Vol. 16
18. Sikh Nari Munch UK

गुरु–शिष्य परम्परा और गुरु नानक देव जी का गुरु चिंतन

* प्रो0 सुशील कुमार शर्मा

* आचार्य (हिंदी) एवं संकाय अध्यक्ष, शिक्षा एवं मानविकी संकाय, मिजोरम विश्वविद्यालय, आईजोल

भारतीय संस्कृति और साहित्य में गुरु–शिष्य परम्परा को सर्वोपरि स्थान प्राप्त है। भारतीय ऋषि वनों में आश्रम बनाकर प्रकृति की गोद में रहते थे और तात्विक चिंतन करते थे। इस चिंतन से प्राप्त अलौकिक प्रसाद को वे अपने सुयोग्य शिष्यों में वितरित करते रहते थे और इस प्रकार यह परम्परा निरंतर गतिशील रहती थी। वशिष्ठ–श्रीराम, सांदीपनि–कृष्ण, द्रोणाचार्य– अर्जुन जैसे अनेक उदाहरण भारतीय वाड़मय में हैं।

गुरु–शिष्य की इस सनातन परम्परा का विकास हिंदी साहित्य के भक्तिकाल में भी समादृत हुआ। भक्ति काव्य के दोनों रूपों– निर्गुण और सगुण की विशेषताओं में से गुरु महिमा का गुणगान करना प्रमुख विशेषता है। कबीर ने तो गुरु को गोविंद अर्थात् ईश्वर से भी ऊँचा बताकर गुरु के गौरव को प्रतिपादित किया है। मलूकदास, सुंदरदास, धर्मदास, सहजोबाई, रविदास, धन्ना, पीपा, सदन, नामदेव से लेकर गुरु नानक आदि महान संतों ने इस परंपरा को अपनी श्रद्धा प्रदान की। सगुण भक्त कवियों ने भी गुरु के महत्व को स्वीकार किया और गुरु वन्दना से ही प्रायः अपने ग्रंथों का शुभारंभ किया। श्रीरामचरित मानस का प्रारंभ गोस्वामी तुलसीदास जी ने गणेश वन्दना के पश्चात् प्रथम चौपाई गुरु वन्दना को ही समर्पित की है –

वन्दहुँ गुरु पद पदुम परागा।
सुरुचि सुबास सरस अनुरागा। 1

परन्तु सिख धर्म निर्गुण होते हुए भी तात्विक दृष्टि से सबसे विलग है जो 'गुरु' नहीं, 'शिष्य' संज्ञा पर अवलंबित है। इस पंथ के प्रथम गुरु नानकदेव जी ही हैं।

नानकदेव जी की जीवनी से उनके 'गुरु' पदवी के रहस्य का बोध होता है। नानकदेव के पिता ने इन्हें कारोबार करने के लिए पैसे दिये परन्तु उन पैसों से नानक देव जी ने दीन हीनों को भोजन करा दिया। खाली हाथ होने पर इनके पिता अत्यन्त कुपित हुए। दो–चार बार ऐसा ही हुआ तो इन्हें इनकी बहिन नानकी के घर सुल्तानपुर भेज दिया गया। सुल्तानपुर में नानकदेव जी की भेंट मरदाना नामक कवि से हुई, जो मुस्लिम था। काम पर जाने से पूर्व दोनों मिलते और ध्यान में रम जाते। यह देख लोगों को आश्चर्य होता कि दोनों अलग–अलग धर्म– हिंदू और इसलाम के हैं फिर भी एक साथ कैसे ध्यान में बैठ जाते हैं, इन दोनों में परस्पर कैसा प्रेम है ?

एक दिन नानक जी मरदाना के साथ नदी किनारे ध्यान करने और स्नान करने गये। नानक जी नदी में उतरे और लुप्त हो गये। लोगो को लगा कि वे नदी में डूब चुके हैं। परंतु तीन दिनों के पश्चात् वे ''न कोई हिंदू न कोई मुस्लिम'' कहते हुए जब बाहर आये तो लोगों ने माना कि कोई संत हैं। लोगों ने श्रद्धावश इन्हें 'गुरुजी' कहना प्रारंभ कर दिया। यहीं से नानक जी 'गुरु नानकदेव' के नाम से विख्यात हो गये।

मध्यकाल की भक्ति परंपरा में संत काव्य का प्रादुर्भाव उत्तर भारत में रामानंद द्वारा किया जा चुका था। इन संत कवियों को अंतःप्रेरणा और प्रकृति या ईश्वर का वरदान (God Gift) प्राप्त था। इस समय उत्तर से दक्षिण तक समूचे देश में यह भक्ति आंदोलन चल रहा था।

इन भक्तसंतों की परम्पराओं में गुरु नानकजी का महत्वपूर्ण और सर्वोपरि स्थान है। संत परम्परा के आदि कवि माने जाने वाले नामदेव (वि.सं.1327–1407) तथा कबीर (वि.सं.1456–1575) के लगभग 200 तथा 70 वर्षों के पश्चात् गुरु नानक देव जी का प्रादुर्भाव हुआ। गुरुनानक देव जी के समय देश की सामाजिक, राजनीतिक व धार्मिक दशा अच्छी नहीं थी। परन्तु समूचे देश में संत उस विषम अवस्था को परिवर्तित करने में प्राणप्रण से जुटे हुए थे। गुरु नानकदेव जी भी इस कार्य को पंजाब प्रांत में कर रहे थे। ''श्री गुरु नानक देव जी की भक्ति साधना से चलने वाला पंजाब का यह भक्ति आंदोलन अपने आप में अद्वितीय–अनुपम एवं अतुलनीय है। भारत में अनेक स्थानों पर ऐसे आंदोलन चल रहे थे, किन्तु विश्व–पटल पर जैसा प्रभाव श्री गुरु नानकदेव जी के आन्दोलन ने छोड़ा है, वैसा अन्यत्र दिखायी नहीं देता।''2

कबीर आदि संतों की भाँति गुरु नानकदेव जी ने भी अवतारवाद, मूर्ति–पूजा, ऊँच–नीच और वर्णभेद का मुखर विरोध किया है। परन्तु इस विरोध में कबीर की भाँति 'खरी–खरी' बातें नहीं हैं, अपितु एक सहजता और सौम्यता है। संत साहित्य में गुरु को सर्वोपरि स्थान दिया गया है। गुरु नानकदेव जी का भी मत है कि गुरु के ध्यान से सत्य की नाव पर बैठकर भवसागरसे पार हुआ जा सकता है। गुरु के उपदेश द्वारा जिन्होंने परम तत्व को जान लिया, उनकी प्रशंसा की जानी चाहिए क्योंकि उन्होंने परमात्मा को पहचान लिया है और परमात्मा से मिलकर वे एकाकार हो गये हैं। यह सब गुरु की कृपा से संभव हुआ है :

नानक बेड़ी सच की तरीऐ गुर बीचारि।
इक आवहिं इक जावहीं पूरि भरे अहंकार।।
मनहठि मती बूड़िए गुरुमुखि सचु तु तारि।।
गुर बिनु किउ तरीऐ सुखु होइ।
जिउ भावे तिउ राखु तू मैं अवरू न दूजा कोइ।।
आगै देखउ दउ जलै पाछै हरिओ अंगूरू।
जिस तै उपजै तिस तै बिनसै घटि घटि सचु भरपूरि।।
आपे मेलि मिलावही साचै महलि हदूरि।
साहि साहि तुझु संभला कदे न विसारउ।।
जिउ जिउ साहिबु मनि बसै गुरमुखि अमृत पेउ।
मनु तनु तेरा तू घणौ गरबु निबारि समेउ।।
जिनि इहु जगतु उपाइया त्रिभुवणु करि आकारू।
गुरमुखि चानणु जाणिऐ मनमुखि मुगधु गुबारू।।
घटि–घटि जोति निरंतरी बूझै गुरमति सारू।।
गुरमुखि जिन्ही जाणिया तिन कीचै साबासि।
सचे सेती रलि मिले सचे गुण परगासि।।
नानक नाम संतोखिआ जीउ पिंड प्रभ पासि।। 3

नानकदेव जी सद्गुरु और ब्रह्म में कोई भेद नहीं मानते। जो गुरु आत्मा का मिलन परमात्मा से करा दे, वह परमात्मा से भी बड़ा है। कबीर का गुरु भाव ऐसा ही है :

गुरु गोविंद दोऊ खड़े का के लागूँ पाय।
बलिहारी गुरु आपकी गोविंद दियो बताय।।

गुरु महिमा को नानकदेव जी ने विविध रूप प्रदान कर व्याख्यायित किया है। कबीर कहते हैं कि मैं तो लोक की परंपराओं और वेदों में उल्लिखित ऋचाओं में परम सत्य को खोज रहा था अर्थात् भ्रमित हो रहा था। परन्तु मेरे सद्गुरु ने मुझे ज्ञानरूपी दीपक दिखा कर अज्ञान के अंधकार से निकाल लिया :

पीछे लागा जाइ था लोक वेद के साथि।
आगे थै सतगुरु मिल्या दीपक दीया हाथि।। 4

इसी भाँति गुरु नानकदेव जी भी अपने प्रिय शिष्य भाई लहना (जो बाद में सिखों के दूसरे गुरु अंगददेव के नाम से प्रसिद्ध हुए) को उपदेश देते हुए कहते हैं कि – हे मित्र, प्रियतम (ईश्वर) से मिलो। मिलन का समय यही है। जब तक यौवन है, तब तक देह है। यह बिना गुणों के काम न आएगा, यह देह ढल कर खाक हो जाएगी। गुरु के उपदेश के द्वारा ही अहंकार की अग्नि शांत होती है। सांसारिक प्राणी सांसारिक माया–मोह में संलग्न रहता है। लिख–लिखकर पढ़कर पुस्तकों का बोझ लादता है। फिर भी उसकी तृष्णा दिन रात बढ़ती रहती है। गुरु की शिक्षा द्वारा उसका वास्तविक मूल्य प्राप्त होता है। जीव चाहे जितनी चतुराई करे, पर बिना साधु–संगति के संतोष प्राप्त नहीं होता, हरि सुमिरन से जीव का छुटकाारा प्राप्त होता है और गुरु की शिक्षा द्वारा शिष्य स्वयं को पहचानता है। इसीजिए अपने तन–मन को, अपने सर्वस्व को गुरु को समर्पित कर देना चाहिए। गुरु नानकदेव जी कहते हैं कि जिस परमसत्ता को मैं त्रिभुवन में खोजता था, गुरु की कृपा से उसे मैंने सहज ही प्रत्यक्ष प्राप्त कर लिया। सदगुरु ने ही मेरा मेल ईश्वर ने कराया। गुरु कृपा के बिना यह संभव नहीं था –

सुणि मन मित्र पिआरिआ मिलु बेला है एह।
जब लगु जोबति सासु है तब लगु इहु तनु देह।।
बिन गुण कामि न आवई ढहि ढेरी तनु खेह।।
मेरे मन लै लाहा घरि जाहि।
गुरमुखि नासु सलाहीऐ हउमै निवरी भाहि
मुणि सुणि गंढणु गंढीऐ लिखि पड़ि बुझहि भारू
तृसना अहिनिस अगली हउमै रोगु विकारू।
ओहु बेपरवाहु अतोलवा गुरमति कीमति सारू
लख सियाणप जे करी लख सिउ प्रीति मिलापु।
बिनु संगति साध न ध्रापीआ बिनु नावै दूख संतापु।।
हरि जपि जीअरे छुटीऐ गुरमुखि चीनै आपु
तनु मनु गुर पहि बेचिआ मनु दीओ सिरू नालि
त्रिभवणु खोजि ढंढोलिआ गुरमुखि खोजि निहालि
सतगुरि मेल मिलाइआ नानक सौ प्रभु नालि।। 5

गुरु नानक देवजी ने सिख पंथ में जिस गुरु–शिष्य परंपरा का प्रवर्तन किया, वह अद्वितीय है। नानकदेव जी ने परम ब्रह्म को अकाल पुरूष की संज्ञा प्रदान की। यह अकाल पुरूष अलख, अविनाशी, सर्वत्र व्यापक और सत्य स्वरूप है। इस अकाल पुरूष का साक्षात्कार गुरु ही करवा सकता है। 'सिख' शब्द शिष्य का ही अपभ्रंश है। गुरु नानकदेव जी ने जिस गुरु और शिष्य परम्परा की नींव रखी, इसमें अंगद देव जी, नानकदेव जी के उत्तराधिकारी हुए। पाँचवें गुरु अर्जुन देव जी ने श्री गुरु ग्रंथ साहिब का सम्पादन किया। इसमें गुरु नानकदेव जी, गुरु अंगद देव जी, गुरु अमरदास जी, गुरु रामदासजी तथा स्वयं गुरु अर्जुन देव जी की रचनाओं को सम्मिलित किया।

गुरु नानक देव जी के पूर्व तक गुरु–शिष्य परंपरा का प्रचलन दैहिक रूप से था। अर्थात् गुरु के पश्चात् उसका प्रिय और प्रमुख शिष्य गुरु की गद्दी का उत्तराधिकरी होता था। गुरु नानकदेव जी ने भी अंगद देव जी को अपना उत्तराधिकारी बनाया। सिख धर्म के दसवें गुरु गोविन्दसिंह ने मार्च सन् 1699 को इस दैहिक गुरु–शिष्य परम्परा को प्रतिबंधित किया और श्री गुरु ग्रंथ साहिब को गुरु की गादी पर स्थापित कर 'सबद' को ही गुरु रूप मानने की परम्परा का श्रीगणेश किया। आदि गुरु नानक देव जी से लेकर अंतिम और दसवें गुरु गोविंदसिंह जी तक का इतिहास अत्यन्त गौरवशाली रहा है।

गुरु नानकदेव जी महामानव थे। संत काव्य परंपरा के अन्य संतों की भाँति इन्होंने भी जीवन में गुरु के महत्व को शिरोधार्य किया है। इनकी रचनाएँ श्री गुरु ग्रंथ साहिब के महला 1 में संकलित हैं। इनमें से अनेक पद गुरु के लिए समर्पित हैं।

बिन सतगुरु सेवे जोग न होई। बिन सतगुरु भेंटे मुक्ति न होई।।
बिन सतगुरु भेटे नाम पाइआ न जाई। बिन सतगुरु भेटे महादुख पाई।।
बिन सतगुरु भेटे महा गरबि गुबारि। नानक बिनगुरु मुआ जन्म हारि।। 6

एक और पद जिसमें गुरु कृपा को शिरोधार्य किया गया है :

सतगुरि मिलिऐ सद भै रचै आपि बसै मनि आइ।
भाई रे गुरुमुखि बूझै कोइ।।
बिनु बूझे कर्म कमावठो जनमु पदारथु खोइ
गुरु कै सबदि जीवतु मरै हरि नामु वसै मनि आइ
सुणि मन मेरे भजु सतगुर सरणा
गुर पदसादी छुटीऐ बिखु भवजलु सबदि गुर तरणा
त्रैगुण सभा धातु है दूजा भाउ विकारु
पंडित पड़ै बंधन मोह बाधा नह बूझै बिखिया पिआरि
सतगुरु मिलिए तकटी छूटै चउथै पदि मुकति दुआरु।
गुरु तो मारगु पाईऐ चूकै मोहु गुबारु
सबदि मरै ता उधरै पाऐ मोख दुआरु
गुर परसादी मिलि रहै सचु नामु करतारु
रहु मनुआ अति सबल है छड़े न कितै उपाइ

दूजै भाइ दुखु लाइदा बहुती देर सजाइ
नानक नाभि लगे से उबरे हउमै सबदि गवाइ
किरण करे गुरु पाईऐ हरि नामो देह दड़ाह
बिनु गुर किनै न पाइओ बिरथा जनमु गबाई।। 7

नानक देव जीकी गुरु–विषयक दृष्टि अत्यन्त व्यापक है। मध्यकाल के अन्य संत जहाँ गुरु के माध्यम से ईश्वर से मिलन की बात करते हैं, वही नानकदेव जी भी इस तथ्य को स्वीकार करते हुए गुरु और अकाल पुरूष के एकाकार की बात करते हैं।

नानकदेव जी प्रेम और करूणा के अवतार थे। गुरु का जो आदर्श उन्होंने स्थापित किया वह अध्यात्म जगत का नियामक था। गुरु अंगददेव, गुरु अमरदास, गुरु रामदास तथा गुरु अर्जुनदेव, के समय तक नानकदेव जी द्वारा प्रवाहित किया गया प्रेम का शीतल नीर प्रवाहित होता रहा। परन्तु इन्हीं के समय से मुगलों के अत्याचार बढ़ने लगे। जहाँगीर ने इनका वध करवा दिया। परिणामतः छठवें गुरु व अर्जुनदेव जी के पुत्र गुरु हरगोविंद जी ने नानकदेव जी द्वारा स्थापित गुरु – पद के आदर्शों को त्यागकर सिखों का सैनिक संगठन तैयार करना प्रारंभ किया। गुरु हरराय और गुरु किशनराय ने अपने पूर्ववर्ती गुरुओं का अनुसरण करते हुए सिखों के सैन्य संगठन को सुदृढ़ किया।

नवें गुरु तेगबहादुर को मुगल सम्राट औरंगजेब के क्रोध का सामना करना पड़ा। इसलाम स्वीकार न करने के कारण ओरंगजेब ने इनका वध करवा दिया। इसका परिणाम यह हुआ कि सिख पंथ के अंतिम गुरु और गुरु तेगबहादुर के पुत्र गुरु गोविंदसिंह ने गुरु परंपरा को समाप्त करते हुए इसका रूप – स्परूप दोनों ही परिवर्तन कर दिया। नानकदेव जी ने वर्ग भेद जाति भेद समाप्त करने पर बल देते हुए हिंदू–मुसलिम ऐक्य का संदेश दिया। परन्तु उन्हीं मुसलमानों ने नानक जी के वंशजों पर अत्याचार किये। इन वंशज गुरुओं ने भी प्रेम और सद्भाव की भाषा न समझने वालों को विवशतः 'शठ्म शठ्यमाचरेत' की भाषा में उत्तर देना पड़ा, जो उचित भी था और समय की मांग भी थी।

गुरु कैसा भी हो, गुरु होता है। कबीर की भाँति नानक देव जी ने 'जा का गुरु है आँधरा, चेला खरा निरंध' जैसी उक्तियाँ कहकर छिद्रान्वेषण नहीं किया है अपितु अपनी श्रद्धा ही व्यक्त की है। इसीलिए गुरुनानक जी द्वारा गढ़ा गया गुरु का आदर्श रूप आज भी प्रासंगिक है।

संदर्भ :

09. रामचरित मानस : तुलसीदास , बालकांड 1/1
10. भारत की संत परंपरा और सामाजिक समरसता : कृष्ण गोपाल शर्मा, पृ0 210
11. नानकवाणी : संपा0 डॉ0 जयराम मिश्र पृ0 114–115
12. कबीर ग्रंथावली : संपा0 डॉ0 श्यामसुंदरदास , गुरु कौ अंग
13. नानकवाणी : सपां0 डॉ0 जयराम मिश्र पृ0 116–117
14. श्रीगुरु ग्रंथ साहिबः पृ0 946
15. नानकवाणी : संपा0 डॉ0 जयराम मिश्र पृ0 33

मध्यकालीन भारत की परिधि और गुरुनानक देव की प्रासंगिकता

* डॉ0 पुष्पांजलि

* प्रवक्ता, इतिहास विभाग, मैथोडिस्ट गर्ल्स पी0जी0 कालेज, रूड़की (हरिद्वार)

संक्षेपिका

लोक चेतना और आध्यात्मिक साधना के वाहक श्री गुरुनानक देव जी सिखों के पहले गुरु ही नहीं बल्कि जगत गुरु थें। उनके द्वारा प्रतिपादित सिख धर्म भारत की प्राचीन और जीवन्त सभ्यता का अभिन्न अंग हैं जिसका उद्भव वर्तमान से लगभग दस हजार वर्ष पूर्व भारतीय उपमहाद्वीप के सप्त सिन्धु क्षेत्र में हआ। भारत में सनातन सभ्यता के लिए प्राचीनतम ज्ञान ग्रंथ ऋग्वेद है तो नवीनतम गुरुनानक देव द्वारा कथित वाणीग्रंथ 'गुरुग्रंथ सहिब' है। जिसमें मध्युगीन भारत के दूसरे प्रमुख सन्तों की अमृतवाणी भी शामिल हैं। ऐसे ही महान संतों में गुरु नानक जी का नाम सर्वोपरि आता हैं जो जगत गुरु के रूप में मध्ययुगीन भारत में प्रवेश लेते है। उस समय का परिवेश इस देश के इतिहास में सबसे अन्धेरे के युगों का था। जब धर्म अत्यन्त प्राचीन काल से थोपी गयी रस्मों रिवाजों का नाम मात्र था। उत्तरी भारत के लिए तो यह कुशासन और अफरा–तफरी का समय था। सामाजिक जीवन भ्रष्टाचार से परिपूर्ण था। धार्मिक दृष्टि द्वेष और कश्मकश से युक्त था। हिन्दू–मुस्लिम के बीच ही नही बल्कि दो बड़े–बड़े धर्मो में विरोधाभाष दृष्टि व्याप्त थी। समाज में ब्राहमणवाद का एकाधिकार था, क्रूर मजहबी अत्याचार से पूरा समाज प्रताड़ित था। ऊँच–नीच, जात–पात, भेद–भाव, छूआ–छूत, सामाजिक कलंक– बधूआ मजदूरी, नारी उपेक्षा एवं निन्दा आदि का वातावरण सर्वत्र फैला हुआ था। ऐसे परिवेश ने गुरुनानक जी पर अत्यन्त गहरा प्रभाव डाला परिणाम स्वरूप इन्होने इन कुरीतियो और अंधकार को दूर करने के उद्देश्य से अपनी जीवन की यात्राएँ शुरू की और लगभग समस्त भारत का भ्रमण करते हुए विदेशो का भी भ्रमण किया तथा अपने अलौकिक ज्ञान के प्रकाश पुंज से मध्ययुगीन परिवेश में व्याप्त अंधकार को दूर करने का प्रयास किया। प्रस्तुत आलेख उसी मध्य युगीन भारत के परिधि का संक्षिप्त दृश्य को उजागर करते हुए नानक जी के द्वारा कहे गये वाणीयों की प्रासंगिकता को व्यक्त करने का प्रयास है।

कूट शब्द– आध्यात्मिक साधना, आत्मगौरव, मानवता, मजहबी सेतू, एकेश्वरवाद, नारी–सशक्तिकरण।

गुरु नानक का आगमन और मध्ययुगीन भारत की राजनीतिक स्थिति–

भारतीय सभ्यता के अन्तर्गत चार प्रमुख धर्म परम्पराएँ विकसित हुयी। जिसमें सनातन धर्म, जैन धर्म, बौद्ध धर्म एवं सिख धर्म है। इस बात में जरा सा भी संशय नहीं है कि इन चारो परम्पराओं ने समस्त संसार में अपनी व्यक्तिगत पहचान स्थापित की और भारत को विश्व गुरु के रूप में प्रस्तुत किया। ऐसे ही जगत गुरु के रूप में अलौकिक प्रतिभा युक्त दिव्य वाणी वाले गुरुनानक जी का अवतरण मध्य युग में सल्तनत काल के अन्तिम दौर में हुआ जब भारत में मुगलों के अभियान शुरू हो चुके थें। जगत गुरु ने बाबर के आक्रमण को स्वयं अपने आँखो से देखा। उस समय के बर्बर स्थिति के स्वंय साक्षी है। वह युग सैनिक संघर्ष के साथ–साथ धार्मिक संघर्ष का युग था। मुस्लिम आक्रमणकारी भारत को दारूल हर्ष से दारूल इस्लाम बनाना चाहते थे।[1] वेबसाइट मद्रास कुरियर के मुताबिक गुरु ग्रंथ साहिब में गुरुनानक देव जी कहते है–

'बाबर वाणी फिरी गई कुईरू ना रो खाई'।[2]

अर्थात बाबर का साम्राज्य फैल रहा है जुल्म की हद ये है कि शहजादियों तक ने भी खाना नही खाया है। मतलब राजनीतिक बर्बरता अपने चरमोंत्कर्ष पर था। जिससे महल की रानियाँ भी अत्यन्त दुःखी हो गयी थी। यह संघर्ष सैनिक क्षेत्र के साथ–साथ सामाजिक एवं धार्मिक क्षेत्रों में भी हुआ। उस भयावह स्थिति से गुरुनानक जी ने बाबर द्वारा कैद बन्दियों के हदय से भय निकाला तथा बाबर को दयावान बनकर सदैव न्याय, इन्साफ का तराजू हाथों मे रखने को कहा और उसका मार्गदर्शन किया। बाबर भी नानक जी से प्रभावित होकर समस्त कैदियों को रिहा कर दिया। बाबर गुरुदेव को धन देना चाहा तो उन्होंने कहा–

''मानुख की जो लैवे ओटु।।
दीन दुनी मैं ताकऊ तोतु।।
कहि नानक सुण बाबर मीर।।
तैथों मंगे सौ अहमक फकीर।। ''जन्म साखी''

अर्थात बन्दों से नहीं खुदा से मांगता हूँ, मुझे अपने लिए कुछ नहीं चाहिए जो भी चाहिए जनता के लिए अथवा परोपकार के लिए चाहिए। इस प्रकार गुरुनानक जी अपने मधुर वाणी के माध्यम से उस समय की प्रतिकुल परिस्थिति को अनुकुल बनाया।

मध्ययुगीन भारत की धार्मिक स्थिति–

भारत की पावन भूमि पर जब गुरुनानक जी का अलौकिक अवतार हुआ तब भारत की धार्मिक स्थिति अत्यन्त शोचनीय थी। धार्मिक दृष्टिकोण द्वेष और कश्मकश से युक्त था। हिन्दू–मुस्लिम के बीच ही नहीं अपितु दो बड़े धर्मो में विरोधाभाव द्वष्टि थी। भिन्न–भिन्न सम्प्रदायों में और भी कट्टरता और वैर–विरोध की भावना

पैदा हो चुकी थी। मध्यभारत के समाज की हालत बद् से बद्तर हो गयी थी । ब्राह्मण वाद ने अपना एकाधिकार बना रखा था। जिसके परिणाम स्वरूप जो गैर ब्राह्मण थे, उन्हें वेद–शास्त्र पढ़ने–अध्ययन करने पर पाबन्दी थी। इस प्रकार से जाति एवं वर्ण व्यवस्था का पुरजोर था। मूर्तिपूजा, (राजगउडी, पृष्ठ–227) तीर्थयात्रा और विभिन्न धर्मों के दूसरे औपचारिक कर्मकाण्डों आदि की स्थिति सर्वव्याप्त थी।[3] जिसका गुरुनानक देव जी ने पूरा खण्डन किया और निगुर्ण स्वरूप प्रभु के गुण गायन करने को कहा। जो सर्वशक्ति मान है। साथ ही उन्होंने देवी देवताओं के चक्रव्यूह से मुक्त रहने को कहा।[4]

''जो उपजै सो कलि संधारिया।।
हम हरि राखे गुर सबदु बीचारिया।। रहाऊ।।
हिरदै साचु वसै हरि नाई।।
कालु न जोहि सकै गुण गाइ।।

उनकी मुखवाणी ग्रंथ ''जपुजी साहिब'' में उल्लेख है कि ''नानक उत्तम नीच ना कोई'' जिसका अर्थ है, ईश्वर की निगाह में कोई छोटा–बड़ा नही है फिर भी यदि कोई व्यक्ति प्रभु के निगाह में अपने आपको छोटा समझे तो ईश्वर उस व्यक्ति के हर समय साथ है। यह स्थिति तभी आ पाती है जब व्यक्ति ईश्वर के नाम जाप द्वारा अपना अहम समाप्त कर लेता है और तब व्यक्ति ईश्वर की दृष्टि में सबसे बड़ा है। उसके समान कोई दूसरा नही। गुरु नानक जी ने तत्कालीन धार्मिक समाज में व्याप्त अवतारवाद का भी पूरजोर से खण्डन किया। एक स्थान पर जनता द्वारा 24 अवतार के माने जाने का उल्लेख है। जिसके विषय में गुरु जी ने वाणी उच्चारण की–

''एकम एकंकार निराला।।
अमर अजोनि जात न जाला।।
अगम अगोचर रूपु मरेखिया।।
खोजत खोजत घटि–घटि देखिया।।
जे देखि दिखावै तिस कऊ बलि जाई।।
गुरु परसादि परम पदु पाई।।''[5]

अर्थात उन्होंने समस्त ब्रह्माण्ड का निर्माता एक प्रभु को बताया। जो एक मात्र अमर है, माता के गर्भ से न जन्म लेने वाला, जिसका रूप रंग नही है, वह निराकार ज्योति स्वरूप प्रत्येक प्राणी में रमा है। वह आवागमन के चक्र से मुक्त है। इस प्रकार गुरु देव ने धर्म से विमुख सामान्य मनुष्य में आध्यात्म की चेतना जागृतकर उसका नाता ईश्वरीय मार्ग से जोड़ा और मध्यकालीन भारत मे व्याप्त धार्मिक संकीर्णता को दूर करने का प्रयास किया तथा कुरीतियों और अंधविश्वासों को दूर करने के लिए निर्मल भक्ति और पाक–जीवन की बात की। परिणाम स्वरूप समाज में धार्मिक मतवाद के साथ भारतीय सिद्धान्त और चिन्तन का संघर्ष नये ढ़ंग से आरम्भ हुआ।

मध्ययुगीन भारत की सामाजिक स्थिति एवं नानक जी के विचार –

मध्ययुगीन समाज में भारतीय जीवन धर्म तांत्रिक ढंग से सामन्तवादी व्यवस्था पर आधारित ग्रामीण कृषक समाज के ढर्रे पर चलता आ रहा था।[(6)] भारत का हिन्दू समाज अनेक जातियों और सम्प्रदायों में विभक्त था। समाज में अनेक प्रकार के कुसंस्कार व्याप्त थे। जिसका नानक जी ने कठोर निन्दा की । जैसा कि उन्होंने 'जनेऊ संस्कार[(7)] (यज्ञोपवीत) को शंका की दृष्टि से देखा तथा इसे मनुष्य–मनुष्य में विभाजन एंव मतभेद पैदा करने वाला, बिना किसी आधार के ऊँच–नीच की श्रेणी को दर्शाने वाला कहा।[(8)]

''कुबुधि डूमणी कुदइया कसाइणि पर निन्दा घट चुहड़ी मुठी क्रोधि चंडालि।।
कारी कढी किया थिए जां चारे बैठिआ नालि।।''

इस प्रकार नानक जी ने मध्यकालीन समाज व्यवस्था की कटु आलोचना की हैं। क्योंकि तत्कालीन समाज में ऊँच–नीच, जात–पात, भेद–भाव, छूआ–छूत तथा सामाजिक कंलक के रूप में बंधूआ मजदूरी भी सर्वत्र व्याप्त था। लोगों को पशुओं की भाँति दास के रूप में बेचे जाते थे। जिसका गुरुनानक जी ने घोर निन्दा की और स्वंय इस कंलक को दूर करने एवं दासों की स्थिति को जानने हेतू दास रूप धारण किया और इस बुराई को दूर करने हेतू आन्दोलन आरंभ किया। जिसके परिणाम स्वरूप जिस पीर के पास दास बनके गये थे। वह इनके कर्त्तव्य एवं आचरण से प्रभावित होकर सभी गुलाम दासो को आजाद कर दिया तथा खुद भी इस दासता की बुराई को दूर करने के लिए नानक देव के साथ हो लिया।[(9)] तत्कालीन समाज में गृह त्यागने की प्रवृति भी जोरो पर थी। विदेशी शक्तियों एवं समाज के सामन्त वर्गो द्वारा जनता पर अत्याचार किये जा रहे थे। जिससे परेशान होकर लोग गृह त्याग रहे थे। इसपर गुरुनानक जी ने सांसारिक कर्त्तव्यों को छोड़ कर चले जाना स्वीकार नहीं किया। उनका विचार था कि–

''मन करतार महिं अऊर कर है फिरत माहि।।''[10]

अर्थात मनुष्य का मन तो ईश्वर में रहे, परन्तु हाथ सांसारिक कृत्यों की पूर्ति में लगा रहें। उस समय समाज में अमीर–गरीब के बीच खाई अत्यधिक व्याप्त थी। धनी व्यक्ति धन का दुरूपयोग कर, गरीबों को दास बनाकर ऐश्वर्य का जीवन व्यतीत करते थे। गुरुदेव जन साधारण की इस दयनीय दशा को देखकर व्याकुल हो गये एवं इसका अन्त योजना बनाकर किया। इसका उल्लेख राग आसा में मिलता है–

''इसु जर कारणि घणी विगुती इनि जरघणी खुआई।।
पापा बाभहु होवै नाहि मुइआ साथि न जाई।।''[(11)]

अर्थात उन्होंने यह उपदेश दिया कि धन सम्पति मृत्यु के समय यही छुट जाएगी। अतः यथा शाक्ति निष्काम सहायता करे। उन्होंने जातिगत भेद–भाव को दूर करने के लिए ही लंगर प्रथा की शुरूआत की।

नारी सषक्तिकरण एवं गुरु नानक जी के विचार

वैदिक युगीन नारी की स्थिति मध्ययुगीन परिवेश में काफी गिर चुका था। नारी विलासिता का साधन मात्र बन गयी थी। नानक का युग घोर नारी निन्दक युग था। संत कबीर ने तो स्त्री को काली सर्पिणी कहा जिसके सम्पर्क से बुद्धि और विवेक नष्ट हो जाता है। परन्तु इसके ठीक विपरीत गुरुनानक जी ने नारी की निन्दा नहीं की बल्कि उसे सम्मान दिया उनका तो ये कहना था–

''भंडि जमीऐ भंडि निंमीए भंडि मंगणु वी आहु।
भंडहु होवै दोसती भंडहु चलै राहु।।
भंडु मुआ भंडु भालीऐ भंडि होवे बंधानु।
सो किउ मंदा आखीऐ जितु जंमहि राजान।। राग आसा, पृष्ठ–473

अर्थात उसे बुरा क्यो कहा जाय जो बड़े–बड़े महापुरूषों को जन्म देती है।[(12)]

इस प्रकार नानक जी ने नारी के सशक्तिकरण पर विशेष बल दिया। उन्होंने महिलाओं को समाज की शक्ति माना

और कहा कि उनके बिना तो समाज की कल्पना भी नहीं हो सकती। उन्होंने मध्यभारत मे प्रचलित देवसासी प्रथा की भर्तस्ना की। जब गुरु जी अपनी यात्रा दक्षिण की ओर कर रहे थे तो वहाँ मैसुर के एक मध्य मन्दिर में स्वागत करती देव दासियों देखा तो इस प्रथा का कड़ा विरोध किया और कहा–

''लोग धर्म नाम लेकर समाज में कुरीतियां तथा अनैतिकता का प्रचार–प्रसार कर रहे है। बिलासिता के यह सब साधन समाज को पतन के गहरे कुएं में धकेल रहे हैं।'' [(13)] इसी प्रकार एक स्थान पर नारियो के प्राकृतिक क्रिया का अपमान कर रहे लोगो को कहा कि शारीरिक स्नान से पवित्रता नही आती क्योंकि शरीर में सदैव मल–मूत्र किसी न किसी रूप में विद्यमान रहता है। केवल वही व्यक्ति पवित्र है जिनके ह्रदय मे प्रभु का वास है।[(14)] अतः नानक जी जहाँ भी नारी के सम्मान में कमी देखा तो उसका विरोध किया एवं सदैव नारी के सम्मान की ही बात कही।

हिन्दू–मुस्लिम एकता पर बल–

मध्ययुगीन भारत में साम्प्रदायिकता का वातावरण फैला था। भ्रष्टाचार से युक्त धर्म द्वेष एवं कश्मकश का माहौल था। हिन्दू मुस्लिम के बीच ही नही बल्कि दो बड़े धर्मो में विरोधाभाष थी। इस कारण से भिन्न सम्प्रदायों में और भी कट्टरता तथा बैर विरोध की भावना पैदा हो चुकी थी। किन्तु इन सब को दूर करने के लिए मध्यभारत में अनेक संतो ने प्रयास किया और ऐसी सामाजिक व्यवस्था की सबने कटु आलोंचना की तथा हिन्दू–मुस्लिम एकता की जोरदार पैरवी की। उन संतो में कबीर और नानक का नाम विख्यात है।[(15)] नानक जी को तो हिन्दू–मुस्लिम एकता का मजहबी सेतू कहा जाता है। भेदभाव से ऊपर उठकर वे हिन्दू–मुसलमानो को समान दृष्टि से देखते थे। उन्होंने तो अपने शिष्य भी विपरीत धर्म के लोगों को बनाया। भाई मरदाना इसके सर्वश्रेष्ठ उदाहरण माने जा सकते है। सामाजिक और धार्मिक क्षेत्र में हिन्दू मुस्लिम एकता, एकेश्वरवाद, मूर्ति पूजा का विरोध और सच्ची पवित्र भक्ति नानक जी का ध्येय रहा है। उन्होंने शक्तिशाली इस्लाम के उत्तम सिद्धान्तों को सहज भाव से अपनाया।[(16)] उनके विचार मे सच्चा समन्वय वही है, जो ईश्वर की मौलिक एकता को पहचाने और उसके प्रभाव से मानव की एकता को पहचाने तथा विशाल मानवतावादी दृष्टि को ग्रहण कर, समस्त मनुष्य जाति को विभिन्न कुसंस्कारों से मुक्त कर जीवन के उच्च मार्ग पर जाने की प्रेरणा दे, वही सच्चा समन्वय है। इस प्रकार नानक जी ने हिन्दू–मुस्लिम एकता पर बल दिया और एकेश्वरवाद को बताते हुए सभी का ईश्वर एक माना। एक ही शक्ति समस्त विश्व को संचालित करती है यही उनका विचार था। जिसे उन्होंने लोगों तक पहुँचाया। जब नानक जी को ज्ञान की प्राप्ति हुयी थी तो वह तीन दिन की जमाधि के बाद जब प्रकट हुये तो उनके मुख से पहला वाक्य यही निकला कि, 'न कोई हिन्दू है और न कोई मुसलमान'[(17)] इस प्रकार नानक जी ने हिन्दू–मुस्लिम मजहबी समन्वय स्थापित करने का प्रयास किया।

गुरु नानक के मुख्य विचार धारा– (उपदेश)

समाज को प्रभावित करने वाले सन्तों मे नानक जी का नाम अत्यन्त महत्वपूर्ण रहा है। निगुर्ण मार्गी संतो मे नानक देव का व्यक्तित्व अत्यन्त भद्र एवं शात रहा। गुरु नानक देव अपने जीवन काल के लगभग 24 वर्षो तक चार महत्वपूर्ण उदासी (यात्राएँ) की और 28,000 कि0मी0 की पैदल यात्रा कर अनेक देशों का भ्रमण किया। उन्होंने अपनी यात्रा के दौरान तत्कालीन समाज को बहुत गहराई से देखा व चिन्तन किया। समाज, में व्याप्त अनेक बुराइयों का विरोध कर उन्हें दूर करने का प्रयास किया। यह अत्यन्त ही आश्चर्य की बात है कि नानक देव किसी का दिल दुखाए बिना तथा किसी पर आघात किये बिना कुसंस्कारों को नष्ट करने की शक्ति रखते है। उनका उपचार प्रेम मैत्री, सहानुभूति और सर्वहित चिंतन था। नानक जी की 'वाणी' में अद्भूत पवित्र निष्ठा, प्रभु के लिए पुकार एवं आत्मसर्मपण का तीव्र आवेश है। उन्होंने बड़े ही सरल शब्दों मे मानव को जीवन की सार्थकता के लिए परमात्मा का नाम जपने के लिए कहा, मेहनत से सद्कर्म करने को कहा तथा जरूरतमन्दों की सहायता करने को कहा। यही विचार धारा उनके गुरुवाणी में संग्रहित है। नानक जी ने एक ईश्वर पर जोर दिया। जिसका बार–बार नाम जपने से तथा प्रेम और भक्ति के साथ ध्यान करने से व्यक्ति मोक्ष पा सकता है। चाहे वह किसी भी जाति, धर्म या पंथ का हो। उनका संदेश था– संतो का आदर करो, मानव की सेवा करो, आलस्य त्यागो, व प्रातः उठकार परमात्मा का सिमरन करो। मनो विकारो पर विजय प्राप्त करो।[(18)]

गुरु का महत्व–

नानक जी ने ईश्वर के सानिध्य की पहली शर्त के रूप में चरित्र और आचरण की शुद्धता और मार्ग–दर्शन के लिए गुरु की आवश्यकता पर जोर दिया। उनका मानना था कि गुरु के द्वारा ही सांसारिक जीवन का अन्त और आध्यात्मिक जीवन का आरम्भ होता है। गुरु के उपदेश द्वारा ही अहंकार का नाश होता है और मुक्त अवस्था प्राप्त होती है। मध्य युगीन भारत का परिवेश गुरु प्रधान था। गुरु नानक जी ने गुरु की अपेक्षा 'गुरु पद' की महत्ता पर बल दिया। इस प्रकार व्यक्ति की अपेक्षा 'विचार' को अधिक महत्वपूर्ण बताया। स्वंय 'नानक' शब्द आगे चलकर व्यक्ति बोधक न होकर 'विचार बोधक' हो गया।

'नानक नाम जहाज है, चढ़े सो उतरे पार।।[19]

अपनी महाराष्ट्र भ्रमण के दौरान नानक जी ने अंधविश्वासो से सावधान करते हुये जन–साधारण से कहते है–

''बिनु सतिगुर किनै न पाइयो बिनु सतगुरु किनै न
पाइया।
सतिगुर विचि आपु रखिओन करि परगतु आखि
सुणाइया।।''
सतिगुरु मिलिऐ सदा मुकतु है जिनि विचहु मोहु
चुकाइया।।[20]....................

अर्थात प्रभु की प्राप्ति के लिए ह्रदय की पवित्रता जरूरी है। जो मनुष्य पवित्र ह्रदय से गुरु की शरण में नही जाता उसे ईश्वर की प्राप्ति नही हो सकती । इस प्रकार गुरु नानक जी ने गुरु के महत्व को स्वीकार कर लोगों को भी गुरुकृपा से अवगत कराया।

उपसंहार–

जिस समय गुरुनानक का प्रार्द्दभाव हुआ वह मध्ययुग राजनीतिक उथल–पुथल का युग था। जिसके कारण सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक व्यवस्था भी काफी प्रभावित थी। इस परिस्थिति में समस्त भारत में अनेक कुरीतियां, असंगतिया उत्पन्न हो चुकी थी। जिसका

गुरु नानक जी ने कड़ा विरोध किया और अपनी शान्त और अहिंसावादी नीति के द्वारा समाज सुधार करने का प्रयास किया। गुरु देव ने धर्म से विमुख सामान्य मनुष्य में आध्यात्म की चेतना जागृतकर उसका नाता ईश्वरीय मार्ग से जोड़ा और मध्यकालीन भारत मे व्याप्त धार्मिक संकीर्णता को दूर करने का प्रयास किया। नानक जी की नितियां उनके सिद्धान्त, उनके विचार, उनकी साधना पद्धति उस मध्य कालीन समाज में एक मील का पत्थर साबित हुआ। वह आज भी प्रासंगिक है। आज जिस नैतिकता, मानवता और सद्गुरु के पथ प्रदर्शन की कमी हैं वह गुरु नानक जी रास्तों को अपनाकर पूर्ति किया जा सकता हैं।

<u>सन्दर्भ</u>

1. भारत का इतिहास, डा0 ए0 के0 चतुर्वेदी, पृष्ठ– 73
2. वेब साइट मद्रास कुरियर, 'गुरु ग्रंथसाहिब'
3. मध्यकालीन भारत, राजनीति, समाज और संस्कृति, सतीशचन्द्र, 2016, पृष्ठ– 187
4. राज गउड़ी, पृष्ठ– 227
5. राग विला बलु, पृष्ठ– 838
6. मध्यकालीन भारत, हरिश्चन्द्रवर्मा, खण्ड–1, 1995, पृष्ठ– 483
7. 'जीवन वृतांत्त' श्री गुरु नानक देव जी' सरदार जसवीर सिंह, पृष्ठ–
8. 'जीवन वृतांत्त' श्री गुरु नानक देव जी' सरदार जसवीर सिंह, सिरी रागु, पृष्ठ– 91
9. 'जीवन वृतात्त' श्री गुरु नानक देव जी' सरदार जसवीर सिंह, राग मारू न0 1, पृष्ठ– 991
10. नानक वाणी, ''मनकरतार.................... फिरत माहि।
11. राग आसा, पृष्ठ– 417, कथा–महाजन द्वारा शोषण
12. राग आसा, पृष्ठ– 473, गुरु ग्रंथसाहिब
13. सिरी राग, पृष्ठ– 63, गुरु ग्रंथसाहिब
14. राग आसा, पृष्ठ– 472, गुरु ग्रंथसाहिब
15. मध्यकालीन भारत, सतीशचन्द्र, 2016 पृष्ठ– 186
16. मध्यकालीन भारत, हरिश्चन्द्रवर्मा, खण्ड–1, 1995, पृष्ठ– 488
17. गुरु नानक देव, विजय कुमार गुप्ता, 2017, पृष्ठ– 19
18. गुरु नानकदेव, विजय कुमार गुप्ता, 2017, पृष्ठ– 10
19. गुरु नानकदेव, विजय कुमार गुप्ता, 2017, पृष्ठ– 24
20. राग आसा, पृष्ठ– 466, गुरु ग्रंथसाहिब.

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ : ਆਤਮ ਤੋਂ ਅਧਿਆਤਮ ਵੱਲ

* ਅਮਨਪ੍ਰੀਤ ਕੌਰ ਢੀਂਡਸਾ

* ਅਸਿਸਟੈਂਟ ਪ੍ਰੋਫੈਸਰ, ਪੰਜਾਬੀ ਵਿਭਾਗ, ਪਟੇਲ ਮੈਮੋਰੀਅਲ ਨੈਸ਼ਨਲ ਕਾਲਜ,ਰਾਜਪੁਰਾ।

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਦੀ ਕੇਂਦਰੀ ਚੂਲ ਅਧਿਆਤਮ ਹੈ। ਅਧਿਆਤਮ ਦੀ ਸਾਰੀ ਵਿਆਖਿਆ ਇਸ ਵਿਚਲੇ ਆਤਮ ਦੀ ਹੀ ਹੈ। ਸਮੁੱਚੀ ਬਾਣੀ ਆਤਮ ਤੋਂ ਅਧਿਆਤਮ ਦਾ ਹੀ ਸਫ਼ਰ ਹੈ। ਸਾਡੀ ਤ੍ਰਾਸਦੀ ਇਹ ਰਹੀ ਹੈ ਕਿ ਅਸੀਂ ਇਸਨੂੰ ਅਧਿਆਤਮ ਤੱਕ ਸੀਮਿਤ ਕਰਕੇ ਇਸ ਵਿਚਲੇ ਆਤਮ ਨੂੰ ਅੱਖੋਂ-ਪਰੋਖੇ ਕਰਦੇ ਰਹੇ ਹਨ। ਅਧਿਆਤਮ ਤੱਕ ਪਹੁੰਚਣ ਦਾ ਰਸਤਾ ਆਤਮ ਵਿੱਚੋਂ ਹੋ ਕੇ ਗੁਜ਼ਰਦਾ ਹੈ।ਮੰਨਿਆ ਕਿ ਅਧਿਆਤਮ ਸੂਖਮ ਹੈ,ਪਰ ਉਸ ਤੱਕ ਤਾਂ ਆਤਮ ਨੇ ਹੀ ਹੈ ,ਜੋ ਕਿ ਠੋਸ ਹੋਂਦ ਹੈ।ਜਦੋਂ ਪਹੁੰਚਣਾ ਆਤਮ ਨੇ ਹੈ,ਤਾਂ ਅਧਿਆਤਮ ਤੋਂ ਪਹਿਲਾਂ ਆਤਮ ਨੂੰ ਸਵਾਰਨ ਦਾ ਮਸਲਾ ਪੈਦਾ ਹੁੰਦਾ ਹੈ ਤੇ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਇਸੇ ਮਸਲੇ ਨਾਲ ਨਜਿੱਠਦੀ ਹੈ। ਬਾਣੀ ਦੇ ਇਸ ਸੁਭਾਅ ਬਾਰੇ ਡਾ.ਮਹਿੰਦਰ ਕੌਰ ਗਿੱਲ ਦਾ ਕਥਨ ਹੈ,"ਕਵੀ ਦਾ ਅਨੁਭਵ-ਸਥਲ ਵਸਤੂ ਜਗਤ ਹੈ ਤੇ ਬਾਣੀਕਾਰ ਦਾ ਲੈਕਿਕ-ਜਗਤ ਦੇ ਨਾਲ-ਨਾਲ ਪਰਾਲੈਕਿਕ ਵੀ । ਪਰਾਲੈਕਿਕਤਾ ਜੋ ਕੇਵਲ ਅਨੁਭਵ ਦਾ ਜਗਤ ਹੈ,ਚਿੰਤਨ ਦਾ ਵਿਸ਼ਾ ਹੈ। ਇਹ ਬਿਬੇਕ ਤੋਂ ਅਰੰਭ ਹੋ ਕੇ ਪਰਾ-ਬਿਬੇਕ ਵਿੱਚ ਸਮਾਪਤ ਹੁੰਦੀ ਹੈ।ਗਿਆਨ ਤੋਂ ਅਰੰਭ ਹੋ ਕੇ ਪਰਮ ਗਿਆਨ ਤੱਕ ਰਸਾਈ ਕਰਾਉਂਦੀ ਹੈ।"1

ਜਦੋਂ ਤੱਕ ਆਪਣਾ ਆਪ ਨਹੀਂ ਸਵਾਰਦੇ;ਉਦੋਂ ਤੱਕ ਪਰਮਾਤਮ ਤੱਕ ਪਹੁੰਚਣਾ ਅਸੰਭਵ ਹੈ।ਇੱਥੇ ਅਸੀਂ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਦੇ ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੁਕਤਿਆਂ 'ਤੇ ਹੀ ਵਿਚਾਰ ਕਰਾਂਗੇ,ਜੋ ਮਨੁੱਖੀ ਹੋਂਦ ਦੀ ਅਸਲ ਮਾਇਨਿਆਂ ਵਿੱਚ ਮਨੁੱਖੀ ਉਸਾਰੀ ਕਰਦੇ ਹਨ।ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਦਾ ਵਿਚਾਰ ਚਿੰਤਨ ਇਸ ਤੱਥ 'ਤੇ ਨਿਰਭਰ ਹੈ ਕਿ ਸੰਸਾਰ ਵਿੱਚ ਰਹਿਣਾ ਕਿਵੇਂ ਹੈ? ਕਿਸ ਤਰੀਕੇ ਸੰਸਾਰ ਵਿੱਚ ਰਹਿੰਦਿਆਂ ਪਰਮਾਤਮ ਤੱਕ ਪਹੁੰਚਿਆ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ।ਲੋਕ ਸਮਝਦੇ ਹਨ ਕਿ ਧਾਰਮਿਕ ਪਹਿਰਾਵਾ ਧਾਰਨ ਕਰਕੇ ਰੱਬ ਨੂੰ ਪਾ ਲਵਾਂਗੇ। ਹਿੰਦੂ,ਮੁਸਲਮਾਨ,ਜੋਗੀ ਉਸ ਸਮੇਂ ਵੀ ਇਸੇ ਤਰ੍ਹਾਂ ਕਰਦੇ ਸਨ ਤੇ ਹੁਣ ਵੀ ਐਵੇਂ ਹੀ ਕਰ ਰਹੇ ਹਨ।ਹੁਣ ਤਾਂ ਇਨ੍ਹਾਂ ਵਿੱਚ ਨਾਨਕ ਦੇ ਸਿਖਿਆਰਥੀ ਵੀ ਸ਼ਾਮਲ ਹੋ ਗਏ ਹਨ,ਜੋ ਸੋਚਦੇ ਨੇ ਪੰਜ ਕਕਾਰ ਪਾਏ ਤੇ ਅਸੀਂ ਧਰਮੀ ਬਣ ਗਏ।ਕਕਾਰ ਪਾਉਣਾ / ਧਾਰਮਿਕ ਪਹਿਰਾਵਾ ਧਾਰਨ ਕਰਨਾ ਪਹਿਲਾ ਪੜਾਅ ਹੈ,ਜਦੋਂ ਕਿ ਧਰਮ ਇੱਥੋਂ ਤੱਕ ਸੀਮਿਤ ਨਹੀਂ।ਧਾਰਮਿਕ ਜੀਵਨ ਤਾਂ ਗੁਰੂ ਜੀ ਅਨੁਸਾਰ ਸੰਸਾਰ ਵਿੱਚ ਰਹਿ ਕੇ ਵੀ ਇਸ ਤੋਂ ਵੱਖ ਰਹਿਣਾ , ਸਭ ਨੂੰ ਇੱਕਸਮਾਨ ਸਮਝਣਾ, ਕਾਮ, ਕ੍ਰੋਧ, ਲੋਭ ਮੋਹ, ਹੰਕਾਰ 'ਤੇ ਕਾਬੂ ਰੱਖਣਾ ਆਦਿ:

(ੳ) ਅੰਜਨ ਮਾਹਿ ਨਿਰੰਜਨਿ ਰਹੀਐ ਜੋਗ ਜੁਗਤਿ ਇਵ ਪਾਈਐ॥ (ਅੰਗ 730)

(ਅ) ਨਾਨਕ ਸਚੇ ਨਾਮ ਬਿਨੁ ਕਿਆ ਟਿਕਾ ਕਿਆ ਤਗੁ॥ (ਅੰਗ 467)

(ੲ) ਮਾਣਸ ਖਾਣੇ ਕਰਹਿ ਨਿਵਾਜ॥ਛੁਰੀ ਵਗਾਇਨਿ ਤਿਨ ਗਲਿ ਤਾਗ॥ (ਅੰਗ 471)

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਨੇ ਬਾਹਰੀ ਧਾਰਮਿਕ ਕਰਮਕਾਂਡਾਂ ਤੇ ਭੇਖ /ਦਿਖਾਵਿਆਂ ਤੋਂ ਵਰਜਿਆ ਹੈ।ਇਹ ਕਰਮਕਾਂਡ ਨਾ ਤਾਂ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਪਰਮਾਰਥ ਵੱਲ ਲਿਜਾਂਦੇ ਹਨ ਤੇ ਉਲਟਾ ਉਸਦੇ ਆਰਥਿਕ ਸ਼ੋਸ਼ਣ ਦਾ ਕਾਰਨ ਬਣਦੇ ਹਨ।ਇਸ ਲਈ ਪਰਮਾਰਥ ਨੂੰ ਪਾਉਣ ਲਈ ਇਹ ਸਭ ਵਿਅਰਥ ਹੈ।ਇੱਕ ਪਰਮਾਤਮਾ ਨੂੰ ਮਨ 'ਚ ਵਸਾ ਕੇ ਇਸ ਤਨ-ਮਨ ਨੂੰ ਅਜਿਹਾ ਬਣਾ ਲਵੋ ਕਿ ਕਿਸੇ ਤੀਰਥ ਉੱਤੇ ਜਾਣ ਦੀ ਲੋੜ ਹੀ ਨਾ ਪਵੇ:

ਮਨੁ ਮੰਦਰੁ ਤਨੁ ਵੇਸ ਕਲੰਦਰੁ ਘਟ ਹੀ ਤੀਰਥਿ ਨਾਵਾ॥
ਏਕੁ ਸ਼ਬਦੁ ਮੇਰੈ ਪ੍ਰਾਨਿ ਬਸਤੁ ਹੈ ਬਾਹੁੜਿ ਜਨਮਿ ਨ ਆਵਾ॥ (ਅੰਗ 795)

ਜੀਵਨ ਕਿਹੋ ਜਿਹਾ ਹੋਵੇ?ਔਗੁਣਾਂ ਦਾ ਤਿਆਗ ਕਰਕੇ ਗੁਣ ਭਰਪੂਰ ਹੋਵੇ। ਜੇ ਗੁਣ ਕਿਸੇ ਹੋਰ ਕੋਲ ਹਨ,ਤਾਂ ਬਿਨਾਂ ਕਿਸੇ ਸੰਗ/ਸ਼ਰਮ ਤੋਂ ਦੂਜੇ ਤੋਂ ਲੈਣੇ ਚਾਹੀਦੇ ਹਨ ਤੇ ਆਪਣਾ ਜੀਵਨ ਸੁਚੱਜਾ ਬਣਾਉਣਾ ਚਾਹੀਦਾ ਹੈ:

ਗੁਣਾ ਕਾ ਹੋਵੈ ਵਾਸੁਲਾ ਕਢਿ ਵਾਸੁ ਲਈਜੈ॥
ਜੇ ਗੁਣ ਹੋਵਨਿ ਸਾਜਨਾ ਮਿਲਿ ਸਾਝ ਕਰੀਜੈ॥
ਸਾਝ ਕਰੀਜੈ ਗੁਣਹ ਕੇਰੀ ਛੋਡਿ ਅਵਗਣ ਚਲੀਐ॥ (ਅੰਗ 765-766)

ਬਾਣੀ ਅਨੁਸਾਰ ਸੁਚੱਜੀ ਜੀਵਨ ਜਾਚ ਗੁਰੂ ਹੀ ਸਿਖਾਉਂਦਾ ਹੈ,ਇਸ ਵਿੱਚ ਗੁਰੂ ਧਾਰਨ ਕਰਨ ਉੱਤੇ ਜ਼ੋਰ ਦਿੱਤਾ ਗਿਆ ਹੈ।ਪਰ ਗੁਰੂ ਬਣਨਾ ਹਰ ਕਿਸੇ ਦੇ ਵੱਸ ਵਿੱਚ ਨਹੀਂ ਹੁੰਦਾ । ਗੁਰੂ ਉਹ ਹੀ ਬਣਨ/ਬਣਾਉਣ ਦੇ ਯੋਗ ਹੈ,ਜੋ ਸਹੀ ਰਸਤਾ ਦਿਖਾ ਸਕੇ।ਕਿਤੇ ਇਹ ਨਾ ਹੋਵੇ ਕਿ ਗੁਰੂ ਗਿਆਨ ਤੋਂ ਹੀਣਾ ਹੋਵੇ ਤੇ ਉਸਦੇ ਲੜ ਲੱਗ ਸਾਡੀ ਵੀ ਬੇੜੀ ਰਸਤੇ ਵਿੱਚ ਹੀ ਡੁੱਬ ਜਾਵੇ। ਅੱਜਕਲ੍ਹ ਸਮਾਜ ਵਿੱਚ ਅਜਿਹੇ ਅਖੌਤੀ ਗੁਰੂ ਬਥੇਰੇ ਮਿਲ ਜਾਂਦੇ ਹਨ,ਜੋ ਲੋਕਾਂ ਦੀ ਲੁੱਟ ਕਰਕੇ,ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੀ ਕਮਾਈ ਨਾਲ ਆਪ ਐਸ਼ੋ-ਇਸ਼ਰਤ ਦਾ ਜੀਵਨ ਗੁਜ਼ਾਰਦੇ ਹਨ।ਬਥੇਰਿਆਂ ਦੇ ਪਾਜ ਉੱਘੜ ਵੀ ਜਾਂਦੇ ਹਨ ਤੇ ਬਹੁਤੇ ਆਪਣੀਆਂ ਲੁੱਟ ਦੀਆਂ ਦੁਕਾਨਾਂ ਧਾਰਮਿਕ ਸਥਾਨ ਦੇ ਨਾਂ 'ਤੇ ਚਲਾਈ ਜਾਂਦੇ ਹਨ।ਪਰ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਸਾਹਿਬ ਨੇ ਇਨ੍ਹਾਂ ਅਖੌਤੀ ਗੁਰੂਆਂ ਪ੍ਰਤਿ 14ਵੀਂ-15ਵੀਂ ਸਦੀ ਵਿੱਚ ਹੀ ਲੋਕਾਈ ਨੂੰ ਸੁਚੇਤ ਕਰ ਦਿੱਤਾ ਸੀ:

ਅੰਧਾ ਆਗੂ ਜੇ ਥੀਐ ਕਿਉ ਪਾਧਰੁ ਜਾਣੈ॥

ਆਪਿ ਮੁਸੈ ਮਤਿ ਹੋਛੀਐ ਕਿਉ ਰਾਹੁ ਪਛਾਣੈ॥
ਕਿਉ ਰਾਹਿ ਜਾਵੈ ਮਹਲੁ ਪਾਵੈ ਅੰਧ ਕੀ ਮਤਿ ਅੰਧਲੀ॥ (ਅੰਗ 767)

ਜੇ ਗੁਰੂ ਸੱਚਾ ਹੋਵੇਗਾ,ਤਾਂ ਹੀ ਮੰਜ਼ਲ ਨੂੰ ਪਾਇਆ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ।ਫਿਰ ਚਾਹੇ ਉਹ ਦੁਨਿਆਵੀ ਮੰਜ਼ਲ ਹੋਵੇ,ਚਾਹੇ ਅਧਿਆਤਮਿਕ।ਕਿਉਂਕਿ ਗੁਰੂ ਦਾ ਕਾਰਜ ਰਸਤਾ ਦਿਖਾਉਣਾ ਹੈ।ਜਿਸ ਰਾਹ ਉੱਤੇ ਕੋਈ ਆਪ ਤੁਰਿਆ ਹੋਵੇਗਾ,ਉਸ ਬਾਰੇ ਹੀ ਉਹ ਦੱਸ ਸਕਦਾ ਹੈ।ਗੁਰੂ ਦਾ ਕਾਰਜ ਵੀ ਅਜਿਹਾ ਹੀ ਹੈ।ਉਸਨੇ ਹਨ੍ਹੇਰੇ ਤੋਂ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ ਵੱਲ ਲੈ ਕੇ ਜਾਣਾ ਹੈ।ਉਹ ਤਾਂ ਹੀ ਲਿਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ,ਜੇ ਉਹ ਆਪ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ ਵਿੱਚ ਹੋਵੇ।ਇਸੇ ਲਈ ਅਖੌਤੀ ਗੁਰੂਆਂ ਦੀ ਬਜਾਇ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਸੱਚੇ ਗੁਰੂ ਨੂੰ ਪ੍ਰਵਾਨ ਕੀਤਾ ਹੈ:

(ੳ) ਸਾਚੇ ਗੁਰ ਕੀ ਸਾਚੀ ਸੀਖ॥ਤਨੁ ਮਨੁ ਸੀਤਲੁ ਸਾਚੁ ਪਰੀਖ॥ (ਅੰਗ152)

(ਅ) ਬਿਨੁ ਗੁਰ ਅਰਥੁ ਬੀਚਾਰੁ ਨ ਪਾਇਆ॥(154)

(ੲ) ਬਿਨੁ ਸਤਿਗੁਰ ਕਿਨੈ ਨ ਪਾਇਓ ਬਿਨੁ ਸਤਿਗੁਰ ਕਿਨੈ ਨ ਪਾਇਆ॥(ਅੰਗ466)

(ਸ)ਕੁੰਭੇ ਬਧਾ ਜਲੁ ਰਹੈ ਜਲ ਬਿਨੁ ਕੁੰਭੁ ਨ ਹੋਇ॥
ਗਿਆਨ ਕਾ ਬਧਾ ਮਨੁ ਰਹੈ ਗੁਰ ਬਿਨੁ ਗਿਆਨੁ ਨ ਹੋਇ॥ (ਅੰਗ 469)

ਪਰਮਾਤਮ ਤੱਕ ਪਹੁੰਚ ਕਰਨ ਲਈ ਆਤਮ ਨੂੰ ਵਿਕਾਰਾਂ ਤੋਂ ਮੁਕਤ ਕਰਨਾ ਹੈ।ਇਸਦੀ ਥਾਂ ਮਨੁੱਖੀ-ਆਤਮ ਫੋਕੇ ਕਰਮਕਾਂਡਾਂ ਵਿੱਚ ਹੀ ਗ੍ਰਸਿਆ ਹੋਇਆ ਹੈ।ਆਪਣੇ ਨਾਲੋਂ ਵੱਧ ਉਸਨੂੰ ਦੂਜਿਆਂ ਦੀ ਫ਼ਿਕਰ ਹੈ।ਇਹ ਫ਼ਿਕਰ ਦੂਜਿਆਂ ਦੀ ਭਲਾਈ ਨਹੀਂ ਸਗੋਂ ਉਸਨੂੰ ਨੀਚਾ ਦਿਖਾਉਣ ਵਿੱਚ ਵਿਅਸਤ ਰਹਿੰਦੀ ਹੈ।ਇਸ ਨਾਲ ਦੂਜੇ ਦਾ ਵਿਗੜਦਾ ਕੁਝ ਨਹੀਂ ,ਹਾਂ ਨਿੰਦਿਆ,ਚੁਗ਼ਲੀ ਕਰਨ ਵਾਲੇ ਦਾ ਬਣਦੀ ਕੁਝ ਨਹੀਂ।ਪਰ ਉਹ ਕਿਸੇ ਭੁਲੇਖੇ ਵਿੱਚ ਅਜਿਹੇ ਕਰਮਾਂ ਵਿੱਚ ਉਲਝਿਆ ਰਹਿੰਦਾ ਹੈ।ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਸਾਹਿਬ ਕਹਿੰਦੇ ਹਨ ਕਿ ਨਿੰਦਿਆ,ਚੁਗ਼ਲੀ,ਪਰ-ਇਸਤਰੀ ਗਮਨ,ਚੋਰੀ ਤੇ ਬੁਰਾਈਆਂ ਨਾਲ ਨਾ ਇਸ ਲੋਕ ਵਿੱਚ ਸ਼ੋਭਾ ਮਿਲਣੀ ਹੈ ਅਤੇ ਨਾ ਹੀ ਪਰਲੋਕ ਵਿੱਚ:

(ੳ)ਨਿੰਦਾ ਚਿੰਦਾ ਕਰਹਿ ਪਰਾਈ ਝੂਠੀ ਲਾਇਤਬਾਰੀ॥
ਵੇਲਿ ਪਰਾਈ ਜੋਹਹਿ ਜੀਅੜੇ ਕਰਹਿ ਚੋਰੀ ਬੁਰਿਆਰੀ॥
ਹਲਤਿ ਨ ਸੋਭਾ ਪਲਤਿ ਨ ਢੋਈ,ਅਹਿਲਾ ਜਨਮੁ ਗਵਾਇਆ॥(ਅੰਗ 155)

ਜੋ ਸੱਚੇ ਸਾਧਕ ਹਨ,ਉਕਤ ਵਿਕਾਰਾਂ ਤੋਂ ਮੁਕਤ ਹਨ ਅਤੇ ਚੁਸਤ ਚਲਾਕੀਆਂ ਕਰਨ ਵਾਲੇ ,ਉਕਤ ਵਿਕਾਰਾਂ ਯੁਕਤ ਮਨੁੱਖ ਹਾਰ ਜਾਂਦੇ ਹਨ।ਜੋ ਨਾਮ ਦੇ ਰੰਗ ਵਿੱਚ ਰੰਗੇ ਹਨ,ਉਹ ਜੀਵਨ ਰੂਪ ਬਾਜ਼ੀ ਜਿੱਤ ਜਾਂਦੇ ਹਨ:

ਤੇਰੈ ਨਾਇ ਰਤੇ ਸੇ ਜਿਣਿ ਗਏ ਹਾਰਿ ਗਏ ਸਿ ਠਗਣ ਵਾਲਿਆ॥ (ਅੰਗ 463)

ਇਸੇ ਲਈ ਪਹਿਲਾਂ ਤੋਂ ਹੀ ਆਪਣੇ ਕਰਤੱਵਾਂ ਨੂੰ ਪਛਾਣੋ,ਤਾਂ ਜੋ ਬਾਅਦ ਵਿੱਚ ਪਛਤਾਉਣਾ ਨਾ ਪਵੇ।ਕਿਉਂਕਿ ਜਿਹੋ ਜਿਹੇ ਕਰਮ ਕਰਾਂਗੇ,ਉਹੋ ਜਿਹਾ ਫਲ ਤਾਂ ਭੋਗਣਾ ਹੀ ਪੈਣਾ।ਇਸ ਲਈ ਜੇ ਮਾੜੇ ਕਰਮਾਂ ਦੀ ਸਜ਼ਾ ਮਿਲੂਗੀ ਤਾਂ ਉਸ ਦਾ ਜ਼ਿੰਮੇਵਾਰ ਪਰਮਾਤਮਾ ਨਹੀਂ , ਖ਼ੁਦ ਜੀਵਆਤਮਾ ਹੀ ਹੋਵੇਗੀ:

ਅਗੋ ਦੇ ਜੇ ਚੇਤੀਐ ਤਾਂ ਕਾਇਤੁ ਮਿਲੈ ਸਜਾਇ॥(ਅੰਗ 417)

ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਨੇ ਝੂਠ,ਚੋਰੀਆਂ,ਰਿਸ਼ਵਤਖੋਰੀ,ਫ਼ਰੇਬ,ਧੋਖੇ ਨੂੰ ਛੱਡ ਕੇ ਕਿਰਤ ਕਰਨ ਦਾ ਉਪਦੇਸ਼ ਦਿੱਤਾ।ਕੇਵਲ ਉਪਦੇਸ਼ ਹੀ ਨਹੀਂ 10 ਸਾਲ ਕਰਤਾਰਪੁਰ ਵਿੱਚ ਖੇਤੀ ਕਰਕੇ ਕਿਰਤ ਕਰਨ ਦੀ ਮਿਸਾਲ ਵੀ ਕਾਇਮ ਕੀਤੀ।ਦਸਾਂ ਨਹੁੰਆਂ ਦੀ ਆਪਣੀ ਮਿਹਨਤ ਮੁਸ਼ੱਕਤ ,ਈਮਾਨਦਾਰੀ ਨਾਲ ਕੀਤੀ ਕਿਰਤ ਹੀ ਸਕੂਨ ਦਿੰਦੀ ਹੈ।ਧੋਖੇ/ਫ਼ਰੇਬ ਪੈਸਾ ਤਾਂ ਦੇ ਦੇਣਗੇ ,ਪਰ ਨਾਲ ਹੀ ਮਨ ਦੀ ਸ਼ਾਂਤੀ ਖੋਹ ਲੈਂਦੇ ਹਨ।ਮਨ ਦੀ ਅਸ਼ਾਂਤੀ ਹੀ ਅੱਜਕਲ੍ਹ ਕਿੰਨੀਆਂ ਬਿਮਾਰੀਆਂ ਦਾ ਰੂਪ ਧਾਰਨ ਕਰ ਚੁੱਕੀ ਹੈ। **Depression, Insomia** ਆਦਿ ਰੋਗ ਵਧਦੇ ਹੀ ਜਾ ਰਹੇ ਹਨ।ਡਾ. ਸਰਬਜੀਤ ਕੌਰ ਸੋਹਲ ਲਿਖਦੇ ਹਨ,"ਵਰਤਮਾਨ ਸਮੇਂ ਦੇ ਇਸ ਤਣਾਉ ਦੇ ਦੌਰ ਵਿੱਚ ਜਿੱਥੇ ਤਮਾਮ ਸਮਾਜਿਕ ,ਸੱਭਿਆਚਾਰਿਕ , ਵਿਗਿਆਨਿਕ ਪ੍ਰਾਪਤੀਆਂ ਦੇ ਬਾਵਜੂਦ ਜੀਵਨ ਦੀ ਭਟਕਣ ਅਤੇ ਸਮੱਸਿਆਂਵਾਂ ਵਿੱਚ ਦਿਨ ਪ੍ਰਤਿ ਦਿਨ ਵਾਧਾ ਹੋ ਰਿਹਾ ਹੈ,ਅਜਿਹੇ ਸਮੇਂ ਵਿਅਕਤੀ ਬੇਗ਼ਾਨਗੀ ਦੇ ਅਹਿਸਾਸ ਤੋਂ ਅਤੇ ਤਣਾਉ ਤੋਂ ਮੁਕਤ ਹੋਣ ਲਈ ਜਿਸ ਦਰਸ਼ਨ ਦੀ ਤਲਾਸ਼ ਵਿੱਚ ਹੈ,ਉਹ ਉਪਰੋਕਤ ਵਿਚਾਰਧਾਰਾ ਵਿੱਚ ਹੀ ਉਪਲੱਬਧ ਹੈ।"2ਇਸ ਭਟਕਣ ਦਾ ਕਾਰਨ ਅਸੀਂ ਮਿਹਨਤ ਨਹੀਂ ਕਰਦੇ,ਆਪਣੇ ਕੰਮਾਂ ਵਿੱਚ ਸਾਡੀ ਖ਼ੁਸ਼ੀ ਨਹੀਂ,ਅਸੀਂ ਸਿਰਫ਼ ਪੈਸੇ ਕਾਰਨ ਉਹ ਕੰਮ ਕਰ ਰਹੇ ਹੁੰਦੇ ਹਾਂ।ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਕਹਿੰਦੀ ਹੈ ਕਿ ਫਿਰ ਪਛਤਾਉਣ ਦਾ ਕੋਈ ਫ਼ਾਇਦਾ ਨਹੀਂ,ਕਿਉਂਕਿ ਜਿਹੋ ਜਿਹਾ ਕਰਮ ਕਰਾਂਗੇ ਉਹੋ ਜਿਹਾ ਫਲ਼ ਤਾਂ ਭੋਗਣਾ ਹੀ ਪੈਣਾ: ਜੈਸਾ ਬੀਜੈ ਸੋ ਲੁਣੇ ਜੋ ਖਟੇ ਸੁੋ ਖਾਇ॥(ਅੰਗ 730)

ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਆਤਮ ਨੂੰ ਸਵਾਰਿਆ ਹੈ,ਜੋ ਚੰਗੇ ਗੁਣਾਂ ਦੇ ਮਾਲਕ ਹਨ,ਉਹ ਨਿਡਰ ਅਵਸਥਾ ਵਿੱਚ ਪਹੁੰਚ ਜਾਂਦੇ ਹਨ।ਜਿੱਥੇ ਕਿਸੇ ਦਾ ਡਰ ਨਹੀਂ,ਭੈ ਨਹੀਂ।ਪੰਜਾਬੀ ਦੀ ਇੱਕ ਅਖਾਣ ਵੀ ਹੈ-"ਅੰਦਰ ਹੋਵੈ ਸੱਚ ਤਾਂ ਕੋਠੇ ਚੜ੍ਹ ਕੇ ਨੱਚ।"ਨਿੰਦਿਆ/ਚੁਗ਼ਲੀ ਕਰਨ ਵਾਲਿਆਂ ਨੂੰ ਲੱਗਦਾ ਹੈ ਕਿ ਅਜਿਹਾ ਕਰਕੇ ਅਸੀਂ ਦੂਜੇ ਦੀ ਹੇਠੀ ਕਰ ਸਕਦੇ ਹਾਂ , ਪਰ ਮੂਰਖ ਇਸ ਗੱਲ ਤੋਂ ਅਨਜਾਣ ਹਨ ਕਿ ਅਜਿਹਾ ਕਰਕੇ ਉਹ ਆਪਣਾ ਕੀਮਤੀ ਸਮਾਂ ਨਸ਼ਟ ਕਰ ਰਹੇ ਹੁੰਦੇ ਹਨ।ਕਿਉਂਕਿ ਕੋਈ ਜਿੰਨਾ ਮਰਜ਼ੀ ਜ਼ੋੋਰ ਲਗਾ ਲਵੇ ਸੱਚ ਨੂੰ ਕਦੇ ਝੁਠਲਾਇਆ ਨਹੀਂ ਜਾ ਸਕਦਾ:

ਮੂਏ ਕਉ ਕਹੁ ਮਾਰੇ ਕਉਨੁ॥ਨਿਡਰੇ ਕਉ ਕੈਸਾ ਡਰੁ ਕਵਨ ॥ (ਅੰਗ 710)

ਬਾਣੀ ਵਿੱਚ ਧਾਰਮਿਕ ਪੁਸਤਕਾਂ ਦੇ ਮੁਕਾਬਲਤਨ ਪਰਮਾਤਮਾ ਦੇ ਨਾਮ ਸਿਮਰਨ 'ਤੇ ਬਲ ਦਿੱਤਾ ਗਿਆ ਹੈ।ਧਾਰਮਿਕ ਪੁਸਤਕਾਂ ਪੜ੍ਹਨ ਦਾ ਕਾਰਜ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇ ਸਮਕਾਲੀ ਪੰਡਿਤ ਕਰਦੇ ਸਨ।ਹੁਣ ਪੰਡਿਤਾਂ ਦੇ ਨਾਲ - ਨਾਲ

ਸਿੱਖ ਵੀ ਇਸੇ ਕੰਮ ਵਿੱਚ ਲੱਗੇ ਹੋਏ ਹਨ। ਗਿਣਤੀਆਂ ਕਰਕੇ ਪਾਠ ਕੀਤੇ ਜਾਂਦੇ ਹਨ,ਲੰਗਰ ਲਗਾਏ ਜਾਂਦੇ ਹਨ ਤੇ ਦਾਨ ਕੀਤੇ ਜਾਂਦੇ ਹਨ।ਅਜਿਹੇ ਕਾਰਜ ਹਉਮੈ ਹੀ ਪੈਦਾ ਕਰਦੇ ਹਨ।ਪਰ ਇਸਦਾ ਅਰਥ ਇਹ ਵੀ ਨਹੀਂ ਕਿ ਧਾਰਮਿਕ ਪੁਸਤਕਾਂ ਨੂੰ ਪੜ੍ਹਨਾ ਨਹੀਂ ਚਾਹੀਦਾ,ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੂੰ ਪੜ੍ਹਨਾ ਹੈ ਤੇ ਗਿਆਨ ਲੈ ਕੇ ਜੀਵਨ ਜਾਚ ਦਾ ਹਿੱਸਾ ਬਣਾਉਣਾ ਹੈ।ਜੇ ਪਰਮਾਤਮ ਤੱਕ ਪਹੁੰਚਣ ਲਈ ਨਾਮ ਸਿਮਰਨ ਆਵੱਸ਼ਕ ਹੈ ਤਾਂ ਨਾਮ ਸਿਮਰਨ ਲਈ ਵੀ ਮਨ ਦੀ ਖ਼ਾਸ ਅਵਸਥਾ ਚਾਹੀਦੀ ਹੈ,ਜੋ ਮੋਹ ਮਾਇਆ ਤੋਂ ਮੁਕਤ ਹੋਵੇ , ਇਸਨੂੰ ਪਾਉਣ ਲਈ ਪੜ੍ਹਤ ਲਾਜ਼ਮੀ ਹੈ; ਜਿੱਥੋਂ ਆਤਮ ਦੀ ਸੁਚੱਜੀ ਉਸਾਰੀ ਦੀ ਸੇਧ ਮਿਲਦੀ ਹੈ।ਸੋ ਕੇਵਲ ਪੜ੍ਹਤ ਤੱਕ ਸੀਮਿਤ ਨਹੀਂ ਰਹਿਣਾ ; ਅਮਲ ਵੀ ਜ਼ਰੂਰੀ ਹੈ।ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਫ਼ਰਮਾਉਂਦੇ ਹਨ:

ਪੜੀਐ ਜੇਤੀ ਆਰਜਾ ਪੜੀਅਹਿ ਜੇਤੇ ਸਾਸ॥
ਨਾਨਕ ਲੇਖੈ ਇਕ ਗੱਲ ਹੋਰੁ ਹਉਮੈ ਝਖਣਾ ਝਾਖ॥
ਲਿਖਿ ਲਿਖਿ ਪੜਿਆ॥ਤੇਤਾ ਕੜਿਆ॥ਬਹੁ ਤੀਰਥ ਭਵਿਆ॥
....
ਹਰਿ ਕਾ ਨਾਮੁ ਮੰਨਿ ਵਸਾਏ॥ਨਾਨਕ ਨਦਰਿ ਕਰੇ ਸੋ ਪਾਏ॥(ਅੰਗ 467-468)

ਸਾਇੰਸ ਉਦੋਂ ਤੱਕ ਕਿਸੇ ਤੱਥ ਨੂੰ ਮੰਨਦੀ ਨਹੀਂ,ਜਦੋਂ ਤੱਕ ਉਸਦਾ ਪੂਰਾ ਨਿਰੀਖਣ ਨਾ ਕਰ ਲਿਆ ਜਾਵੇ।ਕਿਸੇ ਬਾਰੇ ਕੁਝ ਵੀ ਕਹਿਣਾ ਗ਼ਲਤ ਹੈ,ਜਦੋਂ ਤੱਕ ਤੁਸੀਂ ਉਸ ਬਾਰੇ ਨਹੀਂ ਜਾਣਦੇ।ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਵੀ ਇਸੇ ਸੋਚ ਦੀ ਧਾਰਨੀ ਹੋਣ ਕਾਰਨ ਸਾਇੰਸ ਨਾਲ ਨਜ਼ਦੀਕੀ ਰਿਸ਼ਤਾ ਰੱਖਦੀ ਹੈ।ਜਿਸਨੂੰ ਵਿਗਿਆਨੀ ਆਪਣੀਆਂ ਖੋਜਾਂ ਦਾ ਆਧਾਰ ਵੀ ਬਣਾ ਰਹੇ ਹਨ।ਕਿਸੇ ਬਾਰੇ ਕੁਝ ਵੀ ਬੋਲਣ ਤੋਂ ਪਹਿਲਾਂ ਸੋਚਣਾ ਸਮਝਣਾ ਵੀ ਆਤਮ ਦਾ ਇੱਕ ਪੱਖ ਹੈ;ਜਿਸ ਉੱਤੇ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਵਿੱਚ ਜ਼ੋਰ ਦਿੱਤਾ ਗਿਆ ਹੈ:

(ੳ) ਅਦਿਸਟੁ ਦਿਸੈ ਤਾ ਕਹਿਆ ਜਾਇ॥ਬਿਨੁ ਦੇਖੇ ਕਹਣਾ ਬਿਰਥਾ ਜਾਇ॥(ਅੰਗ 222)

(ਅ) ਅਣਡਿਠਾ ਕਿਛੂ ਕਹਣੁ ਨ ਜਾਇ॥ਕਿਆ ਕਰਿ ਆਖਿ ਵਖਾਣੀਐ ਮਾਇ॥ (ਅੰਗ 1256)

ਇਸੇ ਕਾਰਨ ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਖੋਜ ਕਰਨ 'ਤੇ ਜ਼ੋਰ ਦਿੱਤਾ ਹੈ।ਅਤਾਰਕਿਕ ਵਿਵਾਦ ਨੂੰ ਰੱਦ ਕੀਤਾ :

(ੳ) ਖੋਜੀ ਉਪਜੈ ਬਾਦੀ ਬਿਨਸੈ ਹਉ ਬਲਿ ਬਲਿ ਗੁਰ ਕਰਤਾਰਾ॥(ਅੰਗ 1255)

(ਅ) ਬਕਿ ਬਕਿ ਵਾਦੁ ਚਲਾਇਆ ਬਿਨੁ ਨਾਵੈ ਬਿਖੁ ਜਾਣਿ॥ (ਅੰਗ 1331)

ਸਮਾਜ ਵਿੱਚ ਰਿਸ਼ਵਤਖ਼ੋਰੀ ਤੇ ਭ੍ਰਿਸ਼ਟਤੰਤਰ ਦਾ ਜੋ ਬੋਲਬਾਲਾ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇ ਸਮੇਂ ਸੀ,ਉਹ ਅੱਜ ਵੀ ਉਸੇ ਤਰ੍ਹਾਂ ਕਾਇਮ ਹੈ,ਸਗੋਂ ਕਈ ਗੁਣਾਂ ਵੱਧ ਗਿਆ ਹੈ।ਅਜਿਹੇ ਰਿਸ਼ਵਤਖ਼ੋਰਾਂ ਦੀ ਸ਼ਕਲ ਹੀ ਮਨੁੱਖਾਂ ਵਰਗੀ ਹੈ,ਕਰਮ ਤਾਂ ਕੁੱਤਿਆਂ ਵਰਗੇ ਹੀ ਹਨ।ਇਸ ਭ੍ਰਿਸ਼ਟਤੰਤਰ ਨੇ ਗੁਣਾਂ ਦੀ ਕਦਰ ਘਟਾ ਦਿੱਤੀ ਹੈ;ਜਿਸ ਕਰਕੇ ਗੁਣਵਾਨ ਪਿੱਛੇ ਰਹਿ ਗਏ ਤੇ ਗੁਣਹੀਨ ਅੱਗੇ ਆ ਜਾਂਦੇ ਹਨ।ਅਜਿਹਾ ਗੁਣਾਂ ਤੋਂ ਹੀਣਿਆਂ ਦੇ ਹੱਥ ਜਦੋਂ ਸੰਸਥਾਵਾਂ ਸਮਾਜ , ਰਾਜ ਜਾਂ ਦੇਸ਼ ਦੀ ਵਾਗਡੋਰ ਆ ਜਾਂਦੀ ਹੈ;ਤਾਂ ਅਜਿਹੇ ਸਮਾਜ/ਦੇਸ਼ ਦੇ ਭਵਿੱਖ ਦਾ ਰੱਬ ਹੀ ਰਾਖਾ ਹੋ ਸਕਦਾ:

ਰਾਜਾ ਨਿਆਉ ਕਰੇ ਹਥਿ ਹੋਇ॥ ਕਹੈ ਖੁਦਾਇ ਨ ਮਾਨੈ ਕੋਇ॥
ਮਾਣਸ ਮੂਰਤਿ ਨਾਨਕੁ ਨਾਮੁ॥ ਕਰਣੀ ਕੁਤਾ ਦਰਿ ਫੁਰਮਾਨ॥(ਅੰਗ 350)

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਵਿੱਚ ਗਿਆਨ ਪ੍ਰਾਪਤੀ ਦਾ ਸਾਧਨ ਸਤਿਗੁਰੂ ਹੈ।ਗੁਰੂ ਦੇ ਗਿਆਨ ਦਾ ਮਾਧਿਅਮ ਸੰਵਾਦ ਹੈ।ਸੰਵਾਦ ਜਰੂਰੀ ਹੈ।ਇਹ ਸੰਵਾਦ ਸਵੈ ਤੇ ਪਰ ਤੱਕ ਸੀਮਿਤ ਨਾ ਰਹਿ ਕੇ ਅੰਤਰ ਧਰਮ ਸੰਵਾਦ ਹੈ,ਜਿਸਦਾ ਅਰੰਭ ਡਾ.ਸਰਬਜਿੰਦਰ ਸਿੰਘ ਨਾਨਕ ਨਾਲ ਹੋਇਆ ਮੰਨਦਿਆਂ ਲਿਖਦੇ ਹਨ,"ਪੈਗੰਬਰੀ/ਧਰਮ ਬਾਨੀ ਅਜ਼ਮਤ ਵਿੱਚ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਪਾਤਸ਼ਾਹ ਦੀ ਆਮਦ ਨਾਲ ਹੀ ਅੰਤਰ ਧਰਮ ਸੰਵਾਦ (ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ ਵਿਚਲੇ ਸਿਧਾਂਤਿਕ ਹਵਾਲੇ/ਅਮਲੀ ਰੂਪ ਲਈ ਉਦਾਸੀਆਂ ਉਪਰੋਕਤ ਦੀ ਪੁਸ਼ਟੀ ਹਿਤ)ਦਾ ਪ੍ਰਾਰੰਭ ਹੁੰਦਾ ਹੈ ਅਤੇ "ਕਿਛੁ ਸੁਣੀਐ ਕਿਛੁ ਕਹੀਐ"ਰਾਹੀਂ ਇਸਦਾ ਧਰਾਤਲ ਸਥਾਪਿਤ ਹੁੰਦਾ ਹੈ।"3ਇਸ ਸੰਵਾਦ ਦੀਆਂ ਤਿੰਨ ਪਰਤਾਂ ਹਨ:

(ੳ) ਜਬ ਤਕ ਦੁਨੀਆ ਰਹੀਐ ਨਾਨਕ ਕਿਛੁ ਸੁਣੀਏ ਕਿਛੁ ਕਹੀਏ

(ਅ) ਰੋਸ ਨ ਕੀਜੈ ਉਤਰ ਦੀਜੈ॥

(ੲ) ਮੂਰਖੈ ਨਾਲਿ ਲੁਝੀਐ॥(ਅੰਗ ੫੭੩)

ਦੁਨੀਆ ਦੀ ਰੀਤ ਕੀ ਹੈ- ਅੰਦਰੋਂ ਕੁਝ ਹੋਰ ਤੇ ਬਾਹਰੋਂ ਕੁਝ ਹੋਰ।ਕਿਸੇ ਬਾਰੇ ਸਹੀ ਅੰਦਾਜ਼ਾ ਲਗਾਉਣਾ ਬਹੁਤ ਮੁਸ਼ਕਲ ਹੈ।ਇਹ ਜਾਂ ਤਾਂ ਉਹ ਆਪ ਜਾਣਦਾ ਹੈ,ਜਾਂ ਪਰਮਾਤਮਾ ਤੇ ਜਾਂ ਫਿਰ ਉਹ ਜਾਣਦੇ ਹਨ ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਉਸ ਨਾਲ ਲੰਮਾ ਸਮਾਂ ਗੁਜ਼ਾਰਿਆ ਹੋਵੇ।ਬੇਸ਼ੱਕ ਕੋਈ ਇਸ ਢੌਂਗੀ ਨੂੰ ਪਛਾਣ ਨਹੀਂ ਪਾ ਰਿਹਾ , ਪਰ ਅਜਿਹੇ ਢੌਂਗ ਕਿਸੇ ਕੰਮ ਨਹੀਂ ਆਉਂਦੇ :

ਅੰਦਰਹੁ ਝੂਠੇ ਪੈਜ ਬਾਹਰਿ ਦੁਨੀਆ ਅੰਦਰਿ ਫੈਲੁ॥
ਅਠਸਠਿ ਤੀਰਥ ਜੇ ਨਾਵਹਿ ਉਤਰੈ ਨਾਹੀ ਮੈਲੁ॥ (ਅੰਗ 473)

ਜੰਮਣ ਮਰਣ ਸਮੇਂ ਦੀ ਅਖੌਤੀ ਅਪਵਿੱਤਰਤਾ ਦਾ ਵਿਰੋਧ ਕਰਦਿਆਂ ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਨੇ ਮਨੁੱਖੀ ਆਤਮ ਦੀਆਂ ਅਸਲ ਅਪਵਿੱਤਰਤਾਵਾਂ ਦੇ ਸਨਮੁੱਖ ਕਰਵਾਇਆ ਹੈ।ਪਤੀ-ਪਤਨੀ ਦੇ ਸੰਬੰਧਾਂ ਤੋਂ ਬਾਹਰ ਮਰਦ-ਇਸਤਰੀ ਦੇ ਸੰਬੰਧਾਂ ਵੱਲ ਸੰਕੇਤ ਕਰਕੇ ਆਤਮ ਦੀ ਆਚਰਣਿਕ ਉੱਚਤਾ ਦਾ ਸੰਦੇਸ਼ ਦਿੱਤਾ ਹੈ:

ਮਨ ਕਾ ਸੂਤਕੁ ਲੋਭੁ ਹੈ ਜਿਹਵਾ ਸੂਤਕੁ ਕੂੜੁ॥
ਅਖੀ ਸੂਤਕੁ ਵੇਖਣਾ ਪਰ ਤ੍ਰਿਅ ਪਰ ਧਨ ਰੂਪੁ॥ (ਅੰਗ 472)

ਇਸ ਲੋਭ ਲਾਲਚ ਦਾ ਕੀ ਫਾਇਦਾ ਜਦੋਂ ਇਸ ਸੰਸਾਰ ਵਿੱਚ ਥੋੜ੍ਹੇ ਸਮੇਂ ਲਈ ਆਏ ਹਾਂ ਤੇ ਫਿਰ ਇੱਥੋਂ ਚਲੇ ਜਾਣਾ ਹੈ।ਇਹ ਕੋਈ ਅਧਿਆਤਮਿਕ ਡਰਾਵਾ ਨਹੀਂ,ਸਗੋਂ ਵਿਗਿਆਨਿਕ ਸਚਾਈ ਹੈ।ਸੰਸਾਰਿਕ ਵਸਤਾਂ ਦਾ ਕਾਹਦਾ ਹੰਕਾਰ ਤੇ ਇਸ ਸਰੀਰ ਦਾ ਕਾਹਦਾ ਮਾਣ।ਜੇ ਮੌਤ ਨੂੰ ਯਾਦ ਰੱਖਿਆ ਜਾਵੇ ਤਾਂ ਇਸ ਜੀਵਨ ਨੂੰ ਵਧੀਆ ਬਣਾਇਆ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ,ਪਰ ਦੁਨੀਆਂ ਮੌਤ ਨੂੰ ਭੁੱਲੀ ਬੈਠੀ ਹੈ ਤੇ ਹਉਮੈਂ ਵਿੱਚ ਖਪਦੀ ਰਹਿੰਦੀ ਹੈ :

(ੳ) ਖਾਣਾ ਪੀਣ ਹਸਣਾ ਸਉਣਾ ਵਿਸਰਿ ਗਿਆ ਹੈ ਮਰਣਾ॥(ਅੰਗ 1/54

(ਅ)ਇਸੁ ਤਨ ਧਨ ਕਾ ਕਹਹੁ ਗਰਬੁ ਕੈਸਾ॥(ਅੰਗ 1274)

ਨੇੜਲੇ ਰਿਸ਼ਤੇ ਨਾਤਿਆਂ ਤੋਂ ਪਰਿਵਾਰ , ਪਿੰਡ , ਸ਼ਹਿਰ,ਰਾਜ,ਦੇਸ਼,ਸਮਾਜ ਦੀਆਂ ਇਕਾਈਆਂ ਦਾ ਨਿਕਾਸ-ਵਿਕਾਸ ਹੋਇਆ।ਇਨ੍ਹਾਂ ਰਿਸ਼ਤੇ ਨਾਤਿਆਂ ਦਾ ਜ਼ਿਕਰ ਅਕਸਰ ਸੁਣਨ ਨੂੰ ਮਿਲਦਾ ਹੈ।ਇਸ ਪੱਖ ਤੋਂ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਦੀ ਵਿਲੱਖਣਤਾ ਆਤਮਿਕ ਪਰਿਵਾਰ ਦਾ ਵਿਆਖਿਆਨ ਹੈ,ਜੋ ਧੁਰ ਤੱਕ ਨਾਲ ਨਿਭੇਗਾ।ਦੁਨਿਆਵੀ ਰਿਸ਼ਤਿਆਂ ਨੇ ਤਾਂ ਮੌਤ ਤੋਂ ਬਾਅਦ ਖ਼ਤਮ ਹੋ ਜਾਣਾ ਹੈ,ਪਰ ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਰਿਸ਼ਤਿਆਂ ਦਾ ਜ਼ਿਕਰ ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਕਰ ਗਏ,ਉਹ ਸਦੀਵੀ ਹਨ:

ਮਾਤਾ ਮਤਿ ਪਿਤਾ ਸੰਤੋਖੁ॥ਸਤੁ ਭਾਈ ਕਰਿ ਏਹੁ ਵਿਸੇਖੁ॥ (ਅੰਗ 151)

ਇਨ੍ਹਾਂ ਸਾਰੇ ਗੁਣਾਂ ਨੂੰ ਧਾਰਨ ਕਰਕੇ ਹੀ ਆਤਮ ਦਾ ਪਰਮਾਤਮ ਨਾਲ ਮੇਲ ਸੰਭਵ ਹੈ।ਪਰਮਾਤਮਾ ਜੋ ਇੱਕ ਹੈ,ਉਸਦੇ ਬਰਾਬਰ ਦਾ ਕੋਈ ਦੂਜਾ ਨਹੀਂ , ਜਿਸਦਾ ਹੁਕਮ ਸਭ ਵਿੱਚ ਵਿਆਪਤ ਹੈ:

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਦੀ ਕੇਂਦਰੀ ਚੂਲ ਅਧਿਆਤਮ ਹੈ।ਅਧਿਆਤਮ ਦੀ ਸਾਰੀ ਵਿਆਖਿਆ ਇਸ ਵਿਚਲੇ ਆਤਮ ਦੀ ਹੀ ਹੈ। ਸਮੁੱਚੀ ਬਾਣੀ

ਆਤਮ ਤੋਂ ਅਧਿਆਤਮ ਦਾ ਹੀ ਸਫ਼ਰ ਹੈ। ਸਾਡੀ ਤ੍ਰਾਸਦੀ ਇਹ ਰਹੀ ਹੈ ਕਿ ਅਸੀਂ ਇਸਨੂੰ ਅਧਿਆਤਮ ਤੱਕ ਸੀਮਿਤ ਕਰਕੇ ਇਸ ਵਿਚਲੇ ਆਤਮ ਨੂੰ ਅੱਖੋਂ-ਪਰੋਖੇ ਕਰਦੇ ਰਹੇ ਹਨ। ਅਧਿਆਤਮ ਤੱਕ ਪਹੁੰਚਣ ਦਾ ਰਸਤਾ ਆਤਮ ਵਿੱਚੋਂ ਹੋ ਕੇ ਗੁਜ਼ਰਦਾ ਹੈ।ਮੰਨਿਆ ਕਿ ਅਧਿਆਤਮ ਸੂਖਮ ਹੈ,ਪਰ ਉਸ ਤੱਕ ਤਾਂ ਆਤਮ ਨੇ ਹੀ ਹੈ ,ਜੋ ਕਿ ਠੋਸ ਹੋਂਦ ਹੈ।ਜਦੋਂ ਪਹੁੰਚਣਾ ਆਤਮ ਨੇ ਹੈ,ਤਾਂ ਅਧਿਆਤਮ ਤੋਂ ਪਹਿਲਾਂ ਆਤਮ ਨੂੰ ਸਵਾਰਨ ਦਾ ਮਸਲਾ ਪੈਦਾ ਹੁੰਦਾ ਹੈ ਤੇ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਇਸੇ ਮਸਲੇ ਨਾਲ ਨਜਿੱਠਦੀ ਹੈ। ਬਾਣੀ ਦੇ ਇਸ ਸੁਭਾਅ ਬਾਰੇ ਡਾ.ਮਹਿੰਦਰ ਕੌਰ ਗਿੱਲ ਦਾ ਕਥਨ ਹੈ,"ਕਵੀ ਦਾ ਅਨੁਭਵ-ਸਥਲ ਵਸਤੂ ਜਗਤ ਹੈ ਤੇ ਬਾਣੀਕਾਰ ਦਾ ਲੌਕਿਕ-ਜਗਤ ਦੇ ਨਾਲ-ਨਾਲ ਪਰਾਲੌਕਿਕ ਵੀ । ਪਰਾਲੌਕਿਕਤਾ ਜੋ ਕੇਵਲ ਅਨੁਭਵ ਦਾ ਜਗਤ ਹੈ,ਚਿੰਤਨ ਦਾ ਵਿਸ਼ਾ ਹੈ। ਇਹ ਬਿਬੇਕ ਤੋਂ ਅਰੰਭ ਹੋ ਕੇ ਪਰਾ-ਬਿਬੇਕ ਵਿੱਚ ਸਮਾਪਤ ਹੁੰਦੀ ਹੈ।ਗਿਆਨ ਤੋਂ ਅਰੰਭ ਹੋ ਕੇ ਪਰਮ ਗਿਆਨ ਤੱਕ ਰਸਾਈ ਕਰਾਉਂਦੀ ਹੈ।"1

ਜਦੋਂ ਤੱਕ ਆਪਣਾ ਆਪ ਨਹੀਂ ਸਵਾਰਦੇ;ਉਦੋਂ ਤੱਕ ਪਰਮਾਤਮ ਤੱਕ ਪਹੁੰਚਣਾ ਅਸੰਭਵ ਹੈ।ਇੱਥੇ ਅਸੀਂ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਦੇ ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੁਕਤਿਆਂ 'ਤੇ ਹੀ ਵਿਚਾਰ ਕਰਾਂਗੇ,ਜੋ ਮਨੁੱਖੀ ਹੋਂਦ ਦੀ ਅਸਲ ਮਾਇਨਿਆਂ ਵਿੱਚ ਮਨੁੱਖੀ ਉਸਾਰੀ ਕਰਦੇ ਹਨ।ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਦਾ ਵਿਚਾਰ ਚਿੰਤਨ ਇਸ ਤੱਥ 'ਤੇ ਨਿਰਭਰ ਹੈ ਕਿ ਸੰਸਾਰ ਵਿੱਚ ਰਹਿਣਾ ਕਿਵੇਂ ਹੈ? ਕਿਸ ਤਰੀਕੇ ਸੰਸਾਰ ਵਿੱਚ ਰਹਿੰਦਿਆਂ ਪਰਮਾਤਮ ਤੱਕ ਪਹੁੰਚਿਆ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ।ਲੋਕ ਸਮਝਦੇ ਹਨ ਕਿ ਧਾਰਮਿਕ ਪਹਿਰਾਵਾ ਧਾਰਨ ਕਰਕੇ ਰੱਬ ਨੂੰ ਪਾ ਲਵਾਂਗੇ। ਹਿੰਦੂ,ਮੁਸਲਮਾਨ,ਜੋਗੀ ਉਸ ਸਮੇਂ ਵੀ ਇਸੇ ਤਰ੍ਹਾਂ ਕਰਦੇ ਸਨ ਤੇ ਹੁਣ ਵੀ ਐਵੇਂ ਹੀ ਕਰ ਰਹੇ ਹਨ।ਹੁਣ ਤਾਂ ਇਨ੍ਹਾਂ ਵਿੱਚ ਨਾਨਕ ਦੇ ਸਿਖਿਆਰਥੀ ਵੀ ਸ਼ਾਮਲ ਹੋ ਗਏ ਹਨ,ਜੋ ਸੋਚਦੇ ਨੇ ਪੰਜ ਕਕਾਰ ਪਾਏ ਤੇ ਅਸੀਂ ਧਰਮੀ ਬਣ ਗਏ।ਕਕਾਰ ਪਾਉਣਾ / ਧਾਰਮਿਕ ਪਹਿਰਾਵਾ ਧਾਰਨ ਕਰਨਾ ਪਹਿਲਾ ਪੜਾਅ ਹੈ,ਜਦੋਂ ਕਿ ਧਰਮ ਇੱਥੋਂ ਤੱਕ ਸੀਮਿਤ ਨਹੀਂ।ਧਾਰਮਿਕ ਜੀਵਨ ਤਾਂ ਗੁਰੂ ਜੀ ਅਨੁਸਾਰ ਸੰਸਾਰ ਵਿੱਚ ਰਹਿ ਕੇ ਵੀ ਇਸ ਤੋਂ ਵੱਖ ਰਹਿਣਾ, ਸਭ ਨੂੰ ਇੱਕਸਮਾਨ ਸਮਝਣਾ, ਕਾਮ, ਕ੍ਰੋਧ, ਲੋਭ, ਮੋਹ, ਹੰਕਾਰ 'ਤੇ ਕਾਬੂ ਰੱਖਣਾ ਆਦਿ:

(ੳ) ਅੰਜਨ ਮਾਹਿ ਨਿਰੰਜਨਿ ਰਹੀਐ ਜੋਗ ਜੁਗਤਿ ਇਵ ਪਾਈਐ॥ (ਅੰਗ 730)

(ਅ)ਨਾਨਕ ਸਚੇ ਨਾਮ ਬਿਨੁ ਕਿਆ ਟਿਕਾ ਕਿਆ ਤਗੁ॥ (ਅੰਗ 467)

(ੲ) ਮਾਣਸ ਖਾਣੇ ਕਰਹਿ ਨਿਵਾਜ॥ਛੁਰੀ ਵਗਾਇਨਿ ਤਿਨ ਗਲਿ ਤਾਗ॥ (ਅੰਗ 471)

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਨੇ ਬਾਹਰੀ ਧਾਰਮਿਕ ਕਰਮਕਾਂਡਾਂ ਤੇ ਭੇਖ /ਦਿਖਾਵਿਆਂ ਤੋਂ ਵਰਜਿਆ ਹੈ।ਇਹ ਕਰਮਕਾਂਡ ਨਾ ਤਾਂ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਪਰਮਾਰਥ ਵੱਲ ਲਿਜਾਂਦੇ ਹਨ ਤੇ ਉਲਟਾ ਉਸਦੇ ਆਰਥਿਕ ਸ਼ੋਸ਼ਣ ਦਾ ਕਾਰਨ ਬਣਦੇ ਹਨ।ਇਸ ਲਈ ਪਰਮਾਰਥ ਨੂੰ ਪਾਉਣ ਲਈ ਇਹ ਸਭ ਵਿਅਰਥ ਹੈ।ਇੱਕ ਪਰਮਾਤਮਾ ਨੂੰ ਮਨ 'ਚ ਵਸਾ ਕੇ ਇਸ ਤਨ-ਮਨ ਨੂੰ ਅਜਿਹਾ ਬਣਾ ਲਵੋ ਕਿ ਕਿਸੇ ਤੀਰਥ ਉੱਤੇ ਜਾਣ ਦੀ ਲੋੜ ਹੀ ਨਾ ਪਵੇ:

ਮਨੁ ਮੰਦਰੁ ਤਨੁ ਵੇਸ ਕਲੰਦਰੁ ਘਟ ਹੀ ਤੀਰਥਿ ਨਾਵਾ॥
ਏਕੁ ਸ਼ਬਦੁ ਮੇਰੈ ਪ੍ਰਾਨਿ ਬਸਤੁ ਹੈ ਬਾਹੁੜਿ ਜਨਮਿ ਨ ਆਵਾ॥ (ਅੰਗ 795)

ਜੀਵਨ ਕਿਹੋ ਜਿਹਾ ਹੋਵੇ?ਔਗੁਣਾਂ ਦਾ ਤਿਆਗ ਕਰਕੇ ਗੁਣ ਭਰਪੂਰ ਹੋਵੇ। ਜੇ ਗੁਣ ਕਿਸੇ ਹੋਰ ਕੋਲ ਹਨ,ਤਾਂ ਬਿਨਾਂ ਕਿਸੇ ਸੰਗ/ਸ਼ਰਮ ਤੋਂ ਦੂਜੇ ਤੋਂ ਲੈਣੇ ਚਾਹੀਦੇ ਹਨ ਤੇ ਆਪਣਾ ਜੀਵਨ ਸੁਚੱਜਾ ਬਣਾਉਣਾ ਚਾਹੀਦਾ ਹੈ:

ਗੁਣਾ ਕਾ ਹੋਵੈ ਵਾਸੁਲਾ ਕਢਿ ਵਾਸੁ ਲਈਜੈ॥
ਜੇ ਗੁਣ ਹੋਵਨਿ ਸਾਜਨਾ ਮਿਲਿ ਸਾਝ ਕਰੀਜੈ॥
ਸਾਝ ਕਰੀਜੈ ਗੁਣਹ ਕੇਰੀ ਛੋਡਿ ਅਵਗਣ ਚਲੀਐ॥(ਅੰਗ 765-766)

ਬਾਣੀ ਅਨੁਸਾਰ ਸੁਚੱਜੀ ਜੀਵਨ ਜਾਚ ਗੁਰੂ ਹੀ ਸਿਖਾਉਂਦਾ ਹੈ,ਇਸ ਵਿੱਚ ਗੁਰੂ ਧਾਰਨ ਕਰਨ ਉੱਤੇ ਜ਼ੋਰ ਦਿੱਤਾ ਗਿਆ ਹੈ।ਪਰ ਗੁਰੂ ਬਣਨਾ ਹਰ ਕਿਸੇ ਦੇ ਵੱਸ ਵਿੱਚ ਨਹੀਂ ਹੁੰਦਾ । ਗੁਰੂ ਉਹ ਹੀ ਬਣਨ/ਬਣਾਉਣ ਦੇ ਯੋਗ ਹੈ,ਜੋ ਸਹੀ ਰਸਤਾ ਦਿਖਾ ਸਕੇ।ਕਿਤੇ ਇਹ ਨਾ ਹੋਵੇ ਕਿ ਗੁਰੂ ਗਿਆਨ ਤੋਂ ਹੀਣਾ ਹੋਵੇ ਤੇ ਉਸਦੇ ਲੜ ਲੱਗ ਸਾਡੀ ਵੀ ਬੇੜੀ ਰਸਤੇ ਵਿੱਚ ਹੀ ਡੁੱਬ ਜਾਵੇ। ਅੱਜਕਲ੍ਹ ਸਮਾਜ ਵਿੱਚ ਅਜਿਹੇ ਅਖੌਤੀ ਗੁਰੂ ਬਥੇਰੇ ਮਿਲ ਜਾਂਦੇ ਹਨ,ਜੋ ਲੋਕਾਂ ਦੀ ਲੁੱਟ ਕਰਕੇ,ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੀ ਕਮਾਈ ਨਾਲ ਆਪ ਐਸ਼ੋ-ਇਸ਼ਰਤ ਦਾ ਜੀਵਨ ਗੁਜ਼ਾਰਦੇ ਹਨ।ਬਥੇਰਿਆਂ ਦੇ ਪਾਜ ਉੱਘੜ ਵੀ ਜਾਂਦੇ ਹਨ ਤੇ ਬਹੁਤੇ ਆਪਣੀਆਂ ਲੁੱਟ ਦੀਆਂ ਦੁਕਾਨਾਂ ਧਾਰਮਿਕ ਸਥਾਨ ਦੇ ਨਾਂ 'ਤੇ ਚਲਾਈ ਜਾਂਦੇ ਹਨ।ਪਰ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਸਾਹਿਬ ਨੇ ਇਨ੍ਹਾਂ ਅਖੌਤੀ ਗੁਰੂਆਂ ਪ੍ਰਤਿ 14ਵੀਂ-15ਵੀਂ ਸਦੀ ਵਿੱਚ ਹੀ ਲੋਕਾਈ ਨੂੰ ਸੁਚੇਤ ਕਰ ਦਿੱਤਾ ਸੀ:

ਅੰਧਾ ਆਗੂ ਜੇ ਥੀਐ ਕਿਉ ਪਾਧਰੁ ਜਾਣੈ॥
ਆਪਿ ਮੁਸੈ ਮਤਿ ਹੋਛੀਐ ਕਿਉ ਰਾਹੁ ਪਛਾਣੈ॥
ਕਿਉ ਰਾਹਿ ਜਾਵੈ ਮਹਲੁ ਪਾਵੈ ਅੰਧ ਕੀ ਮਤਿ ਅੰਧਲੀ॥ (ਅੰਗ 767)

ਜੇ ਗੁਰੂ ਸੱਚਾ ਹੋਵੇਗਾ,ਤਾਂ ਹੀ ਮੰਜ਼ਲ ਨੂੰ ਪਾਇਆ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ।ਫਿਰ ਚਾਹੇ ਉਹ ਦੁਨਿਆਵੀ ਮੰਜ਼ਲ ਹੋਵੇ,ਚਾਹੇ ਅਧਿਆਤਮਿਕ।ਕਿਉਂਕਿ ਗੁਰੂ ਦਾ ਕਾਰਜ ਰਸਤਾ ਦਿਖਾਉਣਾ ਹੈ।ਜਿਸ ਰਾਹ ਉੱਤੇ ਕੋਈ ਆਪ ਤੁਰਿਆ ਹੋਵੇਗਾ,ਉਸ ਬਾਰੇ ਹੀ ਉਹ ਦੱਸ ਸਕਦਾ ਹੈ।ਗੁਰੂ ਦਾ ਕਾਰਜ ਵੀ ਅਜਿਹਾ ਹੀ ਹੈ।ਉਸਨੇ ਹਨ੍ਹੇਰੇ ਤੋਂ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ ਵੱਲ ਲੈ ਕੇ ਜਾਣਾ ਹੈ।ਉਹ ਤਾਂ ਹੀ ਲਿਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ,ਜੇ ਉਹ ਆਪ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ ਵਿੱਚ ਹੋਵੇ।ਇਸੇ ਲਈ ਅਖੌਤੀ ਗੁਰੂਆਂ ਦੀ ਬਜਾਇ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਸੱਚੇ ਗੁਰੂ ਨੂੰ ਪ੍ਰਵਾਨ ਕੀਤਾ ਹੈ:

(ੳ) ਸਾਚੇ ਗੁਰ ਕੀ ਸਾਚੀ ਸੀਖ॥ਤਨੁ ਮਨੁ ਸੀਤਲੁ ਸਾਚੁ ਪਰੀਖ॥ (ਅੰਗ152)

(ਅ) ਬਿਨੁ ਗੁਰ ਅਰਥੁ ਬੀਚਾਰੁ ਨ ਪਾਇਆ॥(154)

(ੲ) ਬਿਨੁ ਸਤਿਗੁਰ ਕਿਨੈ ਨ ਪਾਇਓ ਬਿਨੁ ਸਤਿਗੁਰ ਕਿਨੈ ਨ ਪਾਇਆ॥(ਅੰਗ466)

(ਸ)ਕੁੰਭੇ ਬਧਾ ਜਲੁ ਰਹੈ ਜਲ ਬਿਨੁ ਕੁੰਭੁ ਨ ਹੋਇ॥
ਗਿਆਨ ਕਾ ਬਧਾ ਮਨੁ ਰਹੈ ਗੁਰ ਬਿਨੁ ਗਿਆਨੁ ਨ ਹੋਇ॥ (ਅੰਗ 469)

ਪਰਮਾਤਮ ਤੱਕ ਪਹੁੰਚ ਕਰਨ ਲਈ ਆਤਮ ਨੂੰ ਵਿਕਾਰਾਂ ਤੋਂ ਮੁਕਤ ਕਰਨਾ ਹੈ।ਇਸਦੀ ਥਾਂ ਮਨੁੱਖੀ-ਆਤਮ ਫੋਕੇ ਕਰਮਕਾਂਡਾਂ ਵਿੱਚ ਹੀ ਗ੍ਰਸਿਆ ਹੋਇਆ ਹੈ।ਆਪਣੇ ਨਾਲੋਂ ਵੱਧ ਉਸਨੂੰ ਦੂਜਿਆਂ ਦੀ ਫ਼ਿਕਰ ਹੈ।ਇਹ ਫ਼ਿਕਰ ਦੂਜਿਆਂ ਦੀ ਭਲਾਈ ਨਹੀਂ ਸਗੋਂ ਉਸਨੂੰ ਨੀਚਾ ਦਿਖਾਉਣ ਵਿੱਚ ਵਿਅਸਤ ਰਹਿੰਦੀ ਹੈ।ਇਸ ਨਾਲ ਦੂਜੇ ਦਾ ਵਿਗੜਦਾ ਕੁਝ ਨਹੀਂ ,ਹਾਂ ਨਿੰਦਿਆ,ਚੁਗਲੀ ਕਰਨ ਵਾਲੇ ਦਾ ਬਣਦੀ ਕੁਝ ਨਹੀਂ।ਪਰ ਉਹ ਕਿਸੇ

ਭੁਲੇਖੇ ਵਿੱਚ ਅਜਿਹੇ ਕਰਮਾਂ ਵਿੱਚ ਉਲਝਿਆ ਰਹਿੰਦਾ ਹੈ।ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਸਾਹਿਬ ਕਹਿੰਦੇ ਹਨ ਕਿ ਨਿੰਦਿਆ,ਚੁਗ਼ਲੀ,ਪਰ-ਇਸਤਰੀ ਗਮਨ,ਚੋਰੀ ਤੇ ਬੁਰਾਈਆਂ ਨਾਲ ਨਾ ਇਸ ਲੋਕ ਵਿੱਚ ਸ਼ੋਭਾ ਮਿਲਣੀ ਹੈ ਅਤੇ ਨਾ ਹੀ ਪਰਲੋਕ ਵਿੱਚ:

(ੳ)ਨਿੰਦਾ ਚਿੰਦਾ ਕਰਹਿ ਪਰਾਈ ਝੂਠੀ ਲਾਇਤਬਾਰੀ॥
ਵੇਲਿ ਪਰਾਈ ਜੋਹਹਿ ਜੀਅੜੇ ਕਰਹਿ ਚੋਰੀ ਬੁਰਿਆਰੀ॥
....
ਹਲਤਿ ਨ ਸੋਭਾ ਪਲਤਿ ਨ ਢੋਈ,ਅਹਿਲਾ ਜਨਮੁ ਗਵਾਇਆ॥(ਅੰਗ 155)

ਜੋ ਸੱਚੇ ਸਾਧਕ ਹਨ,ਉਕਤ ਵਿਕਾਰਾਂ ਤੋਂ ਮੁਕਤ ਹਨ ਅਤੇ ਚੁਸਤ ਚਲਾਕੀਆਂ ਕਰਨ ਵਾਲੇ ,ਉਕਤ ਵਿਕਾਰਾਂ ਯੁਕਤ ਮਨੁੱਖ ਹਾਰ ਜਾਂਦੇ ਹਨ।ਜੋ ਨਾਮ ਦੇ ਰੰਗ ਵਿੱਚ ਰੰਗੇ ਹਨ,ਉਹ ਜੀਵਨ ਰੂਪ ਬਾਜ਼ੀ ਜਿੱਤ ਜਾਂਦੇ ਹਨ:

ਤੇਰੈ ਨਾਇ ਰਤੇ ਸੇ ਜਿਣਿ ਗਏ ਹਾਰਿ ਗਏ ਸਿ ਠਗਣ ਵਾਲਿਆ॥ (ਅੰਗ 463)

ਇਸੇ ਲਈ ਪਹਿਲਾਂ ਤੋਂ ਹੀ ਆਪਣੇ ਕਰਤੱਵਾਂ ਨੂੰ ਪਛਾਣੋ,ਤਾਂ ਜੋ ਬਾਅਦ ਵਿੱਚ ਪਛਤਾਉਣਾ ਨਾ ਪਵੇ।ਕਿਉਂਕਿ ਜਿਹੋ ਜਿਹੇ ਕਰਮ ਕਰਾਂਗੇ,ਉਹੋ ਜਿਹਾ ਫਲ਼ ਤਾਂ ਭੋਗਣਾ ਹੀ ਪੈਣਾ।ਇਸ ਲਈ ਜੇ ਮਾੜੇ ਕਰਮਾਂ ਦੀ ਸਜ਼ਾ ਮਿਲੂਗੀ ਤਾਂ ਉਸ ਦਾ ਜਿੰਮੇਵਾਰ ਪਰਮਾਤਮਾ ਨਹੀਂ , ਖ਼ੁਦ ਜੀਵਆਤਮਾ ਹੀ ਹੋਵੇਗੀ:

ਅਗੋ ਦੇ ਜੇ ਚੇਤੀਐ ਤਾਂ ਕਾਇਤੁ ਮਿਲੈ ਸਜਾਇ॥(ਅੰਗ 417)

ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਨੇ ਝੂਠ,ਚੋਰੀਆਂ,ਰਿਸ਼ਵਤਖੋਰੀ,ਫ਼ਰੇਬ,ਧੋਖੇ ਨੂੰ ਛੱਡ ਕੇ ਕਿਰਤ ਕਰਨ ਦਾ ਉਪਦੇਸ਼ ਦਿੱਤਾ।ਕੇਵਲ ਉਪਦੇਸ਼ ਹੀ ਨਹੀਂ 10 ਸਾਲ ਕਰਤਾਰਪੁਰ ਵਿੱਚ ਖੇਤੀ ਕਰਕੇ ਕਿਰਤ ਕਰਨ ਦੀ ਮਿਸਾਲ ਵੀ ਕਾਇਮ ਕੀਤੀ।ਦਸਾਂ ਨਹੁੰਆਂ ਦੀ ਆਪਣੀ ਮਿਹਨਤ ਮੁਸ਼ੱਕਤ ,ਈਮਾਨਦਾਰੀ ਨਾਲ ਕੀਤੀ ਕਿਰਤ ਹੀ ਸਕੂਨ ਦਿੰਦੀ ਹੈ।ਧੋਖੇ/ਫ਼ਰੇਬ ਪੈਸਾ ਤਾਂ ਦੇ ਦੇਣਗੇ ,ਪਰ ਨਾਲ ਹੀ ਮਨ ਦੀ ਸ਼ਾਂਤੀ ਖੋਹ ਲੈਂਦੇ ਹਨ।ਮਨ ਦੀ ਅਸ਼ਾਂਤੀ ਹੀ ਅੱਜਕਲ੍ਹ ਕਿੰਨੀਆਂ ਬਿਮਾਰੀਆਂ ਦਾ ਰੂਪ ਧਾਰਨ ਕਰ ਚੁੱਕੀ ਹੈ।**Depression,Insomia** ਆਦਿ ਰੋਗ ਵਧਦੇ ਹੀ ਜਾ ਰਹੇ ਹਨ।ਡਾ. ਸਰਬਜੀਤ ਕੌਰ ਸੋਹਲ ਲਿਖਦੇ ਹਨ,"ਵਰਤਮਾਨ ਸਮੇਂ ਦੇ ਇਸ ਤਣਾਉ ਦੇ ਦੌਰ ਵਿੱਚ ਜਿੱਥੇ ਤਮਾਮ ਸਮਾਜਿਕ ,ਸੱਭਿਆਚਾਰਿਕ , ਵਿਗਿਆਨਿਕ ਪ੍ਰਾਪਤੀਆਂ ਦੇ ਬਾਵਜੂਦ ਜੀਵਨ ਦੀ ਭਟਕਣ ਅਤੇ ਸਮੱਸਿਆਂਵਾਂ ਵਿੱਚ ਦਿਨ ਪ੍ਰਤਿ ਦਿਨ ਵਾਧਾ ਹੋ ਰਿਹਾ ਹੈ,ਅਜਿਹੇ ਸਮੇਂ ਵਿਅਕਤੀ ਬੇਗ਼ਾਨਗੀ ਦੇ ਅਹਿਸਾਸ ਤੋਂ ਅਤੇ ਤਣਾਉ ਤੋਂ ਮੁਕਤ ਹੋਣ ਲਈ ਜਿਸ ਦਰਸ਼ਨ ਦੀ ਤਲਾਸ਼ ਵਿੱਚ ਹੈ,ਉਹ ਉਪਰੋਕਤ ਵਿਚਾਰਧਾਰਾ ਵਿੱਚ ਹੀ ਉਪਲੱਬਧ ਹੈ।"2ਇਸ ਭਟਕਣ ਦਾ ਕਾਰਨ ਅਸੀਂ ਮਿਹਨਤ ਨਹੀਂ ਕਰਦੇ,ਆਪਣੇ ਕੰਮਾਂ ਵਿੱਚ ਸਾਡੀ ਖ਼ੁਸ਼ੀ ਨਹੀਂ,ਅਸੀਂ ਸਿਰਫ਼ ਪੈਸੇ ਕਾਰਨ ਉਹ ਕੰਮ ਕਰ ਰਹੇ ਹੁੰਦੇ ਹਾਂ।ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਕਹਿੰਦੀ ਹੈ ਕਿ ਫਿਰ ਪਛਤਾਉਣ ਦਾ ਕੋਈ ਫ਼ਾਇਦਾ ਨਹੀਂ,ਕਿਉਂਕਿ ਜਿਹੋ ਜਿਹਾ ਕਰਮ ਕਰਾਂਗੇ ਉਹੋ ਜਿਹਾ ਫਲ਼ ਤਾਂ ਭੋਗਣਾ ਹੀ ਪੈਣਾ:

ਜੈਸਾ ਬੀਜੈ ਸੋ ਲੁਣੇ ਜੋ ਖਟੇ ਸੁੋ ਖਾਇ॥(ਅੰਗ 730)

ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਆਤਮ ਨੂੰ ਸਵਾਰਿਆ ਹੈ,ਜੋ ਚੰਗੇ ਗੁਣਾਂ ਦੇ ਮਾਲਕ ਹਨ,ਉਹ ਨਿਡਰ ਅਵਸਥਾ ਵਿੱਚ ਪਹੁੰਚ ਜਾਂਦੇ ਹਨ।ਜਿੱਥੇ ਕਿਸੇ ਦਾ ਡਰ ਨਹੀਂ,ਭੈ ਨਹੀਂ।ਪੰਜਾਬੀ ਦੀ ਇੱਕ ਅਖਾਣ ਵੀ ਹੈ-"ਅੰਦਰ ਹੋਵੈ ਸੱਚ ਤਾਂ ਕੋਠੇ ਚੜ੍ਹ ਕੇ ਨੱਚ।"ਨਿੰਦਿਆ/ਚੁਗ਼ਲੀ ਕਰਨ ਵਾਲਿਆਂ ਨੂੰ ਲੱਗਦਾ ਹੈ ਕਿ ਅਜਿਹਾ ਕਰਕੇ ਅਸੀਂ ਦੂਜੇ ਦੀ ਹੇਠੀ ਕਰ ਸਕਦੇ ਹਾਂ , ਪਰ ਮੂਰਖ ਇਸ ਗੱਲ ਤੋਂ ਅਨਜਾਣ ਹਨ ਕਿ ਅਜਿਹਾ ਕਰਕੇ ਉਹ ਆਪਣਾ ਕੀਮਤੀ ਸਮਾਂ ਨਸ਼ਟ ਕਰ ਰਹੇ ਹੁੰਦੇ ਹਨ।ਕਿਉਂਕਿ ਕੋਈ ਜਿੰਨਾ ਮਰਜ਼ੀ ਜ਼ੋੋਰ ਲਗਾ ਲਵੇ ਸੱਚ ਨੂੰ ਕਦੇ ਝੁਠਲਾਇਆ ਨਹੀਂ ਜਾ ਸਕਦਾ:

ਮੂਏ ਕਉ ਕਹੁ ਮਾਰੇ ਕਉਨੁ॥ਨਿਡਰੇ ਕਉ ਕੈਸਾ ਡਰੁ ਕਵਨ ॥ (ਅੰਗ 710)

ਬਾਣੀ ਵਿੱਚ ਧਾਰਮਿਕ ਪੁਸਤਕਾਂ ਦੇ ਮੁਕਾਬਲਤਨ ਪਰਮਾਤਮਾ ਦੇ ਨਾਮ ਸਿਮਰਨ 'ਤੇ ਬਲ ਦਿੱਤਾ ਗਿਆ ਹੈ।ਧਾਰਮਿਕ ਪੁਸਤਕਾਂ ਪੜ੍ਹਨ ਦਾ ਕਾਰਜ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇ ਸਮਕਾਲੀ ਪੰਡਿਤ ਕਰਦੇ ਸਨ।ਹੁਣ ਪੰਡਿਤਾਂ ਦੇ ਨਾਲ - ਨਾਲ

ਸਿੱਖ ਵੀ ਇਸੇ ਕੰਮ ਵਿੱਚ ਲੱਗੇ ਹੋਏ ਹਨ। ਗਿਣਤੀਆਂ ਕਰਕੇ ਪਾਠ ਕੀਤੇ ਜਾਂਦੇ ਹਨ,ਲੰਗਰ ਲਗਾਏ ਜਾਂਦੇ ਹਨ ਤੇ ਦਾਨ ਕੀਤੇ ਜਾਂਦੇ ਹਨ।ਅਜਿਹੇ ਕਾਰਜ ਹਉਮੈ ਹੀ ਪੈਦਾ ਕਰਦੇ ਹਨ।ਪਰ ਇਸਦਾ ਅਰਥ ਇਹ ਵੀ ਨਹੀਂ ਕਿ ਧਾਰਮਿਕ ਪੁਸਤਕਾਂ ਨੂੰ ਪੜ੍ਹਨਾ ਨਹੀਂ ਚਾਹੀਦਾ,ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੂੰ ਪੜ੍ਹਨਾ ਹੈ ਤੇ ਗਿਆਨ ਲੈ ਕੇ ਜੀਵਨ ਜਾਚ ਦਾ ਹਿੱਸਾ ਬਣਾਉਣਾ ਹੈ।ਜੇ ਪਰਮਾਤਮ ਤੱਕ ਪਹੁੰਚਣ ਲਈ ਨਾਮ ਸਿਮਰਨ ਆਵੱਸ਼ਕ ਹੈ ਤਾਂ ਨਾਮ ਸਿਮਰਨ ਲਈ ਵੀ ਮਨ ਦੀ ਖ਼ਾਸ ਅਵਸਥਾ ਚਾਹੀਦੀ ਹੈ,ਜੋ ਮੋਹ ਮਾਇਆ ਤੋਂ ਮੁਕਤ ਹੋਵੇ , ਇਸਨੂੰ ਪਾਉਣ ਲਈ ਪੜ੍ਹਤ ਲਾਜ਼ਮੀ ਹੈ; ਜਿੱਥੋਂ ਆਤਮ ਦੀ ਸੁਚੱਜੀ ਉਸਾਰੀ ਦੀ ਸੇਧ ਮਿਲਦੀ ਹੈ।ਸੋ ਕੇਵਲ ਪੜ੍ਹਤ ਤੱਕ ਸੀਮਿਤ ਨਹੀਂ ਰਹਿਣਾ ; ਅਮਲ ਵੀ ਜ਼ਰੂਰੀ ਹੈ।ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਫ਼ਰਮਾਉਂਦੇ ਹਨ:

ਪੜ੍ਹੀਐ ਜੇਤੀ ਆਰਜਾ ਪੜ੍ਹੀਅਹਿ ਜੇਤੇ ਸਾਸ॥
ਨਾਨਕ ਲੇਖੈ ਇਕ ਗੱਲ ਹੋਰੁ ਹਉਮੈ ਝਖਣਾ ਝਾਖ॥
ਲਿਖਿ ਲਿਖਿ ਪੜਿਆ॥ਤੇਤਾ ਕੜਿਆ॥ਬਹੁ ਤੀਰਥ ਭਵਿਆ॥
....
ਹਰਿ ਕਾ ਨਾਮੁ ਮੰਨਿ ਵਸਾਏ॥ਨਾਨਕ ਨਦਰਿ ਕਰੇ ਸੋ ਪਾਏ॥
(ਅੰਗ 467-468)

ਸਾਇੰਸ ਉਦੋਂ ਤੱਕ ਕਿਸੇ ਤੱਥ ਨੂੰ ਮੰਨਦੀ ਨਹੀਂ,ਜਦੋਂ ਤੱਕ ਉਸਦਾ ਪੂਰਾ ਨਿਰੀਖਣ ਨਾ ਕਰ ਲਿਆ ਜਾਵੇ।ਕਿਸੇ ਬਾਰੇ ਕੁਝ ਵੀ ਕਹਿਣਾ ਗ਼ਲਤ ਹੈ,ਜਦੋਂ ਤੱਕ ਤੁਸੀਂ ਉਸ ਬਾਰੇ ਨਹੀਂ ਜਾਣਦੇ।ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਵੀ ਇਸੇ ਸੋਚ ਦੀ ਧਾਰਨੀ ਹੋਣ ਕਾਰਨ ਸਾਇੰਸ ਨਾਲ ਨਜ਼ਦੀਕੀ ਰਿਸ਼ਤਾ ਰੱਖਦੀ ਹੈ।ਜਿਸਨੂੰ ਵਿਗਿਆਨੀ ਆਪਣੀਆਂ ਖੋਜਾਂ ਦਾ ਆਧਾਰ ਵੀ ਬਣਾ ਰਹੇ ਹਨ।ਕਿਸੇ ਬਾਰੇ ਕੁਝ ਵੀ ਬੋਲਣ ਤੋਂ ਪਹਿਲਾਂ ਸੋਚਣਾ ਸਮਝਣਾ ਵੀ ਆਤਮ ਦਾ ਇੱਕ ਪੱਖ ਹੈ;ਜਿਸ ਉੱਤੇ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਵਿੱਚ ਜ਼ੋਰ ਦਿੱਤਾ ਗਿਆ ਹੈ:

(ੳ) ਅਦਿਸਟੁ ਦਿਸੈ ਤਾ ਕਹਿਆ ਜਾਇ॥ਬਿਨੁ ਦੇਖੇ ਕਹਣਾ ਬਿਰਥਾ ਜਾਇ॥(ਅੰਗ 222)

(ਅ) ਅਣਡਿਠਾ ਕਿਛੁ ਕਹਣੁ ਨ ਜਾਇ॥ਕਿਆ ਕਰਿ ਆਖਿ ਵਖਾਣੀਐ ਮਾਇ॥ (ਅੰਗ 1256)

ਇਸੇ ਕਾਰਨ ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਖੋਜ ਕਰਨ 'ਤੇ ਜ਼ੋਰ ਦਿੱਤਾ ਹੈ।ਅਤਾਰਕਿਕ ਵਿਵਾਦ ਨੂੰ ਰੱਦ ਕੀਤਾ :

(ੳ) ਖੋਜੀ ਉਪਜੈ ਬਾਦੀ ਬਿਨਸੈ ਹਉ ਬਲਿ ਬਲਿ ਗੁਰ ਕਰਤਾਰਾ॥(ਅੰਗ 1255)

(ਅ) ਬਕਿ ਬਕਿ ਵਾਦੁ ਚਲਾਇਆ ਬਿਨੁ ਨਾਵੈ ਬਿਖੁ ਜਾਇ॥ (ਅੰਗ 1331)

ਸਮਾਜ ਵਿੱਚ ਰਿਸ਼ਵਤਖ਼ੋਰੀ ਤੇ ਭ੍ਰਿਸ਼ਟਤੰਤਰ ਦਾ ਜੋ ਬੋਲਬਾਲਾ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇ ਸਮੇਂ ਸੀ,ਉਹ ਅੱਜ ਵੀ ਉਸੇ ਤਰ੍ਹਾਂ ਕਾਇਮ ਹੈ,ਸਗੋਂ ਕਈ ਗੁਣਾਂ ਵੱਧ ਗਿਆ ਹੈ।ਅਜਿਹੇ ਰਿਸ਼ਵਤਖ਼ੋਰਾਂ ਦੀ ਸ਼ਕਲ ਹੀ ਮਨੁੱਖਾਂ ਵਰਗੀ ਹੈ,ਕਰਮ ਤਾਂ ਕੁੱਤਿਆਂ ਵਰਗੇ ਹੀ ਹਨ।ਇਸ ਭ੍ਰਿਸ਼ਟਤੰਤਰ ਨੇ ਗੁਣਾਂ ਦੀ ਕਦਰ ਘਟਾ ਦਿੱਤੀ ਹੈ;ਜਿਸ ਕਰਕੇ ਗੁਣਵਾਨ ਪਿੱਛੇ ਰਹਿ ਗਏ ਤੇ ਗੁਣਹੀਨ ਅੱਗੇ ਆ ਜਾਂਦੇ ਹਨ।ਅਜਿਹਾ ਗੁਣਾਂ ਤੋਂ ਹੀਣਿਆਂ ਦੇ ਹੱਥ ਜਦੋਂ ਸੰਸਥਾਵਾਂ ਸਮਾਜ , ਰਾਜ ਜਾਂ ਦੇਸ਼ ਦੀ ਵਾਗਡੋਰ ਆ ਜਾਂਦੀ ਹੈ;ਤਾਂ ਅਜਿਹੇ ਸਮਾਜ/ਦੇਸ਼ ਦੇ ਭਵਿੱਖ ਦਾ ਰੱਬ ਹੀ ਰਾਖਾ ਹੋ ਸਕਦਾ:

ਰਾਜਾ ਨਿਆਉ ਕਰੇ ਹਥਿ ਹੋਇ॥ ਕਹੈ ਖੁਦਾਇ ਨ ਮਾਨੈ ਕੋਇ॥
ਮਾਣਸ ਮੂਰਤਿ ਨਾਨਕੁ ਨਾਮੁ॥ ਕਰਣੀ ਕੁਤਾ ਦਰਿ ਫੁਰਮਾਨੁ॥(ਅੰਗ 350)

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਵਿੱਚ ਗਿਆਨ ਪ੍ਰਾਪਤੀ ਦਾ ਸਾਧਨ ਸਤਿਗੁਰੂ ਹੈ।ਗੁਰੂ ਦੇ ਗਿਆਨ ਦਾ ਮਾਧਿਅਮ ਸੰਵਾਦ ਹੈ।ਸੰਵਾਦ ਜਰੂਰੀ ਹੈ।ਇਹ ਸੰਵਾਦ ਸਵੈ ਤੇ ਪਰ ਤੱਕ ਸੀਮਿਤ ਨਾ ਰਹਿ ਕੇ ਅੰਤਰ ਧਰਮ ਸੰਵਾਦ ਹੈ,ਜਿਸਦਾ ਅਰੰਭ ਡਾ.ਸਰਬਜਿੰਦਰ ਸਿੰਘ ਨਾਨਕ ਨਾਲ ਹੋਇਆ ਮੰਨਦਿਆਂ ਲਿਖਦੇ ਹਨ,"ਪੈਗੰਬਰੀ/ਧਰਮ ਬਾਨੀ ਅਜ਼ਮਤ ਵਿੱਚ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਪਾਤਸ਼ਾਹ ਦੀ ਆਮਦ ਨਾਲ ਹੀ ਅੰਤਰ ਧਰਮ ਸੰਵਾਦ (ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ ਵਿਚਲੇ ਸਿਧਾਂਤਿਕ ਹਵਾਲੇ/ਅਮਲੀ ਰੂਪ ਲਈ ਉਦਾਸੀਆਂ ਉਪਰੋਕਤ ਦੀ ਪੁਸ਼ਟੀ ਹਿਤ)ਦਾ ਪ੍ਰਾਰੰਭ ਹੁੰਦਾ ਹੈ ਅਤੇ "ਕਿਛੁ ਸੁਣੀਐ ਕਿਛੁ ਕਹੀਐ"ਰਾਹੀਂ ਇਸਦਾ ਧਰਾਤਲ ਸਥਾਪਿਤ ਹੁੰਦਾ ਹੈ।"3ਇਸ ਸੰਵਾਦ ਦੀਆਂ ਤਿੰਨ ਪਰਤਾਂ ਹਨ:

(ੳ) ਜਬ ਤਕ ਦੁਨੀਆ ਰਹੀਐ ਨਾਨਕ ਕਿਛੁ ਸੁਣੀਏ ਕਿਛੁ ਕਹੀਏ
(ਅ) ਰੋਸ ਨ ਕੀਜੈ ਉਤਰ ਦੀਜੈ॥
(ੲ) ਮੂਰਖੈ ਨਾਲਿ ਲੁਝੀਐ॥(ਅੰਗ ੫੭੩)

ਦੁਨੀਆ ਦੀ ਰੀਤ ਕੀ ਹੈ- ਅੰਦਰੋਂ ਕੁਝ ਹੋਰ ਤੇ ਬਾਹਰੋਂ ਕੁਝ ਹੋਰ।ਕਿਸੇ ਬਾਰੇ ਸਹੀ ਅੰਦਾਜਾ ਲਗਾਉਣਾ ਬਹੁਤ ਮੁਸ਼ਕਲ ਹੈ।ਇਹ ਜਾਂ ਤਾਂ ਉਹ ਆਪ ਜਾਣਦਾ ਹੈ,ਜਾਂ ਪਰਮਾਤਮਾ ਤੇ ਜਾਂ ਫਿਰ ਉਹ ਜਾਣਦੇ ਹਨ ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਉਸ ਨਾਲ ਲੰਮਾ ਸਮਾਂ ਗੁਜ਼ਾਰਿਆ ਹੋਵੇ।ਬੇਸ਼ੱਕ ਕੋਈ ਇਸ ਢੌਂਗੀ ਨੂੰ ਪਛਾਣ ਨਹੀਂ ਪਾ ਰਿਹਾ , ਪਰ ਅਜਿਹੇ ਢੌਂਗ ਕਿਸੇ ਕੰਮ ਨਹੀਂ ਆਉਂਦੇ :

ਅੰਦਰਹੁ ਝੂਠੇ ਪੈਜ ਬਾਹਰਿ ਦੁਨੀਆ ਅੰਦਰਿ ਫੈਲੁ॥
ਅਠਸਠਿ ਤੀਰਥ ਜੇ ਨਾਵਹਿ ਉਤਰੈ ਨਾਹੀ ਮੈਲੁ॥
(ਅੰਗ 473)

ਜੰਮਣ ਮਰਣ ਸਮੇਂ ਦੀ ਅਖੌਤੀ ਅਪਵਿੱਤਰਤਾ ਦਾ ਵਿਰੋਧ ਕਰਦਿਆਂ ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਨੇ ਮਨੁੱਖੀ ਆਤਮ ਦੀਆਂ ਅਸਲ ਅਪਵਿੱਤਰਤਾਵਾਂ ਦੇ ਸਨਮੁੱਖ ਕਰਵਾਇਆ ਹੈ।ਪਤੀ-ਪਤਨੀ ਦੇ ਸੰਬੰਧਾਂ ਤੋਂ ਬਾਹਰ ਮਰਦ-ਇਸਤਰੀ ਦੇ ਸੰਬੰਧਾਂ ਵੱਲ ਸੰਕੇਤ ਕਰਕੇ ਆਤਮ ਦੀ ਆਚਰਣਿਕ ਉੱਚਤਾ ਦਾ ਸੰਦੇਸ਼ ਦਿੱਤਾ ਹੈ:

ਮਨ ਕਾ ਸੂਤਕੁ ਲੋਭੁ ਹੈ ਜਿਹਵਾ ਸੂਤਕੁ ਕੂੜੁ॥
ਅਖੀ ਸੂਤਕੁ ਵੇਖਣਾ ਪਰ ਤ੍ਰਿਅ ਪਰ ਧਨ ਰੂਪੁ॥ (ਅੰਗ 472)

ਇਸ ਲੋਭ ਲਾਲਚ ਦਾ ਕੀ ਫਾਇਦਾ ਜਦੋਂ ਇਸ ਸੰਸਾਰ ਵਿੱਚ ਥੋੜ੍ਹੇ ਸਮੇਂ ਲਈ ਆਏ ਹਾਂ ਤੇ ਫਿਰ ਇੱਥੋਂ ਚਲੇ ਜਾਣਾ ਹੈ।ਇਹ ਕੋਈ ਅਧਿਆਤਮਿਕ ਡਰਾਵਾ ਨਹੀਂ,ਸਗੋਂ ਵਿਗਿਆਨਿਕ ਸਚਾਈ ਹੈ।ਸੰਸਾਰਿਕ ਵਸਤਾਂ ਦਾ ਕਾਹਦਾ ਹੰਕਾਰ ਤੇ ਇਸ ਸਰੀਰ ਦਾ ਕਾਹਦਾ ਮਾਣ।ਜੇ ਮੌਤ ਨੂੰ ਯਾਦ ਰੱਖਿਆ ਜਾਵੇ ਤਾਂ ਇਸ ਜੀਵਨ ਨੂੰ ਵਧੀਆ ਬਣਾਇਆ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ,ਪਰ ਦੁਨੀਆਂ ਮੌਤ ਨੂੰ ਭੁੱਲੀ ਬੈਠੀ ਹੈ ਤੇ ਹਉਮੈਂ ਵਿੱਚ ਖਪਦੀ ਰਹਿੰਦੀ ਹੈ :(ੳ) ਖਾਣਾ ਪੀਣ ਹਸਣਾ ਸਉਣਾ ਵਿਸਰਿ ਗਿਆ ਹੈ ਮਰਣਾ॥(ਅੰਗ 1/54

(ਅ)ਇਸੁ ਤਨ ਧਨ ਕਾ ਕਹਹੁ ਗਰਬੁ ਕੈਸਾ॥(ਅੰਗ 1274)

ਨੇੜਲੇ ਰਿਸ਼ਤੇ ਨਾਤਿਆਂ ਤੋਂ ਪਰਿਵਾਰ , ਪਿੰਡ , ਸ਼ਹਿਰ,ਰਾਜ,ਦੇਸ਼,ਸਮਾਜ ਦੀਆਂ ਇਕਾਈਆਂ ਦਾ ਨਿਕਾਸ-ਵਿਕਾਸ ਹੋਇਆ।ਇਨ੍ਹਾਂ ਰਿਸ਼ਤੇ ਨਾਤਿਆਂ ਦਾ ਜ਼ਿਕਰ ਅਕਸਰ ਸੁਣਨ ਨੂੰ ਮਿਲਦਾ ਹੈ।ਇਸ ਪੱਖ ਤੋਂ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਦੀ ਵਿਲੱਖਣਤਾ ਆਤਮਿਕ ਪਰਿਵਾਰ ਦਾ ਵਿਆਖਿਆਨ ਹੈ,ਜੋ ਧੁਰ ਤੱਕ ਨਾਲ ਨਿਭੇਗਾ।ਦੁਨਿਆਵੀ ਰਿਸ਼ਤਿਆਂ ਨੇ ਤਾਂ ਮੌਤ ਤੋਂ ਬਾਅਦ ਖ਼ਤਮ ਹੋ ਜਾਣਾ ਹੈ,ਪਰ ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਰਿਸ਼ਤਿਆਂ ਦਾ ਜ਼ਿਕਰ ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਕਰ ਗਏ,ਉਹ ਸਦੀਵੀ ਹਨ:

ਮਾਤਾ ਮਤਿ ਪਿਤਾ ਸੰਤੋਖੁ॥ਸਤੁ ਭਾਈ ਕਰਿ ਏਹੁ ਵਿਸੇਖੁ॥ (ਅੰਗ 151)

ਇਨ੍ਹਾਂ ਸਾਰੇ ਗੁਣਾਂ ਨੂੰ ਧਾਰਨ ਕਰਕੇ ਹੀ ਆਤਮ ਦਾ ਪਰਮਾਤਮ ਨਾਲ ਮੇਲ ਸੰਭਵ ਹੈ।ਪਰਮਾਤਮਾ ਜੋ ਇੱਕ ਹੈ,ਉਸਦੇ ਬਰਾਬਰ ਦਾ ਕੋਈ ਦੂਜਾ ਨਹੀਂ , ਜਿਸਦਾ ਹੁਕਮ ਸਭ ਵਿੱਚ ਵਿਆਪਤ ਹੈ:

(ੳ) ਦੂਜਾ ਕਉਣੁ ਕਹਾ ਨਹੀਂ ਕੋਇ॥ਸਭ ਮਹਿ ਏਕ ਨਿਰੰਜਨ ਸੋਈ॥
ਏਕੋ ਹੁਕਮੁ ਵਰਤੈ ਸਭ ਲੋਈ ॥ਏਕਸੁ ਤੇ ਸਭ ਓਪਤਿ ਹੋਈ॥(ਅੰਗ 223)

ਸੋ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਨੂੰ ਅਧਿਆਤਮ ਤੱਕ ਸੀਮਿਤ ਕਰਕੇ ਪੜ੍ਹਨ ਦੀ ਥਾਂ ਆਤਮਸਾਤ ਕਰਨ ਦੀ ਜਰੂਰਤ ਹੈ ਤਾਂ ਕਿ ਸਮਾਜ ਨੂੰ ਉਸ ਦਿਸ਼ਾ ਵੱਲ ਮੋੜਿਆ ਜਾ ਸਕੇ,ਜਿਸਦਾ ਬਿੰਬ ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਨੇ ਆਪਣੀ ਬਾਣੀ ਵਿੱਚ ਸਿਰਜਿਆ ਹੈ।

ਹਵਾਲੇ ਤੇ ਟਿੱਪਣੀਆਂ

1. ਮਹਿੰਦਰ ਕੌਰ ਗਿੱਲ,ਬਾਣੀ ਚਿੰਤਨ,ਪੰਨਾ 15-16.
2. ਸਰਬਜੀਤ ਕੌਰ ਸੋਹਲ,"ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਦੀ ਅਜੋਕੇ ਪ੍ਰਸੰਗ ਵਿੱਚ ਸਾਰਥਕਤਾ",ਨਵਰੰਗ ਸਾਹਿਤਿਕ ਖੋਜ ਪਤ੍ਰਿਕਾ,ਪੰਨਾ 51.
3. ਸਰਬਜਿੰਦਰ ਸਿੰਘ,"ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦਾ ਧਰਮ ਅਤੇ ਅੰਤਰ ਧਰਮ ਸੰਵਾਦ",ਪੰਨਾ 11.

संत काव्य परम्परा और गुरु नानकदेव

* डॉ. बृजलता शर्मा

* बी. 130 सेक्टर 37, ग्रेटर नोएडा, जिला गौतम बुद्धनगर (उत्तरप्रदेश)

हिंदी साहित्य के मध्यकाल में भक्तिकाव्य का अपना विशिष्ट स्थान है। अब तक की इस सुदीर्घ यात्रा में से यदि भक्ति काव्य को निकाल दिया जाय, तो हिंदी साहित्य श्रीहत हो जाएगा। भक्ति के दो रूप प्रचलित हैं– सगुण और निर्गुण। दोनों धाराओं के भक्त कवि श्रेष्ठ हैं, दोनों धाराओं के कवियों को संत तथा भक्त कहा जाता है, तथापि निगुण कवियों को संत की संज्ञा दी जाती है।

विभिन्न विद्वानों ने भक्तिकाल का समय पृथक् – पृथक् निर्धारित किया है। परंतु अनेक विरोधाभासों के पश्चात् भी आचार्य रामचन्द्र शुक्ल द्वारा किया गया काल विभाजन लोकप्रिय है। इनके अनुसार भक्तिकाल का समय संवत् 1375 से संवत् 1700 (सन् 1318 से सन् 1643) मान्य है।1 आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के उपरान्त भक्तिकाल के समय और नामकरण पर अनेक विद्वानों ने विचार किया। बाबू गुलाब राय, आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, डॉ0 रामकुमार वर्मा, डॉ0 नगेन्द्र, डॉ0 गणपति चन्द्र गुप्त, डॉ0 शिवकुमार शर्मा प्रभृति विशेषज्ञ इन बिंदुओं पर गहरायीश, से विचार करते रहे और नये–नये तथ्य हिंदी साहित्य जगत को देते रहे। इन तमाम मनीषियों के विभिन्न मतों का निष्कर्ष यही निकलता है कि भक्ति के सगुण रूप से इतर निर्गुण भक्ति में आस्था रखने वाले कवियों को संत कहा गया है। आचार्य शुक्ल ने नामदेव एवं कबीर द्वारा प्रवर्तित भक्ति धारा को निर्गुण भक्ति साहित्य तथा डॉ0 रामकुमार वर्मा ने इसे सन्त काव्य परम्परा का नाम दिया है। ज्ञानाश्रयी शब्द से यह भ्रांति उत्पन्न होती है कि इस धारा के कवियों ने ज्ञानतत्व को सर्वाधिक महत्व दिया होगा, जबकि वास्तव में इन्होंने प्रेम के सम्मुख समस्त ज्ञान राशि को तुच्छ माना है। भक्ति का आलम्बन सगुण आश्रय ही उपयुक्त है। अतः निर्गुण भक्ति साहित्य का नाम असमीचीन प्रतीत होता है। इस धारा के कवियों का विशेष दृष्टिकोण है, जो संत शब्द से भली भांति व्यक्त होता है। अतः इस धारा को संत काव्य की संज्ञा देना अपेक्षाकृत संगत प्रतीत होता है।''2

संत मत का प्रारंभ दक्षिण भारत से माना जाता है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का मत है कि – भक्ति का जो स्त्रोत दक्षिण की ओर से धीरे – धीरे उत्तर भारत की ओर पहले से ही आ रहा था, उसे राजनीतिक परिवर्तन के कारण शून्य पड़ते हुए जनता के हृदय क्षेत्र में फैलने के लिए पूरा स्थान मिला।''3

दक्षिण भारत में जिस भक्ति आंदोलन ने जन्म लिया उसके मूल में आलवार संत थे। परन्तु गति प्रदान की रामानुजाचार्य ने। रामानुजाचार्य ने भक्ति के क्षेत्र में व्याप्त सामाजिक ऊँच–नीच की भावना को दूर किया और सबको ईश्वर की भक्ति करने के अधिकार का समर्थन किया। रामानुजाचार्य द्वारा प्रतिपादित भक्ति की इस नवीन अवधारणा से उत्तरी भारत उद्वेलित हुआ। इस उद्वेलन का कार्य किया काशी में जन्में रामानन्दाचार्य ने। वैष्णव भक्ति का प्रचार उन्होंने सगुण और निर्गुण दोनों रूपों में किया। दक्षिण में रामानुजाचार्य द्वारा प्रवर्तित भक्ति के रूप को रामानंदाचार्य ने ही उत्तरी भारत में स्थापित किया :

भक्ति द्राविड़ ऊपजी, लाये रामानन्द।
परगट कियों कबीर ने सप्तद्वीप नौखण्ड।।

रामानन्द के शिष्यों में सगुणोपासक भक्त भी थे और निर्गुणोपासक संत भी। इनके सहस्त्रों शिष्यों में से बारह प्रमुख शिष्य कहे जाते हैं – कबीर, पीपा, रैदास धना, सेन, अनन्तानन्द, सुखानन्द, सुरसुरानन्द, नरहर्यानन्द, योगानन्द, पद्मावती एवं सुरसरि :

अनन्तानंद, कबीर, सुखा, सुरसुरा, पदमावति नरहरि।
पीपा योगानन्द, रैदासु, धना, सेन, सुरसरि की धरहरि।[4]

रामानन्द के शिष्यों ने भारत के विभिन्न भागों का भ्रमण किया और रामानन्द के सिद्धान्तों का प्रचार – प्रसार किया। ''अपना अंतिम समय निकट जानकर स्वामी रामानन्द जी ने सम्पूर्ण देश के अन्दर इस नवजागरण अभियान के भक्तिस्वरूप को दिशा देने हेतु अपने शिष्यों में से अनेक को देश के विभिन्न स्थानों पर जाकर वहाँ गादी निर्माण करने का आदेश किया। इनमें से सुरसरानन्द को पंजाब, भावानन्द को दक्षिण भारत, नरहर्यानंद को उत्कल, गाल्वानंद को कश्मीर, पीपा तथा योगानन्द को गुर्जर प्रदेश, धना, कबीर, रैदास, सेन तथा अनंतानन्द को काशी में रहकर ही धर्म एवं भक्ति के प्रचार हेतु निर्देशित किया। 5

संत परंपरा में अनेक भक्तों व संतों ने भक्ति के प्रचार के लिए एक आंदोलन ही खड़ा कर दिया। इसी परम्परा में गुरु नानकदेव ने पंजाब में जो सत्कार्य किया उसने भक्ति आन्दोलन की दिशा ही बदल दी।

संत 'सरल चित' होते हैं और 'जगत हित' उनका ध्येय होता है। संत परम्परा में जो संत हुए हैं, उनकी जीवन–चर्या ने समाज को गहरे तक प्रभावित किया।

तत्समय में देश की सामाजिक, राजनैतिक और धार्मिक परिस्थितियाँ अत्यन्त विषम थीं। मुसलमानों का शासनकाल था, जो निर्दोष हिंदू जनता पर असहनीय अत्याचार कर रही थी। इसलाम के प्रचार–प्रसार के लिए तलवार का प्रयोग करना और मंदिरों को ढहाना तथा मूर्तियों का भंजन करना इनके लिए सहज बात थी। हिन्दू समाज निष्क्रिय, निष्प्राण और किंकर्तव्य विमूढ़ था। छुआछूत और ऊँच–नीच से एवं पाखण्डी रीति–नीतियों से समाज पतन के गर्त में जा रहा था। असहाय आम जन सोच नहीं पा रहा था कि क्या करें!

इन संत कवियों ने जाति, वर्ण एवं वर्ग–भेद से प्रसूत द्वेष और वैमनस्यता को दूर करने का प्रयास किया साथ ही सद्भाव एवं सदाचारण पर बल दिया। धर्म के क्षेत्र में इन्होंने आडंबरों का विरोध किया। तीर्थ, वेद–पाठ, छुआछूत, रोजा–नमाज, बलि प्रथा, माला, मंदिर–मस्जिद विवाद, मांसाहार, जुआ, वैश्यागमन, व्याभिचार आदि जितनी भी विकृतियाँ हो सकती हैं, उन सब पर कठोर प्रहार करते हुए इनसे बचने का संदेश दिया। निर्गुण ब्रह्म की उपासना, सदाचार, गुरु सत्ता को सर्वोच्च पद प्रदान करना, शाकाहार, ज्ञान की अपेक्षा प्रेम का प्राधान्य आदि संत मत के प्रमुख आधार हैं। संत परंपरा में सभी संत सभी जातियों के थे। इनमें कबीर की भाँति कुछ तो 'मसि कागज छूयो नहीं, कलम गही न हाथ' वर्ग के थे और कुछ शिक्षा प्राप्त थे। परन्तु जो अनपढ़ थे, उनका प्रभामण्डल इतना आकर्षक था कि सुल्तान और शाह जैसे बलशाली भी उनके सम्मुख नतमस्तक होते थे। संत परम्परा में अनेक संत ऐसे हुए हैं जिनके नाम और मत की स्थापना में उनके अनुयायियों ने गादियाँ स्थापित की तथा अपने पंथ व मठों के संचालन के लिए नियम–उपनियम निर्धारित किये।

परंतु गुरु नानक देव जी ने न तो कोई मठ स्थापित किया और न किसी गादी की प्रतिष्ठा की। कबीर की भाँति ये निरक्षर नहीं थे अपितु इनकी शिक्षा–दीक्षा हुई थी। परन्तु 'पूत के पाँव पालने में दिख जाते हैं' कहावत नानक देव जी ने सिद्ध कर दी। आपकी औपचारिक विद्यालयीन शिक्षा सामान्य ही रही। परमात्मा को जानने के प्रश्न पर इनका शिक्षक निरूत्तर हो गया और ससम्मान इन्हें इनके घर तक छोड़ आया। हिंदू बालक होने के कारण ग्यारह वर्ष की अवस्था में इनका यज्ञोपवीत संस्कार किया गया। परन्तु नानक जी ने जनेऊ न पहनकर किशोरवय में ही अपनी विद्राही प्रकृति का परिचय दे दिया। घर पर रहकर इन्होंने हिंदू और इसलाम धर्म का गहन अध्ययन किया। इस अध्ययन से उन्हें दोनों धर्मों की अच्छाइयों और बुराइयों को समझने में सहायता प्राप्त हुई, फलतः वे साधुओं एवं मौलवियों के पाखंडों पर प्रश्नचिह्न लगाने लगे।

सोलह वर्ष की अवस्था में नानक जी का विवाह गुरदास पुर जिले के लाखौकी नामक ग्राम में हुआ और बत्तीस वर्ष की अवस्था में इनके प्रथम पुत्र का जन्म हुआ। चार वर्ष के उपरान्त इनके दूसरे पुत्र का जन्म हुआ। इनके पश्चात् सन् 1507 में वे अपने घर परिवार से मोह माया छोड़कर में मरदाना, लहना, बाला तथा रामदास– इन चार साथियों सहित देशाटन को निकल पड़े। नानक देव जी ने ये जो यात्राएँ की उन्हें पंजाबी में 'उदासियाँ कहा जाता है। इन उदासियाँ में नानक देव जी ने अपने संदेशों को प्रसारित किया। इनके साथियों ने नानकदेव जी का भरपूर सहयोग किया।

भारतीय समाज में एक विचित्र परम्परा प्रचलित है। किसी महापुरूष के जीवन में अद्भुत और अलौकिक घटना घटती है तो उसे अन्य महापुरूषों के साथ जोड़कर उसे प्रचारित कर दिया जाता है। अनेक महापुरूषों के साथ ऐसी घटनाऐं जुड़ने से उसका मूल चरित्र नायक विलुप्त हो जाता है। गुरु नानक देव जी के साथ भी ऐसा ही हुआ। पूर्वजों को नदी में तर्पण करते देख नानक जी नदी से पानी उछालने लगे। लोगों के पूछने पर उन्होंने कहा कि इतनी दूरी पर बैठे पूर्वजों को जब पानी मिल सकता है तो एक कोस दूर हमारे खेतों को पानी क्यों नही ंमिल सकता?

यह ऐतिहासिक घटना गुरु नानक देव जी के जीवन में घटित हुई थी। परन्तु श्रद्धालु अनुयायियों ने इसे नानकदेव से लगभग 70 वर्ष पूर्व उपस्थित कबीर के जीवन से जोड़ दिया। इतना ही नहीं, यही घटना संत रैदास, सुंदरदास, पीपा, घना तथा अन्यान्य संतो ंके जीवन से जोड़ दी गयीं।

गुरु नानक जी देव ने अपने अनुयायियों को जो उपदेश दिए, उन्हें इन दस शिक्षाओं के अंतर्गत परिगणित किया जा सकता है :

01. ईश्वर एक है।

02. अनेकेश्वरवादी मत बनो। सदा एक ही ओंकार नाम ईश्वर की उपासना करो।

03. यह ईश्वर प्रत्येक जगह है और प्रत्येक प्राणी में है।

04. जो सच्चे हृदय से ईश्वर की भक्ति में लीन होता है, वह अभय होता है।

05. उदरपूर्ति के साधन सात्विक और श्रम से परिपूर्ण होने चाहिए।

06. किसी का बुरा करने और किसी को सताने के विचार ही चित्त में न आने चाहिए।

07. ईश्वर से क्षमा मांगते हुए सदैव प्रसन्न रहना चाहिए।

08. अपने श्रम से उपार्जित संपत्ति में से जरूरतमंदों की मदद करनी चाहिए।

09. स्त्री पुरूष सब उस ईश्वर के हैं, सब समान हैं।

10. संग्रही वृत्ति मनुष्य को पतन की ओर ले जाती है इसलिए लोभ–लालच व संग्रहवृत्ति से बचें।

मध्यकाल के संत केवल कवि ही नहीं थे, अपितु समाज सुधारक भी थे। कबीर आदि संत कवियों ने समाज में व्याप्त ऊँच–नीच की भावना पर केवल कठोर प्रहार किये। प्रहार नानक देव जी ने भी किये –

जाति का गरबु न करीअहु कोई।
ब्रहमु बिंदे सो ब्राह्मण होई।।
जाति का गरबु न करिमूरख गंवारा।
इस गरब ते चलहि बहुतु विकारा।।
चारे वरन आखै सभु कोई।
ब्रह्म बिंद ते सभ ओपति होई।।
माटी एक सगल संसारा।
बहु बिधि भांडे घड़ै कुम्हारा।।
पंच ततु मिलि देही का आकारा।
घटि वधि को करै बीचारा।। 6

परन्तु अन्यों की अपेक्षा नानक जी का प्रहार कुछ सौम्य है। इसी तथ्य को कहते हुए कबीर आक्रोश में मर्यादा का उल्लंघन कर जाते हैं :

तूं बांभन जो बंभनी जाया
आन बाट हवै क्यों नहिं आया?
तूँ जो तुरूक तुरिकिनी जाया।
भीतर सुन्नत क्यों न कराया।। 7

गुरु नानक देव जी ने कबीर जैसा अक्खड़यन नहीं है। इनकी सौम्यता और सहजता इनके काव्य में भी प्रतिबिंबित होती है। डॉ0 शिवकुमार शर्मा का मतह" कि ''वे बहुश्रुत तथा निजी अनुभव के धनी थे। वे निराकार वादी थे। उन्होंने अवतारवाद, मूर्ति पूजा, ऊँच–नीच और वर्णभेद का विरोध किया है। हिंदू–मुसलिम एकता के लिए तथा ब्रह्म की प्राप्ति के लिए सीधे–सादे उपदेश दिये। उनमें कहीं भी वक्रता और खंडनात्मकता नहीं है।'' 8

नानक जी का जैसा सरल–सहज व्यक्तित्व था, वैसा ही सरल और सहज बोधगम्य उनका काव्य है। कबीर की भाँति न तो उनमें उलटबाँसियाँ हैं और न ही बुद्धि–विलास है। यही कारण है कि उनकी कविता और उनके काव्यमय उपदेश आज भी जनकल्याण के लिए प्रासंगिक हैं।

संदर्भ

1. हिन्दी साहित्य का इतिहास : आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, पृ0 210
2. हिन्दी साहित्य : युग और प्रवृत्तियाँ : डॉ0 शिवकुमार शर्मा, पृ0 187
3. हिंदी साहित्य का इतिहास : आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, पृ0 192
4. भक्तमाल : नाभादास,
5. भारत की संत काव्य परम्परा और सामाजिक समरसता : कृष्ण गोपाल शर्मा , पृ0 141
6. श्री गुरु ग्रंथ साहिब, महला – 1 पृ0 1127–1128
7. कबीर ग्रंथावली : संपा0 – डॉ0 श्यामसुंदर दास
8. हिंदी साहित्य : उद्‌भव और विकास : डॉ0 शिवकुमार शर्मा, पृ0 158

INDIAN CULTURE AND GURU NANAK DEV

* *Ms. Babita Pundeer*

* Asstt.Professor, Methodist Girls' PG College, Roorkee (Uttarakhand)

"Before becoming a Muslim, a Sikh, a Hindu or a Christian let's become a human first".

Guru Nanak Dev Ji

The culture of India refers collectively to the thousands of distinct and unique cultures of all religious and communities present in India. India's languages, religions, dance, music, architecture, food and customs differ from place to place within the country. Indian culture, often labeled as an amalgamation of several cultures, spans across the Indian subcontinent and has been influenced by a history that is several millennial old.

Many elements of India's diverse cultures, such as Indian religions, philosophy, cuisine, language, martial arts, dance, music and movies have a profound impact across the Indosphere, greater India and the world.

Guru Nanak Dev ji was the founder of Sikhism and also the first guru of Sikhism. He was a good preacher and also famous for his teachings. We can relate all his teachings with our culture because his teachings are important for all religions, humanity, equality, women etc which we can also see in our Indian culture.

Humanity:

Guru Nanak's preaching came at a time when there were conflicts between various religions. Mankind was so intoxicated with pride and ego that people had started fighting against each other in the name of God and religion hence Guru Nanak began his teaching by saying that there are no Hindus and no Muslims. This implies the fact that god is one and that he is only seen differently through various religions. Guru Nanak's teachings, although not intended, contributed to the unity of Hindus and Muslims to the extent. He also emphasized on the importance of equality of mankind. He commanded slavery and racial discrimination and said that all are equal.

Guru Nanak's teaching and our culture both are depend on humanity like Guru Nanak gave emphases on humanity. He said humanity is the first religion of any person if we don't have humanity we are not human in this sense. So as our Indian culture is based on humanity because if there is no humanity in Indian culture there is no connection with each other.

Religion and Guru Nanak Dev ji :

India is a country of unity and diversity. If we are talking about religion so there are many religion like Hindu, Muslim, Sikh and Christian etc but despite all this we live unitedly in our country. Guru Nanak also gave his religious teaching that all Hindu, Muslim, Sikh, Christian are brothers. He also gave the teaching of unity that is why Guru Nanak's teaching gave us the lesson of unity in diversity as our Indian culture is.

Habit of Sharing:

Guru Nanak said that "Vand Chakko" it means sharing with others, helping those with less who are in need. So he gave the message of sharing with others. It means we should eat in sharing so as our culture gives the message of sharing because without sharing we can't live together.

Kirat Karo:

Earning /making a living honestly, without exploitation or fraud. "Kirat karo" means do work hard because without doing hard work we can not achieve whatever we want in our life so Guru Nanak said that don't sit idol do work hard. It also shows in our Indian culture that we all have to do hard work so that we can live happily.

Naam Japna:

Meditating on God's name to control the five weaknesses of the human personality. It says that we have to control our desires. If we don't control our desires we can not control our feelings.

Equality:

Guru Nanak Dev gave the message of equality because equality is important for human beings. If there is no equality there is no feeling of oneness same as our culture shows that the equality is very important for us if there is no equality we can not grow ourselves. So we should work together and with the feeling of equality.

No feeling of discrimination:

Guru Nanak says that there is no need of discrimination because if there is any feeling of

discrimination we can not see other persons equally and this is not a good sign of humanity.

Spirituality:

Guru Nanak taught that every human being is capable of attaining spiritual perfection which will ultimately lead them to God. He also said that rituals and priests are not required in order to have direct access to God. In his teachings, Guru Nanak emphasized that God has created many worlds and also created life. In order to feel the presence of God, Guru Nanak asked his followers to repeat the name of the god (Naam Japna). He also urged them to lead a spiritual life by serving others and by leading an honest life without indulging in exploitation or fraud. So the Indian culture also believes in spirituality.

Women Empowerment:

Guru Nanak is one of the most important religious figure to have contributed to women empowerment in India. Guru Nanak appealed to his followers to respect women and to treat them as their equal. He said a man is always bound to women and that without women there would be no creation on earth. On the other hand Indian culture also shows the women power like Shakti, Kaali, Durga etc because if there is no women there is no production in the society or world.

Salvation:

Most importantly, he also taught his followers the methods to attain salvation while leading a normal life within the importance of leading life with one's family members because salvation is not according to him a thing which you can achieve in the solitude but you can achieve it while to lead a normal life. We can also see the feeling of attaining salvation in Indian culture because Indian culture also shows the path of salvation that how we can achieve the path of salvation while living a simple and normal life.

Thus we can say that Indian culture and Guru Nanak Dev's teachings are inter related. His teachings play significant role to make Indian culture rich in all aspects.

His teachings are not only important for one religion or Sikhism but it gives the message for all human beings related to different religion specially a country like India where there are number of religion people live together with the different individuality the preaching of a saint like Guru Nanak is very important. So the taste of hie preaching we can clearly see in our Indian culture, which makes our Indian culture more reputed in all over the world.

Reference:

- Guru Nanak: A brief overview of the life of Guru Nanak, the founder of the Sikh religion.
- Prasoon, Shrikant(2007). knowing Guru Nanak. Pustak Mahal
- Singh Kartaar(1984) The story of Guru Nanak.
- William Owencole; Piara Singh Sambhi(1995). The six: Their religious belief and practices.
- Guru Granth Sahib

गुरु नानक देव जी के जीवन प्रसंगों से प्राप्त षिक्षा

*डॉ. कंचन शर्मा

* बुनियादी शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय, (सीटीई), आई.ए.एस.ई. (मानित विश्वविद्यालय), गाँ.वि.मन्दिर, सरदारशहर

गुरु नानक देवजी का जन्म रावी नदी के किनारे स्थित तलवंडी नामक गाँव में श्री कल्याण चन्द्र (पिता मेहता कालू) क्षत्रीय के गृह में माता तृप्ता की कोख से हुआ जिन की उपजाति बेदी थी। बड़ी बहन थी नानकी। ग्रह नक्षत्रों के अनुसार यह बालक दिव्य ज्योति वाला पराक्रमी पुरूष होगा। आपके घर में नानक और नानकी दो दिव्यात्माओं का जन्म हुआ है। बाल्यकाल में ही आपके द्वारा खेल–खेल में बालको को प्रेम, सत्य, समानता, त्याग, वीरता का पाठ पढ़ाया जाता था। आपके बालपन के सभी साथी आपको अपना नेता एवं मार्ग दर्शक स्वीकार करने लगे थे। सहज रूप में आपके द्वारा मिलबांट कर प्रेम पूर्वक, एक साथ खाना, छीना–झपटी न करने का संदेश दिया गया। मारवाड़ी भाषा में एक कहावत प्रचलित है 'पूत का पग पालणै दिखै' वही नानक जी के साथ था।

गुरु नानक देव ने 'ईश्वर एक है' इसका संदेश तो बाल्यावस्था में ही दे दिया था। गुरु नानक देव जब 5 वर्ष के हुए तब पिता ने मौलवी के पास पढ़ने के लिए भेजा। मौलवी उनके चेहरे का नूर देखकर हैरान रह गया। जब उसने गुरु नानक देवजी की पटटी पर 'ऊँ' लिखा, तब उसी क्षण उन्होने '1ऊँ' लिखकर संदेश दे दिया कि ईश्वर एक है और हम सब उस एक पिता की सन्तान है । मौलवी उनके पिता कालूजी के पास जाकर बोला कि उनका पुत्र तो एक अलाही नूर है उसको वह क्या पढ़ायेगा वह तो स्वयं सारे संसार को ज्ञान देगा। मौलवी की यह भविष्य वाणी सत्य सिद्ध हुई। एक नूर ते सब जग उपजा। बाला और मरदाना दोनों साथियों को लेकर जब वे धर से दूर गये तो उन्होंने जाति के बन्धन से ऊपर उठकर मानव का मानव से प्रेम का संदेश दिया और कहा कि एक पिता एकस के हम वारिस।

परमात्मा के सर्वव्यापीकरण का संदेश उनके जीवन की इस धटना से प्रकट होता है। मक्के में मुसलमानों के प्रसिद्ध पूजा स्थल 'काबा' गये। सफर करने से थके हुये थे। सोते समय उनके पैर 'काबा' की तरफ थे। जिओन ने क्रोधित होकर गुरुजी से कहा कि तू कौन काफिर है? जो खुदा के धर की तरफ पैर पसारकर सोया हुआ है। गुरुजी ने बड़ी नम्रता के साथ कहा में यहाँ सारे दिन के सफर से थकहार लेटा हूँ मुझे नहीं मालूम की खुदा का घर किधर है तू हमारे पैर पकड़कर उधर कर दे, जिधर खुदा का धर नहीं है। यह बात सुनकर जिओन ने बड़े गुस्से में आकर गुरुजी के चरणों को घसीटकर दूसरी ओर कर दिया और जब चरणों को छोड़कर देखा तो उसे 'काबा' भी उसी तरफ ही नजर आने लगा। इस प्रकार उसने जब फिर चरण दूसरी तरफ किए तो 'काबा' उसी और ही घूमता नजर आया। जब हाजी और मुल्लाओं को यह बात पता चली तो सभी नानकजी के चरणों में गिर पड़े।

सात वर्ष की आयु में गुरु गोपाल पण्डित से "िक्षा ग्रहण करने गये तो उन्हे देवनागरी की वर्णमाला बहुत जल्दी याद हो गयी तब एक दिन उन्होने अपने गुरुजी से कहा कि आपने जो वर्ण माला सिखाई है इसका अर्थ बोध भी बताए। यह प्रश्न सुनकर गुरुजी चकित हो गये। वे कहते है कि ऐसा प्रश्न तो मुझे कभी किसी ने किया ही नही। वहाँ नानक देव ने गुरुआज्ञा पाकर अक्षर से ब्रहम की जानकारी दी – 'क' अक्षर हमें ज्ञान देता है कि –

क कै केस पुंडर जब हूए विणु साबूणै उजलिया ।।
जन राजे के हुरू आए माइआ के संगलि बंधि लइआ।
– रागु आसा, पृष्ठ 432

भावार्थ – जब मनुष्य के केश बुढापे के कारण बिना साबुन प्रयोग किये सफेद होते है तो मानो यमराज का संदेश मिल रहा है लेकिन व्यक्ति प्रभु का चिन्तन न कर माया के बन्धनों में बंधा रहता है। 'ख' अक्षर, –

ख खै खुंदकाउ साह आलमु करि खरीदि जिनि – खरचु दीआ।।
बन्धनि जाके सभु जगु बांधिआ आवरी का नहीं हुकमु पइया।।
– रागु आसा पृष्ठ 432

भावार्थ – समस्त जगत का मालिक कसौटी से परीक्षा कर श्वांस रूपी पूंजी देता है। सारा संसार उसके नियमों में बंधा पड़ा है किसी दूसरे का उस पर जोर नही चल सकता।

'ग' ग गै भोर गाइ जिवि छोड़ी गली गाविदु गरभि भइआ।
धड़ि भांडे जिनि आवी साजी चाड़ण वाहै तई कीआ।।

भावार्थ – 'ग' अक्षर कहता है कि शरीर रूपी बर्तन बनाने वाले मालिक ने हमारी मिटटी तैयार कर दी है। केवल बातों से गोविन्द रटने से अभिमान ही उत्पन्न होता है इसीलिए उसने संसार मे संसार रूपी आवे में पकने के लिए मनुष्य को कर्मो के लिए स्वतन्त्र छोड़ दिया है।

'घ' अक्षर घ घै घाल से सेवकु जे घालै सबदि गुरु के लागि रहै।।

बुरा भला जे सम करि जाणै इन विधि साहिबु रमतु रहै।।

– रागु आसा, पृष्ठ 432

भावार्थ – 'घ' अक्षर कहता है कि जो जीव प्रभु में अभेद होना चाहते है वह गुरु द्वारा बाताए गये मार्ग पर चलते हुए सुख दुःख एक समान जाने तथा गुरु उपदेष को मानते हुए , मृत्यु को नजर के सामने रखकर अपना आचरण करें।

'ड़.ड़े.डि. आनु बुझे जे कोई पढ़िआ पंडित सोई।।
सरब जीआं महि एको जाणै ता हउमै कहे न कोई।

– रागु आसा, पृष्ठ 432

भावार्थ 'ड' अर्थात जो प्राणी सत्य शब्द का विचार करता है, वही विद्वान है जिसने सब जीवो में उस परमात्मा का निवास जाना है, उसका अंहकार नास होता है।

नानक देवजी द्वारा किये गये इस वि''लेषण के प''चात गुरु और शिष्य में दोस्ती हो गयी। मित्रता और समानता का रिश्ता कायम हो गया व आध्यात्मिक व ज्ञान चर्चा मिल बैठ कर किया करते थे। वर्णमाला के अक्षरों के माध्यम से परमात्मा की सपूर्ण सता एवं न''वर संसार की जानकारी दी।

यज्ञोपवीत संस्कार के समय जब जनेउ पहनायी जा रही थी तब गुरु नानक देवजी ने गुरु हरदयाल जी से पूछा कि इसे पहनने से मुझे क्या लाभ होगा? तब गुरुजी आ''चर्य चकित हो गये और कहा कि ऐसा प्रश्न तो मुझे कभी किसी ने पूछा ही नहीं। ठीक है मै अपको बताता हूँ उन्होंने यज्ञोपवीत संस्कार के गुणों का वर्णन किया नानक देव जी ने कहा कि मुझे कुछ शंकाये है जिनका मैं समाधान चाहता हूँ नानक देव जी कहतें है यह जनेउ मनुष्य–मनुष्य में भेद पैदा कर, बहन–भाई में दूरी पैदा करता है। यज्ञोपवीत का अधिकार स्त्री व कुछ वर्गो को प्राप्त नहीं है इसलिए यह यज्ञोपवीत श्रेष्ट दिखाने का असफल प्रयास है। नानक देवजी के ये उतर सुनकर गुरु हरदयाल जी को याद आ गया कि इसकी जन्म पत्रिका सही है। नानक देवजी ने यज्ञोपवीत की नई व्याख्या की जो इस प्रकार है–

ददूआ कपाह संतोखु सूतु जतु गंढी सतु वटु।।
एहु जनेउ जीअ का हई त पांडे घतु।।
ना एहु तुटै न मलु लगै न एहु जलै न जाइ।।
धंनु सु माणस नानका जो गलि चले पाइ।।

– रागु आसा, पृष्ठ 471

अर्थात सबसे पहले दया की कपास बनाओ, जिससे संतोष रूपी सूत बने, सत्य का उसे बंट लगाये, तथा जाति पन की गाठ लगाये। ऐसा यज्ञोपवीत जो दया, सत्य और सद्कर्म से युक्त हो उसे गले में धारण करे। आप का सूत से बना नौ तार का यह धागा, जीर्ण हो जायेगा, टूट जायेगा और मृत्यु के समय शरीर के साथ जल जायेगा। अतः मैने जो जनेउ बताई है उसे धारण करने वाला व्यक्ति वास्तव में पवित्र है। इस प्रकार नानक देवजी यज्ञोपवीत संस्कार के माध्यम से असपृश्यता, सामाजिक समानता और लेगिंक समानता का संदेश देकर समाज में नव चेतना विकसित की। तीव्र बुद्धि होने के कारण दो वर्ष के अल्प समय में आपको संस्कृत भाषा एवं उसमें शास्त्रार्थ करने का ज्ञान प्राप्त हो गया था। एक वर्ष के समय में ही फारसी भाषा का ज्ञान प्राप्त कर लिया।

एक दिन नानक देवजी की मुलाकात साधुओं के समूह से हुई। उन्होंने पहले तो बालक समझकर कोई खास बात नहीं की, फिर बात कर वो उनसे प्रभावित हुए उन्होंने कहा कि 'ऊँ' रूप में ईश्वर को मानतें है। तो नानक देव ने कहा कि ईश्वर तो एक है यह तीन देवताओं ब्रहमा, विष्णु और महेश का प्रतीक है जिसने इन तीनो व सपूंर्ण सृष्टि का निर्माण किया है वह नाशवान भी है। जिसका जन्म हुआ है उसका मरण भी निश्चत ही है। जो अदृश्य है अनुभव प्रकाश है वही जगत का कर्ता भी है। उसके विशेष गुण है, वह अभय, निर्वेर, सभी बन्धनों से मुक्त 'अकाल' पुरूष है। सदैव सम रहने वाला है न युवक है न बालक है और न ही वृद्ध है जिसका माता की कोख से जन्म नही होता है, जो स्वयंभूं है जिसका निर्माता कोई नही है जिसने अपना निर्माण स्वयं किया है इसलिए वह 'खुदा' है। सही मार्ग दृष्टा अर्थात सत् गुरु आपको उससे मिलवा सकता है गुरु की आज्ञा का पालन कर गुरुकृपा के पात्र बने गुरु के आदेशों की पालन करे, किसी का बूरा न करे, सभी के भले की कामना करे। इस प्रकार बाल्यावस्था में ही इस दिव्य पुरूष द्वारा ई''वर के निराकार रूप, गुरु की महता और गुरुआज्ञा का पालन करने के साथ–साथ मानवीयता की राह पर चलने का संदेश दिया गया।

पिता के द्वारा 20 रूपये व्यापार करने को जब दिये गये और विशेष हिदायत दी की सच्चा सौदा करना है तो नानक देवजी राहगीर साधुसन्यासियों के लिए भौजन एवं रसद की व्यवस्था कर सारे रूपये खर्च कर दिये। पिता की नाराजगी पर शांत रहे। कहा कि उनकी सेवा से अधिक 'सच्चा सौदा' मुझे नजर नही आ रहा था। इस प्रकार सेवा व सहयोग का संदेश दिया। भागीरथ के कहने पर उसे शिष्य बनाया और ब्रहम ज्ञान दिया। भागीरथ ने मनसुख से कहा कि वे वास्तव में सद्गुरु है ये अपनी गृहस्थी का प्रबंध स्वयं करते है धर्म के नाम पर पाखण्ड कर किसी पर बोझ नहीं बने है यहाँ कर्म करने का संदेश दिया।

शूद्र जाति के भाई 'लालो' के धर भोजन कर, नियमित सत्संग शुरू कर जाति पाति का भेद मिटाकर समाजिक समरसता की शिक्षा दी।

परमात्मा से साक्षात्कार और नाम स्मरण की महिमा – गुरु नानकदेव जी 'बेई' नदी के जल में नित्य स्नान करने जाते थे। एक दिन वे स्नान करने के बाद वे परमात्मा का ध्यान करने बैठ गये , परमात्मा से वहाँ उनका साक्षात्कार हुआ और परमात्मा ने उन्हें अमृत पिलाया और कहा – मैं सदैव तुम्हारे साथ हूँ, मैने तुम्हें आनन्दित किया है जो तुम्हारे सम्पर्क में आयेगें वे भी आनन्दित होंगे। जाओ नाम में रहो, दान दो, उपासना करो, स्वयं नाम लो और दूसरों से भी नाम स्मरण कराओ, इसके पश्चात गुरु नानक देव ने समाज मे उपदेश देते हुए अपने जीवन में उनको अपनाया एक आदर्श बन सामाजिक सदभाव की मिसाल कायम की उन्होने लंगर की परंपरा चलाई जातिगत भेद–भाव से उपर उठकर एक पंगत मे बैठकर एक जैसा भोजन करने की परंपरा चलाई और सामाजिक समरसता का संदेश दिया। जाति–धर्म, नस्ल, लिगं, उच्च, निम्न का भेद मिटाकर सभी को एक साथ परमात्मा का सुमिरण, भजन और सत्संग करने हेतु संगतो का आरंभ किया। संगतो में सभी के द्वारा सेवा

और सहयोग को बढ़ावा दिया। नीचा वह है, जिसका कर्म नीचा है जो अपने कर्म से औरों को दुःख देता है। ऊँचा वह है, जो सभी से प्रेम करता है। नानक वाणी में लिखते है –

नीच अंदरि नीच जाति नीची हू अति नीचु।।
नानकु तीन के संगी साथी वडिआ सिउ कि आरीस।।
जिथे नीच समाली अनि तिथै नदरि तेरी बरव सीस।।
राग सिरी – पृष्ठ 15

अर्थात – जो लोग अपने अधिकारों का दुरूपयोग कर जनता को डरा–धमका स्वार्थवश अनुचित कार्य कर धनी बनते है वही वास्तव में समाज विरोधी तत्व है। इन्हीं लोगों ने अपने काले कारनामों पर पर्दा डालने के लिए, एक विशाल दानी का बाहरी स्वरूप बना कर, समाज में भ्रम पैदा कर रखा है, कि वह ऊँचा है तथा पश्चिमी वर्ग नीचा है। जिसके बल पर वे सब जंग दिखाना कर रहे होते है, परन्तु आध्यात्मिक जगत में यह सब मिथ्या है। वहाँ तो अपनी मेहनत से धन कमाने वाला ही स्वीकार होता है। तात्कालिक सामाजिक व्यवस्था पर कुठाराघात कर आध्यात्मिक जगत के सत्यता का संदेश दिया।

- मृत्यु भोज को केवल ब्राह्यमणों की उदरपूर्ति बताया और इस प्रथा का विरोध किया।
- मोह–माया के बोझ से संसार को मुक्ति दिलायी।
- कर्म–काण्ड और पाखण्ड से दूर किया।
- कुरीतियों पर सीधा प्रहार कर लोगों को सोचने पर मजबूर कर दिया।

पशु वध को रोका

प्रचार यात्रा के दौरान आप लाहौर नगर में एक कुए के पास रूके थे। श्राद्ध पक्ष चल रहा था। आप प्रातः काल में शोचादि कार्यो में निवृत होकर स्नान कर, ध्यान में बैठे थे। कुछ लोग वहाँ आकर 'पशु वध' करने लगे। पशु की चिल्लाहट सुन अपने कहा अमृत वेला निरर्थक कैसे है। आप बहुत दुःखी हुये उस कार्य को देख –

असंख गलवढ़ हतिआ कमाहि।।
असंख पापी पापु करि जाहि।।

जब आपने देखा कि मुल्ला कुरान पढ़ कर यह कह रहा है कि सभी पशुओं को जन्नत नसीब हुई है, तो गुरुदेव ने इसका विरोध किया और कहा कि सभी प्राणी एक पिता की संतान है, परमात्मा का जीवों की हत्या से कैसे प्रसन्न हो सकता है?

कुम्भ मेले में पितरों को तर्पण करना और नानक देव का अपने खेतों की ओर पानी देना बहुत ही प्रसिद्ध कथानक है। जिसने तात्काली समाज में व्याप्त अन्ध विश्वास और कर्मकाण्ड पर तीखा प्रहार कर तार्किक शिक्षा दी।

वैष्णव साधू को "परमात्मा बाहरी पवित्रता पर नहीं रीभता, बल्कि वह तो उन पर रीझता है, जो बुराइयों का त्याग कर, ऊँचे तथा निर्मल गुणों को धारण कर अपने आचरण को उज्ज्वल करते है, जन्म से कोई नीचा या ऊँचा नहीं होता है, व्यक्ति के कर्म ही उसे नीचा या ऊँचा बनाते है। अतः सदैव प्रभु को प्रत्यक्ष मान कर कार्य करने चाहिए। क्योंकि उस की ज्योति प्रत्येक व्यक्ति के हृदय में प्रज्जवलित है।"

अवतारवाद का विरोध करते हुए नानक देव जी ने कहा था। साहिबु मेरा एको है, एको है भाई एको है।। रागा–आसा पृष्ठ – 350

मन्दिर दर्षन में भेद–भाव को देखकर नानक देव जी ने कहा "भगवान माया का भूखा नही है वह कभी सोता नहीं है, न विश्राम करता है वह तो भक्तजनों के प्रेम का भूखा है, परम ज्योत होने के कारण शारीरिक कमजोरियों से ऊपर है। अतः उसके द"ान तो चारों प्रहर किये जा सकते है।

सांसारिक माया से ऊपर उठने का संदेश

जैसे जल महि कमलु निरामलु मुरगाई निसाणै।।
सुरति सबदि भवसागर तरीऐ नानक नाम बखाणै।।
रहहि इकांति एको मनि वसिआ आसा माहि निरासो।।
अगमु अगोचरू दिखि दिखाए नानकु ता का दासो।।
राग रामकली, पृष्ठ 938

दीपावली पर उन्होंने विष्णु अर्थात राम के आद"ों को जीवन में अपनाये विष्णु को मानोगे तो लक्ष्मी स्वयं ही आ जाएगी। माया की ही पूजा न करें।

गुरुदेव ने जन आन्दोलन के रूप में दीन–दुःखियों की सेवा, सहयोग को आरंभ किया। गरीबों को बीमारी ओर लाचारी से बचाने के लिए कर्म और स्वच्छता का संदेश दिया।

बस्तियों में सेवा कार्य कर, स्वच्छता को बढ़ावा दिया। उन्हे बताया की गरीबी और बीमारी का कारण भी गन्दगी ही है। धन इकट्ठा कर नव निर्माण करवाया और उनका उद्धार किया। समाज सेवा का आद"ा कायम किया।

निष्कर्षतः गुरु नानक देव जी ने जीवन भर परहित कार्य किया सोये समाज को जगाया उनके मन में व्याप्त भय को दुर किया। तार्किक सोच विकसित कर अन्धविश्वास और कर्मकाण्ड से उन्हें दूर कर जीवन में नया प्रका"ा फैलाया। गुरुदेव ने कहा – "हम ज्ञान प्राप्ति के लिए तीर्थ यात्रा करते है परन्तु हमारा मन अशान्त ही बना रहता है बिना ज्ञान के। पार ब्रहम परमात्मा तो आपके हृदय में विराजित है उसे बाहर खोजने की जरूरत ही नहीं है। जिस प्रकार दूध में घी। उसकी प्राप्ति सद्गुरु के माध्यम से हो सकती है।" अतः हृदय रूपी मन्दिर में उसके दर्शन करने का अभिलासी व्यक्ति गुरु कृपा से परमात्मा को प्राप्त कर सकता है।

सगल जोति माहि जाकि जोति।
बिआपि रहिआ सुआमी ओति पोति।।
जिउ कासट मै अगनि रहाइ।
दूध बीच घी रहिओ समाई।।
सागर माहि बुदबुदा हरे।।
कनक कटक घट माटी करे।।
नानक तिउ जग वहम मझार।।
सतगुरु मिले ता देई दिख।।

सन्दर्भ

1. सिंह, जसबीर. जीवन वृतान्त. श्री गुरु नानक देव जी. क्रांति कारी गुरु नानक देव चैरिटेबल ट्रस्ट, चण्डीगढ़
2. सिंह, भाई हरिनाम : जपुजी साहिब सटीक, खालसा साहित सदन अमृतसर
3. सूरज प्रकासा जन्म सारवी दस गुरु साहिबान सिंह भाई संतोख, खालसा साहित्य सदन, घंटा घर, अमृतसर

गुरु नानक वाणी : लोकोन्मुखी आध्यात्मिक काव्य

* डॉ. सुषमा सहरावत

* कमला नेहरू कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

सुनी पुकार दातार प्रभु,
गुरु नानक जग माहीं पठायाद्य
चरण धोई रहिरास कर,
चरण अमृत सिक्खां पिलाया।[1] –(भाई गुरदास)

सिख धर्म के प्रवर्तक आदि गुरु नानक देव की वाणी का प्रधान स्वर यद्यपि आध्यात्मिक है किन्तु उनके सिद्धांत लोकानुभूति की ज़मीन पर ही निर्मित हुए हैं। उन्होंने पुरातन धर्मो के निरर्थक बन्धनों और रीति–रिवाजों मुक्त एक नवीन धर्म की स्थापना की जिसे उन्होंने 'गुरुमत' , 'गुरुमुख' मार्ग' ,'सत्य का मार्ग' नाम दिया तथा उसे 'संगत' अथवा 'गुरुद्वारा' के माध्यम से एक स्वतंत्र उपासना केंद्र दियाद्य उनके द्वारा चलाई गई 'लंगर–पद्धति' और 'शब्द–कीर्तन' विश्व–बंधुत्व और मानवतावाद का पोषण करते हैं। वस्तुतः उस समय राजनैतिक अत्याचारों से प्रताड़ित जनता न केवल अपना धार्मिक विश्वास, जातीय गौरव,सामाजिक स्थिरता एवं आर्थिक शक्ति खो चुकी थी, अपितु वैयक्तिक नैतिक बल का संबल भी उसके पास न रह गया था। ऐसी अवस्था में देश,समाज और धर्म की बात तो दूर रही,वे परिवार–पालन तथा वैयक्तिक मूल्यों को जीवित रखने में भी अपने आपको अक्षम पाते थेद्य गुरु नानक ने ऐसे भय–संत्रस्त जन–समाज को अपने नैतिक–बल से निर्भय बनने का प्रयास कियाद्य इस्लाम के धार्मिक प्रहार से क्षुब्ध एवं धर्म–परिवर्तन में संलग्न जन–समाज को उन्होंने धार्मिक संरक्षण प्रदान किया और व्यापक तथा उदार धर्म का सन्देश दिया।"2

उन्होंने स्पष्ट घोषित किया है–"जिह दिट्ठा मैं तेहो कहिआ" यही कारण है कि उनका काव्य एक नई काव्य–धारा का प्रादुर्भाव कर सका। 'जपुजी' के आरम्भ में गुरु नानक द्वारा ब्रह्म के स्वरुप से सम्बंधित दिया गया निम्नलिखित मूल–मन्त्र सिख धर्म का मूल मंतव्य है –

"१ओंकार सतिनाम कर्ता पुरख निरभओ निरवैर अकाल मूरत अजूनी सैभं गुर प्रसादि।"3

इस मूल–मन्त्र की व्याख्या उनके ब्रह्म के स्वरुप तथा उनके मौलिक आध्यात्मिक सिद्धांतों को समझने के लिए अपेक्षित है, जो इस प्रकार है–

ईश्वर एक है,
वह सत्य स्वरुप है,उसका नाम ही पूर्ण सत्य है,
वह सर्वस्व का सृष्टा है,
इसलिए उसे किसी का भय नहीं है,
इतना बल होते हुए भी उसकी किसी से शत्रुता नहीं है,
काल का उसके स्वरुप पर कोई प्रभाव नहीं, उसका बिम्ब कालातीत है।
वह योनि में नहीं पड़ता और जन्म–मरण के क्रम से मुक्त है।
अर्थात वह प्रजात नहीं, अपना जनक स्वयं ही है,
मनुष्य उसे केवल गुरु–कृपा से ही जान सकता है।

१ ओंकार में '१' का महत्त्व बताते हुए डॉ. जयराम मिश्र ने लिखा है कि " वास्तव में इस "१" का बहुत बड़ा महत्त्व है। सांख्यवादियों का द्वैत सिद्धांत प्रकृति और पुरुष दृगुरुओं को मान्य नहीं है। वह परमात्मा प्रकृति से सर्वथा परे है। यह एक सर्वव्यापी,अव्यक्त और अमृत तत्त्व है। यही "१" चर–अचर सृष्टि का मूल है। "१" यही अगम है,अगोचर है–

अगम अगोचरु अनाथु अजोनीद्यगुरमति एकै जानिआद्य4 इस सम्बन्ध में डॉ. शेर सिंह अपना मत व्यक्त करते हुए 'गुरुमत दर्शन' में लिखते है कि " १ ओंकार में १ का अंक एकता के भाव पर विशेष रूप से बल देता है।5

वस्तुतः जिस समय गुरु नानकदेव जी का जन्म हुआ था उस समय भी समाज कई जातियों व,वर्गों और चार वर्णों में विभाजित था। इन के आगे भी यह विभाजन कई वर्गों और उपजातियों में विभाजित था जिस कारण छुआ–छात और ऊँच–नीच के विचारों का खूब प्रचलन था। ब्राह्मण वर्ग अपने आप को सबसे श्रेष्ठ मानता था और शूद्रों का अत्यधिक अपमान किया जाता था। गुरु नानकदेव जी ने सब मनुष्यों की समानता और एकता का प्रचार किया और जाति के आधार पर विभाजित समाज का कड़ा निषेध कियाद्य उन्होंने कहा कि–" फकड़ जाती फकड़ नाओ। सभना जिआ ऐका छाओ। आपहु जे को भला कहाऐ। नानक ता पर जापै जा पति लेखै पाए।[6] जाति का अभिमान व्यर्थ है क्योंकि ईश्वर के सम्मुख सभी मनुष्य समान हैंद्य जाति के कारण प्राप्त मान–सम्मान का कोई उपयोग भी नहीं है,वह शरीर के समाप्त होने के साथ ही समाप्त हो जाता है। सभी प्राणियों की आत्मा में उसी एक ईश्वर की ज्योति का निवास है और सभी प्राणियों का सहारा भी एक मात्र ईश्वर है। अपने आपको अच्छा कहलवाने भर से कोई अच्छा नहीं बन जाताद्य अच्छा तो महज़ अच्छे कर्मों और नाम के सिमरन करने से ही बना जा सकता है।असली अच्छा व्यक्ति तो वही है जिसका ईश्वर के दरबार में सम्मान है।

असल में, नानक जी एक क्रांतिकारी समाज सुधारक भी थे जिनकी पैनी दृष्टि समाज में व्याप्त हर

कुरीति,अन्याय और भेदभाव को देखने दृपरखने की क्षमता रखती थी। यही कारण है उन्होंने हिन्दुओं, मुसलमानों, सांख्यों, नाथों आदि के संकुचित विचारों और असहिष्णु सिद्धांतो को अपनी वाणी में अंकित किया तथा जगह–जगह भ्रमण यात्राएं कर लोगों को पाखण्ड,भेदभाव और अनुदार विचारों का त्याग कर एक स्वस्थ सुन्दर समाज के निर्माण के लिए प्रेरित कियाद्य इन भ्रमण यात्राओं को उदासियां' भी कहा जाता है। उनके द्वारा अपने जीवनकाल में देश–देशान्तरों में की गई चारों इतिहास–प्रसिद्ध उदासियाँ (प्रथम–1497 से 1509 ई.तक, द्वितीय– 1510 से 1515 तक ई. तक, तृतीय–1515 से 1517 ई. तक,चतुर्थ–1517 से 1521 तक)इसी उद्देश्य के निमित्त की गई थींद्य प्रथम यात्रा को कुछ विद्वानों ने हिन्दुओं के धार्मिक स्थलों की यात्रा का नाम दिया है। इसमें नानक देव जी ने हिन्दू–वैष्णवों के प्रधान–केंद्र कुरुक्षेत्र से होते हुए हरिद्वार,दिल्ली,मथुरा तथा वृन्दावन पहुंचकर जन–मानस को सन्मार्ग सिखलायाद्य हरिद्वार के ऐतिहासिक प्रसंग को डॉ. हरिराम गुप्त ने गुरु नानक के प्रचार का एक अद्भुत तरीका बतलाया है। इस प्रसंग को व्याख्यायित करते हुए वे लिखते है कि " हरिद्वार में गंगा स्नान करने वाले लोगों को उन्होंने उगते सूर्य को जल अर्पित करते देखाद्य नानक कारण तो जानते थे, फिर भी पूछ बैठे कि वे क्या कर रहे हैंद्य जवाब मिला कि स्वर्ग में स्थित पूर्वजों को वे अंजलि दे रहे हैंद्य नानक फ़ौरन पश्चिम दिशा की ओर मुहं कर पानी उस ओर उछालने लगेद्यइस बार लोगों ने पूछा कि वह क्या कर रहे हैंद्यगुरु नानक ने इत्मीनान से जवाब दिया कि वह पंजाब में अपने खेतों को पानी भेज रहे हैंद्यउनसे पूछा गया, भला यह पानी यहाँ से तीन सौ मील दूर उन खेतों में कैसे पहुंचेगाद्य "अगर यह पानी मेरे खेतों में नहीं पहुँच सकता,जो इतने नज़दीक हैं,तो भला तुम्हारा पानी यहाँ से उतनी दूर स्वर्ग में क्योंकर जा सकता है?" इस उत्तर ने हिन्दू यात्रियों की आँखें खोल दीद्य'7 इसी तरह नानक जी ने पितृ–पूजा के मध्यस्थ पंडों की आलोचना की,निरर्थक पूजा–विधियों तथा अवतार–पूजा की निंदा करते हुए जन–समाज को निराकार ब्रह्म की उपासना द्वारा मानसिक शांति प्राप्त करने का उपदेश दियाद्य 'निरभउ निरंकारु सचु नामुद्य जाका कीया संगल जहानुद्य8 दूसरी यात्रा को कुछ विद्वानों ने दक्षिण यात्रा तथा कुछ ने जैन और बौद्ध तीर्थ स्थानों की यात्रा कहा है। पांच वर्षों तक की गई इस यात्रा के दौरान उन्होंने बीकानेर, अजमेर, सिरसा, उज्जैन, हैदराबाद, पांडिचेरी, रामेश्वरम, श्री लंका आदि स्थानों पर जाकर जैन तथा बौद्ध धर्म में प्रविष्ट हो चुकी विविध कुप्रथाओं की आलोचना कर उन्हें सत्य मार्ग का अनुसरण करने का उपदेश दियाद्यमानव–जीवन में स्वच्छता का महत्त्व बताते हुए उन्होंने जैनियों को इसका अनुपालन करने के लिए प्रेरित करते हुए कहा दृसिरु खोहाइ पीअहि मालवाणीद्यजूठा मंगि मंगि खाहीद्यद्यफोलि फदोहति मुहि लैनिद्य9 नानक जी की तीसरी यात्रा 'उत्तर की उदासी' या 'नाथों–सिद्धों के तीर्थ–स्थानों की उदासी' कहलाती है। इसमें उन्होंने जम्मू–कश्मीर, सिरमौर, हेमकुंड, बद्रीनाथ, तिब्बत, नेपाल, भूटान आदि का भ्रमण करते हुए नाथों और सिद्धों के सम्प्रदाय की हठ–यौगिक साधनाओं, कठोर तपस्याओं,ढोंगमयी जीवन पर विमर्श करते हुए उन्हें ईश्वर की प्राप्ति हेतु सत्य मार्ग का उपदेश दियाद्य परम शिष्य मरदाना के साथ की गई अपनी चौथी यात्रा के दौरान नानक जी ने मक्का, मदीना, बग़दाद, ईरान, कंधार, अफगानिस्तान आदि स्थानों का भ्रमण करते हुए ईस्लाम धर्म के सिद्धांतो की व्याख्या करते हुए उन्हें सत्य मार्ग दिखलायाद्य मक्का में काबे की तरफ पैर करके सोने की सुप्रसिद्ध घटना इसी 'उदासी' के समय की है जिसके माध्यम से जन मानस को यह सन्देश देना ही उद्देश्य था कि परमात्मा सर्वव्यापक है। इस तरह उन्होंने भारतीय समाज को एक सूत्र में बांधने का सफल प्रयत्न कियाद्य उन्होंने जाति और धर्म के संकुचित घेरे से ऊपर उठकर नये समाज की रचना की जिसमें सभी धर्मों के,सभी जातियों के, सभी क्श्रेणियों के लोग, क्या स्त्री क्या पुरुष बिना किसी भेदभाव के जीवन व्यतीत करते हुए प्रेम–पूर्वक रह सकते हैं।"10

वस्तुतः नानक जी ने अपने आध्यात्मिक विचारों का प्रचार–प्रसार तर्क–वितर्क और विचार–विमर्श के पुष्ट आधारों पर कियाद्य जन–सामान्य के दिलों तक पहुँचने का ही यह परिणाम था कि उनके अनुयायी दिनों–दिन बढ़ते चले गए और वे एक नये धर्म की स्थापना भारतीय समाज में कर सकेद्य सही बात तो यही है कि उन्होंने विभिन्न धर्मों में एकता लाने के लिए ब्रह्म के स्वरुप की ऐसी प्रतिष्ठा की जिससे विभिन्न धर्मों एवं सम्प्रदायों की भेदक–रेखा समाप्त हो गयीद्य उन्होंने राम, रहीम, अल्लाह, हरी आदि अनेक नामों से एकं परम सत्ता की ओर संकेत किया और उसे ही सर्वशक्तिमान एवं सर्वज्ञ घोषित कियाद्यउन्होंने एकेश्वरवाद की स्थापना करके बहुदेववाद एवं अवतारवाद के महत्त्व को समाप्त कर दिया। उन्होंने परमात्मा को निर्गुण,निराकार के रूप में चित्रित करते हुए भी उसके सगुण रूप की अवहेलना नहीं की है। परमात्मा द्वारा विरचित सृष्टि ही उसका सगुण रूप है।इस प्रकार गुरु साहिब ने ब्रह्म की अनेकता को असिद्ध कर उसकी अद्वैतता को प्रतिष्ठित किया।"11

गुरु नानक के आध्यात्मिक सिद्धांत सरलता और व्यावहारिकता के धरातल पर निर्मित हुए थेद्य सत्य तो यही है कि "Nanak's conception of world society was based on the ideal of universal brotherhood."12 उन्होंने अन्य धार्मिक सिद्धांतों की भाँति निवृति मार्ग की बात नहीं की अपितु उन्होंने प्रवृति मार्ग की महत्ता प्रतिपादित करते हुए गृहस्थ जीवन को सुखपूर्वक भोगते हुए नाम–साधना की बात कीद्य उन्होनें परमात्मा का नाम –स्मरण करते हुए सांसारिक सुखो का उपभोग शोभनीय और उचित बताया–"सो जीविआ जिसु मनि वसिआ सोइद्य नानक अवरु न जीवै कोइ।''13 उन्होंने आध्यात्मिक विकास के लिए मनुष्य को कुछ नैतिक गुणों को ग्रहण करने की शिक्षा दीद्य उसको मीठा बोलना तथा नम्रता से रहना चाहिएद्य कुछ लोग मन के काले होते है और उनके मन में अहंकार भरा होता है परन्तु बाहर से शिष्टाचारवश प्रणाम करते हैंद्य परन्तु अगर मन पवित्र न हो और ह्रदय में प्रेम न हो तो इसका कोई लाभ नहींद्य हिरन का शिकार करते समय जब शिकारी तीर चलाता है तो उसे झुकना पड़ता है। झुक कर प्रणाम करने वाले का मन जरूरी नहीं कि शुद्ध हो। इसीलिए जब तक ह्रदय मैल से युक्त है शीश नवाने का कोई अर्थ नहींद्य ह्रदय की शुद्धि के लिए मनुष्य को सांसारिक

पदार्थों के मोह में नहीं पड़ना चाहिए और ह्रदय में से 'अहम्' को निकाल देना चाहिएद्य उसको नाम के जाप तथा सिमरन द्वारा ह्रदय को प्रभु से एक सुर करना चाहिएद्यउसकी कथनी और करणी में कोई अंतर नहीं होना चाहिए। यथाः "अपराधी दूना निवै जो हंता मिरगाये। सीस निवाइअ क्या थियै जा रिदै कसुधे जाहि।14

इस युग में स्त्रियों की दशा बहुत करुणामयी थीद्य भक्ति आन्दोलन से सम्बंधित भक्तों ने भी स्त्री जाति की अपने श्लोकों में कई स्थानों पर निंदा की है और उनको मुक्ति मार्ग में बाधा बताया गयाद्य बाल–विवाह, बहु–विवाह, वृद्ध–विवाह तो प्रचलित थे ही, अपने सतीत्व की रक्षा के लिए स्त्रियां सदैव चिंतित रहती थींद्य नानक जी के लिए स्त्री जाति की यह करुण दशा असहनीय थीद्य उन्होंने कहा कि स्त्री समाज का एक महत्वपूर्ण अंग हैऔर हमारा समाज तब तक पूर्ण रूप से विकसित नहीं हो सकता जब तक स्त्री को उसके पूर्ण अधिकार नहीं दे दिए जातेद्य गुरु नानक के शब्दों में उस समय नारी की यह दुर्दशा थी कि "साहुरै ढोई न मिलै,पेइएं नाहिं थाऊंद्य डॉ. धर्मपाल सिंहल का इस सम्बन्ध में कथन सत्य है कि "वे नारी की, माता की,जगत–जननी की यह दीन–हीन दशा न देख सकेद्य जहाँ वे स्त्री को भक्ति का पूर्ण अधिकार देते हैं,वहां वे उसे वन्दनीय भी मानते हैंद्य उन्होंने उस समय में फिऊडल वर्ग के विचारों की निंदा की और उन्होंने कहा कि नारी केवल काम–वासना की तृप्ति करने वाली,पुरुष की दासी एवं रूप और श्रृंगार करने वाली ही नहीं है"द्य15नानक जी ने पुरुष के जीवन का सारा आनंद स्त्री के साथ सम्बंधित माना और कहा कि उस स्त्री को हम बुरा या नीचा कैसे कह सकते हैं जो पीर,पैगम्बर,अवतार तथा राजाओं को जन्म देती है। इस संसार में कोई भी पुरुष स्त्री के बिना उत्पन्न नहीं हो सकताद्य सृष्टि का सारा विस्तार स्त्री के कारण ही है। स्त्री सारी सृष्टि में सुगंध की तरह फैली हुई है। स्त्री के कारण ही सृष्टि चल रही है। वे कहते हैं–"भंड जंमीअ भंड निंमीअ भंड मंगण वीआहुद्यभंडहु होवै दोस्ती भंडहु चले राहुद्यभंड मूआ भंड भालीअ भंड होवे बंधानद्य सो क्यों मंदा आखीअ जितं जंमहि राजान। भंडहु ही भंड उपजै भंडै बाझ न कोएद्य नानक भंडै बाहरा एको सच्चा सोए।"16

नानक देव जी ने पुरानी निरर्थक धार्मिक मान्यताओं, कर्मकांडों का अपने तर्कों द्वारा खंडन कर जन समाज को सत्य और गुरु मार्ग के लिए अनुप्रेरित कियाद्य नानक वाणी में धार्मिक और आध्यात्मिक विषयों के अतिरिक्त सामाजिक, नैतिक और राजनैतिक विषयों का वर्णन भी मिलता है। डॉ.नगेन्द्र के शब्दों में, "गुरु नानक व्यक्ति नहीं थे, संस्था शब्द भी उनके सम्पूर्ण कृतित्व का अर्थ वहन नहीं कर सकता दृ वे एक समग्र देशकाल की चेतना के प्रतीक थेद्य"17 उनके आध्यात्मिक सिद्धांतों के लोक जीवन एवं जन–मानस से जुड़ाव का ही यह फल है कि उनके जन्म के पांच सौ साल बाद भी उनके द्वारा स्थापित 'सिख धर्म' न केवल आज जीवित है बल्कि देश–देशांतर में और भी फल–फूल रहा है।

सन्दर्भ सूचीः

1. गुरु नानकः एक विवेचन,पदम गुरचरन सिंह,पृष्ठ 11.
2. मध्ययुगीन निर्गुण चेतना,डॉ. धर्मपाल मैनी,पृष्ठ 24.
3. श्री गुरु नानक पांच सौ साला जन्म उत्सव सोवीनर,मोहन सिंह कुमार,पृष्ठ 21.
4. श्री गुरु ग्रन्थ–दर्शन,डॉ.जयराम मिश्र,पृष्ठ 62.
5. गुरुमत दर्शन, डॉ.शेर सिंह,पृष्ठ 248.
6. श्री गुरु नानक पांच सौ साला जन्म उत्सव सोवीनर,मोहन सिंह कुमार,पृष्ठ 92.
7. गुरु नानकः जीवन,युग एवं शिक्षाएं,स.गुरमुख निहाल सिंह,पृष्ठ 41
8. नानक वाणी,डॉ.जयराम मिश्र,वार आसा,सलोकु
9. .नानक वाणी,डॉ.जयराम मिश्र,माझ रागु,वार
10. गुरु नानकः एक विवेचन,पदम गुरचरन सिंह,पृष्ठ 47.
11. गुरु नानकः एक विवेचन,पदम गुरचरन सिंह,पृष्ठ 104.
12. The Sikh Gurus and the Sikh Religion, Anil Chandra Banerjee, page 123.
13. .नानक वाणी,डॉ.जयराम मिश्र,पृष्ठ 183,सलोकु
14. श्री गुरु नानक पांच सौ साला जन्म उत्सव सोवीनर,मोहन सिंह कुमार,पृष्ठ 57
15. गुरु नानकः एक विवेचन,पदम गुरचरन सिंह,पृष्ठ 47
16. नानक वाणी, डॉ. जयराम मिश्र, वार आसा, सलोकु

Volume : 6 | Issue :4 | October-December2019 ISSN: 2349-1876 (Print) | ISSN : 2454-1826 (Online)

समसामयिक सन्दर्भों में श्री गुरुनानक देव जी के चिंतन की प्रासंगिकता

*डॉ. लक्ष्मी गुप्ता

* यमुना नगर, हरियाणा

भारत के इतिहास मे चौदहवीं–पद्रहवीं शताब्दी इस्लामी और हिन्दू समुदाय के मध्य घात–प्रतिघात, विरोध–प्रतिरोध, विद्रोह–प्रतिविद्रोह,खण्डन और प्रतिखण्डन के मध्य जूझता रहा है। ऐसी मानवघाती परिस्थितियों से भारत को बाहर लाने में संत समुदाय और उत्तर भारत में सिक्ख समुदाय की महती भूमिका रही है। वैचारिक प्रवर्तन की जिस भाव भूमि पर सिक्ख धर्म का प्रर्वतन जिस महती विभूति द्वारा किया गया उसे सम्पूर्ण विश्व ने श्री गुरुनानक देव जी के नाम से सम्बोधित किया।

सैकड़ों वर्षों में कभी–कभी ही इस भूतल पर एसी दिव्य विभूतियाँ अवतरित होती हैं, जो मानव जीवन एवं सभ्यता को नवीन दिशा प्रदान करते हुए नवीन आयामों की स्थापना करते हैं। श्री गुरुनानक देव जी एक ऐसे ही युग पुरूष हैं जन्होंने एक निष्ठावान साधक, क्रान्तिदर्शी समाज सुधारक, प्रगतिशील धर्म–प्रवर्तक , मानवतावादी चिंतक व महान संत की भूमिका एक साथ निभाई। आज के विषम समसामयिक सन्दर्भों में गुरुनानक देव जी का संदेश उतना ही तर्कसंगत और सार्थक है जितना की उस समय था। हम सभी उनके व्यक्तित्व और कृतित्व पर अपनी अपनी आस्थाओं, अपने अपने परिवेश और चिंतन के संन्दर्भों में पुनः–पुनः विचार करते रहे हैं और उनसे नित नवीन प्रेरणा, शक्ति, आस्था, और विश्वास प्राप्त करते रहे हैं। आज जिस द्वव्द और तनाव की स्थिति से हम गुजर रहे हैं, उसके निराकरण के लिए उनके व्यक्तित्व की उपयोगिता हमारे लिए और भी अधिक आवश्यक हो गई है।

सम्पूर्ण विश्व का यह विचित्र–सा विषय है कि जो कुछ भी नया आता है या लाया जाता है वह अपने प्रादुर्भाव काल में युग–देश और समाज की अपरिहार्य आवश्यकता होती है, परन्तु समय का कीड़ा उसे धीरे –धीरे विकृत एवं विद्रूपित करता रहता है, अर्थात जो भी नए विचार एवं आर्दश परम्पराएं होती है, वह धीरे–धीरे विकृत होकर रूढ़ि बनकर रह जाती हैं। अतः नूतन–पुरातन हो जाता है और समय की कसौटी पर पूरातनता अनुपयुक्त हो जाती है। चिन्तक पुनः नये परिवेश के अनुरूप ही नई चिंतन धारा का प्रवर्त्तन करता है और यह नया रूप ही देश काल को नवजीवन प्रदान करता है।

भारतवर्ष का मध्यकाल अनेक जड़ताओं और विकृतियों का शिकार था। यह विकृत परिस्थिति सापेक्ष भी होती है और धीरे –धीरे सदविचार भी विकृत रूढ़ि बन कर रह जाते हैं। नई परिस्थितियाँ भी नूतन विचार श्रृंखला को उत्पन्न करती हैं। दो सभ्यताओं, संस्कृतियों, समाजों और सम्प्रदायों में नव विरोध एवं विद्रोह उत्पन्न हो जाता है। 10वीं शताब्दी में इस्लामी चेतना के आगमन से भारत में एक नया संघर्ष उत्पन्न हो गया था। जिस कारण एक ओर भारतीय एवं इस्लामी जीवनशैली ,जीवन परिस्थिति ,जीवन पद्धति में विग्रह था तो दूसरी ओर भारतीय जीवनशैली में अनेक सामाजिक विकृतियाँ जन्म ले चुकी थी। अतः इस दोहरी आवश्यकता एवं विषम परिस्थिति जन्य समाज में निश्चित ही कोई महापुरूष युग का नया संदेश देने के लिए अवतरित हो उठता है।

15वीं शताब्दी के मध्य में ऐसी दोहरी विषमता के बीच एक महापुरूष का अवतरण होता है, जो भारतीय समाज की विकृतियों को देखने के साथ भारत में आए नये समाज के साथ जन्में अन्तर्विरोधों को भी देखता है और 'होनहार बिरवाने के होत चिकने पात ' की शक्ति एवं लक्षणों से विभूषित एक ऐसी प्रतिभा का प्रादुर्भाव होता है जो इतिहास को प्रति इतिहास में रूपान्तरित कर देती है। यह भारतीय संस्कृति ,सभ्यता ,दर्शन , भक्ति और सहित्य का एक अप्रतिम पृष्ठ है– गुरुनानक देव।

प्रत्येक महापुरूष का मूल्यांकन उसके युग संदर्भ में करना ही अधिक उचित है। यद्यपि आज युग , परिस्थितियाँ, परिवेश, आस्था ,विश्वास,दृष्टि और यहाँ तक की दिशाएं भी बदल गई हैं, फिर भी ऐसे में और समसामयिक विषम परिवेश में उनकी प्रेरणा अति प्रासंगिक है–ज्यादा, शायद और भी ज्यादा। आज जिस अनास्था और अविश्वास, भौतिकता और स्वार्थ, चरित्रहीनता और चरित्रहनन, असामाजिक और असमानता ,मिथ्यात्व और अहंकार, भ्रष्टाचार और बेईमानी, मूल्यहीनता और छोटेपन के जिस दौर से हम गुजर रहे हैं उसमें गुरुनानक देव जी का जीवन दर्शन और संदेश हमें नया आलोक प्रदान करके समुचित रूप में हमारा मार्गदर्शन प्रदान करता रहा है और आगे भी कर सकता है।

गुरुनानक जी सम्भवतः मध्ययुग के पहले और ऐसे अकेले–धर्मप्रवर्तक थे जिन्होनें उस युग के राजनैतिक आंतक , अत्याचार, हिंसा और दमन के प्रति अपना

असंतोष व्यक्त किया किया था। बाबर द्ववारा ऐलनाबाद पर आक्रमण के अवसर पर जो हिंसा और अत्याचार हुये थे। उनका लोमहर्षक वर्णन करते हुए उन पर अपनी तीखी प्रतिक्रिया व्यक्त की थी। उनका कहना था कि ,"यदि शक्तिशाली–शक्तिशाली से संघर्ष करता है तो बात कुछ समझ आती है लेकिन अगर शक्तिशाली निरीह और असहाय व्यक्तियों का वध करें तो यह कोई न्याय नहीं है।" लोगों के दुख–दर्द से पीड़ित होकर वे ईश्वर को भी उलाहना देते हैं कि इतनी मार पड़ने पर भी उस प्रभु के मन में करूणा क्यों नहीं उमड़ी ? गुरुनानक देव जी सच्चे अर्थों में एक युग प्रर्वतक लोकनायक होने के साथ–साथ राजनैतिक व्यवस्था के प्रति भी उसी प्रकार जागरूक थे, जैसे कि अपने युग की धार्मिक और सामाजिक विसंगातियों के प्रति । उन्होंने केवल अन्यायी और अत्याचारी शासकों का विरोध ही नहीं किया अपितु यह भी स्पष्ट किया कि अच्छा राजा कैसा होना चाहिए।

ब्रह्य की परिकल्पना करते हुए उन्होंने उसे 'निरभउ और निरवैर' भी कहा है। वे मनुष्य को भी उसी ब्रह्य के रूप में देखते है। उनका मानना है कि जब वह पर ब्रह्य निर्भय और निरवैर है, तो मनुष्य को भी उसी प्रकार निर्भय और निरवैर होना चाहिए। यह एक ऐसी विलक्षण अवधारणा है जिसके माध्यम से गुरु नानक युग की राजनीतिक–चेतना को एक नई दिशा देते प्रतीत होते हैं। इस चेतना को आगे बढाते हुए गुरु तेग बहादुर जी ने कहा था –

"भय काहू कउ देति नहिं, नहिं भै मानत आनि।
कहु नानक सुरि रे मना, गिआनी ताहि बखानि।। "

गुरु गोविन्द सिंह जी ने तीव्र राजनैतिक संघर्ष और विद्रोह के रूप में इस चेतना को अभिव्यक्ति दी थी और अन्याय ,अधर्म के विरूद्ध'धर्म–युद्ध का आवाहन करते हुये घोषणा की थी–

"दसम कथा भागौत, की भाखा करि बनाइ।
अवरू वासना नाहि प्रभु, धरम युद्ध की चाइ।"कृष्णावतार–2461

निश्चय ही , यवन शासकों के अत्याचार और अन्याय के विरूद्ध राजनैतिक–चेतना जगाने का जो महत्वपूर्ण कार्य श्री गुरु नानक देव जी ने किया था, वह उनकी राष्ट्रीयता और मानवतावादी प्रवृत्ति का परिचायक है।

श्री गुरुनानक जी उन व्यक्तियों में से हैं जिन्होंने सामाजिक अन्याय,असमानता और शोषण के विरूद्ध असंतोष प्रकट करते हुए इसका विरोध किया और यह घोषणा की –"जो नीचों से भी अधिक नीच है नानक तो उनके साथ है। बड़े वर्ग के लोगों के साथ उनका क्या वास्ता"–

"नीचा अंदर नीच जाति नीचहू अति नीच।
ननक तिनेक संग साथ, वड़ियाँ सिंउ क्या रीस।।"

गुरु नानक जी के समय में देश की धार्मिक अवस्था शोचनीय थी। अनेक प्रकार की पाखंड़पूर्ण साधनाएं और आडम्बरयुक्त कर्म–कांड प्रचलित थे। जिससे धर्म का वास्तविक रूप लुप्त हो गया था। जिस कारण उनको कहना पड़ा कि –

" कलि काली राजे कसाई, धरसु पंख कर उडरिआ।
कूडु अमावस सचु चन्द्रमा दीसै नाहीं कहि चड़िया।।"

वस्तुतः हिन्दू धर्म में व्याप्त विसंगतियों का निराकरण एवं परिष्कार करके हिन्दू धर्म की जिस रूप में गुरुनानक जी ने रक्षा की , उससे कोई भी उऋण नहीं हो सकता । यह उनका हिन्दू धर्म पर एक महान उपकार था। हिन्दू धर्म के प्रति उनके इस उपकार को स्वीकार करते हुए भाई संतोख सिंह 'गुरु नानक प्रकाश' व 'वाल्मीकि रामायण भाषा ' में लिखते है–

"जे जग में तन हिन्दू अहै सभि पै उपकार बिसाल कर्यो।
मानहिं जे न अधी नहीं को सम जाइ निरैपद बीच पर्यो।।"

वास्तव में गुरु नानक जी ने सिद्धों, नाथों ,योगियों , सूफियों और मुसलमानों के धर्म में व्याप्त विसंगतियों का भी परिष्कार किया और उन्हें समझाया कि सच्चा धर्म क्या है। वस्तुतः गुरु नानक जी धर्म व संप्रदाय के विरोधी नहीं थे । वे तो प्रत्येक व्यक्ति को सही धर्म का स्वरूप बताना चाहते थे। यदि कोई हिन्दू है तो अच्छा हिन्दू कैसे बना जा सकता है और यदि कोई मुसलमान है तो अच्छा मुसलमान कैसे बन सकता है।

यदि देखा जाए तो गुरुनानक जी ने धर्म का मानवीय मनोवृतियों और आचरण से सम्बन्ध स्थापित करते हुए धर्म को जीवन के व्यापक परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत किया है। उनके लिए धर्म का अर्थ है आत्म–बोध और आत्म परिज्ञान। अनासक्ति, संतोष ,सत्य, करूणा,दया,सेवा,त्याग, और सदाचार उनके लिए धर्म के अभिन्न अंग थे क्योंकि इन्हीं को धारण करने से कोई भी नर से नारायण बन सकता है।

अस्तु, गुरु नानक जी धर्म के व्यापक पक्ष के संस्थापक और मानव धर्म के पोषक थे। उनके लिए जीवन के उच्च नैतिक मूल्य ही धर्म हैं। उन्होंने धर्म को मात्र धार्मिक साधना के रूप में नहीं बल्कि सामाजिक संदर्भ के रूप में उसका प्रचार–प्रसार किया । यद्यपि आज युग बदल गया है लेकिन समस्याएं आज भी वही हैं, जो पहले थीं। आज केवल उनका रूप बदल गया है लेकिन मनोवृत्ति आज भी वही है। वर्तमान में समस्याएं आज और भी उग्र हो गई हैं। रूप वही हैं, लेकिन उनके रूपों में विविधता आ गई है। यदि देखा जाए तो नानक देव जी ने केवल अपने युग का सुधार ही नहीं किया अपितु भविष्यगामी समस्याओं का समाधान भी किया है। यह समाधान सांस्कृतिक दृष्टिकोण से किया गया है। अतः कवि की यह सांस्कृतिक उदात्तता भारतीयता की उदात्तता है। भारत राष्ट्र की उदात्तता है।

नानक देव जी जिस समाज, धर्म और परिवेश में जन्मे थे वह विकृत होते हुए भी मानवीय परंपराओं से परिचित और निष्ठावान था। अतः कवि अपनी जातीय, सांस्कृतिक ,धार्मिक ,सामाािजक और आध्यात्मिक परंपरा का ज्ञाता ही नहीं होता बल्कि प्रचारक और प्रसारक भी होता है। मानवीय परंपराएं ही भारत की राष्ट्रीय परम्परा हैं जिनकी प्रचुरता एवं अनिवार्य उपस्थिति को नानक वाणी में देखकर कहा जा सकता है कि श्री गुरुनानक देव जी सच्चे राष्ट्रीय चिंतक थे। उनका साहित्य व राष्ट्र चिंतन आज भी अनूठे रूप में समसामियक संदर्भों को सार्थक एवं प्रासंगिक बनाता है।

संदर्भ ग्रथं–

1. संत कार्य के विविध आयाम, अशोक सभ्रवाल, अरूण पब्लिशिंग हाऊस प्राइवेट लिमिटेड,चण्डीगढ़–2010
2. गुरुनानक देव , डॉ गिरिराज शरण अग्रवाल ,डायमंड बुक्स, नई दिल्ली–2003
3. हिन्दी काव्य में गुरुनानक : जीवन तथा व्यक्तित्व ,धर्मेंद्र कुमार ,नई दिल्ली–2018
4. श्री गुरु ग्रथं साहिब ,पृष्ठ 722 (तिंलग,पदा 5/17)

गुरु नानक देव जी एक महान समाज सुधारक

* डॉ. मनीषा दुबे

* सहायक प्राध्यापक, टाईम्स कॉलेज ऑफ, एजूकेशन दमोह (म.प्र.)

भारत की पावन भूमि पर कई संत–महात्मा अवतरित हुये हैं, जिन्होंने धर्म से विमुख सामान्य मनुष्य में अध्यात्म की चेतना जागृत कर उसका नाता ईश्वरीय मार्ग से जोड़ा है। ऐसे ही एक अलौकिक अवतार गुरु नानक देव जी हैं। कहा जाता है कि गुरु नानक देव जी का आगमन ऐसे युग में हुआ जो इस देश के इतिहास के सबसे अंधेरे युगों में था उनका जन्म 1469 में लाहौर से 30 मील दूर दक्षिण पश्चिम में तलवंडी रायमोय नामक स्थान पर हुआ जो अब स्थान पाकिस्तान में है। बाद में गुरुजी के सम्मान में इस स्थान का नाम ननकामा साहिब रखा गया गुरुनानक देव संत, कवि और समाज सुधारक थे धर्म काफी समय से थाथी रस्मों और रीति–रिवाजों का नाम बनकर रह गया था। उत्तरी भारत के लिये यह कुशासन और अफरा तफरी का समय था। सामाजिक जीवन में भारी भ्रष्टाचार था और न केवल हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच में ही बल्कि दोनों बड़े धर्मों के भिन्न–भिन्न संप्रदायों कि बीच भी इन कारणों से भिन्न–भिन्न सम्प्रदायों में और भी कदृरता और बैर विरोध की भावना पैदा हो चुकी थी। उस वक्त समाज की हालत बहुत बदतर थी। ब्राह्मणवाद ने अपना एकाधिकार बना रखा था। उसका परिणाम यह था कि गैर ब्राह्मण को वेद शास्त्राध्यापन से हतोत्साहित किया जाता था। निम्नजाति के लोगों को इन्हें पढ़ना बिलकुल वर्जित था। इस ऊँच नीच का गुरु नानक देव पर बहुत असर पड़ा। वे कहते हैं कि ईश्वर की निगाह में सब समान हैं।

ऊँच–नीच का विरोध करते हुये गुरुनानक देव अपनी मुखवाणी 'जपुजी साहिब' में कहते हैं कि 'नानक उत्तम नीच न कोई जिसका भावार्थ है कि ईश्वर की निगाह में छोटा–बड़ा कोई नहीं फिर भी अगर कोई व्यक्ति अपने आपको उस प्रभु की निगाह में छोटा समझे तो ईश्वर उस व्यक्ति के हर समय साथ है। यह तभी हो सकता है जब व्यक्ति ईश्वर के नाम अपना अहंकार दूर कर लेता है। तब व्यक्ति ईश्वर की निगाह में सबसे बड़ा है और उसके समान कोई नहीं। नानक देव की वाणी में:–

नीचा अंदर नीच जात, नीची हूं अति नीच।
नानक तिन के संगी साथ, वाडियां सिऊ किया रीस।।

समाज में समानता का नाता देने के लिये उन्होंने कहा कि ईश्वर हमारा पिता है और हमस ब उसके बच्चे हे और पिता की निगाह में छोटा बड़ा कोई नहीं होता। वही हमें पैदा करता है और हमारे पेट भरने के लिये खाना भेजता है। नानक जंत उपाइके, संभालै सभनाह। जिन करते करना की आ, चिंताभिकरणी ताहर।। जब हम एक पिता एकस के हम वारिक बन जाते हैं तो पिता की निगाह में जात–पात का सवाल ही नहीं पैदा होता है।

गुरू नानक जात–पात का विरोध करते हैं। उन्होने समाज को बताया कि मानव जाति तो एक ही हैं फिर यह जाति के कारण ऊंच–नीच क्यों? गुरु नानक देव ने कहा कि मनुष्य की जाति न पूछो जब व्यक्ति ईश्वर की दरगाह में जाएगा तो वहा जाति नहीं पूछी जाएगी। सिर्फ आपके कर्म ही देख जाएंगे।

गुरु नानक देव ने पित्तर–पूजा तंत्र–मंत्र और छुआ छुत की भी आलोचना की। इस प्रकार हम देखते हैं कि गुरुनानक साहिब हिंदू और मुसलमानों में एक सेतु के समान हैं। उन्होंने हमेशा ऊंच–नीच और जाति–पाति का विरोध करने वाले नानक ने सबको समान समझकर 'गुरु का लंगर' गुरु किया जो एक ही पंक्ति में बैठकर भोजन करने की प्रथा है। उन्होंने वर्णव्यवस्था का विरोध किया। गुरु नानक साहब जी ने गुहस्थ जीवन में रहते हुये अपना आध्यातिमक व सामाजिक जीवन को जीने की कला समझायी गुरु नानक साहित जी द्वारा स्थापित सिख जीवन दर्शन का आधार मानवता की सेवा, कीर्तन, सत्संग एवं एक सर्वशक्तिमान ईश्वर के प्रति विश्वास है। इस प्रकार उन्हौंने सिख्ख धर्म की आधार शिला रखी। उन्हौंने एक नये तरीके से सर्वव्यापी, सर्वशक्तिमान और सच्चे ईश्वर अकाल पुरख के प्रवचन दिये। ईश्वर निरंकार है ईश्वर आत्मा हे रचयिता है, अविस्मरणीय है, जन्म मृत्यु से परे हैं काल विहीन है, कालनिरपेक्ष है भयरहित है एवं करता पुरख है। ईश्वर सब जानने वाला, अनिृत सत्य, दाता, निखैर एवं सर्वव्यापी है। वो सतनाम है, कभी न खत्म होने वाला सदैव सत्य है। एक समाज सुधारक के रूप में गुरु नानक साहिब जी ने माहिलाओं की स्थिति, गरीबों एवं दलितों की दशा को सुधारने के लिये कार्य किये।

गुरु नानक देव जी परिश्रमी व्यक्ति के प्रति ज्यादा ध्यान देते थे एक उदाहरण दिया गया हैं एक साहूकार ने उन्हें घर भोजन करने के लिये आमंत्रित किया और उसी समय किसान ने भी अपने घर गुरुनानक जी की भोजन के लिये आमंत्रित किया। गुरुनानक जी ने दोनों को कहा कि मैं गुरु द्वारे पर आप दोनों का इंतजार करूंगा आप लोध अपने अपने घर से भोजन में रोटी सब्जी लेकर

आये। साहूकार अपने घर से सब्जी पूड़ी, हल्वा तरह तरह के शुद्ध घी से बने व्यंजन लेकर पहुँचा और गरीब किसान रोटी और सब्जी चटनी लेकर पहुँचा उसने सोचा गुरुनानक देव मेरी रूखी सूखी रोटी नहीं खायेगें साहूकार के भोजन के सामने मेरा ता भोजन अच्छा नही लगेगा लेकिन गुरुनानक देव ने एक हाथ में साहूकार की पूड़ी रखी और दूसरे हाथ में किसान की रोटी रखी और उसे हाथों से दबाया साहूकार की रोटी से खून की धारा निकली और किसान की रोटी से दूध की धारा निकली उन्हौंने किसान का भोजन किया और संदेश दिया कि किसान ने मेहनत से ये रोटी कमाई है और साहूकार ने दूसरे के धन को निचोड़ा है व्यक्ति से ब्याज लिया है उन्हौंने कहा कि मेहनत का फल मीठा होता है इसीलिये किसान की रोटी से दूध की धारा बह निकली और साहूकार की पूड़ी से खून की धारा। अतः हमें परिश्रम की रोटी खाना चाहिए कहा भी गया हैं ''परिश्रमी हाथ पवित्र हाथ''।

गुरु नानक के सम्बंध में एक बहुत मशहूर किस्सा यह है कि जब वे हरिद्वार में हरि की पौडी पर स्नान करने गए तो उन्होंने देखा कि अनेक व्यक्ति पूर्व की तरफ मुंह करके सूर्य को जल चढ़ा रहे हैं। यह देखकर नानक जी ने अपना मुंह पश्चिम की तरफ कर लिया और उसी तरफ लोटा में जल भरकर डालने लगे। लोगों ने समझा कि यह साधु दिशा का ज्ञान न होने से उल्टी तरफ जल दे रहा है इसलिये कहने लगे ''साधु बाबा'' पूर्व तो इधर है आप पश्चिम में जल क्यों दे रहे हैं? नानक बोले मेरा गांव पश्चिम की तरफ है और वही पर मेरा खेत हैं। इसलिए मै इसी तरफ मुंह करके अपने खेतों में जल दे रहा हूँ। लोग उनकी ना समझी पर हँसने लगे कि वाह इतनी दूर से आप अपने खेतो को सीचना चाहते है। नानक बोले भाइयों अगर आप का दिया हुआ जल आकाश में करोड़ों मील दूर स्थित सूर्य और पितृ लोक तक पहुँच सकता है तो मै आशा करता हूँ कि मेरा दिया हुआ जल भी मेरे खेतों में पहुँच जाएगा। क्योंकि वे तो यहां से दो सौ कोस से भी कम हैं'' सूर्य को जल देने वालो को अपनी गलती कुछ अनुभव हुई। पर परंपराकों इतने सहज में कौन तोड़ सकता है।

दूसरी घटना– लोग यह बताते है कि जब गुरु नानक परिश्चमी देशों की सैर करते करते मक्का जा पहुँचे तो रात के समय मस्जित में सो गये। जानकर या अनजान में उनके पैर उस दिशा में हो गये जिधर मुसलमानों का पवित्र काबा था। यह देखकर किसी मुल्ला ने उनको डाँटकर कहा तू तो बड़ा काफिर है जान पड़ता है जो खुदा की तरफ पैर करके सो रहा है। नानक जी ने बड़ी नम्रता से कहा ''मुल्ला साहब मैं परदेशाी बुड्ढां आदमी हूँ इसलिए दिशा का ज्ञान न होने से ऐसी भूल कर बैठा। अब आप ही मेहरबानी करके मेरे पैरों को उस दिशा में कर दे जिधर खुदा का घर न हो।'' नानक के इन मर्म वचनों को सुनकर मुल्ला बड़े चक्कर में चढ़ गया क्योंकि संसार में कौन सी दिशा और स्थान ऐसा है जहाँ ईश्वर न हो। सिर नीचा करके वहाँ से चला गया। ये दोनों घटनाये बताती है कि नानक उन पहुँचें हुए संतो में से थे वो केवल सत्य के सम्मुख ही नतमस्तक होते है। उन्होने धर्म और परमात्मा के वास्तविक तत्व को समझ लिया था और वे किसी भी प्रकार के अंधविश्वास को स्वीकार करने को तैयार न थे। यद्यपि वे हिन्दू परिवार में उत्पन्न हुये थे और आजन्म घर से उनका संबंध बना रहा पर वे बहुत–खुले विचारों के थे। उनका हिन्दुओं और मुस्लमानों में जो दोष दिखाई दिये उनका निर्भयता पूर्वक वर्णन किया। वे बहुसंख्यक देवी देवताओं को मानना लाभदायक नहीं मानते थे वरन् वेद के एकोहम् बहुस्यामि सिद्धांत के मानने वाले थे उन्होंने इस सम्बंध में कहा है।

एक दू जीभऊ लख होय, लख होय लख बीस
लख गेड़ा आखियै एक नाम जगदीस।।

अर्थात्– वह एक ही भगवान एक से दो हो जाता दो से लाख, लाख से बीस लाख और फिर अरबों और खरबों हो जाता है पर अंत में एक जगदीश ही सत्य है मक्का की यात्रा के समय जब मुसलमानों ने उनसे भगवान के स्वरूप के संबंध में प्रश्न किया तब भी उन्होने उत्तर में कहा– अब्बल अल्ला नूर उपाया कुदरत थे सब बंदे। एक नूर ते सब जग उपजे कौन भले को मंदे।

अर्थात्– सबसे पहले परमात्मा ने एक प्रकाश उत्पन्न किया और फिर संसार के सब पदार्थ उत्पन्न किया और दृष्टि से कोई एक ही परमात्मा ने बंदे है उनमें किसी को छोटा बड़ा कहता व्यर्थ हैं। साथ ही उन्होंने यह भी कह दिया कि भगवान का पूरा रहस्य तो वह स्वयं ही जानता है दूसरा कोइ उसका ठीक ठीक वर्णन नही कर सकता

तुमरी कस्तति तुमते होई।
नानक अवर न जानसि कोई।।

संदर्भ

1. ग्रंथ विभिन्न पत्र पत्रिकाये।
2. नानक देव की वाणी
3. भारतीय दर्षन

संत काव्य परम्परा में गुरु नानक देव का स्थान

* डॉ. महेश चन्द

* बी.सी. ब्लॉक, मकान न. 209 सी, शालीमार बाग–नई दिल्ली 110052.

भक्तिकाल का समय संवत् 1375 से 1700 तक माना गया है। भक्तिकाल की निर्गुण काव्यधारा और संतसंप्रदाय को ही संत काव्य धारा कहा जाता है। इस काव्य धारा के कवि संत कवि कहलाए। डॉ. नगेन्द्र ने अपने हिन्दी साहित्य के इतिहास में संतसंप्रदाय के स्वरूप के बारे में लिखा है। वे कहते हैं– 'संतसंप्रदाय विष्वसंप्रदाय है और उसका धर्म विष्वधर्म है। इस विष्वधर्म का मूलाधार है – हृदय की पवित्रता। पवित्रता सम्मत स्वाभाविक और सात्विक आचरण ने ही यहां धर्म का बृहत रूप ग्रहण किया । समस्त वासनाओं,इच्छाओं एवं द्वेषों से रहित हृदय की निस्सीम सीमाओं में विषाल धर्म का प्रवेष और समावेष संभव है। यह सब सदगुरु की कृपा से ही संभव है । वह भक्ति और मुक्ति का दाता तथा ज्ञानचक्षुओं का उद्‌घाटक है। संतकाव्य देष की राजनीतिक, धार्मिक तथा सामाजिक परिस्थितियों के फलस्वरूप रचित भावनात्मक एवं अनुभूति प्रवण जनकाव्य है। संत कवियों ने समाज कल्याण का मार्ग अपनाया और जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में षोषित और प्रताड़ित मानव की समस्त प्रवृत्तियों , परिस्थितियों तथा भावनाओं का गंभीर विचारयुक्त यथातथ्य चित्रण किया। यह वह प्रकाष स्तम्भ है जो निराषा,प्रतिषोध और प्रतिहिंसा के अंधकार में भटकते हुए मानव समाज को सदियों से प्रकाष दे रहा है और भविष्य में भी इसका मार्ग प्रषस्त करता रहेगा।'1

कबीरदास भक्तिकाल की संत काव्य धारा के महान कवि , समाज सुधारक, क्रान्तिकारी और निर्गुणवादी संत थे। कबीर जुलाहा थे उनका जन्म काषी में एक ब्राह्मण परिवार में हुआ। उनका लालन पालन नीमा और नीरू नामक जुलाहा के घर हुआ तब से वे जुलाहा कहलाए, कबीर की पत्नी का नाम लोई था तथा उनकी पुत्री कमाली तथा पुत्र कमाल था। कबीर के गुरु रामानन्द थे। उनकी मृत्यु मगहर में हुई। अनंतदास कृत कबीरपरिचई में लिखा है कि कबीर को 120वर्ष का जीवन प्राप्त हुआ था। वे संसार में 1398 से सन्1518 तक विद्यमान थे। उनका पंथ कबीर पंथ कहलाता है। इस्लाम में कबीर का अर्थ महान होता है। उनके काव्य को बीजक, कबीर ग्रंथावली, आदि ग्रंथ गुरु ग्रंथ साहिब में पढ़ा जा सकता है।

कबीर के काव्य में संत काव्यधारा की सभी विषेषताएं उनके द्वारा रचित साखी ,पद और रमैनी में मिलती हैं। उन्होंने समाज में व्याप्त अंधविष्वासों, कुरीतियों, छूआछूत, पाखंड, मूर्ति पूजा आदि का खुलकर विरोध किया तथा उनसे बचने का ईष्वर के निर्गुण जाप का उपदेष समाज को दिया। वे कहते हैं ' निरगुण राम जपहु रे भाई'।

कबीर के अनुसार संसार में जो दुख है वो माया के कारण है । जो लोग माया में डूबे हुए हैं वे इसे नहीं समझ सकते जो इसमें डूबे हुए नहीं हैं वे इसे समझ सकते हैं।

सुखिया सब संसार है खावै अरु सोवै।
दुखिया दास कबीर है जागे अरु रोवै।।

कबीरदास जी कहते हैं – कबीर इस संसार रूपी बाजार में खड़ा है और सबका भला चाहता है वह कहता है कि उसकी न किसी से दोस्ती है न किसी से बैर है अर्थात इस संसार में न उसका कोई दोस्त है न कोई दुष्मन है।

कबीरा खड़ा बाजार में मांगे सबकी खैर।
ना काहू से दोस्ती ना काहू से बैर।।

कबीरदास जी संतों के बारे में कहते हैं – संत को चाहे करोड़ों असंत दुष्ट मिले पर वह अपने संत सज्जन स्वभाव को नहीं छोड़ता जैसे चंदन के पेड़ से सांप लिपटे रहते हैं , पर वह अपनी षीतलता नहीं छोड़ता।

संत ना छांडे संतई जो कोटिक मिले असंत।
चंदन भुवंगा बैठिया , तउ सीतलता न तजंत।।

कबीरदास जी मूर्ति पूजा का विरोध करते हुए कहते हैं कि यदि पाथर अर्थात मूर्ति की पूजा करने से हरि मिल जाएं तो मैं पहाड़ की पूजा कर लूं पर घर में पत्थर से बनी आटा पीसने की मषीन चाकी की कोई पूजा नहीं करता जिससे अन्न पीसकर संसार खाता है।

पाथर पूजे हरि मिले तो मैं पूजूं पहाड़।
इससे तो चाकी भली पीस खाय संसार।। 2

भक्तिकाल की संत काव्य धारा में कबीर, रैदास, गुरु नानक देव, दादूदयाल, सुंदरदास आदि अनेक महान संत कवि हुए जिन्होंने अपनी वाणी से जनता के दुख दर्द दूर किए।

गुरु नानक

गुरु नानक देव जी एक महान संत थे। उन्होंने अपनी वाणी के द्वारा गरीब अमीर सबका उद्धार किया। अमर उजाला के ज्ञानकोष में गुरु नानक देव जी के जीवन परिचय के बारे में लिखा है। गुरु नानक देव जी सिखों के प्रथम गुरु थे। इनके जन्म दिवस को गुरु

नानक जयंती के रूप में मनाया जाता है। नानक जी का जन्म 1469 में कार्तिक पूर्णिमा को पंजाब 'पाकिस्तान' क्षेत्र में रावी नदी के किनारे स्थित तलवंडी नाम गांव में हुआ। नानक जी का जन्म एक हिन्दू परिवार में हुआ था। इनके पिता का नाम मेहता कालू जी था और माता का नाम तृप्ती देवी था। 16 वर्ष की उम्र में इनका विवाह सुलक्खनी से हुआ। इनके दो पुत्र श्रीचंद और लख्मी चंद थे। दोनों पुत्रों के जन्म के बाद गुरु नानक देव जी अपने चार साथी मरदाना, लहना,बाला और रामदास के साथ तीर्थयात्रा पर निकल पड़े। ये चारों ओर घूमकर उपदेष देने लगे। 1521 तक इन्होंने तीन यात्रा चक्र पूरे किए, जिनमें भारत ,अफगानिस्तान, फारस और अरब के मुख्य स्थानों का भ्रमण किया। इन यात्राओं को पंजाबी में उदासियां कहा जाता है।

गुरु नानक देव जी ने मूर्ति पूजा को निरर्थक माना और हमेषा ही रूढ़ियों और कुसंस्कारों के विरोध में रहे। नानक जी के अनुसार ईष्वर कहीं बाहर नहीं बल्कि हमारे अंदर ही है। तत्कालीन इब्राहिम लोदी ने इनको कैद तक कर लिया था। आखिर पानीपत की लड़ाई में इब्राहिम हार गया और राज्य बाबर के हाथों में आ गया। तब इनको कैद से मुक्ति मिली ।

गुरु नानक जी के विचारों से समाज में परिवर्तन हुआ। नानक जी ने करतारपुर'पाकिस्तान' नामक स्थान पर एक नगर को बसाया और एक धर्मषाला भी बनवाई। नानक जी की मृत्यु 22 सितंबर 1539 को हुई। इन्होंने अपनी मृत्यु से पहले अपने षिष्य भाई लहना को अपना उत्तराधिकारी बनाया, जो बाद में गुरु अंगद देव के नाम से जाने गए।

गुरु नानक देव जी को घूमने का बड़ा षौक था। घूमने के दौरान वे जहां जहां गए वहां गुरुद्वारा और धर्मषालाएं बनती चली गई। ऐसा ही एक गुरुद्वारा दिल्ली में नानक प्याऊ गुरुद्वारा है। आजतक में इस गुरुद्वारा के बनने, गुरु नानक जयंती मनाने और लंगर की जानकारी दी गई है।

गुरु नानक देव जी जब पहली बार दिल्ली आए थे तब उन्होंने नानक प्याऊ गुरुद्वारा की स्थापना की थी। वाहे गुरु जी दा खालसा, वाहे गुरु जी दी फतेह...जो बोले सो निहाल, सत् श्री अकाल यही कुछ नारे हैं जो आजकल हर गुरुद्वारे में गूंज रहे हैं। इस गुरु द्वारे का नाम नानक प्याउ कैसे रखा गया इसके पीछे एक कहानी है। गुरु नानक देव जी जब पहली बार दिल्ली आए थे तब वो इस जगह पर रुके थे । आज इस जगह को जीटी करनाल रोड के नाम से जाना जाता है। कहते हैं उस समय इस इलाके में पानी पीना नसीब नहीं होता था, जमीन से खारा पानी निकलता था, जिसके कारण लोग परेषान हो रहे थे। बच्चों की तबियत बिगड़ रही थी । तभी गुरु नानक देव जी ने अपनी षक्ति से, अपनी दृष्टि से, जमीन से मीठा पानी निकाला जिसे यहां रहने वाले अनेक लोगों न उस पानी को पिया और जिससे उनकी बीमारियां खत्म हो गईं। ये सिलसिला 500 साल बाद आज भी लगातार चल रहा है। आज भी कूंए से मीठा पानी निकलता है। आज यहां एक प्याउ है। इसी कारण इस गुरुद्वारे का नाम नानक प्याउ गुरुद्वारा रखा गया था। यहां के लागों का मानना है कि देष भर से लोग यहां आते हैं और इस पानी को पीकर जाते हैं जिसके बाद उनकी तमाम तकलीफें, तमाम बीमारियां खत्म हो जाती हैं। नानक प्याऊ गुरुद्वारे में सबसे पहले लंगर गुरु नानक जी ने षुरु किया था और तब से अब तक 500 सालों से यहां लंगर इसी तरह चलता आ रहा है। रोजाना यहां हजारों लोग खाना खाने आते हैं , कोई भी भूखा नहीं जाता। लक्खा सिंह का कहना है कि 500 सालों से यहां लंगर इसी तरह चलता आ रहा है। गुरु नानक जयंती के उपलक्ष्य में यहां पकवान बनाये जाते हैं मटर पनीर,मिक्स वेज से लेकर खीर तक की यहां व्यवस्था की जाती है।

यहां इस उत्सव को देख ऐसा लगता है जैसे खुद गुरु नानक जी यहां मौजूद हों और उनका जन्म दिन मनाया जा रहा हो, इस दिन यहां महिलाएं भी लंगर के लिए सेवा देने में पीछे नहीं हटती।

गुरु नानक देव जी की जयंती पर दिल्ली के गुरुद्वारों में लंगर से लेकर सजावट तक तैयारी की जाती है। सिख समुदाय के लिए इससे बड़ा पर्व और कोई नहीं। इसी के चलते घरों से लेकर गुरुद्वारों तक उत्सव मनाया जाता है, पकवान बनाए जाते हैं,सजावट की जाती है,केक काटा जाता है, कीर्तन किया जाता है।

गुरु नानक देव ने 'नानक वाणी' ग्रन्थ में मन, सदगुरु , साधक की समदृष्टि और नाम रूपी जल के बारे लिखा है। मन को संबोधित करते हुए नानक वाणी में लिखा है– अरे मन इस संसार में डिग कर भटको मत, हरि की प्राप्ति के सीधे मार्ग पर चल। इस संसार में पीछे तो सांसारिक भय रूपी डरावना बाघ है और आगे तृष्णा रूपी अग्नि का तालाब है। मेरा जी संषय में पड़ा हुआ है क्योंकि मुझे मुक्ति का ढंग नही आता है। नानक का कथन है कि गुरु की षिक्षा द्वारा ही मुक्त हुआ जा सकता है, सांसारिक बंधनों से मुक्त होने पर प्रियतम हरी का संग सबदिन के लिए हो जाता है।

रे मन डीगि न डोलीए सीधे मारगि धाउ।
पाछै बाघु डरावणो आगै अगनि तलाउ।।
सहसे जीअरा परि रहिओ माकउ अवनि ढंगु।
नानक गुरुमुखि छुटीए हरि प्रीतम सिउ संगु।।

सदगुरु और साधक की समदृष्टि के कारण ही हरि मिलता है जिससे फिर मरना नहीं होता । नानक वाणी में लिखा है– जिसे सदगुरु की दीक्षा होती है वही मन मारता है और मन के मारने से सांसारिक भय रूपी बाघ मर जाता है। अपने आपको पहचानने से हरि मिलता है जिससे फिर मरना नहीं होता। यदि कोई साधक एक दृष्टि से देखता हुआ चलता है तो उसका हाथ मोह रूपी कीचड़ में नहीं डूबता। इससे गुरु की षिक्षा के द्वारा ही बचा जा सकता है। इसके लिए गुरु रूपी सरोवर का पुल अर्थात् बांध बना रहता है।

बाघु मरै मन मारिऐ जिसु सतिगुरु दीखिआ होइ।
आपु पछाणै हरि मिलै बहुड़ि न मरणा होइ।।
कीचड़ हाथ न बूडई एका नदरि निहालि।
नानक गुरुमुखि उबरे गुरु सरवरु सची पालि।।

साधक को नाम रूपी जल पाने के लिए सदगुरु की आवष्यकता होती है जो उसे हरि से मिला देता है। नानक का कथन है कि – हे साधक अदि तृष्णा रूपी अग्नि को मारना है तो नाम रूपी जल प्राप्त कर किन्तु यह जल गुरुनिधि के बिना प्राप्त नहीं होता। गुरु के बिना चाहे लाखों कर्म किए जाएं सभी व्यर्थ हैं और फिर जन्म मरण के चक्कर में भटकना पड़ता है। यदि सदगुरु के

भाव के अनुसार चला जाए तो यमराज का कर नहीं लगता। नानक का कथन है कि हरि का अमर पद ही निर्मल है । उसके लिए गुरु ही अपने से षिष्य में मिलाकर उसे हरि से मिला देता है।

अगनि मरै जलु लोड़ि लहु विणु गुरनिधिजलु नाहि।
जनमि मरै भरमाईऐ जे लख करम कमाहि।।
जमु जागाति न लगई जे चलै सतिगुर भाइ।
नानक निरमलु अमर पदु गुरु हरि मेलै मेलाइ।।

निष्कर्ष रूप में जयदेव मिश्र ने नानक वाणी की भूमिका में गुरु नानक देव जी के बारे में लिखा है– 'श्री गुरु नानक देव जी महाराज हमारे देष के महान् दार्षनिक और विचारक के रूप में पूजित हैं। संत परम्परा में नानक देव जी का स्थान अग्रणी है। वह मंत्र दृष्टा और सिक्ख धर्म के प्रवर्तक हैं। श्री नानक देव जी की वाणियों एवं विचारधारा से अनुप्राणित होकर हमारे देष के एक विषिष्ट समुदाय ने सिक्ख धर्म ग्रहण किया और धीरे धीरे सारे देष में इसका प्रसार और विस्तार हो गया।

मध्यकालीन धर्म संस्थापकों में श्री गुरु नानक देव का महत्व इसलिए और भी बढ़ गया कि उन्होंने भक्ति, कर्म ,ज्ञान के साथ ही तत्कालीन सामाजिक और राजनीतिक स्थिति का भी सम्यक अनुषीलन एवं विष्लेषण किया। सजग,सचेष्ट देषभक्ति की स्त्रोत वाहिनी भी उनकी वाणियों में फूट निकली।

श्री गुरु नानक देव की वाणी में जहां एक ओर गुरु गाम्भीर्य और ज्ञान वैराग्य भक्ति का अमृत मंथन है, वहीं उनकी भाषा में अदभुत ओज और षक्ति है। उनकी वाणी की सरलता सुबोधता में साहित्य संगीत एवं कला के विभिन्न गुणों का सहज समन्वय है। फलतः उनकी वाणी हृदय और मस्तिष्क को स्पर्ष ही नहीं करती प्रत्युत उन्हें अनुप्राणित भी करती है।

श्री नानक देव जी की समस्त वाणी सिक्खों के पूज्य धर्म ग्रंथ ' श्री गुरु ग्रंथ साहिब ' में संकलित है।'

संदर्भ ग्रन्थ

1. डॉ नगेन्द्र – हिन्दी साहित्य का इतिहास पृ. 115,132
2. कबीरदास पर – अनंतदास – कबीरपरिचई, हिंदी कविता – अक्षर पब्लिषर्स एण्ड डि.दिल्ली 94.द्वि.सं. 2016 , कबीर ग्रंथावली – ष्याम सुंदर दास
3. अमर उजाला – ज्ञानकोष
4. आजतक.इनटूडे.इन, 3नवम्बर 2017।
5. नानक वाणी – डाक्टर जयराम मिश्र– मित्र प्रकाषन प्राइवेट लिमिटेड, इलाहाबाद पेज 806

गुरु नानक देव की मूल्य परक शिक्षा एवं उपदेश

* निशा गुप्ता

* शोधार्थी, हिन्दी विभाग, कोटा विश्वविद्यालय, कोटा

सारांश : भारतीय सनातन संस्कृति में गुरु का स्थान सर्वोपरि माना गया है। ईश्वर प्राप्ति में गुरु एक माध्यम होता है जो परमात्मा से एकाकार और आत्मा–परमात्मा के संयोग में अहम भूमिका निर्वाह करता है। सांसारिक सुख–दुःख और हमारे आध्यात्मिक लक्ष्य गुरु के ही निमित्त होते है। मानव जीवन को गुण, धर्म, ज्ञान, विवेक और आत्मचिन्तन से परिपूर्ण करना गुरु का महत्वपूर्ण उद्देश्य होता है, जो व्यवहार की सहृदयता और हृदय की विशाल भावनाओं से एकाकार होती है। संत साहित्य के अग्रणी संत नानक देव मध्यकालीन समाज के ऐसे चमकते सितारे हैं जो कवि, गुरु, समाज सुधारक, धर्म सुधारक, गृहस्थ, देशभक्त एवं विश्व बन्धु आदि गुणों को अपने में समेटे हुए है। उनकी वाणी में सूफी, प्रेम साधना कबीर की समाज सुधारक उपदेश परक व्यंजना तथा विश्व बंधुत्व की भावना का संचार हुआ है। उनकी वाणी अपने में प्रासंगिकता लिए हुए लोकमंगल की विधायी भावना से आत्मसात् हुई है जो मावनता से एकात्मक होकर उसके कल्याण और पारलौकिकता की अभिव्यक्ति को दर्शाती है।

उत्तर भारत में नवीन युग चेतना के प्रवर्तक, विलक्षण प्रतिभा के धनी, जीवन को उदात्त और सौहार्दभाव से जोड़ने तथा न्यायपूर्ण समाज की जोरदार हिमायत करने वाले मध्यकालीन भारत के महान आध्यात्मिक संतो में अग्रगण्य, निष्ठावान साधक, क्रान्तिदर्शी समाज सुधारक, मानवतावादी महान् चिंतक, प्रगतिशील पंथ के प्रवर्तक, कर्म–जीवन की सम्पूर्णता, नैतिकता और आध्यात्मिकता के सशक्त पक्षधर, सिख पंथ के प्रवर्तक गुरु नानक देव का जन्म एक खत्री परिवार में हुआ। यद्यपि गुरु नानक का जन्म वैशाख मास में हुआ था किन्तु कार्तिक पूर्णिमा के दिन उसे मनाए जाने की परम्परा विकसित हो गई है। अनेक जन्म साखियों से गुरु नानक के जीवन वृतांत की स्त्रोत सामग्री प्राप्त होती है। ये जन्म साखियां मौखिक रूप से पीढ़ी दर पीढ़ी सुनी – सुनाई जाती रही। मध्य युग से पहले गुरु नानक सम्भवतः अकेले धर्मगुरु है, जिन्होंने उस युग के राजनीतिक आतंकवाद, हिंसा, अत्याचार और दमन के प्रति निर्भयता से अपना असंतोष प्रकट किया।

गुरु नानक देव कवि और मनीषी होने के साथ – साथ भारतीय जन जागरण के उन्नायक रहें। उन्होंने मध्ययुगीन समाज को राम रसायन नाम की सबसे बड़ी शक्ति प्रदान की। राम रसायन की शक्ति वास्तव में एक चमत्कार पैदा कर देती है। राम रसायन ने नानक देव को अध्यात्म तत्त्व का मर्मज्ञ मनीषी तथा दुनियां का एक महान् युग दृष्टा कवि बना दिया। पृथ्वी पर उनके अवतरण के समय गरीबी, भूखमरी, अन्धविश्वास, अशिक्षा आदि दासताजन्म बुराइयाँ पनप रही थी। जातीय स्वाभिमान मर चुका था। भारतीय समाज हीन और कायर हो चुका था। भारतीय तत्व चिन्तन को लोग भूल चुके थे। भारतीय संस्कृति लुप्त होकर पतन की ओर अग्रसर हो रही थी। भारतीय समाज परावलम्बी, परमुखपेक्षी और यथास्थितिवादी बन गया था। पुरातत्व सामाजिक आदर्श और परम्पराएं विस्मृत होकर गर्त में जा रही थी। जनता के व्यक्तित्व को पराधीनता से जन्म होने वाली हीनताओं ने कुंठित कर दिया था। इसी खिन्नता, निराशा और अवसाद के युग में गुरु नानक देव जी ने भारत – भूमि पर पदार्पण किया और इनकी वाणियों के आलोक की धरा ने थोड़े ही समय में समाज में आपादमस्तक अपने में समेट लिया।

अपनी वाणी में गुरु नानक देव ने सर्वप्रथम "हिन्दुस्तान" की अस्मिता की बात उठाई। सामाजिक असमानता और शोषण का प्रतिरोध करते हुए उन्होंने घोषणा की – जो नीचों से भी अधिक नीच हैं, नानक देव सदैव उनके साथ है। उनका दृढ़ विश्वास था कि आर्थिक विषमता के होते हुए सामाजिक समानता की कल्पना कदापि नहीं की जा सकती है। नानक देव ने यह सिद्ध कर दिखाया कि धनी वर्ग की रोटियों में उत्पीड़ित दलितों का रक्त है, जबकि निर्धनों की श्रम – अर्जित रोटियों में दूध होता है।

प्रेम, सद्भाव, एकता और सदाचार के प्रतीक गुरु नानक देव ने अपने समय की आडम्बर युक्त कर्मकाण्डों तथा पाखण्डपूर्ण साधनाओं पर प्रहार करते हुए लोगों को सत्य का मार्ग बतलाया। उन्होंने सूफियों और मुसलमानों के धर्म में व्याप्त विसंगतियों का परिष्कार करने का प्रयास किया। वे प्रत्येक व्यक्ति को उसके धर्म से अवगत करवाना चाहते थे। वे किसी धर्म अथवा सम्प्रदाय के विरोधी नही थे। उन्होंने अच्छा हिन्दू, अच्छा मुसलमान, अच्छा योगी, अच्छा सूफी बनने का मार्ग प्रशस्त कर धर्म का मानवीय मनोवृत्तियों, आचरण व व्यवहार से सम्बन्ध स्थापित करके धर्म को जीवन के विस्तृत परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत किया। उन्होंने आध्यात्मिकता और धर्म को

परलोक, मुक्ति, निर्वाण आदि तक ही सीमित नहीं रखा बल्कि इसे इहलौकिक जीवन के सरोकारों से साक्षात् जोड़ा। मनुष्य को उसी के एकाकी बोध से बाहर निकालकर उसे सामाजिक बोध से अवगत कराया। नानक देव ने मनुष्यों को अन्याय, शोषण और अत्याचार के विरूद्ध डटकर मुकाबला करने की प्रेरणा दी। समता, बन्धुता और स्वतंत्रता को आधार बनाने वाले मूल्यों के प्रति मनुष्यों को सचेत किया तथा इन मूल्यों की रक्षा के लिए अपना स्वर्स्व न्यौछावर करने का आह्वान किया। नानक देव के लिए धर्म का अर्थ था – "आत्मबोध" और "आत्म परिज्ञान"। उन्होंने त्याग, सेवा, सदाचार, परोपकार, दया, करूणा, सत्य, अनासक्ति और संतोष को धर्म का अभिन्न अंग माना। उन्होंने मानव का लक्ष्य मानव सेवा, निष्कपट प्रेम और मानव कल्याण को माना।

भारतीय समाज को कर्मठ और कर्तव्यनिष्ठ बनाकर चुनौतियों को साहसी बनकर स्वीकार करने की प्रेरणा गुरु नानक देव ने दी। उन्होंने अपनी वाणियों में भाग्य देव, दिष्ट अथवा भवितव्य पर विश्वास प्रकट करने के साथ पुरूषार्थ की बात पर विशेष जोर दिया। पुरूषार्थ हमारे स्वयं के हाथ में होता है जबकि भाग्यचक्र हमारे हाथों में नहीं होता। मनुष्यता के विकास के लिए उन्होंने जबर्दस्त जेहाद छेड़ा और अपनी मातृभूमि के सेवा और आदर करने तथा एक साथ मिलकर चलने का संदेश दिया। गुरु नानक देव मनुष्य की कृतकार्यता का जगह–जगह अपनी वाणियों में बखान किया है। उन्होंने वेदों को अपनाने, उपनिषदों के बल – संचय के आह्वान, गीता के कर्मयोग, और महाभारत के पाणिवाद की एक बार फिर दुंदुभि बजाई है।

गुरु नानक देव के संदेश का मुख्य बिन्दु एकता, समता और मानवीय बन्धुता के भाव का प्रतिपादन करना रहा है – "एक पिता एकस के हम बारिक" अर्थात् हम सभी का पिता "परमेश्वर" एक है और हम सब उसी की संतान है – यह सिद्धान्त उनकी मूल भावना है। उन्होंने जात–पांत, छुआछुत, ऊंच–नीच, बाह्याडम्बर, धनी–निर्धन आदि के विभेद का कड़ा विरोध किया। उन्होंने मानव के अन्दर पनप रही ज्योति को पहचानने को कहा। मनुष्य जैसा कर्म करता है वैसा ही उसका संस्कार बनता है इस संस्कार को वह हमेशा अपने साथ लेकर चलता है और इसका फल उसे अगले जन्म में भी मिलता है। मनुष्य को निरन्तर कर्मरत रहना चाहिए। फल की इच्छा नहीं करनी चाहिए। कर्म का फल मनुष्य को स्वतः ही मिल जाता है। जैसा कि श्रीमद्भगवद्गीता में कहा गया है –

"कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।
मा कर्मफलहेतुर्भुर्मा ते संगोऽस्त्वकर्मणि।।"

गुरु नानक देव "भभै भालहिं से फल पावहि" कहकर मानव को श्रमशील बनाना चाहते है। गुरु नानक देव कहते है कि जिस तरह की सेवा का कार्य कोई करता है उसे वैसा ही फल निश्चित रूप से मिलता है। जपुजी के अन्तिम श्लोक में कहा गया है कि धर्मराज सभी प्राणियों की अच्छाई – बुराई की जाँच – पड़ताल करते है। कर्म के कारण ही कुछ मानव प्रभु के निकट आ जाते है और कुछ मानव प्रभु से दूर हो जाते है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने "भारतीय संस्कृति की समस्याएँ" नामक निबंध में कहा है कि हिन्दू संस्कृति की सबसे बड़ी विशिष्टता यह है कि इसमें कर्मफल के सिद्धान्त पर गहरी आस्था पाई जाती है। संसार के अन्य किसी भी समाज में यह बात नहीं है। कर्मफल का सिद्धान्त ही हमें अन्य धर्मों से पृथक् करता है।

गुरु नानक देव ने सभी प्राणियों को समान समझने, सभी प्राणियों में एक ईश्वरीय ज्योति के विद्यमान होने को ही सबसे बड़ी योग साधनाा माना है। योग कंठा धारण करने, शरीर पर भस्म लगाने, मूड मुडवाने, छापा – तिलक करने में नहीं है। वास्तविक योग संसार में रहकर भी सांसारिक बुराईयों से दूर रहने में है। जो सभी को समान समझता है, सभी को समान दृष्टि से देखता है, वही वास्तविक योगी है। गुरु नानक देव ने गुरु के लिए कहा है कि – गुरु मुक्ति की नाव है। गुरु ही मनुष्य को प्रेम, भक्ति तथा सेवा के मार्ग पर चलना सिखाता है। गुरु नानक देव की वाणी ईश्वरीय प्रेम की तन्मयता की परिचायक है। उनकी वाणी में ईश्वरीय प्रेम को विरहिणी स्त्री के अपने पति से मिलने की तीव्र उत्कंठा के रूप में व्यक्त किया है। गुरु नानक देव ने स्त्रियों के संबंध में आधुनिक और प्रगतिशील दृष्टिकोण की प्रतिष्ठा की। गुरु नानक देव का ह्वदय दीन – दुखियों के प्रति हमेशा द्रवित रहता है तथा शोषण के प्रति उनका विरोध स्पष्ट रूप से प्रकट होकर सामने आता है। जो निर्धन और दबे हुए व्यक्ति है गुरु नानक देव सदैव उनके साथ खड़े रहते है। गुरु नानक देव की वाणी में इतनी सरस्ता है कि राजा और रंक, लुटेरे – दुराचारी, सूफी, साधु – योगी आदि उनके चरणों में नतमस्तक हो जाते है। वे हिन्दू और मुसलमानों में भी समान रूप से वन्दनीय है।

आध्यात्मिकता के साधना–पथ को बताते हुए गुरु नानक देव कहते है कि – इच्छा मनुष्य को देवत्व के मार्ग से भटका देती है। लालच और इच्छा का परित्याग करके ही मनुष्य ईश्वर की ओर उन्मुख हो सकता है। गुरु नानक देव नाम स्मरण पर बहुत बल देते है। गुरु नानक देव मनुष्यों को हरि नाम स्मरण के साथ ही अच्छे कर्म करने का भी उपदेश देते है। वे कहते है कि वेद आदि शास्त्र पुकार – पुकारकर कह रहे है कि मनुष्य के पुण्य और पाप उसे स्वर्ग और नरक दिलाने वाले होते है। हम जैसा बोते है वैसा ही काटते हैं –

"ददै दोसु न दोऊ किसै दोसु करमा आपणिआं।
जे मैं कीआ सो मैं पाइआ, दोसु न दीजै अवर जना।।"
(आसा म.।)

गुरु नानक देव कहते हैं कि भला और बुरा स्वयं मानव द्वारा ही किया हुआ होता है (मंदा चंगा आपणा आपे ही कीता पावणा) आसा की वार में एक स्थान पर वे कहते है कि जब हमें अपने किए का फल स्वयं ही भोगना है तो हम बुरे कर्म ही क्यों करें –

"जितु कीता पाईअै आपणा।
स घात बुरी किऊ धालिअै।।"

वेदों और शास्त्रों में बताये गये नैतिकता के आदेश को नहीं मानना गुरु नानक देव के मत में एक बड़ा अपराध है। सत्त्व, रजस और तमस इन तीनों शाखाओं से मानव को ऊपर उठना चाहिए।

"त्रिगुणात्मिक सृष्टि अथवा पदार्थ जगत्।"

सांख्य, योग, वैशेषिक, न्याय, मीमांसा, वेदान्त इन छः दर्शनों को प्रभु ने ही बनाया है। इन्हें मनुष्यों को अपने जीवन में उतारना ही इनका एक मात्र उपयोग है।

निष्कर्ष :– गुरु नानक देव का प्राणी मात्र को दिया गया संदेश यह है कि मनुष्य को परिश्रम से कभी भी मुँह नहीं मोड़ना चाहिए किया गया परिश्रम समय आने पर निश्चित रूप से फल प्रदान करता है। मानव ने जैसे कर्म किये है उसका फल भोगने से भी उसे नहीं डरना चाहिए। सृष्टि का सम्पूर्ण लेखा – जोखा प्राणियों द्वारा किये गए कर्मों का ही फल होता है। गुरु नानक देव मानव को प्रभु इच्छा या उस प्रभु की रजा में चलने का उपदेश देते है। प्रभु इच्छा कोई ऊपर से थोपा गया विधान न होकर मनुष्य के कर्मो के अनुसार चलने वाली सृष्टि की व्यवस्था है। मन में सत्य की पुष्टि मानवीय करूणा और दानशीलता से होती है। करूणा और क्षमाशीलता धार्मिक जीवन में सर्वोपरि गुण है। उन्होंने जीवन के दुःखों को ईश्वरीय आनन्द में रूपान्तरित करने के रहस्य की तलाश की हैं। उन्होंने ब्रह्मा के चिन्तन करने वाले को ब्राह्मण माना है। इसी प्रकार सच्चे मुसलमान के लिए मेहर ही 'मस्जिद', शील ही 'रोजा' और अच्छे कर्म को ही 'काबा' माना है। उन्होंने प्रत्येक व्यक्ति को उसके सही धर्म का ज्ञान कराया है। आज हमें और हमारे समाज को आवश्यकता है कि हम गुरु नानक देव के संदेश और उनकी वाणियों को समझें और उनका अनुसरण करें।

सन्दर्भ ग्रन्थ –

1. सिख विचाराधारा गुरु नानक से गुरु ग्रन्थ साहब तक, डॉ0 महीप सिंह, प्रकाशन विभाग सूचना और प्रसारण मंत्रालय भारत सरकार, पृष्ठ – 5
2. सिक्खों के दस गुरु – गुरु नानक से गुरु गोविन्द सिंह जी तक, जतिंदर बक्शी, आाशा साहितय केन्द्र, नोएडा (यू0पी0), पृष्ठ 9
3. गुरुवाणी सुधासार, डॉ0 सत्यपाल शर्मा, महर्षि प्रकाशन संस्थान, दिल्ली, पृष्ठ 21–22
4. सिक्ख धर्म और संस्कृति, डॉ0 अमरसिंह वधान, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणासी, पृष्ठ 20–22
5. संत कवि गुरु नानक (जीवन और वाणी), डॉ0 महीप सिंह, इन्द्रप्रस्थ इंटरनेशनल, पृष्ठ 55
6. गुरुवाणी सुधासार, डॉ0 सत्यपाल शर्मा, महर्षि प्रकाशन संस्थान, दिल्ली, पृष्ठ 32–33
7. संत कवि गुरु नानक (जीवन और वाणी), डॉ0 महीप सिंह, इन्द्रप्रस्थ इंटरनेशनल, पृष्ठ 48–49
8. सिक्खों के दस गुरु – गुरु नानक से गुरु गोविन्द सिंह जी तक, जतिंदर बक्शी, आाशा साहित्य केन्द्र, नोएडा (यू0पी0), पृष्ठ 11

गुरुनानक देव की वाणी और भारतीय जीवन मूल्य

* डॉ. पंडित बन्ने

* हिंदी विभाग, भारत महाविद्यालय, जेऊर,(म.रेल), तह – करमाला, जिला – सोलापुर(महाराष्ट्र)

मध्यकालीन भारत के महान आध्यात्मिक संतों में गुरुनानक देव अग्रगण्य है। वे प्रगतिशील धर्म प्रवर्तक, क्रांतिकारी समाज सुधारक, निष्ठावान साधक एवं मानवतावादी चिंतक थे। संत महात्मा किसी भी देश और किसी धर्म में पैदा हो, वे देश – काल की परिधि में सीमित नहीं होते। उनकी वाणी एवं शिक्षाएँ सार्वजनीन और सर्वकालीन होती है।

संतों की परंपरा में गुरुनानक देव शिखों के आदि गुरु के रूप में प्रख्यात है। इन्होंने शिख संप्रदाय का प्रवर्तन किया। इनका जन्म लाहौर के पास राई भोई के 'तलवंडी' नामक गाँव में सन 1469 में हुआ था। इनके पिता का नाम कालुचंद तथा माता का नाम तृप्ता था। गुरुदासपुर के मूला नामक व्यक्ति की कन्या सुलक्खनी देवी से इनका विवाह हुआ। इन्हें श्रीचंद और लक्ष्मीचंद नाम दो पुत्र थे। परंतु गृहस्थी में इनका मन नहीं रमा। कुठ दिन नौकरी की और अंत में परिवार को ससुराल में छोड़कर भ्रमण, सत्संग और उपदेश में समय बिताने लगे। अपने संदेश प्रचार – प्रसार के लिए उन्होंने मुलतान, लाहौर, हरिद्वार, काशी, अयोध्या, प्रयाग, गया, पटना, जगन्नाथपुरी, रामेश्वरम, सोमनाथ, पुष्कर तीर्थ, कुरूक्षेत्र में गए। उन्होंने पूरे भारत की यात्रा की, साथ ही मक्का, मदिना, बगदाद, बुखारा, रूस, चीन, बर्मा, काबुल कंदहार आदि भी गए। 1539 में इनका मृत्यु हुई।

गुरुनानक की रचनाएँ 'गुरु ग्रंथ साहिब' नाम से संकलित है। 'जपुजी', 'आसा दीवार', 'रहिवास' और 'सोहिला' आदि रचनाएँ प्रसिद्ध है। गुरुनानक की वाणी में तत्कालीन राजनीतिक, धार्मिक एवं सामाजिक परिवेश की झाँकी मिलती है। जिसमें उनकी देशभक्ति की भावना व्यक्त हुई है। नानक पहले संत है जिन्होंने विदेशी आक्रमणकारियों के विरूद्ध आवाज उठाई है। जैसे –

''सुरसान खमसान कीआ, हिंदुस्तान डराइआ।
आपै दोस न देई करता जपु करि युगल चढ़ाइया।
एती मार पई क्रूर लाणै तै कह दरदुन आइया।।''

नानक समूची भक्ति परंपरा से अलग है। जिसने स्त्री की निंदा न की हो। नानक महते हैं –

''जिन – जिन मोहन पटीआ माँगी पाइ संधूर।
ते सिर काती मुनी अहि गलबिचि आपै धूड।।''

जिसकी केश राशि के माँग के बीच सिंदुर सजाया जाता है, उसका केश काट दिया जाता है। वे कहते हैं कि जन्म देनेवाली भी नारी, पत्नी के रूप में थी नारी, फिर उसकी अवमानना क्यों?

नानक के व्यक्तित्व में सुधार, समानता और क्रांति का अद्वितीय समन्वय था। वे तत्कालीन सामाजिक, धार्मिक और राजनीतिक व्यवस्था के प्रति जागरूक थे। वे सभी वर्गों की समानता, एकता एवं सामाजिक न्याय के समर्थक थे। अपने समय की पाखंडपूर्ण साधनाओं तका आडंबरयुक्त कर्मकाण्डों पर प्रहार करते हुए गुरु नानक ने लोगों को सत्य मार्ग दिखाया। हर व्यक्ति को उसके धर्म का सही स्वरूप बताना चाहते थे। इसीलिए इन्होंने अच्छा हिंदू बनने, अच्छा मुसलमान बनने, अच्छा सूफी बनने तथा अच्छा योगी बनने का मार्ग प्रशस्त किया। उनके लिए धर्म का अर्थ था – 'आत्मबोध' और 'आत्मपरिज्ञान'। वे सदाचार, त्याग, सेवा, परोपकार, दया, करूणा, सत्य, संतोष और अनासक्ति को धर्म के अभिन्न अंग मानते थे। उनके अनुसार मनुष्य का लक्ष्य मानव – सेवा, मानव – प्रेम और मानव – कल्याण होना चाहिए।

गुरुनानक एकता, प्रेम, सद्भाव और सदाचार के प्रती थे। उन्होंने हिंसा की बात कहीं नहीं की। वे जाति – पाँति को समाप्त करने और सभी को समान दृष्टि से देखने की दिशा में कदम उठाते हुए 'लंगर' की प्रथा शुरू की थी। लंगर में सब छोटे – बड़े, अमीर – अमीर एक ही पंक्ति में बैठकर भोजन करते है। आज भी गुरुद्वारों में उसी लंगर की व्यवस्था चल रही है।

नानक जी ने अपने अनुयायियों को दस उपदेश दिए हैं। गुरु नानक जी की शिक्षा का मूल शिक्षा यह है कि परमात्मा एक, अनंत, सर्वशक्तिमान और सत्य है। वह सर्वत्र व्याप्त है। मूर्ति – पूजा आदि निरर्थक है। नामस्मरण सर्वोपरि तत्त्व है। गुरु नानक की वाणी भक्ति, ज्ञान और वैराग्य से ओत – प्रोत है। उन्होंने अपने अनुयायियों को जीवन की दस शिक्षाएँ दी है। जैसे –

1. ईश्वर एक है।
2. सदैव एक ही ईश्वर की उपासना करों।
3. ईश्वर की भक्ति करनेवालों को किसी का भय नहीं रहता।
4. ईश्वर सब जगह और प्राणी मात्र में मौजूद है।
5. ईमानदारी से और मेहनत करके उदरपूर्ति करनी चाहिए।
6. बुरा कार्य करने के बारे में न सोचे और न किसी को सताएँ।

7. सदैव प्रसन्न रहना चाहिए। ईश्वर से सदा अपने लिए क्षमा माँगनी चाहिए।

8. मेहनम और ईमानदारी की कमाई से जरूरतमंद को भी कुछ देना चाहिए।

9. सभी स्त्री और पुरूष बराबर है।

10. भोजन शरीर को जिंदा रखने के लिए जरूरी है पर लोभ – लालच व संग्रहवृत्ति बुरी है।

नानक विश्व को भगवान की लीला मानते हैं। पुरूष और स्त्री प्रकृति के रूप है। सबके प्रति प्रेम और आदर – भाव सदाचार का एक अंग है। नानक का कहना है –

''सभी मानव महान है, कोई तुच्छ नहीं है।''

ईश्वर ने अपने नाम से, सबके व्यक्तित्व की रचना की है। जैसे –

''एक विश्वज्योति सबमें जलती है।''

वे उस ब्रहम का वास प्रकृति (कुदरत) में मानते थे। जैसे –

''बलिहारी कुदरती बसिय।
तेरा अंत न जाई लखिया।

कहना सही है कि यह प्रकृति ब्रहम की बनाई हुई है। मनुष्य को संसार में भगवान का साम्राज्य स्थापित करना है। इसके लिए सबसे पहले अपने भीतर ही साम्राज्य स्थापित करें। इसमें सर्वत्र शांति, समृद्धि, कल्याण, प्रेम और सहानुभूति होनी चाहिए। नानक ने संगत का प्रचार किया। संगत में आकर प्रतिदिन साधक को गुरु से ज्ञान और प्रेरणा लेनी पड़ती थी। सत्संगति के विषय में नानक का गहना था कि इसका महत्व पारसमणि के समान है। जैसे – ''उत्तम संगति उत्तम होवइ।''

नानक नें जो संगत बनाई उसमें जात – पाँत, धर्म, देश, वर्ण आदि का भेद नहीं माना जाता था।

हजारी प्रसाद द्विवेदी के शब्दो में –''जिन वाणियों से मनुष्य के अंदर बड़ा अपराजेय आत्मबल और कभी समाप्त न होने वाला साहस प्राप्त हो सकता है, उनकी महिमा निःसंदेह अतुलनीय है। सच्चे हदय से निकले हुए भक्त के अत्यंत सीधे उद्‌गार और सत्य के प्रति दृढ़ रहने के उपदेश कितने शक्तिशाली हो सकते हैं, यह नानक की वाणियों ने स्पष्ट कर दिया है।''

निष्कर्ष

उपर्युक्त विवेचन एवं विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि नानक वाणी जीवन के नवीन प्रेरणा प्रदान करती है। यह वाणी आत्मबल और साहस प्रदान करनेवाली है। गुरुनानक एकता, प्रेम, सद्भाव और सदाचार के प्रतीक थे। गुरुनानक की वाणी ईश्वरीय प्रेम की तन्मयता की परिचायक है। निर्गुण महिमा, सद्‌गुरु की मानता, मूर्तिपूजा, बाहयचारों का खंडन, नामस्मरण, आचार की पवित्रता, भक्ति, ज्ञान और वैराग्य, परमात्मा के प्रति समर्पण भाव आदि इनकी वाणियों की प्रमुख विशेषताएँ हैं। वह सत्य के प्रति हर दशा में दृढ़ रहने और स्पष्ट वक्ता होनें का उपदेश देते हैं। नानक ने शील की शिक्षा दी है। शील के अंतर्गत विनय, सदाचार, मधुरता, परप्रसाद आदि गुण आते हैं। अपने प्रसन्न रहना और दूसरों को प्रसन्न रखना आवश्यक है। सिख पंथ कें प्रवर्तक होने के साथ – साथ गुरुनानक एक युग प्रवर्तक लोकनायक भी थे। वे तत्कालीन सामाजिक, धार्मिक और राजनीतिक व्यवस्था के प्रति जागरूक थे। गुरुनानक की वाणी सरल और प्रभावपूर्ण है।

संदर्भ ग्रंथ –

1. भारतीय धर्म और संस्कृति – रामजी उपाध्याय
2. हिंदी के प्राचीन प्रतिनिधि कवि – डॉ.पंडित बन्ने
3. मानव धर्म के प्रहरी – डॉ.अमरसिंह वधान

गुरु नानक देव की समन्वयात्मक दृष्टि

* डॉ. पार्वती शर्मा चाँदला

* असिस्टेंट प्रोफेसर, हिंदी-विभाग, गार्गी कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय

भारतीय धर्म साधना की धारा युगों से निर्बाध रूप से प्रवाहित है। यह शाश्वत जीवन पूर्णरूप से शाश्वत धर्म के आचरण पर अवलंबित है। यतोऽभ्युदयानि: श्रेयससिद्धि स धर्म: के अंतर्गत मनुष्य तत्त्वज्ञान के द्वारा मुक्ति प्राप्त कर 'धर्म' को आत्मसात करता है। इसी अर्थ में धर्म को कर्त्तव्य, कल्याणकारी कर्म, सदाचार और श्रेय का पयार्य माना जाता है। यह आचरण है, जिससे समाज में मानवीय कर्त्तव्यों और संबंधों का विविध रूप चरितार्थ होता है। 'धर्म' समाज और व्यक्ति के लिए वह मंगलमयी पथ प्रशस्त करता है जो सार्वकालिक, सार्वदेशिक और सार्वभौमिक के औचित्य को प्राप्त होता है। यह जीवन प्रणाली है, मनुष्य की नैतिकता का मापदंड है और जीवन की वह स्थिति है जो मनुष्य को कर्त्तव्य-बंधन में बांधती है। यह अंधविश्वास नहीं है बल्कि जीवन का वह स्वाभाविक सत्य है जो असीम और अव्यक्त के प्रति मनुष्य को जोड़ता है। 'धर्म' हार्दिक संवेदना का नाम है जो प्रत्येक व्यक्ति को कर्ममय बनने और स्वाभाविक धर्म-चेतना से युक्त होकर जागृत एवं विश्वास के साथ समष्टि में विलीन होने का व्यक्तित्व प्रदान करता है। अत: इस धर्म के व्यापक रूप में हम हिंदू धर्म को इस सृष्टि के प्राचीनतम धर्मों में आत्मसात् करते हुए इसी निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि यह वैदिक धर्म सनातन धर्म है और सभी धर्म एवं सांस्कृतिक विचारधाराएँ इसके अंतर्गत समाविष्ट हैं। इस वैदिक धर्म में आचरण, आत्म-परिष्कार तथा मानवता की सेवा को इसकी मूल साधना माना है। भारतीय समाज में धर्म और विज्ञान का कहीं कोई मतभेद नहीं है। वस्तुत: यह दोनों सत्य को जानने के दो भिन्न वह उपकरण हैं जिससे प्रकृति का यथार्थ ज्ञान और संबंध समझा जा सकता है। यह सत्य है कि 'धर्म' में भावुकता एवं विश्वास भावना प्रधानता अनुस्यूत हैं दूसरी तरफ विज्ञान तर्कसंगत पद्धति है। क्या सफल वैज्ञानिक तर्कसम्मत होते हुए भी अन्य किए गए अनुसंधानों पर विश्वास नहीं करते हैं? क्या विज्ञान में भी विश्वास का सूत्र बँधा हुआ नहीं रहता? इसीलिए जहाँ धर्म में व्यक्ति-कर्म और उसकी मनोवांछित भावना रहती है तो विज्ञान में तर्क और बुद्धि के द्वारा मनुष्य अपना कर्त्तव्य निभाता है। ऐसे में धर्म का लक्ष्य इन्हीं वैज्ञानिक रूपों से अपने क्रियात्मक स्वरूप को मनुष्य मात्र के लिए आचरणरत निर्मित करना अनिवार्य शर्त होता है। मन्दबुद्धि इसे नकारात्मक या विकार और विष जैसे शब्दों को रखकर इसी 'धर्म' शब्द की शल्य चिकित्सा तक करते हैं। मानसिक परिष्कार करना धर्म का महत्वपूर्ण आधार है, जैसे पौष्टिक और सात्विक आहार या प्राणायाम आदि क्रियाएँ शारीरिक स्वास्थ्य के लिए नितांत आवश्यक होती हैं वहीं आंतरिक शुद्धि के लिए भारतीय संस्कृति विशुद्ध आदर्श को धर्म द्वारा प्रतिस्थापित करती है। 'श्रीमद्भगवद्गीता' में मानसिक वृत्तियों की चंचलता पर अंकुश और चित्तवृत्तियों पर पूर्णतया योग को मुख्य माना है। अत: धर्म मनुष्य का वह प्रयत्न है जो उसे स्वाभाविक और वास्तविक जीवन दृष्टि प्रदान कर सुख-समृद्धिपूर्ण एक सुखद मनुष्य समाज की संकल्पना पर अवस्थित रखता है।

हिंदी साहित्य के पूर्वमध्यकाल को इतिहासकारों ने 'भक्तिकाल' और 'स्वर्णकाल' जैसे शब्दों की परिधि में बांधा है। इतिहासकार तत्कालीन राजनैतिक धार्मिक और सामाजिक परिवेश के अंतर्गत संकीर्णता, अव्यवस्था, बाह्याडंबर आदि सामान्य बातें वर्णित करते हैं। मुख्य रूप से शासन व्यवस्था (राजा) और सामान्य जनता (प्रजा) मध्यकाल में दो भिन्न संप्रदायों का प्रतिनिधित्व करती

है। इसी भक्तिकाल में उपर्युक्त असहनशील वृत्तियों के होने पर भी जिंदा रहने के अधिकार को भक्तिकाल मानो संजीवनी देता है। अनेक संत, पीर, मौलवी समाज सुधार के बल पर शासन से टकराने और जनसमाज को अपने नैतिक वचनों से कितना लाभकारी बना पाए इसी की विस्तृत भूमिका में भक्तिकाल का स्वर्णकाल में हो जाना वह वास्तविक चमत्कार है जिसने अपकर्ष से उत्कर्ष की ओर चले मनुष्य समाज का मार्ग प्रशस्त किया। संत, महात्माओं या पीर पैगम्बरों के विषय में जीवन घटनाएँ और चली आ रही बातें कब एक हो जाती हैं फिर इसी घुली मिली बातों में जो जीवन सिद्धान्त वह जन समाज को प्रदान कर गए उनमें गुरु नानक साहिब (देव) का अतिविशिष्ट स्थान है। गुरु नानक का जन्म तलवंडी (पाकिस्तान) में वि.स. 1526 को हुआ। गुरु साहिब के पिता कालू जाति के खत्री व गाँव के पटवारी थे। इनकी माता का नाम तृप्ता था। अपने सांसारिक व्यवहार के प्रति पुत्र की उदासीनता देखकर इनके पिता ने इनका विवाह निश्चित कर इस बात का संतोष किया कि पुत्र जीवन का व्यावहारिक पक्ष जानकर स्वयं अपना जीवन मार्ग और संसार बनाएगा। विधाता ने मानो इन्हें निर्णायक संत मार्ग की ओर ले जाना था। इन्हें प्रारंभ से ही अध्यात्म ज्ञान की उत्कंठा थी। तलवंडी यों तो छोट सा स्थान था किंतु अपने दृढ़ निश्चय से इन्होंने उस परमार्थ की खोज में ज्ञान प्राप्त कर स्वयं को इस योग्य बनाया कि वही तलवंडी स्थान तपस्वी, वैरागी और संन्यासी के रूप में मौखिक चर्चा से पारमार्थिक ज्ञान के फलस्वरूप संसार में विशिष्ट स्थान को प्राप्त हुआ। पिता को शीघ्र ही अपने पुत्र का असाधारण व्यवहार समझ में आने लगा। कारोबारी पिता का प्रत्येक प्रयास या अपने पुत्र को संत संगति से दूर रखने का प्रयास सदैव विफलता में ही परिवर्तित हुआ। पिता द्वारा प्राप्त राशि को पुत्र ने अभावग्रस्त जनसमाज पर खर्च करके पाया कि सच्चा सौदा यही है। मुख्य रूप से मध्ययुगीन भक्तिकाव्य और उसका स्वर आध्यात्मिक सुख प्राप्ति की लालसा और जनसमाज एंव ईश्वर के प्रति संकीर्ण दृष्टिकोण को मिटाना था। हिंदू और मुसलमान व्यर्थ के पाखंड को धर्म मानते थे और हठधर्मी इतने कि अपने धर्म की श्रेष्ठता के प्रचार को अपना लक्ष्य मानते थे। गुरु नानक ने लिखा है गुरुमुख की खोज में घरबार छोड़ा और परमात्मा से मिलने की इच्छा ने ही मुझे यह बाना धारण करने के लिए प्रवृत्त किया–

गुरमुख खोजत भए उदासी।। दरसन कै ताई भेख निवासी।।[1]

सुण सुआमी सच नानक प्रणवै अपणे मन समझाए।।

गुरमुख सबदे सच लिव लागै कर नदरी मेल मिलाए।।[2]

सतगुर कै जनमे गवन मिटाइआ।। अनहत राते इह मन लाइआ।।

मनसा आसा सबद जलाई।। गुरमुख जोत निरंतर पाई।।[3]

गुरु नानक का विचार है कि जिस शब्द से मन को वश में किया जा सकता है वह शब्द मंत्र है और उस मंत्र के भीतर देखो तो शब्द का अपना आकार है और शब्द के आकार में वह जोत है जिसे एकाग्र मन ही धारण कर सकता हे। यह शब्द सतगुरु का संकेत है जिसे पूर्णयोगी और परमात्मा का आध्यात्मिक मुमुक्षू ही प्राप्त कर सकता है। इतिहासकार गुरु नानक के कृतित्व को अनेक कृतियों में विभाजित मानते हैं जैसे जो कृतियाँ विस्तृत हैं उनमें जपजी, असां दी वार, ओंकार, बारहमासा, आदि प्रसिद्ध हैं। इसी में रहरास भी प्रमुख मानी जाती है।

दार्शनिक दृष्टि से सिद्धों के साथ हुआ वार्तालाप की कृति 'सिद्धगोसटि' प्रमुख है। 'ओंकार' कृति में प्रभु की सर्वव्यापकता, मनुष्य के भीतर उत्पन्न होने वाला अहंकार और माया की विविधता का सूक्ष्म विवेचन हुआ है। अपने अंतिम समय के करतारपुर में निवास करते हुए तुखारी राग में लिखी हुई 'बारहमासा' कृति है। अधिकांशत: पंजाब की प्राकृतिक पृष्ठभूमि में गुरु नानक की आत्मा को विरह की अभिव्यक्ति का अवसर मिला और उन्होंने अपनी अनुभूति का सूक्ष्म चित्रांकन यहाँ किया है। इनमें से 'जपुजी' या 'जपजी' पंजाबी साहित्य की दार्शनिक रचना है। जपु अर्थात् परमात्मा का सिमरन (स्मरण)। यह सिमरन सिक्ख धर्म में सर्वोपरि है। 'असां दी वार' या 'आसा की वार' सर्वप्रिय रचना है जिसमें आत्मिक शुद्धि पर बल दिया गया है। वास्तविकता यही है गुरु नानक का युग अंतर्विरोध और रूढ़ियों का युग था। बुरा देखने पर संत का ह्रदय वाणी के द्वारा प्रकट होना ही था। उनके सदविचार उन्हें लोकनायक बनाकर एक विशिष्ट व्यक्तित्व को अंतत: समाज के सम्मुख प्रस्तुत करते थे। सिक्ख समाज के लिए वह परम गुरु हैं उन्हें 'वाहे गुरु' कहा जाता है परन्तु वह स्वयं को प्रभु का सवेक मानते हैं। गुरु नानक की वाणी ब्रह्म के निर्गुण स्वरूप का प्रतिपादन इसीलिए करती है क्योंकि यह ब्रह्म

अनिर्वचनीय, वर्णनातीत और पारमार्थिक सत्ता है, जिससे प्रत्येक जीव इस ज्ञान स्वरूप और चित्तस्वरूप को जानकर जीवनमुक्त, विदेहमुक्त और बंधनमुक्त हो जाता है। मध्यकालीन धर्मसाधना संकीर्णवादी दृष्टिकोण पर प्रहार और परमात्मा के उपास्य पर प्रत्येक क्षण आबद्ध रहने का निवेदन करती है जैसे ही विषय-विकार और अज्ञानता रूपी अंधकार मनुष्य को अपने बाहुपाश में जकड़ता है उसे मुक्त करने के लिए संत महात्मा प्रकट होते हैं। गुरु साहिब बताते हैं मनुष्य जन्म अत्यन्त विशिष्ट है और हमारा शरीर परमात्मा के रहने का मूल निवास है। इसी शरीर के भीतर (मन्दिर में) प्रवेश करने का वह दरवाजा है जहाँ सच्चा प्रभु विराजित है। इसके भीतर प्रवेश करते ही वास्तविक धन की प्राप्ति तो होती ही है जो अंततः 'अमोलक धन' है। जीव माया के विनाश से भी बच सकता है-

''घर दर मंदर जाणै सोई।। जिस पूरे गुर ते सोझी होई।।
काइआ गड़ महल महली प्रभु साचा सच साचा तखत रचाइआ।।
चतुर दस हाट दीवे दुए साखी। सेवक पंच नाही बिख चाखी।।
अंतर वसत अनूप निरमोलक गुर मिलिऐ हर धन पाइआ।।''[4]

गुरु नानक के समन्वयात्मक दृष्टिकोण के अंतर्गत परमात्मा ने अव्यक्त निर्गुण से सगुण ब्रह्म को उत्पन्न किया। वह अपने दोनों रूपों में एक साथ है-

अविगतो निरमाइलु उपजे निरगुण ते सरगुण थीआ।[5]

वह निर्भय, निर्वैर, ज्योतिस्वरूप, अगम, अगोचर, निराकार, सर्वव्यापक और सच खण्ड का वासी भी है। गुरु साहिब ने ईश्वर के प्रति अपनी निष्ठा को दृढ़ करके यही जाना है कि तर्क-वितर्क से कहीं अच्छा वह परम विश्वास है जो परमात्मा को सच्चे रूप में प्राप्त कर हम सभी दुःखों से मुक्त होने का उपाय प्राप्त कर सकते हैं। शरीर को कागज, मन को दवात और अपनी जिह्वा को निरंतर सत्य लिखने वाली वह कलम मानते हैं जो एक समर्पित जीव ही अपने हृदय में धारण करके इस अखंड सत्य को लिख सकता है-

काइआ कागदु जै थीऐ पिआरे मनु मसवाणी धारि।
ललता लेखणि सच की पिआरे हरि गुण लिखहु वीचारि।।
घनु लेखारि नानका पिआरे साचु लिखै उरिधारि।।[6]

गुरु नानक देव प्रभु के सिमरन को भुलाने वाले क्षण को 'दुःख' और परमात्मा की याद कराने वाले क्षण को 'सुख' मानते हैं। जीव परमात्मा से बिछुड़कर दुःख सहते हुए भी जब हरि सिमरन करता है, वह क्षण दुःखों से मुक्त होने की औषधि है। ऊँचा होने की महानता और परख कर्मों से की जा सकती है। कर्म की सजा भोगनी पड़ती है, किंतु अज्ञानता के कारण मनुष्य अपनी निंदा नहीं सुनना चाहता। मलिनता का शिकार होने वाले जीव बाहर से हंसो की तरह कितने ही श्वेत और मोहक क्यों न दिखाई दें परन्तु दरगाह में जाते ही सच्चा परमात्मा उनके कर्मों का आकलन करता ही है। लोभ मन को मैला करता है और मिथ्या झूठ जीभ को अपवित्र करता है तथा पराई निंदा सुनने में कान अशुद्ध होते हैं, यदि यह सब बातें अपवित्र हैं तो इन्हें धारण किया हुआ जीव फिर क्यों अपवित्रता और दूसरों के प्रति हीन भावना रखता है। गुरु नानक इसी समन्वयात्मक दृष्टिकोण के परिचायक हैं। इस मूर्ख जीव को मुक्त करना उसके भीतर की अज्ञानता को मिटाकर ही संभव है। जब 'देह' ने अंततः धूल में ही मिलना है, सारी चतुराई को नष्ट होना है तो कर्म क्यों बुरे किए जाते हैं जिसकी सजा वह होती है जो जीव कदापि सहन नहीं कर सकता। यह जीव अज्ञानी है, गुरु का उपदेश इसे बंधनों से मुक्त करता है-

सहज आवै सहजे जाइ। मन ते उपजै मन माहि समाइ।।
गुर मुखि मुकतो बंधु न पाइ। सबद बीचारि छुटै हरिनाइ।।[7]

गुरु नानक देव जी की भक्ति के अंतर्गत, पादसेवन, अर्चन, वंदन आदि का वर्णन उस रूप में नहीं मिलता जिस रूप में सगुण भक्त कवियों द्वारा हुआ है। यहाँ पादसेवन निराकार ब्रह्म का है, साक्षात् मूर्ति का नहीं। इसी प्रकार अर्चन भी मूर्ति का न होकर निर्गुण ब्रह्म का है, जैसे इस नवधा भक्ति में श्रवण वह लक्षण है जहाँ भक्त अपने इष्ट के गुण, प्रभाव, रूप और लीला आदि से संबंधित कथाओं को अत्यंत श्रद्धा और प्रेमपूर्वक श्रवण करके मुग्ध होता है। गुरु नानक जी 'जपजी' में इसी श्रवण की महत्ता इस प्रकार करते हैं मानो मनुष्य चौदह लोक, पाताल और काल के प्रभाव से स्वतंत्र तो होता ही है और इसके साथ श्रवण से वेदों का ज्ञान तथा दुःख एवं पाप से भी मुक्ति मिलती है-

''सुणिऐ सिध पीर सुरिनाथ। सुणिऐ धरति धवल आकास।।
सुणिऐ दीप लोअ पाताल। सुणिऐ पोहि न सकै कालु।।
सुणिऐ अंध पावहि राहु। सुणिएं हाथ होवे पातिसाह।।
नानक भगता सदा विगासु । सुणिऐ दूख पाप का नासु।।''[8]

इसी प्रकार मनुष्य को समन्वित दृष्टि दिखाने का योग गुरु के पास समर्पित होकर ही प्राप्त किया जा सकता है। इस समस्त ब्रह्माण्ड में प्रभु का रूप समाहित है। साधक शास्त्र अनुशीलन और अपने प्रभु सिमरन ओर चिंतन में तल्लीन होकर ही उसका सान्निध्य प्राप्त कर सकता है। मनुष्य तृष्णा का दास है किंतु कृपालु इष्ट अपने दास की लाज रखता है। गुरु नानक मानते हैं प्रतिपल हमें अपने आराध्य का आभारी होना चाहिए। उसकी शरण में जाकर ही या आत्मसमर्पण के साथ प्रस्तुत होने से मोक्ष मिलता है। जगत के रचयिता केवल शुद्ध समर्पण चाहते हैं। जिस गुरमुख के हृदय में यह प्रभु वास करता है वही मुक्ति और आनंद प्रदायिनी सहज अवस्था है–

''जाके हिरदै बसिआ हरि सोइ। गुरमुखि भगति परापति होइ।।
हरि की भगति मुकति आनंदु। गुरमति पाए परमानंदु।।''[9]

भारतीय धर्म साधना में आत्मकल्याण और मुक्ति का साधन इन विषयों पर विस्तृत विवेचन हुआ है। कभी-कभी आध्यात्मिक प्रभाव से गिरकर धर्म उपासना की उन रीतियों पर पनपने लगता है जहाँ कर्मकांड और अंधविश्वास सामान्य जनता को उलझाने लगते हैं। गुरु नानक देव जी के आगमन के समय इस क्षेत्र में धर्म और विश्वास को मानने वाले अनुयायी परस्पर बहस करते थे। गुरु नानक देव प्रत्येक धर्म के अनुयायी को आत्मिक प्रेरणा अपनाने को कहते थे। जैसे कबीर ने पाखंड पर प्रहार किया और समय आने पर गुरु नानक देव ने भी इसी पाखंड पर उसी प्रकार विवेचन किया जैसे कोई सच्चा पीर फकीर करता है। जो मनुष्य अत्याचार, अन्याय और अनीति से कार्य करते हैं उनका चित्त कदापि निर्मल नहीं रह सकता। अपवित्र मन से पढ़ी गई नमाज कैसे स्वीकार हो सकती हैं? शरीर को धोकर या स्नान करके पवित्र कहलाना नितांत भिन्न है। निर्मल वह हैं जिनके शरीर में योग्य और वांछित गुण हैं, वे ही प्राणी प्रभु के अत्यंत समीप हैं–

सूचे एहि न आखीअहि बहरि जि पिंडा धोइ।
सूचे सेई नानका जिन मनि वसिआ सोइ।।[10]

गुरु नानक देव जी कर्मयोगी थे, उन्होंने श्रम के महत्व को समझा और सिक्ख धर्म में सेवा को महत्वपूर्ण स्थान दिया। वे तीर्थ और तीर्थ स्थानों को महत्वपूर्ण मानते हैं किंतु संकुचित मनुष्य ने इस तीर्थ शब्द को ही दिखावे की वस्तु मानकर अपने अनुसार उपयोग किया। नाम सिमरन और सत्य वचन यह दोनों तीर्थ स्नान के समतुल्य क्रियाएँ हैं। अहंकार का रोग भयानक और विगलनकारी है। इसी अहंकार ने इन्द्रियों के धागे को तत्क्षण तोड़ा है। यह समाज परोपकारी और स्वार्थी दोनों का मिश्रण है, ठीक उसी प्रकार वेदशास्त्र धारी और इन पर आलोचना करने वालों के अपने-अपने तर्क हैं लेकिन सद्‌गुरु अपने साधक पर उसके कर्मों की सुंदरता देखकर अपने धाम में स्थान देता है। प्रत्येक व्यक्ति निंदनीय कार्यों और अप्रिय वचन से परमात्मा को दरबार से दूर स्वयं होता है अतः गुरु नानक देव की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता यही है कि उन्होंने अपने उपदेशों को हिंदू-मुसलमानों के प्रति बिना किसी अहंकार के विनम्रतापूर्वक निवेदित किया। वही वस्तु साथ जाएगी जो स्वयं अपने हाथों से दान की जाए और जो श्रद्धा और श्रम से अर्जित हो–

''जे मोहाका घरू मुहै घरू मुहि पितरी देह।
अगे वसतु पिछानीऐ पितरी चोर करेइ।।
बढ़ी अहि हथ दलाल के मुसफी एह करेइ।
नानक आगे सो मिले खूटे घाले देह।।''[11]

मध्यकालीन संत समाज में नानक साहिब की वाणी निर्भीकता और दृढ़ता की प्रतीक है। इस समाज में सामाजिक बह्याचार की अपेक्षा मनुष्य आचरण पर या व्यावहारिक कार्यकलापों पर विशेष ध्यान दिया गया है। नानक वाणी एक सामाजिक दर्शन है, जो मनुष्य के सापेक्ष जीवन और चरित्र निर्माण से सर्वाधिक संबंध रखती है। नानक वाणी में ऐसे समाज और उसमें रहने वाले मनुष्यों की कल्पना की गई है जो जाति, धर्म, वर्ण और सामाजिक प्रतिबंधों से मुक्त होकर समन्वित रूप से अपने चरित्र निर्माण की ओर अग्रसर हों। नानक वाणी आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक असमानताओं को जड़मूल से मिटाने का प्रयास करती है। यह जीव भयभीत है और भविष्य में अनंत दुःख और कष्ट इसे सहन करने हैं। यदि तन मन से अपने अंत समय तक वह परम दयालु बना रहता है तो कृपानिधान अवश्य उसकी सहायता करेंगे–

''जीउ डरत है आपणा कै सिउ करी पुकार।।
दूख विसारण सेविआ सदा सदा दातार।।
साहिब मेरा नीत नवा सदा सदा दातार।।
अनदिन साहिब सेवीऐ अंत छडाए सोए।।''[12]

साहित्य और समाज का अन्वित संबंध है। हिंदी साहित्य का पूर्वमध्यकाल धर्म-संस्थापकों और जनसमाज के लिए इसीलिए विशिष्ट है क्योंकि उन्होंने लोकजागरण और मूल्य व्यवस्था पर अपने विचार जीवन व्यवस्था के केन्द्र में रखे। मध्यकाल के अंतर्गत उसकी भूमिका में नाथ, सिद्ध, तांत्रिक आदि से समन्वित साधनाएँ और रूढ़ियाँ अपने ठोस रूप में थीं। किंतु इसी खंडित और विभक्त जनसमाज में मुक्ति का मंत्र देने वाले साधक विशेष उल्लेखनीय हैं। मध्ययुगीन निर्गुण काव्यधारा ब्रह्म को गुणातीत रूप में स्वीकार करती है। इसी जनसमाज में गुरु नानक देव का अविर्भाव विशिष्ट घटना है। इन्होंने युग में व्याप्त पाखंड और जाति विद्रोह को दूर कर अपनी वाणी से समाज में समन्वित दृष्टि प्रदान की। समन्वयवाद का सिद्धान्त इन्हें निर्गुण कवियों में विशिष्ट बनता है। समन्वयात्मक दृष्टिकोण यही है कि पहले नानक देव जी ने इस धरती के स्वरूप को समझा तदुपरांत उस पर रहने वाली विभिन्न जातियों की भीतरी आत्मा को शुभ गुणों की ओर प्रेरित करने का प्रयत्न किया। गुरु नानक अनंत यात्रा के वह पथिक हैं जिन्होंने हिंदू धार्मिक केन्द्रों और तीर्थ स्थलों का व्यापक भ्रमण किया। यात्रा निवास में कहे गए वचन और सूत्रों को श्रोता ब्रह्मरस के रूप में आस्वादन करते थे। गुरु नानक देव जी ने अपने चारों और बने हुए विसंगतियों और पाखंड के जाल को तोड़ा। यह सच्चे अर्थों में शिक्षक, समाजसुधारक, कर्मयोगी और मानवीय संवेदनाओं के वह संत हैं जिन्होंने सत्य के आचरण पर बल दिया। गुरु नानक की वाणी मुख्यत: ब्रह्म के निर्गुण स्वरूप का ही प्रतिपादन करती है। जीव के लिए आत्मा ही चैतन्य है जो असीम व अनंत के उस अंश में ही समाहित होनी है प्रभु कृपा और गुरु कृपा अत्यंत भाग्य से ही प्राप्त हो सकती है- ''किरपा करे जो आपनी, ता सतिगुरु मेलि मिलाया'' का भाव यही है कि प्रभु कृपा के सागर हैं और इस सागर की एक बूँद भी मनुष्य को प्राप्त हो जाए तो तत्क्षण वह जीव अनंतगार का सहृदय बन जाता है।

संदर्भ

1. आदि ग्रंथ, पृष्ठ 939
2. आदि ग्रंथ, पृष्ठ 944
3. आदि ग्रंथ, पृष्ठ 940
4. आदि ग्रंथ, 66,78
5. नानक वाणी, पृष्ठ 541
6. नानक वाणी, पृष्ठ 403
7. नानक वाणी, पृष्ठ 204
8. नानक वाणी, पृष्ठ 83
9. नानक वाणी, पृष्ठ 259
10. नानक वाणी, पृष्ठ 350
11. नानक वाणी, पृष्ठ 350
12. आदिग्रंथ, पृष्ठ 660

सहायक ग्रंथ

1. उत्तरी भारत की संत परंपरा- परशुराम चतुर्वेदी 1972, लीडर प्रेस, इलाहाबाद
2. गुरु नानक देव जीवन और दर्शन- जयराम मिश्र, 1960, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद
3. नानक वाणी का भाषायी तथा दार्शनिक निरूपण- चमनलाल, सं. 1979, दिल्ली
4. नानक वाणी- जयराम मिश्र
5. सिक्ख गुरुओं का पुण्य स्मरण- हजारी प्रसाद द्विवेदी, 1979, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली

गुरू नानक के काव्य का विषय–सापेक्ष अध्ययन

* डॉ. सरिता

* सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग, श्याम लाल कॉलेज (सांध्य), दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

भारतीय धर्म साधना में समाज चेता के रूप में मध्यकालीन संतों के योगदान को भुलाया नहीं जा सकता। इन्होंने अपनी समन्वयी विचारधारा से व्यक्ति साधना के साथ–साथ समाज साधना को भी गहराई से प्रभावित किया है। धर्म सुधार की इसी प्रबल भावना ने ही उनके जीवन में आत्म चेतना का संचार किया। उन सबका प्रमुख लक्ष्य आध्यात्मिकता के साथ–साथ समाज में व्याप्त बुराई, रूढ़ विकृतियों को विनष्ट कर नई चेतना और नए स्वरूप को प्रदान करना था। गुरु नानक भी ऐसे समाज सुधारक के रूप में आते हैं जिन्होंने अपने जीवन को समाज के मूल में व्याप्त बुराइयों को खत्म करना था। गुरु नानक के कृतित्व की विशेषता उनके विचार और व्यावहार में निहित है। उन्होंने अपने आचरण के माध्यम से कर्मशीलता की जो प्राण प्रतिष्ठा की और सामान्य जनजीवन को गतिशील बनाने का जो प्रण किया वह वास्तव में अनुपमेय है। इसका कारण यह है कि गुरु नानक ने अपने परिवेश और परिस्थितियों का आकलन किया। इसलिए एक ओर उनके काव्य में जहाँ वैराग्य भाव, ज्ञान विचार और भक्ति की भावना थी, वहीं दूसरी ओर समाज विकास, लोक संग्रह एवं लोक मंगल की भावना का भी प्राधान्य था। गुरु नानक द्वारा निर्दिष्ट भक्ति पथ को ही 'नानक पथ' या 'सिख धर्म' कहा जाता है। गुरु नानक देव का जन्म 1469 में लाहौर से तीस मील दूर दक्षिण पश्चिम में तलवण्डी नामक स्थान पर हुआ जो अव पाकिस्तान में है। बाद में गुरु नानक के सम्मान में इस जगह का नाम ननकाना साहिब रखा गया।

इन्होंने धर्म से विमुख सामान्य मनुष्य में अध्यात्म चेतना जागृत कर उसे ईश्वरीय मार्ग से जोड़ा। ऐसे ही अलौकिक अवतार गुरु नानक देव जी हैं। गुरु नानक जी ने समाज में वर्ग या पुरूष स्त्री को लेकर कोई भेदभाव नहीं किया। उन्होंने सदैव स्त्री को ऊँचा स्थान दिया। नानक ने उन लोगों की निंदा की जो नारी को निकृष्ट और भला–बुरा कहते हैं। नारी एक ऐसी दया की मूर्ति है जो मनुष्य को जन्म देकर उसे पालती पोषती है–

भंडि जंमिऐ भंडि निंमीऐ भंडि मंगणु वीआहु।
भंडहु होवै दोसती भंडहु चलै राहु।
भंडु मुआ भंडु भालीऐ भंडि होवै बधानु।
से किउ मंदा आखीऐ जितु जंमहि राजानु।।

भक्ति काल में संत काव्य धारा के सभी कवि भक्ति के पथ को मुक्ति का मार्ग मानकर चलते हैं। बिना ईश्वर की भक्ति किए मनुष्य इस जगत के मोह में बंधा होता है। इस मोह से निकल कर ही भक्ति के माध्यम से समाज की सेवा की जा सकती है। भक्ति का स्वरूप और प्रयोजन निष्काम होना ही भक्ति का सिद्धान्त है। जीवन के लक्ष्य की प्राप्ति के लिए भारतीय ज्ञान परम्परा में कर्म–मार्ग, योग–मार्ग, ज्ञान–मार्ग और भक्ति–मार्ग का प्रमुख माना गया है। अब यह विश्लेषण करना आवश्यक है कि नानक जी ने इनमें से किसे चुना। वे निर्गुण निराकार परमात्मा के उपासक रहे है। नानक जी ने कर्म को महत्व दिया है। मानव सृष्टि में कर्म सब मार्गों का मूल है। इसकी व्याप्ति शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक रूपों में मानी जाती है। यही मन को जड़ से चेतन की ओर लेकर जाता है जहाँ उसी एक अविनाशी के दर्शन होते हैं। नानक जी का मानना है कि कर्म का उद्‌गम भी उसी सता से ही संभव है और उसी त्रिगुण, दशावतार और देव–दानव की सृष्टि संभव है– देव दानव गण गंधरब साजे सभि लिखिआ करम कमाइदा।

मनुष्य गलती का पुतला होता है और यह जगत रूपी माया के कारण होता है, इसलिए वह संसार के आवागमन से मुक्त नहीं हो पाता है। यह सांसारिक भाव ही मोह माया से मुक्त नहीं होने देता। विवेक के अभाव में सही गलत, पाप – पुण्य और शुभ – अशुभ का मनुष्य को आभास नहीं हो पाता है। अच्छे कर्मों से ही हमारे मन में सुविचार पैदा होंगे जिससे कर्मयोगी बनने का पथ प्रशस्त होता है। नानक जी कर्म के महत्व देते हुए कहते हैं कि –

सुखु दुखु पुरब जनम के कीए। सो जाणै जिनि दातै दीए।।
किस कउ दोसु देहि तू प्राणी सहु अपना कीआ करार हे।।

आगे वे इस बारे में और बताते हैं –

हुकमी उतमु नीचु हुकमि लिखि दुख सुख पाईअहि।।
हुकमि चलाए आपणै करमी वहै कलाम।।

अर्थात कर्म हमेशा परमात्मा के आशीर्वाद का फल है। और इसका श्रेय उसी से संभव है। परमात्मा ही मनुष्य के कर्मों का नियामक है।

ईश्वर स्मरण में कर्म का प्रारूप कैसा हो यह निर्धारित करना अति आवश्यक है कि यह बंधन मुक्त है या नहीं। कर्म को लेकर गुरु नानक जी की अवधारणा एकदम स्पष्ट है कि उन्हें बंधन स्वीकार नहीं। मानव

चेतना का ह्रास जिस भाव या कर्म से उत्पन्न होता है वह साध्य तक पहुँचने का सही साधन नहीं माना जा सकता–

आसा मनसा बंधनी भाई, कर्म धरम बंधकारी।
इन बिधि डूबी माकुरी भाई ऊंडी सिर कै भारी।।

नानक जी बंधन युक्त कर्म को और स्पष्ट करते हैं–

हउमै एहा जाति है, हउमै करम कमाहि।
हउमै एई बंधना, फिरि फिरि जोनी पाहि।।

गुरु नानक ने ऐसे समाज की कल्पना की जो समानता और कर्म के सिद्धान्त पर टिका हो। अपने समकालीन राजाओं के अन्याय और अत्याचारों की घोर निंदा की। नानकवाणी में बाबर के अत्याचारों का जो विरोध मिलता है वह पूरे संत काव्य में मानवता की एक मिसाल है –

खुरासन खसमाना कीआ हिंदुस्तानु डराइआ।
आपै दोसु न देई करता, जमु करि मुगलु चड़ाइआ।
एती मार पई करलाणे तैं की दरदु न आइआ।
क्रता तूं सभना का सोई।
जे सकता सकते कउ मारै, ता मनि रोसु न होई।।

नानक जी का रचना संसार लोक–संस्कृति का नेतृत्व करता है इस कारण से सामाजिक पीड़ा बोध यथार्थ रूप में अभिव्यक्त हुआ है। आसाराग के माध्यम से उन्होंने सामाजिक संवेदना को नए स्तर पर पहुँचाया है। विदेशी आक्रमणकारी विशेषकर बाबर का अत्याचार इसी राग में जब नानक जी प्रस्तुत करते हैं तो यह भक्तिकाल की अद्वितीय निधि बन जाता है। नानक जी ने समाज को तंतुओं का रूप माना है और यह ईश्वर प्रदत है इसे नष्ट करने का अधिकार मनुष्य को नहीं है और यदि ऐसा होता है तो इसका विरोध समाज में जरूरी है। लम्बी साधना के बाद ऐसा जीवन दर्शन मनुष्य धारण करने में सक्षम हो पाता है। नानक जी धैर्य और संयम की प्रतिबिम्ब रहे हैं यही कारण है कि असामाजिक घटित दृश्य उनके मन मस्तिष्क पर बने रहते हैं –

कहां सु घर दर मंडप महला कहां सु बंक सराई।
कहां सु सेज सुखाली कामणि जिसु वेखि नींद न पाई।।

गुरु नानक हिन्दु–मुसलमान एकता के समर्थक थे। धार्मिक सद्भाव की स्थापना के लिए ही उन्होंने सभी तीर्थों की यात्राएँ की और सभी धर्मों के लोगों को अपना शिष्य बनाया। उन्होंने हिन्दु धर्म और मुसलमान धर्म दोनों धर्मों के विचारों को सम्मिलित कर एक नये मानवता के धर्म को तरजीह दी जिसका मूल आधार– न कोई हिन्दु न कोई मुसलमान था।

समाज सुधार नानक जी की सृजनशीलता का मुख्य आधार रहा है और ऐसा तभी संभव है जब प्राणियों के बीच प्रेम और सौहार्द बना रहेगा। प्रेम उनके दार्शनिक दृष्टिकोण का बुनियादी आधार है। मानव प्रेम लौकिक संसार से अलौकिक संसार की ओर का पथ है। नानक जी के अलवा अन्य भक्त कवियों ने ईश्वर और जीव के संबंधों को व्याख्यायित करने के लिए रागात्मक संबंधों की परिकल्पना की है। संत कवियों की धारणा थी कि जीव का पोषण ब्रह्म से है और यह तभी संभव है जब ईश्वर में आस्था और प्रेम जागृत होगा। प्रेम दर्शन का भी विषय है, यह मानव जीवन का आग्रह है, इसके अलग–अलग रूप हैं और यह मानव चिंतन का आधार भी है। मनुष्य की सभी गुण इसी से निसृत हैं। इसलिए नानकवाणी में प्रेम उत्तम और श्रेष्ठ माना गया है। गुरु नानक इस प्रेम की अभिव्यक्ति के लिए उपमानों के संयोगात्मक रूप का प्रयोग करते हैं। जैसे– भ्रमर–कमल, पतंग–दीपक, चातक–मेघ, विषयी–विषय, चकोर–चन्द्रमा, और शिशु–माता आदि। नानक जी की प्रेमाभिव्यक्ति में व्याकुलता है जिसमें ईश्वर मिलन की तड़फ है। जीव ईश्वर–प्रेम पाने के लिए अनेक उपादानों का प्रयोग करता है जैसा कबीर ने 'दुल्हिन गावहुं मंगलाचार' के रूप में किया था। परन्तु नानक जी का प्रेम अलग स्वरूप में है यहाँ प्रेम में रहस्य नहीं है, बल्कि यह विशुद्ध लौकिक धरातल पर है –'नानक मिलहु कपट दर खोलहु एक घड़ी खट मास' अर्थात मिलन के विछोह में अब एक घड़ी भी छह मास के समान हो गई है। मिलन का आग्रह अर्थात साधना इतनी दुष्कर है कि यह इसे कोई संसारी वैद्य इसका उपचार नहीं कर सकता बल्कि इसके लिए मन को कैसे साधा जाये यह आवश्यक है–

वैद बुलाइया वैदगी पकड़ि ढंढोले बांह।
भोला बैदु न जाणई करक कलेजे मांह।।

नानक जी के काव्य में ज्ञान दर्शन का उल्लेख हर विषय में दृष्टिगत है। यह जीवन की चेतना और गतिशीलता के साथ जुड़ा है। ज्ञान का मार्ग सिद्धि सम्पृक्त है और मनुष्य के शरीर और मन का संयोजन है। संत काव्य धारा में इसका प्रयोग सबसे अधिक सिद्ध और नाथ कवियों ने किया। उस समय ज्ञान की साधना लौकिक नहीं थी इसे गुह्य साधना के रूप में देखा जाता था। काव्य में रहस्यवाद यहीं से उत्पन्न होता है। यह लगभग लोक से दूर होता था। गुरु नानक ने इस ज्ञान को 'भूमा' कहा है। नानक जी का यह ज्ञान गीता के ज्ञान दर्शन से प्रभावित है, स्वयं वे गीता के जानकार और संस्कृत भाषा के जानने वाले थे अतः वे इसे लोक के समीप लाने का प्रयास करते हैं। यह ज्योति अर्थात प्रकाश स्वरूप चेतना है जो गुरु से प्राप्त किया जा सकता है। यह अद्वैत–दर्शन से प्रभावित नहीं है यह सामान्य मानव संस्कृति से उद्दृत है –

गिआन विहूणी भवै सवाई।
साचा रवि रहिआ लिव लाई।
निरभउ सबदु गुरु सचु जाता
जोती जोति मिलाइदा।।

संत काव्य धारा में योग साधना को बहुत महत्व दिया गया है। ईश्वर सबके लिए असाध्य थे। असाध्य को साध्य बनाने के लिए जिन साधनों की आवश्यकता थी उनमें योग और ज्ञान को ही श्रेष्ठ माना गया था। जीव की कुण्डलिनी योग के द्वारा ही जागृत होकर ब्रह्म रूपी अनहद नाद को स्फोट करती थी। योग साधना की अपनी मान्यतायें हैं और संत समाज की परिकल्पना का यह आवश्यक आधार था। दशम द्वार, कमल नाल, अमृत धार, अनहद नाद, शून्य, समाधि, दीपक, सहज साधना आदि के माध्यम से नानक जी योग को साधारण बनाने की कोशिश करते हैं ताकि यह आम लोगों का विषय बन सके। भक्ति के रूप में यह मानव मन को एक अनूठा आनंद देता है –

जगु सूता मरि आवै जाइ।
बिनु गुर सबदि न सोझी पाइ।।
अनहद सबदु बजै दिनु राती।
अविगत की गति गुरमुखि जाती।।
सुंन समाधि सहजि मनु राता।
तजि हउ लोभा एको जाता।।

नाथ पंथ ने हठ योग को बहुत महत्व दिया और उनकी संगत में वही रह सकता था जो इस योग साधना को साधने में सक्षम होता था। भारत में आज भी इसे प्रचलित और लोकप्रिय साधना के तौर पर देखा जा सकता है। परन्तु, नानक हठ योग के प्रति उदार दिखाई नहीं देते हैं।

नानक जी जाति पाति का भी विरोध अपने रचनात्मक काव्य में करते हैं। उनका मानना है कि समाज के समस्त प्राणी एक ही पिता की सन्तान हैं 'एक पिता एकस के हम वारिक' तो जाति पाति का सवाल ही नहीं उठता। जब तक मनुष्य अपने मन के अहं का त्याग नहीं कर देता वह आपसी मैत्री और प्रेम भाव से नहीं रह सकता। सामाजिक असमानता और विभेदीकरण जातिगत भाव से ही मनुष्य के मन में पैदा होता है। यह सामाजिक संकीर्णता समाज के विकास में बाधक होती है।

कबीर आदि संतों की तरह गुरु नानक ने भी मनुष्य को इस अनमोल जीवन को व्यर्थ के कार्यों में गंवाने की बजाय ईश्वर के चरणों की ओर मन लगाने की सलाह दी है –

जागो रे जिन जागना, अब जागनि की बारि।
फेरि कि जाओ नानका, जब सोवउ पाँव पसारि।।
सचा नामु अराधिया, जम ले भन्ना जाहि।
ननक करनी सार है, गुरमुख घड़िया राहि।।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि गुरू नानक का व्यक्तित्व असाधारण और बहुआयामी था। वे एक साथ लौकिक समाज में कवि, समाज सुधारक, संगीतज्ञ, दार्शनिक और देशभक्त थे। उनका जीवन–दर्शन व्यापक, विस्तृत और प्रभावकारी था। उनकी विचार शक्ति और क्रिया–शक्ति में अनोखा सामंजस्य मौजूद था। प्रकृति प्रेमी के रूप में नानक जी ने 'तखारी' राग में बारहमासा का चित्रण किया है। संस्कृत, फारसी, पंजाबी और उस समय की सबसे प्रचलित ब्रज भाषा का ज्ञान होने कारण नानक जी को लोक संस्कृति की गहन जानकारी थी जो उन्हे समाज के नजदीक लाती है।

संत काव्य में गुरु नानक देव का स्थान

*डॉ० प्रेम प्रकाश शर्मा

* असिस्टेंट–प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, देशबन्धु कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय दिल्ली

संत काव्य में गुरु नानक देव का स्थान उच्च संत पावन भूमि पर स्थित है। वे एक महान संत थे। वे संत समाज के मणिमुकुट थे। गुरु गोरखनाथ के बाद दूसरे गुरु के रूप में वे ही अग्रणी गुरु थे । वे अन्य संतों की भांति समाज सुधारक थे। प्राणियों की सेवा करना अपना कर्तव्य समझते थे । जिसके कारण उन्होंने अपने जीवन के 24 वर्ष यात्राओं में बिता दिए । यात्राओं से मिले अनुभव को उन्होंने उपदेशों की माला बनाकर जन जन में बांट दिया। वे सच्चे देशभक्त थे। वे ज्ञानी वैरागी संत थे।

संत सम्प्रदाय में मूर्ति पूजा के स्थान पर गुरु पूजा अथवा ग्रन्थ पूजा है। संतों ने मूर्ति पूजा का विरोध किया परन्तु अपने पंथ के ग्रन्थ को ही मूर्तिवत मान लिया। कबीर पंथ, गुरु नानक देव जी का सिख पंथ, दादूदयाल का दादू पंथी, दरिया साहब का दरिया पंथी, आदि का आज भी समाज में सम्मान है ।

संतमत में जो अनेक पंथ चले उनमें जो प्रधान भावनाएं थीं, वे इस प्रकार हैं–

1 ईश्वर एक है–वह निराकार और निर्गुण है।

2 मूर्तिपूजा व्यर्थ है–उससे ईश्वर की व्यापकता सीमित हो जाती है।

3 गुरु का महत्व ईश्वर से भी अधिक है।

4 जाति–भेद का कोई बन्धन नहीं है। ईश्वर की भक्ति में सभी समान हैं।'

श्री ग्रन्थसाहब में नानक की कविता के अतिरिक्त निम्नलिखित भक्तों की कविता भी संग्रहीत है– जयदेव, नामदेव , त्रिलोचन , परमानंद, सदन ,बेनी, रामानन्द ,धना, पीपा, सेन , कबीर , रैदास, सूरदास, भीखन और मीरा ।

नामदेव महाराष्ट्री संत थे। इनका जन्म नरसी बमनी सतारा में सन् 1270 में हुआ था। भक्तमाल के अनुसार ये छीपा थे। इनकी मृत्यु सन् 1350 में 80 वर्ष की अवस्था में हुई। त्रिलोचन का नाम त्रिलोचन भूत, वर्तमान,भविष्य दृष्टा होने के कारण पड़ा।

कबीर भी संत थे। कबीर ने हिन्दू धर्म के मूल सिद्धान्तों को मुसलमानी धर्म के मूल सिद्धान्तों से मिलाकर एक नये पन्थ की कल्पना की थी जिसमें ईश्वर एक था। वह निर्गुण था। उसकी सत्ता प्रत्येक कण में थी। माया से आत्मा परमात्मा में भिन्नता का आभास होता है। गुरु की बड़ी शक्ति थी, वह गोविन्द से भी बड़ा था आदि।

कबीर ने अंधविश्वासों कुरीतियों और मुगल शासकों का अपनी साखी पद रमैनी में खुलकर विरोध किया। कबीर को हिन्दू और मुसलमान दोनों गुरु नानक देव जी के समान अपना आदर्श मानते थे। कबीर ने दोनों को निर्गुण राम का जाप करने को कहा ।

संतमत में दादूदयाल – संवत्1601–1660 का महत्वपूर्ण स्थान है। ईश्वर की व्यापकता, सतगुरु की महिमा,जातिपांति का निराकरण, आत्मबोध इत्यादि इनकी बाणी के प्रसंग थे।

मलूकदास– संवत् 1631 –सं. 1739 । इनके ज्ञानबोध, रामावतार लीला– ग्रन्थ प्रसिद्ध हैं। ज्ञानबोध में इन्होंने ज्ञान,भक्ति और वैराग्य का वर्णन किया है।

बुल्ला साहब – ये यारी साहब के शिष्य थे। इनका आविर्भाव संवत् 1750और 1825 के बीच में माना गया है। हठयोग में इनकी विशेष आस्था थी।

संत काव्य के संतों ने अपने उपदेशों से जन मानस में जोश भर दिया। जिससे वे संसार में सुखी रह सकें।1

रैदास – संत किसी भी जाति या देश की ही नहीं , अपितु मानव मात्र की अनश्वर सम्पत्ति होते हैं । उनका लौकिक जीवन अपने युग का आलोक स्तम्भ होता है। वस्तुतः कोई भी राष्ट्र उनके दैनन्दिन व्यवहार एवं क्रिया कलाप से ही अपनी जीवन शक्ति ग्रहण करता रहता है। मध्ययुग के प्रतिभा सम्पन्न सशक्त संतों में ऐसा ही गरिमामय व्यक्तित्व था संत रैदास का। चर्मकार के घर वे एक महान संत के रूप में पैदा हुए। उनका जन्म सं.1433 और मृत्यु 151 वर्ष में संवत् 1584 में हुई ।

वे कबीर की तरह निर्गुणवादी कवि थे। संत अर्थात् साधु ,सतपुरुष, सतकर्मी थे। रैदास कर्म काण्ड को महत्व नहीं देते थे। उनकी दृष्टि में ईश्वर कर्मा है, सर्वव्यापक है,अन्तर्यामी है तथा भक्ति से प्रसन्न होकर दीन दलितों का उद्धार करने वाला है। इसीलिए मूर्ति पूजा ,यज्ञ , पुराण कथा आदि की उपेक्षा करते हैं। रैदास ने स्पष्ट कहा है–' संत अनंतहि अंतरु नांहिं। ' उन्होने नाम सिमरनु पर बल दिया है। उन्होंने ईश्वर भक्ति में सत्संगति ,सत्कर्म पर बल दिया। इसमें सत्गुरु सहायक होते हैं। रैदास ने स्वामी रामानन्द को अपना गुरु माना है। ' रामानन्द मोहि गुरु मिल्यो, पायो ब्रह्म विसास। राम नाम अमीरस पीऔ, रैदास ही भयो पलास।।' आदि ग्रन्थ में उनकी यह वाणी लिखी है–

'एक ही एक अनेक होई , विसथरियो आन रे आन भरपूरि सोऊ।'

रैदास के लिए प्रभु का नाम ही वास्तविक आरती है, नाम ही तीर्थ स्थान है। इस नाम आरती का श्री गुरु ग्रन्थ साहिब में इस प्रकार वर्णन मिलता है–

नामु तेरी आरती भजनु मुरारे।
हरि के नाम बिनु झूठे सगल पसारे।।रहाउ।।

आदि ग्रन्थ में उपलब्ध रैदास की वाणी, संत गुरु रविदास वाणी – डॉ. वेणी प्रसाद शर्मा आदि उनके प्रकाशित ग्रन्थ हैं।[2]

गुरु नानक देव

गुरु नानक देवजी का जन्म 15 अप्रैल 1469 को तलवंडी पंजाब जो अब ननकाना कहलाता है में हुआ। तथा उनका निधन सन 1539 ई. में हुआ। कबीरदास जी की निर्गुण उपासना का प्रचार उन्होंने पंजाब में आरंभ किया और वे सिख संप्रदाय के आदिगुरु हुए। उनके पिता का नाम कालू और माता का नाम तृप्ता था । उनकी पत्नी का नाम सुलखनी तथा उनके दो पुत्र श्रीचंद और लक्ष्मीचंद थे।

गुरु नानक देव जी ने अपने अनुयायियों को दस उपदेश दिए जो कि सदैव प्रासंगिक बने रहेंगे। गुरु नानक देव जी की शिक्षा का मूल निचोड़ यही है कि परमात्मा एक, अनन्त, सर्वशक्तिमान और सत्य है। वह सर्वत्र व्याप्त है। मूर्ति पूजा आदि निरर्थक है। नाम स्मरण सर्वोपरि तत्व है और नाम गुरु के द्वारा ही प्राप्त होता है। गुरु नानक की वाणी भक्ति, ज्ञान और वैराग्य से ओत प्रोत है। उन्होंने अपने अनुयायियों को जीवन की दस शिक्षाएं दीं जो इस प्रकार हैं–

1. ईश्वर एक है।
2. सदैव एक ही ईश्वर की उपासना करो।
3. ईश्वर सब जगह और प्राणी मात्र में मौजूद है।
4. ईश्वर की भक्ति करने वालों को किसी का भय नहीं रहता।
5. ईमानदारी से और मेहनत करके उदर पूर्ति करनी चाहिए।
6. बुरा करने के बारे में न सोचें और न किसी को सताएं।
7. सदैव प्रसन्न रहना चाहिए। ईश्वर से सदा अपने लिए क्षमा मांगनी चाहिए।
8. मेहनत और ईमानदारी की कमाई में से जरूरतमंद को भी कुछ देना चाहिए।
9. सभी स्त्री और पुरुष समान हैं।
10. भोजन श्शरीर को जिंदा रखने के लिए जरूरी है पर लोभ–लालच व संग्रहवृत्ति बुरी है।[3]

उनके जीवन से अनेक कहानियां जुड़ी हुई हैं जो उन्हें संत सिद्ध करती हैं। उनके जन्म के समय कमरा अलौकिक प्रकाश से भर गया था । बचपन मेंश्शेषनाग खेत पर उनकी छाया करते थे।

उन्होंने ईश्वरीय यज्ञोपवीत न मिलने पर टूटने मैला होने वाला यज्ञोपवीत पहनने से इंकार कर दिया था। एक स्त्री से उसका बच्चा अपना शिष्य बनाने के लिए ले लिया था, उसका नाम मरदाना रखा । उस स्त्री के कई बच्चे मर चुके थे। वे ईश्वर को कण कण में देखते थे जहां ईश्वर वहां वे जाते थे। यही कारण है कि यात्रा से थककर काबा की ओर पैर करके सोने पर जब उनके पैरों को काबा से दूसरी तरफ घुमाया जाता तो काबा उनके पैरों की तरफ चली जाती यह देख लोगों ने उन्हें संत मानकर उनसे क्षमा मांगी और उनका सम्मान किया। उन्होंने लंगर प्रथा आरम्भ की। उनका जपुजी ग्रंथ उनके दर्शन का सार है।

गुरु नानक ने कहा ईश्वर की कृपा दृष्टि वहीं पड़ती है जहां नीचों को संभाला जाता है और उन्होंने अपना कार्य क्षेत्र उन कथित नीचों के बीच ही घोषित किया–

नीचां अंदरि नीच जाति ,
नीचीं हुं अति नीच।
नानक तिनके संगि साथ
बड़ियां सूं क्या रीस।।

सामाजिक व्यवस्था में उच्च कुल में जन्म लेने का अहम भाव बड़ी गहराई से व्याप्त रहता है। परिणाम यह होता है कि लोग अपनी जाति , अपने वर्ण और अपने कुल की मान मर्यादा के मिथ्याडम्बर में फँसकर मानवीय एकता को छिन्न भिन्न कर देते हैं। गुरु नानक ने कहा – ऐसे लोग इस संसार में विरले ही हैं जिन्हें परखकर संसार के भंडार में रखा जा सके ,जो जाति और वर्ण के अभियान से उपर उठे हुए हों , और इस प्रकार सांसारिकता से मुक्त हों–

ऐसे जन विरले जग अन्दरि , परख खजाने पाइआ।
जति बरन से भये अतीता, ममता लोभ चुकाइआ।।

ऐसी अवस्था में उन्होंने लोगों को वर्ण और जाति के मिथ्याभिमान को छोड़ने के लिए कहा, जो मानवीय समता के मार्ग में शूल बनकर बिखरा हुआ था।

अधिकांश निर्गुण संत घुम्मकड़ वृत्ति के थे, परन्तु गुरु नानक जैसी घुम्मकड़ वृत्ति का व्यक्ति मध्ययुग में हमें दूसरा दिखाई नहीं देता।

गुरु नानक ने नारी की निन्दा नहीं की , अपितु उसकी महत्ता को स्वीकार किया –

सो किऊँ मन्दा आखीए जितु जम्महि राजान?

‘ उसे बुरा क्यों कहा जाए जो बड़े बड़े राजाओं को जन्म देती है।’

गुरु नानक ने कहा – मनुष्य का मन तो ईश्वर में रहे परन्तु हाथ सांसारिक कर्त्तव्यों की पूर्ति में लगे रहे

मन करतार महिं अउर कर है किरत मँाहि।

गुरु नानक ने विदेशी भाषाओं का अन्धानुकरण करने वालों की भर्त्सना की थी–

‘ खत्रीआ तू धरम छोडिया मलेच्छ भाखा गही।’

अपने युग की धार्मिक अवस्था का वर्णन करते हुए गुरु नानक ने एक स्थान पर लिखा था–’ कलियुग कटार के समान है, राजा कसाई है और उनके राज्य से धर्म पंख लगाकर उड़ गया है। चारों ओर असत्य की अमावस छाई हुई है, उसमें सत्य का चन्द्रमा कहीं दिखाई नहीं देता। जीव उस अंधेरे में सत्य की खोज करता हुआ भ्रमित घूम रहा है, अंधकार में उसे कोई मार्ग नहीं सूझता।

‘ कलि काती राजे कसाई धरम पंख कर उडरिआ।
कूड़ अमावस सचु चन्द्रमा दीसै नाहीं , कह चड़िआ।
हउ भाल विकुन्नी होई आंधेरे राहु न कोई।

भारतीय धर्म साधना में ओ३म् का बड़ा महत्वपूर्ण स्थान है। सिख–साधना में भी इसके महत्व को अंगीकृत किया गया है। आदि गुरुग्रंथ साहिब का प्रारम्भ ही ‘ओंकार’ से होता है। गुरु नानक ने ओंकार से सम्पूर्ण सृष्टि के निर्माण की परम्परागत धारणा का अपने इन शब्दों में समर्थन किया है–

ओंकार ब्रह्मा उतपति। ओंकार कीआ जिनि चिति।
ओंकर सैल जुग भए । ओंकर वेद निरमए।।
ओंकर सबद उधारे । ओंकार गुरुमुख तारे।
ओम् अखर सुनहु बीचार। ओम् अखर त्रिभुवन सार ।।4

जपुजी साहिब यह बाणी श्री गुरु नानक देव जी की रचित है। श्री गुरु ग्रन्थ साहिब जी में इसको जपु नीसाण करके लिखा है , जिसका भाव है कि यह बाणी परमात्मा की दरगाह में पहुंचने का निशान ध्वजा है, अन्त समय जिसके पास यह निशान होगा हर कोई उसको आओ जी ! बैठो जी ! कह कर आदर सत्कार देगा। इसमें ईश्वर , गुरु महिमा, श्रवण, मनन, निदिध्यासन, नाम जप साधना, आध्यात्मिक चेतना तथा मानव जाति के दार्शनिक चिंतन का सार तत्व समाया हुआ है। इस सर्वगुण सम्पन्न बाणी को हर एक प्राणी श्रद्धा सहित पढ़ सुनकर परमगति को प्राप्त कर सकता है।

एक ओ अंकार सति नामु । परमात्मा एक है। उस का नाम सत्य है। गुर प्रसादि।। गुरु की कृपा से प्राप्त होता है। ।। जपु ।। सिमरन करो ,’ इस बाणी का नाम है’। आदि सचु जुगादि सचु।। रचना से पहिले सत्य था , जुगों के आरम्भ में सत्य था।[5].

है भी सचु नानक होसी भी सचु।।1।। अब भी सत्य है, आगे भी सत्य होगा। श्रवण– सुनने से ही सिद्ध ,पीर,देवते और नाथ हुए हैं। सुनने से दुःखों और पापों का नाश हो जाता है।– सुणिऐ दूख पाप का नासु। मनन– नाम मानने से जीव मुक्ति का द्वार पा लेता है। मनै पावहि मोखु दुआरु। निदिध्यासन–चित्तवृत्ति को एकाग्र करने

का अभ्यास । उस ईश्वर को पाने के लिए अनेकों पूजा व तपस्या करते हैं । ' असंख्य पूजा असंख्य तप ताउ। परन्तु हे निरंकार तू सदा ही स्थिर है । तू सदा सलामति निरंकार। जपुजी के अंत में नाम जप साधना, आध्यात्मिक चेतना के बारे में लिखा है – जिन्होंने नाम का स्मरण किया है वह कमाई सफल कर गए हैं। उन्होंने इस संसार में नाम जप की साधना की अध्यात्मिकता से पुण्य कमा लिया है। जिसके कारण उनके मुख उजले हैं उनके साथ और अनेक सृष्टि मुक्त हुई है।

नानक ते मुख उजले केती छुटि नालि।। 5

अंत में यही कहा जा सकता है कि संत काव्य में गुरु नानक देव समाज को जगाने में सबसे अग्रणी संत थे । वे संत शिरोमणि थे। उनका काव्य अन्य संतों की अपेक्षा सहज , सरल , जन जन को सुलभ था। उनके उपदेश आज भी जन मानस के पथ प्रदर्शक बने हुए हैं। उनका काव्य महान् श्रेष्ठ काव्य है। काव्य के सभी गुण उसमें मिलते हैं। वो महान महापुरुष संत थे । संत काव्य में गुरु नानक देव का स्थान , उनके वचन आज भी उपयोगी और अनुकरणीय हैं। जो उन्हें संत शिरोमणि बनाते हैं।

संदर्भ –

1. डॉ. रामकुमार वर्मा – हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास – कटरा रोड ,इलाहाबाद 1985 संस्करण । पृ215–268
2. रैदास– साहित्य अकादेमी दिल्ली पृ–29,39
3. प्रभा साक्षी दृ कॉम
4- गुरु गोविन्द सिंह – साहित्य अकादेमी दिल्ली पृ 7–12,17,19,58.
5- जपुजी साहिब सटीक – भाई चतर सिंह ,अमृतसर , दिल्ली।

Volume : 6 | Issue :49 | October-December2019 ISSN: 2349-1876 (Print) | ISSN : 2454-1826 (Online)

गुरु नानक देव का काव्य : मानवीय मूल्य

* डॉ. प्रिया शर्मा

* सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग, दयाल सिंह कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय

मानवता ही मानव का स्वरूपगत धर्म है। आज भी पृथ्वी संहारकारिणी दानवता से आतंकित है। यही कारण है कि नानक–काव्य आज के युगबोध के अस्तित्व से जुड़ गया है। नानकवाणी में अन्तर्विरोधों के प्रतिरोध को दूर करने की क्षमता है, समन्वय एवं सामंजस्य की विराट भावना उसमें गुम्फित है। आधुनिक युग भी पुनरुत्थानवाद का युग कहा जा सकता है। आज पुरानी मान्यताओं को त्यागकर नए मूल्यों को ग्रहण करने का प्रयास जारी है। वैसे भी आज का युग बुद्धिवादी युग है। धर्मनिरपेक्षता को बढ़ावा देने के साथ–साथ आपसी भेद–भाव बढ़ रहे हैं। ऐसे समय में नानकवाणी की विशेष प्रासंगिकता है जो आज भी उज्ज्वल प्रकाश पुंजमय स्तम्भ के समान प्रत्येक भारतीय की मार्गदर्शक है। व्यक्ति को समाज में उचित–अनुचित, कर्तव्य–अकर्तव्य का बोध कराने के लिए समाज में कुछ विधि–विधान होते हैं, जो धर्म का सामाजिक रूप कहलाते हैं। सोच समझकर बनाए गए नियमों के अनुसार संगठित रूप से चलने वाला समाज कहलाता है।[1] संस्कारों को समाज में धार्मिक रीति–रिवाज़ के रूप में स्वीकार किया जाता है। संस्कार से तात्पर्य 'शुद्धि की धार्मिक क्रियाओं और व्यक्ति के दैहिक, मानसिक और बौद्धिक परिष्कार के लिए किए जाने वाले अनुष्ठानों से है, जिनसे वह समाज का पूर्ण विकसित सदस्य बन सके।'[2] नानक युग में भारत दो भिन्न समाजों में विभक्त था – एक भारतीय धर्मसाधना का पोषक था और दूसरा अभारतीय धर्म साधना का। भारतीय धर्म–साधना का पोषक समाज अनेक धर्मों और संप्रदायों से क्षत–विक्षत होते हुए भी अपनी सांस्कृतिक एकता रखता था, किन्तु अभारतीय धर्म ने जो समाज तैयार किया वह भारतीय समाज से ण्कदम भिन्न था। हिन्दू समाज में अनेक धार्मिक संप्रदाय थे जिनमें वैष्णव, शैव और शाक्त प्रधान थे। इनके अतिरिक्त बौद्ध, जैन और वैदिक कर्मकांडी भी थे। इन धर्म साधनाओं में पारस्परिक विरोध था। परिस्थिति विशेष में ही मनुष्य के वैयक्तिक, पारिवारिक और सामाजिक संबंध सत्यासत्य की कसौटी पर सान चढ़ाते हैं।[3] नानकवाणी समाज के लिए प्रेरणा और पथस्वरूप थी। गुरु नानक देव ने अपने अनुभवों को जनसामान्य का विषय बनाया, क्योंकि जीव का जीवन–लक्ष्य आत्मोपलब्धि है।[4] उन्होंने जन–साधारण को अपना जीवन समाजवाद के अनुरूप ढ़ालने की प्रेरणा दी। उनके अनुसार जहाँ मनुष्य के लिए अपनी मेहनत और ईमानदारी से धन कमाना वांछित था, वहीं धन कमाने पर उसे स्वयं के लिए तथा दूसरों पर व्यय करना भी आवश्यक था। उनके समाजवाद में सब लोग एक साथ संगत में बैठकर भजन, पूजन, कीर्तन आदि कर सकते थे। सामाजिक भेदभाव को व्यावहारिक रूप से दूर करने के लिए उन्होंने सामुदायिक भोजन अथवा लंगर की प्रथा चलाई, जिसमें अमीर–गरीब सभी एक साथ मिलकर, एक जैसा भोजन ग्रहण कर सकते थे। उनके सहभोज में सम्मिलित राजा भी वही भोजन उसी परिवेश में करता था जैसे एक निर्धन। उनका एकमात्र उद्‌देश्य मानव को भौतिक स्तर से उठाकर आध्यात्मिक स्तर पर रख देना था। उनका महत्त्व इस बात में विशेष है कि उन्होंने विभक्त मानव की कल्पना न करके सर्वांगीण मानव की कल्पना की। मानवता की सेवा को वह भगवान की सेवा मानते थे। उनकी यह उक्ति – 'विचि दुनिया सेव कमाइये तां दरगे बैसन पाइए।' उनके मानवतावाद का निचोड़ है। गुरु नानक समाज में एकता और समता के पोषक थे। वे संसार के सभी मनुष्यों को समभाव से देखते थे। उनकी दृष्टि में सभी ऊँचे थे, कोई भी निम्न नहीं था–

सभु को उंचा आखीऐ नीचु न दीसै कोई।
इकने भांडे साजिऐ इकु चानणु तिहु लोइ।।[5]

आज जो दुःख, निराशा, आक्रोश फैला हुआ है, उसके मूल में मानव की असीम आकांक्षाएं हैं। ये अमरवेलि की भांति निरंतर स्वयं पल्लवित होती रहती हैं और धीरे–धीरे अपने आश्रयदाता पर अधिकार कर लेती हैं। कुप्रवृत्तियों का कोई भी भाग इनसे अछूता नहीं रहता। इनके कारण मनुष्य देहाभिमानी हो जाता है। इनका दमन करना सहज नहीं। गुरु नानक देव जैसा संत ही यह कार्य कर सकता था –

'मनूआ मारि निरमलु पदु चीनिआ हरि रस रते अधिकाई।'[6]

गुरु नानक देव संसार के लोगों को परमात्मा के ऐश्वर्य, सर्वशक्तिमता, अंतर्यामित्व और सर्वव्यापकता का संदेश देकर उसके सान्निध्य के आनंद की अनुभूति कराना चाहते थे। उन्होंने लोगों को परमात्म रस का आस्वादन करा के सांसारिक प्रलोभनों एवं वासनाओं से मुक्ति दिलाने का मार्ग प्रशस्त किया।[7] सभी संप्रदायों तथा मानव वर्गों के प्रति उनका व्यवहार समान था। हिन्दुओं, मुसलमानों, सिद्धों एवं सूफियों, सब के साथ उनका स्वर समान रहता था। उन्होंने मिथ्या कर्मकाण्ड पर प्रहार

किया, किंतु कभी किसी धर्म पर नहीं। अन्य लोगों के धर्मों के प्रति उनकी सहिष्णुता एवं सहानुभूति की भावना सर्वथा आधुनिक थी। धर्म सुधार संबंधी उनके विचार भक्तिमार्गी आचार्यों के विचारों से भी अधिक उदार थे।

गुरु नानक के धर्म शिक्षक तथा मुक्तिदाता के रूप का चित्रांकन भाई गुरदास ने किया है।[8] उन्होंने 'धर्म' शब्द को सदाचार के अर्थों में प्रयुक्त किया है। वह संसार के सब कार्यों से सत्य को ऊँचा मानते हैं, पर सत्य से भी ऊँचा उन्होंने सत्य आचरण को माना है –

'सचहु और सभु को उपरि सचु आचारु।'[9]

दूसरों का हक छीनना उनको स्वीकार्य नहीं है। उनका विचार है कि पराया हक मुसलमान के लिए सुअर और हिन्दू के लिए गाय है –

'हकु पराइआ नानका उसु सूअर उस गाइ।'[10]

आत्मसाक्षात्कार धर्म की सबसे बड़ी विशेषता है और इसपर गुरु नानक देव बल देते हैं –

'आतम महि रामु राम महि आतमु चीनसि गुर बीचारा।'[11]

सादा जीवन उच्च विचार हमारी संस्कृति रही है। भाग्यवती सिंह ने जीवन की गति को ही प्रगति का माध्यम माना है – जीवनगत परिस्थिति की यथार्थता के औचित्य का रखना मर्यादा की लीक पीटने से अधिक प्रगतिशील है।[12] किसी भी व्यक्ति या राष्ट्र का उत्थान मात्र शिक्षा से नहीं होता। यह हम नहीं भूल सकते कि मूल्यों का व्यावहारिक रूप नैतिकता और सदाचार से जुड़ा है – 'सामाजिक कर्त्तव्य, लोक व्यवहार संबंधी नियम, औचित्य और आचार'[13] इनके द्वारा ही मानव की शारीरिक, मानसिक, चारित्रिक एवं आर्थिक शक्तियों का विकास होता है।

भारतीय संस्कृति में 'आचारः परमो धर्मः' कहा जाता रहा है। आचार शास्त्र ही मनुष्य को जीवन–यापन की उत्तम पद्धति सिखाता है। नानकवाणी में धर्म, आचरण, दया, परोपकार, क्षमा, धैर्य, पाप न करना, निर्वैरता तथा ज्ञान आदि गुणों को आचार में लाने पर विशेष बल दिया गया है। उत्तम गुण और उत्तम आचरण परमात्मा की शीघ्र प्राप्ति में सहायक सिद्ध होते हैं। नानकवाणी में माया के पांच बाणों से बचने के लिए गुरु–शरण में जाने का मार्ग बताया गया है और इन दोषों से दूर रहने की शिक्षा दी गई है। गुरु के समान अन्य कोई तीर्थ नहीं है। संतोष रूपी सरोवर भी गुरु ही है –

'गुरु समानि तीरथु नहीं कोई।
सरु संताखु तासु गुरु होई।।[14]

मानव जीवन को सार्थक करने के लिए गुरु नानक देव ने धन–दौलत के संग्रह के अतिरिक्त हरिनाम–संग्रह पर अत्यधिक बल दिया है क्योंकि अंत में यही काम आने वाली वस्तु है। चौधरी, राजा जितना भी धन संचय कर ले, किसी का भी यहां स्थायी वास नहीं है। गुरु नानक के अनुसार सोना–चांदी इत्यादि कच्चा धन है। ऐसे धन को एकत्रित करने वाले लोग साहूकार कहलाते हैं किंतु वे द्वैतभाव में नष्ट हो जाते हैं। वास्तविक धन का संचय सद्गुरु की शरण में रहकर किया जा सकता है –

हरि धनु संचहु रे जन भाई।
सतिगुर सेवि रहहु सरणाई।।[15]

राधाकृष्ण का कथन है कि प्रत्येक मौलिक धर्म–संस्थापक व्यक्तिगत, समाजगत तथा ऐतिहासिक परिस्थितियों के अनुरूप ही अपने धार्मिक संदेश देता है।[16] नानकवाणी भी जहाँ मूलतः मनुष्य के आध्यात्मिक पक्ष को उजागर करती है वहाँ समकालीन समाज के प्रत्येक पक्ष को उजागर करके सर्वसाधारण के जीवन को सार्थक बनाती है। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। दैनिक जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए वह अनेक लोगों के सम्पर्क में आता है। आजीविका हेतु उसे कड़ा परिश्रम करना पड़ता है। अतः हर पल मनुष्य समाज से संबंधित रहता है। गुरु नानक भी अपने युग के समाज से संबंधित थे, इसलिए उन्होंने तत्कालीन त्रुटियों के विषय में अपनी वाणी में बारंबार संकेत किया है तथा मानव जीवन को आदर्श बनाने हेतु उपाय भी बताए हैं। नानकवाणी की सबसे बड़ी विशिष्टता यह है कि वह प्रवृतिमूलक है और राजनीतिक परिस्थितियों के प्रति जागरूक भी। उस समय आर्थिक एवं सामाजिक विषमता की विभीषिकाएं मानव जीवन को संत्रस्त कर रही थीं। भारतीय समाज विनाश के कगार पर खड़ा था, मानो किसी भी समय नष्ट–भ्रष्ट होने के लिए प्रतीक्षारत था –

खुरासान खसमाना कीआ हिंदुसतानु डराइआ।
एती मार पई करलाणे तैं की दरदु न आइआ।।[17]

तद्युगीन समाज नित्यप्रति बुराईयों एवं रूढ़ियों से ग्रस्त होता जा रहा था। हिंदू–मुसलमान, ब्राह्मण, शुद्र जाति–पांति के मध्य की खाई निरंतर चौड़ी होती जा रही थी। ऐसे युग में लोकजीवन को नानकवाणी की अत्यधिक आवश्यकता थी। इसमें सामाजिक, धार्मिक और आर्थिक धरातल पर साम्य की जो प्रतिष्ठा की गई है, वह निःसंदेह क्रांतिकारी भावना का प्रतीक है –

सभु को उचा आखीऐ नीचु न दीसै कोई।
इकने भांडे साजिए इकु चानणु तिहु लोई।।[18]

युगीन क्रांति के लिए जिस निर्भीकता और दृढ़ता की आवश्यकता थी, उसका नानकवाणी में प्राचुर्य है। संपूर्ण वाणी में लोकमंगल की कामना निहित है, यह मंगलसाधना लोक–प्रेम की समानार्थक है। इसका उद्देश्य बुराइयों को मिटाना है, आलोचना करना नहीं। इसमें समाज की दुर्बलता को करूणापूर्वक देखकर उसे दूर करने के मौलिक प्रयत्न किए गए हैं। भय, भर्त्सना और भक्ति ऐसे शस्त्र हैं जिनके द्वारा राजनीतिक विभीषिकाओं और सामाजिक विषमताओं को परास्त कर दिया गया है। नानकवाणी में सामाजिक व पारिवारिक संबंधों का खंडन नहीं किया गया क्योंकि गुरु नानक स्वयं गृहस्थ थे और सामाजिक संबंधों को स्वीकार करते थे –

से गिरही जो निग्रह करै।
जपु तपु संजमु भीखिआ करै।।
पुनं दान का करे सरीरु।
सो गिरही गंगा का नीरु।।[19]

जहाँ कहीं भी नानकवाणी में पारिवारिक संबंधों का खंडन किया गया है, वह मात्र यह बताने के लिए कि कहीं भी कोई भेद नहीं है सबमें परमात्मा का वास है –

(1) देही अंदरि नामु निवासी।
आपे करता है अनिवासी।।[20]
(2) सृसटि उपाइ रहै प्रभ छाजै।[21]

सामाजिक या पारिवारिक संबंधों के खंडन में गुरु नानक का यही प्रयोजन था कि लोग अपने वास्तविक स्वरूप को पहचाने। उन्होंने वेदों या पुराणों की आलोचना नहीं की, यदि कभी की है तो मात्र कर्मकाण्डी दृष्टिकोण को ध्यान में रखकर। नानकवाणी में वेदों या पुराणों को कभी झूठा नहीं कहा गया, झूठा तो वह है जो उनपर आचरण नहीं

करता। न कोई पण्डित है, न शुद्र। सबमें एक ही ज्योति विद्यमान है –

जाणहु जोति न पूछहु जाती आगे जाति न हे।[22]

परम सत्ता की प्राप्ति हेतु संयम का होना अति आवश्यक बताया गया है –

जीवदिआ मरू मारि न पछोताईए।[23]

संपूर्ण नानकवाणी मानवीय मूल्यों पर आधारित है। मानव का लोकोपयोगी एवं व्यवहारोपयोगी संबंध परंपरा और समाज से होता है। असद अली के शब्दों में – संस्कृति से तात्पर्य समाज और जीवन का सर्वांगीण संस्कार, सुधार और विकास है।[24] नैतिकता मनुष्य को कदम–कदम पर मर्यादित करती है। देवराज के शब्दों में – समाज का अस्तित्व आवश्यक रूप में नैतिक मूल्यांकन के अस्तित्व में सहचारित है।[25] आधुनिक युग में भी मानवता को सुखी बनाने के लिए गुरु नानक देव का जीवनमुक्त व्यक्ति मानवता के कल्याण के लिए लाभदायक सिद्ध हो सकता है। जीवनमुक्त व्यक्ति अहंकार रहित होता है –

जीवन मुकतु सो आखीऐ जिसु विचहु हउमे जाई।।[26]

गुरु नानक 'कथनी' और 'करनी' के विभेद को स्वीकार नहीं करते। जो कुछ कहा गया है, उसे किया भी जाना चाहिए। इस प्रकार व्यक्ति मात्र के लिए यह आवश्यक है कि वह जो कुछ कहे, उसे व्यवहार या आचरण में भी लाए। केवल कहने मात्र से किसी काम में सिद्धि या सफलता कदापि नहीं मिल सकती। गुरु नानक ने जनता को चेतन करने के लिए कविता की थी। उनका उद्‌देश्य काव्य–कौशल दिखाना नहीं था, अपितु जनता का पथ प्रदर्शन करना था। उन्हें जो श्रेष्ठ व उचित लगा, उसे अपनी वाणी में कह दिया। जो निकृष्ट और अरूचिकर लगा उसका उन्होंने विनम्र भाव से खंडन किया। नानकवाणी में लगभग संपूर्ण विश्व मानवता का वर्णन हुआ है। राजा या सुल्तान से लेकर मज़दूर तक, ब्राह्मण–काजी से लेकर चंडाल तक, पीर–पैगम्बर से लेकर मुरीद तक, सुहागिन से लेकर वेश्याओं तक, किसान से लेकर वज़ीर तक, गुरु से लेकर शिष्य तक, सब वर्ण, सब जातियों–श्रेणियों और सब स्थितियों का वर्णन विश्लेषण हुआ है। इस प्रकार नानक की कविता ने मानसिक परिवर्तन द्वारा मानवीय मूल्यों एवं मानवीय स्वभाव को बदलकर मनुष्य की चिंतन प्रक्रिया को नई और शक्तिशाली दिशा प्रदान की है। इसमें तद्‌युगीन समस्याओं का पर्याप्त मात्रा में समाधान मिलता है। भारतीय समाज की जड़ आस्थाओं की निरर्थकता को सिद्ध करते हुए उसे सुंदर बनाने का प्रयत्न किया गया है। इसमें विश्व की नाना मूर्तियों में एकत्वपूर्ण अद्वैत तत्व के परिव्याप्त होने की बात कही गई है तथा जन–साधारण को सरल भाषा के माध्यम से मूल तत्व को जीते–जागते विश्व के बीच दिखाने का प्रयास किया गया है। गुरु नानक की दृष्टि में जगत का मूल तत्व ही सत्य है, जिसका अन्ततम अस्तित्व है, अद्वैत तथा चरम सत्य है। उसके अतिरिक्त संपूर्ण विश्व का नाम रूपात्मक खेल कुछ भी नहीं है। भवसागर को पार करने के लिए गुरु और हरिनाम का सहारा आवश्यक माना गया है।

गुरु नानक ने अपनी कविता में धर्म की सरल और व्यावहारिक बातों को जनता के सामने रखा। धर्म से जो भी प्राप्त होता है, वह उसमें आचार और नीति के कारण ही प्राप्त होता है। इसी कारण नानक ने अपना ध्यान आचार और नीति पर दिया है। सत्य से भी ऊपर उन्होंने सत्य आचरण को माना है। उनके हृदय में असीम साहस और अदम्य उत्साह था। जहाँ भी मानव के व्यवहार में उन्हें अन्याय के दर्शन हुए, उसका उन्होंने विरोध किया। हमारा देश उपदेशकों से तो भरा पड़ा है, परंतु उन्हें आचरण की कसौटी पर खोटा उतरता देख मन क्षुब्ध हो जाता है। जबकि गुरु नानक देव ने 550 वर्ष पहले सत्य–आचरण का आदर्श अपनी कथनी और करनी दोनों में सिद्ध कर दिया। उस समय नानक ने अनेक प्रकार के नागा, अवधूत, कनफटे, कुमार्गगामी योगियों को देखा और उन्हें आध्यात्मिक रूपकों द्वारा वास्तविक योग समझाने का प्रयत्न किया। गुरु नानक के अनुसार यथार्थ या आंतरिक साधना में बाह्य वेश, मुद्रा आदि आवश्यक नहीं है क्योंकि उसमें तो संतोष और श्रम की मुद्रा, प्रतिष्ठा की झोली, परमात्मा के ध्यान की विभूति, नाशवान शरीर की कथा, युक्ति और विश्वास का डंडा, ब्रह्मज्ञान की भक्ति, दया का भंडारी और घट–घट में होने वाले नाद का श्रृंगीनाद होता है।

गुरु नानक की कविता में धार्मिक क्रिया–कलापों का खंडन, अवतारवाद, बहुदेववाद, मूर्तिपूजा, हिंसा, धार्मिक पुस्तकों के ज्ञान एवं तर्क आदि को अस्वीकार किया गया है। गुरु नानक ने धर्म के क्षेत्र में अंधविश्वासों को दूर करने का अनथक प्रयास किया। सामाजिक अंधविश्वासों के प्रति वे केवल बौद्धिक सहानुभूति देकर ही नहीं रह गए। उन्होंने वही बात कही, जिस बात को अनुभव किया। उन्होंने यह स्वीकार किया कि ब्रह्म साधना के लिए अन्यत्र जाने की आवश्यकता नहीं है, वह तो घट में ही विराजमान है। मानव धर्म के प्रसार के लिए उन्होंने हृदय की पवित्रता, सहजीकरण एवं सत्संग पर विशेष बल दिया। पंडितों और मुल्लाओं के बाह्यचारों का जो खंडन उन्होंने किया है, इससे यही प्रतीत होता है कि गुरु नानक के हृदय में उनके लिए टीस थी। गुरु नानक के समय के धार्मिक परिवेश में बाह्याडंबर, रूढ़िवादिता, अंधविश्वास तथा भ्रष्टाचार व्याप्त था। मुसलमान और हिन्दू दोनों ही अपना नैतिक स्तर गंवा चुके थे और सांप्रदायिकता के गर्त में पड़े हुए थे।[22] इस प्रकार मानवीय मूल्यों की स्थापना के लिए गुरु नानक ने अपने काव्य में वैरागी, संन्यासी, अवधूत, पाखंडी, गृहस्थ, उदासी इत्यादि कुछ साधकों के आदर्श रूप की परिकल्पना भी की है –

वैरागी – वास्तविक वैरागी वही है जो ब्रह्म को मन की ओर उलटे और आश्रय रूप परमात्मा को दशम द्वार में आरोपित कर दे। वह आंतरिक ध्यान में निमग्न रहे। वह वैरागी सत्य स्वरूप परमात्मा का ही हो जाता है।

संन्यासी – जो सद्‌गुरु की सेवा करता है, अपने भीतर से अहंकार नष्ट कर देता है, वही वास्तविक संन्यासी है। वह भोजन और वस्त्र की आशा नहीं रखता, जो बिना चिंता किए मिलता है, उसे पाकर संतुष्ट रहता है। वह क्षमा–धन का संग्रह करता है और तमोगुण को हरिनाम द्वारा जला डालता है।

पाखंडी – वही पाखंडी है जो शरीर धोता है, शरीर की अग्नि में ब्रह्माग्नि प्रज्वलित करता है, स्वप्न में भी वीर्य को गिरने नहीं देता, ऐसे पाखंडी की न वृद्धावस्था होती है, न मरण।

गृहस्थ – वही गृहस्थ है जो इन्द्रियों तथा मन का निग्रह करता है, परमात्मा से जप, तप, संयम की भिक्षा मांगता है, अपने शरीर को पुण्यदान करने वाला बनाता है।

उदासी – वही उदासी है, जो उदासीन – विरक्त धर्म का पालन करता है। वह अपने ही अंतर्गत चंद्रमा और सूर्य का ज्ञान एकत्र करे। ऐसे उदासी के शरीर का नाश नहीं होता।

अवधूत – वही अवधूत है जो अपनापन जला दे, कष्ट सहन को ही भिक्षा का भोजन बनाए, हृदय रूपी नगर में ज्ञान की भिक्षा मांगे।

क्षत्रिय (खत्री) – जो कर्मों का शूरवीर है, वही क्षत्रिय है। वास्तविक खेत को पहचानकर दान का बीज बोता है, ऐसा क्षत्रिय परमात्मा के दरबार में प्रामाणिक समझा जाता है।

ब्राह्मण – जो ब्रह्म को जानता है, वही ब्राह्मण है। ब्रह्मत्व का विचार करने वाला ब्राह्मण स्वयं तो तरता है, अपने समस्त वंश को भी तार देता है।

सच्चे मुसलमान की परिकल्पना – सच्चा मुसलमान बनने के लिए यह आवश्यक है कि उसे औलिया (संतों) का मज़हब प्रिय लगे। जैसे मिसकल से लोहे का जंग साफ किया जाता है, उसी प्रकार अपनी कमाई का धन गरीबों में बांटकर उसे नेक कमाई बनाए।

गुरु नानक देव की वाणी की विशिष्टता है क्लिष्टता से सरलता की ओर उन्मुख होना। उनका सदैव यह मत रहा है कि दार्शनिक तथ्य तथा साधना–पद्धति जनसाधारण के लाभ की तथा लोकोपयुक्त होनी चाहिए। यह कहना उचित होगा कि महान पारखी, सिद्धहस्त साधक, ज्ञानी, भक्त गुरु नानक देव का काव्य सभी अमूल्य सिद्धान्त–रत्नों से परिपूर्ण है। इनकी वाणी अनुभूतिपरक है और इसी से वह जीवनोपयोगी, व्यवहार सुलभ तथा लोक कल्याणकारी है। अंत में यह कहना उचित होगा कि गुरु नानक देव के काव्य में जिन मानवीय सूत्रों का निर्माण हुआ है, वे सार्वकालिक होते हुए भी नवीन हैं। सामाजिक सुधार संबंधी प्रयोग मध्ययुग में जितने भी उपयोगी रहे, अब भी उतने ही गाह्य और अनुकरणीय हैं। सामाजिकता और मानव–मूल्यों के निर्धारण में गुरु नानक के काव्य का स्थान निश्चय ही पर्याप्त महत्वपूर्ण है। गुरु नानक काव्य की प्रासंगिकता समसामयिक सार्थकता तक ही समाप्त नहीं हो जाती। आज भी समाज–व्यवस्था को परंपरायुक्त तार्किक स्वरूप देने के लिए जितने संघर्ष आयोजित होंगे, उनसे भी गुरु नानक काव्य का संबंध बनता है। प्रत्येक मनुष्य को विचार और कर्म का भरपूर फल देने और शोषणमुक्त करने की लड़ाई जब तक चलती रहेगी, तब तक गुरु नानक काव्य की प्रासंगिकता बनी रहेगी।

संदर्भ संकेत

1. भागवत धर्म (दूसरा भाग), हरिभाऊ उपाध्याय, पृ0–204
2. हिंदू संस्कार, राजबली पाण्डेय, पृ0–19
3. डॉ0 देवीशरण रस्तोगी, मध्यकालीन कवियों पर आलोचनात्मक अध्ययन, पृ0–18
4. डॉ0 मनमोहन सहगल, संत काव्य का दार्शनिक विश्लेषण, पृ0–141
5. प्रिया शर्मा, गुरु नानक देव की धर्म साधना, पृ0–227
6. वही, पृ0–227
7. करतार सिंह, लाईफ ऑफ गुरु नानक देव, पृ0–273–74
8. करतार सिंह, लाईफ ऑफ गुरु नानक देव, पृ0–273–74
9. जयराम मिश्र, नानकवाणी, पृ0–166
10. वही, पृ0–179
11. वही, पृ0–698
12. तुलसी की काव्यकला, पृ0–83
13. जयराम मिश्र, पृ0–780
14. जयराम मिश्र, पृ0–656
15. राधाकृष्ण, द हिंदू व्यू ऑफ लाईफ, पृ0–25
16. जयराम मिश्र, पृ0–276
17. वही, पृ0–155
18. वही, पृ0–564
19. वही, पृ0–620
20. वही, पृ0–626
21. वही, पृ0–248
22. वही, पृ0–193
23. भक्ति कालीन हिंदी साहित्य पर मुस्लिम संस्कृति का प्रभाव, पृ0–14
24. संस्कृति का दार्शनिक विवेचन, पृ0–288
25. ननकवाणी, पृ0–587
26. लाइफ ऑफ गुरु नानक देव, करतार सिंह, पृ0–17

गुरु नानक देवः जीवन मूल्य और दर्शन

*डॉ. राखी. के. शाह

* हिन्दी विभागाध्यक्षा, श्री भगवान महावीर जैन विश्वविद्यालय, एस. ओ. एस, जे.सी रोड–बंगलूर,

पन्द्रहवी–सोलहवी सताब्दी के संत परम्परा में सिक्ख–धर्म के प्रवर्तक 'गुरु नानक देव' का बहुत ऊँचा स्थान है। इनकी रचनाएँ 'गुरु ग्रन्थ साहिबा' में संकलित है। जिस के विषय वस्तु का सम्बन्ध भौतिक जगत् से न होकर सूक्ष्म आध्यात्मिक विचारों से है। इनकी विचार–धारा निजी अनुभूतियों पर आधारित है, अतः उसमें दर्शन की शुष्कता न होकर काव्य की सी तरलता मिलती है। इनके उपदेशों में विधि और निषेध दोनों पक्षों का समन्वय हुआ है। जहाँ इन्होंने निर्गुण ईश्वर की उपासना, संसार की क्षणभंगुरता, माया की शक्ति, नाम जप की महिमा, आत्मा–ज्ञान की आवश्यकता, गुरु–कृपा का महत्त्व, सात्विक कर्मो की प्रशंसा आदि विषयों पर विचार प्रकट किए हैं। 'कबीर के भाँति जीव हिंसा, मूर्तिपूजा, बाह्याचारों आदि का खण्डन आपने भी निर्भीकतापूर्वक किया है।'1 इनके भक्ति सम्बन्धी उद्गारों में ह्दय की सच्ची अनुभूति मिलती है। उनके लिए जीव और ब्रह्म एक है। जैसे जल की तरंग जल से निकलकर जल में ही समा जाती है, वैसे ही जीव भी परब्रह्म से उपजा है और उसी में समा जाता है; समुद्र में बूँद की तरह–

'हरि हरिजन दुइ एक हैं बिब विचार कछु नहिं
जल ते उपजे तरंग जिउं जल ही बिखै समाहि।'2

हरि–प्राप्ति–पथ

जो दिव्य ज्योति परमात्मा ने हमारे अन्तर्गत रखी है, उसी का साक्षात्कार करना, उसी के साथ मिलजुल एक हो जाना, मानव जीवन का सर्वोपरि उद्देश्य है। मनुष्य की मानसिक अवस्था, संस्कार, योग्यता, क्षमता आदि को ध्यान में रखते हुए परमात्मा– साक्षात्कार के भिन्न–भिन्न मार्ग निकाले गए। मोटे रूप से हरि प्राप्ति के चार प्रधान मार्ग बतलाए है–

कर्ममार्ग : मनुष्य व्यक्तिपरक कर्म ही करने का अधिकारी है और वे कर्म पूर्व जन्म के संस्कारों के परिणाम है। गुरु नानक देव ने भले और बुरे दो प्रकार के कर्मों को माना है–"कर्म कागज है मन दवात है। इनके संयोग से बुरी और भली दो प्रकार की लिखावटें लिखी गई है। अपने–अपने पूर्व जन्मों के किए हुये कर्मों से निर्मित स्वभाव (बुरे अथवा भले कर्म) द्वारा हल चलाये जाते है।"

करणी कागदु मन मसवाणी, बुरा भला दुइ लेख पए।
जिउ जिउ किरतु चलाए तिउ चलीऐ तउ गुणा नाही अंतु हरे।।
(नानक–वाणी, मारू, सबद 3)

उन्होंने स्थान–स्थान पर संकेत किया है कि मनुष्य कर्म करने में स्वतंत्र है, किन्तु फल भोगने में परतन्त्र है। अतः यदि उसे अच्छे कर्मों का सुख मिलता है अथवा बुरे कर्मों का दुःख मिलता है तो उसे 'काल–कर्म', पर मिथ्या दोष नहीं लादना चाहिये, बल्कि उसे उन कर्मों के फल को भोगना चाहिये–

सुख दुख पुरब जनम के किए,
सो जाणौ जिनि दातै दीए।
किस कउ दोसु देहि तू प्राणी,
सहु अपणा कीआ करारा है।
(नानक–वाणी, मारू सोलहे–10)

कर्म दो प्रकार के है– (क) बन्धन–प्रद कर्म और (ख) मोक्षप्रद कर्म। बन्धन–प्रद कर्मों को तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है–

1 कर्म काण्ड युक्त कर्म
2. अहंकार युक्त कर्म
3. त्रिगुणी त्रिविध कर्म

गुरु नानक देव ने कर्मकाण्डयुक्त कर्मों का विस्तृत व्योरा निम्नलिखित पद में दिया है–

वाचहिं पुस्तक वेद पुराना।
पाखंड धरमु प्रीति नहीं हरी सिउ गुर सबद महारसु पाइआ।।
(गुरु नानक–वाणी, मारू–सोलहे, 22)

अंहकारी व्यक्ति सदैव सोचते है कि "मैंने अमुक कर्म किया है, अमुक करूँगा" आदि। ऐसे अंहकारी पंडितों को नानक देव ने चेतावनी दी है, " कर्मकाण्डी पण्डित अंहभावना से प्रेरित होकर शस्त्रो और वेदों को बकते हैं अवश्य, किन्तु उनके सारे कर्म सांसारिक हुआ करते हैं। अर्थात आसुरी भाव से युक्त रहते हैं। उनके सारे कर्म पाखंडयुक्त होते हैं। परिणाम यह होता है कि आन्तरिक मल की निवृत्ति उन अंहकारयुक्त कर्मों से नहीं होती।"

सुणि पंडित करमाकारी।
पाखंडि मैल न चुकई भाई अंतरि मैलु बिकारी।।
(नानक–वाणी, सोरठी, असटपदि–2)

सारे सांसारिक प्राणी माया मोह के वशीभूत होकर त्रिगुणि कर्म ही करते हैं। गुरु नानक ने एक स्थल पर कहा है, "तीनों गुणों से प्रेम करने वाला बार–बार जन्मता और मरता है"–

जनमि मरै त्रैगुणा हितकारु"
(नानक–वाणी, गउडी, सबद–12)

अब मोक्षपद कर्मों की बात– नानक के अनुसार मोक्षपद कर्मों का विभाजन तीन भागों में किया जा सकता है–

1. हरि–कीरत कर्म
2. आध्यात्म कर्म
3. हुकम–रजीई कर्म।

किरत कर्म वे अच्छे अथवा बुरे कर्म है, जो जीव ने पिछले जन्मों में किए हैं। पुरुष आदत के कारण जो बार–बार कर्म करता है उसे किरत कर्म कहते हैं। किरत कर्म भोगने ही पडते हैं वे मिटते नहीं। किरत कर्म की दुरूहता मिटने में यदि कोई समर्थ है, तो वह है "हरि–कीरत–कर्म वह कर्म सभी कर्मों मेहै श्रेष्ठ है। परमात्मा के नाम का गुणगान 'किरत कर्म के सारे मलों को धो देता है।

आध्यात्मिक कर्म वे है, जो जीवात्मा और परमात्मा के बोध और उनसे एकता का सम्बन्ध स्थापित करते हैं। गुरु नानक ने आध्यात्मिक कर्मों को सच्चा माना है क्योंकि इन्हीं कर्मों के द्वारा परमात्मा का साक्षात्कार होता है।

'हुकुम रजाई' कर्म वे है, जो परमात्मा की प्रेरणा, आज्ञा, मर्जी अथवा इच्छा से होता हैं। ये कर्म गुरु की महान् कृपा एवं परमात्मा की प्रेरणा से होता हैं। शुध्द अन्तःकरण में जब परमात्मा की अन्तर्ध्वनि सुनाई पडती है, तभी ऐसे कर्म का होना संभव है, अन्यथा नहीं–

हुकमि रजाई जो चलै, सो पावै खजानै।।
(नानक वाणी, असटपदी– 20)

योगमार्गः योग भारतवर्ष का सबसे प्राचीन एवं महत्वपूर्ण साधन है। 'शुक्ल यजुर्वेद, उपनिषदों, श्रीमद्भगवत, श्रीमद्भगवद्गीता योगवासिष्ठ आदि प्राचीन ग्रंथों में योग का स्पष्ट उल्लेख मिलता है।'3 गुरु नानक देव का योग के प्रति अपार श्रध्दा अवश्य है, पर उन्हें हठयोग की सारी क्रियाएँ मान्य नहीं है। उनका कहना हैं भक्तिहीन योग निष्प्राण और तत्वहिन है–

चाड़सि पवनु सिंघासनु भीजै।
निउली करम खटु करम करीजै।।
राम नाम बिनु बिरथा सासु लीजै।।
(नानक–वाणी, रामकली, असटपदी–5)

ज्ञानमार्गः ज्ञान का शाब्दिक अर्थ 'किसी प्रकार का ज्ञान' होता हैं। किन्तु वेदान्त शास्त्र में ज्ञान का अभिप्राय 'ब्रह्मज्ञान' से है। ब्रह्मज्ञान में अव्दैतभाव की अनुभूति आवश्यक है। अव्दैत ज्ञान की घनिभूतता ही ब्रह्मधान है। ब्रह्मज्ञानी वही है, जो सर्वत्र ब्रह्म का दर्शन करता हो। गुरु नानक देव में यह भावना पूर्ण रूप से पाई जाती है–

'सरब जोति रूपु तेरा देखिआ सगल भवन तेरी माइआ।'
(नानक–वाणी, आसा, सरब– 8)

ज्ञानोपलब्धि के पश्चात् साधक परमात्मा का स्वरूप हो जाता है–

' जीनी आतम चिनिआ परमातमु सोई।।'
(नानक–वाणी, आसा, असटपदी–20)

गुरु नानक देव ने बाह्यत्याग पर कभी नहीं बल दिया। उन्होंने गुहस्थ धर्म को सर्वश्रेष्ट धर्म माना है। नाम, दान तथा स्नान श्रध्दा भाव से आरूढ़ रहने पर ईश्वर की भक्ति अवश्य जागती है–

इकि गिरही सेवक साधिका गुरुमतो लागे।
नामु दानु इसनानु हड़ हरी भगति सु जागे।
(नानक–वाणी, आसा काफी, असटपदी–14)

भक्तिमार्गः भक्ति की अबाध मंदाकिनी गुरु नानक के प्रायः प्रत्येक पद में प्रवाहित हुई है। इनके व्दारा निरूपित सभी पथ–कर्म–मार्ग, योगमार्ग और ज्ञानमार्ग भक्ति की धारा से सिंचित है। बिना परमात्मा की रागात्मिका भक्ति के कर्म पाखण्डपूर्ण और आडम्बरयुक्त है ज्ञान, चंचुज्ञान मात्र है और योग शारीर का व्यायाम मात्र है। गुरु नानक देव ने स्थान–स्थान पर वैघी भक्ति का खण्डन किया है। उन्होंने वैघी भक्ति के विधि–विधान– तिलक, माला आदि– की निस्सारता स्थान–स्थान पर प्रदर्शित की है। नानक देव का 'गलि माला तिलकु ललाट' बिहारी के 'जपमाला छापा तिलक' की स्मृति दिलाती है।

प्रेमा भक्ति में मिलन के आंनद और विरह की तड़पन–दोनों ही महत्वपूर्ण हैं। नानक देव ने विरह की तडपन का ह्रदयस्पर्शी वर्णन किया है–

'नानक मिलहु कपट दर खोलहु एक घड़ी खुद मासा।'
(नानक–वाणी, तुखारी, बारहमाहा, पाउड़ी–12)

परमात्मा के विस्मरण से भयानक कष्ट होते हैं। उनकी विस्मृति भयानक रोग है–

'इक तिलु पिआरा विसरै रोग बडा मन माहि।'
(नानक–वाणी, सिरी रागु, सबद–20)

वैसे तो भक्ति के अनेक उपकरण नानक देव व्दारा वर्णित हैं, पर जिनके ऊपर उनकी व्यापक दृष्टि गई है, वे निम्नलिखित है–

1. सद्‌गुरु की प्राप्ति और उसकी कृपा तथा उपदेश।
2. नाम।
3. सत्संगति तथा साधु–संग।
4. परमात्मा का भय और उसका हुकम।
5. दृढ़ विश्वास।
6. आत्म–समर्पण भाव।
7. दैन्य भाव।
8. परमात्मा का स्मरण और कीर्तन
9. भगवत्–कृपा[4]

प्रेमा भक्ति के उपर्युक्त उपकरणों के आधार पर परमात्मा का शाश्वत मिलन होता है। सारांश यह है कि जिस निरंकार से हम उपजे हैं और जो सदैव हमारे साथ रम रहा है, किन्तु अज्ञानता और मोहवश, जिसे हम नहीं समझ पाते, उसी के साथ साधनों के बल पर एक हो जाना ही हरि–प्राप्ति–पथ है। अपनी अनुभूतियों को सहज–स्वाभाविक भाषा में अभिव्यक्त करके नानक देव ने काव्य के सच्चे स्वरूप का उद्घाटन किया। सच्चे संत की वाणी में अभिव्यक्ति के साधन स्वतः ही प्रस्फुटित हो जाते है, इस बात का प्रत्यक्ष प्रमाण नानक देव का साहित्य है। इन्होंने अपनी वाणियाँ इसलिए लिखी थी कि भावी पीढ़ी उनसे लाभ उठाये।

संदर्भ ग्रंथसूचीः

1. डॉ. .गणपतिचन्द्र गुप्त, साहित्यक निबंध, संत–काव्यः उद्‌गमस्रोत और प्रवृत्तियाँ– पृ–234
2. हरि भारव्दाज, भारतीय संतो की श्रेष्ठ कथाएँ– गुरु नानक–2012–पृ–38
3. जयराम मिश्र–श्री गुरुग्रंथ– दर्शन, पृ–229
4. जयराम मिश्र– श्री गुरुग्रंथ दर्शन, पृ–295, 312

Volume : 6 | Issue :49 | October-December2019 ISSN: 2349-1876 (Print) | ISSN : 2454-1826 (Online)

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ : ਮਨੁੱਖੀ ਚੇਤਨਾ

* ਰਮਨਦੀਪ ਕੌਰ

* ਅਸਿਸਟੈਂਟ ਪ੍ਰੋ., ਖ਼ਾਲਸਾ ਕਾਲਜ, ਚਵਿੰਡਾ ਦੇਵੀ, ਅੰਮ੍ਰਿਤਸਰ।

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦਾ ਸੰਸਾਰ ਵਿੱਚ ਆਗਮਨ ਹੀ ਮਨੁੱਖਤਾ ਦੀ ਭਲਾਈ ਕਰਨ ਲਈ ਹੋਇਆ ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਭੁੱਲੀ-ਭਟਕੀ ਜਨਤਾ ਨੂੰ ਸੱਚ ਦਾ ਰਾਹ ਦਿਖਾਇਆ ਤੇ ਮਨੁੱਖਤਾ ਨੂੰ ਇਸ ਪ੍ਰਤੀ ਜਾਗਰੂਕ ਕੀਤਾ ਕਿ ਜਿਸ ਸੰਸਾਰ ਵਿੱਚ ਹਰ ਕੋਈ ਆਪਣੀ ਪ੍ਰਸਿੱਧੀ ਲਈ ਕੁਕਰਮ ਕਰ ਰਿਹਾ ਹੈ, ਇਹ ਸੰਸਾਰ ਨਾਸ਼ਵਾਨ ਹੈ, ਸਿਰਫ਼ ਇੱਕ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਸਥਿਰ ਹੈ ਜੋ ਬ੍ਰਹਿਮੰਡ ਦੇ ਕਣ-ਕਣ ਵਿੱਚ ਸਮਾਇਆ ਹੋਇਆ ਹੈ। ਇਸ ਲਈ ਭਾਈ ਗੁਰਦਾਸ ਜੀ ਨੇ ਇਹ ਤੁਕ ਗੁਰੂ ਜੀ ਦੇ ਆਗਮਨ ਅਤੇ ਸਮਾਜ ਸੁਧਾਰ ਵਿੱਚ ਪਾਏ ਯੋਗਦਾਨ ਨੂੰ ਆਧਾਰ ਬਣਾ ਕੇ ਲਿਖੀ ਹੈ।

ਕਲਿ ਤਾਰਣ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਆਇਆ॥ [1]

ਗੁਰੂ ਜੀ ਦੀ ਬਾਣੀ ਵਿਚ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਕਾਮ, ਕਰੋਧ, ਲੋਭ, ਮੋਹ, ਹੰਕਾਰ ਤੋਂ ਬਚਣ ਲਈ ਸੁਚੇਤ ਕੀਤਾ ਗਿਆ ਹੈ, ਕਿਉਂਕਿ ਸੰਸਾਰਿਕ ਪ੍ਰਸਿੱਧੀ ਮਨੁੱਖ ਅੰਦਰ ਵਿਕਾਰ ਪੈਦਾ ਕਰਦੀ ਹੈ। ਇਹਨਾਂ ਵਿਕਾਰਾਂ ਦੀ ਉਲਝਣ ਵਿਚ ਫੱਸਿਆ ਮਨੁੱਖ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਨੂੰ ਭੁੱਲ ਜਾਂਦਾ ਹੈ ਅਤੇ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਦਾ ਸਿਮਰਨ ਦਿੱਲੋਂ ਵਿਸਾਰ ਦਿੰਦਾ ਹੈ, ਜੋ ਕਿ ਉਸ ਦੇ ਦੁੱਖ, ਦਲਿੱਦਰ, ਦਰਦ, ਪੀੜਾਂ ਆਦਿ ਦੀ ਉੱਤਪਤੀ ਦਾ ਕਾਰਨ ਬਣਦਾ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ (ਸਿਰੀ ਰਾਗੁ) ਵਿਚ 'ਮੋਤੀ ਤ ਮੰਦਰ ਊਸਰਹਿ' ਬਾਣੀ ਦੀ ਰਚਨਾ ਰਾਹੀਂ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਫੋਕੀ ਹਉਮੈ, ਹੰਕਾਰ ਵਿੱਚੋਂ ਬਾਹਰ ਕੱਢਣ ਦਾ ਯਤਨ ਕੀਤਾ ਹੈ ਜਿਸ ਦਾ ਕੋਈ ਅਰਥ ਨਹੀਂ ਹੈ ਤੇ ਮਨੁੱਖੀ ਜੀਵਨ ਨੂੰ ਭਟਕਣਾਂ ਵਿੱਚ ਪਾਈ ਰੱਖਦੇ ਹਨ। ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਦੇ ਨਾਮ ਨੂੰ ਵਿਸਾਰ ਕੇ ਮਨੁੱਖੀ ਸਰੀਰ ਸੜ ਬਲ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਧਨ-ਦੌਲਤ ਦੀ ਅਮੀਰੀ, ਬਾਦਸ਼ਾਹੀ ਠਾਠ-ਬਾਠ ਸਦੀਵੀਂ ਨਹੀਂ ਹੁੰਦੀ ਸਗੋਂ ਇਹ ਚੰਦ ਦਿਨਾਂ ਦਾ ਮੇਲਾ ਹੈ ਜੋ ਕਿ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਦੇ ਨਾਮ ਸਿਮਰਨ ਤੋਂ ਦੂਰ ਲੈ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਜੋਗ ਦੀਆਂ ਰਿੱਧੀਆਂ-ਸਿੱਧੀਆਂ ਦੀਆਂ ਬਰਕਤਾਂ ਪ੍ਰਭੂ ਦੇ ਵਿਛੋੜੇ ਤੋਂ ਪੈਦਾ ਹੋਏ ਜਲਨ ਨੂੰ ਮਲਮ ਨਹੀਂ ਲਗਾ ਸਕਦੀਆਂ, ਸਗੋਂ ਜਲਨ, ਸਾੜ ਨੂੰ ਹੋਰ ਤੇਜ਼ ਕਰਦੀਆਂ ਹਨ ਜੋ ਕਿ ਮਨੁੱਖ ਲਈ ਅਸਹਿ ਹੁੰਦੀਆਂ ਹਨ।

ਮੋਤੀ ਤ ਮੰਦਰ ਊਸਰਹਿ ਰਤਨੀ ਤ ਹੋਹਿ ਜੜਾਉ॥
ਕਸਤੂਰਿ ਕੁੰਗੂ ਅਗਰਿ ਚੰਦਨਿ ਲੀਪਿ ਆਵੈ ਚਾਉ॥
ਮਤੁ ਦੇਖਿ ਭੂਲਾ ਵੀਸਰੈ ਤੇਰਾ ਚਿਤਿ ਨ ਆਵੈ ਨਾਉ॥ [2]

ਗੁਰੂ ਜੀ ਦੇ ਵਿਚਾਰ ਹਨ ਕਿ ਮੋਤੀਆਂ ਦੇ ਮਹਿਲ-ਮਾੜੀਆਂ ਬਣਾ ਕੇ, ਉਹਨਾਂ ਉੱਚੇ ਮਹਿਲਾਂ ਨੂੰ ਰਤਨਾਂ, ਹੀਰਿਆਂ ਨਾਲ ਸਜਾ ਕੇ ਤੇ ਕਸਤੂਰੀ, ਕੇਸਰ, ਊਦ ਤੇ ਚੰਦਨ ਦੇ ਲੇਪ ਰਾਹੀਂ ਸੁਗੰਧੀ ਭਰੀ ਜਾਵੇ। ਅਜਿਹੇ ਮਨਮੋਹਕ ਬਸੇਰੇ ਨੂੰ ਦੇਖ ਕੇ ਇਸ ਵਿਚ ਉਲਝ ਜਾਣਾ ਸੁਭਾਵਿਕ ਹੀ ਹੈ, ਪਰ ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਸੰਦੇਸ਼ ਦਿੱਤਾ ਹੈ ਕਿ ਇਨ੍ਹਾਂ ਮਹਿਲ-ਮਾੜੀਆਂ ਨੂੰ ਵੇਖ ਕੇ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਦਾ ਸਰਵ-ਸ਼੍ਰੇਸ਼ਟ ਨਾਮ ਹੀ ਵਿਸਰ ਨਾ ਜਾਵੇ ਕਿਉਂਕਿ ਸੰਸਾਰਿਕ ਅਮੀਰੀ ਅਸਥਿਰ ਹੈ ਅਤੇ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਦਾ ਨਾਮ ਸਦਾ ਸਥਿਰ ਰਹਿਣ ਵਾਲਾ ਹੈ, ਉਹਨਾਂ ਨੇ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਅਜਿਹੀ ਝੂਠੀ ਅਮੀਰੀ ਤੋਂ ਜਾਗਰੂਕ ਕਰਵਾਇਆ ਜੋ ਕਿ ਉਸਦੇ ਅੰਦਰ ਹਉਮੈ, ਹੰਕਾਰ ਨੂੰ ਪੈਦਾ ਕਰਦੀ ਹੈ।

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਸ਼ਾਹੀ ਠਾਠ-ਬਾਠ ਤੇ ਅਯਾਸ਼ੀ ਭਰੇ ਜੀਵਨ ਨੂੰ ਪ੍ਰਭੂ ਤੋਂ ਦੂਰ ਲਿਜਾਣ ਵਾਲਾ ਦੱਸਿਆ ਹੈ, ਉਹਨਾਂ ਅਨੁਸਾਰ ਜਿਸ ਧਰਤੀ 'ਤੇ ਮਨੁੱਖ ਦਾ ਵਾਸਾ ਹੈ ਜੇਕਰ ਉਹ ਧਰਤੀ ਹੀਰਿਆਂ ਨਾਲ ਜੜੀ ਹੋਵੇ ਅਤੇ ਜਿਸ ਪਲੰਘ 'ਤੇ ਮਨੁੱਖ ਆਪਣੀ ਜ਼ਿੰਦਗੀ ਦੇ ਆਰਾਮ ਵਾਲੇ ਪੱਲ ਗੁਜ਼ਾਰਦਾ ਹੈ ਉਸਨੂੰ ਵੀ ਹੀਰਿਆਂ ਤੇ ਮੋਤੀਆਂ ਨਾਲ ਜੜਿਆ ਜਾਵੇ। ਅਜਿਹੇ ਅਰਾਮ ਅਤੇ ਅਯਾਸ਼ੀ ਵਾਲੇ ਜੀਵਨ ਤੋਂ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਸੁਚੇਤ ਕੀਤਾ ਹੈ ਕਿ ਅਜਿਹੀ ਅਮੀਰੀ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਦੇ ਨਾਮ ਨੂੰ ਵਿਸਾਰਨ ਵਾਲੀ ਨਾ ਹੋਵੇ ਕਿਉਂਕਿ ਮਨੁੱਖੀ ਨੂੰ ਇਹ ਨਹੀਂ ਭੁੱਲਣਾ ਚਾਹੀਦਾ ਕਿ ਜੋ ਵੀ ਉਹ ਖੁਸ਼ੀਨੁਮਾ ਪਲ ਹੰਢਾ ਰਿਹਾ ਹੈ ਉਸ ਪਿੱਛੇ ਵੀ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਦੀ ਨਦਰ ਹੈ, ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਦੀ ਕ੍ਰਿਪਾ ਹੈ, ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਹੀ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਕੱਖਾਂ ਤੋਂ ਲੱਖਾਂ ਅਤੇ ਲੱਖਾਂ ਤੋਂ ਕੱਖਾਂ ਵਾਲੀ ਸਥਿਤੀ ਵਿਚ ਲਿਆ ਸਕਦਾ ਹੈ, ਜੋ ਕਿ ਮਨੁੱਖ ਦੇ ਆਪਣੇ ਕੀਤੇ ਕਰਮਾਂ ਦਾ ਫ਼ਲ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਪ੍ਰਭੂ ਦੀ ਮਿਹਰ ਸਦਕਾ ਜਿਸ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਇਹ ਸੋਝੀ ਆ ਜਾਂਦੀ ਹੈ ਕਿ ਮਾਤਾ-ਪਿਤਾ, ਸੁੰਦਰ ਇਸਤਰੀ, ਬੱਚੇ, ਰਿਸ਼ਤੇਦਾਰ ਅਤੇ ਭੈਣ-ਭਰਾ ਜੋ ਪਰਿਵਾਰਿਕ ਜ਼ਿੰਦਗੀ ਨੂੰ ਖ਼ੁਸ਼ਹਾਲ ਬਣਾਉਣ ਲਈ ਜ਼ਰੂਰੀ ਹਨ ਇਹ ਸਭ ਨਾਸ਼ਵਾਨ ਹਨ, ਆਨੰਦਮਈ ਪਰਿਵਾਰਿਕ ਜ਼ਿੰਦਗੀ ਗੁਜ਼ਾਰਨ ਵਾਲੇ ਮਾਹੌਲ ਵਿਚ ਜੇਕਰ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਦਾ ਨਾਮ ਵਿਸਰ ਜਾਂਦਾ ਹੈ ਜਾਂ ਪ੍ਰਭੂ ਦਾ ਸਿਮਰਨ ਭੁੱਲ ਜਾਂਦਾ ਹੈ ਤਾਂ ਅਜਿਹੀ ਜ਼ਿੰਦਗੀ ਵਿਅਰਥ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਜੀ ਕਹਿੰਦੇ ਹਨ ਕਿ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਪਰਿਵਾਰਿਕ ਜ਼ਿੰਦਗੀ ਜਾਂ ਗ੍ਰਿਹਸਥੀ ਜ਼ਿੰਦਗੀ ਨੂੰ ਹੰਢਾਉਂਦਿਆਂ ਹੋਇਆਂ ਪ੍ਰਭੂ ਦਾ ਨਾਮ ਨਹੀਂ ਵਿਸਰਨਾ ਚਾਹੀਦਾ ਹੈ।

ਸਿਧੁ ਹੋਵਾ ਸਿਧਿ ਲਾਈ ਰਿਧਿ ਆਖਾ ਆਉ॥
ਗੁਪਤੁ ਪਰਗਟੁ ਹੋਇ ਬੈਸਾ ਲੋਕੁ ਰਾਖੈ ਭਾਉ॥ [3]

ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਜੀ ਨੇ ਇਸ ਪ੍ਰਤੀ ਵੀ ਸੁਚੇਤ ਕੀਤਾ ਹੈ ਕਿ ਜੇ ਕੋਈ ਮਨੁੱਖ ਜੋਗੀ ਬਣ ਕੇ ਜੋਗ ਸਮਾਧੀ ਦੀਆਂ ਕਾਮਯਾਬੀਆਂ ਹਾਸਲ ਕਰ ਲਵੇ ਅਤੇ ਜੋਗ ਤੋਂ ਪ੍ਰਾਪਤ ਹੋਣ ਵਾਲੀਆਂ ਬਰਕਤਾਂ ਨੂੰ ਆਵਾਜ਼ ਰਾਹੀਂ ਆਪਣੇ ਕੋਲ ਲਿਆ ਸਕੇ, ਗੁਪਤ ਅਤੇ ਪ੍ਰੱਤਖ ਹੋਣ ਵਾਲੀ ਸ਼ਕਤੀ ਧਾਰਨ ਕਰ ਲਵੇ ਅਤੇ ਸੰਸਾਰ ਵਿਚ ਉਸਦਾ ਆਦਰ-ਸਤਿਕਾਰ ਬਹੁਤ ਹੋਵੇ। ਅਜਿਹੀਆਂ ਕਾਰਮਾਤਾਂ ਵਿੱਚ ਗੁਜ਼ਰਦਾ ਹੋਇਆ ਮਨੁੱਖ ਜੇਕਰ ਪ੍ਰਭੂ ਤੋਂ ਦੂਰ ਹੋ ਜਾਵੇ ਤਾਂ ਅਜਿਹੀ ਪ੍ਰਾਪਤੀ ਦਾ ਕੋਈ ਮੁੱਲ ਨਹੀਂ ਇਹ ਸਭ ਬੇਕਾਰ ਅਤੇ ਵਿਅਰਥ ਸਮਝੀਆਂ ਜਾਣਗੀਆਂ। ਉਹਨਾਂ ਨੇ ਮਨੁੱਖ ਅੰਦਰ ਇਹ ਚੇਤਨਾ ਵੀ ਪੈਦਾ ਕੀਤੀ ਹੈ ਕਿ ਭਾਰੀ ਫ਼ੌਜਾਂ, ਹੁਕਮ ਦੇਣ ਦੀ ਮਾਲਕੀਅਤ, ਬਾਦਸ਼ਾਹਤ ਆਦਿ ਸਭ ਵਿਅਰਥ ਹਨ, ਇਨਸਾਨ ਨੇ ਅਮੀਰੀ, ਬਾਦਸ਼ਾਹੀਅਤ ਆਪਣੇ ਬਲਬੂਤੇ 'ਤੇ ਹਾਸਲ ਨਹੀਂ ਕੀਤੀ ਸਗੋਂ ਇਹ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਦੀ ਕਿਰਪਾ, ਮਿਹਰ ਦਾ ਸਿੱਟਾ ਹੈ, ਕਿਉਂਕਿ

ਮਨੁੱਖ ਅਜਿਹੀ ਪ੍ਰਸਿੱਧ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਦੀ ਅਗਵਾਈ, ਹੁਕਮ ਤੋਂ ਬਿਨਾਂ ਪ੍ਰਾਪਤ ਨਹੀਂ ਕਰ ਸਕਦਾ।

ਸੁਲਤਾਨੁ ਹੋਵਾ ਮੇਲਿ ਲਸਕਰ ਤਖਤਿ ਰਾਖਾ ਪਾਉ॥
ਹੁਕਮੁ ਹਾਸਲੁ ਕਰੀ ਬੈਠਾ ਨਾਨਕਾ ਸਭ ਵਾਉ॥[4]

ਗੁਰੂ ਜੀ ਫਰਮਾਉਂਦੇ ਹਨ ਜੇਕਰ ਮਨੁੱਖ ਫ਼ੌਜਾਂ ਇੱਕਠੀਆਂ ਕਰ ਕੇ ਬਾਦਸ਼ਾਹ ਬਣ ਜਾਵੇ ਅਤੇ ਤਖ਼ਤ ‘ਤੇ ਬੈਠ ਕੇ ਬਾਦਸ਼ਾਹੀ ਹੁਕਮ ਚਲਾਉਣ ਵਾਲੀ ਪ੍ਰਸਿੱਧੀ ਹਾਸਲ ਕਰ ਲਵੇ, ਪਰ ਦੂਜੇ ਪਾਸੇ ਜੇ ਉਸ ਅੰਦਰ ਅਜਿਹੀ ਖੁਸ਼ੀ ਹੰਢਾਉਦਿਆਂ ਪ੍ਰਭੂ ਨਾਲੋਂ ਦੂਰੀ ਪੈਦਾ ਹੋਵੇ ਤਾਂ ਇਹ ਸਭ ਤੋਂ ਵੱਡੀ ਬਦਕਿਸਮਤੀ ਕਹੀ ਜਾ ਸਕਦੀ ਹੈ, ਜੋ ਕਿ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਦੀਆਂ ਬਖ਼ਸ਼ਿਸ਼ਾਂ ਨੂੰ ਭੁੱਲ ਕੇ ਹੰਕਾਰਿਆ ਹੋਇਆ ਆਪਣੀ ਪ੍ਰਸਿੱਧੀ ਹਾਸਲ ਕਰਨ ਵਿਚ ਸਾਰਾ ਸਮਾਂ ਗੁਜ਼ਾਰ ਦਿੰਦਾ ਹੈ।

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦੀ ਬਾਣੀ ਇਹ ਸੰਦੇਸ਼ ਦਿੰਦੀ ਹੈ ਕਿ ਮਨੁੱਖ ਕਿਸੇ ਵੀ ਤਰ੍ਹਾਂ ਦੇ ਪਾਖੰਡਾਂ, ਜੁਗਤਾਂ ਰਾਹੀਂ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਦੀ ਵਡਿਆਈ ਦਾ ਅੰਤ ਨਹੀਂ ਪਾ ਸਕਦਾ। ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਜਿਸ ਮਨੁੱਖ ‘ਤੇ ਆਪਣੀ ਨਦਰ ਕਰਦਾ ਹੈ ਉਸ ਤੋਂ ਹੀ ਆਪਣਾ ਨਾਮ ਜਪਾਉਂਦਾ ਹੈ।

ਕੋਟਿ ਕੋਟੀ ਮੇਰੀ ਆਰਜਾ ਪਵਣੁ ਪੀਅਣੁ ਅਪਿਆਉ॥
ਚੰਦੁ ਸੂਰਜੁ ਦੁਇ ਗੁਫੈ ਨ ਦੇਖਾ ਸੁਪਨੈ ਸਉਣ ਨ ਥਾਉ॥[5]

ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਮਨੁੱਖ ਅੰਦਰ ਇਹ ਵੀ ਸੋਝੀ ਭਰੀ ਹੈ ਕਿ ਜੇ ਤੇਰੀ ਉਮਰ ਕਰੋੜਾਂ ਸਾਲ ਹੋ ਜਾਵੇ ਅਤੇ ਤੂੰ ਹਵਾ ਦੇ ਆਸਰੇ ਹੀ ਜੀਅ ਸਕੇ, ਹਰ ਸਮੇਂ ਭਗਤੀ ਵਿਚ ਲੱਗਾ ਰਹੇ, ਦਿਨ ਅਤੇ ਰਾਤ ਦੀ ਕੋਈ ਸੋਝੀ ਨਾ ਰਹੇ, ਬਸ ਇਕ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਹੀ ਚਾਰੇ ਪਾਸੇ ਦਿਖਾਈ ਦੇਵੇ, ਤਾਂ ਵੀ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਨੂੰ ਸਮਝਿਆ ਨਹੀਂ ਜਾ ਸਕਦਾ ਕਿ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਕਿੰਨਾ ਬੇਅੰਤ, ਅਪਾਰ ਹੈ, ਕੋਈ ਇਹ ਵੀ ਨਹੀਂ ਦਸ ਸਕਦਾ ਕਿ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਕਿੰਨਾ ਕੁ ਵੱਡਾ ਹੈ। ਜੇਕਰ ਮਨੁੱਖ ਆਪਣੇ ਸਰੀਰ ਨੂੰ ਤਪਾਂ ਰਾਹੀਂ ਕਸ਼ਟ ਦੇ ਕੇ ਸਰੀਰ ਨੂੰ ਕੋਹ ਸੁੱਟੇ, ਭੋਰਾ-ਭੋਰਾ ਕਟਾ ਦੇਵੇ, ਚੱਕੀ ਵਿਚ ਪਾ ਕੇ ਪੀਹ ਦੇਵੇ, ਅੱਗ ਨਾਲ ਸਾੜ ਸੁੱਟੇ ਤੇ ਆਪਣੇ ਆਪ ਨੂੰ ਸੁਆਹ ਨਾਲ ਰਲਾ ਦੇਵੇ ਇੰਨੇ ਤਪ ਸਾਧ ਕੇ ਵੀ ਪ੍ਰਭੂ ਦੀ ਬਰਾਬਰਤਾ ਕਰਨ ਵਾਲੇ ਕੋਈ ਨਹੀਂ ਲੱਭ ਸਕਦਾ। ਗੁਰੂ ਜੀ ਜਨਤਾ ਨੂੰ ਇਸ ਪ੍ਰਤੀ ਵੀ ਜਾਗਰੂਕ ਕਰਦੇ ਹਨ ਕਿ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਦੀ ਵਡਿਆਈ ਦੱਸਣ ਵਾਲਾ ਕੋਈ ਵੀ ਮਨੁੱਖ ਧਰਤੀ ‘ਤੇ ਮੌਜੂਦ ਨਹੀਂ ਹੈ। ਮਨੁੱਖ ਜੇਕਰ ਉੱਚੀਆਂ ਅਸਮਾਨੀ ਉਡਾਰੀਆਂ ਲਾ ਕੇ ਤੇ ਲੱਖਾਂ ਮਣਾਂ ਕਾਗਜ਼ਾਂ ਉਪਰ ਲਿਖ-ਲਿਖ ਕੇ ਵੀ ਪ੍ਰਭੂ ਦੀ ਵਡਿਆਈ ਦਾ ਅੰਤ ਨਹੀਂ ਪਾ ਸਕਦਾ। ਉਹਨਾਂ ਅਨੁਸਾਰ ਸਾਰੀ ਸ੍ਰਿਸ਼ਟੀ ਦਾ ਪਸਾਰਾ ਉਸ ਨਿਰੰਕਾਰ ਦੁਆਰਾ ਕੀਤਾ ਗਿਆ ਹੈ। ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਨੇ ਹੀ ਮਨੁੱਖਾਂ ਨੂੰ ਆਪਣੇ ਭਾਣੇ ਅਨੁਸਾਰ ਭਿੰਨ-ਭਿੰਨ ਕੰਮਾਂ ਵਿਚ ਲਗਾਇਆ ਹੋਇਆ ਹੈ ਅਤੇ ਉਹਨਾਂ ਵਿੱਚ ਇਹ ਚੇਤਨਤਾ ਜਗਾਈ ਹੈ ਕਿ ਇਸ ਦੁਰਲੱਭ ਦੇਹੀ ਦਾ ਉਦਾਰ ਕਰਨਾ ਚਾਹੀਦਾ ਹੈ, ਗੁਰੂ ਦੀ ਸਿੱਖਿਆ ਨੂੰ ਅਪਣਾ ਕੇ ਨਾਮ ਜੱਪਣਾ, ਸਾਧ-ਸੰਗਤ ਕਰਨੀ, ਦਾਨ ਦੇਣਾ, ਉਦਮ ਕਰਨਾ, ਵੰਡ ਛੱਕਣਾ ਤੇ ਕਿਰਤ ਕਰਨਾ ਆਦਿ ਰਾਹ ਨੂੰ ਆਪਣੀ ਜ਼ਿੰਦਗੀ ਦਾ ਹਿੱਸਾ ਬਣਾਉਣਾ ਚਾਹੀਦਾ ਹੈ। ਇਸ ਰਾਹ ‘ਤੇ ਚਲ ਕੇ ਮਨੁੱਖ ਦੇ ਸਿਰਫ਼ ਸੁਪਨੇ ਹੀ ਸਾਕਾਰ ਨਹੀਂ ਹੋਣਗੇ ਸਗੋਂ ਸੱਧਰਾਂ ਵੀ ਪੂਰੀਆਂ ਹੋਣਗੀਆਂ। ਉਹਨੇ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਚਿਤਾਨਵੀ ਦਿੱਤੀ ਹੈ ਕਿ ਇਸ ਸੰਸਾਰ ਵਿਚ ਜਿਹਾ ਬੀਜੋਗੇ, ਉਸੇ ਤਰ੍ਹਾਂ ਦਾ ਹੀ ਫ਼ਲ ਨਸੀਬ ਹੋਵੇਗਾ।

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਮਨੁੱਖ ਦੇ ਹਿਰਦੇ ਅੰਦਰ ਵਿਕਸਿਤ ਹੋਏ ਵਿਕਾਰਾਂ ਨੂੰ ਖ਼ਤਮ ਕਰਨ, ਉਚ-ਨੀਚ, ਅਮੀਰੀ-ਗ਼ਰੀਬੀ ਦੇ ਭੇਦ ਨੂੰ ਮਿਟਾਉਣ ਦਾ ਉਪਰਾਲਾ ਕੀਤਾ। ਉਸ ਸਮੇਂ ਦੇ ਸਮਾਜ ਵਿਚ ਔਰਤ ਦੀ ਸਥਿਤੀ ਬਹੁਤ ਘਿਰਣਾਯੋਗ ਸੀ। ਗੁਰੂ ਜੀ ਅਜਿਹੀ ਮੂਰਤ ਸਨ ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਮਰਦ ਦੇ ਅੰਦਰ ਔਰਤ ਪ੍ਰਤੀ ਸਤਿਕਾਰ ਦੀ ਕਿਰਨ ਜਗਾਈ ਅਤੇ ਔਰਤਾਂ ਨੂੰ ਬਣਦਾ ਸਥਾਨ ਦਵਾਇਆ, ਕਿਉਂਕਿ ਮਰਦ ਪ੍ਰਧਾਨ ਸਮਾਜ ਵਿੱਚ ਔਰਤ ਦੀ ਸਥਿਤੀ ਨਿਗੂਣੀ ਹੈ।

ਗੁਰੂ ਜੀ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਸਤਿ-ਸੰਗਤ ਕਰਨ ਦਾ ਉਪਦੇਸ਼ ਦਿੰਦੇ ਹਨ, ਕਿਉਂਕਿ ਚੰਗੀ ਸੰਗਤ ਵਿਚ ਬੈਠ ਕੇ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਦੀ ਭਗਤੀ ਕਰਨ ਨਾਲ ਮਨੁੱਖ ਦਾ ਮਨ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਦੇ ਨਾਮ ਨਾਲ ਜੁੜਦਾ ਹੈ ਸਤਿ-ਸੰਗਤ ਵਿਚ ਮਿਲ ਕੇ ਆਤਮਿਕ ਆਨੰਦ ਮਾਣਨਾ ਚਾਹੀਦਾ ਹੈ। ਪ੍ਰਭੂ ਨਾਮ ਦੇ ਭੇਦ ਨੂੰ ਵਿਚਾਰਨ ਨਾਲ ਮਨ ਦੀਆਂ ਗੁੰਝਲਾਂ ਖੁੱਲ ਜਾਂਦੀਆਂ ਹਨ। ਅਕਾਲ-ਪੁਰਖ ਦੇ ਗੁਣ ਗਾਉਣ ਨਾਲ ਮਨ ਸ਼ਾਂਤ ਹੋ ਜਾਂਦਾ ਹੈ ਅਤੇ ਭਟਕਣਾਂ ਤੋਂ ਛੁਟਕਾਰਾ ਮਿਲ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਜੀ ਦੀ ਬਾਣੀ ਵਿਚ ਮਨੁੱਖੀ ਨੂੰ ਉਪਦੇਸ਼ ਦਿੱਤਾ ਗਿਆ ਹੈ ਕਿ ਸਤਿ-ਸੰਗਤ ਵਿਚ ਬੈਠ ਕੇ ਮਾਇਆ ਦੇ ਮੋਹ ਵਾਲਾ ਹਨ੍ਹੇਰਾ ਖ਼ਤਮ ਹੋ ਜਾਂਦਾ ਹੈ, ਅਗਿਆਨਤਾ ਦਾ ਖ਼ਾਤਮਾ ਹੋਣ ਨਾਲ ਗਿਆਨ ਦਾ ਚਾਨਣ ਫੈਲਣਾ ਸ਼ੁਰੂ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਜਿਸ ਤੋਂ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਸੋਝੀ ਆ ਜਾਂਦੀ ਹੈ, ਪ੍ਰਭੂ ਇੱਕ ਹੋਣ ‘ਤੇ ਵੀ ਅਨੇਕ ਰੂਪ ਵਿਚ ਵਿਆਪਕ ਹੈ, ਅਜਿਹੀ ਸੋਝੀ ਗੁਰੂ ਦੀ ਸੰਗਤ ਵਿਚ ਬੈਠ ਕੇ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਦੀ ਭਗਤੀ ਕਰਨ ਨਾਲ ਹੀ ਉਪਜਦੀ ਹੈ। ਉਹਨਾਂ ਨੇ ਮਨੁੱਖ ਅੰਦਰ ਇਹ ਵੀ ਚੇਤਨਾ ਜਗਾਈ ਕਿ ਈਸ਼ਵਰ ਦੀ ਮੂਰਤੀ ਬਣਾ ਕੇ ਉਸਦੀ ਪੂਜਾ ਕਰਨਾ, ਪ੍ਰਭੂ ਦਾ ਭਾਰੀ ਅਪਮਾਨ ਕਰਨਾ ਹੈ, ਕਿਉਂਕਿ ਈਸ਼ਵਰ ਦਾ ਕੋਈ ਰੂਪ ਨਹੀਂ ਹੈ ਉਹ ਨਿਰੰਕਾਰ ਹੈ, ਉਹ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਜਨਮ ਮਰਨ ਤੋਂ ਪਰੇ ਹੈ ਤਾਂ ਉਸਦੀਆਂ ਮੂਰਤੀਆਂ ਬਣਾਉਣ ਅਤੇ ਪੂਜਾ ਕਰਨ ਦਾ ਕੋਈ ਲਾਭ ਨਹੀਂ ਹੈ।

ਸਿੱਖ ਧਰਮ ਦੇ ਮੋਢੀ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਘਰ-ਬਾਰ ਤਿਆਗ ਕੇ ਸੰਨਿਆਸੀ ਜੀਵਨ ਧਾਰਨ ਦਾ ਜ਼ੋਰਦਾਰ ਖੰਡਨ ਕੀਤਾ ਅਤੇ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਇਸ ਪ੍ਰਤੀ ਵੀ ਜਾਗਰੂਕ ਕਰਵਾਇਆ ਹੈ ਕਿ ਗ੍ਰਹਿਸਤ ਵਿੱਚ ਰਹਿ ਕੇ ਵੀ ਪ੍ਰਭੂ ਨਾਲ ਪਿਆਰ ਕੀਤਾ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ। ਉਹਨਾਂ ਨੇ ਦੱਸਿਆ ਹੈ ਕਿ ਦਸਾਂ ਨਹੁਆਂ ਦੀ ਕਿਰਤ ਕਰਕੇ ਪਵਿੱਤਰ ਜੀਵਨ ਬਤੀਤ ਕੀਤਾ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ। ਇਸ ਤੋਂ ਇਲਾਵਾ ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਜੀ ਨੇ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਸਦਾ ਨੈਤਿਕ ਅਤੇ ਪਵਿੱਤਰ ਜੀਵਨ ਬਤੀਤ ਕਰਨ ਦਾ ਉਪਦੇਸ਼ ਦਿੱਤਾ। ਉਹਨਾਂ ਨੇ ਮਨ, ਕਰਮ, ਬੋਲਾਂ, ਬਚਨਾਂ ਨਾਲ ਕਿਸੇ ਨੂੰ ਦੁੱਖ ਨਾ ਦੇਣ, ਸੱਚ ਬੋਲਣ, ਸੰਸਾਰਿਕ ਭੋਗਾਂ ਤੋਂ ਦੂਰ ਰਹਿਣ ਅਤੇ ਮਿਹਨਤ ਦੀ ਕਮਾਈ ਕਰਨ ‘ਤੇ ਜ਼ੋਰ ਦਿੱਤਾ ਹੈ। ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਸੱਚੀ ਕਮਾਈ ਭਾਵ ਦਸਾਂ ਨਹੁਆਂ ਦੀ ਕਮਾਈ ਕਰਨ ਦਾ ਸਬਕ ਸਖਾਇਆ। ਜਾਤ-ਪਾਤ, ਛੂਤ-ਛਾਤ ਦੇ ਭੇਦ ਭਾਵ ਨੂੰ ਵੀ ਮਨੁੱਖ ਅੰਦਰੋਂ ਖ਼ਤਮ ਕੀਤਾ ਅਤੇ ਏਕਤਾ ਨੂੰ ਕਾਇਮ ਰੱਖਣ ਲਈ ਸੁਚੇਤ ਕੀਤਾ।

ਫਕੜ ਜਾਤੀ ਫਕੜੁ ਨਾਉ॥
ਸਭਨਾ ਜੀਆ ਇਕਾ ਛਾਉ॥[6]

ਚਤੁਰਾਈ, ਝੂਠ, ਵੈਰ ਵਿਰੋਧ ਦੀ ਭਾਵਨਾ ਤੋਂ ਮੁਕਤ ਕਰਨ ਦੀ ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਮਨੁੱਖ ਅੰਦਰ ਚੇਤਨਾ ਜਗਾਈ। ਜਗਤ ਨਾਸ਼ਵਾਨ ਹੈ ਮਨੁੱਖ ਇਸ ਪ੍ਰਤੀ ਅਣਗਹਿਲੀ ਵਰਤਦਾ ਹੋਇਆ ਦਿਨ-ਰਾਤ ਧਨ ਇਕੱਠਾ ਕਰਨ ਵਿਚ ਲੱਗਾ ਹੋਇਆ। ਇਕ ਦੂਜੇ ਤੋਂ ਵੱਡਾ ਦਿੱਖਣ ਦੀ ਭਾਵਨਾ ਇਨਸਾਨ ਅੰਦਰ ਘਰ ਕਰ ਚੁੱਕੀ ਹੈ, ਉਹ ਇਸ ਹਨ੍ਹੇਰਾ ਵਿਚ ਹੀ ਫੱਸਿਆ ਹੋਇਆ ਹੈ ਅਤੇ ਇਹ ਭੁੱਲ ਗਿਆ ਹੈ ਕੇ ਜੀਉਣ ਝੂਠ ਅਤੇ ਮਰਨਾ ਸੱਚ ਹੈ। ਜੀਵਨ ਦੀ ਨਾਸ਼ਵਾਨਤਾ ਉਸੇ ਸਮੇਂ ਹੀ ਨਿਸ਼ਚਿਤ ਹੋ ਚੁੱਕੀ ਜਦੋਂ ਜ਼ਿੰਦਗੀ ਦਾ ਆਗਮਨ ਹੋਇਆ। ਜੇਕਰ ਇਸ ਜ਼ਿੰਦਗੀ ਨੂੰ ਮਨੁੱਖ ਰਾਤ ਸੌਂ ਕੇ ਅਤੇ ਦਿਨ ਖਾ-ਪੀ ਕੇ ਗਵਾ ਲੈਂਦਾ ਹੈ ਤਾਂ ਉਹ ਆਪਣੇ ਅਣਮੋਲ ਹੀਰੇ ਜਨਮ ਨੂੰ ਕੌਡੀਆਂ ਦੇ ਭਾਅ ਅਜਾਈਂ ਗਵਾ ਰਿਹਾ ਹੈ। ਸੰਸਾਰਿਕ ਪਦਾਰਥਾਂ ਅਤੇ ਐਸ਼ ਪ੍ਰਸਤੀ ਵਿਚ ਇੰਨਾ ਰੁਝਿਆ ਹੋਇਆ ਹੈ ਕਿ ਮਨੁੱਖਾ ਜਨਮ ਦਾ ਮਨੋਰਥ ਤੇ ਅਹਿਮੀਅਤ ਭੁਲਾ ਕੇ ਇਸ ਨੂੰ ਫਜ਼ੂਲ ਗਵਾਈ ਜਾ ਰਿਹਾ ਹੈ।

ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਆਪਣੀ ਬਾਣੀ ਵਿਚ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਹੱਥੀ ਕਿਰਤ ਕਰਨ ਦਾ ਉਪਦੇਸ਼ ਦਿੱਤਾ ਜੇਕਰ ਮਨੁੱਖ ਮਿਹਨਤ ਅਤੇ ਇਮਾਨਦਾਰੀ ਨਾਲ ਕਿਰਤ ਕਰਕੇ ਧਨ ਕਮਾਉਣਗੇ ਤਾਂ ਆਰਥਿਕ ਸਥਿਤੀ ਵਿਚ ਸੁਧਾਰ ਹੋਵੇਗਾ। ਮਿਹਨਤ ਨਾਲ ਕਮਾਏ ਧਨ ਵਿੱਚੋਂ ਜੇ ਮਨੁੱਖ ਦਸਵੰਧ ਧਾਰਮਿਕ ਕਾਰਜਾਂ, ਸੇਵਾ ਕਾਰਜਾਂ ਅਤੇ ਗਰੀਬਾਂ ਵਿਚ

ਦਾਨ ਕਰੇਗਾ ਤਾਂ ਉਹ ਮਨੁੱਖ ਹੀ ਮਨੁੱਖ ਹੋਣ ਦੇ ਨਾਤੇ ਆਪਣੇ ਕਰਤੱਵਾਂ ਨੂੰ ਪਛਾਣਦਾ ਹੈ।

ਘਾਲਿ ਖਾਇ ਕਿਛੁ ਹਥਹੁ ਦੇਇ॥
ਨਾਨਕ ਰਾਹੁ ਪਛਾਣਹਿ ਸੇਇ॥ [7]

ਗੁਰੂ ਜੀ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਸਮਝਾਉਂਦੇ ਹਨ ਕਿ ਜਿਹੜਾ ਵਿਅਕਤੀ ਮਿਹਨਤ, ਮਸ਼ੱਕਤ ਕਰਕੇ, ਸੱਚੀ-ਸੁੱਚੀ ਕਿਰਤ ਰਾਹੀਂ ਰੋਜ਼ੀ ਕਮਾਉਂਦਾ ਹੈ ਤੇ ਆਪਣੇ ਹੱਥੋਂ ਕੁਝ ਪੁੰਨ-ਦਾਨ ਕਰਦਾ ਹੈ, ਉਹ ਵਿਅਕਤੀ ਹੈ ਸਹੀ ਜੀਵਨ-ਜਾਚ ਨੂੰ ਪਛਾਣਦਾ ਹੈ ਗੁਰੂ ਜੀ ਦੀ ਬਾਣੀ ਵਿਚ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਦੇ ਹੁਕਮ ਅਨੁਸਾਰ ਚੱਲਣ ਦੀ ਸਿੱਖਿਆ ਦਿੱਤੀ ਗਈ ਹੈ, ਕਿਉਂਕਿ ਸਾਰੀਆਂ ਬਖ਼ਸ਼ਿਸ਼ਾਂ ਪ੍ਰਭੂ ਮਾਲਕ ਦੀਆਂ ਹਨ। ਉਸ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਸਾਹਮਣੇ ਕਿਸੇ ਦਾ ਜ਼ੋਰ ਨਹੀਂ ਚਲਦਾ। ਕਈ ਵਿਅਕਤੀ ਜਾਗਦੇ ਹੋਏ ਵੀ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਦੀਆਂ ਬਖ਼ਸ਼ਿਸ਼ਾਂ ਹਾਸਲ ਨਹੀਂ ਕਰ ਪਾਉਂਦੇ ਅਤੇ ਕਈਆਂ ਨੂੰ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਸੁੱਤਿਆਂ ਨੂੰ ਉਠਾ ਕੇ ਆਪਣੇ ਮਿਹਰ, ਬਖ਼ਸ਼ਿਸ਼ ਦਾ ਪਾਤਰ ਬਣਾਉਂਦੇ ਹਨ, ਜੋ ਉਸ ਅਕਾਲ ਪੁਰਖ ਨੂੰ ਭਾਉਂਦਾ ਹੈ, ਉਹ ਹੀ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਕੋਈ ਵੀ ਮਨੁੱਖ ਉਸਨੂੰ ਹੁਕਮ ਨਹੀਂ ਕਰ ਸਕਦਾ, ਸਿਰਫ਼ ਉਸ ਅੱਗੇ ਨਿਮਾਣੇ ਹੋ ਕੇ ਅਰਦਾਸ ਹੀ ਕੀਤੀ ਜਾ ਸਕਦੀ ਹੈ।

ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਆਪਣੀ ਹਉਮੈ, ਅਭਿਮਾਨ, ਲਾਲਚ, ਹੰਕਾਰ ਆਦਿ ਤਿਆਗਣ ਲਈ ਪ੍ਰੇਰਿਤ ਕੀਤਾ ਹੈ, ਕਿਉਂਕਿ ਹਉਮੈ ਵਿਚ ਫਸਿਆਂ ਮਨੁੱਖ ਆਪਣਾ ਦੀਨ ਇਮਾਨ ਭੁੱਲ ਬੈਠਦਾ ਹੈ। ਉਹ ਇਸ ਗੱਲ ਨੂੰ ਵੀ ਮਨੋ ਵਿਸਾਰ ਦਿੰਦਾ ਹੈ ਕਿ ਇਕ ਦਿਨ ਉਸਨੂੰ ਮੌਤ ਵੀ ਆਉਣੀ ਹੈ। ਇਹ ਹੰਕਾਰ, ਹਉਮੈ ਸਭ ਇਥੇ ਹੀ ਰਹਿ ਜਾਣੇ ਹਨ ਆਪਣੇ ਕੀਤੇ ਕਰਮਾਂ ਦਾ ਫ਼ਲ ਹੀ ਨਸੀਬ ਹੋਣਾ ਹੈ। ਜਿਸ ਦਿਨ ਸਰੀਰ ਵਿੱਚੋਂ ਆਤਮਾ ਰੂਪੀ ਭੌਰ ਨਿਕਲ ਗਿਆ, ਕੰਚਨ ਵਰਗੀ ਦੇਹੀ ਮਿੱਟੀ ਹੋ ਜਾਣੀ ਹੈ ਉਸ ਸਮਾਂ ਚੰਗੇ ਅਮਲਾਂ ਨੇ ਹੀ ਦਰਗਾਹ ਵਿਚ ਸਾਡਾ ਸਾਥ ਨਿਭਾਉਣਾ ਹੈ।

ਜਾ ਰਹਣਾ ਨਾਹੀ ਐਤੁ ਜਗਿ ਤਾ ਕਾਇਤੁ ਗਾਰਬਿ ਹੰਢੀਐ॥ [8]
ਜਿਤੁ ਕੀਤਾ ਪਾਈਐ ਆਪਣਾ ਸਾ ਘਾਲ ਬੁਰੀ ਕਿਉ ਘਾਲੀਐ॥ [9]

ਸੋ ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਮਨੁੱਖ ਅੰਦਰ ਇਹ ਚੇਤਨਾ ਜਗਾਈ ਕਿ ਜਾਤ-ਪਾਤ, ਝੂਠ, ਚਿੰਤਾ, ਕਾਮ, ਕ੍ਰੋਧ, ਲੋਭ, ਮੋਹ, ਹੰਕਾਰ, ਨਿੰਦਾ, ਹਉਮੈ ਆਦਿ ਦਾ ਤਿਆਗ ਕਰਕੇ ਨਿਮਰਤਾ ਨਾਲ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਦੇ ਹੁਕਮ ਜਾਂ ਰਜ਼ਾ ਵਿਚ ਰਹਿ ਕੇ ਆਪਣੇ ਜੀਵਨ ਦੇ ਕੀਮਤੀ ਸਵਾਸਾਂ ਨੂੰ ਪੂਰਿਆਂ ਕਰੇ ਕਿਉਂਕਿ ਇਹ ਜ਼ਿੰਦਗੀ ਬਾਰ-ਬਾਰ ਪ੍ਰਾਪਤ ਨਹੀਂ ਹੋਣੀ। ਉਹਨਾਂ ਨੇ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਹਉਮੈ ਦਾ ਤਿਆਗ ਕਰਨ ਅਤੇ ਮਨ ਨੂੰ ਵਾਸਨਾਵਾਂ ਦੀਆਂ ਭਟਕਣਾਂ ਨੂੰ ਰੋਕਣ, ਹੁਕਮ ਅਨੁਸਾਰ ਚਲਣ ਲਈ ਤਾਕੀਦ ਕੀਤੀ। ਕਿਰਤ ਕਰਕੇ ਵੰਡ ਛਕਣ ਅਤੇ ਸੇਵਾ ਕਰਨ ਦੀ ਭਾਵਨਾ ਨੂੰ ਵਿਕਸਿਤ ਕਰਕੇ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਪਾਖੰਡ ਕਰਮਾਂ ਤੋਂ ਪਰੇ ਹਟਾਇਆ। ਮਨੁੱਖ ਦੀ ਪਸ਼ੂਆਂ ਨਾਲੋਂ ਵੱਖਰਤਾ ਹੀ ਇਸ ਕਰਕੇ ਹੈ ਕਿ ਉਸਨੂੰ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਨੇ ਦਿਮਾਗ਼ ਦਿੱਤਾ ਹੈ। ਇਸ ਦਿਮਾਗ਼ ਦੀ ਵਰਤੋਂ ਕਰਕੇ ਜੇ ਮਨੁੱਖ ਆਪਣੀ ਜ਼ਿੰਦਗੀ ਨੂੰ ਸਫ਼ਲ ਨਹੀਂ ਬਣਾ ਸਕਦਾ ਤਾਂ ਮਨੁੱਖ ਅਤੇ ਪਸ਼ੂ ਵਿਚ ਕੋਈ ਫ਼ਰਕ ਨਹੀਂ ਹੈ।

ਹਵਾਲੇ ਅਤੇ ਟਿੱਪਣੀਆਂ

1) ਡਾ. ਜਸਵਿੰਦਰ ਸਿੰਘ (ਸੰਪਾ.), ਪੰਜਾਬੀ ਕਾਵਿ-ਸੰਗ੍ਰਹਿ, ਪਬਲੀਕੇਸ਼ਨ ਬਿਊਰੋ, ਪੰਜਾਬੀ ਯੂਨੀਵਰਸਿਟੀ, ਪਟਿਆਲਾ, ਪੰਨਾ 53
2) ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ ਜੀ, ਅੰਗ 298.
3) ਉਹੀ ਰਚਨਾ, ਅੰਗ 14.
4) ਉਹੀ ਰਚਨਾ, ਅੰਗ 14.
5) ਉਹੀ ਰਚਨਾ, ਅੰਗ 14.
6) ਉਹੀ ਰਚਨਾ, ਅੰਗ 83.
7) ਉਹੀ ਰਚਨਾ, ਅੰਗ 1245.
8) ਉਹੀ ਰਚਨਾ, ਅੰਗ 473.
9) ਉਹੀ ਰਚਨਾ, ਅੰਗ 474.

संत काव्य परम्परा में गुरु नानक देव का स्थान

* रेशमा चंद्रभान सोनवणे

* जनता कला व विज्ञान महाविद्यालय, रुईछत्तिसी, तहसिल–नगर, जिला अहमदनगर, महाराष्ट्र

हिन्दी साहित्य के इतिहास में मध्ययुगीन कालखंड को आ. रामचंद्र शुक्ल जी ने हिन्दी साहित्य का 'स्वर्ण युग' कहा हैं। मध्ययुग में भक्ति की दो धाराएँ प्रवाहीत हुई। उसमें एक निर्गुण शाखा और दूसरी सगुण शाखा। निर्गुण शाखा के अन्तर्गत पुनः दो शाखाओं का समावेश होता हैं – ज्ञानाश्रयी और प्रेमाश्रयी शाखा। भक्तिकालीन ज्ञानाश्रयी भक्तों के साहित्य को 'सन्त साहित्य' कहा जाता हैं। दूसरे शब्दों में कहे तो – भक्तिकाल में ईश्वर को लक्ष्य करके तीन प्रकार की रचना की गई –

1. ज्ञान को प्रधान मानकर काव्य की निर्मिती।
2. प्रेम–प्रधान काव्य।
3. भक्ति–प्रधान काव्य।

पहले प्रकार की काव्य–रचना करनेवाले संत कहलाते हैं। 'संत' शब्द 'सत्' से बना है। 'गीता' में सत् शब्द का निम्न अर्थ दिया गया हैं–

''सद्भावे साधुभावे च सदित्येत त्प्रयुज्यते।
प्रशक्ते कर्मणि तथा सच्छब्द पार्थ युज्यते।।''

संत का सामान्य अर्थ परोपकारी, साधु और सज्जन हैं। वस्तुतः भक्त और सन्त शब्द समानार्थी हैं, लेकिन भक्तिकालीन साहित्य में 'संत' शब्द एक पारिभाषिक शब्द के रूप में प्रयुक्त होता हैं। निर्गुणोपासकों के लिए 'भक्त' शब्द व्यवहत किया जाता हैं। 'संत' शब्द का व्युत्पत्तिपरक अर्थ विविध विद्वानों ने भिन्न–भिन्न रूपों में दिया हैं।

मध्ययुगीन भारतीय समाज में वर्ण एवं जातिव्यवस्था का वर्चस्व था। वर्ण व्यवस्था में आस्था रखनेवाले हिन्दु छुआछूत में विश्वास रखते थे। उनमें उॅच–नीच की भावना विद्यमान थी। भारत में हिन्दु और मुसलमान दो बड़ी जातियॉ निवास करती थी। इन दोनों में अपने–अपने आचार–विचारों, रीति–रिवाजों, सामाजिक एवं धार्मिक मान्यताओं आदि के बारे में दृढता एवं कट्टरता विद्यमान थी। जिसके परिणाम स्वरूप दोनों जातियॉ एक दूसरे से लड़ती रहती थी, द्वेष और वैमनस्य रखती थी और कोई भी किसी से समझौता करने को तैयार न थी। उस समय हिन्दु और इस्लाम धर्म के ठेकेदार भोली–भाली जनता को बहकाकर अनेकानेक पाखंड़ो, बाहयाचारों, अंधविश्वासों एवं मिथ्या आंडबरों में फसाएँ रखते थे और अपने–अपने मन की श्रेष्ठता प्रतिपादित करते थे। कुरीतियों एवं कुप्रथाओं का बोलबाला था। धार्मिक अव्यवस्था बढ़ती जा रही थी, विषमता देश में घर कर रहीं थी और रूढिवादी विचारधारा पनप रही थी। भारतीय समाज में अंधविश्वास, बालविवाह, बहुविवाह, सती प्रथा जैसी अनेक बुरी प्रथॉ समाज में फैली थी। सामाजिक दृष्टि से उच्च–निम्न, अमीर–गरीब, शुद्र–अशुद्र, छूत–अछुत वर्ग संघर्ष भी जोरों पर था। मानवीय मूल्यों का –हास हो चुका था। षासन के अत्याचार से जनता त्राही–त्राही कर रही थी। चारों और अज्ञान का अंधकार फैला हुआ था। जुल्म अत्याचार का बोलबाला था।

ऐसी स्थिती में समाज का उद्धार करने के लिए, समाज में एकता लाने के लिए, उनके मन का भ्रम मिटाने के लिए, सामाजिक अव्यवस्था को दूर करके समाज में सुंदर एवं सुदृढ व्यवस्था स्थापित करने के लिए, ज्ञान के प्रकाष को जलाने, समस्त जीव के कल्याण करने के लिए मध्ययुगीन कवि, समाजसुधारक, संत आगे आए।

संत काव्य परम्परा

हिन्दी–भक्ति साहित्य में संत–साहित्य का सुत्रपात कबीर के साहित्य से आरम्भ होता हैं इसीलिए कबीर को सन्त–साहित्य का प्रवर्तक माना जाता हैं। लेकिन कबीर के पहले ही संत–मत का उदय हो चुका था। महाराष्ट्र के वारकरी संप्रदाय के ज्ञानेश्वर–नामदेव और बंगाल के जयदेव का साहित्य इसका प्रमाण हैं। स्वयं कबीर ने भी इन्हें कलियुग के जागृत संत के रूप में सश्रद्ध याद किया हैं–

''जाके सूक धव अकूर हणवंत जागे ले लंगूर।
संकर जागे चरन सेब, कलि जागे नामा जैदेव।।''

इसके अतिरिक्त लालदेव, संत वेणी, संत त्रिलोचन आदि कबीर पूर्व सन्तों की कतिपय रचनाएँ प्राप्त होती हैं। कबीर के पूर्व सन्तों में सबसे महत्त्वपूर्ण साहित्य संत नामदेव का हैं।

संत काव्य परम्परा के प्रमुख संत :

– नामदेव – त्रिलोचन
– सदन – बेनी
– रामानंद – धन्ना
– पीपा – सेन
– रैदास – दादुदयाल
– मलूकदास – कबीर
– गुरु नानक देव

सन्त काव्य परम्परा में गुरु नानक का स्थान :

नानक जी का जन्म राइभोई के तलंवडी नामक गॉव में 1469 को हुआ, जो लाहौर से लगभग 30 मील

दक्षिण–पश्चिम में स्थित हैं। नानक जी में भगवद्भक्ति के अंकुर लड़कपन में ही फूट गये थे। नानक जी बचपन से ही ध्यान साधना में लीन रहते थे। वे पास के जंगलों में जाकर चिंतन–मनन किया करते थे। मोदीखाने की नौकरी से निकाल दिए जानेपर वे भ्रमण के लिए निकल पड़े और भजन–कीर्तन से लोगों को प्रभावित करना शुरू किया।

गुरु नानकजी की बानियों का काव्य मूलतः वहीं है जो कबीर का हैं, जैसे–नाम माहात्म्य, गुरुमहिमा, जाति–पॉति का विरोध, ब्रम्ह की वैयक्तिक अनुभूति सत्य, अहिंसा परोपकार आदि। पर गुरुनानक जी के स्वर में गहरी शांति, शीतलता और निर्वैयक्तिकता हैं। उनमें अद्‌भूत संगठन–शक्ति, क्षमाशीलता और दूरदर्शिता थी। वे बहुश्रुत तथा निजी अनुभव के धनी थे। संभवतः अपने इन्ही गुणों के कारण उन्होंने राजनीतिक और धार्मिक अनाचारों का विरोध किया हैं। रीति रिवाज, कुरीतियों और शैतिकवाद से दूर रहकर अपना मन एक ईष्वर की ओर केंद्रित किया, एकेष्वर का समर्थन किया। नानक जी ने महसूस किया कि, केवल वाणी द्वारा अभिव्यक्त विचारों से काम चलनेवाला नहीं हैं। अतः उन्होंने एक धार्मिक संगठन खड़ा किया। सिक्ख मत के प्रवर्तक नानकदेव सिक्खों के आदि गुरु माने जाते हैं। नानक देव समन्वयशील और उदार प्रवृत्ति के व्यक्ति थे।

गुरु नानक देव पहले संत हैं जिन्होंने विदेशी आक्रमणकारियों के विरूद्ध आवाज उठाई –

''खुरसान खमसान कीआ हिन्दुस्तान डराहुआ।
आपें दोस न देई करता जपु करि मुगल चढ़ाइया।।
एती मार पई कुर लागै की दरदु न आईया।।''

भगवान को विदेशी आक्रमणकारियों, विशेषतः मुसलमान नवाबों और बादशाहों के अत्याचारों का दर्द महसूस हुआ या नहीं, कोई नहीं जानता, पर नानक को हुआ।

जहॉ स्त्री के सम्मान का प्रश्न हैं, नानक समूची भक्ति–परम्परा से अलग हैं। शायद ही कोई संत या सगुणोपासक महात्मा रहा हो जिसने स्त्री की निंदा न की हो पर नानक कहते हैं –

''जिन सिर सोहन पहीआ मॉगी पाइ संधूर।
ते सिर काती मुनीअहि गल बिचि आपै धूड़।।''

जिसकी केश – राशि की मॉग के बीच सिंदूर सजाया जाता हैं, उसका केश काट दिया जाता हैं। वे पुनः कहते हैं–

''भंड जमी अै भांडे निमीये भंड मंगण बीआहु।
भंडहु होवै दोसती भंडहु चलै राहु।।
भंड मुआ भंड मालोअे भंड हो वे बंधान।
सो किड मन्दा आखी आहे जिन जंभै राजान।।''

जन्म देनेवाली भी नारी, पत्नी के रुप में नारी, बहन के रुप में भी नारी, फिर उसकी अवमानना क्यो? नारी को सम्मान देनेवाले पहले संत गुरु नानक देव जी हैं। जातिप्रथा का विरोध किया, मुर्तिपुजा की विधि में षामिल होने से मना कर दिया। गुरु नानक देव ने बहुत से पद, साखियॉ तथा भजन लिखे है, उनका संकलन सिक्खो के छठें गुरु अर्जुन देव ने सन 1604 में 'गुरु ग्रन्थ साहिब' में संकलित किये हैं। ये पद पंजाबी, ब्रज तथा नागरी भाषा में हैं।

गुरु नानक देव जी की षिक्षा–दिक्षा समस्त मानवजाति के लिए आज शी दिषादर्षक होती हैं, अंधविष्वास, भेदभाव, कुरीतियों से समाजको मुक्ति दिलाने का मानो एक अभियान ही उन्होंने चलाया। सामान्य जनता को अज्ञान के अधंकार से ज्ञान के प्रकाष की ओर,अधर्मसे धर्म की ओर ले जानेका काम गुरु नानक देव जी ने किया। गुरु नानक जी के पदों में भक्ति, सरलता, दीनता और आत्म–समर्षण के भावों की मार्मिक व्यंजना हुई हैं। उनके उपदेश में वक्रता और खण्डनात्मकता की अपेक्षा सहजता और सादगी हैं। गुरु नानक जी केवल सिक्खों के ही गुरु नहीं बल्कि जगतगुरु हैं। उन्होंने हमेशा मानव कल्याण के बारे में सोचा। नारी सन्मान, एकता व समानता, सेवा भावना, सच्चाई, त्याग, कर्मनिष्ठा, समानता का संदेश दिया। गुरु नानक जीने लंगर की शुरुवात की। इसी लंगर के माध्यम से लोगों को सेवा भाव और समानता का संदेश दिया।

संदर्भ ग्रंन्थ :

1. हिंदी साहित्य का विवेचन परक इतिहास – मोहन अवस्थी।
2. हिंदी साहित्य का इतिहास – डॉ. माधव सोनटक्के।
3. हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहास – बच्चन सिंह।
4. हिंदी साहित्य का इतिहास – आ. रामचंद्र शुक्ल
5. प्रतयोगिता साहित्य सीरीज – डॉ. अशोक तिवारी।

गुरु नानक देव की यात्राएँ एवं धर्म प्रचार

*सपना

* शोधार्थी, हिंदी–विभाग, पंजाब विश्वविद्यालय, चंडीगढ़–160014

'गुरु नानक शाह फ़कीर
हिन्दू का गुरु मुसलमान का पीर'

सिक्ख धर्म के संस्थापक गुरु नानक देव सम्पूर्ण मानव जाति के इतिहास में सत्य के प्रचारक थे। उन्होंने ज्ञान प्राप्ति के पश्चात् धर्म प्रचार के लिए लंबी यात्राएँ तय की। उन्होंने स्थान–स्थान पर घूमते हुएँ ईश्वर भक्ति का संदेश लोगों तक पहुँचाया। घर–बार का सारा बोझ उन्होंने त्याग दिया था और वे अब दुखियों के साथी बन गये थे, नीची जातियों में जो नीचे हैं और उनमें जो और भी नीचे हैं, नानक सदा उनके साथ है, उसे बड़ों से कुछ लेना–देना नहीं हैं। नीचे दिए गए शब्द गुरु के इसी कथन पर आधारित है। नानक देव के शब्दों में–

"नीचां अंदरि नीच जाति हूं अति नीच।
नानक तिनके संग साथ बडियां सू क्या रीख।"1

जिस स्थान से भी गुरु जी गुज़रते, लोगों का भीड़ उनके आस–पार इकट्ठा हो जाता। नानक देव बिना किसी विशेष धर्म का प्रचार किए, लोगों को धर्म–मार्ग पर चलने का उपदेश देते थे। उन्होंने जीवन–भर सभी धर्मों से प्रेम–भाव रखा, किसी भी दूसरे धर्म के प्रति बुराई की भावना उनमें निहित नहीं थी। मस्जिद में जाने को भी वह बुरा नहीं मानते थे। मस्जिद में कई दिनों तक बैठ अल्लाह की सतुति में गायन कर उन्होंने मुसलमानों का विश्वास जीत लिया था। गुरु के कथन अनुसार–"सब इन्सान एक हैं। यहां कोई छोटा नहीं, कोई बड़ा नहीं। ईश्वर ने सब को बराबर पैदा किया है। ईश्वर एक है। उसका नाम लेना हर प्राणी का कर्तव्य है।"2

गुरु नानक देव ने हिन्दुओं को उदाहरण देते हुए मूर्ति पूजा तथा जाति–भेद के विरुद्ध शिक्षा दी। निम्नवर्ग जाति के लोगों के साथ न केवल प्रेमपूर्वक व्यवहार किया, बल्कि उनके साथ उनके घर पर भी रहे। सईदपुर में वे एक छोटी जाति के व्यक्ति भाई लालो के घर ठहरे और उसके घर में बैठकर अपने ईश्वर को याद करते, पूजा पाठ में मग्न रहने लगे। गावों वालों को यह सब देखकर बहुत हैरानी होती थी कि स्वयं ऊँचे वंश के होते हुए भी, और अपना घर होते हुए भी वे नीचे व्यक्ति के घर पर जाकर बैठे है। उन्हें तब यह समझ ही कहा थी कि जान पाएँ कि वह तेरी–मेरी, छोटी–बड़े का सादा भेद–भाव तो कब का पीछे छोड़ आए थे। उसी स्थान के जमींदार भागो मलिक की दावत मना करने पर, भागों गुस्से में बोला– "नानकजी! तुमने हमारा निमंत्रण अस्वीकार किया किया? इस पर नानक जी ने मुस्कराते हुए कहा–सुनो भागो मलिक, हम साधु हैं और ईश्वर के भक्त हैं। हम जानते हैं तुम्हारी कमाई गरीबों का खून चूस–चूस कर इक्कठी की गई है, हम ईश्वर के भक्त केवल नेक कमाई से ही रोटी खाते हैं।"3 गुरु जी की बातें सुनने के बाद भागो का अपनी ग़लती का अहसास हुआ और उसने उसी दिन से धर्म का मार्ग अपना लिया।

गुरु नानक देव के पास श्रद्धा के साथ जो लोग आशीर्वाद लेने आते थे, वे जो भी साम्रगी या धन चढ़ाते। गुरु जी यह सारा चढ़ावा लंगर लगाने–चलाने में लगा देते। इस लंगर में सभी धर्मों के लोग एक साथ बैठकर भोजन छक सकते थे। सईदपुर से नानक देव मुल्तान के निकट 'तलबें' पहुँच गए। वहाँ उन्होंने ठग शेख सज्जन को शिक्षा दी। जिसने इस जगह पर एक ओर मस्जिद और दूसरी ओर मन्दिर बनवा रखा था, वह मुसाफिरों को यहाँ ठहराता और रात के समय अपने बदमाश दोस्तों के साथ मिलकर उन्हें लुटता और फिर जान से मार देता था। जब ठग शेख सज्जन और उसके साथी तलवारें लेकर गुरु जी के कमरे के बाहर पहुँचे तो उनके कदम अपने आप रुक गए। अंदर गुरुजी अपनी तंद्रा में सूही राग गा रहे थे–

"उज्जड कैहा चिलकण घोटिभ कालडी भसु।
धोतियां जूठी न उतरे जे सउ धोख तिसु।"4

(अर्थात हे सज्जन कांसी का बर्तन ऊपर से कितना चमकता है, परन्तु जितनी बार उसे धोया जाये, उसमें से मैल ही मैल निकलती है) गुरु जी के मुख से इस राग को सुनने के बाद कठोर एवं निर्दयी ठग शेख का ह्रदय परिवर्तन हो गया और वह एक अच्छा इंसान बन गया।

गुरु जी अधिक समय तक एक ही जगह पर नहीं ठहरते थे, क्योंकि वे भक्ति को अत्यधिक लोगों तक पहुँचाना चाहते थे। जिस समय नानक देव दिल्ली पहुँचे, उस समय वहाँ का शासक सिंकदर लोधी, जो हिंदू धर्म का सबसे बड़ा शत्रु था। कोई भी हिंदू धर्म का प्रचारक सामने आता उसे या तो ज़ेल में बंद कर दिया जाता था या फिर कत्ल कर दिया जाता था। नानक देव को भी ज़ेल में बंद कर दिया गया और पीसने के लिए चक्की दी गई, लेकिन नानक देव चक्की को छोड़ ईश्वर–भक्ति का पाठ करने लगे। जिसके प्रभाव से ज़ेल का वातावरण भक्ति–रस में डूब गया था, जब उनके कानों तक यह बात पहुँची, तब वह तलवार लेकर निकल पड़ा, पर वहाँ

पहुँचने के बाद वह वहाँ के दृश्य को देखकर हैरान रह गया—"सब कैदी—पहरेदार हाथ जोड़े थे। नफरत के स्थान पर प्रेम.....ईश्वर—भक्ति की यह निराली लीला....वह क्या करने आया था, वह तो वर्षों से धर्म प्रचारकों के खून से हाथ रंगता आ रहा था। धर्म का नाश करता चला आ रहा था। मगर यह साधू कैसा था, जिसने अपने भजनों से उसके मन में एक न समाप्त होने वाला युद्ध आरम्भ कर दिया। उसकी तलवार हाथों से गिर पड़ी थी। वह तो हार रहा था। महान योद्धा....एक साधू के हाथों हार रहा था।"5 यह सब होने के बाद वह धर्म के मार्ग पर चलने लगा, उसने सभी साधुओं को भी छोड़ दिया था।

दिल्ली से प्रस्थान कर गुरु जी पूर्व की ओर चल दिए। रुहेलखण्ड पहुँचने पर उन्होंने वहाँ के कबीले लोगों को भक्ति—मार्ग पर चलने का उपदेश दिया। इससे पहले यहाँ के लोगों का काम लोगों को लूटना, मारना तथा गुलाम बना कर उन्हें बेचना होता था, पर गुरु जी के उपदेश के बाद इन कबीले के लोगों ने इस काम के परित्याग का संकल्प लिया। इसके पश्चात् गुरु जी बनारस और पटना की ओर निकल पड़े। बनारस में उनकी भेंट पण्डित चतुरदास से हुई, गुरु जी की ज्ञान भरी बातें सुनकर वह भी उनका शिष्य बन गया। फिर वे आगे महात्मा गौतम के तीर्थ स्थान की और बढ़े। इस स्थल पर सभी व्यक्ति अपने पितरों के पिंड भरवाता था, ताकि उनकी मुक्ति हो जाए, परंतु गुरु जी तो वहाँ जाकर अपने भक्ति में लीन हो गए। वहाँ पंडों द्वारा पूछे जाने पर कि यदि वे हिंदू हैं तो अपने पूर्वजों के पिंड भरवाइ और यदि हिंदू नहीं तो फिर इस स्थान पर क्या कर रहे हैं। गुरु जी ने उन्हें जवाब दिया—"भाई, मैं न हिंदू हूं, न मुसलमान। मैं तो ईश्वर का भेजा हुआ एक इंसान हूं और मेरे विचार में यहां जो भी आता है, वह एक मनुष्य ही होता है। धर्म के बारे में उसे कोई पता नहीं होता कि वह क्या है। दुनिया में एक ही धर्म है—वह है मानवता का धर्म। इससे बड़ा धर्म कोई नहीं। पापी का कोई धर्म नहीं, धर्मी स्वयं धर्म का पुजारी है।"6 गुरु जी ने पंडों के इस पाखण्ड का खंडन किया और वहाँ के लोगों को समझाया कि जो भी वह पिंड दान करते हैं, वह किसी के भी पूर्वज के पास जाने वाला नहीं। आप लोग समझते हो कि हमारे पूर्वज इन पिंडों की प्रतीक्षा में बैठे होंगे? हमारा शरीर मरता है आत्मा नहीं, आत्मा शरीर बदलती है। वह आत्मा जिसे भूख—प्यास लगती नहीं, उसके लिए पिंड दान की आवश्यकता ही क्यों फिर? इस प्रकार के अनेकों तरह से गुरु जी लोगों में धर्म प्रचार का अद्भूत तरीका अपनाते थे।

इस बार की उनकी यात्रा दक्षिण भारत के प्राचीन धामिर्क स्थलों की ओर था। वह उन स्थलों को देखना चाहते थे, जहाँ श्रीराम ने बहुत—सा समय व्यतीत किया था, जहाँ महापुरुषों के कदम पड़े थे। हर स्थान पर गुरु जी रुकते थे और लोगों में ईश्वर नाम का प्रचार करते। वे पंचवटी, रामेश्वरम के मन्दिरों से होते हुए श्री लंका तक गए। गुरु जी ने वहाँ लोगों को गुरवाणी का प्रेम अमृत पिलाया और अपनी अगली उत्तर भारत यात्रा योगियों और सिद्धों के केंद्र की ओर चल पड़े। इस बार सीहन धोबी तथा हस्सीर लुहार उनके साथ थे। ठंड से बचने के लिए गुरु नानक ने सिर पर चमड़े का टोप और पैरों में चमड़े का जूता, माथे पर केसर का तिलक और शरीर पर रस्सियाँ लपेटी हुई थी। इस तरह गुरु जी कश्मीर से पर्वतीय मार्ग द्वारा सुमेत पर्वत होते हुए मानसरोवर पहुँचे। गुरु ने गोरखनाथ और मच्छेन्द्रनाथ के कई अनुयायियों से बातचीत की। गुरु जी ने उनसे कहा—"असत्य का अंधकार चारों ओर फैला हुआ है, सत्य का चन्द्रमा अदृश्य हो गया है। मैं उसे ढूढने निकला हूँ। पृथ्वी पाप के बोझ से कराह रही है। योगीगण तो पर्वतों में चले गए तथा अपनी देह को राख मलने के अलावा और कुछ नहीं करना जानते। फिर संसार की रक्षा कौन करेगा। गुरु बिना संसार अज्ञान के सागर में डूब रहा है।"7

अपने देश की यात्राएँ करने के पश्चात् नानक देव विदेश यात्रा के लिए निकल पड़े सिक्किम, भूटान के रस्ते चीन पहुँचे। चीन की जनता भी भारत वासियों की भांति कई धर्मों पर विश्वास रखते थे। नानक देव ने उन्हें बताया—"ईश्वर केवल एक है, जो तुम्हारी आत्मा के अन्दर विराजमान है। उसी का नाम लेना हर—एक व्यक्ति के लिये जरूरी है, इससे तुम्हारा कल्याण होगा। किसी भी प्राणी का ह्रदय मत दुखाओ, बुराइयों से दूर रहो...... ।"8 चीन की यात्रा करने के पश्चात् वे तिब्बत और लद्दाख की ओर बढ़ने और उन्होंने वहीं कुछ दिनों तक धर्म प्रचार किया।

इतनी लम्बी—लम्बी यात्राएँ करने के बाद भी उनके साहस में कोई कमी नहीं आया था। इस बार वे पश्चिम दिशा की ओर निकल गए। उनके हर यात्रा में उनका दोस्त मरदाना उनके साथ था। गुरु जी ने इस बार हाजियों जैसे कपड़े धारण किये थे, नीले वस्त्र, बगल में एक ग्रंथ तथा दरी, जिस पर बैठकर वे प्रार्थना करते, हाथ में मोटा डंडा था। मक्का घूमने पर वे हाजियों के पाखंड को दूर करना चाहते थे। इसलिए रात को रेत पर सोते हुए गुरु जी ने अपने पैर काबा, जो पवित्र इस्लामी तीर्थ स्थल था,उस ओर किया हुआ था। उन हाजियों में से सबसे अधिक क्रोधी जीवन नामक हाजी ने क्रोध में आकर इन्हें जगाया और अल्लाह के घर प्रति अनादर दिखाने के लिए कुवचन सुनाए। गुरु जी ने बड़े आदर के साथ उस व्यक्ति से कहा, आप मेरे पैर उस दिशा में घुमा दो, जहाँ ईश्वर मौजूद नहीं है। जीवन शाह ने जिस ओर भी गुरु जी के पैरों को पटका, उसे हर तरह काबा का महराव दिखने लगा। इस पर गुरु नानक बोले—"भाई जीवन! तुम्हें खुदा सिर्फ़ एक ही ओर नज़र आता है। मेरा खुदा तो सब तरफ़ है। जिधर मेरे पैरों को पटकोगे, खुदा वहाँ पहले से ही मौजूद है। तुम उसे सिर्फ़ काबा में न देखकर सारे विश्व में देखो। अगर काबे में तुम्हारा खुदा बसता है तो मेरा काबा भी तुम्हें सब तरफ़ नज़र आयेगा। किसी तरफ़ पैर करने से खुदा की बेइज्जति नहीं होती। वह सिर और पैर दोनों में मौजूद है।"9

गुरु नानक देव के 25 वर्ष की धर्म प्रचार यात्राओं के समय उनका परिवार उनके बहनोई के साथ 'पखोके' में रहा। इस जगह के सामने, नदी पार, गुरु नानक ने कुछ ज़मीन ले रखी थी, जहाँ उन्होंने 'करतारपुर' नामक गाँव बसाया। यहाँ गुरु जी ने अपने परिवार तथा कुछ अपने भक्त शिष्यों के साथ जीवन के आख़िरी 17 वर्ष बिताए। खेती का काम, घर का काम करते हुए नियमानुसार गुरु लोगों को उपदेश भी देते रहे। आस—पड़ोस के गाँवों के सभी जातियों और धर्मों के लोग गुरु जी के उपदेश सुनने

के आते थे। गुरु जी अब यह महसूस कर रहे थे कि उनकी अंतिम यात्रा का समय आ गया है। वह अपनी अंतिम यात्रा पर जाने से पहले किसी ऐसे व्यक्ति की तलाश में थे, जो उनके इस धर्म प्रचार कार्य को आगे बढ़ाए। अंत में उनकी नज़र लहणा पर पड़ी। गुरु जी ने पांच पैसे और एक नारियल लहणा जी के आगे रखकर प्रणाम किया और कहा–"अब आप गुरु अंगद हो गये हैं। अब मैं सारा कार्य आपको सौंप रहा हूँ।" इस प्रकार गुरु जी ने गुरुपद की एकता की स्थापना की। बाद के गुरुओं ने अपनी रचनाओं में 'नानक' नाम का व्यवहार किया है। प्रत्येक गुरु के भजन श्री गुरु ग्रंथ साहिब में महला के रूप में विभाजित हैं और गुरु नानक के भजनों, गीतों को प्रथम महला के अंतर्गत रखा गया है।

निष्कर्ष : गुरु नानक देव जिस महान कार्य के लिए इस संसार में आये थे, उसकी पूर्ति कर चले गए। गुरु जी का सारा जीवन तप त्याग की कहानी है। उन्होंने धर्म प्रचार के लिए जो कुर्बानी दी है, वह आसान नहीं था। वह जीवन भर धर्म–प्रचार में एक जगह से दूसरे जगह घूमते रहे, एक दिन भी वह चैन से नहीं बैठे। महात्मा बुद्ध के बाद यदि किसी भारतीय महात्मा ने धर्म–प्रचार के लिये इतनी लम्बी यात्राएँ की थी, तो वह गुरु नानक देव जी थे। उन्होंने सम्पूर्ण मानव जाति को एक सूत्र में पिरोया और उन सब को ईश्वर–भक्ति का ज्ञान मार्ग दिखाया। गुरु जी के शब्दों में–"तुही निरंकार तुही निरंकार नानक बन्दा तेरा।"10 मानवता की रक्षा के लिए उन्होंने जीवन भर संघर्ष किया। उन्होंने जन–जन तक एक ही संदेश फैलाया कि किसी भी धर्म को बुरा नहीं कहा जा सकता, क्योंकि सब धर्म अपने–आप में महान है। जीवन का एक ही मार्ग है, वह है सच्चे हृदय से ईश्वर की पूजा करना, जिसे आप मन्दिरों–मस्जिदों के अलावा भी कही बैठ कर कर सकते हो। ईश्वर को किसी एक जगह पर कैद करके नहीं रखा जा सकता। वह तो हर स्थान पर मौजूद है। बस जरूरत है तो मनुष्य को उसे सच्चे दिल से याद करने की। वही सब का सच्चा साथी है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. पाठक, नरेन्द्र, गुरु नानक देव, दिल्ली, सन्मार्ग प्रकाशन, संस्करण 1670, पृष्ठ संख्या–51
2. यथावत्, पृष्ठ संख्या–54
3. यथावत्, पृष्ठ संख्या–56
4. यथावत्, पृष्ठ संख्या–65–66
5. यथावत्, पृष्ठ संख्या–74–75
6. यथावत्, पृष्ठ संख्या–80
7. वधान, डॉ० अमरसिंह, प्रकाश पुंज गुरु नानक देव (विचार और सरोकार), दिल्ली, अभिषेक प्रकाशन, प्रथम संस्करण 2019, पृष्ठ संख्या–135
8. पाठक, नरेन्द्र, गुरु नानक देव, दिल्ली, सन्मार्ग प्रकाशन, संस्करण 1670, पृष्ठ संख्या–61
9. सिद्धान्तालंकार, नारायणदत्त, गुरु नानकः जीवन और दर्शन, दिल्ली, नवभारती सहकार प्रकाशन, संस्करण 1970, पृष्ठ संख्या–105–106
10. बेदी, काला सिंह, गुरु नानक निरंकारी, नई दिल्ली, पंजाबी बुक्स स्टोर, प्रथम संस्कार 1969, पृष्ठ संख्या–35

समाज सुधार के अग्रदूत गुरुनानक

* श्रवण कुमार गुप्त

* पी एच. डी शोधार्थी, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

"गुरुनानक देव उन महान संतों और द्रष्टाओं में से हैं जिन्होंने हमारी राष्ट्रीय चेतना को नया प्रकरण दिया । उनके लिये वास्तविक धर्म का मूल तत्त्व ईश्वर में अटूट श्रद्धा और मानव सेवामय जीवन था । वे सही अर्थो में दिव्य पुरूष थे और सत्यवादी जीवन यापन तथा विश्वबन्धुत्व में विश्वास करते थे । देश को भारत के इस महान सपूत द्वारा अपने आचरण और उपदेशों से बताये हुए प्रेम और सहिष्णुता के संदेश को भूतकाल की अपेक्षा आज और भी आवश्यकता है ।"

–श्री वी. वी. गिरि

"प्राचीनकाल की अपेक्षा आज हमें गुरुनानक की बहुत आवश्यकता है । वस्तुतः कवि और निस्संग आत्मा होते हुए भी उन्होंने कभी भी अपने को जीवन के मूल स्रोत से स्वयं को अलग नहीं किया । उन्होंने समाज को एक नया मार्ग दिखलाया । नानक मानव की मूलभूत अच्छाई में विश्वास करते थे और उसके सर्वोत्तम मानवीय गुण को प्रोत्साहित करने में समर्थ थे । उन्होंने भारत को एक नयी वसीयत दी और तत्कालीन समाज में अभूतपूर्व परिवर्तन किये । हमें उनकी सेवा और विनय की भावना का अनुकरण करना चाहिये ।"

– फखरूद्दीन अली अहमद

गुरुनानक मानवता के पथ प्रदर्शक थे । पराजय की भावना से ग्रसित मनुष्य के हृदय में धर्म और मानवता की आत्मा को पुनः जागृत करने के लिये इनका जन्म हुआ । नानक का समय विदेशी आक्रमणकारियों का समय था जिसमें मुगलिया सल्तनत की नींव भारत में पड़ी । समाज में चारों ओर असंतोष, उदासीनता, भाग्यवादिता आदि का बोलबाला था, हताश जनता भगवान में अपने मन को रमा कर सब कुछ सही होने का भुलावा पाल रही थी । विपरीत परिस्थितियों के कारण लोग विद्रोही होने के लिये विवश थे उनके मन का असंतोष नासूर की तरह दुखता था । समाज ऊंच–नीच और जातिवाद में बटा हुआ था, हिन्दू और मुसलमान एक दूसरे से घृणा करते थे, नारी केवल भोग की वस्तु समझी जाती थी, समाज से बहिष्कृत तथा तिरस्कृत शूद्र वर्ग घृणा और अस्पृश्यता के बोझ तले दबकर जीवित होते हुए भी मृतक के समान था । इस तरह की चीजों ने समाज को दुर्बल बना दिया था ।

गुरुनानक महान चिन्तक और समाजवादी व्यक्ति थे उन्होंने जनसाधारण के समक्ष एक नये तरह के समाजवाद की अवधारणा रखी । जिसमें मेहनत और ईमानदारी से काम करते हुए धन कमाना तथा दूसरों पर भी व्यय करना जरूरी था । राजा और उनके सेवक तथा मंत्रीगण आमजन पर तमाम तरह के अत्याचार करते थे । गुरुनानक ने इनके लिये उन कुत्तों का उदाहरण पेश किया जो मनुष्य को नाखून से खुरचकर घायल करते थे और फिर उसका खून पी जाते थे–

राजे सीह मुकद्दम कुत्ते ।
जाए जगाइन बैठे सुत्ते ।
चाकर नहदा पाइन्ह घाउ ।
रत पित कुतिहो चट जाहु ।

स्त्री के इज्जत और अस्मिता को रौंदने का उदाहरण–

जिन मिरि सोहनि पटीयां मागी पाए सन्धूर ।
से सिर काती मुनीअन्ह गल विच आवै धूडि ।

गुरुनानक स्वयं कर्मयोगी थे उनके साहित्य में कर्म और श्रम का सौन्दर्य मिलता है । नानक स्वयं के श्रम से अर्जित सम्पत्ति को ही ग्राह्य मानते थे, परायी वस्तु को छूना भी महापाप समझते थे–

'हक पराया नानक उस सूअर उस गाय ।'

सत्य की कमाई को ही वे ग्राह्य मानते थे जो कमाई समाज का खून चूसकर की गयी हो उससे उनका कोई सरोकार नहीं था । उनके विचार में खून के छींटे पड़े हुए वस्त्र को जब गंदा कहते हैं तो उन लोगों के मन को किस प्रकार शुद्ध माना जा सकता है जो कि दूसरों का खून चूसकर गन्दे हो चुके हैं–

जे रत लग्गे जामेआ जामा होए पलीत ।
जो रत पीवै मानसा तिन क्यों उत्तम चीत ॥

नानक के समाजवादी चिंतन केन्द्र में समता थी । उनका कहना था कि धन, ऐश्वर्य और उपलब्धियों को सबमें बांटकर उसका उपभोग करो, परन्तु गर्व नहीं होना चाहिये अपितु दान और उपकार यह सिचकर करना चाहिये कि जिसकी वस्तु है वह उसी को दे रहा हूँ ।

नानक का समाजवाद रूढ़िगत समाजवाद नहीं था वह समस्त मानवता में समान रूप से एक ही ईश्वर की अभिव्यक्ति की अनुभूति से उत्पन्न समाजवाद था जो सच्चे अर्थों में एकात्मभाव और भ्रातृत्व की भावना का प्रतिपादन करता था । उनकी सम्मिलित प्रार्थना में भी सबके भले की मांग की गयी थी–

घाल खाए किछु हस्थहु देइ ,
नानक राह पछाणहि सेइ ।

(जो मनुष्य अपनी मेहनत और ईमानदारी की कमाई को दूसरों के साथ बांट कर खाता है वही भगवान के सच्चे मार्ग को पहचानता है)

गुरुनानक अपना सम्बन्ध देश के निम्न से निम्नतर व्यक्तियों के साथ मानते थे, सम्पन्न व्यक्तियों से सम्बन्ध बनाने में वे गौरव का अनुभव नहीं करते थे । उनकी आस्था थी कि जहाँ पर निम्न लोगों के साथ सद्व्यवहार होता है वहीं पर भगवान की कृपा होती है–

नीचा मंदिर नीच जाति,
नीची हूं अति नीच ।
नानक तिनके संग साथ,
वडियां सूं क्या रीस ।
जित्थे नीच सैभालिअनि,
तित्थे नदरि तेरी बखसीस ।

उनके धर्म में सबके लिये जगह थी जिसमें सभी व्यक्ति समान रूप से भाग ले सकते थे । गुरुनानक का धर्म सच्चे अर्थों में मानव धर्म था ।

गुरुनानक सच्चे अर्थों में समाजसुधारक और पीड़ित मानवता के उद्धारक थे, उन्होंने समतामूलक समाज की स्थापना करने का प्रयास किया । एक ऐसा समाज जो ऊँच–नीच से रहित और हर तरह से सम्पन्न्न हो । नानक के समय और समाज में अनेक धर्मावलम्बी अपने–अपने धर्म की रूढ़ियों बंधे थे । प्रत्येक जाति विशेष के अपने विशेष संस्कार थे, जातीगत बन्धन अत्यंत कठोर तरीके से पालन होते थे कोई भी व्यक्ति उसका उल्लंघन नहीं कर सकता था । हिन्दू और मुसलमान दोनों ही अपने कर्मकाण्डों की पैरवी करते थे तथा एक–दूसरे को नीचा दिखाते थे । हिन्दुओं की जाति–पांति तथा छूआछूत के कारण बहुत सारे अछूत कहे जाने वाली जनता इस्लाम कबूल कर रही थी ।

नानक ने हिन्दुओं और मुसलमानों को उनके कर्मकाण्डों के कारणवश खूब लताड़ा । कहते हैं कि एक बार उन्होंने सूर्यग्रहण के समय खाना बनाना प्रारम्भ किया । ब्राह्मणों द्वारा सूर्य ग्रहण के कारण सूतक होते हुए रसोई बनाने पर नानक का विरोध किया गया तब नानक ने कहा–

जे करि सुतकु मन्नीये सभतै सूतकु होई ।
गोहे अतै लकड़ी अन्दरि कीड़ा होई ।
जेते दाणें अन्न के जीआ बाझु न कोई ।
सूतकू क्यूँ करि रखीये सूतक पवै रसोई ।
नानक सूतक ऐव न उतरै गियान ऊपारे धोई ।

अर्थात् हर स्थान हर जगह जीव है । सूतक वस्तुओं के परित्याग से नहीं वरन् सच्चे ज्ञान से ही दूर हो सकता है ।

ब्राह्मण अपनी रसोई बनाते समय जमीन को धोकर उसे एक रेखा खींचकर सीमित कर लेते थे । उसके अन्दर किसी भी अन्य व्यक्ति के आ जाने पर उनकी रसोई त्याज्य और अशुद्ध हो जाती है । इस आडम्बर को झूठा साबित करते हुये वे कहते हैं कि उनके शरीर उनके बुरे कर्मों से दूषित हैं और उनके हृदय में झूठ समाया है–

कुबुद्ध डूमनी कुदया कसाबन,
परनिन्दा घट चूहडी मुठ्ठी क्रोध चण्डाल,
कारी कड्ढी क्या थिये जद चारै बैठियां नाल ।

तिलक छापाधारी व्यक्तियों के बाह्याचार पर आक्षेप करते हुए वे कहते हैं–

गऊ बिराहमण कऊ करू लावहु,
गोबर तरणु न जाई ।
धोती टिका तै जप माली,
धानु मलेच्छा खाइ ।
अंतरि पूजा पडहि कतेबा,
समझु तुरका भाई ।
छोडि ले पाखडा,
नामि लइऐ जाहि तरदा ।

मुसलमानों के लिये उन्होंने कहा है कि मनुष्यों को खाने वाले (अत्याचार करने वाले) नमाज पड़ते हैं–

माणस खाणे करहि निवाज ।

तीर्थ स्नान की व्यर्थता सिद्ध करते हुए कहते हैं–

अठ सठि तीरथ जे नावहि,
उतरै नाहि मैलु ।
जिन पट अंदरि बाहरि गुदड,
ते भले संसार ।

अर्थात् अठ सठ तीर्थों में स्नान भी कर लें तब भी उनके मन की मैल उतर नहीं सकती । वही पुरूष संसार में भले हैं जो अन्दर शुद्ध और बाहर मैले हैं ।

योगियों के विशेष प्रकार के पहिनावे और जीवनयापान को गुरुनानक योग साधना के लिये आवश्यक नहीं मानते थे । उनका कहना था कि सच्चा योग ना तो कथरी में है, न डंडे में और ना ही सारे शरीर पर भस्म चढ़ाने में । सिंगी बजाने और सिर मुड़वाने में भी योग नहीं है । 'अजन' में भी 'निरजन' रहना ही सच्ची योग साधना है–

योग ना किंधा जोग न डंडे जोग ना भसम चढ़ाइए ।
जोग ना मुंडी मुडाइए जोग न सिंगी डाइए ।
अजन माहि निरजन रहित जोग जुगति तऊ पाइए ।

जाति पाति की व्यर्थता को तो उन्होंने अपने आचरण से सिद्ध कर दिया था । उनके शिष्यों में मरदाना मुसलमान था तो लालो बढ़ई । इसके अतिरिक्त जाट, लुहार तथा अन्य छोटी समझी जाने वाली जातियों के लोग उनके शिष्य थे ।

गुरुनानक ने एक ओर हिन्दुओं के तीर्थस्नान, उपवास, सूर्य को जल चढ़ाना, छूत–छात, सूतक मानने आदि की निन्दा की है तो दूसरी ओर मुसलमानों को भी रोजे और नमाज का एक नया ही अर्थ बतलाया । गुरुनानक ने दलित वर्ग के उद्धार के साथ–साथ नारी वर्ग का भी उद्धार किया । उस समय स्त्री केवल भोग की वस्तु समझा जाता था, उसे धार्मिक कार्यों में भाग लेने की अनुमति नहीं थी, शास्त्र अध्ययन उसके लिये वर्जित था, उसको ना ही निजी धर्म और ना ही आत्मिक उन्नति का अधिकार था । उसकी दशा अछूत अथवा खरीदे हुए दास की तरह थी । गृहस्थ नारी को अनादर की दृष्टि से देखते थे, वैरागी उससे घृणा करते थे तथा उसे मायारूपिणी और नरक का मूल मानते थे ।

नानक ने नारी की महत्ता का प्रतिपादन किया तथा उसको पुरूष के बराबर माना । सब तरह के धार्मिक कृत्यों में उसको समान रूप से उसको भाग लेने दिया । उन्होंने उसे उसकी आत्मिक उन्नति के लिये स्वयं उत्तरदायी माना । धार्मिक सम्मेलनों के द्वार उसके लिये खोल दिये गये । नारी की निन्दा करने वालों से कहा कि नारी अनिन्दनीय है–

भंडी जन्मीए भंडी निम्मीए भंडी मगण वीआहु,
भंडहु होवै दोसती भंडहु चलै राहु ।
भंडु मुआ भंडु मालिए भंडी होवै बघानु,
सो किउ मदा आखिए जित जम्महि राजानु ।

अर्थात् उस नारी की निन्दा किस प्रकार की जाय जिससे मनुष्य जन्म लेता है, जिसके पेट में रहकर उसका निर्माण होता है तथा जिससे सगाई और विवाह होता है । स्त्री

से ही संसार का मार्ग अर्थात् उत्पत्तिक्रम चलता है । जब एक स्त्री मर जाती है तो दूसरी स्त्री विवाह के लिए खोजी जाती है और स्त्री द्वारा ही विशाल बन्धन बंधते हैं ।

इस प्रकार हम गुरुनानक को बहुत बड़े समाज सुधारक के रूप में पाते हैं । नानक ने समाज के कुरीतियों की जड़ पर कुठाराघात किया और संसार में रहते हुए भी उसमें अलिप्त रहना सिखाया । उन्होंने मानव के भौतिक उद्धार के साथ–साथ उसके लिये आध्यात्मिकता का मार्ग भी प्रशस्त किया जिसमें सच्चा सुख निहित रहता है । दुख की बात यह कि हिन्दी साहित्य के इतिहासकारों ने इस महान युगद्रष्टा और समाजवेत्ता के सही मूल्यांकन का प्रयास नहीं किया।

संदर्भ ग्रंथ

1. नानक वाणी, दिल्ली
2. पाठक, नरेन्द्र, गुरु नानक देव, दिल्ली, सन्मार्ग प्रकाशन, संस्करण 1670
3. गुरु नानकः जीवन और दर्शन, सिद्धान्तालंकार, नारायणदत्त, नवभारती सहकार प्रकाशन, संस्करण 1970

गुरु नानक देव का काव्य : मानवीय मूल्य

* डॉ0 सुनन्दा महाजन

* ऐसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्षा, हिन्दी विभाग, सेठ फूल चंद बागला (पी0जी0) कालेज, हाथरस।

1 ओं[1]
सतिनामु करता पुरखु निरभउ निरवैरू
अकाल मूरति अजूनी सैभं गुरप्रसादि।।

वह एक ओंकार स्वरूप है। उसी का नाम सत्य है। वही इस सृश्टि का रचयिता आदि पुरूश है। वह भय रहित, वैर रहित, कालातीत, अविनाषी, अजन्मा एवं स्वयंभू है। उसकी प्राप्ति, उसका अनुभव, गुरुकृपा से होता है। जपु[2]

''आदि सचु जपु जुगादि सचु।
है भी सचु नानक होसी भी सचु।

वह अकाल पुरूश आरंभ में अर्थात् सृश्टि के पूर्व भी सत्य था, युगों के प्रारम्भ में भी सत्य था, वर्तमान में भी सत्य है तथा, गुरुनानक कहते हैं, भविश्य में भी सत्य रहेगा।

''थापिआ न जाई कीता न होई।।
आपे आपि निरंजनु सोई।।''[3]

उस परमेष्वर की किसी के द्वारा स्थापना नहीं की जा सकती, न उसका कोई निर्माण करने में समर्थ है।

''गुरु मुखि नादं गुरुमुखि वेद।।
गुरु मुखि रहिआ समाई।।''

गुरु की वाणी, गुरु से वाक्य ही नादस्वरूप हैं, गुरु के षब्द ही वेद स्वरूप हैं, गुरु के वाक्यों में ही अकाल पुरूश परमेष्वर समाया हुआ है।

'विष्व की महान विभूतियॉ काल प्रसूत होती हैं''[4] उनकी महानता उनकी वाणी के द्वारा युग–युग तक जन–जीवन को जागृत करती है तथा इस प्रकार जाति, राश्ट्र एवं जगत को अपने महान संदेष से निरन्तर निनादित कर सफल जीवन की ओर प्रेरित करती रहती है। ऐसी ही महान विभूतियों में गुरुनानक का नाम सर्वश्रेश्ठ है। उनके बताए संदेषों ने जीवन में नए मूल्यों की स्थापना की। समाज में समता का स्वर प्रदान करके विखण्डित समाज को एक सूत्र में पिरोकर आदर्ष मूल्यों की स्थापना करके नवीन समाज को निर्मित करने का संकल्प लिया।

जब मानव–मन प्रेरणाओं, रूचियों, इच्छाओं तथा अभिवृत्तियों से प्रेरित होकर उन वस्तुओं, घटनाओं एवं स्थितियों की ओर उन्मुख होता है, जो परितोश, प्रसाद, आपूर्ति, क्रम, भिन्नता और सार्थकता की अनुभूति कराने में समर्थ होती है तो उसे मूल्यों की प्राप्ति की प्रतीति होती है।

विद्वानों ने विविध प्रकार से ''मूल्य'' षब्द को विष्लेशित किया है, ''मूल्य षब्द रूचियों, सुखों, अभिरूचियों, वरीयताओं, कर्त्तव्यों, नैतिक दायित्वों, इच्छाओं, अपेक्षाओं, आवष्यकताओं, अरूचियों आकर्शणों और चयनीय व्यवस्था की अन्य अनेक रीतियों को संदर्भित कर सकता है। दूसरे षब्दों में मूल्य चयनीय व्यवहार के विषद, बहुविध और सम्पूर्ण रूप में उपलब्ध होते हैं''[5]

डॉ0 राधा कमल मुकर्जी ने समाज को व्यवस्थित करने का श्रेय मूल्यों को ही देते हैं, ''मूल्य ही केवल वे सुदृढ़ वास्तविकताएॅं हैं, जो सामाजिक क्षेत्र के घुले–मिले संष्लिश्ट तत्व को व्यवस्थित करने के लिए एक फ्रेम बना सकती है।''[6]

मानव सृश्टि को सर्वोकृश्ट एवं अभिराम प्राणी है। वहीं मूल्यों का सर्जक, संस्थापक एवं धारक है। वह चरम प्रज्ञात्मक और ऐन्द्रिक संवेदनों का सुश्ठु1 और मंजुल पुंज है, जिसका आधार है ''आनन्द''। अतः चरम मूल्य आनन्द ही है, जो व्यश्टि और सृश्टि के स्तर पर मानव–कल्याण अथवा जीवन की सार्थकता की सुखमय अनुभूति का नाम है।''[7]

मूल्य को आधार बनाकर ही व्यक्ति अपने जीवन को जीता है। भोगता है। ''मूल्य वह वैचारिक इकाई है, जिसे आधार बनाकर व्यक्ति अपना जीवन जीता है और उसे आत्मोपलब्धि होती है।''[8]

''मूल्य सदैव विवषता के भीतर उपजता है, सम्बन्धों के संतुलन में उपजता है।''[9] यहॉ विवषता का अर्थ मन की विवषता है अर्थात जब मानव उपलब्ध मूल्यों को लेकर जीवन जीने में विवष पाता है, तो वह परिवर्तन की आवष्यकता अनुभव करता है और नवीन जीवन–मूल्यों की स्थापना करता है।

मूल्यों का मानवीय जीवन से बहुत ही गहरा सम्बन्ध है। प्रत्येक मूल्य मानव जीवन की चिन्तन प्रक्रिया और संवेदनाओं से होकर गुजरता है, उन्हीं से पोशण पाता है, उन्हीं के साथ जुड़ता है और उसका ध्वंस भी मानव के हाथों ही होता है। मानव ही मूल्यों का निर्धारण या संचालन कर्ता है और उसी की आवष्यकताओं अनुरूप मूल्य बनते या बिगड़ते हैं। ''मूल्य वस्तु में नहीं बल्कि मानव की इच्छा आकांक्षा या परितोश पर आधारित रहता है।''[10]

''मूल्य को मानव–जीवन से सम्पृक्त नहीं देखा जो सकता है। ''साहित्य की कोटि पर यह स्वीकार किया जाता रहा है कि वह जीवन को कहॉ तक प्रभावित करते है।''[11]

इन्हीं जीवन–मूल्यों को आधार बनाकर मध्ययुग के सन्त–वाणीकार ने प्राचीन काल से चले आ रहे

जीवन–मूल्यों को अपनी वाणी की कसौटी पर कसा परन्तु वह मूल्य उनके युग की परिस्थितियों के अनुकूल न होने के कारण उन सन्त वाणीकारों को नवीन–जीवन–मूल्यों की स्थापना करनी पड़ी। जिससे समाज विकसित और पल्लवित होता रहे।

''गुरुग्रंथ साहिब'' सिखपंथ का धर्मग्रंथ है। उसमें गुरुनानक और अन्य नौ गुरुओं, सन्तों और भक्त कवियों की वाणियॉ संग्रहीत हैं। वे सन्त वाणीकार न तो कोरे कवि थे, न उन्होंने किसी सम्प्रदाय की स्थापना का प्रयास किया । उनकी लिखित वाणियों के अध्ययन से यह प्रतीत होता है कि वे अपने समय की धार्मिक स्थिति से प्रसन्न नहीं थे। इनकी धारणा थी कि '' धार्मिक दृश्टि से समाज सत्य से दूर चला गया हैं अपने व्यक्तिगत चिन्तन और साधना के द्वारा वे इस निष्चय पर पहुॅचे कि जब तक हम किसी विषिश्ठ आध्यात्मिक जीवन के आदर्ष को अपने सामने नहीं रख लेते और उनके अनुसार अपने जीवन को ढालने का प्रयास नहीं करते, तब तक कल्याण की आषा नहीं की जा सकती।''[12]

मध्यकालीन सन्त परम्परा से विमुख नहीं थे। फिर भी वे अपने समय की सामाजिक नेतृत्व के कारण ही परिस्थितियों की अनुकूलता और प्रतिकूलता को पहचानते थे। इसीलिए उन्होंने पुरातन पूर्वाग्रहों को छोड़ तत्व को ही ग्रहण किया था। रूढ़ तत्वों का आदर्षीकरण करते हुए नए मूल्यों की स्थापना की। कुछ ऐसी प्राचीन मान्यताएँ जो कि उनके युग के प्रतिकूल प्रतीत हो रही थी, उन रूढ़ियों को अनावष्क समझ कर उसका उन्मूलन कर दिया। उन्होंने आवष्यकतानुसार जन–मानस को बहुत ही सहज भाशा के माध्यम से अपने नवीन मानवीय मूल्यों को ज्ञान कराया। जिससे उनकी बुद्धि को प्रवीणता प्रदान की जा सके।

भक्तिकाल तक आते–आते देष की सामाजिक स्थिति ही नहीं, राजनीतिक, आर्थिक एवं धार्मिक अवस्था भी बदल चुकी थी। समाज की रूपरेखा में परिवर्तन आ जाने से तथा विदेषी संस्कृत के अन्तः मिश्रण के कारण समाज के जीवन मूल्यों में भी अपेक्षित परिवर्तन होना स्वाभाविक ही था, युग की परिस्थितियों के बदल जाने से रहने वाले मानव के मानवीय जीवन–मूल्य भी बदले जाते हैं क्योंकि मनुश्य इसी समाज का ही अंग है।

''मध्यकालीन परिस्थितियों में नव–व्यवस्थित रूप की उत्कट अपेक्षा थी। पुरातन सामाजिक मूल्य अपर्याप्त सिद्ध हो गये थे। दो सभ्यताओं के संघर्श से आकुल जन–मानस को संकीर्णता की तंग गलिया से निकाल कर प्रषस्त पथ पर अग्रसर करना अनिवार्य था। संभवतः इसीलिए भारतीय दर्षन के इतिहास में सन्त महात्माओं का विद्रोही स्वर तथा संषोधक स्वर अपना विषेश स्थान रखता है।''[13]

समाज अपने सहज रूप से विकसित होने लगा। तात्कालीन सामाजिक नेता, सन्त–महात्माओं ने भारत मे चारो ओर एक नए समाज का गठन करने का प्रयास किया। सन्त तुलसीदास, कबीर, नानक, नामदेव, रामदास, अर्जुन देव आदि महात्मा और इन सबमें अपना अग्रणी स्थान रखते हैं।

उस विश्रृंखल युग की पृश्ठभूमि पर, गुरु नानक जो प्रथम गुरु थे। उन्होंने युग की परिस्थितियों को समझते हुए नवीन जीवन–मूल्यों का प्रतिपादन किया। जो कि उस युग की आवष्यकता थी ''उन्होंने मूर्ति–पूजा का विरोध एक संतुलित और मंजा हुआ दृश्टिकोण रखा। उस युग की पृश्ठभूमि पर जब कि आर्य–संस्कारों की उज्ज्वलता और प्रौढ़ता अपना दम तोड़ चुकी थी। उस समय हिन्दू और मुसलमानों के गतिहीन बौद्धिक संस्कारों को गतिषील करने का प्रयास गुरुनानक ने किया।''[14]

सामाजिक मानवीय मूल्यों की स्थापना करने के उद्देष्य से गुरु नानक ने वर्ण–भेद का विरोध किया उनका कहना है कि संसार के सब जीव प्रभु के बनाए जीव हैं। उसमें एक ही अंषी का अंष निवसित करता है। इसीलिए उनमें जन्म–दृश्टि से किसी भी प्रकार की ऊँच–नींच का विचार करना सन्तमत के प्रतिकूल माना गया। ''गुरुनानक की विचारधारा व्यावहारिक थी। प्रार्थना में गरीब–अमीर, ऊँच–नींच सब समान रूप से भाग लेते थे। किसी के लिए किसी प्रकार का बन्धन या पक्षपात नहीं था।''[15] अतः गुरुग्रंथ में भी मानववादी दृश्टिकोण को अपनाया गया है।

सामाजिक–व्यवस्था को सुचारू रूप से व्यवस्थित करने के लिए भारतीय धर्मषास्त्र में वर्ण–विधान किया गया है। पी0वी0 कार्णे के षब्दों में ''उस युग में चारों वर्णो की साम्यता थी, जो जिस प्रकार के व्यवसाय को अपना लेता था, वह उसी वर्ण–विषेश का व्यक्ति मान लिया जाता था। उसके वर्ण–प्रवेष के लिए जन्म का घेरा कोई महत्व नहीं रखता था।''[16] वेदों को अध्ययन करने पर भी कोई प्रतिबन्ध नहीं था। वेदों में ऐसे ष्लोक मिलते हैं जिसमें चारों वर्णो को षरीरांगों की तरह समाज के समान अंग स्वीकार किया गया है। यथा–

''ब्राह्मणोअस्त मुखम् आसीद्।
बाहू राजन्यः कृतः
अरू तद् अस्य यद् वैष्यः
पदभ्यां शूद्रों अजायत।''[16]

न केवल चारों वर्णो के लिए हो, अपितु विदेषियों को भी वेदों का अध्ययन करने की छूट दे दी।

गुरु नानक ने जाति की श्रेश्ठता कर्मो के आधार पर ही बतायी।–

''जाति जनमु नह पूछीए,
सच घरू लेहु बताई।
सा जाति सा पति है,
जेहे करम कमाइ।''[17]

दूसरी तरफ जाति पर गर्व करने वालों को एक ही कारण से प्रकट हुए बताकर फटकारते है, तथा जाति पर गर्व करने के कारण चलने वाले विचारों से बचने का आदेष देता है–

''जाति का गरबु न करि मूरख गवारा।
इस गरब ते चलहि बहुतु विकारा।
चारे वरन आखै सभु कोई।
ब्रह्म विंद सभी ओपति होई।''[18]

इतना करने पर भी समाज का ब्राह्मण वर्ग इस झूठी प्रतिश्ठा को प्राप्त करके इसे छोड़ने के लिऐ तैयार न था तो सन्त वाणीकारों ने उसकी तीव्र स्वरों में आलोचना की। उनका कहना था कि ब्राह्मणों को अधिक महत्व क्यों दिया जाए? क्या उनकी जन्म प्रक्रिया षूद्र से भिन्न है? क्या षुद्र के षरीर में लहू और ब्राह्मणों के षरीर पर दूध प्रवाहित होता है? यदि सर्जक ने ऐसा कोई भेद दोनों प्रकार के प्राणियों में नहीं डाला तो समाज के ठेकेदारों को ऐसा करने का क्या अधिकार है? गुरु नानक जी ने कहा–

''जौ तु ब्राह्मण ब्रहमणी जाइआं।

तउ आन बाट काहे न ही आइआ।
तुम कत ब्राह्मण हम कत शुद्र।
हम कत लोहू तुम कम दूध।''[19]

गुरु नानक ने भिन्न भिन्न वर्णो के लिए निष्चित किए इन कामों का विवरण प्रस्तुत करते हुए लिखा है कि ''इस प्रकार जातियों में कामों का बॉटना उचित नहीं है, प्रत्येक मनुश्य का ज्ञान प्राप्त करना चाहिए। हाथ से काम करना प्रत्येक मनुश्य के लिये हितकारी है। श्रम का आदर ही समुचित जीवन है।''[20]

ब्राह्मणों के अत्याचारों से पीड़ित होने के कारण सन्तों ने ब्राह्मणों की ओर उन्मुख होते हुए कहा कि गर्भावस्था न तो किसी के कुल का चिन्ह है न जातियों का। सबकी उत्पत्ति एक ब्रह्म से हुई है।'' कबीर के षब्दों में।

''गरभि वास महि कुलु नहीं जाती।
ब्रह्म बिदे सब उतपाती।
कहु ने पण्डित बामन कब के होए।
बामन कहि–कहि जनम मत खोए।''[21]

''धर्म का जो भी आचरण करता हो वहीं धार्मिक है। चाहे वह ब्राह्मण हो या शूद्र। शूद्र के सिर पर कोई मोती तो नहीं लगा रहता।''[22]

गुरुग्रंथ के अधिकांष सन्त कवि उन जातियों से आये थे, जिन्हें नीचा समझा जाता था। कबीर जुलाहा थे, रविदास चमार, दादू धुनिया? धन्ना जाट, सधना कसाई था। इनकी रचनाओं में या तो आक्रोष है या अति विनम्रता। गुरुनानक जिस कुल में उत्पन्न हुए थे। वह सामाजिक दृश्टि से उच्च समझा जाता था। इसीलिये गुरुनानक उस मनोवैज्ञानिक कुण्ठा से ग्रसित नहीं हुए थे, जिसकी छाया हमें सन्त कवियों में मिलती है। असवर्ण नामदेव को मन्दिर से पूजा करते समय षूद्र! षूद्र! कर मार कर उठा दिया था। गुरुग्रंथ ने इसका उल्लेख करते हुए कहा है–

''सुदु सुदु करि मारि उठाइयों कहा करउ बाप बीठुला।

इसी तरह गुरुनानक ने भी कहा है–

''हॅसत खेलत तेरे देहुरे आया।
भगति करत नामा पकरि उठाया।
हीनडी जाति मेरी जाद भराया
छीपे के जनमि काहे को आया।''[24]

कबीर को रामानन्द का षिश्यत्व ग्रहण करने के लिए क्या नहीं करना पड़ा?

गुरुनानक देव ने भी स्वयं उच्च जाति में जन्म लेकर भी इन दोनों गुटों से निम्न वर्ग के साथी बने। महात्मा बुद्ध की भॉति उनके कार्य में भी यही श्रेश्ठता थी। गुरुनानक ने इसका वर्णन करते हुए कहा है –

''नीचा अंदरि नीच जाति,
नीचों अति नीचु।
नानक तिन के संगि सधि,
बडिया सिउ किआ रीस।''[25]

इस तरह गुरुनानक ने अपने समय के समाज को जो लज्जाहीन, सम्मानहीन होकर जीवन व्यतीत कर रहा था। उसका उल्लेख श्री गुरुग्रंथ में करते हुए कहा है – अपना सम्मान खोकर जीना हराम है, इसी जीवन को जीवित रखने के लिए जो कुछ भी खाया–पीया जाता हे वह सब हराम है–

''जै जीवै पति लथी जाइ।
सभु हरामु जेता किछु खाई।''[26]

मुसलमान तो उस युग का षासक था। अपने आपको मुसलमान से सम्बोधित करना उसके लिए उच्च अनुभूति का साधन था। गुरुनानक ने कहा है – ''अपने को मुसलमान कहना तो बहुत मुष्किल काम है अपने आप को मुसलमान तो वही कह सकता है जो अपने मौलवियों को बताए मजहब को प्रिय मानता है। गुरुनानक ने मुसलमान से उस मजहब को मानने को कहा था जिसकी व्याख्या मुसलमान ने की थी न कि मुसलमान षासकों ने।

''मुसलमान कहावणु मुसकलु,
जा होई ता मुसलमाणु कहावे।
अवलि अउलि दीनु करि मिठा,
मसकलमान मालु मुसावै।
होई मुसलिमु दीन मुहावै,
मरण जीवण का भरमु चुकावै।''[27]

काजियों पर किए गये अत्याचारों का उल्लेख करते कबीर श्री गुरुग्रंथ में कहते हैं–

जउ रे खुदाई मोहि तुरकु करैगा, आपन ही कटि जाई।
सुनति कीए तुरकु जे होइगा, अउरित का कीओ करीअै।
अरध मरीरी नारी न छोड़े ता तै हिन्दू ही रहीए।''[28]

गुरुनानक ने तो ''ता तै हिन्दू ही रहीअै'' को और स्पश्ट करके लिखा है। कबीर का भाव था उसी रूप में रहना जिस रूप में ईष्वर ने पैदा किया है, अर्थात् मानव बनना, ''तू हिन्दू बनेगा न मुसलमान बनेगा इन्सान की औलाद है इन्सान बनेगा'' का ब्रह्म–नाद इन सन्तों ने बहुत पहले ही ऊँचा किया था। ''गुरुनानक ने भी यह बात स्वीकार की थी।'' गुरुनानक देव ने गुरुग्रंथ में कहा है– ''हिन्दू के घर हिन्दू आता है''

दोनों अपने जातिगत अभिमान में डूब–डूब मरते हैं–

''हिन्दू के घरि हिन्दू आवै।
सूत जनेऊ पड़ि गति पावै।
मुसलमान करै वडिआई।
विणु गुर पीर को थाह न पाइ।''[29]

इन्हीं मानवीय मूल्यों की स्थापना के उद्देष्य से सन्तों ने जिस जाति–पॉति को भेद को मिटाने का प्रयास किया था उसे गुरुनानक ने विषेश सम्बल प्रदान किया। गुरु रामानन्द ने सभी जातियों से आने वाले भक्तों की एक ही जाति बनायी। ''जाति–पॉति पूछे नहिं कोई। हरि को भजे सो हरि का होई'' लेकिन गुरुनानक ने इन सभी बंधनों को भी तोड़कर मानव की एक ही जाति बनाने का प्रयत्न किया। उन्होंने वाणी द्वारा मात्र उपदेष ही नहीं, अपितु वैयक्तिक जीवन में आचरित कर क्रियात्मक संदेष दिया। यही कारण है कि उनके सन्देष से स्थायित्व को बल मिलता है–

''जाणहु जोति न पूछहू,
जाति आके जाति नहे।''[30]

गुरुनानक देव कहते हैं कि जो तीर्थाटन, तप, दया आदि करता है उसे भले ही तिल भर पुण्य मिल जाए किन्तु प्रभु नाम का क्षण भी मिल जाए तो वह इससे कहीं भी ज्यादा है–

''तीरथ तपु दइआ दतु दातु।
जे को पावै तिल का मानु।
सुणिआं मणिओं कीता भाउ।
अन्तरगति तीरथि मलि नाऊ।''[31]

गुरुग्रंथ में गुरुनानक ने प्राचीन रूढ़ियों और संस्कारों को नकारते हैं, उनका कहना है, कंठा धारण कर लेने से, हाथ में डंडा ले लेने में, षरीर पर भस्म रमा लेने में, कानों में मुद्रा पहन लेने से, मूंड मुड़वाने से जीव ब्रह्म को प्राप्त नहीं कर सकता, वास्तविक योग तो संसार में रहते हुए

सांसारिक बुराईयों से दूर रहने में है। केवल योग की बात से कोई योगी नहीं हो सकता–

''जोगु न खिंथा जोगु न डंडे।
जोगु न भसमं चढ़ाईए।
जोगु न मुद्रा मुंड़ि मुडाईए।
जोग न सिडी बाईए।
अंजन माहि निरंजन रहीऐ।
जोगु जुगत इव पाईऐ।''[32]

इसी प्रकार सिर मुड़ा कर अथवा जटा रखकर, नंगे रहकर, अधिक वस्त्र पहिनकर, भस्म लगाकर या धूलि रमाकर, तिलक लगाकर, कंठमाला पहनकर, जप–तप से षरीर गलाकर, गुफा को घर बनाकर, मृगचरों को साथी समझ कर, जिन साधु और सन्यासियों ने मोक्ष प्राप्ति का प्रयत्न किया था उन्हें कबीर ने गुरुग्रंथ के माध्यम से इन रूढ़िगत मूल्यों को नकारा है। उनका कहा है कि –

''कबीर मनु मूंडिआ नही केस मुडाए काइ।
जो किछु कीओ सुमन कीआ मुंडा मूंड अजाई।''[33]

कहने का अभिप्राय यह है कि इन केषों ने क्या बिगाड़ा है? जो उन्हें मूंडाना पड़ा। वह सब दोश तो मन का होता है इसे पवित्र करने का प्रयत्न करना चाहिए। गुन्ग्रंथ में कबीर ने ब्राह्मणों को फटकारते हुए कहा है कि मल–मल कर नहाने से ही मनुश्य को परमगति प्राप्त नहीं होती है क्योंकि मेंढ़क तो बार बार नहाता है फिर भी उसे मोक्ष नहीं मिलता। मिथ्याचारों की भर्त्सना करते हुए कहा है–

''जल में मंजनि जे गति होवै।
नित नित मेंडुक नावहि।
जैसे मेंडुक तैसे ओई नर,
फिरि फिरि जोंनी आवहि।''[34]

इसी बात को स्पश्ट करते हुए कहा है कि दिखावे की षुद्धि है। वैसे सारी जूठ इनके अन्दर है। मलेच्छों का धान खाते हैं। हलाल किया बकरा खाते हैं सारा रहन–सहन तथा आचार तुर्को जैसा है। पराधीनता–वष में ये ब्राह्मण मुसलमानों की कठपुतलियॉ बन गए हैं। नाम के ब्राह्मण है, अन्यथा मुसलमानों जैसा रहने में कोई सन्देह नहीं है। मुसलमान ''गउ ब्राह्मण'' पर जजिया लगाते हैं, परन्तु इन ब्राह्मणों को सब कुछ स्वीकार है–

''गऊ बिराहमण कउ करू लावहु,
गोबरि तरण न जाई।
धोती टिका तै जपमाली,
धातु मलेछा खाई।
अंतरि पूजा पड़हि कतेबा,
संजमु तुरका भाई।''[35]

गुरुग्रंथ ने इन सभी रूढ़िगत मूल्यों को त्यागने का सन्देष दिया। गुरुनानक को जब नौ वर्श की आयु में यज्ञोपवीत संस्कार निष्चित किया गया तो नानक ने गले में जनेऊ धारण करने से इन्कार कर दिया उन्होंने कहाः– कि दया की कपास, सन्तोश का सूत, संयम की गांठवाला जनेऊ यदि आपके पास है तो मैं उसे धारण करने के लिये तैयार हूँ। ऐसा जनेऊ न तो टूटता है न तो गन्दा होता है, न ही जलता है और न ही कभी नश्ट होता है वे मनुश्य वास्तव में धन्य हैं जो ऐसा आदेष जनेऊ षरीर पर धारण करके परलोक सिधारते हैं।

''दइआ कपाह संतोखु सूतु जतु गढी सतु वटु।
एहु जनेऊ का हई त पांडे धतु।
न एहु टूटै ना मलु लगै न एहु जलै न जाइ।
धनुं सु माणस नानका जो गलि चले पाई।''[36]

गुरुग्रंथ के सन्त वाणीकारों ने हिन्दू पुराणों में वर्णित अवतारों को स्वीकार नहीं किया। पैगम्बर हो या अवतार, कोई भी वाणीकारों को ग्राह्य नहीं है। उनकी दृश्टि में मनुश्य को ईष्वर नहीं माना जा सकता है।

राम को भी यह मानना पड़ा है कि विधाता के लेख को कोई नहीं मिला सकता– ''हंसि बोले रघुवंष कुमारा। विधि का लेखा कुमेटन हारा।''

नानक ने भी इसी अभिप्राय को लेते हुए कहा है कि राम स्वयं भाग्य के अधीन थे। राम ने सीता और लक्ष्मण के लिये विलाप किया और हनुमान से भी सहायता लेनी पड़ी । मूर्ख रावण को यह नहीं ज्ञात था कि मृत्यु का कारण राम नहीं ईष्वर है। ईष्वर स्वतन्त्र है किन्तु राम तो भाग्य के लेख को भी नहीं मिटा सकता। ''गुरुनानक देव ने परमात्मा से संबंधित प्रचलित नामों का खुलकर प्रयोग किया है। उन्हें परमात्मा को भगवंत, गोसाई, जगन्नाथ, गोपाल, गोविन्द, नारायण, राम और वासुदेव कहने में कोई संकोच नहीं है परन्तु गुरुनानक परमात्मा के अवतार में विष्वास नहीं करते।''[37] इस तरह सिक्ख गुरुओं अथवा साहिब ने अवतार को साधारण मनुश्य समझकर ही स्वीकार किया। गुरुग्रंथ ने न तो उसे ईष्वर का दूत घोशित किया और न ही ईष्वर का एकलौता पुत्र।

गुरुग्रंथ साहिब ने अवतारवाद की तरह ही मूर्तिपूजा का भी विरोध किया। ''उन्होंने मूर्ति–पूजा का तो विरोध किया लेकिन मूर्ति–भंजक का उपदेष नहीं दिया है। मूर्तिपूजा के सम्बन्ध में गुरुनानक मानते हैं कि वह परम सत्ता अपने आप में ही सच कुछ है उसका न तो सृजन किया जा सकता है और न ही उसे स्थापित किया जा सकता है–

''थापिआ न जाए, कीता न होई।
आपे आपि निरंजनु सोई।''[38]

इसी तरह गुरुनानक ने एक पण्डित को सम्बोधित करते हुए मूर्तिपूजा के विरोध में यह षब्द कहे कि हे पण्डित, तुम परमात्मा को मूर्ति अन्य देवी–देवताओं को मूर्तियॉ के साथ अपने घर में रक्खे हो। तुम प्रतिदिन इनका स्नान करवा कर इनकी पूजा किया करते हो और चन्दन, धूप, फूल आदि चढ़ाते हो। इन मूर्तियों के पॉव पकड़ कर तुम इसे प्रसन्न करने का प्रयत्न करते हो। यह कार्य वास्तव में दण्डनीय है। यह मूर्ति न तो भूखे को खाना दे सकती है और न भूख से मरने से बचा सकती है वे अन्धे समाज का अज्ञान जनित कार्य है–

''धरि नाराइणु सभा नाल।
पूज करे रखै नावालि।
कुंगू चंनणु फुल चढ़ाए।
पैरी पै पै बहुतु मनाए।
माणूओ मेंगि मंगि पैन्है खाई।
अंधी कंमी अंध सजाइ।
भुखिया देइ न मरदिआ रखै।
अंधा झगड़ा अंधी सथै।''[39]

इस तरह गुरु वाणीकारों ने मुर्ति–पूजा का भी विरोध किया।

गुरु नानक ने इस तरह अच्छी बातों को ग्राहय और बुराइयों को त्यागने का सन्देष संत वाणीकारों ने दिया। नवीन समाज के निर्माण में बाधा पहुँचाने वाले रूढ़िगत मूल्यों, संस्कारों का विरोध किया। कवियों बहती हवा के सम्मुख सीना करके न केवल बेग को सहारा दिया अपितु इस दिषा में आगे बढ़ाने का भी प्रयास किया।

निवृत्ति मार्गियों ने हर देष में हर समय स्त्री की निन्दा ही की है। स्त्री जाति का उनसे कोई भला नहीं हो सका है परन्तु सिख गुरुओं ने कहीं भी नारी की निन्दा नहीं की। इसके विपरीत उसका कहना है ''जिसने राजाओं को जन्म दिया है उसे भला मूर्ख क्यों कहा जाए। उन्होंने स्त्री और पुरूश को बराबर अधिकार प्रदान किए।

''भंडि जंमीए भंडि निमीए भंडि मंगणु बीआहु।
भंडहु होवे दोस्ती भडंहु चलै राहु।।
भंडु मुआ भंडु भालीए भंडि होवै बंधानु।
सो किउ मंदा आखीए जितु जंमहि राजानु।''[40]

इतना ही नहीं वे स्त्रियों में पर्दे के खिलाफ थे कहा जाता है कि जब गुरु हरगोविन्द से नूरजहॉ पर्दे में मिलने आई उस समय गुरु हरगोविन्द ने मिलने से इन्कार कर दिया। नूरजहॉ को बिना पर्दे के ही भेंट लेनी पड़ी। सिक्ख गुरुओं ने स्त्री–जाति के महत्व और ऋण को बराबर स्वीकार किया है। गुरु–संगत में स्त्रियों को समान अधिकार दिए।

इससे यह प्रमाणित होता है कि गुरुग्रंथ में यदि कहीं स्त्री की भर्त्सना या तिरस्कार हुआ है, तो यौनाकर्शण–मात्र का ही हैं नारी के उत्तम और समर्थ रूप को कोई विरोध नहीं किया।

अतः यह बात स्पश्ट रूप से प्रमाणित हो जाती है कि गुरुनानक के समय तात्कालीन समाज की स्थिति षोचनीय थी। मानवीय मूल्यों का निरन्तर विघटन हो रहा था। गुरु नानक ने इन सबका खुला विरोध करके नवीन मूल्यों का अन्वेशण किया। जाति – व्यवस्था, वर्ण–व्यवस्था, सम्प्रदाय– भेद, धार्मिक– रूढ़ियों, बाह्याडम्बरों, मिथ्याचारों, मूर्तिपूजा आदि के प्राचीन मूल्यों का खण्डन किया। इसी के साथ हर क्षेत्र में समन्वय करने का प्रयास किया और नारी जाति की षोचनीय अवस्था, षासकों द्वारा पूजा पर किये जा रहे अत्याचारों का कड़ा विरोध किया।

गुरुनानक देव और गुरु वाणीकारों ने गुरुग्रंथ में रूढ़िग्रस्त मूल्यों को रूढ़िवादिता से मुक्त कराने का बीड़ा उठाया। वे गुरु वाणीकार श्री गुरुग्रंथ को भी सृंकीर्ण घेरों में न समेटते हुए व्यापक रूप से चित्रित करना चाहते थे। इसके लिये उन्होंने मानव का मानव से समानता स्थापित करने के लिए न धन का, न पद का, न जाति का, न धर्म का, न लिंग और अवस्था के भेद को स्वीकार किया। इन सबके लिये उन्होंने कट्टरपंथी ब्राह्मणों को समझा–बुझाकर समाज–सुधार के स्वर में प्रधानता दी। गुरुनानक देव ने ऊॅच–नींच, अमीर–गरीब, वर्ग, वर्ण, सम्प्रदाय के भेदों को मिटाया। समाज में सबको समान रूप से सम्मानपूर्ण स्थान दिया।

संदर्भ सूची–

1. 'जपुजी साहिब' को गुरुनानक की वाणी में सर्वोच्च स्थान प्राप्त है। यह उसका प्रारंभ होते हुए भी स्वतंत्र मूलमंत्र है तथा सम्पूर्ण वाणी का हृदयदेष है।
2. 'जपुजी साहिब, इसे आदिग्रंथ का सार माना जाता है इसमें 38 पउड़ियॉ (सोपान 2 ष्लोक और 1 मंत्र है।
3. गुरुग्रंथ साहिब, जपुजी, महला', पृ0 2
4. बर्कले, उद्घृत संतों का धार्मिक विष्वास, धर्मपाल मैनी, पृ0 10
5. The term valaes may refer to interests pleasures likes perfomances duties moral obligations desires wants needs a versions attractions and many other modalies of selective orientation (paper 1958, p-7) values in other words are found in the large and diverse universe of selective behaviour" " Encyclopeadia Social services " P. 283
6. The social structures of values " prefase, R.K Mukerjee. P. XVIII & XIV
7. भारतीय सौन्दर्यषास्त्र की भूमिका, डा0 नगेन्द्र, पृ0 192
8. नयी कविता में मूल्य बोध, षषि सहगल, पृ0 16–17
9. आलोचना : अक्टूबर–दिसम्बर 67, नित्यानन्द तिवारी, पृ061
10. We must look for value not in the things them selves but in the desires and satisfactions which they promote. - The Analysis of value by De witt H. Paarker
11. जब साहित्य जीवन से प्रस्तुत होकर जीवन को प्रभावित करता है, तो वस्तुतः उसकी खरी कसौटी भी जीवन ही है।'' (एक साहित्यिक डायरी, मुक्तिबोध, पृ0 126
12. संत काव्य में परोक्ष सत्ता का स्वरूप, बाबू राव जोषी, पृ0 226
13. संत साहित्य, सुदर्षन सिंह मजीठिया, पृ0 122–123
14. वही पृ0 130
15. धर्मषास्त्र का इतिहास, पी.वी. काणे, अध्याय 2, ''वर्ण''
16. ऋग्वेद मण्डल 10, सूक्त 90, मंत्र 12, अथर्ववेद, काण्ड 19, सूक्त 6 मंत्र 6
17. गुरुग्रंथ साहिब, राग प्रभाती, महला 1 पृ0 1330
18. वही, राग भैरव महला 3, पृ0 1128
19. वही, राग गउड़ी, कबीर,पृ0 324
20. वही, बाहरि गुदड़, महला 1 पृ0 473
21. गुरुग्रंथ साहिब, राग गउड़ी, कबीर जीउ, पृ0 324
22. संत सुधाकर सार, मुनि देवसेन, पृ0 14 भाग–1
23. गुरुग्रंथ साहिब, राग मलार, नामदेव, पृ0 1262
24. वही, राग सिरी, महला 1, पृ0 62
25. वही पृ0 15
26. वही, राग माझ, महला 1, पृ0 142
27. वही, राग माझ, महला 1, पृ0 141
28. वही, राग आसा, कबीर पृ0 477
29. Guru Nanak proclaimed the unity of God and refused to reconganised that Hindus and musalman fundamently dilferents. For example, Guru Nanak's first words after his enlightment were' Na Hindu Na Musalman (There is No Hindu, No Musalman) april 1989
30. गुरुग्रंथ साहिब, राग आसा, महला 1, पृ0 349
31. वही, जपुजी साहिब, पृ0 4
32. वही, राग सूही, महला 1, पृ0 730
33. वही, कबीर, पद 101, पृ0 1369
34. वही, पृ0 राग आसा कबीर, पृ0 484
35. वही, पृ0 471–72
36. वही, राग आसा, महला 1 पृ0 441
37. सिख धर्म दर्षन की रूपरेखा, भाई जोधसिंह, पृ0 63
38. गुरुग्रंथ साहिब, जपुजी, महला 1 पृ0 2
39. वही, राग सारंग, महला 1, पृ0 1240
40. वही, आसा दी वार, महला 1, पृ0 473

मिशनरी 'श्री गुरु नानक देव' और उनका मिशन 'मानव चेतना'

* डॉ. सुनीता शर्मा

* अस्सिटेंट प्रोफेसर, हिन्दी–विभाग, गुरु नानक देव विश्वविद्यालय अमृतसर

वह जो किसी दूसरी जगह या दूसरे देश में केवल लोक सेवा के भाव से जाता है या जाकर रहता है 'मिशनरी' कहलाता है तथा मिशन उसका वह उद्देश्य या विचार है जिसे पूरा करने के लिए वह जी जान से जुट जाता है।[1] मध्यकालीन संत भक्तों में गुरु नानक देव एक महान मिशनरी थे। उनका मिशन संत्रस्त एवं पथभ्रष्ट मानव को सचेत कर उसे सहज जीवन का मूल मंत्र सिखाना था। मानव चेतना अर्थात मानव में स्वयं को जानने, मानने और पहचानने की शक्ति से सम्पन्न करने हेतु ही उनकी वाणी की सृजना हुई है और तर्क–वितर्श के आधार पर ही उनका मानवतावाद जन्म लेता है। अपने जीवन के प्रथम तीस–पैंतीस वर्षों तक वे एक साधक के रूप में उस परमपिता के सान्निध्य में ईश्वर, सृष्टि व मानव के मूल तथा प्रकृति को खोजने व पाने में लगे रहे और फिर उस कर्त्तार का साक्षात्कार कर उसकी आज्ञा से प्रेरित होकर मानव चेतना के लक्ष्य को लेकर सोलहवीं शताब्दी की प्रभातवेला में ही देश–देशांतरों की यात्रा के लिए निकल पड़ते हैं। मानव कल्याण एवं मानवता के उद्धार हेतु उन्होंने चार लम्बी–लम्बी यात्राएं की जिन्हें 'उदासियाँ' कहा गया है। उनकी उदासियों के उद्देश्य के विषय में डॉ. कुलदीप सिंह ढिल्लों लिखते हैं– "गुरुनानक देव ने 24 वर्ष में दो उपमहाद्वीपों के प्रमुख 60 शहरों की पैदल यात्रा की। इस दौरान उन्होंने 28 हज़ार किलोमीटर का सफर तय किया। उनकी यात्राओं का उद्देश्य समाज में मौजूद ऊँच–नीच, जात–पात, अंधविश्वास आदि को खत्म कर आपसी सद्भाव समानता कायम करना था। वे जहां भी गये, एक परमात्मा की बात की और सभी को उसकी संतान बताया।"[2] अपने इस मिशन को पंजाब से आरंभ करते हुए उन्होंने हरियाणा, उत्तर–प्रदेश, बिहार, बंगाल, असम, उड़ीसा, मध्यप्रदेश, आंध्रप्रदेश, कर्नाटक, तमिलनाडु, केरल, महाराष्ट्र, गुजरात, हिमाचल प्रदेश, जम्मू–कश्मीर, सिक्किम, भूटान आदि भारत की चारों दिशाओं के साथ–साथ अफगानिस्तान (काबुल), अरब–फारस, नेपाल, वर्मा (म्यांमार), श्रीलंका, ईरान, बगदाद, बलोचिस्तान, इसफाहन, जैदा, मक्का–मदीना आदि भारतेतर देशों का भी भ्रमण किया। बहुत से आलोचकों और शोध कर्त्ताओं ने गुरुनानक देव की चार उदासियों की चर्चा की है जबकि कुछ विद्वान उनकी पाँच यात्राएं मानते हैं।

जहाँ तक कि काह्न सिंह नाभा ने महानकोश में उनकी यात्राओं का समय सन् 1497 से 1522 ई॰ तक माना है और इन यात्राओं को चार इतिहास प्रसिद्ध उदासियों के रूप में विभाजित किया है– "प्रथम यात्रा सन् 1497–1509, दूसरी यात्रा सन् 1510–1515, तीसरी सन् 1515–1517, तथा चौथी यात्रा सन् 1517 से 1522 ई॰ तक माना है[3] पर डॉ. कुलदीप सिंह ढिल्लों गुरुनानक द्वारा पाँच उदासियों के किए जाने का समर्थन करते हैं उनका कथन है– "5वीं यात्रा में गुरुजी ने 2334 किलोमीटर का सफर किया था।"[4] डॉ. जयराम मिश्र ने भी गुरुनानक देव की पांचवीं यात्रा का उल्लेख करते हुए लिखा है कि "गुरु जी ने सिद्धों के प्रभाव को कम करने के लिए यह यात्रा की। गुरुनानक देव ने संकल्प किया कि अचल बटाला में उनके रहे–सहे प्रभाव को नष्ट कर दिया जाए, क्योंकि उस समय लोग सच्ची भक्ति भूलकर, गुमराह हो रहे थे। अतः साठ वर्ष से कुछ अधिक होते हुए भी गुरु महाराज ने कर्त्तारपुर से अचल बटाला के लिए प्रस्थान किया। यह उनकी पांचवीं और अन्तिम यात्रा थी।"[5] इन यात्राओं के द्वारा उन्होंने ईश्वर को पाने के लिए भ्रमित हुए मानव को सही राह दिखाने हेतु एक ओर हिन्दू तीर्थ स्थानों व मंदिरों में फैली कुरीतियों के प्रति सजग किया तो दूसरी ओर मुस्लिम तीर्थ स्थानों पर मुल्लाओं की मनमानियों से लोगों अवगत करवाया। मानव सेवा व मानवता के उत्थान हेतु वे समय तथा स्थान की सीमाओं का अतिक्रमण कर सार्वलौकिक व सार्वभौमिक महत्त्व प्राप्त करते हैं। उनकी यात्राओं में सिक्ख धर्म व मानव का स्वरूप स्वयं ही विकसित होता चला गया और मानवता की रक्षा हेतु सभी को ज्ञानमार्ग की शिक्षा देते हुए वे आगे बढ़ते गये। जिस चिंगारी को लेकर वे अपने मिशन पर निकले थे वह मशाल बन गई और सारा जनसमूह उससे प्रकाश लेने लगा। उन्होंने व्यक्ति के हाथ में थमा दी। अपने संदेश को जन–जन तक पहुँचाने के लिए समाज का नेतृत्व करने वाले नेताओं को मिलकर उनसे वाद–विवाद किया उन्हें मानवता के सिद्धांतों से परिचित करवाया। इस संदर्भ में जयराम मिश्र का कथन है– "गुरु जी की विशेष इच्छा उन व्यक्तियों से मिलने की थी, जो या तो किसी धर्म विशेष के विशिष्ट व्यक्ति थे अथवा जाति विशेष के सम्भ्रांत व्यक्ति थे। उनसे मिलकर वे अपने सिद्धांतों, विचारों और आदर्शों के संबंध में चर्चा अथवा वाद–विवाद करते थे।"[6] अपनी उदासियों में वे जिन व्यक्तियों से मिलते हैं उनमें लालो बढ़ई, मलिक भागो, रायवुलार, शेख सज्जन, ब्राहम शाह, नानू पंडित, शेख शरफ, सिकन्दर लोधी, योगी–सिद्ध मछंदरनाथ, चतुरदास, जौहरी सालसराय, जादूगरनी नूरशाह, दिपालपुर का कोढ़ी, हमज़ा गौस, मियां मिट्ठा, दुनीचंद,

करोडिया, वली कन्धारी, राजा शिवनाभ, ब्रहमदाम के साथ–साथ फकीरों, मुल्लाओं, सिद्धों, पंड़ित वर्ग आता है। उनसे मिलकर उन्होंने मानवता का मार्ग प्रशस्त किया। अपनी इन यात्राओं के द्वारा उन्होंने मानव मुक्ति के लिए मानव द्वारा ही खड़े किए गए झूठे, फरेब के साम्राज्यों को ढहने का प्रयास किया। मानव की शंकाओं को निर्मूल बनाकर, उनके दुःख दूर कर, उनकी समस्त चिंताओं को उखाड़कर उनमें आत्मविश्वास, उत्साह और पौरुष भरा। मूलभूत नये मानव की सृजना के लिए उनके पास ब्रह्मज्ञान के साथ–साथ शब्दज्ञान था। वे वाद–विवाद व अपने अकाट्य तर्कों के द्वारा सामने वाले व्यक्ति को अपना सिद्धांत मानने के लिए न केवल बाध्य कर देते अपितु उनकी कायाकल्प ही कर देते थे। इस महान् शिल्पी श्री गुरुनानक देव ने मानव के नवनिर्माण हेतु एक साथ चार सूत्रों पर कार्य किया, जिससे मानव उसके समाज का एक नवीन ढाँचा तैयार होता है। जिनका वर्णन निम्नलिखित है

मानव को अपने स्वरूप का ज्ञान देना :

गुरु नानक देव के मिशन का पहला उद्देश्य व्यक्ति को अपने ही स्वरूप से मिलाना था क्योंकि निरंतर युद्धों से पददलित हुई जनता त्राहि त्राहि कर रही थी हर ओर भागम–भाग का आलम था ऐसे में गुरु नानक देव ने व्यक्ति को 'स्व' को पहचानने की शक्ति प्रदान की क्योंकि वे जानते थे कि भौगोलिक और प्राकृतिक सम्पदा से सम्पन्न इस देश का मानव हीरा है जिस पर बाह्यांडबरों, अंधविश्वासों तथ कुरीतियों की धूल पड़ गई है। इस धूल को झाड़कर फिर से उसकी चमक बरकरार रखी जा सकती है। इसलिए उन्होंने संदेश दिया–

'आपीन्है आपु साजिऔ आपीन्है रचिऔ नाउ'।।

(नानक वाणी, संपा. जयराम मिश्र, आसा दी वार)[7]

अर्थात् परमात्मा ने अपने आप को ही सृष्टि के रूप में उत्पन्न किया है इसलिए तुम में भी वही परमात्मा है। अतः जीव को उपदेश देते हुए वे कहते हैं–

'आत्म महि रामु, राम महि आतम चीनसि' (भैरउ, असटपदी–9)

अर्थात् हे मनुष्य तू राम में ही स्वयं को पाने का प्रयास कर। दिन–रात जुर्मों को सहन करने वाली जनता को उन्होंने मानव देह का महत्व भी बताया और कहा कि अनेक योनियों के बाद यह शरीर तुमने जो प्राप्त किया है इस की पहचान केवल गुरमुख व्यक्ति ही जान सकता है जैसे –

माणुस जन्मु दुलंभ गुरमुखि पाइआ। (राग सुही, अष्टपदी 3/1)

उस समय बहुत से सिद्ध फकीर सिद्धियां प्राप्त करने के लिए शरीर को तरह–तरह के कष्ट देकर सुखा डालते थे। गुरु नानक ने उनको संदेश देते हुए कहा– "शरीर को कष्ट देकर उसे जीर्ण–शीर्ण बना देना महान पाप है जब शरीर ही निस्तेज और पंगु हो जाएगा, भला तब आत्मा की प्राप्ति किस प्रकार हो सकेगी? शरीर आत्मा का वाहन है। वाहन के बिगड जाने पर आत्मा किस प्रकार आगे बढ़ेगी।"[8] अपनी यात्रा में जब वे पाकपटन पहुँचे तो पता चला कि वहां शेख फरीद की गद्दी का मालिक शाह ब्राहम जंगल में तप करने हेतु गये हुए हैं और उसने अपने अनुयायियों और भक्तों में यह धारणा बना दी है कि कठिन तपस्या से ही ईश्वर को पाया जा सकता है गुरु जी उसके और उसके भक्तों व सामान्य जन को सजग करने के लिए घनघोर जंगल में उससे मिलने गये और उसे शरीर का महत्व बताते हुए कहा– "यह शरीर व्यर्थ नहीं है। इसके माध्यम से परमात्मा का साक्षात्कार होता है। परमात्मा प्राप्ति के लिए यह रथ है। शरीर घोड़ा है और आत्मा परिचालक। दोनों के समुचित प्रयोग से ही साधक को परमात्मा की प्राप्ति होती है। शरीर को उग्र और आसुरी तपों से तपाना घनघोर पाप है।"[9] जैसे–

"जगन होम पुंन तप पूजा देह दुखी नित दुख सहै।" (भैरउ, सबद–8)

अतः गुरु जी ने व्यक्ति को यह बताया की स्वस्थ शरीर से ही सारे कर्म सम्पन्न किए जा सकते हैं और हरि की प्राप्ति भी इसी से संभव है।

गुरु जी का कहना है कि मानव जीवन अमूल्य एवं अनुपम रत्न है। यह जीवन बार–बार नहीं प्राप्त होता। इसी के द्वारा मनुष्य अपना आध्यात्मिक विकास कर उस सर्वशक्तिमान सर्वव्यापक परमात्मा से एकाकार करता है। वह खुद तो मोक्ष पाता ही है अपने कई कुलों को भी जन्म–मरण के बन्धन से मुक्त कर देता है। इस संदर्भ में गुरु जी का कथन दृष्टव्य है :

"ऐसे जन विरले संसारे। गुर सबदु बीचारहि रहहि निरारे।
आपि तरहि संगति कुल तारहि तिन सफल जन्मु जगि आइआ।।"

(राग मारू, सोलहे–18/11)

व्यक्ति तब तक सचेत नहीं हो सकता जब तक कि वह अपने शरीर की प्रत्येक क्रिया को न जान ले। अतः व्यक्ति शरीर की संरचना, शरीर की चेतनता और कर्मों के आधार पर शरीर प्राप्ति के सन्दर्भ में कहा है। जैसे–

"पंच ततु मिलि इहु तनु कीआ। आतमराम पाए सुखु थीआ।
करम करतूति अमृत फल लागा हरि नाम रतनु मनि पाइआ।।"

(राग मारू, सोलहे–18/7)

वह शरीर जिसके द्वारा हरि नाम रूपी रत्न की प्राप्ति की जा सकती है वह शरीर जाति–पाति व ऊँच–नीच के भावों से कही ऊपर है। गुरु जी ने मनुष्यता को सर्वश्रेष्ठ मानकर मानव को जाति पाति से ऊपर उठने का आवाहन किया है जैसे कि इन पंक्तियों से स्पष्ट है :

"जाणाहु जोति न पूछहु जाति। आगै जाति न है।"

(रागु आसा, सबद–3)

'नानक उत्तमु नीचु न कोई' कहकर सभी को समानता की दृष्टि से देखा उनका कथन है कि जब– 'हुकमे आवै हुकमे जाइ। आगे पीछे हुकमि समाई' (गउड़ी सबद–2) सभी उस ईश्वर के हुकुम से ही संसार में आते है तो तब उसकी दृष्टि में हम समान है तो यह समाज कैसे मानव को उत्तम और नीच दर्जे का कह सकता है। इस भेदभाव को समाप्त करने के लिए वे निम्न जाति वाले लोगों के पास भी ठहरे और निकृष्ट कहे जाने वाले कोढ जैसे संक्रमित रोगी को भी गले से लगाया है। सभी को यह बताया कि हमारा यह शरीर इसलिए भी उत्तम है क्योंकि इसके भीतर ही अविनाशी ईश्वर का घर है और इस शरीर को चलाने वाला भी स्वयं ही ईश्वर ही है और वही उस पर नियंत्रण करता है यथा–

"देही अंदरि नामु निवासी। आपे करता है अविनाशी।
ना जीउ मरै न मारिआ जाई करि देखे है सबदि रजाई हे।।"

(राग मारू, सोलहे–6)

अपनी पहचान के लिए मानव के पास आत्मविश्वास अमोघ अस्त्र है और गुरु प्राप्ति से यह विश्वास और भी बढ़ जाता है। अतः व्यक्ति ही सृष्टि का केन्द्र है हमारे सभी प्रकार के प्रत्यव केवल उसी को राह पर लाने के

लिए होते है। फिर गुरु जी तो दूरदृष्टि सम्पन्न संत थे उनका लक्ष्य चाहे समाज और देश कल्याण का भी रहा हो पर मूल में तो उन्हें सर्वप्रथम मानव का सुधार और उद्धार अपेक्षित था।

अंधविश्वास एवं आडम्बरपूर्ण जीवन के परित्याग पर बल : गुरु नानक के समय भारतीय समाज कई सामाजिक एवं धार्मिक आडम्बरों के जाल में उलझा हुआ था। ऐसे में मानव न तो सामाजिक अंधविश्वासों से अपने को मुक्त कर पा रहा था और न ही धार्मिक रूढ़ियाँ ही उसे ईश्वर के वास्तविक स्वरूप तक पहुँचा रही थीं। उन्होंने स्थान–स्थान पर घूमकर जो अनुभव किया उसी के आधार पर समाज में सुधार लाने के लिए अपने वाणी को अस्त्र रूप में प्रयोग किया।

अपनी उदासियों में उन्होंने पाया की जनता फकीरों पंड़ितों, मुल्लाओं और मठाधीशों के इशारों पर नाच रही है। कई अंधविश्वासों ने उनके दिल–दिमाग को इतना प्रभावित कर लिया है कि उनका जीवन ही आडम्बरपूर्ण हो गया है। भारतीय समाज तंत्र–मंत्र व बलि प्रथा में उलझ कर पितरों की पूजा कर उन्हें तो प्रसन्न कर रहा था। परन्तु फिर भी इस समाज में रहने वाले प्राणी सुख से कोसों दूर थे। कवि हर्ष कुमार 'हर्ष' की कविता 'गुरुनानक' में गुरु नानक कालीन समाज का वर्णन निम्नलिखित पंक्तियों में किया है :

"दूराचार–पाखण्ड से दूषित रहा समाज
देते तांत्रिक पशुबलि सुख साधन के काज
सुख साधन के काज बलि बच्चों की देते
खूब उड़ाते माल तन्त्र ताबीज बनाते
बंगले तक को कोयल का माँ–बाप बताते।।"[10]

अपनी यात्रा में जब वे लाहौर गये तो उन्होंने वहाँ के धनी दूनीचंद को पिता का श्राद्धकर्म करते हुए देखा। उसका विश्वास था कि श्राद्ध के द्वारा पितरों को अन्न प्राप्ति होगी। गुरु जी ने उसे श्राद्ध की वास्तविकता बताते हुए कहा कि आगे चलने पर कुछ प्राप्त नहीं होता और फिर जैसा तुम मानते हो उसके आधार पर यदि तुम चोरी–चकारी व धोखे तथा अमर्यादित ढंग से एकत्र किए गये धन को पितरों के निमित्त दान में लगाते भी हो तो सत्य का ज्ञान हो जाने पर पितरों को ही चोर घोषित किया जाएगा और दलालों के हाथ काटे जाएंगे जैसे कि इन पंक्तियों से स्पष्ट है :

"जे मोहा का धरु मुहै धरु मुहि पितरी देइ।
अगै वस्तु सिआणीऐ पितरी चोर करेइ।
वढीअहि हथ दलाल के मुसफी एह करई।
नानक आगे जो मिलै जि खटे घाले देइ।।"
(आसा दी वार, श्लोक 55)

हिन्दू समाज सूतक के अंधविश्वास से भी समाज ग्रसित था सूतक से अभिप्राय जन्म अशौच तथा मरण अशौच। जन्म अशौच वह अशौच जो संतान होने पर परिवार वालों को लगता है, मरण अशौच जो परिवार में किसी के मरणे पर लगता है।[11] गुरु जी ने इस अंधविश्वास से व्यक्ति को बाहर निकालने के लिए सूतक प्रथा का विरोध करते हुए कहा कि गोबर, लकड़ी, अनाज, जल आदि सब के अंदर जीव हैं। यदि प्राणी के मरने पर सूतक पड़ता है तो इन वस्तुओं को जलाने से पाकशाला भी सूतक युक्त हो जाती है। गुरु नानक देव जी ने व्यक्ति के बुरे कार्यों को सूतक कहा जो उसकी आत्मा को अशौच कर देते है और इन्हें त्यागने पर बल दिया। उनका कहना है कि जन्म–मरण सभी ईश्वरीय इच्छा का परिणाम है फिर यदि ईश्वर दिव्य है उसके कर्म दिव्य हैं तो उसके कृत्य कैसे सूतक युक्त हो सकते हैं। गुरु जी का कथन है–

"सभो सुतकु भरमु हैं दूजै लगै जाइ।
जमणु मतणा हुकमु है भाणै आवे जाहू।"
(आसा दी वार, श्लोक–39)

उस समय ग्रहण के अवसर पर स्नान–दान के चक्र में भी भारतीय जन उलझा हुआ था। कुरूक्षेत्र में उन्होंने देखा कि जनता स्नान करके ब्राह्मणों को दान देने में लगी हुई है। इस रूढ़िवादिता के विषय में गुरु जी ने कहा–

"सूचे एहि न आखीअहि बहनि जि पिंडा धोई
सूचे एहि नानका जिन मनि वसिआ साई।।"
(आसा दी वार)

ईश्वर प्राप्ति के लिए भी लोगों में यह विश्वास था कि उसे लम्बी–लम्बी यात्राओं के द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता था इसलिए हिंदुओं में तीर्थयात्रा तथा मुसलमानों में हज यात्रा का प्रचलन था। गुरु नानक देव ने मानव को संबोधित करते हुए स्पष्ट कहा कि ईश्वर तथा सभी तीर्थ मन के अंदर हैं उन्हें बाहर पाने के लिए दौड़ना व्यर्थ है जैसे कि इन पंक्तियों से स्पष्ट है–

"तीरथ तप दइया दतु दान जे को पावै तिल का मान।
सुणिया मनिया मन कीता भाउ, अंतरगति तीरथि मलि नाउ।।
(जपुजी)

तीर्थयात्रा के साथ–साथ गुरु जी ने मानव को सर्वात्मवाद के आधार पर मूर्तिपूजा के प्रति भी सचेत किया। उन्होंने यह संदेश दिया कि ब्रह्म तो घट–घट वासी है अतः उसे मन्दिर–मस्जिद में नहीं ढूँढा जा सकता। उन्होंने मूर्तिपूजा में भी जब सत्य का अभाव और बाह्यचारों को देखा तो उसके परित्याग के लिए कहा। वे मानव को सचेत करते हुए कहते हैं–

"देवी देव पूजीए भाई किआ मागउ किआ देहि।
पाहणु नीर पखालीए भाई जल डूबहि तेहि।।"(रागु सोरठि)

पंड़ितों और दिखावटी साधक जो कि अपनी कृत्रिम वेशभूषा के आधार पर लोगों को आकर्षित कर रहे गुरुनानक देव जी ने ऐसे साधकों को भी लक्ष्य बनाकर कहा– "ऐ योगी माला तिलक या कंठी धारण करना वैराग्य का लक्षण नहीं है। तुम अंगों में विभूति लगाकर पाखंड करते हो। इन पाखंड़ों से ईश्वर प्रेम की प्राप्ति नहीं हो सकती।" ऐसे व्यक्तियों को झूठे–दिखावे और उनसे उत्पन्न होने वाले पाप ही बर्बाद कर देते हैं गुरु जी उन्हें सचेत करते हुए कहा हैं–

"पाखंडी प्रेम ने पाईए, खोटा पाजु खुआरू।"
(सिरी रागु, असटपदी–2)

गुरु जी ने यह भी देखा कि अपने को पंड़ित और ज्ञानी मानने वाले लोगों को वेद–पुराणों को पढ़–पढ़ कर तो सुनाते थे पर स्वयं वे उसके अंतर्ज्ञान से अपरिचित थे क्योंकि सद्गुरु के बिना उनके अपने हृदय के कपाट ही बंद थे इसलिए वे स्वयं उस ज्ञान को धारण नहीं कर पा रहे थे तो दूसरों तक वे ईश्वर के संदेश को कैसे पहुँचाते जैसे कि वे कहते हैं–

"बॉचहि पुस्तक वेद पुराना, इक कहै सुणै सुनावै काना।
अजगर कपाट कहौ क्यूँ खुले, बिन सतगुरु तत न पाइआ।।"
(राग मारू, सोलहे– 15/4/21)

गुरु नानक देव ने बहुदेवोपासना में फँसे हुए मानव को भी सचेत करते हुए कहा कि केवल उस ईश्वर का ही ध्यान करो जो तुम्हें बनाने वाला है। हम जब उसी की संतान हैं तो वह हम सबका पिता है। वे कहते हैं–

"साहिब मेरा एको है, एको है भाई, एकौ है।"
(आसा राग, सब्द–5)
"साहिब मेरा एको है अवरू नहीं भाई।"
(आसा काफी, असटपदी–28)

इस प्रकार गुरु जी ने मानव को अपना स्वरूप पहचानने के बाद उसे सहज जीवन जीने के लिए प्रेरित किया और इसके लिए उसे अंधविश्वासों के खोखले विचारों की सत्यता से परिचित करवाते हुए दिखावटी और आडंबरपूर्ण जीवन का परित्याग करने का उपदेश दिया। उनका मानना था की सहज जीवन में ही ईश्वर की कृपा होती है। गुरु नानक के आडंबरयुक्त जीवन के प्रति मानव को सचेत करने के प्रयासों को सम्मुख रखते हुए धर्मपाल मैनी का कथन है– "उन्होंने सभी बाह्याडंबरों एवं औपचारिकताओं का खंडन किया और स्वतः कोई ऐसे औपचारिक संबंध नहीं रखे जिन्हें अपनाने के लिए किसी मानव को कष्ट हो या वे किसी धर्म की मान्यताओं के प्रतिकूल हों। इसलिए उनका धर्म 'मानव धर्म' बनकर विकसित हुआ। उन्होंने न केवल हिंदुओं के पारस्परिक जातीय भेदभाव को दूर किया अपितु हिन्दुओं और मुसलमानों के धार्मिक वैमनस्य को भी दूर कर सामाजिक एकता स्थापित करने का प्रयत्न किया।"[12]

नाम साधना का उपदेश : निर्मल और सहज रहनी के बाद गुरु नानक देव ने मनुष्य को 'नाम स्मरण' अर्थात् 'नाम साधना' का मूल मंत्र दिया। नाम से गुरु जी का अभिप्राय है– वो सर्वव्यापक शक्ति, जो सर्वत्र भरपूर है। इसलिए उनकी दृष्टि में सारी सृष्टि ही नाम स्वरूप है। गुरु जी ने कण–कण में उस शक्ति के अस्तित्व को मानकर लोगों को नाम के सामर्थ्य के विषय में कहा है– "नाम जपने वाले सदा सुशोभित होते हैं। उन्हें लौकिक तथा पारलौकिक सुखों की प्राप्ति होती है। नाम स्मरण करने वालों को न वृद्धावस्था संतप्त करती है, न मृत्यु ही भयभीत करती है और न वे नरक में पड़ते हैं।"[13] नाम सांसारिकता के अज्ञान में फंसे व्यक्ति को बाहर निकालने वाली लाठी है। नाम ही जप तप और संयम का सार है। नाम का महत्त्व वर्णनातीत है–

साचे नाम की तिलु वडिआई। आखि थके कीमति नहीं पाई।
(रागु आसा, सबद–2)

गुरु जी ने नाम के लिए 'परब्रह्म', निरंकार, अयोनि, अकालमूर्ति, स्वयंभू, निरंजन माधव, मोहन, राम, मुरारी, केशव, गोबिन्द हरि आदि निर्गुण और सगुण शब्दों का प्रयोग किया है और बताया है कि जीव को 'नाम साधना' की प्राप्ति गुरु ही करवा सकता है वही उसमें नाम भक्ति के प्रति निष्ठा और दृढ़ता पैदा कर सकता है। कई अपराधों एवं जघन्य कृत्य करने वाला व्यक्ति भी जब गुरु की शरण में जाता है तो गुरु उसे पवित्र बनाकर नाम के साथ जोड़ता है। जैसे–

"ऐसा हमारा सखा सहाई, गुरु हरि मिलिया भगति दृड़ाई।"
(रागु आसा, सबद–24)
"करि अपराध सरणि हम आइआ, गुर हरि भेटे पुरबि कमाइआ।।
(रागु रामकली, असटपदी–4)

केवल गुरु ही व्यक्ति के मन को नाम साधना में स्थिर करता है। इसलिए गुरु के महत्व को बताते हुए गुरु जी लिखते हैं–

बिनु गुर सबदै मनु नहीं ठहरा
सिमरहु राम नामु अति निरमलु अवर तिआगहु हउमै कउरा।।
(रागु आसा, असटपदी–8)

गुरु जी ने अपनी उदासियों में देखा कि कोई भी प्रभावशाली व्यक्ति गुरु बनकर लोगों को गुमराह कर रहे थे इसलिए उन्होंने मानव को चेतन करते हुए सद्गुरु के लक्षण भी स्थान–स्थान पर बताएं किए हैं ताकि सद्गुरु की पहचान हो सके। जैसे–

"सो गुरु करउ जि साचु दृडावै, अकथु कथावै सबदि मिलावै।"
(रागु घनासरी, असटपदी–2)

न केवल गुरु अपितु शिष्य कर्म पर भी उन्होंने प्रकाश डाला और कहा कि यदि शिष्य सद्गुरु पर अपना तन–मन समर्पित करे तभी आध्यात्मिक विकास कर सकता है। गुरु नानक लिखते हैं–

"तनु मनु गुर पहि वेचिआ मनु दीआ सिरु नालि।।"
(सिरी रागु, असटपदी–8)

गुरु जी ने शिष्यों को सम्बोधित करते हुए गुरु सेवा को ही परमात्मा की सेवा कहा। जैसे–

"बडे भाग गुरु सेवहि अपुना, भेदु नाही गुरदेव मुरार।"
(रागु गूजरी, असटपदी–2)

नाम साधना के अंतर्गत ही गुरु नानक ने साधक को नाम जप की उत्तरोत्तर विकसित अवस्थाओं का ज्ञान भी दिया है– नाम जप की पहली अवस्था उन्होंने 'साधारण जप' कही है। इस अवस्था में जप जि;ा से होता है। सर्वप्रथम गुरुनानक देव जी ने अपने सम्पर्क में आने वाले लोगों को इसी जप की प्रेरणा दी है कहा कि जब तक जि;ा नाम उच्चारण नहीं करती तब तक नामरूपी अमृत की प्राप्ति नहीं हो सकती है जैसे–

"रसना नामु जपहु तव मथीऐ इन विधि अमृत पाई।"
(रागु सुही, सवद–1)

नाम साधना की दूसरी अवस्था 'अजपा जप' है। इसमें जिह्वा का अभ्यास हो जाने पर्यन्त श्वास–प्रश्वास की संचालन गति के आधार पर जप आरंभ हो जाता है। भाई काहन सिंह नाभा के अनुसार, "तालू, जि;ा, रसना, ओष्ठ आदि की सहायता के बिना मन की एकाग्रता से किया गया नाम चिंतन, अजपा जप है।"[14] अजपा जप पर गुरु जी ने बहुत बल दिया और कहा–

"अजपा जापु जपै मुखि नाम'
(रागु बिलावल थिती, पाउडी–16)
"अजपा जापु न बीसरै आदि जुगादि समाई।"
(मलार की वार, श्लोक–21)

तीसरी अवस्था में 'लिव जप' आता है। इसके अंतर्गत वृत्ति द्वारा जप होने लगता है। 'लिव' का अर्थ है लीनता। इसमें शरीर का प्रत्येक रोम नाम जप में तल्लीन हो जाता है। गुरु शिक्षा एवं गुरु कृपा द्वारा ही इस जप की प्राप्ति होती है–

"गुरमुखि जागि रहे दिन राती।
साचे की लिव गुरमति जाती।"
(रागु मारू, सोलहे–5)

अपनी यात्रा में गुरु नानक देव जी ने कजलीवन तथा कैलाश पर्वत में मानसरोवर झील पर अकर्मण्य जीवन बिताने वाले सिद्धों को नाम जप की शिक्षा दी और उन्हें 'सहज धर्म' में दीक्षित किया और उन्हें 'किरत करो, नाम

जपो, वंड के छको' का संदेश दिया– नाम स्मरण से ही व्यक्ति के भीतर के सभी मनोविकार समाप्त होते हैं और वह निर्मल ह्रदय से अपने चारों और ईश्वर की सर्वव्यापकता को देखता करता है। भातृभाव, स्नेह और शांति का अनुभव इसी से संभव है। अपनी यात्राओं में गुरु जी ने सिंकदर लोधी, मछंदर नाथ, पंडित चतुरनाथ, शेख ब्राहम, मियां मिट्ठा, वली कंधारी आदि को उनकी शंकाओं का समाधान कर ईश्वर के वास्तविक स्वरूप का ज्ञान दिया और उसे पाने के लिए 'नाम साधना' प्रदान की। सहज साधना और सहज मार्ग की उपयोगिता को देखते हुए डॉ. नीहार रंजन के कहा– "गुरु नानक ने अपनी सहज साधना के द्वारा मध्ययुग के भारतीय धर्म और समाज को पतित होने और बिखरने से बचा लिया और संसार को फिर धार्मिक और आध्यात्मिन जिज्ञासा के लिए अधिक पावन रूप वाला साधन प्रदान किया।"[15]

परिश्रम एवं निष्काम कर्म का संदेश :

गुरु नानक देव जी के समय कई राजा, सरदार तथा उन के मातहत उच्च पदों वाले अधिकारी हराम की कमाई पर निर्भर रहते थे। वे भ्रष्ट और रिश्वतखोर बनकर जनता को लूट रहे थे इसके अतिरिक्त बड़े प्रसिद्ध ठग भी उस समय इस ताक में रहते थे कि कैसे आदमी का सब कुछ ठग लिया जाए। ऐसे समय में गुरु जी ने अपने उपदेश से इन लोगों का ह्रदय परिवर्तन किया और उन्हें परिश्रम करते हुए निष्काम कर्म की प्रेरणा दी। उन्होंने लोगों को यह आश्वासन दिया कि हम लोग जब ईश्वर की आराधना और सेवा में लग जाएंगे तो वही हमारी जरूरतें पूरी करेगा तो फिर मानव ही मानव के साथ छल, कपट और धोखा क्यों करे। सच्ची मानवता का पाठ पढ़ाते हुए उन्होंने दुष्कर्म करने वाले पापकर्मियों को पहले पाप स्वीकार करने लिए कहा और फिर उनसे प्रतीज्ञा करवाई कि वे कभी क्रूर और पापयुक्त कार्य नहीं करेंगे जब इससे उनका अभिमान जाता रहा तो उन्हें नाम स्मरण करते हुए परिश्रम की कमाई करने के लिए प्रेरित किया और मेहनत की कमाई का भी कुछ भाग गरीबों में बाँट कर ही उपभोग करने के लिए कहा। उन्होंने जन को 'हाथ से काम और मुँह से नाम' का मंत्र देकर कर्म साधना में लीन कर दिया। जिस प्रकार गीता में भगवान कृष्ण ने अर्जुन को संबोधित करते हुए कहा है– 'कर्म करो और फल की इच्छा न करो'। उसी प्रकार गुरु जी ने भी निष्काम कर्म करने की प्रेरणा दी और कहा–

"करमु धरमु सचु हाथि तुमारै।"
(रागु मारु, सोलहे सबद–13)

गुरु जी की सद्संगति में आकर ही नूरशाह जादूगरनी तथा मलिक भागो व शेख सज्जन अपनी पापपूर्ण कमाई गरीबों में बांट देते हैं और निष्काम परिश्रम करते हुए जीवन व्यतीत करते हैं। उनका सादा जीवन दूसरों के लिए अनुकरणीय बन जाता है। गुरु जी ने सांसारिक मानवों को इस मूल मंत्र से भी परिचित करवाया कि केवल परिश्रम से ही दैहिक तथा सांसारिक कष्ट दूर हो सकते हैं। गुरु जी द्वारा दिए गए कर्म के संदेश को कवि 'हर्ष' ने इन पंक्तियों से स्पष्ट किया है–

"कर्म करो खाओ–पिओ, श्रम हरता हर रोग
'हर्ष' सदा नानक कहे, रहो करम आसक्त
कर्म कमाई दूध–सी, छल कपटी की रक्त।।"[16]

इस प्रकार गुरु जी ने मानव को चेतन करते हुए कहा कि निष्काम करते हुए सच्ची सेवा वही कर सकता है जिसने अपनी महत्वाकांक्षाओं को त्याग दिया है। वहीं सच्चाई के मार्ग पर बढ़ते हुए दूसरों को सुख दे सकता है। उनका कहना था कि जो ईश्वर प्रेम करता है, वह सबकों प्रेम करता है। ईश्वर प्रेम का अर्थ है सेवा और निष्काम सेवा के बिना ईश्वर प्रेम नहीं हो सकता। अतः गुरु जी का मानव से अगाध प्रेम, उनका पूर्ण विश्वास, उनकी सशक्त तर्क–विर्तक शक्ति, तीखी और मृदु हास्यवृत्ति, सच्चाई, सहृदयता, उनकी निष्कपट व्यवहार कुशलता तथा दूरदर्शिता का ही परिगाम था कि उनके सम्पर्क में आने वाला हर पापी, अत्याचारी, आलसी और लोभी व्यक्ति सारे दुर्गणों को त्यागकर मानवता की सेवा में समर्पित हो गया।

मानव के उद्धार के लिए गुरु जी ने लम्बी–लम्बी यात्राएं तो थी इसके लिए उन्हें कई स्थानों पर शारीरिक कष्ट दिए गए, प्रताड़ित किया गया पर इस सब का सामना उन्होंने हँसते–हँसते किया। सिकन्दर लोधी ने उन्हें बंधी बनाकर उनसे चक्की पिसवाई, रूहेलखंडब के सरदारों का उन्हें गुलाम बनना पड़ा उन्होंने उनसे घर की सेवा–टहल करवाई, नरभक्षी कौधा ने जलाने और मारने का प्रयास किया पर गुरु जी अपने लक्ष्य से टस से मस न हुए उनके मिशन में और दृढ़ता आई। अतः जहां पर भी वे किसी अत्याचारी एवं क्रूर व्यक्ति के अन्याय, क्रूरता के विषय में सुनते स्वयं उसके पास पहुँच जाते क्योंकि वे जानते थे कि सामान्य मानव को चेतन करने के लिए उन्हें निर्भीक बनाने के लिए इन आतताइयों का ह्रदय परिवर्तन पहले करना होगा ताकि इनके साथ रहते हुए व्यक्ति उन्मुक्त और स्वतंत्र जीवन जी सके। उन्होंने मार्ग से भटके मानव को सद्मार्ग दिखाया, धार्मिक बबंड़रों में उलझे व्यक्ति को सहज धर्म का आदर्श दिया परम्परागत रूढ़ियों की जंजीरों में झकड़े व्यक्ति को अपने तर्क एवं सत्यता से आज़ाद किया। मानव को अपने से मिलाकर उसे सहज साधना से जोड़कर उसके सम्मुख गृहस्थी का आदर्श रखा। यह उनके सद्प्रयासों का फल ही था कि घर से पलायन कर कंदनाओं, गुफाओं तथा पहाड़ों पर सिद्धों–नाथों और फकीरों का अकर्मण्य जीवन बिताने वाले युवा साधु पुनः घर एवं समाज की मुख्य धारा में लौट आए। मानव चेतना में जीने से ही उनमें स्वयं में विश्वास, सर्वमानव में विश्वास और मनुष्येतर प्रकृति में विश्वास का भाव उत्पन्न हुआ। उनके अनुसार आदर्श व्यक्ति वही हो सकता है जिसमें ब्राह्मणों की आध्यात्मिकता, क्षत्रियों की आत्मरक्षा भावना, वैश्यों की व्यवहार कुशलता एवं शूद्रों की लोक सेवा भावना के गुण एक साथ हों। अपने सद्प्रयासों से उन्होंने मानव का सम्बन्ध उसके शरीर, उसकी आत्मा, उसके मन एवं की बुद्धि के साथ जोड़ा और उसके शरीर रूपी मंदिर में ही भगवान की स्थापना कर एक नवमानव की सृजना की प्रसिद्ध इतिहासकार हज़ारीप्रसाद द्विवेदी का कथन है कि 'मनुष्य की साहित्य का लक्ष्य है' पर गुरु जी की वाणी में ही मनुष्य का निर्माण होता है। गुरु जी की प्रवज्या और वाणी मानव को मानव के साथ जोड़ने का मॉडल प्रस्तुत करती है और इस मॉडल की संरचना उन्होंने संगीत तथा सत्संग के द्वारा की। अतः गुरु जी की मानव चेतना मानव, उसकी

शिक्षा, उसके लिए अखंड समाज निर्माण व फिर सार्वभौम व्यवस्था का मिशन सम्पन्न करती है।

सन्दर्भ सूची

1. लोकभारती प्रामाणिक हिन्दी कोश, संपा. आचार्य रामचन्द्र वर्मा, इलाहाबाद : लोकभारती प्रकाशन, पृ. 667.
2. डॉ. कुलदीप सिंह ढिल्लों, गुरु नानक की यात्राएँ, दैनिक भास्कर हिन्दी समाचार पत्र, प्रकाशन 23 नवम्बर 2018.
3. काह्न सिंह नाभा, महानकोश, दिल्ली नैशनल बुकशॉप 1999.
4. डॉ. कुलदीप सिंह ढिल्लों, गुरु नानक की यात्राएँ, दैनिक भास्कर हिन्दी समाचार पत्र, प्रकाशन 23 नवम्बर 2018.
5. डॉ. जयराम मिश्र, गुरुनानक देव, इलाहाबाद : लोकभारती प्रकाशन, 1972, पृ. 217.
6. वही, पृ. 105
7. नानक वाणी, संपा. जयराम मिश्र, इलाहाबाद : लोकभारती प्रकाशन, 1988.
8. डॉ. जयराम मिश्र, गुरुनानक देव, इलाहाबाद : लोकभारती प्रकाशन, 1972, पृ. 177.
9. वही, पृ. 87.
10. हर्ष कुमार 'हर्ष' दस बाती में इक ज्योति, पटियाला : हिन्दी भाषा सम्मेलन 2004, पृ. 14.
11. आदर्श हिन्दी शब्दकोश, संपा. पंडित रामचन्द्र पाठक, वाराणसी : भार्गव बुक डिपो 1998, पृ. 806.
12. डॉ. धर्मपाल मैनी, लेख, गुरु नानक की सामाजिक देन, गुरु नानक और उनका काव्य संपादक, महीप सिंह, दिल्ली : नेशनल, 1971, पृ. 53.
13. रतन सिंह जग्गी, गुरु नानक व्यक्तित्व, कृतित्व और चिंतन, पंजाब : भाषा विभाग, पटियाला, 1975, पृ. 638.
14. भाई काह्न सिंह नाभा, गुरुमत मार्तण्ड, अमृतसर : शिरोमणी गुरुद्वारा प्रबन्धक कमेटी, 1962, पृ. 30.
15. उद्धृत, रतन सिंह जग्गी, गुरु नानक व्यक्तित्व, कृतित्व और चिंतन, पंजाब : भाषा विभाग, पटियाला, 1975, पृ. 563.

हर्ष कुमार 'हर्ष' दस बाती में इक ज्योति, पटियाला : हिन्दी भाषा सम्मेलन 2004, पृ. 13.

भारतीय संस्कृति और गुरु नानकदेव

*डॉ. शोभा कौर

* असिस्टेंट प्रोफेसर , किरोड़ीमल महाविद्यालय दिल्ली विश्वविद्यालय

भारतीय समाज और उसकी संस्कृति जितनी विविध आयामी है उसमें गुरु नानकदेव जी का महत्त्व उतना ही बहुआयामी होने के कारण सदैव स्मरणीय और प्रासंगिक है . सिख परम्परा के प्रवर्तक एवं सिख सम्प्रदाय के संस्थापक गुरु नानकदेव का आविर्भाव एक ऐसे समय में हुआ जब भारतीय समाज को उनकी सबसे ज्यादा जरूरत थी .प्रश्न उठता है कि गुरु नानक देव जी भारतीय संस्कृति में क्या हस्तक्षेप करते है ? जिस समय भारत की राजनैतिक व्यवस्था मुगलों के अधीन थी उस समय उसी के समानांतर एक नए धर्म का आविर्भाव कैसे हो जाता है ? गुरुजी के सिद्धांतों में वे कौन सी सामाजिक सचाईयां हैं जो लोगों को पीढ़ीगत ज्ञान एवं अनुशासन का संदेश देती हैं ?

इस समय यह समझना बेहद जरूरी है कि एक धर्म जिसके संस्थापक स्वयं नानक जी हैं, वह धर्म निरंतर विकास करता है . 550 वर्षो की लम्बी अवधि पूरी करता है और इसके बावजूद भी नानकदेव जी के मूलभूत सिद्धांत आज भी कैसे सुरक्षित है ?

वास्तव में भारतीय संस्कृति अपने जिन श्रेष्ठ गुणों के कारण विश्व विख्यात रही है , वे मध्यकाल तक आते आते विभिन्न विदेशी आक्रमणों और आन्तरिक कलहों के परिणामस्वरूप उतनी ही निकृष्ट अवस्था में पहुँच चुकी थी. गुरु नानकदेव कालीन भारत में काफी उथल–पुथल भरा पतनशील वातावरण था .उस समय विद्यमान सामाजिक स्थितियां बहुत अराजकतापूर्ण थीं दृ

लब पाप दुई राजा महता कूड होया सिकदार .
काम नेब सद पूछिये बहि बहि करे विचार .
अंधी रयत गियान विहूनी भाहि भरे मुरदार .

उक्त पद से हमें पता चलता है कि उस समय राजा पापी थे .उनका कोई नैतिक स्तर नही था और वे सभी प्रकार के कुकर्मों में लिप्त थे . मंत्री लालची थे और सम्पति इक्कठी करने में लगे रहते थे . सेनापति कायर थे , उनका अपने स्वामियों में कोई विश्वास नही था. न्यायधीश भी पक्षपात करते हुए रिश्वत लेते थे .उस समय के राजा अपनी प्रजा के साथ कैसा व्यवहार करते थे , इसका बयान करते हुए गुरु जी कहते हैं :

राजा सींह मुहक्कम कुत्ते, जाए जगायन बैठे सुत्ते.
चाकर नहदा पाइनि घायो. रतु पितु कुतिहों चटी जाहु.

गुरु नानक जी का समय मुग़ल राज्य का स्थापनाकाल था. बाबर के हमले से भारत की गरीब जनता प्रताड़ित हो रही थी . गुरुजी ने कड़े शब्दों में इस हालत का ब्यान किया है

खुरासान खसमाना कीता हिंदुस्तान डराया
पाप की जन्झ लै काबलहु धाइआ जोरी मंगे दान वे लालो

स्थानीय राजाओं की शानोशौकत और ऐशोआराम और आपसी फूट भी विदेशी हमलावरों के आक्रमण का प्रेरक कारण रही . हमलावर चाहे विदेशी हो या स्थानीय , दुर्दशा आम आदमी की ही होती है . गुरु नानक ऐसे निडर क्रांतिकारी साधक थे जिन्होंने एक ओर बाबर को 'जाबर' अर्थात् अत्याचारी कह कर उसे उसकी औकत याद दिलायी तो दूसरी ओर भारतीय राजाओं की भी कड़े शब्दों में खबर ली

रतन विगाड विगोए कुत्ती , मोया सार न काई
कलि काती राजे कसाई धरम पंख कर उड़ गिआ
कूड अमावस्या सच चंद्रमा दिसे नाहि कहि चढ़ीआ

अर्थात् राजा हिंसक चौधरी अहलकार (सिपाही) कुत्तों की तरह लालची थे जो जनता का खून पी रहे थे . गुरु नानक ने दलित वर्गों पर हो रहे जुल्मों, अत्याचारों के विरूद्ध आवाज उठायी, बुरे राजा के स्थान पर सच्चे पातशाह की स्थापना की, जिस का आधार सर्वसांझी संस्कृति को बनाया और लोगों को हलाल और हराम के सही अर्थ समझाये .

समाज और धर्म परस्पर पूरक हैं . धर्म में आये विकार समाज को नष्ट कर देते हैं, और समाज के विकार धर्म को अधर्म में बदल देते हैं .गुरु जी के समय एक तरफ कर्मकांड प्रणाली का प्रचार बढ़ रहा था दूसरी तरफ विदेशी आक्रमण से समाज की दुर्दशा हो रही थी . भारतीय संस्कृति का संतुलन बिगड़ चुका था , जिसके कारण लोग अपना मानसिक संतुलन , शील , सयंम सब गवां बैठे थे –

सरम गईआ घरि आपने पति उठी चली नालि
नानक सच्चा एक है अवर न सच्चा ताली

वैदिक युग का हिन्दू धर्म मध्ययुग तक अपनी वास्तविक भावना खो बैठा था . दुर्भाग्यवश हिन्दू पुरोहित वर्ग ने समाज में अपना प्रभुत्व बना रखा था और धर्म को अन्धविश्वास और कर्मकांड युक्त बनाने में उनका बड़ा हाथ था. निरर्थक शब्दजाल के पीछे सच्ची अध्यात्मिकता समाप्त हो गई थी .उच्च ब्राह्मण वर्ग मुसलमान हाकिम वर्ग को खुश करने के लिए पाखंडी बन चुका था

गऊ ब्राहमण कउ कर लावहु गोबर तरन न जाई .
धोती टिक्का ते जपमाली धन मलेच्छ खाई .

अंतर पूजा पढनि कतेबा संजम तुरका भाई.
छोडिले पाखंडा नाम लईए जाहि तरंदा .

हिन्दुओं का धर्म मूर्तिपूजा , व्रत रखना , तीर्थ यात्रा आदि बाह्य कर्मकांडों में संलग्न था . मुस्लिम प्रभाव के कारण भारतीय अपनी संस्कृति , अपनी जीवन दृपद्धति को भूल बैठे थे .वे विदेशी शासकों को खुश करने के लिए उनके जैसा दिखने के लिए हरदम प्रयत्न करते थे . – नील वस्त्र ले कपडे पहिरै तुरक पठानि अमल किआ।

उस समय हिन्दू और इस्लाम सम्प्रदायों में भारी गिरावट आ चुकी थी . इन मतों के धर्माचार्य धर्म की उच्चावस्था के स्थान पर सारहीन कर्मकांड, थोथी रस्मों. पाखंडों, भेषों आदि में उलझे हुए थे . 'आसा दी वार' नामक वाणी में गुरु जी भारतीय समाज में फैले सभी प्रकार के पाखंडों पर प्रहार करते हुए सच को सामने लाते है :

सरम धरम दुई छपि खलोए।
कूड़ फिरै परधान वे लालो।

एवं

गल माला तिलक लिलाट दुई धोती वस्त्र कपटम
जे जाणसी ब्रह्म करम सब फोकट निस्चाऊ करमम

धार्मिक अधोगति के कारण आम जनता का हौसला धराशायी हो चुका था .

काजि कुड बोलि मल खाई
बामन नावै जीआं घाई
जोगी जुगत न जाने अंधु
तीनों ओजाड़े के बन्धु

आदि पंक्तियों में गुरु नानक जी ने अपने समय के प्रचलित तीनों धर्माचार्यों (मुल्ला, ब्राह्मण और जोगी) की हकीकत को उघाड़ कर सामने रखा है . लेकिन उन्होंने सिर्फ परिस्थितियों का बयान ही नहीं किया अपितु उसका समाधान प्रस्तुत करते हुए ' सच' को अनिवार्य मूल्य के रूप में स्थापित किया . "वास्तव में धर्म एक ऐसी जीवन–पद्धति है जिससे मनुष्य किसी उच्च आदर्श की ओर अग्रसर होता हुआ मानसिक एवं आत्मिक तृप्ति प्राप्त करता है .धर्म मनुष्य को आत्मतत्व की पहचान करवा कर ईश्वर से साक्षात्कार करवाता है . साथ ही वह उसे एक आदर्श जीवन–यापन की विधि भी सिखाता है, जिसमे सत्यवादन, ईश्वर की आज्ञा का यथावत पालन, सेवा भाव, पक्षपात रहित, न्याय युक्त एवं विवेकपूर्ण व्यवहार करना वासनाओं एवं बहिर्मुखता का त्याग करना तथा जीवों पर दया करना शामिल है मनुष्य को मनुष्यत्व एवं अपने अस्तित्व का ज्ञान करवाने वाला धर्म ही है"1 धर्म के दस लक्षण इस प्रकार बताये गये हैं :

धृतिः क्षमा दमोस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दर्शकम धर्मलक्षणम (मनु. 6.92)

अर्थात् धर्य, क्षमा, दम , अस्तेय, शौच, इन्द्रिय–निग्रहः, धी(बुद्धि), विद्या , सत्य और अक्रोध , धर्म के दस लक्षण हैं . वेदों की तरह गुरु नानक वाणी में भी सत्य, संतोष, दया, ज्ञान, एवं क्षमा को ही धर्म के मुख्य तत्व मन गया है , किन्तु इनको समझ कोई 'गुरमुख' ही सकता है . जितु कारज सत संतोख दइआ धरम है गुरमुख बुझे कोई। (आसा म. 1, पृष्ठ 200)

जो 'असतो मा सद्गम्य ' भारतीय संस्कृति का मूल गुण था उसी को गुरु नानक जी ने जोर देते हुए पुनः स्थापित किया :

सचु पुराना होवै नाही सीता कदे ना पाटै (रामकली म. 1 , 82)

सतु संतोखु सदा सचु पलै सचु बोलें पीर भाए (सूही म. 1 , 410)

इसके अतिरिक्त उन्होंने अपने सिखों को प्रारम्भ में ही कर्मकांड के झन्झट से बचा कर 'एक नाम' और शब्द–गुरु का मार्ग दिखाया – सबद गुर पीर गहिर गंभीरा , बिनु सबदै जगु बउराना .

इस प्रकार उन्होंने शब्द गुरु के प्राचीन ज्ञान को पुनः स्थापित कर भारतीय संस्कृति को अपनी जड़ों की ओर पुनःलौटाया . ओम ध्वनि से किस प्रकार सृष्टि का जन्म और विस्तार होता है इसका उल्लेख उनकी 'दखनी ओंकार' नामक वाणी में बखूबी मिलता है. गुरु ग्रन्थ साहिब में मानव मूल्यों का विधान केवल सैद्धांतिक स्तर पर ही नहीं है अपितु जो जिस धर्म से संबधित है उसे अपने धर्म में परिपक्व होने का संदेश है :

सो जोगी जो जुगति पछानै। गुर परसादी इको जानै ।
काजी सो जो उलटी करै। गुर परसादी जीवतु मरै ।
सो ब्राह्मणु जो ब्रह्म बिचारै। आपि तरै सगले कुल तारै।
(गुरु ग्रन्थ साहिब, अंग 662).

भारतीय दार्शनिक विचारधारा वैश्विक स्तर पर प्रेरणा का स्त्रोत रही है .इसकी एक खासियत यह है कि यह पाश्चात्य दर्शन की भांति सिर्फ तर्क–वितर्क का मुद्दा नहीं है , अपितु जीवन जीने की पद्धति है और उसमें भी अध्यात्म सर्वोपरि है . गुरु नानकदेव के समय भारतीय समाज विभिन्न दार्शनिक वाद–विवादों में उलझा हुआ था , ऐसे में गुरु जी ने ब्रह्म, जीव, जगत, माया और पारब्रहम परमेश्वर के बारे में प्रमाणिक सत्य उजागर किया . 'सिद्ध–गोष्ठी' नामक वाणी में गुरु जी सिद्धों और योगियों से सम्वाद करते हुए अनुभव किये हुए सत्य की बात पर बल देते हैं और प्रचलित परम्पराओं के अन्धानुकरण को नकारते हैं . उनकी वाणी भारतीय दर्शन को उसकी वास्तविक उचाईयों के दर्शन कराती है . गुरु जी ने विकृत योग–मत के स्थान पर एक नया जीवन मार्ग दिखाया . योग मत के निवृत्ति–मार्ग की अपेक्षा गुरु जी ने गुरमत के प्रवृत्ति–मार्ग में निवृत्ति का उपदेश दिया , अर्थात् "गृहस्थ में उदासी"।

क्या भावियई सचि सूचा होई
साच सबद बिनु मुकत न होई

गुरु नानकदेव जी ने योगियों की साधना की शब्दावली को पूरी तरह से उलट दिया और उन्हें वास्तविकता से परिचित करवाया . गुरु जी के अनुसार हृदय में नाम का निवास योग की आन्तरिक विधि 'मुंद्रा' है , अहंकार और ममता का त्याग 'सिंथा' है . परमात्मा पर पूरा विश्वास 'झोली' है . सांसारिक कामनाओं से वृत्ति को उलटना 'खप्पर' है . पंच तत्वों से दैवी गुणों को ग्रहण करना 'टोपी' है . मानवीय शरीर 'कडासन' है .मन 'लंगोटी' है . सत, संतोष, संयम, इसके 'साथी' हैं. परमात्मा का दर्शन वेश, झोली, मुंद्रा, और खिंथा हैं ।

गुरु जी ने सिद्धों के साथ सम्वाद करके मानव जीवन संबंधी अनेक प्रश्नों का समाधान प्रस्तुत किया है. इस तरह सिद्धों की तरफ से किये प्रश्नों जैसे– जीवन का मूल क्या है ? कौन सा वक्त श्रेष्ठ है? कौन सा धर्म मानने योग्य है? आदि के उत्तर में वे कहते हैं जीवन का मूल प्राण है . सतगुरु की मत लेने का वक्त है , सूरत को शब्द में टिकाने से मन काबू में रहता है – सबदु गुरु , सुरति धुनि चेला।

जीवन धरा के दो पहलू हैं दृ बन्धन–युक्त और बंधन–मुक्त . गुरु के उपदेश को जीवन में उतार कर जीने वाला गुरमुख जीवन–मुक्त है और अहंकार के अधीन दुनियावी जीवन तक सीमित रहने वाला व्यक्ति बंधन–युक्त है . ऐसा मनुष्य जीवन–बाजी हार जाता है . इस सन्दर्भ में गुरु नानक जी ने जीते जी इच्छाओं के मरने की बात कही है

जीवत मरै ता सब किछु सूझे अंतरि जाने सरब देइआ ॰

गुरुजी ने नाम साधना को महत्त्व दिया जिसके द्वारा पांच ज्ञानेन्द्रियों की समझ से ऊपर सूझ प्राप्त करके निज स्वरूप में जा कर परमात्मा के दर्शन होते हैं .

भारतीय सामाजिक जीवन में जाति–पाती, ऊँच–नीच और छुआछूत कोढ़ बन चुके हैं , जो वर्ण–व्यवस्था कर्म पर आधारित थी उसे निहित स्वार्थों के चलते जातिवाद के दलदल में तबदील कर दिया गया . इसका दुष्परिणाम यह निकला कि समाज में मनुष्यता ही खतरे में पढ़ गई . गुरु नानक जी समेत सभी सिख–गुरुओं ने इस कुप्रथा का कड़ा विरोध किया और अपनी वाणी ही नहीं अपितु व्यवहारिक स्तर पर भी समता , स्वतन्त्रता और बन्धुत्व से युक्त नव–समाज की नीव रखी जिसमें उन्होंने " संगत और पंगत " की स्वस्थ परम्परा का सूत्रपात किया दृ

जानहु जोति न पूछहु जाति आगै जाति न है

गुरु नानक जी तो यहाँ तक कहते हैं कि दृ

नीचां अन्दर नीच जाति , नीची हूँ अति नीच
नानक तिन के संग साथ वाडेयाँ सूं किया रीस

लम्बे समय तक विदेशी आक्रमणों के दुष्प्रभाव के कारण भारतीय समाज में सती प्रथा , बाल–विवाह , अनपढ़ता कुरीतियाँ घर कर गई थी . समाज में स्त्री को जो प्राचीन समय में सम्मान का स्थान मिला हुआ था वह समाप्त हो चूका था . गुरु जी के समय तक हिन्दुओं , मुसलमानों , बौद्धों, जैनियों , जोगियों आदि ने स्त्रियों की निंदा की . उस समय स्त्रियों का स्थान पैर की जूती के बराबर भी न था .

गुरु नानक ने पहली बार मध्यकालीन साहित्य और समाज में स्त्री को बराबर का सम्मान दिया दृ

भंड जमीई भांडी निम्मिये भन्ड मंगन ब्याह ......
सो क्यों मंदा अखिये जित जम्मे राजान ॰

गुरु नानक कालीन आर्थिक दशा बद से बदतर हो रही थी . वह भारतीय समाज जो अपने व्यापार के कारण विश्व में सोने की चिड़िया कहलाता था , जिसके मसाले, रेशम ,स्टील विश्व में सोने की मुद्राएं अर्जित करता था , गुरु जी के समय तक आते आते आर्थिक हालात विकट स्थिति में पहुँच गए . एक तरफ राजसत्ता किसानों पर भारी टैक्स लगा कर जनता का खून चूस रही थी , दूसरी तरफ प्राकृतिक आपदाएं जैसे अकाल , बाढ़, महामारी का प्रकोप था . ऐसे में गृहस्थ लोग घरबार त्यागे सन्यासियों का भी भरणपोषण कर रहे थे . सामाजिक कुरीतियों और धार्मिक आडम्बरों एवं राजनैतिक लूट खसोट ने जनता की कमर तोड़ कर रख दी थी दृ

जिन सिर सोहनि पट्टियाँ मांगी पाई संदूर ....
धन जोबन दोऊ बैरी होए .....

आदि पंक्तियों में गुरु जी ने आर्थिक दुर्दशा का मार्मिक चित्रण प्रस्तुत करते हुए उन कुरीतियों का विरोध है तथा 'सच' के संकल्प को दृढ़ करते हुए समाज की प्रत्येक समस्या का समाधान प्रस्तुत किया है . जयराम जी के अनुसार गुरु नानक भ्रष्ट तरीकों से प्राप्त संपत्ति आदि काले धन के विरुद्ध थे एक बार उन्होंने कहा था "दूसरों का हक एक के लिए गाय का मांस और दूसरे के लिए सूअर का मांस है." उन्होंने कठिन परिश्रम और ईमानदारी से उत्पादन करने पर बल दिया और संपत्ति के आयोजन की कोई सीमा नहीं बांधी. उन्होंने केवल साधन तक ही अपना सरोकार रखा .2

इस बात का श्रेय गुरु नानक को ही जाता है कि उन्होंने 'नानक नाम चढ़दी कला' के साथ 'तेरे भाने सरबत्त दा भला' अर्थात् नानक जी के अनुसार नाम–सिमरन से सदा उन्नति होती रहे और इसी से सबका कल्याण हो . इस ऊँचे आदर्श से युक्त संदेश को लोगों तक पहुँचाया ,जिसके कारण लोगों की सुप्त–चेतना जागृत हो और वे लोग संगठित होकर इन अत्याचारों के साथ टक्कर ले सकें . भारतीय संस्कृति में गुरु नानक द्वारा सबसे बड़ी क्रांति वे तीन सिद्धांत थे जिन्होंने भारतीय समाज का कायाकल्प कर दिया :

1 नाम जपना
2 कृत्य (काम)करना
3 बाँट कर खाना (वंड छकना)

"कृत्य करके बाँट कर खाने की मर्यादा किसी भी पुराने शास्त्र या ग्रन्थ में नही मिलती और न ही किसी आचार्य या पीर ने इसको धर्म का अनिवार्य अंग बनाया है . गुरु जी ने देखा कि कुछ लोग नाम तो जपते हैं पर कृत्य नहीं करते , कुछ लोग कृत्य तो करते हैं पर नाम नहीं जपते , इसलिए दोनों बातों की ओर ध्यान देकर ही कल्याण–कार्य की शक्ति को मजबूत किया जा सकता है . इस प्रकार गुरु नानक जी ने क्या हिन्दुओं में और क्या मुसलमानों और क्या सिद्ध–योगियों , सभी में इस नवीन विचारधारा का प्रचार किया ताकि एक सांझी राष्ट्रीयता की नीव रखी जा सके . यह कार्य एक पीढ़ी में समाप्त होने वाला नहीं था . सदियों से जमे हुए गुलामी के धब्बों को मिटने के लिए सबसे पहले आम लोगों के विचारों में परिवर्तन लाना आवश्यक होता है."3

निष्कर्षतः गुरु नानकदेव ने सम्पूर्ण भारत और अधिकांश विश्व भ्रमण कर जनता पर हो रहे जुल्म अत्याचारों का विरोध किया और जनजीवन में व्याप्त वैचारिक अंतर्विरोधों को सुलझाने का प्रयास किया. उनकी वाणी में जहाँ एक ओर तत्कालीन धर्म, दर्शन, अध्यात्म, राजनीति, इतिहास, अर्थनीति और समाज संरचना का यथार्थ विद्यमान है वहीं दूसरी ओर उसमें अपने समय के महत्वपूर्ण मुद्दों पर प्रश्नचिह्न हैं और उन समस्याओं के समुचित समाधान भी सुझाये गये हैं. साधु पी एल वासवानी ने नानक के गहरे प्रभाव का मूल्यांकन इन शब्दों में किया है 'नानक ने भारतीय इतिहास में अपना एक विशिष्ट स्थान बनाया. समय बीतने के साथ–साथ और महान व्यक्ति संसार में जन्म लेंगे किंतु मेरा विश्वास है कि विनम्रता को पार करने वाला भारत को प्राप्त होगा और सही अर्थो में एक स्वतंत्र राष्ट्र बनेगा ना कि धर्मनिरपेक्ष राज्य. इस देश के नागरिक नानक जी में सर्वगुण संपन्न महानतम आत्मा के रूप में विश्वास और श्रद्धा रखेंगे'4

उन्होंने भारतीय संस्कृति के पुरुषार्थ चतुष्टय दृ धर्म , अर्थ , काम , मोक्ष के सभी मूल्यों का समसामयिक परिस्थितियों के अनुसार नवीन अर्थप्रतिपादित किया . 'ऋत' अर्थात् सत भारतीय संस्कृति का प्राण है जिसे गुरु

नानक जी ने अपनी वाणी में विशेष आग्रह के साथ प्रस्तुत किया . उनकी प्रमुख वाणी जपुजी साहिब में सत्य के मूल्य को पाने के चार सोपान बताये गये हैं . नाम जपना ,कृत करना और बाँट कर खाने के मूल्य ने आज सिखों को वैश्विक महत्त्व प्रदान किया है एवं इन्हें अनुकरणीय एवं सराहनीय मूल्य बना दिया है . आज वर्तमान में जिस समता , स्वतंत्रता और न्याय तथा बन्धुत्व को यू.एन.ओ. ने वैश्विक स्तर पर मान्यता प्रदान की है , यह भारतीय संस्कृति के मूलभूत गुण है जिन्हें गुरु नानक देव जी ने पुनःप्रतिष्ठित किया था .

सन्दर्भ सूची

1. डॉ. गुरमीत सिंह गुरु नानक वाणी में वैदिक धर्म दर्शन अनुपम प्रकाशन पटना 1989, पृष्ठ दृ 83
2. जयराम दास, सिख गुरु का आर्थिक चिंतन, हिमाचल पुस्तक भंडार, दिल्ली 1993 , पृ– 43
3. प्रोफ़ेसर प्यारा सिंह पदम, संक्षिप्त सिख इतिहास , सिंह ब्रदर्स, अमृतसर 2006, पृ–20
4. सं. डॉ. शोभा कौर, भारतीय समाज और सिख गुरु, शंकर पब्लिकेशन, दिल्ली 2016, पृ– 66

आधार ग्रन्थ : श्री गुरु ग्रन्थ साहिब

Volume : 6 | Issue :49 | October-December2019 ISSN: 2349-1876 (Print) | ISSN : 2454-1826 (Online)

मुगलकालीन समाज और गुरु नानक का संदेश

* डॉ. मो. उज़ैर खान

* असिस्टेंट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, अल्लामा इकबाल कॉलेज, बिहार शरीफ़ नालंदा (बिहार)

हिंदी साहित्य का भक्तिकाल न केवल अपनी भक्ति परंपरा या आंदोलन के लिए प्रसिद्ध है अपितु वह स्वर्ण–युग से इसीलिए नेवाजा जाता है, क्योंकि इस युग में सगुण और निर्गुण भक्ति का विराट रुप देखने के लिए मिलता है द्य यहां सगुण काव्य के रूप में रामकाव्य और कृष्णकाव्य और निर्गुण काव्य के रूप में संत और सूफी का समन्वित रूप है। भक्ति का उदय दक्षिण से माना जाता है, लेकिन भक्ति का आंदोलन उत्तर भारत में ही प्रारंभ हुआद्य उत्तर प्रदेश में रामानंद तथा कबीर, महाराष्ट्र में नामदेव तथा एकनाथ जैसे प्रमुख नायकों ने ईश्वर की एकता, प्रेम तथा शांति का संदेश विभिन्न भागों में फैलायाद्य वल्लभाचार्य, चैतन्य महाप्रभु, मीरा आदि सभी ने भक्ति आंदोलन में अलग–अलग स्थानों से अपना योगदान दिया। इन सभी के समसामयिकों में गुरु नानक का स्थान आता है।

गुरु नानक देव जो सिख धर्म के संस्थापक के रूप में जाने जाते हैं। जिनका जन्म ननकाना साहब मैं हुआ, तलवंडी जिला, जो आजकल पाकिस्तान में है।जब 1469 में गुरु नानक जी का जन्म हुआ तब उत्तर भारत में बहलोल लोदी का राज था।जिनके उत्तराधिकारी सिकंदर लोदी थेद्य इसके बाद इब्राहिम लोधी आए। गुरु नानक के समय में बाबर ने मुगल साम्राज्य की नींव रखी और बाद में उन्हीं के समय में बाबर के बाद उनका पुत्र हुमांयू उनका उत्तराधिकारी हुआद्य 10 वीं शताब्दी के साथ ही मध्य एशिया से मुसलमान आक्रमणकारियों के लगातार धावे होने लगेद्य दिल्ली का मुख्य रास्ता पंजाब से होकर गुजरता था इसीलिए इस प्रांत के लोगों को भी बहुत कष्ट भोगने पड़े। अफ़गानों तथा तुर्को ने अपने राज्य कायम किए तथा विभिन्न मुस्लिम देशों ने उत्तरी भारत पर राज कियाद्य विदेशी शासकों तथा उनके विदेशी प्रतिनिधियों ने अपनी ताकत के आधार पर शासन कियाद्य जनता का शोषण कियाद्य उनके अनगिनत अत्याचारों ने हिंदू जाति को बहुत नुकसान पहुंचायाद्य गैर मुसलमानों पर जजिया नामक व्यक्तिगत कर लगाया तथा हिंदुओं के लिए ऊंचे पदों पर जाने के सारे मार्ग बंद कर दिए। हिंदू मंदिरों को ध्वस्त कर दिया गयाद्य हिंदू संस्कृति को नुकसान पहुंचाने के लिए भरसक प्रयास किए। यही नहीं धर्म परिवर्तन के नाम पर हिंदुओं को मुसलमान बनाया गयाद्य जनता के विश्वास को तोड़ा गयाद्य इस समय शासकों और शासकों के बीच एक बहुत बड़ी खाई थीद्य हिंदू और मुस्लिम लोगों के पहनावे, क्रियाकलापों, रीति–रिवाजों, संस्कारों, रहन–सहन सभी में अंतर आ गयाद्य आम जनता साहस खो बैठी थीद्य हिंदुओं को इतना नीचा दर्जा दिया गया था कि उन्हें अपनी पहचान के लिए मस्तक पर टीका लगाना और कपड़ों पर भी पहचान के लिए कोई चिन्ह लगाना अनिवार्य कर दिया गया था।अच्छी किसम का खाना, उत्तम वस्त्र पहनना, घोड़े–पालकी आदि पर चढ़ना हिंदुओं के लिए मना था।डेरा गाजी खान जिले में हिंदू केवल गधे की ही सवारी कर सकते थेद्य इस्लाम की आलोचना करने वाले को प्राणदंड दिया जा रहा था।बोधन ब्राह्मण को सिकंदर लोदी ने इसलिए प्राणदंड दिया कि उसने कहा था कि जैसा इस्लाम है, वैसा ही हिंदू धर्म भी है।हिंदुओं का धर्म परिवर्तन अक्सर होता रहता था लेकिन विशेष अवसरों पर सामूहिक रूप से यह कार्य चल रहा था।

सिकंदर लोदी के गद्दी पर बैठने के समय गुरुनानक 20 वर्ष के थे शहजादा के रूप में भी सिकंदर एक धर्मांध मुसलमान था उसने उन सभी हिंदुओं को मार देना चाहा जो थानेश्वर के पवित्र तालाब में स्नान के लिए इकट्ठे हुए थेद्य तारीख ए दाऊदी का लेखक अब्दुल्लाह सिकंदर लोधी की प्रशंसा में लिखता है कि वह इतना पाक मुसलमान था कि उसने काफिरों के विभिन्न स्थानों को संपूर्णता नष्ट कर दिया और उनकी कोई निशानी नहीं छोड़ीद्य उसने मूर्तिपूजा के प्रमुख स्थल, मथुरा के मठों को नष्ट कर दिया तथा उपासना के मुख्य स्थानों को कारवां, सराय तथा मृतकों में बदल दियाद्य पत्थर की प्रतिमाओं से भूषण, गोश्त तोलने का काम निकालने लगे तथा सभी हिंदुओं को सख्त मनाही की गई कि वे सिर या दाढ़ी ना मुंडाएं तथा आचमन–स्नान आदि न करेंद्य इस तरह उसने मूर्तिपूजा संबंधी सारी रस्मों का खात्मा कर दियाद्य किसी भी हिंदू को यदि वह दाढी या सिर मुंडाना चाहता था तो उसे कोई नाई नहीं मिलतेद्य इस प्रकार हर नगर, जैसा वह चाहता था, इस्लाम के रिवाजों का पालन करने लगाद्य नागरकोट तथा ज्वालामुखी की प्रसिद्ध मूर्तियां टुकड़े–टुकड़े कर बूचडों में बांट दी गई।

गुरु नानक के आगमन के समय हिंदू तथा मुसलमान इस्लाम, ये दोनों धर्म भ्रष्ट तथा अवनत हो चुके थेद्य वे अपनी पुरानी शान तथा पवित्रता को चुके थेद्य लोगों के लिए वेद अब कठिन ग्रंथ बन चुके थे, उनकी जगह तांत्रिक साहित्य ने ले ली थीद्य जाति व्यवस्था

कठोर हो गई थीद्य जातियां उप जातियों में बट गईद्य हिंदू धर्म की आत्मा तो मानो लुप्त हो गई, केवल रीति–रिवाज बच गए। इस्लाम की भी यही हालत थीद्य 'रामकली दी वार' में गुरु नानक ने इन स्थितियों पर दुख प्रकट करते हुए कहा है– हिंदू का पुत्र हिंदू कहलाया, धारण किया पवित्र जनेऊ धारण किया पर पाप न रोका, फिर क्यों कर हुआ पवित्र मुसलमान धर्म पर गर्व करे, बिना गुरु सद्मार्ग न पावे भटके घुप्प अंधेरे में, बिना किए सत्कार्य वही क्यों जाए फिर जन्नत में, जोगीपुत्र जोगी बन आया कानों में डाली बाली, घर–घर घूम अलख जगाया साईं सब ठौर है, सबका निर्माण करे जो यह पहचाने, सच्चा हिंदू सच्चा मुसलमान वही है बाकी सब नकली है, कर्मों का जवाब देना होगा सतकर्मों से ही मुक्ति मिलेगी, अंत में जीत सत्य की होगी रब के सामने सत्य छोड़, कुछ और नहीं टिकेगा नानक के समय राजनीतिक अवस्था बहुत खराब थी नानक ने कहा है कि यह "काल तलवार सा है।शासक तथा राजे बूचडों के समान है।अच्छाई पर लगाकर उड़ गई है।"

1521 में मुगल आक्रमणकारियों ने लोगों के साथ जो व्यवहार किया उसे गुरु नानक ने देखा है।जिसके अनेक संकेत उन्होंने अपने काव्य में दिए हैं। वे बताते हैं कि बाबर हिंदुओं के प्रति इतना नाराज था आक्रमणकारी था कि उसने कत्लेआम के फरमान जारी किए। सभी युवा स्त्रियां दासी बना ली गई। दूसरी स्त्रियों को जबरदस्ती सैनिकों के लिए अन्न पीसना तथा भोजन बनाना पड़ता था।नगर को लूटकर वहां आग लगा दी जाती थीद्य शिविरों में बंदियों पर खासतौर से स्त्रियों पर किए गए अमानुष्य अत्याचार ने गुरु नानक का दिल तोड़ दियाद्य इस कठिन पीड़ा तथा चोट को वे कह ना पाए। इसी वेदना में उन्होंने ईश्वर की भी आलोचना की और कहा– खुरासान कि तुमने रक्षा की, और हिंदुस्तान का दिल भयभीत कर दिया पर हे परम निर्माता, फिर भी, तुम निर्लिप्त क्यों हो महान मुगल बाबर के रूप में, तुमने स्वयं यम को भेजा है भयानक कत्लेआम ने, लोगों के शोकाकुल ऊंचे स्वरो ने क्या तेरे मन में किंचित–मात्र, दया नहीं उपजायी मेरे दाता ओ निर्माता, तू सार्वभौम शक्ति है सभी देशों और मनुष्यों का, तू ख्याल कर इन्हीं परिस्थितियों में भक्ति आंदोलन तेजी से चला और भारतीय सुधारकों ने हिंदू धर्म तथा इस्लाम के अनुयायियों के बीच कटुता को दूर करने का आंदोलन चलायाद्य मुसलमान, हिंदुओं और उनकी मूर्ति पूजा तथा जाति व्यवस्था के कारण पीड़ित थेद्य भक्ति उपासक संतो ने इन दोनों के विरुद्ध उपदेश दिए। उन्होंने ईश्वर के पितृत्व तथा मानव के भ्रातृत्व पर जोर दियाद्य उन्होंने बताया कि इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि ईश्वर को मुसलमान अल्लाह या खुदा कहकर पुकारे और हिंदू परमेश्वर और राम कहे।असली कसौटी यह नहीं कि कोई किस में विश्वास करता है, बल्कि कोई काम किस प्रकार से करता है।कुरान और पुरान दोनों ही मानव प्रेम की सीख देते हैं। दोनों इसपर बल देते हैं ईश्वर की नजर में कोई ऊंचा या नीचा, बड़ा या छोटा, महान या क्षुद्र, अमीर या गरीब नहीं है।मुसलमान सूफी संतों ने भी लोगों को इसी प्रकार के सिद्धांत समझाएं, शांति का प्रचार कियाद्य उन्होंने अपने प्रेम और समानता के संदेशों द्वारा बहुत से हिंदुओं को इस्लाम में ले आए।

मुख्य सूफी केंद्र मुल्तान तथा सरहिंद में थे। भक्तों ने जनसाधारण की भाषा में अपनी बात जनता तक पहुंचाईद्य जनता से इनका संपर्क गांव के कुओं, बरगद के वृक्ष के नीचे जहां लोग दोपहर में आराम करते थे, वहां होता था।मेलों, तीज–त्योहारों, शादी और शोक के मौकों पर होता था।ये एक जगह से दूसरी जगह घूमते ही रहते और हर प्रकार से ईश्वरीय प्रेम का अपना संदेश फैलातेद्य गुरु नानक इसी आंदोलन से जुड़े, इसी क्रम में मानवता का संदेश फैलाने वाले हैं।

चिंतनशील प्रकृति के कारण गुरु नानक हिंदू तथा मुसलमान दोनों जातियों के संतों की संगति में अत्यधिक प्रसन्न होतेद्य उन्हें हर प्रकार के अंधविश्वास तथा मिथ्या विचारों से तीव्र घृणा हो गईद्य उन्हें किसी पेशे या नौकरी से भी लगाव ना था।वे ईश्वर के आज्ञाकारी दास तथा सच्चे भक्तों के रूप में मानवता की सेवा करना चाहते थेद्य गुरु नानक ने कभी ईश्वर या पैगंबर बनकर किसी दैवीय शक्ति के दावे की बात नहीं कीद्य उन्होंने सभी से प्रेम किया और किसी के प्रति बुराई की भावना नहीं रखी।

गुरु नानक ने पांच चीज़ों के पालन पर बल दिया– नाम–स्मरण तथा भजन, दान, स्नान, सेवा (ईश्वर और मानव की सेवा), स्मरण अर्थात ईश्वरीय महिमा तथा निजी मोक्ष अथवा आत्मोपलब्धि के लिए निरंतर भजन तथा स्तुति।

गुरु नानक ने कब्रगाहों में कई–कई दिनों तक बैठकर अल्लाह की स्थिति में गायन कर उन्होंने मुसलमानों का विश्वास भी जीत लियाद्य मुसलमानों की बातों में शामिल होने में उन्हें कोई हिचक ना होती थी, किंतु वे देखते थे की प्रार्थना में आए हुए लोग खुदा से ध्यान न लगाकर अपने मन को वे घर–बाहर और व्यापार की बातों में भटकने देते थेद्य इस तरह उन्होंने उन पांच प्रार्थना अर्थात नमाजों का महत्व बताया, जिन्हें करना मुसलमान जरूरी समझते थे–

पहली नमाज सच के नाम से पढ़ो,
दूसरी पढ़ो की रोटी तेरी नेकी की हो,
तीसरी नमाज अल्लाह के नाम पर दान के लिए,
चौथी दिल की साफगोई के लिए
पांचवी खुदा की याद और इबादत के लिए
नेक कामों का कलमा पढ़ो,
नानक कहते हैं, पाखंड झूठा बनाता
इंसान को याद रखो।

गुरु नानक के अनुसार सच्चा मुसलमान वही है जो नेक काम करता है, बाकी सब गलत है।हिंदुओं के प्रति घृणा इस्लाम के अनुकूल आचरण नहीं है क्योंकि हिंदू और मुसलमान दोनों ईश्वर के बंदे हैं। वास्तव में हिंदू और मुसलमान नामक चीज़ तो कुछ है भी नहीं, इंसान तो आखिर इंसान ही है।अलग अलग चिन्ह लगाकर अपने को औरों से भिन्न मानने वाले लोग तो उस इंसान की – सच्चे अर्थों में सुसंस्कृत इंसान की – शान को नहीं छू सकते जो जाति, धर्म, देश, राष्ट्र, आंचलिकता अथवा रंग का भेद परे हटाकर मानव मात्र से एक्य की भावना रखता है।

हिंदुओं को गुरु नानक ने उपदेश तथा उदाहरण देकर मूर्ति पूजा तथा जातिभेद के विरुद्ध सीख दीद्य उन्होंने निम्न वर्गों अथवा जातियों के लोगों के साथ खाना पसंद किया। सैयदपुर (ऐमनाबाद) में वे एक गरीब बढ़ई लालो के साथ ठहरे और खाया, तथा खत्री जाति के एक अमीर

जमीदार मलिक भागो की दावत इसलिए नामंजूर कर दी कि लालो तो अपनी मेहनत की रोटी खाता था पर मलिक ने दूसरों का शोषण कर दौलत इकट्ठी कर ली थीद्य पुरानी प्रथा के अनुसार गुरु नानक के पास श्रद्धावश लोग आने लगेद्य उनके आदेशों और आशीर्वाद के आकांक्षी बन गए। धन और सामग्री दोनों उनपर भेंट चढ़ाने लगे। नानक ने प्रारंभ में वे सब चीजें गरीबों को बांट दी बाद में उन्होंने सारा चढ़ावा लंगर को चलाने में लगा दिया, जो एक मुफ्त भोजनालय था और जहां जाति, धर्म, विश्वास और ओहदे का ध्यान नहीं था।कोई भी भोजन प्राप्त कर सकता था।इस प्रकार गुरु नानक ने जातिभेद को कम करने की कोशिश की और समाज को संदेश दिया।

गुरु नानक देव ने कबीर की भांति आडंबरों का बराबर विरोध कियाद्य हिंदू की दाह क्रिया, मुसलमानों की दफन क्रिया के भेद के संबंध में वे कहते हैं—

देखो, कुम्हार के हाथ मिट्टी पड़ी मुसलमान की
वह इस मिट्टी की ईट और पात्र गढ़ेगा
मिट्टी जलती है, कोई अब अंगारों में जलता
चिल्लाता है व्यर्थ बहता है
करतार! तू ही जाने, जलना अच्छा
या कि पृथ्वी तल में गढ़ जाना।

बात यह सच्ची है कि कब्रगाह की मिट्टी मुलायम और चिकनी होने के कारण कुम्हारों द्वारा पसंद की जाती है।इस प्रकार मुसलमानों के शव कुम्हार की आग में जलते ही हैं और दफन इस तरह राह में परिवर्तित होता है।

एक प्रसंग सन 1517 से 1521 के बीच का है जब गुरु नानक देव पश्चिम दिशा की यात्रा पर गए। उन्होंने गुरु मुस्लिम देशों का भ्रमण कियाद्य उन्होंने हाजियों जैसे कपड़े पहने हुए थेद्य नीले वस्त्र धारण किए हुए थेद्य बगल में एक ग्रंथ और दरी थी, जिसपर बैठकर वह प्रार्थना करते थेद्य हाथ में मोटा डंडा था।मक्का में सोते समय इन्होंने अपने पैर काबा की तरफ कर दिए, जो पवित्र इस्लामी तीर्थ स्थल था किंतु किसी ने क्रोध में आकर ने जगाया और अल्लाह के घर के प्रति अनादर दिखाने के लिए कटु वचन सुनाएंद्य बड़े आदर के साथ गुरु ने उस व्यक्ति को कहा कि मेहरबानी कर मेरे पैर उस दिशा में घुमा दो जहां ईश्वर मौजूद ना हो और उस व्यक्ति ने देखा कि जहां—जहां गुरु के पैर घुमाए उसी दिशा में काबा नजर आने लगा, जिससे आडंबर भी टूटने लगाद्य

जाति धर्म से परे, आडम्बरों से परे गुरु नानक देव ने समाज को जो संदेश दिया, उसी के आधार पर दोनों संप्रदायों के लोगों ने उनसे इतना प्रेम किया कि उनके बारे में कहा—

गुरु नानक शाह फकीर,
हिंदू का गुरु, मुसलमान का पीर

सही मायने में गुरु नानक देव मानवता का संदेश देने के लिए आए थे और उस युग में जब मुगलों का आतंक था, आडंबर का बोलबाला था।ऐसे समय में सभी को मानवता का पाठ पढ़ाया। यही संदेश बाद के संतों ने भी अपनी वाणी में रखा है।

संदर्भ

1. रामकली की वार महला पहला
2. आसा दी वार महला पहला
3. ए शॉर्ट स्टोरी हिस्ट्री ऑफ द सिखस, तेजा सिंह और गेंदा सिंह
4. गुरु शब्द रत्नाकर महान कोश, भाषा विभाग, पंजाब
5. श्री गुरुनानक चमत्कार, खालसा, समाचार, अमृतसर
6. गुरुनानक एंड द सिख रिलिजन, डब्ल्यू.एच. मैक्लोड़
7. लाइफ ऑफ गुरु नानकदेव, करतार सिंह
8. नानक वाणी, जयराम मिश्र
9. मध्यकालीन भारत का संक्षिप्त इतिहास, डॉ. ईश्वरी प्रसाद
10. गुरुनानक और उनका काव्य, डॉ. महीप सिंह और डॉ. नरेंद्र मोहन

नानक आरती : आध्यात्मिक सामाजिक चेतना का विराट बोध

*डॉ. भारती

* कमला नेहरू कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय

श्री गुरुनानक देव जी एक युगांतकारी महान दार्शनिक चिंतक और क्रांतिकारी समाज सुधारक थेखी।गुरुनानक देव का आगमन ऐसे युग में हुआ जो देश के इतिहास के सबसे अँधेरे युगों में थाखी।धर्म काफी समय से थोथी रस्मों और रीति रिवाजों का नाम बनकर रह गया थाखी।उत्तरी भारत के लिए यह कुशासन और अफरा–तफरी का समय थाखी।सामाजिक जीवन में भारी भ्रष्टाचार था और धार्मिक क्षेत्र में द्वेष और कशमकश का दौर थाखी।न केवल हिन्दू मुसलमानों के बीच बल्कि दोनों बड़े धर्मों के भिन्न–भिन्न सम्प्रदायों में भी वैमनस्य बढ़ रहा थाखी।ऐसे समय में इस्लाम के हमलों के बीच स्थिति और भी शोचनीय बन चुकी थीखी।बेगुनाहों का खून पानी की तरह बहाया जाता थाखी।मंदिरों को तोड़ कर मस्जिदें बनाई गईखी।धार्मिक पुस्तकों को जलाया गयाखी।लोगों को जबरन इस्लाम कबूल करवाया गयाखी।ऐसी मानसिक स्थिति में इतिहास के पृष्ठ बदलने के लिए संतों ने लोगों को आध्यात्मिक मनोबल प्रदान करने का प्रण लियाखी।इसी परम्परा में कबीर थे और इसी परम्परा में नानक हुएखी।गुरुनानक ने जातिवाद को मिटा कर समाज में पारस्परिक सौहार्द स्थापित करने के लिए अपनी वाणी का प्रयोग किया शैवबी के अनुसार– ''Guru Nanak struck vigorously at the root cause of the superstition and moral decline by demanding truth in faith and spirit of commitment in worship- He categorically rejected polytheism and every idea that encumbered the relation between god and man and preached for direct relation of man with god.'' (1)

'गगन में थालु रवि चंदु दीपक बने' यह आरती गुरु नानक जी द्वारा लिखी गई है।उन्होंने यह आरती पूर्वी भारत की यात्रा के दौरान पुरी के जगन्नाथ जी मंदिर में उच्चरित की थीखी।परम्परागत आरती से हटकर इसमें सम्पूर्ण सृष्टि को ही परमात्मा की आरती में लीन कल्पित किया गया है। वास्तव में इस एक आरती में ही हमें नानक का सम्पूर्ण प्रकृति व सम्पूर्ण मानव के साथ संबंधों का पता चलता है।प्रकृति के साथ गुरुनानक का घनिष्टतम संबंध है क्योंकि प्रकृति को वह मनुष्य जीवन का प्राणदायक तत्व मानते हैं।उनके अनुसार प्रकृति ही मनुष्य और ईश्वर के बीच अटूट संबंध की कडी है।उनकी आरती में इसी प्रकृति को ईश्वर की आरती का थाल बनाया है।आरती के अतिरिक्त अन्यत्र भी अपनी वाणियों में गुरुनानक ने प्रकृति की अद्भुत शोभा को उकेरा है।चैत्र राग में बारहमाहँ में प्रत्येक मास का हृदयग्राही वर्णन है।चैत्र में सारा वन प्रफुल्लित हो जाता है।पुष्पों पर भवरों का गुंजन बड़ा ही सुहावना लगता है।वैशाख में शाखाएँ अनेक वेश धारण करती है।इसी प्रकार ज्येष्ठ–आषाढ़ की तपती धरती सावन भादों की रिमझिम, दादर मोर, कोयलों की पुकारें तथा दामिनी की चमक का रोचक वर्णन हमें नानक की वाणी में मिलता है।इसी प्रकृति का भव्य और विराट रूप हमें नानक की आरती में दृष्टिगोचर होता है ।

"गगन मैं थालु रवि चंदु दीपक बने
तारिका मंडल जनक मोती
धूप मलआनलों पवणु चवरो करे
सगल बनराइ फूलंत जोती " (2)

प्रस्तुत पंक्तियों में गुरुनानक सारे आकाश को ही पूजा के थाल में बदल देते हैं।जिसमें सूरज और चाँद दीपक बने हुए हैं।तारों के समूह जैसे थाल में मोती के समान हैं।मलय पर्वत से आने वाली हवा जैसे धूप है।और सारी वनस्पत्ति प्रभु की आरती के लिए मानो फूल दे रही है।वास्तव में प्रकृति के इस भव्य रूप को पूजा के थाल में परिवर्तित करने के पीछे नानक का जगन्नाथ मंदिर में पूजा के रूप में प्रयोग होने वाली वाह्य सामग्रियों का विरोध करना थाखी।आरती की एक निश्चित परम्परा के विकास और प्रक्रिया पर प्रश्न चिन्ह लगाना थाखी।सामान्यता आरती से तात्पर्य किसी देवता की मूर्ति अथवा किसी पूज्य के आगे दीया घुमाकर पूजा करना होता है।हिन्दू मतानुसार यह आरती चार बार चरणों के आगे , दो बार नाभि के ऊपर, एक बार मूँह पे और सात बार सारे शरीर के सामने दिए घुमाने से पूर्ण होती है।गुरुनानक जी ने इस आरती का खंडन करके भगवान की कुदरती आरती की प्रशंसा उपरोक्त पंक्तियों में कि है।वास्तव में आरती का यह प्रकृति परक रूपक गुरुनानक की उसी विशेषता की ओर इशारा करता है जहाँ वह समाज से वाह्य आड़म्बरों की बुराई को समाप्त कर मनुष्य के चरित्र को महान बनाने की प्रेरणा देते हैं।समस्त जीवों में चल रही जीवन तरंगों को ही नानक सच्चे नगाड़े मानते है।अर्थात सम्पूर्ण जगत ही जब उस ईश्वर का दिया है तो हम उसे किन वाह्य साधनों को देकर खुश करना चाहते हैं।वास्तव में अगर हम निस्वार्थ समपर्ण कर ईश्वर के प्रति अनुरक्त हो सकते हैं तभी हम भगवान की सच्ची आरती करते हैं अन्यथा सब व्यर्थ है।यही भाव हमें

अज्ञेय की कविता ' सम्राज्ञी का नैवे। दान' में भी दिखाई देता है।जहाँ बौद्ध को समर्पित करने के लिए सम्राज्ञी को सृष्टि में कुछ भी उपयुक्त नहीं जान पडता तो वह कहती है

"जो कली खिलेगी जहाँ , खिली,
जो फूल जहां है,
जो भी सुख
जिस भी डाली पर
हुआ पल्लवित, पुलकित
मैं उसे वहीं पर
अक्षत, अनाघ्रात, अस्पृष्ट, अनाविल
हे महाबुद्ध !
अर्पित करती हूँ तुझे।"(3)

गुरुनानक तत्कालीन समाज में धर्म व भक्ति के नाम पर फैले पाखंडो और वाह्य आडम्बरों का ज़ोरदार खंडन करते हैं चाहे वह पाखंड हिन्दू ब्राह्मणों का हो, चाहे जैनों का, चाहे योगियों का हो और चाहे मुल्लाओं और काजियों का होखी।वास्तव में सभी धर्मों का आतंरिक स्वरुप मनुष्य की भलाई के लिए है।केवल वाह्य स्वरूप के कारण ही झगडे और संकीर्णताएँ उत्पन्न होती हैं ।

"The guru had been sharply critical of the empty practices and institutions of his time."(4)

गुरु नानक अपनी आरती में निर्गुण ब्रह्म के स्वरुप को स्थापित करते हैं।वह तत्कालीन समाज में फैली मूर्तिपूजा, बहुदेवोपासना का विरोध कर ईश्वर को निराकार, सर्वव्यापी और सच्चिदानंद बताते हैं।उन्होंने आरती में स्पष्ट किया है कि परमात्मा केवल एक है जो किसी भी रूप और आकृति के बिना सर्व व्यापी और अदृ श्य है।ब्रह्मांड के निर्माण के पहले भी भगवान का अस्तित्व था, आरती की अगली पंक्तियाँ हैं दृ

" सहस तव नैन नन नैन है तोहि कउ सहस मूरति नना एक तोही
सहस पद विमल नन एक पद गंध बिनु सहस तव गंध इव चलत मोही" (5)

अर्थात तुम्हारे सहस्त्रों नैत्र हैं, फिर भी एक भी नैत्र नहीं है।सहस्त्रों मूर्तियाँ तुम्हारी ही हैं फिर भी तुम एक मूर्ति भी नहीं होखी।इसी प्रकार तुम्हारी एक भी घ्रानेन्द्रियों के बिना सहस्त्रों घ्राणद्रियाँ हैं।मैं तुम्हारे इस अद्भुत चरित्र पर मोहित हूँ। मदनजीत कौर के अनुसार – "As a prophet of new religion with his basic perception of unity of god& he categorically made it plain that in the execution of the religions ideals of the worship of one god"(6)

गुरु नानक ईश्वर की ज्योति अथवा उसका अस्तित्व उसकी बनाई सृष्टि के कण–कण में वि।मान मानते हैं।इसीलिए गुरु नानक प्रकृति, मानव, तथा समस्त प्राणियों में उसी की ज्योति पाते हैं।अपनी इसी सोच को साकार रूप देने के लिए गुरु नानक संगत और लंगर का भाव विकसित करते हैं।संगत में बिना धर्म,जाति, वर्ण के भेद–भाव के सभी लोग एक साथ आकर ईश्वर आराधना कर सकते हैं तथा सद विचारों को धारण कर सकते हैं।

"The sangats set up by Guru Nanak became a holy body of sadh sangat- The sangat was the Organised Fellowship of the Sikhs. The Guru resided in the sangat. It was engaged in Þcongregational prayers and organised 'Sewa' Guru Nanak during his udasis or travels felt the need of sangats which could guide and help the society overpowered by superstitions and superfluous religious beliefs and practices- Wherever he went] he left behind him a sangat, or association of his followers with an injunction to build a meeting place for purpose of meeting and singing hymns together- Sitting in a sangat had great influence on one*s personality for even bad and wicked people could be reformed in the company of good people. This was more so because sangats of their conception repudiated distinctions of cast and birth and advocated the worship of only one god."(7)

संगत के समान लंगर भी गुरु नानक की विश्बंधुत्व की अवधारणा का साकार रूप है।लंगर सिखों के गुरुद्वारे में प्रदान किए जाने वाले निशुल्क शाकाहारी भोजन को कहते हैं। लंगर सभी लोगों के लिए खुला होता है चाहे वह सिख हो या नहींखी।लंगर सिख धर्म में दो दृष्टिकोण से लिया गया है।पर आम तौर पर रसोई को लंगर कहा जाता है।जहां कोई भी आदमी किसी भी जाति का, किसी भी धर्म का, किसी भी पद का हो इकठ्ठे बैठकर अपने शरीर की भूख एवं प्यास मिटा सकता है।इसी शब्द को निराकारी दृष्टिकोण में लिया जा सकता है।जिसके अनुसार कोई भी जीव आत्मा या मनुष्य अपनी आत्मा की ज्ञान की भूख गुरु घर में आकर किसी गुरमुख से गुरुमत की विचारधारा को सुनकर, समझकर मिटा सकता है।सिख धर्म की एक प्रमुख सिखावन है "वंड छको" अर्थात मिल बाँटकर खाओ, लंगर इसी प्रथा का व्यवहारिक रूप है ।

"The idea of common brotherhood among the Sadh Sangath was further cemented by another institution- It was that of langar- 'This institution of Guru Ka Langar' or the free community kitchen was as old as Sikhism- It was started by Guru Nanak and continued by his successors- He started the langar as a crusade against social injustice] oppression and tyranny of caste system- The ideals of love and service] fraternity and equality were taught and practiced by the followers of the Guru while participating in the langar- Guru Nanak taught people that all men were the children of one god] as such all were brothers- The Guru*s langar was open to all and their food was served to all irrespective of caste or social status- The institution of Guru ka langar spread equality among all and helped to remove untouchability and other evils born of the caste system." (8)

गुरुनानक जब समस्त सृष्टि में उसी परमात्मा को देखते हैं तों वह विश्वबंधुत्व की व्याख्या को ही हमारे सामने स्पष्ट करते हैं खी।उनकी आरती की अगली पंक्ति इसका प्रमाण है।

"सभ महि जोति जोति है सोइ
तिस कै चाननि सभ महि चानण होइ" (9)

अर्थात हे ज्योतिस्वरूप परमात्मा तुम्हारी ज्योति सभी में है।तुम्हारी ही ज्योति के प्रकाश से सारी वस्तुएँ प्रकाशित होती है।यही भाव मदनजीत कौर दलजीत सिंह के निबंध से अभिव्यक्त करती हैं। "The guru had first to organise a new society intensely motivated with new values]

with real sense of brotherhood inspired to struggle and sacrifice for justice and deeply committed to achieving new goals."(10)

आरती के अंतिम हिस्से में गुरुनानक मानव जीवन के कल्याण के लिए गुरु को अत्यंत आवश्यक बताते हैं।वास्तव में समस्त संत काव्य की परम्परा में गुरु को बहुत उच्च स्थान मिला है।कबीर कहते हैं

"गुरु गोविन्द दोनों खड़े काके लागू पाएँ
बलिहारी गुरु आपने गोविन्द दियो मिलाए" (11)

'In Sikhism the Guru was immortal and without him there is nothing but darkness. The Guru stands for two things & revelation and practice of the truth through personal guidance.' (12)

गुरुनानक की दृष्टि में सद्गुरु का स्थान धार्मिक साधना में सर्वोपरि है। मूलमंत्र में "गुरु प्रसादि" से यह बात सिद्ध हो जाती है। "सतिगुर जेवहु दाता को नही सभि सुनिअहु लोक सबाइआ"(13) गुरुनानक देव ने कर्म मार्ग, योग मार्ग, ज्ञान मार्ग, और भक्ति मार्ग सभी में गुरु का महत्व माना है।उन्होंने अपनी वाणी में स्थान–स्थान पर सद्गुरु और परमात्मा में अभिन्नता दिखाई है। ''ऐसा हमरा सखा सहाई / गुरु हरि मिलिआ भगति दृड़ाई ''(14)

गुरुनानक देव ने जहाँ सद्गुरु की प्रशंसा की है वहीं असद गुरु की तीव्र निंदा भी की है।उनका कथन है कि "ऐसे असद गुरु झूंठ बोलते हैं और हराम का खाते हैं उनके स्वयं तो ऐसे आचरण है फिर भी दूसरों को उपदेश देते हैं।ऐसा गुरु स्वयं तो नष्ट होता ही है साथ में दूसरों को भी नष्ट करता है ।

आरती की पंक्तियों में गुरु की महत्ता स्थापित करते हुए नानक कहते हैं की यह परमात्मा का अद्वितीय प्रकाश गुरु के उपदेश से अपने में प्रकट होता है ।जो तुम्हें अच्छा लगता है वही वास्तविक आरती है ।

"गुर साखी जोति परगटू होई।
जो तिसू भावै सु आरती होई "(15)

गुरु नानक देव सर्वव्यापी भाई चारे में विश्वास करते थे ।एक ऐसे धर्म को स्थापित करते हैं जो जो समानता,दया और सह भाजन के संदेशों को प्रसारित करता है।सभी प्रकार की रस्मों और अंध विश्वासों को पूर्ण रूप से असत्य बताकर सच्चे दिल से की गई दयालुता पूर्ण सहायता व सेवा को मानव जीवन का प्राण बताते हैं ।नानक आरती की भव्यता उसकी अध्यात्मिक सामाजिक बोध में निहित है।

सन्दर्भ– सूची

1. H.S. Soch, Guru Nanak Ideals and Institutions] Guru Nanak dev university Amritsar page 1
2. गुरुनानक वाणी,मित्र प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड इलाहबाद, पृष्ठ –416
3. सर्जना के क्षण ,अज्ञेय,भारतीय साहित्य प्रकाशन , मेरठ ,1996 पृष्ठ –78
4. H.S. Soch, Guru Nanak Ideals and Institution] Guru Nanak dev university Amritsar page 91
5. गुरु नानक वाणी पृष्ठ –416
6. Madanjeet kaur, Guru Nanak Ideals and Institution, page 91
7. उपरोक्त पृष्ठ –210
8. उपरोक्त पृष्ठ– 216
9. नानक वाणी पृष्ठ –416
10. Madanjeet kaur, Guru Nanak ideals and institution, page 103
11. कबीर ग्रन्थावली, गुरु को अंग
12. Dalbir Singh Dhillon, Guru Nanak ideals and institution, Page 205
13. गुरु नानक वाणी ,पृष्ठ –71
14. उपरोक्त पृष्ठ –72
15. नानक वाणी पृष्ठ –416

गुरुनानक देव की धर्म साधना का उद्देश्यः मानव जगत का कल्याण

*श्रीमती वन्दना

* प्रवक्ता (हिंदी), मेथोडिस्ट गर्ल्स पी० जी० कॉलेज, रूड़की

संक्षेपिका

भारत की इस पवित्र पावन भूमि पर मानव मात्र के कल्याण हेतु अनेक संत महात्माओ ने जन्म लिया। जिन्होंने सामान्य मनुष्य में आध्यात्मिक चेतना को जागृत करने के साथ साथ ईश्वर तक पहुचने का मार्ग दिखाया। ऐसे ही आलोकिक अवतार के रूप में गुरु नानक देव जी जाने जाते है। संत काव्य परम्परा के अंतर्गत गुरु नानक देव का महत्वपूर्ण स्थान है। कबीर की भांति इन्होने भी निराश भारतीयों में भक्ति मार्ग का अनुसरण करते हुए उत्साह का संचार करने के साथ साथ मानव जगत के कल्याण हेतु उपदेश दिए। ऐसे समय में गुरु नानक देव एक संत, कवि और एवं समाज सुधारक के रूप में हमारे सामने आते है।

गुरु नानक देव जी ने मानव मात्र के कल्याण हेतु अनेक धार्मिक शिक्षाए देकर मानव जगत को नयी दिशा से अवगत कराया और "वसुधैव कुटुम्बकम" की भावना का विस्तार किया इनके द्वारा दी गयी धार्मिक शिक्षा अर्थात सिद्धांतों की आज वर्तमान में भी प्रासंगकिता बनी हुयी है जिन्हें मानव अपने जीवन में अपनाकर अपना और दूसरों का कल्याण कर सकता है इस कामना को गुरु नानक देव जी अपनी अपनी धर्म साधना के द्वारा पूर्ण करना चाहते थे इसलिए उन्होंने अनेक देशो का भ्रमण किया और अपने आलोकिक प्रकाश को फैलाया।

कूट शब्द : मानव जगत कल्याण, जातिगत भेदभाव, एकेश्वरवाद, वसुधैव कुटुम्बकम्।

साधना के उद्देश्य

विश्व को शांति और भाईचारे का सन्देश देने वाले महान गुरु नानक देव संत काव्य परंपरा में महत्वपूर्ण स्थान रखते है जिस प्रकार संत कवि कबीर दास जी ने ज्ञान के आधार पर ईश्वर तक पहुचने का मार्ग दिखाया। उसी प्रकार गुरु नानक देव ने भी धर्म साधना के मार्ग द्वारा मानव जगत का कल्याण करने का प्रयास किया।

गुरु नानक देव जी का जन्म जिस समय हुआ था उस समय समाज में धर्म का अर्थ पाखंड, बाहरी आडम्बरों आदि से माना जाता था। यह सब देखकर गुरु नानक देव चिंतित थे क्योकि बाहरी आडम्बरों को धर्म के पर्याय के रूप में माना जाने लगा था तब गुरु नानक देव धर्म को एक नए रूप में समाज के सामने प्रस्तुत किया। जिसका उद्देश्य केवल मानव जगत का कल्याण हो, जिसमे सभी समान हों, ऊंच नीच व जाति–पाति के आधार पर होने वाले भेद के स्थान पर मानव जगत का कल्याण निहित हो। धर्म के नाम पर पाखंड फ़ैलाने वालो का विरोध करते हुए गुरु नानक देव जी ने कहा है–

"गुरु पीरु सदाय मंगल जाए। ता के भूति न लगिए पाए।
धाती खाई किछु हथहु देई। नानक राहू पषानिही सेई।

अर्थात जो लोग अपने आप को गुरु और पीर कहते है किन्तु भीख मांगने जाते है। उनके चरणों पर कभी नहीं पड़ना चाहिए। वही व्यक्ति सच्चा मार्ग पहचानता है जो स्वंय परिश्रम करके खाता है उसमे से कुछ अपने हाथो से कुछ देता है"।[1]

कहने का तात्पर्य यह है की मात्र दिखावा करके और मांग कर खाने वाला व्यक्ति सच्चा मार्ग नहीं पहचान पाता इसके विपरीत जो व्यक्ति स्वयं मेहनत का हिस्सा दूसरों के कल्याण में देता है वही सच्चा मार्ग जान सकता है। दूसरी ओर समाज में व्याप्त जातिगत भेदभाव की ओर भी नानक देव का ध्यान आकृष्ट होता है जिसके विरोध में नानक देव जी लिखते है : "नीचा अन्दर नीच जाती नीची हूँ अति नीच।

नानक तिनके संगि साधि वडिया सिउ किया रीस।
जिथे नीच समाली अनि तिथे नदरि तेरी पखसीस।
(सिरी राग)

अर्थात नीचो में नीच जो जाति है और उस नीच जाति में जो अति नीच जाति है नानक उसी नीच जातिके लोगो के संग है। बड़े लोगों से मेरी क्या तुलना? जहाँ नीच लोगो की देखभाल की जाति है, वहीँ परमात्मा कि कृपा रहती है।"[2]

कहने का तात्पर्य यह है की जिस जाति को मनुष्यों द्वारा हीन द्रष्टि से देखा जाता है उसी जाति की लोगो के साथ गुरु नानक देव जी रहते है और जहाँ ऐसे लोगों को सम्मान की दृष्टि से देखा जाता है वहीं परमात्मा भी वास करते है। अपने इसी उदार भावों के कारण नानक देव आज सभी के ह्रदय में वास करते है। नानक देव जी अवतारवाद, मूर्तिपूजा, कर्मकांड, जाति–पाति का खंडन करते हुए केवल एक परब्रह्म परमेश्वर को मानते थे। इनका मत था कि वही अहंकार को समाप्त करने वाली परम औषधि है। जिनके माध्यम से मानव का अहम् समाप्त होता है और मानव परमात्मा को पहचान जाता है।

ज्ञान प्राप्ति के साधन

नानक देव के अनुसार उस परमतत्व (परमात्मा) की प्राप्ति ज्ञान के आधार पर की जा सकती है जिसके लिए उन्होंने निम्न साधन बताये है –

विवेक : मनुष्य बुद्धिजीवी प्राणी है जिससे वह सोच समझ कर ज्ञान मार्ग की और अग्रसर होता है।

वैराग्य : इसके अंतर्गत सांसारिक मोह विषय सबके प्रति वैराग्य भावना को प्रदर्शित किया गया है जिसमे बताया गया है की सब नश्वर है।

श्रध्दा : नानक देव ने ज्ञान प्राप्ति के मार्ग में गुरु के प्रति श्रध्दा प्रकट की है

श्रवण : ज्ञान प्राप्ति के लिए श्रवण परम आवश्यक है नानक जी ने अपनी वाणी जपु में इस महत्व को प्रतिपादित किया

"नानक भगता सदा बिगासु।
सुणऐ दुःख पाप का नासु।।

हे नानक। नाम श्रवण करने वाले सदा प्रसन्न रहते है नाम श्रवण से ही दुखों और पापों का नाश होता है।"[3]

मनन करना : श्रवण के बाद की अवस्था मनन की अवस्था कहलाती है क्योकि ईश्वर के नाम की महिमा केवल मनन करने वाला ही जान सकता है नानक देव कहते है

"मने की गति कहीं ना जाई। जे को कहे पिछे पछुताई।

नाम श्रवण कर उसका मनन करने वाले की दशा कही नहीं जा सकती। यदि कोई वर्णन करने का प्रयत्न करे तो कहने में कमी रह जाती है जिससे उसे पछताना पड़ता है।"[4]

अहंकार त्याग : परमात्मा से एकाकार के लिए गुरु नानक देव ने अहंकार के त्याग को आवश्यक माना है उनका कहना है कि अहंकार को त्याग कर ही ईश्वर को अपने अन्दर ही देखा जा सकता है

"इ आनडीए मानडा काई करेही।।
आपनडे घरि हरि रंगों की न माणेहि
सुहू नेडै धन कमलिए बाहरू किआ ढूढ़ेहि।।"
(राग तिलंग पृष्ट ७२२)

हे जीव आत्मा। ईश्वर तो सदैव तेरे साथ है वह तुझे केवल इसलिए अनुभव नहीं होता क्योकि तेरे और प्रभु के बीच अभिमान की दीवार है। उसे त्याग कर ही नम्रता में आ जाने से वह तुझे अपने में ही दृष्टिगोचर हो सकते है उसे कहीं बहार खोजने की आवश्यकता नहीं है।"[5]

गुरु एवं प्रभ कृपा दृ जब मनुष्य को वास्विकता का ज्ञान हो जाता है तो उसे इस संसार के साथ साथ दुसरे संसार में भी आनंद की प्राप्ति करता है

"सुणिया मनिआ मनि कीता भाऊ।
अंतरगति तीरथि मलि नाउ।।

नानक कहते है केवल वही जीव परमात्मा का भेद पा सकते जो उनके नाम का श्रवण, मनन और ध्यान करते है। वही अंतर्मुख होकर नाम के सच्चे तीरथ में नहाते और निर्मल होते है।"[6]

नानक देव की शिक्षाएं

नानक देव ने ज्ञान प्राप्ति के साधन के अतिरिक्त मानव जगत के कल्याण हेतु धार्मिक शिक्षाए भी दी। जिन्हें अपना कर मानव अपने जीवन को उच्च बना सकता है।

ईश्वर एक है : गुरु नानक देव ने धार्मिक एकता की स्थापना करते हुए कहा की ईश्वर के अनेक नाम रूप है। किन्तु सभी जीवों को जन्म देने वाला ईश्वर एक ही है। नानक देव जी ने एक ही ईश्वर जी उपासना पर बल देते हुए कहा है कि–

"आदीसु तिसै आदेसु।
आदि अनीतु अनादी अनाहती।
जुगु जुगु एको वेसु।।

(हे योगियों। उसी को प्रणाम करो जो आदि है अनादि है पवित्र है युगों दृ युगों से एक ही देश में है और सदा ही रूप रहता है।"[7]

ईश्वर सर्वव्यापी है। ईश्वर का वास हर स्थान हर जगह है। वह हर प्राणी घट घट वासी है। जो हमें हर पल देखता है।

"जेता कीता तेता नाउ दृ विणु नावै नाही को थाऊ।

गुरु नानक देव कहते है परमात्मा ने जो सृष्टि बनाई है वह सारी की सारी नाम रूप वाली है। प्रत्येक नाम और रूप में उस परमात्मा का वास है। सब उसी के रूप है।"[3]

ईश्वर की शरण प्राप्त भक्तों को किसी प्रकार का डर नहीं सताता : जो ईश्वर की शरण प्राप्त कर लेता है उसे इस संसार में भय नहीं रहता तथा वह आवागमन के चक्र से भी मुक्त हो कर ईश्वर में लीन हो जाता है।

निष्ठां भाव से मेहनत करके प्रभु की उपासना करना : गुरु नानक का मानना था की मनुष्यों को निष्ठां भाव से इमानदारी के साथ मेहनत करते हुए ईश्वर के चरणों में लीन रहना चाहिए। क्योकि जो मनुष्य झूठ बोलकर दूसरों का हक खाता है तथा इसके विपरीत समझता है एसे उपदेशक की कलई खुल जाती है वह स्वयं भी ठगा जाता है, अपने साथियों को भी लुटवा देता है।

किसी निर्दोष जीव जंतु को न सताना : नानक देव का कहना है कि ईश्वर सर्वव्यापी है इसलिए बिना कारण जीव जंतु को सताना अपराध है। देवी देवताओं को प्रसन्न करने के लिए जब बकरों की बलि होने लगी तब गुरु नानक देव ने आपत्ति करते हुए कहा कि –

"जड़ पहान के माने पीर।।
तिस के आगे मारे जीव।।
जानत नहीं साकत अंधे।।

नानक देव कहते है। हे आस्तिक कहलाने वाले अंधे। तुझे इतना दिखाई नहीं देता कि निर्जीव पत्थर की मूर्ति के लिए जीवो का वध करता है क्या इनमे तुझे प्रभु के दर्शन नहीं होते। वास्तव में तू आस्तिक है या नास्तिक।"[9]

ईमानदारी से कार्य करना : गुरु नानक देव ने अपनी धार्मिक शिक्षा के द्वारा मनुष्य को ईमानदारी से अपना कर्म करते हुए अपनी मेहनत से कमाए धन से कुछ भाग जरूरतमंद को देना चाहिए।

सभी मनुष्य एक सामान है चाहे पुरुष हों या स्त्रीः नानक देव जी कहते है सभी एक ही ईश्वर की संतान है। इसलिए सभी को सामान भाव से देखना चाहिए। चाहे वें पुरुष हो या स्त्री।

"सो क्या मंदा जानिये, जित जन्मे राजान।

नानक देव कहते है जिस स्त्री ने अनेक राजाओं को जन्म दिया उसे कम नहीं आंकना चाहिए सच्चा मनुष्य वही है जो सबको सामान रूप से देखता हो।"[10]

एक ही ईश्वर की उपासना पर बलः गुरु नानक देव जी ने एकेश्वरवाद पर बल देते हुए मनुष्य को एक ही ईश्वर की उपासना के महत्व को बताते हुए कहा –

"एकम एकंकार निराला।।
अमर अजोनी जाती न जाता।।
अगम अगोचर रूपु न रेखीआ
खोजत–खोजत घटी घटी देखिआ।।
जो देखि दिखावे तिस कउ बलि जाई

गुरु प्रसाद परम पद पाई।

अर्थात समस्त ब्रह्मांड का निर्माता एक ही प्रभु है जो एक मात्र अमर, माता के गर्भ से जन्म न लेने वाला जिसका रूप नहीं, निराकार ज्योति प्रत्येक प्राणी मात्र में रमा हुआ है तथा वे अमर नहीं क्योकि उनकी मृत्यु निश्चित है अर्थात जो जन्म मरण में आता है वह परमेश्वर हो सकता है वह आवा गमन के चक्र में बंधा हुआ है।"[11]

शरीर को स्वस्थ रखने के लिए भोजन आवश्यक है लेकिन लोभी व लालची आवरण से बचें दृ हमें जिस प्रकार तन को ढकने के लिए वस्त्रों की आवश्यकता होती है उसी प्रकार शरीर को स्वस्थ रखने के लिए भोजन आवश्यक है। लेकिन हमें लालची स्वभाव से बचना चाहिए। गुरु नानक देव कहते है –

"बाबा होरु खाणा खुआरु।

तु खाधे तनु पीडीए मन मही चलहि विकार।।

भोजन केवल शरीर को स्थिर रखने के लिए करना चाहिए न की ऐसा भोजन करे जिसके सेवन से मन में विकार उत्पन्न हो सदा भोजन ही मनुष्य को चिर जीवित तथा स्वस्थ रखता है जीभ के चक्र में पड़ कर मनुष्य अपने जीवन को नष्ट करने के आलावा कुछ नहीं कर पायेगा।"[12]

उपसंहार

नानक देव द्वारा दी गयी धार्मिक शिक्षाओं का उद्देश्य मानव जगत का कल्याण रहा। जिसके मार्ग पर चलकर मनुष्य अपने जीवन को सफल बनाते हुए मुक्त हो जाता है। इस प्रकार नानक देव ने मनुष्यों को सामान व्यहवार करने की शिक्षा के साथ साथ "वसुधैव कुटुम्बकम" की भावना जागृत करते हुए लोगो के बीच फैली भ्रान्तिओं को समाप्त करने का प्रयास किया है। और सिख धर्म की नीव रखते हुए तत्कालीन समाज के कल्याण हेतु संम्पूर्ण संसार में अपनी सरल और मधुर वाणी के माध्यम से जगत का कल्याण किया।

सन्दर्भ सूची

1 http://satyaghoshak-org
2 गुरु नानक देव, पंडित मधुसुदन शर्मा, मनोज पब्लिकेशन, संस्करण ८वा २०१६ पृ दृ ३५
3 गुरु नानक देव, पंडित मधुसुदन शर्मा, मनोज पब्लिकेशन, संस्करण ८वा २०१६ पृ दृ ७८
4 गुरु नानक देव, पंडित मधुसुदन शर्मा, मनोज पब्लिकेशन, संस्करण ८वा २०१६ पृ दृ ७६
5 जीवन वृतांत, श्री गुरु नानक देव जी स. जसवीर सिंध (राग तिलक पृ दृ ७२२)
6 गुरु नानक देव, पंडित मधुसुदन शर्मा, मनोज पब्लिकेशन, संस्करण ८वा २०१६ पृ दृ ८४
7 गुरु नानक देव, पंडित मधुसुदन शर्मा, मनोज पब्लिकेशन, संस्करण ८वा २०१६ पृ दृ ६२
8 गुरु नानक देव, पंडित मधुसुदन शर्मा, मनोज पब्लिकेशन, संस्करण ८वा २०१६ पृ दृ ८४
9 जीवन वृतांत, श्री गुरु नानक देव जी स. जसवीर सिंध (जन्म भारती)
10 मानव एकता के प्रति गुरु नानक https://brainly-in
11 जीवन वृतांत, श्री गुरु नानक देव जी स. जसवीर सिंध
12 जीवन वृतांत, श्री गुरु नानक देव जी स. जसवीर सिंध (राग सिरी पृ दृ 16)

गुरु नानकदेव और सिख–सूफ़ी का समरस आनन्द

* डॉ. अनुपमा श्रीवास्तव

* जीसस एण्ड मैरी कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय

जीवन का ताना बाना कई सुलझी अनसुलझी जिज्ञासाओं और युक्तियों के विभिन्न समीकरणों से बना है। विविध दर्शन, शास्त्र, मूल्य, आदर्श सभी प्रयासरत हैं, इसी जीवन को समझने और परिभाषित करने के लिए।

"असंख जप असंख भाउ।
असंख पूजा असंख तप ताउ।।
असंख गरंथ मुखि वेद पाठ।
असंख जोग मन रहहि उदास।।"

सिखों के पहले गुरु नानकदेवजी द्वारा रचित इस पद का आशय भी यही है कि जीवन को समझने के लिए और उसके सार तत्त्व को जानने तथा अंततः परमात्मा की प्राप्ति के लिए अनेक प्रयास किये जाते रहे हैं। गुरु नानकदेव ने इंसानियत के धरातल पर कुछ ऐसे मानदंड स्थापित किये जो उनके युग की ही नहीं अपितु आज भी उतने ही प्रासंगिक हैं। उन्होंने भक्ति, कर्म और ज्ञान के साथ ही तत्कालीन सामाजिक और राजनितिक स्थितियों का सम्यक विश्लेषण किया। उन्होंने शीलतापूर्वक और तल्लीनता से अपने शिष्यों को आध्यात्मिक जीवन निर्वाह का उपदेश दिया जिसका आधार सद्भावना, ईमानदारी और भाईचारा है। उनकी इनकी अवधारणाओं से उनके समकालीन मुस्लिम ख़ास तौर पर सूफ़ियों ने उन्हें एक सच्चा मुसलमान भी कहा। गुरु नानकदेवजी ने आध्यात्मिक ज्ञान और रहस्यवाद की खोज में लम्बी लम्बी यात्राएं कीं जिनमें मक्का और मदीना के अलावा अफगानिस्तान के विभिन्न प्रांत और बग़दाद शामिल हैं।

इसलिए इनके लगभग ६४ वर्षों के अध्ययन के आधार पर आध्यात्मिक रहस्यवादी स्थापनाओं में किसी अन्य धर्म की तुलना में इस्लामियत प्रभाव ज़्यादा दिखायी देता है। इनके ख़ास शिष्यों में मरदाना भी एक मुस्लिम–सिख ही थे जो उनके साथ हमेशा रहे। लाहौर में मियां मीर के पवित्र स्थल के एक संरक्षक के अनुसार अभी भी वहां मरदाना के शिष्य रहे हैं और अपने आप को सिख–मुस्लिम मानते हैं। गुरु नानक देवजी के कई हिन्दू और मुस्लिम शिष्यों उन्हें अपना सच्चा गुरु मानते हैं और आपस में सौहार्द की भावना के साथ आज भी उनके पवित्र स्थल पर अपने अपने ढंग से उनकी पूजा अर्चना कर के उनका आशीर्वाद ग्रहण करते हैं।

आध्यात्मिक धरातल पर सिख और सूफी लगभग एक जैसी अवधारणाओं और दर्शन को लिए हुए हैं इसलिए गुरु अर्जुन देव जी ने मियाँ मीर, जो सूफ़ियों की 'कादरी परम्परा' के एक पहुंचे हुए सूफ़ी पीर थे, को अमृतसर के सवर्ण मंदिर की नीव का पत्थर रखने के लिए आमंत्रित किया था। यह इस बात को दर्शाता है कि सिख और सूफी आपस में समानता को लिए हुए हैं। उनके आदर्श और मूल्य एक जैसे हैं और जिनका सम्बन्ध गहरी मानवीयता से जुड़ा हुआ है और उन्होंने अपने शिष्यों को हमेशा यही सीख दी। "गुरु ग्रन्थ साहेब" में 112 छंद/दोहे और 4 प्रार्थानायें ख्वाजा फरीदुद्दीन गंजशकर की हैं जो सूफ़ियों के 'चिश्ती परम्परा' के एक महत्त्वपूर्ण पीर हैं। वे 1266 ई. में पंजाब में रहे। यह सूफ़ियों और सिखों के बीच के सौहार्दपूर्ण सम्बन्ध को दर्शाता है और उनके एक दूसरे पर प्रभावों को भी बताता है जिसकी शुरुआत गुरु नानकदेवजी द्वारा हो चुकी थी।

यद्यपि सिख धर्म का 15वी सदी में उद्भव हो चुका था और सिख और सूफ़ी का अंतर केवल राजनीतिक हो कर रह गया। परन्तु यह अंतर ईश्वर के प्रतिनिधि के रूप में सिख–गुरुओं और सूफ़ियों के मार्ग में कहीं भी परिलक्षित नहीं होता है। ये दोनों ही प्रेम, सहिष्णुता और एक दूसरे की सहायता करने की सीख देते हैं।

" अलख अपार अगम अगोचर ना तिसु कालु न करमा।
जाति अजाति अजोनी संभउ ना तिसु भाउ न भरमा।।"

ईश्वर अलख, अर्पा, अगम और अगोचर है। वह काल से परे और समस्त बंधनों से निर्लिप्त है। वह न तो किसी जाति का है न धर्म का, वह न तो जन्म लेता है और उसमें कोई भाव नहीं है।

अफगानिस्तान कई महान सूफ़ियों की जन्म भूमि है उनमें से ख्वाजा मुइनुद्दीन चिश्ती का जन्म 1141 इस्वी में चिश्त में हुआ और उन्होंने अजमेर में रह कर लोगों को प्रेम और सौहार्द के लिए शिक्षा और नसीहतें दीं। इनके अभूतपूर्व योगदान के कारण अफगानिस्तान और भारत के बीच सांस्कृतिक सम्बन्ध गहरे हुए। चिश्ती परंपरा के सूफ़ियों ने सदैव गुरु नानकदेवजी के विचारों और शिक्षा से प्रेरणा लेते हुए इंसानियत के सन्देश को प्रसारित और प्रचारित किया जो "नदी की तरह उदार होने की, सूर्य की तरह स्नेह रखने की और पृथ्वी की तरह सत्कार करने की" सीख देती है। इस तरह की सूफ़ियों की शिक्षा भी गुरु नानकदेवजी की तरह ही प्रेम, अध्यात्म और भाईचारे का सन्देश देती है। इन्ही के तहत सूफ़ी संतों ने ग्रामीण प्रदेशों में खानकाओं की स्थापना की है जहाँ बिना किसी धर्म और जाति का भेद भाव किये सभी का स्वागत होता

है और ज़रुरतमंदों को भोजन के साथ आध्यात्मिक शिक्षा, मनोवैज्ञानिक सहायता और परामर्श दिया जाता है और ठहरने की व्यवस्था भी होती है जो किसी भी गुरुद्वारे की व्यवस्था से समानता रखती है। गुरुद्वारों की लंगर सेवा से आज सभी परिचित हैं।

सिख धर्म के ही समान सूफ़ी जीवन के भी निम्नलिखित सिद्धांत हैं :–

1. जो आपके लिए ज़रूरी है उन्हे कोई और पूरा नहीं कर सकता।

" रैण गवानी सोई के, दिवसु गंवाया खाइ।
हीरे जैसा जनमु है कउडी बदले जाई।।"

इस शब्द में भी अनमोल जीवन को कर्म और कर्तव्यविहीन जीवन को कौड़ियों के मूल में व्यर्थ गवां देने की बात गुरु नानक ने की है।

2. आपके कर्मो का निर्वाह स्वयं ही करना होता है।

3. मृत्यु को हर क्षण याद रखते हुए उसके लिए तैयार रहना चाहिए अर्थात मनुष्य को मृत्यु पर्यन्त सद्‌कर्म में संलग्न रहना चाहिए।

"मरनै की चिंता नही, जीवण की नही आस।
तू सरब जीआ प्रतिपालहि लेखे सास गिरास।।"

इस पद में भी गुरु नानकदेवजी मृत्यु के सम्बन्ध में कहते हैं कि मुझे न मरने की चिंता है न जीने की आशा क्योकि परमात्मा सभी जीवों का भरण–पोषण करता है और उसी के पास सभी की साँसों का हिसाब होता है इसलिए भ्रम को त्याग कर सद्‌कर्म में संलग्न रहना चाहिए।

मृत्यु को चिरंतर सत्य मानते हुए जीव को प्रतिपल अपने परिष्कार और उद्धार के लिए प्रयत्नशील रहना चाहिए। सूफ़ी आस्था भी इसी का पालन करती है। सूफ़ी कवि रूमी के अनुसार "मैं खनिज से मृत्यु को प्राप्त हुआ तो पौधा बना और जब पौधे से मृत्यु को प्राप्त हुआ तो संवेदनशील ढाँचे को पाया, पशु को मारा तो इंसान की पोशाक पहनी .....और इसमें बाद स्वर्गदूतों के साथ आकाश चढ़ गया, उसको बचाए रखने के लिए हर चीज़ का नाश ज़रुरी है, मुझे शून्य बनना है, ओ मेरी इकतारा मुझे साफ़ बता कि मुझे उस तक जाकर भी कब तक वापस आना है !" इस प्रकार ईश्वर के प्रति सूफ़ी–निष्ठा तीव्र उन्मादपूर्ण अनुभवों से पहचानी जाती है और ईश्वर से मिलने की अनुभूति की प्रक्रिया धिक्र या स्मरण की उपलब्धि या स्थिति ही ईश्वर की उपस्थिति की अनुभूति होती है।

4. हमेशा यह याद रखना चाहिए कि आपके प्रत्येक कर्म पर ईश्वर की नज़र है। इसी भाव को लिए हुए गुरु नानक जी ने भी कहा है :–

"भरमै भाहि न विझवे जे भवै दिसंतर देसु।
अंतरि मैलु न उतरे ध्रिगु जीवणु ध्रगु वेसु।।"

अनेक देशों में भ्रमण करने से उसकी जिज्ञासा शांत नहीं होती जब तक कि उसके अन्दर की मैल नहीं उतरती। वास्तव में वे यहाँ सद्‌कर्म का उपदेश देते हैं।

सिख आस्था और विश्वास भी इन्ही उद्देश्यों को लिए हुए है जैसे नाम जपना, सुमिरन करना, ईमानदार जीवन बिताना, अपने लिए हुए अच्छे परिणामों को उनके साथ बांटना जो ज़रूरतमंद हैं। जो भी करो उसी रब की आज्ञा से करो। जिस दिन से जन्म लिया उसी दिन से मृत्यु को भी स्वीकार करना और इस प्रकार निष्ठापूर्वक आध्यात्मिक मार्ग को अपनाना।

ईश्वर के प्रति सूफ़ी–निष्ठा अपने गहरे उन्मादपूर्ण अनुभवों से पहचानी जाती है जिसकी अवस्था हठयोग के कुण्डलिनी जागृत कर साधना करने जैसी होती है और ईश्वर से मिलने की अनुभूति की प्रक्रिया धिक्र या स्मरण की उपलब्धि या स्थिति ही ईश्वर की उपस्थिति की अनुभूति होती है। इसी प्रकार सिख आस्था भी ईश्वर की उपस्थिति उसके नाम सुमिरन या जपन से होती है।

'सुमिरन कर ले मेरे मना
तेरी बीती उमर हरी नाम बिना."
(गुरु नानक देवजी)

जब एक जैसे भाव वाले लोग साथ में बैठ कर प्रभु का कथन स्मरण याद करे तब उनके साथ नाम जपना और भी लाभप्रद होता है।

संगीत

किसी भी प्रकार की भक्ति में संगीत की भूमिका कोई और नही निभा सकता है क्योंकि इसी में वह अपूर्व शक्ति होती है जिसके माध्यम से मनुष्य का ईश्वार से सीधा सम्बन्ध स्थापित होता है। सिख आस्था और सूफी भक्ति में संगीत और कविता का सुन्दर समन्वय दिखाई देता है। सिख मत में इसे 'गुरमत संगीत' (सिखों का पवित्र संगीत) और सूफी मत में सुन्दर कव्वालियों के रूप सुना जा सकता है। दोनों ही मार्गों में इसे साधना के महत्त्वपूर्ण अभ्यास के तौर पर परमात्मा से मिलन के साधन के रूप में अपनाया गया है।

सिखों के पवित्र ग्रन्थ श्री गुरु ग्रन्थ साहिब जी में सभी पद किसी न किसी शास्त्रीय संगीत के राग पर आधारित हैं। इसमें 31 रागों का प्रयोग हुआ है और गुरु नानक देवजी की वाणी में 19 रागों का प्रयोग हुआ है, जैसे राग श्री, गूजरी, बिहाग, भैरव, विभास, बिलावल, रामकली, तिलंग और सूहा आदि। शास्त्रीय रागों में पदों को निबद्ध कर गायन की पद्धति मध्यकाल के सभी संतों ,भक्तों और सूफ़ियों की रही है क्योकि इसके माध्यम से किसी विशेष भाव की प्रभावशीलता बहुत ही गहन हो जाती है। इसलिए गुरु नानकदेवजी के अधिकतर पद भी किसी विचार या भाव की अभिव्यक्ति के लिए शास्त्रीय रागों में निबद्ध हुए हैं। वे चिंतनशील और मननशील थे और अपनी वाणियों के प्रति अत्यंत सजग थे। राग रामकली में निबद्ध 'ओअंकारु' और 'सिद्ध गोसटि' में गुर नानकदेवजी के दार्शनिक विचारों का सुन्दर निदर्शन हुआ है। इसी प्रकार राग मारू में इनकी एक विशेष वाणी 'सोलहे' के नाम से प्रसिद्ध है।

जब परमात्मा से मिलन होता है तब आत्म मंडल का संगीत बिना बजाए ही बजता रहता है। वह केवल आंतरिक एकाग्रता में अनुभव किया जाता है, उसकी गति अनाहत है और वह रुण झुन की ध्वनि से बज रहा है। गुरु नानक कहते हैं , मेरा मन मेरे प्यारे राम के साथ अनुरक्त हो गया है और वीतरागी मन अब स्थिर होकर शून्यमंडल में स्थित हो गया है।

"अनहदो अनहद वाजे रुण झुन कारे राम।
मेरा मनो मनु राता लाल पिआरे राम।।"

और यही अनहद नाद सच्चे साधक को बिना सुने ही सुनायी देने लगते हैं जिसकी उत्पत्ति शास्त्रीय रागों के द्वारा होती है , क्योंकि उसमें गुरु के विचार और उपदेश होते हैं जिससे अहम का नाश होता है

"अनहद सबद सुहावणे पाइए गुर वीचारि।
अनहद वाणी पाइए तह हउमै होई विनासु।।"

परमात्मा स्वयं ही रसिक है। वह स्वयं ही रस है और उसे भोगने वाला भी है।

"आपे रसीआ आपि रसु आपे रावणहारु।
आपै होवै चोलड़ा आपे भतारु।।"

इसी प्रकार सूफ़ियों की आस्था भी संगीत और कविता को ईश्वर स्मरण के लिए उपयोग करती है। इसे धिक्र और समा कहा जाता है। "धिक्र और समा" मोहम्मद पैगम्बर के शब्दों पर आधारित होता है जिसमें सभी इकट्ठा होकर ईश्वर का आह्वान करते हैं। 'धिक्र' में सामूहिक रूप से एक पदबंध, जो ईश्वर के नाम पर होता है, की लयपूर्ण पुनरावृत्ति की जाती है। 8 वीं शती में माला के द्वारा नाम लेने का प्रचलन शुरू हुआ जो बाद में ईसाइयों के चर्च में क्रूसेड्स के माध्यम से आया।

सबसे पहली बार 'समा' का प्रचलन 9 वीं शती में बग़दाद में शुरू हुआ। यह भी एक सामूहिक अभ्यास होता है जिसे संगीत के कार्यक्रम, काव्य पाठ और गायन और नृत्य के द्वारा आयोजित किया जाता है। इसमें भाग लेने वाले प्रतिभागी एक मिस्टिकल (रहस्यमय) अनुभव को प्राप्त करते हैं जहां उन्हें स्वयं ईश्वर की आवाज़ में संगीत सुनायी देने लगता है। यह दिलों का सीधे ईश्वर से सम्प्रेषण कराता है और उन सभी विचारों और भावों के आवरण को हटा देता है जिसने इंसान की अंतर्दृष्टि को ढका हुआ है।

रूमी उर्फ़ जलालुद्दीन बल्खी (1207—1273) एक दरवेश तपस्वी शम्स से मित्रवत थे। वे एक बहुत ही उम्दा कवि थे जिनकी कविताओं में गहरी धार्मिक अंतर्दृष्टि समाहित है। उन्होंने ही परमात्मा से जुड़ने के लिए संगीत और कविता के साथ चक्करदार नृत्य निर्मित किया जो उनके अनुयायियों के लिए महत्त्वपूर्ण साधन बना। उसी प्रकार सिखों में भी नाम स्मरण के साथ श्रद्धालु वृताकार में घूमते हैं जो उन्हें आतंरिक आनन्द और ईश्वर के साथ जोड़ देता है। इस प्रकार सिख और सूफ़ी दोनों ही निरंतर ध्यान का अभ्यास करते हुए लगातार दिव्य शक्ति के नाम का स्मरण पवित्र गीतों के माध्यम से बार बार करते हुए अंततः परमात्मा को प्राप्त करते हैं।

सुमिरन और सादगी

सूफ़ी शब्द का अर्थ ऊन होता है जो ऊनी वस्त्रों से सम्बंधित होता है। इसका उद्गम 'सफ़ा' से हुआ है जिसका फारसी में अर्थ 'पवित्र' होता है। इस प्रकार सूफ़ी का मतलब सामान्य और सस्ते ऊनी वस्त्र हुआ जिसका अर्थ हुआ जीवन की सादगी और पवित्रता। गुरु नानकदेवजी ने भी सिख आस्था का प्रवर्तन करते हुए बिलकुल ऐसे ही दर्शन को प्रस्तुत किया। सिख शब्द का उद्गम सिखिया (शिष्य) से हुआ जिसका अर्थ विनम्र वि।ार्थी या साधक होता है। उनका भी यही सरल सन्देश था जिसमें परमात्मा का नाम स्मरण, ईमानदार और सादा जीवन और अपनी कमाई से दूसरों की सहायता बिना किसी लालच या पहचान के करना शामिल है। अपनी अनेक यात्राओं के दौरान उन्होंने विभिन्न धार्मिक आस्थाओं को समझा और उन सभी उत्तम अभ्यासों को एक साथ सिख आस्था के रूप में प्रस्तुत किया। सिख मत और सूफ़ी मत दोनों ही सादगी और बराबरी पर बल देते हुए मनुष्य को भौतिक जगत से आध्यात्मिक क्षेत्र में प्रवेश करवाते हैं। सूफ़ी साधक उस एक परम तत्व की स्थिरता और श्रेष्ठता को पहचानते हुए उसी की छवि सभी में देखता है और सिख मत का विश्वास भी यही है सूफ़ियों का दर्शन सत्य पर आधारित है जो उत्कृष्ट है और सिख आस्था भी साधना और दिव्य नाम स्मरण के माध्यम से आंतरिक सत्य से जुड़ने पर आधारित है। इस सत्य को विभिन्न नाम स्मरण से पाप्त किया जा सकता है जो गुरु के शबद के रूप में गाये जाते हैं। इस प्रकार सिख आस्था का मूल मन्त्र उस मार्ग को बताता है जिसके माध्यम से परम तत्व को पाया जा सकता है। यही वह तत्व है जो सदैव वि।मान है और जिसके लिए मनुष्य अपना स्व प्रेम और भक्ति के माध्यम से अर्पित कर सकता है। ईस्वर की सत्ता उसने अपने लिए ऐसे पंथ को बनाया है जो अविभाज्य, पूर्ण, कालातीत और अनिर्मित है।

1 ओंकारु सतनाम करता पुरख निरभौ नर्वै
अकाल मूरति अजूनी सैभं गुर प्रसादि

यह वाणी सिखों का मूलमंत्र या बीजमंत्र है। इसी में सिख गुरुओं के समस्त आध्यात्मिक सिद्धांत निहित हैं। यह मूलमन्त्र पत्येक राग के प्राम्भ में प्रयुक्त होता है। इसका अर्थ है ," वह एक है , ओंकार स्वरूप है (शब्द या वाणी) है , वह सत्य नाम वाला है , करतार है , आदि पुरुष है , भय से रहित तथा वैर से रहित है, वह तीनों कालों में रहित रूप वाला है। वह योनि से परे और स्वयम्भू है। " जपु "

आदि सचु जुगादि सच।।
है भी सचु नानक होसी भी सचु।।

यह जपु जी का मंगलाचरण रूप है। इसका अर्थ है कि वह आदि में, सत्य रूप में स्थित था, युगों के प्रारम्भ में वही सत्य वि।मान था , अब भी वही सत्य वि।मान है और आगे भी यही सत्य वि।मान रहेगा।

" सोचे सोच न होवई जे सोची लख वार।
चुपे चुप न होवई जे लाइ रहा लिवतार।।
भुखिया भुख न उतरी जे बंना पुरीआ भार।
सहस सिआणपा लख़ होहिं त इक न चले नाली।।
किव सचिआरा होईऐ किव कूड़े तूटे पालि।
हुकमि रजाई चलणा नानक लिखिया नालि।।"

और उपर्युक्त गुणों वाला परमात्मा गुरु की कृपा से प्राप्त होता है।

" हम घर साजन आए। साचे मेलि मिलाए।।
सहजि मिलाए हरि मन भाए पञ्च मिले सुखु पाइआ।
साई वसतु परापति होई जिसु सेती मनु लाइआ।।"

इस पद का अर्थ है , हमारे घर में हमारे प्रिय आ गएँ हैं। सच्चे हरि ने उनसे मिलाप करा दिया और उन्होंने मुझे सहजावस्था से मिला दिया है जिससे मन को हरि अच्छा लगाने लगा है। संत जनों के मिलने से बहुत सुख की प्राप्ति हुई है। जिस वस्तु से मन लगाया था , वह वस्तु प्राप्त हो गयी है और प्रभु से शाश्वत मिलन हो गया है।

इस प्रकार गुरु ग्रन्थ साहेब का प्रारम्भ परमात्मा के नाम स्मरण और उसकी महिमा के गायन से होता है।

यही परम और निरंतर स्थिर तत्व का विश्वास ही विविध धार्मिक भक्ति का आधार है। इस्लाम में अल्लाह तो सिख आस्था में एक ओंकार के रूप में सभी में वि।मान है। गुरु नानक जी के सन्देश में " सत्य ऊंचा है। पर उससे भी ऊंचा है सत्य का पालन करते हुए जीना। उन्होंने हमेशा इंसान को अहंकार से दूर रहने को कहा।

" तृसना माईआ मोहणी सूत बंधप धर नारि।
धनि जोवन जगु ठगिआ लवि लोभी अहंकारी।।"

तरह तरह के मोह में सारा जगत ठगा जा रहा है। कभी संबंधों में तो कभी अपने ही किये कर्मों पर इतराते हुए वह वास्तव में अहंकार के मोहपाश में ही जकड़ा रहता है। इसलिए सत्य को पहचानते हुए हुए उसका पालन करना सत्य से भी महान होता है।

"जनमि मरे त्रैगुण हित्कारु। चारे वेद कथहि आकारु।।
तीनी अवस्था कहहीं वखिआनु। तुरीआवस्था सतिगुर ते हरि जानु।।"

जो तीन गुणों (जिसका वर्णन चारों वेद करतें हैं) से प्रेम करने वाला होता है वह सदा ही जन्म और मृत्यु के चक्र में बंधा रहता है। जिन्होंने परमात्मा को पाया है उन्हें गुरु की सहायता प्राप्त हुई क्योंकि गुरु ने उस परम तत्व को पहचान कर फिर उसे शिष्य को दिखाया। नानक जी कहते हैं कि जिसका मन हरि चरणों में अनुरक्त है उसकी सारी निराशाएं शांत होती हैं और उसे सारे सुख प्राप्त होते हैं।

किसी भी धर्म का सार विनम्रता, सेवा और सादगी है। गुरु नानकदेवजी से पूर्व इस्लाम, ईसाई ,हिन्दू, कन्फ्यूशियस और यहूदी आदि की आस्थायें स्थापित हो चुकी थीं इसलिए सत्य और अध्यात्म के ज्ञान की खोज करते हुए उनके पास विश्लेषण करने के लिए पर्याप्त सामग्री थी। इन सभी के सार को ग्रहण करके उन्हें जीवन के लिए व्यवहारिक रूप प्रदान करते हुए हुए सिख धर्म का प्रवर्तन किया और तब से यह आस्था अस्तित्व में आई। "आंतरिक अनुभूतियों की एकता के सम्बन्ध में 'मिस अंडरहिल' का यह कथन अत्यंत ही अर्थवान है कि कोई भी व्यक्ति सच्चाई से यह बात नही कह सकता है कि ब्राह्मण, सूफ़ी और ईसाई रहस्यवादियों में कोई महान अंतर है।" इसलिए गुरु नानकदेवजी की के उपदेश में वही अनुभूति है जो हिन्दुओं के उपनिषद, ब्रह्म सूत्र और गीता में, मुसलामानों के कुरान और ईसाइयों के बाइबिल में मिलती है।

इसके मूल मन्त्र का अनुवाद नहीं किया जा सकता क्योंकि उसके मूल भाव का अनुवाद कभी नहीं हो सकता। मूल मंत्र ईश्वर के एक होने की बात करता है। वह शाश्वत एवं परम सत्य है, उसकी भूमिका संसार के सर्जक और पालनहार के रूप में उपस्थित हुई है। वह समय, जन्म. और मृत्यु से परे है। परमात्मा के विषय में उनके विचार उपनिषदों से भी समानता रखते हैं। उसकी इन विशेषताओं को इंसान गुरु के के माध्यम से समझता है जिसका अर्थ है खुद अपने भीतर से। क्योंकि गुरु नानकदेव ने हमेशा खुद को परमात्मा के संदर्भ में गुरु नाम से सम्बोधित किया नाम जपना, वंड के खाओ और कीरत–करनी सिख धर्म के महत्वपूर्ण स्तम्भ हैं। धर्म के विषय में गुरु नानकदेवजी का कथन इस प्रकार है – "मेरे लिए यह महत्त्वपूर्ण नहीं है कि किस स्रोत से प्रेरणा प्राप्त होती है।उस व्यक्ति के लिए परमात्मा से मेरी प्रार्थना यही होती है कि उसे अपनी बाहों में ले ले अगर वह आपसे मिलने को प्रेरित है।" कोई किस प्रकार से प्रेरणा प्राप्त कर रहा है यह माहत्त्व नहीं रखता क्योकि उसे जाना तो उसी एक ईश्वर के पास है। इसलिए हम सभी को सभी के प्रेरक स्रोतों का समादर करते हुए स्वीकार भी करना चाहिए जो निश्चित रूप में अनेक हैं।

साथ ही उन्होंने परमात्मा–प्राप्ति को जीवन का परम लक्ष्य और पुरुषार्थ माना है। उनके द्वारा निरुपित कर्म, ज्ञान और योग को भक्ति के अंतर्गत आते हैं जिसे वे 'राजयोग' मानते हैं। व्यवहारिक और सैद्धांतिक दोनों ही दृष्टियों से गुरु नानकदेवजी की वाणी का समाज और जीवन में महत्त्वपूर्ण स्थान है।

मियाँ मीर लाहौर के एक प्रसिद्ध सूफी संत थे और सिखों के पाचवें गुरु अर्जन देवजी के अभिन्न मित्र थे। गुरुजी ने उन्हें हरमंदिर साहेब की नीवं का पत्थर रखने के लिए आमंत्रित किया था। आज भी सिख मियाँ मीर का आदर करते हैं। वह ऐसा संत था जिसके ह्रदय में किसी भी धर्म के लिए कोई पूर्वाग्रह नहीं था और वह गुरु नानकदेवजी की शिक्षा से बहुत प्रेम रखता था। वह अक्सर गुरु अर्जन देवजी से भेंट करने को अमृतसर की यात्राएं किया करता था वैसे ही जब भी गुरु अर्जुन देवजी लाहौर अपने पिता गुरु रामदास जी के जन्मस्थल अपने रिश्तेदारों से मिलने जाते थे तो संत मियां मीर से अवश्य मिलते थे। खुदा के इन दो बन्दों की मित्रता बहुत ही गहरी थी जबकि मियां मीर की उम्र गुरु अर्जन देवजी से 13 वर्ष अधिक थी। मियाँ मीर को गुरु नानकदेवजी के अधिकतर पद ह्रदय से स्मरण थे। दोनों एक दूसरे का बहुत आदर और सत्कार करते थे। हरमंदिर साहेब का उद्देश्य जीवन में प्रेम और सहिष्णुता को भरना है और इसी को लेकर मियां मीर और गुरु अर्जन देवजी ने यहाँ संकल्प लिया।

सूफी विश्वास अन्य रहस्यवादों की तरह ही ऐसे अनुभव पर आधारित है जो सबके अन्दर एक का ही निवास मानता है। सूफी आस्था का मुख्य आयाम आध्यात्मिक चेतना है। सूफियों के अनुसार सभी अस्तित्व ईश्वर से उत्पन्न हुए हैं और वही एक मात्र सत्य है। यह संसार उसी सम्पूर्ण ईश्वर की छाया है और उसी का सृजन है। जिसे उसकी पहचान हो जाती है उसके लिए सांसारिक चीज़े मात्र पर्दा रह जाती हैं जिसने उसकी आत्मा की पवित्रता को ढका हुआ है। इसके लिए इसी संसार में ऐसे प्रयास करने होते हैं जिससे ईश्वर तक पहुंचा जा सके। मनुष्य एक आईने की तरह है जिसे साफ करने पर ईश्वर की छवि दिखाई पड़ती है। उनके लिए ईश्वर प्रेम है और वह रास्ता जिसमें प्रेम के माद्धयम से उसका अनुभव किया जा सके । "अगर आप आज़ाद होना चाहते हैं तो प्रेम के कैदी बन जाएँ।" इसी प्रकार सिख आस्था भी यही शिक्षा देती है कि केवल प्रेम एक ऐसा तत्त्व है जिसके माध्यम से ईश्वर को प्राप्त किया जा सकता है। "सांच कहो सुन लहो सभाई , जिन प्रेम की ओ तिन ही प्रभ पाएओ।"

सिख और सूफी दोनों ही आस्थाओं की तीन विशेषताएं हैं :–विनम्रता (खुशु),दान–पुण्य (कारामात), सत्यवादिता (सिदक)। गुरु नानक देव जी के समय में उनके द्वारा स्थापित विचार विभिन्न जातियों और धर्मों तथा विभिन्न आर्थिक और सामाजिक परिवेशों के मध्य प्रेम और भाईचारे का सन्देश प्रसारित करते हैं। उनके समय में सिख और सूफी मत सर्वाधिक प्रचलित थे और उनमें पर्याप्त समानताएं भी रहीं।

इस प्रकार सिख और सूफी दोनों ही एक ही परमात्मा और ध्यान के द्वारा उसके गहरे स्मरण में विश्वास रखते हैं। दोनों ही यह समझते हैं कि हम सभी उसी के द्वारा सृजित हैं और वह हमारे अस्तित्व में हमारे साथ ही रहता है। दोनों ही आस्थाओं में विनम्रता, दान–पुण्य, करुणा और सत्यवादिता महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

सन्दर्भ सूची

1. www.sikhworld.info
2- https://www-sikhnet-com@news/sufi/and/sikh
3- FOR PEACEAND HARMONY IN SOUTHASIA] SOME LESSONS FROM SIKHISMAND SUFISM by M-ASHRAF
4- NANAK VANI : DR JAIRAM MISHRA

गुरु नानक देव : स्त्री विमर्श

*डॉ. भूपिन्दर कौर

* श्री गुरु नानक देव खालसा कॉलेज,, दिल्ली विश्वविद्यालय

गुरु नानक देव जी का जन्म 1469 तलवंडी में हुआ। इस वर्ष हम उनका 550 वाँ प्रकाश–पर्व मना रहे हैं। उपेक्षित, पीडित, दलित जनता की आवाज को मुखर करने वाले, शास्त्रार्थ से अपनी बातों को तर्क देकर समझाने वाले, कर्मकांड का खंडन करने वाले, प्रभू भक्ति, माया से मुक्ति और सबसे महत्वपूर्ण कार्य स्त्रियों को समाज में सम्मानित स्थान देने वाले ऐसे गुरु जिन्होंने समाज में अपनें क्रांतिकारी विचारों से नयी जान फूँक दी।

गुरु नानक देव जी ने अपना पूरा जीवन जातिवाद को खत्म करने और महिलाओं को उनका सम्मान दिलाने के लिए हर संभव प्रयास किया। जो लोग आज भी महिलाओं पर अत्याचार कर रहे है वे कुछ समझने की कोशिश करें और सैंकडों सालों से चलती आ रही जुल्म की प्रथा को बंद कर, स्त्री के महत्व को समझें और सुखी जीवन जीयें।

"महिलाओं की भूमिका सिख धर्मग्रंथों में उल्लिखित है, जिसमें कहा गया है कि सिख महिलाओं को सिख पुरुषों के बराबर माना जाता है। (उनके नामों में भी समानता होती है पुरुष सिंह हैं तो स्त्रियाँ कौर अर्थात राजकुमारियाँ हैं।) उन्हें धार्मिक मंडलियों का नेतृत्व करने, अखण्ड पाठ करने, कीर्तन करने और सभी धार्मिक, सांस्कृतिक, सामाजिक और धर्मनिरपेक्ष गतिविधियों में भाग लेने की अनुमति है। सिख धर्म में पुरुषों और महिलाओं को एक ही सिक्के के दो पहलू माना जाता है। गुरु नानक देव जी ने 1499 में कहा था कि यह वो महिलाएं हैं जो पुरुष के कंधे से कंधा मिलाकर चलती हैं और हमें इन महिलाओं को शापित और निंदित नहीं मानना चाहिए, क्योंकि महिलाएं जन्मजात नेता और शासक होती हैं।"[1] लेकिन उसे ही पुरुष की तुलना में वह सम्मान हासिल नहीं होता, जिसकी वह हकदार है। इसका मूलमंत्र गुरुजी ने कई वर्ष पूर्व समझाया था। उन्होंने कहा है –

भंडि जमीऐ भंडि निंमीऐ भंडि मंगणु वीआहु।।
भंडहु होवै दोसती भंडहु चलै राहु।
भंडु मुआ भंडु भालीऐ भंडि होवै बंधानु
सो किउ मंदा आखीऐ जितु जमहि राजान।
भंडहु ही भंडु ऊपजै भंडै बाझु न कोइ।
नानक भंडै बाहरा एको सचा सोइ।।[2]

'भंडि' अर्थात स्त्री। पुरुष स्त्री से पैदा होता है, स्त्री से वह सगाई, विवाह करता है। स्त्री उसकी दोस्त बन जाती है, स्त्री के माध्यम से, भविष्य की पीढ़ियां आती हैं। जब उसकी स्त्री मर जाती है, तो वह दूसरी स्त्री की तलाश करता है। ऐसे में स्त्री को बुरा क्यों कहें? उससे राजा पैदा होते हैं। स्त्री से, स्त्री पैदा होती है। स्त्री के बिना कोई भी नहीं होगा। उसके बिना पुरुष की गृहस्थी और उसका जीवन अधूरा है। एक वह परमत्मा ही है जो इससे बाहर है। सिख पंथ निर्गुण मार्गी है इसके अनुसार परमात्मा अकाल मूरति है न तो किसी स्त्री से उसका जन्म हुआ है, न उसकी मृत्यु होती है।

"सिख धर्म में गृहस्थ जीवन को, संपूर्ण जीवन की विशेषता और महानता प्रदान की जाती है। गृहस्थ जीवन सभी के लिए आवश्यक है। गृहस्थ जीवन की युक्ति में ही मुक्ति की भावना एक दूसरे को जोड़ कर, एक दूसरे के पूरक स्थापित करके ही गृहस्थ जीवन को सही अवस्था में जिया जा सकता है।"[3]

स्त्री के कारण ही सामाजिक, सांसारिक सभ्यता चल रही है। वही अपने परिवार में बच्चों को संस्कार देती है। पुरूष मकान खरीदता है स्त्री ही है, जो उसे घर बनाती है। गृहस्थ जीवन की नींव है नारी। गुरु नानक देव जी नारी को सम्मानित मानते थे। उन्होंने कभी भी उसका तिरस्कार नहीं किया।

"एक सुस्थिर, सफल और प्रतिष्ठित गृहस्थ जीवन को एक वरदान मानते हैं। कुछ लोग अपनी आंतरिक दुर्बलता और दायित्वबोध की कमी के कारण, जीवन के संघर्षों का सामना न कर सकने के कारण पलायनवाली बन जाते हैं। अपनी इस कमजोरी को वे सन्यास या वैराग्य का मुखौटा पहनाकर सुर्खरू होने का प्रयत्न करते हैं। गुरु जी ने हाथ में कमंडल ले, शरीर पर चिथडों का चोला धारण कर, गली–गली में डोलते रहने वाले ऐसे सन्यासियों को फटकारा है। वह कहते हैं ऐसे लोगों में तृष्णा की आँधी तो निरंतर चलती रहती है। अपनी स्त्री का परित्याग कर प्रवास के लिए निकले ये वैरागी कभी भी काम–भाव से मुक्त नहीं हो पाते और परायी स्त्रियों का पीछा करते रहते हैं।"[4]

गुरु नानक देव जी का कहना है कि मनुष्य को अपनी ब्याहता स्त्री के प्रति सच्चा अनुराग पैदा कर अपने जीवन को सफल बनाना चाहिए। इससे कामातुरता, विषयांधता आदि विकार समाप्त होते हैं और समाज की नैतिकता सुरक्षित रहती है।

परमात्मा की ओर उन्मुख रहने वाले जीवात्मा को नानक बाणी में उस सुहागिन के समान माना गया है जो पति परमात्मा के लिए पूरी तरह समर्पित रहती है।

अपने कर्तव्य कर्मों का निर्वाह करती हुई भी प्रियतम के प्रति अपनी एकनिष्ठ भक्ति में कोई व्यवघात पडने नहीं देती है।

कोई भी व्यक्ति गृहस्थ धर्म निभाते हुए अध्यात्म के रास्ते पर चलता है तो अधिक सफल होता है। परिवार में रहते हुए भी उससे उदासीन रहना जरूरी है। जो घर–बार छोड़कर साधु सन्यासी बन जाते हैं, उन्हें अपनी जरूरतें पूरी करने के लिए गृहस्थ लोगों पर ही आश्रित रहना पड़ता है। उन्हीं से मांग कर खाते हैं। इससे अच्छा तो यही होता कि घर में रहकर प्रभु प्राप्ति के रास्ते पर बढें।

गुरु नानक देवजी का कहना है कि हमें अपना मन ईश्वर में और हाथ सांसारिक कर्तव्य की पूर्ति में लगाने चाहिए। उनके अनुसार आदर्श व्यक्ति वही है, जिसमें ब्राह्मणों की सी आध्यात्मिकता, क्षत्रियों का शौर्य, वैश्य की व्यवहार कुशलता एवं शूद्रों का सेवा भाव एकसाथ समाहित हो।

गुरु नानक देव जी की वाणी में सुचज्जी और कुचज्जी स्त्री के बारे में बताया गया है। वही स्त्री सुचज्जी है जो अपने गुणों का विकास कर अपने घर परिवार का पालन पोषण व्यवस्थित ढंग से कर आर्थिक स्थिति भी सुधार देती है। जिससे स्वस्थ परंपराओं का विकास होता है।

कुचज्जी स्त्रियों के हाल पर वे बार–बार तरस खाते हैं और उसे गुणवान बनने की प्रेरणा देते हुए गृहलक्ष्मी के पद पर पहुंचाना चाहते हैं। इसमें भी वे उसकी उपेक्षा या तिरस्कार नहीं कर रहे हैं बल्कि उस पर दया दिखाकर, संभलने का, समझदारी का उपदेश देते हैं।

नारी का स्वभाव उसके व्यक्तित्व का महत्वपूर्ण हिस्सा होता है। नारी सौम्य, मृदु, विनम्र, सेवापरायण हो तो घर गृहस्थी, पति सभी को जोड़कर गृहस्वामिनी बन जाती है। अपने आचार–व्यवहार तथा सद्गुणों से वो अपने पति को गृहस्थी के साथ जोड़े रखती है और इस प्रकार व्यवहारिक रूप में गृहस्वामिनी का पद प्राप्त करती है। पति उसकी जरूरत महसूस करता है और उसे अंगीकार किए रहने की उमंग से भरा रहता है। स्त्री के सौजन्य से प्रेरित होकर पुरुष गृहस्थी के दायित्वों को पूर्ण मनोयोग से निभाने लगता है। पतिव्रता स्त्रियां इससे भी आगे बढ़ती हैं। वे पति का सद्भाव प्राप्त करने के लिए न केवल उसका गुणगान करती है बल्कि घर से बाहर भी उसकी प्रशंसा करती है। यह स्त्रियां पति द्वारा दिए गए मूल्यवान आभूषणों, उपयोगी पदार्थों और सुविधाओं को प्राप्त करके उन्हीं में रम नहीं जाती बल्कि उन्हें प्रेम का प्रतीक मानकर अपने कर्तव्य–कर्मों में लगी रहती हैं। वे पति के ह्रदय में स्थान पाने का प्रयत्न करती है।"[5] समर्पण नारी का सबसे बड़ा आभूषण है। इसी भावना से कार्य करती है तो सभी प्रकार के सुख प्राप्त करती है।

गुरु नानक देव जी आत्मा को स्त्री रूप में चित्रित करते हैं। जो उनके नारी संबंधी दृष्टिकोण का परिचय देते हैं। अपनी बाणी को भी उसी क्रम में चलाते गये। महला अर्थात नारी ।। महला 1।। इसी प्रकार गुरु नानक देव जी की बाणी के साथ आता है। उनके बाद सभी गुरुओं ने इसी प्रथा का पालन करते हुए आत्मा को नारी रूप माना और अपनी बाणी में भी उसी रूप को अपनाया। दूसरे गुरु के साथ ।। महला 2।। तीसरे गुरु के साथ ।। महला 3।। इस प्रकार क्रमानुसार सभी गुरुओंने इसका पालन किया। गुरु स्वयं को नारी रूप में और परमात्मा पति रूप में देखते है। उसे महानतम मानते हैं। उठते, बैठते, सोते, जागते उसी का ध्यान करते हैं। उस प्रभु की सत्ता के आगे स्वयं को अत्यंत छोटा मानते हैं। अपने प्रिय के उपकारों के प्रति वे सदा कृतज्ञता महसूस करते हैं। अपनी एकनिष्ठता में किसी भी प्रकार की कमी नहीं आने देती है।

कुछ स्त्रियाँ ऐसी होती हैं, जो पति की कमाई से मतलब रखती हैं। वह जो पैसा लाकर दे उसके सुख साधनों में डूब जाती है। वह यह नहीं देखती कि पति कहाँ से और किस तरीके से पैसा कमा कर ला रहा है। अगर वह गलत रास्ते से पैसा ला रहा है, तब भी वे उससे कुछ नहीं कहती, क्योंकि उनका स्वार्थ उनके विवेक को नष्ट कर चुका होता है। लोभजन्य क्षुद्रता उनके दृष्टिकोण और सोच को बहुत निम्न स्तर तक ले जाती है।" 6

गृहस्थ धर्म में स्त्री का योगदान सबसे अधिक होता है। धर्म–कर्म का अधिष्ठान भी वही करती है इसीलिए धर्मपत्नी कहलाती है। उत्तम नारी वही है जो प्रियतम को ही अपनी सबसे बड़ी पूंजी मानती है और उसका मार्गदर्शन करना स्त्री का काम होता है।

सुंदर स्त्री अपने सौंदर्य पर ही मोहित रहती है और पुरुष में कमियाँ निकालती रहती है। इसी कारण दोनों में तादातम्य स्थापित नहीं हो पाता। स्त्रियों को अपने गुणों पर भरोसा कर करना चाहिए। जो प्रेम से ही प्राप्त होता है।

'बारह–माह' इस बाणी में गुरु नानक देव जी ने दांपत्य संबंधों का बहुत ही सुंदर चित्र खींचा है। इन पदों में नारी प्रेम से संबंधित अलौकिक उदाहरण द्वारा आत्मा और परमात्मा के अलौकिक प्रेम का चित्र है।

भारतीय समाज की दुर्दशा को देखकर गुरु नानक देव जी द्रवित थे। वे कहते हैं कि स्त्री का व्यक्तित्व केवल कामवासना से उत्तेजक कामिनी का नहीं है। जो लोग उसी में ही रत रहते हैं वह अपना तथा समाज का सर्वनाश कर डालते हैं। गुरु नानक देव जी नारी को केवल उसी अवस्था में बंधन मानते हैं जिसमें वह कामी पुरुषों का आकर्षण केंद्र बनती है जब उसका नारीत्व सिमटकर मात्र शरीर रह जाता है। तब वह कामोपभोग संबंधी एक उपकरण मात्र बन कर रह जाती है। मनमुख व्यक्ति नारियों की संगति प्राप्त कर खिल जाते हैं। वह यह नहीं सोचते कि विषयों का सुख स्थाई नहीं होता। ऐसे लोगों की मुक्ति नहीं मिलती।

किसी भी वस्तु या व्यक्ति के साथ हम किस तरह पेश आते है यह सर्वथा हम पर निर्भर होता है। जिस प्रकार साँप के जहर से व्यक्ति की मृत्यु हो सकती है और उसी जहर से दवाइयाँ भी बनती हैं। वैसे ही आज के समय में मोबाइल फोन हमारी जरूरतों के लिए है। जीवन को आसान बनाने के लिए है लेकिन हम हर समय उसी में खोए रहे तो अपनी जिंदगी भी बर्बाद कर सकते हैं। उसी प्रकार जो स्त्री घर और जीवन को स्वर्ग बना सकती है उसके गुणों, उसके स्वभाव, और एकनिष्ठता की तरफ ध्यान दें। न कि उसके कामिनी रूप में खोकर अपना परमार्थ बिगाड लें। संसार में गृहस्थ जीवन में रहकर भी हम उदासीन रह सकते हैं और उस परमात्मा

को पा सकते हैं । यह सर्वथा हम पर निर्भर है कि ह्म किस बात पर अधिक ध्यान देते हैं । "आज हम कहते हैं कि हमारे बच्चे हमारा कहना नहीं मानते हम अपने गुरु का कहना कितना मानते हैं।"[7]

कहा जाता है कि जिस प्रकार भगवान हमें इस सृष्टी में भेजता है, पालन–पोषण, रक्षा करता है। वही काम माँ करती है। इसीलिए माँ को भगवान का रूप दिया जाता है।

"सिख नैतिक मूल्यों में स्त्री के प्रति प्रगतिशील, उदारवादी तथा आदरणीय दृष्टिकोण अपनाया गया है। गुरुबाणी में स्त्री की दशा को क्रांतिकारी सुधारों द्वारा उँचा उठाने के लिए ठोस आधार प्रदान किया गया है। गुरु साहिबान ने पर्दा प्रथा, सतीप्रथा, कन्या–वध, स्त्री को धार्मिक रस्मों से दूर रखने के घिनौनें सिध्दांत, स्त्री पर जुल्म ढाहने की अमानवीय प्रवृत्ति और स्त्री को केवल मनोरंजन का साधन बानाने के सामंतवादी दृष्टिकोण को नकार दिया। अपने सिखों को इन कुकर्मों से बचने के लिए आदेश दिए। सामाजिक–आर्थिक विकास में सिख नैतिक आचार का यह ऐतिहासिक और यथार्थ योगदान है।"[8]

उपर्युक्त विवेचन का यही सार है कि गुरु नानक देव जी ने नारी को मानव समाज का महत्वपूर्ण हिस्सा माना है। जिसमें गुणवन्ती, गृहस्वामिनी नारी का रूप श्रेष्ठ मानते हैं। जिसे किसी भी श्रृन्गार की आवशयकता नहीं है और जो पुरुष को सन्मार्ग पर चलाने की क्षमता रखती है।

संदर्भ–

1. http://sarbatsewa.gurdwaar.com/
2. गुरु ग्रन्थ साहिब जी पृ. 473, महिला 1
3. प्रो. जोगिंदर सिंघः खालसे दी जोत ते जुगत, पृ. 132
4. डॉ. सत्यपाल शर्माः भारतीय जनजागरण के महानायक गुरुनानक देव। पृ. 209
5. वही पृ. 211
6. वही पृ. 214
7. डॉ. बेअंत कौर– (सिख वर्ल्ड) स्त्रियोंके अधिकार और जिम्मेदारियाँ।
8. प्रो. बलविंदर पाल सिंहः सिख विचार धारा और मूल्य, पृ. 166

गुरु नानक का व्यक्तित्व और उनकी काव्यकला

*डॉ. मो. इसराइल

* कमला नेहरू कॉलेज,, दिल्ली विश्वविद्यालय

हिंदी साहित्य में भक्तिकाल एक आंदोलन के रूप में उभरकर आया, जिसमें संतों की भूमिका अनिर्वचनीय है। संतों ने उत्तर भारत में जाति–पाति का विरोध करते हुए आडंबरों का विरोध करते हुए जन–जागरण का भक्ति के माध्यम से जो कार्य किया, उसने ही भक्तिकाल को भक्ति से अलग शक्ति के काव्य का एक युग बनाया। भारतीय मध्ययुगीन धर्म साधना में गुरु नानक इन्हीं संतो के क्रम में आते हैं। गुरु नानक देव ने सिख धर्म की स्थापना की और उनके साथ बाद में रामदास, अर्जुन देव, गुरु गोविंद सिंह आदि अनेक गुरुओं ने भक्ति के माध्यम से शक्ति का काव्य लिखा। गुरु नानक का गौरव उनके व्यक्तित्व, उनकी दूर दृष्टि, युग के प्रति उनकी जागरूकता, लोगों के बीच में उनकी पकड़, लोक संग्रह की भावना, आडंबरों के प्रति विद्रोह का स्वर और घट–घट की अपरोक्षानुभूति के महीन तत्व से जुड़ा है।

हजारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार मध्ययुग भारतीय प्रतिभा के जागरण का युग है। यह कथन बिल्कुल ठीक है क्योंकि यह काल भारतीय मनीषा की जागरूकता कर्मण्यता और प्रतिभागत उत्कर्ष का काल है; किंतु दूसरी ओर मध्ययुग आशंकाओं, अस्त–व्यस्तताओं एवं विभीषिका से पीड़ित खड़ा दिखता है। वास्तव में यह युग दो विरोधी अंतरधाराओं का मिलन बिंदु है। साधना के क्षेत्र में अनेक परिवर्तन देखने को मिलते हैं। वैदिक साधना के सीधे–साधे स्तुति ज्ञान लगातार यज्ञ, कर्म, तत्वज्ञान, सदाचरण एवं भक्ति में परिणित होने लगे। बौद्ध साधना की सदाचरण–प्रियता तप– परायणता और नैतिकता हीनयान के विचार में बदल गई; किंतु इसके साथ ही तांत्रिक साधना का उदय हुआ। जिसके प्रभाव से सिद्धों और नाथों की साधना प्रणालियां अनुप्राणित होकर परिवर्तित काल में निर्गुण भक्तिधारा के रूप में प्रकट होती गयी। यही भक्ति साधना मध्ययुगीन भारत की महत्वपूर्ण विशेषता है, जिसे आधुनिककाल की आलोचनात्मक शब्दावली में भक्ति आंदोलन कहा जाता है। इसी भक्ति आंदोलन ने तत्कालीन भारत की धर्म–साधना, नैतिकता, समाज, जीवन, साहित्य और चिंतन सभी को प्रभावित किया। धर्म के क्षेत्र में भक्ति ही आदि से अंत तक एकमात्र साधना के रूप में प्रतिष्ठित होने लगी। आचार और नैतिकता को यथेष्ट बल मिला। जीवन में आचरण की श्रेष्ठता प्रतिष्ठित हुई। समाज के विभिन्न वर्गों में समन्वय की भावना पैदा हुई। समन्वयवाद भक्ति आंदोलन का महत्तर कल्याणकारी परिणाम है। एक ओर भक्तों और आचार्यों ने समाज के पारस्परिक वैमनस्य को दूर करने की चेष्टा की और दूसरी ओर मानव मात्र के परित्राण हेतु सामान्य भावभूमि तैयार की।

इसी काल में भारत की हिंदू जनता अपनी ओर व्यक्तिवादिता की परिधि से मुक्त होती दिखती है और जाति–पाति के बंधन ढीले होते दिखाई देते हैं। हिंदू जनता की राजनीतिक और सामाजिक स्थिति य।पि शोचनीय ही बनी रही, तथापि उसकी मानसिक स्थिति सुदृढ़ होती गई। यह कहा जा सकता है कि भारत की जनता के विशेष से हिंदू जनता के चिंतन और जीवन में अभूतपूर्व युग के सूत्रपात करने का श्रेय इसी भक्ति आंदोलन को है। गुरु नानक इसी भक्ति आंदोलन के सत्य परिणाम थे, जिन्होंने सशक्त व्यक्तित्व और समर्थ काव्य–वाणी से संपूर्ण युग को शुद्ध करने का अद्भुत कार्य किया। वास्तव में गुरु नानक युग की मांग थे। ऐतिहासिक दृष्टि से देखें तो गुरु नानक जिस युग में आए, वह युग धर्म–दर्शन–नैतिकता और शासन आदि सभी अंगों से विकलांग हो चुका था। वास्तव में युग की परिपूर्णता तभी संभव है जब धर्म, दर्शन, नैतिकता और शासन ये चारों नियामक आधार मर्यादित होकर चलें; किंतु इस चतुरंगी अनुशासन के छिन्न–भिन्न होने पर युग की आत्मा विशृंखलता और उच्छृंखलता का अनुभव करने लगती है। हम गुरु नानक के युग में अनुशासन सूत्रों का शैथिल्य देखते हैं। ऐसे समय में दुष्प्रभावों नकारात्मक क्रियाओं को दूर करने के लिए गुरु नानक का कर्मठ व्यक्तित्व क्रियाशील होता है।

गुरु नानक के व्यक्तित्व की शक्ति संपन्नता और सृजनशीलता ही उनके समस्त जीवनगत मूल्य तथा भावों का महत्वपूर्ण आधार है, इसलिए उनका व्यक्तित्व हमारे लिए महत्वपूर्ण है। गुरु नानक की वाणी के अध्ययन से उनका जो व्यक्तित्व उभरता है, उसके दो पहलू स्पष्ट रूप से प्रतिफलित होते हैं– एक है गुरु नानक का बाह्य व्यक्तित्व, जिसे हम सामान्य व्यक्तित्व कह सकते हैं और दूसरा है आंतरिक व्यक्तित्व जो गुरु नानक की शक्तियों का स्रोत है। गुरु नानक का व्यक्तित्व उनकी वाणी और उनके व्यवहार दोनों से समन्वित रूप में प्रकट होता है। वे केवल एक संत, भक्त या साधक ही नहीं दिखाई देते अपितु एक साहित्यकार का महत्व कर्म निभाते भी दिखाई देते हैं। गुरु नानक वस्तुतः दृष्टा भी हैं और सृष्टा भी है।

उन्होंने अपनी पैनी दृष्टि से जीवन–जगत और अध्यात्म के रहस्यों का उद्घाटन किया। उनका उन्होंने अपनी रचनाओं में यथेष्ट अभिवादन भी किया है, इसलिए वे अनुसंधानदाता भी हैं और विधाता भी हैं। यही उनके सृजनशील व्यक्तित्व का मर्म है।

गुरु नानक क्रांतिदर्शी व्यक्ति थे। उनकी दृष्टि से कोई वस्तु भी बच नहीं सकी। घास की पत्ती से लेकर कल्पवृक्ष तक और रंक से लेकर राजा तक सभी का उन्होंने यथावत अवगाहन किया और तत्पश्चात उनकी स्थिति और महत्ता को आंकने का प्रयास किया। यही उनके व्यक्तित्व का आधार है। गुरु नानक का ज्ञान और व्यक्तित्व किताबों से नहीं बना है। वे कबीर जैसे संतों की भांति यायावर रहे हैं। उन्होंने भारत और भारतेतर देशों की यात्राएं की। प्रख्यात धर्मालय और तीर्थ स्थानों का भ्रमण किया। मतधारियों, नाथों, सिद्धों, ब्राह्मणों और मुल्लाओं से बातचीत की। पंजाब तथा अन्य जनपदों के घरों में विचरण कर, जन सामान्य का लाभ भी उठाया। परिणामतः गुरु नानक व्यापक रूप से लोकमानस को पहचानने में सिद्ध हुए। उन्होंने मानवता की अखिलता, लोक संग्रह की भावना, समाज का उत्थान तथा शिवत्व का प्रतिपादन किया है। उन्होंने सामाजिक विषमता, रूढ़िवादिता और जाति–पाति का तीखे स्वरों में खंडन किया है और मानव मात्र को अपने गले से लगाने का आमंत्रण दिया है। उनकी धारणा थी कि समाज की इस भ्रष्ट व्यवस्था का कारण वर्ण–भेद है। यही हमारे सामाजिक असंतुलन का कारण है।

प्रभु की दृष्टि में प्रत्येक प्राणी समान है। प्रत्येक मनुष्य ईश्वर का अंश है। वे कहते हैं –

तुझते उपजहि तुझ माहि समावहि

वे स्पष्ट शब्दों में कहते हैं–

जाणहूं जोति न पूछहु हो जाति, अगे जाति न हे

अर्थात मानव की आत्मा में विराजमान ईश्वर की ज्योति को पहचानो और जाति–पाति को मत पूछो; क्योंकि ईश्वर के समीप किसी भी प्रकार की जाति का विधान नहीं है। इसी प्रकार उन्होंने बहुप्रचलित आडंबर, पाखंड विधि–विधान की भर्त्सना की है। जैसे वे कहते हैं–

अखी त मीटहि नाक पकड़हि ठगण कउ संसारु
आंट सेती नाक पकड़हि सूझते तिन लोउ
मगर पाछे कछु ना सूझे एहु पदमु अलोआ

गुरु नानक परा विद्या के आलोक में लोक विद्या का संपादन करने वाले व्यक्तित्व है। डॉ. मुंशीराम के अनुसार गुरु नानक के मानवतावाद और उदारतावाद के संदर्भ में यह बात चरितार्थ होती है। उन्होंने लिखा है भागवत भक्ति ने अपने इस रूप में समाज द्वारा हेय और निराश्रित व्यक्तियों को आश्वासन प्रदान किया। शूद्र, विदेशी तथा अन्य निम्न वर्ग के प्राणी दिल खोलकर भागवत धर्म में दीक्षित होने लगे।

गुरु नानक का क्रांतिकारी व्यक्तित्व एक अन्य दृष्टि से भी अवलोकनीय है। उन्होंने उपेक्षित नारी का पक्ष लिया और अपने क्रांतिकारी स्वरों में उसे गरिमा प्रदान की। उनकी वाणी में नारी के लिए 'भिंड' शब्द का व्यवहार कर अपनी तार्किक शैली से उसकी सराहना की है। उन्होंने लिखा है कि स्त्री से मनुष्य उत्पन्न होते हैं। उससे संबंध स्थापित करते हैं। जीवन पथ पर उसी के साथ अग्रसर होते हैं, जो स्त्री सम्राटों को जन्म देती है। उसी का तिरस्कार करना यह कहां तक का न्याय है। गुरु नानक के व्यक्तित्व में आक्रोश ईश्वर भी मौजूद है। वे दलितों के पक्षधर थे और तत्कालीन क्रूर राजाओं तथा बादशाहों की कड़ी आलोचना करते थे। इस समय शासक वर्ग अनेक निरपराध व्यक्तियों को तलवार से घाट उतार रहा था। उस समय गुरु नानक का ह्रदय करुणा से द्रवित हो उठा उन्होंने अपने प्रभु करतार से सहसा यह प्रश्न किया–

एती मार पई कुरलाने
तै की दरदु न आइआ
गुरु नानक ने कहा–
करता तू समना का सोई
जे सकता सकते कउ मारे
ता मनु रोस न होई

अर्थात हे करतार तू सभी का शरण–स्थल है। तू सभी का स्वामी है। यदि सशक्त व्यक्ति किसी बलशाली को मारता है तो मन में कोई रोष नहीं उत्पन्न होता; परंतु यदि शक्तिशाली निहत्थे या कमजोर व्यक्ति पर टूट पड़ता है तो निश्चय ही यह रोष दिलाता है।

गुरु नानक के सृजनशील व्यक्तित्व का एक और अन्य रोचक पक्ष है, उनका समन्वयवाद। गुरु नानक का समन्वयवादी दृष्टिकोण वस्तु और भाषा दोनों पर दिखाई देता है। वस्तु समन्वयवाद के रूप में गुरु नानक ने विविध धर्म, बाह्य विधि–विधान और विविध साधना प्रणालियों का वर्णन कर एक ऐसे धर्म की नीव डाली जिसमें सभी धर्मों के कल्याणकारी तत्व समाविष्ट हो। गुरु नानक का धर्म मानवतावाद पर आश्रित है, मानव पर नहीं; क्योंकि वह तो दृश्य जगत के मूल में जाकर उसकी वास्तविकता को देखना चाहते थे। गुरु नानक ने धर्म के स्वरूप को तात्विक घोषित किया, जो सर्वजन सुलभ हो और जो वर्ण, जाति, वर्ग से परे मानव की आत्मा से सीधा संबंध रखता हो। यही कारण था कि उन्होंने ब्राह्मणों, मुसलमानों, नाथों, सिद्धों, योगियों और सूफियों की आचार विधियों से पूर्ण परिचय प्राप्त किया और तदनुसार आदर्श ब्राह्मण, आदर्श नाथ तथा आदर्श मुसलमान के चित्र अंकित किए –

१) सो ब्राह्मण जो ब्रह्म विचारे
आप तरे सगले कुल तारे
२) मुंदा संतोख सरम पति झोली
ध्यान की करहि विभूति
खींथा काल कुंआरी काइआ
जुगति डंडा परतीति
३) मिहर मसीती सिदकु मुसला हक हलाल कुरान
सरम सुनति सील रोजा होहु मुसलमान

गुरु नानक एसे समन्वयवादी धर्म और समाज को देखना चाहते थे, जिसमें प्रत्येक व्यक्ति का समादर हो और जिसमें मनुष्य के आंतरिक गुणों और विशेषताओं पर बल हो तभी सर्वधर्म की स्थापना हो सकती है और तभी मानव–मात्र सुखद वातावरण में जीवन जी सकता है। परस्पर वैमनस्य, द्वेष, कलह और ईर्ष्या में जल रहे लोगों के लिए गुरु नानक का यह संदेश नई आशा का संचार करने वाला था। यह नवीनता गुरु नानक के सर्जक व्यक्तित्व की देन है।

गुरु नानक का महान व्यक्तित्व उनके भक्त और संत रूप में भी हमें मिलता है। उनकी समस्त वाणी का

यदि अध्ययन किया जाए तो हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि गुरु नानक अन्य साधनों की अपेक्षा भक्ति को ही सर्वोपरि मानते हैं। वह भी भाव प्रधान भक्ति। उनके उपास्य देव की परिकल्पना भी अद्भुत और विलक्षण है उनका प्रभु द्वैत, अद्वैत, विलक्षण, निर्गुण ब्रह्म के समक्ष जा ठहरता है। जहां वे अपने प्रभु का स्वरूप वर्णन करते हैं–

एक ओं सतिनामु करता पुरख
निरभउ निरवैर अकाल मूरति
अजूनी सैभम गुर प्रसादि

उनका प्रभु अनेक गुणों से युक्त है जो उनकी क्रियाशील के रूप में है। नानक का परम देव 'निर्भय' है। इसी निर्भयता से संपन्न प्रभु अपने भावों और शिष्यों में भी निर्भयता का संचार करते हैं। यही कारण है कि गुरु नानक के व्यक्तित्व को हम निर्भीक, सत्यान्वेषण तथा सत्य से ग्रसित देखते हैं–

सच की वाणी नानकु आखे सचु सुनाइसी सच की बेला

सत्य के पथ पर गुरु नानक अपने प्रभु के सत्य को उदघोषित करते हैं, जो उनके प्रथम विशेषण 'सतीनाम' से प्राप्त होता है। गुरु नानक अपने आराध्य को निर्भय और सत्य गुणों से संयुक्त बताकर यह सुझाव देना चाहते हैं कि जो व्यक्ति ऐसे प्रभु की शरण में जाता है और जो ऐसे शिव, शक्ति, सौंदर्य वाले ईश्वर का आश्रय ग्रहण करता है; उसे संसार के कोई दुख नहीं सताते। अतः सकल कलयुग के क्लेशों और जागतिक बंधनों से विमुक्त होने के लिए ऐसे निरंकार की आराधना करनी होगी, जो स्वयं सर्वशक्तिमान है और अपने शरणागत का सर्वथा परित्राण करता है। इस दिशा में गुरुनानक एक चिंतक और विचारक के रूप में हमारे सामने आते हैं। यह उनके विशिष्ट व्यक्तित्व का एक महिमा में पक्ष भरता है। उनके सामान्य व्यक्तित्व की अपेक्षा यह पहलू अधिक बलवान और अभिनव दिखता है; किंतु गुरु नानक के व्यक्तित्व में दोनों पक्ष अर्थात समाज–उन्मुख व्यक्तित्व और आध्यात्मिक व्यक्तित्व गलबहिया डाले दिखता है। जहां उनका बाह्य व्यक्तित्व अपनी चरम आभा से भास्वर है, वहां उनका अंतर व्यक्तित्व अपने ऐश्वर्य से परिपूर्ण दिखता है।

एक कलाकार के नाते गुरु नानक देव ने अपनी रचनाओं में अखिल भारतीय साहित्यिक धारा को अपनाया। जिसके अनुसार रचनाओं में लोकभाषा, लोक उपमान तथा अन्य ऐसे उपादान दिए जो जनसाधारण के चिंतन और जीवन से जुड़े थे। गुरु नानक की काव्य–वाणी का प्रस्फुटन इसी कार्य–पद्धति पर हुआ है; तथापि इसमें पंजाब का लोकमानस पूरी तरह से झलक उठा है। पंजाब का जनजीवन उनके हर शब्द में जुड़ा हुआ है। उनकी वाणी की लोकप्रियता का यही मर्म है। लोक–तत्वों से जुड़े होने के अलावा उनकी वाणी में सरसता, सजीवता, अर्थवत्ता का गुण भी है, जिससे गुरु की समस्त शब्द–राशि सप्राण हो उठी है। वह चिंतक–प्रधान 'जपुजी साहिब' हो या नैतिक और सामाजिक तत्वों से परिपूर्ण 'आसा दी वार' हो अथवा आध्यात्मिक वजह से जुड़ी 'बाराह्माह तुखारी' हो। सभी जगह उनके अनुपम सर्जनशील व्यक्तित्व का चमत्कार चमत्कृत होता है।

निश्चय ही गुरु नानक ने अपनी उन्मेषशालिनी प्रतिभा के बल पर अभिनव तथ्यों का उद्घाटन किया और अपनी वाणी के माध्यम से भारत की भटकी जनता को एक स्वस्थ दिशा–बोध प्रदान किया। भारत में नवजागरण तथा प्रबोधन का सूत्रपात करने वाले गुरु नानक की ओर लक्ष्य कर उर्दू भाषा के सुविख्यात शायर मोहम्मद इकबाल ने एक स्थान पर लिखा है–

फिर उठी आखिर सदा तौहीद की पंजाब से
हिंदू को एक मर्द ए कामिल ने जगाया ख्वाब से

अर्थात अंततः पंजाब की भूमि से ईश्वर के तत्वों का स्वर गूंज उठा और एक पूर्ण पुरुष अर्थात गुरु नानक ने नींद में सोते भारत को जगाने का महत्वपूर्ण कार्य किया है।

समग्र दृष्टि से यदि देखा जाए तो हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि गुरु नानक के व्यक्तित्व में बहुविध विभूतियों का पर्यवसान होता है। यही कारण है कि गुरु जहां विविध विचारों से विचारशील और अनेक अनुभवों से अनुभूतिशील हैं, वहां वे इन तत्वों को तदनुरूप कला के माध्यम से संप्रेषित करने में भी कुशल हैं।

संदर्भ

1. ए शॉर्ट स्टोरी हिस्ट्री ऑफ द सिखस, तेजा सिंह और गेंदा सिंह
2. गुरु शब्द रत्नाकर महान कोश, भाषा विभाग, पंजाब
3. श्री गुरुनानक चमत्कार, खालसा, समाचार, अमृतसर
4. गुरुनानक एंड द सिख रिलिजन, डब्ल्यू.एच. मैक्लोड़
5. लाइफ ऑफ गुरु नानकदेव, करतार सिंह
6. नानक वाणी, जयराम मिश्र
7. रामकली की वार महला पहला
8. आसा दी वार महला पहला
9. मध्यकालीन भारत का संक्षिप्त इतिहास, डॉ. ईश्वरी प्रसाद
10. गुरुनानक और उनका काव्य, डॉ. महीप सिंह और डॉ. नरेंद्र मोहन
11. मध्यकालीन धर्म साधना, हजारी प्रसाद दिवेदी
12. Evolution of the Khalsa] Indu Bhushan Banerjee
13. क्रिटिकल स्टडी ऑफ आदि ग्रंथ, डॉ सुरेंद्र सिंह कोहली

गुरु नानक देव की वाणी और भारतीय जीवन मूल्य

*ज्योति कुमारी

* शोधार्थी, हिन्दी विभाग

"धन कम बुद्धि से युक्त बड़े राज्य राज्यों के राजा महाराज की तुलना भी चिंटी से नहीं की जा सकती है जिसमें ईश्वर का वे भरा हो"

गुरु नानक देव जी सिख धर्म के संस्थापक होने के साथ–साथ सिख धर्म के प्रथम गुरु भी थे गुरु नानक जी ने अपने शिष्य को कुछ ऐसे उपदेश वा शिक्षाएं अपनी वाणी के माध्यम से दी जो भारतीय जीवन मूल्य के रूप में आज काफी लोकप्रिय और प्रासंगिक हैं गुरु नानक को बाबा नानक, नानकशाह ,गुरु नानक देव जी आदि नाम से भी जाना जाता है इसके साथ ही इन्हें धार्मिक नवप्रवर्तनक माना जाता है सिख धर्म के प्रथम गुरु होने के साथ–साथ वे एक महान दार्शनिक समाज सुधारक देशभक्त धर्म सुधारक योगी आदि भी थे इनका जन्म तलवंडी के शेखपुरा जिला में हुआ जो वर्तमान में पंजाब पाकिस्तान में स्थित है इनके पिता का नाम कल्याण चंद (मेहता कालू) माता का नाम तृप्ता देवी और इनकी पत्नी का नाम सुलक्ष्णी देवी था इनके दो बच्चे श्री चंद्र और लख्मी दास थे।

"गुरुजी ने बराबर यह कहा है कि ऐसी बात करनी चाहिए जो मीठी हो जिससे सुनने वाले की चित में प्रतित उतपन्न हो ऐसा नहीं कि सुनने वाला बिदक जाए एक उचित वातावरण बनाना चाहिए या ऐसा परिवेश बनाना चाहिए जिससे बात का महत्व ग्रहण करने लायक मनोवृतति पैदा हो अन्यथा उसका महत्व नष्ट हो जाता है।"[1]

हजारी प्रसाद द्विवेदी जी गुरु नानक व्यक्तित्व और संदेश के माध्यम से इन गुणों से हमें अवगत कराते हैं। 'बाबा' बोलिए पति होए ऐसा गोली की प्रतियाया हो जो बताया जा सके ऐसी मधुर वाणी बोले जिससे कि मनुष्य का जो दुख–ताप है वह दूर हो ऐसा नहीं कि उसके घाव और भी ताजा हो जाए मध्यकाल के संतों के बीच गुरु नानक जी का महान व्यक्तित्व अपने माध्य के लिए सबसे अलग दिखाई देता है।

वाणियों में कुछ इस प्रकार का भी आभार मिलता है कि गुरुजी के मन में एक साधारण मनुष्य की भांति अपने चित के विचलित होने की थोड़ी आशंका थी ऐसा लगता है कि यह पहली वानिया होंगी जिन्हें गुरुजी ने कहा है कि "अगर सारे प्रलोभन भी आ जाए तो हे। भगवान ऐसा ना हो कि मैं तुम्हारा नाम भूल जाऊं"[2]

यह गुरुजी के अपने भीतर के संघर्ष की किसी समय की बात होनी चाहिए

"मोती मंदिर उसरह रतनीत होई जडाओ
कस्तूरी कंग अगर चंदन लिपि आवै चाव
मत देखी भुला बिसरह तेरा चित्त न आवे नाऊ"[3]

ऐसा ना हो कि रतन जड़ी मंदिरों को और कस्तूरी कुंकुम आंगरु दी सुगंधित पदार्थों को देखकर ,समृद्धि को देखकर कहीं हमारा चित भुजाएं निसर जाए भगवान का नाम है भगवान ऐसा ना हो कि मैं उस अवस्था में तुम्हारा नाम भूलूँ।

कहा जाता है कि गुरु नानक देव जी का आगमन ऐसे युग में हुआ जो इस देश के इतिहास के सबसे अंधेरे युग में था और धर्म काफी समय से छोटी रस्मों और अफरीदी रिवाजों का नाम बनकर रह गया था उतरी भारत के लिए यह कुशासन और अफरा–तफरी का समय था सामाजिक जीवन में भारी भ्रष्टाचार था और धार्मिक क्षेत्र में द्वेष और कशमकश का दौर था ना केवल इंदौर मुसलमानों के बीच में ही बढती दोनों बड़े धर्म के दिन ब दिन संप्रदाय के बीच दिन कारणों से भिन्न भिन्न संप्रदाय में और भी कटता और बैर विरोध की भावना पैदा हुई थी उस वक्त समाज की हालत बहुत बदतर थी ब्राहमणवाद ने अपना एकाधिकार बना रखा था उसका परिणाम यह था कि गैर ब्राहमण को वेद शास्त्र अध्यन से हतोत्साहित किया जाता था निम्न जाति के लोग को इन्हें पढ़ना बिल्कुल वर्जित था इस ऊच–नीच का गुरु नानक देव पर बहुत असर पड़ा वे कहते हैं कि ईश्वर की निगाह में सब समान हैं

ऊच–नीच का विरोध करते हुए गुरु नानक देव अपनी मुख वाणी जपुजी साहिब में कहते हैं कि नानक उत्तम नीच ना कोई जिसका भावार्थ है कि ईश्वर की निगाह में छोटा बड़ा कोई नहीं फिर भी अगर कोई व्यक्ति अपने आप को उस प्रभु की निगाह में छोटा समझे तो ईश्वर उस व्यक्ति के हर समय साथ है यह तभी हो सकता है जब आदमी ईश्वर के नाम द्वारा अपना अहंकार दूर कर लेता है तब व्यक्ति ईश्वर की निगाह में सबसे बड़ा है उसके समान कोई नहीं नानक देव की वाणी में–

नीचा अंदर नीच जात, नीची अति नीच।
नानक तिन के संगी साथ बडीया सीउ किया रीस"[4]

समाज में समानता का नारा देने के लिए नानक देव ने कहा कि ईश्वर हमारा पिता है और हम सब उसके बच्चे हैं और पिता की निगाह में छोटा बड़ा कोई नहीं

होता वही हमें पैदा करता है और हमारे पेट भरने के लिए खाना भेजा है

"नानक जंत उपाइके सभनाह।
जिन करते करना किआ, चिंताभिकरणी ताहर"[5]

जब हम 'एक पिता एकस के हम वरिक 'बन जाते हैं तो पिता की निगाह में जात–पात का सवाल ही नहीं पैदा होता गुरु नानक जात–पात का विरोध करते हैं उन्होंने समाज को बताया कि मानव जाति तो एक ही है फिर यह जाति के कारण ऊंच–नीच क्यों गुरु नानक देव ने कहा कि मनुष्य की जाति ना पूछो जब व्यक्ति ईश्वर की दरगाह में जाएगा तो वहां जाति नहीं पूछी जाएगी सिर्फ आपके कर्म ही देखें जाएंगे

गुरु नानक देव ने पितर पूजा तंत्र–मंत्र और छुआछूत की भी आलोचना की इस प्रकार हम देखते हैं कि गुरु नानक साहिब हिंदू और मुसलमानों में एक से तो के समान है हिंदू उन्हें गुरु एवं मुसलमान पीर के रूप में मानते हैं हमेशा ऊंच–नीच और जाति–पाति का विरोध करने वाले नानक ने सबको समान समझकर गुफा लंगर शुरू किया जो एक ही कतार में बैठकर भोजन करने की पृथा है

"दीनदयाल सदा दुख भंजन का सिउ रुचि ना बढ़ाई
नानक कहत जगत सम मिथिया ,जयो सुपना रैनाई"(6)

गुरु नानक जी के संदर्भ में कहा भी जाता है कि "मोक्ष तक जाने का सरल मार्ग है गुरु नानक देव जी का जीवन दर्शन"। सिख धर्म के 10 गुरुओं की कड़ी में प्रथम गुरु नानक गुरु नानक देव से मोक्ष तक पहुंचने के एक नए मार्ग का अवतरण होता है इतना प्यारा और सरल मार्ग की सहज ही मोक्ष तक ईश्वर तक पहुंचा जा सकता है।

भारतीय संस्कृति में गुरु का महत्व आदिकाल से ही रहा है कबीर साहब ने कहा था कि "गुरु बिन ज्ञान ना हुई साधु बाबा" तब फिर ज्यादा सोचने विचारने की आवश्यकता नहीं है बस गुरु के प्रति समर्पण कर दो हमारे सुख–दुख और हमारे आध्यात्मिक लक्ष्य गुरु को हि साधने दो ज्यादा सोचोगे तो भटक जाओगे अहंकार से किसी ने कुछ नहीं पाया सिर और जूतो को बाहर ही छोड़कर जरा अदब से गुरु के द्वार खड़े हो जाओ बस गुरु को ही करने दो हमारी चिंता हम क्यों करें ठीक इसी प्रकार कवि जी के दोहे भी गुरु कि महत्वता को प्रमाणित करते हैं

"पीछे लगा जाई था लोक वेद के साथी
आगे थे सतगुरु मिलिया दीपक दिया हाथी"[7]

गुरु नानक देव क्या थे और नानक का दर्शन क्या था यह सब निरर्थक बाते हैं नानक के व्यक्तित्व मे सभी गुण थे नानक देव जी ने रूढियो और कुसंस्कारो के विरोध में सदैव अपनी आवाज बुलंद कि संत साहितय में नानक अकेले चमकते सितारे हैं कवि हदय की भाषा में फारसी, मुल्तानी, पंजाबी, सिंधी, खड़ी बोली, अरबी, संस्कृत और बृजभाषा के शब्द समा गए थे

नानक देव जी के सिद्धांतो में से कुछ सिद्धांतों को हमने रेखांकित किया है जो कि निम्न लिखित हैं:–

1 ईश्वर एक है

2 सदैव एक ही ईश्वर की उपासना करो

3 जगत कतां सब जगह और सब प्राणी जीव मात्र में मौजूद है

4 सर्वशक्तिमान ईश्वर की भक्ति करने वालों को किसी का भय नहीं रहता

5 इमानदारी से मेहनत करके उधरपूर्ति करना चाहिए

6 बुरा कार्य करने के बारे में ना सोचो और ना किसी को सताए

7 सदा प्रसन्न रहना चाहिए ईश्वर से सदा अपने को समा शीलता मांगना चाहिए

8 भोजन श्री को जिंदा रखने के लिए जरुरी है पर लोग लाल अथवा संग्रह वृत्ति बुरी है

9 सभी स्त्री और पुरुष बराबर है

10 मेहनत और ईमानदारी से कमाई करके उसमें से जरुरतमंद को भी कुछ देना चाहिए

गुरु नानक देव जी का व्यक्तित्व एवं कृतित्व जितना सरल सीधा और स्पष्ट है उसका अध्ययन और अनुसरण भी उतना ही व्यावहारिक है गुरु नानक वाणी जन्म साखियों, फारसी सहित्य एवं अन्य ग्रंथों के अधयययन से यह सिद्ध होता है कि गुरु नानक उदार प्रवृत्ति वाले स्वतंत्र और मौलिक चिंतक थे

"वे नबी भी थे और लोकनायक भी दे साधक भी थे और उपदेशक भी वे शायर एवं कवि भी थे और ढाढी भी वे ग्रहस्थीभी थे और पर्यटक भी"

एक सामान्य व्यक्ति और एक महान आध्यात्मिक चिंतक का एक अद्भुत मिश्रण गुरु नानक देव जी के व्यक्तितव में अनुभव किया जा सकता है

आज का युग विज्ञान तकनीक एवं प्रौद्योगिकी का युग है संवेदना तथा भावनाओं का पतन भी आज हुआ है और धीरे–धीरे होता जा रहा है लोहे की मशीनें तथा पत्थरों की शुशकता मनुष्य को मनुष्य से दूर कर रही हैं सदभाव, प्रेम तथा अपनत्व की भावना केवल विलुप्त होते इस संसार में जीवन मूल्य भी बदल रहे हैं और इसी संदर्भ में हम 'गुरु नानक देव की वाणी और भारतीय जीवन मूल्यों का मूल्यांकन' रहे हैं ऊपर की पंक्तियों में हमने गुरु नानक जी का जीवन दर्शन उनकी वानिया उनका व्यक्तित्व अन्य महत्वपूर्ण प्रसंगो का अवलोकन किया और उनकी प्रसंगो का वाणियो का महत्व अब हम भारतीय जीवन मूल्यों के संदर्भ में देखेंगे कि आज भारतीय जीवन मूल्य के रूप में गुरु नानक देव जी की वाणियो की प्रसंगीकत्ता आज के संदर्भ में किन रुपों में सार्थक है

मूल्य शब्द अंग्रेजी के वैल्यू का पर्याय है मूलता यह अर्थशास्त्र का पारिभाषिक शब्द है जिसका अर्थ है विनिमय क्षमता जो पदार्थ जीवन के उपयोगी उपादान को उपलब्ध कराने में जितना सक्षम है उतना ही उसका मूल्य है तथा वस्तु की क्षमता के लिए है प्रयोग जो किसी मानवीय आवश्यकता अपना उपयोगिता की पूतिं करें इसका सीधा संबंधमानव जीवन से हैं दूसरा प्रयोग मिनिमम उनके अर्थ में हैं जिसका संबंध व्यापार से है और यह स्थिति मानव निरपेक्ष है

सुमित्रानंदन पंत के अनुसारः– "मुल्य मर्यादा के स्त्रोत को केवल सामाजिक परिस्थितियों के अधीन मानना उतना ही एकांकी दृष्टिकोण है जितना उसे केवल मनुष्य के आंतरिक संस्कारों में मानना है मानव भूल के बाहर भीतर दोनों और फैले हुए हैं"।[8]

कहा जाता है कि मुल्य हमारे भीतर वर्तमान संस्कारों की परंपरा भी है और सामाजिक अनुभूति पर

आधारित मानयता भी एक व्यक्ति द्वारा उपलब्ध कॉल सापेक्ष चेतना है भारतीय चिंतन परंपरा में मुल्य विषयक धारणा का विवेचन नहीं किया गया परंतु भारतीय चिंतन का मूल आधार अध्यात्म रहा है यही कारण है कि अध्यात्म प्रसंग के अंतर्गत की जीवन के श्रेयस तथा प्रयास द्वारा इसकी व्याख्या की गई इसी संदर्भ में दया, दान, क्षमा, शांति ,विवेक सत प्रेम आदि गुणों का बखान हुआ जो प्रकार आंतर में जीवन मूल्य ही कहे जाएंगे।

"भारतीय चिंतन धारा में जीवन मूल्य निम्न बिंदुओं में देखें जा सकते हैं

+वैदिक वांडमय के परिपेक्ष में

+अध्यात्मिक मूल्य

+जीवन मूल्यों की सामाजिक एवं सांस्कृतिक अभिव्यक्ति जीवन की साधना, वर्ण–व्यवस्था, आश्रम–व्यवस्था,पारिवारिक जीवन, नारी की स्थिति शिक्षा सांस्कृ तिक पक्ष

+धार्मिक मूल्य वैदिक देवता, यज्ञ , तप और व्रत, दान

+राजनैतिक मूल्य राष्ट्र, राजा और प्रजा

+राष्ट्रीयता की भावना

+विश्व कल्याण की भावना

+सहित्य के क्षेत्र में जीवन मूल्यों की संबद्धता"[9]

चूंकि हम गुरु नानक देव की वाणी और भारतीय जीवन मूल्यों पर चर्चा साहित्य के संदर्भ में कर रहे हैं तो साहित्य में उन पर मूलतः पंजाबी में या यूं कहें हर भाषा में उस पर सहित्य लिखा गया है बात यहां हिंदी साहित्य के संदर्भ में हो रही है तो उनमें हमने शुरुआत में हिंदी साहित्य के भक्ति काल वा रीतिकाल के समय को भी रेखांकित किया है जिसको ध्यान में रखकर गुरु नानक देव जी पर कुछ कविताएं भी लिखी गई जिनके कुछ उदाहरण द्रव्य हैं

1 मैथिली शरण गुप्त ने गुरु नानक नाम से कविता लिखीः–

"मिल सकता है इसी जाति को
आत्म बोध से ही चैतन्य
नानक–सा उद्बोधक पाकर
हुआ पंचनद पुनरपि धन्य........ "[10]

2 नज़ीर अकबराबादी ने गुरु नानक शाह नाम से कविता लिखीः–

"है कहते नानक शाह जिनहें वह पूरे हैं अगहा गुरु
वह कामिल रहबर जग में हैं यूं रोशन जैसे महा गुरु........ "[11]

3 डॉ वल्लभा आचार्य ने 'जय गुरु नानक' नाम से कविता लिखी

"जगत झूठ है सच में ईश्वर
तुमने ही बतलाया
वेद पुराण कुरान सभी का
सार हमें समझाया
पावन 'गुरुवाणी' से हटते
सब अज्ञान हमारे
जय जय गुरु नानक प्यारे"[12]

4 अलामा मोहम्मद इकबाल ने 'नानक' नाम से कविता लिखीः–

"कौम ने पैगाम गौतम की जरा परवाह ना की
कदर पहचानी ना अपने गौहरे यक दाना की"[13]

इन कविताओं से हम उन सभी बातों से अवगत होते हैं जिनसे हमें पता चलता है कि गुरु नानक देव जी की वाणी साहित्य क्षेत्र में ही नहीं बल्कि हर क्षेत्र में अपनी प्रसंगिकता का प्रमाण प्रस्तुत करती है चाहे संत काव्य परंपरा में हो चाहे वह पंजाबी काव्य में हो चाहे गुरुद्वारे में पढ़ी जाने वाली वाणी आज के संदर्भ में हो नानक जी अच्छे सूफी कवि भी थे उनके भावुक और कोमल हृदय ने शक्ति से एकात्म होकर जो अभिव्यक्ति की है वह निराली है उनकी भाषा 'बहता नीर' थी जिसमें फारसी, मुल्तानी, पंजाबी ,सिंधी ,खड़ी–बोली ,अरबी के शब्द समा गए थे।

गुरु नानक की वाणी में शांत एवं क्षगार रस की प्रधानता है इन दोनों के अतिरिक्त करुण, भयानक, वीर ,रौद्र, हास्य और विभक्त रस मिलते हैं उनकी कविता में वैसे तो सभी प्रसिद्ध अलंकारों की प्रधानता है कहीं कहीं अन्योकत्तिया बड़ी सुंदर बन पड़ी हैं गुरु नानक की अपनी रचना में निम्नलिखित उननिस रागो का प्रयोग मिलता है सिरी, गुजरी ,धानाश्री, सही ,रामकली, मारु ,मला आदि।

अंतः कहा जा सकता है कि गुरु नानक ने जो भी वानिया लिखी वह तत्कालीन समय में तो आवश्यक रही है । आज भी जरूरी है। बल्कि अगर यू कहां जाए तो गलत नहीं होगा कि आज समाज जिस तरह जाति,धर्म ,राजनीति ,आर्थिक ,सामाजिक स्तरो पर बट रहा हैं उन्हें रोकने के लिए हुआ इंसानियत की महत्वता को दुबारा मनुष्य में जागरूक करने की आवश्यकता है जिसमें कबीरजी की ही तरहा गुरु नानक देव जी की वाणी और भारतीय जीवन मूल्यों को आज के संदर्भ में सही दिशा पर ले जाने की और कार्यरत हो तथा मानव जन का ही नहीं बल्कि सभी जीवो का कल्याण है जिनमें जीवन है जैसे वृक्ष, वातावरण, पशु–पक्षी आदि आदि।

संदर्भ ग्रंथ

1 गुरु नानक व्यक्तित्व और संदेश हजारी प्रसाद द्विवेदी भारतीय जन जीवन चिंतन के दर्पण में पुस्तक विभाग की पुस्तक का लेखाश आजकल सितंबर 2019 1,2,3
2 वेब दुनिया गुरु नानक देव 4,5,6,10,11,12,13
3 हमारी परंपरा और हम डॉ विद्या निवास मिश्र 7
4 मानव मूल्य और साहित्य डॉ धर्मवीर भारती 8
5 हिंदी काव्य में गुरु नानक डॉ धर्मेंद्र कुमार (जीवन तथा व्यक्तित्व)
6 गुरु गोविंद सिंह के कावय में जीवन मूल्य प्रो धर्मपाल मैनी

भारतीय संस्कृति को गुरु नानक की देन

* डॉ० गीता कौशिक

* एसोसिएट प्रोफेसर (हिन्दी), भगिनी निवेदिता कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय

संस्कृति शब्द संस्कार से बना है। जिसका अर्थ है पुष्कल आचरण तथा व्यवहार। गुलाब राय के मत में संस्कृति शब्द का संबंध संस्कार से है ,जिसका अर्थ है – संशोधन करना,उत्तम बनाना,परिष्कार करना। बलदेव मिश्र के अनुसार संस्कृति है – मानव जीवन के विचार, उच्चार, आचार कासंशुद्धिकरण अथवा परिमार्जन। श्री रामधारी सिंह दिनकर ने संस्कृति को जिंदगी का एक तरीका कहा है,जो सदियों से जमा होकर उस समाज में छाया रहता है, जिसमें हम जन्म लेते हैं। मुंशी राम शर्मा के अनुसार –संस्कृति एक व्यक्ति के शिक्षण संस्कार और अभ्यास से आरंभ होती है और उसका अंत मनुष्य के विकसित व्यक्तित्व में प्रकाश तथा परिमार्जित अवस्था के रूप में दिखलाई पड़ता है। इस प्रकार स्पष्ट है कि संस्कृति का संबंध मूल रूप से मानव जीवन के सर्वतोमुखी विकास से है। किसी भी देश या जाति का इतिहास उसके सांस्कृ तिक जीवन से संबंध रहता है, जिसमें राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक, आध्यात्मिक एवं दार्शनिक जीवन का सार सन्निहित रहता है। हर देश की भौगोलिक स्थिति भिन्न होती है, विचार कार्य भिन्न होते हैं,संस्कार भिन्न होते हैं। इन्हीं सबसे संस्कृति का निर्माण होता है जो देश की पहचान होती है। भारतीय संस्कृति प्राचीन काल से ही आदर्श मानकों पर आधारित है। त्याग, तप, करुणा, क्षमा, बलिदान, परोपकार, अहिंसा, मानवता जैसे उदास गुण भारतीय संस्कृति की धरोहर है।

नानक देव का प्रादुर्भाव ऐसे विषम समय में हुआ था जब भारतवर्ष में भारतीय संस्कृति के कट्टर विरोधी मुसलमानों का राज्य था । मुसलमान अहिंसा के स्थान पर हिंसा द्वारा भारतीय संस्कृति का विनाश और इस्लाम संस्कृति का एक क्षत्र प्रभाव स्थापित करने में लगे थे। मुसलमान आक्रमणकारी और अतिक्रमणकारी थे। वे बाहर से आए थे। अतः भारतीय संस्कृति से उनका कोई संबंध नहीं था। यहां आकर उन्होंने देखा कि भारत के निवासी आर्य या हिंदू वैष्णव पोषित सनातन धर्म को मानते हैं। सदाचार पालन और ईश्वर आराधना उनके धर्म का मूल आचरण है। यहाँ बड़े बड़े मंदिर हैं, उनमें सनातन देवों की मूर्तियां है जहां निरंतर पूजा और उपासना होती है। हिंदू स्वर्ग और मोक्ष प्राप्त करने के लिए सदाचार मूलक सनातन धर्म का अनिवार्यतः पालन करते हैं। उनके यहां दर्शन,योग, भक्ति और देव साधना के महान ग्रंथ विद्यमान हैं। जिनसे वे प्रेरणा लेकर मुक्ति की साधना में निरत रहते हैं। हिंदू समाज चार वर्णों में बटा हुआ है, जिसमें सभी वर्ण ब्राह्मण वर्ण की आज्ञा का और पूजा मूलक आचरण का पालन करते हैं परंतु इस्लाम में इनमें से किसी भी कर्म या साधना का प्रावधान नहीं था और हिंदू अपने धर्म के पुष्ट सिद्धांतों के आधार पर मुसलमानों को अपने से नीचे समझते थे। परंतु वे शासक थे और हिंदू शासित। वे राजा थे और हिंदू प्रजा। वे शक्तिशाली थे और हिंदू अशक्त। हिंदुओं में ऊंच–नीच का भारी भेद था। उनमें फूट और बैर व्याप्त था। इन सब परिस्थितियों को भाँपकर मुसलमानों ने हिंदू संस्कृति को नष्ट करके भारतवर्ष में इस्लाम संस्कृति का व्यापक रूप में प्रचार करने के लिए,हिंदुओं पर महा घोर अत्याचार करने आरंभ कर दिए।

उन्होंने यहां के राजाओं की आपसी फूट और बैर का लाभ उठाकर अपने अधीन करने में सफलता प्राप्त की। तत्पश्चात हिंदू धर्म, जो भारतीय संस्कृति का मूल था,को नष्ट करना आरंभ कर दिया। मंदिर और मूर्तियों को तोड़कर नष्ट भ्रष्ट करना उनका व्यवसाय बन गया। इससे उन्होंने यह सिद्ध कर दिया कि जिन मूर्तियों की हिंदू पूजा करते हैं और उन्हें विशाल मंदिरों में स्थापित करते हैं, वे केवल पत्थर मात्र हैं। उनमें कोई स्पंदन नहीं है। उन्होंने ब्राह्मणों और तपस्वियों को भी,तलवार की धार पर समाप्त करके, यह दिखा दिया कि तुम्हारा यह तप और आचरण ढोंग मात्र है। इससे तुम धर्म की रक्षा नहीं कर सकते। व्यापक रूप में हिंदुओं के कत्लेआम हुए और यहां आग और तलवार के बल पर धर्म को परिवर्तित कराकर हिंदुओं को बलपूर्वक मुसलमान बना लिया गया। इससे देश में मुसलमानों की संख्या बढ़ती चली गई। यद्यपि हिंदू राजाओं द्वारा इन अत्याचारों को रोकने के भरसक प्रयास किए गए और बलिदान भी दिए गए परंतु पूर्ण सफलता प्राप्त नहीं हुई।

इधर हिंदुओं में वर्ण व्यवस्था का वास्तविक रूप नष्ट व विकृत होता जा रहा था। उनमें ऊंच–नीच और छुआछूत का ऐसा विषम रोग स्थापित हो गया था,जिससे आपसी धार्मिक अत्याचार भी चरम सीमा पर पहुंच गए थे। इन विषमताओं को दूर करने के लिए अब प्रबुद्ध आध्यात्मिक गुरु तथा साधु संतों ने मुसलमानों के विध्वंस कारी अत्याचारों को समाप्त करने के लिए, अहिंसा और कर्म पर आधारित एक ऐसा पंथ चलाया, जिसमें मूर्ति पूजा को पूरी तरह नकार दिया गया और निर्गुण साधना को

अपनाने का मार्ग प्रशस्त किया गया। इसमें प्रारंभ में नाथ पंथ का भारी योगदान रहा, जिसके अधिष्ठाता गुरु गोरखनाथ थे।

इन्होंने ज्ञानसाधना के आधार पर हठयोग जैसे चमत्कारी क्रिया धर्म को आगे बढ़ाया। जिसमें मूर्ति पूजा का कोई विधान नहीं था। ऊंच–नीच, छुआछूत आदि को भी तिलांजलि दे दी गई थी क्योंकि गोरखपंथी सभी संत और साधक, सभी जातियों से निकल कर आ रहे थे। आगे चलकर यही नाथ पंथ या गोरखपंथ 'संत' नाम से जाना गया। सभी संत निर्गुणवाद, ज्ञान साधना और हठयोग का पालन करते थे। वे जात पांत के बंधन को नहीं मानते थे। उनका नारा था कि –

हरि को भजै सो हरि का होई, ऊंच–नीच अंतर नहीं कोई।

तथा

तुम कत बाह्मन हम कत सूद, हमरे लहू कि तुम्हरे दूध।
जो तू बाह्मन बामणी जाया और बाट ते क्यों नहीं आया।

आदि मान्यताओं ने ब्राह्मणों के अस्तित्व पर प्रश्नचिन्ह लगा दिया और यह सिद्ध कर दिया कि ईश्वर आराधना का अनुसरण करने वाला और मुक्ति चाहने वाला ब्राह्मण ही नहीं, सदाचार धर्म और ज्ञान साधना में लीन किसी भी जाति का प्राणी हो सकता है। इसके लिए उन्होंने यह नारा दिया कि भगवान मूर्ति में नहीं, मंदिर में नहीं, वह तो हमारे ह्रदय में हैं जिसे ज्ञानसाधना से ही जाना जा सकता है। क्योंकि–

कस्तूरी कुंडलि बसै, मृग ढूंढे बन माहिं।
ऐसे घट घट राम है, दुनिया देखै नाहिं।।

और

ना वहां हिंदू देहरा, ना वहां तुरक मसीत।

आदि के द्वारा यह सिद्ध कर दिया की मुक्ति प्राप्ति के लिए ना जात पात का कोई बंधन है ना मूर्ति पूजा की कोई आवश्यकता। मुक्ति को तो कोई भी व्यक्ति निर्गुण ज्ञानसाधना और सदाचार पालन द्वारा प्राप्त कर सकता है। इसी सगुण की प्रतिक्रिया स्वरूप संघर्ष के वातावरण में गुरु नानक देव का अभ्युदय हुआ था।

संतमत में लगभग सभी संत और साधक उस वर्ण के थे जिनसे उच्च वर्ण घृणा करता था और उन्हें मंदिरों में जाने नहीं देता था। गुरु नानक देव भी ऐसे ही संस्कार लेकर उत्पन्न हुए थे। उच्च वर्ण द्वारा उनके समाज को ठेस पहुंचाई जा रही थी। गुरु नानक बचपन से ही इस अशोभनीय आचरण को देखकर व्यथित हो रहे थे। उन्होंने निर्गुण उपासना से संबंधित छुआछूत के विरोधी मार्ग को अपनाना ही श्रेयस्कर समझा।क्योंकि उन्हें मूर्ति पूजा,देव पूजा आदि में आडंबर की विकृत झलक दिखाई दी।

नानक देव बचपन से ही आत्मवादी, निर्गुणवादी, समतावादी,चिंतनशील थे। वे माया से मुक्त थे। उनके माता–पिता निर्धन किसान थे। उन्हें खेतों की रक्षा के लिए जाना पड़ता था। उन्होंने नानक को भी इसके लिए जब खेत पर भेजा, तो वे खेत पर जाकर निश्चिंत होकर सो गए। चिड़िया खेत में आकर दाना चुगने लगी। परंतु नानक ने उन्हें उड़ाया नहीं। उल्टे वे जोर जोर से बोलने लगे–

रामजी दी चिड़िया ,रामजी दा खेत।
खाओ री चिड़िया, भर भर पेट।।

अब उन्हें आत्मज्ञान हो गया। सभी प्राणियों में एक ही आत्मा है के सिद्धांत से उनका मन प्रफुल्ल हो उठा और वे आत्मवत् सर्वभूतेषु, बहुजन सुखाय बहुजन हिताय तथा वसुधैव कुटुंबकम की साधना और प्रक्रिया में लीन हो गए। उन्होंने सदाचार को धर्म का मूल माना और– सर्वे भवंतु सुखिनः सर्वे संतु निरामया। की आध्यात्मिक वसुधैव कुटुंबकम् की भावना से भर गए। इसके लिए उन्होंने घर छोड़ा और संतमत अपना लिया। उन्होंने देश–विदेश का भ्रमण भी किया। उनमें ऐसा सत्य पालन का चमत्कारी तेज दिखाई देने लगा, जिससे समाज उनके विचारों को अपनाने के लिए उनकी मान्यताओं को मानने में लग गया। वे समता भाव को सर्वोपरि महत्व देते थे। उन्होंने सभी से कहा कि समतावादी बनो,विनम्रता,दया,सहिष्णुता को धारण करो, दूसरों का उपकार करो तभी तुम्हारा कल्याण होगा। इसके लिए उन्होंने यह नारा लगाया कि–

नानक नान्हा हो चलो जैसी नान्ही दूब।
और घास जरि जायगी दूब खूब ही खूब।।

उनके इन्हीं सिद्धांतों पर बुद्ध देव की भाँति निर्गुण उपासना का जो पंथ चला वह 'नानक पंथ' कहलाया और इस पंथ में पंजाब प्रांत के लगभग सभी राजा और रंक सम्मिलित हो गए। वहाँ निर्गुण उपासना का बोलबाला हो गया। गुरु नानक देव ने अपने विचारों में निर्गुण ज्ञान,सदाचार, समता और परपीड़ा को दूर करने वाले सिद्धांतों को तो प्रश्रय दिया परंतु बुद्धदेव की भांति संतो के हठयोग को जनसामान्य के लिए कठिन और अप्रासंगिक मानकर अपने विचारों से अलग ही रखा। यही कारण था कि नाथ पंथियों और संतों के पंथ की कठिनाई से दूर रहने के कारण 'नानक पंथ' गांव–गांव, घर–घर और जन–जन में व्याप्त हो गया। हम इसे निर्गुण वाद की सहज साधना भी कह सकते हैं।

भारतीय संस्कृति उच्च आदर्शों पर आधारित है। उसमें राजनीतिक,सामाजिक, धार्मिक सभी उच्च आदर्श सम्मिलित हैं। गुरु नानक के पंथ में भी इन सभी आदर्शों का पालन और सम्मान सन्निहित है। राजनीतिक दृष्टि से उस समय मुसलमानों का राज्य था जो भारतीय संस्कृति के कट्टर विरोधी थे। शासक होने के कारण वे बलपूर्वक हिंदुओं को मुसलमान बना रहे थे और उनकी आदर्श परंपराओं को नष्ट करने में लगे हुए थे। मुसलमानों के इन अत्याचारों को नानक पंथी हिंदू शासक सहन नहीं कर सके और उन्होंने डटकर मुसलमानों के अत्याचारों को रोकने के लिए संघर्ष किया। ये शासक गुरु कहलाते थे। आगे चलकर नानक पंथ सिख धर्म में परिवर्तित हो गया। उनके 10 गुरुओं के संघर्ष का इतिहास आज भी स्वर्ण अक्षरों में लिखा हुआ है। बंदा बहादुर, गुरु अर्जुन देव, गुरु तेग बहादुर और गुरु गोविंद सिंह ने हंसते–हंसते बलिदान देकर भी अपने हिंदू धर्म के आदर्शों को नष्ट होने से बचाया था ।

गुरु गोविंद सिंह के समय में औरंगजेब का शासन था उसके संघर्ष में उनके दो बेटे फतेह सिंह और जोरावर सिंह को बंदी बनाकर जिंदा दीवार में चुनवा दिया गया था। केवल इसलिए कि वह हिंदू धर्म को त्याग कर इस्लाम कबूल कर लें। नानक पंथ सदाचार और दया पर आधारितहै। उन्होंने प्राण देना उचित समझा परंतु इस्लाम धर्म को स्वीकार नहीं किया। इस संबंध में यह पंक्तियां विशेष रुप से ध्यान देने योग्य हैं–

चुनते चुनते जब गर्दन तक आ पहुंची दीवार,
कहा उन्होंने –

जान बचाओ सरकार इस्लाम करो स्वीकार।
उनके मुख से 'हां' ना निकला साफ किया इन्कार।
उन्होंने साफ किया इन्कार।।

ऐसी कुर्बानियां देने का श्रेय गुरु नानक के आदर्श उपदेशों को ही जाता है।पंजाब के शासकों ने अपने धर्म की रक्षा के लिए बलिदान को अनिवार्य माना था। अतः गुरु नानक की शिक्षाओं का धर्म के संरक्षण के लिए क्रूर मुसलमान शासकों से रक्षा करने में अविस्मरणीय योगदान रहा।

गुरु नानक देव के समय हिंदू समाज वर्णों में विभाजित था। परंतु वर्ण व्यवस्था उस समय बिल्कुल छिन्न–भिन्न हो चुकी थी। छुआछूत और ऊंच–नीच का रोग इतना घातक बन गया था कि समाज की एकता छिन्न–भिन्न हो कर बिखर गई थी। इस व्यवस्था का खंडन तो बुद्धदेव के समय से ही हो रहा था परंतु यह निरंतर अपना प्रभाव दिखा रही थी। संत कवियों ने इसका भारी विरोध किया था। गुरु नानक ने इस कुप्रथा को समाप्त करने के लिए पुरजोर शब्दों में आवाज उठाई और अपने पंथ में सभी वर्णों के लोगों को सम्मिलित किया जिससे पंजाब प्रांत में जातिवाद का गढ़ ध्वंस हो गया और वहां जातीय एकता का व्यापक प्रभाव उद्भूत हुआ।इसीलिए आज भी सिख धर्म और नानक पंथ में सभी जाति के लोग बिना किसी भेदभाव के हिल मिलकर रह रहे हैं।गुरु नानक देव का भारतीय संस्कृति के सामाजिक दोषों को दूर करने में भारी योगदान है जो अभी तक प्रासंगिक है।

धार्मिक दृष्टि से गुरु नानक देव के समय निर्गुण और सगुण दोनों साधनाएं अपनाई जा रही थी। हिंदू समाज लोक और परलोक साधना के रूप में इन दोनों मार्गों का पालन कर रहा था।परंतु आडंबरौं के कारण और मुसलमानों द्वारा मंदिरों तथा मूर्तियों को नष्ट करने के कारण सगुण साधना विफल होती दिखाई दे रही थी। अतः ऐसे समय में गुरु नानक देव ने एकेश्वरवाद बनाम निर्गुण वाद तथा ज्ञानसाधना बनाम समतावाद का नारा लगाया,जिससे सभी धर्मों के लोग एक साथ बैठकर धर्म साधना करने का अवसर प्राप्त कर सकें। यह साधना अभी तक सिख संप्रदाय में विद्यमान है। और आज भी जिस की प्रासंगिकता अक्षुण्ण बनी हुई है।

गुरु नानक के सामाजिक विचार 'जपुजी' की आशा दीवार में उपलब्ध हैं।गुरु नानक ने सच्चे पूर्ण परमात्मा की खोज का मार्ग बताया। अहंकार, त्याग, गुरु की खोज और ज्ञान जप द्वारा सहज के मार्ग से प्रभु मिलन का विधान बताया।जिससे हिंदू और मुसलमान दोनों बहुत प्रभावित हुए।इन्होंने भटके हुए जनमानस को सुरुचिपूर्ण मार्गदर्शन दर्शाया।गुरु नानक साहित्य की विराट प्रतिभा एक समय में दो विरोधी किंतु एक दूसरे के पूरक जीवन तत्व या जीवन पक्षों को संयुक्त और सम्मिलित करने वाली प्रतिभा थी।कबीर की भांति उनके काव्य में निर्गुण पक्ष के प्रति उच्च कोटि की भक्ति भावना विद्यमान है।

इसके साथ साथ अन्य धार्मिक विचारधाराओं के लिए भी उनके मन में श्रद्धा थी।सत्य के प्रति आस्था के फलस्वरूप उनकी वाणी में स्पष्टता और उद्बोधन की प्रखरता मिलती है।गुरु नानक के पद और श्लोक आदि गुरु ग्रंथ साहिब में संकलित हैं।इनमें मुख्यतः गुरु के प्रशस्ति, जीव ब्रह्म के संबंध, अकाल का रूप और स्थान, माया बंधन काटने की प्रेरणा, निर्विकार शुद्ध मन, प्रभु नाम जपने का प्रोत्साहन आदि विषय लिए गए हैं। गुरु नानक ने प्रातः कालीन प्रार्थना के लिए 'जपुजी' की रचना की जो आज सिख सिद्धांतों का सर्ा कही जा सकती है।

डॉ मनमोहन सहगल के अनुसार गुरु नानक का उदय पंजाब प्रांत में उस समय हुआ जब मुगल सम्राट बाबर भारत में प्रवेश कर रहा था। पंजाब उस समय विदेशियों के भारत प्रवेश के लिए सिंह द्वार था। अतः सदैव आक्रमणकारियों द्वारा अधिक प्रताड़ित और पद दलित होता था। गुरु नानक के उदय से अत्याचारियों के विरुद्ध दबती आवाज को स्वर मिला और भारतीय सांस्कृतिक परंपरा के अनुसार नानक आगमन को– 'परित्राणाय साधुनाम्, विनाशाय च दुष्कृताम्।' के रूप में ही चित्रित किया गया।गुरु ग्रंथ साहिब के लिपिक भाई गुरु दास ने अपनी रचना में गुरु नानक देव के जन्म को इसी आलोक में चित्रित किया है–

भई गिलानि जगति विच चारि वरनि आस्रम उपाए।
खठाकुर दुआरे ढाहि कै तिहि ठउड़ी भासीति उसारा।
मारति गऊ गरीब नो धरती उपरि पापु विचारा।
सुणी पुकारि दातार प्रभु गुरु नानक जग माहि पठाइआ।
कलिजुग बाबे तारिआ सतिनामु पढ़ीं मंत्रु सुणाइआ।
कलि तारण गुरु नानक आइआ।।
टु दरसन बहु वैरि करि नालि छतिस पखंड रलाए।

गुरु नानक ने सामाजिक कुरीतियों, पाखंड, कर्मकांड तथा शत्रु के अन्यायपूर्ण अत्याचारों पर चोट की है साथ ही सामाजिक चलन को सुधारने के लिए कुछ कुरीतियों का यथार्थ भी बताया है यथा –

गऊ बिराहमण कउ करु लावहु गोबरि तरनु न जाई।
धोती टिका तै जपमाली धान मलेछा खाई।
अंतरि पूजा पड़हि कतेबा संजमु तुरका भाई।
छोड़ी ले पाखंडा।।

नानक देव ने कबीर की तरह ही हिंदू और मुसलमान दोनों की आलोचना की है।उन्होंने सामाजिक बुराइयों से बचने का उपदेश दिया, जादू टोना कर्मकांड आडंबर का विरोध किया।हिंदू मुसलमानों में समन्वय की भावना स्थापित की। गुरु नानक ने भारतीय परंपरित संस्कृति की महिमा का गुणगान किया।

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि गुरु नानक ने विकृत व चरमराती भारतीय संस्कृति का उत्थान करने के लिए ऐसा सहज,सरल, और सर्वग्राह्य मार्ग अपनाया जो आज भी प्रासंगिक और मान्य है। विश्व को एक नवीन दृष्टिकोण देने के कारण गुरु नानक विश्वविख्यात सुधारक कहलाये।

सन्दर्भ सूची

१. हिंदी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, डॉ राम कुमार वर्मा
२. हिंदी की निर्गुण काव्यधारा और उसकी दार्शनिक पृष्ठभूमि – डॉ गोविंद त्रिगुणायत
३. पंजाब में रचित हिंदी साहित्य का इतिहास – डॉ मनमोहन सहगल
४. रामचरितमानस में सांस्कृतिक चेतना – डॉ गीता रानी शर्मा
५. चिंतामणि प्रथम भाग – आचार्य रामचंद्र शुक्ल
६. कबीर ग्रंथावली – सं० श्याम सुन्दर दास
७. गुरुग्रंथ साहिब (देवनागरी लिपि)

गुरुनानकदेव जी की 'उदासियाँ'

* डॉ नीलम ऋषिकल्प

* रामलाल आनन्द कालेज, दिल्ली विश्वविद्यालय

'उदासियाँ शब्द से ऐसा आभास होता है की नानक देव जीवन से उदासी थे अथवा नानकदेवजी 'उदासीन' संप्रदायी थे। यहाँ यह स्पष्ट करना आवश्यक है कि नानक देव जी की ' उदासियाँ' उनकी वे संसारी यात्राएँ थी जो उन्होंने जन कल्याण के लिए की थीं वे न तो संसार से उदासीन थे और न वे उदासीन सम्प्रदायी थे। नानकदेव जी की इन यात्राओं का उद्देश्य 'सतनाम' के विचार और दर्शन को जन दृजन तक पहुंचाना था। माना जाता है की जिस समय नानकदेव जी का अवतरण हुआ था वह मुग़ल बादशाह बाबर का समय था और मुग़ल काल की नींव उस समय तक भारत में पड़चुकी थी बाबर की म्रत्यु के बाद उसका बेटा हुमायूं गद्दी का उत्तराधिकारी बना।

ऐतिहासिक अध्य्यनों से ज्ञात होता है की १०वीं शताब्दी से ही भारत मुस्लिम आक्रमणों से क्षत– विक्षत होने लगा था। अफगानों और तुर्कों ने समस्त उत्तर भारत पर अपना राज्य कायम कर लिया था। दिल्ली पहुँचने का मार्ग पंजाब से होकर था इसलिए इसा सूबे के लोगों को सदेव उनके हमलों का शिकार बनना पड़ता था। अपने सैन्यबल से वे केवल हिन्दुओं को शारीरिक पीड़ा ही नहीं पहुंचाते थे अपितु तरह दृतरह की टेक्स वसूली करके आर्थिक रूप से उनकी कमर तोड़ते थे। इसके साथ ही उनकी धार्मिक भावनाओं को कुचलने के लिए उनकी मूर्तियों और मंदिरों को ध्वस्त कर डाला इतना ही नहीं हिन्दुओं के गुरुकुल बंद करा दिए गए, हिन्दुओं को जबरदस्ती मुसलमान बनाया गया , हिन्दुओं के मनोबल को पूरी तरह समाप्त करने के लिए भारत की सभ्यता और संसर्कित को पूरी तरह कुचला गया और यह सब इतने बड़े पैमाने पर होता था कि कश्मीर से कन्याकुमारी तक लोगों में इस हद तक भय ही पैदा हो गया की उनकी जीने की इच्क्षा ही मरने लगी थी गुरुनानक ने अपनी आँखों से तत्कालीन पतित परिस्थितियों का चित्रण 'रामकली दी वार' में इसका वर्णन निभीक स्वरों में किया है ——

' पाप की जंज लै काब्लहु धाइआ ' जोरी मंगहीं दान वै लालो।।
सरमु धरमु दोई छापि खलोए, कूड फिरे परधानु वै लालो '।।
काजीयाँ बामणा की गली थकी , अगहु पडैं सैतान वै लालो।।

बाबर पाप की बारात लेकर चढ़ आया है और जबरदस्ती दान मांग रहा है शर्म ओर धर्म दोनों हिप गए हैं और झूठ प्रधान होकर घूम रहा है। काजियों ब्राह्मणों की बात समाप्त हो गयी है और विवाह के मंत्र शैतान पढवाता है।

१४६६–१५३६ का समय इतिहास की द्रष्टि से युगांतकारी माना जाता है। इस समय भारत और यूरोप दोनों देशों में युगांतकारी घटनाएं हुई। १४८५ में यूरोप में ''टयूडर ' की स्थापना के समय आधुनिक युग का आरम्भ हुआ। यह 'रिनेसाँ ' या 'पुनर्जागरण ' काल भी कहलाता हैद्य यह समय सामाजिक कार्यों ,धार्मिक सुधारों और अन्वेषणों का समय माना जाता है भारत में भी इसी समय भक्ति आन्दोलन हुआ और ऐतिहासिक द्रृष्टि से यह समय भक्ति काल के नाम से जाना जाता है। इसी समय में भारत की चारों दिशाओं से संतों और भक्तों की ओजस्वी वाणी के स्वर गूंजने लगे थे। महाराष्ट्र से एकनाथ तथा नामदेव , उत्तर भारत से रामानंद और कबीर, तुलसीदास , बंगाल से चेतन्य महाप्रभु , राजस्थान और गुजरात से बल्लभाचार्य ,मीराबाई जैसे प्रमुख संतों एकता , प्रेम और भाईचारे का सन्देश दिया। इन संतों की ओजस्वी वाणी के स्वरों से दुखी ओर पीड़ित जनमन को संबल अवश्य मिला किन्तु यदि हम तत्कालीन संतो के साहित्य का विश्लेषण करें तो देखते हैं कि उस समय के संत – साधकों की चेतना जीवन की क्षण – भंगुरता पर ही केन्द्रित थी या कहें कि वह निर्वित्तिमूलक धर्म को ही सही धर्म मानते रहे। किन्तु गुरु नानक जी ने जीवन की क्षणभंगुरता में भी समष्टि के कल्याण की नई चेतना को जोड़कर नई संभावनाओं को समाज के सामने उपस्थित किया है जिसके विषय में रमेशचंद्र मिश्र का कहना है– "परिवर्तन में नित्यावर्तन के विचार के साथ,क्षणभंगुरता की चेतना से प्रेरित रहकर, अनासक्त भाव अपनाते हुए लोकमंगल की साधना में निरत बने रहना। साथ ही गुरु नानक ने प्रवृत्ति मार्ग में, निर्वित्ति तत्व की प्राण प्रतिष्ठा करके, उसे जीवन के लिए उपयोगी बनाया है। इसलिए ही वे जीवन भर अपनी निर्वित्ति चेतना को प्रवृत्ति मूलकता में समाहित कर, जीवन पक्ष को सात्विकता प्रदान करते रहे।"

भाई गुरदास ने अपनी गुरुसाखी में लिखा है "मध्य युग के संत समाज सुधारकों में गुरु नानक देव जी का स्थान विशिष्ट है। उन्होंने अपने समाज की धड़कन को समझकर उसी के अनुकूल जीवन में आचरण के उपयुक्त आदर्शों, सिद्धान्तों और उपदेशों को अपनी बानी का

आभूषण बनाया। कोई भी सन्त या विचारक अपने समय के समाज, धर्म एवं ऐतिहासिक परिस्थितियों को अनदेखा नहीं कर सकता। यह उक्ति नानक देव जी के सन्दर्भ में भी सत्य चरितार्थ होती है। उनके समकालीन अथवा पूर्ववर्ती साधकों राजनैतिक दबाव के कारण अपने समय का खुलकर चित्रण नहीं किया जैसा नानक देव जी ने किया है। 'गुरुनानक का सिख धर्म ' लेख में त्रिलोचन सिह लिखते है "" नामदेव को तुगलक ने कैद किया , सिकंदर लोदी ने कबीरको कैद कर अनगिनत कष्ट दिए परुन्होंने बादशाहों के अत्याचार के विरुद्ध सीधे सीधे कुछ नहीं लिखा किन्तु गुरुनानक ने पहली बार ' आसा दी वार में लिखते हैं –"प्रत्येक भिक्षुक पंडित बनने का प्रयत्न करता है। अंधे परस्त्री बन गए हैं , शरारती आदमी चौधरी बन गए हैं"

ऐतहासिक तिथियों के आधार पर गुरुनानक देव जी का जन्म गुरुनानक जी का जन्म १४६६ अप्रैल १५ को लाहौर में बेदी क्षत्रिय परिवार में तलवंडी नामक स्थान में हुआ था जो आज करतार पुर के नाम से जाना जाता है ओर 'ननकाना' नाम से प्रसिद्ध है। आपके पिता का नाम कालूराम तथा माता का नाम तृप्ता जी था। आपकी एक बड़ी बहन थी जिनका नाम नानकी था उन्हीं के नाम से नानक जी का नाम रखा गया। उनकी प्रखर बुद्धि के आगे बचपन में ही मौलवी और पंडित नतमस्तक होने लगे। घर संसार में नानक देव की कोई रूचि नहीं रहती थी बल्कि उनका ध्यान सदैव ईश्वर सद में ही लगा रहता था छोटी उम्र में ही आपका विवाह करा दिया गया था किन्तु घर , पत्नी , बच्चों का मोह इन्हें कभी बाँध नहीं पाया। भाई गुरदास जो सिखों के सामंत माने जाते हैं उनहोंने अपनी रचनाओं में गुरुनानक जी के बारे में लिखा है 'त्रिविध ताप से जलती हुई सारी पृथ्वी को देखकर गुरुनानक ने समाधिस्थ हो गए , एक बार स्नान करने के लिए नदी में गए और तीन दिन बाद उसमें से बाहर निकले , एसा खा जाता है की समाधि टूटने पर उनके मुख से यही निकला " न कोइ हिन्दू हैं मुस्लमान " एक पिता के सब बारिक '। डॉ राधा कृष्णन ने अपनी पुस्तक ' सेक्रिड रेटिंग्स आफ दी सिख्स " में लिखा है –सचेत होने पर नानक देव गुफा से बाहर आए और उनके मुख से निकला "" न कोई हिन्दू है न मुसलमान "इसका र्थ उनके विचार में यह था की सब कोई मानवमात्र हैं , उसी महान शक्ति की संतान हैं। इस प्रकार उनहोंने मानव के सार्वभौम बंधुत्व पर बल दिया।" ध्यान योग के बल से गुरुनानक ने यह ही ज्ञान प्राप्त किया कि 'सच्चे गुरु के बिना जगत के चारों और तमोगुण और मोह का अन्धकार फैला हुआ है इस घोर तामसी अन्धकार में जगत के समस्त स्त्री पुरुष हाहाकार कर रहे हैं। कलयुग ऐसी छुरी है कि शासक बूचड़ बन चुके है। धर्म पंख लगाकर उड़ गया है अर्थात विलीन हो चुका है झूठ , असत्य की भयानक काली रात का अखंड शासन है और सत्य का चंद्रमा कहीं उदित होता दिखाई नहीं देता। माझ दी वार में गुरु नानक लिखते है –

कलि कानी राजे कसाई धरमु पंख करी उडारिया।
कूड अमावस सच चंद्रमा दीसे ना कह चढ़िया।

गुरुनानक देव ने यह सब अपनी आँखों से देखा जहाँ तलावार की धार पर इस्लाम शासन कर रहा है वहीँ हिन्दुओं का 'वेद ज्ञान' तंत्र साधना की ओर मुड़ गया है। नानकदेव जी समझ गए थे यह उदासीन्ता और निराशा मानवजाति और सामाजिक भविष्य के लिए बहुत बड़ा ख़तरा है नानक का सिख धर्म में डॉ त्रिलोचन सिंह लिखते हैं। "यह समय सांस्कृतिक बैचेनी,राजनैतिक उथल दृपुथल एवं चारित्रिक गिरावट का समय था। जिससे सारी जाति में संसार के प्रति उदासीन द्रष्टिकोण एवं एक प्रकार का अचेतन निराशावाद पैदा हो गया था। इस समय इस बात की आवश्यकता थी की इस निराशा वादी एवं सामाजिक उत्तरदायित्व से उपराम करने वाली रुचियों को झंझोड़ कर पलायनवादी स्वार्थ की निद्रा से जाग्रत किया जाए क्योंकि इन अधोगत रुचियों ने जाती एवं देश को निर्जीव एवं निराश बना दिया था।

नानकदेव जी समझ गए थे यह उदासीनता और निराशा मानवजाति और सामाजिक भविष्य के लिए बहुत बड़ा ख़तरा है। परमात्मा की प्रेरणा से उन्होंने जगत के कल्याण के निमित्त उदासी का वेश बनाया और इस परम्परा का अनुसरण करते बाबा नानक जी पृथ्वी के लोगों का कल्याण करने लिए अपने घर से निकल पड़े ' इस घटना का उल्लेख पुरातन जन्म साखी में भी मिलता है और भाई गुरदास ने इसे अपनी गुरुसाखी में लिखा है

'भारी करी तपस्सिया , बड़े भाग हरि सिउं बणि पाई।।
बाबा देखे ध्यान धरि, जलती सभी प्रिथिमी दिस आई।
बाबे भेख बणाइआ उदासी की रीति चलाई ।

गुरु गुरुनानक जी को सरलता से समझने के लिए उनके जीवन को तीन भागों में बांटकर समझा जा सकता है। १४६६–१४६६ लगभग २७ वर्ष उनका ग्रहस्थ जीवन और आत्मबोध का समय।१४६७ दृ १५२१ लगभग २५ वर्ष का समय पर्यटन (यात्राएं) सभी धर्मों का अध्ययन , और अपने विचारों का प्रचार दृप्रसार। १५२२– १५३६ लगभग १८ वर्ष रावी के किनारे करतारपुर में अवकाश कल औ सिख धर्म की नींव डाली।

नानक का सिख धर्म में डॉ त्रिलोचन सिंह लिखते हैं। "यह समय सांस्कृतिक बैचेनी,राजनैतिक उथल दृपुथल एवं चारित्रिक गिरावट का समय था। जिससे सारी जाति में संसार के प्रति उदासीन द्रष्टिकोण एवं एक प्रकार का अचेतन निराशावाद पैदा हो गया था। इस समय इस बात की आवश्यकता थी की इस निराशा वादी एवं सामाजिक उत्तरदायित्व से उपराम करने वाली रुचियों को झाझोड़ कर पलायनवादी स्वार्थ की निद्रा से जाग्रत किया जाए क्योंकि इन अधोगत रुचियों ने जाति एवं देश को निर्जीव एवं निराश बना दिया था।

"प्रथम यात्रा संवत १५५४ वि.मै सैदरपुर (अमीना या एमनाबाद)के काष्ठ शिल्पी ' 'लालो' के घर से शुरू हुई थी। वहां से वे कुरुक्षेत्र हरिद्वार होते हुए काशी , गया , पटना ,, जगन्नाथ पुरी में उन्होंने देवता की 'आरती ' करने का सच्चा मार्ग बताते हुए विराट देवता की आरती का उपदेश दिया इसी यात्रा के दौरान उनहोंने संवत १५६१ में रावी नदी के तात पर ' करतारपुर शर बसाया था

दूसरी यात्रा संवत १५६१– ६८ वि. के बीच हुई , जो बगदाद होते हुए मक्का मदीना की यात्रा थी इसमें आपने ' सत्य नाम के सन्देश का प्रचार किया था।

तीसरी यात्रा संवत १५६८–७२ के बीच की है , जो आबू दृगुजरात होते हुए दक्षिण में रामेश्वर और सिंहल

क्षेत्र की यात्रा मानी जाती है इसी यात्रा में कहते हैं की सिंगुरुनानक देव जी को सरलता से समझाने के लिए तीन भागो में बांटकर समझा जा सकता है – १४६६ दृ १४६६लगभग २७ वर्ष उनका ग्रहस्थ जीवन ओर आत्मबोध का समय। १४६७–१५२१ लगभग २५ वर्ष का समय पर्यटन (यात्राएं) सभी धर्मों का अध्ययन , और अपने विचारो का प्रसार प्रचार। १५२२– १५३६ लगभग १८ वर्ष रावी के किनारे करतारपुर में अवकाश काल और सिख धर्म की नींव डाली।

२५ वर्ष की लम्बी यात्राओं में गुरुनानक का ध्यान किसी सीमित क्षेत्र पर न होकर सारी मानव जाति के उद्धार पर केन्द्रित था। इन यात्राओं में उत्तर , दक्षिण, पूर्व , पश्चिम के सभी नगरों और प्रान्तों में गए थे । ऐसा माना जाता है कि गुरुनानक देव जी ने अधिकाँश यात्राएं पैदल ही चलकर की थीं। इन यात्राओं में गुरुनानक ने हिन्दुओं , मुसलामानों , ब्राह्मणों , को सभी को मानव धर्म का महत्व बतलाकर धरती पर शान्ति का सन्देश फैलाया। उनके अनुसार ना कोई छोटा है न बड़ा उनके सन्देश में स्त्री , दलित सभी बराबर सम्मान के अधिकारी हैं। गुरुनानक से पचास वर्ष पहले योरोप की स्त्रियों को भी जो अधिकार प्राप्त नहीं थे सोल्हवीं शताब्दी में सिख समाज की स्त्रियों को वो अधिकार गुरुनानक ने दिए। भाई गुरदास ने इसका उल्लेख गुरुनानक जी की बानी में किया है, "लोक वेद गुर ज्ञान विच अर्ध सरीरी मोख द्वार '' अर्थात स्त्री पुरुष की अर्धांगिनी है और मोक्ष का द्वार भी है। गुरु नानक के लिए

'गुरुनानक का सिख धर्म ' लेख में त्रिलोचन सिह लिखते है ""नामदेव को तुगलक ने कैद किया , सिकंदर लोदी ने कबीरको कैद कर अनगिनत कष्ट दिए परुन्होंने बादशाहों के अत्याचार के विरुद्ध सीधे सीधे कुछ नहीं लिखा किन्तु गुरुनानक ने पहली बार ' आसा दी वार में लिखते हैं – ''प्रत्येक भिक्षुक पंडित बनने का प्रयत्न करता है। अंधे परस्त्री बन गए हैं , शरारती आदमी चौधरी बन गए हैं" गुरुनानक जी की प्रमुख शिक्षा ' किरत कमाई , नाम जप, बंड छको' अर्थात यह जीवन अच्छे कर्म करने, नाम जपने और बांटकर खाने के लिए है।

सिख जीवन की शिक्षा संसार से विमुखता नहीं अपितु संसार के बीच ही मुक्ति का मार्ग बताती है " हाथ पेर से कामकर चित निरंजन देऊ। मोक्षका द्वार संसार को त्याग कर नहीं अपितु इसी संसार में से होकर है और बहुत सरलता से मुक्ति को पाया जा सकता है। वह सरल मार्ग गुरुनानक के अनुसार " हंस्दियाँ , खेडदियां ,खान्दियाँ , पहनदियां विच होवे मुक्ति।

यह सत्य है की गुरु नानक ने मुक्ति का जो सरल मार्ग बताया उसमें अकेले मनुष्य की ही मुक्ति नहीं अपितु सभी तरह के देहिक , दैविक तापो से समस्त मानव जाती की मुक्ति संभव है। गुरुनानक देव जी के विषय में डॉ जाकिर हुसैन के शब्दों " गुरुनानक युग , जीवन और शिक्षाएं " का उल्लेख करना महत्वपूर्ण होगा। "'पंचम जन्म शताब्दी सुख धर्म के उस प्रवर्तक के प्रति उपयुक्त श्रधान्जली है जो शान्ति , एकता , प्रेम ,और मानव भ्रातत्व भाव के प्रतीक थे और जो अपनी मानवता वादी तराशती के कारण , सभी धर्मावलम्बियों द्वारा प्रशंसित और सम्मानित थे।

नानक शाह फ़कीर।
हिन्दू का गुरु ,
मुसलमान का पीर।

सहायक ग्रन्थ सूची

१. गुरुनानक देव– जय प्रकाश मिश्र (लोक भारती प्रकाशन)
२. सप्तसिन्धु दृनानकवाणी – रमेशचंद्र मिश्र
३. गुरुनानकदेव दृजीवन व्रतान्त ,संपादक–जसबीर सिंह
४. गुरुनानक जीवनी, युग एवं शिक्षाएं–संपादक दृगुरुमुख निहालसिंह
५. गुरुनानक का सिख धर्म– डॉ त्रिलोचन सिंह

गुरु नानक और संत साहित्य

* डॉ. मीनाक्षी कुमार

* जीसस एण्ड मैरी कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय

संत शब्द की व्युत्पति 'सन्न+क्त' शब्द के जोड़ से हुई है। संत का अर्थ है 'अंजलि' अर्थात व्यष्टि का समष्टि के लिए पूर्ण समर्पणद्य विभिन्न भारतीय भाषाओ में संत शब्द का प्रयोग किया गया है। वैसे हिंदी में को संत कहा गया है, तो मराठी में भक्त भी संत के अंतर्गत आते है। "उपनिषद के अनुसार यह विशिष्ट देवता के विशेषण के रूप में प्रयुक्त हुआ है जो सर्वभूतरत, सर्वव्यापी, चैतन्यस्वरूप और निरुपाधि है।"[1] महाभारत के वन पर्व के अंत में 'संतो दिक' अर्थात संत ही दिशा है, कहा गया है। " सावित्री आख्यान में सावित्री कहती है—— "मनुष्य को जितना विश्वास अपना नहीं होता, उतना संतो का होता है।"[2]

भारतीय साहित्य में इसका आगमन के सूत्र सर्वप्रथम दक्षिण में तमिल साहित्य के रूप में देखे गएः— "जैन और बौद्ध का प्रभाव भी आरंभिक तमिल कविता पर ही रहाद्य विरक्ति और नीति—उपदेशपरक रचनाये, दूसरी से सातवी शती ईसवी कि मिलती हैः 'किलक्कनक्कू', 'मुदमोलिक कांची', इत्यादिद्य जीवन के सुख दुखात्मक मिश्रण के प्रति संभव का यह उपदेश संत्काव्य के मूल में है।"[3]

आगे चलकर तमिल में संत तिरुवल्लुवर, तेलुगु में संत वेमना, कन्नड़ में बसवेश्वर, महादेवी अवका अलयमप्रभु इत्यादि संतो द्वारा संत साहित्य विस्तृत होकर उत्तर भारत में फैलाद्य उत्तर भारत में बौद्ध मत और तंत्रयान ने उसमे सिद्ध नाथ संप्रदाय जोड़कर गोरखनाथ के रूप में विस्तृत किया। यहाँ शक्ति और शिव इस प्रकार की निर्गुण संत मतधारा के प्रथम उपास्य बनेद्य आगे चलकर उत्तर भारत में इसी परम्परा के प्रवर्तक कबीर, दादू, नानक, तुकाराम, नामदेव इत्यादि बनेद्य "इन संतो ने प्रेम पर इतना अधिक ज़ोर दिया है कि भक्त के बिना भगवान को भी अपूर्ण बताया है। इनकी प्रेम साधना साधारणतः निम्नलिखित आकारों मे प्रकट हुईः—

1. भगवान को अंतर में ही रखना चाहिए, बाहर प्रदर्शन करने पर वह दिखाने की चीज़ हो जाता है।
2. इस रस को जिसने पाया है वही जला है।
3. इस प्रेम—लीला में भक्त के समान ही भगवान भी उत्सुक है।
4. जिसने प्रेम के क्षेत्र में भगवान के योग पाया है, वही वास्तव में योगी है।
5. इस प्रेम कि ज्वाला में जलकर ही भगवन ने अनाहत संगीत की तरह इस सुन्दर सृष्टि की रचना की है।
6. पवन, जल, आकाश, धरती, सूर्य, चन्द्र ये सभी भगवान के प्रेम के रूप है, इत्यादिद्य"[4]

"आरम्भ में 'संत' में बुद्धि, विवेक, दूरदर्शिता, गुणग्राहकता आदि कि प्रधानता थी, बाद में अर्थ में वैराग्य, सर्वसंगपरित्याग, मुक्ति—कामना आदि गुण बढे। रहस्यवाद का सम्बन्ध संत से बढ़ता गया।"[5]

उत्तर भारत की संत परंपरा

भारत की पावन भूमि पर कई संत—महात्मा अवतरित हुए हैं, जिन्होंने धर्म से विमुख सामान्य मनुष्य में अध्यात्म की चेतना जागृत कर उसका नाता ईश्वरीय मार्ग से जोड़ा है। ऐसे ही परंपरा का निर्वाह संतो ने किया। संतो की परंपरा बहुत पहले से भारत के विभिन्न क्षेत्रो में देखी जा सकती है। परन्तु दक्षिण से जब उत्तर भारत में यह परंपरा देखी गयी तो वहाँ गुरु रामानंद द्वारा दी गयी दीक्षा इसके मूल में काम कर रही थीद्य कबीर द्वारा इस शिष्य परंपरा का सूत्रपात हुआ जो आगे चलकर अन्य संतो में भी दिखायी दियाः— "भक्ति द्रविड़ उपजी लाये रामानंद, परगट कियो कबीर सात द्वीप नौ खंड।"

कबीर का नाम उत्तर भारत कि संत परंपरा में सर्वप्रथम लिया जाता है इसीलिए इनका स्थान अन्यतम है। वैसे कबीर के जन्म और माता—पिता को लेकर बहुत विवाद है। लेकिन यह स्पष्ट है कि कबीर जुलाहा थे, क्योंकि उन्होंने अपने को कविता में अनेक बार जुलाहा कहा है साथ ही जन्म को लेकर 1397 ई. का समय स्पष्ट माना जाता है।

कहा जाता है कि वे विधवा ब्राह्मणी के पुत्र थे, जिसे लोकापवाद के भय से जन्म लेते ही काशी के लहरतारा ताल के पास फेंक दिया गया थाद्य अली और नीरू नामक जुलाहा बच्चे को अपने यहाँ उठा लायेद्य इस प्रकार कबीर ब्राह्मणी के पेट से उत्पन्न हुए थे, लेकिन उनका पालन—पोषण जुलाहे के यहाँ हुआद्य बाद में वे जुलाहा ही प्रसिद्ध हुए। उनकी जाति के विषय में आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने अपनी पुस्तक 'कबीर' में प्राचीन उल्लेखों, कबीर की रचनाओं, प्रथा, वयनजीवी अथवा बुनकर जातियों के रीति—रिवाजों का विवेचन—विश्लेषण करके दिखाया है.:

"आज की वयनजीवी जातियों में से अधिकांश किसी समय ब्राह्मण श्रेष्ठता को स्वीकार नहीं करती थीद्य जागी नामक आश्रम–भ्रष्ट घरबारियों की एक जाति सारे उत्तर और पूर्वी भारत में फैली थीद्य ये नाथपंथी थेद्य कपड़ा बुनकर और सूत कातकर या गोरखनाथ और भरथरी के नाम पर भीख माँग कर जीविका चलाया करते थेद्य इनमें निराकार भाव की उपासना प्रचलित थी, जाति भेद और ब्राह्मण श्रेष्ठता के प्रति उनकी कोई सहानुभूति नहीं थी और न अवतारवाद में ही कोई आस्था थीद्य आसपास के वृहत्तर हिन्दू–समाज की दृष्टि में ये नीच और अस्पृश्य थेद्य मुसलमानों के आने के बाद ये धीरे–धीरे मुसलमान होते रहे। पंजाब, उत्तर प्रदेश, बिहार और बंगाल में इनकी कई बस्तियों ने सामूहिक रूप से मुसलमानी धर्म ग्रहण किया. कबीर दास इन्हीं नवधर्मांतरित लोगों में पालित हुए थे।"

वैसे वे रामानंद के शिष्य के रूप में विख्यात हैं। किन्तु उनके 'राम' रामानंद के 'राम' नहीं हैं बल्कि उनके राम का निर्गुण स्वरुप है। इसका कारण उनके व्यक्तित्व, उनकी साधना और काव्य में कुछ ऐसी विशेषताएँ हैं जो हिन्दू या मुसलमान कहने–भर से नहीं प्रकट होतींद्य उनका व्यक्तित्व दोनों में से किसी एक में नहीं समाताद्य उन्होंने संत साहित्य के द्वारा समाज में सुधार लाने की कोशिश की इसीलिए उन्हें कवि रूप में ना मानकर सुधारक के रूप में याद किया जाता है। अपने समय में हिन्दू मुस्लिम एकता को बनाने के लिए उन्होंने अनेक दोहे लिखेद्य उनकी लेखनी के पीछे मानवतावादी दृष्टिकोण काम कर रहा थाद्य यही उनकी काव्य की नीव है जिसे आगे चलकर अन्य संतो ने अपनाया।

कबीर की भाँति दादू के जन्म और उनकी जाति के विषय में विवाद और अनेक किंवदंतियाँ प्रचलित है। पं. रामचंद्र शुक्ल का विचार है कि उनकी बानी में कबीर का नाम बहुत जगह आया है और इसमें कोई संदेह नहीं कि वे उन्हीं के मतानुयायी थेद्य वे आमेर, मारवाड़, बीकानेर आदि स्थानों में घूमते हुए जयपुर आए। वहीं के भराने नामक स्थान पर 1603 ई. में शरीर छोड़ा. वह स्थान दादू पंथियों का केन्द्र है। दादू की रचनाओं का संग्रह उनके दो शिष्यों संतदास और जगनदास ने 'हरडेवानी' नाम से प्रकाशित किया थाद्य बाद में रज्जब ने इसका सम्पादन 'अंगवधू' नाम से किया.

दादू की कविता जन सामान्य को ध्यान में रखकर लिखी गई है, अतएव सरल एवं सहज है। दादू की रचनाओं में भगवान के प्रति प्रेम और व्याकुलता का भाव है। कबीर की भाँति उन्होंने भी निर्गुण निराकार भगवान को वैयक्तिक भावनाओं का विषय बनाया है। उनकी रचनाओं में इस्लामी साधना के शब्दों का प्रयोग खुलकर हुआ है। उनकी भाषा पश्चिमी राजस्थानी से प्रभावित हिन्दी है। इसमें अरबी–फ़ारसी के काफ़ी शब्द आए हैं, फिर भी वह सहज और सुगम है।

दादूदयाल के बाद संत रज्जब का नाम सामने आता है। इनका समय 17 वी शताब्दी का माना जाता है। रज्जब दादू के शिष्य थेद्य इनकी कविता की विशेषता को पं. हजारीप्रसाद द्विवेदी ने इन शब्दों में व्याख्यायित किया हैः

"रज्जब दास निश्चय की दादू के शिष्यों में सबसे अधिक कवित्व लेकर उत्पन्न हुए थेद्य उनकी कविताएँ भावपन्न, साफ और सहज हैं। भाषा पर राजस्थानी प्रभाव अधिक है और इस्लामी साधना के शब्द भी अपेक्षाकृत अधिक हैं।"

अगले संत मलूकदास है। इनका नाम औरंगज़ेब के समय में दिल के अंदर खोजने वाले निर्गुण मत के नामी संतों में शामिल हैं और उनकी गद्दियाँ कड़ा, जयपुर, गुजरात, मुलतान, पटना, नेपाल और काबुल तक में कायम हुईद्य इनके संबंध में बहुत से चमत्कार और करामातें प्रसिद्ध हैं। ऐसा कहा जाता है कि एक बार इन्होंने एक डूबते हुए शाही जहाज को पानी के ऊपर उठाकर बचा लिया था और रूपयों का तोड़ा गंगाजी में तैरा कर कड़े से इलाहबाद भेजा था. इनके द्वारा ही आलसियों का यह मूल मंत्र भी दिया गया हैः

"अजगर करे न चाकरी, पंछी करे न काम
दास मलूका कहि गए, सबको दाता राम।

हिन्दुओं और मुसलमानों दोनों को उपदेश में प्रधान मानने के कारण दूसरे निर्गुणमार्गी संतों के समान ही इनकी भाषा में भी फ़ारसी और अरबी शब्दों का प्रयोग है। इसी दृष्टि से बोलचाल की खड़ीबोली का पुट इस सब संतों की बानी में एक सा पाया जाता है। इन सब लक्षणों के होते हुए भी इनकी भाषा सुव्यवस्थित और सुंदर है। इनकी प्रसिद्ध रचनाओ में 'रत्नखान' और 'ज्ञानबोध' है।

आगे चलकर सुंदरदास भी दादू की शिष्य परंपरा में शामिल हो गए थेद्य दादू की मृत्यु के बाद एक संत जगजीवन के साथ वे 10 वर्ष की आयु में काशी चले आए। वहाँ 30 वर्ष की आयु तक उन्होंने जमकर अध्ययन किया। निर्गुण संत कवियों में सुंदरदास सर्वाधिक शास्त्रज्ञ एवं सुशिक्षित थेद्य सुशिक्षित होने के कारण उनकी कविता कलात्मकता से युक्त और भाषा भी अत्यंत परिमार्जित है।

काव्यकला में शिक्षित होने के कारण उनकी रचनाएँ निर्गुण साहित्य में विशिष्ट स्थान रखती हैं। निर्गुण साधना और भक्ति के अतिरिक्त उन्होंने सामाजिक व्यवहार, लोकनीति और भिन्न क्षेत्रों के आचार–व्यवहार पर भी उक्तियाँ कही हैं। लोकधर्म और लोक मर्यादा की उन्होंने अपने काव्य में उपेक्षा नहीं की है।

निर्गुण संतों ने गेय पद और दोहे ही लिखे हैं जबकि सुंदरदास ने कवित्त और सवैये भी रचे हैं। उनकी काव्यभाषा में अलंकारों का भी प्रयोग खूब हुआ है। उनका सर्वाधिक प्रसिद्ध ग्रंथ 'सुंदरविलास' है।

संत परंपरा में धर्मदास का भी महत्वपूर्ण स्थान है। ये बांधवगढ़ के रहनेवाले और जाति के बनिए थेद्य बाल्यावस्था में ही इनके हृदय में भक्ति का अंकुर था और ये साधुओं का सत्संग, दर्शन, पूजा, तीर्थाटन आदि किया करते थे.द्यएक बार मथुरा से लौटते समय कबीरदास के साथ इनका साक्षात्कार हुआद्य उन दिनों संत समाज में कबीर पूरी प्रसिद्धि हो चुके थेद्य कबीर के मुख से मूर्तिपूजा, तीर्थाटन, देवार्चन आदि का खंडन सुनकर इनका झुकाव 'निर्गुण' संतमत की ओर हुआद्य अंत में ये कबीर से सत्य नाम की दीक्षा लेकर उनके प्रधान शिष्यों में शामिल हो गए। कबीरदास के शिष्य होने पर इन्होंने अपनी सारी सम्पत्ति, जो बहुत अधिक थी, लुटा दीद्य इनकी शब्दावली का भी संतों में बड़ा आदर है। इनकी रचना थोड़ी होने पर भी कबीर की अपेक्षा अधिक सरल भाव लिए हुए है, उसमें कठोरता और कर्कशता नहीं है। इनकि भाषा पर पूर्वी भाषा का प्रभाव है। इन्होंने

खंडन–मंडन से विशेष प्रयोजन न रख प्रेमतत्व को लेकर अपनी वाणी का प्रसार किया है।

रैदास का स्थान भी संतो में अन्यतम है। रामानंद जी के बारह शिष्यों में रैदास भी माने जाते हैं। उन्होंने अपने एक पद में कबीर का उल्लेख किया है, जिससे स्पष्ट हो जाता है कि वे कबीर से छोटे थेद्य अनुमानतः 15वीं शती उनका समय रहा होगाद्य धन्ना और मीराबाई ने रैदास का उल्लेख आदर से किया है।

रैदास के पद आदि गुरुग्रंथ साहब में संकलित हैं। रैदास की भक्ति का ढाँचा निर्गुणवादियों का ही है, किन्तु उनका स्वर कबीर जैसा आक्रामक नहींद्य रैदास में निरीहता के साथ–साथ कुंठाहीनता का भाव भी मिलता है। भक्ति–भावना ने उनमें वह बल भर दिया था जिसके आधार पर वे डंके की चोट पर घोषित कर सकें कि उनके कुटुंबी आज भी बनारस के आस–पास ढोर (मूर्दा पशु) ढोते हैं और दासानुदास रैदास उन्हीं का वंशज है। संतो की परम्परा का निर्वाह करते हुए वे समानता के भाव के साथ ही मानवता को प्रतिष्ठित करने पर जोर देते है।

संतो की परंपरा में गुरु नानक का महत्वपूर्ण स्थान है। पंजाब में मुसलमान बहुत दिनों से बसे थे जिससे वहाँ उनके कट्टर 'एकेश्वरवाद' का संस्कार धीरे – धीरे प्रबल हो रहा था। लोग बहुत से देवी देवताओं की उपासना की अपेक्षा एक ईश्वर की उपासना को महत्व और सभ्यता का चिह्न समझने लगे थे। शास्त्रों के पठन पाठन का क्रम मुसलमानों के प्रभाव से प्रायः उठ गया था जिससे धर्म और उपासना के गूढ़ तत्व को समझने की शक्ति नहीं रह गई थी। अतः जहाँ बहुत से लोग जबरदस्ती मुसलमान बनाए जाते थे वहाँ कुछ लोग शौक़ से भी मुसलमान बनते थे। ऐसी दशा में कबीर द्वारा प्रवर्तित 'निर्गुण संत मत' एक बड़ा भारी सहारा समझ पड़ा।

गुरुनानक आरंभ से ही भक्त थे अतः उनका ऐसे मत की ओर आकर्षित होना स्वाभाविक था, जिसकी उपासना का स्वरूप हिंदुओं और मुसलमानों दोनों को समान रूप से ग्राह्य हो। " उनकी बानियों का मूल कथ्य वही है जो कबीर का है; जैसे– नाम माहात्म्य, गुरुमहिमा, जाति–पांति का विरोध, ब्रम्ह कि व्यक्तिक अनुभूति, सत्य, अहिंसा, परोपकार आदिद्य पर उनके स्वर में गहरी शांति, शीतलता और निर्वैयक्तिकता है।"[6] गुरु नानक ने घर बार छोड़ बहुत दूर के देशों में भ्रमण किया जिससे उपासना का सामान्य स्वरूप स्थिर करने में उन्हें बड़ी सहायता मिली। अंत में कबीरदास की 'निर्गुण उपासना' का प्रचार उन्होंने पंजाब में आरंभ किया और वे सिख संप्रदाय के आदिगुरु हुए।

गुरु नानक ने सिख धर्म का प्रवर्त्तन किया। धर्म उस समय काफी थोथी रस्मों और रीति–रिवाजों का नाम बनकर रह गया था। उत्तरी भारत के लिए यह कुशासन और अफरा–तफरी का समय था। सामाजिक जीवन में भारी भ्रष्टाचार था और धार्मिक क्षेत्र में द्वेष और कशमकश का दौर था। न केवल हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच में ही, बल्कि दोनों बड़े धर्मों के भिन्न–भिन्न संप्रदायों के बीच भी। गुरु नानक ने अपनी कविताओ में ऐसे उपदेश दिए जिससे पथभ्रष्ट जनता को सुगम मार्ग मिल सकेद्य हिन्दू मुस्लिम के बीच के द्वेष को मिटाने के लिए उन्होंने कहा कि अच्छे सामाजिक कार्य करना ही ईश्वर की सेवा है। उनके शब्दों में:– "धर्म केवल शब्दों का जाल नहीं है;

जो व्यक्ति सब मनुष्यों को समान मानता है, वही धार्मिक है।

संसार की बुराइयों के बीच शुद्ध रहो;
तुम्हे धर्म का सच्चा मार्ग मिल जायेगा।"[7]

इनके द्वारा रचित भक्ति और विनय के पद बहुत मार्मिक बन पड़े हैं।

गुरु नानक के समय में ब्राह्मणवाद ने अपना एकाधिकार बना रखा था। उसका परिणाम यह था कि गैर–ब्राह्मण को वेद शास्त्राध्यापन से दूर किया जाता था। निम्न जाति के लोगों को इन्हें पढ़ना बिलकुल वर्जित था। साथ ही उन्हें सामाजिक कृत्यों से भी वंचित किया जाता थाद्य इस ऊँच–नीच का गुरु नानकदेव पर बहुत असर पड़ा। वे कहते हैं कि ईश्वर की निगाह में सब समान हैं। गुरु नानक ने कबीर की ही तरह उलटबाँसी शैली नहीं अपनाई है:–

"......उनकी उक्तियों में कबीर कि तरह तीव्रता नहीं है। फिर भी उन्होंने समाजमें प्रचलित भेदभाव को बुरा समझा .....कबीर कि दृष्टि में भेद–भाव रहना इसीलिए अन्यायमूलक नहीं था कि उसमे एक स्तर के मनुष्यों पर निर्दयता का व्यवहार हो रहा है और वह मनुष्य का कर्तव्य होना चाहिए कि उन दलित मनुष्यों को भी अपनी बराबरी का समझेद्य वे स्वयं उस लांछना को भोग चुके थे, इसीलिए, उनकी उक्तियों में उस विधान के लिए लोग उत्तरदायी है, उन पर खुला आक्रमण किया है। पर नानक की साम्य–भावना विचार–प्रसूत और करुणामूलक थी।"[8]

ऐसी ही ऊंच–नीच का विरोध करते हुए गुरु नानकदेव अपनी मुखवाणी 'जपुजी साहिब' में कहते हैं कि:–

नीचो में भी नीचतम मनुष्य है;
नानक इनके पास ही जायेगा।
उसे बड़े आदमियों से क्या लेना–देना है?

ईश्वर की कृपा–दृष्टि उन पर ही पड़ती है जो सबसे कुचले हुए लोगों की मदद करते है।

जाति–पांति निरर्थक है,
ओहदे और उपाधियाँ निरर्थक हैं।"[9]

'अर्थात ईश्वर की निगाह में छोटा–बड़ा कोई नहीं फिर भी अगर कोई व्यक्ति अपने आपको उस प्रभु की निगाह में छोटा समझे तो ईश्वर उस व्यक्ति के हर समय साथ है। यह तभी हो सकता है जब व्यक्ति ईश्वर के नाम द्वारा अपना अहंकार दूर कर लेता है। तब व्यक्ति ईश्वर की निगाह में सबसे बड़ा है और उसके समान कोई नहीं।

गुरु नानक देव ने पित्तर–पूजा, तंत्र–मंत्र और छुआ–छूत की भी आलोचना की। इस प्रकार हम देखते हैं कि गुरु नानक साहिब हिंदू और मुसलमानों में एक सेतु के समान हैं। हिंदू उन्हें गुरु एवं मुसलमान पीर के रूप में मानते हैं। हमेशा ऊंच–नीच और जाति–पाति का विरोध करने वाले नानक के सबको समान समझकर 'गुरु का लंगर' शुरू किया, जो एक ही पंक्ति में बैठकर भोजन करने की प्रथा है।

नानक ने स्त्री का पशु समान जीवन और उस पर हो रहे अत्याचारों का भी घोर विरोध किया है। वे नारी पर हो रहे रूढ़ प्रथाओ का खुल कर विरोध कर रहे है:–

"जिन सिर सोहन पटीआ माँगी पाई संधूरद्य
ते सिर काती मुनीअही गल बिचि आपै धूड।।"[10]

स्त्री जीवन के प्रति भावनात्मक विचारो के साथ ही गुरु नानक ने अपने समय में हुए विदेशी आक्रमण के लिए भी अपना विरोध को अपने विचारों के द्वारा खुलकर अभिव्यक्त किया हैः–

”खुरसान खमसान कीया हिन्दुस्तान डराइआ।
आपै दोस न देई करता जपु करि मुग़ल चढ़ाइया।
एती मार पई कुर लाण तै की दरदु न आइया।“[11]

विदेशी आक्रमणकारियों विशेषतः मुस्लमान नवाबो और बादशाहों के अत्याचारों का दर्द गुरु नानक को अत्यधिक आहत कर गया।

कबीरदास के समान वे भी कुछ विशेष पढ़े लिखे न थे। भक्तिभाव से पूर्ण होकर वे जो भजन गाया करते थे 'आदिगुरु ग्रंथ साहब' के अंतर्गत 'महला' नामक प्रकरण में इनकी बानी संकलित है। उसमें सबद और श्लोक दोनों मिलते हैं। साथ ही इनकी रचनाओ में जपुजी, आसादीवार, रहिरास, सोहिला इत्यादि विशेष ख्याति प्राप्त है।

”हिंदी में गुरु नानक ने बहुत कम लिखा है। उनकी अधिकांश उक्तियों में पंजाबीपन अधिक है लेकिन नानक नाम देकर अन्यान्य गुरुओ ने भी पद लिखे है। इन पदों कि भाषा हिंदी है। बहुत लोगों ने भ्रमवश इन सभी उक्तियो को नानक की रचना समझ लिया।“[12]

गुरु नानक ने भक्त या विनय के सीधे सादे भाव सीधी सादी भाषा में कहे गए हैं। उन्होंने कबीर के समान टेढ़े मेढ़े रूपकों का प्रयोग नहीं किया है। इससे इनकी प्रकृति की सरलता और अहंभावशून्यता का परिचय मिलता है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के शब्दों मेंः– ”नानक कि रचनाओ में एक अत्यंत अहंभाव–हींन निरीह भक्त का परिचय मिलता है। भाषा सादी, सहज और प्रभाव डालनेवाली है। पदों में कबीर की–सी मस्ती तो नहीं है, पर श्रध्दा और भगवान के प्रति विश्वास प्रचुर मात्रा में है। कबीरदास कि भांति नाना जाति के साधको से गृहीत शास्त्रीय शब्दों का अभिनव अर्थ इन्होने नहीं किया और न रूपक आदि अलंकारो का आश्रय लेकर पदों को कवित्वपूर्ण बनाया है। साफ़ भाषा के दर्पण में उनके मनोभाव सुंदर रूप में प्रतिफलित हुए है।“[13]

आगे चलकर गुरु नानक की ही परम्परा में उनके उत्तराधिकारी संत गुरु कवि हुए। इनमें हैदृ गुरु अंगद (जन्म 1504 ई.), गुरु अमरदास (जन्म 1479 ई.), गुरु रामदास (जन्म 1514 ई.), गुरु अर्जुन (जन्म 1563ई.), गुरु तेगबहादुर (जन्म 1622ई.) और गुरु गोविन्द सिंह (जन्म 1664ई.) इत्यादिद्य इन्होने गुरु नानक द्वारा स्थापित परंपरा का निर्वाह किया।

संदर्भ

1. हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहासःडॉ.बच्चन सिंह; राधाकृषण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, दिल्ली, 2005, पृ. 82.
2. भारतीय साहित्य का समेकित इतिहासः डॉ. नगेन्द्रः हिंदी माध्यम कार्यन्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, 2013, पृ. 189
3. भारतीय साहित्य का समेकित इतिहासः डॉ. नगेन्द्रः हिंदी माध्यम कार्यन्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, 2013, पृ. 191
4. हिंदी साहित्य की भूमिकाः आचार्य हजारीप्रसाद दिवेदी; राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 2006, पृ. 48–49
5. भारतीय साहित्य का समेकित इतिहासः डॉ. नगेन्द्रः हिंदी माध्यम कार्यन्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, 2013, पृ. 190
6. हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहासः डॉ. बच्चन सिंहः राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, 2005, पृ. 94
7. भारतीय चिंतन परम्पराः के. दामोदरन; पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस (प्रा.) लि.,दिल्ली, 2001, पृ. 333
8. हिंदी साहित्य की भूमिकाः आचार्य हजारीप्रसाद दिवेदी; राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 2006, पृ. 94
9. भारतीय चिंतन परम्पराः के. दामोदरन; पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस (प्रा.) लि.,दिल्ली, 2001, पृ. 334
10. हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहासः डॉ. बच्चन सिंहः राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, 2005, पृ. 94
11. हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहासः डॉ. बच्चन सिंहः राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, 2005, पृ. 94
12. हिंदी साहित्य की भूमिकाः आचार्य हजारीप्रसाद दिवेदी; राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 2006, पृ. 94–95
13. हिंदी साहित्य की भूमिकाः आचार्य हजारीप्रसाद दिवेदी; राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 95

गुरु नानक का जीवन दर्शन :मानवीय चेतना

*नीतू कुमारी

* शोधार्थी, दयालबाग एजुकेशनल इंस्टीट्यूट, दयालबाग, आगरा

गुरु नानक का जन्मब 15 अप्रैल1469ई० स०1526को वैशाख शुदी 3 को तलवंडी गांव में हुआ था। किसी अज्ञात कारणवश गुरु नानक देव का जन्म उत्सव कार्तिक पूर्णिमा को मनाया जाता है। बंटवारे के कारण तलवंडी दुर्भाग्यवश पाकिस्तान में चला गया ।तब से इसे ननकाना साहिब कहा जाने लगा ।गुरु नानक जी के जन्म के विषय में मुसलमान दाई दौलता ने बताया यह बालक अनोखी शक्ति वाला नजर आता है। जिस समय बालक का जन्म हुआ उस समय बालक हंसा और हंसी के साथ कमरे में एकअनोखा प्रकाश दिखाई दिया। यह प्रकाश उस ज्ञान का साक्षी था जो गुरु नानक देव को ईश्वर से मिला। गुरु नानक के विषय में विद्वानों ने भविष्यवाणी की थी कि यह बालक बड़ा होकर संसार को नया मार्ग दिखाएगा उनके पुरोहित गुरुजी ने मस्तिष्क को देखकर गुरु नानक के विषय में कहा–" इस बालक के सिर पर छात्र झूलेगा हिंदू और मुसलमान दोनों ही इसकी पूजा करेंगे यहां तक कि पशु पक्षी और प्रकृति के जड़ पदार्थ भी इसके नाम का उच्चारण करेंगे"1

उनकी यह भविष्यवाणी सुनकर उनकी माता खुशी से नाच उठीं।यह बालक इतना ज्ञानी होगा ।पुरोहित जी की यह भविष्यवाणी पूरे गांव में फैल गई। गांव के सभी लोग बालक के दर्शन के लिए आने लगे।धीरे–धीरे यह बात आस–पास के गांव तक पहुंच गई ।जैसे –जैसे नानक बड़े होते गए उनकी बुद्धि में निखार आता गया। जब नाना पाठशाला में गए तब गुरु जी ने उन्हें पाठ पढ़ाने का प्रयत्न किया ।वे उल्टे गुरु जी से प्रश्न करने लगे प्रश्न ऐसे थे जिनका उत्तर गुरुजी के पास न था। गुरु जी ने पूरा यत्न किया नानक जी को पढ़ाने का लेकिन वह स्वयं अंतर्यामी थे। पाठशाला के गुरुजी उन्हें पढ़ाते तो नानक जी उल्टा उन्हें पढ़ाना आरंभ कर देते थे ।इस बालक की विचित्र आदतों के सामने पाठशाला के गुरु को हार माननी पड़ी ।नानक के पिता उन्हे पढ़ा लिखा कर अच्छे कार्य में लगाना चाहते थे। मगर उनकी यह आशा बालक नानक पुरी करने को तैयार न था। बालक नानक जैसे–जैसे बड़े होते गए ,उनके ज्ञान की दिव्य ज्योति और उज्जवल होती गई ।नानक जी को फारसी और संस्कृत का अच्छा ज्ञान था। उन्होंने धर्म के बड़े–बड़े विद्वानों का डटकर सामना किया।

गुरु जी की विचारधारा से अपने देश के ही नहीं बल्कि विदेशों के लोग भी प्रभावित थे।उन्होंने विशेषकर अरब देशों का भ्रमण किया।वहां जाकर उन्हीं के धर्म के विषय में वहां के विद्वानों से खूब बहस की और ईश्वरी भक्ति के उपदेश भी दीये।नानक जी अपने पिता के आज्ञाकारी बेटे थे ।एक दिन पिता ने उनसे कहा गाय भैंस चराने खेत पर चले जाओ।वे गाय भैंस चराने खेत पर चली गये। उन्होंने गाय भैंस खेत में छोड़ दी और खुद वृक्ष के नीचे बैठकर परमात्मा की भक्ति में लीन हो गए और गाय भैंस खेत में चरती रही। एक बार जब वृक्ष की छांव में उनके ऊपर से हट गई तो काले नाग ने अपने फन से उनकी छांव कर ली।यह सब उनके गांव के साथ के लोगों ने देखा। यह दृश्य देखकर वे सभी आश्चर्यचकित हो गये।

नानक जी स्वयं परमात्मा की एक दिव्य ज्योति थे।नानक आडंबरो घोर विरोधी थे।नानक जी की यज्ञोपवीत (जनेऊ) की रस्म थी । पंडित जी ने उन्हें मुहूर्त के समय बुलाकर जनेऊ पहनने को कहा, कि हिंदू धर्म में नवयुवक जनेऊ पहनता है। पंडित जी की यह बात सुनकर नानक जी बोले –" पुरोहित जी मैं यह जनेऊ नहीं पहनूंगा।मुझे इस कपास के धागे की कोई आवश्यकता नहीं।"2 उनके यह शब्द सुनकर सब हैरान रह गए। महता कालूराम ने जब अपने पुत्र के मुख से यह शब्द सुने तो वह सिर से पांव तक कांपने लगे। पुरोहित हरदयाल जी ने नानक से कहा––बेटा नानक जिद् न कर। यह हमारा धर्म है, जनेऊ पहनकर तुम अपने धर्म में वापस आ जाओगे। इसके बिना इंसान अछूत होता है।इसे डाल कर तुम्हें लोक परलोक में आदर –मान मिलेगा ।लो इसे पहन लो इंकार न करो ।"3 इस पर नानक जी हंस पड़े और बोले यह कैसे संभव हो सकता है।यह कपास का धागा परलोक कैसे जा सकता है।यह तो शरीर के साथ ही रह जाएगा।परलोक में तो लोग कुछ भी साथ लेकर नहीं जाते। मुझे तो ऐसा धागा दो जो परलोक में मेरे साथ जाये। पंडित जी मुझे ऐसे धागे की आवश्यकता है जो न सडे, न गले ,न टूटे ,न जले ,न मैला हो। ऐसे जनेऊ से धर्म और आत्मा को इच्छा अनुसार निभाया जा सकता है।

"दइपा कपाह सतोखु सुतु जतोगड़ी वरो एहो जनेऊ जिया का हई ता हातो न ऐहो तुटै न मलो न ऐहो जलै न जाई धनुसु माणस नानका जो गले चली भाई।"4

पंडित जी यदि आपके पास ऐसा धागा है तो मैं उसे पहन सकता हूं।यदि यह धागा टूट सकता है ,गल,सकता

है ,जल सकता है,तो मुझे क्षमा करें ,मैं यह धागा नहीं पहन सकता।नानक इतनी बातें सुनकर पंडित हरदयाल निशब्द रह गए।आश्चर्य से उनकी ओर देखने लगे। वह इन बातों को उत्तर कहां से दें सकते थे।नानक जी की बातें तो इतनी महान थी कि बड़े से बड़ा विद्वान भी उनका उत्तर नहीं दे सकता था। नानक ने ऊँच –नीच,जात–पात का खंडन किया।

नीचांअदरि नीच जाति नीची हूं अति नीच।
नामक तिनके संग साथ बडिया सूं क्या रीख।।5

नानक जी नीची जातियों में जो नीचे हैं और उनसे भी जो नीचे नानक सदा उनके साथ हैं। उन्हे बड़ों से कुछ लेना–देना नहीं । गुरु जी अब दीन–दुखियों के साथी बन गए हैं ।घर –बार से मोह त्याग दिया।वे जहां जाते वहां लोगों की भीड़ इकट्ठी हो जाती है।गुरुजी किसी धर्म –विशेष का प्रचार नहीं करते।वह लोगों को ईश्वर–भक्ति के लिए कहते हैं। हर इंसान को बुराई से दूर रहना चाहिए।गुरुजी के पांव जिधर उड़ते वहीं उनकी मंजिल बन जाती। गुरुनानक सुल्तानविंड के निकट छोटे से तालाब के किनारे पहुंचे।वह बहुत साफ सुथरा था।तालाब के किनारे पर एक बेरी का वृक्ष था।जहां बैठकर गुरुजी पूजा–पाठ करते थे।जब गुरुजी वहां से चलने लगे तो मरदाने से कहा –

"यहां पर एक महापुरुष हर मंदिर स्थापित करेगा।
यहां से हर प्राणी को सुख शांति मिला करेगी"।।6

उसी ताला वाले स्थान पर आज अमृतसर में अमृतसरोवर है ।जिसके बीच में ऐतिहासिक गुरुद्वारा है। जो आज भी हमें गुरुजी का अमर उपदेश सुनाता है।यहां पर लाखों यात्री आत्म सांत्वना के लिए आते हैं, सरोवर में स्नान करते हैं ।यही अमृतसर गुरु नानक की नगरी है जो हमें आज भी गुरु नानक की याद दिलाती है।गुरु नानक के कीर्तन की विशेषता थी कि उसमे जाति–पाति का कोई प्रश्न न था।ना वह किसी धर्म का विरोध करते थे ,ना ही वह किसी का बुरा कहते थे।इस संसार के लिए उनका एक उपदेश था।

"सब इंसान एक है यहां कोई न छोटा है ,न कोई बड़ा है ,ईश्वर ने सबको बराबर पैदा किया है।ईश्वर एक है ,उसका नाम लेना हर प्राणी का कर्तव्य है।"7

गुरुजी किसी भी धर्म का बुरा नहीं चाहते थे।उनका मानना था कि सभी धर्म समान है।जो सच्चे ह्रदय सेईश्वर की उपासना करता है,ईश्वर हमेशा उसके साथ है। यह जरुरी नहीं है कि मंदिर–मस्जिदों मे ही ईश्वर का स्मरण किया जा सकता है।ईश्वर किसी स्थान में कैद नहीं वह तो संपूर्ण संसार में विद्यमान हैं। संसार के कण–कण में ईश्वर है, रग –रग में ईश्वर है।जो जो निस्वार्थ भाव से ईश्वर की भक्ति करता है ईश्वर सदा ही उसके साथ है।

" तेरे नाम अनेका ,रूप अनता
जेता कीता, तेरा नाऊ
विरगु नावै,नाही को थाऊ।।"8

शेख– ब्राह्मण दोनों ही गुरुनानक का विरोध करने लगे ।गुरु इन सब बातों पर ध्यान नहीं देते थे।वह जानते थे कि जिस शुभ कार्य का बीड़ा हमने उठाया है वहां रुकावटें तो आएंगी ही। इस प्रकार मध्यकालीन उत्तर भारत में सामाजिक एवं धार्मिक परिस्थिति बड़ी चिंताजनक थी।तत्कालीन परिस्थितियों को देखकर धर्म सुधारकों का एक ऐसा दल सामने आया जो समाज सुधार के लिए प्रगतिशील हुआ।15 वीं०शताब्दी के उत्तरार्ध एवं 16वीं शताब्दी के पूर्वार्ध में हिंदू धर्म में समाज सुधार की भावना तेजी से होने लगी। प्रसिद्ध इतिहासकार 'कनिंघम' ने अपने प्रसिद्ध ग्रंथ –'सिखों के इतिहास' में लिखा है– " इस प्रकार 16वीं शताब्दी के प्रारंभ में हिंदू मस्तिष्क प्रगतिहीन और स्थिर न रह सका।मुसलमानों के संघर्ष से वह उद्वेलित होकर परिवर्तित हो उठा। वहीं नवीन प्रगति के लिए उत्तेजित हो उठा रामानंद और गोरखनाथ ने धार्मिक एकता का उपदेश दिया चैतन्य ने उस धर्म काप्रतिपादन किया, जिस से जातियां सामान्य स्तर पर आई। कबीर ने मूर्ति पूजा का निषेध किया और अपना संदेश लोक भाषा में सुनाया वल्लभाचार्य ने अपने उपदेशों में भक्ति और कर्म का सामंजस्य स्थापित किया। पर वह महान सुधारक जीवन की क्षणभंगुरता से इतने अधिक प्रभावित थे कि उनकी दृष्टि में समाज उद्धार काउद्देश्य नगण्य था। उनके प्रचार का लक्ष्य केवल ब्राह्मण पर के प्रवक्ता से छुटकारा दिलाना, मूर्ति पूजा और बहुदेववाद की स्थूलता प्रदर्शित करना था ।उन्होंने वैराग्य भाव और शांत पुरुषों का पवित्र संगठन तो किया और आत्मानंद की प्राप्ति के लिए अपना सर्वस्व त्याग दिया,पर वे अपने भाइयों को सामाजिक और धार्मिक बंधनों को तोड़ने का उपदेश न दे सके। उन्होंने अपने मतों में तर्क ,–वितर्क, वाद –विवाद पर तो विशेष बल दिया, पर ऐसे उपदेश नहीं दिए, जो राष्ट्र निर्माण में बीजारोपण का कार्य कर सकें। यही कारण है कि उनके संप्रदाय विकसित न हो सके और जहां के तहां ही रह गए।"9 गुरुनानक महान देशभक्त धर्म सुधारक प्रचंड रूणि विरोधी और अद्भुत युगपुरुष थे।उनके ह्रदय में वैराग्य और भक्ति की मंदाकिनी सदैव प्रवाहित होती रहती थी।मस्तिष्क में ज्ञान और विवेक का मार्तंड हमेशा प्रवाहित होता रहता था। वह अपार दूर द्रष्टा थे।उन्होंने यह समझ लिया के वर्तमान परिस्थितियों में कौन सा धर्म भारत के लिए श्रेयस्कर होगा। इसी विचार से उन्होंने अपनी वाणी के द्वारा 'सिक्खधर्म' की स्थापना की।मध्य युग में भारत में अनेक धर्म सुधारक हुए परंतु उन्हें सफलता नहीं मिली।यह सफलता गुरु नानक देव को प्राप्त हुई।इस पर कनिंघम का कथन है – " यह सुधार के गुरु नानक के लिए अपशिष्ट था।उन्होंने सुधार के सच्चे सिद्धांतों का सूक्ष्मता से साक्षात्कार किया और ऐसे व्यापक आधार पर अपने धर्म की नींव डाली, जिसके द्वारा गुरु गोविंद सिंह जी ने अपने देशवासियों का मस्तिष्क नवीन राष्ट्रीयता से उत्तेजित कर दिया और उन सिद्धांतों को व्यवहारिक रुप दिया कि छोटी और बड़ी जाति तथा उनके धर्म समान है इसी भांति राजनीतिक सुविधाओं की प्राप्ति में भी सभी की समानता है"10

निष्कर्ष– नानक जी ने पाखंड और बाह्यआडंबर का जोरदार खंडन किया। चाहे वह पाखंड ब्राह्मणों का हो चाहे, योगियों का, चाहे जैनियों का, चाहे मुल्लाह का हो ।उनकी मुख्य विशेषता यह थी कि वे समाज उत्थान के प्रति उदात्त विचार रखते थे। वे राष्ट्र के कमजोर पक्ष को सफल बनाने पर जोर देते थे।उन्होंने भक्ति के मार्ग को दोषों से दूर रखा। जनता में निराशाबादिता को दूर कर उसमें आशा विश्वास और पौरूषकी भावना जागृत की। निराश व्यक्तियों में यह भावना जागृत की कि उनका शरीर परमात्मा के रहने का पवित्र स्थान है। जहां परमात्मा वास करता है गुरु नानक ने परमात्मा प्राप्ति ही

जीवन का परम पुरुषार्थ है जिसकी प्राप्ति कर्म ज्ञान योग और भक्ति से होती है ।इस प्रकार मध्य युग के धर्म सुधारकों में गुरु नानक देव विशिष्ट व महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं उन्होंने देशवासियों के दुखों क्लेश और पीड़ाओं, अड़चनों का व्यापक रूप से अध्ययन किया।गुरु नानक के युग की नाणी की पहचान कर तब उसका निदान किया।

सन्दर्भ ग्रन्थः

1. गुरु नानक देव (किशोरों के लिए),लेखक –नरेंद्र पाठक ,सन्मान प्रकाशन' बैग्लो रोड,दिल्ली, पृष्ठ संख्या 15
2. वही, पृष्ठ संख्या 22
3. वही,पृष्ठ संख्या 24–25
4. वही,पृष्ठ संख्या 25
5. वही, पृष्ठ संख्या 52
6. वही, पृष्ठ संख्या 53
7. वही, पृष्ठ संख्या 55
8. वही, पृष्ठ संख्या 55
9. नानक वाणी,डाक्टर जयराम मिश्र,संपादक श्री कृष्ण दास,मित्र प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड इलाहाबाद,पृष्ठसंख्या–35
10. वही ,पृष्ठ संख्या 36

मध्यकालीन साधना, साहित्य और गुरुनानक देव

*डॉ. प्रकाश चंद भट्ट

* राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय द्वाराहाट, अल्मोड़ा–उत्तराखंड

इतिहास विवेक अतीत की वर्तमान अर्थवत्ता को पाने के लिए संघर्ष करता है, इस कारण अतीत से उसका रिश्ता संवाद का रहता है। इतिहास विवेक से संघर्ष करने वाले तत्व अतीत को अतीतग्रस्तता के रुप में बरतते हैं या अतीत को गौरवान्वित और कलंकित करने के प्रयास में लगे रहते हैं। ऐतिहासिक दृष्टि शिरोधार्य करने या तिलांजलि देने के भावावेश में नहीं रहती। बिना ऐतिहासिक दृष्टि के अतीत तो वर्तमान भी समझा नहीं जा सकता। वर्तमान अतीत की ज़मीन से ही उपजता है। अतः मध्यकालीन साधना और साहित्य की समझ के लिए इतिहासं साहित्य व्यापक समाज के भीतर पैदा होता है इसलिए साहित्य में केवल साहित्य की ही मौजूदगी नहीं रहा करती । व्यष्टि और समष्टि, लघु और विराट को सापेक्षता में ही समझा जाना चाहिए किन्तु जब जब शुद्धतावादी शक्तियों का समाज में दबाव बढ़ता है तो निरपेक्षता एक कसौटी बनती है, निष्प्राण सौन्दर्य की सत्ता स्थापित होती है। इस रास्ते परिवर्तन और विकास की संभावनाएँ समाप्त होती हैं। जड़ता और प्रतिगामी शक्तियॉं अपनी जगह बनाने लगती हैं। हर समय की तह में प्रगतिशील और प्रतिगामी शक्तियों का द्वंद्व चलता रहता है। समकाल में शुद्धतावादी मानसिकता की कुरुपताएँ संप्रदायवाद और राष्ट्रवाद के रुप में मौजूद दिखाई देती हैं। इतिहास और आलोचना की प्रगतिशील दृष्टियॉं हर समय में प्रगतिविरोधी शक्तियों की पहचान कर उनके विरुद्ध काम करती रहती हैं। ऐसा समाज में होता है, तो तय है कि साहित्य में भी होता है। कहना यह कि साहित्य कर्म, साहित्य इतर गतिविधियों, हलचलों से अछूता नहीं रहता। साहित्य में साहित्य इतर की पहचान साहित्य की व्यापक समझ बनाने के रास्ते में ज़रुरी है। साहित्य–अध्ययन की ऐतिहासिक और समाजशास्त्रीय दृष्टियॉं इस मायने में परिवर्तनकारी–क्रांतिकारी भूमिका निभा सकती हैं। इतिहासकारों ने भी साहित्य की इस भूमिका को पहचाना है जिसका नतीजा यह है इतिहास के दोनों लोकप्रिय अर्थ अतीतवाद और राजनीतिक सत्ता का वर्चस्व टूट रहे हैं। इतिहास–अध्ययन समस्या की रूपरेखा अब यूँ बन रही है–"या तो नए ऑकड़ों की खोज के कारण, या व्याख्या के नए सिद्धांतों द्वारा रखे गए परिप्रेक्ष्यों के कारण प्रमाणों में बदलाव आने पर इतिहास के अध्ययन में बदलाव आता है।"[1]

रचना और रचनाकार की अपने समय और समाज के विभिन्न रूपों, सत्ताओं, वर्गों के प्रति पक्षधर या प्रतिरोधी प्रतिक्रियाएँ होती हैं। गुरुनानक की कविताओं में भी ये प्रतिक्रियाएँ उपस्थित हैं। प्रस्तुत लेख में में मध्ययुगीन व्यापक भक्तिप्रवाह के साथ आज से 550 वर्ष पहले जन्मे गुरुनानक की प्रतिक्रियाओं को देखने का प्रयास किया गया है। इस प्रयास को सामने रखते ही इस प्रयास से सम्बद्ध एकाधिक शोध प्रश्न या समस्याएँ खड़ी होने लगीं। क्या गुरुनानक के साहित्य कर्म को धार्मिक कर्म, मानकर या उनकी बानियों के संकलन को भक्ति का आराध्य ग्रंथ मान कर धार्मिक आस्था भाव से परंपरित पाठ जारी रखा जाए? क्या उनकी उपस्थिति और योगदान को पंजाब तक सीमित रखा जाए? ऐतिहासिक और सामाजिक अध्ययन के आधार पर भी क्या गुरुनानक की छवि सिख संप्रदाय के संस्थापक और गुरु की सीमाओं में बॅंधी रहती है? क्या धार्मिक पहचान भक्ति के शास्त्रवादी नज़रिए से उनके रचनात्मक हस्तक्षेप को क्या व्यापकता और गहराई में देख पाना संभव हैं? क्या गुरुनानक भक्तिधारा के अन्य दीपों की तरह ही एक दीप हैं? उनकी रचनाओं का मध्यकाल के भक्तिप्रवाह से किस तरह का संबंध है? बात यह है कि सापेक्षता में भक्तियुग की हस्तियों और उनसे जन के रिश्तों का अध्ययन किया जाना चाहिए। बहुलता में मौजूद अल्पता को नज़रअंदाज़ नहीं किया जाना चाहिए। यह सूत्र सांस्कृतिक अध्ययन में बुनियादी रुप से अपनाया जाना चाहिए। दरअसल यह अध्ययन साहित्य को इतिहास और समाजशास्त्र की गहराई में उतरने के लिए बाध्य करता है, जो बहुआयामी और संतुलित विवेक की मॉग करता है। इस दिशा में प्रस्तुत लेख एक अपनी अनेक सीमाओं के साथ एक छोटा सा प्रयास है।

मध्युगीन भक्ति प्रवाह की छवियॉं और अध्ययन के अवरोध–जिस तरह उत्तर आधुनिकता संदर्भ से हटना सिखाती है उसी प्रकार लोकप्रिय आधुनिकता परंपरा और इतिहास से बचना। मध्यकालीनता के अध्ययन में इन दोनों प्रचलनों ने बड़ी बाधा खड़ी की है। पहचान का लोकप्रिय आधार बहुत बार अन्य आयामों को बाहर नहीं आने देता। इस कसौटी पर हम पाते हैं कि कबीर रहस्यवादी कवि हैं, तुलसी वर्णव्यवस्थावादी, जायसी सूफ़ी, सूर वात्सल्य और श्रृंगार के रचनाकार। ऐसा पॉच छ सौ साल पहले के हिंदी रचनाकारों के साथ ही हुआ हो, ऐसा नहीं है। भूमंडलीकरण और पाठ को परंपरित ढॉचे से मुक्ति के आह्वान वाले उत्तर आधुनिक विमर्श में भी पहचान के टाइप बनने की दुर्घटनाएँ साहित्य में और साहित्य के बाहर समाज में भी आसानी से दिखाई पड़ती हैं। कबीर पर लिखते हुए द्विवेदी जी की प्रसिद्ध स्थापना

है कि कबीर का भक्त–रुप ही उनका वास्तविक रुप है, काव्यत्व उनके पदों में फोकट का माल है–बाईप्रोडेक्ट है।[2] क्या इसी तर्ज पर गुरुनानक को भक्त रूप, सिक्ख धर्म, हिंदुत्व तक सीमित कर दिया जाना उचित होगा?[3] इस रास्ते हम क्या भक्ति आंदोलन को समझ सकते हैं? मध्ययुगीन भक्ति आंदोलन क्या एक आयामी आंदोलन है?

कहना ज़रुरी मालूम पड़ता है कि भक्ति आंदोलन की प्रकृति की जटिलता के कारण उस युग के रचनाकारों के अध्ययन के दो ध्रुवांत तो साफ़ साफ़ दिखाई पड़ते हैं। पहला ध्रुवांत मध्यकालीन भक्ति में धर्म, तंत्र, रहस्यवाद, अध्यात्मवाद को केंद्रीय तत्व के रुप में पहचानता है और अपने अध्ययन की शक्तियों के बावजूद भक्ति को धर्म या संप्रदाय तक सीमित कर देता है। इस अध्ययन दृष्टि की नकारात्मक परिणति इस इस्लाम और हिंदुत्व की टकराहट देखने, एक दूसरे को बड़ा या छोटा, प्रभावक या प्रभावित देखने दिखाने में ही व्यतीत होने लगती है। अध्ययन की परिणतियॉ धर्म तक नहीं रुकतीं इस संकुचन का विस्तार भारतीय अभारतीय तक जाता है। सांप्रदायिक और राष्ट्रवादी सोच को अपने कर्म का आधार मिलने लगने लगता है। मध्यकाल के अध्ययन का दूसरा ध्रुवांत उसे आंदोलन के रुप में स्थापित करता है और इस क्रम में रहस्यवाद, आध्यात्मिकता आदि को अपने अध्ययन के कैनवस से बाहर कर देता है। प्रगतिशील तत्व चुन लिए जाते हैं, प्रतिगामी तत्वों को प्रगतिशील तत्वों की बड़ी रेखा के आधार पर या प्रतिगामी तत्वों की उपेक्षा करके भक्ति को आंदोलन के रुप में स्थापित किया जाता है। होता यह है कि मध्ययकाल के अध्ययन के द्वितीयक स्रोतों पर आधारित व्यक्ति की कोई साफ़ समझ नहीं बन पाती। लोकप्रियता के आधार पर वह भक्ति को आंदोलन कहकर छुट्टी पाता है। मध्यकाल के अध्ययन के क्रम में हमारी समझ यह बनती है अध्यात्म बनाम समाज, निर्गुण बनाम सगुण के अध्ययन से न आलोचना ताकतवर हो सकती है और न ही समाज।

अध्यात्म की सारी प्रक्रिया भी सामाजिक प्रक्रिया हुआ करती है भले ही उसके मैटाफर या रुपक अलग हों। काव्यत्व की बुनियादी सामग्री काव्य से इतर व्यापक समाज के भीतर ही बनती और टूटती है। इस बात को ध्यान में रखे जाने की ज़रुरत है। भक्ति आंदोलन के आधुनिक इतिहासकार और आलोचक मध्यकाल के अध्ययन का व्यापक भौतिक आधार उपलब्ध कराते हैं। यहॉ हम विश्वनाथत्रिपाठी, रामविलास शर्मा और हरबंस मुखिया के विचारों को प्रस्तुत कर रहे हैं–

विष्नाथ त्रिपाठी – 1–"भक्ति आंदोलन धार्मिक आंदोलन था। ऐसा आंदोलन जो भावना पर बल देता था। इस आंदोलन की विशेषता यह थी कि यह भावना के धरातल पर सबको समान मानता था।"[4]

2–"मीराबाई की कविता भी भक्ति आंदोलन, उसकी विचारधारा और तत्कालीन समाज में नारीस्थिति से उनकी टकराहट का प्रतिफलन है। यह प्रतिफलन उस मानवीयता में प्रकट हुआ जो अपने समय की धार्मिक साधनाओं के सहारे ही रूपायित हो सकती थी।"[5]

रामविलास शर्मा– "सामन्ती व्यवस्था में धरती पर सामन्तों का अधिकार था तो धर्म पर उन्हीं के समर्थक पुरोहितों का। ––– वर्गयुक्त समाज में बहुधा सामाजिक संघर्ष धार्मिक रूप ले लेते हैं। यह तब और भी होता है जब जनता असंठित होती है। यूरोप में भी मज़दूर वर्ग के अभ्युदय और संगठन के पहले सामाजिक संघर्षों ने धार्मिक रूप लिया था। सामन्तों के खिलाफ़ जनता के संघर्ष ने धार्मिक ठेकेदारी के खिलाफ़ संघर्ष का रूप लिया था । इसलिए किसी आंदोलन का धार्मिक रूप देखकर उसकी भीतरी ऐतिहासिक विषयवस्तु न भूल जाना चाहिए।"[6]

हरबंस मुखिया– "यह लेख मध्यकालीन भारतीय समाज को समझने के लिए सूचनाओं के एक स्रोत के रुप में मध्यकालीन हिंदी साहित्य को खॅगालने का प्रयास भी है। ऐसे किसी भी अध्ययन के लिए इस स्रोत को जितना ही ज़्यादा महत्त्व दिया जाए, कम है। कारण कि इसका एक बड़ा भाग ख़ासकर हिंदी साहित्य के भक्तिकाल से संबंधित भाग, न सिर्फ़ एक ग़ैर–सरकारी स्रोत है बल्कि मध्यकालीन भारतीय राजसत्ता और समाज के प्रति जनता के रवैयों की एक मात्र अभिव्यक्ति भी है।"[7]

उक्त विचारकों के आधार पर एक समझ बनती है कि भक्ति प्रवाह से गुजरते हुए धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक प्रश्नों को मुख्य प्रश्न बनाया जाने की जरुरत है। धर्म के रुपक को खोलना आलोचना और इतिहास का काम है। आधुनिक इतिहासकार साहित्यिक स्रोतों को सैक्यूलर स्रोत, जनधर्मी स्रोत मानकर इस्तेमाल करते रहे हैं। धर्म के अध्ययन से आलोचना धार्मिक नहीं हुआ करती। धर्म के पीछे पड़ जाने और धर्म से मुॅह मोड़ लेने वालों के लिए तुलसीदास की तरह गुरु नानक का अध्ययन भी कठिनाई पैदा करता है। हमारा कहना बस इतना है कि गुरुनानक की रचनाओं में व्याप्त सामाजिक आर्थिक संदर्भो का नोटिस लिया जाना आवश्ययक है। इससे न केवल रचनात्मक साहित्य को प्रेरणा मिल सकती है अपितु आलोचना को अपनी भूल सुधार का एहसास हो सकता है तथा इतिहासकार को सामाजिक अध्ययन का एक गैर राजनीतिक स्रोत मिल सकता है। भक्ति आंदोलन की व्यापकता सामने आ सकती है। भक्ति आंदोलन और नवजागरण के हिंदी साहित्य के अंतवर्ती मूल्यों की पहचान का रास्ता बनता है। हमारा कहना यह है कि व्यापकता का अर्थ शक्ति और सीमा दोनों का स्वीकार होना चाहिए।

बात यह हुई कि भक्तिकाल के संदर्भ में धर्म तथा अन्य युगों के संदर्भ में साहित्यालोचना को साहित्य इतर पहलुओं, तत्वों की अनदेखी नहीं करनी चाहिए। इस रास्ते पर यदि हम आगे बढ़े तो हम ये पा सकते हैं कि गुरुनानक की रचना चेतना अतिरंजित कल्पनाओं से नहीं बनी है। वह सामंतीय पुरोहिताई मूल्यों से ऊर्जा नहीं पाती है। उसमें इस दुनिया का ठोस बहुआयामी और जटिल जीवन सीधी सरल रेखा में नहीं परस्पर विरोधी, अंतःर्विरोधी रुपों में उपस्थित है।

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने सिक्ख गुरुओं का पुण्य स्मरण में गुरुनानक के काम को चोटों, घावों पर लगाया जाना वाला सुधालेप कहा है।[8] हमारा मानना है कि वह सुधालेप है, पर सुधालेपों के जनमने के कारण उस युग यथार्थ में मौजूद हैं। जिस तरह गॉधी की अहिंसा का प्रतिपक्ष दक्षिण अफ्रीका की हिंसा में निहित था, उसी तरह हमें गुरुनानक की रचना और जीवन में मौजूद सुधालेप के प्रतिपक्ष को खोजना के प्रयास करना चाहिए। सुधालेप जिन घावों चोटों को देख जिस व्यापक

करुणा से पैदा होता है उसको ध्यान में रखा जाना जरुरी है। हो सकता है कि अपने इर्द गिर्द के समाज में व्याप्त अमावस के प्रतिपक्ष में वे शरत्काल के पूर्णचंद्र के रुप में उदित हो रहे हों। ऐसा न करने की स्थिति में हमें भक्तिकाल की रचना या तो तथाकथित समन्वयकारी हो जाती है या फिर रहस्यवादी, अध्यात्मवादी।

गुरुनानक ने अपने रचनात्मक सच को जीवन सच के भीतर से प्राप्त किया है। देश और देश से बाहर की अनेक यात्राएँ की हैं। भूगोल में बसे मनुष्य और उनके दुखों को देखा है। देखने और महसूसने के ताप से द्रवणशीलता पैदा हुई है।[9] आलोचना का काम द्रवणशीलता की तारीफ़ों के पुल बाँधना नहीं, उसके कारणों की पहचान करना होता है। आध्यात्मिकता को जीवन से काटकर देखने पर आध्यात्मिकता की निराली दुनिया दिखाई पड़ती है, रहस्यवाद रहस्यवाद की जापधर्मी आलोचना सिर उठाती है। फिर ख़ारिज करने का रास्ता आसान हो जाता है। इतिहास जब मानव इच्छा और मानव प्रकृति या रुझान के आधार पर ऐतिहासिक कारण–कार्य संबंध की व्याख्या करता है तब तब उनकी रचनाओं में प्रत्येक ऐतिहासिक घटना को दूसरी घटनाओं से असंबद्ध, एक अकेली, वैयक्तिक और स्वतंत्र घटना के रूप में विवेचित किया गया है।[10] इसी तरह आलोचना में भी शास्त्र, वाद, प्रभाववाद या फिर आलोचना की मनमर्जी हावी रहे हैं, जिस कारण ऐतिहासिक कारण–कार्य संबंध उपेक्षित रह गए।

आलोचना में बहुत बार बार बार भक्ति आंदोलन की दरार के रुप में रहस्यवाद, आध्यात्मिकता का जिक्र होता रहेगा पर यदि यह सवाल सामने रख दें कि आखिर क्यों पैदा हुई यह निराली, कोमल, अलग, अनुपम दुनिया, भक्ति का प्रतिपक्ष खुलने लगता है। भक्तियुग की जगह भक्ति आंदोलन जैसे आधुनिक नाम का स्वीकार दिखाई देता है। संस्कृति के चार अध्याय में दिनकर भी भक्ति–आंदोलन शब्द का व्यवहार करते हैं। बाद में भक्ति–आंदोलन शब्द का प्रयोग आलोचना और इतिहास द्वारा व्यापक रूप में किया गया है।

भक्ति– आंदोलन के अध्ययन में रचनाकार की विनयदृष्टि को ध्यान में रखना पड़ता है जो कमजोरी से नहीं अपितु मानवता की गहराई से पैदा होती है। ऐसे रास्ते में थोड़ा सा चलने का प्रयास करते ही आध्यात्मिकता की पतंग की डोर धरती में दिखाई देने लगती है। इस आलेख में गुरुनानक के जीवन और रचनात्मकता के सहारे मध्ययुगीन समाज के विविध प्रश्नों को पकड़ना होगा। सामाजिक प्रश्नों और आर्थिक सवालों को देखना होगा। सापेक्षता में अध्ययन ज़रुरी मालूम पड़ता है।

सामान्य समझ, रचना और आलोचना के निर्माण में सहायक और बाधक दोनों भूमिकाएँ निभाती रही है। आलोच्य व्यक्तित्व के संबंध में सामान्य समझ का गहरा दबाव एतद्विषयक आलोचना में दिखाई देता है। यही कारण है कि उन्हें सिक्ख संप्रदाय के गुरु के रुप में इस तरह स्थापित किया गया कि उनकी रचनात्मकता के अन्य आयाम बाहर नहीं आ पाए, बावजूद इसके कि इतिहासकार प्रो0 इरफ़ान हबीब द्वारा भक्ति–आंदोलन में दो धाराओं की उपस्थिति देखी गयी परंपरित भक्तिधारा और लोकप्रिय एकेश्वरवादी धारा। एकेश्वरवादी आंदोलन को प्रतिपादित करने वालों में कबीर के साथ नानक का नाम लिया तथा उसी लेख में एकेश्वरवादी नेताओं की त्रयी में कबीर और रैदास के साथ नानक का उल्लेख किया।[11]

गुरु नानक (1469 ननकाना साहिब पाकिस्तान–1539 करतारपुर पाकिस्तान) भारतीय समाज की उन हस्तियों में हैं जिनके भक्तिपरक अवदान को स्वीकार करते हुए भी अलग अलग ध्रुवों ने उनकी शक्ति को व्यापक और गहरे सामाजिक प्रदेय को उभरने नहीं दिया है। भक्तिचेतना को जिस तरह संप्रदाय में सीमित कर उसकी आंदोलनकारी सामाजिक भूमिका को धर्म, संप्रदाय, राष्ट्रवाद के सहारे बहुत दिनों तक उपेक्षित किया जाता रहा उसी तरह गुरुनानक के कृतित्व को भी उपेक्षित किया जाता रहा। भक्ति आंदोलन अध्ययन के पूर्वाग्रह गुरुनानक के अध्ययन में भी बाधक बने हैं। दूसरी ओर आधुनिक हिंदी आलोचना ने मध्ययुगीनता को अंधकारयुग की धारणा से बाहर देशज आधुनिकता के दौर के रुप में तो स्थापित किया गया, देशज आधुनिकता के वाहक के रुप में कबीर, रैदास, दादू, मीरा आदि का उल्लेख तो किया गया किंतु गुरु नानक की चर्चा व्यापक रुप से नहीं दिखलाई देती। जिस तरह अंबेडकर को दलित चिंतक और सामाजिक न्याय के सवाल में कैद कर उनकी आधुनिक परिवर्तनकारी चेतना को उपेक्षित किया गया उसी प्रकार गुरु नानक को धर्म गुरु की सीमा में इस तरह अटाया गया कि उनकी रचनान्मक ताकत धूमिल कर दी गयी। ताज्जुब की बात है कि भक्ति आंदोलन परक हिंदी आलोचना की लोकप्रिय किताबों में गुरु नानक की मौजूदगी नहीं दिखाई पड़ती। विडंबना देखिए भक्ति आंदोलन के अध्ययन क्रम में गुरु अर्जुनदेव द्वारा संपादित गुरु ग्रंथसाहिब का उल्लेख रहता है, उसी ग्रंथ से कबीर की रचनाएँ पेश की जाती हैं पर गुरुनानक की रचनाओं के हवाले नहीं मिलते।

एक तरफ़ भक्ति को आंदोलन कहा गया दूसरी तरफ़ चार पॉच कवियों की कविताओं से प्रचलित उदाहरणों की आवृत्ति होती रहीं। हिंदी आलोचना के इस रवैये से गुरु नानक की रचनात्मक शक्ति कम नहीं होती बल्कि हिंदी आलोचना की कमजोरी, चालाकी ही बाहर आती है। हॉ, प्रो0 कुँवरपाल सिंह द्वारा संपादित किताब भक्ति आंदोलन : इतिहास और संस्कृति गुरु नानक की ऐतिहासिक सांस्कृतिक समझ सशक्त रुप में रेखांकित करती है। जिसमें गुरुनानक के अध्ययन की नयी दिशाएँ मौजूद हैं। गुरुनानक जी के अध्ययन क्रम में तीन विद्वानों और उनकी पुस्तके उल्लेखनीय हैं। क्रमशः उल्लेख यहॉ इसलिए कि गुरुनानक पर अध्ययन करने वाले शोधार्थियों को अध्ययन के लिए आधार मिल सके। डॉ0 जयराम मिश्र, गुरुमुख निहालसिंह तथा डॉ0 मनमोहन सहगल, नानकवाणी, गुरुनानक जीवनी, युग एवं शिक्षाएँ तथा श्री गुरुग्रंथ साहिब टीका। तीनों रचनाएँ ई पुस्तकालय में उपलब्ध हैं। प्रस्तुत लेख में इन रचनाओं को आधार बनाया गया है।

भक्ति प्रवाह को भक्ति आंदोलन कहा जाना क्या सही है?– पंद्रहवी से सत्रहवीं शताब्दी तक चलने वाली रचनात्मकता को क्या भक्ति आंदोलन कहा जाना सही है। सवाल बावजूद इसके कि यह नाम व्यापक स्वीकृति पा चुका है और हमारे लेख शीर्षक में आंदोलन शब्द का

प्रयोग है। भक्ति दौर के लिए आंदोलन शब्द का स्वीकार या त्याग सचेत रुप से किया जाना चाहिए। कवि दिनकर, इतिहासकार प्रो0 इरफ़ान हबीब, आलोचक प्रो0 विश्वनाथ त्रिपाठी, प्रो0 नामवरसिंह, के मतों के आधार पर हम यह सवाल सामने रख रहे हैं। सबसे पहले हम इतिहासकार के हवाले से बात रख करते हैं। भक्ति आंदोलन के सामाजिक आधार की पहचान में उनके दो लेखों "एकेश्वरवादी आंदोलन" तथा "मध्ययुग के लोकप्रिय एकेश्वरवाद का ऐतिहासिक विन्यास" का उल्लेख बराबर किया जाता है। प्रस्तुत लेख में हमने इतिहासकार के लेख का संदर्भ ऊपर दिया है। इतिहासकार ने पंद्रहवी सदी के मध्य से सत्रहवीं सदी के मध्य तक फैले समय में परंपरित भक्ति और एकेश्वरवादी भक्ति, दो भक्ति धाराओं का उल्लेख किया है। एकेश्वरवादी धारा के आर्थिक सामाजिक कारणों में शिल्पियों और जाटों की भूमिका की पहचान रेखांकित की है । इस धारा की क्रांतिकारी भूमिका को स्थापित किया है। इन सबके बावजूद भक्ति आंदोलन शब्द का व्यवहार वह न केवल एकेश्वरवादियों के लिए करते हैं बल्कि परंपरित भक्ति के लिए भी आंदोलन शब्द का प्रयोग करते हैं।[12] इस पर हमें ध्यान देना चाहिए। हमें क्या आंदोलन को परंपरित से अलगाना नहीं चाहिए? परम्परित और आंदोलन शब्द का व्यवहार क्या एक साथ हो सकता है?

भक्ति आंदोलन की अखंडित समझ बनाने के क्रम में प्रो0 विश्वनाथ त्रिपाठी की किताब मीरा का काव्य महत्त्वपूर्ण है। रचना युग और सामाजिक इतिहास खंड खंड नहीं होते। मध्यकालीन भक्ति प्रवाह को भक्ति आंदोलन कहते हुए भी आप ध्यान में रखी जाने वाली बात, सूत्र वाक्य में कहते हैं–"भारत की आधुनिकता वस्तुतः मध्यकालीनता का विरोध करने वाली मध्यकालीन प्रवृत्तियों का विकास है।"[13] यह कथन जहॉ भक्तिकाल और आधुनिक काल के आतंरिक रिश्ते को बतलाता है वहीं मध्यकाल में एक साथ मौजूद मध्यकालीनता और मध्यकालीनता का विरोध करने वाली प्रवृत्तियों के द्वंद्व को भी सामने रखता है। तब समूचे दौर को एक नाम यानी भक्ति आंदोलन किस प्रकार दिया जा सकता है, यह हमारे सोचने का सवाल है।

प्रो0 नामवर सिंह भक्तिकाल संबंधी आलोचना पुस्तक के लोकार्पण कार्यक्रम के अपने अध्यक्षीय वक्तव्य में सुदीर्घ भक्ति परंपरा को भाव, चेतना, प्रवाह कहते हुए के यह सवाल उठाते हैं कि क्या आंदोलन शब्द सही है कि नहीं? क्या भक्ति आंदोलन था, क्या भक्ति स्वाधीनता आंदोलन की तरह का ही आंदोलन था? आंदोलन शब्द में राजनीति की बू आती है। पॉलिटीसाइज़ करने से भक्ति प्रवाह का अवमूल्यन होता है।[14] हमारा कहना इतना भर है कि आलोचना को लोकप्रियता, चलन, व्यापक प्रयोगशीलता से डरना नहीं चाहिए, बल्कि ज्ञानमीमांसा के लिए इनसे तैयारी के साथ भिड़ना चाहिए। हम उम्मीद करते हैं कि बड़े इतिहासकार और आलोचक इन समस्याओं पर मार्गदर्शन करेंगे।

भक्ति आंदोलन के अध्ययन की दिशाएँ– आधुनिक इतिहास और आलोचना ने भक्ति आंदोलन के अध्ययन की नयी दिशाऍ खोली हैं। इनमें कुछ नाम हमारे अध्ययन क्रम में आ चुके हैं। उनके अलावा मुक्तिबोध, प्रो0 नित्यानंद तिवारी, प्रो0 मैनेजर पांडेय, प्रो0 पुरुषोत्तम अग्रवाल, प्रो0 गोपेश्वर सिंह, इतिहासकार प्रो0 सतीशचंद्र मुख्य हैं। साहित्य के पारंपरिक आलोचकों ने भक्ति आंदोलन का अध्ययन भक्ति या साहित्य के शास्त्र के सहारे किया तथा इतिहासकारों द्वारा की गयी अनेकविध व्याख्याएँ भी सीमित आधारों पर रही हैं। प्रो0 हरबंस मुखिया ने इन व्याख्याओं के सीमित आधारों का जिक्र किया है । उन्होंने बताया है कि भक्ति आंदोलन का अध्ययन इस आंदोलन की अग्रणी हस्तियों, उनके द्वारा प्रतिपादित कुछ विचारों, भक्ति आंदोलन के सिद्धांतों, हिंदू–मुस्लिम संबंधों, जाति प्रथा पर उसके प्रभावों तक सीमित रहा है। इसी लेख में उनकी स्थापना है कि भक्ति आंदोलन में जनता की भागीदारी की व्याख्या तुर्क शासन की स्थापना से उत्पन्न आर्थिक और प्रशासनिक परिवर्तनों के संदर्भ में की जा सकती है। प्रो0 हरबंस मुखिया ने इतिहास लेखन की परंपरित दृष्टियों –राज–व्यवस्था, मानव–इच्छा, सांप्रदायिक, साम्राज्यवादी, राष्ट्रवादी के स्थान पर सामाजिक आर्थिक धर्मनिरपेक्ष आधार अपनाए जाने की सिफ़ारिश की है।[15]

प्रो0 गोपेश्वर सिंह की किताब नयी अध्ययन दृष्टियों को एक साथ लेकर चलती है। उनका लेख "भक्ति आंदोलन के सामाजिक आधार" में भक्ति के आंदोलन बनने की प्रक्रिया और उसके नाम के लोकप्रियता के आधार को सही ही रेखांकित किया गया है। उनके शब्द हैं– इस काल में भक्ति व्यक्ति तक सीमित न रहकर जन–जन तक पहुँची। फलस्वरूप इसका चरित्र आंदोलनात्मक हो गया। आंदोलनात्मक इस अर्थ में कि भौगोलिक और भाषायी व्यापकता के अतिरिक्त इसका प्रभाव संस्कृति और कला के सभी रूपों पर पड़ा। ––– मध्यकाल की इस व्यापक और वेगवती भावधारा का लोकप्रिय नाम भक्ति आंदोलन है"।[16] उक्त के आलोक में हमारा कहना यह है कि आंदोलन शब्द का प्रयोग इसके बाद भी किया जाता है तो राजनीतिक आंदोलन से भक्ति के अंतर को ध्यान में रखते हुए प्रयोग किया जाना चाहिए। आलोचना और इतिहास को अनुकरणधर्मी नहीं होना चाहिए।

गुरुनानक भक्ति भाव या आंदोलन के रचनाकार हैं। उनका जीवन समय पंद्रहवी शताब्दी के मध्य से सोलहवीं शताब्दी के मध्य तक रहा। नानक छोटे व्यापारी कहे गए हैं। इतिहासकार प्रो0 इरफ़ान हबीब ने उन्हें व्यापारी या लेखाकार कहा है। सिक्ख धर्म के दस संतों में वे साहित्यिक प्रतिभा से संपन्न कहे गए हैं । नानक जी को मध्यकालीन निर्गुणमार्गी संत के रुप में याद किया गया है और उन पर नाथपंथियों और सिद्धों का असर देखा दिखाया गया है। गुरुनानक को समझने में नाभादास का भक्तमाल, आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेद्वी तथा इतिहासकार इरफ़ान के विचारों को ध्यान में रखा जाना भी ज़रुरी है।

द्विवेदी जी ने गुरुनानक की स्वाधीन चिन्तना और आत्मानुभव–हेतुक दृष्टि को स्थापित किया है। नानक ने प्रस्थानत्रयी(उपनिषद्, भगतवद्गीता तथा वेदान्त सूत्र) की पराधीनता को तो अस्वीकार किया ही साथ ही किसी युगीन संप्रदायों से भी उन्हें नहीं जोड़ा जा सकता। अपने विचार के पक्ष में दलील देते हुए आप कहते हैं कि नाभादास के भक्तमाल में उन्हीं निर्गुणमार्गी संतों को स्थान दिया जो प्रसिद्ध भक्ति संप्रदायों से सम्बद्ध माने

जाते थे। कबीर भक्तमाल में इसलिए स्थान पाते हैं कि रामानन्द के शिष्य थे और इस प्रकार रामानुज–संप्रदाय से सम्बद्ध थे।[17]

इतिहासकार प्रो0 इरफ़ान हबीब गुरुनानक को मध्यकालीन लोकवादी एकेश्वरवाद के मानवीय स्वरुप के प्रवाह के बीच स्थापित करते हैं। उन्हें भारत के इतिहास में, मानवता के इतिहास में आमूल परिवर्तनवाद से जोड़ते हैं। इस परिवर्तनवादी दृष्टि को खोलते हुए इतिहासकार बतलाते हैं कि वे ईश्वर को तो स्वीकार करते थे लेकिन धर्म की औपचारिकता को स्वीकार नहीं करते थे।[18]

इतिहासकार और साहित्यकार के उक्त मतों की ध्यान देने योग्य समानता को सामने रखने का हमारा प्रयोजन यहॉ यह है कि गुरुनानक को भक्ति आंदोलन के बीच मौजूद वादों, संप्रदायों, रुढ़ियों से मुक्त कर मध्यकालीन जनआंदोलन में विशेष हस्ती के रुप में पढ़ने का यत्न किया जाना चाहिए। इस रास्ते यदि अध्ययन का प्रयास किया जाता है तो महापुरुषों के अध्ययन में बाधक चामत्कारिक करामाती कथाओं, अतिरंजित कल्पनाओं को छॉटकर व्यक्ति और जनसमूह की आपसी क्रियाओं प्रतिक्रियाओं का वस्तुवादी अध्ययन किया जा सकता है।

नानक द्वारा देश और देश से बाहर की लगातार और लम्बी यात्राओं का उल्लेख मिलता है। भक्ति चेतना के उस दौर के अन्य चिंतकों की–दादू दयाल, कबीर–यात्राओं का उल्लेख भी दिखाई देता है। साधु संग और भगवद्भक्ति का प्रचार यात्रा का प्रयोजन बताया गया है। यहॉ पर हम एक महत्वपूर्ण बात का उल्लेख करना चाहेंगे। जो यात्रा से ही जुड़ी हुई है। इन तीनों रचनाकारों के यहॉ व्यापारी जीवन के कई संदर्भ मिलते हैं। इतिहासकार प्रो0 हरबसंमुखिया ने दादू के यहॉ व्यापार और वित्त से संबंधित सामाजिक समूहों का उल्लेख करते हुए कहा है कि लगता है कि दादू उनको बहुत ऊँचा दर्जा देते थे[19] आलोचक प्रो0 पुरुषोत्तम अग्रवाल ने कबीर में व्यापारी जीवन के भरे पड़े संदर्भों का उल्लेख किया है, गुरुनानक के यहॉ भी व्यापार, वित्त, दस्तकार, के जीवन के अनेक संदर्भ मौजूद हैं। यथा– साहू, बंजारा(सौदागर) पूॅजी, खोटी पूॅजी, मूलधन, सौदा, छोटा व्यापारी, बड़ा व्यापारी, सूद, मसन। आदिग्रंथ गुरुग्रंथ साहिब से एक टुकड़ा देखते हैं।

बणजु करहु बणजारिहौ बखरु लेहु समालि
तैसी वसतु बिसाहिए जैसी निबहै नालि।
आगै साहू सुजान है, तैसी वसतु समालि।
(नानकवाणी–जयराम मिश्र, पृष्ठ संख्या– 63)

प्रो0 पुरुषोत्तम अग्रवाल ने भक्त कवियों के यहॉ व्यापारी जीवन के इन व्यापक संदर्भों की प्रगतिशील सामाजिक भूमिका को दृढ़ता से रेखांकित किया है। इनके सहारे मध्यकालीन भारत की अपनी आधुनिक लोकतांत्रिक चेतना को उद्घाटित किया है, ताकि भारत की जड़ता, अपरिवर्तनशील वर्णव्यवस्था की पश्चिमी धारणा को चुनौती दी जा सके। आलोचक ने ग़ौर करने लायक बात लिखी है–भले ही बात कबीर के संदर्भ में कही गयी है– कबीर की कविता व्यापारियों और दस्तकारों की सामाजिक आकांक्षाओं को सृजनात्मक धरातल पर आध्यात्मिक मुहावरा देनेवाली कविता है। इन आकांक्षाओं के मूल में हैं– व्यक्तिसत्ता का आग्रह और जन्म की बजाय व्यक्तिगत गुण–अवगुण, उपलब्धि के आधार पर मूल्यांकन की मॉग। सामन्ती विशेषाधिकारों के बरअक्स बुद्धि, न्यायसंगत व्यवहार–फेयरप्ले– की यही मॉग मानवाधिकार की धारणा और समतापरक, लोकतांत्रिक राजनीति का मूल संवेदनात्मक आधार है। दुनिया भर में आधुनिक लोकतंत्र का उदय बुर्जुआ वर्ग– व्यापारी और पेशेवर लोगों– के उदय के बाद ही संभव होता है।[20]

गुरुनानक के यहॉ आध्यात्मिक रंग के भीतर व्यापारी वर्ग के अलावा अन्य अनेक सामाजिक वर्गों के प्रति उनकी प्रतिक्रियाऍ तो मिलती ही हैं साथ ही समाज के भीतर के तनाव पूरी तल्खी के साथ मौजूद हैं। जैसे इतिहास लेखन तथ्यों और राजव्यवस्था के जंगलों से बाहर निकल आया है उसी प्रकार हिंदी आलोचना को तथ्यों, धर्म, संप्रदाय, यादृच्छिकता, शास्त्र से बाहर आने का यत्न करना चाहिए, इस यत्न में विषय का सामाजिक आर्थिक आधार पर अध्ययन एक महत्वपूर्ण रास्ता हो सकता है।

नानक की भावात्मक प्रतिक्रियाऍ भक्ति और विनय की रचनाओं में तो मिलती ही हैं जब उन प्रतिक्रियाओं का आवेग थमता नहीं है वे सीधे, खरे, कड़वे रुप में सामने आने लगती हैं। हिंदु और इस्लाम दोनों को अपनी बानी से बेधते हैं। मानवीय मूल्य उनके स्वीकार अस्वीकार की कसौटी हैं जिससे वह राजा, व्यापारी, किसान, हिंदू, मुस्लिम, वेद, कुरान, योगी, जैन, सिद्ध आदि को नापते हैं। हैं तो वह स्वीकार है नहीं हैं तो किसी कीमत पर स्वीकार नहीं।

कलि काले राजे कसाई, धरमु पंखु करि उड़रिआ
कूड़ अमावस सचु चंद्रमा दीसै नाहीं कह चड़िआ।
(नानकवाणी–जयराम मिश्र, पृष्ठ संख्या–191)

कलियुग यानी उनका ठीक वर्तमान छुरी है , राजा कसाई हैं, धर्म अपने पंखों पर उड़ गया है, झूठ की अमावस छायी हुई है, सत्य का चंद्रमा दिखाई नहीं देता? यह है वह संदर्भ जिसमें राजनीति, धर्म का अपना चरित्र है और अन्य सत्ताओं की संस्कृति के अपने अपने झूठ हैं, ऐसे में नानक की बानी न दिखाई देने वाले सच की कामना में रचे गए भावावेग पूर्ण शब्द। साहित्य को राजनीति के आगे चलने वाली मशाल या फिर साहित्यकार को मानव क्षण का रचनाकार कहा गया है तो संभवतः इसी अर्थ में ।

भक्ति आंदोलन के केंद्रीय स्वर की तरह नानक के यहॉ लोकसंस्कृति के अनेक रंग हैं, लोक की बोलियों की स्थापना है, लोक धर्म है, लोक मान्यताऍ हैं, विश्वास हैं, पति पत्नी के रिश्ते के घनत्वपूर्ण पल हैं, तो राजनीतिक सत्ता के समान पुरुष सत्ता भी दिखाई देती है। सन्यास के बरक्स परिवार की महत्ता है, लोक का प्रकाश और अंधकारा दोनों हैं उनके यहॉ। एक की उपेक्षा आलोचना की प्रकृति को भी एकआयामी और अविश्वसनीय बनाती है। भूमियॉ यानी ज़मीदार हैं, सिखदार हैं, बड़े साहूकार है उनके कारनामे हैं, कारीगर हैं ।

सामान्य जन के कर्म और उनकी ताकत, उनकी कमजोरियों पर ठीक जगह उॅगली रखने के कारण ही भक्ति साहित्य के सहारे भक्ति जन आंदोलन या कपियय सीमाओं के साथ आंदोलन के रुप में दिखाई देती है। जाति के प्रति प्रतिरोध सभी संतों के यहॉ दिखाई देता है। इसका कारण इतिहासकार तुर्क शासन के प्रशासनिक नियंत्रण तथा उसके परिणाम स्वरुप व्यापार की वृद्धि में देखते हैं। इसी बात को आगे विस्तार देते हुए प्रो0 मुखिया कहते हैं यह तलाश एक बड़ी हद तक

जाति–प्रथा पर होनेवाले ज़ोरदार हमलों में प्रतिबिंबित हुई, बल्कि नानक ने तो एक जातिविहीन समुदाय के विचार को असली शक्ल देने की कोशिश की।[21]

लेख के अंत में कह सकते हैं कि लेख का विषय व्यापक और गंभीर अध्ययन की माँग करता है। समय और ज्ञान की अपनी सीमाओं में कहा जा सकता है कि भक्ति आंदोलन अपनी सीमाओं के बावजूद समानता और स्वतंत्रता के मूल्यों पर आधारित रहा। नानक में ये मूल्य जीवन और साहित्य दोनों धरातलों पर दिखाई देते हैं। इन मूल्यों के सहारे हमें न केवल इतिहास का सामाजिक राजनीतिक चरित्र समझ में आ सकता है बल्कि साहित्य की जनपक्षधरता भी दिखाई देने लगती है। नानक जी के यहाँ यह बात गहराई से महसूस की जा सकती है कि इतिहास और साहित्य को राजनीति से विमुख होने की नहीं अपितु उससे वाद विवाद के सहारे संवाद कायम करने की ज़रुरत है। इन्हें अध्ययन और व्यवहार के ध्रुवांत बनाने से बचना चाहिए।

संदर्भ

1. इतिहास की पुनर्व्याख्या– रोमिला थापर, पृष्ठ संख्या–11,राजकमल प्रकाशन, संस्करण–1996
2. कबीर–हजारीप्रसाद द्विवेदी, पृष्ठ संख्या– 173, राजकमल प्रकाशन, 1997
3. संस्कृति के चार अध्याय– रामधारीसिंह दिनकर, पृष्ठ संख्या– 337–338, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद,
4. मीरा का काव्य– विश्वनाथ त्रिपाठी, पृष्ठ संख्या– 17, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण– 2015
5. वही , पृष्ठ संख्या–7
6. परंपरा का मूल्यांकन– रामविलास शर्मा, पृष्ठ संख्या–48, राजकमल प्रकाशन, 2011
7. मध्यकालीन भारत नए आयाम– हरबंस मुखिया, पृष्ठ संख्या– 58, राजकमल प्रकाशन, 2011
8. हजारीप्रसाद द्विवेदी ग्रंथावली खण्ड –6, पृष्ठ संख्या– राजकमल प्रकाशन, प्रथम संस्करण– 1981
9. वही
10. मध्यकालीन भारत नए आयाम– हरबंस मुखिया, पृष्ठ संख्या– 41
11. भक्ति आंदोलन के सामाजिक आधार– गोपेश्वर सिंह, पृष्ठ संख्या– 37, जगतराम एंड संस, दिल्ली, 2018 ।
12. वही, पृष्ठ संख्या–35
13. मीरा का काव्य– विश्वनाथ त्रिपाठी, पृष्ठ संख्या–7, प्राक्कथन।
14. भक्ति आंदोलन और हिंदी आलोचना– लेखक–डॉ0 मनोज कुमार सिंह पर परिचर्चा https://youtu.be/lqlmyxbQn8 दिनांक–20/सितम्बर/2019 को देखा गया।
15. मध्यकालीन भारत नए आयाम– हरबंस मुखिया– पृष्ठ संख्या– 58 तथा 64।
16. भक्ति आंदोलन के सामाजिक आधार– संपा0– गोपेश्वर सिंह, पृष्ठ संख्या– 11–12
17. हजारीप्रसाद ग्रंथावली– खंड 6, पृष्ठ संख्या–238
18. भारतीय इतिहास में मध्यकाल– इरफ़ान हबीब, पृष्ठ संख्या–27, ग्रंथ शिल्पी प्रकाशन, तीसरा संस्करण–2013े
19. मध्यकालीन भारत नए आयाम– हरबंस मुखिया– पृष्ठ–62
20. अकथ कहानी प्रेम की– कबीर की कविता और उनका समय– पुरुषोत्तम अग्रवाल, पृष्ठ–49, राजकमल प्रकाषन, 2013
21. मध्यकालीन भारत नए आयाम– हरबंस मुखिया, पृष्ठ संख्या– 65

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਦੇ ਵਿਸ਼ੇਗਤ ਸਰੋਕਾਰ

* ਸੋਨੀਆ ਰਾਣੀ

* ਅਸਿਸਟੈਂਟ ਪ੍ਰੋਫੈਸਰ, ਪੰਜਾਬੀ ਵਿਭਾਗ, ਟੇਲ ਮੈਮੋਰੀਅਲ ਨੈਸ਼ਨਲ ਕਾਲਜ, ਰਾਜਪੁਰਾ

ਮੱਧਕਾਲੀ ਪੰਜਾਬੀ ਕਾਵਿਧਾਰਾ ਵਿੱਚ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਦਾ ਆਪਣਾ ਇੱਕ ਅਹਿਮ ਸਥਾਨ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਇੱਕੋ ਸਮੇਂ ਅਧਿਆਤਮਿਕ ਚੇਤਨਾ ਕ੍ਰਾਂਤੀਕਾਰੀ ਭਾਵਨਾ ਤੇ ਸਮਾਜ ਸ਼ਾਸਤਰੀ ਪਰਿਪੇਖ ਵਿੱਚ ਆਪਣੀ ਇਕ ਅਹਿਮ ਭੂਮਿਕਾ ਨਿਭਾਉਂਦੀ ਹਨ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦੀਆਂ ਪ੍ਰਮੁੱਖ ਬਾਣੀਆਂ ਜਪੁਜੀ ਸਾਹਿਬ, ਸਿੱਧ ਗੋਸਟਿ, ਦੱਖਣੀ ਓਂਕਾਰ, ਬਾਬਰ ਬਾਣੀ, ਬਾਰਹਮਾਹ ਤੁਖਾਰੀ, ਆਸਾ ਦੀ ਵਾਰ ਆਦਿ ਮਿਲਦੀਆਂ ਹਨ। ਪਾਵਨ ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ ਵਿੱਚ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦੀ ਬਾਣੀ 19 ਰਾਗਾਂ ਵਿੱਚ ਦਰਜ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਦਾ ਪੈਰਾਡਾਈਮ ਜਿਨਾ ਆਪਣੇ ਸਮੇਂ ਵਿੱਚ ਪ੍ਰਸੰਗਿਕ ਸੀ ਉਨਾ ਹੀ ਅੱਜ ਹੈ ਅਤੇ ਭਵਿੱਖ ਵਿੱਚ ਵੀ ਇਸ ਪ੍ਰਵਚਨ ਦੀ ਅਹਿਮ ਭੂਮਿਕਾ ਰਹੇਗੀ। ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਨੇ ਆਪਣੀ ਬਾਣੀ ਵਿੱਚ ਉਨ੍ਹਾਂ ਸਾਰੇ ਸਰੋਕਾਰਾਂ ਨੂੰ ਇੱਕ ਸਾਂਚੇ ਵਿੱਚ ਢਾਲਿਆ ਹੈ ਜਿਸ 'ਚੋਂ ਮਾਨਵ ਵਿਗਿਆਨ ਤੇ ਇਸ ਮਾਨਵ ਵਿਗਿਆਨ ਦੀ ਸਰੰਚਨਾ ਨਵੀਂ ਹੋਂਦ, ਪਛਾਣ ਤੇ ਮੁਕਤੀ ਨੂੰ ਸਮਰਪਿਤ ਹੁੰਦੀ ਹੈ। ਆਪਣੇ ਸਮੇਂ ਵਿੱਚ ਫੈਲੀ ਅਰਾਜਕਤਾ, ਭ੍ਰਿਸ਼ਟਾਚਾਰ ਤੇ ਆਪਣੀ ਹੋਂਦ ਤੋਂ ਹੋਣੀ ਅਵਸਥਾ ਨੂੰ ਵੱਖ-ਵੱਖ ਸ਼ਬਦਾਂ ਰਾਹੀ ਨਵੇ ਸ਼ਬਦ ਸਭਿਆਚਾਰ ਨੂੰ ਘੜਦੇ ਨਜ਼ਰ ਆਉਂਦੇ ਹਨ। ਇਹ ਸ਼ਬਦ ਸਭਿਆਚਾਰ ਸਥਾਨਕ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ ਦੇ ਨਾਲ-ਨਾਲ ਸਮੁੱਚੇ ਵਿਸ਼ਵਮੁਖੀ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਆਪਣੇ ਕਲਾਵੇ ਵਿੱਚ ਲੈਂਦਾ ਹੈ। ਇਹੀ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਦਾ ਵਿਲੱਖਣ ਪਹਿਚਾਣ ਤੇ ਪ੍ਰਾਪਤੀ ਬਣਦੀ ਹੈ।

ਉਦਯੋਗਿਕ ਕ੍ਰਾਂਤੀ ਆਉਣ ਨਾਲ ਮਨੁੱਖ ਵਿੱਚ ਸਬਰ-ਸੰਤੋਖ, ਖ਼ਿਮਾ ਅਤੇ ਸਹਿਜ ਵਰਗੇ ਗੁਣ ਖ਼ਾਰਿਜ ਹੁੰਦੇ ਜਾ ਰਹੇ ਹਨ। ਉਹ ਪਦਾਰਥਕ ਚੀਜ਼ਾਂ ਇਕੱਠੀਆਂ ਕਰਨ ਦੀ ਭੀੜ ਵਿੱਚ ਗੁਆਚ ਗਿਆ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬਾਨ ਨੇ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਕੁਦਰਤ ਨਾਲ ਜੋੜਦਿਆਂ ਆਪਣੀ ਬਾਣੀ ਵਿੱਚ ਅਨੇਕਾਂ ਥਾਂਵਾਂ ਉੱਤੇ ਨਦੀਆਂ, ਦਰਿਆਵਾਂ, ਬਨਸਪਤੀ, ਧਰਤੀ, ਆਕਾਸ਼, ਅੱਗ, ਬਾਰਿਸ਼, ਰੁੱਤਾਂ, ਪੌਣਾ, ਰੁੱਖਾਂ, ਤੱਟਾਂ, ਮੇਘਾਂ, ਖੇਤਾਂ ਆਦਿ ਦਾ ਵਰਣਨ ਕੀਤਾ ਹੈ।

ਤੂ ਦਰਿਆਉ ਦਾਨਾ ਬੀਨਾ ਮੈ ਮਛਲੀ ਕੈਸੇ ਅੰਤ ਲਹਾ।।
ਜਹ ਜਹ ਦੇਖਾ ਤਹ ਤਹ ਤੂ ਹੈ ਤੁਝ ਤੇ ਨਿਕਸੀ ਫੂਟ ਮਰਾ।।1

ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਇਸ ਮਾਨਵ ਜੀਵਨ ਦਾ ਆਗਾਜ਼ ਪਾਣੀ ਤੋਂ ਮੰਨਦੇ ਹਨ:

ਪਹਿਲਾ ਪਾਣੀ ਜੀਉ ਹੈ ਜਿਤੁ ਹਰਿਆ ਸਭੁ ਕੋਇ।।2

ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਦਾ ਉਪਦੇਸ਼ ਹੈ ਕਿ ਹਵਾ, ਪਾਣੀ ਅਤੇ ਅਗਨੀ ਦੇ ਰੂਪ ਵਿੱਚ ਪਰਮਾਤਮਾ ਆਪ ਹੀ ਇਸ ਸ੍ਰਿਸ਼ਟੀ ਦੇ ਕਣ-ਕਣ ਵਿੱਚ ਵੱਸਿਆ ਹੋਇਆ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਨੇ ਪਾਣੀ ਨੂੰ ਪਿਤਾ ਜੋ ਸਿਰਜਨਾਤਮਿਕ ਸ਼ਕਤੀ ਅਤੇ ਧਰਤੀ ਨੂੰ ਮਾਤਾ ਜੋ ਉਪਜਾਇਕਤਾ ਦੀ ਪ੍ਰਤੀਕ ਹੈ, ਦਾ ਦਰਜਾ ਦਿੱਤਾ:

ਪਵਣੁ ਗੁਰੂ ਪਾਣੀ ਪਿਤਾ ਮਾਤਾ ਧਰਤਿ ਮਹਤੁ।।
ਦਿਵਸੁ ਰਾਤਿ ਦੁਇ ਦਾਈ ਦਾਇਆ ਖੇਲੇ ਸਗਲ ਜਗਤ।।
ਚੰਗਿਆਈਆ ਬੁਰਿਆਈਆ ਵਾਚੈ ਧਰਮੁ ਹਦੂਰਿ।।
ਕਰਮੀ ਆਪੋ ਆਪਣੀ ਕੇ ਨੇੜੈ ਕੇ ਦੂਰ।।3

ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਨੇ ਧਰਤੀ ਨੂੰ ਧੀਰਜ, ਨਿਮਰਤਾ ਆਦਿ ਉੱਚ ਮਾਨਵੀ ਗੁਣਾਂ ਦੇ ਪ੍ਰਤੀਕ ਵਜੋਂ ਚਿਤਰਦਿਆਂ, ਇਸ ਰਾਹੀਂ ਸਿੱਖਿਆ ਅਤੇ ਸੇਧ ਗ੍ਰਹਿਣ ਕਰਦਿਆਂ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਅਜਿਹੇ ਗੁਣ ਆਪਣੀ ਸ਼ਖ਼ਸੀਅਤ ਅੰਦਰ ਪੈਦਾ ਕਰਨ ਦੀ ਪ੍ਰੇਰਨਾ ਵੀ ਦਿੱਤੀ ਹੈ।4

ਇਹੁ ਤਨੁ ਧਰਤੀ ਬੀਜੁ ਕਰਮਾ ਕਰੋ ਸਲਿਲ ਆਪਾਉ ਸਾਰਿੰਗ ਪਾਣੀ।।
ਮਨੁ ਕਿਰਸਾਣੁ ਹਰਿ ਰਿਦੈ ਜੰਮਾਇ ਲੈ ਇਉ ਪਾਵਸਿ ਪਦੁ ਨਿਰਬਾਣੀ।।5

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦਾ ਧਰਮ ਸੰਬੰਧੀ ਦ੍ਰਿਸ਼ਟੀਕੋਣ ਵਿਗਿਆਨਿਕ ਤੇ ਤਰਕਮੁਖੀ ਹੈ। ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਵਿਅਰਥ ਦੇ ਕਰਮਕਾਂਡਾਂ ਵਿੱਚੋਂ ਕੱਢ ਕੇ ਪਰਮਾਤਮਾ ਨੂੰ ਪਾਉਣ ਦਾ ਸਿੱਧਾ ਤੇ ਸਰਲ ਰਸਤਾ ਬਿਆਨ ਕਰਦੀ ਹੈ। ਇਹ ਰਸਤਾ ਗੁਰੂ ਦੇ ਮਾਧਿਅਮ ਰਾਹੀਂ ਮੰਜ਼ਿਲ ਤੱਕ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਇਸ ਲਈ ਗੁਰੂ ਦੀ ਚੋਣ ਮਹੱਤਵਪੂਰਨ ਪੱਖ ਹੋ ਨਿਬੜਦਾ ਹੈ। ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਇਸ ਪ੍ਰਤਿ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਸੁਚੇਤ ਕਰਦਿਆਂ ਕਹਿੰਦੀ ਹੈ:

ਗੁਰੂ ਜਿਨਾ ਕਾ ਅੰਧਲਾ ਚੇਲੇ ਨਾਹੀ ਠਾਉ।।6

ਇਹੋ ਜਿਹੇ ਅੰਨ੍ਹੇ ਗੁਰੂ ਅਜੋਕੇ ਯੁੱਗ ਵਿੱਚ ਵੀ ਆਮ ਦੇਖਣ ਨੂੰ ਮਿਲਦੇ ਹਨ; ਜਿੰਨ੍ਹਾਂ ਦਾ ਬਾਹਰੀ ਪੱਖ ਅਧਿਆਤਮਿਕ ਹੋਣ ਦਾ ਵਿਖਾਵਾ ਕਰਦਾ ਭੋਲੇ-ਭਾਲੇ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਅਚੰਭਿਤ ਕਰ ਆਪਣੇ ਧਾਰਮਿਕ ਮਹਾਂਜਾਲ ਵਿੱਚ ਫਸਾ ਲੈਂਦਾ ਹੈ। ਭੋਲੇ-ਭਾਲੇ ਵੀ ਕੀ, ਪੜ੍ਹਿਆ-ਲਿਖਿਆ ਵਰਗ ਵੀ ਇਨ੍ਹਾਂ ਦੇ ਚੁੰਗਲ 'ਚੋਂ ਮੁਕਤ ਨਹੀਂ। ਕਾਰਨ ਅਸੀਂ ਧਰਮ ਪ੍ਰਤਿ ਅਵੇਸਲੀ ਸੋਚ ਨਾਲ ਤੁਰੇ ਫਿਰਦੇ ਹਾਂ। ਜਿਸ ਕਾਰਨ ਇਹੋ-ਜਿਹੇ ਅੰਨ੍ਹੇ/ਅਖੌਤੀ ਗੁਰੂਆਂ ਤੋਂ ਸਰੀਰਿਕ, ਮਾਨਸਿਕ ਤੇ ਆਰਥਿਕ ਸ਼ੋਸ਼ਣ ਕਰਵਾਈ ਜਾਂਦੇ ਹਾਂ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਜਿਸ ਗੁਰੂ ਦੀ ਹੋਂਦ ਉੱਤੇ ਬਲ ਦਿੱਤਾ ਹੈ-ਉਹ ਸੱਚਾ, ਗਿਆਨਵਾਨ, ਪਰਮਾਤਮਾ ਨਾਲ ਜੁੜਿਆ ਤੇ ਇਸ ਕਾਬਲ ਹੋਵੇ ਕਿ ਆਪਣੇ ਚੇਲੇ ਨੂੰ

ਦੁਨਿਆਵੀ ਹਨ੍ਹੇਰਿਆਂ ਵਿੱਚੋਂ ਕੱਢ ਕੇ ਚਾਨਣ ਤੱਕ ਲੈ ਕੇ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੋਵੇ:

ਸਾਚੇ ਗੁਰ ਕੀ ਸਾਚੀ ਸੀਖ।।
ਤਨੁ ਮਨੁ ਸੀਤਲੁ ਸਾਚੁ ਪਰੀਖ।।7

ਗੁਰੂ ਨੇ ਜੋ ਰਸਤਾ ਦੱਸਣਾ, ਉਹ ਨਾਮ ਸਿਮਰਨ ਦਾ ਹੈ। ਹਰ ਕਿਸਮ ਦੇ ਪਖੰਡਵਾਦ, ਵਿਅਰਥ ਧਾਰਮਿਕ ਰਹੁ-ਰੀਤਾਂ ਨੂੰ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਵਿੱਚ ਨਕਾਰਿਆ ਗਿਆ ਹੈ। ਬਾਹਰੀ ਦਿਖਾਵੇ ਦੇ ਧਰਮ ਤੋਂ ਬਚ ਕੇ ਅਮਲੀ ਰੂਪ ਵਿੱਚ ਧਰਮ ਕਮਾਉਣ ਦਾ ਸੰਦੇਸ਼ ਹੈ। ਜੀਵਨ ਜਾਚ ਨੂੰ ਧਾਰਮਿਕ ਬਣਾਉਣ ਲਈ ਧਾਰਮਿਕ ਪੁਸਤਕਾਂ ਕਾਰਗਰ ਸਾਧਨ ਹਨ। ਪਰ ਸਾਡੇ ਲੋਕਾਂ ਨੇ ਧਾਰਮਿਕ ਪੁਸਤਕਾਂ ਪੜ੍ਹਨ ਨੂੰ ਹੀ ਧਰਮ ਮੰਨ ਲਿਆ ਹੈ ਜਦੋਂ ਕਿ ਜ਼ਰੂਰਤ ਇਨ੍ਹਾਂ ਪੁਸਤਕਾਂ ਨੂੰ ਪੜ੍ਹ ਕੇ ਇਨ੍ਹਾਂ ਉੱਤੇ ਅਮਲ ਦੀ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦੇ ਸਮੇਂ ਦੀ ਰਾਜਨੀਤਿਕ ਸਥਿਤੀ ਬੜੀ ਤਰਸਯੋਗ ਸੀ। ਰਾਜੇ ਐਸ਼ੋ ਇਸ਼ਰਤ ਵਿੱਚ ਵਿਲੀਨ ਸਨ। ਭ੍ਰਿਸ਼ਟਾਚਾਰੀ, ਰਿਸ਼ਵਤਖ਼ੋਰੀ, ਭਾਈ-ਭਤੀਜਾਵਾਦ ਉਨ੍ਹਾਂ ਅੰਦਰ ਸਮਾਇਆ ਹੋਇਆ ਸੀ। ਆਮ ਜਨਤਾ ਦੀ ਕੋਈ ਪੁੱਛ-ਪ੍ਰਤੀਤ ਨਹੀਂ ਸੀ। ਰਾਜਨੀਤਿਕ ਅਧਿਕਾਰੀਆਂ ਨੇ ਹਰ ਚੀਜ਼/ ਵਸਤ 'ਤੇ ਆਪਣੀ ਹੈਜਮਨੀ ਕਾਇਮ ਕੀਤੀ ਹੋਈ ਸੀ। ਜੋ ਵੀ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੇ ਮਨ ਆਉਂਦਾ, ਉਹ ਕਰ ਰਹੇ ਸਨ ਤੇ ਆਪਣੀਆਂ ਮਨ-ਮਰਜ਼ੀਆਂ ਜਨਤਾ ਉਤੇ ਥੋਪ ਰਹੇ ਸਨ। ਇਸੇ ਲਈ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਸਾਹਿਬ ਨੇ ਰਾਜਿਆ ਨੂੰ ਕਸਾਈ ਤੱਕ ਕਿਹਾ ਹੈ, ਜੋ ਜਨਤਾ ਦੇ ਖ਼ੂਨ ਪਸੀਨੇ ਦੀ ਕਮਾਈ ਨਾਲ ਭੋਗ ਵਿਲਾਸ ਵਿੱਚ ਲੱਗੇ ਹੋਏ ਸਨ:

ਕਲਿ ਕਾਤੀ ਰਾਜੇ ਕਾਸਾਈ
ਧਰਮ ਪੰਖੁ ਕਰਿ ਉਡਰਿਆ।।
ਕੂੜੁ ਅਮਾਵਸੁ ਸਚੁ ਚੰਦ੍ਰਮਾ
ਦੀਸੈ ਨਾਹੀ ਕਹ ਚੜਿਆ।।8

ਰਾਜਨੀਤਿਕ ਇਹ ਦਬਦਬਾ ਮੱਧਕਾਲ ਤੋਂ ਲੈ ਕੇ ਹੁਣ ਤੱਕ ਵੀ ਉਸੇ ਰੂਪ ਵਿੱਚ ਪ੍ਰਚਲਿਤ ਰਿਹਾ ਹੈ। ਹੁਣ ਵੀ ਰਾਜਨੀਤਿਕ ਹਾਲਾਤ ਉਹੋ ਹੀ ਹਨ, ਜੋ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇ ਸਮਕਾਲ ਵਿੱਚ ਸਨ। ਜਨਤਾ ਦੀ ਆਰਥਿਕ ਲੁੱਟ ਕਰਕੇ ਰਾਜਨੀਤਿਕ ਨੇਤਾ ਆਪਣੀਆਂ ਜਾਇਦਾਦਾਂ ਬਣਾਉਣ ਵਿੱਚ ਲੱਗੇ ਹੋਏ ਹਨ। ਰਾਜਿਆਂ ਵਾਂਗ ਇਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਵੀ ਰਾਜਗੱਦੀ/ ਸਰਕਾਰੀ ਕੁਰਸੀ 'ਤੇ ਆਪਣਾ ਏਕਾਧਿਕਾਰ ਕਾਇਮ ਕੀਤਾ ਹੋਇਆ। ਵਾਰੀ-ਵਾਰੀ ਸਰਕਾਰੀ ਮੰਤਰੀਆਂ ਦੇ ਰੂਪ ਵਿੱਚ ਆਪਣਾ ਹੁਕਮ ਚਲਾ ਰਹੇ ਹਨ। ਦੇਸ਼ ਦੀ ਜਾਂ ਜਨਤਾ ਦੀ ਭਲਾਈ ਵੱਲ ਕੋਈ ਧਿਆਨ ਨਹੀਂ। ਪੰਜ ਸਾਲ ਲਈ ਕਿਸੇ ਵੀ ਪਾਰਟੀ ਦੀ ਜਦੋਂ ਸਰਕਾਰ ਬਣਦੀ ਹੈ, ਤਾਂ ਇਹ ਮੰਤਰੀ ਇਸਨੂੰ ਜਨਤਾ ਨੂੰ ਲੁੱਟਣ ਦਾ ਮੌਕਾ ਸਮਝਦੇ ਹਨ ਤੇ ਜਿੰਨਾ ਹੋ ਸਕੇ ਉਨ੍ਹਾਂ ਆਪਣੇ ਪੇਟ ਭਰਨ ਵਿੱਚ ਲੱਗੇ ਰਹਿੰਦੇ ਹਨ। ਉਸ ਤੋਂ ਵੀ ਮੂਰਖ ਸਾਡੀ ਜਨਤਾ ਹੈ, ਜੋ ਵਾਰ-ਵਾਰ ਇਨ੍ਹਾਂ ਹੀ ਮੰਤਰੀਆਂ ਨੂੰ ਵੋਟਾਂ ਪਾ ਕੇ ਜਿਤਾ ਦਿੰਦੇ ਹਨ। ਇੱਥੇ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਦੀਆਂ ਇਹ ਸਤਰਾਂ ਸੰਦਭਮਈ ਹਨ:

ਕੂੜੁ ਰਾਜਾ ਕੂੜੁ ਪਰਜਾ ਕੂੜੁ ਸਭ ਸੰਸਾਰ।।
ਕੂੜੁ ਮੰਡਲ ਕੂੜੁ ਮਾੜੀ ਕੂੜੁ ਬੈਸਣਹਾਰੁ।।
ਕੂੜੁ ਸਇਨਾ ਕੂੜੁ ਰੁਪਾ ਕੂੜੁ ਪੈਨ੍ਹਣਹਾਰ।।
ਕੂੜੁ ਕਾਇਆ ਕੂੜੁ ਕਪੜੁ ਕੂੜੁ ਰੂਪੁ ਅਪਾਰੁ।।
ਕੂੜੁ ਮੀਆ ਕੂੜੁ ਬੀਬੀ ਖਪਿ ਹੋਏ ਖਾਰੁ।।
ਕੂੜਿ ਕੂੜੈ ਨੇਹੁ ਲਗਾ ਵਿਸਰਿਆ ਕਰਤਾਰੁ।।9

ਧਾਰਮਿਕ ਅਤੇ ਸਮਾਜਿਕ ਪ੍ਰਸਥਿਤੀਆਂ ਅੰਦਰ ਮਨੂੰ ਸਿਮ੍ਰਤੀ ਅਤੇ ਹੋਰ ਹਿੰਦੂ ਗ੍ਰੰਥਾਂ ਦੇ ਪ੍ਰਭਾਵ ਸਦਕਾ ਔਰਤ ਦੀ ਸਥਿਤੀ ਬਹੁਤ ਤਰਸਯੋਗ ਸੀ। ਉਹਨਾਂ ਨੂੰ ਸਮਾਜਿਕ, ਰਾਜਨੀਤਿਕ ਹਰ ਖੇਤਰ ਵਿੱਚ ਅਣਗੌਲਿਆ ਹੀ ਕੀਤਾ। ਨਾਥ, ਜੋਗਮੱਤ ਔਰਤ ਦੀ ਭੰਡੀ ਕਰਦੇ ਹੋਏ ਉਸ ਨੂੰ ਬਾਘਨਿ ਆਖਿਆ ਗਿਆ। ਉਸ ਨੂੰ ਅਧਿਆਤਮਿਕ ਮਾਰਗ ਦੀ ਸਭ ਤੋਂ ਵੱਡੀ ਰੁਕਾਵਟ ਮੰਨਦੇ ਹਨ। ਭਗਤ ਕਵੀਆ ਨੇ ਵੀ ਔਰਤ ਤੋਂ ਦੂਰੀ ਥਾਪਣ ਦਾ ਸੁਝਾਅ ਦਿੱਤਾ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਔਰਤ ਅਜ਼ਾਦੀ ਵਿਰੋਧੀ ਸਭ ਰਹੁ-ਰੀਤਾਂ ਨੂੰ ਨਕਾਰਦੇ ਹੋਏ ਔਰਤ ਪ੍ਰਤਿ ਪ੍ਰਥਮ ਦ੍ਰਿਸ਼ਟੀਕੋਣ ਰੱਖਦਿਆਂ ਉਸ ਦੀ ਬਰਾਬਰੀ ਦੇ ਹੱਕ ਦੀ ਗੱਲ ਕੀਤੀ।

ਭੰਡਿ ਜੰਮੀਐ ਭੰਡਿ ਨਿੰਮੀਐ
ਭੰਡਿ ਮੰਗਣੁ ਵੀਆਹੁ।।
ਭੰਡਹੁ ਹੋਵੈ ਦੋਸਤੀ ਭੰਡਹੁ ਚਲੈ ਰਾਹੁ ।।
ਭੰਡੁ ਮੁਆ ਭੰਡੁ ਭਾਲੀਐ
ਭੰਡਿ ਹੋਵੈ ਬੰਧਾਨੁ ।।10

ਪ੍ਰਾਚੀਨ ਸਮੇਂ ਤੋਂ ਹੀ ਰਾਜਨੀਤਿਕ ਸੱਤਾ ਲਈ ਸੰਘਰਸ਼ੀ ਜੇਤੂ ਫੌਜ ਹਾਰੀ ਧਿਰ ਦੀਆਂ ਔਰਤਾਂ ਤੇ ਕਬਜ਼ਾ ਕਰ ਲੈਂਦੀਆਂ ਸਨ। ਉਹਨਾਂ ਦਾ ਬਲਾਤਕਾਰ ਕਰਦੇ ਸਨ। ਉਹਨਾਂ ਨੂੰ ਕੈਦੀ ਬਣਾ ਕੇ ਆਪਣੇ ਮੁਲਕ ਲੈ ਜਾਣ ਵਿੱਚ ਆਪਣਾ ਅਧਿਕਾਰ ਸਮਝਦੇ ਸਨ। ਜੇਕਰ ਇਤਿਹਾਸਿਕ ਘਟਨਾਵਾਂ ਤੇ ਨਜ਼ਰ ਮਾਰੀਏ ਤਾਂ ਇਹਨਾਂ ਹਲਾਤਾਂ ਵਿੱਚ ਸਭ ਤੋਂ ਵੱਧ ਜੇਕਰ ਕਿਸੇ ਤੇ ਤਸ਼ੱਸ਼ਦ ਹੋਇਆ ਉਹ ਔਰਤਾਂ ਹੀ ਸਨ। ਮੱਧਕਾਲ ਵਿੱਚ ਬਾਬਰ ਦੇ ਹਮਲੇ ਸਮੇਂ ਵੀ ਇਹ ਸਭ ਹਾਲਾਤ ਬਣੇ ਹੋਏ ਸਨ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਪਿਤ੍ਰਕੀ ਸੱਤਾ ਅਤੇ ਮਰਦ ਪ੍ਰਧਾਨ ਸਮਾਜ ਵਿੱਚ ਔਰਤ ਦੀ ਹੀਣ ਦਸ਼ਾ ਨੂੰ ਕੇਂਦਰ ਵਿੱਚ ਲਿਆ ਕੇ ਉਸ ਦੇ ਪੱਖ ਵਿੱਚ ਅਪਣੀ ਆਵਾਜ ਬੁਲੰਦ ਕੀਤੀ।

ਜਿਨਿ ਸਿਰਿ ਸੋਹਨਿ ਪਟੀਆ
ਮਾਂਗੀ ਪਾਇ ਸੰਧੂਰੁ।।
ਜੇ ਸਿਰ ਕਾਤੀ ਮੁੰਨੀਅਨਿ
ਗਲ ਵਿਚਿ ਆਵੈ ਧੂੜਿ।।
ਮਹਲਾ ਅੰਦਰਿ ਹੋਦੀਆ
ਹੁਣਿ ਬਹਣਿ ਨ ਮਿਲਨਿ ਹਦੂਰਿ।।11

ਜੇਕਰ ਔਰਤ ਵਿਧਵਾ ਹੋ ਜਾਵੇ ਤਾਂ ਉਸ ਦਾ ਜੀਵਨ ਨਰਕ ਬਣ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਹਿੰਦੂ ਇਸਤਰੀਆਂ ਨੂੰ ਆਪਣੇ ਪਤੀ ਨਾਲ ਸੜ ਮਰਨ ਦੀ ਆਗਿਆ ਸੀ। ਕਿੰਨੀਆਂ ਹੀ ਔਰਤਾਂ ਇਸ ਪ੍ਰਥਾਆਂ ਹੋਈਆਂ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਪਹਿਲੀ ਵਾਰ ਇਸਤਰੀ ਦੀ ਦਸ਼ਾ ਨੂੰ ਸੁਧਾਰਨ ਦਾ ਬੀੜਾ ਚੁੱਕਿਆ ਤੇ ਉਸਨੂੰ ਸਮਾਜ ਵਿੱਚ ਉਸਦਾ ਬਣਦਾ ਸਤਿਕਾਰ ਦਿਵਾਉਣ ਦੇ ਯਤਨ ਕੀਤੇ।

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਇਕ ਪੈਰਾਡਾਈਮ ਨੈਤਿਕ ਕਦਰਾਂ-ਕੀਮਤਾਂ ਦਾ ਹੈ, ਜੋ ਅਸਦਾਚਾਰ ਦੇ ਵਿਰੋਧ 'ਚ ਖੜਦਾ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਤਾਰਕਿਕ ਢੰਗ ਨਾਲ ਮਨੁੱਖੀ ਜੀਵਨ ਦੇ ਆਤਮਿਕ ਮਨੋਬਲ ਨੂੰ ਉੱਚਾ ਚੁੱਕਣ ਦਾ ਯਤਨ ਕੀਤਾ। ਮੱਧਕਾਲੀਨ ਪਰਿਸਥਿਤੀਆਂ ਦੇ ਸੰਦਰਭ ਵਿੱਚ ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬਾਨ ਸਮੰਤੀ ਕੱਟੜਤਾ ਵਾਲੀ ਧਾਰਮਿਕ ਵਿਚਾਰਧਾਰਾ ਬ੍ਰਾਹਮਣੀ ਕਰਮਕਾਂਡੀ ਵਿਵਸਥਾ ਦਾ ਕਰੜਾ ਵਿਰੋਧ ਕਰਦੇ ਹਨ ਤੇ ਇਹਨਾਂ ਵਿਵਸਥਾਵਾਂ ਨੂੰ ਮਾਨਵ ਜੀਵਨ ਵਿਰੋਧੀ ਗਰਦਾਨਦੇ ਹਨ। ਗੁਰੂ

ਸਾਹਿਬਾਨ ਨੇ ਇਹਨਾਂ ਸ਼ੋਸ਼ਿਤਾਂ, ਦਲਿਤਾਂ, ਨਪੀੜੀਆਂ ਤੇ ਲਿਤਾੜੀਆਂ ਜਾਤੀਆਂ ਨਾਲ ਹਮਦਰਦੀ ਜਤਾਉਂਦਿਆਂ ਹੋਇਆ ਉਹਨਾਂ ਅੰਦਰ ਸਵੈਮਾਨ ਪੈਦਾ ਕਰਨ ਦਾ ਯਤਨ ਕਰਦੇ ਹਨ। ਬੇਸ਼ੱਕ ਮਨੁੱਖ ਕਿਸੇ ਅਖੌਤੀ ਉੱਚੀ ਜਾਤੀ ਵਿੱਚ ਪੈਦਾ ਹੋਇਆ ਹੋਵੇ ਪਰ ਜੇਕਰ ਉਸ ਦੇ ਕਰਮ ਮਾੜੇ ਹਨ ਤਾਂ ਉਹ ਨੀਚ ਹੀ ਕਹਾਉਂਦਾ ਹੈ। ਜਾਤਾਂ-ਜਮਾਤਾਂ ਕਰਕੇ ਉਚ-ਨੀਚ ਵਾਲੇ ਸਮਾਜ ਨੂੰ ਬਾਬਾ ਨਾਨਕ ਦੀ ਬਾਣੀ ਮੁੱਢੋਂ ਹੀ ਨਕਾਰਦੀ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਸਮਾਜਿਕ ਅਸਮਾਨਤਾਵਾਂ ਤੇ ਸ਼ੋਸ਼ਣ ਦਾ ਵਿਰੋਧ ਕਰਦੇ ਹੋਏ ਕਿਹਾ ਕਿ ਜੇਕਰ ਕੋਈ ਜਾਤ ਕਰਕੇ ਨੀਚ ਹੈ ਤਾਂ ਮੈਂ ਉਸ ਨੀਚ ਨਾਲ ਹੀ ਖੜਾਂਗਾ:-

"ਨੀਚਾ ਅੰਦਰਿ ਨੀਚ ਜਾਤਿ
ਨੀਚੀ ਹੂ ਅਤਿ ਨੀਚੁ ।।
ਨਾਨਕੁ ਤਿਨ ਕੈ ਸੰਗਿ ਸਾਥਿ
ਵਡਿਆ ਸਿਉ ਕਿਆ ਰੀਸ ।।
ਜਿਥੈ ਨੀਚ ਸਮਾਲੀਅਨਿ
ਤਿਥੈ ਨਦਰਿ ਤੇਰੀ ਬਖਸੀਸ ।।12

'ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਨੇ ਇਸ ਨਿਘਰੀ ਹੋਈ ਧਾਰਮਿਕ, ਸਮਾਜਿਕ ਤੇ ਰਾਜਨੀਤਿਕ ਹਾਲਤ ਨੂੰ ਵੇਖਿਆ ਤੇ ਫਿਰ ਇਸ ਨੂੰ ਸੁਧਾਰਨ ਦਾ ਉਪਰਾਲਾ ਕੀਤਾ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੇ ਖ਼ਿਆਲ ਵਿੱਚ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਇਸ ਅਧੋਗਤੀ ਵਿੱਚੋਂ ਕੱਢਣ ਲਈ ਪਹਿਲੀ ਲੋੜ ਇਹ ਸੀ ਕਿ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੀ ਮਨੋ- ਬਿਰਤੀ ਨੂੰ ਬਦਲਿਆ ਜਾਏ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੂੰ ਫ਼ੋਕੇ ਕਰਮ-ਕਾਂਡਾਂ ਤੇ ਵਹਿਮਾਂ-ਭਰਮਾਂ ਵਿੱਚੋਂ ਕੱਢ ਕੇ ਸਹੀ ਰਾਹ ਦੱਸਿਆ ਜਾਵੇ, ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੇ ਸਵੈ-ਮਾਣ ਤੇ ਅਣਖ ਨੂੰ ਜਗਾ ਕੇ ਗ਼ੁਲਾਮੀ ਤੋਂ ਨਫ਼ਰਤ ਕਰਵਾਈ ਜਾਏ ਅਤੇ ਢਹਿੰਦੀ ਕਲਾ ਵਿੱਚੋਂ ਕੱਢ ਕੇ ਚੜ੍ਹਦੀ ਕਲਾ ਵਿੱਚ ਲਿਆਂਦਾ ਜਾਏ। ਉਹ ਜਾਣਦੇ ਸਨ ਕਿ ਲੋਕਾਂ ਦੀ ਮਨੋਬਿਰਤੀ ਨੂੰ ਬਦਲਣ ਦਾ ਇਹ ਮਹਾਨ ਕੰਮ ਚਾਰ ਸਾਲ ਵਿੱਚ ਹੋਣ ਵਾਲਾ ਨਹੀਂ। ਸਗੋਂ ਇਹਦੇ ਲਈ ਵਰਿਆਂ ਬੱਧੀ ਯੋਜਨਾਬੱਧ ਕਾਰਵਾਈ-ਅਮਲੀ ਸਿੱਖਿਆ ਤੇ ਪ੍ਰਚਾਰ ਦੀ ਲੋੜ ਹੈ।'13

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਵਿੱਦਿਅਕ ਸਿੱਖਿਆ ਦੇ ਹਮਾਇਤ ਹਨ ਇਸੇ ਲਈ ਉਹ ਆਪਣੀ ਬਾਣੀ ਵਿੱਚ 'ਵਿਦਿਆ ਵਿਚਾਰੀ ਤਾਂ ਪਰਉਪਕਾਰੀ' ਦਾ ਸੰਦੇਸ਼ ਦਿੰਦੇ ਹਨ। ਪਰ ਮੌਜੂਦਾ ਦੌਰ ਦੀ ਸਿੱਖਿਆ ਚੰਗਾ ਵਪਾਰ ਤੇ ਉੱਚੀਆਂ ਨੌਕਰੀਆਂ ਦੀ ਪ੍ਰਾਪਤੀ ਤੱਕ ਹੀ ਸੀਮਿਤ ਰਹਿ ਗਈ ਹੈ। ਤੇ ਇਹ ਸਿੱਖਿਆ ਵੀ ਵੱਡੇ ਲੋਕਾਂ ਲਈ ਹੀ ਹੈ ਜਦ ਕਿ ਗਰੀਬ, ਦਲਿਤ ਲੋਕ ਸਿੱਖਿਆ ਤੋਂ ਵਾਂਝੇ ਹੀ ਰਹਿ ਜਾਂਦੇ ਹਨ। ਇਸ ਕੰਪਿਊਟਰੀਕਰਨ, ਮਸ਼ੀਨੀਕਰਨ ਦੇ ਯੁਗ ਵਿੱਚ ਮਨੁੱਖ ਮੁਕਾਬਲੇਬਾਜੀ ਦੀ ਅੰਨੀ ਦੌੜ ਵਿੱਚ ਲੱਗਿਆ ਹੋਇਆ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਅਨੁਸਾਰ ਅਜਿਹਾ ਗਿਆਨ ਮਨੁੱਖ ਦਾ ਆਂਤਰਿਕ ਵਿਕਾਸ ਨਹੀਂ ਕਰਦਾ:

ਪੜਿ ਪੜਿ ਗਡੀ ਲਦੀਅਹਿ ਪੜਿ ਪੜਿ ਭਰੀਅਹਿ ਸਾਥ।।
ਪੜਿ ਪੜਿ ਬੇੜੀ ਪਾਈਐ ਪੜਿ ਪੜਿ ਗਡੀਅਹਿ ਖਾਤ।।
ਪੜੀਅਹਿ ਜੇਤੇ ਬਰਸ ਪੜੀਅਹਿ ਜੇਤੇ ਮਾਸ।।
ਪੜੀਐ ਜੇਤੀ ਆਰਜਾ ਪੜੀਅਹਿ ਜੇਤੇ ਸਾਸ।।
ਨਾਨਕ ਲੇਖੈ ਇਕ ਗਲ ਹੋਰੁ ਹਉਮੈ ਝਖਣਾ ਝਾਖ।।14

ਸਿੱਖਿਅਤ ਮਨੁੱਖ ਵੀ ਮੂਰਖ ਹੈ ਜਿਸ ਅੰਦਰ ਵਿਦਵਤਾ ਦਾ ਹੰਕਾਰ ਹੈ। ਗੱਡੇ ਭਰ-ਭਰ ਪੜ੍ਹੀਆਂ ਕਿਤਾਬਾਂ ਦਾ ਕੋਈ ਅਰਥ ਨਹੀਂ, ਜੇ ਗਿਆਨ ਫਿਰ ਵੀ ਨਾ ਹੋਇਆ। ਚੰਗੇ ਅਮਲਾਂ ਨੇ ਹੀ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਪਾਰ ਲੈ ਕੇ ਜਾਣਾ।

ਪੜਿਆ ਹੋਵੈ ਗੁਨਹਗਾਰ ਤਾ ਓਮੀ ਸਾਧੁ ਨ ਮਾਰੀਐ।।
ਜੇਹਾ ਘਾਲੇ ਘਾਲਣਾ ਤੇਵੇਹੋ ਨਾਉ ਪਚਾਰੀਐ।।
ਐਸੀ ਕਲਾ ਨ ਖੇਡੀਐ ਜਿਤੁ ਦਰਗਹ ਗਇਆ ਹਾਰੀਐ।।
ਪੜਿਆ ਅਤੈ ਓਮੀਆ ਵੀਚਾਰੁ ਅਗੈ ਵੀਚਾਰੀਐ।।15

ਉਪਰੋਕਤ ਚਰਚਾ ਦੇ ਆਧਾਰ ਤੇ ਅਸੀਂ ਕਹਿ ਸਕਦੇ ਹਾਂ ਕਿ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਮਾਨਵ ਕਲਿਆਣ ਤੇ ਮਾਨਵੀ ਗੌਰਵ ਨਾਲ ਜੁੜੀ ਹੋਈ ਹੈ। ਇਸ ਦੀ ਚਿਹਨਾਤਮਕਤਾ ਨੂੰ ਅਸੀਂ ਅੱਜ ਵੀ ਪਹਿਚਾਣ ਸਕਦੇ ਹਾਂ। ਇਸ ਦਾ ਦਾਇਰਾ ਸੀਮਿਤ ਨਹੀਂ ਬਲਕਿ ਸਮੁੱਚੀ ਕਾਇਨਾਤ ਨੂੰ ਆਪਣੇ ਸ਼ਬਦ ਸਭਿਆਚਾਰ ਰਾਹੀਂ ਵਿਸਥਾਪਿਤ ਕਰਦਾ ਹੋਇਆ ਅਧਿਆਤਮਿਕ ਤੇ ਮਾਨਵ ਜਗਤ ਦੀ ਜੀਵਨ-ਜਾਂਚ, ਕਦਰਾਂ-ਕੀਮਤਾਂ ਵਿੱਚ ਨਵੀਂ ਰੰਗਤ ਨੂੰ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ਮਾਨ ਕਰਦਾ ਹੈ।

ਹਵਾਲੇ ਅਤੇ ਟਿੱਪਣੀਆਂ:

1. ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ, ਪੰਨਾ-25
2. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ-8
3. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ-412
4. ਡਾ. ਗੁਰਦੀਪ ਸਿੰਘ ਸੰਧੂ, 'ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ ਅੰਦਰ ਪ੍ਰਾਪਤ ਕੁਦਰਤੀ ਚਿਤਰਨ ਦਾ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ ਮਹੱਤਵ', ਖੋਜ ਪਤ੍ਰਿਕਾ, ਅੰਕ 62, ਸੰਪਾਦਕ: ਡਾ. ਗੁਰਨਾਇਬ ਸਿੰਘ, ਡਾ. ਰਾਜਿੰਦਰ ਲਹਿਰੀ, ਸਤੰਬਰ 2005, ਪੰਨਾ-14
5. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ-23
6. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ-79
7. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ-152
8. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ-145
9. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ-468
10. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ-473
11. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ-417
12. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ-15
13. ਲਾਲ ਸਿੰਘ ਗਿਆਨੀ, ਪੰਜਾਬ ਦੀ ਵੀਰ ਪਰੰਪਰਾ(ਆਦਿ ਤੋਂ ਆਧੁਨਿਕ ਕਾਲ ਤੱਕ), ਪਬਲੀਕੇਸ਼ਨ ਬਿਓਰੋ, ਪੰਜਾਬੀ 12. ਯੂਨੀਵਰਸਿਟੀ, ਪਟਿਆਲ਼ਾ, 1988, ਪੰਨਾ-48
14. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ-467
15. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ-469

ਭਾਰਤੀ ਸੰਸਕ੍ਰਿਤੀ ਅਤੇ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ

* ਸੰਦੀਪ ਕੌਰ

* ਐਸਿਸਟੈਟ ਪ੍ਰੋਫੈਸਰ ਪੰਜਾਬੀ ਵਿਭਾਗ, ਦਸਮੇਸ਼ ਗਰਲਜ਼ ਕਾਲਜ, ਬਾਦਲ (ਸ੍ਰੀ ਮੁਕਤਸਰ ਸਾਹਿਬ)

ਹਰ ਕੌਮ ਰਾਸ਼ਟਰ ਅਤੇ ਖਿਤੇ ਦੇ ਸਮਾਜ ਸੱਭਿਆਚਾਰ ਵਿੱਚ ਮਨੁੱਖੀ ਪਛਾਣ ਅਤੇ ਵੱਖਰਤਾ ਨੂੰ ਦਰਸਾਉਣ ਲਈ ਆਪੋ ਆਪਣੇ ਸਦਾਚਾਰਕ ਮਾਪਦੰਡ ਹੁੰਦੇ ਹਨ। ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਨੂੰ ਪਾਲਣ, ਬਚਾਉਣ ਅਤੇ ਨਿਭਾਉਣ ਸੰਬੰਧਿਤ ਸਮਾਜ ਸੱਭਿਆਚਾਰ ਦੇ ਲੋਕ ਆਪਣੀ ਬੰਦਿਆਈ ਸਮਝਦੇ ਹਨ। ਹਰੇਕ ਸਮਾਜ ਵਿੱਚ ਅਜਿਹੇ ਉਦੇਰੇ ਮਾਨਵੀ ਤਕਾਜ਼ਿਆਂ ਲਈ ਕੁਰਬਾਣ ਹੋਣ ਦੀਆਂ ਅਨੇਕਾਂ ਉਦਾਹਰਣਾ ਮਿਲ ਜਾਣਗੀਆਂ। ਜਿਹੜੀਆਂ ਉਸਨੂੰ ਹੋਰਨਾਂ ਸਮਾਜਾਂ ਨਾਲੋਂ ਵੱਖਰਾ ਕਰਦੀਆਂ ਹਨ। ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਪੰਜਾਬੀ ਸੱਭਿਆਚਾਰ ਦੀਆ ਹੋਰ ਅਨੇਕਾ ਵਿਸ਼ੇਸਤਾਵਾਂ ਹਨ ਜੋ ਉਸਨੂੰ ਦੂਸਰੇ ਸਮਾਜ ਤੋ ਵੱਖਰਾ ਕਰਦੀਆਂ ਹਨ।

ਭਾਰਤੀ ਸਮਾਜ ਨੇ ਸਦੀਆਂ ਤੋਂ ਵੱਖ-ਵੱਖ ਕੌਮਾਂ ਤੇ ਸੱਭਿਆਚਾਰਾਂ ਦੇ ਪ੍ਰਭਾਵ ਨੂੰ ਕਬੂਲਿਆਂ ਹੈ।ਜਿਸਦੇ ਸਿੱਟੇ ਵਜੋਂ ਬਹੁ-ਉਤਾਲੀ ਸੱਭਿਆਚਾਰ ਹੋਂਦ ਵਿੱਚ ਆਇਆ ਹੈ। ਜਿਸ ਕਾਰਨ ਪੈਦਾ ਹੋਏ ਨਸਲੀ ਵਿਤਕਰਿਆਂ ਨੂੰ ਵੀ ਨਜ਼ਰ ਅੰਦਾਜ਼ ਨਹੀਂ ਕੀਤਾ ਜਾ ਸਕਦਾ। ਕਿਰਤ ਦੀ ਵੰਡ ਵਰਣਾ ਅਤੇ ਜਾਤੀਆਂ ਦੀ ਵੰਡ ਦਾ ਅਵਸਰ ਬਣੀ ਹੇਠਲੇ ਤਬਕੇ ਦੇ ਕਾਮਿਆਂ ਨੂੰ ਸੂਦਰ ਸਮਝਿਆਂ ਜਾਣ ਲੱਗਾ। ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਦੇ ਸਪਰਸ਼ ਨਾਲ ਭਿੱਟ ਚੜ੍ਹ ਜਾਣ ਦਾ ਸੰਕਲਪ ਘੜਿਆ ਗਿਆ। ਇਸ ਜਾਤੀਵਾਦੀ ਨਜ਼ਰੀਏ ਨੇ ਭਾਰਤੀ ਸਮਾਜਿਕ ਯਥਾਰਥ ਨੂੰ ਪ੍ਰਬਲ ਰੂਪ ਪ੍ਰਭਾਵਿਤ ਕੀਤਾ। ਜਿਸ ਕਾਰਨ ਸ਼ੂਦਰ ਆਪਣੇ ਆਪ ਨੂੰ ਹੀਣੇ ਸਮਝਣ ਲੱਗੇ। ਭਾਰਤੀ ਸਮਾਜ ਦਾ ਹੀ ਅੰਗ ਪੰਜਾਬ ਜਿਸ ਦੀਆਂ ਕਦਰਾਂ-ਕੀਮਤਾਂ, ਰਹਿਣ ਸਹਿਨ, ਵਰਤੋ ਵਿਉੱਤ ਅਤੇ ਵਿਚਰਨ ਦੇ ਢੰਗ ਤਰੀਕੇ ਇਸਨੂੰ ਦੂਸਰਿਆਂ ਨਾਲੋਂ ਅੱਡ ਕਰਦੇ ਆਂ।

ਪੰਜਾਬੀਆਂ ਦਾ ਸੁਭਾਅ ਕੋਮਲ ਮਨ ਨੂੰ ਮਹਿਸੂਸਣ ਅਤੇ ਸੰਵੇਦਨਸ਼ੀਲਤਾ ਦੀ ਅਸੀਮ ਸਮੱਰਥਾ ਰੱਖਣ ਵਾਲਾ ਹੈ। ਪੰਜਾਬੀ ਸੰਵੇਦਨਾ ਦੇ ਕੇਂਦਰੀ ਮਨੋਰਥ ਦੂਜਿਆਂ ਦੀਆਂ ਕਦਰਾਂ ਕੀਮਤਾਂ ਦੀ ਪ੍ਰਸੰਸਾ, ਅਛੂਤਤਾ ਖੰਡਣ, ਦੂਜਿਆਂ ਦਾ ਖਿਆਲ ਰੱਖਣਾ, ਸੰਬੰਧਿਤ ਹੋਣਾ ਸਹਿਯੋਗ ਸ਼ਿਸ਼ਟਾਚਾਰ ਮਨੁੱਖਤਾ ਦਾ ਸਤਿਕਾਰ ਸਯੁੰਕਤ ਕੰਮ ਸਚਿਆਈ ਅਤੇ ਸਰਵਵਿਆਪਕ ਪਿਆਰ ਆਦਿ, ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਦੀ ਪਾਲਣਾ ਕਰਨਾ ਪੰਜਾਬੀ ਆਪਣਾ ਫ਼ਰਜ ਸਮਝਦਾ ਹੈ।[1]

ਪੰਜਾਬ ਸਮਾਜ ਵਿਚ ਅਜਿਹੇ ਉਚੇਰੇ ਮੁੱਲਾ ਦੇ ਮਾਨਵੀ ਤਕਾਜ਼ਿਆਂ ਲਈ ਕੁਰਬਾਣ ਹੋਣ ਦੀਆਂ ਅਨੇਕਾਂ ਉਦਾਹਰਨਾਂ ਮਿਲ ਜਾਣਗੀਆਂ ਪੰਜਾਬੀ ਸਮਾਜ ਅਤੇ ਸੱਭਿਆਚਾਰ ਦੀ ਨੀਹ ਸੰਵੇਦਨਸ਼ੀਲਤਾ ਅਤੇ ਨੈਤਿਕਤਾ ਮੰਨੀ ਗਈ ਹੈ। ਗੁਆਂਢੀ ਸਮਾਜਾਂ ਵਿੱਚ ਕਿੱਤਾ ਅਤੇ ਜਾਤੀ ਅਧਾਰਿਤ ਹੋ ਰਹੇ ਅਮਾਨਵੀ ਵਿਵਹਾਰ ਦੇ ਬਾਵਜੂਦ ਵੀ ਪੰਜਾਬ ਦੇ ਸੱਭਿਆਚਾਰ ਵਿੱਚ ਭਾਈਚਾਰਕ ਸਾਂਝ ਦੇ ਪਰਿਮਾਣ ਮਿਲਦੇ ਹਨ।"ਸੱਭਿਆਚਾਰ ਹੀ ਨਿਰਧਾਰਿਤ ਕਰਦਾ ਹੈ"।[2] ਕਿਸੇ ਵੀ ਸੱਭਿਆਚਾਰ ਅਤੇ ਉਸਦੇ ਅਵਚੇਤਨ ਨੂੰ ਸਮਝਣ ਲਈ ਉਸਦੀ ਭਾਸ਼ਾ ਨੂੰ ਸਮਝਣਾ ਬਹੁਤ ਜ਼ਰੂਰੀ ਹੈ। ਕਿਸੇ ਵੀ ਭਾਸ਼ਾ ਦੀ ਸ਼ਬਦ ਸਿਰਜਣਾ ਮਨੁੱਖੀ ਭਾਵ ਅਨੁਭਾਵ ਗਿਆਸ ਦੀਆਂ ਗੁੰਝਲਦਾਰ ਲੜੀਆਂ ਵਿਚ ਪਰੋਈ ਹੁੰਦੀ ਹੈ। ਜਿਸ ਨੂੰ ਖੋਲਣ ਨਾਲ ਸੱਭਿਆਚਾਰ ਇਤਿਹਾਸ ਦਰਸ਼ਨ ਹੁੰਦੇ ਹਨ।

ਭਾਸ਼ਾ ਕਿਸੇ ਜਾਤੀ ਦੇ ਵਿਰਸੇ ਦਾ ਉਹ ਸੱਚ ਹੈ। ਜਿਸ ਦੇ ਗਹਿਰੇ ਅਧਿਐਨ ਬਿਨਾਂ ਕਿਸੇ ਜਾਤੀ ਦੇ ਸੱਭਿਆਚਾਰ ਦੀ ਪਹਿਚਾਣ ਕਾਇਮ ਨਹੀਂ ਕੀਤੀ ਜਾ ਸਕਦੀ ਕਿਉਂਕਿ ਭਾਸ਼ਾ ਪ੍ਰਚਾਰ ਵਾਂਗ ਪ੍ਰਰੰਪਰਾ ਤੋਂ ਚੱਲਦੀ ਯੁਗਾ ਨਾਲ ਕਦਮ ਮੇਚ ਕੇ ਤੁਰਦੀ ਹਰੇਕ ਸੱਭਿਆਚਾਰਕ ਵਰਤਾਰੇ ਵਸਤੂ ਅਤੇ ਸੋਚ ਨੂੰ ਆਪਣੇ ਵਿਚ ਸਮੋ ਲੈਦੀ ਹੈ। ਭਾਸ਼ਾ ਜਾਤੀ ਦੀ ਮਾਨਸਿਕਤਾ ਦਾ ਯਥਾਰਥ ਨਹੀਂ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਭਾਸ਼ਾ ਪਿੱਛੇ ਕੰਮ ਕਰਦੇ ਸੰਕਲਪ ਵਿਸ਼ਾਲ ਸਮੱਰਥਾ ਦੇ ਧਾਰਨੀ ਹੁੰਦੇ ਹਨ। ਜੇਕਰ ਅਸੀਂ ਪੰਜਾਬੀ ਭਾਸ਼ਾ ਦੀ ਗੱਲ ਕਰਦੇ ਹਾਂ ਤਾਂ ਇਹ ਪਰੋਖ ਰੂਪ ਵਿੱਚ ਪੰਜਾਬੀ ਮਾਨਸਿਕਤਾ ਤੇ ਇਸ ਦੇ ਸਮਾਜੀਕ੍ਰਤ ਰੂਪ ਚੇਤਨਾ ਦੀ ਗੱਲ ਹੋ ਨਿਬੜਦੀ ਹੈ। ਇਸ ਵਿਚ ਪੰਜਾਬੀ ਸੁਭਾਅ, ਪੰਜਾਬੀ ਪ੍ਰਕ੍ਰਿਤੀ, ਪੰਜਾਬੀ ਮਜਾਜ, ਪੰਜਾਬੀ ਸੰਸਕ੍ਰਿਤੀ, ਪੰਜਾਬੀ ਇਤਿਹਾਸ, ਪੰਜਾਬੀ ਮਿਥਿਹਾਸ ਅਤੇ ਸਮੁੱਚਾ ਜਨ ਜੀਵਣ ਆ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਭਾਸ਼ਾ ਕੋਈ ਖੜੋਤ ਵਾਲੀ ਵਸਤੂ ਨਹੀਂ ਪੰਜਾਬੀ ਭਾਸ਼ਾ ਦੀ ਪਹਿਚਾਣ ਵਾਸਤਵਿਕ ਵਿੱਚ ਪੰਜਾਬੀਅਤ ਦੀ ਪਹਿਚਾਣ ਹੈ। ਇਹ ਪਹਿਚਾਣ ਕਾਇਮ ਕਰਨ ਲਈ ਪੰਜਾਬੀ ਕਿੱਤੇ ਸ਼ਬਦਾਵਲੀ ਪਿੱਛੇ ਕੰਮ ਕਰਦੇ ਸੰਕਲਪ ਇਸ ਖੋਜ ਪੱਤਰ ਦਾ ਵਿਸ਼ਾ ਹਨ।

ਅਜੇ ਅੱਧੀ ਕੁ ਸਦੀ ਪਹਿਲਾਂ ਦੀ ਗੱਲ ਹੈ।ਪਿੰਡ ਆਪਣੇ ਆਪ ਵਿੱਚ ਇਕ ਸੰਪੂਰਨ ਇਕਾਈ ਹੋਇਆਂ ਕਰਦਾ ਸੀ। ਪਿੰਡ ਦੀਆਂ ਸਾਰੀਆਂ ਆਰਥਿਕ ਲੋੜਾਂ ਲੱਗਭਗ ਪਿੰਡ ਵਿੱਚੋ ਹੀ ਪੂਰੀਆਂ ਹੋ ਜਾਇਆ ਕਰਦੀਆਂ ਸਨ। ਛੋਟੀਆਂ ਮੋਟੀਆਂ ਹੋਰ ਵਸਤਾਂ ਜੋ ਸ਼ਹਿਰੋ ਲਿਆਉਣ ਦੀ ਜਰੂਰਤ ਪੈਂਦੀ ਸੀ। ਪਿੰਡ ਦੀ ਹੱਟੀ ਤੋ ਮਿਲ ਜਾਂਦੀਆਂ ਸਨ। ਪੈਸੇ ਅਤੇ ਨਗਦੀ ਲੈਣ ਦੇਣ ਦਾ ਰਿਵਾਜ਼ ਨਹੀਂ ਸੀ। ਵਸਤੂ ਵਟਾਂਦਰੇ ਨਾਲ ਹੀ ਸਾਰੇ ਕੰਮ ਸਾਰ ਲਏ ਜਾਂਦੇ ਸਨ।ਕਿੱਤੇ ਵਜੋਂ ਤਰਖਾਣ, ਲੋਹਾਰ, ਜੁਲਾਹੇ, ਛੀਬੇ, ਨਾਈ, ਸੁਨਿਆਰ, ਘੁਮਿਆਰ, ਪਾਲੀ, ਪੇਜਾ ਆਦਿ ਸਾਰੇ ਪਿੰਡ ਵਿੱਚ ਹੀ ਮਿਲ ਜਾਂਦੇ ਸਨ।ਹਰ ਜਾਤੀ ਨੂੰ ਆਪਣਾ ਕਿੱਤਾ ਇਸ਼ਕ ਵਾਂਗ ਪਿਆਰਾ ਪਵਿੱਤਰ ਅਤੇ ਗੋਰਵਮਈ ਹੋਣ ਦਾ ਮਾਣ ਤੇ ਸਭਨਾਂ ਨੂੰ ਆਪੋ-ਆਪਣੇ ਕੰਮ ਦੇ ਖਾਨਦਾਨੀ ਹੋਣ ਦਾ ਅਹਿਸਾਸ।ਹਰ ਜਾਤੀ ਦੇ ਲੋਕ-ਆਪਣੇ ਹੁਨਰ ਤੇ ਉਸਦੀ ਨਿਪੁੰਨਤਾ ਦੇ ਗੁੱਝੇ ਭੇਦਾਂ ਦੇ ਪੇਚਦਾਰ ਰਹੱਸਾਂ ਉੱਤੇ ਇਹਨਾਂ ਗੋਰਵ ਰੱਖਦੇ ਹਨ ਜਿਵੇਂ ਉਹਨਾਂ ਅੰਦਰ ਸਾਰਾ ਮਨੀ ਦੇ ਭੰਡਾਰ ਹੋਣ'।ਪੰਜਾਬੀ ਲੋਕਮਨ ਲਈ ਕਿਰਤ ਅਤੇ ਕਰਮ ਹੀ ਇਸ਼ਕ ਹੈ ਉਨ੍ਹਾਂ ਲਈ ਪੰਜਾਬੀ ਲੋਕਮਨ ਕਿਰਤ ਕਰਨ ਵਾਲਿਆਂ ਪ੍ਰਤੀ ਉਦਾਵਾਦੀ ਨਜ਼ਰੀਆਂ ਅਪਨਾਉਂਦਾ ਹੈ। ਪੇਂਡੂ ਧਰਾਤਲ ਤੇ ਵੇਖੀਏ ਤਾਂ ਕਿਰਨ ਦੀ ਵੰਡ ਸਾਨੂੰ ਤਿੰਨ ਪੱਧਰ ਤੇ ਹੋਈ ਮਿਲਦੀ ਹੈ। ਕਿਸਾਨ, ਸੇਪੀ ਤੇ ਲਾਗੀ, ਭਾਵੇ ਸੇਪੀ

ਤੇ ਲਾਗੀ ਪੂਰੀ ਤਰ੍ਹਾਂ ਕਿਸਾਨੀ ਤੇ ਨਿਰਭਰ ਹਨ। ਪਰ ਇਹਨਾਂ ਦੀ ਮਹੱਤਤਾ ਨੂੰ ਕਿਸੇ ਤਰ੍ਹਾਂ ਵੀ ਘਟਾ ਕੇ ਨਹੀਂ ਵੇਖਿਆਂ ਜਾਂਦਾ।"ਕਿਸੇ ਵੀ ਵਿਅਕਤੀ ਨੂੰ ਉਸਦੀ ਜਾਤ ਦਾ ਨਾਉ ਨਾਲ ਬੁਲਾਉਣਾ ਨਿਰਾਦਰੀ ਦੀ ਗੱਲ ਸਮਝੀ ਜਾਂਦੀ ਹੈ। ਇਸ ਲਈ ਬਹੁਤੀਆਂ ਜਾਤੀਆਂ ਨੂੰ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ਕਰ ਨੀਵੀਆਂ ਜਾਤੀਆਂ ਨੂੰ ਉਹਨਾਂ ਦਾ ਨਾਮ ਲੈਕੇ ਨਹੀਂ ਬੁਲਾਇਆ ਜਾਂਦਾ।"[4] ਖੇਤਾਂ ਵਿੱਚ ਕਿਸਾਨਾਂ ਨਾਲ ਨਿਮਨ ਜਾਤੀ ਦੇ ਲੋਕ ਕੰਮ ਵਿੱਚ ਹੱਥ ਵਟਾਉਂਦੇ ਸਨ। ਜਿੰਨ੍ਹਾਂ ਵਿੱਚੋ ਜਿਆਦਾਤਰ ਚੂੜੇ, ਚੁਮਿਆਰ, ਨਾਈ ਆਦਿ ਕੰਮ ਕਰਦੇ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੂੰ ਬੁਲਾਉਣ ਲਈ ਕੋਈ ਜਾਤੀ ਸੂਚਕ ਸ਼ਬਦ ਵਰਤਣਾ ਸਿਰੇ ਦਾ ਨਿਰਾਦਰੀ ਦੀ ਗੱਲ ਸਮਝਿਆਂ ਜਾਂਦਾ ਸੀ। ਇਸ ਲਈ ਕਾਮੇ ਨੂੰ ਬੁਲਾਉਣ ਲਈ ਨੌਕਰ ਦੀ ਜਗ੍ਹਾਂ ਤੇ ਸੀਰੀ ਸ਼ਬਦ ਵਰਤਿਆਂ ਜਾਂਦਾ ਹੈ।ਜਿਸਦਾ ਅਰਥ ਹੈ ਸਮੁੱਚੇ ਕੰਮ ਕਾਜ ਵਿੱਚ ਬਰਾਬਰ ਦਾ ਭਾਈਵਾਲ। ਪਰਿਵਾਰ ਦੇ ਦੂਸਰੇ ਮੈਂਬਰ ਵੀ ਕਾਮੇ ਨੂੰ ਉਮਰ ਦੇ ਲਿਹਾਜ ਨਾਲਚਾਚਾ ਤਾਇਆਂ ਵੀਰ ਕਹਿ ਕੇ ਸੰਬੋਧਨ ਕਰਦੇ ਹਨ। ਨਾਈਆਂ ਦਾ ਮੁੱਖ ਤੌਰ ਤੇ ਪੇਸ਼ਾ ਹਜਾਮਤ ਕਰਨਾ, ਨਹੁੰ ਲਾਉਣ ਅਤੇ ਨੈਣਾਂ ਘਰ-ਘਰ ਜਾਕੇ ਗੁੱਤਾਂ ਗੁੰਦਦੀਆਂ ਸਨ। ਇਸਦੇ ਨਾਲ ਹੀ ਨਾਈ ਜੱਟ ਜਿਮੀਦਾਰਾਂ ਦੇ ਘਰਾਂ ਵਿੱਚ ਵਿਆਹ ਅਤੇ ਗਮੀ ਦੇ ਵਕਤ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ ਨਿਬਾਉਂਦੇ ਹਨ। ਕੁੜੀ ਮੁੰਡੇ ਨੂੰ ਮੰਗਣਾ, ਸ਼ਗਨਪੁੜੀ, ਸਾਰੇ ਚਿੱਠੀ ਲੈ ਕੇ ਆਉਂਣਾ ਵਿਆਹ ਸਮੇ ਕੁੜੀ ਦੇ ਨਾਲ ਨੈਣ ਦਾ ਜਾਣਾ, ਵਿਆਹ ਵਾਲੇ ਘਰ ਨਾਈ ਨੈਣ ਦੀ ਮੁੱਖ ਭੂਮਿਕਾ ਹੁੰਦੀ ਹੈ।

ਵਿਆਹ ਨਾਈਆਂ ਦੇ, ਛੰਞ ਭਰਾਈਆਂ ਦੇ

ਅਲਹੂਣੀਆਂ ਅਤੇ ਮ੍ਰਿਤਕ ਦੇ ਦੇਹ ਨੂੰ ਨਵਾਉਂਣ ਸਮੇ ਨਾਈ ਨੈਣ ਪ੍ਰਮੁੱਖ ਭੂਮਿਕਾ ਨਿਭਾਉਂਦੇ ਹਨ। ਇਸ ਲਈ ਨਾਈ ਲਈ ਪੰਜਾਬੀ ਵਿੱਚ ਰਾਜਾ ਸ਼ਬਦ ਵਰਤਿਆਂ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਜੋ ਨਾ ਕੇਵਲ ਸੰਬੋਧਨੀ ਆਦਰ ਬੋਧਕ ਸ਼ਬਦ ਹੈ। ਸਗੋਂ ਉਸਨੂੰ ਸਮਾਜ ਵਿਚ ਵੀ ਚੰਗੀ ਪ੍ਰਤਿਸ਼ਨਤਾ ਪ੍ਰਦਾਨ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਝਿਉਰ ਦਾ ਮੁੱਖ ਕੰਮ ਘਰ ਵਿੱਚ ਪਾਣੀ ਭਰਨਾ ਹੈ। ਘਰਾਂ ਵਿੱਚ ਪਾਣੀ ਭਰਨ ਤੋਂ ਬਾਅਦ ਝਿਉਰ ਅਤੇ ਝਿਉਰੀ (ਭੜਭੂਜਾ ਤੇ ਭੜਭੂਜੀ) ਭੱਠੀ ਤੇ ਦਾਣੇ ਭੁੰਨਦੇ ਹਨ।"ਝਿਉਰ ਨੂੰ ਜਾਤੀਗਤ ਨਾਮ ਨਾਲ ਨਹੀਂ ਬੁਲਾਇਆ ਜਾਂਦਾ ਝਿਉਰ ਲਈ ਮਹਿਰਾ ਸ਼ਬਦ ਵਰਤ ਲਿਆਂ ਜਾਂਦਾ ਹੈ"।[5] ਜੱਟ ਜਿਮੀਦਾਰ ਦੇ ਘਰ ਮਹਿਰਾ ਖਾਣ ਪੀਣ ਦੀ ਵਸਤਾਂ ਤਿਆਰ ਕਰਨ ਤੋਂ ਇਲਾਵਾ ਮਿਲਣੀਆਂ ਕਰਵਾਉਣਾ ਵੇਲਾ ਅਤੇ ਸਿਰ ਵਾਰਨੇ ਫੜਨਾ। ਡੋਲੀ ਤੁਰਨ ਸਮੇ ਕੁਹਾਰ ਦੀ ਭੂਮਿਕਾ ਇਹੀ ਨਿਭਾਉਂਦੇ ਹਨ। ਮੌਤ ਸਮੇ ਇਸ ਦੀ ਸ਼ਮੂਲੀਅਤ ਜਰੂਰੀ ਹੁੰਦੀ ਹੈ। ਇਸ ਲਈ ਮਹਿਰਾ ਸ਼ਬਦ ਤੋਂ ਅੱਗੇ ॥ਪੈਂਚ' ਸ਼ਬਦ ਵਰਤਿਆਂ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਜਿਸਦਾ ਅਰਥ ਹੈ (ਪ੍ਰਧਾਨ ਵਿਅਕਤੀ)। ਡੂਮ (ਮਰਾਸੀ) ਵਿਸ਼ੇਸ਼ ਦਿਨਾਂ ਤੇ ਸਹੋਲੇ ਗਾਉਂਦੇ, ਕਲਾ ਪੀੜ੍ਹੀ ਉਸ ਵਿੱਚ ਹੋਏ ਬੁਜਰਗਾਂ ਦੇ ਨਾਮ ਲੈ ਕੇ ਦੀਆਂ ਦੁਆਵਾ ਕਰਕੇ ਲੋਕਾਂ ਦਾ ਮਨੋਰੰਜਨ ਕਰਨ ਦੇ ਨਾਲ ਨਾਲ ਵਿਆਹ ਵਾਲੇ ਘਰ ਵੱਲੋਂ ਸੱਦੇ ਦੇਣ, ਜੂਠੇ ਭਾਂਡੇ ਚੁਕਣ ਅਤੇ ਚੂਰ (ਚੁੱਲ੍ਹੇ) ਵਿੱਚ ਅੱਗ ਡਾਉਣ ਦਾ ਕੰਮ ਹੀ ਕਰਦੇ ਹਨ। ਇਹਨਾਂ ਨੂੰ ਆਦਰ ਨਾਲ ਦਾਂਦੇ ਸ਼ਬਦ ਵਰਤਿਆਂ ਜਾਂਦਾ ਰਿਹਾ ਹੈ। ਜਿਸਦਾ ਅਰਥ ਦਾਤੇ। ਉਪਰੋਕਤ ਅਨੁਸਾਰ ਹੀ ਖੁਸਰੇ ਜੋ ਸਮੁੱਚੇਂ ਨਾਲੋਂ ਟੁੱਟ ਵੱਖਰੇ ਰਹਿੰਦੇ ਹਨ। ਪਰ ਖੁਸ਼ੀ ਵਕਤ ਲੋਕਾਂ ਦੀਆਂ ਖੁਸ਼ੀਆਂ ਦਾ ਹਿੱਸਾ ਬਣਕੇ ਉਹਨਾਂ ਨੂੰ ਕਰਦੇ ਹਨ। ਖੁਸਰਿਆਂ ਲਈ ਮਹੰਤ ਸ਼ਬਦ ਦੀ ਵਰਤੋ ਕੀਤੀ ਜਾਂਦੀ ਹੈ।

ਸਿੱਟੇ : ਉਪਰੋਕਤ ਚਰਚਾ ਬਾਅਦ ਸਾਡੇ ਸਾਹਮਣੇ ਪੰਜਾਬ ਦੀ ਸਾਂਝੀਵਾਲਤਾ ਸੰਵੇਦਨਾ ਸ਼ੀਲਤਾ ਦੀ ਤਸਵੀਰ ਉਭਰਕੇ ਸਾਹਮਣੇ ਆਉਂਦੀ ਹੈ।ਅਸੀਂ ਪੰਜਾਬੀ ਭਾਸ਼ਾ ਦੀ ਇਸ ਤਸਵਰੀ ਤੋਂ ਅੰਦਾਜਾ ਲਗਾ ਸਕਦੇ ਹਾਂ ਕਿ ਇਸ ਵਿੱਚ ਸੱਭੇ ਜਾਤਾਂ, ਬਰਾਦਰੀ, ਕੰਮ ਇਕ ਸਮਾਨ ਹਨ। ਕੋਈ ਹਾਸ਼ੀਏ ਵਿੱਚ ਨਹੀਂ ਸਗੋਂ ਸੱਭ ਦੀ ਆਪਣੀ ਵਿਲੱਖਣ ਪਹਿਚਾਣ ਹੈ।

ਟਿੱਪਣੀਆਂ ਤੇ ਹਵਾਲੇ

1. ਡਾ. ਕੁਲਵੰਤ, ਪੰਜਾਬੀ ਸੰਵੇਦਨਾ ਅਤੇ ਪੰਜਾਬੀ ਸਾਹਿਤ, ਪੰਨਾ-8
2. ਅੱਛਰੂ ਸਿੰਘ, ਵਿਰਸਾ ਅਤੇ ਸੱਭਿਆਚਾਰ ਵੇਖਿਆਂ ਸੁਣਿਆ ਹੰਡਾਇਆਂ, ਪੰਨਾ-28
3. ਗਿਆਨੀ ਗੁਰਦਿੱਤ ਸਿੰਘ, ਮੇਰਾ ਪਿੰਡ, ਪੰਨਾ-39
4. ਸਾਧੂ ਸਿੰਘ, ਪੰਜਾਬੀ ਬੋਲੀ ਦੀ ਵਿਰਾਸਤ, 261
5. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ-261

गुरु नानक देव : सामाजिक समरसता के पर्याय

*डॉ. कृष्णा शुक्ला

* पी.जी.डी.ए.वी. कॉलेज (सांध्य), दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

गुरु नानक देव जी के जन्म के 550वें वर्ष के उपलक्ष्य में महान संत, कवि, संगीत ज्ञाता, दार्शनिक, दूरदर्शी, सच्चे मानवीय मूल्यों के अदभुत समाज सुधारक, धार्मिक पंड़ित, सिख समाज के संस्थापक, प्रथम सिख गुरु, गुरु वाणी के रचियता को सच्चे मन से स्मरण करना व उनके जीवन चरित्र का चिंतन करना एक प्रेरणादायक प्रसंग है। समाज के समक्ष उनके अद्वितीय व्यक्तित्व का वर्णन करना यही इस लेख का उद्देश्य है। ईश्वर के प्रति जिनकी धारणा थी कि ईश्वर एक है। ईश्वर एक सत्य है। जो निर्माण करता है। जो निडर है। जिसके मन में कोई बैर नही है। जिसका कोई आकार नही है। जो जन्म और मृत्यु के परे है। जो स्वयं ही प्रकाशित है, जिनके नाम के जप से ही आर्शीवाद मिलता है। आज विश्व के किसी भी देश की सामाजिक स्थिति का अवलोकन किया जाये तो यही तथ्य उभर कर सामने आता है कि हर देश धर्म, जाति व संप्रदाय के नाम पर बंटा हुआ है। यदि सभी धर्मों के लोग दूसरे धर्म का सम्मान करने लगे और अपने को स्वधर्म की सीमाओं से अलग करें तो सामाजिक समरसता बढेगी। सम्पूर्ण मानव–जगत मिल जुल कर चहुँमुखी विकास कर पायेगा।

गुरु नानक देव जी का जन्म 15 अप्रैल 1469 तलवंडी ननकाना में हुआ था जो वर्तमान पाकिस्तान के शेखूपुर जिले में है। उनके पिता कल्याण चंद मेहता और माता तृप्ता जी थे। उनकी बडी बहन बीबी नानकी जी थी। गुरु नानक देव जी का विवाह माता सुलक्खनी के साथ हुआ था। उनके दो पुत्र थे बाबा श्री चंद जी और बाबा लखमी दास जी। वे बचपन से ही आत्म चिंतन में निमग्न रहते थे। उनके जन्म के समय ही ज्योतिषियों ने बडी शुभ भविष्यवाणियाँ की थी। इनके जीवन में बचपन से ही कई ऐसी घटनाएँ घटी जिनसे यह स्पष्ट प्रतीत होने लगा कि वे दिव्य व्यक्तित्व के धनी थे।उनके धार्मिक ज्ञान के आगे गुरुओं ने भी हार मान ली थी। *श्री गुरु नानक साहिब जी बाल्यकाल में ही आम बालकों की तरह बालक नही थे। आप शुरू से ही संतोषी व विचारवान वृत्ति वाले थे। आप जब किसी जरूरतमंद की जरूरत पूरी करते तो अत्याधिक प्रसन्नता का अनुभव करते 1*। सन 1504 में वह बीबी नानकी जी के साथ सुल्तानपुर लोधी चले गए, जहाँ उन्होने कुछ समय नवाब दौलत खान लोधी के मोदीखाने में नौकरी *की।जहाँ कर के रूप में एकत्रित अनाज लोगों में बेचा जाता था। गुरु साहिब जी ने मोदीखाने का काम बहुत योग्यता से निभाते हुए सच्चा बोल, पूरा तोल व सत्य व्यवहार करने की जाँच मानवता को सिखाई। आप जरूरतमंदों की मदद यथाशक्ति अपने अधिकार क्षेत्र में रहकर करते थे 2*। वे अपनी कमाई का ज्यादातर हिस्सा गरीब व जरूरतमंद लोगों को दान कर दिया करते थे। इनमें अगाध श्रद्धा रखने वालों मे इनकी बहन नानकी व गाँव के शासक राय बुलार भी थे। *अपनी दिनचर्या में एक दिन आप अमृत समय (प्रातः काल) वेई नदी में स्नान करने गए। आप जी स्नान के समय परमात्मा से एक सुर हो गए व अनुभव किया कि आप सर्वशक्तिमान परमात्मा के सम्मुख है। जीवन के उद्धेश्य की पूर्ति के लिए अकाल पुरूख से आप जी को आर्शीवाद प्राप्त हुआ। तीन दिनों के बाद आप दोबारा वेई नदी से बाहर आए तो आप जी ने पहला उपदेश यही किया कि "न हम हिंदू न मुसलमान।।" इस महावाक्य ने लोगों में उत्तेजना पैदा की 3। फौजदार मलिक भागो ने अपने गृह में आप जी को एक महान भोज में शामिल होने के लिए आमंत्रित किया। गुरु साहिब जी ने हराम की कमाई वाले महान भोज के स्वादिष्ट पकवानों की अपेक्षा भाई लालो जी की हक हलाल की रूखी–सूखी रोटी खाने को प्राथमिकता दी। मलिक भागो को गुरु साहिब जी ने उपदेश किया कि तेरे भोज में गरीबों, श्रमिकों के लहू की झलक पड़ती है। जबकि भाई लालो जी की परिश्रम से कमाई रोटी में रहमत के दूध की झलक दिखती है। यह सुनकर मलिक भागो गुरु साहिब जी के चरणो में गिर पड़ा व अपनी भूल के लिए क्षमा मांगी। श्री गुरु नानक साहिब जी ने भाई लालो को सिक्ख धर्म का पहला प्रचारक नियुक्त किया।[4] बन्धु उस भोजन का आस्वादन बुरा है जो शरीर को हानि पहुँचाए तथा मन में कुविचार उत्पन्न करें [5]* उन्होंने चार बडी यात्राएं की। उन्होंने कुल 974 शब्दों की रचना की। प्रसिद्व हिंदी कवि मैथलीशरण गुप्त, मुहम्मद इकबाल व नजीर अकबरावादी भी नानक देव जी से प्रभावित थे। इन्होंने भी नानक देव जी पर कविताएँ लिखी हैं। उनका प्रसिद्व दोहा "हरि बिनु तेरो कौन सहाई काके मात–पिता सुत बनिता, को काहू को भाई" आज भी जन मानस के ह्रदय में अंकित है।

उपदेश व उनकी प्रासंगिकता– गुरु नानक देव जी ने अपने उपदेशों में तीन तथ्यों का विशेष उल्लेख किया है।

1. नाम जपना

2. कीर्तन करना
3. वांड चखना

इन तीनों उपदेशों की आज के युग में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका है।

नाम जपना– ईश्वर की उपस्थिति को महसूस करने का साधन है। व्यक्ति जिस भी धर्म या संप्रदाय को मानता है उसके माध्यम से वह अपने ईश्वर से एकाकार कर सकता है।*यदि कोई राजा से मिलना चाहे तो प्रथम उसे राजा के किसी कृपापात्र से मिलना पड़ता है। यदि कोई ईश्वर के दर्शन के लिए तरस रहा हो तो उसे पहले ऐसे व्यक्ति से मिलना चाहिए जो ईश्वर में लीन हो गया हो 6। आत्मोन्नति द्वारा ईश्वर तक पहुँचने के लिए तीन आवश्यक बातें हैं–*

(क) सतगुरु (ख) सत्संग (ग) सत्नाम [7]

जब व्यक्ति ईश्वर से एकाकार कर लेता है तो वह पूर्णतः ईश्वर में निहित हो जाता है। आज के प्रतिस्पर्धात्मक युग में व्यक्ति को अपना लक्ष्य हासिल करने में बडी कठिनाईयों का सामना करना पडता है। जो व्यक्ति आत्म– चिंतन में लीन होगा साथ ही उसका परम् पिता जो कि निराकार है उससे एकाकार होगा तो उसके जीवन में असीम शांति होगी। वह मानसिक भटकाव की स्थिति में नही रहेगा। उसके जीवन में स्पष्ट लक्षिता होगी वह अपने उद्देश्यों की प्राप्ति का मार्ग स्वतः बिना भटकाव के ढूंढ लेगा। आज का युग भौतिकता का युग है जिसमें व्यक्ति अधिक से अधिक आर्थिक समृद्वि को प्राप्त करने की होड में अपना शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य को गँवा बैठता है जिसे वह पुनः कैसे भी प्राप्त नही कर सकता है। जितना वह कमाता है उससे अधिकवह अपने खोए हुए स्वास्थ्य को पाने में खर्च कर बैठता है फिर भी निराशा ही हाथ लगती है। नानक देव जी बहुत दूरदर्शी थे इसलिए उन्हौंने कहा था कि कमाई करनी चाहिए किंतु उसका कुछ हिस्सा गरीब लोगों की मदद पर खर्च करना चाहिए यानि कि दान करना चाहिए।

नाम जपने का अर्थ बडा गूढ़ है। जब हम नाम जपने के लिए ध्यान लगाते हैं तो दिन– प्रतिदिन की सारी चिंताओं व समस्याओं को भूल जाते हैं। *सब कुछ उन्ही की इच्छा और उन्ही के नाम से होता है। नानक कहते हैं– यदि कोई स्वयं को महान् माने तो उसका वहीं अन्त हो जाता है, वह आगे नही बढ सकता 8।* वे अपने उपदेश में यही कहते थे कि ईश्वर एक है उसकी उपासना हिंदू और मुसलमान दोनों के लिए है। उन्होंने अपने उपदेश के माध्यम से विश्व बंधुत्व, प्रेम, सरलता, समानता व सहिष्णुता का संदेश दिया। सभी धर्मों की अच्छाईयों को अपनाने पर जोर दिया। इसीलिये उनको गुरु नानक शाह फकीर/हिंदू का गुरु और मुसलमान का पीर माना गया। भाई मरदाना एक मुसलमान थे वे भी नानक जी के परम् शिष्य थे। नानक जी ने नारी को भी बहुत सम्मान दिया। वे हिंदू समाज की मूर्ति पूजा व आडम्बरों के खिलाफ थे।

Guru Nanak went to far off places in hills where he had conversation with greet yogis sitting in meditation. He convinced them that the service of mankind could be accomplished by them only by bringing their teaching to the common folk, who at present, were without spiritual guides. This touched the yogis who were living in mountain caves, away from the concourse of mankind. Such was Guru Nanak’s reaction to the occult practices of Yoga all through 9. गृहस्थ होने के बावजूद 30 वर्ष तक वे घर छोड कर भ्रमण करते रहे। उन्होंने अफगानिस्तान, फारस और अरब देशों का भ्रमण कर अपने उपदेशों से लोगों की विचारधाराओं में आमूल चूल परिवर्तन किये। अपने भ्रमण काल में वे जन मानस में चेतना जगाते रहे। आपसी भाईचारा, विश्वबंधुत्व, सरलता, सहजता व प्रेम का पाठ लोगों को पढाते रहे। जिसके परिणामस्वरूप ही आज भी विश्वभर में असंख्य लोग उनके अनुयायी हैं व उनके बताये रास्ते पर चल रहे हैं। Guru Nanak’s mission was different. It was not to get away from society but to reform it. To abolish caste barriers. That was his intense desire in Guru Nanak’s Bhakti, the component of social reform was an integral part and that is why Sikhism ultimately emerged as a new dispensation with all the rigour of a new faith 10.

कीर्तन करना– काव्य के माध्यम से दिया गया संदेश मन मस्तिष्क पर बडा गहरा प्रभाव डालता है। शब्द चाहे समझ आये या न आये किंतु अंर्तमन में कहीं अमिट छाप छोड़ जाते हैं। संगीत भी समाज को जोडने का कार्य करता है। उन्हौने कुल 974 शब्दों (19 रागों) की रचना की। उनकी प्रमुख रचनाएँ जपुजी साहब, सिंध गोसरि, आसा दी वार, रखनी ओअंकार आदि हैं। नानक जी सूफी कवि थे। उनकी भाषा में फारसी, मुल्तानी, पंजाबी, सिंधी, खड़ी बोली व अरबी का सम्मिश्रण था। कीर्तन करने से मानसिक शांति मिलती है। संगत से जातिगत दुश्मनी व बैर–भाव समाप्त होता है। विश्वबंधुत्व व भाईचारा पनपता है। गुरु नानक जी ने अपने उपदेश में ये भी बताया कि सभी मनुष्य हिंदू धर्म के आडम्बरों के बिना ईश्वर तक सीधे पहुँच सकते हैं। कीर्तन के माध्यम से ईश्वर तक पहुँचना और अधिक सरल हो जाता है। व्यक्ति का दृष्टिकोण शांतिपूर्ण व सद्भावनायुक्त हो जाता है। गुरु नानक देव जी को भविष्य की संभावनाओं का पूर्वानुमान था अतः उन्होने समाज में कीर्तन के महत्व को भी अपने उपदेश के माध्यम से समझाया। ये भी समाज को संगठित करने की एक महत्वपूर्ण कडी है। कीर्तन के माध्यम से महिलाओं का सशक्तिकरण भी हुआ वे भी पुरूषों के साथ मिलकर कीर्तन में बढ़ चढ़ कर हिस्सा लेने लगीं।

वांड चखना– गुरु नानक देव जी ने इसके माध्यम से ये संदेश दिया कि अपनी कमाई का 1/10 हिस्सा जरूरतमंद लोगों को देना चाहिए अर्थात बांट कर खाओ। यह एक मानवता का संदेश है कि कोई अभावग्रसत ना रहे। गुरु नानक देव जी को इस बात का आभास था कि आने वाले समय में समाज में आर्थिक विषमता विकराल रूप धारण करेगी अतः उन्होंने अपने उपदेश के माध्यम से लोगों का हृदय परिवर्तन किया कि वे स्वेच्छा से अपनी कमाई समाज में मिल बाँट कर खायें। अगर हम इस उपदेश को बारीकी से समझें तो हमें ज्ञात होता है कि यह कार्य व्यक्तिगत स्तर पर किया गया लोक कल्याणकारी कार्य है। जो कि प्राचीन काल में राजाओं के द्वारा किया जाता था। कालांतर में उद्योगपतियों ने भी किया और वर्तमान समय में सरकार यह कार्य कॉरपॉरेट समूह द्वारा करवा रही है।

प्रासंगिकता–

- समाज की उन्नति धार्मिक, सामाजिक व आर्थिक सहिष्णुता पर निर्भर करती है।
- देश, काल व पात्र के अनुरूप अपना चिंतन समाज के हित में विकसित किया जाना चाहिए।
- धर्म, जाति, रंग, नस्ल व संप्रदाय के नाम पर समाज का बंटवारा व विघटन नहीं होना चाहिए।
- संगीत व कविता का सकारात्मक प्रभाव मनुष्य ही नही, हिंसक जीव– जन्तुओं और पेड–पौधों पर भी पडता है।
- भ्रमण या यात्राओं का भी जीवन में बडा महत्व होता है। एक–दूसरे की सभ्यता व संस्कृति के आदान–प्रदान में । उपदेश व ज्ञान के प्रचार प्रसार में।
- सौहार्दपूर्ण संबंधों के निर्माण में भी यात्राएं अहम् भूमिका निभाती हैं।
- कीर्तन भी समाज को संगठित करता है। अच्छे संस्कारों का बीजारोपण करता है।
- प्रकाश पर्व से पूर्व निकलने वाली प्रभात फेरी में महिलाएँ व बच्चे भी भाग लेते हैं जो इस बात का द्योतक हैं कि महिलाएँ भी सशक्त व सुदृढ बनी है। समाज में उन्हें उनका अहम् स्थान मिला है। साथ ही बच्चों की भागीदारी से उनमें अच्छे संस्कारों का बीजारोपण हो रहा है।
- गुरुद्वारों में महिलाओं व बच्चों को कीर्तन में निपुण बनाने के लिए निःशुल्क संगीत की शिक्षा दी जाती है।
- लंगर के माध्यम से अपनी कमाई का हिस्सा समाज को देना व बिना किसी जाति, नस्ल के भेदभाव के सबका एक साथ लंगर खाना सामाजिक एकता व समरसता का परिचायक है।
- गुरु नानक देव जी ने अपने विचारों से भारतीय समाज को अपनी संकीर्ण सोच से मुक्ति का रास्ता दिखाया। देशभर में बिखरी संतवाणी का संग्रह कर उसे लोगों तक पहुँचाया।
- गुरु नानक देव जी के अनुसार कोई भी व्यक्ति अपनी जाति का अहंकार न करे क्योंकि यही अहंकार अनेक विकारों को जन्म देता हैं।
- गुरु प्रधान युग में नानक देव जी ने गुरु की अपेक्षा “गुरुपद” की महत्ता पर बल दिया। इस प्रकार व्यक्ति की अपेक्षा “विचार”को अधिक महत्वपूर्ण बताया।

अंत में निष्कर्ष के रूप में यही कहा जा सकता है कि गुरु नानक देव जी ने जो उपदेश दिये वे आज के समय में शत प्रतिशत सटीक सिद्व होते हैं। उनके बताये रास्ते पर चलेंगें तो सम्पूर्ण समाज एक–दूसरे की कुशल क्षेम से संबद्व रहेगा। समाज संगठित होगा व आर्थिक समृद्वि की ओर अग्रसर होगा। भारत व पाकिस्तान दोनों देशों में काफी तनावपूर्ण संबंध होने के बावजूद भी दोनों देशों को गीत, गजल व संगीत ने काफी हद तक जोडा हुआ है।

हमारे प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी जी ने विश्वभर का भ्रमण करके आपसी संबंधो को सुधारने का अहम् कार्य किया है। आज सभी देश भारत का समर्थन कर रहे हैं व हर क्षेत्र में सहयोग कर रहे हैं। इससे सिद्व होता है कि यात्राएँ सौहार्द पूर्ण संबंध कायम करने में अहम् कडी होती हैं। अतः गुरु नानक देव जी का चिंतन आज के समाज में पूर्णतः सफल सिद्व होता है। स्वयं “नानक” शब्द आगे चलकर व्यक्ति बोधक न रहकर “विचार बोधक” हो गया–

“नानक नाम जहाज है, चढ़े सो उतरे पार”।

नानक देव जी असंख्य मनुष्यों को सत्य का मार्ग बताने, मानवता का पाठ पढ़ाने, अंधकार से प्रकाश की ओर और अधर्म से धर्म की ओर ले जाने वाले कर्मयोगी थे जिनका आध्यात्म जीवन का आध्यात्म था।

संदर्भ

1. सिक्ख धर्म अध्ययन– संपादक जसबीर सिंघ साबर (डा.), प्रकाशक– धर्म प्रचार कमेटी (शिरोमणी गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी), श्री अमृतसर, पृष्ठ 68
2. सिक्ख धर्म अध्ययन– संपादक जसबीर सिंघ साबर (डा.) प्रकाशक– धर्म प्रचार कमेटी (शिरोमणी गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी), श्री अमृतसर, पृष्ठ 70
3. सिक्ख धर्म अध्ययन– संपादक जसबीर सिंघ साबर (डा.) प्रकाशक– धर्म प्रचार कमेटी (शिरोमणी गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी), श्री अमृतसर, पृष्ठ 71
4. सिक्ख धर्म अध्ययन– संपादक जसबीर सिंघ साबर (डा.) प्रकाशक– धर्म प्रचार कमेटी (शिरोमणी गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी), श्री अमृतसर, पृष्ठ 71–72
5. गुरु नानक की वाणी, प्रकाशक – स्वामी ब्रह्मस्थानन्द, अध्यक्ष, रामकृष्ण मठ, रामकृष्ण आश्रम मार्ग, धन्तोली, नागपुर– 440012ए पृष्ठ 60
6. गुरु नानक की वाणी, प्रकाशक – स्वामी ब्रह्मस्थानन्द, अध्यक्ष, रामकृष्ण मठ, रामकृष्ण आश्रम मार्ग, धन्तोली, नागपुर– 440012 पृष्ठ 30
7. गुरु नानक की वाणी, प्रकाशक – स्वामी ब्रह्मस्थानन्द, अध्यक्ष, रामकृष्ण मठ, रामकृष्ण आश्रम मार्ग, धन्तोली, नागपुर– 440012, पृष्ठ 36
8. गुरु नानक की वाणी, प्रकाशक – स्वामी ब्रह्मस्थानन्द, अध्यक्ष, रामकृष्ण मठ, रामकृष्ण आश्रम मार्ग, धन्तोली, नागपुर– 440012ए पृष्ठ 45
9. Some aspect of Guru Nanak’s Mission by Dr. Balbir Singh, Dharam Prachar Committee (S.G.P.C.), Amritsar, Pg 26
10. The Ten Holy Gurus and their commandments by Pritam Singh safees. Delhi Sikh Gurudwara Management Committee, Sis-Ganj, Chandni Chowk, Delhi, Pg 9
11. भारत में संत परम्परा, डॉ. कृष्ण गोपाल शर्मा, पृष्ठ 9
12. www:hindi-kavita.com
13. www:deepawali.co.in

गुरु नानक के धार्मिक व दार्शनिक विचार

* डॉ. मीनू पारीक

* रिसर्च एसोसिएट, वनस्थली विद्यापीठ, हिन्दी विभाग

गुरुनानक तत्कालीन समाज के लिए प्रकाशपुंज रहे जिन्होने अपने दार्शनिक व धार्मिक विचारों से आमजनता के जीवन को प्रकाशित किया। उन्होने धार्मिक सिद्धांतों की स्थापना की और आडम्बरो का विरोध किया दर्शन के नवीन आयाम सभी के सम्मुख प्रस्तुत किये।

गुरुनानक के धार्मिक एवं दार्शनिक मूल्य मध्यकालीन सन्तों में गुरुनानक का नाम आदर और श्रद्धा के साथ लिया जाता है। वे सिक्ख–धर्म के प्रवर्तक थे इनका जन्म विक्रम सं. १५२६ या ईस्वीं सन् १४६६ के कार्तिक माह की पूर्णिमा को शेखपुरा जिले के तलवण्डी नामक ग्राम में खत्री वंशीय श्री कालुजी पटवारी के सुपुत्र के रूप में हुआ। रावी के तट पर करतारपुर स्थान पर ईस्वी सन् १५३८ में हुआ बचपन से ही उनकी विलक्षण प्रतिभा की उज्ज्वल किरणें प्रस्फुटित होने लगी थी जिन्हें देखने और समझने के बाद ही उनके माता–पिता तथा अन्य सगे संबंधियों ने उन्हे संकुचित पारिवारिक बन्धन से बांधने की कोशिश की परन्तु वे इसमें असफल रहे। लेकिन वेगवती धारा के सामने भला रेत की दीवार कब तक ठहर सकती है।

एक बार, जब गुरुनानक बच्चे थे तब उनके पिता ने उनको धान की फसल नष्ट करने वाली चिड़िया को खेत से भगाने के लिए आदेश दिया। किन्तु नानक ने तो चिड़ियों को भगाने के बदले उन्हे निमंत्रण देना प्रारम्भ कर दिया–

''चुगो चुगो री नन्हीं चिड़ियों,
हरि की चिड़िया हरि के खेत।''

जब नानक कुछ बड़े हुए तो पिता ने उन्हे खेती करने की राय दी, लेकिन उन्होने निम्नलिखित पद्य में उत्तर दिया–

''मनु हाली किरसाणी करणी, सर पवणी तनु खेतु।
नाम बीजु सतोयु सुहागा, रखु गरीबी बेसु।
भाउ करम करी जमसी से, घर भागा देखु।''

ऐसा उत्तर देकर नानक खेती करने को तैयार अवश्य हुए, पर सामान्य किसान के रूप में नहीं, बल्कि अध्यात्मवादी कृषक के रूप। फलतः उन्होनक कहा कि खेती तो बैसी होनी चाहिए, जिसमें हल संचालन करने वाला मन हो, कर्म खेती हो, शरीर खेत हो, सन्तोष रूपी फलक से खेत समतल बनाया जाए, ईश्वर नाम स्मरण रूपी बीज बोया जाए और कुकर्मों से भय रूपी पौधा उगे। फिर उस खेती से जिस शुभ धन की योजना नानक के पिता जी के संतोषजनक नहीं प्रतीत हुई।

तब उन्होने पुत्र को व्यापार करने की सलाह दी। इस बार भी पुत्र ने व्यापार का सही रूप उनके सामने रखा जैसा कि खेती का रूप उनके समझ रखा था–

''हाणु हदु करि आरजा, सचु नामु करिवथु
सुरति सोच करि भांडसाल तिसु बिच तिसनु रखु
वण जारिआ सिंद्र वणजु कारे लै लाहा मनि हसु।''

अतः पिता से कहा आप व्यापार को इस प्रकार समझ सकते हैं कि उसमें मनुष्य का लम्बा जीवन ही डुभान है, बेची जाने वाली वस्तु 'सत्य' है पवित्र प्रवृत्तियां भांडशाले का स्थान ग्रहण करती है, जिनमें सत्य नामक विकृय वस्तु रखी जा सकती है, और सत्त सभागम लाभ के रूप में होता है। ऐसा व्यापार केवल हमें ही क्या सभी को करना चाहिए। इस प्रकार नानक को जैसे–जैसे सांसारिक बन्धनों से निकलते गए और अपने को विश्वास के रूप में प्रकट किया।

गुरुनानक का युग अनाचार और अत्याचार का युग था। भारत मुसलमानों द्वारा शासित हो रहा था, जिनकी एकांगी और संकुचित नीति अपनी सीमा लांघ चुकी थी। तलवार के बल पर मंदिरों को ध्वस्त किया जा रहा था और हिन्दुओं को मुसलमान बनाया जा रहा था, हिन्दुओ की ऐसी शक्ति नहीं रह गई थी कि वे अपनी आवाज ऊँची कर सकते, जातिवाद वर्गभेद सर्वत्र व्याप्त था। इसी समय गुरुनानक का प्रादुर्भाव हुआ, और इसी में श्री कृष्ण के शब्द सार्थक सिद्ध होते है–

''यदा–यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानम धर्मस्य तदात्मान सृजाम्यहय।।
परित्राणाय साधनां, विनाशाय च दुवकृताम्।
धर्म संस्थापनार्थाय, संभवामि युगे–युगे।''

इसी प्रकार तुलसीदास ने कहा है–

''जब–जब होहिं धर्म की हानी, बाढ़हि अधम असुर अभिमानी।
तब–तब प्रभु धारि विविध शरीर, हरहिं कृपानिधि सज्जन पीरा।''

धार्मिक तथा सामाजिक विषमता देखकर गुरुनानक का मन बहुत ही दुःखित हुआ और और उन्होंने समता का बीज बोना शुरु किया। उन्होने घोषित किया–

''एको धरम दृढ़े सचुकोई, गुरमति पूरा जुगि–जुगि सोई।
अनच्छ रासा एवं लिवतार, उहु गुरमुखि पावै अलख अपार।''

अर्थात् धर्म एक है और वह है सत्य को अपनाता, उसके अनुसार आचरण करना। यह शिक्षा गुरुओं के द्वारा युग–युग से प्रसारित होती आ रही है। जो इस शिक्षा को गृहण कर पाते है, वही उस मध्य तत्व को जानते हैं जो अलख अपार, निराकार आदि विशेषणों से जागरुकता पैदा की और धर्मा–धता को नष्ट करने के विचार से उसकी अत्यन्त भर्त्सना की।

नानक ने मुसलमानों से कहा–

''कूड़ा झगडा हाजियों मन ते रखाह न मूल,इक्को पाक खुदाह है हरि केते राम रसूल।''

हे मक्का जाने वाले लोगों! ऐसा मन में धारण करो कि परमात्मा एक ही है। जो पवित्र है, राम और रसूल में कोई अन्तर नहीं–

हिन्दुओं के धार्मिक आचारों को खंडित करते हुए नानक ने हरिद्वार में उन लोगों से कहा कि जब तुम यहां से जल अर्पित कर उस सूर्य तक पहुंचाने का सोचते हो, तो क्या मैं ऐसा नहीं सोच सकता कि यहां से अर्पित किया गया जब पंजाब में मेरे गेंहू के खेत तक पहुंच जाए? ऐसा उन्होने तब कहा जबकि वे अन्य लोगों को पूर्व की ओर जल अर्पित करते हुए देखकर स्वयं पश्चिम दिशा की ओर जल अर्पित करने लग गए थे और लोगों ने उनसे पूछा था कि ऐसा क्यों कर रहे हो।

इसी प्रकार गुरुनानक ने मूर्ति पूजन और चन्दन आदि का विरोध किया और हिन्दुत्व–मुसलमानों को एकता के बन्धन में लाने के लिए कहा – 'हिन्दू–मुसलमान एक साई दी।

एक ही स्वामी था ईश्वर से बने हुए हिन्दू–मुसलमान दो भाग है। इनमें मौलिक अन्तर नहीं। मूलतः धार्मिक रूप में सभी मनुष्य समान है, क्योंकि परमात्मा ने सबको बराबर बनाया है। किन्तु मनुष्यों ने स्वयं विभिन्न रीति–रिवाज, जाति–पांति को जन्म दिया है। किसी ने उसी परमात्मा को राम कहा है तो किसी ने रसूल या रहीम कहा है। –

''इको इक खुदाई है होर शरीक न साथ
हिन्दू–मुसलमान हुई दरगुह लौन सजाई
मजहब हुई मनसुख है वई मुहम्मद लोई।
बारी आयो आपणी उठी चले रोई।
इको पाक खुदाई है होर केते राम रसूला।''

धार्मिक एकता लाने के साथ–साथ गुरुनानक ने जातिगत या वंशगत विषमता में मिटाने की कोशिश की।

''सबको ऊँचा आखीए
नीच न दीसे कोई।''

अर्थात् मुझे तो सभी ऊँचे ही नजर आते हैं, कोई भी नीचा नहीं जान पड़ता। सबसे ऊँचा समझे जाने वाले, ब्राह्मण की परिभाषा करते हुए नानक ने कहा –

''सो ब्राह्मणु जो ब्रह्म विचारै, आपि तरै सगले कुल तारै।''

परमात्मा के समक्ष जाति–पांति नहीं पूछी जाती, बल्कि कभी देखा जाता है। नानक ने लंगर प्रथा चलाई जो आज भी समरसता के प्रतीक है। गुरुनानक धार्मिक सिद्धान्त को जाति–पांति से अधिक महत्व देते है।

अल्प अहार खुलपसी निद्रा, दया छमा तन प्रीति।
सील सन्तोष सदा, निरवाहबो, हैवो त्रिगुण अतीत।।
काम क्रोध हंकार लोभ हठ, मोह न मन सिऊ लयावै।
तब ही आतम नतको दरसै, परम पुरुष कह पावै।।

अपने को विकसित करने के लिए, काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार का त्याग करना चाहिए तथा दया, शील, क्षमा, सन्तोष, अहिंसा आदि को अपनाना चाहिए। इतना ही नहीं बल्कि आहार और निद्रा को भी अपने नियन्त्रण में रखना चाहिए, अन्यथा इससे साधना में बाधा पहुँच सकती है।

धर्म की जड़ को सुदृढ़ बनाने के लिए गुरुनानक ने मात्र सामाजिक नियमों में ही सुधार नहीं किया, बल्कि आर्थिक सिद्धान्तों को भी धर्म की अनुकूल बनाने का प्रयास किया, उनका विश्वास था कि मेहनत से कमाई सूखी रोटी ज्यादा अच्छी होती है, बजाय अच्छे–अच्छे स्वादिष्ट पकवानों से जो दूसरों से ठगकर अर्थात् दूसरों का हिस्सा मारकर अर्जित किए जाते है। दार्शनिक सिद्धान्तों के सम्बन्ध में नानक उपनिषद् से प्रभावित दिखाई देते हैं। उन्होंने परमतत्व व परम सत्ता के संबंध में कहा हैं।

''एकम एकंकारू निराला।
अमरू अजोदिन जाति न जाता।
अगम अगोचर रूप न रेखिआ।
खोजत–खोजत घटि–घटि देखिआ।''

वह एक, ओंकार निराला अमर अजोनि अजाति, अगम अगोचर तथा बिना किसी रूप रेखा के है। बट घर–घर मैं उसी प्रकार निवास करता है, जैसे फूलों के सुगन्ध –''पुहुप भघि जिड़ में बासु बसत है।'' संसार की वस्तुओं में उस सत्ता को वैसा ही सम्बन्ध है जैसा सागर और उसके अन्दर रहने वाली बूंदों का सागर में बूंदे और बूंदों में सागर पाया जाता है – ''सागर माहि'' बूंद–बूंद महि सागर। उसी प्रकार परम सत्ता सभी वस्तुओं में व्याप्त है और सभी वस्तुएँ उसमें समाहित होती है।

गुरुनानक अद्वेत तथा निर्गुण ब्रह्म के उपासक थे। इसीलिए उन्होंने बाह्यचारों में लिप्त भक्तों से कहा है –

''साधो यह तन मिथ्या जानो।
या भीतर–जो राम बसत है,
साचो ताहिं पहचानो।
यह जग है संपति सुपने की,
देख कहा ऐड़ानों।
संग तहारे कछू न चाले,
ताहि कहा लपटाये।
अस्तुति निन्द्रा दोऊ पारिहारि,
हरि की रति उर आनो।
जन जानक–सब ही में पूरन
एक पुरूष तिन पायो।।

हे साधक, तुम इस शरीर का झूण समझों, यह हमेशा रहने वाला नहीं है, बल्कि इसके भीतर–जो राम बसता है उसे सच्चा समझों और उसे पहचानने की कोशिश करो। यह संसार जिसे देखकर तुम इतरा रहे हो। वह स्वप्न की तरह है, अर्थात् मिथ्या भुलावा है। सांसारिक वस्तुएँ जिनके लोभ–मोह में तुम लिपटाए हुए हो, उनमें से कोई भी तुम्हारे साथ जाने वाली नहीं है। अतः तुम निन्दा व स्तुति से ऊपर उठकर इस हरि से प्रेम करो, जो पूर्ण और परम सुख है तुम इसे जान सकते हो। जब तुम इस ईश्वर में एकाकार करके देखोगे – आत्मा परमात्मा एको करै।

गुरुनानक के दार्शनिक सिद्धान्त में ईश्वर के प्रति दृष्टिकोण को स्पष्ट किया गया है। नानक ने ईश्वर के सगुण व निर्गुण दोनों रूपों को स्वीकार किया है।

उन्होंने ईश्वर को एक बताया, पूर्ण बताया देश काल के ऊपर बताया जो सर्जक है, स्वयं स्थापित है, अज्ञेय व शाश्वत। पहले भी आज भी है।

गुरुनानक कट्टर एकेश्वरवादी थे। अवतारवाद से असहमत और मूर्तिपूजा के घोर विरोधी थे। उन्होंने सगुण रूप में भी एकात्मकता रूप को ही दर्शाया है।

सगुण रूप में गुरुनानक के अनुसार ईश्वर सृष्टि का सृजन करने के लिए अकाल मूर्ति का रूप धारण करता है।

वह चेतन स्वरूप, चित, आनन्द है। सब जीवों का प्राण संचार है। प्रकृति के सभी रूप व अंग, पवन, जल, अग्नि, अन्न, सूर्य, चन्द्रमा, वनस्पति आदि इसकी कृपा स्वरूप पर आधारित है।

गुरुनानक के अनुसार गुरु आध्यात्मिक व संगठनात्मक होता है। गुरुवाणी में गुरु की महिमा का बखान किया गया है। जिस व्यक्ति को गुरु का सामीप्य प्राप्त नहीं है उसके जीवन का धिक्कार है। नानक ने मुक्ति को ही दर्शन का मूल आधार बताया है।

'तोही मोही मोही तोही अन्तर कैसा,
कणिक कटिक जल तरंग जैसा।'

नानक के आचरण की पवित्रता, साधु संगति और कीर्तन पर बल दिया है। साथ ही साधु सिमरण सेवा और श्रम को महत्व दिया है।

नानक का में मानववाद् का महत्वपूर्ण स्थान है। इसके निम्न बिन्दु हैं, जो नानक के दर्शन को स्पष्ट करते हैं –

- ईश्वर सबका पिता है इसकी कृपा से सृष्टि अस्तित्व में है।
- जीवात्मा परमात्मा का अंश है और मानव जीवन का आधार है।
- ईश्वर की आदेशानुसार ही सभी धर्मभाषाएँ एवं ग्रन्थ प्रकाशन हुए है।
- नानक ने सभी के लिए किस भेदभाव के आचार–संहिता के नियम स्थापित किये है उन्हें धार्मिक महत्व भी प्रदान किया गया हैं –
- दुनिया एक खेल तमाशा है जिसमें राजा एक–एक सभी समान है और ईश्वर का न्याय सभी के लिए समान है।
- विश्व का सर्वोत्तम दर्शन मानव दर्शन है। वाद मानवतावाद है। गृहस्थ में योग का पालन करना चाहिए।
- सभी धर्म वंदनीय है उसकी औपचारिक व खोखले रिवाज व्यर्थ है।
- स्त्री–पुरूष का समान सामाजिक महत्व है। सभी मतावलम्बी दैनिक कार्य करते हुए प्रभु की सेवा करे।
- कमाई सत कर्म पर आधारित होनी चाहिए।
- सम्पूर्ण जगत में सम्पति पर सभी का समान अधिकार है। सम्पति का असमान वितरण का दोषी प्रभु नहीं मानव स्वयं है।
- सभी धर्मों में श्रेष्ठ भक्ति नाम की भक्ति है।

अतः मुक्ति की अवस्था वैसी ही है जिसमें आत्मा व परमात्मा एक हो जाते है। ऐसी अवस्था की प्राप्ति तभी हो सकती है। जब व्यक्ति सद्गुरु द्वारा प्रकाशित मार्ग पर चले।

इस प्रकार गुरुनानक ने अपने को समाज के दृष्टिकोण से ऊपर उठाने का सफल प्रयास किया है। जिसके कारण आज भी वह सभी के हृदय में वंदनीय है। उन्होने मानव प्रकृति व प्रवृत्ति को विषमताओं से ऊपर उठाकर गुरु चरणों में समर्पित करने की बात की है। कर्म और विश्वास ही सर्वोपरि है।

संदर्भ

1. गुरुनानक : व्यक्तित्व एवं कृतित्व – महेन्द्र सिंह प्रभाकर प्रकाशन ज्ञानपीठ प्राइवेट लिमिटेड–1969
2. गुरुनानक जीवन और दर्शन – सम्पादक नारायण भक्त
3. जीवन कथा गुरुनानक देव – प्रो. करतार सिंह
4. गुरुनानक की बोली – प्रो. सीताराम कहरि
5. गुरुनानक : चिंतन और कला – डॉ. तारकनाथ सिंह

गुरु नानक और संत सुन्दरदास के काव्य में समाजदर्शन के तत्व : एक अनुशीलन

*डॉ. कृष्णा मीणा

* गार्गी कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय

शोध सारांश

समाजदर्शन मानवीय मूल्यों, आचार–संहिताओं तथा सामाजिक आदर्शों की रचना करता है जिससे व्यक्ति जीवन को समग्रता में पा सके। समाजदर्शन समाज के उन मौलिक तत्वों और नीतियों को समझने का प्रयास करता है, जो सामाजिक ऐक्य, सामाजिक प्रगति और सामाजिक विघटन को प्रभावित करते हैं। काव्य और साहित्य इन्हीं तत्वों को कलात्मक ढंग से उभारते हैं। गुरु नानक,और संत सुन्दरदास के साहित्य के अनुशीलन के पश्चात् यह प्रमाणित होता है कि संतों की रचनाओं में समाजदर्शन के प्रायः सभी तत्व विद्यमान है। भक्ति, दर्शन और समाजदर्शन के विभिन्न पक्षों को संतों ने अपने काव्य में स्थान देकर जनमानस में अपनी अमिट छाप छोड़ी।

संकेताक्षरः गुरु नानक, संत सुन्दरदास, समाजदर्शन, आदर्श समाज, वर्ण–व्यवस्था।

समाजदर्शन मानव–संबंधों की भौतिक प्रकृति और सामाजिक संबंधों का अध्ययन करता है। समाजदर्शन मानव–जीवन के सामाजिक पहलुओं के महत्व की व्याख्या करने का प्रयास करता है।[1] भक्तिकाव्य के संदर्भ में जिस समाजदर्शन का उल्लेख किया जाता है, उसकी प्रक्रिया संश्लिष्ट है। भारतीय समाजदर्शन में मुख्य रूप से धर्मों का विभाजन तथा वर्ण–व्यवस्था आती हैं। इन पर आधारित मान्यताएँ भी आ जाती हैं।[2] संत कवियों ने सभी युगीन चुनौतियों से प्रभावित होकर अपनी रचनाओं में समाजदर्शन के विभिन्न पहलुओं का चित्रण किया।

परशुराम चतुर्वेदी का कथन है कि ''संतों की आध्यात्मिक देन चाहे कुछ भी कही जा सके, उनकी सामाजिक देन भी कम नहीं है और उनकी रचनाओं पर इस धारणा के साथ विचार करने पर ही हमें जान पड़ेगा कि उनका महत्व विश्व–कल्याण की दृष्टि से भी बहुत बड़ा कहा जा सकता है।''[3] संत कवियों द्वारा प्रस्तुत सामाजिक आदर्शों को पाकर निष्प्राण होते हुए मध्ययुगीन भारतीय समाज में नवज्योति का संचार हुआ।

संत काव्य–परंपरा में नानक देव, कबीर व दादूदयाल के साथ संत सुन्दरदास का नाम महत्वपूर्ण है। पंजाब के सिख आंदोलन का आरंभ गुरु नानक की शिक्षाओं से हुआ। गुरु–परंपरा आधारित यह धर्म मुगल शासनकाल में और अधिक विकसित हुआ। अकबर सिख गुरुओं से काफी प्रभावित हुआ। गुरु संत दादूदयाल ने राजस्थान में दादू–पंथ की स्थापना करते हुए असंकीर्ण–मार्ग का उपदेश दिया। संत सुन्दरदास दादूपंथी संत थे जिन्होंने संत–मत को एक काव्यशास्त्र में पारंगत कवि की शैली में वर्णन किया।[4]

निर्गुण संत काव्य–धारा ने मध्यकाल में एक आदर्श समाज के स्वरूप को प्रस्तुत करने का सफल प्रयास किया। निर्गुण संत कवियों ने अपनी वाणियों के माध्यम से ईश्वर–भक्ति का आश्रय लेकर जनमानस को जागृत करने की साधना की।[5] आज भी इन संतों की वाणियों का समाज में प्रभाव है। गुरु नानक देव की वाणी भी पंजाब में विशेष रूप से पूजित है। संत सुन्दरदास की अनेक साखियाँ भी अत्यधिक लोकप्रिय हैं।

गुरु नानक देव और संत सुन्दरदास का समाज–दर्शन एक ऐसा उन्मुक्त दोष रहित आदर्श समाज की मान्यता को स्वीकार करता है, जहाँ ऊँच–नीच, जाति–पाँति, छुआछूत, अस्पृश्यता आदि का कहीं स्थान न हो।[6] गुरुद्वारों में नानक–वाणी का निरन्तर पाठ इस लोकप्रियता का प्रमाण है। श्री राघवदास कृत 'भक्तमाल' में गुरु नानक देव और सुन्दरदास का वर्णन सूरज और दिनकर की समता करते हुए किया गया है।

'नानक सूरज रूप भूप सारे परकासे।
मधवादास कबीर असर सूसर वरषासे।।
दादू चंदसरुप, अमी करि सब को पोषै।
दादू दीनदयाल के चेले दोय पचास।
केई उडगण केई इन्दु हैं, दिनकर सुन्दरदास।।'[7]

गुरु नानक देव और सुन्दरदास ने आदर्श समाज के निर्माण के लिए समाज की प्रथम इकाई व्यक्ति का चरित्रवान, उच्चादर्शवान, सर्वगुण सम्पन्न, परोपकारी होना आवश्यक मानते हैं। गुरु नानक देव ने अत्यंत रोचक शैली में प्रदिपादित किया है, *'जपुजी'* में वे कहते हैं–

'ता कीआ गलीआ कथीआ न जाहि। जो को कहै पिछै पछुताइ।'[8]

आध्यात्मिक साधना के लिए साधु–संगति की महत्ता निर्विवाद है। सत्संगति विवेक की जननी होती है जिससे मोक्ष की सिद्धि होती है। दोनों संतों ने सत्संगति का गौरव गान किया है। गुरु नानक देव कहते हैं कि मनुष्य चाहे लाखों प्रयत्न न करे, पर सत्संगति के बिना उसको दुःख एवं संताप से मुक्ति नहीं होती–

'लख सिआणप जे करी, लख सिउ प्रीति मिलापु।
बिनु संगति साध न वापीआ बिनु नावै दूख संतापु।।'[9]

संत सुन्दरदास ने संतों को भगवान के समतुल्य माना है–

'सुन्दर हरि जन एक हैं भिन्न भाव कछु नांहि।
संतनि माहें हरि बसै संत बसै हरि मांहि।।' [10]

दोनों संत एकेश्वरवाद के प्रबल समर्थक थे। उनकी दृष्टि में मानवता ही एक मात्र जाति है, सत्य ही एक मात्र धर्म है, सर्वव्यापी परमात्मा ही एक मात्र ईश्वर है। गुरु नानक की अनेक रचनाओं में ईश्वर और अल्लाह में अभेद को इंगित किया गया है। गुरु नानक ने युग की आवश्यकतानुसार हिन्दू और मुसलमान दोनों को एकेश्वरवाद का संदेश सुनायां–

'ओं सतिनामु करता पुरखु निरभउ निरवैरू।
अकाल मूरति, अजूनी सैम गुर प्रसादि।।' [11]

संत सुन्दरदास कहते है कि कहीं भी द्वैत नहीं है। वे कहते है कि वह एक परमात्मा ही सब में व्याप्त है–

'सुन्दर दैत कछु मति जानहुं एकई ब्यापक बेद बतावै।'[12]

प्राचीनकाल से ही ब्रह्म को सत्य और जगत को मिथ्या माना गया है। इसी आधार को भक्तिकालीन संतों ने स्वीकारा है। गुरु नानक के अनुसार, यद्यपि संसार में बाह्य साज–सज्जा है, परन्तु यह नश्वर है। जिस प्रकार कमल जल से निर्लिप्त रहता है, उसी प्रकार जीव को संसार से विमुख रहना चाहिए।

'जल महि उपजै जल ते दूरि
जल नहि जोति रहिआ भरपूरि।'[13]

संत सुन्दरदास जी कहते हैं कि अविवेकी पुरुष समस्त जगत में विराजमान ब्रह्म को न देखकर स्थूल दृष्टि से भासित जगत को ही देखता रहता है।

'ऐसौ ही अज्ञान कोऊ आइ कै प्रगट भयौ,
दिब्य दष्टि दुरि गई देषे चर्म दृष्टि कौं।
जैसैं एक आरसी सदाई हाथ मांहि रहै,
सामै हो न देषे फेरि फेरि देषे पृष्टि कौं।
जैसें एक ब्योम पुनि बादर सों छाइ रहयौ,
ब्योम नहिं देषत देषत बहु बृष्टि कौं।
तैसें एक ब्रह्मई बिराजमान सुन्दर है,
ब्रह्म कौं न देषे कोऊ देष सब सृष्टि कौं।।'[14]

हजारीप्रसाद द्विवेदी के अनुसार ''सादगी में जीवन व्यतीत करने वाले संतों का ऐसा क्रान्तिकारी वर्ग था, जिसने सभी अत्याचारों के विरोध में अपना झण्डा ऊँचा किया। इन संतों में अधिकतर निम्न जाति के लोग थे जो समाज और राज्य से तिरस्कृत थे।''[15] संत कवियों ने जाति–पाँति के भेदभाव को मिटाने का प्रयत्न किया। उन्होंने इस बंधन को मिटा कर समाज को एकता के सूत्र में बाँधने का भरसक प्रयत्न किया। साधारण जनता में जाति, धर्म तथा आर्थिक असमानता के कारण वैचारिक विषमता व्याप्त थी, जिसे संतों ने दूर करने की कोशिश किया।

सभी संतों ने जाति–प्रथा का घोर खंडन किया। गुरु नानक देव और सुन्दरदास ने भी धार्मिक भेद–भाव को मिटाकर सब जातियों में भावनात्मक एकता लाने का प्रयास किया। दोनों संतों ने सभी धर्मों की कुरीतियों को दूर कर शुद्ध मानवतावादी धर्म की स्थापना का भरसक प्रयास किया, जहाँ किसी प्रकार का भेदभाव न हो। नानक और सुन्दरदास की दृष्टि में मानवता ही एक मात्र जाति है, सत्य ही एक मात्र धर्म है, सर्वव्यापी परमात्मा ही एक मात्र ईश्वर है। संत सुन्दरदास के अनुसार जन्म लेने वाला मनुष्य विशेष जातियों के चिन्ह लेकर पैदा नहीं होता। हिन्दू–मुस्लिम का भेद बुद्धि–भ्रम से महसूस होता है, इसीलिए ऐसे भेदक स्वभाव को हमें त्याग देना चाहिए–

'चिन्ह बिना सब कोई आये इहां भये दोई पंथ चलाये।
हिन्दू तुरक उठयो यह भ्रमा। हम दोऊ का छाड्या धर्मा।।'[16]

'हिन्दू की हदि छाड़ि कै तजी तुरक की राह।
सुन्दर सहजै चीन्हियां एकै राम अलाह।।'[17]

संत कवियों ने तत्कालीन अव्यवस्थित और विश्रृंखल समाज को संगठित रूप देने का भरसक प्रयास किया। नानक और सुन्दरदास ने समाज में समता की भावना पर बल दिया। इन संतों ने अपने उपदेशों द्वारा मानवता की भावना जागृत करके जनता की विचार धारा को एक नवीन दिशा में मोड़ने का प्रयत्न किया।

नानक : 'खत्री ब्राह्मन सूद्र बैस की, जाति पूछि नहिं देता दाता।'

मुगल–काल में जाति–व्यवस्था ने बड़ा विकराल आकार ले लिया। सल्तनत–काल से ही हिन्दू समाज के ढाँचे में कोई परिवर्तन नहीं आया। सामाजिक जीवन में इस्लाम द्वारा पैदा की गयी चुनौती के बावजूद जाति–प्रथा का वर्चस्व बना रहा। संतों द्वारा जाति–प्रथा की आलोचना रोजमर्रा के जीवन नहीं छूती थी।[18] गुरु नानक ने जिसका सजीव चित्रण अपनी वाणी में किया है– 'जाणहु जोति न पूछहु जाती आगै जाति न हे।'

(अर्थात् मनुष्य–मात्र में स्थित परमात्मा की ज्योति ही को समझने की चेष्टा करनी चाहिए, ना कि जाति–पांति के चक्कर में नहीं पड़ना चाहिए)।[19]

इसके विपरीत सुन्दरदास अपने पद में वे 'अंतिज' और 'मलेछ' शब्दों का भी प्रयोग करते हैं। उनके अनुसार भगवान सभी वर्ण–व्यवस्था के वर्णों के लोगों को स्नेह करते हैं।

'सुन्दर भजन सबै करहु नारायण निरपेछ।
प्रीति परम गुरु लेत हैं अंतिज हो कि मलेछ।।'[20]

'हौं अति उत्तम जाति बड़ौ कुल हौं अति नीच लिया कुल हांनी।'[21]

'ज्यौं द्विज कोउक छाडि महातम शूद्र भयौ करि आपु कौं मांन्यौं।'[22]

निर्गुण संतों ने अपनी वाणियों के माध्यम से वर्ण–व्यवस्था का कड़ा विरोध किया।[23] संत कवियों ने समस्त जाति–पाँति संबंधी भेदभावों का खंडन किया है। उस युग के निर्गुण–सगुण संतों की यह सामान्य उक्ति बनी हुयी थी–

'जाति, पांति पूछै नहिं कोई। हरि को भजै सो हरि का होई।।' [24]

किसी भी जाति या वर्ण विशेष में जन्म लेने से ही कोई ईश्वर प्राप्ति का पात्र अथवा अपात्र नहीं हो जाता। गुरु नानक देव भी जाति पूछना व्यर्थ बताते हैं– 'जाणहू जोति न पूछहु जाति आगै जाति न हे।।'[25]

निर्गुण संत परंपरा में संत सुन्दरदास एक मात्र ऐसे संत हुए हैं जिन्होंने ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र को परिभाषित करते हुए वर्ण–व्यवस्था का समर्थन किया है। सुन्दरदास जी ने उस समय की वर्ण–व्यवस्था का चित्रण इस पद में किया है–

'सूत्र गरे मंहि मेलि भयौ द्विज ब्राह्मण ह्वै करि ब्रह्म न जांन्यौं।
क्षत्रिय ह्वै करि क्षत्र धर्यौ सिर है गय पैदल सौं मन मांन्यौ।।
वैश्य भयौ वपु की वय देषत झूंठ प्रपंच वनिज्यहि ठांन्यौं।
शूद्र भयौ मिलि शूद्र शरीरहि सुन्दर आपु नहीं पहिचांन्यौ।।'[26]

स्पष्ट है संत सुन्दरदास जी ने प्रतीकों के माध्यम से वर्ण–व्यवस्था को नया जामा पहनाया जो गुरु नानक देव से थोड़ा हटकर था। वर्ण–व्यवस्था का यह समर्थन किसी सीमा तक इनकी सवर्ण–शास्त्रीय मानसिकता का भी परिणाम है, जो इनकी अलग पहचान बनाता है।[27]

'अंत्यज देह स्थूल रक्त मल मूत्र रहे भरि।
अस्थि मांस अरू मेद चर्म आच्छादित ऊपरि।।
शूद्र सु लिंग शरीर बासना बहु विधि जामहिं।
वैश्य सु कारण देह सकल ब्यापार सु तांमहि।।
यह क्षंत्री साक्षी आतमा तुरिय चढ़े पहिचानिये।
तुरिया अतीत ब्राह्मण उही सुन्दर ब्रह्म बषानिये।।'[28]

संतों ने स्पष्ट शब्दों में धार्मिक भेदभाव को मिटाकर सब जातियों में भावानात्मक एकता लाने का प्रयास किया। इन्होंने आदर्श समाज की स्थापना के लिए प्रचलित पारस्परिक विरोध के मूल कारण को दूर करने का प्रयास किया। संतों ने अपनी वाणी के द्वारा हिन्दू–मुस्लिम साम्य भावना का प्रसार करके एक सामाजिक आदर्श प्रस्तुत किया जो आज भी मानव–समाज के लिए उपादेय एवं अनुकरणीय है।

संत कवियों ने हिन्दू और मुसलमान, बौद्ध और जैन, योगी और सन्यासी सभी के परंपरा–निरर्थक कर्मकांड, धर्मशास्त्र, आचार–विचारों की भर्त्सना की है। निर्गुण कवियों ने उस काल में प्रचलित बाह्याचारों का खंडन उग्र भाषा में किया, परन्तु खंडन के साथ–साथ उन आडंबरों एवं रूढ़ियों का वास्तविक अर्थ भी समझाया।

गुरु नानकदेव ने भी दोनों धर्मों के झूठे और ढ़ोंगी अनुयायियों को झूठा सिद्ध किया है। उनके मतानुसार भूखा मुल्ला मस्जिद को ही अपना घर बना लेता है। दिन–रात मस्जिद में पड़ा रहता है।[29] गुरु नानकदेव समाज में व्याप्त आडंबरयुक्त एवं पाखंडपूर्ण बाह्याचारों का विरोध बहुत प्रबल स्वरों में करते हैं– 'बहुत से ऐसे हैं जो विभूति और भस्म लगाते हैं परन्तु यह उनका बाह्य–वेश मात्र ही है। उनके अन्तःकरण में अहंकार के साथ ही क्रोध रूपी चंडाल का निवास है। तीर्थ–पर्यटन, वनों में रहकर व्रत नियम, प्राणायाम की हठ–क्रियाएँ–ये सब क्रियाएँ बिना परमात्मा के प्रेम के पाखंडपूर्ण हैं।'

गुरु नानकदेव आगे कहते हैं–'माला, तिलक या कंठी धारण करना वैराग्य का लक्षण नहीं है, तुम अंगों में विभूति मल कर पाखंड करते हो। इन पाखंडों में भगवान की प्राप्ति नहीं हो सकती, ऐसे व्यक्तियों का बाह्य खोटे दिखावे ही बर्बाद कर देते हैं'– 'पाखण्डि प्रेमु न पाईए, खोटा पापु खुआरू।'[30]

तीर्थ–यात्रा भी तत्कालीन समाज में व्याप्त बाह्याचारों में एक थी। तीर्थों में अनेक आडंबरों का बोलबाला था। सभी संत कवियों ने तीर्थ यात्रा को व्यर्थ माना है और गृहस्थी मे रहकर ही ईश्वर की उपासना करने का उपदेश दिया है।[31] गुरु नानक देव के अनुसार, जो तीर्थाटन करता है उसे भले ही तिल भर पुण्य मिल जाए किन्तु प्रभु नाम का कण भी मिल जाए तो वह इससे कहीं ज्यादा है।[32]

सभी संतों ने अपनी रचनाओं के द्वारा जीव–हत्या का विरोध किया है। गुरु नानक देव कहते हैं कि अपने स्वाद के लिए जीवों का नाश करता है।

'लै फरमान दिवान का, खसि प्यादे जे खाहिं,
बाँही बद्धे मारियहि, मारें दे कुरलाहिं।'[33]

सुन्दरदास जी ने भी अपनी रचनाओं में माँसाहारी भोजन–प्रवृति का विरोध किया। उन्होनें जीव–हत्या करने वालों को गुनहगार मानते हुए उनको भगवान का डर दिखाया है।

'मुरगी कौं मोसता है बकरी कौं रोसता है
गरीबौं कौं षोसता है बेमिहर गाइ का।।'[34]
'निषिध छुड़ावण कारनै, भय उपजायौ आइ।
मद्य मांस पर त्रिय गवन, इनतें नरकहिं जाइ।।'[35]

संत–साहित्य में नारी के दो रूपों को चित्रित किया है, एक रूप सती और पतिव्रता का तो दूसरा कामिनी और कुलटा का। एक ओर संत कवियों ने नारी के भोगमय रूप की निंदा की है, वहीं दूसरी ओर उसके कल्याणकारी रूप की प्रशंसा भी की है। संत कबीर ने भी नारी के सत् रूप की बड़ी प्रशंसा की है। सिक्ख गुरुओं ने भारतीय समाज में नारी के गौरव को प्रतिष्ठित करने की चेष्टा की। गुरु नानक देव कहते हैं कि ''नारी से ही जन्म होता है, वही पालन–पोषण करती है, फिर उसी से विवाह–संबंध स्थापित होता है, नारी से ही मैत्री होती है और उसी से सृष्टि–क्रम चलता है। नारी के बिना तो किसी का अस्तित्व ही सम्भव नहीं है।''

'भँडि जँमीऐ भँडि निभीऐ, भँडि मँगणु बीआहु
भँडहु होवे दोसती भडँहु चले राहु।
भँडु मुआ भँड मालीऐ, भँडी होवे बंधानु।
सो किउ मँदा आखीऐ, जितु जँमहि राजानु।'[36]

संत सुन्दरदास ने नारी के सती और पतिव्रता के आदर्श रूप को प्रस्तुत किया। पतिव्रता नारी को उसके धर्म की प्रेरणा देते हुए सुन्दरदास जी उसे पति के प्रति प्रेम, नियम, कुशलता और आसक्ति को पूर्ण करने की सलाह देते हैं।

'सुन्दर और कछू नहीं एक बिना भगंवत।
तासौ पतिब्रत राषिये टेरि कहैं सब संत।।'[37]

गुरु नानक और सुन्दरदास के साहित्य के अनुशीलन के पश्चात् यह प्रमाणित होता है कि संतों ने समाज को व्यापक स्तर पर जाना और समझा है। उनकी रचनाओं में समाजदर्शन के प्रायः सभी तत्व विद्यमान है। भक्ति, दर्शन और समाजदर्शन के विभिन्न पक्षों को संतों ने अपने काव्य में स्थान देकर जनमानस में अपनी अमिट छाप छोड़ी। संतों द्वारा प्रस्तुत सामाजिक आदर्श के माध्यम से समाज–कल्याण के साथ व्यक्तिगत कल्याण भी सम्भव है। इनकी वाणियों ने जनसाधारण को पथ–प्रदर्शक की भाँति प्रकाश प्रदान किया। इन संत कवियों द्वारा प्रस्तुत विश्व–बंधुत्व से अविष्ट सामाजिक आदर्श युग–युगांतरों तक मानव समाज को एक सूत्र में बाँधकर रखेगें।[38] आज भी जिन सामाजिक आदर्शों को हम स्थापित करने का प्रयास कर रहे हैं, उनका मूल रूप संतों के आदर्शों में देखा जा सकता है। आज भी हमें उसी 'सर्वजनहितकारी' सामाजिक एकता की भावना को आदर्श मानकर सामाजिक सुधार करना होगा।

संदर्भ सूचीः–

1 मेकेन्ज़ी, जे०एस०ः समाज–दर्शन की रूपरेखा, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2009, पृ० 12
2 ब्रह्मचारी, रामाश्रय दासः सन्त कबीर और उनका दर्शन, प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली, संस्करण 2002, पृ० 5
3 महता, विमलः निर्गुण कवियों के सामाजिक आदर्श, आशा प्रकाशन गृह, नई दिल्ली, संस्करण 1976, पृ० 4
4 दीक्षित, त्रिलोकी नारायणः सुन्दर–दर्शन, किताब महल, इलाहाबाद, संस्करण 1953, पृ० 6
5 राधामणि, पी०के०ः भक्ति आन्दोलन और सामाजिक जागरण. सार्थक प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2002, पृ० 117.
6 ब्रहाचारी, रामाश्रय दासः सन्त कबीर और उनका दर्शन, प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली, संस्करण 2002, पृ० 221
7 शर्मा, वासुदेवः सन्त कवि दादू और उनका पंथ, शोध–प्रबन्ध प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 1963, पृ० 263
8 मिश्र, जयरामः नानक वाणी, मित्र प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, इलाहाबाद, संस्करण संवत् 2017 वि०, पृ0 97
9 मिश्र, जयरामः नानक वाणी, मिश्र प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, इलाहाबाद, संस्करण संवत् 2027 वि०, पृ० 117
10 मिश्र, रमेशचन्द्रः सुन्दर ग्रन्थावली, भाग–1, किताबघर, नई दिल्ली, संस्करण 2011, पृ० 448
11 मिश्र, जयरामः नानक वाणी, मित्र प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, इलाहाबाद, संवत् 2017 वि०, पृ० 79
12 मिश्र रमेशचन्द्र : सुन्दर ग्रन्थावली भाग–2 किताबघर, नई दिल्ली संस्करण 2011 पृ0 952
13 मिश्र, जयरामः नानक वाणी, मित्र प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, इलाहाबाद, संस्करण 1961, पृ० 278
14 मिश्र, रमेषचन्द्रः सुन्दर ग्रन्थावली, भाग–2, किताबघर, नई दिल्ली, संस्करण 2011, पृ० 962
15 द्विवेदी, हजारीप्रसादः मध्यकालीन धर्म साधना, साहित्य भवन प्रा०लि०, इलाहाबाद, 1970, पृ० 216
16 मिश्र, रमेशचन्द्रः सुन्दरदास–भारतीय साहित्य के निर्माता, साहित्य अकादमी, नई दिल्ली, संस्करण 2001, पृ० 101
17 हरि, वियोगीः सन्त सुधा–सार, सस्ता साहित्य मंडल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 1956 पृ० 567
18 चन्द्र, सतीशः मध्यकालीन भारत–राजनीति, समाज और संस्कृति, ओरिएंट ब्लैकस्वान, प्रा० लि०, नई दिल्ली, संस्करण2009, पृ० 367
19 मिश्र, जयरामः नानक वाणी, मित्र प्रकाशन प्रा० लि०, इलाहाबाद, संस्करण 1961, पृ० 9
20 मिश्र, रमेषचन्द्रः सुन्दर ग्रन्थावली, भाग–1, किताबघर, नई दिल्ली, संस्करण 2011, पृ० 352
21 मिश्र, रमेषचन्द्रः सुन्दर ग्रन्थावली, भाग–2, किताबघर, नई दिल्ली, संस्करण 2011, पृ० 876
22 मिश्र, रमेषचन्द्रः सुन्दर ग्रन्थावली, भाग–2, किताबघर, नई दिल्ली, संस्करण 2011, पृ० 869
23 सिंह, रवीन्द्र कुमारः संत–काव्य की सामाजिक प्रासंगिकता, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 1994, पृ० 155.
24 शर्मा, वासुदेवः सन्त कवि दादू और उनका पंथ, शोध प्रबंध प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 1969, पृ० 277
25 मिश्र, जयरामः नानक वाणी, मित्र प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, इलाहाबाद, संस्करण संवत् 2017 वि०, पृ० 248
26 मिश्र, रमेषचन्द्रः सुन्दर ग्रन्थावली, भाग–2, किताबघर, नई दिल्ली, संस्करण 2011, पृ० 874
27 कौशिक, कृष्ण कुमारः सन्त कवि सुन्दरदास और उनका काव्य, साहित्य मंदिर, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 1995, पृ० 120
28 मिश्र, रमेषचन्द्रः सुन्दर ग्रन्थावली, भाग–2, किताबघर, नई दिल्ली, संस्करण 2011, पृ० 1163
29 महता, विमलः निर्गुण कवियों के सामाजिक आदर्श, आशा प्रकाशन गृह, नई दिल्ली, संस्करण 1976, पृ० 213
30 मिश्र, जयरामः नानक वाणी, मिश्र प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण 1961, पृ० 133
31 महता, विमलः निर्गुण कवियों के सामाजिक आदर्श, आशा प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 1976, पृ० 186
32 मजीठिया, सुदर्शनसिंहः संत साहित्य, रूप कमल प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण, 1968, पृ० 318
33 हरि, वियोगीः सन्तवाणी, सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2006, पृ० 98
34 मिश्र, रमेषचन्द्रः सुन्दर ग्रन्थावली, भाग–2, किताबघर, नई दिल्ली, संस्करण 2011, पृ० 713
35 मिश्र, रमेषचन्द्रः सुन्दर ग्रन्थावली, भाग–1, किताबघर, नई दिल्ली, संस्करण 2011, पृ० 166
36 महता, विमलः निर्गुण कवियों के सामाजिक आदर्श, आशा प्रकाशन गृह, नई दिल्ली, संस्करण 1976, पृ० 206
37 मिश्र, रमेषचन्द्रः सुन्दर ग्रन्थावली, भाग–1, किताबघर, नई दिल्ली, संस्करण 2011, पृ० 367
38 महता, विमलः निर्गुण कवियों के सामाजिक आदर्श, आशा प्रकाशन गृह, नई दिल्ली, संस्करण 1976, पृ०5

गुरु नानक : जीवन एवं शिक्षा

*डॉ. विवेक शर्मा

* गार्गी कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय

समूचे संसार का इतिहास गवाह है कि धरती पर 'ईश्वर से संवाद की स्थिति' का सौभाग्य; हम भारतीयों को ही मयस्सर हुआ है। यही एक प्रमुख वजह भी रही है कि हमने अपने 'ईश' को अपने दिलों में जगह दी ... उससे शिकायतें भी कीं ... और उसे 'प्रेम' से नवाज़ा।

यह ''कॉस्मिक कैजुएलिटि'', हमारे हित में भी रही किंतु इसका प्रतिपक्ष हमारा बैरी बन बैठा। तुलसी बाबा कहा करते थे –

''जाकी रही भावना जैसी,
प्रभु मूरत देखी तिन तैसी।''

इस 'पाठ–पुर्नपाठ' के गलत ढ़र्रे ने एक ''बेस्सिंग लिटरेचर'' का निर्माण करवाया। जिसकी चपत आज भी हमारे मनो–मस्तिष्क पर 'छपी' (चस्पा) हुई है। इसका एक बड़ा ख़ामियाज़ा यह हुआ है कि हमनें कई महापुरुषों, व्यक्तित्वों एवं संत मनीषियों के योगदान का स्मृत–विस्मृत अपने–अपने अनुरूप कर लिया! खैर....।

आज; मैं यहाँ जिस पर बात करने आया हूँ। वह मेरे लिए कोई 'विषय–मात्र' नहीं अपितु मेरे पंथ, सम्प्रदाय और यहाँ बैठे मेरे भाईयों–बहनों के स्वाभिमान से भी ताल्लुक रखता है। मैं आज, आप सभी के सामने कुछ प्रश्न रखने आया हूँ। उम्मीद है ...। आप बेहतर समझेंगे।

नानक साहब को हम संत, भक्त और गुरु के रूप में जानते–मानते और पहचानते रहे हैं। किंतु प्रश्न यह उठा है कि नानक 'साहब' को हम इनमें से क्या मानें?

यदि हम उन्हें 'संत' मानते हैं तो उन्हें 'हिंदी संत परंपरा' में स्थान देना चाहिए। जबकि, ऐसा हमने किया नहीं है चूँकि शुक्ल जी ने अपने 'Parameter' रच रखे थे। जिनके चश्में से संत–स्वरूप कबीर साहब बड़े नज़र आते हैं।

यदि हम इन्हें 'भक्त' मान लें तो इन्हें 'भक्तिकालीन साहित्येतिहासिक परंपरा' में स्थान देना होगा। जबकि, वहाँ भी हमने 'हिंदी तथा पंजाबी संत परंपरात्मक खेमों' का मसला बना; हिंदी भक्ति परंपरा से नदारद कर दिया है।

इन सबसे इतर; यदि हम इन्हें 'गुरु' के रूप में स्वीकार करते हैं तो हम पाते हैं कि, कुछ लोग 'रामानंद', 'कबीर' इत्यादि की शिष्य परंपरा में इनको रखकर, इन्हें अपनी–अपनी ज़मात में खींचने का प्रयास करते दिखलाई देते हैं।

ऐसे में 'नानक साहब' का संबोधन किस 'उपनाम' किस 'विशेषण से किया जाए?

क्या हम उन्हें 'नानक देव' कह पुकारें? यदि ऐसा करते हैं तो कुछ ''सनातन पंथी'' 'देव' विशेषण के चलते, उनसे अपनी परंपरा समृद्ध करने का दंभ भरने लगते हैं। ऐसे में, प्रश्न यह है कि क्या 'नानक साहब' को हम मात्र 'बाबा नानक' कह संबोधित करें? या फिर इसे एक नवीन दृष्टिकोण से देखने की आवश्यकता है।

हमारे विरोधी लाख वाद–विवाद करें; किंतु नानक साड़ड़ब के योगदान एवं उनकी प्रासंगिकता को याद किये बिना नहीं रह सकते इनकी 'Relevance' के जो 'Dimension's' हैं, जो स्तर हैं, वह बहुआयामी रूप से हमारे सामने आते हैं।

जब हम ''रेलिवेंस'' की अप्रोच पर बात करते हैं तो हमें ''तीन आयामों पर बात करना अवश्यंभावी हो जाता है।

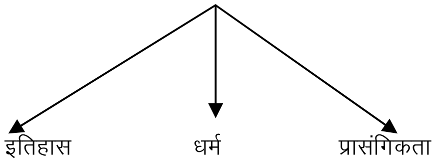

इतिहास की तह में जाने से पहले और इतिहास में गुरु नानक के सही योगदान को समझने से पूर्व, यह ज़रूरी हो जाता है कि उस गलत प्रभाव को दूर किया जाए जो पाश्चात्य विद्वानों की गलत धारणा के कारण बना लिया गया है। इन पाश्चात्य विद्वानों ने चंद 'आलोचक कलाकारों' के अपूर्ण ज्ञान का प्रयोग इस भ्रम को फैलाने हेतु किया कि गुरु नानक द्वारा प्रवर्तित सिख–पंथ, उस सिख–पंथ से नितान्त भिन्न था जिसका विकास 10वें गुरु ने आगे चलकर किया?[1] यह मात्र एक भ्रांति भर है।

मुझे लगता है, 'नानक साहब' के प्रादुर्भाव से एक शानदार नए युग का प्रवर्तन हुआ। नानक ने एक सबसे महत्वपूर्ण कार्य यह किया कि उन्होंने सामान्य लोगों में उस विश्वास उस 'संकल्प भावना' को जगाने का अप्रतिम कार्य किया था जो तत्कालीन राजशाही, राजनीतिक पाखंड तथा कुरीतियों से घिरे हुए थे। यह ....! एक बड़ा योगदान मुझे नानक साहब का दिखाई पड़ता है।

धर्म न कहकर मैं इसे 'पंथ' कहना अधिक उचित

मानता हूँ। धर्म के क्षेत्र में नानक क्रांति का संचार करते हैं। जिस 'भक्ति मूवमेंट' में सगुण–निर्गुण की चर्चा ज़ोरों पर थीं। उस समय 'नानक साहब' ''एक ओंकार'' का उच्चारण कर, सौहार्द उत्पन्न करने का प्रयास करते हैं।

नानक साहब ने तो सिख धर्म के लिए तीन विचारधाराएँ ही निर्धारित कर दी थीं।

नाम जपना – ईश्वर की भक्ति

किरन करना – मेहनत से कमाई तथा सच्चा जीवन व्यतीत करना

वंड छकना – प्रत्येक ज़रूरतमंद एवं गरीब व्यक्ति की सहायता करना।

प्रासंगिकता के स्तर पर नानक साहब को मैं "Pro-Relevant Circle" में रखने को हकदार हूँ चूँकि मैं स्वयं इस संप्रदाय, इस परंपरा से जुड़ा हुआ हूँ अतः ''फैक्ट्रस'' के स्तर पर समृद्धता रखता हूँ।

किसान धर्म पर्यावरण सांप्रदायिकता जाति क्षेत्र आडम्बर

किसान परिवार से वाफ़ता रखने के चलते नानक साहब, कृषक जीवन के अच्छे अनुभवी थे। यह प्रमुख कारण था कि उन्होंने जीवन में परिश्रम का कोई विकल्प नहीं माना। इस संदर्भ में एक लोककथा, हमारे यहाँ प्रचलित है –

''कुएँ में गिरे बैल की कथा''

भावार्थ देते हैं; आपके जीवन में कई आलोचक आपकी सफलता के मार्ग में बाधक बनेंगे पर आप शांति से अपने कर्मों के प्रति एकाग्रचित्त रहें।

''दूध और खून की कथा''

नानक साहब तो 'सच्चा किसान'' बनने की विधि भी रूपकों द्वारा बताते हैं। ''शुभ कर्मों को, धरती तथा परमात्मा के नाम को बीज बनाओ।

सत्य तथा कीर्ति के जल से उस पृथ्वी को नित्य सींचो। इस प्रकार के किसान बनकर ईमान (विश्वास) अंकुरित करो।''यथा

''अमलु करि धरती बीज सबदो
करि सच की आब नित देहि प्राणी
होइ किरसाण इमानु जमाई
लै भिसतु दोजकु मूड़े एव जाणी।''
– (नानक–वाणी, सिरी रागु; सबद–27, पहला पद)

धर्म के आधार पर "Mob Lunching" (भीड़ द्वारा हत्या) करने वाले मजदूदों को नानक साहब का जीवन संदेश देता है।

मुझे वह पाठ याद है जिसमें नानक साहब अपने बचपन के मित्र (''मरदाना'') के साथ शहर से प्रथम प्रस्थान करते हैं।

पर्यावरण के संदर्भ में तो नानक साहब ने आज से 500 वर्ष पूर्व (1469–1539) मानव जाति का अस्तित्व बनाए रखने हेतु वायु, जल और मिट्टी के बीच की घनिष्ठ अंतःक्रियाओं की सकारात्मक भूमिका का अनुभव किया था। उन्होंने स्वयं लिखा है –

''पवन गुरु, पाणी पिता, माता धरति महत।
दिविस रात दोइ दै दिया, खेले सकल जगतू।।''[2]

साम्प्रदायिक सद्भाव कमत्तर होने के कारण ही, आज "Articler-14" के नाम पर ''अराजक अभिव्यक्तियों'' को अंजाम देने का कार्य किया जा रहा है। देश को ईश्वर के नाम पर विभक्त करना, कहाँ तक न्यायोचित्त है।

ऐसे में 'नानक साहब' के 10 सिद्धांत हमें याद आते हैं–

1. ईश्वर एक है।
2. सदैव एक ही ईश्वर की उपासना करो।

यदि हम समझ लें, तो मात्र इसका अनुकरण हमें पार–तार सकता है।

जाति के स्तर पर नानक साहब के संदर्भ में प्रो. साहिल साड़ड़ब ... कहते हैं कि ''गुरु नानक मानवतावादी हैं। वह जात–पात एवं धर्म में विश्वास नहीं करते थे और यही कारण है कि हर धर्म के लोगों ने उनका अनुसरण किया।'' आप सब वाकिफ़ ही हैं –

''नानक नाम चढ़ती कला, तेरे भाणे सरबत दा भला
ना हम हिंदू ना मुसलमान, पांच तत्व का पुतला।''[3]

क्षेत्र तथा क्षेत्रवाद के संदर्भ में मुझे राही मासूम रज़ा की पुस्तक के वह कथन याद आते हैं कि ''धर्म–भगवान या अल्लाह या क्राइस्ट या गौतम बुद्ध या गुरु नानक देव की तरफ देखने की हिटलर की तरफ देखने लगे हैं। देवरस जी कहते हैं कि वह पहले हिंदू हैं तब कुछ और हैं। दिल्ली में शाही इमाम कहते हैं कि वह पहले सिक्ख हैं फिर हिंदुस्तानी या खालिस्तानी! श्री बाल ठाकरे कहते हैं कि वह पहले मराठी हैं फिर हिंदुस्तानी हैं। करूणानिधि कहते हैं कि वह पहले तमिल हैं फिर भारतीय हैं। एन.टी. रामावराव कहते हैं कि वह पहले तेलगू हैं फिर हिंदुस्तानी हैं। यानी मुझ जैसे पागलों के सिवा; पहले हिंदुस्तानी कोई नहीं है ...।[4]

इन सबके गाल पर चपत है नानक साहब का पहला ही उपदेश – ''ईश्वर एक है''

आडम्बर, नानक साड़ड़ब को कभी नहीं भाए.। वह 'आचरण की पवित्रता' के प्रवक्ता थे। उन्होंने स्वयं जनेऊ का प्रतिकार करते हुए कहा था – ''इन पवित्र धागों में जब तक दया की कपास, संतोष का सूत और सत्य की घुंडी न हो, तो भार रूप में जनेऊ धारण करके द्विजत्व की तख़्ती भले ही लटका लें; जीवन को शुद्ध करने का तरीका तो यह नहीं है।''

अतः नानक साहब कभी ''रेडिकल'' होते, हमें नज़र नहीं आते! बरक्स़ इसके कि मुद्दा 'राष्ट्र' का न हो!

संत परंपरा के इतिहास पर यदि आप नज़र डालें, तो पाएँगे कि अधिकांश साहित्यकारों व साहित्येतिहासकारों ने (आचार्य परशुराम चतुर्वेदी, रामकुमार वर्मा, डॉ. नगेन्द्र, महीप सिंह, रमेशचंद्र मिश्र आदि को छोड़कर) नानक साहब को वो स्थान नहीं दिया, जितना कबीर को।

कबीर को हमने "Father of Modern Spiritualism" की उपाधि से नवाज़ा किंतु नानक साहब को विस्मृत कर बैठे; वह स्थान नहीं दिया। जबकि दोनों तकरीबन समकालीन थे। इस बात पर दिल्ली विश्वविद्यालय (हिंदी विभाग के प्रारंभिक अध्यक्षों में से एक) नगेन्द्र साड़ड़ब ने एक भूमिका में सन् 1971 में लिखा भी था। नानक और कबीर – ''दोनों ही मध्ययुगीन भारत विशेषकर उत्तर भारत की सामाजिक तथा आध्यात्मिक आवश्यकता का परिणाम थे। ... परन्तु दोनों में कितना महान अंतर है। कबीर का स्वभाव अत्यन्त तेजस्वी और उग्र है, नानक का शांत और मृदु। अतः कबीर बार–बार व्यंग्य का प्रयोग करते हैं जबकि नानक प्रेम की सहजवाणी के माध्यम से ही अपना मंतव्य व्यक्त करते हैं। कबीर को ज्ञान का बल है, जबकि नानक को केवल भक्ति का संबल प्राप्त है। इसीलिए कबीर तर्क का

आश्रय लेते हैं जबकि नानक का माध्यम केवल अनुभव है। कबीर का मार्ग आदेश और उपदेश का मार्ग है, परन्तु नानक आत्मीय भाव से परामर्श देते हैं।''[5]

अब आप स्वयं देखियेगा – जनाब!
जहाँ उग्र के बरक्स मृदु
व्यंग्य के बरक्स भक्ति
तर्क के बरक्स अनुभव

आदेश के बरक्स आत्मीय परामर्श ... होगा; वहाँ व्यापकता किसमें सन्निहित होगी। मैं कहता हूँ ''जब भारत का लोकनायक वही हो सकता है जिसमें समन्वय की विराट चेष्टा हो तो यह कहने की आवश्यकता नहीं कि कबीर की अपेक्षा, नानक का दायरा अधिक व्यापक है। डॉ. नगेन्द्र ने इस बात को स्वीकारा था – ''कबीर का प्रभाव जहाँ अधिक प्रखर और तीव्र था, वहाँ नानक का प्रभाव अधिक व्यापक और स्थायी सिद्ध हुआ।''[6]

हम हज़ारों दफ़ा दोहराते रहते हैं; 'साहित्य समाज का दर्पण है', 'साहित्य स्वानुभूति का विषय है' लेकिन संगोष्ठि कक्षों एवं 'एकेडमिक्स ऑफ़िसों' के बाहर निकलते ही 'गुड–गोबर' कर देते हैं।

मैं यह कहना चाहता हूँ कि, यदि साहित्य 'स्वानुभूति' का विषय है, मात्र 'सहानुभूति' का ही नहीं, तो नानक साहब कबीर से सौ कदम आगे हैं। वास्तविकता तो यह है, कि सच्चे अर्थों में नानक "Father of Modern Spirituality" हैं।

मैं पिछले दिनों, भारत के विभिन्न केंद्रीय विश्वविद्यालयों का पाठ्यक्रम देख रहा था। मुझे हैरानी और आश्चर्य हाथ लगा। मुझे बेहद ख़ेद के साथ, यह कहना और स्वीकारना पड़ रहा है कि यदि ''रीजनल स्टडीज़'' को छोड़ दिया जाए तो भारत का कोई ऐसा केंद्रीय विश्वविद्यालयी शिक्षा केंद्र नहीं; जहाँ नानक साहब को पाठ्यक्रम में जगह दी गई हो! मेरी दृष्टि से यह हमारे लिए बेहद .. बेहद... और बहुत ही शर्मनाक बात है।

यह कुछ प्रश्न; जो मैंने आप–सब साथियों, विद्यार्थियों और पदाधिकारियों के समक्ष खड़े किये; इनका सिर्फ और सिर्फ एकमात्र उद्देश्य यह है कि आप इस दिशा में सुधार का ज़िम्मा ले – अपना दारोमदार निभाएँ। चूँकि वास्तव में, नानक साहब कि 'शहादत' उनका 'आत्म बलिदान', इन ''भवनों'', ''संगोष्ठियों'' का मोहताज नहीं; अपितु फरिश्तों की उस ''रूहानियत'' की तरह है। जिनकी कोई बंदिश, कोई सीमा नहीं होती।

संदर्भ

1. भारतीय इतिहास में गुरु नानक की भूमिका (लेख) : डॉ. गुरबख्श सिंह, पृ. 198.
2. स्पीकिंग ट्री ''अध्यात्म का पहला पड़ाव'' (संपादकीय) : जगजीत सिंह, जून 04, 2003.
3. www.SanghSadhna.com.
4. लगता है बेकार गये हम : राही मासूम रज़ा, वाणी प्रकाशन, प्रथम संस्करण, 1999, पृ. 91.
5. गुरु नानक और उनका काव्य : डॉ. महीप सिंह/डॉ. नरेन्द्र मोहन (संपादित); प्रथम संस्करण, 1971, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली–6, प्राक्कथन–भाग।
6. गुरु नानक और उनका काव्य : डॉ. महीप सिंह/डॉ. नरेन्द्र मोहन (संपादित); प्रथम संस्करण, 1971, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली–6, प्राक्कथन–भाग।

गुरु नानकदेव का जीवन–दर्शन

*डॉ. दीपा ग्रोवर

* असिस्टेण्ट प्रोफेसर बी0एड0 विभाग, सेठ पी0सी0बागला (पी0जी0) कालेज, हाथरस–204101 (उ0प्र0)

सिख धर्म के संस्थापक गुरुनानक देव जी का जीवन–दर्शन विश्वबन्धुत्व की भावना को जन–जन तक प्रकाषित करना है। मध्ययुग के संत कतियों में उनका विशिष्ट स्थान है। वे ऐसे धर्म के पक्षधर हैं जो आन्तरिक गुणों की महत्ता पर बल देता है। विवेक, वैराग्य, ज्ञान, योग, भक्ति तथा निष्काम कर्मयोग उनके जीवन दर्शन के आधारभूत तत्व हैं। गुरु नानक मौलिक चिन्तन, समाज सुधार, महान देशभक्त तथा युग–निर्माता संत थे। उन्होंने हिन्दू–मुसलमानों के कट्टरपन का विरोध कर सामाजिक समरसता की नींव डाली। उनकी विचारधारा एक ऐसे संत की विचारधारा है जिसमें मानवता का उद्धार सम्भव और सुनिष्चित हो।

सात वर्ष की आयु में नानक को विद्याभ्यास के लिए पाठशाला भेजा गया। अध्यापक ने पट्टी पर अक्षर–ज्ञान देना शुरू किया, तभी बालक नानक ने जीवन विषयक मौलिक, प्रश्न प्रस्तुत कर षिक्षक को चमत्कृत कर दिया। नानक ने कहा–

''ससै सोई सृसटि जिनि साजी सभना साहिबु एकु भइया।
सेवत रहे चितु जिन का लागा आइआ तिनि का सफलु भइया।।
मन काहे भूले मूड़ मना।
जब लेखा देवहि बीरा तउ पड़िआ।।''[1]

गुरु नानक के विचार चिन्तन में परमेश्वर की प्राप्ति के विभिन्न विचार–तत्व समाहित हैं। गुरु जी की मान्यता है कि वह अकाल पुरूष सृष्टि के पूर्व भी सत्य था, युगों के आरंभ में भी सत्य था और भविष्य में भी सत्य रहेगा। उस परमेश्वर की कोई स्थापना नहीं कर सकता और न कोई उसका निर्माण करने में समर्थ है। जिसने उस परमेश्वर की सेवा की है, गुणगान किया है वही सम्मान का अधिकारी है। गुरुजी की मान्यता है कि हम सब परमात्मा के गुणों का गायन करें और दुःखों से मुक्ति प्राप्त करें–

''आदि सचु जुगादि सचु।
है भी सचु नानक हो सी भी सचु।।''[2]

इसी प्रकार एक उद्धरण और दृष्टव्य है–

थापिया न जाइ कीता न होइ।।
आपे आपि चिरंजनु सोइ।।
जिनि सेविआ तिनि पाइआ मानु।।
नानक गावीये गुणी निधानु।।
''गवीऐ सुणीऐ मनि रखिऐ भाउ।।
दुखु परिहरि सुखु घरि लै जाइ।।''[3]

गुरु नानक देव जी ने तत्कालीन समाज में व्याप्त रूढ़िवादियों के परम्परावादी ढॉचे को तोड़ने में महत्वपूर्ण कार्य किया। देश–देशान्तर तक अपने विचारों के तेज से उन्होंने दुनिया को नई ऊर्जा प्रदान की। विदेशों में भी उन्होंने अपनी तेजस्विता से अज्ञान की निशा का विच्छेदन किया। श्रीयुत् मनमोहन गुप्ता ने गुरुनानक देव जी के संदर्भ में ठीक ही लिखा है– ''श्री गुरुनानक देव सिख समाज के ही नहीं अपितु हम सबके महान गुरु थे। आज से पॉच सौ पचास वर्ष पूर्व वह इस धरा पर अवतरित हुए थे। षारीरिक रूप से आज वह हमारे समक्ष नहीं हैं, लेकिन उनकी शिक्षाऍं हमारे लिए हमेशा प्रेरणास्पद रहेगी। इनके तेज से हम आज भी आलोकित हो रहे हैं''[4]

गुरुनानक जी ने मानवीय मूल्यों के प्रसार में अपनी प्रतिभा का सदुपयोग किया तथा विश्व–बन्धुत्व की भावना का प्रचार–प्रसार किया। नानक जी ने अस्पृष्यता, ऊॅच–नींच, जातिवाद, अत्याचार तथा आतंक का विरोध कर ऐसे समाज के नवनिर्माण पर बल दिया, जिसमें समरसता और समानता हो। उनके व्यक्तित्व और कर्तव्य के बारे में मंजु गुप्ता ने लिखा है–

''भारतीय संस्कृति और भारतीय दर्षन महापुरूषों के कृतित्व–व्यक्तित्व से भरे पड़े हैं, जिन्होंने मानव–मूल्यों–मानवता को जगत में फैलाया। राम, कृष्ण, महावीर बुद्ध और गुरुनानक आदि ने ईश्वर के अवतारी रूप में धरती पर जन्म लिया, इन महापुरूषों में से मुझे प्रतिभाशाली–चमत्कारी गुरुनानक जी का व्यक्तित्व आकर्षित करता है।''[5]

गुरु के अनुयायी गुरु के षब्दों को ही परमात्मा की षब्द–षक्ति मानते हैं। गुरु के उपदेश ही परमात्मा की वाणी का प्रारूप है। इस संबंध में प्राणनाथ पंकज ने लिखा है – ''गुरु की वाणी, गुरु के वाक्य ही नादस्वरूप हैं, गुरु के वाक्यों में ही अकालपुरूष परमेश्वर समाया हुआ, अन्तर्निहित है। गुरु ही शिव है, गुरु ही इस पृथ्वी का रक्षक , विष्णु है, वही ब्रह्मा है और गुरु ही मॉ पार्वती है।''[6]

गुरुनानक का आविर्भाव ऐसे समय में हुआ जब मानवता की प्राण–रक्षा के लिए संकट खड़ा हो गया था। यत्र–तत्र धर्मों के ठेकेदार भोली–भाली जनता को दिग्भ्रमित कर रहे थे। ऐसे विकृत समय में गुरु नानक देव ने अपनी वाणी से जनता का उद्धार किया। उन्होंने कुरीतियों और पाखण्डों की किंचित् मात्र परवाह न की।

सम्पूर्ण मानव–जाति को त्राण देने के लिए उन्होंने करूणा, सहिष्णुता, मानवता, जीवन–मूल्यों की उदात्त संचेतना के पथ को अपनाया। जिस प्रकार संत कबीरदास ने मानवता के नवनिर्माण के लिए अपनी ऊर्जस्थित वाणी का सुदपयोग किया, उसी प्रकार गुरु नानक ने मानवता के उद्धार के लिए अपनी वाणी का उपयोग किया।

नानक जी का मूल मन्त्र शब्द के अनहदनाद की आवृत्ति का क्रिया–व्यापार है। परमात्मा एक है– ओंकार स्वरूप, सच्चिनानंद हैं, कर्त्ता है, भयरहित है, निर्वैर है, जनम–मरण से परे है, स्वयंभू है। गुरु कृपा से ही उसकी प्रतीति सम्भव है– ''इक ओंकार, सतिनाम, करता पुरख, निरभउ, निरवैर, अकाल मूरति, अजुनिं सैभंग, गुरु प्रसाद।''[7]

गुरु नानक जी का मानना है कि नाम की महत्ता सर्वोपरि है। नाम की खुमारी चढ़ने से ही परमात्मा का साक्षात्कार सम्भव है। ष्वास–प्रष्वास में नाम–स्मरण होने से जीवन में कल्याण सम्भव है–

''नाम खुमारी नानका, चढ़ी रहे दिन रात।
ऊपर आत नीचे जात श्वास–श्वास चली जात।।''[8]

गुरु नानक देव जी का मानना है कि जेसे चातक स्वॉति–जल की बूँद से अपनी तृषा को परिशमित करता है, उसी प्रकार का नेह यदि साधक परमेश्वर से करता है; तभी उस की प्राप्ति सम्भव होती है। नानक जी ने कहा है–

''रे मन ऐसी हरि सिउ प्रीति करि जैसी चातिक मेह।।
सर भरि थल हरिआवले इक बूँद न पवई केह।।
करमि मिलै सो पाईए किरतु पइआ सिरि देह।।''[9]

गुरु नानक देव जी का विष्वास है कि जिन्होंने बाहर प्रतिष्ठा फैला रखी है और अन्दर से झूठे हैं वे भले ही तीर्थो में स्नान करें; लेकिन उनकी पवित्रता सम्भव नहीं है–

''दीवान एको कलम एका हमा तुम्हा मेलु ।
दरि लए लेखा पीड़ि छुटै नानका जिउ तेलु।।''[10]

गुरु नानकदेव के जीवन–दर्षन में विष्व–बन्धुत्व तथा मानवता की विराट् भाव–भूमि का बोध है। उन्होंने जड़वादी परम्परा और रूढ़ियों के ध्वंस के लिए अपनी कारयित्री प्रतिभा को नूतन तेजस्विता प्रदान की। चाहे जादूगरनी के प्रभाव को उन्होंने निस्तेज किया हो या गंगा में खड़े हो कर विपरीत दिषा में पानी उलीचा हो, सब कुछ उनके क्रांतिदर्षी व्यक्तित्व की बानगी है। एक सच्चे समाज– सुधारक की भाँति उन्होंने मनुष्यता को सर्वोपति मानते हुए किसी भी प्रकार की संकीर्णता को नहीं पनपने दिया। एक मात्र नाम को सर्वोपरि मानने की उनकी चिन्तनाषक्ति ने जीवन में व्याप्त नाना कर्मकाण्डों की बिल्कुल चिन्ता नहीं की। फलतः उनके विचार–दर्षन में जीवन की कर्मषक्ति का देदीप्यमान तेज आलोकित हुआ।

नानक जी का दार्षनिक अवबोध विचारों की शुद्धता और जीवन की पवित्रता से परिप्लुत है। एक बार की बात है । नानक जी मक्का में मस्जिद की ओर पैर पसार कर विश्राम करने लगे। तभी कुछ कट्टर पंथियों ने नानक जी के इस कर्म के प्रति उन्हें सावधान किया। नानक जी ने कहा कि जिस स्थान पर खुदा न हो, मेरे पैर घुमा दो। कट्टरपंथियों ने वैसा ही किया। देखते ही देखते नानक जी के पैर जिस दिषा में किए जाते, वहीं मस्जिद घूम जाती। नानक जी की इस दिव्यता को कट्टरपंथी समझ गए और उन्होंने नानक जी की अभ्यर्थना की।

नानक जी की काव्यभाषा में जनता की वाणी है। देष–देषान्तर में घूम कर अपने उपदेषों से उन्होंने जनता का प्रबोधन किया। मरदाना उनका प्रिय षिष्य था। अनेक अवसरों पर मरदाना के मोहजनित अज्ञान को उन्होंने विदीर्ण किया। भारतीय दर्षनिकों में गुरु नानकदेव जी का स्थान उच्चकोटि का है। नानक जी की यह उक्ति 'नानक दुखिया सब संसार, सोइ सुखिया जो नाम अधार' बहुतों की जिह्वा पर विराजमानहैं। सारा संसार तब तक दुःखमय है, जब तक व्यक्ति माया–मोह से सम्बद्ध है। जब व्यक्ति मोह–माया से मुक्त हो जाता है, तब वह नाम का आश्रय प्राप्त कर लेता है। नाम का अधार मिलने से ही व्यक्ति सात्त्विक गुणों को धारण कर लेता है। सात्त्विक गुणों के उत्कर्ष से व्यक्ति ईषमय हो जाता है। गरू नानकदेव जी का अन्तरंग व्यक्तित्व तथा बाहिरंग व्यक्तित्व इतना उदात्त है कि उसमें तन्मय होने को जी करता है। रूचियाँ–अरूचियाँ आदि से अन्तरंग व्यक्तित्व का निर्माण होता है। जबकि वेषभूसा रहन–सहन बाहिरंग व्यक्तित्व में हैं। नानकजी का बाहिरंग व्यक्तित्व सादगी, सरलता से परिपूर्ण है। उनका परिधान सहजता की गवाही देता दिखाई देता है। इससे सिद्ध होता है कि उनका आन्तरिक और बाह्य व्यक्तित्व दोनों कर्मषीलता का संदेष देते हैं।

नानकजी ने खान–पान में व्यावहारिक पक्ष को महत्ता प्रदान की। माँस पकाकर खाने की उनकी शैली ने पण्डितों के समक्ष यक्ष–प्रष्न खड़ा कर दिया। नानकजी का मानना था कि मनुष्य विचारों से शुद्ध होता है, न कि आहार से। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में उन्होंने आचरण की पवित्रता को प्रधान माना है। वास्तव में नानक जी ने मनुष्यों को सौहार्द, समता, उदारता का सन्देष प्रदान कर जीवन की विराट् चेतना को ऊँचाई प्रदान की है। उनके विचार न केवल भारतीय मनीषा के विचार हैं, बल्कि संसार के मनुष्यों को एकसूत्र में बाँधने के बीज–चिह्न हैं। नानक जी की बोध–वृत्ति में जीवनका अनहदनाद है, आह्लाद है। नानक जी के ज्ञान–परिज्ञान से मनुष्यता का नया पंथ विकसित हुआ है, इसमें कोई संदेह नहीं है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि गुरु नानक देव जी ने मनुष्यता को संस्थापित करने के ध्येय से अपनी अनुभवगम्य वाणी को जनता में प्रचारित कर जीवन की विराट् मानव–चेतना को ऊर्जस्वित किया। वास्तव में नानक जी का जीवन–दर्षन वैष्विक मानवता का पक्षधर है। मानवता के परित्राण में नानक की वाणी अद्भुत तथा प्रातः स्मरणीय है।

संदर्भ सूची–

1. सच की बाणी आखैं, गुरु नानक, प्राणनाथ पंकज (संपादक), रूपा एण्ड कम्पनी, 7/16, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली– 110002, पृ0 17
2. वही, पृष्ठ : 32
3. वही, पृष्ठ : 32
4. 'हरिगंधा' प्रधान संपादक : राजेष कुमार खुल्लर, निदेषक हरियाणा साहित्य अकादमी, पंचकूला (हरियाणा) अगस्त 2019, पृष्ठ 87
5. वही, पृष्ठ : 103

6. सच की वाणी आखै गुरुनानक संपादकः प्राणनाथ पंकज, रूपा एण्ड कम्पनी अन्सारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली– संस्करण 2001 पृष्ठः 33)
7. हरिगंधा ; पृष्ठ : 117
8. हरिगंधा, पृष्ठ : 123
9. सच की वाणी आखै गुरु नानक, संपादकः प्राणानाथ पंकज, रूपा एण्ड कम्पनी, अन्सारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली संस्करण : 2001 पृष्ठ : 48
10. सच की वाणी आखै गुरु नानक, संपादकः प्राणानाथ पंकज, रूपा एण्ड कम्पनी, अन्सारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली संस्करण : 2001 पृष्ठ : 71

Volume : 6 | Issue :49 | October-December2019 ISSN: 2349-1876 (Print) | ISSN : 2454-1826 (Online)

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਬਾਣੀ : ਅਧਿਆਤਮਿਕ ਚੇਤਨਾ

* Dr. Harbans Singh Litt

* Sri Guru Tech Bahadur Khalsa College, Delhi University

ਚੇਤਨਾ ਬਾਰੇ ਕਈ ਪ੍ਰਸ਼ਨ ਹਨ।'ਕਈ ਵਿਦਵਾਨ ਮੰਨਦੇ ਹਨ ਕਿ ਬਿਲੌਰਾਂ (crystals) ਤੇ ਅਣੂਆਂ (Molecules) ਵਿਚ ਵੀ ਇਕ ਪ੍ਰਕਾਰ ਦੀ ਆਦਿਮ ਚੇਤਨਾ ਹੁੰਦੀ ਹੈ। ਮਨੁੱਖੀ ਚੇਤਨਾ ਅਰਬਾਂ-ਖਰਬਾਂ ਅਣੂਆਂ ਦੇ ਸੰਗਠਨ ਰਾਹੀਂ ਉਪਜੀ। ਸਿਮਰਿਤੀ (ਚੇਤੇ) ਦੀ ਸੂਰਤ ਵਿਚ ਜਾਗ੍ਰਿਤ ਸੁਰਤ ਹੈ।ਇਹ ਆਪੇ ਦੀ ਸਚੇਤਤਾ ਦਾ ਨਾ ਹੈ। ਚੇਤਨਾ ਸਚੇਤਤਾ ਦੀ ਸਚੇਤਤਾ ਭਾਵ ਸੁਰਤ ਦੀ ਸੁਰਤ ਹੈ। ਇਹ ਆਪੇ ਤੇ ਆਪਣੇ ਚੌਗਿਰਦੇ ਵਿਚਕਾਰ ਦੇ ਸੰਬੰਧ ਦੀ ਜਾਣਕਾਰੀ ਹੈ'1 ਗੁਰਮਤਿ ਅਨੁਸਾਰ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਨੇ ਚੇਤਨਾ ਕੇਵਲ ਮਨੁੱਖ ਅੰਦਰ ਹੀ ਨਹੀਂ ਸਗੋਂ ਹਰ ਜੀਵ ਅੰਦਰ ਵੀ ਦਿੱਤੀ ਹੈ।ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਅਨੁਸਾਰ

ਏਕਾ ਸੁਰਤਿ ਜੇਤੇ ਹੈ ਜੀਅ॥
ਸੁਰਤਿ ਵਿਹੂਣਾ ਕੋਇ ਨ ਜੀਅ॥
ਸਿਰੀਰਾਗ ਮਹਲਾ 1, ਅੰਕ 24

ਗੁਰਮਤਿ ਅਨੁਸਾਰ ਮਨੁੱਖੀ ਸਰੀਰ ਬੇ-ਜਾਨ ਤੇ ਬੇ-ਸੁਰਤ ਮਿੱਟੀ ਬਰਾਬਰ, ਇਸ ਅੰਦਰ ਵਾਹਿਗੁਰੂ ਨੇ ਸੁਰਤਿ (ਚੇਤਨਾ) ਸਮਾ ਰੱਖੀ ਹੈ।

ਮਾਟੀ ਅੰਧੀ ਸੁਰਤਿ ਸਮਾਈ॥
ਮਾਝ ਮਹਲਾ 5, ਅੰਕ 100

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਅਨੁਸਾਰ ਹਰ ਜੀਵ ਦੀ ਚੇਤਨਾ ਮਹਾ ਚੇਤਨਾ ਦਾ ਹੀ ਅੰਸ਼ ਹੈ, ਹਰ ਜੀਵ ਦੀ ਜੋਤਿ ਮਹਾ ਜੋਤਿ ਹੋਣ ਕਰਕੇ ਮਹਾ ਜੋਤਿ ਵਿਚ ਲੀਨ ਹੂੰਦੀ ਹੈ। ਜਿਸ ਕਰਕੇ (ਸੁਰਤਿ) ਚੇਤਨਾ ਦਾ ਮਹਾ ਚੇਤਨਾ ਨਾਲ ਸੰਜੋਗ ਹੁੰਦਾ ਹੈ।

ਜੋਤੀ ਜੋਤਿ ਮਿਲਾਈਐ ਸੁਰਤੀ ਸੁਰਤਿ ਸੰਜੋਗੁ॥
ਸਿਰੀਰਾਗੁ ਮਹਲਾ 1, ਅੰਕ 2

ਚੇਤਨਾ ਦੀ ਜੜ੍ਹ ਮਹਾ ਚੇਤਨਾ ਵਿਚ ਹੀ ਹੈ।

ਆਪੇ ਸੁਰਤਾ ਆਪੇ ਕਰਤਾ ਕਹੁ ਨਾਨਕ ਬੀਚਾਰੋ॥
ਸਿਧ ਗੋਸਿਟ ਰਾਮਕਲੀ ਮਹਲਾ 1, ਅੰਕ 940

ਮਨੁੱਖੀ ਚੇਤਨਾ ਬਾਹਰਮੁਖੀ ਤੇ ਅੰਤਰਮੁਖੀ ਹੁੰਦੀ ਹੈ।'ਚੇਤਨਾ ਆਪਣੇ ਆਪ ਵਿਚ ਚਿੰਤਨ ਹੈ, ਇਹ ਚਿੰਤਨ ਬ੍ਰਹਮ ਚੇਤਨਾ ਨਾਲ ਜੋੜਦਾ ਜੋ ਅੰਨਦ ਰੂਪ ਵਿਚ ਵਿਅਕਤ (ਵਿਆਪਕ) ਤੇ ਸੰਪੂਰਨ ਸਤਿ-ਚਿਤ-ਅੰਨਦ ਰੂਪ ਵਿਚ ਵਿਦਮਾਨ ਹੈ।

ਦਾਤਾ ਕਰਤਾ ਆਪਿ ਤੂੰ ਤੁਸਿ ਦੇਵਹਿ ਕਰਹਿ ਪਸਾਉ॥
ਵਾਰ ਆਸਾ ਮਹਲਾ 1, ਅੰਕ 463

ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਇਹ ਬ੍ਰਹਮ ਦਾ ਪਸਾਰ ਸੱਚ ਸਰੂਪ ਹੈ ਜੋ ਸਮੇਂ ਸੀਮਾ ਵਿਚ ਨਹੀਂ ਆਉਂਦਾ, ਇਹ ਆਦਿ ਤੋਂ ਹੈ ਹੁਣ ਵੀ ਹੈ ਤੇ ਅੱਗੇ ਵੀ ਰਹੇਗਾ।

ਆਦਿ ਸਚੁ ਜੁਗਾਦਿ ਸਚੁ॥
ਹੈ ਭੀ ਸਚੁ ਨਾਨਕ ਹੋਸੀ ਭੀ ਸਚ॥
ਗੁਰੁ ਨਾਨਕ ਦੇਵ, ਜੁਪ ਜੀ ਅੰਕ 1

ਮਨੁੱਖੀ ਚੇਤਨਾ ਪਸ਼ੂ ਸ਼੍ਰੇਣੀ ਨਾਲ ਸਬੰਧਤ ਹੁੰਦਿਆਂ ਹੋਇਆ ਵੀ ਆਪਣੀ ਹੋਂਦ ਨੂੰ ਜਾਨਣ ਲਈ ਯਤਨਸ਼ੀਲ ਹੈ ।ਇਹ ਆਪਣੀ ਸਵੈ-ਚੇਤਨਾ, ਚਿੰਤਨ-ਸ਼ਕਤੀ,ਚੰਗੇ-ਮਾੜੇ ਸਦਾਚਾਰਕ ਫੈਸਲੇ ਲੈਣ ਦੀ ਚੋਣ-ਸ਼ਕਤੀ, ਅਧਿਆਤਮਕ ਬਿਰਤੀ ਤੇ ਸਿਰਜਨਾਤਮਕ ਰੁਚਿਆਂ,ਅਮੂਰਤ ਵਿਚਾਰਾਂ ਨੂੰ ਗ੍ਰਹਿਣ ਕਰਨ ਦੀ ਸਮਰਥਾ ਆਦਿ ਗੁਣਾਂ ਕਰਕੇ 84 ਲੱਖ ਜੂਨਾਂ ਵਿਚੋਂ ਉੱਤਮ ਹੈ। ਗੁਰੁ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਅਨੁਸਾਰ ਮਨੁੱਖੀ ਚੇਤਨਾ ਆਪਣੀਆਂ ਅੰਦਰੂਨੀ ਸਰੀਰਕ ਸੂਖਮ ਸ਼ਕਤੀਆਂ ਜਿਵੇਂ ਮਨ, ਬੁਧ, ਚਿਤ, ਅਹੰਕਾਰ ਕਰਕੇ ਆਪਣੀ ਹੋਂਦ ਨੂੰ ਵੱਖ-ਵੱਖ ਦ੍ਰਿਸ਼ਟੀਕੋਣ ਤੋਂ ਵਿਚਾਰਦੀ ਆ ਰਹੀ ਹੈ। ਮਨੁੱਖੀ ਸਰੀਰ ਕਈ ਜੂਨਾਂ ਵਿਚੋਂ ਵਿਗਾਸ ਕਰਕੇ ਹੋਂਦ ਵਿਚ ਆਇਆ।

ਚਉਰਾਸੀਹ ਨਰਕ ਸਾਕੁਤ ਭੋਗਾਈਐ।।
ਮਾਰੂ ਮਹਲਾ 1,ਅੰਗ 1028

ਗੁਰੂ ਅਰਜੁਨ ਦੇਵ ਮਨੁੱਖੀ ਜੂਨ ਦੀ ਪ੍ਰਾਪਤੀ ਦਾ ਵਰਣਨ ਕਰਦੇ ਹਨ।

ਲੱਖ ਚਉਰਾਸੀਹ ਜੋਨਿ ਸਬਾਈ
ਮਾਣਸੁ ਕਉ ਪ੍ਰਭਿ ਦੀਈ ਵਡਿਆਈ।।
ਮਾਰੂ ਸੋਹੇਲੇ ਮਹਲਾ 5, ਅੰਗ 1075

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਮਨੁੱਖੀ ਸਰੀਰ ਦੀ ਪ੍ਰਾਪਤੀ ਨੂੰ ਦੁਰਲਭ ਭਾਵ ਬੇ-ਸੁਮਾਰ ਕੀਮਤੀ ਮੰਨਿਆ ਹੈ ਇਸ ਦੀ ਪੁਸ਼ਟੀ ਭਾਈ ਗੁਰਦਾਸ ਜੀ ਵੀ ਕਰਦੇ ਹਨ,

ਲੱਖ ਚੁਓਰਾਸੀ ਜੂਨਿ ਵਿਚਿ ਉੱਤਮ ਜੂਨਿਸੁ ਮਾਣਸ ਦੇਹੀ।।
ਭਾਈ ਗੁਰਦਾਸ ਵਾਰ ਪਹਿਲੀ

ਮਨੁੱਖੀ ਚੇਤਨਾ ਦੀ ਸਰਬ-ਉੱਚ ਮਹਾਤੱਤਾ ਹੋਂਦ ਵਿਚ ਆ ਗਈ ਤੇ ਉਸ ਨੇ ਬਾਕੀ ਜੂਨਾਂ ਤੇ ਸਰਦਾਰੀ ਬਣਾ ਲਈ।

ਅਵਰ ਜੋਨਿ ਤੇਰੀ ਪਨਿਹਾਰੀ।।
ਇਸ ਧਰਤੀ ਮਹਿ ਤੇਰੀ ਸਿਕਦਾਰੀ।।
ਆਸਾ ਮਹਲਾ 1, ਅੰਗ 374

ਉਸ ਦੇ ਸ਼ਕਤੀਸ਼ਾਲੀ ਹੋਣ ਦੇ ਨਾਲ-ਨਾਲ ਜਿੰਮੇਵਾਰੀ ਵੀ ਵੱਧ ਗਈ ਪਰ ਜਿਨ੍ਹੀ ਇਹ ਸ਼ਕਤੀਸ਼ਾਲੀ ਹੋ ਗਈ ਉਨ੍ਹੀ ਜਿੰਮੇਵਾਰ ਨਹੀਂ ਹੋ ਸਕੀ।ਗੁਰਮਤਿ ਅਨੁਸਾਰ ਮਨੁੱਖੀ ਚੇਤਨਾ ਦੋ ਤਰ੍ਹਾਂ ਦੇ ਜੀਵਨ ਜੀਅ ਰਹੀ ਹੈ।

1. ਸੰਸਾਰਕ ਜੀਵਨ (ਪਦਾਰਥਕ ਜੀਵਨ ਭਾਵ ਧਾਤ ਦਾ ਮਾਰਗ),ਹਉਮੈ (ਮਨ) ਕੇਂਦਰਿਤ ਸੰਸਾਰਕ ਜੀਵਨ ਮਾਰਗ।
2. ਅਧਿਆਤਮਕ ਜੀਵਨ (ਮਾਇਆਵੀ ਬੰਧਨਾਂ ਤੋਂ ਮੁਕਤ ਭਾਵ ਲਿਵ ਦਾ ਮਾਰਗ), ਪਰਮਾਤਮ ਕੇਂਦਰਿਤ ਜੀਵਨ ਮਾਰਗ।

ਹੁਣ ਮਨੁੱਖੀ ਚੇਤਨਾ ਸ੍ਹਾਮਣੇ ਉਪਰੋਕਤ ਦੋ ਰਸਤੇ ਹਨ ਇਕ ਧਾਤ ਦਾ ਮਾਰਗ (ਤ੍ਰਿਸ਼ਨਾ) ਦੂਜਾ ਲਿਵ ਦਾ ਮਾਰਗ (ਲੀਨਤਾ / ਇਕਸੁਰਤਾ)

ਇਹ ਓਪਰੋਕਿਤ ਰਸਤਿਆਂ ਦੀ ਚੋਣ ਲਈ ਆਪਣੇ ਆਪ ਨੂੰ ਸੰਪੂਨ ਰੂਪ ਵਿਚ ਸੁਤੰਤਰ ਸਮਝਣ ਲੱਗ ਪਈ,ਪਰ ਨਜ਼ਰ ਆ ਰਿਹਾ ਸੰਸਾਰ ਪਰਵਰਤਨਸ਼ੀਲ ਜਿਸ ਵਿਚੋ ਬੇਗਾਨਗੀ ਦੇ ਅਹਿਸਾਸ ਪੈਦਾ ਹੋਏ।ਅੱਜ ਮਨੁੱਖ ਬੇਗਾਨਗੀ ਕਰਕੇ ਆਪਣੇ ਆਪ ਆਲੇ-ਦੁਆਲੇ ਵਿਚ ਘਿਰਿਆ ਮਹਿਸੂਸ ਕਰਦਾ ਹੈ, ਭਾਵ ਜਿੰਦਗੀ ਆਪਣੀ ਮਰਜੀ ਅਨੁਸਾਰ ਨਹੀਂ ਜੀਅ ਰਿਹਾ, ਸਗੋਂ ਦੂਸਰਿਆ ਦੇ ਘੜੇ ਨਿਯਮਾਂ ਅਨੁਸਾਰ ਜੀਅ ਰਿਹਾ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਅਨੁਸਾਰ ਇਸ ਜੀਣ ਵਿਚ ਨਾ ਰੰਗ ਹੈ ਨਾ ਹੀ ਰਸ, ਬੇਗਾਨਗੀ ਦੀ ਹਾਲਤ ਵਿਚ ਮਨ ਤੇ ਤਨ ਪੱਖੋਂ ਉਹ ਸਵੈ-ਕੇਂਦਰਿਤ ਹੋ ਗਿਆ ਹੈ।ਅਜਿਹੀ ਸਥਿਤੀ ਮਨਮੁੱਖ (ਮਨਮੁਖਤਾ), ਮਾਇਆਵੀ ਭੱਜਾ-ਦੋੜੀ ਵਾਲੀ ਹੈ।ਇਸ ਵਿਚ ਮਨੁੱਖੀ ਚੇਤਨਾ ਹਉ-ਕੇਂਰਿਤ, ਮਨ-ਕੇਂਰਿਤ ਮਾਰਗ ਦਾ ਪਾਧੀਂ ਬਣਕੇ ਭਰਮ-ਭੁਲੇਖਿਆਂ ਵਿਚ ਘਿਰ ਗਈ ਹੈ।

ਮਨਮੁਖ ਭਰਮਿ ਭੁਲਾਣਾ
ਨਾ ਤਿਸੁ ਰੰਗੁ ਹੈ॥
ਮਰਸੀ ਹੋਇ ਵਿਡਾਣਾ
ਮਨਿ ਤਨਿ ਭੰਗੁ ਹੈ॥
ਸੂਹੀ ਮਹਲਾ 1, ਅੰਗ 752

ਆਧੁਨਿਕ ਮਨੁੱਖੀ ਚੇਤਨਾ ਅੰਦਰੋਂ ਬਾਹਰੋਂ ਤਕਨਾਲੋਜੀ ਤੇ ਵਪਾਰਵਾਦ ਦਾ ਪੁਜਾਰੀ ਬਣਕੇ ਰਹਿ ਗਈ ਹੈ ਉਹ ਨਹੀਂ ਸਮਝਦੀ ਕਿ ਤਕਨਾਲੋਜੀ ਮਨੁੱਖ ਲਈ ਬਣੀ ਹੈ ਨਾ ਕਿ ਮਨੁੱਖ ਤਕਨਾਲੋਜੀ ਵਾਸਤੇ ਬਣਿਆ।ਵਪਾਰ ਤੇ ਤਕਨਾਲੋਜੀ ਦੇ ਸੰਗਠਨ ਨੇ ਮਨੁੱਖੀ ਚੇਤਨ ਜੀਵਨ ਵਿਚੋਂ ਗੰਭੀਰਤਾ ਤੇ ਸਚਿਆਰਤਾ ਘਟਾ ਦਿਤੀ।ਉਹ ਆਪਣੇ ਆਪ ਨੂੰ ਸਭ ਕੁਝ ਕਰਨ ਦੇ ਸਮਰਥ ਸਮਝਣ ਲੱਗ ਪਿਆ ਤੇ ਆਪਣੇ ਆਲੇ-ਦੁਆਲੇ ਵਿਚ ਸਰਬ ਸ਼ਕਤੀ ਸੰਪਨ ਹੋਣ ਦੇ ਭਰਮ-ਜਾਲ ਵਿਚ ਫੱਸ ਗਿਆ।

ਬੇਗਾਨਗੀ ਦੇ ਨਾਲ-ਨਾਲ ਮਨੁੱਖੀ ਚੇਤਨ ਮਨ ਆਪਣੀ ਅਪ੍ਰਮਾਣਿਕਾ , ਆਪਣੀ ਪਛਾਣ, ਸ਼ਨਾਖਤ ਵੀ ਖੋ ਬੈਠਾ, ਕਾਮ ਤੇ ਕਾਮਨਾ ਵੱਧ ਗਈ ਸਦਭਾਵਨਾ ਘਟ ਗਈ।ਮਨੁੱਖੀ ਚੇਤਨ ਮਨ ਮਨਮੁੱਖਤਾ ਪਿੱਛੇ ਲੱਗ ਕੇ ਆਪਣੇ ਮਾਨਸਿਕ ਭਰਮ-ਭੁਲੇਖਿਆ, ਗਿਣਤੀਆਂ-ਮਿਣਤੀਆਂ, ਆਸਾਂ-ਅੰਦੇਸਿਆਂ, ਇਛਾਵਾਂ-ਕਾਮਨਾਵਾਂ ਆਦਿ ਭਟਕਣਾ ਵਿਚ ਵਿਚਰਨ ਲੱਗ ਪਿਆ ਹੈ।

ਮਨਮੁਖਿ ਭਰਮਿ ਭਵੈ ਬੇਬਾਣਿ॥
ਸਿਧ ਗੋਸਟਿ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਅਨੁਸਾਰ ਅਜਿਹੀ ਸਥਿਤੀ ਵਿਚ ਮਨੁੱਖੀ ਚੇਤਨ ਮਨ ਸਿਲ-ਪੱਥਰ ਵਾਂਗ ਅਭਿਜ ਰਹਿੰਦਾ ਹੈ।

ਮਨਮੁਖ ਪਥਰੁ ਸੈਲੁ ਧ੍ਰਿਗੁ ਜੀਵਣੁ ਫੀਕਾ॥
ਜਲ ਮਹਿ ਕੇਤਾ ਰਾਖੀਐ ਅਭ ਅੰਤਰਿ ਸੂਕਾ॥
ਆਸਾ ਕਾਫੀ ਮਹਲਾ 1,ਅੰਕ 419

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਅਨੁਸਾਰ ਅਜਿਹੀ ਮਾਨਸਿਕਤਾ ਵਾਲੀ ਮਨੁੱਖੀ ਚੇਤਨਤਾ ਫਿਕਰਾਂ, ਚਿਤਾਵਾਂ ਕਾਰਨ ਚਿੰਤਾਤੁਰ ਰਹਿੰਦੀ ਹੈ, ਚੰਚਲ ਬਿਰਤੀਆਂ ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੂੰ ਭਟਕਾਦਿਆਂ ਹੈ ਤੇ ਉਹ ਮਨ ਮਰਜੀ ਕਰਨ ਵਾਲੀ ਜਿੱਦੀ ਬਿਰਤੀ ਬਣ ਜਾਂਦੀ ਹੈ।

ਮਨਮੁਖ ਭਰਮਿ ਭੁਲੇ ਬਉਰਾਨੇ॥
ਬਿਲਾਵਲੁ ਮਹਲਾ 1, ਅੰਗ 796

ਇਸ ਘਟਨਾ ਕ੍ਰਮ ਦਾ ਕਾਰਣ ਜਦੋਂ ਮਨੁੱਖੀ ਚੇਤਨਾ ਮਾਇਆਵੀ ਜਗਤ ਵੱਲ ਉਲਾਰ ਹੋ ਜਾਂਦੀ ਉਦੋਂ ਉਹ ਆਪਣੇ ਮੂਲ ਦੀ ਪਛਾਣ ਭੁੱਲ ਜਾਂਦੀ ਹੈ।ਗੁਰਮਤਿ ਅਨੁਸਾਰ ਮਨਮੁੱਖੀ ਚੇਤਨ ਮਨ ਮਾਇਆਵੀ ਪਦਾਰਥਕ ਵਸਤੂਆਂ ਦੀ ਭਾਲ ਵਿਚ ਬਾਹਰ ਵੱਲ ਭੱਜਦਾ ਹੈ।ਇਹ ਗਿਆਨਵਾਨ ਘੱਟ ਤੇ ਅਗਿਆਨਵਾਨ ਵਧੇਰੇ ਹੁੰਦਾ ਹੈ।ਇਹ ਮਾਇਆਵੀ ਅਗਿਆਨਤਾ ਦੁਵਿਧਾ ਜਨਕ ਹੋ ਕੇ ਆਸਾ-ਮਨਸਾ ਵਿਚਾਲੇ ਭੱਟਕਦੀ ਹੈ।

ਇਹੁ ਮਨੁ ਮਾਇਆ ਮੋਹਿਆ ਵੇਖਣੁ ਸੁਨਣੁ ਨ ਹੋਇ॥
ਵਾਰ ਸਿਰੀਰਾਗ ਮਹਲਾ 3 ਅੰਕ 83
ਆਸਾ ਮਨਸਾ ਜਗਿ ਮੋਹਣੀ ਜਿਨਿ ਮੋਹਿਆ ਸੰਸਾਰ॥
ਰਾਗ ਬਿਲਾਵਲੁ ਮਹਲਾ 3 ਅੰਕ 581

ਜਦੋਂ ਚੇਤਨ ਮਨ ਆਪਣੇ ਨਿਜ ਘਰ (ਮੂਲ) ਤੋਂ ਆ ਕੇ ਪੰਜਾਂ ਤੱਤਾਂ ਭਾਵ ਸਰੀਰ ਅੰਦਰ ਪੌਣ (ਪਵਨ) ਰਾਹੀਂ ਮਿਲਦਾ ਹੈ।ਸੁਖਮ,ਸੰਜੀਵ ਤੇ ਅਰੋਕ ਸ਼ਕਤੀਵਰ ਵਿਚਾਰਾਂ(ਚੰਗੇ-ਮਾੜੇ) ਦੁਵਾਰਾ ਖੇਲ ਸ਼ੁਰੂ ਹੋ ਜਾਂਦਾ ਹੈ।ਗੁਰਮਤਿ ਅਨੁਸਾਰ ਇਹ ਸੰਜੋਗ ਤੇ ਵਿਜੋਗ ਨਿਜ ਘਰ`ਨ ਹੀ ਸ਼ੁਰੂ ਹੰਦਾ ਹੈ।

ਸੰਜੋਗੁ ਵਿਜੋਗੁ ਧੁਰਹੁ ਹੀ ਹੁਆ॥
ਪੰਚ ਧਾਤੁ ਕਰਿ ਪੁਤਲਾ ਕੀਆ॥
ਸਾਹੈ ਕੈ ਫਰਮਾਇਅੜੈ ਜੀ ਦੇਹੀ ਵਿਚ ਜੀਉ ਆਇ ਪਇਆ॥
ਮਹਲਾ 5,ਅੰਕ 1009
ਲਿਵ ਧਾਤੁ ਦੁਇ ਰਾਹ ਹੈ ਹੁਕਮੀ ਕਾਰ ਕਮਾਇ॥
ਸਿਰੀ ਰਾਗ ਮਹਲਾ 3, ਅੰਕ 87

ਚੇਤਨ ਮਨ ਜਿਸ ਵਿਸ਼ੇ ਬਾਰੇ ਚਿੰਤਨਸ਼ੀਲ ਹੋ ਜਾਵੇ ਉਸੇ ਬਾਰੇ ਗੰਭੀਰ ਹੋ ਜਾਂਦਾ ਹੈ।ਬਦੀਆਂ ਬਾਰੇ ਸੋਚੇ ਤਾ ਬਦ (ਧਾਤ ਦੇ ਰਸਤੇ ਤੇ ਚਲ ਪੈਂਦਾ) ਹੋ ਜਾਂਦਾ ਹੈ ਜੇ ਚੰਗੇ ਵਿਚਾਰਾਂ ਨੂੰ ਗ੍ਰਹਿਣ ਕਰਨ ਲਗ ਜਾਂਦਾ (ਲਿਵ ਦੇ ਮਾਰਗ ਤੇ ਟੁਰ ਪੈਂਦਾ) ਹੈ।ਮਨੁੱਖੀ ਚੇਤਨਤਾ ਮੂਲ ਰੂਪ ਵਿਚ ਤਾਂ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ਮਈ ਹੈ ਪਰ ਅਨੇਕਾਂ ਰੂਪ ਧਾਰਨ ਕਰਨ ਵਾਲੀ ਮਾਇਆ ਇਸ ਨੂੰ ਅੰਧਕਾਰਮਈ ਬਣਾ ਦੇਂਦੀ ਹੈ।

ਤ੍ਰਿਸਨਾ ਮਾਇਆ ਮੋਹਣੀ ਸੁਤ ਬੰਧਪ ਘਰਿ ਨਾਰਿ॥
ਧਨਿ ਜੋਬਨਿ ਜਗੁ ਠਗਿਆ ਲਬਿ ਲੋਭਿ ਅੰਹਕਾਰਿ॥
ਮੋਹ ਠਗਉਲੀ ਹਉ ਮੁਈ ਸਾ ਵਰਤੈ ਸੰਸਾਰਿ॥
ਸਿਰੀ ਰਾਗ ਮਹਲਾ 1, ਅੰਕ 61

ਇਹ ਮਾਇਆ ਤਾਂ ਮਨੁੱਖੀ ਚੇਤਨ ਮਨ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ ਦੀ ਦਾਸੀ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਅਨੁਸਾਰ ਇਹ ਉਸ ਨੂੰ ਛਿਨ-ਭੁਗੰਰ ਦੀਆਂ ਖੁਸ਼ੀਆਂ ਦੇ ਕੇ ਲਿਵ ਦੇ ਰਸਤੇ ਤੋਂ ਹਟਾ ਕੇ ਆਪਣੇ ਪਿੱਛੇ ਲਾ ਲੈਂਦੀ ਹੈ।ਇਹ ਕਦੇ ਪਰਿਵਾਰ ਦਾ ਮੈਂਬਰ ਬਣ ਕੇ, ਕਦੇ ਸਰੀਰਕ ਸੁੰਦਰਤਾ ਬਣ ਕੇ, ਕਦੇ ਧੰਨ ਸੰਪਤੀ ਦਾ ਲਾਲਚ ਬਣ ਕੇ ਚੇਤਨਾ ਨੂੰ ਮਦਹੋਸ਼ ਕਰ ਕੇ ਆਪਣੇ ਵੱਸ ਕਰ ਲੈਂਦੀ ਹੈ।ਤ੍ਰਿਸ਼ਣਾ ਮਨੁੱਖੀ ਚੇਤਨਾ ਨੂੰ ਜਿਉਂਦੇ ਰੱਖਣ ਦਾ ਭੁਲੇਖਾ ਪਾ ਕੇ ਭਜਾਈ ਫਿਰ ਦੀ ਹੈ।ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਮਨੁੱਖ ਪੜ੍ਹ-ਲਿੱਖ ਕੇ ਵੀ ਕਈ ਵਾਰ ਅਵਿੱਦਿਅਕ ਵਿਵਹਾਰ ਕਰਦਾ ਨਜ਼ਰ ਆਉਂਦਾ ਹੈ।ਇਸ ਅਵਿੱਦਿਆ ਕਾਰਣ ਚੇਤਨਾ ਨੂੰ ਹਉਮੈ ਘੇਰ ਲੈਂਦੀ ਹੈ।ਇਉ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ਮਈ

ਮਨੁੱਖੀ ਚੇਤਨਾ ਨੂੰ ਹਉਮੈ ਸੰਸਾਰਕ ਕਾਰਾਂ-ਵਿਹਾਰਾਂ ਵਿਚ ਫਸਾ ਲੈਂਦੀ ਹੈ। ਜਸਵੰਤ ਸਿੰਘ ਨੇਕੀ ਆਤਮ-ਚੇਤਨ ਅਵਸਥਾ ਨੂੰ ਲਿਵ ਮੰਦੇ ਹਨ।

ਗੁਰੂ ਅਮਰ ਦਾਸ ਜੀ ਅਨੁਸਾਰ

ਲਿਵ ਛੁੜਕੀ ਲਗੀ ਤ੍ਰਿਸਨਾ ਮਾਇਆ ਅਮਰੁ ਵਰਤਾਇਆ॥
ਅਨੰਦ, ਰਾਮਕਲੀ ਮਹਲਾ 3, ਅੰਕ 921

ਇਹ ਤ੍ਰਿਸ਼ਣਾ, ਮਾਇਆ ਦਾ ਅਮਰ ਜੀਵਨ ਭਰ ਚਲਦਾ ਰਹਿੰਦਾ ਜਿਸ ਨਾਲ ਜਿੰਦਗੀ ਬੇ-ਤਰਤੀਬ ਤੇ ਟੁੱਟੀ-ਭੱਜੀ ਲਗਦੀ ਹੈ।ਚੇਤਨਾ ਮੈਂ, ਮੇਰੀ ਭਾਵ ਹਉਮੈ ਦੇ ਬੰਧਨ ਵਿਚ ਬੰਨ੍ਹੀ ਜਾਂਦੀ ਹੈ।ਚੇਤਨਾ ਮੋਹ ਮਾਇਆ ਦੇ ਰਸਤੇ ਤੇ ਚਲਣ ਦੀ ਆਦੀ ਹੋ ਜਾਂਦੀ ਤੇ ਲਿਵ ਦੇ ਰਾਹ ਨੂੰ ਭੁੱਲਣਨ ਲੱਗ ਪੈਂਦੀ ।ਗੁਰੂ ਅਮਰ ਦਾਸ ਅਨੁਸਾਰ

ਹਉਮੈ ਧਾਤੁ ਮੋਹ ਰਸਿ ਲਾਈ॥
ਮਾਰੂ ਮਹਲਾ 3, ਅੰਕ 1047

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਅਨੁਸਾਰ ਹਊਮੈ ਭਰਮ ਭੁਲਾਵਾ ਹੈ ਇਸ ਕਰਕੇ ਜਨਮ-ਮਰਣ ਦਾ ਚੱਕ੍ਰ ਬਣਿਆ ਰਹਿੰਦਾ ਹੈ।

ਹਉਮੈ ਆਵੈ ਜਾਇ ਭਰਮਿ ਭੁਲਾਵਣਾ॥
ਰਾਗ ਸੂਹੀ ਮਹਲਾ 1, ਅੰਕ 752
ਮੂਲ ਨ ਬੁਝਹਿ ਆਪਣਾ ਸੇ ਪਸੂਆ ਸੇ ਢੋਰਿ ਜੀਉ॥
ਸੂਹੀ ਮਹਲਾ 1, ਅੰਖ 751

ਮਨੁੱਖੀ ਚੇਤਨਾ ਮੂਲ ਨੂੰ ਭੁੱਲ ਕੇ ਜਾਨਵਰੀ ਜਾਂ ਪਸ਼ੂ ਬਿਰਤੀ ਚੇਤਨ ਵਿਚ ਪਰਿਵਰਤਤ ਹੋ ਜਾਂਦੀ ਹੈ।ਨਤੀਜੇ ਵਜੋਂ ਆਧੁਨਿਕ ਚੇਤਨਤਾ ਵਧੇਰੇ ਖੰਡਿਤ ਤੇ ਹਿੰਸਕ ਹੋ ਹੋਈ ਹੈ।

ਗੁਰੂ ਰਾਮ ਦਾਸ ਜੀ ਅਨੁਸਾਰ ਚੇਤਨ ਮਨ ਮਾਇਆ ਦਾ ਸਾਧੀ ਬਣ ਜਾਂਦਾ ਹੈ।

ਮਨੁ ਸੋਇਆ ਮਾਇਆ ਬਿਸਮਾਦਿ॥
ਗਉੜੀ ਗੁਆਰੇਰੀ ਮਹਲਾ 5,ਅੰਕ 182

ਹਉਮੈ ਵਿਚ ਦੂਸਰਾ ਭਾਵ ਜਾਗ ਪੈਂਦਾ ।ਆਪਣੇ ਤੇ ਦੂਜੇ ਵਿਚ ਵੱਖਰਤਾ ਨਜ਼ਰ ਆਉਂਣ ਲਗ ਜਾਂਦੀ ਹੈ ।ਆਪਣੇ ਤੇ ਵਗਾਨੇ ਦੇ ਭਾਵ ਪੈਦਾ ਸ਼ੁਰੂ ਹੋ ਜਾਂਦੇ ਹਨ ਤੇ ਚਾਰੋਂ ਪਾਸੇ ਵੱਖਰੇਵਾਂ ਨਜ਼ਰ ਆਉਂਣ ਲੱਗਦਾ ਹੈ।ਹੁਣ ਕੂੜ ਦੀ ਪਾਲ ਪੱਕੀ ਹੋਣੀ ਸ਼ੁਰੂ ਹੋ ਜਾਂਦੀ ਹੈ।

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਇਸ ਪ੍ਰਸ਼ਨ ਦਾ ਹਲ ਜੁਪ ਜੀ ਬਾਣੀ ਰਾਹੀਂ ਦ੍ਰਿਸ਼ਾਉਂਦੇ ਹਨ।

ਪ੍ਰਸ਼ਨ? ਕਿਵ ਸਚਿਆਰਾ ਹੋਈਐ ਕਿਵ ਕੂੜੈ ਤੁਟੈ ਪਾਲਿ॥
ਉੱਤਰ ਹੁਕਮਿ ਰਜਾਈ ਚਲਣਾ ਨਾਨਕ ਲਿਖਿਆ ਨਾਲਿ ॥
ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੁਪ ਜੀ, ਪਾਉੜੀ ਪਹਿਲੀ, ਅੰਕ 1

ਮਨੁੱਖ ਅੰਦਰਲੀ ਚੇਤਨਾ ਅਨੁਭਵ ਦੀ ਜ਼ਮੀਰ ਹੈ, ਪਰ ਇਹ ਸਹਿਜੇ ਧਿਆਨ ਵਿਚ ਨਹੀਂ ਆਉਂਦੀ।ਜਿਵੇਂ-ਜਿਵੇਂ ਧਿਆਨ ਇੱਕਾਗਰ ਹੁੰਦਾ ਜਾਂਦਾ ਸੁਭਾਵ ਸਹਿਜਤਾ ਤੇ ਗੰਭੀਰਤਾ ਧਾਰਣ ਕਰ ਲੈਂਦਾ ਹੈ।

ਲਿਵ ਦਾ ਮਾਰਗ

ਲਿਵ ਦਾ ਮਾਰਗ ਗੁਰੂ ਕਿਰਪਾ ਨਾਲ ਪ੍ਰਾਪਤ ਹੁੰਦਾ ਹੈ।
ਗੁਰ ਪਰਸਾਦਿ ਰਹੈ ਲਿਵ ਲਾਇ॥
ਆਸਾ ਮਹਲਾ 1, ਅੰਕ 352

ਜਦੋਂ ਧਿਆਨ ਸਾਧਕ ਚੇਤਨਾ ਇਕਸੁਰ ਹੋ ਜਾਂਦੀ ਤਾਂ ਇਸੁਰਤਾ ਰਸਿਕ ਬਣ ਜਾਂਦੀ ਹੈ।ਅਜਿਹੀ ਅਵਸਥਾ ਨੂੰ ਲਿਵ ਕਿਹਾ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਲਿਵ ਸੁਰਤ ਸ਼ਬਦ ਨਾਲ ਜੁੜ ਜਾਂਦੀ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਅਨੁਸਾਰ ਇਹ ਅਵਸਥਾ ਹਰ ਸਮੇਂ ਬਣੀ ਰਹਿੰਦੀ ਹੈ।ਇਸ ਅਵਸਥਾ ਵਿਚ ਵਿਚਰਨ ਵਾਲੇ ਨੂੰ ਗੁਰਮੁੱਖ ਕਿਹਾ ਜਾਂਦਾ ਹੈ।

ਗੁਰਮੁਖਿ ਜਾਗਿ ਰਹੇ ਦਿਨ ਰਾਤੀ।
ਸਾਚੇ ਕੀ ਲਿਵ ਗੁਰਮਤਿ ਜਾਤੀ॥
ਮਾਰੂ ਮਹਲਾ 1, ਅੰਕ 1024

ਮਾਇਆ ਮਨੁੱਖੀ ਚੇਤਨਾ ਨੂੰ ਧਾਤ ਦੇ ਮਾਰਗ ਤੇ ਚੱਲਦੀ ਹੋਈ ਇਹ ਅਹਿਸਾਸ ਤਾਂ ਦਿੰਦੀ ਹੈ ਕਿ ਇਸ ਸਰੀਰ ਅੰਦਰ ਬ੍ਰਹਮੰਡੀ ਚੇਤਨਾ ਹੈ ਪਰ ਉਸ ਨਾਲ ਮਿਲਾਪ ਦਾ ਰਾਹ ਨਹੀਂ ਦੱਸ ਦੀ ।ਉਸ ਨਾਲ ਮਿਲਾਪ ਦੀ ਸਮਝ ਭਾਵ ਕੂੜ ਦੀ ਪਾਲ ਤੋਂ ਮੁਕਤੀ ਤੇ ਸਚਿਆਰ ਦੀ ਪ੍ਰਾਪਤੀ ਨੂੰ ਗੁਰੂ ਦੀ ਕ੍ਰਿਪਾ, ਗੁਰਪ੍ਰਸ਼ਾਦ ਰਾਹੀਂ ਹੁਕਮ ਦੀ ਪਛਾਣ ਨਾਲ ਹੀ ਹੋਣੀ ਹੈ।ਇਹ ਸਮਝ ਲਿਵ ਦੇ ਮਾਰਗ ਵਾਲੇ ਨੂੰ ਹੀ ਆਉਦੀ ਹੈ।ਇਹ ਜਾਗ੍ਰਿਤ ਆਵਸਥਾ ਹੈ ਇਸ ਦੀ ਸਮਝ ਗੁਰੁ ਦੀ ਸ਼ਰਣ ਵਿਚ ਹੀ ਅਉਂਦੀ ਹੈ। ਅਜਿਹੀ ਸਥਿਤੀ ਦਾ ਵਰਣਨ ਭਗਤ ਕਬੀਰ ਜੀ ਅਨੁਸਾਰ ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਹੈ।

ਬੰਦੇ ਖੋਜੁ ਦਿਲ ਹਰ ਰੋਜ ਨਾ ਫਿਰੁ ਪਰੇਸਾਨੀ ਮਾਹਿ॥
ਭਗਤ ਕਬੀਰ ਜੀ, ਅੰਕ 727

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਅਨੁਸਾਰ ਮਨੁੱਖੀ ਚੇਤਨਾ ਨੂੰ ਜੀਵਨ ਵਿਚ ਦੋ ਰਾਹ ਪ੍ਰਾਪਤ ਹਨ ਲਿਵ ਤੇ ਧਾਤ, ਇਨ੍ਹਾਂ ਦੋਨਾਂ ਮਾਰਗਾ ਦਾ ਕਰਤਾ ਇਕੋ ਪਰਮ ਸੱਤਾ ਹੈ।

ਰਾਹ ਦੋਵੈ ਖਸਮੁ ਏਕੋ ਜਾਣੁ॥
ਗਉੜੀ ਮਹਲਾ 1, ਅੰਕ 223

ਦੋਨੋਂ ਮਾਰਗ ਭਾਵੇ ਪਰਮ ਸੱ ਤਾ ਦੇ ਬਣਾਏ ਹੋਏ ਹਨ, ਗੁਰਮਤਿ ਮੁਨੁੱਖੀ ਚਿੰਤਨ ਨੂੰ ਸੁਚੇਤ ਕਰਦੀ ਹੈ। ਚੇਤਨ ਮਨ ਧਾਤ ਦੇ ਰਾਹ ਚਲਉਣ ਲਏ ਕਾਲ ਨੇ ਆਪਣੇ ਪੰਜ ਦੂਤ ਭੇਜੇ ਹੋਏ ਹਨ। ਇਹ ਪੰਜੇ ਸਮੇਂ-ਸਮੇਂ ਗਿਆਨ ਇੰਦਰੀਆਂ (ਅੱਖ,ਕੰਨ,ਜੀਭ,ਨੱਕ,ਤਵਚਾ) ਤੇ ਕਰਮ ਇੰਦਰੀਆਂ (ਹੱਥ,ਪੈਰ,ਬਾਣੀ ਯੰਤਰ,ਲਿੰਗ,ਗੁਦਾ) ਤੁਹਾਡੀ ਚੇਤਨਾ ਨੂੰ ਧਾਤ ਮਾਰਗ ਵੱਲ ਆਕ੍ਰਸ਼ਿਤ ਕਰਨ ਗਿਆਂ। ਭਗਤ ਕਬੀਰ ਗੀ ਸੁਚੇਤ ਕਰਦੇ ਹਨ ਕਿ ਇਨ੍ਹਾਂ ਦਾ ਵਿਸ਼ਵਾਸ ਨ ਕਰੀਂ ।ਕਾਲ ਦੀ ਸਰਕਾਰ ਦੇ ਦੂਤ ਕਿਸੇ ਨ ਕਿਸੇ ਵਿਕਾਰ ਰਾਹੀਂ ਆਪਣੇ ਵੱਲ ਪ੍ਰਭਾਵਿਤ ਕਰ ਲੈਂਣਾ ਹੈ।

ਪੰਚ ਪਹਰੂਆ ਦਰ ਮਹਿ ਰਹਤੇ ਤਿਸ ਕਾ ਨਹੀ ਪਤੀਆਰਾ॥
ਚੇਤਿ ਸੁਚੇਤ ਚਿਤ ਹੋਇ ਰਹੁ ਤਉ ਲੈ ਪਰਗਾਸੁ ਉਜਾਰਾ॥
ਨਉ ਘਰ ਦੇਖਿ ਜੁ ਕਾਮਨਿ ਭੂਲੀ ਬਸਤੁ ਅਨੂਪਿ ਨ ਪਾਈ॥
ਕਹਤੁ ਕਬੀਰ ਨਵੈ ਘਰ ਮੂਸੇ ਦਸਵੈਂ ਤੱਤ ਸਮਾਈ॥
ਗਉੜੀ ਕਬੀਰ ਜੀਉ, ਅੰਕ 333

ਲਿਵਲੀਨਤਾ ਦਾ ਮਾਰਗ ਗੁਰੁ-ਕੇਂਦ੍ਰਿਤ ਹੈ।ਇਸ ਦਾ ਸੰਬੰਧ ਬ੍ਰਹਿਮੰਡੀ ਚੇਤਨਾ ਨਾਲ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਅਨੁਸਾਰ ਇਹ ਕੁਦਰਤ ਦੇ ਜ਼ਰੇ-ਜ਼ਰੇ ਵਿਚ ਬੇਅੰਤ ਇਕਸਾਰ ਵਸ ਰਿਹੀ ਹੈ।

ਬਲਿਹਾਰੀ ਕੁਦਰਤਿ ਵਸਿਆ॥
ਤੇਰਾ ਅੰਤੁ ਨ ਜਾਈ ਲਖਿਆ॥
ਸਲੋਕੁ ਮਹਲਾ 1,ਅੰਕ469

ਅਜਿਹੀ ਬ੍ਰਹਿਮੰਡੀ ਚੇਤਨਾ ਤੋਂ ਬਲਿਹਾਰ ਜਾਣ ਨੂੰ ਜੀਅ ਕਰਦਾ ਹੈ।ਇਹ ਚੇਤਨ ਮਨ ਨਿਜੀ ਜੀਵਨ ਤੇ ਸਮਾਜ ਪ੍ਰਤੀ ਆਪਣੀਆਂ ਜਿਮੇਂਵਾਰੀਆਂ ਤਾ ਨਿਭਉਦਾ ਪਰ ਉਸ ਵਿਚ ਖਪਤ ਨਹੀ ਹੁੰਦਾ।ਆਪਣੀਆਂ ਜਿਮੇਂਵਾਰੀਆਂ ਤੋਂ ਭੱਜਣ ਦੀ ਥਾਂ ਇਨ੍ਹਾਂ ਨੂੰ ਨਿਭਾਉਦਿਆ

ਸੰਜਮ ਬਣਾਈ ਰੱਖਦਾ ਹੈ।ਸਿਦਕ ਤੇ ਸਾਧਨਾ ਦੀ ਕਮਾਈ ਨਾਲ ਚੇਤਨ ਮਨ ਸਰੀਰ ਵਿਚ ਠਹਿਰਣ ਲੱਗ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਹੁਣ ਮਨੋਬਲ ਸ਼ਕਤੀਵਰ ਹੋਣ ਲੱਗ ਪੈਂਦਾ ਹੈ। ਚੇਤਨਤਾ ਆਪਣੇ ਆਪ ਨੂੰ ਰਾਜਾ ਮਹਿਸੂਸ ਕਰਦੀ ਹੋਈ ਨਿਰਭਉ ਤੇ ਨਿਰਵੈਰ ਅਵਸਥਾ ਵਿਚ ਵਿਚਰ ਦੀ ਹੈ।ਇਸ ਦਾ ਵਰਨਣ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਕਰਦੇ ਹਨ।

ਮਨੁ ਰਾਜਾ ਮਨੁ ਮਨ ਤੇ ਮਾਨਿਆ ਮਨਸਾ ਮਨਹਿ ਸਮਾਈ॥
ਭੈਰਉ ਮਹਲਾ 1,ਅੰਕ 1125

ਧਾਤ ਮਾਰਗੀ ਆਸਾ-ਮਨਸਾ ਹੁਣ ਸਥਿਰ ਹੋ ਗਈਆਂ, ਚੇਤਨਾ ਸੰਤੋਖਵਾਨ ਹੋ ਗਈ। ਸੰਤੋਖਵਾਨ ਦਾ ਅੰਦਰ ਰੱਜਿਆ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਉਸ ਅੰਦਰ ਕੋਈ ਕਾਮਨਾ ਨਹੀਂ ਪੈਦਾ ਹੁੰਦੀ। ਗੁਰੁ ਅਮਰ ਦਾਸ ਵਰਣਨ ਕਰਦੇ ਹਨ।

ਅਦੰਰੁ ਤ੍ਰਿਪਤਿ ਸੰਤੋਖਿਆ ਉਤਰੈ ਮਨ ਕੀ ਭੁੱਖ॥
ਵਾਰ ਸੋਰਿਠ ਮਹਲਾ 3, ਅੰਕ 649

ਚੇਤਨਾ ਟਿਕਾਓ ਵਿਚ ਰਹਿਣ ਕਰਕੇ ਦਿਲ ਮਜਬੂਤ ਹੋ ਜਾਂਦਾ ਹੈ।ਮਨ ਹਰ ਬੱਡੀ ਤੋਂ ਬੱਡੀ ਮੁਸੀਬਤ ਨਾਲ ਸ਼ੰਘਰਸ ਕਰਨ ਲਈ ਤਿਆਰ-ਬਰ-ਤਿਆਰ ਰਹਿੰਦਾ ਹੈ।ਸਹਿਜ ਗਿਆਨ ਨਾਲ ਚੇਤਨ ਮਨ ਇੰਦਰਿਆਵੀ ਤ੍ਰਿਸ਼ਨਾਵਾਂ ਤੇ ਵਾਸਨਾਤਮਕ ਆਕ੍ਰਸ਼ਣ ਤੋਂ ਮੁਕਤ ਹੋ ਜਾਂਦਾ ਹੈ।ਚੇਤਨਾ ਰੁਹਾਨੀ ਅਵਸਥਾ ਵਿਚ ਵਿਚਰਨ ਕਰਕੇ ਆਨੰਦ ਮਈ ਵਿਚਰ ਰਹੀ ਹੈ।ਇਹ ਆਨੰਦ ਜਾਗਦਿਆਂ ਤੇ ਸੁਤਿਆਂ ਬਣਿਆ ਰਹਿੰਦਾ ਹੈ।

विश्व शांति के अग्रदूत : गुरु नानक

* डॉ. आलोक रंजन पाण्डेय

* रामानुजन कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

"World Peace begins with inner peace....."

Dalai Lama

साहित्यिक गलियारे गवाह हैं कि शांति के अग्रदत हिंसकों के महलों में गुलामी नहीं किया करते...। 'विश्व शांति' की संकल्पना (Concept) के जन्म के साथ ही इसके प्रतिपक्ष का भी निर्माण हो चुका था। वैश्विक इतिहास टटोलकर देख लीजिए। यह फ्रेडरिक नीत्शे [Friedrich Nietzsche] (1844-1900) तथा विल्फ्रेडो पैरेटो [Vilfredo Pareto] (1848-1923) जैसी 'विभूतियों' (व्यंग्य) से अटा पड़ा है।

वैसे ... ज्ञान–गंगा से आप्लावित कोई भी मनीषी इन 'विभूतियों' (व्यंग्य) के तआरूफ़ का मोहताज़ नहीं है। "God is dead" के जुमले से प्रकाश में आया वह जर्मन दार्शनिक, जहाँ युद्ध को महिमामंडित करने का पक्षधर था वहीं दूसरी तरफ इसका समकालीन विल्फ्रेड पैरेटो 'ताकत के हिंसक इस्तेमाल' का घोर पक्षधर! परिणामतः इतिहास फासीवाद, जाजीवाद की पौढ़ियों पर चढ़कर अंततः विश्व युद्ध (World War) की प्रचंड विभीषिका अपनी सहमी आँखों से देखता है।

एक आण्विक हमले मात्र से मौत ताण्ड्व करती हुई आती है और स्थान (हिरोशिमा तथा नागासाकी) से 95 प्रतिशत मूल निवासियों को अपने आगोश में समेट ले जाती है। एदिता मॉरिस (Edita Morris) का उपन्यास 'हिरोशिमा के फूल' (The Flowers of Hiroshima) इसका जीवट साहित्यिक दस्तावेज़ है।

भारतीय संविधान हमारा श्रेष्ठ विधि दस्तावेज़ है। इसके उल्लेखानुसार हमें मौलिक अधिकारों के तहत 'समानता का अधिकार' (अनु. 14 से 18 तक) तो उपलब्ध करा दिया गया किंतु खेद इस बात का रहा कि वर्तमान समय में भी 'अनुच्छेद–15' (धर्म, वंश, जाति, लिंग और जन्मस्थान के आधार पर भेदभाव रहित समाज) तथा अनुच्छेद–17 (अस्पृश्यता का अंत) अंशतः निष्प्रभावी ही अधिक नज़र आते हैं।

ऐसे में आवश्यकता इस बात की उठी कि समाज सुधार हेतु एवं विश्व–शांति के लिए उन समस्त संत मनीषियों एवं व्यक्तित्वों का स्मरण किया जाए जो विश्व शांति के अग्रदूत रहे हो। ''मैं'' साहित्यिक चिंतन के मोह से बंधा होने के कारण इस बात को कहने से कदापि गुरेज़ नहीं करता कि भारतभूमि इस प्रकार के आदर्शों से प्रत्येक युग एवं काल में परिपूरित रही है। संत गुरु नानक देव इस रूप में सिरमौर हैं।

भारतीय इतिहास में तैमूरी राजवंश के संस्थापक तैमूरलंग (1336–1405) द्वारा किए गए हिंदुओं के जनसंहार से साधारण जनता के हृदय पर भय चस्पा हो गया था। इस माहौल को देखकर संत शिरोमणि रामानंद (1410 ई.) के समस्त शिष्यों एवं विभिन्न वर्गीय योगियों ने ''संसार त्याग'' की भावना को प्रमुखता दी। तत्पश्चात्; लोदी वंश के द्वितीय शासक सिकंदर लोदी (1489–1517) जैसे धर्मांध शासक ने जीवन के अंतिम वर्षों तक सिखों पर क्रूरता बरपाने का प्रयास किया। इन परिस्थितियों से आहत होकर गुरु नानक देव कहते हैं –

''कलि काती राजे कासाई
धरम पंख करि उडरिया।
कूडु अमावस सचु, चन्द्रमा
दीसै नाहीं कह चड़िआ।।''

अर्थात्; कलियुग एक छुरी के समान है जहाँ शासक बूचड़ बनचुके हैं। धर्म पंख लगाकर उड़ गया है। झूठ–असत्य की भयानक काली रात का अखंड शासन जग चुका है और सत्य का चंद्रमा कहीं भी उदय होता दिखाई नहीं देता।

गुरु नानक देव द्वारा विश्व शांति की स्थापना हेत समाज के दमित वर्ग के उद्धार हेतु जीवट प्रयास किए गए – ''स्त्रियों का उद्धार'' इनमें प्रमुख था। यह प्रमुख कारण भी था कि सय्यदपुर में मुसलमान स्त्रियों के साथ किए गए दुर्व्यवहार का वह प्रखर विरोध करते नज़र आते हैं। जिसे स्वामी दयानन्द ने विश्व प्रसिद्ध कृति ''सत्यार्थ प्रकाश'' में इस रूप में बानगी प्रदान की – ''यह सच है कि जिस समय नानक जी पंजाब में हुए थे, उस समय पंजाब संस्कृत विद्या से सर्वथा रहित, मुसलमानों से पीड़ित था। उस समय उन्होंने लोगों को बचाया।'' – (सत्याथ प्रकाश, हिंदी संस्करण, पृ. 378)

परिणामस्वरूप; शीघ्र ही गुरु नानक देव समस्त उत्तरी भारत के लोकप्रिय नेता के रूप में उभरकर सामने आते हैं।

गुरु नानक देव प्रेम के महात्मय पर विशेष ज़ोर देकर कहते हैं –

'जउ तउ प्रेम खेलण का चाऊ।
सिरू धरि तली गली मेरी आउ।।''

– (आदि ग्रन्थ, पृ. 1412)

अर्थात्; यदि तुम सचमुच प्रेम का खेल खेलना चाहते हो, तो सर हथेली पर रख कर आओ, तभी तुम मेरे सत्य

के रास्ते पर पग बढ़ा सकते हो। एक अष्टपदी (राग गौड़ी, पृ. 223) में गुरु नानक देव कहते हैं –

''राह दोवै खसमु एको जाणु।''

अर्थात्; पथ बेसक दो हों किंतु ईश्वर तो एक ही हैं।

मि. हाल्ड वीरम वोल्टर अपनी पुस्तक ''सिखिज़्म लिविंग स्कूल्ज़ ऑफ रिलीजन'' में लिखते हैं – ''गुरु नानक ने कठोर साम्प्रदायिकता और जातिगत अलगाव का घोर विरोध किया।'' वह निम्न तथा दलित–वर्ग से अपना संपर्क बनाए रखने में गर्व अनुभव करते रहे –

''नीचा अन्तरि नीच जाति, नीचीहू अति नीचु
नानकु तिनकै संगि साथि, वडिआ सिउ किआ रोस।''

– (श्री राग, पृ. 15)

अर्थात्; नीच जाति के लोगों को मैं सबसे नीच हूँ, नीचतम से भी नीच हूँ। नानक ऐसे लोगों में और उनके संग हैं। ऊँचे लोगों के साथ कोई संबंध या उनके साथ कोई तुलना नहीं है।

गुरु नानक देव ने विश्व–शांति की प्राप्ति हेतु पथ की बाधा (सामाजिक विषमता) का पुरज़ोर खण्डन किया–

''भ्रम का संगलु तोड़ि निराला,
हरि अन्तरि हरि रसु पाइआ।''

अर्थात्; भ्रम तथा अन्धविश्वासों की कड़ियाँ निराले ढंग से तोड़ दी गई हैं – यह ज्ञान प्राप्त करें कि ईश्वर तो सर्वदा ह्रदय में स्थित हैं। वह पुनः कहते हैं – ''नानक उत्तमु नीचु न कोइ।'' – (जपुजी साहब, पद 33) (नानक कहते हैं कि सभी उत्तम हैं, यहाँ नीच तो कोई है ही नहीं)

'मोक्ष' की लालसा प्रायः आधुनिक मानव के मोह का विषय बनी हुई है। वह बिना कर्म के ही इसे प्राप्त कर लेना चाहता है।

वर्तमान युग की कई घटनाएँ (मोक्ष हेतु अंधविश्वासाधारित मृत्यु की आकांक्षा)

मोक्ष का वास्तविक स्वरूप खण्डित करती नज़र आती है। गुरु नानक देव कहते है। यदि व्यक्ति ईश्वर के नाम का जाप करे तो मोक्ष की प्राप्ति होती है –

''मुक्ति महासुख गुर सबदु बीचारि।''

– (आदि ग्रंथ, 942)

स्मरण रहे... जपुजी के चौदहवें पद में वह स्पष्ट शब्दों में कहते हैं – ''बुद्धिमान व्यक्ति कभी भी साम्प्रदायिकता के घेरे में नहीं बंधता क्योंकि उसका सच्चा संबंध धर्म के साथ है।''

अपनी एक अन्य रचना में नानक लिखते हैं – ''जेते जिआ तेते बाटानु'' अर्थात्; संसार में जितने जीव हैं उतने ही पंक्षी हैं। किंतु मनुष्य केवल आत्म संयम और अपने मन पर विजय पाने से ही विजयी हो सकता है– ''मनि जीते जगु जीतु''

समतुल्यता : इस लोकोक्ति में दर्शनीय है –

''मन के हारे–हार है,
मन के जीते–जीत।''

सांस्कृतिक ऐक्य की धरा पर गुरु नानक देव के प्रयासों का समस्त विश्व साक्षी रहा है।

जान मैलकॉम (John Malcolm) को अपनी पुस्तक ''स्कैच ऑफ दी सिख्ज़'' (Sketch of the Sikhs) में लिखना पड़ा – ''ब्रह्म तथा मुहम्मद के एकदम प्रतिकूल विश्वासों में समत्व स्थापित करने की महान् तथा उपकारक भावना से प्रेरित होकर नानक ने हिंदुओं तथा मुसलमानों को अपने सिद्धांतों के झण्डे तले एकत्र करने का प्रयास किया। इस प्रयास में उन्होंने दोनों पक्षों को अपने–अपने विश्वासों तथा रिवाजों के उन अंशों को त्यागने के लिए प्रेरित किया जिन्हें वह उनके पूज्य ईश्वरों के प्रति अशोभनीय समझते थे।''

आजकल जिस 'Secularism' (धर्मनिरपेक्षता) की चर्चा ज़ोरों पर है। उसे गुरु नानक देव पूर्णतः अपनी कृतियों पर चस्पा करते नज़र आते हैं। उनका दृष्टिकोण इतना उदार था कि उन्होंने अपनी रचनाओं में ईश्वर के इस्लामी संबोधनों का खुला प्रयोग किया। यथा –

''अलाहु, अलखु, अंगम, कादरू, करणहारू, करीमु।
सम दुनी आवण–जावणी, मुकामु एकु रहीमु।।''

– (आदिग्रंथ, पृ. 142)

अर्थात्; मुक्ति उसे प्राप्त होती है जो नाम का जाप करता है।

रामानंद (1410 ई.) तथा उनकी शिष्य परंपरा द्वारा जिस 'परलोक वृत्ति' तथा अन्य संतों द्वारा सन्यास वृत्ति का समर्थन किया गया। गुरु नानक देव इससे सहमत नज़र नहीं आते। वह कहते हैं –

पारिवारिक जीवन के निर्वाह सहित मुक्ति प्राप्ति की जा सकती है –

''गृहु बनु समसरि सहति सुभाइ।''

'शांति के दूत' गुरु नानक देव घोर नास्तिक 'फ्रेडरिक नीत्शे' (Friedrich Nietzsche) कवित 'सुपर ह्यूमन' (Super Human) की अपेक्षा ''गुरमुख आदर्श–पुरुष'' का आदर्श विश्व के सम्मुख प्रस्तुत करते हैं –

'सुख–दुखु जिह परसे नहीं लोभ, मोह, अभिमानु।
कहु नानक सुन रे मना, सो मूरत भगवान।।''

अतः वर्तमान समय में वैश्विक शांति सूचकांक (Global Peace Index 2019-GPI) द्वारा संसार के 163 देशों की सूची में भारत को प्रदान किया गया 141वॉं स्थान, अमुक संक्रमित मुद्दों की तरफ भारत का ध्यान खींच रहा है –

– सामाजिक सुरक्षा।
– आंतरिक एवं बाह्य सुरक्षा।
– राजनीतिक त्रासदी।

इसके समाधान स्वरूप 'विश्व–शांति के अग्रदूत' गुरु नानक देव नवीन सेतू की सर्जना करते नज़र आते हैं –

''फूटो आंडा भरम का मनहिं अइओ परगासु।
काटी वेरी पगह ते, गुरि कीनी बंदि खलासु।''''

– (आदि ग्रंथ)

(अर्थात्; भ्रम का अण्डा फूट गया है। मन में प्रकाश व्याप्त हो गया है। गुरु ने पांव की बेड़ियाँ काट दी हैं और मन समस्त बंधनों से मुक्त हो चला है।)

निःसंदेह, विश्व शांति के आदर्शों में गुरु नानक देव का स्थान श्रेष्ठ पद का अधिकारी है...।

संत साहित्य में सत श्री अकाल पुरुष नानक देव का जीवन–दर्शन

*रमेश चन्द सैनी

* पीएचडी–शोधार्थी (हिन्दी विभाग), कोटा वि.वि. कोटा (राजस्थान)

सरांश– भारतीय सनातन संस्कृति में गुरू का महत्व अनादिकाल से ही परमात्म तुल्य रहा हैं लोकमंगल विधायी सत्पुरूषों का विधान मानव जीवन को गुण–धर्म, ज्ञान–विवेक आत्मचिंतन से पुष्ट करना रहा है। महात्मा कबीर की अभिष्ट श्रेणी के संत 'गुरू नानक देव' संत साहित्य की प्रवाहमान आलौकित धारा के देदीप्यमान 'नक्षत्र' है। जिनकी लोकमंगलकारी साधना में सूफियों की प्रेम–साधना, कबीर के एकेश्वरवाद एवम् भारतीय सनातन धर्म संस्कृति की भावना 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की अद्भूत वित्रेणी का संगम हुआ है। जो व्यवहार की सहृदयता, हृदय की विशाल भावनाओं से समुन्नत हुयी है। इनके भावुक और कोमल हृदय ने प्रकृति से एकात्मक होकर जो अभिव्यक्ति की है। व निराली है, अलौकिक है, अतुलनीय है। इनकी 'वाणी' बहता नीर है, जिसमें कबीर की वाणी सी अद्भूत महक है। संत साहित्य में नानक देव एकमात्र चमकते सितारे है, जो मानवता की साक्षात् प्रतिमूर्ति है।

भारत भूमि विभिन्न धर्म–सम्प्रदायों की भूमि रही है। इस उदार भूमी ने सभी धर्म के लोगों को अपनी उपासना–पद्धति और स्वतंत्र रूप से अनुष्ठान करने का अधिकार दिया है। शायद ही विश्व का कोई देश हो, जहाँ भारत जैसी धार्मिक विभिन्नताएँ और उनका पालन करने की पूर्ण स्वतंत्रता हो। इसी भारत भूमि ने मानव जीवन का जो अंतिम लक्ष्य स्वीकार किया है, वह है परम सत्ता या संपूर्ण चेतन सत्ता के साथ तादात्म्य स्थापित करना। यही वह सार्वभौम तत्व है, जो मानव समुदाय को ही नहीं अपितु समस्त प्राणी जगत को एकता के सूत्र में बांधे हुए है। इसी सूत्र को अपने अनुयायियों में प्रभावी ढ़ंग से सम्प्रेषित करते हुए ''सिख'' समुदाय के प्रथम धर्म गुरू नानक देव ने मानवता का पाठ पढ़ाया।

नानक देव का धर्म और आध्यात्म लौकिक तथा पारलौकिक सुख–समृद्धि के लिए श्रम, शक्ति एवं मनोयोग के सम्यक नियोजन की प्रेरणा देता है। आपका न केवल बाहरी व्यक्तित्व बल्कि आंतरिक व्यक्तित्व भी विलक्षण एवं अलोकिक है। वे भारत देश के ऐसे ''क्रांतद्रष्टा'' धर्मगुरू है, जिन्होने देश की नैतिक आत्मा को जागृत करने का भागीरथ प्रयत्न किया। सामाजिक कुरूढ़ियों को बदलने के लिए किये गए उनके सत्प्रयन्त सदैव स्मरण किये जायेगें। समाज के साथ उन्होंने राष्ट्र की भावात्मक एकता को सुदृढ़ करने के लिए अनेक उल्लेखनीय प्रयत्न किये। उन्होने जड़ उपासना एवं अंध क्रियाकाण्ड तक सीमित मृत प्रायः धर्म को जीवित और जागृत करके धर्म के शुद्ध मौलिक और वास्तविक स्वरूप को प्रकट करने में अपनी पूरी शक्ति लगाई। धर्म के बंद दरवाजों और खिड़कियों को खोलकर उसमें ताजगी और प्रकाश भरने का दुःसाध्यकार्य किया। आधुनिक धर्म के नये और क्रान्तिकारी स्वरूप को प्रकट करने का श्रेय गुरू नानक देवजी को जाता है। गुरूनानक का आगमन ऐसे युग में हुआ जो इस देश के इतिहास में सबसे अंधेरे युगों में से एक रहा है।

दीपावली के एक पखवाड़े पश्चात कार्तिक पूर्णिमा को जन्में गुरू नानक देव सर्वधर्म सद्भाव की प्रेरक मिशाल है। वे अपने व्यक्तित्व में दार्शनिक, योगी, समाज सुधारक, धर्म–सुधारक, गृहस्थ, कवि, देशभक्त, एवं विश्वबंधु आदि सभी गुणों को समेटे हुए है। नानक देव प्रखर एवं विलक्षण बुद्धि के संत है। सांसारिक विषयों के प्रति विरक्ति और उदासीनता बाल्यकाल से ही परिलक्षित होने लगी थी। भारत वर्ष में कार्तिक–पूर्णिमा का महापर्व ''दीपावली'' ही सिखों का प्रकाश पर्व कहलाता है। इस पर्व को सिख समुदाय बेहद हर्षोल्लास और श्रद्धा के साथ मनाता है। गुरूद्वारों में शब्द–कीर्तन, लंगरो और गुरूवाणी के पवित्र उपदेश, नगर–कीर्तन एवं सेवा भाव ही गुरू पर्वो की मानवीय पहचान है। त्योहार के रूप में नानक जयंती को भव्य तरीके से मनाया जाता है। तीन दिवस तक अनवरत सिखों के पवित्र ग्रंथ ''गुरूग्रंथ साहिब'' का अखण्ड पाठ किया जाता है। जिसमें नगर कीर्तन, शोभायात्रा, पाँच सशस्त्र गार्डो, जो 'पंच प्यारों' का प्रतिनिधित्व करते हुए अगुवाई करते हैं।

नानक देव समन्वयशील एवं उदार प्रवृत्ति के संत थे। उन्होनें आचरण की शुद्धता बाह्यडम्बरों का खण्डन, सामाजिक विसंगतियों, धार्मिक विडम्बनाओं, रूढ़िगत विचारों एवं अंधविश्वासों का खण्डन करते हुए मनुष्यत्व की भावना को आगे करके जनता में आत्म गौरव का भाव जगाया। उनके समय धर्म की दीवार 'थोथी' रस्मों और रीति–रिवाजों की नींव पर टिकी हुयी थी।

उत्तरी भारत में यह कुशासन और अफरा–तफरी का समय था। सामाजिक जीवन में भारी भ्रष्टाचार था। धार्मिक क्षेत्र में द्वेष और पाखण्ड का बोलबाला था। न केवल हिन्दू–मुस्लिमों में वरन् दोनों धर्मो के सम्प्रदायों में कट्टरता, बैर–विरोध तथा वैमनस्यता की भावना पैदा हो चुकी थी। ब्राह्मणवाद ने अपना एकाधिकार बना रखा था।

गैर ब्राह्मण को वेद शास्त्राध्यापन और उच्च शिक्षा से वंचित रखा जाता था निम्न जाति के लोगों को इसका ज्ञान प्राप्त करना वर्जित था। इस उँच–नीच भेद–भाव, प्रेम–द्वेष, और पाखण्ड से भरे समाज की आन्तरिक दशा ने नानकदेव के हृदय को हतोत्साहित कर दिया उन्होनें समाज में एक नयी चेतना का संचार किया और आत्म गौरव का भाव जगाया वे कहते है–

''नीचा अंदर नीच जात, नीची हूँ अति नीच।
नानक तिन के संगी साथ, वडियां सिऊ कियांकीस।।

समाज में समानता, एकता, सद्भावना, प्रेम और सहयोग का पाठ पढ़ाते हुए गुरू नानक ने मानव जाति में भेद–भाव न करने का उपदेश दिया। सम्पूर्ण मानवता ईश्वरीय अंश और कर्म–बंधन के महत्व को बताकर ''एक पिता एकस के हम वारिक'' का रहस्य समझाया एवं समाज में ईश्वर के प्रजापालक होने का बोध कराया। यथा

''नानक जंत उपाइके, संभाले सभनाह।
जिन करते करना कीआ, चिंताभिकरणी ताहर।।''

गुरू नानक का धर्म जड़ नहीं, सतत जागृति और चैतन्य की अभिक्रिया है। जागृत चेतना, चेतना का निर्मल प्रवाह है। उनकी शिक्षाएं एवं उपदेश अनंत ऊर्जा के स्त्रोंत है। शोषण, अन्याय, अलगाव और संवेदन शून्यता पर टिकी आज की समाज व्यवस्था को बदलने वाला शक्ति स्त्रोत वहीं है। धर्म के धनात्मक एवं गतिशील तत्व ही सभी धर्म क्रांतियों के नाभि केन्द्र रहे है। वे ही व्यक्ति और समाज के समन्वित विकास की रीढ़ है। ये व्यक्ति के शरीर, मन, प्राण और चेतना को प्रभावित करते है। व्यक्ति का स्वस्थ तन, स्वस्थ मन, और स्वस्थ जीवन ही स्वस्थ समाज की आधारशीला है। गुरू नानक देव ने इसी स्वस्थ जीवन–पद्धति एवं धर्म का निरूपण किया। यथा –

''एक ओंकार सतिनाम, करता पुरखु निरभव।
निरबैर, अकाल मूरती, अजूती, सैभं गुर प्रसादी।।''

महान पवित्र आत्मा गुरू नानक देव ईश्वर के सच्चे प्रतिनिधि थे। जिन्होने पवित्र ''गुरूग्रंथ'' नामक ग्रंथ की रचना की। यह ग्रंथ पंजाबी भाषा और गुरूमुखी 'लिपि' में है। इस ग्रंथ में कबीर, रैदास, व मलूकदास जैसे भक्त कवियों की वाणियाँ सम्मिलित है। दीर्घ समय का आध्यात्मिक पावन सादगीपूर्ण जीवन यापन करने के पश्चात् नानक देव अमरत्व को प्राप्त हुए। परन्तु उनके अमृत्वप्राप्ति के पश्चात् भी उनकी शिक्षा और उपदेश अमरवाणी बनकर हमारे बीच उपलब्ध है। जो मानव समाज का निरंतर पथ प्रदर्शक बना हुआ है। उनकी शिक्षा हमें जीवन के उच्च आदर्शों हेतु प्रेरित करती है। वे कहते है की बाह्रय शरीर की शुद्धता से पवित्रता नहीं हो सकती, केवल मन की शुद्धता से ही ज्ञान की प्राप्ति संभव है। लाख जतन करने के पश्चात भी शरीर को शुद्ध करने या मौन धारण करने अथवा संयम नियम से मन की शान्ति नहीं हो सकती है। यथा –

''सौचे सोचि न होवई जे सोची लखवार।
चुपै चुन न होवई जे लाइ रहा लिवतार।।''

नानक देव ने प्रातःकाल को ''अमृतवेला'' की संज्ञा प्रदान की है। प्रातःकाल का महत्व बताते हुए उन्होंने कहा कि यह 'अमृतवेला' हृदय से प्रभु का जप स्मरण कर ''एकाग्रता'' को प्राप्त हो परमात्मा तत्व का साक्षात्कार कराती है। अर्थात् ज्ञान का हृदय रूपी प्रकाश समस्त भ्रमों का नाश कर परम सत्ता एवं उसकी सर्व व्यापकता का बोध कराता है। वे किसी एक जाति या धर्म के समर्थक न होकर सर्वधर्म सद्भावना में ही अपनी सच्ची सामाजिक प्रतिष्ठा समझते थे। जीव मात्र के प्रति उनकी धारणा सूक्ष्म और अतिकाय दोनों में एक समान थी। जीवन रूपी नाव के पार होने में पतवार का कर्म, नाव का संतुलन आवश्यक है, अर्थात् संयमित जीवन शैली, मेहनत, जरूरतमंद की भलाई, चिंता का त्याग, कर्मरत, वहम् और भ्रम का त्याग, विकारों का समन एवं भौतिक इच्छाओं का दमन, अहंकार या घमण्ड का नाश कर ईमानदारी, प्रेम, और सद्भावना से जीवन यापन करने के उपदेश दिए। गुरू नानक ने सरल एवं सत्य आचरण को ही ईश्वर की भक्ति कहा। धन धान्य से परिपूर्ण राज्यों के राजाओं की तुलना एक 'चींटी' के अस्तित्व से भी नहीं की, जिनका हृदय ईश्वर प्रेम से विमुख है। जो सत्य है, शाश्वत है, निराकार है निडर है, अनन्त है, जरा–जन्म और मृत्यु से परे है, वह परम आलोकित सत्ता ही निर्माण और विध्वंस की सृष्टा है। वस्तु जगत के सत्य और असत्य से परे रिश्तों के बंधन में बंधा मानव मन माया वश मृत्यु की सत्यता एवं हृदय की अनुभूति का बोध नहीं कर पाता। यह सत्य विचित्र आश्चर्य जनक है, पर यही सत्य है।

''मन मूरख अजहूँ नहिं समुझत, सिख दै हारयो नीत।।''
नानक भव–जल–पार परै जो गावै प्रभु के गीत।।''

गुरू नानक देव हिन्दू परिवार में जन्मे और पले–बड़े हुए। आरम्भ में उन्होंने संत महात्माओं से जो उपदेश सुने वे हिन्दू शास्त्रों, वेद–पुराणों पर आधारित, ईश्वर, सृष्टि, जीवन–मृत्यु, आत्मा–परमात्मा, धर्म–अधर्म के लौकिक सिद्वांतों पर वर्णित था नानक भारतीय धर्म के अनुकूल तो है पर वे सूफी 'शेख फरीद' एवं कबीर के एकेश्वरवाद के प्रतिपादक और गुरू गोरखनाथ के साधक तथा जैन और बौद्व धर्म के अधिक समीप रहे है। इसलिए उनके धार्मिक सिद्धांतों का आधार मुख्य रूप से वैदांत–दर्शन रहने पर भी उसमें जैन, बौद्व, हठयोग एवं इस्लाम की विचार धारायें भी न्यूनाधिक रूप से शामिल हो गई। गुरू नानक का दर्शन मानवतावादी है। इनका चिंतन, धर्म एवं नैतिकता के सत्य, शाश्वत मूल्यों का मूल है, इसलिए गुरू नानक ने सम्पूर्ण संसार के प्राणियों में मजहबों, वर्णो, जातियों, आदि से ऊपर उठकर एकात्मकता का द्विव्य संदेश देते हुए, अमृतमयी ईश्वरीय उपदेशों से विभिन्न आध्यात्मिक दृष्टिकोणों के बीच सृजनात्मक समन्वय उत्पन्न किया। साथ ही विभिन्न संकुचित धार्मिक दायरों से लोगों के बीच अनिवार्य सम्बन्ध की आवश्यकता का सरल सहज मार्ग प्रशस्त किया।

''माटी एक सकल संसारा, बहुविधि भाँड़े घढ़े कुंभारा।
पंच तत्वु मिल देही का आकाश,
घट वध को करें विचारा।।''

नानक देव स्वयं किसी धर्म के संस्थापक नही थे। उनके देवलोक गमन पश्चात् आये अनुयायियों ने अपने समय की अनुकूल परिस्थितियों को देखकर ''सिख पंथ'' की स्थापना की। उनका उद्देश्य भी भारतीय धर्म और संस्कृति की रक्षा करना ही रहा। श्री नानक देव का जीवन सदैव समाज के उत्थान में बीता। उस समय का समाज अंध विश्वासों और कर्मकाण्डों के मकड़जाल में

फंसा हुआ था। कहने को लोग भले ही समाज की रीतियां निभा रहे हो पर अपने धर्म और संस्कृति की रक्षा के लिए कोई ठोस योजना नहीं थी। इधर सामान्य लोग भी अपने कर्मकाण्डों में ऐसे लिप्त रहे की उनके लिए कोई नृप हो हमें का हानि, की नीति ही सदाबहार थी। ऐसे जटिल दौर में गुरू नानक देव ने प्रकट होकर समाज में आध्यात्मिक चेतना जगाकर लोगों में आत्मगौरव की जो भावना जागृत की, वह अनुकरणीय है। ऐसे महान संतो की श्रेणी में महात्मा कबीर का स्थान भी सर्वोपरि है। दोनों महापुरूषों के जीवन–दर्शन का आंकलन करे तो न केवल रोचक प्रेरणादायक और समाज के लिए कल्याणकारी है, अपितु संयास के नाम पर बाहरी ढ़ोंग रचने वाले एवं मानवीय भावनाओं का दोहन करने वाले ढ़ोंगियों के लिए एक आइना भी है।

निष्कर्ष :– मानवता के अनन्य पुजारी एवं मानव सेवा को परमार्थ समझने वाले गुरूनानक देव की जनकल्याण और विश्व एकता की भावना अतुलनीय, विश्वसनीय और अद्भूत तथा अनुकरणीय है। वे अपने समय के महान युग दृष्टा एवं एकेश्वरवादी संत है। विलक्षण बुद्धि के परम ज्ञानी नानक देव अपने व्यक्तित्व में एक योगी, दार्शनिक, गृहस्थ, धर्मसुधारक, समाज–सुधारक, कवि, देशभक्त और विश्वबंधु आदि सभी गुण समेटे हुए है। सर्वेश्वरवादी नानक देव के दर्शन में ''सूफी साधना'' एवं कबीर के एकेश्वरवादी दर्शन का अद्भूत संगम दृष्टिगोचर होता है। उन्होंने तत्कालीन राजनीतिक, धार्मिक, सामाजिक, और पूंजीवादी व्यवस्था को पहचान कर समाज में चेतना की अलख जगाई तथा समाज के निर्माण और उत्थान में अतुलनीय योगदान दिया। संत साहित्य में नानक देव उन संतो की श्रेणी मे है, जिन्होने नारी को बड़प्पन दिया। गुरू नानक संत साहित्य में निरंतर आलोकित रहने वाले सितारें है। वर्तमान समय में गुरू नानक देव के उपदेशों की प्रासंगिकता अत्यधिक बढ़ जाती है। जहाँ समाज, धर्म और संस्कृति से विमुख हो पाश्चात्य संस्कृति को आत्मसात कर रहा है। ऐसे समय में नानक देव के जीवन दर्शन की समदर्शी विचारधारा ही समाज का आदर्श बन सकती है।

संदर्भ ग्रंथ

1. आचार्य, रामचन्द्र शुक्ल ''प्रकरण2'' हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृष्ठ–67
2. आचार्य, रामचन्द्र शुक्ल ''प्रकरण2'' हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृष्ठ–68
3. करतार सिंह, लाइफ ऑफ गुरू नानक देव, अमृतसर पंजाब, पृष्ठ–37
4. ललित गर्ग– प्रभा साक्षी, समसामयिकी, पृष्ठ–1–3
5. करतार सिंह, लाइफ ऑफ गुरू नानक देव, अमृतसर पंजाब, पृष्ठ–19
6. करतार सिंह, लाइफ ऑफ गुरू नानक देव, अमृतसर पंजाब, पृष्ठ–54–58
7. अमर उजाला, राष्ट्रीय दैनिक पत्रिका, पंजाब, पृष्ठ–01
8. गुरू नानक, भारत कोश, ज्ञान का हिन्दी महासागर (इन्टरनेट) पृष्ठ–02
9. आचार्य, हजारी प्रसाद द्विवेदी, गुरूनानक संस्मरणात्मक निबंध, पृष्ठ–02
10. त्रिलोकी नारायण दीक्षित, हिन्दी संत साहित्य, पृष्ठ–21

गुरु नानक देव : सामाजिकता और जीवन–दर्शन

*डॉ. बन्ना राम मीणा

* हिन्दी विभाग, पी.जी.डी.ए.वी. कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय

गुरू नानक देव अपने समय और समाज में व्याप्त कुरीतियों को दूर करने हेतु आन्दोलित रहे।कबीर की तरह गुरू नानक देव भी मूर्ति पूजा, आडम्बर और धर्माधंता के कट्टर विरोधी थे.समाज मे मौजूद जाति व्यवस्था के चलते ऊँच नीच के ख़िलाफ़ रहे।जातिवादी व्यवस्था और अंधविश्वास पर भरोसा करने वाले लोग आमतौर पर न्यायिक प्रवृत्ति के नहीं होते हैं क्योंकि पूर्वाग्रहों से ग्रसित होने की वजह से उनकी सोच भेदभाव वाली होती है। गुरू नानक जी का कहना था कि ईश्वर मनुष्य के हृदय में बसता है, अगर हृदय में निर्दयता, नफरत, निंदा, क्रोध आदि विकार हैं तो ऐसे मैले हृदय में परमात्मा बैठने के लिए तैयार नहीं हो सकते हैं. उन्होंने जातिगत विद्वेष सामाजिक पांखड अंधविश्वास जो कि मनुष्य के द्वारा निर्मित है उनका विरोध करके ऐसे मानवतावादी धर्म की स्थापना की जिसके पूरी दुनिया में दो से ढाई करोड़ अनुयायी है. उन्होंने अपने पंथ के प्रचार–प्रसार के लिए मंदिरों की ओट नही ली बल्कि अपनी अलग व भिन्न राह अपनायी।इस तरह से गुरू नानक ने दुनिया के सबसे नए पंथ की स्थापना की। हिन्दू, बौद्ध, जैन, इसाई तथा इस्लाम धर्म सिख पंथ से पुराने हैं। विश्व पटल पर देखे तो कनाडा की आबादी में सिखों की संख्या पूरे दो प्रतिशत है।

"गुरु नानक देव का संदेश मौलिक भी है और स्पष्ट भी। उन्होंने अलग–अलग मान्यताओं वाले संतों से विचारों का आदान–प्रदान किया और उस दौर में, जब कट्टरपंथी सोच लोगों की संकीर्णता के रास्ते पर ले जा रही थी, उल्लेखनीय उदारता का प्रदर्शन किया। उनकी कथनी–करनी में फर्क नहीं था। वह विद्वानों से विचारविर्मश करके लगातार अपना ज्ञान बढ़ाते और आसपास के वातावरण को सुधारते रहे। दुनिया की विभिन्न संस्कृतियों के दरवाजे उस युग में एक दूसरे के लिए खुले रहे थे। गुरु नानक ने अपना संदेश हजारों लोगों के दिल–दिमाग तक पहुँचाया। वह भारत में तथा भारत से बाहर हिन्दुओं तथा मुस्लिम समुदाय के अनेक पवित्र तीर्थ स्थानों में गये। वह उस युग में इस्लाम के दो महत्त्वपूर्ण केन्द्रों– मक्का तथा बगदाद– तक गए और हिन्दू धर्म के तीर्थस्थलों कुरुक्षेत्र, हरिद्वार और जगन्नाथपुरी भी गये। वह सुमेरु पर्वत, जिसे अब कैलाश पर्वत कहा जाता है, पर भी गए जहां उन्होंने पहुंचे हुए त्यागी सिद्ध योगियों से विचार विमर्श किया। नए लोगों से मिलने और विचार विमर्श करने के गुरु नानक के उत्साह पर हैरानी होती है। उनका अमीरों–गरीबों, संतों–सूफियों तथा ठगों–डाकुओं से सम्पर्क हुआ। उन्होंने विभिन्न संस्कृतियों से सम्पर्क किया और अपना नया संदेश भी सुनाते रहे। गुरु नानक आध्यात्मिक शब्दों की बारीकियां समझाने तक सीमित नहीं रहे, उनके ज्यादातर उपदेशों में सामायिक घटनाओं की चर्चा थी। ईश्वर एक है और सभी मनुष्य भाई–भाई हैं के अपने संदेश उन्होंने अलग–अलग संस्कृतियों के अनुभवों से जोड़ कर बताए। उनके संदेश और दृष्टिकोण में अपूर्व गहरायी थी।"[1] गुरु नानक देव का स्पष्ट संदेश था कि हमको बाँटने व प्रगति को रोकने वाली धर्म,जाति,अंधविश्वास आदि की व्यवस्था मानव निर्मित हैं और इनको खत्म भी मानव को ही करना है अतः क्यों नहीं हम सब मिलकर इनको मिटाकर सामाजिक एकता व प्रगति में भागीदार बनें।

गुरू नानक के साहित्य का मूल वही है जो भक्तिकाल मे कबीर का हैं।कबीर काव्य में जाति–पाँति का विरोध,ब्रह्म की वैयक्तिक अनुभूति, सत्य, अहिंसा ,परोपकार आदि वर्णन है पर गुरू नानक के सृजन में गहरी शांति शीतलता है।इसी वजह से वे राजनैतिक और धार्मिक अत्याचारों का मुँहतोड़ उत्तर दे सकें।सामाजिकता के संदर्भ में उनकी विचारधारा अनुभूति तथा समन्वय पर आधारित है। जाति के संकीर्ण बन्धनों तथा अनाचारों के प्रति उन्होंने सदैव विरोध का स्वर उठाया।

जिस तरह से कबीर ने समाज में सामाजिक सामंजस्य के लिए उस समय मौजूद अंधविश्वास व पाखंड का विरोध किया ठीक उसी तरह से गुरू नानक ने भी पांखडवाद अंधविश्वास जाति व्यवस्था आदि का कड़ा विरोध किया।कबीर कहते है..

"मौकों तू कहाँ ढूँढे बँधे
मैं तो तेरे पास
न मैं मंदिर,न मैं मस्जिद
न काबे कैलाश में"

ठीक उसी तरह गुरू नानक भी अधर्म अन्धकारमय युग मे कहते थे कि "मैं किसी हिन्दू को नही देखता।किसी मुसलमान को नही देखता।मैं केवल मनुष्य को देखता हूँ।" इस तरह से वह मानवतावादी समाज की संकल्पना को साथ लेकर चलते है. समाज के भीतर जाति व्यवस्था उनको बहुत कचोटती रही।वह सदैव शोषित वंचितों के साथ मानवता के प्रहरी बनकर डटकर खड़े रहे।

"नीचां अदरि नीच जाति निची हूँ अति नीच
नानक तिनके संग साथ बडियां सू क्या रीख।"[2]

नीची जातियों मे जो नीचे है और उनमें भी जो और नीचे है,नानक सदा उनके साथ है,उसे बड़ों से कुछ लेना देना नही। उनके लिए शोषित पीड़ित व्यक्ति के दुख दर्द सर्वोपरि है।उनके जीवन दर्शन की ख़ास बात यह है कि जात–पात और धर्म का कोई मसला नही था।उनके ग्रन्थों मे सभी मनुष्य बराबर है।यहाँ कोई छोटा नही,कोई बड़ा नहीं।ज़ाहिर सी बात है कि उनको वंचितों से गहरा लगाव था।अन्याय आंतकित करने वाले अमीरों के द्वारा किये जाने वाले कर्मकांडों के सख़्त ख़िलाफ़ रहे।

दरअसल, छुआछूत तथा अन्य जातिगत भेदभावों के लिए अमेरिका, पाकिस्तान, चीन, इंग्लैंड आदि जैसी विदेशी ताकतों की देन नहीं हैं,हमें अपने दिमाग के दायरों को तोड़कर आगे सोचने की जरूरत है। इसलिए आज गुरू नानक के जीवन दर्शन पर आधारित मार्ग पर चलकर हम अपने दिमाग के दायरे को बड़ा करके छुआछूत व अन्य जातिगत भेदभावों को दूर करने में सक्षम हो सकते है। अभी हाल ही मे धार्मिक अंधविश्वास व जातिगत व्यवस्था की वजह से दो मासूमों की जघन्य हत्या कर दी गई। जब तक ये धर्मगत व्यवस्था व जातिगत व्यवस्था रहेगी तब तक बहुत से लोग धर्म व जाति के आधार पर मानवता की हत्या करते रहेंगे।इसका स्थाई समाधान यही है कि परम्परागत जातिगत व्यवस्था को खत्म कर दिया जाए।ताकि गुरुनानक के सपनों सिद्धांतों पर आधारित समतामूलक समाज का निर्माण हो सके। बहुत से धार्मिक लोग जीवित इंसानों के बजाय काल्पनिक शक्तियों या गुजरे हुए पूर्वजों या अन्य धार्मिक मान्यताओं को ज्यादा महत्व देते हैं।जबकि गुरू नानक के अनुयायी किसी काल्पनिक शक्ति को नही बल्कि मनुष्य के रूप में जन्मे गुरू नानक देव के दिखाये सिद्धांतों व जीवन दर्शन पर चलते है।

"गुरू नानक देव को सभी झूठे आडंबरों से चिढ़ थी। वे जान गए थे कि बालक के जन्म से लेकर उसकी मृत्यु तक ब्राह्मणों के कितने ही ऐसे कर्मकाण्ड बनाए हुए थे, जिनके द्वारा उनकी स्वार्थपूर्ति होती थी, गरीब लोगों के लिए उनकी मांगें पूरी करना संभव नहीं हो पाता था। अमीर और समृद्ध लोग जरूर उनकी मांगे पूरी कर दिया करते थे। वे सब तरह से उन्हें भयभीत किया करते थे और अपना उल्लू सीधा किया करते थे। निर्धन लोगों पर उन्हें जरा भी दया नहीं आती थी।" ऐसी दशा देखकर नानक का हृदय आहत हो उठा। उन्होंने इस प्रकार के कर्मकाण्डों का विरोध करने का बीड़ा उठा लिया। उन्होंने सभी लोगों को बताया कि ईश्वर एक है, जो सत करतार है। वह सभी को समान भाव से देखता है और सभी का भला करता है। मनुष्य अपने दुष्कर्मों के कारण ही दुख भोगता है। इन कर्मकाण्डों से किसी का भला होने वाला नहीं है"[3] वे तेरह नही, तेरा ही तेरा सिद्धांत पर चलकर सभी को समान दृष्टि से देखते थे।

दरअसल, हम गुरू नानक,कबीर के जीवन दर्शन व वैचारिक सिद्धांतों को अपनाकर सभी प्रकार के अंधविश्वासों से मुक्त हो सकते हैं।हमारा समाज साम्प्रदायिक भावना से मुक्त हो जाएगा,छुआछूत सहित सभी जातिवादी भेदभावों से मुक्त होकर हम सबके साथ समान व्यवहार करेगें, किसी तरह का नस्लभेद भी नहीं करेगें।उनके मूल्यों को अपनाने वाला किसी से भी छल–कपट, बेईमानी, धोखाधड़ी, ओछापन, दुर्व्यवहार नहीं करेगा। उच्च नैतिक मूल्यों वाला व्यक्ति दूसरों के व्यक्तिगत मामलों में दखलंदाजी देने के बजाय उनको सम्मान देगा तथा किसी को भी ब्लैकमेल नहीं करेगा।

उनकी यात्राएँ के दौरान बहुत से रोचक क़िस्से है जो यह साबित करते है कि वह मानवतावादी समाज की स्थापना के पक्षधर रहे है. अन्य समाजों के हक़ व हूकूक के लिए ने सदैव तत्पर रहे हैं।अपनी नागालैंड यात्रा के दौरान क़बीलाई झगड़ा सुलझाने के क्रम में एक पक्ष के समुदाय को वह कहते है कि "विरोधी पक्ष के कबीलों को भी अपने जैसे जीने का अधिकार देना है,उनसे दुर्व्यवहार नही करना है। मुख्य झगड़ा तो एक दूसरे से घृणा करने का है जब आप उनको जीने का अधिकार देंगे तो सारे झगड़े स्वंय समाप्त हो जायेंगे।"[4] इस प्रकार नागा पर्वतीय क्षेत्र की लम्बे समय से चली आ रही लड़ाई समाप्त हो गई। वह क़बीलाई समुदाय आगामी जीवन में उन्नति के पथ पर चलने लगे।उनमें अद्भुत संगठन शक्ति, क्षमाशीलता और दूरदर्शिता मौजूद थी।

इससे यह प्रमाणित होता है कि जो समाज गुरू नानक के जीवन मूल्यों को अपनाएगा वह वैज्ञानिक दृष्टिकोण का होगा जिसकी वजह से उसके दिमाग में बेहतरी के लिए नए नए विचार आएँगे तथा दूसरों की बेईमानी या चालाकियों को तुरंत समझ जाएगा तथा कोई उसे बेवकूफ नहीं बना सकेगा,अंधविश्वास,छुआछूत व अन्य अन्याय–अत्याचार के खिलाफ साहस का परिचय देगा,अंधविश्वासों पर होने वाले खर्चों व फिजूलखर्ची के बजाय खेलकूद,शिक्षा,गरीब–कमजोर की मदद में धन,संसाधन और समय लगाएगा।

"गुरू नानक देव जब तिब्बत के विभिन्न स्थानों पर निरांकार ज्योति की उपासना का प्रचार करके हुए चीन की प्रमुख बन्दरगाह शंघाई चले गये।वहाँ पर उन्होंने देखा कि जन साधारण अफ़ीम के नशे में धँस कर भटक गये थे उनका जीवन ,जीवन नही रहा बल्कि गफ़लत की गहरी नींद में सोया मनुष्य पशु समान हो गया है।अतःगुरू नानक के नशे के ख़िलाफ़ आन्दोलन चलाना शुरू कर दिया।जिससे समाज मे जागृति आना शुरू हो गई।आपका परिश्रम रंग लाया जिससे वहाँ के विवेकी पुरूषों ने आपका साथ देकर एक जन आंन्दोलन प्रारंभ कर दिया।इस कार्य में आपको बहुत बड़ी सफलता मिली विशेष रुप से स्त्री को उससे बहुत राहत मिली। गुरू नानक ने वहाँ के समाज के सामने एक लक्ष्य रखा कि प्रत्येक व्यक्ति को आत्मनिर्भर होना चाहिए अर्थात किसी दूसरे का ग़ुलाम या मोहताज नही होना चाहिए।यदि व्यक्ति ग़ुलाम या मोहताज है तो उसकी अपनी स्वतंत्र विचारधारा नही हो सकती है।भले ही वह ग़ुलामी राजनैतिक,आर्थिक,सामाजिक या स्वयं की ख़रीदी हुई ,किसी नशे की हो। जब तक व्यक्ति हर दृष्टि से स्वावलम्बी नही होगा तब तक समाज में उसका कोई स्थान नही होता।"[5] व्यक्ति को हर दृष्टि से आत्मनिर्भर होना ज़रूरी है।आत्मनिर्भर मनुष्य सभी दुखों कष्टों को काफी हद तक दूर कर सकने में सक्षम है।स्त्री के संदर्भ में गुरू नानक उन्हें आर्थिक दृष्टि से आत्मनिर्भर रहने की पुरज़ोर वकालत करते हैं।

निष्कर्ष के रूप मे हम कह सकते है कि गुरू नानक का जीवन दर्शन भरोसा दिलाता है कि हम हजारों सालों से चली आ रही मनुष्य निर्मित जातिगत, अंधविश्वास,

नस्लभेद, बेईमानी से पैसा, पद, प्रतिष्ठा पाकर थोड़े से जातिगत परोपकारी कार्य करके या ईश्वर से माफी माँगकर बेईमानी से मुक्त होने वाली पुरानी परम्परागत व्यवस्था से कोसों दूर जाकर समतामूलक समाज की स्थापना कर सकते है। गुरू नानक देव की सामाजिक चिन्ता उस सच्चे आध्यात्मिक व्यक्तित्व की चिंता थी जो मानवतावाद, सर्वात्मवाद अद्वैतवाद की दृष्टि से समाज को जानता–पहचानता है ।उन्होंने अनुभूत सत्य के आधार पर समाज का मार्गदर्शन किया है।कुसंगति, छलकपट, अहंकार, निंदा, जाँतिभेद, धार्मिक पाखण्ड आदि को त्यागकर ही सच्चा मानव बना जा सकता है।वास्तव में,कबीर की तरह गुरू नानक देव का सम्पूर्ण साहित्य भी समाज को सही राह दिखाकर उस पर चलने के लिए प्रेरित करता है।

संदर्भ सूची

1. गुरू नानक : जीवन और शिक्षाएँ–रूपिन्दर सिंह, पृष्ठ –83
2. गुरू नानक देव–नरेन्द्र पाठक ,सन्मार्ग प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ठ–51
3. गुरू नानक देव – महेन्द्र मित्तल,मनोज पब्लिकेशन, पृष्ठ–48
4. गुरू नानक देव – जसबीर सिंध,गुरू नानक देव चेरिटेबल ट्रस्ट ,चण्डीगढ़ ,पृष्ठ – 70
5. गुरू नानक देव – जसबीर सिंध, गुरू नानक देव चेरिटेबल ट्रस्ट, चण्डीगढ़ ,पृष्ठ – 76

POSITIVE ORGANISATIONAL CULTURE: A BEHAVIORAL APPROACH TO THE TEACHINGS OF GURU NANAK DEV

*Garima Bhardwaj

* Assistant Professor, Deptt. Of Commerce, P.G.D.A.V. College (Evening), Delhi University

ABSTRACT: An organisation is not just a premise made of wall of bricks but a full-fledged mechanism run by its employees. The grassroot of success or failure of any business entity is a human brain, formulating, implementing and reviewing any schemes or strategies. So, maintaining a culture that equips its personnel with ethical values, is a must on the part of any organisation, for the benefit of both the employees as well as organisation. Here, in a nutshell, Positive Organisational Culture represents a culture preserved by positive minds. It is important to understand that positive minds are not the results of rules imposed by any organisation, rather, they are the results of learnt behavioural practices that an organisation follows in the long-run at ground level such as fair, unbiased, scrupulous functioning, honesty and transparency on and off grounds, non-discrimination, no corruption, cordial inter-personal relationships with synergized efforts etc. The humanitarian teachings of the First Guru of Sikhism, Guru Nanak Dev Ji, can be used in numerous ways for inculcating such ethical values resulting into higher degree of employee engagement and greater amount of organisational productivity.

KEY WORDS: Guru Nanak, Sikhism, Humanitarian Teachings, Organisational Behaviour, Positive Organisational Culture, Employee Engagement.

ORGANIZATIONS: SEPARATE LEGAL ENTITIES WITH HUMAN BRAINS

An organization is a social unit of people that is structured, managed and run by its employees, to meet a need or to pursue collective goals.

All organizations have a management structure that determines relationships between different departments and members, and assigns roles, responsibility and authority to carry out different tasks.

ORGANISATIONAL CULTURE: THE WAY OF WORKING

Organizations are open system. They affect and are affected by their environment both external as well as internal. Here, an important term comes up in the role i: e Organisational Culture, reflecting "*How an Organisation Functions*" and acts towards the predictable or unpredictable environmental challenges. Organizational culture encompasses values and behaviours that contribute to the unique social and psychological environment of a business.

To the employees, Organisations are their second Home, where they spend around one-third part of their day and cumulatively a substantial part of their entire-lifetime, either in part and parcel in many organizations or in a single organisation collectively. Therefore, the behavioural approach of an organisation, consciously or subconsciously affects their personal as well as professional lives.

Hence, for an organisation to grow, it is a must to take care of its culture for the upliftment and retention of the fundamental functioning unit "humans" in the form of employees and here the teachings of the *First Guru of Sikhism* can help.

GURU NANAK: THE FIRST GURU OF SIKHISM

In 1475, Nanak's sister got married to Jai Ram and moved to Sultanpur. Nanak wanted to stay with his sister for a few days and hence went to Sultanpur and started working under the employer of his brother-in-law. During his stay in Sultanpur, Nanak would go to a nearby river every morning in order to bathe and meditate. One fine day, he went to the river as usual but did not return for three days. It is believed that Nanak went deep inside the forest and stayed

there for three days. When he returned, he looked like a man possessed and did not utter a word. When he finally spoke, he said, “There is no Hindu and no Musalman.” These words were the beginning of his teachings which would culminate in the formation of a new religion.

Guru Nanak became the first Sikh Guru and his spiritual teachings laid the foundation on which Sikhism was formed. Considered a religious innovator, Guru Nanak travelled across South Asia and Middle East to spread his teachings. His teachings were immortalized in the form of 974 hymns, which came to be known as ‘Guru Granth Sahib,’ the holy text of Sikhism.

With more than 20 million followers, Sikhism is one of the important religions in India and the world. The religion emphasizes on the importance of leading a spiritual life without embracing monasticism. It teaches its followers to escape the clutches of ordinary human traits, such as lust, rage, greed, attachment and conceit (collectively known as the ‘Five Thieves’). Sikhism is a monotheistic religion, which believes that God is shapeless, timeless and invisible. It also teaches the concepts of worldly illusion (Maya), Karma, and liberation. Some of the key practices of Sikhism are meditation and the recitation of Gurbani, the hymns composed by the Gurus. The religion also advocates justice and equality and urges its followers to serve mankind.

THE TEACHINGS OF GURU NANAK: A BEHAVIOURAL APPROACH TO ORGANISATION’S CULTURE

1. He was born in a Hindu Family, but he had never followed or accepted anything just because of the deemed rituals of being born in a specific community. He refused to wear Janeu (sacred thread) as he believed that wearing anything of this kind could not keep you free from sin. Rather, the thread of praising the almighty and *living an honest life,* once worn could never be broken.

   In the context of an organization, the interpretation of this specific teaching indicates culture *based on Fair, Unbiased and Scrupulous Practices*, the following of which brings *honesty and transparency on and off grounds*. This led to an inspired and motivated workforce, suitable rather than recommended employees, authentic, desired and elected leadership at all the levels and ultimately an honest professional life without indulging in exploitation or fraud.

   In order to have a healthier and happier workforce, transparency has to be the integral part of its functioning. If the employees feel out of the loop, or the organisation isn’t telling them the whole story, they will be less likely to express themselves creatively, voice their opinions and feel loyal to the company. Often, they want to understand the big picture, even the ugly parts. Transparency brings honesty which builds trusting and long-term relationships, where employees feel recognized and are more comfortable in speaking up resulting into great job satisfaction.

2. Guruji started the Langar tradition and through this, implemented his teachings of “*Sangat and Pangat*”, which means that people from any community, caste, faith, colour, ideology or creed would sit together, eat together and pray together.

   In the form of organisations’ behavioural part, this teaching may be seen as providing equal accessibility of recognition and promotions etc. to all.

   As per the study, the degree of employee engagement gets higher if, the organisational practices are fair enough in which there is *no discrimination on any grounds for growth and expansion*, while, the hard-work, performance and pragmatic results shall be the standards to judge the worthiness of an individual.

   Such unbiased practices on the part of organization, develops a sense of integrity among its employees, making them passionate about their roles and responsibilities and hence led to greater employee productivity.

3. *Speaking truth without any fear* is another of Guru Ji’s teachings.

   In the giant corporate world, there had been multiple scams and scandals such as Health South Scandle, Enron Corporation, Waste Management Scandal, Tyco, Freddie Mac Scandal, American Insurance Group Scandal.

   And specifically in India, Harshad Mehta scam (1992), Ketan Parekh Scam (1999-2001), Satyam Scam (2009), Saradha Chit Fund Scam(2013) and the list goes on, reflecting the dark and unethical side of the big corporate industry.

   Guru Ji’s saying of speaking the truth is the core principal to avoid such malfunctioning in any organisation since all such scams and scandals are nothing else but the manipulation and distortion of Truth.

Sincere following of this principle *helps in avoiding and minimising the chances of corruption in any organisation.* The principal of *Whistleblowing,* is an example of this particular teaching of Guru Ji.

4. As Guru Nanak Dev Ji was born during a period of great inequalities and during that time women were considered far inferior to men and even evil, but even then, he preached and *supported the equality of men and women.*

   This teaching of him, indicates that one shall be recognised on the basic of his/her performance rather than the status of being a male or female. Patriarchy or Matriarchy shall be avoided and *"gender-based equality, an established human right" has to be the culture of an organisation,* to make it a positive one. For the long-term success, growth, stability and competitive advantage of the organisation, it is an essential to avoid such discrimination in the organisation's technical and operational structure.

   Shobhana Bhartia (Chairperson and Editorial Director of Hindustan Times Group), Kiran Mazumdar-Shaw (Chairman and Managing director of Biocon Limited), Chitra Ramkrishna (Managing Director and CEO, National Stock Exchange of India), Arundhati Bhattacharya (Former Chairperson, State Bank of India), Tessy Thomas (Scientist at Defence Research and Development Organisation) are great examples of women in power, not because of the gender but because of the calibre they all possess, and in return the organisation too gets benefited.

5. Guru Nanak preached that *there is only one God.*

   Since organisations are non-living entities with no practically functioning brain of its own, unlike human brain, it is impossible to make an organisation understand the ideology of one god, but to the human brains functioning on behalf of the organisation, this teaching of only one god can be communicated as *"only one goal" throughout the organisation.* Here goal may be interpreted as the long-term vision of an organisation, the reason of the core existence of it.

   When the direction communicated to all is the same, the synergized efforts tend to get more productive. The principal of single goal throughout the organisation makes its employees more target-centric and hence committed to their roles and responsibilities, greater employee productivity, higher job satisfaction and ultimately helps the organisation to achieve its targets with the collective or cumulative single directed actions. This teaching also helps in minimising the scope of conflict and rivalry in between different groups and departments as the professional roles might be different but since the ideological vision of achieving the organisational goal is same, it rather harmonises the culture of organisation.

6. Guru Ji preached that Principle of *Sharing & Serving* is important for achieving Satisfaction and Happiness.

   Organisation is actually a structure created and functioned by its personnel, and this teaching focuses on *leaving all individuals' selfish desires n greed and helps in maintaining a cordial and supportive internal environment.* It emphasises on the sharing of *emotional, psychological and professional support* on the part of colleagues, to serve each other. This led to building *Positive Self-Identities at Work* resulting a positive organisational culture reflecting lower stress and anxiety levels, improved health and wellbeing, fewer sick days taken by employees and most importantly reduced turnover of employees, which helps in saving a large amount of cost on the part of the organisation.

7. Worship of God with prayers of *welfare of all* is another one of the life changing teachings of him.

   In context of an organisation, it is about working for the *betterment of each element* of the organisation and hence betterment of the whole organisation at large via *building strong team spirit, good relations with peers, ethical practices, unbiased and genuine execution of work, authentic leadership at all levels* instead of just being self-centric.

   Employees spend a lot of time with their colleagues, and it is obvious to say that a fantastic or awful co-worker can define their office experiences. It's no wonder to say that camaraderie is a key to a positive culture and true motivator for employees to go the extra mile.

   If employees work with the mindset of welfare of all, they are more likely to make strong social and personal relations at their workplace. As per a research, it is found that peers, not money, have the number-one influence on colleagues to outperform expectations and friends at work is the most

crucial element to a happy working life as it shows strong social connections at the office that make employees more passionate about their work.

8. Guru ji also taught *"Not to be scared of Death, as it is inevitable"*.

   Death is the ultimate truth and when we compare this fact with the facts of an organisation, it is crystal clear that just like death is inevitable, organisations also face a number *of known and unknown inevitable challenges*, as itself being a part of ever-changing environment.

   So, instead of being scared of or threaten by such inevitable challenges, organisations shall work to face those challenges and try to mitigate the ill effects of such challenges.

   Rather, developing a culture of perceiving such times as opportunities, to realise its disguised abilities and to be more creative and think out of box.

HUMANITARIAN TEACHINGS AND THEIR TENTATIVE ON-GROUND REPERCUSSIONS

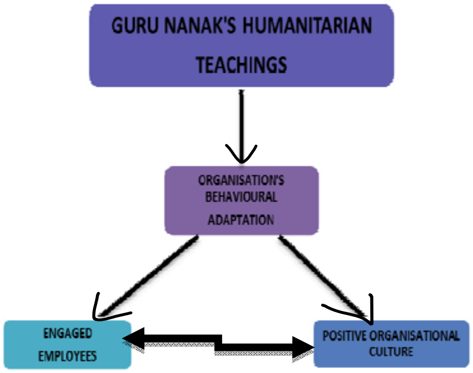

Teachings, as defined above, if get implemented on the ground level or the organisation adapts itself with such behavioural practices, it may result into higher engagement of employees as well as positive organisational culture, where both are the by-product of each other.

Company like google keeps appearing on Fortune magazine's Best Companies' List.

These companies have invested in their employees to keep them engaged and they're reaping the benefits of increased financial return, innovation and retention. When companies are willing to build a strong culture, then employees are more than willing to go the extra mile.

Companies, that don't place importance on culture perform worse than the ones that do.

In other words, a well-established culture creates a sense of community. Co-workers collaborate together to improve efficiency and productivity even through the toughest times, like the Great Recession.

Employees are always looking for professional development in the workplace, especially millennials. If companies want to be industry leaders, they need to first cultivate a culture that allows employees to thrive, with the support of positive organisational culture.

Apart from the above, as per a research (https://positivepsychologylearning.com/positive-organisations/), practicing of positive organisational culture leads to;

- 37% overall increase in sales success
- 40% of employees more likely to get promotion
- 10 times greater employee engagement

And engaged employees are 87% less likely to leave the organisation. For example, if a company had 100 people leave last year, they could have saved 87 of those employees if there was a positive culture. Whether someone's been with an organisation for six months or six years, their departure negatively affects the productivity of that particular entity and all the money invested on recruitment, hiring and training of that individual goes in vain.

CONCLUSIONS

Even if we talk about nurturing cordial interpersonal relationship or non-discriminatory practices or bringing honesty or transparency in functioning, most of the interpretation of Guru Nanak's human-oriented teachings are the obvious practices that any organisation should follow. But scandals take place, work related anxiety and stress prevails, lower level of employee engagement exists, lesser productivity any many more unsatisfactory results are faced by many organisations despite such known set of ethical behaviour.

It all shows that even if rules and regulations are structured to govern the proper way of doing a particular task, there is still a great need on the part of many organisations to amend their way of working to survive in the long-run.

Here, Teachings are not imposed rules, but are the conscious and subconscious observation, understanding, execution and follow-up of learned behavioural practices for a better way of working of an organisation. In other words, behaviours of employees replicate the organisational culture and vis-a-viz. Hence, for an organisation to reach at heights, it is important to maintain a positive organisational culture and to train and equip its employees with ethical values not only, at their inception stage but also throughout being in the organisation, with the help of such teachings and potently

real-behavioural implementation of such teachings.

REFERENCES

- http://www.businessdictionary.com/definition/organization.html
- https://www.culturalindia.net/indian-religions/guru-nanak.html
- https://yourfinancebook.com/biggest-corporate-scandals/
- https://positivepsychologylearning.com/positive-organisations/
- https://www.tinypulse.com/blog/invest-in-organizational-culture-for-employees-to-pay-you-back?__hstc=225544837.e55e1fc6c5857504c5f6b20dcac2f103.1570429543192.1570429543192.1570429543192.1&__hssc=225544837.1.1570429543192&__hsfp=3494084449
- https://www.mapsofindia.com/my-india/society/teachings-of-guru-nanak-dev-ji
- https://www.forbes.com/sites/kathycaprino/2013/12/13/6-essential-ways-to-build-a-positive-organization/#20a985a9610f
- https://www.tinypulse.com/blog/the-most-important-characteristics-of-positive-organizational-culture

Shri Guru Nanak Dev Ji's Teaching and Ethos in Management

*AJAY KUMAR GARG

* Assistant Professor, Deptt. Of Commerce, P.G.D.A.V. College (Evening), Delhi University

Abstract

Ethics and ethos is an important topic for all organizations to consider today. This research paper evaluates the ethics and ethos in management and the teaching of Shri Guru Nank Dev Ji related to Management in modern era. Generally, management is the process of optimum utilization of human and non-human resources along with the values to achieve some goals at individual level or an organizational level. In the Business world, management is defined as a process of managing various resources such as people, finance and technology to achieve organizational goals. It also ensures that resources are developed and utilized in such a manner that both short term as well as long term goals can be achieved very effectively and efficiently. Thus the process of management involves three aspects –Efficient utilization of resources, realization of goals with effectiveness and value addition which suggest one's social responsibility .This paper views the ethics and ethos in management for the healthy environment in an organization. Ethos is set of beliefs, moral ideas and attitude of an individual or a group or a society. A country like India whose culture has its roots in religion, draw its lessons from the religion of the land –be it Hinduism, Buddhism, Sikhism or any other. In same manner Ethos of modern management also evolves the basic principals as immense potential, holistic approach, internal resources, Karm yoga, yoga Karmasu Kaushalam and co-operation. The Holy Epic of Shri Nank Dev ji is a remarkable storehouse of spiritual knowledge and its teachings stress on the name of God. Guru Nanak Dev Ji states all the principles of management in the Mool Mantra and can enable men and women to lead a purposeful and rewarding life while being members of a society. It teaches that we are Karma Yogis, hence we reap what we sow.

Keywords: Management, Ethos, Ethics, Shri Guru Granth Sahib Ji, Mool Mantra

Ethics and Ethos in Business Management

Sri Guru Nanak Dev Ji (the First Nanak, the founder of Sikhism) was born on 15th April, 1469 at Rai-Bhoi-di Talwandi in the present distrect of Shekhupura (Pakistan), now Nanakana Sahib. He was an extra-ordinary and different child in many ways. God provided him with contemplative mind and rational thinking. At the age of seven, he learnt Hindi and Sanskrit. He surprised his teachers with the sublimity of his extra-ordinary knowledge about divine things. At the age of thirteen, he learned Persian and Sanskrit and at the age of 16, he was the most learned young man in the region.

The most famous teachings attributed to Guru Nanak are that there is only one God, and that all human beings can have direct access to God with no need of rituals or priests. His most radical social teachings denounced the caste system and taught that everyone is equal, regardless of caste or gender.

Over the last decade, corporate scandals have increased that affect the reputation of many companies. With globalization, in international trade, transactions across the countries increasing the complexity of the market place and the potential for ethical dilemmas in the world of business have increased. As a result, many organizations state their position on ethics through Code of Conduct and some organizations utilizes ethics training to their employees to make them aware of the organization's expectations. They should focus on ethic education, awareness, equity,

knowledge of the law and using scenario analysis to be more proactive rather than reactive.

Many aspects of an organization will impact its ethics including leadership, transparency practices, corporate governance, training programs and operations. Thus ethics and ethos is an important topic for all organizations to consider today. The process of business management in each organization involves the efficient utilization of its resources, realization of its goals with effectiveness and value addition which suggest one"s social responsibility. Values refer to ethics and ethos in management for the healthy environment in an organization. Ethos is a set of beliefs, moral ideas and attitude of an individual or a group. A country like India whose culture has its roots in religion, draw its lessons from the religions of the land- be it Hinduism, Buddhism, Sikhism or any other. The general ideas and thoughts regarding management ethos are also revealed by our ancient scriptures as –

- 'Atmano Mokashartham, Jagat Hitya Cha' which means all work is an opportunity for doing well to the society. If we are doing our best only then we may gain spirituality in our lives.
- 'Yoga Karmasu Kaushalam, Samatuam Yoga Uchyate' means the person who works with calm and even mind can achieve the most.
- 'Tesham Sukham Tesham Shanti Saraswati' means Infinite happiness and peace come to those who see the divine in all beings.

Right to Resist Oppression : Harmony and ethos are important factors for efficient management operations. The employees must be provided rights to resist and to provide rights to say. In Guru Nanak *Bani* subjects have been made conscious of their rights to raise their voice against the oppression of the ruler, who fails to serve the people. They are supposed not to bear oppression under any circumstance. Guru Nanak condemned the brutalities of the rulers of his time. He stood against the rulers without any fear and hesitation. He spoke against the injustice being done by the rulers of his time.

Guru Nanak emphasized a democratic idea when he enjoined upon the monarch to rule with the help of the representatives of his subjects in the discharge of his administrative functions and acquit himself in all fairness with justice, kindness and sympathy.[5] The ruler must do his duty, as a mandate from God:

With devoted heart render service, make faith in the holy thy vocation, restrain thy mind running evil wards.[6]

Guru Nanak accepted the monarchial form of Government. He condemned the various officers but not the offices themselves. Guru Nanak's condemnation of oppression, inefficiency and corruption was tantamount to revolt against the authority. According to Guru Nanak, if the ruler's orders were against justice and equity, it was not obligatory on the people to honour them.[7] Guru Nanak came into contact and conflict with the political order of his times. He suffered at the hands of unjust and cruel kings. This led him to give deep thought to political system that the people would need for a better social, economic life and moral regeneration and fight for it. All the Sikh Gurus fought against the political tyranny of the Mughals by organizing the Sikhs into a well knit community.

Similar views regarding the rulers have been expressed by the western political thinkers. According to Saint Thomas Aquinas, "if he becomes tyrant and pursues his personal interests, it becomes the duty of the subjects to resist. It is for this reason that the resistance of tyranny is not only a right but a duty".[8] Like Saint Thomas Aquinas, T.H. Green also expressed similar views. According to him, "When the laws of the state are tyrannical and the state fails to promote the common good, resistance under these circumstances is not merely a right but it becomes a duty".[9] Thus we can say that it is the duty of the people to resist against tyranny.

John Locke was a great defender of the Glorious Revolution (in England) of 1688. He was firmly of the opinion that the people must resist oppression.

Ethos in today's management has six basic principles as –

- Emense Potential Power – The Divine resides in the heart of all. Here Divine refers to perfection in knowledge, Wisdom and Power. A human has the potential for self development and he can bring harmony, happiness and prosperity of his organization without doing any injustice to others.
- Holistic Approach – It is based on the principle of unity, oneness where each and every particle is connected with every other particle.
- Equal Importance to Subjectivity/Objectivity – Ethical values such as courage, vision, truth, social awareness etc are subjective. These are as important as money, materials or data. Our body, senses, mind, intellect etc

are objective. Hence Wisdom manager is much more important and valuable than a knowledge manager.

- Karma Yoga – It is all about identifying our priorities and trying to achieve them. Karma Yoga is not only meant for the common man but also for leaders and managers who if act responsibly will in turn influence the behavior of a number of people. So Karma Yoga is good for self-purification, self-development, collective growth and welfare, perfection, all round happiness and prosperity.
- Yogah Karmasu Kaushalam – Yoga means excellence at work, Kaushalam means doing work with devotion. Such attitude enhances its value and improves the concentration and skills of a worker. In Total Quality Management, Yogah Karmasu Kaushalam provides valuable contributions.
- Co-operation – As per Indian ethos, co-operation is a powerful motive for team work. Co-operation, united efforts and striving for success leads to all round prosperity and success in any field of human expertise.

Golden Rule of Ethics

The Golden Rule, also known as the Ethic of Reciprocity [15]. It says to treat others the way you want to be treated.

1. Always think before you speak. So if you would not want any harsh words said to you, then do not say them to others.
2. Always think before you act. So if you would not want to experience bad effects, then do not subject them to others.
3. Practice self-control. If you would not want people having temper tantrums around you, then do not have temper tantrums around others.
4. Practice courtesy. If you find others behaviors unacceptable then do not rude to others.
5. Develop patience. If you find it unpleasant when people are impatient with you then do not be impatient with others.
6. Always listen to others when they speak.
7. Always help others. If you are in such a position that you need help of someone else then do whatever you can to assist the other person.

Thus executives, managers and employees should focus on ethics education and prepare themselves to make the best possible decisions.

Right to work and fulfillment of essential needs

In ancient India, there were four values of life like: Dharam, Artha, Kama and Moksh. In the sphere of Artha came this right of the people to have employment and the things of the basic needs. Guru Nanak stresses the people’s right to work when he says that the creator of the universe has himself assigned some work to every being. It implies that God has endowed everyone with the ability of doing some kind of work.

The three principles

- Vand Chako: Sharing with others, helping those with less who are in need
- Kirat Karo: Earning/making a living honestly, without exploitation or fraud
- Naam Japna: Chanting the Holy Name and thus remembering God at all times (ceaseless devotion to God)

Guru Nanak emphasized on basic three golden principles: Kirat Karna, Nam Japana, Wand Chhakna, means man should earn his livelihood by honest creative labour, he should keep in mind the name of God and he should share the fruits of his labour with his fellow beings. He instructed his followers to work, earn, spend and give out of their earnings to the needy. This leads a person to the ideal path of life. As it is said by Guru Nanak:

Guru Nanak says that an individual should set a-part, a portion of his earnings for the well being of the needy. A good human being according to Guru Nanak is one, who lives truthfully, honestly, fights injustice and compassion for the whole humanity and it is the duty of the ruler and other members of the society to see that none should remain naked and hungry. The Guru says that an individual should set apart a portion of his earnings for the well being of the needy.

It was centuries after Guru Nanak that a western political thinker, Harold J.Laski, observed that, “every citizen has right to work, that does not mean that he has a right to any particular kind of work. The right to work merely means the right to be occupied in producing a share of those goods and commodities which are useful for society. If a citizen is not given right to work he is virtually denied the right to express his personality”.

Right to freedom

At the time of Guru Nanak, there was no interaction of common people with themselves on religious ground. Only the Brahmins planned religious activities and the rest was mute spectators of the ritual. Even the Mantras which were recited were beyond understanding of masses. Guru Nanak demolished all barriers in

the way of progress of man, whether these were social, political or religious. Guru Nanak forcefully advocated certain rights relating to the freedom which are very essential for the development of an individual. These freedoms are describes as under:

Freedom of Religion

Many devout Sikhs died for the cause of righteousness and for the protection and preservation of freedom to worship freely, to uphold the Sikh faith and for securing basic Human Rights like justice, liberty, equality and freedom for all the people. Under right to freedom Guru Nanak gave special stress on freedom of religion.

Freedom of religion means every individual is entitled to freedom of conscience and the right to freely profess practice and propagate any religion or faith of his own choice. Any section of the people has the right to establish and maintain institutions for religious and charitable purposes, to manage its own affairs in matters of religion. No person can be compelled to pay tax for promotion of any particular religion. With the advent of Islam in India, the religious freedom of the Hindus was lost. Several saints and religious reformers came forward throughout India in order to safeguard the Hindu society. For the sake of the right of freedom of religion, ninth Guru, Guru Teg Bahadar, laid down his life in 1675, in Delhi. Some Brahmins from Kashmir approached him to save them from forcible conversion to Islam by the then rulers. The Guru himself was not a believer of the faith of those Brahmins but he stood for the right to freedom of practicing any religion and laid down his life for the cause.[15] According to Guru Nanak, the main objective of man is to attain oneness with God, for the achievement of this objective, the right of freedom of religion is very important. The choice should be of the man himself. Guru Nanak's advocacy for this right of human beings is quite evident from his condemnation of the rulers of his times who deprived the people, especially the Hindus, of this right to practice their religion according to their own choice.

Freedom of Culture

Guru Nanak also addressed the freedom of culture which implies that any section of the people have a distinct language, script or culture of its own and they have right to conserve it without interference of anyone. It is not the right of the ruler or officials to impose their own language or culture on the people of the state. Man will be free to follow the culture of his choice and to speak the language in the sphere of culture and language. The Guru advocated the freedom of culture. He was of the opinion that man should be free to follow the culture and language of his own choice. Guru Nanak forcefully condemned the ruler of his time for imposing their culture and language on the public. With the advent of Muslim rulers, the Hindus started acquiring the Islamic way of living. Guru Nanak criticized the Hindus for shedding their own culture and language under the pressure of the ruling class and adopting the culture and language of the ruling class, to please them.

So we can say that Guru Nanak was in favour of freedom of culture. Later on Universal Declaration of Human Rights also granted this right according to which cultural right is very much necessary for the free development of individual's personality. Same right is also granted by the Constitution of India for all the citizens of India.

Freedom of Assembly

For freedom of assembly Guru Nanak said that people should have freedom to assemble, hold meetings and to discuss their problems or complaints and to find out their solutions also. For this purpose the people should have right to hold the public meeting without any interference from quarters of the authority in the state. So every individual must be guaranteed freedom of association and public meetings. Concept of 'Sangat' was advocated by Guru Nanak according to which people should have freedom to hold assembly. The organization of the Sangat system by the Sikh Gurus was a revolutionary step. It practically helped in leveling down distinctions of caste, creed and colour in the society removing the barriers of tribes and station. It worked for equality and brotherhood of mankind and elevated the spiritual life of the people.

Freedom of Speech

Freedom of speech implies that everybody has freedom of speech or expression without fear of any sort from the authorities. In modern times, it also includes the freedom of the press and electronic media. Guru Nanak encourages man to listen to something and to say something during the span of his life. As it is said by Guru Nanak:

- As long as we are in this world Nanak, we should hear some what and speak somewhat of the Lord.[23]
- It is clear from the above passage that Guru Nanak was in favor of freedom of speech of

the people.

- This freedom first advocated by Guru Nanak has been granted in the Universal Declaration of Human Rights and Constitution of India.

Freedom of choice of occupation

With freedom of speech he also stressed upon freedom of choice of occupation which means that every individual is free to choose any occupation of his choice irrespective of his/her caste, colour, creed, sex or descent. According to Guru Nanak nobody is to be restrained from engaging in any occupation because of his caste. Beside, no occupation determines one's caste, rather it is one's deeds that determine his caste.

Right of equality

The most important right which was advocated by Guru Nanak was right of equality which implies equality of all individuals in the state. No discrimination made against anybody on account of his/her religion, caste, colour, creed, race, sex or descent etc. In India, since the Vedic period the Hindu society has been divided into four Varnas like Brahmin, Kshatriya, Vaishya and Sudra, but at that time, people were free to change their Varna. Everyone had the right to adopt the dharma of a particular Varna at his will. After some time, the Varna came to be determined from the birth of an individual, and gradually it took the form of a religious principle. All the four Varnas were classified into four castes. The duty of the Brahmins was to study and to teach the Vedas to perform and officiate at the performance of Yajnas (Sacrifices). The Kshtriyas were to study the Vedas, learn the art of fighting and defend the country. The Vaishyas could read the Vedas and their duty was to carry on trade and industry etc. The Shudras were required to serve all the other Varnas without a question. They were treated just like the slave.

Guru Nanak also raised his voice against such division of Varna and gave right of equality to all men, without discrimination of caste, creed, sex or nationality. He established the equality by breaking up the caste system, achieved liberty from the age-old customs and traditions and brought about fraternity by striking at the root of the sense of the high and low. Guru Nanak rejected the caste system. According to him all human beings are equal. It is the deed of man that makes him high or low, good or bad. By birth everybody is free to do any job of his/her choice provided that he/she has the ability and competence to do it

Right to Education

Education is essential for bringing about awareness among the human beings and everybody has the right to get education. In ancient India, the right to get education was given only to upper three classes, i.e Brahmans, Kshatriya, Vaishya. The Sudras who were placed at the lowest caste could not get education. Of the three classes only the Brahamans had the right to teach, Kshatriya and Vaishya could get education, but could not impart it. But according to Guru Nanak all people have right to get education. Guru Nanak laid great stress on the need of education amongst the subjects of his time. Guru Nanak believed that it was because of lack of education that people tolerated the oppressive ways of their rulers.

Right to Justice:

In ancient India, it was the one of the fundamental aims of the state to promote Dharma or justice. In Vedic literature peace, order, security and justice were regarded as fundamental aims of the state. The king or the head of the state was supposed to be the upholder of the law and order. He was to punish the wicked and help the virtuous.

According to Guru Nanak, justice is one of the attributes of God. Injustice has no place in God's order because He is absolute just.

Guru Nanak was totally against exploitation of any kind .He said that if we have respect for the rights of others around us it will certainly prevent exploitation. Guru Nanak time and again stressed that there can be no justice without social justice. Respect for the rights of others, prevents the exploitation of one by the other. The Guru as worst sin condemns the exploitation of poor by rich in any form as worst sin. He could not tolerate that the earnings raised by the sweat of labour should go into the coffers of the rich and exploiters. As we know Guru Nanak himself preferred to stay at poor carpenter's (Lalo) home and declined the invitation of a rich merchant Malik Bhagchand to partake of food served from his ill-gotten income. Malik Bhagchand exploits poor and sucks the human blood.

Right of Women

Guru Nanak also raised a forceful voice against injustice towards women. He had pleaded for the full rights to women. The condition of women at the time of Guru Nanak was very deplorable. According to him woman has the same rights as man has. There is no scope of any discrimination against women because of their

sex. They are fully at par with men.

The position of women in Indian society during early Vedic period was good accepting the stray incidents of unwelcoming the female child. But it was not a general practice and the sacred writings were against it. During the early Vedic period, even widow remarriage used to take place. Women freely participated in religious rites and practices. Women were given education to train them to lead successful married life.

Relevance of Guru Nanak Dev's Human Rights teachings in the Modern Management

If we are able to breathe the air of freedom today, it is only because of great sacrifice of martyrs like Guru Arjan Dev Ji, Guru Tegh Bahaduar and Banda Singh Bahadur, who gave their blood and experienced extreme torture, suffering and hardship for the sake of dharma and freedom.

Banda Singh Bahadur laid the foundation of democratic system of rule, which changed into ruling misls and finally the establishment of Sikh Raj under the command of Maharaja Ranjit Singh. Banda Singh Bahadur was enemy of cruel ruler, chieftains and landlords who treated general public as slave. By starting currency in the name of Guru Nanak and Guru Gobind, he won successful war of freedom from slavery of Punjab from Mughal rule. He abolished the Zamindari System of land prevailing under the Mughals and declared the actual cultivators as owners of land.

Banda Singh Bahadur took upon himself the duty of serving the people and protecting the weak and helpless. He meant to tell the people at large that welfare state of their dreams had been established to the exclusion of the tyrannical government of the Mughal governors. He tacitly meant to convey to them that unjust officials have been substituted by the just deserving and competent. He wanted to make them alive to the consciousness created in the masses for their rights and awaken them to strong sense of resistance and defiance to oppression.

Thus he was not only a great warrior but also an able administrator. He dismissed Muslim officers because they had become very cruel and corrupt. In their places, able Hindus, Sikhs appointed who had ever become the victims of the tyranny of the Mughals. He had great compassion for the administration and gave them right of equality. This awakened in them a new sense of self- confidence. He was known for his impartial and prompts justice. While dispensing justice he never discriminated between the high and low. He always respected women, even though they belonged to the enemy camp. He had given orders to his soldiers not to molest women and gave them full respect. As Rattan Singh Bhangua in his Panth Parkash mentioned that how Sikhs saved the daughter of a helpless Brahman belonging to Jalalabad and honored her as 'Panth Ki Beti', which is the example of altruistic and heroic deed.[68]

As a social reformer Sri Guru Nanak Dev Ji upheld the cause of women, downtrodden and the poors. He attacked the citadel of caste system of Hindus and theocracy of Muslim rulers. He was a born poet. He wrote 974 hyms comprising Japji Sahib, Asa- Di-Var, Bara-Mah, Sidh-Gosht, Onkar (Dakhani) and these were included in Sri Guru Granth Sahib by Sri Guru Arjan Dev Ji. He was also a perfect musician. He with the company of Bhai Mardana compsed such tunes in various Indian classical Ragas that charmed and tawed wild creatures like Babar, subdued saging kings, raved bigots and tyrants, made thugs and robbers saints. He was a reformer as well as a revolutionary. God had endowed him with a contemplative mind and pious disposition. Sri Guru Arjan Dev Ji called him "the image of God, nay, God Himself".

Review of Literature

1. Guru Granth, p.1242.
2. M.S. Rahi, Human Rights and Sikhism, p.56, The Sikh Review, Vol.56:1, January 2008.
3. Guru Granth, p.1412.
4. Gurdeep. Kaur Brar, Guru Nanak's Philosophy of Politics, p.178.
5. Nirmal Kumar Jain, Sikh Religion and Philosophy, p.103.
6. William A. Hunter, Introduction to Roman Law, (London, 1934), p.24.
7. Jodh Singh, Religious philosophy of Guru Nanak, p.p. 257-258.
8. Surinder Singh Kohli,Philosophy of Guru Nanak, p.22.
9. Guru Granth, p.473.
10. Jaswinder Kaur Dhillon, Studies in Sikh Philosophy and Culture, p.131.
11. Gopal Singh, A History of Sikh People (1469-1988), p.4.
12. Kirpal Singh, Afghan Relations: Guru Nanak to Maharaja Ranjit Singh, p.147, Journal of Sikh Studies, Vol-XXXII, Guru Nanak University, Amritsar,2008.
13. Teja Singh and Ganda Singh, A Short History of the Sikhs, p.159.

14. Balwant Singh Dhillon (ed.), Shri Guru Panth Parkash:Rattan Singh Bhangu,p.7.
15. K.S. Duggal, The Sikh Role in India's Freedom Struggle, p.49.The Sikh Review, Vol.65, December 2008.
16. J.S. Grewal, The Sikhs of The Punjab, pp.162-163.
17. K.S. Duggal, op.cit., p.49.
18. http.://envvikipedia.org/viki/directactionday .
19. Kirpal Singh, Partition and Transformation of Punjab in 1947 ,p.6, Abstract of Sikh Studies, Vol.X, April- June 2008.
20. Sohan Singh Sahota, The Destiny of the Sikhs, p.40.
21. www.unitedsikhs.org/haitiearthquake.
22. M.S. Rahi, Human Rights and Sikhism, pp.58-59, The Sikhs Review, Vol.56, Jan 2008.
23. Bhai Ashok Singh Bagrain, Relevance of Guru Nanank Dev's teaching in the Modern context: Social and Political, p.167, Seminar proceedings, Relevance of
24. Guru Nanak Dev's Teaching in Modern Context,Deptt of Guru Nanak Studies, Guru Nanak Dev University, Amritsar 2008.
25. Gurudarshan Singh Dhillon, Sri Akal Takht, Sarbat Khalsa and Gurmata: Doctrinal position in Sikh Tradition, p.32,The Sikh Review, Vol. 52,Fabruary, 2004.
26. International Journal of Management Sciences and Business Research, June-2015 ISSN (2226-8235) Vol-4, Issue 6
27. www.google.com

गुरू नानक देव पर बौद्धमत का प्रभाव

*डॉ. बलराम गुप्ता 'संकर्षण प्रजापति'

* एसोसिएट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग

भारतीय समाज अनेक विविधताओं से भरा है। भारत के संदर्भ में हमेशा यही कहा जाता है कि विविधता में एकता। भारत अनेक रंग बिरंगें फूलों के समूह से गुंथित गुलदस्ता है। विविध धर्म, जाति, पंथ, सम्प्रदाय, मान्यताएँ, आस्तिक एवं नास्तिक जैसी विविध विचार धाराएं भारत में विद्यमान है। भारत का मध्यकालीन वातावरण उठापटक के दौर से गुजर रहा था। कबीर के कालखण्ड से लेकर भारत की आजादी के समय तक भारत का देशकाल उठापटक के दौर से गुजर रहा था। जो जिस समय जो विचारधारा तेज गति से समाज में फैलती वही विचारधारा उस समय वह प्रभावी हो जाती थी। विचारधारा एक ही ट्रैक पर एक समानगति से कभी भी भारत के पर्यावरण में नहीं फैली है। भारत में कुछ धर्म बाहर से आए और अपनी संस्कृति एंव विचारधारा लाए।

भारत में कुछ धर्म बाहर से आए और अपनी संस्कृति एवं विचारधारा लाए। भारत में ही कुछ धर्म पनपे पंथगत विचारधाराएं भी पनपी। सिक्ख धर्म ही ऐसा धर्म था जो भारत में पनपा। देश में विद्यमान उस कमजोरी को दूर करने के लिए गुरूनानक देव ने सिक्खपंथ या धर्म की नींव डाली। आज के समय में यह एक स्वतंत्र धर्म के रूप में विख्यात है। हिन्दू धर्म के मानने वाले लोग इसे हिन्दूधर्म से निकला हुआ मानते है। यह उतना सत्य नहीं है। सिक्ख धर्म के अनेक समझदार सिक्ख, सिक्खधर्म का उद्भव हिन्दू धर्म से न मानकर बौद्ध धर्म से निकला हुआ मानते है। बौद्धधर्म से उद्भवित होने के पीछे इनकी मान्यता है कि बौद्ध विचारधारा की मानवीय परक सोच। मानव एवं देश की सुरक्षा के लिए आवश्यकता पड़ने पर अहिंसा की सुरक्षा के लिए गुरूनानक देव ने बुद्धपरक मानवीय सोच के सहारे मानव समाज को जागरूक किया। गुरू गोविन्द सिंह सहित अन्य गुरूओं ने जरूरत पड़ने पर हथियार का इस्तेमाल कर मानव समाज की सुरक्षा की। सिक्खधर्म के प्रचार प्रसार में अनेक गुरूओं के साथ संतो ने अपनी वाणी से सिक्खधर्म को समृद्ध किया। यही कारण है कि मानवीय सोच को प्रश्रय देने वाले अनगिनत सन्तों की वाणियों को एकत्र कर गुरू की वाणी नाम से किताब में संकलन कर पुस्तक को ही गुरू का दर्जा देकर सिक्खधर्म उदारचेताभाव से समाज में सम्मानित भाव से जीने लगा। इस पुस्तक में सर्वाधिक मानवीय परक सोच वाले पद सन्त कबीर और सन्त रविदास (रैदास) के पद समाहित हैं। 'गुरू नानक अपने उपदेशों द्वारा नाम–स्मरण का महत्व बतलाते हैं और स्तुति की शक्तियों पर भरोसा रखते हैं। इस धर्म में कीर्तन, भजन और जाप तथा प्रार्थना का विशेष स्थान है। इसमे गुरू की महत्ता अक्षुण्ण है। गुरू–महिमा के विषय में नानकदेव कहते है हमे गुरू के मिलने पर ही अपने सांसारिक जीवन का अन्त और आध्यात्मिक जीवन के आरम्भ का अनुभव होता है, संसार में चाहे जितने भी मित्र या हितैषी हों, किन्तु गुरू के बिना परमेश्वर के अस्तित्व का बोध नहीं हो सकता है। गुरू ही प्रभु है–वही नारायण है। उनके प्रसाद से ही परमपद की उपलब्धि होती है। इस धर्म में सबसे ऊँची बात यह है कि इसमें आदर्श तथा व्यवहार में संतुलन स्थापित करने का प्रयत्न किया गया है। कहनी और करनी दोनो को मिलाकर देखा गया है। एकेश्वर की भावना, धार्मिक विडम्बना की निस्सारता, वर्ण–व्यवस्था की निरर्थकता एवं विश्व–बन्धुत्व के प्रचार द्वारा इस धर्म ने सामन्जस्य तथा समदर्शिता को ही सामने रखा है। इसमें वाहय विधि–विधान, मूर्ति पूजा, छुआछूत एवं साम्प्रदायिता को प्रश्रय नही दिया गया है। गुरूनानक के बाद इस धर्म के उन्नायक गुरू अनेक हुए।'[1]

सिक्ख धर्म मूलतः नानक पन्थनाम से विख्यात है। इस धर्म का प्रवर्तन स्वयं श्री नानक देव ही है। यह धर्म सामान्यतः कोरा आदर्शवाद, दार्शनिक मतवाद से दूर शुद्ध व्यावहरिक धर्म रहा है। वर्ण–व्यवस्था से नानकजी ने दूरी बनाते हुये प्रत्येक मनुष्य को स्वतंत्रतापूर्वक अपना विकास करने के लिए प्रेरित किया। गुरूनानक देव जी का मानना था कि परमात्मा कोई स्थिर व निश्चित वस्तु नहीं है। हम ज्यों–ज्यों उसका विस्तार करते हैं त्यों–त्यों वह विराट होता जाता है। वह स्वयं रसरूप है। वह अपने रंग में रंगा सर्वत्र व्याप्त है। वही मछुआ है, वहीं मछली है, वही पानी है, वही जल है वही चाराभी है इस तरह से नानक जी ने उस परम सत्य स्वरूप को स्वयंभू और नित्य माना है। गुरूनानक जी के समय के पूर्व कबीर काल एवं कबीरकाल के पूर्व अश्वघोष से लेकर सरहपा तथा आधुनिक काल में डॉ0 भीमराव अम्बेडकर ने अपनी वाणी से वर्णाश्रमवाद का प्रखर विरोध भारत के इतिहास में सुनाई देता है।

कबीर हों चाहे गुरूनानक अपने समकालीन सन्तों को विरोध की इस परम्परा का बल विरासत में मिला था।

विरासत में मिले विरोध के स्वर को नानक जी ने अपने कालखण्ड में उपयोग करते हुए मानवाधिकार की स्थापना का स्वर को फैलाया। नानक जी ने मानव के अधिकारो को नुकसान पहुँचाने वाले प्रत्येक तत्व का विरोध कर तर्क सम्मत चेतना को स्थापित किया। सिद्ध एवं नाथकाल, कबीर, गुरूनानक देव, एवं जायसी तक का समय भारत के वातावरण में निर्गुण संवेदना की भावभूमि को देखा जा सकता है। गुरूनानक देव के पूर्व के भारत का वातावरण और गुरूनानक देव के बाद से लेकर आजादी प्राप्त होने तक के भारत का वातावरण ब्राह्मण वर्चस्ववादियो द्वारा एवं अंग्रेजो द्वारा संचालित हो रहा था। अंग्रेजो के उपनिवेश वाद के पूर्व ब्राह्मणवादियों द्वारा अपना वर्चस्व बनाए रखने के लिए निरन्तर कर्मकाण्ड एवं चमत्कार को प्रश्रय दे रहे थे। वर्ण व्यवस्था, नारी के प्रति अनुदार भाव विद्यमान था। वैष्णव और शाक्तों तथा सगुण एवं निर्गुण के मध्य धार्मिक व्यापार और धार्मिक वर्चस्व भाव को लेकर टकराव होता रहता था। इसीलिए ऐसे समय सिद्धों का काल हो चाहे कबीर और गुरूनानक जी का काल हो सभी ने गुरू के रूप को महत्व दिया। गुरू को ज्योतिपुंज निर्गुण परमात्मा के रूप में स्वीकार किया। तत्कालीन समय के भारत का विश्लेषण किया जाए तो यह स्पष्ट हो जाता है कि भारत का समाज अलौकिकता में नहीं डूबा था न ही प्रेम और अहिंसा में। वर्चस्ववादियो द्वारा ही अपने को सर्वोपरि रखते हुए इतिहास लेखन करते रहे। वास्तविकता का उदघाटन गुरूओं, सन्तों, एवं समाज सुधारकों ने किया। ''जाति व्यवस्था में पदानुक्रम रक्त शुद्धि और पवित्रता प्रदूषण के स्केल पर आधारित था। यह पदानुक्रम सदा एक सा बना रहा। इस पर न व्यापार का प्रभाव पड़ा न राजसत्ता का'' इस रूप में जाति की कल्पनाएं निश्चित रूप से औपनिवेशिक सत्ता और ज्ञानकाण्ड द्वारा विधिवत प्रचारित और लागू की गई कल्पनाएँ हैं। ऐसी कल्पनाऐं देशी व्यापार को नष्ट करके अपने पाँव जमा रहे व्यापारियो के अस्तित्व की शर्त थी। ताकि यह जताया जा सके कि अंग्रेजी राज जाति को रूपान्तरित कर रही, व्यापार से भरपूर अर्थव्यवस्था को नष्ट नही कर रहा, इतिहासविहीन समाज को इतिहास और विश्व व्यवस्था में लाकर प्रगतिशील भूमिका निभा रहा है।

भाँति–भाँति से भारत का 'उद्धार' करने को उत्सुक सज्जन, हजारों साल पुराने टेक्टस के आधार पर उन्नीसवीं सदी के भारतीय यथार्थ का वर्णन करते भारतविद् जाति को नस्लाधारित बनाते समाज विज्ञानी, जाति को नीति–निर्धारण की बुनियादी इकाई मानते, उसे 'सिविल सोसायटी' के भारतीय संस्करण की हैसियत बख्सते प्रशासक, जाति व्यवस्था के परिवर्तनशील रूप और इस परिवर्तन में व्यापार की भूमिका की उपेक्षा करते इतिहासकार इन सबकी गतिविधियाँ मिलकर एक आख्यान की रचना करती है। इस आख्यान की असली भूमिका भारतीय इतिहास की वास्तविक समस्याओं और संघर्षो को विमर्श से बाहर कर देने की रही है। ब्राह्मणवाद से लेकर उपनिवेशवाद तक के निहित स्वार्थो द्वारा भारतीय परम्परा में उत्पन्न की गई जड़ताओं पर से, और उनके विरूद्ध किए गए संघर्षो से ध्यान हटाने की रही है।

भारतीय इतिहास के देशज आधुनिक पाठ (जिसमें यूरोपीय, गैर यूरोपीय आधुनिकताओं से संवाद करने की इच्छा और सामर्थ्य होनी चाहिए) के लिए भारतीय इतिहास–लेखन की केन्द्रीय समस्या इन वास्तविक समस्याओं पर ध्यान देने की देशज आधुनिकता के अन्तसंघर्षो और औपनिवेशिक आधुनिकता के चरित्र को समझने की ही है। उस प्रक्रिया का वर्णन करने की है, जिसके अन्तर्गत वर्णाश्रम के सिद्धान्त को व्यवहार में केवल अनोखे व्यक्तियों ने ही नहीं, सारे समाज ने धता बताया और वर्णाश्रमवादी तिलमिलाए। इस तिलमिलाहट जैसी ही, भारतीय समाज में अपनी और भी समस्याएँ थी। अपने संघर्ष थे।'[2] गुरू नानक जी सहित अनेक सिद्धो, गुरूओं को भारत का विषैला वातावरण विरासत में मिला था। ऐसे विषाक्त वातावरण में रहते हुए मानव की सेवा व सुधार हेतु अकल्पनीय योगदान दिया। ऐसे वातावरण में इन समस्त मानव के उद्धारको ने बौद्धिकता एवं तर्क को महत्व दिया। निर्गुण रचनाकार मूर्ति पूजा के विरोधी थे। नानक जी भी मूर्ति पूजा के विरोधी थे। यही कारण है कि सिक्खधर्म में नानक की मूर्ति पूजा नहीं होती है। नानक के उपदेश परक विचारो की पूजा की जाती है। नानक जी ने गुरू शब्द को ही महत्वपूर्ण माना है। गुरू शब्द को निर्गुण के रचनाकारो ने महत्वपूर्ण माना है। सिक्खधर्म में गुरू शब्द का तात्पर्य नानक माना जाता है। नानक शब्द का तात्पर्य भी गुरू ही माना जाता है। 'जैसा कि सर्वविदित है, सिक्ख धर्म में मूर्तिपूजा निषेध के कारण स्वयं नानक समेत किसी भी गुरू की मूर्ति पूजा नहीं होती है। किसी सिक्ख गुरू द्वारा में नानक की मूर्ति नहीं पाई जा सकती है। इसका अगर कोई असर हुआ है तो यह कि मूर्तिपूजा निषेध के चलते व्यक्तिपूजा को स्थान न मिलने से गुरू नानक के शब्दो का महत्व बढ़ गया है, जो गुरूग्रन्थ साहब में संकलित है। इसके अतिरिक्त जब उनकी छाप वहाँ दर्ज है तो यह पूर्णतः स्पष्ट है कि यहाँ किसी दोहे का रचयिता होने से कहीं बड़ी चीज जुड़ी है। उनके धर्मग्रन्थ के संदर्भ में सिक्ख समुदाय जब नानक के नाम का उपयोग करता है तो वह न केवल प्रथम गुरू का उल्लेख कर रहा होता है बल्कि 'गुरूग्रन्थ साहिब' की रचना तक समुदाय का नेतृत्व कर चुकी सभी हस्तियों का उल्लेख कर रहा होता है।

जिस महाला के अन्तर्गत पद को संकलित किया गया है। उसे देखकर ही पता चल जाता है कि पद किस गुरू का लिखा है। महाला की संख्या एक से पाँच तक है लेकिन पदों में केवल नानक का नाम ही पढ़ा जाता है। यानी पदों में नानक का नाम व्यक्तिगत पहचान की जगह प्रमुख के प्रतीक की तरह है। पंथ के इतिहास में उनके बाद आए गुरूओं ने समुदाय के लिए जो भी पद लिखें, वे नानक नाम से ही लिखे।'[3] आगे चलकर पंथवादी दुनिया में 'नानक' वास्तविक अर्थो में गुरू बने। इसी तरह पंथवादी दुनिया में 'रविदास' भी वास्तविक अर्थो में गुरू बने। निर्गुण अध्यात्म की दुनिया में रविदास और गुरू नानक गुरू अर्थरूप में स्वीकार किये गये। जनतन्त्र की बात करने वाले गुरूनानक देव ने अपने शिष्य लहना को अपनी गद्दी सौंप कर जनतंत्र को महत्व दिया था। नानक जी के लिए गुरू गद्दी मात्र नही बल्कि संदेश की योग्यता और सामर्थ्य की बात मुख्य थी। गुरू के उच्च पद को योग्यतम पात्र को सौंपने की यह परम्परा सिक्ख धर्म के विकास के साथ साथ और पुख्ता होती चली गई। गुरूनानक ने केवल 'गुरू' शब्द को साधना माना था ऐसा नही है क्योंकि नानक जी की साधना धर्म स्वरूप है। गुरू शब्द के अतिरिक्त अन्य साधना तत्व प्रमुख है। जैसे सत्संग, नाम स्मरण, राजभोग, सहज–समाधि, सुरति, शून्य भावना, सत्यनाम का गुणगान, कर्मकाण्ड का निषेध, शील,

संयम, संतोष आदि गुणधर्म विद्यमान है। सिद्धों एवं नाथो और निर्गुण सन्तों की विचार धाराओं में बौद्धधर्म की विचारधारा से आया है। 'बौद्धधर्म की जो विचारधारा सिद्धों, नाथों और सन्तों से होती हुई जन समाज में परिव्याप्त थी, उससे सिक्ख गुरूओं का प्रभावित होना अनिवार्य था। आत्मा, परमात्मा और भक्ति के स्वरूप का भली प्रकार मनन करने पर स्पष्ट ज्ञात होता है कि सन्तों के सन्तनाम, निर्गुण राम और अलख निरन्जन ही सिख गुरूओं की वाणी में प्रवेश पाए थे जो 'सच्चनाम' वाले भगवान बुद्ध, निराकार निर्वाण अथवा परमपद के ही रूपान्तरित नाम थे। सिद्धों के समय के 'घट–घट व्यापी और 'सदा निरन्तर बुद्ध' ही सन्तों और गुरूओं के सर्वव्यापी 'राम' अथवा 'परमात्मा' थे। बौद्धधर्म के नैरात्म्यवाद से इन सन्तों एवं गुरूओं का परिचय नहीं था। केवल सन्त पीपा का ही 'ना कछु आइबो ना कछु जाइबो' कथन इसका अपवाद है।

आहार–शुद्धि सम्बंधी प्राचीन रूढ़ियो का त्याग तथा नारी–निन्दा का परिवर्जन भी सिक्खधर्म की अपनी विशेषता है। इन दोनों बातों पर बौद्धधर्म का प्रभाव स्पष्ट रूप से पड़ा हुआ दिखता है। बौद्धधर्म में आहार–शुद्धि के स्थान पर चित्त शुद्धि पर बल दिया गया है। त्रिकोटि परिशुद्ध मांस खाना बौद्ध धर्म के अनुसार विहित है। सिक्खधर्म में भी मॉंस खाना वर्जित नहीं है। गुरूनानक ने तो मांस खाना उचित बतलाया है और उसका विरोध करने वालो को फटकारा है। उन्होने यहाँ तक कहा है कि मूर्ख लोग 'मांस–मांस ' कहकर झगड़ा करते है, वे ज्ञान–ध्यान कुछ भी नहीं जानते। .....जिनका गुरू अंधा होता है, वे न खाने वाले हराम की कमाई तो खाते है, किन्तु खाने योग्य मांसादि त्याग देते है......चारो युगों में मांस का प्रयोग होता रहा है, इसीलिए पुराणो और कुरान आदि ग्रन्थों में भी मांस खाने का वर्णन है–

'मासु मासु करि मूरखु झगड़े,
गिआनु धिआनु नहीं जाणै।'
अभखु भखहि भखु तजि छोड़हि,
अंध गुरू जिन केरा।
मासु पुराणी मासु कतेबीं
चहु जुगि मासु कमाणा।'

बौद्ध धर्म में स्त्रियों के लिए गौरवपूर्ण स्थान प्राप्त है। भगवान बुद्ध की भिक्खुनी–शिष्याओं के नाम भारतीय संस्कृति के प्रचार एवं प्रसार में भिक्खुओं से कम उल्लेखनीय नहीं है। भिक्खुनी संघ, महिलाओं की एक आदर्श धर्म वाहिका मंडली थी। भगवान ने स्त्रियों की प्रशंसा की थी और कहा था कि कोई–कोई स्त्रियां पुरूषों से भी बढकर बुद्धिमती तथा शीलवती होती है। उन्हीं की कुक्षि से शूरवीर राजा तक जन्म लेते है। इसी प्रकार सिक्ख गुरूओं ने भी स्त्रियों की प्रशंसा की है। उन्होनें भी भिक्खुनियों की भाँति उपदेशिकाओं की नियुक्ति की थी जिन्होने नारी समाज में सद्धर्म का श्रोत प्रवाहित किया था। गुरू नानक ने तथागत के समान ही स्त्रियों की प्रशंसा करते हुए कहा था कि स्त्री से ही मनुष्य जन्म लेता है।......स्त्री से ही जगत की उत्पत्ति का क्रम चलता है।'4 सिद्धों नाथों एवं सन्तमत (निर्गुण) धारा में बौद्ध मान्यताओं का प्रभाव अधिकाधिक पड़ा है। श्री 'गुरूग्रन्थ साहिब' पर भी बौद्ध मान्यताओं का प्रभाव पड़ा है।

यहाँ मेरा उद्देश्य प्रधानतः धर्म साधना के प्रधान तत्वों में से गुरू शब्द, परमात्मा, सत्तनाम में बौद्ध विचारधारा पर दृष्टिपात करेंगे। गुरू नानक ने सिद्धों, नाथों के समान ही गुरू की महिमा गायी है। गुरू को ही सब कुछ माना है। गुरू ही शिव, ब्रह्मा, विष्णु आदि सभी कुछ है –

1. गुरूमुखि नादं गुरमुखि वेद गुरूमुखि रहिआ समाई।
   गुरू ईसरू गुरू गोरखु वरमा गुरू पारबती माई।।
   नानकवाणी (पृ0 81)
2. बिनु गुर मैलु न उतरै बिनुहरि किउ घर वासु।।
   नानकवाणी (पृ0 111)
3. गुरू बिनु गिआनु न पाईए।
   नानकवाणी (पृ0 153)

स्पष्ट शब्दों में स्वीकारा है बिना गुरू के ज्ञान प्राप्त नही होता है। गुरू नानक जी ने गुरू को किन–किन रूपों में स्वीकारा है? गुरू नानक वाणी में अनेक जगहों पर उद्घृत किया है–

'1. गुरू पउड़ी बेड़ी गुरू गुरू तुलहा हरि नाउ।
2. गुरू सरू सागरू बोहिथे गुरू तीरथ दरिआउ।। नानक वाणी (पृ0 108)
3. किउ गुरू बिनु त्रिकुटी छुटसी सहजि मिलिऐ सुखु होई। नानक वाणी (पृ0 111)
4. इतु तनि लागै बाणीआ, सुखु होवै सेव कमाणीआ। नानक वाणी (पृ0 130)
5. गुरू बिनु गिआनु न पाईऐ बिखिआ दूजा सादु। नानक वाणी (पृ0 153)
6. गुरू समानि तीरथु नहीं कोइ। नानक वाणी (पृ0 780)

सिद्धों–नाथों एवं सन्त मत (निर्गुण) मतावलम्बियों ने गुरू को नाद रूप में माना है। गुरू को परमतत्व के समान माना है। गुरू ही सीढ़ी है, गुरू ही नाव है, गुरू ही छोटी नाव है और हरिनाम है, गुरू ही सरोवर है, सागर है, जहाज है, गुरू ही तीर्थ है, और सरिता है,2 गुरू के बिना त्रिकुटी (बन्धन) नही छूटती है, गुरू की कृपा से ही सहजावस्था का सुख प्राप्त होता है,3 गुरू के उपदेश से ही सुख होता है,4 गुरू के बिना ज्ञान प्राप्त नही होता,5 गुरू के समान अन्य कोई तीर्थ नही है,6' 5

1. साचा साहिब साचु नाइ। भाखिआ भाउ अपारू।। नानक वाणी (पृ0 81)
2. आपे आपि निरंजन सोई – नानक वाणी (पृ0 81)
3. तू सदा सलामति निरंकार – नानक वाणी (पृ0 87)
4. आदि अनीलु अनादि अनाहति जुग–जुग एको वेसु – नानक वाणी (पृ0 93)
5. घटि–घटि गहिर गंभीरू – नानक वाणी (पृ0 121)
6. मनरे साची खसम जाई।
   जिनि तनु मनु साजि सीगारिआ तिसुसती लिवलाइ – नानक वाणी (पृ0 154)
7. रामनामु धनु निरमलो – नानक वाणी (पृ0 156)
8. नानक निरभउ निरंकारू होरि केते राम रवाल– नानक वाणी (पृ0 329)
9. गिआनु धिआनु नरहरि निरवाणी – नानक वाणी (पृ0 792)
10. ओं सतिनामु करता पुरखु निरभउ निखैरू, अकाल मूरति अजूनी सैभंगु प्रसादि– नानक वाणी (पृ0 491)

गुरू नानक का हरि सत्यनाम वाला है,1 वह निरंजन है,2 वह शाश्वत रहने वाला निराकार ब्रह्म है,3 वह आदि, अनादि, वर्णरहित, अनाहत तथा युग–युगान्तरों में एक ही रूप में रहने वाला है,4 वह अथाह और गंभीर है तथा घट–घट में रम रहा है,5 वह खसम पति स्वरूप है, उसी ने तन–मन को रचकर संवारा है,6 वह रामनाम भी है वही निर्मल धन है,7 वह निराकार प्रभु निर्भय है, रामकृष्ण

आदि तो धूल है,8 वह स्वयं निर्वाण स्वरूप है,9 वह ओंकार (प्रणव) सत्यनाम, कर्तापुरूष, निर्भय, निर्वेर, अकाल मूर्ति, आयोनिज और स्वयंभू है,10'[6]

क्या गुरू नानक देव पर बौद्धमत का प्रभाव पड़ा था? नानकवाणी के अध्यमनोपरान्त एवं अन्य कृतियों के अनुशीलन से यह स्पष्ट हो जाता है कि गुरू नानक देव पर बौद्ध विचारधारा का गहरा प्रभाव पड़ा था। बौद्धधर्म के महायान सम्प्रदाय की विचारधारा को देखा जा सकता है। अनेक स्थलो पर गुरू नानक देव बुद्ध का भी स्मरण करते है।

'गुरूनानक की वाणियो का अध्ययन करने से उन पर महायान बौद्ध धर्म का प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। शून्य, शून्य समाधि, अनाहत, दशमद्वार, शून्यमण्डल, सहज गुफा, निर्वाण, निरंजन, सत्यनाम, सहजावस्था, सुरति, कर्म स्वकता, तीर्थव्रत आदि कर्मकाण्डों का निषेध, गुरू कहा माहात्य, ईश्वर की घट–घट व्यापकता, निर्वाण–पद ग्रन्थ प्रमाण का बहिष्कार, सन्त महिमा, खसम भावना, जातिवाद, का त्याग, शील आदि गुणो की ग्राहकता, संस्कार, परमपद, मोहमाया का त्याग, सहज योग, स्नान शुद्धि भावना का परित्याग, पुनर्जन्मवाद को अंगीकार, अवतारवाद का खण्डन, यज्ञ होम आदि का परिवर्जन, इत्यादि बौद्धधर्म के तत्व नानकवादी में आए हुए हैं। इनमे से कुछ ऐसे है जो सन्तों से होकर नानक तक पहुँचे थे और कुछ बौद्ध विद्वानो के सत्संग, सिद्धो, नाथो एवं वज्राचार्यो की धर्म साकच्छा (धर्मचर्चा) तथा बौद्ध देशो के भ्रमण से प्राप्त हुए थे।

गुरू नानक ने अनेक स्थलो पर भगवान बुद्ध को भी स्मरण किया है। उन्होने तथागत को ज्ञानखण्ड का निवासी माना है, साथ ही परमात्मा को भी सच्चखण्ड में रहने वाला बतलाया है, उन निराकार निरंजन परमात्मा का वर्णन बुद्ध करते है–

आखहिं ईसर आखरि सिध। आखहि केते कीते बुध।
(बुद्ध भी परमात्मा के भय मे रहते हैं।)
भै बिचि सिध बुध सुर नाथ।
(सभी बुद्धो पर परमात्मा की आज्ञा चलती है।
सभे बुधी सुखि सभि सभि तीरथ समि थान।
हुकुमि चलाए आपणै करमीं वहै कलाम।।

गुरूनानक के इन वर्णनो से ऐसा नही समझना चाहिए कि वे बुद्ध के प्रमाण से वंचित थे। निराकार निरंजन, अलख तथा सर्वव्यापी परमात्मा की देशना कर जो प्रवाह सिद्धो के काल में प्रवाहित हुआ था, उसी का प्रभाव कबीर आदि सन्तों पर पड़ा था और नानक आदि सिक्ख गुरूओं ने भी उस प्रवाह से प्रभावित होकर सत्यनाम वाले परमात्मा का गुणगान करते हुए कबीर की भाँति बुद्ध का ही गुणगान किया।'7 इस तरह से हम देखते है कि महायानी सिद्धों, नाथो, सन्तों और गुरूनानक की वाणी में समता का भाव बौद्ध विचार धारा का है। वस्तुतः निश्चित रूप से बौद्ध धर्म की देन है। अनेक शताब्दियों से भारत का जनमानस बौद्ध विचारधारा से प्रभावित होता हुआ सिक्खधर्म में सिक्ख गुरूओं के द्वारा भी अंगीकृत हुआ है।

तत्कालीन भारतीय वातावरण में बौद्ध धर्म की विचारधारा से प्रभावित होकर सिद्धों, नाथों एवं सन्तमत के अनेकानेक सन्तों ने निर्भीक भाव से भारतीय समाज को जगाने का कार्य किया। गुरू नानक जी भी ऐसे ही बहते पानी के समान प्रकृति के प्रांगण में रहते हुए ज्ञान चर्चा करते हुए चलते रहते थे। प्रकृति के बीच रहने के कारण इनका स्वभाव भी प्रकृति के समान विनम्रता भरा, कभी रोष भरा दिखाई देता है। ' गुरू नानक अद्‌भुत साहसी और निर्भय प्रकृति के सन्त थे। अपना संदेश देने वे हिमालय से लेकर अरब और मिश्र के रेगिस्तान तक में गए। मार्ग में जो भी बाधाएँ या अड़चने आयी, उनका डटकर मुकाबला किया। वे मृत्यु से निर्भय तो थे ही, लेकिन उन्होने अपने अनुयायियों को भी मृत्यु के डर से ऊँचा उठा दिया था। वे सदा कहते थे कि मृत्यु से बढ़कर कुछ भी श्रेयस्कर नहीं है। वे अपनी इन्हीं निर्भय शिक्षाओं के लिए गिरफ्तार भी किए गए, किन्तु किसी भी अत्याचार या भय से उनकी धार्मिक भावना रोकी न जा सकी। गुरू नानक देव में सन्त स्वभाव के अनुकुल विनम्रता तो थी, लेकिन दमित मानवता को देखकर स्वभाव कहीं कहीं उग्र भी दिखाई दिया। उन्होने कठोर वाणी का उच्चार नाम मात्र के लिए किया। वे पापी और दुष्कर्मियों से भी स्नेह करते थे। वे अपनी मृदु मुस्कान से मानव का ह्रदय परिवर्तित कर देते थे। उन्होने अपने अनुयायियों को प्रेम त्याग, विनम्रता एवं कर्मयोग का पाठ पढाया। नानक देव का आक्रोशी स्वर भी दृष्टिगोचर होता है वे पीड़ित, दमित मानवता के पक्षधर थे। उन्होने क्रूर राजा और बादशाहों की कड़ी आलोचना की है। जिस समय शासक वर्ग अनेक निरपराध व्यक्तियों को तलवार के घाट उतार रहा था' उस समय नानक का ह्रदय बाल्मीकि की तरह द्रवित हो उठा था और उन्होने परमात्मा से प्रश्न किया– एती मार पई कुरलाणें

तै की दादुन आइआ।'8

उक्त पंक्ति से गुरूनानक देव की भावना को समझा जा सकता है। हे प्रभु इन अत्याचारी आततायियो से जनमानस में जो चीत्कार व्याप्त है उसको देखकर आपके दिल में कोई दर्द नही होता है?

निष्कर्षः गुरूनानक देव के विचारो से उन्हे मानवतावादी और दार्शनिक विचारक कहा जा सकता है। गुरू नानक जी ने अपने जीवन में जो भी ज्ञानार्जन प्राप्त किया वह सब मानव समाज में बाँट दिया। उन्होने जाति–पाति, धर्म–सम्प्रदाय, राजा–रंक, अमीर–गरीब, स्त्री–पुरूष का कोई भेद नही रखा। परमात्मा से प्राप्त आदेशानुसार अपने सिद्धान्तों का प्रचार प्रसार निर्भयतापूर्वक किया। दार्शनिको की भाँति नये मार्ग तलाशने व नया ज्ञान ज्ञानार्जन करने के लिए तर्क–वितर्क, शास्त्रार्थ करते हुए अन्य मतावलम्बियों पर विजय प्राप्त की। गुरूनानक जी ने जिस आदर्श समाज की कामना की उस समाज में ईश्वर–साक्षात्कार और आत्मोपलब्धि सबसे ऊँचे आदर्श माने गये। इनका मानना था कि जिस समाज में मानव एक दूसरे के प्रति आदर का भाव रखेगा व उस समाज से पाप, ताप, दुख–दोष, ईर्ष्या–द्वेष, दम्भ–पाखण्ड अपने आप समाप्त हो जायेंगे। ऐसे समाज में सेवा, सह्रदयता, सहानुभूति, प्रेम आदि तत्वों का बोलबाला रहेगा। 'जिन सुधारों का गुरू नानक देव ने प्रतिपादन किया, वे बीसवीं शताब्दी के इस वैज्ञानिक युग में आदर्श रूप में सोचे जा रहे है। यूरोपीय, आर्थिक, सामाजिक और राजनीति सिद्धान्तों की कसौटी पर गुरू नानक द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्त बिल्कुल खरे उतरते है। जिस सामाजिक संगठन की ओर गुरू महाराज का लक्ष्य था, उसे पिनकाट ने ईश्वर से भयभीत प्रजातन्त्र का भ्रातृभाव की संज्ञा दी है। गुरू महाराज द्वारा निर्मित समाज में सभी को समान भाव से जीवन व्यतीत करने की प्रेरणा दी गई है। इस समाज में जन्म, जाति, धर्म,

लिंगभेद के कारण किसी व्यक्ति को अन्य लोगो पर अपनी श्रेष्ठता स्थापित करने के लिए कोई स्थान नहीं है'9 गुरू नानक जी ने इसी प्रकार के समाज की स्थापना पर बल दिया था। ऐसे समाज के निर्माण के लिए सदैव तत्पर रहते थे। अपने जीवनकाल में अपने आदर्श समाज को वास्तविक रूप देने के लिए सिक्खो की एक बस्ती कर्तारपुर में बसाई थी। इसे नानक जी के आदर्शो की पूर्ति का उदाहरण माना जा सकता है।

संदर्भ ग्रंन्थ

1. रहीम–साहित्य की भूमिका– डॉ0 बमबम सिंह, 'नीलकमल'– बिहार – राष्ट्रभाषा परिषद पटना–4 संस्क प्रथम 1979–पृ0 66
2. अकथ कहानी प्रेम की (कबीर की कविता और उनका समय) –पुरूषोत्तम अग्रवाल– राज कमल प्रकाशन नई दिल्ली– 002 चौथा संस्क–2016 पृ0 123–124
3. भक्ति के तीन स्वर : मीरा, सूर, कबीर– जॉन स्ट्रैटन हौली अन0 अशोक कुमार– राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली 02 –संस्क प्रथम 2019 पृ0 48
4. हिन्दी सन्त साहित्य पर बौद्ध धर्म का प्रभाव– डॉ0 विद्यावती ' मालविका'–सम्यक प्रकाशन नई दिल्ली–63 संस्क 2019 –पृ0 309
5. हिन्दी सन्त साहित्य पर बौद्ध धर्म का प्रभाव– डॉ0 विद्यावती 'मालविका' – सम्यक प्रकाशन नई दिल्ली–63 संस्क 2019 पृ0 275
6. हिन्दी सन्त साहित्य पर बौद्ध धर्म का प्रभाव– डॉ0 विद्यावती 'मालविका' सम्यक प्रकाशन नई दिल्ली–63 संस्क 2019 पृ0 274
7. हिन्दी सन्त साहित्य पर बौद्ध धर्म का प्रभाव–डॉ0 विद्यावती 'मालविका' सम्यक प्रकाशन नई दिल्ली 63 संस्क 2019 पृ0 280–281
8. गुरू रविदास और गुरूनानक देवः एक तुलनात्मक अध्ययन–उमेश कुमार गौतम बुक सेन्टर दिल्ली 93 संस्क प्रथम–2008 पृ0 19
9. गुरू नानक देव जीवन और दर्शन – जयराम मिश्र – लोक भारती प्रकाशन इलाहा0 01–सं. द्वितीय 2017 पृ0 250

उत्तरी भारत की संत परंपरा में आने वाले गुरु नानक देव के साहित्य की प्रासंगिकता

*डॉ. सिम्मी चौहान

* हिन्दी विभाग, मोती लाल नेहरू कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय

'भक्ति दखिन उपजी, लाए रामानन्द।' अर्थात् उत्तर भारत में भक्ति का प्रवाह दक्षिण से उभरकर आया, जिसे स्वामी रामानन्द लाए। दक्षिण भारत में भक्ति जो लहर जनमानस का अटूट हिस्सा नहीं बन पाई थी। वही लहर एक सशक्त आन्दोलन का रूप लेकर उत्तरी भारत के कोने–कोने में फैली। उत्तर भारत की संत परम्परा के फैलने के ऐतिहासिक कारण थे। अपने वास्तविक रूप में उत्तर भारत में यह भक्ति आन्दोलन एक सामाजिक आन्दोलन का रूप लेकर सामने आया। भारतीय संस्कृति को भी इस आन्दोलन ने नए आयाम दिए। लेकिन भारतीय संस्कृति में जो सबसे महान तत्व होता है वह है दृ विचार स्वातंत्र्य। संत कवियों में यह विचार स्वातंत्र्य दिखाई देता हैं जो उन्हें उनके तत्कालीन युग में भी खरी बात कहने की हिम्मत देता हैं। किसी भी संत के संदेशों एवं विचारों की सार्थकता मुख्यतः दो बातों पर आधारित होती है दृ पहली कि वे विचार विश्व भर के लिए हो , न कि किसी जाति–धर्म विशेष के लिए। दूसरी, वे सार्वकालिक हों। इस दृष्टि से कई शताब्दियों के बाद भी कबीर, गुरु नानक, रैदास, दादू आदि के विचार आज की परिस्तिथियों पर इतने सटीक और सार्थक लगते है कि जैसे उन्हें आज के सामयिक परिवेश को ध्यान में रखकर ही लिखा व कहा गया हो। इस प्रासंगिकता को उकेरने से पहले संत परंपरा में गुरु नानक के योगदान के विषय में थोड़ा जान लेना आवश्यक है।

15वीं शताब्दी में उमड़ी इस भक्ति–स्रोतस्विनी का प्रवाह विभिन्न सम्प्रदायों से जुड़े संतों, भक्तों और सूफियों द्वारा उनकी अपनी–अपनी भाषाओं में उपदेशों, शिक्षाओं और विचारों के रूप में अभिव्यक्त हुआ हैं। भारत में मुस्लिम शासकों की जड़े मजबूत होने से दिन–प्रतिदिन उनके अत्याचारों के बढ़ने से एक भिन्न भक्तिमार्ग की धारा बह निकली, जिसमें जाति–पांति, छुआछूत, आर्थिक ऊँच–नीच आदि से प्रताड़ित सभी जन अवगाहन कर सकें। बंगाल में चैतन्य महाप्रभु, महाराष्ट्र और मध्यप्रदेश के विस्तृत भाग में नामदेव एवं रामानन्द ने 'निर्गुणपन्थ' की नींव डाली। हिंदी साहित्यिक कोश में 'निर्गुण' शब्द की स्पष्ट व्याख्या दी गई है – निर्गुण शब्द अपने पारिभाषिक रूप में सत्व आदि गुणों से रहित या उसके परे भी जाने वाली किसी ऐसी अनिर्वचनीय संज्ञा का बोधक है, जिसे बहुधा परम तत्व परमात्मा तथा ब्रह्म जैसे संज्ञाओं द्वारा अभिहित किया जाता हैं। निर्गुण शब्द सर्वप्रथम उपनिषदों में अद्वितीय देन का एक विशेषण बन कर आया है। डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी का मानना है कि– 'वे भगवान को सत्व, रज, तमोगुणों से अतीत मानते हैं और इसी त्रिगुणातीत रूप को निर्गुण शब्द से प्रकट करते हैं।' इस निर्गुण पन्थ की गौरवशाली परंपरा को उत्तर भारत की संत परंपरा के संतों ने (कबीर, नानक, नामदेव, पीपा, दादू दयाल, जायसी आदि) अपने काव्य का आधार बनाकर विकसित किया। गुरु नानक देव भी इसी निर्गुण ब्रह्म को पाने की ओर संकेत करते हुए है कि –
"निरगुण नाम निधानु है, सहजे सोझी होई।"

हिंदी के निर्गुण कवियों ने ब्रह्म के गुण रहित स्वरूप के लिए ही किया है। मध्यकालीन भारत में बाहरी आक्रान्ताओं का कहर हिन्दुओं पर टूट रहा था, तब उस दौर में मानवता को आत्मगौरव का पाठ पढ़ा रहे गुरु नानक देव ने सिख–पन्थ की नींव रखी। उत्तर–पश्चिमी सीमांत, सिंध सहित पंजाब क्रूर महजबी अत्याचार से सर्वाधिक प्रताड़ित था। इन क्षेत्रों में मन्दिरों को तोड़ने के साथ यहाँ मूल निवासियों को तलवार के बल पर जबरन इस्लाम स्वीकार करने के लिए मजबूर किया जा रहा था, जिसके प्रतिकार स्वरूप देश के अन्य भागों में भक्ति आन्दोलन प्रांरभ हुआ। इसी आन्दोलन से कई संत देश में जनजागृति लाने में सहायक हुए और उनके संदेश को पंजाब में प्रचारित करने का जिम्मा गुरु नानक देव ने उठाया। इस मध्ययुगीन संत परंपरा में पंजाब के भक्ति–आन्दोलन का विशिष्ट स्थान है। इस आन्दोलन के प्रवर्तक गुरु नानक देव थे। उन्होंने 15वीं शती के उत्तरार्ध में मनुष्य की मानुषिक–वृत्तियों को न केवल उद्भूत ही किया, बल्कि उन्हें विकास का सुअवसर प्रदान करने के लिए अपनी स्वतंत्र–विचारधारा पर एक व्यवस्थित और परिमार्जित परंपरा की नींव भी रखी। इस परंपरा में एक के बाद दस महान संतों की श्रृंखला देखी जा सकती हैं। गुरु नानक के उत्तराधिकारी गुरुओं ने जिस खालसा पन्थ की भव्यता को साकार किया, उसकी नींव गुरु नानक ने रखी थी। यह बात अलग है कि उसकी परिकल्पना तब न की हो, परन्तु एक निजी, मौलिक, समतावादी चिन्तन और सामाजिक–आध्यात्मिक नव–सर्जना का बीज उन्हीं के द्वारा रोपा गया था। गुरु नानक के बाद अन्य 9 गुरु हुए– गुरु अंगद देव, गुरु अमरदास, गुरु रामदास, गुरु अर्जुन देव, गुरु हरगोविंद, गुरु हरिराय, गुरु हरिकिशन, गुरु तेगबहादुर और गुरु गोविन्द सिंह। उत्तरी भारत की संत परंपरा का एक ऐतिहासिक और सामाजिक दस्तावेज़ गुरु ग्रन्थ साहिब में संकलित भक्त वाणी का संग्रह है। जो अपने आत्मिक साम्य, आत्मीयता, सेवाभावना एवं

लोकसंग्रह की यह परंपरा आज भी समूचे विश्व में अपनी उपस्थिति और पहचान बनाए हुए हैं।

उत्तरी भारत की संत परंपरा के दो प्रमुख कवि कबीर और गुरु नानक थे। इन कवियों ने भक्ति को मानव प्रेम, ज्ञान और सत्य की जमीन से जोड़कर भक्ति को नए रूप में प्रस्तुत किया। इन्होनें समाज को जिस रूप में देखा, जाना, जिया और समझा उसे उसी रूप में ही अपने काव्य में अभिव्यक्त किया। लगभग सभी संतों ने आम व्यक्ति तथा गृहस्थ जीवन के प्रति आस्था रखते हुए इसी मार्ग का अनुपालन कर प्रभु को पाने की बात कही है। गुरु नानक ने अपनी यात्राओं के माध्यम से अपने समाज, लोकजीवन से सीधे निकट के अनुभव प्राप्त किए। तत्कालीन समाज में साम्प्रादायिक भेदभाव को लक्ष्य कर उन्होंने एक ईश्वर के नाम–जप का सिद्धांत लोगों के सामने रखते हुए जपुजी साहब में कहा कि ईश्वर सत्यस्वरूप है, निर्भय है, निर्वैर है, अकाल मूरत अर्थात् अनश्वर है, अजोनी सेभ, महान तथा दयालु है। उन्होंने अद्वैत वेदांत की स्थापना के अनुसार यह स्थापना भी दी कि परमात्मा हमारे अत्यंत निकट भी है और दूर भी है –

"गावै को जापै दिसै दूर
गावै को वेखै हदराहदूरि।"

गुरु नानक देव के व्यक्तित्व के बारे में डॉ० नामदेव उतकर ने लिखा है – "दार्शनिक, योगी, धर्मसुधारक, समाज सुधारक, कवि, देशभक्त, निराकारवादी थे। पर अवतारवादी, मूर्तिपूजा, ऊँच–नीच, वर्ण–भेद उन्हें अमान्य था। वे सुशिक्षित तथा बहुश्रुत थे। उन्हें संतों का सत्संग बहुत प्यारा था, गुरु नानक देव सिख मत के प्रवर्तक एवं संस्थापक थे। नानक ने अकाल पुरूष की प्राप्ति के लिए उपदेश दिए है।" इसी तरह उन्होंने अपने काव्य में विदेशी आक्रमणकारियों द्वारा भारत की सनातन और बहुलतावादी संस्कृति को किस प्रकार रौंदा जा रहा था इसका वर्णन भी उनकी रचनाओं में यथास्थान मिलता हैं। उस काल में जब बाबर के सैनिकों ने नानक को बंदी बना लिया था और उनको कई प्रकार याताएं दी गई। इतना ही नहीं, बाबर के सैनिकों की क्रूरता ने जब भयंकर अत्याचार मचाया, नारियों तक को उनके केश काटकर धूल में घसीटा, धन और यौवन को लूटा आदि कष्टों को देख गुरु नानक की करुनाद्र वाणी ने परमात्मा तक को उपालम्भ देते हुए कहते है–

"खुरासान खसमाना कीया हिन्दुस्तान डराइआ।
आपे दोस न देई करता जमु करी मुगल चढ़ाइआ।
एती मार पई कुरलानै तै की दरदु न आइआ।
करता तूं सभना का सोई।
जे सकता सकते कउ मारे ता मनी रोसु न होई।"

अर्थात् खुरासान पर बाबर ने आक्रमण किया तो परमात्मा तुमने उसकी रक्षा की, किन्तु उसने हिंदुस्तान को अपने आतंक से भयभीत कर दिया तो भी तुमने उसको नहीं रोका, बल्कि स्वयं पर दोष से बचने के लिए तुमने मुगलों को यमदूत–मृत्यु का दूत बनाकर भेज दिया। हिन्दुस्तान पर आक्रमण करा दिया। सब ओर त्राहि–त्राहि मची हुई है, रोने की ह्रदय–विदारक चीखें सुनाई पड़ रही हैं, किन्तु तुम्हारा मन जरा भी नहीं पिघला। तुम्हें थोड़ा–सा दर्द भी नहीं जगा। तुम कैसे ईश्वर हो। नानक देव ने इन पंक्तियों में उस कालखंड में मुगलों द्वारा पंजाब ही नहीं, अपितु पूरे हिंदुस्तान पर ढाहे गए अत्याचारों का वर्णन किया हैं। इस्लामी शासकों की वीभत्स यातनाओं से अधिकांश लोग अपनी पूजा–पद्धति विस्मृत कर चुके थे। यहाँ तक की उनके कोपभाजन से बचने के लिए अपनी मूल जीवनशैली और खानपान में भी सावधानी बरत रहे थे। नानक देव ने बिना किसी भय के 'एकं सत' की वैदिक परंपरा का संदेश दिया। भारत के मूल आध्यात्मिक मूल्यों की पुनरुस्थापना और सिख पन्थ के संरक्षण में धर्म की रक्षा होते देख तत्कालीन साम्राज्यवादी शक्तियों की बौखलाहट बढ़ गई। नानक ने बाबर की इस बौखलाहट और उनके जैसे कई राजाओं द्वारा मासूम जनता पर किए गए अत्याचारों की कठोर शब्दों में निंदा की है –

"राजे सींह मुकदम कुत्ते।
जादू जगाइन बैठे सुत्ते।
चाकर नह्दा पाइन्ही घाउ।
रतु पितु कुतिहो चढ़ जाहु।
जिथे जिआ होसी सार।
नकी वडी लाइत बार।"

अर्थात् राजे व्याघ्र की भांति हिंसक हैं तथा उनके कर्मचारी कुत्तों की भांति लालची, जो लोगों को बिना वहज ही उत्पीड़ित करते हैं तथा अपने पैरों के नाखूनों से लोगों को घायल करते रहते है, एवं कुत्तों की भांति उनका रक्त चाट जाते हैं। जहाँ इनके कर्मो का हिसाब लिया जाएगा, वहाँ इनकी नाक काट ली जाएगी। नानक देव का यह व्यंगात्मक लहज़ा वर्तमान राजसत्ता एवं उसके कर्मचारियों पर ज्यों का त्यों सटीक बैठता हैं। आज भी यथास्थान सामाजिक–राजनीतिक परिस्थितियाँ इतनी हिंसक दिखाई देती है कि लगता है ईश्वर तो छोड़िए इंसानियत का ही लोप होता नज़र आता हैं।

नानक देव अपने काव्य में ईश्वर पर ही नहीं, उन अनैतिक, अकर्मण्य, धूर्त और स्वार्थी राजाओं को भी नहीं बख्शा जिन्होंने जिस सोने के चिड़ियाँ जैसी रत्न रूपी भारत देश की आन–बान को नष्ट किया है। वे कहते है कि मरने के बाद इन कुत्तों का कोई नामलेवा भी नहीं होगा, सार–संभाल करने वाला कोई नहीं होगा –

"रतन बिगाड़ी विगोए कुत्ती
मोईआं सारं न काइ।"

इन शब्दों में नानक देव के शब्द ही नहीं समस्त हिंदुस्तान की आम जनता के ह्रदय की सामूहिक पुकार चीख बनकर सुनाई देती हैं। वर्तमान समय में मॉब लीचिंग, धार्मिक मूल्यों को लेकर घटने वाली घटनाएं हिंदुस्तान के रत्न की धूमिल होती चमक ही नहीं, उसका अस्तित्व ही मिट्टी में मिला रही हैं।

आज के युग की वैज्ञानिक और तर्कशील सोच हर विचार को अपनी बुद्धि के पैमाने पर परखती हैं। मध्यकालीन युग में गुरु नानक ने भी यही कहा कि कोई भी बात इसलिए स्वीकार मत करो क्योंकि उस विचार का अनुपालन आपकी परंपरा या लंबे समय से किया जा रहा है। अपितु किसी के विचारों में छिपे मूल सत्व के पीछे की धारणा को अपनी बुद्धि की कसौटी पर परखो फिर उसे अपने जीवन का सूत्र बनाओ। उनके विचारों की यह तर्कशीलता ही आज की पीढ़ी को पसंद आती है जिससे उनकी वाणी तत्कालीन समाज में अपना स्थान कायम किए हुए हैं। उन्होंने अपने काव्य के माध्यम से बहुजन हिताए के लिए सदाचार और नैतिक भावना पर बल

दिया। साथ ही इस वर्गीकृत समाज में एक परमात्मा एवं सभी उसी बीज परम् तत्व से उत्पन्न संतानें है–

"एक पिता एकस के हम बारक।"

इसी एक पिता की हम सब सन्तान हैं, हमें इसकी संतानों में स्थित परमात्मा की ज्योति को पहचानने की आवश्यकता है। वे कहते है जब भी किसी की जान–पहचान करनी हो उसकी जाति–मज़हब–आदि ना पूछे बल्कि, उसके भीतर की ज्योति को पहचाने जिसमें वह ईश्वर प्रकाशित हैं–

"जानहु जोति न पूछहु जाती आगे जाति न हे।"

अर्थात् हम सभी को इस समाज में ये भेदभाव भुलाकर एक पिता की सन्तान की भांति जीवन जीना चाहिए। जहाँ कोई छोटा–बड़ा नहीं। लेकिन इस समाज में मनुष्य ने अपनी सुविधानुसार इसका विभाजन कर रखा है और ऊँच–नीच, जाति–पांती का पाखंड खड़ा किया हुआ है। भारतीय संविधान में भी समानता का अधिकार दिया गया है फिर भी इस समाज में अमीर–गरीब, अछूत, ऊँच–नीच, जाति के नाम पर मनुष्यता रौंदी जा रही है। इस मन्दिर–मस्जिद, छुआछूत जैसी कुरीतियों पर गुरु नानक साहब कई वर्षो पहले ही कह दिए थे कि–

"नीचा अंदरि नींच जाति नीची हूं अति नीच।
नानक तिनके संगि साथि वडीआ सू किआ रीस।।"

अर्थात् जो नीचों में नीच जाति तथा उस नीच जाति में भी सबसे नीची जाति है नानक सदैव ही उनके साथ हैं। जो व्यक्ति स्वयं को दूसरों से ऊँचा और बड़ा मानते हैं, उनसे मेरा कोई संबंध नहीं हैं। उन्होंने तत्कालीन समाज में जो भ्रष्ट और सम्मानहीन जीवन जी रहे है , उस वर्ग को केन्द्रित कर वे कहते है–

"जे जीवै पति लथी जाये।
सभु हरामु जेता किछु खाए।। "

वर्तमान दौर में आधुनिक व्यक्ति व्यक्तिगत स्वतन्त्रता, समानता और एकता की बड़ी–बड़ी बातें करता हैं। किन्तु वह इस मानसिकता को अपने जीवन में कितना उतार पाया है यह सोचने का विषय हैं। गुरु नानक ने अपने संदेशों में लगातार धार्मिक पाखंडों, अंधविश्वासों, रूढ़ियो आदि से दूर रहने का उपदेश दिया है, वे कहते है कि–

"गऊ बिराहमण कउ करु लावहु गोबरि तरण न जाई।
धोती टिका तै जपमाली धानु मलेछां खाई।।
अंतर पूजा पडहि कतेबा संजुम तुरका भाई।
छोडिले पाखंडा नाम लईहि जाहि तरंदा।।"

अर्थात् तुम गऊ और ब्राह्मण पर कर लगाते हो, धोती तिलक माला धारण करके धान तो म्लेच्छों का उगाया हुआ ही खाते हो। घर के अंदर पूजा करते हो और बाहर शासकों को प्रसन्न करने के लिए कुरान पढ़ते हो। यह सब पाखंड छोड़ कर उसका नाम लो जो तुम्हें इस संसार से पार करने वाला हैं। गुरु नानक की यह व्यंग्यमयी शैली आधुनिक युग भारतेंदु हरिश्चंद्र के नाटक 'अंधेर नगरी' में भी दिखाई पड़ती है जहां सरे बाजार में जात वाला ब्राह्मण अपनी ही जात बचने के लिए टके सेर भाव लगा उसके खरीददार ढूढ़ रहा हैं।

गुरु नानक तथा उनकी परम्परा ने योगियों की भांति उत्पीड़न और निवृत्ति में विश्वास न रखते हुए पारिवारिक क्षेत्र में ही सद्‌गुणी विकास द्वारा मन के संयम एवं अहं के विनाश की बात की हैं। साथ ही अपने तत्कालीन समाज में चमत्कार दिखाने वाली परिपाटियों के विरुद्ध तथा गुहा रहस्यमय साधना पद्धतियों के विपरीत, बड़े ही सीधे और व्यावहारिक ढंग से कर्म साधना का मार्ग अपनाने पर बल दिया हैं। सूर्य को जल चढ़ाना, पिंडदान करना, मक्का शरीफ में मौलवियों द्वारा खुदा के घर की ओर पैर न करने की हिदायत आदि घटनाएँ उनके जीवन में बड़े बदलाव का कारण बनी। मौलवियों को अल्लाह के घर की ओर पैर न करने के प्रतिउत्तर में नानक देव कहते है कि मेरे पाँव उस ओर कर दो जहाँ तुम्हारे अल्लाह का घर नहीं हैं। इसी तरह गुरु ग्रन्थ साहिब में नानक द्वारा कई चमत्कारिक कार्यों का वर्णन मिलता है, किन्तु उन कार्यो के पीछे यदि तार्किकता लगाई जाए तो उनमें चमत्कारिकता नहीं अपितु एक वैज्ञानिक सोच दिखाई देगी। जैसे गुरु नानक द्वारा पहाड़ों पर पंजा लगा देने से पानी का सोता झर–झर बहने लगा, इस घटना के पीछे का परिपेक्ष्य खोजा जाए तो यह उनके हाथ का चमत्कार नहीं अपितु उनकी कुशल बुद्धिमत्ता का परिचय है जो उनके शिष्यों को बतलाता है कि पहाड़ों पर उगी हरी–हरी घास का यह अंश जरुर पानी का स्रोत होगा यहाँ से पत्थर हटा कर पानी खोजा जा सकता हैं। नानक देव के बाद आने वाले नौवें गुरु तेग बहादुर ने औरंगजेब द्वारा यह शर्त रखे जाने पर भी कि या तो चमत्कार दिखाओ या सीस कटवाओ, तब उस परिस्थिति में गुरु तेग बहादुर ने चमत्कार की बजाए अपना सीस कटवा कर यह सिद्ध किया कि उनकी साधना कर्म में हैं न कि किसी पाखंड–चमत्कार में। वे ब्राह्मण की अपेक्षा ब्रहम का, धर्म की अपेक्षा धार्मिकता, संग्रह की अपेक्षा त्याग, स्वार्थ की जगह परार्थ, मानवी चमत्कार की बजाए ईश्वरीय चमत्कार को प्रधानता दी हैं। वे योग धारण करने में, हाथ में डंडा ले लेने में, शरीर पर भस्म आदि रमा लेने से, कानों में कुंडल पहनने, श्रृंगी बजाने में, सर मुंडवाने में विश्वास नहीं करते। अपितु ऐसी साधना पर व्यंग्य करते हुए कहते है कि–

"जोगु न खिंचा जोगु न डंडे जोग न भसम चढाइहे।
जोग न मुंदी मुंडी मुडाइये जोगु न सिंधी बाईए।
अंजन माहि निरंजनी रहिये जोगु जुगति इव पाईये।

x x x x x

एक दृसटि करि समसरि जाणे जोगी कहिये सोई।।"

अर्थात् वास्तविक योगी वह है जो सभी को समान दृष्टि से देखता हो। नानक ने धर्म–सम्प्रदायों द्वारा फैलाई गई भ्रांतियों, अंधविश्वासों के जंजालों को आध्यात्मिक तर्कों से काटकर मानवता का मार्ग प्रशस्त्र किया।

उत्तरी भारत के संतो ने समाज के अभावों और ह्रास को बहुत करीब से देखा था। वे पतनोंमुखी मानवीय जीवन मूल्यों से परिचित थे और समाज में बढ़ते हुए पाखंड व कर्मकांड के साक्षी थे। वे समझ रहे थे कि कैसे परमात्मा के टुकड़े कर मनुष्य एक–दूसरे का गले काटने के लिए आगे बढ़ रहे हैं। इसलिए उन्होंने अपने काव्य के माध्यम से समाज के रूढ़िवादी ढकोसलों को तोड़ने की पहल की। कबीर का अपना घर फूंक कर साथ चलने का आवहान इसी तथ्य की और इंगित करता हैं। गुरु नानक भले आदमियों को उजड़ने और बुरे लोगों को बसे रहने का आशीर्वाद इसी संवेदना से परिचालित होकर देते है। यही उस युग के सांस्कृतिक आन्दोलन का शंखनाद था।

आज के आधुनिक समाज में धर्म के नाम पर यह धार्मिक आडम्बर, चमत्कारिक प्रपंच, बाबावादी प्रवृत्तियां अपनी जड़े जमाती जा रही है, जिससे इंसानों में दिन–प्रतिदिन इंसानियत समाप्त होती नजर आती है। समाज से लेकर सिनेमा तक अन्धविश्वास, भूत–पिशाच, बनावटी ग्रह–दशा संचालन के बाबा आदि अपना अपना धंधा बना बड़े–बड़े नामी–ग्रामी चैनलों का हिस्सा बन बैठे हैं। नानक देव में अपने काव्य में बहुत पहले ही उसकी पोल खोली हैं कि कैसे यह भोली–भाली मासूम जनता को धर्म–पाखंड के नाम पर बेवकूफ बना रहे हैं। समाज की अस्वस्थ रुग्ण परंपराओं, रुढियो का जम कर विरोध किया गया। बिगड़ती हुई वर्णाश्रम व्यवस्था, परिवार, रिश्ते–नाते, स्त्री का तिरस्कार, मात्र मौनार्क्षण वस्त्राभूषण, मिथ्या कर्मकांड, चुगली–चोरी, दूसरो का हक़ मारना, तृष्णा अभिमान, निर्बल का रक्त शोषण आदि को जड़ से उखाड़ने का प्रयास गुरुवाणी में किया गया हैं। मध्यकाल की यह संत परम्परा किसी भी धर्म की बात नहीं करती बल्कि, वह हमें धार्मिकता का पाठ पढ़ाती हैं। धर्म के नाम पर की जाने वाली बाह्य दिखावट को छोड़ आंतरिक शुद्धि की बात करती हैं। बाजारीकरण के वर्तमान समय में इस असमानता को मिटाने के लिए तथा समाज की खोखली जड़ो को एक बार फिर गुरु नानक की वाणी द्वारा सींचने की जरूरत हैं।

सन्दर्भ एवं सहायक ग्रन्थ सूची

1. धीरेन्द्र वर्मा – संपा० साहित्यिक शब्द कोश, बनारस : ज्ञान मंडल, प्रथम संस्करण 1958
2. हजारीप्रसाद द्विवेदी– कबीर, बम्बई : हिंदी ग्रन्थ रत्नाकर, छठा संस्करण, 1960
3. डॉ० नामदेव उतकर – हिंदी साहित्य की युगीन प्रवृत्तियां, आशा प्रकाशन, दिल्ली
4. मनमोहन सहगल, ओम प्रकाश शास्त्री दृ मध्यकालीन हिंदी साहित्य : पंजाब का सन्दर्भ, सन्मार्ग प्रकाशन, दिल्ली 1985
5. महिंद्र कौर गिल– गुरु ग्रन्थ साहिब की सम्पादन कला, न्यू ऐज बुक सेंटर, अमृतसर, 1982
6. बलदेव वंशी – भारतीय संत परंपरा, किताबघर प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्रथम संस्करण 2010
7. डॉ० गुरनाम कौर बेदी– गुरु ग्रन्थ साहिब में संकलित भक्त एवं भट्टवाणी, निर्मल प्रकाशन, दिल्ली 2005
8. कृष्ण रेना– हिंदी निर्गुण संत काव्य, दर्शन और भक्ति, शारदा प्रकाशन, दिल्ली, 1977

गुरु नानक देव की वाणी के विविध आयाम

*डॉ. स्वाति श्वेता

* हिन्दी विभाग, गार्गी कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय

गुरु नानक देव जी सिख पंथ के प्रवर्तक और एक उच्च कोटी के संत थे।कबीर की ही भाँति वह भी शास्त्र ज्ञान संपन्न न थे। उन्होंने न तो मुस्लिम विचारधारा का अंधानुकरण किया और न ही हिन्दू विचारधारा का।डॉ. सुदर्शन मजीठिया ने अपनी पुस्तक संत साहित्य में लिखा है 'शंकर ने अपने अद्वैतमत से बौद्ध मत का खंडन किया।शंकर ने बौद्ध मत के उन्मूलन के लिए बौद्ध धर्म का सुधरा हुआ रूप प्रस्तुत किया। उसी प्रकार नानक ने हिन्दू और मुस्लिम दोनों विचारधाराओं का सुधरा हुआ रूप प्रस्तुत किया।'[1]

गुरु नानक देव जी ने परोक्षसत्ता के किसी नाम विशेष पर कभी बल नहीं दिया।उनका मानना था कि उस सत्ता के नाम असंख्य हैं।उसकी न तो कभी गणना की जा सकती है और न ही उसे किसी विशेष नाम के अंतर्गतसीमित ही किया जा सकता है प्उनका मानना था की परोक्ष सत्ता के अस्तित्व का बोधक केवल सतिनाम है जिसका भाव है सर्वव्यापी सत्ता । जपुजी साहिब गुरु नानक देव जी के कथन को दर्शाती हुई कहती है '..... जहाँ कहीं भी हम देखने का प्रयत्न करें वहीं उसका नाम वर्तमान है।जितनी भी सृष्टी है, वह सब कुछ उसका नाम ही है।''[2]

गुरु नानक देव जी का मानना था कि जो प्रत्यक्ष हो उसके लिए प्रमाण की क्या आवश्यकता ? उस ज्योति को सदा सहज भाव से जाना जा सकता है–

'जह देखा तह एक ही सतगुरु दीआ दिखाई।
जोती निरंतरि जाणीएँ नानक सहजि सुभाई ।।'[3]

किन्तु प्रत्यक्ष होता हुए भी वह मन और वाणी का विषय नहीं।उसकी तो केवल अनुभूति की जा सकती है।वह इंद्रियातीत है,अकथ है और अवरणीय है–

'सोचे सोचि न होवई, जे सोची लख बार।
चुप्पै चुप न होवई , जे लाइ रहा लाख बार।।'[4]

अर्थात् चाहे कोई कितना ही सोचता रहे लाखों बार सोचने पर भी वह विचार में नहीं आता।मौन रहने से भी स्थिति ज्यों की त्यों ही रहती है क्योंकि मौनावस्था में भी तो मन में कोई न कोई प्रश्न उठता ही रहता है।अकथ होने पर भी लोग उसके संदर्भ में कुछ न कुछ कहते ही रहते हैं।

गुरु नानक देव जी के अनुसार वह मन, इंद्रिय अथवा वाणी का विषय है।उसका न तो कोई नाम है और न ही कोई रूप।वह अमूर्त और अनुपम है।यही कारण है कि न तो बुद्धि उसे ग्रहण कर पाती है और न ही वाणी उसका वर्णन कर पाती है। उसकी इस अनिर्वचनीयता को उन्होंने ज्ञानमार्गियों की निषेधात्मक शैली में व्यक्त करते हुए कहा है –

'अलख अपार अगम अगोचर , ना तिसु कालु न करमा।
जाति अजाति अजोनी संभउ ना तिसु भाउ न भरमा।'[5]

गुरु नानक जी का मानना है कि वह परमतत्व रूपी रत्न हमारे अंदर ही निवास करता है।हमें बस उसी का चिंतन करना चाहिए –

'अंतरि रतनु पदारथु मेरै परम ततु बीचारो।
जंत भेख तू सफलिओ दाता सिरी सिरी देवणहारो।।'[6]

उपर्युक्त सभी उदाहरण यह स्पष्ट करते हैं कि गुरु नानक देव जी का उपास्य निर्गुण एवं निराकार है।परंतु यह ध्यान देने योग्य बात है कि निर्गुण केवल चिंतन और मनन का विषय हो सकता है, वह भक्त का आराध्य नहीं हो सकता है। अतः गुरु नानक देव जी को उस निर्गुण में गुणों का आरोप भी करना पड़ा। गुरु नानक देव जी के अनुसार उस निर्गुण में गुण अनंत हैं –

'अंतु न सिफती कहणि न अंतु।
अंतु न करणे देणी न अंतु।।'[7]

गुरु नानक के यहाँ एकता, अनंतता, अनमोलता, अद्वैतता, अंतर्यामित्व, नित्यता, सर्वव्यापक्ता, स्वयंभवत्व आदि उनके प्रमुख गुण हैं।इतना ही नहीं उनके यहाँ परोक्षसत्ता की एकता का वर्णन बार–बार हुआ है।उनका मानना है कि वह अगम, अगोचर, अनाथ और आयोनी है–

'अगम अगोचरू अनाथु अजौनि गुरुमति एको जानिआ।'[8]

गुरु नानक देव जी का उपास्यएक ही नहीं अद्वैत भी है। उनकी दृष्टि ब्रह्ममई है।उन्हें बाहर भीतर सर्वत्र उसी परोक्षसत्ता के दर्शन होते हैं–

'अंतरि बाहरि एको जानिआ नानक अवरू न दूआ।'[9]

गुरु नानक का उपास्य स्वयं रंग–रूप है और उसका अनुभव करने वाला भी है।वह अपने ही रंग में रंगा हुआ है तथा वह सर्वत्र व्याप्त है।वही मकुवा है वही मछली है, वही पानी है और वही जाल भी है।वही जाल का शीशा है और वही चारा भी।वही कमल है, वही कमलिनी और वही उन्हें देख कर आनंदित होने वाला है।वही स्वयं गुण है, वह स्वयं ही उसका कथन करता है और उसे सुन कर स्वयं ही विचार करता है। वह स्वयं ही रत्न है, स्वयं ही जौहरी और स्वयं ही उसका मूल्य भी है जिसे कितना भी ऊँचे से ऊँचा समझा जाए और कहा जाए, न तो उसे

कहा जा सकता है और न ही उसे देखा ही जा सकता है। वह हर तरफ दृष्टिगोचर है।

परोक्षसत्ता की अद्वैतता का वर्णन गुरु नानक देव जी बहुत ही तन्मयता से करते हैं –

'आपे पट्टी करम आपि उपरि लेख भी तू।
एको कहिए नानक दूजा काहे कूँ।'[10]

'आसा की वार' में वह कहते है –––

आपीन्है आप साजियो, आपीन्है रचियों नाउ।[11]

अर्थात् उसने स्वयं ही अपने को सृष्टि रूप में निर्मित किया है और स्वयं ही अपने को अनेक नामों और रूपों से सजाया है।इतना ही नहीं गुरु नानक देव जी के यहाँ उपास्य के हुक्म का वर्णन इस प्रकार हुआ है कि उसमें से सर्वात्मवाद की प्रतिध्वनि सुनाई पड़ती है।उनके अनुसार वही हुक्म है, वही हुक्म देने वाला है और जिसे हुक्म दिया जाता है वह भी उससे किसी प्रकार भिन्न नहीं है।जपुजी साहिब में वह कहते हैं –––'उस हुक्म को यदि कोई भलीभाँति समझ सके तो फिर उसे अपने को फिर भिन्न करने वाले अहं भाव का बोध ही न हो ९ कहना न होगा सर्वात्मवाद के दार्शनिक सिद्धान्त की ओर गुरु नानक देव जी का अधिक झुकाव था।यद्यपि वे व्यावहारिक ससीम सत्ता को भी मान्यता देते हैं तथापि उनका नित्य, निर्विशेष एवं एकमात्र सत्य व्यावहारिक ससीम सत्ता से भिन्न नहीं है।

गुरुनानक देव जी ने परोक्षसत्ता पर अनेक गुणों का आरोप करके भी बहुदेववाद, अवतारवाद एवं मूर्तिपूजा का विरोध किया है।उन्होंने प्रोक्षता की अनंतता का वर्णन भी किया।उनके अनुसार 'उसकी रचनाओं में लाख पाताल हैं और उसके भी पाताल हैं।इसी प्रकार लाखों आकाश हैं और उनके भी आकाश है।उसका अंत खोजते–खोजते वेद थक जाता है।न तो उसके गुणों का अंत है और न ही उसकी स्तुति का और न ही उसके गुणों के वर्णन का ही अंत है।न तो उसकी करनी या रचना का अंत है और न उसके दान का ही कोई अंत है।उसकी रचना में जो कुछ भी देखने में और सुनने में आता है उस सबका भी कोई अंत नहीं।इसका भी अंत नहीं कि उसके मन में इस सारी रचना के रचने का क्या रहस्य है।न तो उसकी सृष्टि का रहस्य जाना जा सकता है और न ही उसके इस या उस पार का ––––

'पातला पातल लाख आगासा आगासा।
औड़क औड़क भालि थके वेद कहनि इक बात।[12]
अंत न सिफ़ती कहणि न अंतु।
अंतु न करण देणी न अंतु।[13]

गुरु नानक देव जी परोक्षसत्ता को नीति मानते हैं जो भूत, भविष्य, वर्तमान तीनों कालों में समान रूप से वियाप्त है। वह तीनों का द्रष्टा है, ज्ञाता है, साक्षी है –

आदि सचु जुगादि सचु।
है भी सचु नानक होसी भी सचु।[14]

इतना ही नहीं नानक उस परोक्षसत्ता के विषय में बताते हैं कि वह सच्चा है, सच्चे नाम वाला है, सदा वैसे का वैसा एक रस रहता है।उसने सारी सृष्टि को रचा है ,वह वही है और आगे भी रहेगा –

'सोई सोई सदा सचु साहिब साचा साची नाई।' [15]

गुरु नानक के यहाँ वह अयोनी है , अजन्मा है।वह स्वयंभू है ,उसके न मटा हैं ,न पिता हैं , न भाई–बहन है और न ही बेटे–बेटी हैं वह आकुल है , कुल से परे है–

'ना तीस मत पिता सूट बंधव , न तिसु काम न नारी।
अकुल निरंजन अपर परंपरू सगली जोति तुम्हारी।[16]

गुरु नानक का विश्वास है कि जब सबसे पहले कुछ भी अस्तित्व में नहीं था तब केवल सत्य रूप परमतत्व था। अब भी वह सत्य है और आगे भी वह सत्य रहेगा –

'साँचा साहिबु सांचु नाइ भाखिआ भाउ अपारू।[17]

वह चेतन स्वरूप भी है।वह अपने आप बरतता है और अपने आप बंता है।उसके बिना और कोई नहीं है।वही सर्वत्र समाया हुआ है।वह दुखों का विनाश करता है और सुख की ओर ले जाता है –

'गावीऐ सुणीऐ मनि रखीए भाउ
दुखु परिहारि सुखु धरि ले जाइ।[18]

गुरु नानक देव जी को परोक्षसत्ता की निर्भयता बहुत प्रिय है। वे कहते हैं –––

' निरभउ निरंकारू निरवैरू पूरन जोति समाई।[19]
तुम गावहु मेरे निरभउ का सोहिला।[20]

गुरु नानक कहते हैं कि उस कर्ता के कर्मों की कोई गिनती नहीं है।वह स्वामी महान है , उसका नाम भी महान है।इस दुनिया में जो कुछ भी है वह उसी केब द्वारा किया गया होता था –

' करतै के करणे नाही सुमारू।[21]
वडा साहिब वादी नई।
कीता जाका होवै।' [22]

गुरु नानक जी ने उस निर्गुण निराकार की प्राप्ति कैसे हो के विषय में भी प्रकाश डाला है।उनका मानना है कि वह निर्गुण निराकार गुरु का प्रसाद है।गुरु कि कृपा से ही उसकी प्राप्ति संभव है।

गुरु नानक का समस्त जीवन भक्ति से ओतप्रोत है।उनके आचार–विचार , रहन–सहन और यहाँ तक कि जीवन के समस्त क्रिया–कलाप भक्ति के रंग में रंगे हैं।उनका दृढ़ विश्वास था कि भक्ति के बिना मन का मैल नहीं धूल सकता है।उन्होंने 'जपुजी' में कहा है कि जिस प्रकार धूल में सने हुए हाथ पैर तथा शरीर के अन्य अंग पानी से धोकर स्वच्छ कर लिए जाते हैं और मूत्र से सने कपड़े साबुन लगा कर धो लिए जाते हैं उसी प्रकार मन के मलिन हो जाने उसे नाम के प्रेमभाव से ही स्वच्छ किया जा सकता है –––

"भरिऐ मति पापा के संगि।
ओहू धोपे नाबै के रंगि।'[23]

उनका कहना था कि यदि मेरे एक जीभ की जगह एक लाख जीभ हो जाए और फिर लाख से बीस लाख हो जाए तो एक जीभ से मैं लाख बार एक जगदीश्वर का ही नाम जपूँगा।उन की दृष्टि में यदि नाम का विस्मरण हो जाए तो फिर वह जीवन किसी काम का नहीं।उससे तो मरना ही अच्छा है।यही कारण है कि वह कहते हैं कि यदि मैं नाम का जाप करूँ तो जीऊँ और यदि भूल जाऊँतो मर जाऊँ।

रागात्मिका भक्ति में निष्ठा रखने के कारण वे वैधी भक्ति का समर्थन नहीं कर सके।उन्होंने वैधी भक्ति के सारे विधि–विधान तिलक, माला, आसान , प्रतिमा, पूजन,

धूप, दीप, नैवेद्य आदि का खंडन किया और उसकी निस्सारता प्रदर्शित की ———

'पड़ि पुस्तक संधिया बादन्।सील पूजसि बगुल समाधम्।
मुखि झूठ बिभुखण सारं।त्रन्पाल तिहाल बिचारम्।
गलि माला तिलुक लालटम्। दुई धोती वस्त्र कपाटम्।
जे जाणसि ब्रहम करम्।साभि फोकट निसचउ करमम्।'[24]

कबीर की ही भांति गुरु नानक ने परोक्ष सत्ता से विविध प्रकार के संबंध स्थापित किए हैं — कहीं सेवा—सेवक भाव से , कहीं माधुर्य भाव से और कहीं वात्सल्य भाव से अपनी भावनाओं का समर्पण किया है।निर्गुणवादी होते हुए भी उन्होने अपने निर्गुण राम की अवतारणा सगुण रूप में भी की है।उन्होने विराट स्वरूप का वर्णन उसी को सब कुछ कह कर किया है। उनके अनुसार 'वही ज्ञाता है, वही द्रष्टा।वह अपने आपको रच कर प्रसन्न होता है।वही पावन, जल और वैश्वानर है।वही उनका मेल करता है।वही चंद्र है वही सूर्य है। वही ज्ञानी , ध्यानी और शूरवीर है। वही पुरुष है, वही स्त्री।वही भ्रमर है , वही वृक्ष और वही उस वृक्ष का फूल एवं फल है।वही दिन है और वही रात है।

गुरु नानक ने अपने बीज मंत्र का प्रारंभ '१ ओंकार' से किया है।उन्होंने ओंकार से ही सृष्टि की उत्पत्ति मानी है

'ओ अंकारि ब्रह्मा उतपति।ओ अंकरू कीआ जिनि चिति।
ओ अंकारि सेल जुग भए।ओ अंकारि वेद निरमए।
ओ अंकारि सबदि उघरे।ओ अंकारि गुरुमुखि तरे।
ओनम अखर सुणहु वीचारू।ओनम अखरू त्रिभुवण सारू।'

सारांश में हम कह सकते हैं कि गुरु नानक देव जी ण तो हठवादियों कि चमत्कार बहुल साधनाओं में पड़े और ण ही सूफीमत जैसी आशिक—माशूक की चर्चा उन्हें रूची।उन्हें विरह की पीर की अपेकषा परमात्मा की शरणागति की इच्छा अधिक थी।

संदर्भ :

1. डॉ. सुदर्शनसिंह मजीठिया संत साहित्य , पृ.123
2. जपुजी पउड़ी 19
3. गुरुग्रंथ साहिब महला 1 पृ.55
4. जपुजी पउड़ी 1 पृ.1
5. सोरठा महल 1 पृ.597
6. रागु सूही महला 1 पृ. 764
7. जपुजी पउड़ी 24 पृ.5
8. रागु सारंग असट पदीआ महला 1 पृ. 1233
9. गुरुग्रंथ साहिब रागु भैरवा महला 1 पृ. 1127
10. मलार की वार महला 1 पृ. 1291
11. आसा की वार महला 1 पृ. 463
12. जपुजी पउड़ी 22 पृ. 5
13. जपुजी पउड़ी 24 पृ.5
14. जपुजी पउड़ी 1 पृ.1
15. जपुजी पउड़ी 27 पृ.6
16. गुरुग्रंथ साहिब सोरठी महला 1 पृ. 597
17. जपुजी पउड़ी 4 पृ.2
18. जपुजी पउड़ी 5 पृ.2
19. गुरुग्रंथ साहिब सोरठी महला 1 पृ. 596
20. सोहीला रागु गउड़ी दीपकी महला 1 पृ. 12
21. जपुजी पउड़ी 16 पृ.3
22. जपुजी पउड़ी 27 पृ.6
23. जपुजी पउड़ी 21 पृ.5
24. आसा की वार महला 1 पृ. 470

गुरु नानक देव की वाणी और 'गुरु ग्रंथ साहिब' में भक्ति कालीन कवि विशेष संदर्भ : गुरु रविदास

*डॉ. रजत रानी मीनू 'आर्य'

* हिन्दी विभाग, कमला नेहरू कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय

गुरु नानक देव ने सामाजिक जाति व्यवस्था के संदर्भ में कहा था कि 'जो नीचों में नीच हैं मैं उनसे भी नीच हूं' गुरु नानक देव का चिंतन जितना धार्मिक उदारतामय था उतना ही सामाजिक उदारता उनके चिंतन में दिखाई देती है। 'गुरुग्रंथ साहिब' में गुरु रविदास की चालीस कविताएं संकलित हैं। इन कविताओं में अस्पृश्यता के विरोध का स्वर बहुत ही सशक्त है। उनकी कविताओं में जहां धार्मिक दर्शन से संबंधित हैं दूसरी ओर समाज में स्थापित जाति व्यवस्था और उसके कारण सामाजिक जाति भेदभाव का खुलासा बहुत ही प्रखरता और तार्किक ढ़ग से करती हैं और सामाजिक न्याय का जोरदार तर्क रखती हैं। इस संदर्भ में एक उदाहरण देखें–

'रविदास ब्राह्मण मत पूजिए जाउ होवे गुणहीन।
पूजिए चरन चाण्डाल के जउ होवे गुन प्रवीन।'[1]

यहां तत्कालीन सामाजिक व्यवस्था को स्पष्ट रूप से समझा जा सकता है। गुरु रविदास के तर्क और निडरता के साथ उस जातिवादी व्यवस्था से टकराते हुए कहते हुए तनिक भी नहीं झिझकते कि गुणों से परिपूर्ण चाण्डाल के चरनों की पूजा यानी उसे सम्मान देने की बात कहते हैं और जिस ब्राह्मण में गुण नहीं हों उसके सम्मान करने से रोकने की बात कहते हैं। यह विचार उनके चिंतन को दर्शाता है कि वे समाज की चिंता कर रहे थे। किसी भी देश के लिए किसी भी तरह का भेदभाव वाली व्यवस्था विकास संगत नहीं हो सकती। लीक पीटना समझदारी नहीं है। तर्क, बुद्धि की कसौटी पर कस कर किसी बात को मानना बुद्धिमता को दर्शाता है। वे इस देश का विकास करने का चिंतन कर रहे थे। मानवता का सम्मान उनके चिंतन के केन्द्र में था। तभी तो उनका चिंतन उनकी वाणी में स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ता है–

'जात पांत के फेर महि उरभि रहइ सभलोग
मानसता कू खात हुई रविदास जात कर रोग।।'[2]

यहां गुरु रविदास को साफ–साफ लग रहा था कि इस जात–पांत के चक्कर में मानवता का अपमान हो रहा है। इससे स्पष्ट है कि गुरु रविदास का सामाजिक चिंतन आज भी उतना ही उपयोगी है जितना उनके अपने समय में था। उनका साहस उनके तर्क लाजबाव हैं। आज भी उनके तर्क समाजपयोगी हैं बल्कि लगता ही नहीं है कि आज से करीब पांच–छह सौ साल पहले की बात है। आज भी हमारा समाज आज उससे भी ज्यादा बर्बर दिखाई दे रहा है। मानवता खुले आम अपमानित हो रही है। वे एक अन्य जगह पंडित को चुनौती देते हुए तर्क करते दिखाई देते हैं –

'बता रे पंडित ज्ञानी कौन चाम से न्यारा।
चाम का ब्रह्मा, चाम का विष्णु चाम का सकल पसारा।
चाम का योगी, चाम का भोगी, चाम का गुरु तुम्हारा।
कह रविदास सुनो रे पंडित ज्ञानी चाम का गुरु नहीं हमारा।

यहां गुरु रविदास का संबंध चमार जाति से था। समाज में चमार जाति का जातिवादी व्यवस्था ने खूब अपमानित किया। आज भी चमार गाली का पर्याय बन गया है। रविदास चमार की व्याख्या अपने पदों में बहुत संगत तरीके से की है। वे कहते हैं कि सम्पूर्ण मानव जाति ही चाम, मांस रक्त से बनी है। यानी तुम्हारे ब्रह्मा, विष्णु महेश सभी देवता भी इसी चमड़े से बने हैं। इसलिए वे साफ कहते हैं कि रविदास का गुरु कोई ब्राह्मण नहीं हो सकता। यह बात कहने की हिम्मत बिना बुद्धि विवेक और तर्क के कहना असंभव था। वे अपने समय के महान चिंतक थे। तभी तो एक ऐसा चिंतन दिया था जो कार्ल मार्क्स की तरह वे पूरे सिस्टम को बदलना चाहते थे। जाति और पूंजी आधारित व्यवस्था को बदलने की विचार उनके केन्द्र में था। जहां अमीर गरीब का शोषण न करे। कोई रोटी के लिए किसी की गुलामी न करे कोई भूखा पेट न सोए। इस संदर्भ में उनके एक दोहे को देख सकते हैं–

'ऐसा चाहुं राज मैं जहां मिलैं सबन को अन्न
छोट –बडो सब सम बसै, रैदास रहे प्रसन्न।'

गुरु रविदास ने अपने इस चिंतन को यहीं विराम नहीं दिया था। उन्होंने 'बेगमपुरा' का चिंतन दिया था। बेगमपुरा यानी एक ऐसा शहर जहां किसी को कोई गम यानी दुख नहीं हो। ऐसी परिकल्पना उन्होंने की थी। उनके इस चिंतन से तत्कालीन सामाजिक व्यवस्था की कठोरता और नियमावली का अनुमान लगाया जा सकता है कि उस समय जाति व्यवस्था तो थी ही। साथ ही जाति से उपजी गरीबी उनके शोषण और दमन को और भी बढ़ा रही थी। वे इस तरह लोगों को देख कर बहुत दुखी होते थे। इसीलिए वे उससे मुक्ति के रास्ते 'बेगमपुरा' के रूप में दिखा रहे थे। समाज व्यवस्थापकों से तर्क कर रहे थे। हजारों वर्षो से चली आ रही गैरबराबरी की व्यवस्था को असंगत बताया रहे थे। उसे समाप्त करने के तर्क दिए थे। लोगों में चेतना का संचार कर रहे थे। इसीलिए तो उनकी वाणी को 'गुरु ग्रंथ

साहिब' जैसे मानवतावादी धार्मिक पुस्तक में स्थान मिला। इस के संस्थापक गुरु नानक देव बहुत ही उदारमना व्यक्ति थे। उन्हेंाने भी मानवता के सम्मान के लिए महत्वपूर्ण कार्य किये।

गुरु नानक देव और भक्तकालीन कवि कबीर और रैदास इन तीनों गुरुओं में अनेक स्तरों पर समानता दिखाई देती है। इन तीनों के व्यक्तित्व धार्मिक भी हैं मगर ये तीनों का निर्गुण निराकार में विश्वास है। कबीर की तरह इन तीनों ने गुरुओं के महत्व को स्थापित किया है। जहां संत कबीरदास गुरु के बारे में स्पष्ट कहते हैं कि 'गुरु गोबिंद दोऊ खड़े काके लागूं पांव, बलिहारी गुरु आपने दियो बताये' अर्थात गोबिंद से गुरु का महत्व स्थापित किया है। इसी तरह गुरु नानक देव ने भी गुरु के महत्व को अपने चिंतन में अनेक बार अनेक तरह से स्थापित किया है। एक जगह वे लिखते हैं–

'मोहि लागी लगन गुरु चरनन की।
चरन बिना कछुवै नहि, जग माया सपनन की।'[3]

इसी तरह गुरु के महत्व को स्थापित करता एक और दोहे का उदाहरण देखें–

'गुरु सरवरु हम हंस पिआरे।
सागर महिरतन लालु बहु सारे।
मेती माणक हीरा हरि जसु
गावत मनु तनु मीना है।'[4]

यहां भी सदगुरु मिलने की कामना गुरु नानक देव ठीक कबीरदास जी की तरह करते हैं। गुरु के मिलने से शिष्य का भविष्य संभरता है। उसका मन स्थिर रहता है क्योंकि गुरु ही वह दिशा देता है जिससे उसके मन और मतिष्क को सही दिशा मिलती है। वही सही मायने में राम नाम रूपी अमूल्य धन है। यहां इन गुरुओं के व्यक्तित्व धार्मिक हैं मगर इन ईश्वर से भक्ति अपने समय के अन्य सगुण भक्तों से अलग और समाज सुधारक की चिंता दिखाई देती है। यही खूबी इन्हें तत्कालीन दूसरे कवियों और चिंतकों से विशिष्ट बना देती है, जो समाज उपयोगी भी है। 'गुरु ग्रंथ साहिब' सिक्खों की धार्मिक और आस्थापरक मात्र पुस्तक भर नहीं है। यह अपने युग की यथास्थितियों का इतिहास बताती है। जहां जाति व्यवस्था बहुत बड़ी समस्या थी। उस जाति व्यवस्था से उस युग के ये तीनों कवियों के, चिंतन में सामाजिक सरोकार उनकी दोहों में साफ दिखाई देता है। संत कबीरदास और गुरु रविदास अपने युग से बहुत प्रखर तार्किक बुद्धिजीवी थे। उनकी सोच अपने युग से बहुत आगे बढ़ी हुई थी। निडरता उनके व्यक्तित्व की खास विशेषता थी।

गुरु नानक श्रम को महत्व संत कबीर और गुरु रविदास की तरह ही देते थे। निर्गुण कवियों की यह खूबी ही थी। वे स्वयं श्रम करते थे और श्रम करने वाले का सम्मान करते थे। इन गुरुओं ने अपने युग में श्रम की जो संस्कृति स्थापित की थी। उसका महत्व आज भी उतना ही है। श्रम करने से मनुष्य शारीरिक रूप से तो हष्ट–पुष्ट बनता ही है। साथ ही शारीरिक श्रम करने से काम की जिम्मेदारियां जब बंटती हैं तो किसी एक पर अत्यधिक बोझ नहीं पड़ता। इससे आपस में संबंध मधुर बनते हैं। श्रम के संबंध में गुरु नानक देव कहते हैं–

'कामु क्रोध दुह करहु बसोले गोडहु धरती भाई।
जिउ गोडहु तिउ तुम्ह सुख पावहु किरतु न मेटिआ जाई।'[5]

इस दोहे में श्रम को महत्वपूर्ण माना गया है। परिश्रम कभी निष्फल नहीं जाता। काम–क्रोध को नियंत्रित करके परिश्रम से सुख और मानसिक शांति भी मिलती है। इसी तरह संत कबीर और गुरु रविदास भी स्वयं श्रमिक थे। वे परिश्रम करके रोटी खाते थे। अपने समाज को भी श्रम का महत्व बताते थे। इस तरह गुरुओं की वाणी में श्रम संस्कृति निहित थी।

सार रूप में गुरु नानक देव सहित संत कबीरदास और गुरु रविदास समाज की ऐसी धुरी थे जहां से पूरे समाज को देख रहे थे। जहां–जहां उन्हें कमियां नजर आ रही थीं। वे एक जिम्मेदार नागरिक का दायित्व निभा रहे थे और एक बेहतर समाज और राष्ट्र बनाने में अपना योगदान दे रहे थे। यह उनके चिंतन की खास विशेषता ही है कि वे आज भी प्रासंगिक बने हुए हैं।

संदर्भ

1. गुरु बौद्ध धर्म और संत रविदास–जसराम हरनोटिया, नवभारत प्रकाशन, शाहदरा ,संस्करण–2009, ISBN–97881908271119, पृ. 76
2. वही, पृ. 76
3. गुरु नानक देव की धर्म–साधना–प्रिया शर्मा, सतीश बुक डिपो 51/2 न्यू मार्किट करोल बाग, नई दिल्ली–110005,संस्करण–2009, ISBN–81–8893228–0, पृ. 13
4. वही, पृ. 13
5. वही, पृ. 220

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਵਿੱਚ ਸਮਾਜਿਕ ਸਰੋਕਾਰਾਂ ਦਾ ਸੰਕਲਪ ਅਤੇ ਮੌਜੂਦਾ ਸਥਿਤੀ

*ਅਵਤਾਰ ਸਿੰਘ

* ਅਸਿਸਟੈਂਟ ਪ੍ਰੋਫ਼ੈਸਰ, ਪੰਜਾਬੀ ਵਿਭਾਗ, ਪਟੇਲ ਮੈਮੋਰੀਅਲ ਨੈਸ਼ਨਲ ਕਾਲਜ , ਰਾਜਪੁਰਾ

ਸਮਾਂ ਗਤੀਸ਼ੀਲ ਵਰਤਾਰਾ ਹੈ, ਜਿਹੜਾ ਦਿਨਾਂ, ਹਫ਼ਤਿਆਂ, ਮਹੀਨਿਆਂ, ਸਾਲਾਂ, ਸਦੀਆਂ ਵਿਚੋਂ ਗੁਜ਼ਰਦਾ ਕਾਲਾਂ ਦੇ ਹੱਦਾਂ ਬੰਨੇ ਨਿਰੰਤਰ ਟੱਪਦਾ ਰਹਿੰਦਾ ਹੈ। ਸਮੇਂ ਦੀ ਮੌਜੂਦਾ ਸਥਿਤੀ ਸਮਾਜਿਕ , ਵਿਚਾਰਧਾਰਕ ਅਤੇ ਸਾਹਿਤਕ ਪੱਧਰ ਉੱਤੇ ਆਪਣੀ ਪੂਰਵਲੀਆਂ ਸਥਿਤੀਆਂ ਤੋਂ ਇਕ ਵੱਖਰੀ ਹੋਂਦ ਦੀ ਧਾਰਨੀ ਹੈ। ਮਨੁੱਖ ਸਮਾਜਿਕ ਪ੍ਰਾਣੀ ਹੋਣ ਕਰਕੇ ਜਿੱਥੇ ਸਮੇਂ ਦੇ ਅਨੁਸਾਰ ਖ਼ੁਦ ਨੂੰ ਬਦਲਦਾ ਆਇਆ ਹੈ, ਉੱਥੇ ਹੀ ਸਮੇਂ ਦੀ ਸਥਿਤੀ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਆਪਣੇ ਅਨੁਕੂਲ ਪਰਿਵਰਤਿਤ ਕਰਦੀ ਰਹੀ ਹੈ।ਮਨੁੱਖੀ ਵਿਕਾਸ ਦੇ ਇਸ ਪੜ੍ਹਾਅ ਵਿੱਚ ਵੱਖੋ ਵੱਖਰੇ ਕਾਲਾਂ ਦੌਰਾਨ ਅਨੇਕਾਂ ਵਿਚਾਰਧਾਰਾਵਾਂ ਉਗਮੀਆਂ ਅਤੇ ਸਮਾਜ ਨੂੰ ਆਪਣੇ ਕਲਾਵੇ ਵਿੱਚ ਲੈਂਦੀਆਂ ਰਹੀਆਂ। ਸਮੇਂ ਦੇ ਇਸ ਨਿਰੰਤਰ ਵਹਿਣ ਵਿੱਚ ਅਨੇਕਾਂ ਬੁੱਧੀਜੀਵੀ ਪੈਦਾ ਹੋਏ; ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਆਪਣੇ ਤਰਕ, ਵਿਵੇਕ, ਸਿਧਾਂਤਾਂ ਅਤੇ ਆਦਰਸ਼ਾਂ ਨਾਲ ਮਨੁੱਖ ਦੇ ਧਾਰਮਿਕ ਅਤੇ ਸਮਾਜਿਕ ਗਿਆਨ ਵਿੱਚ ਵਾਧਾ ਕੀਤਾ।

ਮਨੁੱਖ ਦਾ ਇਤਿਹਾਸ ਓਨਾ ਹੀ ਪੁਰਾਤਨ ਹੈ, ਜਿਨ੍ਹਾ ਕਿ ਮਨੁੱਖ ਆਪ। ਜਿਸ ਰੂਪ ਅਤੇ ਉਚਾਈ ਉੱਤੇ ਅੱਜ ਅਸੀਂ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਦੇਖ ਰਹੇ ਹਾਂ; ਇਹ ਉੱਚਤਾ ਉਸਨੇ ਪੌੜੀ ਦਰ ਪੌੜੀ ਚੜ੍ਹ ਕੇ ਪ੍ਰਾਪਤ ਕੀਤੀ। ਮਨੁੱਖ ਦਿਨ-ਬ-ਦਿਨ ਗਿਆਨ ਦੇ ਵਾਧੇ ਨਾਲ ਸਮਾਜਿਕ ਪਸ਼ੂ ਅਖਵਾਉਂਦਾ ਹੋਇਆ ਵੀ ਉੱਤਮ ਪ੍ਰਾਣੀ ਬਣ ਗਿਆ। ਮਨੁੱਖੀ ਗਿਆਨ ਦੇ ਇਸ ਪੜਾਅ ਨੂੰ ਬੁੱਧੀਜੀਵੀ ਤਿੰਨ ਕਾਲਾਂ (ਆਦਿ ਕਾਲ, ਮੱਧ ਕਾਲ ਅਤੇ ਆਧੁਨਿਕ ਕਾਲ) ਵਿੱਚ ਵੰਡ ਕੇ ਦੇਖਦੇ ਹਨ।

ਮਨੁੱਖ ਸਮਾਜਿਕ ਪ੍ਰਾਣੀ ਹੋਣ ਦੇ ਨਾਤੇ ਜਿਸ ਸਮਾਜ ਵਿੱਚ ਪੈਦਾ ਹੁੰਦਾ ਹੈ, ਉੱਥੇ ਦੀਆਂ ਸਮਾਜਿਕ, ਸਭਿਆਚਾਰਕ ਪ੍ਰਸਥਿਤੀਆਂ ਨੂੰ ਆਪਣੇ ਉੱਤੇ ਹੰਢਾਉਂਦਾ ਰਹਿੰਦਾ ਹੈ। ਇਸਦੇ ਨਾਲ ਸਮੇਂ-ਸਮੇਂ ਸਮਾਜ ਵਿੱਚ ਨਵੀਆਂ ਉਜਾਗਰ ਹੋਈਆਂ ਵਿਚਾਰਧਾਰਾਵਾਂ ਅਤੇ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੇ ਮੋਢੀਆਂ ਦਾ ਪ੍ਰਭਾਵ ਵੀ ਸਮਾਜਿਕ ਅਤੇ ਸਭਿਆਚਾਰਕ ਸਥਿਤੀਆਂ ਵਿੱਚ ਤਬਦੀਲੀ ਦਾ ਕਾਰਨ ਬਣਦਾ ਹੈ। ਇਹ ਤਬਦੀਲੀਆਂ ਪੁਰਾਣੀਆਂ ਖੋਖਲੀਆਂ ਹੋ ਚੁੱਕੀਆਂ ਕਦਰਾਂ ਕੀਮਤਾਂ ਦੀ ਥਾਂ ਨਰੋਈਆਂ ਤੇ ਉਚੇਰੀਆਂ ਕੀਮਤਾਂ ਦੇ ਰੂਪ ਵਿੱਚ ਵਾਪਰਦੀਆਂ ਹਨ। ਨਾਨਕ ਵਿਚਾਰਧਾਰਾ ਮੱਧ ਕਾਲ ਵਿੱਚ ਉਪਜੀ ਵਿਚਾਰਧਾਰਾ ਹੈ। ਉਹ ਇਕ ਅਜਿਹੇ ਚੇਤੰਨ ਅਤੇ ਸਾਹਸੀ ਬੁੱਧੀਜੀਵੀ ਹੋਏ; ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਪਹਿਲਾਂ ਹੋਏ ਧਾਰਮਿਕ ਅਨੁਯਾਈਆਂ ਵਿੱਚ ਸਮਾਜਿਕ, ਆਰਥਿਕ, ਰਾਜਨੀਤਿਕ, ਵਿਚਾਰਧਾਰਕ ਅਤੇ ਅਮਲੀ ਗਿਰਾਵਟਾਂ ਨੂੰ ਦੇਖਦੇ ਹੋਏ, ਉਨ੍ਹਾਂ ਦਾ ਨਿਰਸੰਕੋਚ ਅਤੇ ਨਿਧੜਕ ਸ਼ਬਦਾਂ ਵਿੱਚ ਵਿਰੋਧ ਕੀਤਾ।

ਜਦੋਂ ਅਸੀਂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਦਾ ਵਿਸ਼ਲੇਸ਼ਣ ਕਰਦੇ ਹਾਂ ਤਾਂ ਇਸ ਦੀਆਂ ਜੜ੍ਹਾਂ ਤ੍ਰੈ- ਕਾਲਾਂ ਵਿੱਚ ਲੱਗੀਆਂ ਪ੍ਰਤੀਤ ਹੁੰਦਆਂ ਹਨ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੀ ਰਚਨਾ ਦੀ ਪਿੱਠਭੂਮੀ ਸਦੀਵੀ ਪ੍ਰਤੀਤ ਹੁੰਦੀ ਹੈ। ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਸਮਕਾਲੀ ਸਮਾਜਿਕ, ਧਾਰਮਿਕ, ਆਰਥਿਕ ਤੇ ਰਾਜਨੀਤਿਕ ਪ੍ਰਸਥਿਤੀਆਂ ਵਿੱਚੋਂ ਨਿਕਲਿਆ ਪ੍ਰਤਿਉੱਤਰ ਹੈ। ਅੱਜ ਵੀ ਇਹ ਪ੍ਰਸਥਿਤੀਆਂ ਜਿਉਂ ਦੀਆਂ ਤਿਉਂ ਹਨ; ਜਿਸ ਕਾਰਨ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਦੀ ਪ੍ਰਸੰਗਿਕਤਾ ਹੁਣ ਵੀ ਓਨੀ ਹੀ ਹੈ, ਜਿੰਨੀ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇ ਸਮਕਾਲ ਵਿੱਚ ਸੀ। ਇਸੇ ਕਾਰਨ ਹੁਣ ਵੀ ਜਦੋਂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਨੂੰ ਪੜ੍ਹਿਆ/ ਵਾਚਿਆ ਜਾਂਦਾ ਹੈ, ਤਾਂ ਇੰਝ ਲੱਗਦਾ ਹੈ, ਜਿਵੇਂ ਬਾਬੇ ਨਾਨਕ ਨੇ ਹੁਣ ਦੇ ਸਮਾਜ ਵਿੱਚ ਆ ਕੇ ਇਸਨੂੰ ਰਚਿਆ ਹੋਵੇ। ਬਾਬੇ ਨਾਨਕ ਨੇ ਬਾਣੀ ਨੂੰ ਪੜ੍ਹਨ / ਵਾਚਣ ਲਈ ਹੀ ਨਹੀਂ ਸੀ ਰਚਿਆ, ਸਗੋਂ ਸਮਾਜਿਕ ਪਰਿਵਰਤਨ ਲਈ ਰਚਿਆ ਸੀ, ਤਾਂ ਕਿ ਸਮਾਜਿਕ ਵਿਸੰਗਤੀਆਂ ਨੂੰ ਦੂਰ ਕੀਤਾ ਜਾ ਸਕੇ। ਅਜਿਹਾ ਕਰਨ ਲਈ ਬਾਬਾ ਨਾਨਕ ਦੁਨੀਆਂ ਵਿੱਚ ਲਗਭਗ 36000 ਮੀਲ ਲੰਮਾ ਪੈਂਡਾ ਪੈਦਲ ਤੁਰ ਕੇ ਘੁੰਮਿਆ। ਆਪ ਲੋਕਾਂ ਵਿੱਚ ਜਾ ਕੇ

ਸਮਾਜਿਕ ਘਾਟਾਂ ਨੂੰ ਅਨੁਭਵ ਕੀਤਾ ਤੇ ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੂੰ ਦੂਰ ਕਰਨ ਦਾ ਯਤਨ ਕੀਤਾ।

ਦੁੱਖ ਦੀ ਗੱਲ ਇਹ ਹੈ ਕਿ ਨਾ ਤਾਂ ਉਸ ਸਮੇਂ ਦੇ ਸਮਾਜ ਨੇ ਨਾਨਕ ਵਿਚਾਰਧਾਰਾ 'ਤੇ ਪੂਰੀ ਤਰ੍ਹਾਂ ਅਮਲ ਕੀਤਾ ਤੇ ਨਾ ਹੀ ਅਸੀਂ ਹੁਣ ਕਰ ਰਹੇ ਹਾਂ। ਅੱਜ 550 ਸਾਲ ਬੀਤ ਜਾਣ 'ਤੇ ਵੀ ਸਾਡੀ ਮਾਨਸਿਕਤਾ ਉਸੇ ਤਰ੍ਹਾਂ ਜੁੜੀ ਹੋਈ ਹੈ; ਜਿਵੇਂ 550 ਸਾਲ ਪਹਿਲਾਂ ਸੀ। ਮਨੁੱਖੀ ਸਮਾਜ ਨੇ ਇਨ੍ਹਾਂ ਸਾਲਾਂ ਦੌਰਾਨ ਵਿਗਿਆਨਕ ਤਰੱਕੀ ਬਹੁਤ ਕਰ ਲਈ; ਪਰ ਉਸ ਦਿਸ਼ਾ ਵੱਲ ਪ੍ਰਗਤੀ ਨਹੀਂ ਕੀਤੀ; ਜੋ ਦਿਸ਼ਾ ਬਾਬਾ ਨਾਨਕ ਦੇ ਕੇ ਗਿਆ ਸੀ। ਗੱਲ ਜਾਤ-ਪਾਤ ਦੀ ਕੀਤੀ ਜਾਵੇ, ਤਾਂ ਜਿਸ ਵਿਕਰਾਲ ਰੂਪ ਵਿੱਚ ਇਹ ਗੁਰੂ ਬਾਬੇ ਦੇ ਸਮੇਂ ਸੀ, ਹੁਣ ਓਨੀ ਵਿਕਰਾਲ ਤਾਂ ਨਹੀਂ ਰਹੀ, ਪਰ ਪੂਰੀ ਤਰ੍ਹਾਂ ਖ਼ਤਮ ਵੀ ਨਹੀਂ ਹੋਈ। ਸ਼ਰਮਨਾਕ ਸਥਿਤੀ ਤਾਂ ਉਦੋਂ ਬਣ ਜਾਂਦੀ ਹੈ, ਜਦੋਂ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇ ਦਰਸਾਏ ਮਾਰਗ ਉੱਤੇ ਚੱਲਣ ਵਾਲੇ ਤੇ ਆਪਣੇ-ਆਪ ਨੂੰ ਸਿੱਖ ਅਖਵਾਉਣ ਵਾਲਿਆਂ ਨੇ ਜਾਤ ਦੇ ਨਾਂ 'ਤੇ ਨਵੇਂ ਨਾਮਕਰਨ ਦਾ ਵਰਗ ਸਿਰਜ ਲਿਆ, ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਨੂੰ ਮੰਜੀ ਸਿੱਖ ਕਹਿਣ ਲੱਗ ਗਏ। ਇੱਥੋਂ ਤੱਕ ਕਿ ਪਿੰਡਾਂ ਵਿੱਚ ਗੁਰਦੁਆਰੇ ਵੀ ਅਲੱਗ-ਅਲੱਗ ਉਸਾਰ ਲਏ ਕਿ ਇਹ ਉੱਚੀ ਜਾਤ ਵਾਲਿਆਂ ਦਾ ਹੈ, ਤੇ ਇਹ ਨੀਵੀਂ ਜਾਤ ਵਾਲਿਆਂ ਦਾ। ਇਹ ਲੋਕ ਬਾਬੇ ਨਾਨਕ ਦੀਆਂ ਉਚੇਰੀਆਂ ਨਿਮਨਅੰਕਿਤ ਤੁਕਾਂ ਨੂੰ ਵਿਸਾਰ ਚੁੱਕੇ ਹਨ:

(ੳ) ਨੀਚਾ ਅੰਦਰ ਨੀਚ ਜਾਤਿ ਨੀਚੀ ਹੂੰ ਅਤਿ ਨੀਚ ॥
ਨਾਨਕ ਤਿਨ ਕੈ ਸੰਗਿ ਸਾਥੀ ਵਡਿਆ ਸਿਉ ਕਿਆ ਰੀਸੁ॥ (ਅੰਗ 15)

(ਅ) ਬ੍ਰਾਹਮਣ, ਖਤਰੀ, ਵੈਸ਼ਨੂੰ, ਸ਼ੂਦ, ਉਪਦੇਸ਼ ਚਹੁ ਵਰਣਾਂ ਕਉ ਸਾਂਝਾ॥

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਸੰਸਾਰ ਤਿਆਗਣ ਦੀ ਥਾਂ ਸੰਸਾਰ ਵਿੱਚ ਰਹਿੰਦਿਆਂ ਪਰਮਾਤਮਾ ਨੂੰ ਪਾਉਣ ਦੇ ਮਾਰਗ ਨੂੰ ਅਪਣਾਇਆ ਤੇ ਆਪਣੇ ਸ਼ਰਧਾਲੂਆਂ ਨੂੰ ਵੀ ਇਸੇ ਮਾਰਗ 'ਤੇ ਚੱਲਣ ਲਈ ਕਹਿ ਕੇ ਪਤੀ ਪਤਨੀ ਦੇ ਸਮਾਜਿਕ ਰਿਸ਼ਤੇ ਨੂੰ ਮਾਨਤਾ ਦਿੱਤੀ। ਇਹੀ ਪਤੀ ਪਤਨੀ ਦਾ ਰੂਪਕ ਪਰਮਾਤਮਾ ਤੇ ਜੀਵਆਤਮਾ ਲਈ ਵਰਤ ਕੇ ਬਾਣੀ ਉਚਾਰੀ। ਬੇਸ਼ੱਕ ਇਹ ਰੂਪਕ ਰੂਹਾਨੀ, ਪਰ ਉਦਾਹਰਨ ਤਾਂ ਸਮਾਜਿਕ/ ਦੁਨਿਆਵੀ ਹੈ। ਇਸ ਰਿਸ਼ਤੇ ਦਾ ਜੋ ਦੁਨਿਆਵੀ/ ਅਧਿਆਤਮਿਕ ਸਰੂਪ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਨੇ ਪ੍ਰਵਾਨ ਕੀਤਾ, ਉਹ ਇਸ ਪ੍ਰਕਾਰ ਸੀ:

ਏਹ ਕਿਨੇਹੀ ਆਸਕੀ ਦੂਜੈ ਲਗੈ ਜਾਇ॥
ਨਾਨਕ ਆਸਕੀ ਕਾਂਢੀਐ ਸਦ ਹੀ ਰਹੈ ਸਮਾਇ॥
ਚੰਗੈ ਚੰਗਾ ਕਰਿ ਮੰਨੇ ਮੰਦੈ ਮੰਦਾ ਹੋਇ॥
ਆਸਕ ਏਹ ਨ ਆਖੀਐ ਜਿ ਵੇਖੈ ਵਰਤੈ ਸੋਇ॥ (ਅੰਗ 474)

ਚਾਹੇ ਪਰਮਾਤਮਾ ਨਾਲ ਇਸ਼ਕ ਹੈ, ਚਾਹੇ ਦੁਨਿਆਵੀ, ਉਹ ਇੱਕ ਨਾਲ ਹੀ ਹੋਵੇ। ਆਪਣੇ ਪਤੀ ਤੋਂ ਇਲਾਵਾ ਦੂਜਿਆਂ ਨਾਲ ਸੰਬੰਧ ਬਣਾਉਣ ਦੀ ਮਿਸਾਲ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਵਿੱਚ ਵੀ ਪਈ ਹੈ; ਜੋ ਅੱਜ ਵੀ ਸਮਾਜ ਵਿੱਚ ਮਿਲ ਜਾਂਦੀ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਲਿਖਦੇ ਹਨ: ਪਰ ਪਿਰ ਰਾਤੀ ਖਸਮ ਵਿਸਾਰਾ॥ (ਅੰਗ 1029)

ਅਜਿਹੇ ਰਿਸ਼ਤੇ ਨੂੰ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਵਿੱਚ ਨਕਾਰਿਆ ਗਿਆ ਹੈ। ਜਿਸ ਰਿਸ਼ਤੇ ਵਿੱਚ ਪ੍ਰਤੀਬੱਧਤਾ ਨਾ ਹੋਵੇ , ਉਸ ਵਿੱਚ ਹਾਨੀ ਹੀ ਹਾਨੀ ਹੈ:

ਪਰ ਘਰਿ ਜੋਹਿਆ ਹਾਣੇ ਹਾਣਿ॥ (ਅੰਗ 941)

ਅਧਿਆਤਮਿਕ ਰਸਤੇ ਉੱਪਰ ਤੁਰਨ ਲਈ ਗੁਰੂ ਦੀ ਹੋਂਦ ਨੂੰ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਵਿੱਚ ਅਵੱਸ਼ ਮੰਨਿਆ ਗਿਆ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਹੀ ਹੈ; ਜਿਸਨੇ ਪਰਮਾਤਮਾ ਤੱਕ ਪਹੁੰਚਣ ਦਾ ਰਸਤਾ ਦਿਖਾਉਣ ਹੈ। ਪਰ ਗੁਰੂ ਨੂੰ ਅੰਨ੍ਹੀ ਸ਼ਰਧਾ ਤੇ ਵਿਸ਼ਵਾਸ ਵਿੱਚ ਧਾਰਨ ਨਹੀਂ ਕਰਨਾ। ਕਿਉਂਕਿ ਗੁਰੂ ਤਾਂ ਹੀ ਰਸਤਾ ਦਿਖਾ ਸਕਦਾ ਹੈ, ਜੇ ਉਸਨੂੰ ਖ਼ੁਦ ਨੂੰ ਗਿਆਨ ਹੋਵੇਗਾ। ਜੇ ਉਹ ਆਪ ਹੀ ਅਗਿਆਨੀ ਹੈ, ਤਾਂ ਕਿਸੇ ਨੂੰ ਕੀ ਗਿਆਨ ਦੇਵੇਗਾ। ਇਸਦਾ ਅਰਥ ਕਿ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇ ਸਮੇਂ ਵੀ ਅਜਿਹੇ ਗੁਰੂ ਸਨ; ਜੋ ਗਿਆਨ ਤੋਂ ਹੀਣ ਸਨ ਤੇ ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਇਸ ਅਧਿਆਤਮਿਕ ਸਰੂਪ ਨੂੰ ਲੋਕਾਂ ਦੀ ਲੁੱਟ ਦਾ ਆਧਾਰ ਬਣਾ ਕੇ, ਬਾਹਰੀ ਧਾਰਮਿਕ ਦਿਖ ਬਣਾਈ ਹੋਈ ਸੀ ਤੇ ਅਸਾਨੀ ਨਾਲ ਸਮਾਜ ਵਿੱਚ ਵਿਚਰ ਰਹੇ ਸਨ। ਅਜਿਹੇ ਗਿਆਨ ਤੋਂ ਹੀਣੇ ਧਾਰਮਿਕ ਗੁਰੂ ਅਜੋਕੇ ਯੁੱਗ ਵਿੱਚ ਵੀ ਉਸੇ ਤਰ੍ਹਾਂ ਮੌਜੂਦ ਹਨ ਤੇ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੀ ਸਮਕਾਲੀ ਲੋਕਾਈ ਵਾਂਗ ਹੀ ਅਖੌਤੀ ਗੁਰੂਆਂ ਦੇ ਪਿੱਛੇ ਲੱਗ ਕੇ ਆਪਣੀ ਆਰਥਿਕ, ਸਰੀਰਿਕ, ਮਾਨਸਿਕ ਲੁੱਟ ਕਰਵਾ ਰਹੇ ਹਨ। ਲੋਕਾਂ ਤੋਂ ਸੇਵਾ ਦੇ ਨਾਂ 'ਤੇ ਲੁੱਟੇ ਧਨ ਰਾਹੀਂ ਐਸ਼ੋ- ਇਸ਼ਰਤ ਭਰਿਆ ਜੀਵਨ ਗੁਜ਼ਾਰਦੇ ਹਨ। ਆਲੀਸ਼ਾਨ ਬੰਗਲਿਆਂ ਵਿੱਚ ਰਹਿੰਦੇ, ਮਹਿੰਗੀਆਂ ਕਾਰਾਂ ਵਿੱਚ ਘੁੰਮਦੇ ਹਨ।ਗੱਲ ਕੀ ਹਰ ਉਹ ਸਹੂਲਤ ਜੋ ਇੱਕ ਅਮੀਰ ਵਿਅਕਤੀ ਕੋਲ ਹੁੰਦੀ ਹੈ।ਅਧਿਆਤਮਿਕ ਸਾਦਗੀ ਤੋਂ ਇਹ ਕੋਹਾਂ ਦੂਰ ਹਨ। ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਅਜਿਹੇ ਗੁਰੂਆਂ ਤੋਂ ਬਚਣ ਦਾ ਉਪਦੇਸ਼ ਦਿੰਦੀ ਕਹਿੰਦੀ ਹੈ:

ਅੰਧਾ ਆਗੂ ਜੇ ਥੀਐ ਕਿਉ ਪਾਧਰ ਜਾਣੈ॥ (ਅੰਗ 767)
ਗੁਰੂ ਜਿਨਾ ਕਾ ਅੰਧੁਲਾ ਚੇਲੈ ਨਾਹੀ ਠਾਉ॥ (ਅੰਗ 58)

ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਦਾ ਵਿਸ਼ਲੇਸ਼ਣ ਕਰਨ ਉਪਰੰਤ ਇੱਕ ਬ੍ਰਹਮ ਦੇ ਸੰਕਲਪ ਨੂੰ ਵੀ ਬਾਖੂਬੀ ਚਿਤਰਿਆ ਹੈ।ਜਿਸ ਕਾਲ ਵਿੱਚ ਬਾਬਾ ਨਾਨਕ ਪੈਦਾ ਹੋਇਆ; ਉਦੋਂ ਅਤੇ ਉਸ ਤੋਂ ਪਹਿਲਾਂ ਹਿੰਦੂ ਅਤੇ ਮੁਸਲਿਮ ਧਰਮ ਦਾ ਬੋਲਬਾਲਾ ਸੀ। ਬ੍ਰਾਹਮਣ

ਧਰਮ ਬਹੁਦੇਵਵਾਦ ਵੱਲ ਪ੍ਰੇਰਿਆ ਹੋਇਆ ਸੀ, ਜਿਸ ਵਿੱਚ ਅਨੇਕਾਂ ਦੇਵੀ ਦੇਵਤਿਆਂ ਦੇ ਸਰੂਪਾਂ ਦੀ ਪੂਜਾ ਕੀਤੀ ਜਾਂਦੀ ਸੀ। ਬਾਬੇ ਨਾਨਕ ਨੇ ਬਹੁਦੇਵਵਾਦ ਦਾ ਵਿਰੋਧ ਬੜੇ ਕਰੜੇ ਸ਼ਬਦਾਂ ਵਿੱਚ ਕੀਤਾ ਅਤੇ ਇੱਕ ਬ੍ਰਹਮ ਦੇ ਸੰਕਲਪ ਨੂੰ ਉਜਾਗਰ ਕੀਤਾ।ਉਨ੍ਹਾਂ ਅਨੁਸਾਰ ਇੱਕ ਪਰਮ ਸ਼ਕਤੀ ਹੈ; ਜਿਸਨੇ ਇਹ ਸੰਸਾਰ ਸਿਰਜਿਆ; ਮਨੁੱਖ , ਪਸ਼ੂ, ਪੰਛੀ, ਜਾਨਵਰ, ਪੇੜ, ਪੌਦੇ ਆਦਿ ਸਭ ਕੁਝ ਸਿਰਜਿਆ। ਇਹ ਸ਼ਕਤੀ ਸਦੀਵੀ ਹੈ, ਸੱਚ ਹੈ, ਸਰੂਪ ਰਹਿਤ ਹੈ। ਜਪੁਜੀ ਸਾਹਿਬ ਵਿੱਚ ਦਰਜ ਮੂਲ ਮੰਤਰ ਬ੍ਰਹਮ ਦੇ ਇਸ ਸਰੂਪ ਨੂੰ ਸਿਰਜਦਾ:

ੴ ਸਤਿਨਾਮ ਕਰਤਾ ਪੁਰਖ ਨਿਰਭਉ
ਨਿਰਵੈਰ ਅਕਾਲ ਮੂਰਤਿ ਅਜੂਨੀ ਸੈਭੰਗ ਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥ (ਅੰਗ 1)

ਮੌਜੂਦਾ ਸਥਿਤੀ ਇਹ ਹੈ ਕਿ ਅੱਜ ਦਾ ਮਨੁੱਖ ਭਾਵੇਂ ਕਿੰਨਾ ਹੀ ਪੜ੍ਹਿਆ ਲਿਖਿਆ ਹੋਵੇ, ਵਿਗਿਆਨ ਦੀਆਂ ਗੱਲਾਂ ਕਰਦਾ ਹੋਵੇ; ਪਰ ਉਸਦੀ ਮਾਨਸਿਕਤਾ ਬਹੁਦੇਵਵਾਦ ਉੱਤੇ ਹੀ ਜਕੜੀ ਪਈ ਹੈ। ਉਹ ਅੱਜ ਵੀ ਅਨੇਕਾਂ ਦੇਵੀ- ਦੇਵਤਿਆਂ, ਗੁਰੂ- ਪੀਰਾਂ ਨੂੰ ਰਿਝਾਉਣ ਵਿੱਚ ਲੱਗਿਆ ਹੈ। ਕਰਮ ਕਾਂਡਾਂ ਉਸਨੂੰ ਅੱਜ ਵੀ ਜਕੜਿਆ ਹੋਇਆ ਹੈ। ਅੱਜ ਵੀ ਹਿੰਦੂ, ਸਿੱਖ, ਮੁਸਲਿਮ ਆਦਿ ਧਾਰਮਿਕ ਸਥਾਨਾਂ ਉੱਪਰ ਅਨੇਕਾਂ ਕਰਮ- ਕਾਂਡ ਹੁੰਦੇ ਮਿਲ ਜਾਣਗੇ।

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਦੀ ਸਾਰਥਕਤਾ ਸਦੀਵੀ ਹੈ। ਜਦੋਂ ਇਹ ਪੈਦਾ ਹੋਈ, ਉਦੋਂ ਸਮਾਜਵਾਦ ਦਾ ਬੋਲਬਾਲਾ ਸੀ। ਆਮ ਮਨੁੱਖ ਰੂੜ੍ਹੀਵਾਦੀ, ਜਗੀਰੂ ਅਤੇ ਮਾਨਵ ਵਿਰੋਧੀ ਕੀਮਤਾਂ ਵਿੱਚ ਗ੍ਰਸਿਆ ਹੋਇਆ ਸੀ। ਸ੍ਰੇਸ਼ਟ ਸ਼੍ਰੇਣੀ ਮੇਰੀ ਮੇਰੀ ਕਰਦੀ, ਹਰ ਪ੍ਰਕਾਰ ਦੇ ਹੀਲੇ ਵਸੀਲੇ ਜੁਟਾ ਕੇ, ਧਨ ਇੱਕਤਰਿਤ ਕਰਨ ਵਿੱਚ ਲੱਗੀ ਰਹਿੰਦੀ। ਪਰ ਅੱਜ ਸਦੀਆਂ ਬੀਤ ਜਾਣ ਬਾਅਦ ਵੀ ਸਥਿਤੀ ਜਿਉਂ ਦੀ ਤਿਉਂ ਹੈ। ਮਨੁੱਖ ਪੂੰਜੀਵਾਦ ਅਤੇ ਨਿੱਜੀਕਰਨ ਵਿੱਚ ਪੂਰੀ ਤਰ੍ਹਾਂ ਗ੍ਰਸਤ ਹੋ ਚੁੱਕਾ ਹੈ। ਅੱਜ ਵੀ ਸਮਾਜ ਵਿੱਚ ਅਜਿਹੀਆਂ ਤਾਕਤਾਂ ਹਨ, ਜੋ ਜਗੀਰੂ ਸੋਚ ਰੱਖਦੀਆਂ, ਰਾਜਨੀਤੀ ਹਾਸਿਲ ਕਰਕੇ, ਆਮ ਜਨਤਾ ਦਾ ਹਰ ਪੱਖੋਂ ਸ਼ੋਸ਼ਣ ਕਰਨ ਵਿੱਚ ਲੱਗੀਆਂ ਹਨ। ਇਹ ਤਾਕਤਾਂ ਧਾਰਮਿਕ ਜਥੇਬੰਦੀਆਂ ਉੱਤੇ ਵੀ ਕਾਬਜ਼ ਹੋ ਕੇ, ਉੱਥੋਂ ਦੀ ਧਨ- ਦੌਲਤ ਅਤੇ ਵੋਟ ਬੈਂਕ ਨੂੰ ਆਪਣੇ ਨਿੱਜੀ ਹਿੱਤਾਂ ਲਈ ਪ੍ਰਯੋਗ ਕਰਦੀਆਂ ਹਨ।

ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਕਹਿੰਦੀ ਹੈ ਕਿ ਦੂਜਿਆਂ ਦਾ ਹੱਕ ਮਾਰ ਕੇ ਵਿਅਕਤੀ ਮੁਕਤੀ ਨਹੀਂ ਪਾ ਸਕਦਾ। ਸ਼ਕਤੀ, ਧਨ, ਦੌਲਤ, ਐਸ਼ੋ ਆਰਾਮ ਦਾ ਸਾਜੋ ਸਮਾਨ ਆਦਿ ਕੁਝ ਵੀ ਉਸਦੇ ਨਾਲ ਨਹੀਂ ਜਾਣਾ। ਸਾਡੀ ਸਮਝ ਅਨੁਸਾਰ ਜੇਕਰ ਅਜੋਕਾ ਸਮਾਜ ਗੁਰੂ ਦੇ ਦੱਸੇ ਮਾਰਗ ਉੱਪਰ ਚੱਲੇ ਤਾਂ ਉਹ ਇਨ੍ਹਾਂ ਮਨੁੱਖ ਵਿਰੋਧੀ ਅਲਾਮਤਾਂ ਤੋਂ ਛੁਟਕਾਰਾ ਪਾ ਸਕਦਾ ਹੈ:

ਹੱਕ ਪਰਾਇਆ ਨਾਨਕਾ ਉਸ ਸੂਅਰ ਉਸ ਗਾਇ॥ (ਅੰਗ 141)

ਔਰਤ ਦੀ ਸਥਿਤੀ ਹਮੇਸ਼ਾ ਹੀ ਹਾਸ਼ਿਆਗਤ ਰਹੀ ਹੈ। ਔਰਤ ਨੂੰ ਮਨੁੱਖੀ ਸਮਾਜ ਦੇ ਸਾਰੇ ਵਰਤਾਰਿਆਂ ਵਿੱਚ ਅਕਸਰ ਦੂਜੈਲੇ ਨੰਬਰ 'ਤੇ ਰੱਖ ਕੇ ਦੇਖਿਆ ਜਾਂਦਾ ਹੈ।ਵੇਦਾਂ ਤੋਂ ਲੈ ਕੇ ਨਾਥਾਂ ਜੋਗੀਆਂ ਦੇ ਸਮੇਂ ਤਕ ਔਰਤ ਮਰਦਾਵੀਂ ਸੋਚ ਵਿੱਚ ਭੰਡੀ ਗਈ ਹੈ। ਔਰਤ ਬਾਰੇ ਮੁਢਲਾ ਸਮੇਂ ਵਿੱਚ ਸਪੱਸ਼ਟੀਕਰਨ ਨਜ਼ਰ ਨਹੀਂ ਆਉਂਦਾ, ਪਰ ਮੱਧ ਯੁੱਗ ਵਿੱਚ ਬਾਬੇ ਨਾਨਕ ਨੇ ਪਹਿਲੀ ਵਾਰ ਔਰਤ ਦੇ ਹੱਕ ਵਿੱਚ ਆਵਾਜ਼ ਬੁਲੰਦ ਕੀਤੀ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਸਮਾਜਿਕ, ਆਰਥਿਕ, ਰਾਜਨੀਤਿਕ ਆਦਿ ਪੱਧਰਾਂ ਉੱਤੇ ਔਰਤ ਨੂੰ ਕੇਂਦਰੀ ਬਿੰਦੂ ਉੱਤੇ ਲੈ ਆਉਂਦਾ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਔਰਤ ਨੂੰ ਸਮਾਜ ਵਿੱਚ ਉਚੇਰਾ ਦਰਜਾ ਦਿਖਾਉਂਦੇ ਹੋਏ ਕਿਹਾ:

ਭੰਡਿ ਜੰਮੀ ਭੰਡਿ ਨਿੰਮੀਐ ਭੰਡਿ ਮੰਗਣ ਵੀਆਹ ॥
ਭੰਡੀ ਹੋਵੇ ਦੋਸਤੀ ਭੰਡੀ ਚਲੈ ਰਾਹੁ॥
ਭੰਡ ਮੁਆ ਭੰਡ ਭਾਲੀ ਭੰਡਿ ਹੋਵੈ ਬੰਧਾਨੁ॥
ਸੋ ਕਿਉ ਮੰਦਾ ਆਖੀਐ ਜਿਤੁ ਜੰਮੀ ਰਾਜਾਨ ॥ (ਅੰਗ 473)

ਬਾਬੇ ਨਾਨਕ ਦੇ 550 ਵਰ੍ਹੇ ਬੀਤ ਜਾਣ ਮਗਰੋਂ ਵੀ ਸਥਿਤੀ ਇਹ ਹੈ ਕਿ ਔਰਤ ਦੀ ਸਥਿਤੀ ਵਿੱਚ ਕੋਈ ਕਾਰਗਰ ਤਬਦੀਲੀ ਨਹੀਂ ਵਾਪਰੀ। ਔਰਤ ਨੂੰ ਸਾਡੇ ਸਮਾਜ ਵਿੱਚ ਅੱਜ ਵੀ ਦੂਜੈਲੇ ਵਸਤੂ ਵਜੋਂ ਦੇਖਿਆ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਸਾਡੇ ਸਮਾਜ ਵਿੱਚ ਹਾਲੇ ਵੀ ਔਰਤ ਦਾ ਸਮਾਜਿਕ, ਮਾਨਸਿਕ ਅਤੇ ਸਰੀਰਿਕ ਸ਼ੋਸ਼ਣ ਹੁੰਦਾ ਹਰ ਪੱਧਰ 'ਤੇ ਮਿਲ ਜਾਂਦਾ ਹੈ।

ਉਪਰੋਕਤ ਚਰਚਾ ਦੇ ਆਧਾਰ ਤੇ ਕਿਹਾ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ ਕਿ ਬਾਬਾ ਨਾਨਕ ਦੀ ਬਾਣੀ ਦੀ ਜਿੱਥੇ ਅਧਿਆਤਮਿਕ ਖੇਤਰ ਵਿੱਚ ਸਾਰਥਕਤਾ ਹੈ ਉੱਥੇ ਸਮਾਜਿਕ, ਰਾਜਨੀਤਿਕ, ਸਭਿਆਚਾਰਕ, ਸਦਾਚਾਰਕ ਆਦਿ ਪੱਖਾ ਉੱਪਰ ਵੀ ਨਜ਼ਰਸਾਨੀ ਕਰਨਾ ਜ਼ਰੂਰੀ ਜਾਪਦਾ ਹੈ। ਭਾਵੇਂ ਮੱਧ ਕਾਲ ਹੋਵੇ, ਆਧੁਨਿਕ ਕਾਲ, ਉਤਰ ਆਧੁਨਿਕ ਕਾਲ, ਭਾਵੇਂ ਭਵਿੱਖ ਵਿੱਚ ਕੋਈ ਨਵਾਂ ਕਾਲ ਹੋਵੇ ਹਰ ਯੁਗ ਵਿੱਚ ਬਾਬਾ ਨਾਨਕ ਦੀ ਬਾਣੀ ਦੀ ਆਪਣੀ ਸਾਰਥਕਤਾ ਬਰਕਰਾਰ ਰਹੇਗੀ।

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ : ਜੀਵਨ ਮੁੱਲ ਅਤੇ ਦਰਸ਼ਨ

*ਡਾ. ਹਰਮੀਤ ਕੌਰ

* ਅਸਿਸਟੈਂਟ ਪ੍ਰੋਫੈਸਰ, ਮਾਤਾ ਹਰਕੀ ਦੇਵੀ ਕਾਲਜ ਔਢਾਂ (ਸਰਸਾ)

ਸਰਬਾਂਗੀ ਸ਼ਖ਼ਸੀਅਤ, ਮਹਾਨ ਚਿੰਤਕ, ਭਵਿੱਖਮੁਖੀ ਵਿਗਿਆਨਿਕ ਸੋਚ ਦੇ ਮੁੱਦਈ, ਉੱਚ ਕੋਟੀ ਦੇ ਦਾਰਸ਼ਨਿਕ, ਸਮਾਜ ਸੁਧਾਰਕ, ਉਸਤਾਦ ਕਵੀ 'ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਸਾਹਿਬ' ਕੇਵਲ ਸਿੱਖ ਕੌਮ ਦੇ ਹੀ ਧਾਰਮਿਕ ਆਗੂ ਨਹੀਂ ਸਨ, ਸਗੋਂ ਸਮੁੱਚੀ ਮਾਨਵਤਾ ਦੇ ਮਸੀਹਾ ਵਜੋਂ ਜਾਣੇ ਜਾਂਦੇ ਹਨ। ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਆਪਣੇ ਜੀਵਨ ਕਾਲ ਦੌਰਾਨ ਚਾਰ ਉਦਾਸੀਆਂ ਦੁਆਰਾ ਉੱਘੇ ਧਰਮ ਸਥਾਨਾਂ ਤੇ ਜਾਕੇ ਮੁੱਲਾਂ ਮੁਲਾਣਿਆ, ਪੰਡਤਾਂ ਅਤੇ ਭੇਖੀ ਸਾਧਾਂ ਨੂੰ ਅਸਲੀ ਧਰਮ ਦੀ ਸੋਝੀ ਕਰਵਾਈ ਅਤੇ ਕੁਰਾਹੇ ਪਈ ਲੋਕਾਈ ਨੂੰ ਅਗਵਾਈ ਦਿੱਤੀ।

ਇਹ ਖੋਜ ਪੱਤਰ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਨੂੰ ਮਹਿਜ ਧਾਰਮਿਕ ਆਗੂ ਤਕ ਹੀ ਸੀਮਤ ਨਾ ਰੱਖ ਕੇ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੇ ਇਨਕਲਾਬੀ ਚਰਿੱਤਰ ਨੂੰ ਉਭਾਰਨ ਦਾ ਹੀ ਇੱਕ ਸੀਮਤ ਜਿਹਾ ਉਪਰਾਲਾ ਹੈ।ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਨੇ ਆਪਣੇ ਜਨ ਕਲਿਆਣਕਾਰੀ ਮੌਲਿਕ ਦਰਸ਼ਨ ਨਾਲ, ਕਥਨੀ ਤੇ ਕਰਨੀ ਦੀ ਇਕਸੁਰਤਾ ਕਰਕੇ, ਇਕ ਅਜਿਹਾ ਸੂਝ ਮਾਡਲ ਸਥਾਪਤ ਕੀਤਾ ਜੋ ਸਰਵਕਾਲੀ ਚਰਿੱਤਰ ਅਖਤਿਆਰ ਕਰ ਗਿਆ।

ਧਰਮ ਅਤੇ ਫਿਲਾਸਫੀ ਦਾ ਖਜ਼ਾਨਾ ਗੁਰਬਾਣੀ ਦੀਆਂ ਜੜ੍ਹਾਂ 12ਵੀਂ ਤੋਂ 17ਵੀਂ ਸਦੀ ਤੱਕ ਫੈਲੀਆਂ ਹੋਈਆਂ ਹਨ। ਗੁਰਬਾਣੀ ਦੇ ਨਿਰੰਤਰ ਬਣੇ ਰਹਿਣ ਦਾ ਰਹੱਸ ਗੁਰੂ ਕਵੀਆਂ ਦਾ ਵਿਸ਼ਵ ਭਾਈਚਾਰੇ ਵਾਲਾ ਉਸਾਰੂ ਦ੍ਰਿਸ਼ਟੀਕੋਣ ਹੈ। ਗੁਰਬਾਣੀ ਵਿਚਲੇ ਧਰਮ ਦੀ ਬੁਨਿਆਦ ਧਰਤੀ ਨਾਲ ਜੁੜੀ ਹੋਈ ਹੈ, ਜੋ ਲੋਕਮਨ ਦੀ ਅਗਵਾਈ ਵਾਲੀ ਹੈ। ਇਸੇ ਕਰਕੇ ਬਾਬਾ ਨਾਨਕ ਨੇ 'ਬਾਬਰਵਾਣੀ' ਵਿੱਚ ਸੱਤਾ ਧਾਰੀਆਂ ਨਾਲ ਵਿਰੋਧ ਦਰਸਾਉਂਦਿਆਂ, ਜਨ-ਹਿਤ ਵਿੱਚ ਆਵਾਜ਼ ਬੁਲੰਦ ਕੀਤੀ ਅਤੇ 'ਲੇਖਕ ਧਰਮ' ਦੀ ਜਨ ਕਲਿਆਣ ਪ੍ਰਤੀ ਪ੍ਰਤੀਬੱਧਤਾ ਨੂੰ ਪ੍ਰਗਟਾਉਂਦਿਆਂ ਹੋਇਆਂ ਬਾਬਰ ਦੇ ਜ਼ੁਲਮ ਨੂੰ ਵੰਗਾਰਿਆ :-

"ਪਾਪ ਕੀ ਜੰਞ ਲੈ ਕਾਬਲਹੁ ਧਾਇਆ
ਜੋਰੀ ਮੰਗੈ ਦਾਨੁ ਵੇ ਲਾਲੋ
ਸਰਮੁ ਧਰਮੁ ਦੁਇ ਛਪਿ ਖਲੋਏ
ਕੂੜੁ ਫਿਰੈ ਪਰਧਾਨੁ ਵੇ ਲਾਲੋ" [1]

"ਜੇ ਸਕਤਾ ਸਕਤੇ ਕਉ ਮਾਰੇ ਤਾ ਮਨਿ ਰੋਸੁ ਨ ਹੋਈ
ਸਕਤਾ ਸੀਹੁ ਮਾਰੇ ਪੈ ਵਗੈ ਖਸਮੈ ਸਾ ਪੁਰਸਾਈ
....
ਸਾਹਾ ਸੁਰਤਿ ਗਵਾਈਆ ਰੰਗਿ ਤਮਾਸੈ ਚਾਇ
ਬਾਬਰਵਾਣੀ ਫਿਰਿ ਗਈ ਕੁਇਰੁ ਨ ਰੋਟੀ ਖਾਇ"[2]

ਭਾਵੇਂ ਅਜਿਹੀ ਸਥਿਤੀ ਦਾ ਜ਼ਿੰਮੇਵਾਰ ਵੀ ਜਨਤਾ ਦੀ ਗੁਲਾਮ ਜ਼ਿਹਨੀਅਤ ਨੂੰ ਹੀ ਗਰਦਾਨਿਆ ਗਿਆ ਸੀ। ਕਿਉਂਕਿ ਰਾਜੇ ਨਿੱਜੀ ਹਿੱਤਾਂ ਕਰਕੇ ਜਨਤਾ ਤੋਂ ਮੂੰਹ ਮੋੜ ਚੁੱਕੇ ਸਨ। ਇਸੇ ਲਈ ਡਾ. ਜਗਬੀਰ ਸਿੰਘ ਨੇ, "ਲੋਭ ਪਾਪ ਅਤੇ ਝੂਠ ਨੂੰ ਰਾਜਿਆਂ ਤੇ ਰਾਜ-ਕਰਮਚਾਰੀਆਂ ਨਾਲ ਉਪਮਾ ਦਿੱਤੀ।"[3] ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਨੇ ਰੂਹਾਨੀਅਤ, ਅਧਿਆਤਮਿਕ ਅਤੇ ਦਾਰਸ਼ਨਿਕ ਬਹਿਸਾਂ ਕਰਦਿਆਂ ਮਾਨਵ ਨੂੰ ਆਪਣੇ ਚੁਗਿਰਦੇ ਦੀ ਉਸਾਰੀ ਦੀ ਪ੍ਰੇਰਨਾ ਦਿੱਤੀ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਅੱਖਾਂ ਮੀਟ ਕੇ ਭਗਤੀ ਕਰਨ ਦੀ ਥਾਈਂ, ਮਨ ਦੀਆਂ ਪਰਤਾਂ ਖੋਲ ਕੇ, ਗਿਆਨ ਮੰਡਲਾਂ ਵਿੱਚ ਵਿਚਰਦਿਆਂ, ਬੁੱਧੀ ਅਤੇ ਵਿਵੇਕ ਅਨੁਸਾਰ ਚਿੰਤਨ ਕਰਦਿਆਂ, ਜਨ ਸਧਾਰਨ ਦੇ ਦਰਦ ਨੂੰ ਲੋਕ ਮੁਹਾਵਰੇ ਵਾਲੀ ਬੋਲੀ ਵਿੱਚ ਕਾਰਨ-ਕਾਰਜ ਦੀ ਪੱਧਰ ਉੱਤੇ ਮੂਰਤੀਮਾਨ ਕੀਤਾ। ਸ਼ੋਸ਼ਣਕਾਰੀ ਸ਼ਕਤੀਆਂ ਨੂੰ ਵੰਗਾਰਦਿਆਂ ਹੋਇਆਂ ਰੱਬ ਨੂੰ ਵੀ ਉਲਾਂਭੇ ਦੇਣ ਤੋਂ ਗੁਰੇਜ਼ ਨਹੀਂ ਕੀਤਾ ਜਿਵੇਂ-

"ਏਤੀ ਮਾਰ ਪਈ ਕੁਰਲਾਣੈ ਤੈਂ ਕੀ ਦਰਦੁ ਨ ਆਇਆ"[4]

ਬਾਣੀ ਵਿਚਲਾ ਰੱਬ ਮਹਿਜ ਇੱਕ ਧਾਰਮਿਕ ਖਿਆਲ ਨਹੀਂ, ਸਗੋਂ ਮਨੁੱਖ ਦੇ ਹਿੱਤ ਵਿੱਚ ਕੰਮ ਆਉਣ ਵਾਲੀ ਸ਼ਕਤੀ ਹੈ। ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਅਨੁਸਾਰ ਇਕ ਨਿਆਂਕਾਰੀ ਰਾਜਾ ਦਾ ਫਰਜ਼ ਅਤੇ ਜਨ ਸਧਾਰਨ ਦੀ ਜਾਗਰੂਕਤਾ ਦੋਵੇਂ ਜਰੂਰੀ ਹਨ। ਤਾਂਕਿ ਝੂਠ ਸੱਚ ਵਿਚਲੇ ਮਹੀਨ ਅੰਤਰ ਨੂੰ ਨਿਖੇੜਿਆ ਜਾ ਸਕੇ :--

"ਅੰਧੀ ਰਯਤਿ ਗਿਆਨ ਵਿਹੂਣੀ ਭਾਹਿ ਭਰੇ ਮੁਰਦਾਰੁ"[5]
"ਗਿਆਨ ਵਿਹੂਣਾ ਗਾਵੈ ਗੀਤ ਭੁਖੇ ਮੁਲਾਂ ਘਰੇ ਮਸੀਤਿ"[6]

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਦੇ ਆਗਮਨ ਤੋਂ ਪਹਿਲਾਂ ਸਮਾਜ ਵਿੱਚ ਔਰਤਾਂ ਦੀ ਸਥਿਤੀ ਬੇਹੱਦ ਤਰਸਯੋਗ ਸੀ, ਭਾਵੇਂ ਮਨੂੰ ਸਮਰੀਤੀ ਅਨੁਸਾਰ 'ਜਿੱਥੇ ਔਰਤਾਂ ਦੀ ਪੂਜਾ ਹੁੰਦੀ ਹੈ ਓਥੇ ਦੇਵਤੇ ਨਿਵਾਸ ਕਰਦੇ ਹਨ।' ਬਾਵਜੂਦ ਇਸਦੇ ਔਰਤਾਂ ਨੂੰ 'ਨਾਗਨ' ਅਤੇ 'ਬਾਘਨ' ਕਹਿ ਕੇ ਭੰਡਿਆ ਜਾਂਦਾ ਸੀ। ਔਰਤਾਂ ਦੀ ਮੱਤ ਗੁੱਤ ਹੇਠਾਂ ਜਾਂ ਗਿੱਟਿਆਂ ਵਿੱਚ ਅਤੇ 'ਪੈਰ ਦੀ ਜੁੱਤੀ' ਕਹਿ ਕੇ ਤਿਰਸਕਾਰਿਆ ਜਾਂਦਾ ਸੀ। ਗੁਰਬਾਣੀ ਵਿੱਚ ਪਹਿਲੀ ਵਾਰੀ ਔਰਤਾਂ ਦੇ ਹੱਕਾਂ ਦੀ ਪੁਰਜ਼ੋਰ ਵਕਾਲਤ ਕੀਤੀ ਗਈ। ਔਰਤਾਂ ਨੂੰ ਸਮਾਜ ਦਾ ਨਰੋਆ ਅੰਗ ਦਸਦਿਆਂ ਕਿਹਾ ਗਿਆ ਕਿ:--

"ਭੰਡਿ ਜੰਮੀਐ ਭੰਡਿ ਨਿੰਮੀਐ ਭੰਡਿ ਮੰਗਣੁ ਵੀਆਹੁ
ਭੰਡਹੁ ਹੋਵੈ ਦੋਸਤੀ ਭੰਡਹੁ ਚਲੈ ਰਾਹੁ
ਭੰਡੁ ਮੁਆ ਭੰਡੁ ਭਾਲੀਐ ਭੰਡਿ ਹੋਵੈ ਬੰਧਾਨੁ
ਸੋ ਕਿਉ ਮੰਦਾ ਆਖੀਐ ਜਿਤੁ ਜੰਮਹਿ ਰਾਜਾਨੁ"[7]

ਅੱਜ ਅਸੀਂ ਗੁਰੂਆਂ ਨੂੰ ਵੀ ਪੂਜਦੇ ਹਾਂ, ਗੁਰਬਾਣੀ ਨੂੰ ਵੀ ਨਤ-ਮਸਤਕ ਹੁੰਦੇ ਹਾਂ, ਪਰ ਅਫਸੋਸ ਇਸ ਗੱਲ ਦਾ ਹੈ ਕਿ ਅਸੀਂ ਮਹਿਜ ਮੱਥੇ ਟੇਕਣ ਤੱਕ ਹੀ ਸੀਮਤ ਹਾਂ। ਗੁਰਬਾਣੀ ਤੇ ਅਮਲ ਨਹੀਂ ਕਰਦੇ। ਉਸਨੂੰ ਹਿਰਦੇ ਵਿੱਚ ਨਹੀਂ ਵਸਾਉਂਦੇ। ਔਰਤ ਦਾ ਸਤਿਕਾਰ ਨਹੀਂ ਕਰਦੇ। ਜੇਕਰ ਅਸੀਂ ਸੱਚਮੁੱਚ ਮਨ, ਵਚਨ ਅਤੇ ਕਰਮ ਤੋਂ ਗੁਰਬਾਣੀ ਨਾਲ ਜੁੜੇ ਹੁੰਦੇ ਤਾਂ ਅਜ ਦੇ ਆਧੁਨਿਕ ਯੁੱਗ ਵਿੱਚ ਵੀ ਮਹਿਲਾ ਸਸ਼ਕਤੀਕਰਨ ਦੀਆਂ ਲਹਿਰਾਂ ਨਾ ਚਲਾਉਣੀਆਂ ਪੈ ਰਹੀਆਂ ਹੁੰਦੀਆਂ, ਬੇਟੀ ਬਚਾਓ ਦੇ ਫਰਮਾਣ ਜਾਰੀ ਕਰਨ ਦੀ ਲੋੜ ਨਾ ਭਾਸਦੀ। ਸੰਸਦ ਵਿੱਚ ਔਰਤਾਂ ਦੇ

ਹੱਕਾਂ ਲਈ ਬਿੱਲ ਪਾਸ ਕਰਨ ਦੀ ਵੀ ਕੋਈ ਜਰੂਰਤ ਨਾ ਮਹਿਸੂਸ ਹੁੰਦੀ। ਅੱਜ ਲੋੜ ਹੈ ਗੁਰਬਾਣੀ ਨੂੰ ਅਮਲ ਵਿੱਚ ਲਿਆਉਣ ਦੀ, ਜੋ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਨਵੀਂ ਦ੍ਰਿਸ਼ਟੀ ਬਖਸ਼ਦੀ ਹੈ। ਆਤਮਿਕ ਸੋਝੀ ਕਰਵਾਉਂਦੀ ਹੈ। ਜਿਸ ਨਾਲ ਮਨ, ਸਰੀਰ ਅਤੇ ਆਤਮਾ ਵਿੱਚ ਸੰਤੁਲਨ ਸਥਾਪਤ ਹੁੰਦਾ ਹੈ।

ਗੁਰਬਾਣੀ ਭੇਖਵਾਦੀ, ਆਡੰਬਰ ਰਚਾਉਣ ਵਾਲੇ, ਧੂਣੀਆਂ ਰਮਾਉਣ ਵਾਲੇ ਭਾਂਝਵਾਦੀ ਸਾਧਾਂ ਦਾ ਵੀ ਖੰਡਨ ਕਰਦਿਆਂ ਮਾਨਵ ਨੂੰ ਸੇਧ ਦੇਂਦੀ ਹੈ ਕਿ :--

"ਜਤੀ ਸਦਾਵਹਿ ਜੁਗਤਿ ਨ ਜਾਣਹਿ ਛਡਿ ਬਹਿਹੁ ਘਰ ਬਾਰੁ"[8]

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਮਾਨਵ ਨੂੰ ਗ੍ਰਹਿਸਤ ਜੀਵਨ ਨੂੰ ਅਪਣਾ ਕੇ ਆਪਣੇ ਚੁਗਿਰਦੇ ਦੀ ਉਸਾਰੀ ਦੀ ਜ਼ਿੰਮੇਵਾਰੀ ਨਿਭਾਉਂਦਿਆਂ ਹੋਇਆਂ 'ਅੰਜਨ ਮਾਹਿ ਨਿਰੰਜਨ ਰਹੀਏ' ਦਾ ਸੰਦੇਸ਼ ਪ੍ਰਵਾਹਿਤ ਕੀਤਾ। ਹਨੇਰੀਆਂ ਰਾਤਾਂ ਵਿੱਚ ਸੱਪਾਂ ਦੀਆਂ ਸਿਰੀਆਂ ਮਿਧਣ ਵਾਲੇ, ਪੋਹ-ਮਾਘ ਦੀਆਂ ਠੰਢੀਆਂ ਰਾਤਾਂ ਵਿੱਚ ਪਾਣੀ ਲਾਉਣ ਵਾਲੇ, ਕਿਰਤੀ ਲੋਕਾਂ ਲਈ ਕਰਮ ਹੀ ਭਗਤੀ ਹੈ। ਅੰਨ ਉਪਜਾਉਣਾ ਵੀ ਸੱਚੀ ਸਮਾਜ ਸੇਵਾ ਹੈ। ਇਸ ਤੋਂ ਹੀ 'ਉੱਤਮ ਖੇਤੀ' ਦਾ ਸੰਕਲਪ ਹੋਂਦ ਵਿੱਚ ਆਇਆ। ਕਿਰਤ ਅਤੇ ਕਿਰਤੀ ਦਾ ਸਤਿਕਾਰ ਕਾਇਮ ਹੋਇਆ ਹੈ। ਇਹ ਹੀ ਸਭ ਤੋਂ ਵੱਡਾ 'ਜੋਗ' ਹੈ, ਭਗਤੀ ਹੈ, ਤਪੱਸਿਆ ਹੈ। ਗੁਰਬਾਣੀ ਅਨੁਸਾਰ:-- **"ਹਸੰਦਿਆਂ ਖਿਲੰਦਿਆ ਖਾਵੰਦਿਆ ਪਹਿਨੰਦਿਆ ਵਿੱਚੇ ਹੋਵੈ ਮੁਕਤਿ"**[9]

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦੁਆਰਾ ਆਪਣੇ ਜੀਵਨ ਕਾਲ ਦੇ ਅੰਤਲੇ ਲਗਪਗ ਅਠਾਰਾਂ ਸਾਲ ਕਰਤਾਰਪੁਰ ਸਾਹਿਬ ਵਿਖੇ ਹੀ ਬਿਤਾਏ ਗਏ। ਇਥੋਂ ਹੀ ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਆਪਣੇ ਮੌਲਿਕ ਫਲਸਫੇ 'ਕਿਰਤ ਕਰੋ ਨਾਮ ਜਪੋ ਵੰਡ ਛਕੋ' ਨੂੰ ਦੁਨੀਆਂ ਵਿੱਚ ਪ੍ਰਚਾਰਿਆ। ਮਾਨਵਤਾ ਨੂੰ ਦਸਾਂ ਨਹੁੰਆਂ ਦੀ ਸੱਚੀ ਸੁੱਚੀ ਕਿਰਤ ਕਮਾਈ ਕਰਨ ਅਤੇ ਵੰਡ ਛਕਣ ਦਾ ਉਪਦੇਸ਼ ਦੇਂਦਿਆਂ ਹੋਇਆਂ ਫੁਰਮਾਇਆ :--

"ਘਾਲਿ ਖਾਇ ਕਿਛੁ ਹਥਹੁ ਦੇਇ ॥
ਨਾਨਕ ਰਾਹੁ ਪਛਾਣਹਿ ਸੇਇ" ॥[10]

"ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਧਾਰਮਿਕ ਚਿੰਨ੍ਹਾਂ, ਭੇਖ ਅਤੇ ਦਿਖਾਵੇ ਦੀ ਵਿਰੋਧਤਾ ਕੇਵਲ ਵਿਰੋਧਤਾ ਕਰਕੇ ਹੀ ਨਹੀਂ ਕੀਤੀ, ਸਗੋਂ ਮਨੁੱਖਤਾ ਨੂੰ, ਸਮਾਜ ਨੂੰ ਇਨ੍ਹਾਂ ਚੀਜ਼ਾਂ ਦੇ ਅਰਥ ਸਮਝਾਏ। ਭੇਖ ਨੂੰ ਤਿਆਗ ਕੇ ਅਸਲ ਨੂੰ ਸਮਝਣ ਦਾ ਉਪਦੇਸ਼ ਦਿੱਤਾ।"[11] ਇਸ ਦਾ ਵੱਡਾ ਕਾਰਨ ਸੀ ਓਸ ਵੇਲੇ ਦੇ ਦੋਵਾਂ ਪ੍ਰਮੁਖ ਧਰਮਾਂ 'ਹਿੰਦੂ ਅਤੇ ਇਸਲਾਮ' ਵਿੱਚ ਆਈ ਗਿਰਾਵਟ। ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਦੀ ਸਾਰਥਕਤਾ ਇਸ ਤੱਥ ਵਿੱਚ ਵੀ ਹੈ ਕਿ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੀ ਸਮੁੱਚੀ ਬਾਣੀ ਨਿੱਜੀ ਤਜਰਬਿਆਂ ਤੇ ਜਜ਼ਬਿਆਂ ਦਾ ਖਜ਼ਾਨਾ ਹੈ। ਜੋ ਵਿਰੋਧੀਆਂ ਨੂੰ ਵੀ ਕਾਇਲ ਕਰਕੇ ਆਪਣੇ ਮੁਰੀਦ ਬਣਾ ਲੈਣ ਦੇ ਸਮਰੱਥ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦਾ ਮੱਝਾ ਚਰਾਉਣਾ, ਹੱਲ ਵਾਹੁਣਾ, ਮੋਦੀਖਾਨਾ ਚਲਾਉਣਾ, ਮਲਕ ਭਾਗੋ ਦੀ ਥਾਵੇਂ ਭਾਈ ਲਾਲੋ ਦੀ ਦਸਾਂ ਨਹੁੰਆਂ ਦੀ ਕਿਰਤ ਕਮਾਈ ਦਾ ਸਤਿਕਾਰ ਕਰਨਾ ਆਦਿ ਅਜਿਹੀਆਂ ਮਿਸਾਲਾਂ ਹਨ ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਰਾਹੀਂ ਕਿਰਤ, ਕਰਮ ਦੇ ਸੁਮੇਲ ਰਾਹੀਂ ਵਿਹਲੜਾਂ ਲਈ ਹੱਥੀਂ ਕਿਰਤ ਕਰਨ ਦਾ ਪ੍ਰਵਚਨ ਉਚਾਰਿਆ ਗਿਆ ਹੈ:--

"ਅਮਲੁ ਕਰਿ ਧਰਤੀ ਬੀਜੁ ਸ਼ਬਦੋ ਕਰਿ ਸਚ ਕੀ ਆਬ ਨਿਤ ਦੇਹਿ ਪਾਣੀ॥
ਹੋਇ ਕਿਰਸਾਨੁ ਈਮਾਨ ਜੰਮਾਇ ਲੈ ਭਿਸਤੁ ਦੋਜਖੁ ਮੂੜੇ ਇਵ ਜਾਣੀ॥
ਮਤੁ ਜਾਣ ਸਹਿ ਗਲੀ ਪਾਇਆ॥"[12]

ਪ੍ਰਸਿੱਧ ਵਿਦਵਾਨ ਵਿਸ਼ਵਨਾਥ ਤਿਵਾੜੀ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦੇ ਕਰਾਂਤੀਕਾਰੀ ਸਰੂਪ ਨੂੰ ਸਵੀਕਾਰਦਾ ਹੋਇਆ ਲਿਖਦਾ ਹੈ ਕਿ," ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦਾ ਸ਼ੂਦਰ ਦੇ ਘਰ ਰਹਿਣਾ, ਉਸਦੀ ਬਣਾਈ ਹੋਈ ਰੋਟੀ ਨੂੰ ਅਮੀਰ ਦੀ ਰੋਟੀ ਤੋਂ ਪਵਿੱਤਰ ਮੰਨਣਾ, ਕਿੰਨੀ ਵੱਡੀ ਕਰਾਂਤੀ ਦੀ ਗੱਲ ਹੈ ਤੇ ਅਜਿਹਾ ਕਰਨ ਲਈ ਕਿੰਨਾ ਵਿਸ਼ਵਾਸ ਚਾਹੀਦਾ ਹੈ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਕਿੰਨਾ ਖਤਰਾ ਮੁੱਲ ਲਿਆ, ਦਲੇਰੀ ਵਿਖਾਈ ਅਤੇ ਜਾਤ-ਪਾਤ ਦੇ ਬੰਧਨ ਤੋਂ ਉੱਪਰ ਉੱਠ ਕੇ ਇਨਸਾਨ ਨੂੰ ਕੇਵਲ ਇਨਸਾਨ ਮੰਨਿਆ।"[13]

ਅਸਲ ਅਰਥਾਂ ਵਿੱਚ ਕਿਹਾ ਜਾਵੇ ਤਾਂ ਗੁਰਬਾਣੀ ਸੱਚ ਨੂੰ ਚਇਲਬਰਓਟਣ ਕਰਨ ਦਾ ਮਾਰਗ ਦਰਸਾਉਂਦੀ ਹੈ, ਜੀਵਨ ਵਿੱਚ ਖੇੜਾ ਬਖਸ਼ਦੀ ਹੈ। ਖੇੜੇ ਦੀ ਅਵਸਥਾ ਵਿੱਚ ਪੁੱਜਿਆ ਮਨੁੱਖ ਤਨਾਅ ਮੁਕਤ ਹੋ ਜਾਂਦਾ ਹੈ ਅਤੇ ਤਨਾਅ ਮੁਕਤ ਵਿਅਕਤੀ ਸੰਕੀਰਣਤਾ ਸੰਪਰਦਾਇਕਤਾ ਤੋਂ ਮੁਕਤ ਹੋ ਕੇ, ਆਤਮ ਸੰਜਮ ਦਾ ਸਲੀਕਾ ਧਾਰਨ ਕਰਨ ਦੇ ਸਮਰੱਥ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਅਨੇਕਾਂ ਵਿਆਧੀਆਂ ਤੋਂ ਨਵਿਰਤੀ ਪ੍ਰਾਪਤ ਕਰ ਲੈਂਦਾ ਹੈ ਜਿਸ ਦੇ ਬਾਰੇ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਨੇ 'ਆਸਾ ਕੀ ਵਾਰ' ਵਿੱਚ ਸਪਸ਼ਟ ਕੀਤਾ ਹੈ:-

"ਨਾਨਕ ਫਿਕੈ ਬੋਲੀਐ ਤਨੁ ਮਨੁ ਫਿਕਾ ਹੋਇ"[14]
"ਬਹੁਤਾ ਬੋਲਣ ਝਖਣਿ ਹੋਇ"[15]
"ਮੂਰਖਾਂ ਨਾਲ ਨਾ ਲੂਝੀਐ"[16]
"ਮਨੁ ਕਾ ਸੂਤਕ ਲੋਭੁ ਹੈ ਜਿਹਵਾ ਸੂਤਕ ਕੂੜੁ"[17]

ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਦਾ ਉਦੈ ਉਸ ਵੇਲੇ ਦੇ ਧਰਮ ਚਿੰਤਨ ਦੇ ਵਿਰੋਧ ਵਿੱਚ ਹੋਇਆ, ਜਿਸਨੇ ਧਰਮ ਨੂੰ ਸੰਸਥਾਗਤ ਰੂਪ ਦੇ ਦਿੱਤਾ ਸੀ। "ਸਾਰੇ ਧਰਮ ਗ੍ਰੰਥਾ ਨੂੰ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ ਵਿੱਚ ਸਤਿਕਾਰ ਦਿੱਤਾ ਗਿਆ ਹੈ ਪਰ ਕਿਸੇ ਦੀ ਇਕ ਵੀ ਕੱਟੜਤਾ ਨੂੰ ਨਹੀਂ ਅਪਣਾਇਆ ਗਿਆ। ਸੂਫੀਆਂ ਦਾ ਸੋਮਾ ਕੇਵਲ ਕੁਰਾਨ ਹੈ, ਪਰ ਸਿੱਖ ਸਿਧਾਂਤ ਦਾ ਸੋਮਾ ਸਾਰੇ ਭਾਰਤੀ ਅਭਾਰਤੀ ਮੱਤ ਹਨ।"[18]

"ਕਾਜੀ ਕੂੜੁ ਬੋਲਿ ਮਲੁ ਖਾਇ
ਬ੍ਰਾਹਮਣੁ ਨਾਵੈ ਜੀਆ ਘਾਇ
ਜੋਗੀ ਜੁਗਤਿ ਨ ਜਾਣੈ ਅੰਧਿ
ਤੀਨੇ ਉਜਾੜੇ ਕਾ ਬੰਧਿ"[19]

ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬਾਨ ਨੇ ਤਾ-ਉਮਰ ਪੁਰਾਤਨ ਪੰਥੀ ਵਿਚਾਰਾਂ ਦਾ ਖੰਡਨ ਕੀਤਾ, ਧਾਰਮਿਕ ਠੇਕੇਦਾਰਾਂ ਦੁਆਰਾ ਪ੍ਰਚਾਰਿਤ ਪੂਜਾ ਪੱਧਤੀ ਦਾ ਵਿਰੋਧ ਕੀਤਾ। ਗੁਰਬਾਣੀ ਅਨੁਸਾਰ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਕਿਸੇ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ ਪ੍ਰਕਾਰ ਦਾ ਪਰਪੰਚ ਰਚਾਉਣ ਦੀ ਲੋੜ ਨਹੀਂ, ਨਾ ਹੀਂ ਧਾਰਮਿਕ ਆਡੰਬਰ ਲੋੜੀਂਦੇ ਹਨ, ਪਰ ਹੈਰਾਨੀ ਦੀ ਗੱਲ ਤਾਂ ਇਹ ਹੈ ਕਿ ਅੱਜ ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬਾਨ ਦੇ ਸਰੂਪਾਂ ਅੱਗੇ ਧੂਣੀਆਂ ਧੁਖਾ ਕੇ ਆਰਤੀ ਉਤਾਰੀ ਜਾਂਦੀ ਹੈ। ਜਿਸ ਆਰਤੀ ਬਾਰੇ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਪੁਜਾਰੀਆਂ ਨੂੰ ਮਾਧਿਅਮ ਬਣਾ ਕੇ ਮਾਨਵਤਾ ਨੂੰ ਸੰਬੋਧਨ ਕਰਦਿਆਂ ਫ਼ੁਰਮਾਇਆ ਕਿ ਕਿਸੇ ਤਰ੍ਹਾਂ ਦੀ ਆਰਤੀ ਦੀ ਲੋੜ ਨਹੀਂ ਕਿਉਂਕਿ ਸਮੁੱਚੀ ਕਾਇਨਾਤ/ਕੁਦਰਤ ਹੀ ਸਿਜਦੇ ਦੀ ਅਵਸਥਾ ਵਿੱਚ ਹੈ।ਜਿਵੇਂ:--

"ਗਗਨ ਮੈਂ ਥਾਲੁ ਰਵਿ ਚੰਦੁ
ਦੀਪਕ ਬਣੇ ਤਾਰਿਕਾ ਮੰਡਲ ਜਨਕ ਮੋਤੀ॥
ਧੂਪ ਮਲਆਨਲੋ ਪਵਣੁ ਚਵਰੋ
ਕਰੇ ਸਗਲ ਬਨਰਾਇ ਫੂਲੰਤ ਜੋਤੀ॥
ਕੈਸੀ ਆਰਤੀ ਹੋਇ ਭਵ ਖੰਡਨਾ ਤੇਰੀ ਆਰਤੀ॥
ਅਨਹਤਾ ਸਬਦ ਵਾਜੰਤ ਭੇਰੀ॥"[20]

ਬਾਣੀਕਾਰਾਂ ਲੋਕ ਮੁਹਾਵਰੇ ਵਾਲੇ ਸਗਲ ਜਮਾਤੀ ਚਰਿੱਤਰ ਨੂੰ ਉਭਾਰਿਆ, ਜਿਸ ਸਦਕਾ ਧਰਮ ਚਿੰਤਨ ਵਿੱਚ ਕਰਾਂਤੀ/ਤਬਦੀਲੀ ਆਉਣੀ ਸੁਭਾਵਿਕ ਸੀ। ਅਜਿਹੇ ਆਦਰਸ਼ ਮਨੁੱਖ ਦਾ ਸੰਕਲਪ ਉਭਰਿਆ ਜੋ ਧਾਰਮਿਕ ਖਿਆਲਾਂ ਦਾ ਹੀ ਨਹੀਂ ਸਗੋਂ ਨੈਤਿਕ ਕਦਰਾਂ ਕੀਮਤਾਂ ਦਾ ਵੀ ਧਾਰਨੀ ਹੈ। ਨਾ ਕਿਸੇ ਨੂੰ ਡਰਾਉਂਦਾ ਹੈ ਨਾ ਕਿਸੇ ਤੋਂ ਭੈਅ ਖਾਂਦਾ ਹੈ। ਸੱਚ, ਸੁੱਚ ਨਾਲ ਜੁੜਿਆ ਰਹਿੰਦਾ ਹੈ।:--

"ਬੋਲੀਐ ਸਚੁ ਧਰਮੁ ਝੂਠ ਨ ਬੋਲੀਐ"[21]
"ਭੈਅ ਕਾਹੂ ਕੋ ਦੇਤਿ ਨਾਹਿ ਨਹਿ ਭੈਅ ਮਾਨਤ ਆਨਿ"[22]

ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਗੁਰਬਾਣੀ ਨੈਤਿਕ ਅਗਵਾਈ ਦਾ ਪ੍ਰਮਾਣਿਕ ਸੋਮਾ ਹੈ ਜੋ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਆਚਰਣਕ ਬੁਲੰਦੀਆਂ ਵੱਲ ਤੋਰਦੀ ਹੈ।

ਨਿਮਰਤਾ, ਦਇਆ, ਮਿੱਠਾਸ ਅਤੇ ਪਰਉਪਕਾਰ ਆਦਿ ਗੁਣ ਅਜਿਹੇ ਮਨੁੱਖ ਦੇ ਸੁਭਾਅ ਦਾ ਅੰਗ ਬਣ ਜਾਂਦੇ ਹਨ।

"ਸਚਹੁ ਉਰੈ ਸਭੁ ਕੋ ਉਪਰਿ ਸਚੁ ਆਚਾਰੁ"[23]

"ਮਿਠਤੁ ਨੀਵੀਂ ਨਾਨਕਾ ਗੁਣ ਚੰਗਿਆਈਆ ਤਤੁ"[24]

"ਦਇਆ ਕਪਾਹੁ ਸੰਤੋਖ ਸੂਤੁ ਜਤੁ ਗੰਢੀ ਸਤੁ ਵਟੁ"[25]

"ਸਾਧੋ ਮਨ ਕਾ ਮਾਨੁ ਤਿਆਗਉ॥
ਕਾਮ ਕ੍ਰੋਧ ਸੰਗਤਿ ਦੁਰਜਨ ਕੀ ਤਾ ਤੇ ਅਹਿਨਿਸ ਭਾਗਉ॥"[26]

ਗੁਰਬਾਣੀ ਵਿੱਚ ਜਿਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਜਾਤ ਪਾਤ ਦਾ ਖੰਡਨ ਕਰਦਿਆਂ ਮਾਨਵ ਨੂੰ ਸੇਧ ਦਿੱਤੀ ਗਈ ਹੈ ਬੇਮਿਸਾਲ ਹੈ:--

"ਹਿੰਦੂ ਅੰਨ੍ਹਾ ਤੁਰਕ ਕਾਣਾ ਦੋਹਾਂ ਤੇ ਗਿਆਨੀ ਸਿਆਣਾ"[27]

ਗਿਆਨੀ ਪੁਰਖ ਦਾ ਕੋਈ ਜਾਤ,ਧਰਮ,ਵਰਣ ਜਾਂ ਨਸਲ ਨਹੀਂ।ਮਾਨਵਤਾ ਹੀ ਉਸਦਾ ਧਰਮ ਹੋ ਨਿਬੜਦਾ ਹੈ। ਉਸ ਦੇ ਵਿਸ਼ਵਾਸ ਦਾ ਆਧਾਰ ਅੰਧ ਵਿਸ਼ਵਾਸ ਨਹੀਂ ਬੁੱਧੀ ਅਤੇ ਵਿਵੇਕ ਬਣ ਜਾਂਦਾ ਹੈ:--

"ਕੋਈ ਬੋਲੈ ਰਾਮ ਰਾਮ ਕੋਈ ਖੁਦਾਇ
ਕੋਈ ਸਵੈ ਗੁਸਾਈਆਂ ਕੋਈ ਅਲਾਹਿ"[28]

"ਜਾਤ ਜਨਮੁ ਨ ਸੂਝੀਐ"[29]

ਭਾਵ ਗੁਰਬਾਣੀ ਵਿਚਾਰ ਨੂੰ ਮਹੱਤਤਾ ਦੇਂਦੀ ਹੈ। ਉੱਚਾ ਉਹ ਨਹੀਂ ਜੋ ਉੱਚੀ ਕੁੱਲ ਵਿੱਚ ਪੈਦਾ ਹੋਇਆ ਹੈ। ਉੱਚਾ ਉਹ ਹੈ, ਜਿਸਦੀ ਵਿਚਾਰ ਸ਼ਕਤੀ ਉੱਚੀ ਹੈ। ਦ੍ਰਿਸ਼ਟੀਕੋਣ ਜਨ ਕਲਿਆਣਕਾਰੀ ਹੈ। ਉੱਚੀ ਬਿਰਤੀ ਵਾਲੇ ਮਨੁੱਖ, ਸੱਚੇ ਆਚਰਣ ਸਦਕਾ ਉੱਤਮ ਪਦਵੀ ਗ੍ਰਹਿਣ ਕਰ ਜਾਂਦੇ ਹਨ ਜਿਵੇਂ:-

"ਨੀਚਿਹੁ ਊਚ ਕਰੈ ਮੇਰਾ ਗੋਬਿੰਦੁ"[30]

"ਵਿਚਿ ਦੁਨੀਆ ਸੇਵਾ ਕਮਾਈਐ
ਤਾ ਦਰਗਹ ਬੈਸਣੁ ਪਾਈਐ"[31]

ਗੁਰਬਾਣੀ ਗਿਆਨ ਦਾ ਅਜਿਹਾ ਸਾਗਰ ਹੈ, ਜਿਸ ਵਿਚ ਕਿਹਾ ਥੋੜ੍ਹਾ ਅਤੇ ਸਮਝਾਇਆ ਬਹੁਤਾ ਗਿਆ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ ਦਾ ਸਾਰ 'ਜਪੁਜੀ' ਵਿੱਚ, ਜਪੁਜੀ ਸਾਹਿਬ ਦਾ ਸਾਰ 'ਮੂਲ ਮੰਤਰ' ਅਤੇ ਮੂਲ ਮੰਤਰ ਦਾ ਸਾਰ 'ਇਕ ਓਂਕਾਰ' ਵਿੱਚ ਨਿਹਿਤ ਹੈ।ਵਿਨੋਬਾ ਭਾਵੇ 'ਜਪੁਜੀ' ਨੂੰ ਪੰਜਵਾਂ ਵੇਦ ਮੰਨਦੇ ਹੋਏ ਲਿਖਦੇ ਹਨ ਕਿ, "ਜਿਵੇਂ 'ਇਸ਼ਾਵਾਸਿਆ ਉਪਨਿਸ਼ਦ' ਵਿੱਚ 18 ਮੰਤਰਾਂ ਰਾਹੀਂ ਸਾਰੇ ਵੈਦਿਕ ਧਰਮ ਦਾ ਸਾਰ ਦਿੱਤਾ ਹੈ, ਤਿਵੇਂ ਹੀ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ 'ਜਪੁਜੀ' ਵਿਚ ਕਾਫੀ ਵਿਆਪਕ ਦ੍ਰਿਸ਼ਟੀ ਤੋਂ ਆਪਣੇ ਧਾਰਮਿਕ, ਦਾਰਸ਼ਨਿਕ ਅਤੇ ਸਦਾਚਾਰਕ ਵਿਚਾਰਾਂ ਦਾ ਸਾਰ ਦਿੱਤਾ ਹੋਇਆ ਹੈ।"[32]

ਸਮੁੱਚੇ ਰੂਪ ਵਿੱਚ ਕਿਹਾ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ ਕਿ ਗੁਰਬਾਣੀ ਵਿੱਚ ਵਿਚਾਰਾਂ ਦੀ ਸੂਖ਼ਮਤਾ ਅਤੇ ਗੰਭੀਰਤਾ ਇਸ ਹੱਦ ਤੱਕ ਹੈ ਕਿ ਥਾਹ ਪਾਉਣੀ ਮੁਸ਼ਕਿਲ ਹੈ। ਇਹ ਇਕ ਅਜਿਹੀ ਸਰਵੋਤਮ ਕਿਰਤ ਹੈ, ਜਿਸ ਵਿਚਲੇ ਜੀਵਨ ਮੁੱਲ ਅਤੇ ਜੀਵਨ ਦਰਸ਼ਨ ਦੇ ਝਲਕਾਰੇ ਸਮੁੱਚੀ ਮਾਨਵਤਾ ਲਈ ਚਾਨਣ ਮੁਨਾਰਾ ਬਣ ਕੇ ਜੁਗਾਂ ਜੁਗਾਂ ਤੀਕ ਅਗਵਾਈ ਦੇਣ ਦੇ ਸਮਰੱਥ ਹਨ।

ਹਵਾਲੇ ਅਤੇ ਟਿੱਪਣੀਆਂ

1. ਸ਼੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ, ਸਫਾ 722
2. ਉਹੀ, ਸਫਾ 360
3. ਡਾ. ਜਗਬੀਰ ਸਿੰਘ, ਪੰਜਾਬੀ ਸਾਹਿਤ ਦੀ ਭੂਮਿਕਾ, ਪੰਨਾ 61
4. ਸ਼੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ, ਸਫਾ 360
5. ਉਹੀ, ਸਫਾ 468
6. ਉਹੀ, ਸਫਾ 468
7. ਉਹੀ, ਸਫਾ 473
8. ਉਹੀ, ਸਫਾ 468
9. ਉਹੀ, ਸਫਾ 422
10. ਉਹੀ,ਸਫਾ 1245
11. ਵਿਸ਼ਵਨਾਥ ਤਿਵਾੜੀ, ਕਰਾਂਤੀਕਾਰੀ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ, ਪੰਜਾਬ ਯੂਨੀਵਰਸਿਟੀ, ਚੰਡੀਗੜ੍ਹ,1968,ਪੰਨਾ 61
12. ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ, ਸਫਾ 24
13. ਵਿਸ਼ਵਨਾਥ ਤਿਵਾੜੀ,ਕਰਾਂਤੀਕਾਰੀ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ, ਪੰਜਾਬ ਯੂਨੀਵਰਸਿਟੀ, ਚੰਡੀਗੜ੍ਹ,1968,ਪੰਨਾ 66
14. ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ,ਸਫਾ 473
15. ਉਹੀ, ਸਫਾ 661
16. ਉਹੀ, ਸਫਾ 473
17. ਉਹੀ, ਸਫਾ 472
18. ਡਾ.ਜਗਬੀਰ ਸਿੰਘ, ਪੰਜਾਬੀ ਸਾਹਿਤ ਦੀ ਭੂਮਿਕਾ, ਸਫਾ 34
19. ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ, ਸਫਾ 662
20. ਉਹੀ, ਸਫਾ 663
21. ਉਹੀ, ਸਫਾ 488
22. ਉਹੀ, ਸਫਾ 1427
23. ਉਹੀ, ਸਫਾ 61
24. ਉਹੀ, ਸਫਾ 470
25. ਉਹੀ, ਸਫਾ 471
26. ਉਹੀ, ਸਫਾ 219
27. ਉਹੀ, ਸਫਾ 874
28. ਉਹੀ ,ਸਫਾ 885
29. ਉਹੀ, ਸਫਾ 1380
30. ਉਹੀ, ਸਫਾ 1106
31. ਉਹੀ,ਸਫਾ 598
32. ਖੋਜ ਪਤਰਿਕਾ/15 ਅੰਕ-ਮਾਰਚ 1980, ਪੰਨਾ 51, ਪੰਜਾਬੀ ਯੂਨੀਵਰਸਿਟੀ ਪਟਿਆਲਾ।

भारतीय संस्कृति और गुरुनानक देव

*डॉ. संगीता गुप्ता

* हिन्दी विभाग, जानकी देवी मैमोरियल कॉलेज,, दिल्ली विश्वविद्यालय

गुरू नानक देव जी एक महान क्रान्तिकारी, समाज सुधारक और राष्ट्रवादी गुरू थे। गुरू नानक देव जी (प्रथम नानक, सिख धर्म के संस्थापक) का जन्म कार्तिक पूर्णिमा को सम्वत १५२६ (अंग्रेजी वर्ष १४६६) को राय–भोए–दी तलवण्डी वर्तमान में शेखुपुरा (पाकिस्तान) ननकाना साहिब के नाम से प्रसिद्ध स्थान पर हुआ था। गुरू नानक साहिब जी का जन्मदिन प्रतिवर्ष १५वीं कार्तिक पूर्णिमा यानि कार्तिक माह के पूर्णिमा के दिन मनाया जाता है। गुरू नानक जी के पिता मेहता कल्याण दास जी, जो कि मुख्यतः मेहता कालू के नाम से भी जाने जाते थे, राय भुलार के यहां एक मुख्य लेखाकार के रूप में कार्य करते थे। गुरू नानक जी की माता तृप्ता एक बहुत ही साधारण एवं धार्मिक विचारों वाली औरत थी। गुरू नानक देव जी की बड़ी बहन, नानकी जी थी, जो अपने छोटे भाई यानि गुरू नानक देव जी को बहुत प्यार करती थी।

गुरू नानक देव जी एक अद्भूत एवं विलक्षण बाल थे। भगवान ने उन्हें एक गहन सोच वाले मस्तिष्क एवं तार्किक सोच से नवाजा था। ७ वर्ष की आयु में उन्होंने हिन्दी एवं संस्कृत भाषा सीखी। उन्होने दैवीय चीजों के प्रति अपनी अलौकिक एवं अद्भुत ज्ञान से अपने शिक्षक को आश्चर्यचकित कर दिया था। १३ वर्ष की आयु में वे फारसी एवं संस्कृत भाषा के ज्ञाता हो गए थे। १६ वर्ष की आयु में वह पूरे क्षेत्रा में तेजस्वी विद्वान के रूप में समाज के सामने आए। उनका विवाह माता सुलखणी जी से हुआ, जिनके दो पुत्रा– श्रीचन्द एवं लखमी चन्द थे।

पंजाब में विभिन्न स्थानों का प्रवास करने के पश्चात उन्होंने देश और विश्व के भिन्न–भिन्न धार्मिक स्थानों के प्रवास करने का निर्णय किया। ये प्रवास गुरू नानक देव जी की चार उदासी के रूप में जानी जाती है। इस दौरान गुरू नानक साहिब ने विभिन्न धार्मिक स्थलों का प्रवास इस दौरान गुरू नानक साहिब ने विभिन्न धार्मिक स्थलों का प्रवास किया एवं सिखी के उपदेश दिये। उन्होने कुरूक्षेत्र, हरिद्वार, जोशीमठ, रीठा साहिब, गोरखमत्ता (नानक मत्ता), अयोध्या, प्रयाग, वाराणसी, गया, पटना एवं असम में गुवाहटी, ढाका, पुरी, कटक, रामेश्वरम, सीलोन, बिदर, भरूच, सोमनाथ, द्वारका, जूनागढ, उज्जैन, अजमेर, मथूरा, पाकपट्टन, तलवण्डी, लाहौर, सुल्तानपुर, बिलासपुर, रावलसर, ज्वालाजी, स्पीटी घाटी, तिब्बत, लद्दाख, कारगिल, अमरनाथ, श्रीनगर एवं बारामुल्लाह का प्रवास भी किया।

गुरू नानक साहिब जी ने मुस्लिम धार्मिक स्थलों के भी दर्शन किये। इस परिपेक्ष में वे मक्का, मदीना, बगदाद, मुल्तान, पेशावर सख्खर, हिंगलाज आदि भी गये। कई ऐतिहासिक दस्तावेज कहते हैं कि वे मक्का समुद्री रासते से गये। गुरू साहिब ने ईराक सम्पूर्ण अरब प्रायद्वीप, तुर्की और तेहरान (वर्तमान में इरान की राजधानी) का भ्रमण भी किया। तेहरान से गुरू साहिब ने कारवां के रास्ते काबुल, कंधार एवं जलालाबाद का भी प्रवास किया।

प्रवास का मुख्य उद्देश्य लोगों में ईश्वर की सच्चाई और एक राष्ट्र केन्द्रित विचार के प्रति जागरूकता पैदा करना था। उन्होने सिख धर्म के विभिन्न उपदेश केन्द्रों की स्थापना की। सिख विचार का बीजारोपण निश्चित ही भारत में हुआ। लेकिन इसका प्रभाव वैश्विक है।

१५२० में बाबर ने भारत पर आक्रमण किया। भारत भू को रक्त से लाल किया गया। धार्मिक स्थल तोड़े गए। नगर के नगर उजाडे गए। मुगल सिपाहियों ने भारतीय जन पर अत्याचार किए। बाबर के सिपाहियों ने हजारों बेकसूर लोगों को मौत के घाट उतारा। एमनाबाद में महिलाओं पर अत्याचार हुए। विदेशी आक्रान्ता भारत की। धनसम्पदा के जबर मालिक हो गए। गुरू नानक जी ने बाबर के इन कृत्यों का विरोध बडे ही कड़े शब्दों में किया।

मध्ययुगीन सन्त परम्परा में गुरु नानकदेवजी का स्थान बहुत ऊँचा है। वह न केवल एक श्रेष्ठ भगवद्भक्त हैं बल्कि हिन्दू तत्त्वचिन्तन और समाज परम्परा के उत्कृष्ट व्याख्याता भी हैं। वह भारतीय संस्कृति की जीवन्त प्रतिमा हैं और पुरातन हिन्दू परम्परा की एक सशक्त कड़ी के रूप में हमारे सामने प्रकट होते हैं उन्होंने जटिल दार्शनिक चिन्तन को अत्यन्त सरल भाषा में प्रकट कर समाज को उसके अनुरूप ढलने की प्रेरणा दी है।

आत्मबोध का सरलतम पाठ

समाज को उनकी सबसे बड़ी देन यह है कि उन्होंने उसे आत्मशोध का रास्ता दिखाया है। यह आत्मशोध ही मनुष्य को आत्मबोध प्रदान करती है और इसी से उसको जीवन में निर्मल विवेक और स्वच्छ ज्ञान दृष्टि का समावेश होता है। नानक कहते हैं कि हमारा चंचल मन हमें स्थिर नहीं होने देता। यह हमें नाना प्रकार के कर्मों से प्रवृत्त करता हुआ हमारे आवागमन के चक्र को आगे बढ़ाता है। अब समस्या यह है कि जीवन में स्थिरता कैसे उत्पन्न हो, चित्तवृत्तियों में सामंजस्य कैसे लाया जाए और मन में शान्ति कैसे उत्पन्न हो। चर्पट योगी ने नानक का परिचय पाने हेतु जो यह पूछा था कि वह कहाँ स्थिर

होकर बैठते हैं, उसके उत्तर में उन्होंने कहा था कि अपने आसन पर स्थिर होकर बैठने वाला तो केवल एक नारायण ही है और यह नारायण घट–घट में वास करता है। इस नारायण को वही देख सकता है जो अपने सच्चे स्वरूप को पहचानता है।

आसणि बैसणी थिरुनाराइणु ऐसी गुरमति पाए।
गुरमुखी बुझै आपु पछाणै सचे सचि समाए।।
(सिद्धगोष्ठी, पौ. 3)

भुक्ति में मुक्ति का आदर्श

परन्तु आत्मबोध की सिद्धि के लिए घर से बाहर जंगलों बियाबाना की आवश्यकता नहीं। लौकिक जीवन का निर्वाह करते हुए भी हम सत्य का साक्षात्कार कर सकते हैं। गुरु नानकदेवजी ने सिद्धों से पूछा था कि वैराग्य साधना राम से ही सत्य की प्राप्ति होती है और स्वयं ही उत्तर में कहा था कि सत्य की प्राप्ति मोक्ष की सिद्धि तो वास्तव में सत्य का बोध कराने वाले 'शब्द' अथवा ज्ञान से ही हो सकती है

किआ भविऐ सचि सूचा होई।
साच सबद बिनु मुक्ति न होई।।

'शब्द' का बोध होता है गुरू के सानिध्य से और गुरु की प्राप्ति होती है अहं के नाश से। जब तक मनुष्य में अहं का विष बना है तब तक उसे आत्मबोध नहीं हो सकता है। अहं से उसमें अपनी पृथक सत्ता का अभिमान बना रहता है और उसे अद्वैतजन्य शान्ति नहीं मिलती। नानक कहते हैं कि गुरू द्वारा दिए गए शब्दबोध से अहं का विष मर जाता है और मनुष्य को अपने स्वरूप की पहचान होने लगती है–

गुरु कै सबदि हऊमै बिखु मारै।
ता निज घरि होवै वासो।।
(सिद्धगोष्ठी, पौ. 22)

आशा में निराशा उत्पन्न करने का उपदेश

इस शब्द–साधना के लिए वैराग्य धारण करने की आवश्यकता नहीं होती। 'गुरमुख' परिवार में रहता हुआ ही मुक्ति पा जाता है (गुरमुखि निबहै सपरिवार) वह जीवन के सब भोग भोगता हुआ भी उनमें लिप्त नहीं होता, कर्म करता हुआ भी नैष्कर्म्य सिद्धि प्राप्त कर लेता है। चर्पट योगी के एक प्रश्न के उत्तर में नानक कहते हैं कि जैसे कमल पानी में रहते हुए भी पानी और दलदल से निर्लिप्त रहता है और मुर्गावी जल में रहती हुई भी जल में भीगती नहीं है वैसे ही मनुष्य भी गृहस्थ का पालन करता हुआ माया से मुक्त रह सकता है तथा दुस्तर संसार–सागर से तर सकता है। शर्त यह है कि वह प्रभु को अपने मन में बसाए। प्रभु के भाव में लीन मनुष्य विषयों से विमुख रहते हैं अतः वे भीड़ में भी एकान्त सेवन करते हैं। वे आशाओं से भरपूर जीवन में रहते हुए भी आशाओं के रोग से मुक्त रहते हैं।

रहहिं इकांति एको मनि वसिआ आसा मांहि निरासो।
अगम अगोचर देखि दिखाए नानक ताका दासा।।
(सिद्धगोष्ठि, पौ. 1)

मत्स्येन्द्रनाथ नाम के किसी योगी को गुरुजी ने कहा है कि असली औधू (अवधूत) वह है जो आशा में रहता हुआ भी आशारहित रहता है। ऐसे योगी को ही प्रभु प्राप्ति होती है। वह अन्यत्र कहते हैं कि जब तक आशा का अन्देशा है तब तक एकात्मबोध नहीं हो सकता। जो आशा में रहता हुआ भी निराश रहता है उसे ही आत्मबोध होता है और वही संसार सागर तर सकता है

जब आसा अन्देसा तबही किऊ करि।
आसा भीतर रहै निरासा तऊ नानक एकू मिले।।

जिस व्यक्ति को आत्मबोध हो जाता है वह अपने अपने आपको शरीर नहीं आत्मा मानता है तथा काया को आत्मा–रूपी हंस का वास–स्थल, समझता है, वह हंस सरोवर में रहता हुआ भी सरोवर के पानी से अलग रहता है।

समत्व बुद्धियोग का आदर्ष

इस अवस्था को प्राप्त करने के लिए एक ऐसी मनोदशा की आवश्यकता होती है जिसे श्रीमद्भगवद्गीता में समत्वबुद्धियोग कहा गया है। भगवान श्री कृष्ण ने परामर्श दिया है कि हम अपनी आसक्तियों का परित्याग करके और सिद्धि तथा असिद्धि में समान बुद्धि वाला होकर कर्म करें।

योगस्थः कुरु कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा धनंजय।
सिद्ध्यसिद्धयो समोभूत्वा समत्वं योग उध्यते।।
(श्रीमद्भगवद्गीता 2–84)

इससे पाप और पुण्य का मैल धुल जाता है और निष्काम कर्म का मार्ग प्र"ास्त हो जाता है। गुरु नानकदेवजी की भी यही शिक्षा है। इस समत्वबुद्धियोग की सिद्धि वह प्रभु नाम के सहारे से मानते हैं।

सुख दुःख राम करि नाम अधारा।
(रामकली, म. 1)

वह अन्यत्र कहते हैं कि गुरुमुख के लिए घर और वन दोनों समान होते हैं। प्रभु की भावना में लीन होने के कारण उसे सर्वत्र उसी का प्रकाश दिखाई देता है–

गृह बनु समसरि सहजि सुभाइ।
दुरमति गतु भई किरति ठाइ।।
(आसा, म. 1)

नानक समझते हैं कि सुख और दुःख तो प्रभु द्वारा मनुष्य को दिए हुए दो वस्त्र हैं जो उसे पहनने ही पड़ते हैं। जो मनुष्य भले तथा बुरे दोनों को एक जैसा मानता है वही प्रभुभक्ति में आगे बढ़ सकता है–

बुरा भला जो समकरि जाणे इन विधि साहिबु रमतु रहै।
(आसा, म. 1)

मनुष्य को सर्वत्र प्रभु की इच्छा का दर्शन करना चाहिए। उसे खाने–पीने के लिए जो कुछ भी मिले सहर्ष ग्रहण करना चाहिए।

सच्चे व्यापार की इच्छा

ऐसे व्यक्ति में स्वार्थ नाम की कोई चीज नहीं रहती और वह जीवन में सच्चा व्यापार करता है। वह पहले तो गुरु द्वारा दिए गए सच्चे ज्ञान को ग्रहण करता है। इससे उसकी अविद्या की नींद टूटती और वह सचेत बनकर पहचानने लगता है। ज्ञान प्राप्त करके वह घर–बार और नगर से दूर वनों में रहने की जरूरत महसूस नहीं करता। जब उसे अपने स्वरूप की दुकान तथा घर का पता चल जाता है तो वह यहाँ सच्चा व्यापार ही करता है। परन्तु इसके लिए ज़रूरी है मन को 'नाम' में लगाना। 'नाम' की तृष्णा को मिटाता है। ऐसा जीवन जीने वाला व्यक्ति कम सोता है, कम खाता है और उसकी जीवनमयी लड़ी सात्विक बन जाती है।

शब्द साधना का महत्त्व

मनष्य की यह सात्त्विक जीवनचर्या जिन उपायों से सिद्ध होती है उनमें सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है 'शब्द' साधना। पुरातन हिन्दू धर्म परम्परा के अनुरूप ही नानक भी ज्ञान को आवागमन के नाश का सबसे बड़ा साधन मानते हैं।

सदाचार उत्पन्न करने का साधन भी वह 'शब्दबोध' को ही मानते हैं। 'शब्द' ही उनके मत में मनुष्य को माया की मरीचिका से छुड़ाता है और यह शब्द ही है जो उसके द्वैतभाव का नाश कर उसे एकात्मता का आनन्द प्राप्त कराता है। गुरु नानकदेवजी ने ज्ञान की गरिमा और महत्ता पर बड़ा प्रकाश डाला है। इस ज्ञान को उन्होंने 'शब्द' से परिभाषित किया है और इस शब्द की प्राप्ति के लिए गुरु के चरणों में आने का परामर्श दिया है। सिद्धों के एक प्रश्न के उत्तर में वह कहते हैं कि सच्चा गुरु ही मनुष्य को आत्मिक जन्म देता है और इस आत्मिक जन्म से ही उसका आवागमन मिटता है। सच्चा गुरु जो शब्द का दान देता है उससे हमारा मन प्रभु में लग जाता है और उससे हमारी प्रबुद्ध कामनाओं और सीमातिक्रमण करने वाली आशाओं का नाम हो जाता है।

सतिगुर कै जनमै गवनु मिटाइआ।
अनहति राते इहु मनु लाइआ।
मनसा आसा सबदि जलाई।।

(रामकली, म. 1)

नानक 'शब्द' पद का प्रयोग आध्यात्मिक चिन्तन और जिज्ञासा के लिए भी करते हैं। वह कहते हैं कि "शब्द' द्वारा ही मनुष्य प्रभु की गति को समझ सकता है। परन्तु 'शब्द' की प्राप्ति के लिए आचारशुद्धि और विवेक का होना बहुत जरूरी है। वह कहते हैं कि 'शब्द' को न जानने वाला वाणी और कुवाणी में भेद नहीं समझता, श्रेष्ठ और निकृष्ट का अन्तर नहीं जानता, प्रकाश और अन्धकार के बीच की दूरी नहीं जानता और धर्म तथा अधर्म की विभाजक रेखा को स्पष्ट रूप में नहीं देख पाता। अज्ञान तो सदा अनिष्टकारक ही होता हैय अज्ञानवश ही हम धर्म के वास्तविक को न पहचानते हुए इसकी औपचारिकताओं को ही इसका सर्वस्व मानने लगते है। अज्ञान भ्रान्तियों को जन्म देता है। इससे हम ठगे जाते हैं और हमें हानि–ही–हानि होती है।

प्रेमाभक्ति का उपदेश

यह शब्द–साधना, औपचारिक शास्त्र श्रवण अथवा शाब्दिक ज्ञान से नितान्त मित्र एक अनुभूतिमय बोध है और प्रभु नाम–स्मरण तथा भायमय भजन–कीर्तन से ही इस दि"ाा में प्रगति हो सकती है। गुरुजी ने अपनी वाणियों में प्रेमाभक्ति की उत्तमता का संकेत दिया है और कहा है कि किसी समय में भी यदि कोई व्यक्ति अपने आपको अत्यन्त नम्र और विनय"ील बनाकर भक्ति में लीन रहता है तो उसे मुक्ति मिल जाती है।

भाऊ भगति करि नीचु सदाए।
तऊ नानक मोखतरु पाए।।

(आसा, म. 1)

भक्तों ने विनयी बनकर प्रभु की तुलना में अपने आपको दीन–हीन, क्षीण, मलिन और अघी कहा है और उसकी महानता का बखान किया है। इससे उन्हें अपने अभावों को भरने का सुभीता हुआ है और प्रभु में उनकी लौ लगी है। गुरूजी ने प्रेमाभक्ति में लीन होकर गोपी भाव से प्रभु का सान्निध्य पाने की आशा करने वाले भक्तों का बड़ा सम्मान किया है। अपने एक पद में वे कहते हैं–'द्वापर में प्रभु कृष्ण के रूप में अवतरित हुए। वह यादव कुल में उत्पन्न हुए और उन्हें कान्ह, कृष्ण आदि नामों से पुकारा गया। इन्होंने वृन्दावन में लीलाएँ कीं।' अन्यत्र अद्वैत की अनुभूति और मोक्ष के परम सुख की प्राप्ति के सन्दर्भ में वह कहते हैं कि जीवात्मा रूपी वैध प्रभुप्रियतम से मिलने के लिए आतुर थी परन्तु माया रूपी साँस उसके मार्ग की सबसे बड़ी बाधा थी। अब उसने लाज के घूँघट को छोड़ दिया है और प्रिय मिलन को चल पड़ी है। सॉस पगली हो गई है और वह अब निःशंक होकर प्रियतम की डगर पर चल पड़ी है। प्रिय ने उसे बुलाया था। गुरु की शिक्षा पाकर वह प्रणयसिक्त हो उठी है और उसी के रंग में रंग गई है।

गुरु माहात्म्य

इस प्रेम मार्ग का पथिक बनने वाले को पहले गुरु की शरण में जाना पड़ता है अतः नानक वाणी में गुरु की महिमा का मुक्त कण्ठ से बखान किया गया है। नानक वैसे तो प्रभु परमेश्वर, पवित्र वाणी और सच्चे ज्ञान के लिए भी गुरु शब्द का प्रयोग करते हैं परन्तु उन्होंने शरीरधारी गुरु को भी कम महत्त्व नहीं दिया है। पुरातन परम्परा की कड़ियों को आगे बढ़ाते हुए नानक शास्त्रज्ञान तथा आत्मबोध से सम्पन्न गुरु को विद्या का सर्वस्व कहते हैं। ऐसे गुरु के चरणचिह्नों पर चलते हुए आत्मलाभ और लोक कल्याण की ओर उन्मुख रहने वाले व्यक्ति को वह आदरपूर्वक 'गुरुमुख' कहते हैं और उसका मुक्त कण्ठ से गुणानुकीर्तन करते हैं। इस गुरुमुख को उन्होंने मानव समाज का आदर्श माना है और उसका अनुकरण करने का उपदेश दिया है।

सन्तों का स्तुतिगान

ये गुरुमुख ही सच्चे सन्त है। गुरु नानकदेवजी ऐसे सन्तों के लिए अपना सिर काटकर देने के लिए तैयार हैं। सिद्धगोष्ठी के लिए पधारे नानक सबसे पहले अपनी इसी प्रतिज्ञा की घोषणा करते हैं। वह सन्तों के हृदय में प्रभु का वास और उनकी वाणी में सच्चे ज्ञान का प्रका"ा देखते हैं। इसलिए वह सत्संगति को सबसे बड़ा तीर्थ कहते हैं।

साम्प्रदायिक सद्भाव और सहिष्णुता की शिक्षा

सन्तजन स्वभाव से बड़े मुक्त और उदार होते हैं। वे असहमत तो हो सकते हैं। परन्तु असहिष्णु कदापि नहीं होते। नानक स्वयं एक ऐसे ही सन्त हैं। वह बहुत–सी बातों में सिद्धों से असहमत हैं, परन्तु फिर भी उनका आदर करते हैं। वह भी उनके मत में प्रभु की खोज में ही निकले हुए हैं। नानक यद्यपि योगमार्ग उल्लिखित (अणिमा, लघिमा, गरिमा, प्राप्ति, प्राकाम्य, इशिता, वशिता आदि) अष्ट सिद्धियों में विशेष रुचि नहीं रखते परन्तु गुरमुखों द्वारा अष्ट सिद्धियों की प्राप्ति की बात पर योगमार्ग के प्रति अपने उदार दृष्टिकोण का परिचय जरूर देते हैं। इसके अतिरिक्त उन्होंने सिद्धों की संगति के महत्त्व पर भी प्रकाश डाला है। उनके मतानुसार सिद्धों ने परमेश्वर को पा लिया है। यही कारण है कि उनसे हुए अपने विचार–विमर्श में उन्होंने उनके लिए बड़े आदरसूचक शब्दों का प्रयोग किया है। अपनी एक वाणी में वह कहते हैं जो भक्त नाम में लीन है, समझिए उन्हें सिद्धों पर संग प्राप्त हो गया। गुरु नानकदेवजी में साम्प्रदायिक कट्टरता, वैचारिक संकीर्णता अथवा वर्गगत दुराग्रह नाम की कोई बात नहीं। वह कर्ता प्रभु को अनेक रूपों में देखते हैं। उसे वह सगुण भी मानते हैं और निर्गुण भी। प्रभु उनके मत में निरंजन होता हुआ भी मनमोहक रूप वाला है, मायापति होता हुआ भी मायाजन्य विकारों से मुक्त है, अरूप और अनाम होता हुआ भी रूप

और नाम द्वारा ही ग्राह्य बनता है और सूक्ष्मतम होता हुआ भी विराट् रूप में प्रकट होता है।

पौराणिक तथा रामायणीय मिथकों का प्रयोग

इस प्रभु को गुरु नानकदेवजी ने मुरारी, शाडपाणि, मधुसूदन, कान्हु, कृष्ण, गोपाल आदि अनेक पौराणिक नामों से पुकारा है। यही नहीं, दार्शनिक चिन्तन को लोकसुलभ बनाने के लिए वह पौराणिक, रामायणीय और महाभारतीय मिथकों का भी खुलकर प्रयोग करते हैं। जैसे गुरुमुख के महत्त्व का बखान करते हुए नानक वाणी ने कहा है कि पापियों को पावन बनाकर संसार सागर से पार करने के लिए विधाता न गुरुमुख को सेतु के रूप में बनाया है। गुरुमुखों ने विकारों के दैत्यों का संहार कर डाला है और देह लंका को काम आदि राक्षसों से मुक्त कर लिया है–

गुरुमुखि बांधिऊ सेतु विधातै।
लंका लूटी दैत सन्तापै।।
(रामकली, म. 1)

दुष्कर्मों के बुरे परिणाम की बात समझाने के लिए गुरुवाणी में परशुरामजी के पश्चाताप के मिथक का प्रयोग हुआ है। राम अपने वनवास से दुःखी हुए। बाद में उन्हें सीता और लक्ष्मण का वियोग भी सहना पड़ा। जिस रावण ने साधु–भेष धारण कर और डमरु बनाकर सीता का हरण किया था वह भी अपनी लंका गंवा बैठा। भवितव्य को कौन टाल सकता है। पाण्डवों को जब विराट के पास चाकरी करनी पड़ी तो वे भी दुःखी हुए यद्यपि उनके स्वामी कृष्ण उनके पास ही थ और वह हर समय उनकी सहायता के लिए तैयार रहते थे।

कालखण्डों के वर्णन की भारतीय परम्परा

गुरु नानकदेव भारतीय संस्कृति के प्रतिनिधि कवि और मनीषी हैं अतः वह आध्यात्मिक गुत्थियों को सुलझाने के लिए न केवल पुरातन अध्यात्मशास्त्रीय प्रतीकों, बिम्बों और मिथकों का ही प्रयोग करते हैं बल्कि ब्रह्माण्डों, पुरियों पर और युगों का भी स्पष्ट वर्णन करते हैं। एक स्थल पर वह कहते हैं कि प्रभु कृपा से ही मनुष्य को जीवन का सही मार्ग मिलता है और प्रभु कृपा ही निराश्रितों को आश्रय प्रदान करती है। यदि मनुष्य को चार युगों जितनी लम्बी आयु मिल जाए तो भी प्रभु कृपा के बिना उसे कोई बड़ा नहीं मानेगा। वह अन्यत्र तीनों भुवनों में गोपाल प्रभु के वास की बात करते हैं। एक स्थल पर वह कहते हैं कि मनुष्य जीवन एक रथ है जिस पर एक सारथि बैठा है। रथ और सारथि दोनों समय–समय पर बदलते रहते हैं। सतयुग में रथ बनता है सन्तोष और रथी होता है धर्म। त्रेता में रथ तो है जत (संयम) और सारथि है शौर्य। द्वापर में तप के रथ को सत् (दान) का सारथि चलाता है। कलियुग में झूठ का सारथि तृष्णा रूप अग्नि के रथ को चलाता है। राग आसा में निबद्ध एक रचना में वेदों के प्रामाण्य से कहा गया है। कि सतयुग में प्रभु को श्वेताम्बर कहा जाता था। त्रेता में प्रभु की ख्याति राम के नाम से हुई। तब वही सर्वव्यापक माने जाते थे और उनका नाम सब देवताओं में सूर्य के समान चमकता था। इस नाम के संकीर्तन से पापों का नाश होता था और लोग मुक्ति पाते थे। द्वापर में प्रभु साँवले कृष्ण के रूप में अवतरित हुए और गोपियों के साथ उनकी लीलाओं का बखान किया गया।

नानक वाणी वास्तव में हमारा एक महान धर्मग्रन्थ और राष्ट्रीय काव्य है। इसके अध्ययन से हमें भारतीय संस्कृति और धर्म परम्परा का पूर्ण बोध होता है क्योंकि इसमें वेदों के धार्मिक प्रवचन, उपनिषदों के धार्मिक व्याख्यान, रामायण जा महाभारत के लोकसुलभ उपदेश तथा श्रीमद्भगवद्गीता का प्रभुचिन्तन एक साथ अनेक चीजें मिल जाती हैं। इसमें ओंकार स्तवन, नाम माहात्म्य, आत्मबोध, अद्वैतसाधना, एकात्मदर्शन, जगत्–मिथ्यात्व, प्रभु इच्छा की प्रबलता, सत्संगति–महिमा, पुरुषार्थचतुष्ट्य का विवेचन निष्काम कर्म की महता, गुरुभक्ति की श्रेयस्करता आदि विषयों की भी विशद् व्याख्या पाई जाती है। गुरु नानक वाणी में औपचारिक कर्मकाण्ड के निषेध, पंथबद्धता के विरोध और पाखण्डों के खण्डन के साथ–साथ जातिविहीन मानवतावाद, समन्वय–साधना, राष्ट्रभक्ति, स्वभाषा–प्रेम, सह–अस्तित्व आदि अनेक अलौकि विषयों पर भी विचारोत्तेजक टिप्पणियाँ पाई जाती हैं। अतः यह स्पष्ट है कि गुरू नानकदेवजी भारतीय संस्कृति और परम्परा के एक प्रबुद्ध चिन्तके और प्रगतिशील व्याख्याता हैं।

संदर्भ

- श्री गुरू ग्रंथ साहिब
- नानक वाणी
- सिद्ध गोष्ठी, मेकालिफ
- गुरूनानकः जीवनी युग एवं शिक्षाएँ–जाकिर हुसैन
- भारतीय जन जागरण के महानायक गुरूनानक देव– डॉ सत्यपाल शर्मा
- Google- http://www.dccpaeri .com , http://www.essayshindi.com.personalities

गुरु नानक देव जी के दर्शन में शिक्षा की अवधारणा

*डॉ. भारती शर्मा

* एसोसिएट प्रोफेसर, शिक्षा संकाय, जामिया मिल्लिया इस्लामिया, नई दिल्ली

सार संक्षेप

ऋतं सत्यं विभर्ति इति' ऋतंभरा अर्थात जिस बुद्धि की विवेचना शक्ति केवल सत्य को गृहण करे असत्य को नहीं ऐसी बुद्धि ही ऋतंभरा प्रज्ञा कहलाती है। ये सर्वश्रेष्ठ बुद्धि मानव मात्र की आवश्यकता है। भारतवर्ष में मध्यकालीन कालखंड में जब राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक पतन का दौर चल रहा था उस वक्त समाज के उत्थान के लिए ऋतंभरा प्रज्ञा से परिपूर्ण एक आलौकिक व्यक्तिव की आवश्यकता थी जो उन्हें सन्मार्ग दिखा सके। ऐसे कठिन समय में अविभाजित भारत के पंजाब के तलवंडी के ननकाना साहब में गुरुनानक का जन्म हुआ।

तारीखें बताती हैं कि 15 अप्रेल 1469 को जिस वक्त गुरुनानक ने माता तृप्ता और एक किसान पिता कल्याणचंद के घर जन्म लिया उस वक्त पंजाब के हालात आक्रांताओं का आघात सह रहे थे। सामाजिक तानाबाना छिन्न भिन्न हो चुका था। भारत की मूल संस्कृति कराह रही थी, और उसी वक्त भारतवर्ष में भक्तिकाल (1375ई से 1700ई) चल रहा था। आक्रांताओं के गहरे घावों से जूझती ज़मीन पर ईश्वरीय उपासनाएं शक्ति का संबल बनी हुई थीं। यही वक्त था कि भारतवर्ष में एक ऋतंभरा शक्ति की नितांत आवश्यकता थी। ये जैविक परिणाम था या फिर कोई ईश्वरीय देन की इसी वक्त गुरुनानक देव जी ने जन्म लिया। इसी बालक के जन्म को कई सालों बाद भाई गुरुदास ने अपने शब्दों में बयान करते हुए कहा।

"सतगुरु नानक प्रगटिया, मिटी धुंध जग चानण होआ
ज्यूं कर सूरज निकलवा, तारे छुपे अंधेर पलाआ"

गुरुनानक देव जी ने यथार्थ के ठोस, दृढ़ गद्य से तथा भाव के उत्तम पद्य के माध्यम से दिशाहीन होते समाज को आध्यात्मिक तथा सामाजिक चेतना की ओर प्रेरित किया। भक्ति, ज्ञान और वैराग्य से ओतप्रोत सदाचार को प्रेरित करतीं उनकी वाणी ने भारतीय संस्कृति को पुनर्स्थापित किया। अत्याचारों, असमानताओं और आडंबरों के विरुद्ध उनके शंखनाद ने फिर से सत्य को देखने, समझने और प्राप्त करने हेतु कर्म की प्रासंगिता पर बल दिया।

गुरुनानक देव जी के बाद आने वाले सभी सिख गुरुओं ने लोक मंगल की कामना हेतु, इस धरती को अपने रक्त से सींचा। गुरु परशुराम जी के बाद गुरु परंपरा परोक्ष रूप से सिख गुरुओं की ओर निर्देशित होती है, जिनके हाथ में आयुध है तथा मुख पर लोक कल्याण की श्रचाएं। जिन्होंने सादा जीवन जीया तथा लोकशक्ति का विकास किया।

गुरुनानक देव जी के दर्शन में शैक्षिक निहितार्थ स्वयं में ज्ञान का अपार स्रोत हैं। यदि्प उन्होंने आधुनिक शैक्षिक दर्शन के समानुरूप कोई व्यवस्थापक शिक्षा प्रणाली का निर्माण तो नहीं किया है परन्तु उनके दर्शन का एक एक अंश लोक कल्याण की शिक्षा प्रदान करता है।

प्रस्तुत लेख गुरुनानक देव जी के दर्शन में शिक्षा की अवधारणा के विमर्श का एक छोटा सा प्रयास है। इस उद्देश्य की प्राप्ति हेतु दार्शनिक अनुसंधान की मानक अध्ययन विधि का प्रयोग किया गया है। जिसके अंतर्गत गुरदेव द्वारा रचित साहित्य की विभिन्न विधाओं तथा अन्य स्रोतों का अध्ययन कर निष्कर्ष तक पहुंचने की कोशिश है। विश्लेषण के उपरान्त निष्कर्षतः ये पाया गया कि गुरुदेव द्वारा प्रतिपादित दर्शन में शिक्षा की अवधारणा अति बलिष्ठ है मनुष्य को आध्यात्मिक चिंतन, सत्कर्म, मेहनत तथा ईमानदारी से जीविकोपार्जन, सामाजिक सरोकार, समानता तथा भक्ति मार्ग की शिक्षा प्रदान करती है।

भूमिका

भारतीय संस्कृति विश्व की प्राचीनतम संस्कृति है तदानुसार ये संपूर्ण विश्व एक ही स्त्रोत से उत्पन्न हुआ है जिसका संचालन भी मुख्यतः एक नियमानुसार होता है। वह है पारस्परिक निर्भरता। भारतीय दर्शन मुख्यतः सनातन कहलाता है, सन धातु का अर्थ है : प्रेम करना, पसंद करना, पूजा करना, सम्मान प्राप्त करना, अनुग्रह के साथ प्राप्त करना इत्यादि। परन्तु सनातन के बहुप्रचलित शाब्दिक अर्थ को ही सनातन का मूल माना जाय तो सनत, सना और सनातन शब्दों का अर्थ है– सदा, हमेशा, निरंतर, नित्य, शाश्वत, पुराना, स्थिर, दृढ़ इत्यादि। व्यकितगत जीवन कर्म प्रधान है तथा जीवन का उद्देश्य आत्मज्ञान की प्राप्ति के उपरांत मोक्ष प्राप्त करना है। यहां मोक्ष शब्द का अर्थ भी स्पष्ट किया जाना आवश्यक है। 'परमात्मा से आत्मा का मिलन–अर्थात सूक्ष्म ऊर्जा का वृहद ऊर्जा क्षेत्र में सम्मिलन'। तुलसीदास कृत रामचरित मानस के अनुसार ये चार प्रकार का होता है सालोक्य, सामीप्य, सारुप्य तथा सायुज्य जो संपूर्ण मोक्ष की श्रेणी में आता है। इसकी ही व्याख्या करते हुए गुरुनानक देव जी जपजी साहब में लिखते हैं

जिन्नी नाम ध्याइयां गए मुसक्कत घाल।
नानक से मुख उझले केती छुट्टी नाल।

जिन लोगों ने नाम की अराधना अथवा नाम की कमाई की वो अपने अंदर में प्रकाश भर कर प्रभु के धाम पहुंचे। उनकी सारी मुश्किलें छूट गईं, उन्होंने जितना भी परिश्रम किया था सब सफल हो गया। वो इस आवागमन के चक्र से तो मुक्त हो ही गए साथ ही ईश्वर के दरबार में अपना दमकता चेहरा भी दिखा गए, इन लोगों ने अपने साथ साथ अनेक जीवों का कल्याण कर दिया।

भारतीय दर्शन प्राणिमात्र में सम्पूर्ण सहअस्तित्व की प्रबल भावना पर आधारित है तथा अन्य विभिन्न मतों, पंथो, पूजा विधियों इत्यादि के संदर्भ में अत्यंत सहनशील तथा सम्यक है, अर्थात भारत भूमि पर विभिन्न मतावलम्बियों के प्रति क्रूरता या दमनकारी विचारधारा का रचियता या पोषक नहीं है। परन्तु मध्यकालीन ऐतिहासिक परिवेश में भारतवर्ष पर विदेशी आक्रांतओं के प्रवेश के उपरांत उस समय की सामाजिक तथा राजनीतिक परिस्थितियों मे बड़ा परिवर्तन आया। वह समय था गुरुनानक देव जी के प्रादुर्भाव का जब उन्होंने परिस्थितिवश समाज में आई कुरीतियों को दूर करने के लिए जनमानस को प्रेरित किया। इन परिस्थितियों को अपने काव्य में ढालते हुए नानक देव कहते हैं

कलि महि वेदु अथरवणु हुआ नाऊ खुदाई अलहू भइया।
नील वसत्र ले कपड़े पहिरे तुरक पठाणी अमलू किया।

इसका अर्थ है नीले वस्त्र पहनकर मध्य एशिया से तुर्क आए और उन्होंने भारत पर कब्ज़ा कर यहां अपना शासन जमा लिया। कलियुग में अथर्ववेद तो था, लेकिन इस युग में परमात्मा का नाम अल्लाह या खुदा हो गया। अब ईश्वर इसी नाम से पुकारा जाएगा। (अग्निहोत्री, के. सी., 2019)

इन्हीं व्यथाओं को नानक ने अपने काव्य में ढाला और जनजन तक पहुंचाया। जनजागरण के इसी क्रम में उनके दार्शनिक विचारों, रचना के माध्यम से शिक्षा की अवधारणा का विकास हुआ।

अध्ययन की आवश्यकता तथा महत्व

गुरुनानक देव जी सिख समुदाय के प्रथम गुरु के रूप में स्थापित हैं। उनका तथा अन्य सभी गुरुओं का सम्पूर्ण जीवन साधारण जनमानस के लिए समर्पित था। उन्होंने न केवल भयभीत दिशाहीन, शोषित समाज में नवजागृति की लहर का निष्पादन किया अपितु सामाजिक न्याय तथा अधिकारिता को सुनिश्चित करने का सफल प्रयास किया। यह समय भारतीय भक्तिकाल का स्वर्ण युग कहलाता है। समानता, सदाचार, तथा सत्य पर आधारित दर्शन एक शैक्षिक दर्शन ही है। शिक्षा का वह स्वरूप जो मनुष्य को पुनः स्वंय तक ले जाए तथा एकात्मकता की ओर अग्रसर करे।

आज का हमारा जनमानस प्रयोजनवादी हो गया है। आध्यात्मिकता, आत्मा–परमात्मा, नैतिकता, आदर्श जीवन इत्यादि को हम बौद्धिक स्वीकृति तो देते हैं परन्तु उसे व्यवहार में प्रयोग नहीं करते। आज हमारी शिक्षा परीक्षा केन्द्रित हो गई है जिसके कारण कागज़ के प्रमाण पत्रों का मूल्य ज्यादा है और व्यक्ति के आदर्शों और मान्यताओं का मूल्य कम है। ईमानदारी, सत्यवादिता आज के आधुनिक समाज में फैशन सिंबल ही रह गए हैं। सभी व्यक्ति पैसा कमाकर जीवन के स्तर को बढ़ाना चाहते हैं, व्यक्तिव तथा नैतिक स्तर को नहीं।

प्रतियोगिताओं की अंधी दौड़ में शिक्षा के मूल उद्देश्य पीछे छूट गए हैं। आधुनिक शिक्षा जहां आज आध्यात्मिक उद्देश्यों के विपरीत भौतिकवाद की ओर अग्रसर हो चुकी है वहां गुरुनानक देव जी के दर्शन की प्रासंगिकता और बढ़ जाती है।

शोध अध्ययन का उद्देश्य कथन

गुरुनानक देव जी के दर्शन में शिक्षा की अवधारणा।

अध्ययन विधि का प्रस्तावीकरण

प्रस्तावित लेख का उद्देश्य गुरुनानक देव जी के शैक्षिक दर्शन को समझने का प्रयास है। जैसा कि विदित किया जा चुका है कि गुरुनानक देव जी ने परोक्ष रूप से शैक्षिक दर्शन की व्याख्या नहीं की है, अपितु उन्होंने अपनी सरल, सहज, वाणी, काव्य तथा साहित्य के माध्यम से रिक्त होते मानवीय मूल्यों तथा मानवीय चेतना को प्रतिस्थापित किया जो उनके दर्शन का मूल है। तदानुसार अनुसंधानकर्ता ने तदर्थ लेख में दार्शनिक अनुसंधान की मानक अध्ययन विधि का प्रयोग किया है।

जैसा कि हम जानते हैं कि मानक विधि में संबधित साहित्य का गुणात्मक अध्ययन निहित है। गुणात्मक अन्वेषण में प्रस्तुत लेख या प्रपत्र गुरुनानक देव द्वारा रचित चुने हुए साहित्य की समीक्षा तथा विश्लेषण करता है। व्याख्या तथा स्पष्टीकरण करते हुए सत्यार्थ या शास्त्रीय अर्थ तक पहुंचने का प्रयास किया गया है।

अध्ययन का परिसीमन

गुरुनानक देव जी के दर्शन में शिक्षा के विभिन्न तत्वों पर विचारों का प्रस्तुतीकरण निहित है, जैसे पाठ्यक्रम, शिक्षण विधि, मूल्यांकन, अनुशासन इत्यादि। परन्तु प्रस्तुत आलेख केवल शिक्षा की अवधारणा की व्याख्या करने तक ही सीमित रखा गया है।

गुणात्मक विश्लेषण तथा व्याख्या

ऋगवेद में कहा गया है कि शिक्षा मनुष्य को आत्मनिर्भर तथा निस्वार्थ बनना सिखाती है।

जॉन डुवी के अनुसार शिक्षा उन शक्तियों के विकास का नाम है जिनके द्वारा मनुष्य में अपने वातावरण पर नियंत्रण रखने तथा अपनी समस्त शक्तियों के विकास की सामर्थ्य उत्पन्न होती है।

गुरुनानक देव जी द्वारा प्रतिपादित शिक्षा की अवधारणा को आधुनिक, औपचारिक, शैक्षिक दर्शन, संरचना प्रणाली तथा इसके विभिन्न अवयवों के अनुसार समझने का प्रयास उचित नहीं होगा। जैसा कि हम जानते हैं कि उन्होंने पृथक रूप से किसी शैक्षिक दर्शन की रचना तो नहीं की है परन्तु उनके द्वारा लिखित रचनाओं में सभी शैक्षिक विषयों तथा उपविषयों का उद्बोधन है। शिक्षा की अवधारणा गुरुजी के सामान्य दर्शन में स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होती है। जैसे मुख्य रूप से जपजी साहब, पट्टी, आसा दी वार तथा ओंकार।

पुरातन समय से ही भारतवर्ष आध्यात्म का केन्द्र रहा है। भारतीय शिक्षाविद, शिक्षा के विभिन्न उद्देश्यों में आध्यात्मिक चेतना को प्रथम स्थान देते आए हैं। गुरुनानक जी की शिक्षा की संकल्पना इस विचार से भिन्न नहीं है–

सब महि ज्योति–ज्योति है
सोई तिस दै चानणां सम चानण होई।

इस चराचर जगत के सभी मनुष्य एक ही परमात्मा के अंश हैं। वही व्यक्ति बुद्धिमान है जो आत्मज्ञान द्वारा ईश्वर को प्राप्त करे। गुरुनानक देव ये भी लिखते हैं –

अव्वल अल्लाह नूर उपाया, कुदरत के सब बन्दे

एक नूर ते सब जग उपज्या, कौन भले कौन मंदे

सभी मनुष्य एक ही नूर से उपजे हैं, यहां नानक समानता का भी बोध कराते हैं जहां वो ये कहते हैं कि कौन भले कौन मंदे। ईश्वर के प्रति आस्था और उसके मानने वालों में मतभेदों को दूर करना का उपदेश देते हुए नानक ने कहा है

”एक ओंकार सतनाम करता पुरख
निरभऊ निरवैर अकाल मूरत
अजुनी स्वेमभ गुरु प्रसाद”

गुरु की कृपा प्राप्त नाम धारण करने वाला व्यक्ति ही ईश्वरीय अदालत मे स्वीकार किया जाता है। परमात्मा अनंत सर्वशक्तिमान, सर्वव्यापी तथा सर्व सत्य है। सदैव एक ही ईश्वर की उपासना करो। गुरु द्वारा प्राप्त नाम स्मरण सर्वोपरि है। 'राम' नाम शब्द को गुरुजी द्वारा शिक्षा में मुख्य रूप से जोड़ा गया।

गुरुनानक देव के अनुसार शिक्षा मुनष्य को उन्नत बनाती है जिसके द्वारा वह ईश्वर के अस्तित्व को स्वीकारते हुए उसमे लीन हो जाता है। शिक्षा का मुख्य उद्देश्य है आत्मज्ञान तथा आत्म अभिव्यक्ति।

गुरुनानक देव के अनुसार किताबी ज्ञान शिक्षा नहीं है। ज्ञान तो वह प्रकाश है जिसका आत्मीकरण उसके प्रयोग में निहित है। यह वह शक्ति है जो व्यक्ति को अज्ञानता के बंधनों से मुक्त कर शरीर, मस्तिष्क तथा आत्मा का प्रकाशित कर उन्नत बनाती है। ज्ञान मनुष्य को उचित या अनुचित, सही या गलत का बोध कराता है, तथा बुद्धिमता के प्रयोग द्वारा पुण्य मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित करता है।

गुरुनानक देव की शिक्षा को क्षमताओं के अनावरण की प्रक्रिया मानते हैं, जिसमे शिक्षक की भूमिका प्रमुख है। शिक्षक अपने शिष्य की संभावनाओं तथा क्षमताओं की पहचान कर उन्हें विकसित तथा विभिन्न कौशलों में परिवर्तित कर सकता है। इसका अर्थ है कि गुरुनानक देव जी शिक्षा की प्रक्रिया को दो ध्रुवीय दृष्टिकोण से देखते हैं।

गुरु जी उत्तम चरित्र तथा धर्मनिष्ठ आचरण के द्वारा व्यक्तिव निर्माण की बात करते हैं। उनके द्वारा लिखित प्रार्थना जपजि साहब में वो बताते हैं कि उत्तम चरित्र का निर्माण किस तरह से किया जा सकता है। गुरुजी ने विभिन्न संप्रत्यों जैसे सबद अचर, रतन अचर, सच अचर, तथा छज अचर जिनका अर्थ है क्रमशः धर्म ज्ञान पर आधारित चरित्र, देवत्व पर आधारित चरित्र, सत्यनिष्ठ जीवन पर आधारित चरित्र, तथा जीवन की आध्यात्मित कला पर आधारित चरित्र।

वह अपने जीवन में बुरे आवेगों जैसे काम, क्रोध, लोभ, मोह तथा अहंकार को हटाने पर बल देते हैं। गुरुदेव की शिक्षा की संकल्पना में सांस्कृतिक, भावनात्मक, शारिरिक तथा सौंदर्य विकास की अवधारणा पर बल दिया गया है। वह मनुष्य को कर्मयोगी बनने की प्रेरणा देते हैं। उनके अनुसार मनुष्य स्वंय अपने भाग्य का निर्माता है। उनके अनुसार कर्म बिना मोक्ष प्राप्ति असंभव है।

गुरुनानक देव व्यक्तिगत विकास के साथ साथ सामाजिक समन्वय की बात करते हैं। समाजिक उत्थान हेतु वो समाजसेवा को अत्यंत पावन कृत्य मानते हुए उसकी प्रेरणा देते हैं। उनकी शिक्षा के तीन प्रमुख सिद्धांत है।

1 कीरत काम– अपनी मेहनत से जीवन यापन करना।
2 वंद चकाना–ज़रूरतमदों की अपनी आय से मदद करना।
3 नाम जपना–ईश्वर के नाम का ध्यान लगाना।

उनके अनुसार शिक्षा के विभिन्न लक्ष्यों के पृथक पृथक नहीं बल्कि समग्र रूप से प्राप्त किया जा सकता है। गुरुनानक देव सामाजिक समानता की प्रेरणा देते हैं। वह गरीब अमीर, स्त्री पुरुष, धर्म जाति या कार्य के विभेद को पूर्णतः अस्वीकार करते हैं। उनके अनुसार

'सो क्या मंदा जानिए, जित जनमे राजान'

अर्थात उस महिला को छोटा क्यों कहते हो जिसने राजाओं और महापुरुषों को जन्म दिया है। सामाजिक एकता तथा समरसता हेतु उन्होंने प्रयोगिक रूप से 'संगत', 'पंगत' तथा 'लंगर' जैसे कार्यो को आरभं किया जो उत्कृष्ट परंपरा के रूप में आज भी प्रचलित हैं। उनके अनुसार शिक्षा का उद्देश्य सामाजिक वैमनस्य को समाप्त कर समाजिक समानता की स्थापना है।

निष्कर्ष

महात्मा गांधी जी के अनुसार जो शिक्षा चित्त की शुद्धि न करे, मन और इंद्रियों को वश में रखना न सिखाए, निर्भरता स्वावलंबन पैदा न करे, निर्वाह का साधन न बनाए तथा स्वतंत्र रहने का सामर्थ्य न उपजाए, उस शिक्षा में चाहे जितनी जानकारी का खज़ाना, तार्किक कुशलता और भाषा पांडित्य मौजूद हो वह सच्ची शिक्षा नहीं।

गांधी जी शिक्षा के दो प्रकार के उद्देश्य मानते थे। प्रथम तात्कालिक उद्देश्य जैसा कि शारिरिक विकास, नैतिक व चारित्रिक विकास, मानसिक एवं भौतिक विकास, जीविकोपार्जन का उद्देश्य, सांस्कृति उद्देश्य, पूर्ण विकास का उद्देश्य, मुक्ति का उद्देश्य तथा द्वितीय सर्वोच्च उद्देश्य है मनुष्य ईश्वर और स्वयं की अनुभूति के आधार पर मोक्ष के मार्ग को पहचाने।

गुरुनानक देव के विचारों में मूल रूप से मानवतावाद का दर्शन प्रमुख है। दर्शन का शिक्षा से गहरा संबध है। दर्शन शास्त्र से शिक्षा को दिशा मिलती है तथा शिक्षा की प्रकृति तथा स्वरूप का स्पष्टीकरण प्राप्त होता है। शिक्षा दर्शन के व्यावहारिक तथा गत्यात्मक पहलू के रूप में कार्य करती है। वह व्यक्ति को महत्पूर्ण मानते हैं तथा समानता के सिद्धांत पर बल देते हैं। शिक्षा व्यक्ति का चरित्र निर्माण कर उसे समाज में रहने योग्य ही नहीं बनाती अपितु परमात्मा से मिलन का मार्ग प्रशस्त करती है। अंततः हम ये कह सकते हैं कि गुरुदेव द्वारा शिक्षा की अवधारणा आदर्शवादी है जिसमें सम्पूर्ण मानवता का कल्याण निहित है।

संदर्भ

- गोस्वामी तुलसीदास ”रामचरित मानस” गीताप्रेस गोरखपुर।
- गुरुनानक देव ”जपजी, पट्टी, आसा दी वार, गुरु ग्रंथ साहिब”।
- तोमर, लज्जाराम (1999) ”भारतीय शिक्षा मनोविज्ञान के आधार”, विद्या भारती प्रकाशन, हरियाणा।
- एडिटेड बुक (2018) ”द हिंदू स्पीक ऑन रिलिजन वेल्यूज़” टीएचजी पब्लिशिंग प्रा. लिमिटेड, चेन्नई।

- कुमार रविन्द्र (2018) "द इंडियान फिलॉसॉफी ऑफ युनिवर्सल युनिटी" इन भावना जर्नल वोल्यूम 64, नंबर 15, भारतीय विद्या भवन पब्लिकेशन, मुंबई।
- साथारामू, एएस, (2002), "फिलॉसॉफीज़ ऑफ एजुकेशन", आशीष पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली।
- कुमार, अनूप. (2006) " रविन्द्र नाथ टैगोर पर शैक्षिक चिंतन की आधुनिकता" भारतीय आधुनिक शिक्षा. वर्ष 25 संयुक्तांक 1–2, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद नई दिल्ली।
- गुप्ता, एस. तथा अग्रवाल, जे.सी. (2011), "उदयीमान भारतीय समाज में शिक्षा", शिप्रा पब्लिकेशन दिल्ली।
- रुहेला, सत्यापाल. (2007), "विकासोन्मुख भारतीय समाज में शिक्षक और शिक्षा", अग्रवाल पब्लिकेशन आगरा।
- सक्सेना, एन. आर. स्वरूपर और संजय कुमार, (2010), "शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय सिद्धांत" आर लाल बुक डिपो मेरठ।
- रैना ए.के(2001) "एजुकेशन फिलोसॉफी ऑफ गुरुनानक देव जी" लोकगीत प्रकाशन, चंडीगढ़–160002।
- अग्निहोत्री केसी (2019), श्री गुरुनानक देव दी, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली।

शाश्वत आलोक स्तंभ हैं : चार उदासियाँ

*डॉ. रेणू दुग्गल

* हिन्दी विभाग, श्री गुरु नानक देव खालसा कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय

विश्व इतिहास के अध्ययन कर्ता इस तथ्य से अज्ञात नहीं है कि समस्त संसार में ही मध्ययुग राजनीतिक सामाजिक सांस्कृतिक आदि पक्षों से अंधकार युग था इस युग में शासक और उनके सहयोगी प्रशासक वर्ग जनकल्याण के अति आवश्यक उद्देश्य को अपनी दृष्टि से ओझल कर चुका था। बाड़ ही खेत को खाए जा रही।थी हमारे देश भारतवर्ष की स्थिति और भी दयनीय थी क्योंकि पिछले साढे चार सौ वर्ष से भारत पर मुस्लिम शासकों के हमले लगातार हो रहे थे। धर्म अधर्म की तरफ अग्रसर हो चुका था बाह्य आडंबर रूढियों और अंधविश्वास का बोलबाला था एक ओर ब्राह्मण तथा दूसरी ओर सिद्ध और नाथपंथी योगी मंत्र तंत्र और रिद्धि सिद्धियों द्वारा सा सांप्रदायिक मान्य जन को भयभीत कर रहे थे। इसके अतिरिक्त हिन्दू मुस्लिम विवाद बहुत भयावह स्थिति मे था।

धर्म की इस विषैली स्थिति को सुधारने के लिए समाज से ही प्रचारकों का एक दल खड़ा हो गया।वैष्णव भक्त साधकों ने धर्म और भक्ति के परंपरागत रूप को फिर से स्थापित करने का यत्न किया और संत साधकों ने धर्म के क्षेत्र में भेदभाव बाहरी आडंबर और पाखंडो का खंडन किया उस युग की समस्याओं को हल करने के लिए गुरु नानक देव जी के व्यक्तित्व का जो स्वरूप सामने आया वह मुख्यतः समन्वय वादी ,धर्म के बाह्य आडंबरों का विरोधी और सच्ची धार्मिक साधना की प्रेरणा देने वाला था। आपने अपना समस्त जीवन , असाधारण प्रतिभा और असीम क्षमता को लोक कल्याण के महानतम उद्देश्य की पूर्ति के लिए लगा दिया।जगत उद्धार और लोक कल्याण के लिए गुरु नानक देव जी ने देश और विदेशों की अनेक यात्राएं की जो उदासियों के नाम से जानी जाती हैं। इन यात्राओं में आपने बाणी का उच्चारण करके और उसे संगीतबद्ध करके उस समय के जनसाधारण की विचलित और भ्रमित चेतना को नई सकारात्मक दिशा की ओर क्रियाशील किया। सुल्तानपुर लोधी में नवाब दौलत खान की मोदी खाने में मोदी के रूप में कार्यभार निभाते हुए गुरुजी ने निर्धारित किया कि आप अपना सारा जीवन लोक कल्याण के उद्देश्य को समर्पित करेंगे तब आपने ठ नारा दिया "ना को हिंदू ना मुसलमान "।आपने स्पष्ट किया कि मानवीय भाईचारा ही धर्म का मूल आधार होना चाहिए सभी का रचियता और पालन करने वाला पिता एक ही है।कर्मकांड धर्म नहीं बल्कि धर्म विरोधी क्रियाएं हैं ईश्वर निराकार ,सर्वव्यापक और सर्वशक्तिमान है उसे मूर्तियों या या सीमित आकार मे नही बान्धा जा सकता। मनुष्य जन्म सर्वोत्तम जन्म है और इसे केवल सांसारिक जरूरतों की पूर्ति के लिए सीमित नहीं करना चाहिए बल्कि परोपकार और लोक कल्याण में लगाकर सफल बनाना चाहिए।ऐसे उच्च निर्मल विचारों को लेकर आप घर गृहस्ती का सुख आराम छोड़ कर जन–जन तक इस संदेश को पहुंचाने के लिए चल पड़े। 1497 मे आपने अपने दिव्य मिशन को प्रारम्भ किया और पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण की अनेक उदासियों में उन्होंने हिन्दू ,मुस्लिम ,बोद्ध ,जैनियों, सूफियो ,सिद्धों और योगियों के विभिन्न केन्द्रों का दौरा किया और अनेक जनजातियों संस्कृतियों और जातियों के लोगों से मिले। पुरातन "जन्म साखी" के अनुसार जो गुरु नानक देव पुरातन जन्म साखी के के इतिहास के सब से पुराने लेखों में से एक है गुरु जी ने सिलोन, श्रीलंका ,मक्का, बगदाद, कामरूप (असम) तक चार उदासियां की।

उदासी शब्द उदास से बना है जिसका अर्थ होता है तटस्थ, अनासक्त, भौतिक संसार की क्रियाओं में सक्रिय भाग ना लेने वाला। गुरु नानक देव जी देश देशांतर के भ्रमण में इसी प्रकार का जीवन व्यतीत करते थे। प्रसिद्ध "सिद्ध गोसट" वाणी में वर्णन आया है कि सिद्धों ने गुरु नानक देव जी से पूछा कि आपने यह उदासियों का वेश क्यों धारण किया है तो आप ने फरमाया :

गुरमुख खोजत भए उदासी।।
दर्शन के ताई भेख निवासी।।
साच वखर के हम वणजारे।।
नानक गुरमुख उतरस पारे।। पृष्ठ(938)

अर्थात में गुरु मुखों की खोज करने के लिए उदासी बना हूं मैं प्रभु के सच्चे नाम रूपी वस्तु का व्यापारी हूं। गुरमुख होना यानी गुरु के दर्शाए मार्ग पर चलना ही इस संसार से पार उतारने का एकमात्र मार्ग है गुरु नानक देव जी ने 1497 से लगभग 1521 तक ये यात्राएं की यद्यपि विद्वानों में इनकी तिथियों को लेकर कुछ मतभेद भी मिलता है लेकिन फिर भी निम्नलिखित विभाजन काफी हद तक मान्य है।

प्रथम उदासी पूर्व की : गुरु नानक देव जी ने प्रथम उदासी पूर्व की तरफ जून 1497 से 1509 तक की यह उदासी सुल्तानपुर से प्रारंभ हुई और तलवंडी में समाप्त हुई। भाई मरदाना भी गुरु नानक देव जी के साथ थे इस उदासी में गुरु नानक देव जी भारत के प्रमुख तीर्थ स्थानों जैसे पिहोवा ,कुरुक्षेत्र, हरिद्वार, अयोध्या, प्रयाग, बोध गया ,कामाख्या देवी का मंदिर, जगन्नाथ पुरी के अतिरिक्त आसाम एवं ढाका के आगे के भू क्षेत्रों तक गए

और मार्ग में अनेक लोगों के भरमो को दूर किया। पहली उदासी को तर्क के आधार पर दार्शनिक कहा जाता है इस यात्रा के माध्यम से गुरूजी ने सदियों से स्थापित ब्राह्मणवादी ,वैष्णव ,शैव ,शाक्त ,बोध ,जैन ,तांत्रिक एवं योग मतके रूढ़िवादी सिद्धांतों का खंडन करके धर्म की स्वतंत्रता की नींव रखी। उदासी के दौरान गुरुजी सैदपुर में भाई लालो जी के पास पहुंचे और मलिक भागों को उपदेश दिया जब पंडितों ने कहा कि नानक दोषी है वह नीच के घर खाना खाता है तो गुरु जी ने कहा

'नीचां अंदर नीच जात नीची हू अति नीच।।
नानक इन के संग साथि वडिया सिउ क्या रीस '।।
पृष्ठ (15)

हरिद्वार में गंगा स्नान करते समय लोगों द्वारा सूर्य को जल चढाते देख गुरु जी ने पश्चिम की ओर मुंह करके जल देना शुरू किया और पूछने पर कहा कि भाइयों पंजाब में भारी सूखा पड़ा है इस लिए मैं अपने खेतों को पानी दे रहा हूं यह सुनकर सब लोग हंस पड़े कहने लगे कि पानी आप के खेतों तक कैसे पहुंचेगा गुरु जी ने कहा अगर मेरा पानी मेरे खेतों तक नहीं पहुंच सकता तुम्हारा पानी तुम्हारे पितरो तक कैसे पहुंचेगा।

हरिद्वार से गुरु नानक देव जी गोरख मता पहुंचे जो योग मत का प्रमुख केंद्र था। वहां पर सिद्धों से चर्चा हुई सिध हार गए तब से गोरख मत्ता नानकमत्ता बन गया। गोरख मत्ता के योगियों के साथ चर्चा करते हुए उनके बाहरी भेस पर शब्द उच्चारण करते हुए गुरु जी कहते हैं

"जोग ना खिन्था जोग ना डंडे जोग ना भसम चढ़ाईए।।
जोग ना मुंदी मुंड मुंडाइए जोग ना सिंडी वाईए।।
अंजन माहि निरंजन रहिए जोग जुगत इव लाइए।।
नानक जीवहत्या मर रहीए ऐसा जोग कमाइए।।
वाजे बाजुह सिंझी वाजे तो निरभउ पद पाइए।।
(पृष्ठ 730)

अर्थात खिन्था , डंडा, शरीर पर राख मलने से सिंर मुंडाने से योग नहीं होता माया के मध्य रहते हुए भी उससे निर्लिप्त रहना, इच्छा रहित विकार रहित होकर जीवन जीने से परमात्मा प्राप्त होता है। फिर गुरुजी बनारस पहुंचे वहां पंडित चतुरदास के साथ मूर्ति पूजा और अन्य मसलों पर चर्चा हुई चतुरदास को यकीन हो गया कि परमात्मा घट घट में व्याप्त है और नाम वाणी द्वारा ही उसे प्राप्त किया जा सकता है।

बनारस में ही गुरु नानक देव जी ने भगत कबीर और भक्त रविदास जी के साथ गोष्ठी की और उनकी वाणी को अपने पास संभाल लिया। जगन्नाथ पुरी में प्रसिद्ध हिंदू तीर्थ पर आपने मूर्ति के आगे की जा रही परंपरागत आरती में शामिल होने से इनकार कर दिया पंडितों के पूछने पर आपने कहा कि वे अकाल पुरख की असली आरती में शामिल थे।गुरु जी ने इस समय "

गगन में थाल रवि चन्द दीपक बने।।
तारका मंडल जनक मोती।। "

शबद का उच्चारण किया पंडित गुरुजी के सामने नतमस्तक हुए और उन्होंने गुरु जी द्वारा बख्शे अकाल पुरख की सर्वव्यापकता और अनन्तता के उपदेश को ग्रहण किया। सन 1510 को आप वापस सुल्तानपुर पहुंचे और पहली उदासी संपूर्ण की।

द्वितीय उदासी दक्षिण की – श्री गुरु नानक देव जी की दूसरी उदासी सन1510 से 1515 तक की यह उदासी बीकानेर ,पुष्कर ,अजमेर और राजपूताना के कितने ही शुष्क इलाकों को पार करते हुए महाराष्ट्र ,बिदर, गोलकुंडा श्रीरंगपट्टम आदि से होतेहुए लंका जाकर संपूर्ण हुई।वापसी पर गुरु जी गुजरात के स्थान मुल्तान और पुनः पाक पट्टन होते हुए अप्रैल 1515 में तलवंडी पहुंचे इस उदासी में भाई बालाजी और भाई मरदाना जी दोनों उनके साथ थे। इस यात्रा में उन्होंने सरसा के पीरों के साथ चर्चा की जैन साधुओं की जीव हिंसा के भ्रम को दूर किया।कोडा राक्षस से भाई मरदाना की रक्षा की तथा उसे जीवो पर दया करने का और नाम स्मरण का उपदेश दिया। आपने बीकानेर में जैन साधुओं से भेंट की तथा अहिंसा पर उनके साथ चर्चा करते हुए फरमायाः

"जीआं मार जीवाले सोई अवर ना कोई राखें।।"

अर्थात जिलाने अथवा जीवित रखने और मारने वाला अकाल पुरख है। जीव का उसके सिवा कोई रक्षक नहीं हो सकता यदि हम जीवो की रक्षा सुरक्षा में प्रभु की ओर से ही सौंपा गया कुछ काम करते हैं तो हमें अपने अहिंसक होने का मान नहीं करना चाहिए जो कि अहम का ही एक रूप है झालापटन मैं आपने भक्त पीपा जी के भक्तों से वार्ता की।।

दक्षिण देश का भ्रमण– गुरुजी दक्षिण दिशा की ओर आगे पढ़े गोदावरी नदी पार करके गोलकुंडा किष्किंधा अनंतपुर कांचीपुरम होते हुए गुरुजी त्रिचनापल्ली पहुंचे जहाँ आलवार संतो का प्रमुख केंद्र श्रीरंगम है भक्त रामानुजन जी ने भी अपना अंतिम वर्ष अंतिम समय यही गुजारा था यहां से गुरुजी नागा पटनम पहुंचे तथा वहां से समुद्र पार करके श्रीलंका के बंदरगाह त्रिंकोमाली तथा मटिआकुलम गए वहां का राजा गुरुजी की महिमा सुन चुका था जब उसने सुना कि भारत से कोई फकीर आया है तो उसने परीक्षा लेने के लिए सुंदरियों को गुरुजी के पास भेजा और जब गुरुजी की पहचान हुई तो उन्हें प्रणाम करने आया और महल में ले जाकर आव भगत की कुछ दिन श्रीनाथ के महल में विश्राम करके गुरु जी थोड़ी दूर एक रमणीय स्थान पर जा विराजे और यह स्थान आज भी कुरुकुल मंडप या गुरु की नगरी कहलाता है गुरु श्री लंका के प्रसिद्ध तीर्थ स्थान कतरगामा पहुंचे लंका के बौद्धों और ब्राह्मणों को जब गुरु जी के आने का पता चला तो वह भी उन से शास्त्रार्थ करने के लिए आए गुरु जी ने "नाम "और "शब्द" की महिमा की पूर्ण स्थापना की और वे सब गुरुजी के तर्कों के सामने नतमस्तक हो गए।गुरु जी लगभग 4 महीने तक लंका में रहे और उसके बाद धनुष्कोटी बंदरगाह होते हुए रामेश्वरम पहुंचे रामेश्वरम में जब योगियों ने कहा कि आप तो निरंकार को मानने वाले हो तो आप इस मंदिर में क्यों जाते हो तब गुरु जी ने फरमाया

"दूजा कउण कहा नहीं कोई।।
सब में एक निरंजन सोई।।

गुरु जी के विचार सुनकर योगी निरुत्तर हो गए रामेश्वरम से चलकर गुरुजी त्रिवेंद्रम आनंदपुरम से होते हुए कोट्टायम आ विराजे यहां योगियों के साथ विचार चर्चा चली तो गुरुजी ने "वंड छको" यानी बांट कर खाने के सिद्धांत की व्याख्या की योगियों ने गुरु जी को एक तिल देते हुए पूछा कि इसे किस तरह से बाँटोगे तो

गुरुजी ने उस तिल को ओखली में कूट कर सबको बांट दिया यह स्थान आजकल तिलगंजी साहब कहलाता है।

गोदावरी पार करके गुरुजी नासिक पहुंचे और महादेव के मंदिर त्र्यंबकेश्वर गए और शिव भक्तों से ज्ञान चर्चा की फिर पंचवटी पहुंचे और संतों से रूहानी विचार बांटे पंचवटी से चलते हुए गुरुजी गुजरात पहुंचे और वहां सोमनाथ मंदिर में गए और पंडितों के खोखले कर्मकांड को देखकर उन्हें मानसिक भक्ति की ओर प्रेरित किया इसके पश्चात गुरुजी कृष्ण की नगरी द्वारका गए।

तीसरी उदासी 1515 से 1517 तक लगभग 3 वर्षों तक चली और इस दौरान गुरुजी कश्मीर सुमेर पर्वत, नेपाल, ताशकंद, सिक्किम, तिब्बत आदि क्षेत्र में गए इस समय को नानक देव जी 45 से 47 वर्ष के बीच थी।ये आप की सबसे छोटी उदासी है।सारे पहाड़ी इलाके सिद्धों और योगियों के ठिकाने थे जब गुरु जी सिद्धों के पास पहुंचे तो सिद्धों ने गुरु जी को मदिरा का प्याला पीने को कहा गुरु जी ने कहा इसमें क्या है तो सिद्ध बोले गुड़ और धावे के फूल। तब गुरु जी ने कहाः

"गुड़ कर ग्यान ध्यान कर धावै, कर करणी कस पाईयै।
भाठी भवन प्रेम का पोचा इत रस अभियोग चुआइयै।"
(शबद राग आसा 1)

इस उदासी में प्रमुख रूप से योगमत के रिद्धि सिद्धि और उनकी शास्त्र विधियों मे आ गए आडंबरों को लेकर चर्चा हुई।वास्तव मे उस समय सिद्धों और योगियों का बहुत प्रभाव था जो हठयोग की साधना करते थे लेकिन गुरु जी हठयोग की साधना को आध्यात्मिक उन्नति के लिए व्यर्थ मानते हैं उन्होंने तत्कालीन योगियों के बारे मे कहा कि वह ममता सुख और स्त्री का प्रेमी है न उसे अलौकिक कहा जा सकता है और न ही वे त्यागी पुरुष है वह भस्म लगा कर व्यर्थ के पाखंड करता हुआ माया ग्रस्त हो जाताहै और कई प्रकार के भेष धारण करता है कंथा सजाता है नट की तरह मिथ्या क्रियाएं करता है कानो मे मुद्राए पहनता है ऐसा करना प्रत्येक द्रष्टि से पाखंड है

" जोगी गिरही जटा विभूति आगे पाछे रोवे पूत
जोग ना पाया जुगत गवाई कित कारण सिर छाई पाई'।

गुरु जी के अनुसार ग्रहस्थ धर्म ही सर्वोत्तम और श्रेष्ठ है सच्चे ढंग से प्रभु स्मरण के द्वारा ग्रहस्थ जीवन व्यतीत करते हुए ही मुक्ति प्राप्त की जा सकती है।सिद्धों के साथ अनेक विषयों पर चर्चा हुई आपने उन्हें समझाया कि केवल अपने कल्याण के लिए गुफाओं में बैठ कर तपस्या करने के स्थान पर जगत कल्याण के लिए प्रयास करने चाहिए। गुरु के बिना सारा संसार नष्ट हो रहा है–

" सिद्ध छपि बैठे परबती कौन जगत को पार उतारे
जोगी ग्यान विहूणिया निस दिन अंग लगाए छारा।'

इसी उदासी में गुरु जी ने सिद्धों के साथ प्रश्नोत्तरी के रूप में "सिद्ध गोष्ट" नाम की लम्बी रचना राग रामकली में उच्चारित की। गुरु नानक देव जी तलवंडी और सुल्तानपुर लोधी में कुछ समय रुकने के बाद भाई मरदाना जी को साथ लेकर चोथी उदासी के लिए सन 1517 से 1521 तक मक्का मदीना की तरफ की। इस उदासी में आपने मुस्लिम इस्लाम के मुख्य केंद्रों पाक पट्टन मुल्तान मक्का, मदीना ,बगदाद, इराक, इरान, पेशावर आदि जाने का निश्चय किया।आपने अपने साथ में लिखित मसौदा भी ले लिया जो आपने अपनी पहली यात्राओं के दौरान एकत्रित किया था और जिसमें आपकी अपनी और अन्य भक्त कवियों की रचनाएं संग्रहित थीं।इस उदासी के बारे में चर्चा करने से पहले मध्ययुगीन धार्मिक विचारधारा और विशेषतः हिंदुओं की मानसिकता को ध्यान में रखना जरूरी है अलबरूनी अपनी पुस्तक "अल हिन्द" में लिखता है कि "हिंदू अपनी सभ्यता को बहुत ऊंचा मानते थे और सिंध दरिया पार करके ऐसे देशों में जाना जहां गैर जाति के लोग रहते थे उनके लिए धार्मिक रूप से मना था।" गुरु नानक देव जी ने हिंदुओं की बनाई हुई तथाकथित धार्मिक मर्यादा को तोड़ा और आपने पश्चिम देशों के लोगों उनके धार्मिक नेताओं के साथ संवाद करने की पहल की। इस उदासी में आप सबसे पहले पाक पट्टन और मुल्तान गए और वहां के प्रसिद्ध सूफियों शेख इब्राहिम ,मखदूम बहावदी और अब्दुल शाह बुखारी से मिले और उनके पास ठहरे। आपने उनके साथ विचार गोष्ठियों की और इस अवसर पर एक दूसरे का सम्मान करने की अच्छी परम्परा का प्रारंभ किया। शेख इब्राहिम से ही व गुरु जी ने बाबा फरीद जी की वाणी को सुना और एकत्र किया इसके पश्चात समुद्री रास्ते से होते हुए गुरुजी इस्लाम के मुख्य केंद्र मक्का जा पहुंचे मक्का के मैं स्थित काबा को मुसलमान अल्लाह का घर समझते थे उस ओर नमाज मुंह करके नमाज पढ़ना उन का धार्मिक कर्तव्य था परंतु गुरु जी के अनुसार असीमता के मालिक ईश्वर को किसी एक विशेष दिशा एवं स्थान में बांधना असकी सर्व व्यापकता को संकीर्ण करने के समान था। एक रात गुरुजी काबा की ओर अपने चरण पसार कर लेट गए जीवन शाह नामक एक मुसलमान ने गुरुजी को काबे की और पांव पसार कर सोते देखा तो बहुत गुस्से में उनके पास आया और उनकी टांगो को खींचता हुआ बोला खुदा के घर की तरफ पांव पसार ले कर लेटने का पाप कौन सा पापी कर रहा है ? गुरु जी ने विनम्रता से कहा भाई तू मेरे पांव उस तरफ कर दे जहां खुदा का घर ना हो। इन शब्दों ने जीवन शाह के मन पर तीक्ष्ण चोट की और उसे सब तरफ काबा घूमता हुआ दिखाई दिया इसके पश्चात गुरुजी और हाजी में धर्म संवाद शुरू हुआ गुरुजी के पास रखी किताब को देखकर हाजी ने उनसे पूछा कि "हिंदू वढा कि मुसलमानोई " वस्तुतः गुरुजी से अपने धर्म का बड़प्पन सुनना चाहते थे परंतु गुरु जी ने उनको धर्मों की तुलना की जगह शुभ कर्मों अथवा आचरण को धारण करने का निर्मल उपदेश दिया। वहां से चलते समय हाजियों ने गुरुजी से उनकी खड़ाऊ की मांग की और उसे सम्मान पूर्वक अपने पास रखा। कुछ नहीं मक्का मे ठहरने के बाद गुरुजी मदीना पहुंचे और हजरत मोहम्मद साहब की मजार की तरफ चल पड़े वहां एक बैठकर उन्होंने शब्द गायन किया :

"पाताल पाताल लख आगासा आगास" जिसे सुनकर मुसलमानों के मन में हलचल पैदा हो गई क्योंकि शबद की विचारधारा इस्लाम के दर्शन के विपरीत थी। इस्लाम धर्म के अनुसार पूरी कायनात सात पाताल और सात आसमानों में फैली हुई है और सातवें आसमान पर स्वयं खुदा रहता है गुरुजी के बोल अल्लाह की बनाई कुदरत के हसीन विस्तार का एहसास कराने वाले थे। इस्लाम की विचारधारा के प्रतिकूल शबद का भाव पूछने के लिए बहुत से मुसलमान गुरुजी के लिए पास आ खड़े हुए

और कईयों ने गुस्से से भर कर पत्थर भी उठा लिए उन्हें मारने के लिए परंतु जब पीर दस्तगीर को आपने अल्लाह की सर्वव्यापक का एहसास कराया तो सभी मुसलमानों ने गुरु जी के शब्दों में विद्यमान सच्चाई को स्वीकार किया। मदीना से चलकर कहीं शहरों में होते हुए गुरुजी मुसलमानों के एक और बड़े शहर बगदाद गए। बगदाद के बाहर बैठकर आपने कीर्तन आरंभ कर दिया। वहां के पीर मुर्शिद अब्दुल रहमान ने अपने सेवक को भेजा कि गुरु जी को बता दे कि इस्लाम में संगीत और गीत वर्जित है मगर मुर्शिद तो गुरु जी की वाणी सुनकर मस्ती में आ गया और सब कुछ भूल गया बहुत से लोग भी वहां आ गए फिर अब्दुल रहमान भी आ गया और गुरुजी कीर्तन करते रहे और सब तरफ आनंद और विस्माद छा गया भाई गुरदास जी स्थिति का निरूपण करते हुए लिखते हैं

"फिर बाबा गया बगदाद में बाहर जाए किया अस्थाना।
इक बाबा अकाल रूप दूजा रबाबी मरदाना।
दिती बांग निवाज कर सुन समान होआ जहांना।
सुंन मुन्न नगरी भई देख पीर भया हैराना। "

गुरुजी बगदाद होते हुए ईरान के शहर तबरेज पहुंचे और फिर मशहद शहर जा पहुंचे जहां शिया मुसलमान खलीफा हारुण रशीद और उसके दामाद की दरगाह पर जियारत करने जाते थे गुरु जी आए और शहर के बाहर रुक गए लेकिन शहीदों की मजार पर ना गए वहां के लोगों के मन में बेचैनी थी कि कैसे पीर हैं जो शहीदों की इज्जत नहीं करते, पूछा आप हजरत मोहम्मद ने विश्वास रखते हो या हजरत अली में गुरु जी ने समझाया कि पैगंबर धरती पर लोक कल्याण के लिए आते हैं। पैगंबर के बड़प्पन पर विवाद करने की बजाय उनके पैगाम को याद रखना ज्यादा आवश्यक है। इस उदासी के मध्य गुरुजी ने मुस्लिम देशों में रहे और इस्लामी केंद्रों पर ठहरे। उनके जीवन को अपनी आंखों से देखने के बाद वे इस निर्णय पर पहुंचे की आम मुसलमान अपने वास्तविक धर्म से भटक चुके हैं केवल हज करना नमाज पढ़ना रोजे रखना ही दृष्टि में धर्म की कमाई थी। गुरु जी इसलाम के विरोधी नहीं थे बल्कि मुसलमानों द्वारा किए जा रहे खोखले कर्मकांडो का ही आपने निर्भीकता से विरोध किया जिस प्रकार हिंदुओं के कर्मकांडों का विरोध किया था।

श्री गुरु नानक देव जी ने मनुष्य के कल्याण हेतु सरल एवं सहज मार्ग का उपदेश दिया। सबसे श्रेष्ठ है "सदाचार का पालन करना" सभी धर्मो का सार यही है, क्योंकि सदाचार ही सत्य की ओर प्रेरित करता है।गुरुजी ने सामूहिक मानवीय सत्य सामाजिक परिवेश एवं प्रकृति के सार तत्व से ग्रहण किया और इस मौलिक उपदेश को उन्होंने जन जन तक चार उदासियों के द्वारा पहुंचाया। उनके इस अद्भुत लोक कल्याणकारी कार्य ने आध्यात्मिक क्षेत्र में क्रांति का कार्य किया जहां–जहां भी गुरु जी ने यात्रा है कि वहां वहां तर्क सहित आडंबर , अंधविश्वास रूढ़ियों और पाखंडों का खंडन किया। गुरुजी की इन चार यात्राओं ने चारों दिशाओं को आलोकित कर दिया जिसका प्रकाश शाश्वत है।

मध्यकालीन भारत का परिवेश और गुरु नानक

*राजबीर शर्मा

* शोधार्थी, हिन्दी विभाग, दयालबाग एजूकेशन इंस्टीट्यूट, आगरा

गुरु नानक के जन्म से पूर्व भारतवर्ष में तलवार के जोर से काम किया जाता था। ऐसे हालात में जनता की हालत क्या होगी, इसे स्वयं ही विचार का विषय बनाया जा सकता है। जब चारों ओर फूट पड़ी थी तो विदेशी शासक इस अवसर का लाभ कर्मोउठाते? यह ऋषि–मुनियों की धरती सदा से ही धर्म का पालन करते रही है, अधर्म की बातें तो सोच भी नहीं सकती। मगर यह धर्म तो भारतीय धर्म है जहां सत्य की पूजा होती है इसलिए भारत की धरती सदा से ही धर्म की धरती बनी रही है। इसने सदा संसार को धर्म–मार्ग दिखाया है, किन्तु आज जब अपने पूज्य गुरुदेव के जीवन को पढ़ते हैं तो हमें इस समय के सारे हालात को देखते हुए इतिहास की खोज करनी होगी। मुख्य रूप से हमें इस्लाम के हमलों के साथ भारत के हमलों की नींव को देखना होगा। इस विषय में हमें सईद मुहम्मद लतीफ़ की पुस्तक के ये शब्द स्पष्ट मदद करते हैं – उनका मानना है कि यह धर्म हज़रत मुहम्मद ने चलाया था जो अरब करैली कबीले से संबंध रखते हैं। उन्होंने देशवासियों को अल्लाही संदेश सुनाया। कहां कि धर्म को तलवार की शक्ति से फैलाने की आज्ञा हमें अल्लाह के घर से मिलीं है। उन्होंने कहा :– ''तलवार स्वर्ग और नरक की कूंजी है। मुस्लिमो के लिए खून की एक बूंद धर्म के लिए बहाने और रणक्षेत्र में एक रात काटनी, महीनों के रोज़े (व्रत) और नमाजों से अधिक लाभदायक है। जो मुसलमान युध्द के मैदान में मरते हैं वे सीधे स्वर्ग जाते हैं, स्वर्ग में उन्हें परिया मिलती है। वहां पर ये बहादुर सदा आनन्द का जीवन व्यतीत करते हैं, उन्हें वहां जीवन के सुख की हर चीज मिलेगी।''[1]

इतिहास के पृष्ठों पर यदि दृष्टिपात किया जाए तो हम सिकंदर लोदी सबसे आगे देखते हैं जिसने मन्दिर तुड़वाने और ब्राह्मणों को कत्ल करने में पिछले सारे रिकॉर्ड ही तोड़ दिय थे। जब अत्याचार बढ़ता है तो उसका अंत भी निश्चित ही होता है। अतः उसके अत्याचारो के कारण ही धर्म की महत्ता और अधिक बढ़ गई। साथ ही साधु–संत आगे बढ़कर धर्म का प्रचार वप् प्रसार करने लगे। इन्हीं साधु–संतों की श्रेणी में गुरु नानक देव जी आते हैं।

गुरु नानक का जन्म 15 अप्रैल 1469ई० को वैशाख शुदी 3 को तलवंडी गांव में हुआ था। किसी अज्ञात कवि के कारणवश गुरु नानक देव का जन्म उत्सव कार्तिक पूर्णिमा को मनाया जाता है। बंटवारे के कारण तलवंडी दुर्भाग्यवश पाकिस्तान में चला गया। तब से इसे ननकाना साहिब कहा जाने लगा। गुरु नानक जी के जन्म के विषय में मुसलमान दाई दौलता ने बताया यह बालक अनोखी शक्ति वाला नजर आता है। जिस समय बालक का जन्म हुआ उस समय बालक हंसा और हंसी के साथ कमरे में एकअनोखा प्रकाश दिखाई दिया। यह प्रकाश उस ज्ञान का साक्षी था जो गुरु नानक देव को ईश्वर से मिला। गुरु नानक के विषय में विद्वानों ने भविष्यवाणी की थी कि यह बालक बड़ा होकर संसार को नया मार्ग दिखाएगा उनके पुरोहित गुरुजी ने मस्तिष्क को देखकर गुरु नानक के विषय में कहा– ''इस बालक के सिर पर छात्र झूलेगा हिंदू और मुसलमान दोनों ही इसकी पूजा करेंगे यहां तक कि पशु पक्षी और प्रकृति के जड़ पदार्थ भी इसके नाम का उच्चारण करेंगे''2

जैसे–जैसे नानक बड़े होते गए उनकी बुद्धि में निखार आता गया। जब नाना पाठशाला में गए तब गुरु जी ने उन्हें पाठ पढ़ाने का प्रयत्न किया। वे उल्टे गुरु जी से प्रश्न करने लगे प्रश्न ऐसे थे जिनका उत्तर गुरुजी के पास न था। गुरु जी ने पूरा यत्न किया नानक जी को पढ़ाने का लेकिन वह स्वयं अंतर्यामी थे। पाठशाला के गुरुजी उन्हें पढ़ाते तो नानक जी उल्टा उन्हें पढ़ाना आरंभ कर देते थे। इस बालक की विचित्र आदतों के सामने पाठशाला के गुरु को हार माननी पड़ी। नानक के पिता उन्हे पढ़ा लिखा कर अच्छे कार्य में लगाना चाहते थे। मगर उनकी यह आशा बालक नानक पुरी करने को तैयार न था। बालक नानक जैसे–जैसे बड़े होते गए, उनके ज्ञान की दिव्य ज्योति और उज्ज्वल होती गई। नानक जी को फारसी और संस्कृत का अच्छा ज्ञान था। उन्होंने धर्म के बड़े–बड़े विद्वानों का डटकर सामना किया।

गुरु जी की विचारधारा से अपने देश के ही नहीं बल्कि विदेशों के लोग भी प्रभावित थे। उन्होंने विशेषकर अरब देशों का भ्रमण किया। वहां जाकर उन्हीं के धर्म के विषय में वहां के विद्वानों से खूब बहस की और ईश्वरी भक्ति के उपदेश भी दीये।नानक जी अपने पिता के आज्ञाकारी बेटे थे ।एक दिन पिता ने उनसे कहा गाय भैंस चराने खेत पर चले जाओ।वे गाय भैंस चराने खेत पर चली गये। उन्होंने गाय भैंस खेत में छोड़ दी और खुद वृक्ष के नीचे बैठकर परमात्मा की भक्ति में लीन हो गए और गाय भैंस खेत में चरती रही। एक बार जब वृक्ष की छांव में उनके ऊपर से हट गई तो काले नाग ने अपने फन से उनकी छांव कर ली।यह सब उनके गांव के

साथ के लोगों ने देखा। यह दृश्य देखकर वे सभी आश्चर्यचकित हो गये।

नानक जी स्वयं परमात्मा की एक दिव्य ज्योति थे।नानक आडंबरो घोर विरोधी थे।नानक जी की यज्ञोपवीत (जनेऊ) की रस्म थी । पंडित जी ने उन्हें मुहूर्त के समय बुलाकर जनेऊ पहनने को कहा, कि हिंदू धर्म में नवयुवक जनेऊ पहनता है। पंडित जी की यह बात सुनकर नानक जी बोले – "पुरोहित जी मैं यह जनेऊ नहीं पहनूंगा। मुझे इस कपास के धागे की कोई आवश्यकता नहीं।"3

शेख– ब्राह्मण दोनों ही गुरुनानक का विरोध करने लगे ।गुरु इन सब बातों पर ध्यान नहीं देते थे।वह जानते थे कि जिस शुभ कार्य का बीड़ा हमने उठाया है वहां रुकावटें तो आएंगी ही। इस प्रकार मध्यकालीन उत्तर भारत में सामाजिक एवं धार्मिक परिस्थिति बड़ी चिंताजनक थी।तत्कालीन परिस्थितियों को देखकर धर्म सुधारकों का एक ऐसा दल सामने आया जो समाज सुधार के लिए प्रगतिशील हुआ।15 वीं०शताब्दी के उत्तरार्ध एवं 16वीं शताब्दी के पूर्वार्ध में हिंदू धर्म में समाज सुधार की भावना तेजी से होने लगी। प्रसिद्ध इतिहासकार 'कनिंघम' ने अपने प्रसिद्ध ग्रंथ –'सिखों के इतिहास' में लिखा है– " इस प्रकार 16वीं शताब्दी के प्रारंभ में हिंदू मस्तिष्क प्रगतिहीन और स्थिर न रह सका।मुसलमानों के संघर्ष से वह उद्वेलित होकर परिवर्तित हो उठा। वहीं नवीन प्रगति के लिए उत्तेजित हो उठा रामानंद और गोरखनाथ ने धार्मिक एकता का उपदेश दिया चैतन्य ने उस धर्म काप्रतिपादन किया, जिस से जातियां सामान्य स्तर पर आई। कबीर ने मूर्ति पूजा का निषेध किया और अपना संदेश लोक भाषा में सुनाया वल्लभाचार्य ने अपने उपदेशों में भक्ति और कर्म का सामंजस्य स्थापित किया। पर वह महान सुधारक जीवन की क्षणभंगुरता से इतने अधिक प्रभावित थे कि उनकी दृष्टि में समाज उद्धार काउद्देश्य नगण्य था। उनके प्रचार का लक्ष्य केवल ब्राह्मण पर के प्रवक्ता से छुटकारा दिलाना, मूर्ति पूजा और बहुदेववाद की स्थूलता प्रदर्शित करना था ।उन्होंने वैराग्य भाव और शांत पुरुषों का पवित्र संगठन तो किया और आत्मानंद की प्राप्ति के लिए अपना सर्वस्व त्याग दिया,पर वे अपने भाइयों को सामाजिक और धार्मिक बंधनों को तोड़ने का उपदेश न दे सके। उन्होंने अपने मतों में तर्क ,–वितर्क, वाद –विवाद पर तो विशेष बल दिया, पर ऐसे उपदेश नहीं दिए, जो राष्ट्र निर्माण में बीजारोपण का कार्य कर सकें। यही कारण है कि उनके संप्रदाय विकसित न हो सके और जहां के तहां ही रह गए।"9 गुरुनानक महान देशभक्त धर्म सुधारक प्रचंड रूणि विरोधी और अद्भुत युगपुरुष थे।उनके ह्रदय में वैराग्य और भक्ति की मंदाकिनी सदैव प्रवाहित होती रहती थी।मस्तिष्क में ज्ञान और विवेक का मार्तंड हमेशा प्रवाहित होता रहता था। वह अपार दूर द्रष्टा थे।उन्होंने यह समझ लिया के वर्तमान परिस्थितियों में कौन सा धर्म भारत के लिए श्रेयस्कर होगा। इसी विचार से उन्होंने अपनी वाणी के द्वारा 'सिक्खधर्म' की स्थापना की।मध्य युग में भारत में अनेक धर्म सुधारक हुए परंतु उन्हें सफलता नहीं मिली।यह सफलता गुरु नानक देव को प्राप्त हुई।इस पर कनिंघम का कथन है – "यह सुधार के गुरु नानक के लिए अपशिष्ट था।उन्होंने सुधार के सच्चे सिद्धांतों का सूक्ष्मता से साक्षात्कार किया और ऐसे व्यापक आधार पर अपने धर्म की नींव डाली, जिसके द्वारा गुरु गोविंद सिंह जी ने अपने देशवासियों का मस्तिष्क नवीन राष्ट्रीयता से उत्तेजित कर दिया और उन सिद्धांतों को व्यवहारिक रुप दिया कि छोटी और बड़ी जाति तथा उनके धर्म समान है इसी भांति राजनीतिक सुविधाओं की प्राप्ति में भी सभी की समानता है"4

यह शब्द सुनकर सब हैरान रह गए। महता कालूराम ने जब अपने पुत्र के मुख से यह शब्द सुने तो वह सिर से पांव तक कांपने लगे। पुरोहित हरदयाल जी ने नानक से कहा––बेटा नानक जिद् न कर। यह हमारा धर्म है, जनेऊ पहनकर तुम अपने धर्म में वापस आ जाओगे। इसके बिना इंसान अछूत होता है। इसे डाल कर तुम्हें लोक परलोक में आदर –मान मिलेगा। लो इसे पहन लो इंकार न करो ।"5

इस पर नानक जी हंस पड़े और बोले यह कैसे संभव हो सकता है।यह कपास का धागा परलोक कैसे जा सकता है।यह तो शरीर के साथ ही रह जाएगा।परलोक में तो लोग कुछ भी साथ लेकर नहीं जाते। मुझे तो ऐसा धागा दो जो परलोक में मेरे साथ जाये। पंडित जी मुझे ऐसे धागे की आवश्यकता है जो न सडे, न गले, न टूटे, न जले, न मैला हो। ऐसे जनेऊ से धर्म और आत्मा को इच्छा अनुसार निभाया जा सकता है।

"दइपा कपाह सतोखु सुतु जतोगड़ी वरो एहो जनेऊ जिया
का हई ता हातो न ऐहो तुटै न मलो न ऐहो जलै न जाई
धनुसु माणस नानका जो गले चली भाई।"[6]

पंडित जी यदि आपके पास ऐसा धागा है तो मैं उसे पहन सकता हूं। यदि यह धागा टूट सकता है, गल सकता है, जल सकता है, तो मुझे क्षमा करें, मैं यह धागा नहीं पहन सकता। नानक इतनी बातें सुनकर पंडित हरदयाल निशब्द रह गए। आश्चर्य से उनकी ओर देखने लगे। वह इन बातों को उत्तर कहां से दें सकते थे।नानक जी की बातें तो इतनी महान थी कि बड़े से बड़ा विद्वान भी उनका उत्तर नहीं दे सकता था। नानक ने ऊँच –नीच,जात–पात का खंडन किया।

"नीचां अदरि नीच जाति नीची हूं अति नीच।
नामक तिनके संग साथ बडिया सूं क्या रीख।।"7

गुरुनानक सुल्तानविंड के निकट छोटे से तालाब के किनारे पहुंचे। वह बहुत साफ सुथरा था। तालाब के किनारे पर एक बेरी का वृक्ष था।जहां बैठकर गुरुजी पूजा–पाठ करते थे। जब गुरुजी वहां से चलने लगे तो मरदाने से कहा –

"यहां पर एक महापुरुष हर मंदिर स्थापित करेगा।
यहां से हर प्राणी को सुख शांति मिला करेगी"।।8

उसी ताला वाले स्थान पर आज अमृतसर में अमृतसरोवर है। जिसके बीच में ऐतिहासिक गुरुद्वारा है। जो आज भी हमें गुरुजी का अमर उपदेश सुनाता है। यहां पर लाखों यात्री आत्म सांत्वना के लिए आते हैं, सरोवर में स्नान करते हैं ।यही अमृतसर गुरु नानक की नगरी है जो हमें आज भी गुरु नानक की याद दिलाती है।गुरु नानक के कीर्तन की विशेषता थी कि उसमे जाति–पाति का कोई प्रश्न न था।ना वह किसी धर्म का विरोध करते थे ,ना ही वह किसी का बुरा कहते थे।इस संसार के लिए उनका एक उपदेश था।

"सब इंसान एक है यहां कोई न छोटा है ,न कोई बड़ा है ,ईश्वर ने सबको बराबर पैदा किया है।ईश्वर एक है ,उसका नाम लेना हर प्राणी का कर्तव्य है।"9

गुरुजी किसी भी धर्म का बुरा नहीं चाहते थे।उनका मानना था कि सभी धर्म समान है।जो सच्चे हृदय सेईश्वर की उपासना करता है,ईश्वर हमेशा उसके साथ है। यह जरुरी नहीं है कि मंदिर–मस्जिदों मे ही ईश्वर का स्मरण किया जा सकता है।ईश्वर किसी स्थान में कैद नहीं वह तो संपूर्ण संसार में विद्यमान हैं। संसार के कण–कण में ईश्वर है, रग –रग में ईश्वर है।जो जो निस्वार्थ भाव से ईश्वर की भक्ति करता है ईश्वर सदा ही उसके साथ है।

"तेरे नाम अनेका ,रूप अनता
जेता कीता, तेरा नाऊ
विरगु नावै,नाही को थाऊ।।"9

निष्कर्ष :– नानक जी ने पाखंड और बाह्यआडंबर का जोरदार खंडन किया। चाहे वह पाखंड ब्राह्मणों का हो चाहे, योगियों का, चाहे जैनियों का, चाहे मुल्लाह का हो ।उनकी मुख्य विशेषता यह थी कि वे समाज उत्थान के प्रति उदात्त विचार रखते थे। वे राष्ट्र के कमजोर पक्ष को सफल बनाने पर जोर देते थे।उन्होंने भक्ति के मार्ग को दोषों से दूर रखा। जनता में निराशाबादिता को दूर कर उसमें आशा विश्वास और पौरूषकी भावना जागृत की। निराश व्यक्तियों में यह भावना जागृत की कि उनका शरीर परमात्मा के रहने का पवित्र स्थान है। जहां परमात्मा वास करता है गुरु नानक ने परमात्मा प्राप्ति ही जीवन का परम पुरुषार्थ है जिसकी प्राप्ति कर्म ज्ञान योग और भक्ति से होती है ।इस प्रकार मध्य युग के धर्म सुधारकों में गुरु नानक देव विशिष्ट व महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं उन्होंने देशवासियों के दुखों क्लेश और पीड़ाओं, अड़चनों का व्यापक रूप से अध्ययन किया।गुरु नानक के युग की नाणी की पहचान कर तब उसका निदान किया।

सन्दर्भग्रन्थ

1. गुरु नानक देव (किशोरों के लिए),लेखक –नरेंद्र पाठक, सन्मार्ग प्रकाशन वैग्लो रोड नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या– 8–9
2. वही, पृष्ठ संख्या– 15
3. वही,पृष्ठ संख्या– 22
4. वही,पृष्ठ संख्या– 24–25
5. वही, पृष्ठ संख्या– 25
6. वही, पृष्ठ संख्या– 52
7. वही, पृष्ठ संख्या– 53
8. वही, पृष्ठ संख्या– 55
9. वही, पृष्ठ संख्या– 55
10. नानक वाणी,डाक्टर जयराम मिश्र,संपादक श्री कृष्ण दास,मित्र प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, इलाहाबाद, पृष्ठसंख्या–35

गुरु नानक देव के काव्य में मानवीय मूल्य

*डॉ. यशोदा

* दयालबाग एजूकेशन इंस्टीट्यूट, आगरा

गुरु नानक का जन्म ऐसे समय मे हुआ जब चारों ओर हफरा–तफरी मची हुई थी। देश में कोई शासक नहीं था और न ही किसी का शासन था। जिसका जहाँ मन करता था वह राजा हो जाता था या शक्तिशाली होता था वह कमजोर लोगों पर शाशन करने लगता था साथ ही उसकी इच्छानुसार कार्य करवाने लगता। ऐसे मे किसी ऐसी शक्ति का उदय होना जरूरी हो गया था जो देश को एक सही दिशा दे सकती। गुरु नामक का जन्म 15 अप्रैल 1469 ई० स०1526 को वैशाख शुदी 3 को तलवंडी गांव में हुआ था। किन्तु किसी कारणवश उनका जन्म उत्सव कार्तिक पूर्णिमा को मनाया जाता है। बंटवारे के कारण तलवंडी दुर्भाग्यवश पाकिस्तान में चला गया। तब से इसे ननकाना साहिब कहा जाने लगा। गुरु नानक जी के जन्म के विषय में मुसलमान दाई दौलता ने बताया यह बालक प्रारंभ से ही अनोखी शक्ति वाला नजर आता है क्योंकि जिस समय इसका जन्म हुआ उस समय बालक हंसी के साथ–साथ कमरे में एक अनोखा प्रकाश भी दिखाई दिया। यह प्रकाश उस ज्ञान का साक्षी था जो गुरु नानक के लिए ईश्वरीय प्रतिभा थी। इनके विषय में विद्वानों ने मार्ग दर्शक के रूप में भविष्यवाणी की तो वहीं पुरोहित गुरुजी ने मस्तिष्क को देखकर गुरु नानक के विषय में कहा– "इस बालक के सिर पर छत्र झूलेगा हिंदू और मुसलमान दोनों ही इसकी पूजा करेंगे यहां तक कि पशु पक्षी और प्रकृति के जड़ पदार्थ भी इसके नाम का उच्चारण करेंगे"1

अपने पुत्र के लिए ऐसी भविष्यवाणी किसी भी मां के लिए प्रसन्नता का विषय है। पुरोहित जी की यह भविष्यवाणी पूरे गांव में फैल गई। गांव के सभी लोग बालक के दर्शन के लिए आने लगे। धीरे–धीरे यह बात आस–पास के गांव तक पहुंच गई। जैसे–जैसे नानक बड़े होते गए उनकी बुद्धि प्रखर होती गई। उनकी प्रखर बुद्धि और विलक्षण प्रतिभा के चलते वे पाठशाला में पढते–लिखते कम थे अपितु गुरु जी से प्रश्न अधिक करते थे और प्रश्न ऐसे होते थे जिनका उत्तर गुरुजी के पास भी नहीं होता था। अतः गुरु जी ने पूरा यत्न किया नानक जी को पढ़ाने का लेकिन वह स्वयं अंतर्यामी थे। पाठशाला के गुरुजी उन्हें पढ़ाते तो नानक जी उल्टा उन्हें पढ़ाना आरंभ कर देते थे। इस बालक की विचित्र आदतों के सामने पाठशाला के गुरु को हार माननी पड़ी। नानक के पिता उन्हें पढ़ा–लिखा कर अच्छे कार्य में लगाना चाहते थे। मगर उनकी यह आशा बालक नानक पूरी करने को तैयार न थे। ये बात अलग है कि बालक नानक अपने पिता की इच्छाओं का बखूबी ख्याल रखते थे किंतु कुछ बातें जो उनके बस की नहीं थी वह उन्हें नहीं कर सकते थे। जैसे–जैसे वे बड़े होते गए, उनके ज्ञान की दिव्य ज्योति और उज्ज्वल होती गई। नानक जी को फारसी और संस्कृत का भी अच्छा ज्ञान था जिसके कारण उन्होंने धर्म के बड़े–बड़े विद्वानों का डटकर सामना किया।

गुरु जी की विचारधारा से अपने देश के ही नहीं अपितु विभिन्न विदेशों के लोग भी प्रभावित थे। गुरु नानक ने विभिन्न देशों का भ्रमण किया किंतु विशेष रूप से अरब देशों का भ्रमण किया। वहां जाकर उन्हीं के धर्म के विषय में वहां के विद्वानों से खूब बहस की और ईश्वरी भक्ति के उपदेश भी दिये। नानक जी अपने पिता के आज्ञाकारी बेटे थे। एक दिन पिता ने उनसे कहा गाय भैंस चराने खेत पर चले जाओ। वे गाय भैंस चराने खेत पर चले गये। उन्होंने गाय भैंस खेत में छोड़ दी और खुद वृक्ष के नीचे बैठकर परमात्मा की भक्ति में लीन हो गए। ढलते समय के साथ उनके ऊपर से छांव चली गई तो काले नाग ने अपने फन से उनकी छांव कर ली। अतः यह दृश्य उनके गांव के अधिकतर लोगों ने देखा। और वे सभी आश्चर्यचकित हो गये।

परमात्मा की एक दिव्य ज्योति कहे जाने वाले नानक आडंबरो के घोर विरोधी थे। नानक जी की यज्ञोपवीत (जनेऊ) की रस्म थी । पंडित जी ने उन्हें मुहूर्त के समय बुलाकर जनेऊ पहनने को कहा, कि हिंदू धर्म में नवयुवक जनेऊ पहनता है। पंडित जी की यह बात सुनकर नानक जी बोले– ''पुरोहित जी मैं यह जनेऊ नहीं पहनूंगा। मुझे इस कपास के धागे की कोई आवश्यकता नहीं।"2

उनके यह शब्द सुनकर सब हैरान रह गए। महता कालूराम ने जब अपने पुत्र के मुख से यह शब्द सुने तो वह सिर से पांव तक कांपने लगे। पुरोहित हरदयाल जी ने नानक से कहा– ''बेटा नानक जिद न कर। यह हमारा धर्म है। जनेऊ पहनकर तुम अपने धर्म में वापस आ जाओगे। इसके बिना इंसान अछूत होता है। इसे डाल कर तुम्हें लोक परलोक में आदर –मान मिलेगा। लो इसे पहन लो इंकार न करो ।"3

पिता द्वारा दी गई यातनाओं पर नानक जी हंस पड़े और बोले यह कैसे संभव हो सकता है? यह कपास का धागा परलोक कैसे जा सकता है। यह तो शरीर के साथ ही रह जाएगा। परलोक में तो लोग कुछ भी साथ लेकर नहीं जाते। मुझे तो ऐसा धागा दो, जो परलोक में मेरे साथ जाये। पंडित जी मुझे ऐसे धागे की आवश्यकता है

जो न सडे, न गले, न टूटे, न जले, न मैला हो। ऐसे जनेऊ से धर्म और आत्मा को इच्छा अनुसार निभाया जा सकता है।

"दइपा कपाह सतोखु सुतु जतोगड़ी वरो एहो जनेऊ जिया का हई ता हातो न ऐहो तुटै न मलो न ऐहो जलै न जाई धनुसु माणस नानका जो गले चली भाई।"4

पंडित जी यदि आपके पास ऐसा धागा है तो मैं उसे पहन सकता हूं। यदि यह धागा टूट सकता है, गल सकता है, जल सकता है तो मुझे क्षमा करें, मैं यह धागा नहीं पहन सकता। नानक की इतनी बातें सुनकर पंडित हरदयाल निशब्द रह गए। आश्चर्य से उनकी ओर देखने लगे। वह इन बातों का उत्तर कहां से दें सकते थे? नानक जी की बातें तो इतनी महान थी कि बड़े से बड़ा विद्वान भी उनका उत्तर नहीं दे सकता था। नानक ने ऊँच –नीच,जात–पात का खंडन किया।

"नीचां अदरि नीच जाति नीची हूं अति नीच।
नामक तिनके संग साथ बडिया सूं क्या रीख।।5

नानक जी नीची जातियों में जो नीचे हैं और उनसे भी जो नीचे नानक सदा उनके साथ हैं। उन्हे बड़ों से कुछ लेना–देना नहीं। गुरु जी अब दीन–दुखियों के साथी बन गए हैं। घर –बार से मोह त्याग दिया। वे जहां जाते वहां लोगों की भीड़ इकट्ठी हो जाती है। गुरुजी किसी धर्म –विशेष का प्रचार नहीं करते अपितु लोगों को ईश्वर–भक्ति के लिए प्रेरित करते हैं। हर इंसान को बुराई से दूर रहना चाहिए। गुरुजी के पांव जिधर पड़ते, वहीं लोगों की मंजिल बन जाती थी।

इस प्रकार गुरु नामक का अधिकतर समय साधु–संतो की सेवा मे बीतने लगा। उनके लिए वचन–विलास बढता गया कम नहीं हुआ। लोगों को उनकी ये आदतें अजीब लगती थी जिसको ईश्वर भक्ति समझ नहीं आती थी। विवाहोपरांत बहुत दिनों तक घर से बाहर रहना लोगों के लिए सोच का विषय था किंतु वे सिर्फ साधुओं की सेवाओं मे लगे रहे।

सुल्तानविंड के निकट छोटे से तालाब के किनारे पहुंचे तो वहां मरदाना नाम के व्यक्ति से मुलाकात हुई जो ख्याल बजाने मे माहिर था। एक बार नामक को एक नवाव ने अपने भण्डार को सौंप दिया। चँकि लोग उनकी विश्वशनीयता से ईर्ष्या करते थे तो उन्होंने नवाव के पास आकर कहा कि– ''आपने जो व्यक्ति भण्डार घर में लगा रखा है वह पागल है वह साधु–संतो को उसमें से अनाज बाँटता रहता है।''6

पहले तो नवाब ने नजरअंदाज किया किंतु फिर एक दिन नानक को अपने पास बुलाकर पूछा– ''क्या तुम भण्डार से अनाज साधु–संतो को बांटते हो?''7 इस पर नानक ने उत्तर दिया–

"कोई कहै भूतमा को कोई कहै बेताल।
कोई आखै आदमी नानुक बेचारा।।
भैइया, दिवाना शाह का नानुक बउराना।
हउ अरि बिनू अवरू न जाना।।8

इसके उपरांत जब गुरुजी वहां से चलने लगे तो मरदाने से कहा –

"यहां पर एक महापुरुष हर मंदिर स्थापित करेगा।
यहां से हर प्राणी को सुख शांति मिला करेगी"।।9

उसी ताला वाले स्थान पर आज अमृतसर में अमृतसरोवर है। जिसके बीच में ऐतिहासिक गुरुद्वारा है। जो आज भी हमें गुरुजी का अमर उपदेश सुनाता है। यहां पर लाखों यात्री आत्म सांत्वना के लिए आते हैं, सरोवर में स्नान करते हैं। यही अमृतसर गुरु नानक की नगरी है जो हमें आज भी गुरु नानक की याद दिलाती है। गुरु नानक के कीर्तन की विशेषता थी कि उसमे जाति–पाति, ऊँच–नीच जैसी कोई बात नहीं थी वे कहते थे– "सब इंसान एक है यहां कोई न छोटा है ,न कोई बड़ा है ,ईश्वर ने सबको बराबर पैदा किया है।''10

गुरुजी किसी भी धर्म की निंदा नहीं की अपितु वह सर्व धर्म समान सममते थे। सच्चे हृदय से ईश्वर की उपासना करता थे। उनका मानना था कि ईश्वर स्मरण के लिए आंतरिक अनुभूति की आवश्यकता होती है किसी मंदिर या मस्जिद की नहीं।

इस बात से शेख– ब्राह्मण दोनों ही गुरुनानक का विरोध करने लगे। गुरु इन सब बातों पर ध्यान नहीं दिया क्योंकि उनको पहले ही इसका भान था कि इस कार्य मे रुकावटें तो आएंगी ही। इस प्रकार मध्यकालीन उत्तर भारत में सामाजिक एवं धार्मिक परिस्थिति बड़ी चिंताजनक थी। तत्कालीन परिस्थितियों को देखकर धर्म सुधारकों का एक ऐसा दल सामने आया जो समाज सुधार के लिए प्रगतिशील हुआ। जो नामक के लिए एक सुखद आत्मिक अनुभूति थी।

गुरुनानक महान देशभक्त, धर्म सुधारक, प्रचंड रूणि–विरोधी और अद्भुत युगपुरुष थे।उनके हृदय में वैराग्य और भक्ति की मंदाकिनी सदैव प्रवाहित होती रहती थी। मस्तिष्क में ज्ञान और विवेक का मार्तंड हमेशा प्रवाहित होता रहता था। वह अपार दूर द्रष्टा थे।उन्होंने यह समझ लिया के वर्तमान परिस्थितियों में कौन–सा धर्म भारत के लिए श्रेयस्कर होगा। इसी विचार से उन्होंने अपनी वाणी के द्वारा 'सिक्खधर्म' की स्थापना की। मध्य युग में भारत में अनेक धर्म सुधारक हुए परंतु उन्हें सफलता नहीं मिली। यह सफलता गुरु नानक देव को प्राप्त हुई।इस पर कनिंघम का कथन है – "यह सुधार के गुरु नानक के लिए अपशिष्ट था।उन्होंने सुधार के सच्चे सिद्धांतों का सूक्ष्मता से साक्षात्कार किया और ऐसे व्यापक आधार पर अपने धर्म की नींव डाली, जिसके द्वारा गुरु गोविंद सिंह जी ने अपने देशवासियों का मस्तिष्क नवीन राष्ट्रीयता से उत्तेजित कर दिया और उन सिद्धांतों को व्यवहारिक रुप दिया कि छोटी और बड़ी जाति तथा उनके धर्म समान है इसी भांति राजनीतिक सुविधाओं की प्राप्ति में भी सभी की समानता है।"11

निष्कर्ष– गुरुनानक ने पाखंड और बाह्यआडंबर का जमकर विरोध किया था। फिर वह पाखंड ब्राह्मणों का हो, योगियों का हो, जैनियों का हो या फिर मसलमानों ही क्यों न हो। उनके व्यक्तित्व की मुख्य विशेषता यह थी कि वे समाज उत्थान के प्रति उदात्त विचार रखते थे। वे राष्ट्र के कमजोर और निर्बल पक्ष को सफल बनाने पर जोर देते थे। जनता में निराशाबादिता को दूर कर उसमें आशा विश्वास और पौरूष की भावना जागृत की। निराश व्यक्तियों में यह भावना जागृत की, कि उनका शरीर परमात्मा के रहने का पवित्र स्थान है जहां परमात्मा वास करता है। गुरु नानक ने परमात्मा प्राप्ति ही जीवन का परम पुरुषार्थ है जिसकी प्राप्ति कर्म ज्ञान योग और भक्ति से होती है। इस प्रकार मध्य युग के धर्म सुधारकों में गुरु नानक देव विशिष्ट व महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं उन्होंने

देशवासियों के दुखों क्लेश और पीड़ाओं, अड़चनों का व्यापक रूप से अध्ययन किया। इस प्रकार गुरु नानक के मानवीय मूल्यों का चित्रण हमें उनके सम्पूर्ण काव्य में मिलता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. गुरु नानक देव (किशोरों के लिए),लेखक –नरेंद्र पाठक ,सन्मान प्रकाशन वैग्लो रोड नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या– 15
2. वही, पृष्ठ संख्या– 22
3. वही,पृष्ठ संख्या– 24–25
4. वही,पृष्ठ संख्या– 25
5. वही, पृष्ठ संख्या– 52
6. वही, पृष्ठ संख्या– 40
7. वही, पृष्ठ संख्या– 40
8. वही, पृष्ठ संख्या– 41
9. वही, पृष्ठ संख्या– 53
10. वही, पृष्ठ संख्या– 55
11. नानक वाणी,डाक्टर जयराम मिश्र,संपादक श्री कृष्ण दास,मित्र प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड इलाहाबाद,पृष्ठसंख्या– 36

एकता के प्रतीक गुरु नानक

*प्रियंका कुमारी

* शोधार्थी, जामिया मिल्लिया इस्लामिया, नई दिल्ली

अव्वल अल्लाह नुर उपाया ,कुदरत के सब बंदे।
एक जग से सब उपजया कौन भले कौन मंदे

भारत महान धर्मो और संस्कृतियों की भूमि है। यहाँ गौरवमयी मातृभूमि में इतिहास ने कई संस्कृतियों का समागम और मानव ह्रदय के मधुरता का संयोग देखा है। यहाँ राम, कृष्ण, बुद्ध, नानक एवं महान भक्त और दार्शनिक जैसे इन गुणियों की भूमि पर दैविक ज्ञान और धर्मनिरपेक्ष चित्त दोनों का ही महत्वपूर्ण योगदान रहा है। भारतीय सभ्यता एक प्राचीन सभ्यता है। इसको कई स्तर पर देखा और समझा जा सकता है। लेकिन पूर्ण रुप से भारतीय संस्कृति एक यौगिक संयोजन है। लेकिन आज भी इतिहास में चल रहें इतनी उथल–पुथल के बावजूद भी ऐसे कई पहलू है जहाँ पर समता और मिलाप का विस्तार है।

एशिया आज संस्कृति के एक बहुत ही जटिल संकट स्थिति में है। यूरोप और अमेरिका और आस्ट्रेलिया जैसी स्थिति से गुजर रहे हैं लेकिन एफ्रो एशियाई राष्ट्रों का सामना दो प्रगतिशील पहलुओं से हो रहा है। एक है आध्यात्मिक और दूसरा है औद्योगिक। विकसित महाद्वीपों की समस्या सिर्फ आध्यात्मिक है वास्तव में हमारे दुनिया को आध्यात्मिक पुर्ननिर्माण की जरुरत है। नैतिकता तभी बनी रह सकती है जब आध्यात्म के वातावरण में सांस लेगी नैतिकता के बिना आध्यातिमकता एक बंजर भूमि के समान है।

दुनिया के विकिसित महाद्वीप सविज्ञान ,उद्योग और तकनीक के क्षेत्र में क्रांति पर क्रांतिं का अनुभव ले रहे हैं लेकिन वे अपने भावनात्मक और मनोवैज्ञानिक समस्याओं का समाधान ढूढ़ने में असफल है। उनकी ये एकतरफा सांसारिक विकास न केवल उन्हे हानि पहुँचा रही है बल्कि साथ–साथ पिछड़े महाद्विपों को भी अपना निशाना बना रही है।मानव जाति को कुछ एक क्षण के लिए रुक कर अपने समान्य और संगठित नियति के बारे में सोचना चाहिए। कई लोगों के मतानुसार विश्व के आध्यात्मिक पुनर्निर्माण में भारत एक प्रमुख भूमिका निभा सकता है। आध्यात्मिक नेतृत्व राजनीतिक और आर्थिक नेतृत्व की तरह नहीं है। त्याग, सत्य के लिए प्रेम, मानसिक खुलापन, दया भावना त्याग और दृष्टिकोण मनुष्य के आध्यात्मिक पुनर्निमाण के लिए बहुत ही जरूरी है। भारत के पास महान पारंपरिक धार्मिक और सांस्कृतिक संपदा है। अगर हम आध्यात्म की इस अकूट संपदा की खोज में सब्र के साथ काम करें तो हम इस आध्यात्मिक क्षमता की अथाह संपदा को पा सकते हैं। एक सच्छा धर्म कभी भी अलगाववादी और दोमुहा नहीं हो सकता। हमें अपने जीवन के हर क्षेत्र में नैतिकता और आध्यात्मिकता को प्राप्त करने की कोशिश करनी चाहिए।

हमें गुरुनानक के जीवन और दीक्षा को इसी संदर्भ में पढ़ना चाहिए। भारत का सौभाग्य रहा है कि वह अपने पतन के समय भी उसके साथ इन महान संतों का नाम जुड़ा रहा। यह कहना अतिश्योक्ति नहीं होगी कि अगर भारतीय इन महान संतों के द्वारा दिए गए संदेशों को समझ जाते तो 19वीं और 20वीं शताब्दी में हुई तबाही को रोका जा सकता था और अभी भी देर नहीं हुई है। अगर हम हजरत मुईनुद्दिन अजमीरी, हजरत बाबा फरिदगंज शकार और गुरु नानक जैसे गुणियों को पढ़े तो हम पाएंगे कि हमारे ह्रदय और मन के घाव भर जाते हैं और हम एकबार फिर अपने आध्यात्मिक गौरव को पाने में सक्षम हो जाएंगे।

गुरुनानक के जन्म पर कहा गयाः

सद गुरुनानक आ चुके हैं,
लो! कोहरा छंट चुका है,
विश्व प्रकाशमय हो चुका है।
सूर्योदय हो चुका है,
तारे गाय़ब हो गए हैं,
अंधकार प्रकाश में बदल गया है।
(भाई गुरुदास)

यद्यपि उनके पिता मेहता कालू एक हिंदू परिवार से संबंध रखते थे जो वेदी क्षत्री थे। इस महान गुरु के मुस्लिम संतों से भी बहुत अच्छे संबंध रहे हैं। उन्होंने खुब यात्राएँ की है। वह पैगंबर मोहम्मद की भूमि मक्का मदीना गए हैं और बुद्ध की धरती बिहार की भी यात्रा की है।

पैगंबर और संत इस धरती पर दो कार्यों को संपूर्ण करने के लिए आएं। उन्होंने परमेश्वर और जीव के प्रति विश्वास और आस्था की बात की और मनुष्य और ईश्वर के बीच एक संबंध स्थापित किया। जब यह आधारभूत कार्य खत्म हुए तब मनुष्य की आत्मा के शुद्धिकरण आसान हो गया। फिर उन्होंने समाज के शुद्धिकरण का कार्य प्रारंभ किया। वह समाज जो मनुष्य की आत्मा और शरीर का मेल है। एक व्यक्ति की आत्मा का शुद्धिकरण पैगंबर और संतों के लिए बहुत ही जरूरी है। एक व्यक्ति ही समाज का निर्माण करता है। व्यक्ति का शुद्धिकरण ही समाज का शुद्धिकरण है। आत्मा की पवित्रता अच्छे आचरण का सृजण करती है। मनुष्य का आचरण अगर सत्य के पथ से निर्मित है तो उसका परिणाम आत्मा की शुद्धता है और धीरे धीरे यह शुद्धता आध्यात्मिक पराकाष्ठा

की ओर अग्रसर होती है। गुरुनानक एक महान संत थे। वह इस विश्व में मनुष्य की आत्मा को शुद्ध करने और मानवता को आध्यात्मिक पराकाष्ठा की ओर ले जाने के लिए आए थे।

भारत में लोगों ने कृष्ण की उन्नत दीक्षा को और बुद्ध के शांतिप्रिय सिद्धांतों को समय के साथ भुला दिया। हजरत मोहम्मद के संदेशों और दीक्षाओं को भी भुला दिया गया और गलत अर्थ निकाला गया और जेहाद के दर्शन को ज्यादातर मुस्लिम समुदायों ने ग़लत समझा। सांसारिकता, भौतिकता और आचरण का दोहरापन, अल्पज्ञता और टुटपूँजिएपन यही प्रचलन में थे। गुरुनानक कहते हैः

"झूठ अंधकार के सबसे अंधकारमय निशा की तरह है,
सत्य की चन्द्रमा हर जगह व्याप्त है।
मैं खुद इसे खोजने की कोशिश की लेकिन,
समय के इस अंधकार में,
सत्य का मार्ग नहीं दिख रहा है।
अंहकार में दुनिया अनंत कष्टों को सह रही है,
इसको कैसे बचाया जाएगा, नानक ने कहा।"

भारतीय समाज अपने पतन के साथ अपने आध्यात्मिक बंधन को खोता गया। सामंतवाद प्रचलन में था। अज्ञानता और अंधविश्वास जारी था, जाति व्यवस्था की रूढ़ता और अन्याय समाज को धीरे धीरे निगल रही थी। जाति, सम्प्रदाय और धर्म की गलत अवधारणा भारतीय जनमानस को बांट रही थी। इस त्रासदी का सबसे खराब हिस्सा यह रहा कि ह्रदय की पवित्रता धर्म के आधार मूल्यों में से एक नहीं रही। हिंदू और मुस्लिम सम्प्रदायों ने खुद को वर्गों में बांट लिया और अपने– अपने तौर तरीके, रीति–रिवाज सतही समारोहों में तल्लिन हो गए। सतही वाचिक और जीवन रहित धार्मिक सूत्रों को दोहराने में लग गए और इस तरह से वे धर्म के वास्तविक तात्पर्य से विमुख हो गए और पाखण्ड पूरे देश में फैल गया।

ईश्वर दयावान था और उसने कई सारे संतों, सुफियों को मानवता को सच्चे मार्ग पर लाने के लिए भारत में भेजा। गुरु नानक कहते हैः "जो लोग गलत तरीके से जुटाए गए संपदा को रखे हुए हैं दान नहीं देते हैं। कोई भी पवित्र ग्रन्थों का अनुसरण नहीं करता है। धुर्तता हर जगह फैली हुई है। झूठ उनकी संपत्ति और वे झूठ का ही व्यापार करते हैं।"

गुरुनानक द्वारा दिए गए शिक्षा और संदेश आज भी जीवित है। आध्यात्मिक संपोषण या आचरण के निर्माण के लिए उनके द्वारा दिए गए संदेश महान स्त्रोत है। गुरुनानक ने स्वरूप, आयोजन और वर्ग विशिष्टता का विरोध किया है। उन्होंने ह्रदय, आत्मा और मन की पवित्रता पर जोर दिया है। कृष्ण ने कहा कि "जब–जब धर्म की हानी होती है और चारो ओर पाप बढ़ जाता है तो धर्म की रक्षा के लिए, पाप के नाश के लिए धर्म को पुनर्स्थापित करने के लिए मैं जन्म लेता हूँ, ओ पार्थ"(भगवतगीता व्याख्या–4,7और 8)

इसमें कोई दो राय नहीं है कि गुरुनानक चिरकालिक आध्यात्मिक पुनर्जागरण के प्रतीक रुप थे। उन्होंने हर क्षेत्र से आने वाले इतिहास के पैंगबरों को पहचाना और सत्य का संदेश दिया जो लोगों के लिए ही नहीं संपूर्ण संसार के लिए महत्पूर्ण साबित हुआ। गुरुनानक के आध्यात्मिक गौरव को गाते हुए कवि इकबाल ने लिखा है कि..

"बुद्ध–कादा–फिर– बाद –मुदत्त दृके मगर रोशन हुआ,
नूर इब्राहिम से आजाद का घर रोशन हुआ,
फिर उठी आखिर सदा तोहिद की पंजाब से ,
हिंद को एक मर्द–ए कामिल ने जगाया ख्वाब से"

(काफी समय बाद मंदिर रोशनी से भरा हुआ है इब्राहिम का नूर आजर के घर में है। आखिरकार अद्वेतवाद पंजाब से शुरु हो गया, सोया हुआ भारत अपनी गहरी निद्रा से जाग गया) – बंग–ए–दरा

गुरुनानक ईश्वर के एकता में सत्य के समर्थक थे उनका विश्वास गहरे अनुभव,ध्यान और रहस्य उद्घाटन में था। वो ईश्वर में विश्वास ही नहीं करते थे बल्कि वो उन्हे प्रेम भी करते थे। गुरु नानक ने कहा कि प्रेम और विश्वास ही मानव जाति के मोक्ष का द्वार है। प्रेम और विश्वास ही मानव के शरीर को स्वच्छ रखता है और उसके भीतर बसे पाप को नष्ट करता है। ईश्वर के प्रति प्रेम और विश्वास आध्यातिमकता का शीर्ष है और नैतिकता का आधार ...

नाम लिखो ,गुनगान लिखो;
लिखो अनंत और असिमीतता
लिखो बाबा ,लिखो और जानो कैसे लिखते है

ऐसा क्यों होता है कि "हमारी लेखनी के वजह से हमारी आत्मा कष्ट भोगती है। ये तो एक रोशनी की तरह होनी चाहिए यहाँ तो इसका सम्मान होना चाहिए ,इसे तो खुश और परिपूर्ण होना चाहिए इसे चुना जाना चाहिए, ऐसे ही मन में सतनाम का निवास होता है। ईश्वर की दया से इसकी प्राप्ति होती है इसके अलावा सबकुछ निरर्थक होता है।" (श्रीराग,एम.आई,एस एच.6)

गुरुग्रंथ साहिब की दीक्षा अप्रदूषित सत्य, अद्वैतवाद और उच्चत्तम ब्रहमचर्य से बनी है। गुरुनानक ने कभी भी दुनिया में ब्रहमचर्य और पूर्ण एकांकीपन के विचार का समर्थन नहीं किया। उन्होंने संसार में रहते हुए एक शुद्ध और सत्य जीवन की बात कही। उन्होंने सुल्तान पुर में नबाब दोलत खान लोदी के मोदी खान में लम्बे समय तक काम किया। वहाँ पर वो एक ईमानदार और काबिल व्यक्ति साबित हुए। उन्होंने अपने कमाई का एक बड़ा हिस्सा दान–पुण्य और जरुरतमंद लोगों के मदद में लगाया। उनकी सादी हुई ओर बच्चे भी हुए उन्होंने गरीमापूर्ण वैवाहिक जीवन बिताया उत्तर से लेकर दक्षिण, दक्षिण से लेकर पश्चिम तक अपने भीतर जल रहे आध्यात्मिक लौ के उद्धेश्य को यात्राओं के माध्यम से पहुँचाते रहें। जैसे की हर महान आत्माओं के साथ है गुरुनानक ने भी ईश्वर के प्रताप का अनुभव किया ईश्वर उन्हें संदेश देते हुए कहते हैं कि .....कोमा आप आंमत्रित हैं ओ नानक जिसने आपको अपने नाम के भीतर समाहित कर लिया है तुम उठो और जाओ उस कार्यो को पूर्ण करो जिनके लिए तुम्हारा जन्म हुआ। जाओ प्रेम और आस्था का सतनाम के लिए प्रचार दृ प्रसार करो और इस धरती पर पड़े अज्ञानता रुपी धूल को कम करो। जाओ ईश्वर के नाम के गौरव का विस्तार करो और पाखंड को खत्म करो। (वर–मांच.एम आई,27)

गुरुनानक ने मूर्तिपूजा निष्प्राण कर्मकांड और सतही धार्मिकता को नापसंद किया उन्होंने मूर्ति पूजा और अनेतिकता के खिलाफ एक शांतिपूर्ण और आध्यात्मिक

युद्ध छेड़ दिया उन्होंने ईश्वर से जनमानस को प्रकाशित करने की प्रार्थना की और जहाँ भी गए उन्होंने ईश्वर का गुनगान किया।

गुरुनानक हिन्दु मुस्लिम एकता के प्रतीक थे पर उनके कार्य–शेली आध्यात्मिक थी उन्होंने अपने दीक्षा में कृष्ण के बुद्ध के और हजरत मोहम्मद के बताए गए सत्य की खोज की। वो हमेंसा ही मुस्मिम प्रकारों और सूफी संतो के साथ मित्रवत रहें। भाई मर्दाना एक मुस्लिम होते हुए भी उनके साथ हर यात्रा में बने रहें।बाबा फरीद के पद और इनके अलावा मुस्लिम दैविक पद गुरुग्रथ साहिब में एक महत्वपूर्ण स्थान पाते हैं। उनकी हमेंसा से ही मुस्लिम संतों से धर्मिक चर्चाएँ होती रहीं और उनके और उनके मुस्लिम संतों के बीच में एक सहज विचारो का आदान–प्रदान बना रहा। उन लोगों की तरह नानक ने भी ईश्वर की एकरुपता की बात की महिलाओं के बीच प्रेम और एकता की बात की गुरुनानक ने कहा. "एक सच्चे मुसलमान होना बहुत ही कठिन है। आपको मुसलमान कहने से पहले हमें कुछ खूबियों को अपने भीतर आत्मसात करना जरुरी है। सबसे पहले अपने विश्वास के प्रति प्रेम करके और धन के प्रति अहम को छोड़कर। विनम्र होने के साथ–साथ धर्म लेकिन जीवन के विषय को लेकर मजबूत। ईश्वर के प्रति सब्र के साथ समर्पन , उसमें विश्वास और उसके भीतर खुद को समर्पित कर देने की भावना। समस्त प्रणियों के प्रति सद्भावना इन सबको अपनाने के बाद हम अपने आप को मुसलमान कह सकते हैं।" (वर–मॉंझ एम ,आइ, एस एच 8.1)

गुरुनानक ने हिन्दु मुसलमान दोनों की निंदा की उन्होंने मुसलमानों से शरीयत और कलमा का पुरी इमानदारी से अनुसरण करने को कहा और उन्होंने हिन्दुओ से भी धर्म को सहज रुप से समझने और उसका पालन करने की अपील की ..

आस्थावान वाद्ययंत्र बजाते हैं और गुरु नृत्य में तल्लीन है उनके पैर सिर और माथा एक धुन में रमें हुए है। उनकी तल्लीनता उनके ईश्वर के प्रति प्रेम को नहीं दर्शाती है और न ही उन्हे ईश्वर से भय करने वाली बनाती है। ईश्वर से भय और प्रेम ढ़ढ़ ह्दय के भीतर एक साथ निवास करते है। (आसदीवर,एस एच.5.2)

इस्लाम में एहमदिया धारा के जनक, कादिया के हजरत मिर्जा गुलाम अहमद गुरुनानक को एक महान आध्यात्मिक व्यक्तित्व के तरह मानते है। उनके अनुसार गुरुग्रँथ की दीक्षा और कुरान के सुआ और पवित्र पदों को एक माला में पिरो कर गुरुनानक के चोले में बाँध दिया है। और जन्मसाखि के माध्यम से गुरुनानक की आध्यात्मिक शीर्षता और महानता को साबित करते है। हजरत मकदून रुक्नोदिन के साथ विमर्श से पवित्र कुरान के प्रति गुरु का प्रेम पता चलता है। उन्होंने प्रार्थनाओं और धार्मिक यज्ञों और रहस्य उद्‌घाटन में यकीन किया।

ये एक ऐसा संदेश था गुरुनानक के द्वारा विश्वास को आधार बना कर मुस्लिमों के द्वारा स्थापित किया गया था। अमृतसर का स्वर्ण मंदिर का आधार भूत मुस्लिम हजरत मिया मिर के द्वारा स्थापित किया गया।

गुरुनानक के जीवन काल की घटनाएँ जन्म साक्ष्यों से पता चलता है कि इन घटनाओं ने सिख धर्म के शुरुआत और विश्वास में अहम योगदान दि। आगर हम सभी सेख सज्जन की तरह अपने आप को सैतान से संत में तब्दील कर लें और गुरुनानक के शिष्य बन जाएं तो भारत के उत्थान में बहुत आसानी हो जाएगी।

हमारे लिए गुरुनानक के पवित्र जीवन को और उनके अद्वेतवाद के दीक्षा को समझना बहुत आसान हो जाता है। ईश्वर के कई नामों के साथ उसके एक होने के ढ़ड़ और जीवंत विश्वास को ही उसकी विविधता माना जाता है भारत में सांस्कृतिक एकता एक ऐसी विविधता का समागम है जिसका विस्तार भारत , एशिया के साथ–साथ पुरे विश्व में हुआ। हम सभी को महान संतों और पैगम्बरों के द्वारा दी गई शिक्षा में न केवल विश्वास करना चाहिए बल्कि उसे व्यवहार में भी लाना चाहिए यहि राष्ट्र की एकता के साथ–साथ विश्व की एकता का आधार है।

"जैसे पवित्र वो थे, वैसे ही पवित्रता की शिक्षा दी , जैसे प्यारे वो थे वैसे ही प्रेम की शिक्षा दी जैसे विनम्र वे थे वैसे ही विनम्रता की शिक्षा दी(गुरुनानक एक व्यक्ति के रुप में, हरवंश सिंह शान)

गुरुनानक जी की वाणी में ज्ञान, कर्म एवं राजयोग की त्रिवेणी

*आदित्य नाथ तिवारी

* हिन्दी विभाग

समाज के विकास क्रम में अवधारणाएं एवं परिभाषाएं बनती बदलती रहती हैं। इन्हीं अवधारणाओं से विचार का मूर्त रूप निर्मित होता है। यह विचार धीरे –धीरे सामाजिक संस्कार बन जाते हैं। संस्कृति निर्माण एवं व्यक्ति निर्माण में इन सामाजिक संस्कारों की अहम् भूमिका होती है। जब यही संस्कार स्वीकृत रूप से पीढ़ियों में स्थानांतरित होने लगते हैं तो परंपरा का विकसित रूप दिखाई देता है। प्रत्येक पीढ़ी का कर्त्तव्य है की सामाजिक संस्कारों में आने वाली परम्परा और रूढ़ि की पहचान करें और अपनी चेतना, विवेक से उसे अलग करें। परम्परा में जब निरंतरता आती है तभी आधुनिकता का प्रवाह बनता है। परम्परा + निरंतरता = आधुनिकता। परन्तु जब यही परंपरा समयानुसार देश, काल, स्थान के अनुसार परिवर्तित नहीं होती तो वह जड़ हो जाती है जिसे रूढ़ि कहते हैं। जब परंपरा में एकाधिकार या वर्चश्व के कारण स्थिरता आ जाती है तब रूढ़ि की भावना जनमानस की मानसिकता को कुंद कर देती है। परंपरा + स्थिरता(वर्चस्व) = रूढ़ि।

परन्तु जहाँ रूढ़ि को ही परम्परा मान लिया जाए तो फिर कर्मकांड, अंधविश्वास, अंधश्रद्धा, आडम्बर आदि का स्वरुप फैलने लगता है। भारतवर्ष में 15 वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में यही रूढ़िगत अवधारणाएं समाज ढो रहा था। कोई ज्ञान से, कोई कर्मकांड से, सभी अलग–अलग यंत्र – तंत्र से समाज को डरा रहे थे और अंधकार की ओर ले जा रहे थे। यह समय भारत में सांस्कृतिक संक्रमण का था। जहाँ एक ओर आम जनमानस बाह्य आक्रमण से शोषण का शिकार था तो दूसरी ओर आतंरिक शोषण से। गुरु नानक जी मध्यकालीन विकृतियों एवं अमानवीय आचरण को उजागर करते हुए कहतें हैं – "सत्य का अंत हो गया है , झूठ का चारों ओर विस्तार है। लोभ राजा है और पाप उसका मंत्री, झूठ सेनापति है और काम नायक है। प्रजा अंधी और ज्ञान विहीन है। वह मुर्दों की तरह कर भर रही है। शासक गण कसाई बन गए हैं। बेरहमी की छुरी उनके हाथ में हैं धर्म पंख लगाकर उड़ गया है। चारों ओर झूठ की काली अमावस छाई हुई है उसमें सच्चाई का चन्द्रमा कहीं नहीं दिखाई देता है "

सचि कालु कूडू वरतिआ कलख बेताल ,
लबु पापु दुइ राजा महता कुडू होआ सिकदारु
कामु नेबु सदि पूछिए बहि बहि करे बीचारु
अंधी रयति गियान बिहूणी भाहि भरे मुरदारु
(आसा दी वार म। 1 पृ।468 दृ 469)
कलि काती राजे कासाई धरमु पंख करि उडरिया
कुडू अमावस संचु चन्द्रमा दीसै नाही कह चड़िआ।[1]

ऐसे समाज में जब सारी अवधारणाएं एवं परिभा"ाएं गड़बड़ा गयी हों, समाज में जहाँ चारों तरफ भय, हिंसा और भयावह हानि की स्थितियां हों वहां गुरु जी की वाणी किस प्रकार अपनी भूमिका निभाती है ; यह अन्वे"ाण का प्रष्न है। इस अन्वे"ाण में अनेक प्रष्न हमारे सामने आते हैं– नानक जी ने किस प्रकार तत्कालीन सामाजिक एवं राजनीतिक समस्याओं का व्यावहारिक समाधान प्रस्तुत किया। यह व्यावहारिक समाधान क्या हैं ? नानक जी की वाणी में योगी कौन है ? इसमें निहित मुक्ति की क्या संकल्पना है ? इसमें कौन धर्म का सार्थक अनुयायी है ? यह सभी प्रष्न गुरु जी की वाणी के प्रति जिज्ञासा तो उत्पन्न करते ही हैं साथ ही इस संकल्पना की ओर भी ध्यान आकृश्ट करते हैं जो निम्न आरेख द्वारा प्रदर्षित है– नानक वाणी में जीवन का आधार 'षब्द सूर– कर्मन का सूर' को माना गया है। अर्थात जीवन में वचन का पालन करने वाले वीर एवं कर्त्तव्य का पालन करने वाले वीर ही सामाजिक आदर्ष हो सकते हैं। इस आदर्ष को प्राप्त करने वाला ही योगी हो सकता है। वाणी में तीन तरह के योगियों की चर्चा की गयी है ज्ञानजोगी, कर्मयोगी, राजयोगी।[2]

किरत कमाई

नानक वाणी में उद्यम करने वाले को कर्मयोगी कहा गया है। गुरु नानक जी स्वयं जीवन में व्यावसायिक कार्यों में संलग्न रहते थे साथ ही उद्यम को बढ़ावा देते थे। इसके माध्यम से गुरु जी ने पहली बार योगी की परिभा"ाा ही बदल दी। योगी वह नहीं है जो जीवन की सारी समस्याओं से दूर एकांत को प्राप्त करता है और भोजन के लिए गृहस्थों पर आश्रित रहता है साथ ही गृहस्थ धर्म की आलोचना भी करता है। बल्कि योगी वह है जो उद्यम कर अर्जन करता है। अपनी सभी सामाजिक एवं पारिवारिक आवष्यक्ताओं को पूरा करता है इसके साथ ही प्रभु स्मरण करता है वही सच्चा योगी है

तत्कालीन समाज में योगियों पर गुरु जी कहते हैं "

जोगी बसि रहहु दुबिधा दुखु भागै
धरि धरि मांगत लाज न लागै आदि ग्रन्थ (पृ– 903)

अर्थात हे योगी ! तुम ईश्वर से एकाकार होने का दावा करते हो और तुम्हें कोई चिंता व क"ट नहीं है तो क्या तुम्हें बिक्षा के लिए दर दर की ठोकरें खाते लाज नहीं आती)। गुरु जी को अपनी तीसरी भारत यात्रा के दौरान योगियों से संवाद करने का अवसर मिला। तिब्बत की यात्रा के दौरान योगियों से संवाद का वर्णन मिलता है

गृहस्थ जीवन के महत्व को गुरु जी ने इस प्रकार बताया है –

पुत्र कलत्र विचे गति पाई
गृहु बनु समसरि सहजि सुभाइ

वाणी में जीवन मुक्ति का स्वरूप एक ही है की जीवन को सम्पूर्णता में जीना ही कर्मयोगी का लक्षण है।

नाम स्मरण (ज्ञान योगी)

भारतीय संस्कृति की परम्परा में 'ाब्द ब्रह्म की अवधारणा विद्यमान रही है। 'ाब्द से ही सृ"िट का कण – कण सम्बद्ध है। इस परम्परा का व्यापक प्रसार नानक वाणी का आधार है। वाणी में मूर्तिपूजा अर्थात धर्म के वाह्य स्वरुप से निकल कर, नाम स्मरण अर्थात मनु"य की आंतरिक चेतना को उदबुद्ध किया गया है। स्वयं को जाने बिना जगत सत्य प्राप्त नहीं हो सकता। इसीलिए नानक वाणी में आत्मज्ञान एवं आत्मचिंतन को नाम स्मरण के माध्यम से प्राप्त करने का मार्ग सुझाया गया है ज्ञान के चार स्वरुप निम्न हैं।

पहला, नाम स्मरण – *'सुख सहजे जपि रिदै मुरारी / नामि रते सदा तपु होइ।* जो सदा अपने ह्रदय में नाम प्रेम की ज्योति जलाए रहते हैं – वे पूर्ण शांति और आनंद का उपभोग करते हैं। नाम जपना वास्तव में आतंरिक सुदृढ़ता एवं आत्मविश्वास से भरे होने का प्रतीक है। स्वयं को जाने बिना जगत से जुड़ना श्रेयस्कर नहीं है।

दूसरा चरण अंतर प्रकाश का है। *' सब कुछ घर में बाहर नाहीं, जो बाहर ढूंढें सो भरम भुलाई'*

डॉ. सीताराम बाहरी कहते हैं " गुरु नानक ने सहज योग को सामान्य , स्वाभाविक और व्यावहारिक जीवन स्वीकार किया है, जिससे मानसिक संतुलन और सामाजिक समता प्राप्त होती है।[3]

तीसरा चरण 'स्थित प्रज्ञ' रूप है जो गुरुमुख को प्राप्त होता है और चौथे चरण में जीते जी ही मनुष्य जीवन मुक्त हो जाता है। वास्तव में यह संकल्पना जीवन को साधारण से असाधारण की ओर ले जाने का मार्ग है। कोई भी व्यक्ति इस मार्ग पर चलकर जीवन मुक्त हो सकता है उसके लिए किसी आडम्बर और विशेष क्रियाकलाप करने की कोई आवश्यकता नहीं है।यही कारण है कि डॉ। गुरुमीत सिंह अपने लेख " वैदिक धर्म और गुरु नानक बानी में उक्त पंक्ति को रेखांकित करते हैं–

"एकम एकंकारु निराला "
अमरु अजोनी जाति न जाला"

सभी धर्म एक से हैं। एक परमात्मा ही देवताओं का देवता है तथा उसी से सभी आत्माएं पैदा होती हैं। उस की कोई जाति नहीं है। यह संकल्पना उस अवधारणा को निराधार बताती है जो कहता है कि निम्न भौतिक क्रियाकलापों से ईश्वर को प्राप्त किया जा सकता है। नाम स्मरण को नानक वाणी में तीर्थ और दशहरा पर्व कि संज्ञा दी गयी है।

राज योग (सेवा धर्म)

मानव एक सामाजिक प्राणी है। सामाजिक होने के साथ ही उस पर समाज का दायित्व भी है जो वह भिन्न – भिन्न माध्यमों से पूरा करता है। नानक बानी में समाज की इकाई होने के कारण व्यक्ति को सेवा धर्म करने हेतु प्रेरित किया गया है।

घालि खाइ किछु हथहु देइ,
नानक राहु पछाणहि सेई ,

अर्थात मनुष्य को चाहिए की वह स्वयं जीविकोपार्जन करे तथा उस में से कुछ दूसरों को दान करे तभी वह वास्तविक मार्ग को पहचान सकता है। सिख धर्म में दसवंद की परम्परा इसी सेवा भाव का परिणाम है।' पहले बाँटो फिर खाओ ' की परम्परा ने लंगर सेवा की श्रृंखला आरम्भ कर दी। जहाँ तत्कालीन धर्मों में संसार को त्यागने का भाव दीखता है वही नानक बानी में सेवा के माध्यम से राज योग को प्राप्त करने का योग प्रस्तुत होता है। धर्म का मार्ग सहज है और जीतना सहज है उतना ही भावपूर्ण। धर्म जीने की पद्धति है जिसको स्वयं गुरु जी जीते हैं और पीढ़ी – दर – पीढ़ी पीढ़ियां उस मार्ग पर चल देती हैं। यह योग है , साधना है , जीवन है सबका घुला – मिला रूप यह राज योग है–

सेवा सुरति सबदि विचारि, जपु तपु संजमु हउमै मारि
जीवन मुकतु जा सबद सुनाए, सची रहत सचा सुखु पाए

गुरु नानक देव जी की वाणी सामाजिक रूढ़ियों पर प्रहार तो करती ही है साथ ही समाज की संकल्पना को बेहतर बनाने हेतु समानांतर एक मार्ग भी प्रशस्त करती है। यह मार्ग जिसका आधार शब्द सूर – कर्मन का सूर का है। इस मार्ग में सन्यास के बजाय गृहस्थ जीवन का योग है, आडम्बर के बजाय नाम स्मरण है , और हिंसा के बजाय सेवा है। डॉ। सीतराम बाहरी कहतें हैं " नानक ने जनता के सामने यह सिद्धांत रखा की पवित्र जीवन स्वयं सत्य से भी अधिक मूलयवान है। वस्तुतः वह सामाजिक जीवन से सभी प्रकार की तन्द्रा , खिन्नता तथा निराशा को निकल फेंकना चाहते थे और जनता को कथनी और करनी – दोनों में सत्यपूर्ण एवं क्रियाशील बनाना चाहते थे "[4] इसी दृढ़ शक्ति से गुरु जी ने नगर बसाये, जीवन पर्यन्त यात्राएं की और सामाजिक एवं पारिवारिक दायित्वों को पूरी तरह निभाया। यही कारण है उनकी संकल्पना – ज्ञानयोगी ,कर्मयोगी एवं राजयोगी पीढ़ियों द्वारा अनुसरित हुआ। इन तीनो के पूर्ण योग में ही जीते जी मुक्ति है अर्थात "नानक नाम चढ़ती कला तेरे भाणे सरबत दा भला "

गुरु जी की वाणी मानव जीवन की सार्थक इकाई बनने हेतु प्रेरित करती है। एक ऐसा समाज जहाँ उद्यमशील लोग , नाम जप , ज्ञान , तप एवं गृहस्थी से समृद्ध जीवन को उसकी सम्पूर्णता में जियेंगे जहाँ लोगों का आत्मबल आत्मविश्वास से भरा होगा वहां अंधविश्वास , पाखण्ड एवं अज्ञानता का वास नहीं होगा। जहाँ लोग इतने सशक्त होंगे की कोई आक्रांता नजर उठा कर देखने का साहस न कर सकेगा। उनकी वाणी को पीढ़ियों ने जिया है। अब यह वाणी जनमानस की चेतना का अंग बन गयी है। सिर्फ प्रान्त ही नहीं देश – विदेश में यह संस्कार विविध माध्यमों में भ्रमण कर रहे हैं। यह नानक वाणी की कीर्ति का ही विस्तार है। डॉ। इकबाल कहते है

"फिर उठी आखिर सदा तौहीद की पंजाब से ,
हिन्द को एक मर्द कामिल ने जगाया ख्वाब से,

संदर्भ ग्रन्थ

1. लेख – डॉ. जयभगवान गोयल , गुरुओं का मानवतावाद और आधुनिक सन्दर्भ में उसकी सार्थकता, सिक्ख चिंतन का आधुनिक संदर्भ,

पब्लिकेशन ब्यूरो , पंजाबी यूनिवर्सिटी , पटियाला (पृ। 16 –17)
2. प्रो. प्यारा सिंह पदम् , सिख इतिहास
3. सं. डॉ. शोभा कौर , भारतीय समाज और सिख गुरु, शंकर पब्लिकेशन , दिल्ली , 2016 (पृ– 69)
4. लेख – समता और मुक्ति के अग्रदूत – गुरु नानक : डॉ, सीताराम बाहरी (पृ – 62)

गुरुनानक वाणी : सामाजिक–सांस्कृतिक समानता का स्वर

*वेद प्रकाश

* हिन्दी विभाग, पी.जी.डी.ए.वी. महाविद्यालय, दिल्ली विश्वविद्यालय

हिंदी साहित्य के इतिहास के अंतर्गत मध्यकालीन निर्गुण संत कवियों के व्यक्तित्व और कृतित्व पर विद्वानों ने विस्तार से चिंतन–मनन किया है। जब हम निर्गुण संत कवियों की चर्चा करते हैं तो कबीर के काव्य को विशिष्ट महत्त्व प्रदान किया जाता है। उल्लेखनीय है कि निर्गुण काव्यधारा में संत रविदास, गुरुनानक, दादू, सुंदरदास, मलूकदास जैसे अनेकानेक कवियों के योगदान को कमतर नहीं आंका जा सकता। इन सभी कवियों के आधार पर संप्रदाय भी बने। गुरु नानक देव का भी इस कड़ी में विशेष स्थान है। गुरु नानक सिख धर्म के प्रवर्तक हैं। उन्होंने अपने काव्य के माध्यम से विविध सामाजिक आयामों विशेषतः रुढियों और बुराइयों पर प्रहार किया। आचार्य रामचंद्र शुक्ल के अनुसार "गुरुनानक आरंभ ही से भक्त थे अतः उनका ऐसे मत की ओर आकर्षित होना स्वाभाविक था, जिसकी उपासना का स्वरुप हिन्दुओं और मुसलमानों दोनों को समान रूप से ग्राह्य हो। उन्होंने घर बार छोड़ बहुत दूर–दूर के देशों में भ्रमण किया जिससे उपासना का सामान्य स्वरुप स्थिर करने में उन्हें बड़ी सफलता मिली। अंत में कबीरदास की निर्गुण उपासना का प्रचार उन्होंने पंजाब में प्रारंभ किया और वे सिख संप्रदाय के आदि गुरु हुए।"1

स्त्री पराधीनता का प्रश्न हो या हिंदू–मुस्लिम वैमनस्य, जाति असमानता इत्यादि के संदर्भ में निडर होकर सहज रूप से गुरु नानक ने अपने विचारों को अभिव्यक्त किया। मानव मूल्यों के लिहाज से देखें तो एक प्रकार के अंधकार युग में जन्मे नानक जी ने उंच–नीच का विरोध करते हुए स्पष्ट रूप से अभिव्यक्त किया कि ईश्वर की निगाह में सभी एक समान हैं। 'जपुजी साहिब' में इस प्रकार के विचारों को देखा जा सकता है– 'नानक उत्तम नीच न कोई' अर्थात ईश्वर की निगाह में सभी इंसान एक समान हैं। भक्ति भाव की प्रधानता नानक जी की वाणियों में स्पष्ट तौर पर रेखांकित की जा सकती हैं। संत स्वभाव को सम्मुख रखने वाली उनकी कुछ पंक्तियाँ हैं–

'इस दम का मैंनूं कीबे भरोसा, आया आया न आया न आया
यह संसार रैन दा सुपना, कहीं देखा, कहीं नाहि दिखाया
सोच विचार करे मत मन मैं जिसने ढूँढा उसने पाया
नानक भक्तन दे पद पार्स निसदिन राम चरन चित लाया।'

जाति के संदर्भ में भी इसी प्रकार के विचार यहाँ दृष्टव्य हैं–

'नीचा अन्दर नीच जात, नीची हूँ अति नीच
नानक तिन के संगी साथ, वडिया सिऊकिया रीस।'

सामाजिक समानता का आह्वान करते हुए नानक जी कहते हैं कि ईश्वर एक है, ईश्वर हमारा पिता है और हम सभी जाति धर्म के मनुष्य उसकी संतान हैं। परमेश्वर की दृष्टि में सभी समान हैं– 'एक पिता एकस के हम बारिक।' नानक के सबसे निकट शिष्य मरदाना को माना जाता है जो मुसलमान थे। मरदाना ने संपूर्ण जीवन गुरु नानक की सेवा करते हुए गुजारा और हिन्दू–मुस्लिम एकता के लिए निरंतर प्रयासरत रहे। गुरु नानक के अनुसार सभी धर्म एक हैं। उन्होंने हिन्दू–मुस्लिम शिक्षाओं का समन्वय कर एक नया धर्म बनाया जिसका मूल आधार 'प्रेम और समानता' था। आगे चलकर यही धर्म 'सिख धर्म' कहलाया। समन्वय की भावना के चलते ही हिन्दू समाज ने नानक जी को गुरु माना वहीँ मुस्लिम समाज ने पीर माना। गुरु नानक जी ने भारत, चीन, अफगानिस्तान, फारस, तिब्बत, श्रीलंका और अरब देशों की यात्राएं की जिन्हें पंजाबी में 'उदासियाँ' कहा जाता है।

गुरु नानक देव तत्कालीन समाज में स्त्रियों की स्थिति को देखकर बहुत विचलित हुए। उन्होंने स्त्रियों को समाज में निम्न दृष्टि से देखने का कड़ा विरोध किया। गुरुवाणी में स्पष्ट लिखा है कि स्त्री की रक्षा और सम्मान से ही समाज की रक्षा संभव है। संत साहित्य में नानक एक ऐसे विचारक हैं जिन्होंने नारी को सम्मान दिया। निर्गुण पंथियों में नानक ही ऐसे कवि हैं जो स्त्रियों के प्रति सम्मान का भाव रखते हैं–

'भंडि जमिये, भंडि निमिये, भंडि मंगण बीआहु
भंडहु होवे दोस्ती भंडहु चले राहु
भंडु मुआ भंडु भालिये, भंडि होवे बंधानु
सो किऊ मंदा आखिए, जितु जन्महि राजान।'

गुरु ग्रंथ साहिब से यह वाणी ली गयी है जिसका मूल भाव है कि स्त्री के जरिये ही सृष्टि चलती है, सारा संसार उसी से जन्म लेता है, उसने ही राजा–महाराजाओं को जन्म दिया तो उसे ही मंदा क्यूँ कहें। मंदा यानि बुरा। उसे सबसे ऊपर का दर्जा देते हुए गुरु नानक ने कहा कि उसके ऊपर केवल वाहे गुरु (भगवान) है। स्त्री से ही सृष्टि क्रम चलता है। एक स्त्री के मर जाने पर दूसरी स्त्री खोजनी पड़ती है क्योंकि वही हमें सामाजिक बंधन में रखती है। इस प्रकार के भाव और विचार गुरु नानक की शिक्षाओं को तत्कालीन समय के साथ–साथ आज भी विशिष्ट बनाते हैं– 'गुरु नानक की शिक्षा का मूल निचोड़ यही है कि परमात्मा एक, अनंत, सर्वशक्तिमान, सत्य, कर्ता, निर्भय, निर्वर, अयोनि, स्वयंभू है, वह सर्वत्र व्याप्त है। मूर्ति–पूजा आदि निरर्थक है। बाह्य साधनों से उसे प्राप्त नहीं किया जा सकता है। आंतरिक साधना ही उसकी प्राप्ति का एक मात्र उपाय है। गुरु–

कृपा, परमात्मा कृपा एवं शुभ कर्मों का आचरण इस साधना के अंग हैं। नाम–स्मरण उसका सर्वोपरि तत्व है, और 'नाम' गुरु के द्वारा ही प्राप्त होता है।'2

गुरु नानक की भाषा विविध रूपी है। उनकी भाषा में फारसी, मुल्तानी, पंजाबी, सिंधी, खड़ी बोली, अरबी, संस्कृत और ब्रज भाषा के शब्द समाए हुए हैं। रसों की दृष्टि से नानक वाणी में शांत और श्रृंगार विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। अनेक राग उनके रचनाकर्म में दृष्टव्य हैं यथा माझ, सिरी, धनासरी, तिलंग, बिलावल, रामकली, मारू, सारंग, वसंत, इत्यादि। अलंकारों की दृष्टि से उपमा और रूपक दर्शनीय हैं। कुल मिलाकर गुरु नानक दार्शनिक, योगी, गृहस्थ, धर्म सुधारक, समाज सुधारक एवं ईश्वर के सच्चे प्रतिनिधि थे। उनके आगमन को अंधकार में ज्ञान के प्रकाश समान माना गया है– "श्री गुरु नानकदेव का भारतीय धर्म–संस्थापकों एवं समाज–सुधारकों मै गौरवपूर्ण स्थान है। मध्ययुग के संत–कवियों में उनकी विशिष्ट और निराली परम्परा है। वह उस वर्ग के संस्थापक हैं, जिसके आंतरिक पक्ष में विवेक, वैराग्य, भक्ति, ज्ञान, योग, तितिक्षा, निष्काम कर्मयोग और आत्मसमर्पण की भावना निहित है और बाह्य पक्ष में सदाचार, संयम, एकता, भ्रातृभावना आदि पिरोए हुए हैं। मध्ययुग के संत कवियों में इतने सर्वांगीण व्यक्तित्व वाले पुरुष का मिलना दुर्लभ है। वे मौलिक चिन्तक, क्रन्तिकारी धर्म–सुधारक, अद्वितीय युग–निर्माता, महान देशभक्त, दीन–दुखियों के परम हितैषी तथा दूरदर्शी राष्ट्र–निर्माता थे।"3

संदर्भः–

1 आचार्य रामचंद्र शुक्ल, हिंदी साहित्य का इतिहास, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2007, पृ. 55

2 हिंदी साहित्य कोश, भाग 2, डॉ. धीरेन्द्र वर्मा (प्रधान सम्पादक), ज्ञानमंडल लिमिटेड, वाराणसी, पृ. 300

3 जयराम मिश्र, गुरु नानक देव, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1983, भूमिका से

गुरु नानकदेव के काव्य में निर्गुण-सगुण-तत्त्व-समन्वय

* डॉ0 शकुन्तला कालरा

* हिन्दी विभाग, मैत्रेयी कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय

मध्ययुग के संत कवियों में गुरु नानकदेव (सं॰ 1526-1695-96 वि॰) का गौरवपूर्ण स्थान है। कबीरदास की भाँति यह भी मौलिक चिंतक थे। उन्होंने परमात्मा का साक्षात्कार किया और प्रत्यक्षानुभूति भी प्राप्त की। उनकी वाणी का संकलन गुरुग्रंथसाहिब के महला 1 में प्राप्त होता है। 19 रागों में निबद्ध 2949 छंदों में गुरु नानकदेव ने अध्यात्म और भक्ति की ऐसी रसधारा प्रवाहित की है जिसमें ज्ञानी और भक्त, दार्शनिक और विचारकों के साथ सहृदय पाठकगण पूर्ण रूप से डूब जाते हैं। गुरु नानकदेव ने अपने बीज मंत्र में कहा है -

ओं सतिनामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु
अकाल मूरति अजूनी सैभं गुरु प्रसादि।[1]

उन्होंने परमात्मा के स्वरूप को जिस प्रकार रूपायित किया है, उसी की व्याख्या समस्त वाणी में दिखाई देती है। वह ब्रह्म को निर्गुण मानते हैं। उन्होंने निषेधात्मक शैली का सहारा लेते हुए उसे अनिर्वचनीय कहा है। उसकी केवल अनुभूति ही की जा सकती है। वह ज्योति-स्वरूप है। जहाँ-तहाँ सर्वत्र उसी का प्रकाश है। वह एक है। 'सर्वव्यापी और घट-घटवासी है। उसे उन्होंने 'शून्य' कहा है जिससे संपूर्ण सृष्टि की उत्पत्ति हुई है। सृष्टि के मूलारंभ इस परमतत्त्व को उन्होंने 'ओंकार' कहा है और इसी से ब्रह्मादिक एवं सृष्टि की उत्पत्ति मानी ह। उसका न कोई नाम है न रूप। वह अलख और अपार है -

अलख अपार अगंम अगोचर ना तिसु कालु न करमा।
जाति अजाति अजोनी संभउ ना तिसु भाउ न भरमा।[2]

चारों ओर उसका प्रकाश व्याप्त है। परंतु फिर भी उन्हें शुद्ध निर्गुणवादी नहीं कहा जा सकता।

तीसरे गुरु अमरदास जी के साथ नानकपंथ में सगुणवादी तत्त्वों का समावेश हो गया और इस प्रकार नानकपंथ भी निर्गुण और सगुणवादी तत्त्वों के सम्मिलित रूप में विकसित हुआ। समन्वय की परंपरा के सूत्रपात का श्रेय जहाँ गुरु अमरदास को जाता है, वहाँ स्पष्ट रूप से यह चौथे गुरु अर्जुनदास जो की वाणी में ही दिखाई देता है। इसके बाद छठे गुरु हर गोविंद सिंह में सगुणवाद की पराकाष्ठा दिखाई देती है। नानक के उपास्य निर्गुण एवं निराकार हैं, किंतु अपने साहिब की निर्गुणता में विश्वास रखते हुए भी उसकी सगुणता को उन्होंने न केवल स्वीकार किया है, वरन् निर्गुण और सगुण दोनों को एक ही धरातल पर लाकर प्रतिष्ठित भी कर दिया है। 'सिद्ध-गोष्ठी' में उन्होंने निर्गुण से सगुण की उत्पत्ति दिखलाकर निर्गुण-सगुण में सुंदर समन्वय स्थापित किया -

अविगतो निरमाइलु उपजे निरगुण ते सरगुणु थीआ[3]

गुरु नानकदेव यह स्पष्ट घोषणा करते हैं कि मूलपुरुष ने स्वयं ही अपने आपको निर्मित किया है और निर्गुण और सगुण रूप धारण करता है। वह स्वयं निर्गुण है और सृष्टि के कारण सगुण बनता है, जिसे नाम-रूप की संज्ञा दी जाती है। एक ओर उन्होंने आचार्य शंकर के अद्वैतवाद की झलक **'आपे बीज आपे ही खाहु नानक हुकुमि आवहु जसहु'** में दी तो दूसरी ओर पौराणिक मतवाद की छाया **'जब जब होत अरिष्ट अपारा। तब तब देहधरत करतारा'** इस अवतारवादी धारणा में स्पष्ट की।

नानकदेव ने उपासक की आंतरिक वृत्ति के अनुकूल ब्रह्म के स्वरूप का निरूपण किया है। उनका विचार है कि परमात्मा निर्गुण भी है, सगुण भी और निर्गुण सगुण उभयस्वरूप भी है। वास्तव में परोक्षसत्ता अद्भुत है। उसके गुण अनन्त हैं। उसके नाम-धाम भी असंख्य हैं। उसके लोक भी असंख्य हैं।

अमित गुण वाले परमात्मा के गुणों का कथन करने में वे स्वयं का असमर्थ पाते हैं। तिल मात्र ही उसकी महिमा का वर्णन हो पाता है, क्योंकि बुद्धि सीमित है और गुण असीम हैं। वह समस्त सृष्टि का रचयिता एवं शक्तियों का स्वामी है। वह अवगुणी को भी गुणी बना सकता है और गुणवान को और गुणी बना सकता है। प्रभु के बिना अन्य काई व्यक्ति ऐसा नहीं जो अन्य व्यक्ति में गुणों की उत्पत्ति कर सके –

नानक निरगुणि गुणु करे गुणवंतिआ गुणु दे।
तेहा कोइ न सुझई जि तिसु गुणु कोइ करे।।[4]

सगुण भक्तों की भाँति गुरु नानक ने भी उसे व्यक्तित्व प्रदान कर उसका स्तवन किया है। उसके साथ विविध प्रकार के संबंध स्थापित किए हैं। अपनी भावना के अनुसार कहीं सेवक-सेव्य भाव से कहीं कान्ताभाव से तो कहीं वत्सल्-भाव से अपनी भक्ति को रूपायित किया है। एक सच्चे सेवक के रूप में उनकी रग-रग में सेवा-भाव समाया हुआ है। वह अपने को स्वामी द्वारा खरीदा हुआ गुलाम कहने पर अपना सौभाग्य मानते हैं –

मुल खरीदी लाला गोला मेरा नाउ सभागा।[5]

गुरु नानकदेव मानते हैं वास्तव में ब्रह्म निर्गुण है, किंतु सृष्टि के कारण नाम-रूप धारण करके सगुण हो जाता है। सृष्टि की उत्पत्ति, स्थिति और विनाश की क्रिया में प्रवृत्त इस 'सक्रिय ब्रह्म' को नानक ने सगुण ब्रह्म की संज्ञा दी है और उसकी वन्दना गुणाकर, गुणनिधि के रूप में की है जिसके गुणों का अंत कोई नहीं पा सकता –

गुणनिधान तेरा अंतु न पाइआ।
साच सबदि तुझ माहि समाइआ।[6]

गुरु नानकदेव ने अनेक स्थानों पर ब्रह्म के विराट स्वरूप के माध्यम द्वारा भी उसका सगुणत्व व्यंजित किया है। परमात्मा आप ही पवन, जल और वैश्वानर है। आप ही चन्द्र और सूर्य हैं। आप ही पुरुष और आप ही नारी है आप ही दिन और आप ही रात है।[7]

जगन्नाथपुरी के पंडितों को सुनाई 'आरती' में परमात्मा के विराट स्वरूप का चित्रण करते हुए प्रभु के सगुण रूप का वर्णन किया है। इसमें प्रभु के सहस्र नेत्रों, सहस्र मूर्तियों, सहस्र चरणों एवं सहस्र घ्राणेन्द्रियों का वर्णन करके उसकी विराटता दर्शायी है जिसकी ज्योति सभी में एक साथ प्रकाशित हो रही है। ऐसे विराट प्रभु की आरती के उपकरण हैं स्वयं सूर्य और चंद्रमा जो दीपक बने हैं। मलय-चंदन ही सुगंधित धूप है। पवन चँवर डुला रहा है और वन के समस्त पुष्प अपने भाव अर्पित कर रहे हैं।[8]

नानकदेव सगुण ब्रह्म के इस विराट स्वरूप को अवर्णनीय मानते हैं –

अंतु न जापै कीता आकारु। अंत न जापै पारावारु।।
अंत कारण केते बिललाहि। ताके अंत न पाए जाहि।।
एहु अंत न जाणै कोइ। बहुता कहीए बहुता होइ।।[9]

ज्ञान, शक्ति, बल, ऐश्वर्य, वीर्य तथा तेज इन षड्गुणों से संपन्न होने के कारण ब्रह्म सगुण है। वह अपने गुणों में अगाध है। उसे आंका नहीं जा सकता –

बडे मेरे साहिबा गहिर गंभीरा गुणी गहीरा।
कोई न जाणै तेरा केता केबड्ड चीरा।।[10]

कोई उसके बड़प्पन का तिल-मात्र भी कथन नहीं कर सकता –

गिआनी धिआनी गुरु गुरहाई।
कहणु न जाई तेरी तिलु वडिआई।।[11]

अपने गुणनिधान परमात्मा को नानक ने विभिन्न नामों से संबोधित किया है। वह स्पष्ट कहते हैं कि मैं 'हरि के बिना और किसी को नहीं पूजता।' –

दुबिधा न पड़उ हरि बिनु होरु
न पूजउ मड़ै मसाणि न जाई।।[12]

क्योंकि जो हरिरस का आस्वादन कर लेता है उस भक्त के अन्य रस समाप्त हो जाते हैं। वे भक्त हरिरस पीकर सदैव तृप्त रहते हैं –

हरि रसु जिनी चाखिआ अनरस ठाकि रहाइआ।
हरि रसु पी सदा तृपति भए फिरि तृसना भुख गवाइआ।।[13]

नानक ने अच्युत, परब्रह्म, अविनाशी, पूर्ण, निराकार, अयोनि, स्वयंभू, अकाल-मूर्ति, अव्यक्त, अगोचर आदि निर्गुणी नामों के साथ-साथ हरि, राम, मुरारि, मधुसूदन, माधव, नारायण, प्रभु, नरहरि, बनवारी आदि सगुणवाची नामों का अनेकश: प्रयोग किया है।

नाम गुण की भाँति परमात्मा की लीलाओं और उसके धामों का भी उन्होंने वर्णन किया है। नानक ने निराकार की उपासना की है, परंतु पुराणों में वर्णित परमात्मा के रूप एवं उसकी विविध लीलाओं का कहीं भी बहिष्कार नहीं किया। राम, कृष्ण आदि की विभिन्न लीलाओं का अनेक स्थलों पर उल्लेख किया है। पौराणिक अवतार कथाओं को गुरु नानक जी ने दूसरे संदर्भ में ग्रहण किया है। ब्रह्मा के अभिमान, राजा बलि के दान के अहंकार, हरीशचन्द्र के यश की चाह, हिरण्यकश्पु को मारकर भक्त प्रह्लाद की रक्षा, रावण, सहस्रबाहु, जरासंध, कालयवन, कालनेमि आदि राक्षसों के संहार और संतों की रक्षा आदि विविध लीलाओं का उल्लेख किया है।[14]

विष्णु के अवतार राम और कृष्ण के जीवन की विविध लीलाओं का भी यथास्थान वर्णन किया है। कृष्ण के गोवर्धन-धारण एवं रामचन्द्र द्वारा समुद्र पर पत्थर तैराने की लीला का चित्रण देखिए –

गुरुमति कृसनि गोबरधन धारे।
गुरमति साइरि पाइण तारे।[15]

किंतु यहाँ ध्यातव्य है कि उपर्युक्त लीलाओं का वर्णन उन्होंने प्रसंगानुसार किया है, अवतारवाद के पोषक के रूप में नहीं।

नानक के अनुसार ईश्वर स्वयं को देखने के लिए अर्थात् लीला के लिए सृष्टि के रूप में अपने आपको प्रकट करता है। यहाँ नानक जी का सिद्धांत सगुण भक्तों के चिंतन के अनुरूप है। वे मानते हैं कि ईश्वर लीला के लिए सृष्टि करता है। इस कार्य के लिए उसकी शक्ति 'माया' उसकी सहायता करती है। परमात्मा की सत्ता दो रूपों में है, एक निर्गुण अवस्था और दूसरी सगुण अवस्था। अपने आप वह निर्गुण रूप है किंतु सृष्टि के संबंध से वह सगुण है। तब वह नाम-रूप में आता है और चाव से अपनी लीला देखता है-

आपीन्हे आपु साजिओ आपीन्हे रचिओ नाउ
दुमी कुदरति साजीए करि आसणु डिठो चाउ[16]

नानक-वाणी में व्यक्त नानक के विचारों के उपर्युक्त अध्ययन-विश्लेषण के उपरांत कहा जा सकता है कि नानक को परमात्मा के दो रूप मान्य हैं-पिण्ड रूप और ब्रह्माण्ड रूप। पिण्ड रूप में वह शरीर में अंतर्यामी बनकर स्थित है और ब्रह्माण्ड रूप में उसके विराट रूप की चर्चा होती है। विराट् रूप का सापेक्ष संबंध सगुण भाव से ही है। वह स्वयंभू स्वयं ही नाम रूपात्मक सृष्टि के रूप में स्वयं को प्रकट कर रहा है। अन्य निर्गुणवादी संतों की भाँति उनकी दृष्टि में ब्रह्म निर्गुण और सगुण उभय रूप है। व्यक्त और अव्यक्त वह दोनों आप ही है।

अत: कहा जा सकता है कि गुरु नानक के 'राम' अथवा 'हरि' निराकार होते हुए भी सगुण हैं। सगुणवाद के तत्त्व उसमें यथास्थान उपलब्ध हैं। उनकी वाणी में भारतीय आध्यात्मवाद की विशेषता के रूप में निर्गुण तथा सगुण दोनों का समन्वय देखा जा सकता है। परमतत्त्व को निर्गुण कहने से उनका तात्पर्य 'निष्क्रिय' सत्ता से नहीं वरन् प्राकृत गुणों के निषेध से है। उनका परमतत्त्व विविध अलौकिक गुणों से संपन्न है।

<u>संदभ</u>

1. सिक्खों का मूलमंत्र, नानक-वाणी, जयराम मिश्र, 'जपुजी' के आरंभ में प्रयुक्त, पृ. 79
2. नानक-वाणी, जयराम मिश्र, सोरठि, दुतुके, 6, पृ. 392
3. नानक-वाणी, जयराम मिश्र, राग रामकली, 1, सिध गोसटि पउड़ी 24, पृ. 541
4. नानक-वाणी, जयराम मिश्र, जपुजी, पउड़ी, 7, पृ. 82
5. नानक-वाणी, जयराम मिश्र, राग मारू, चउपदे 6, पृ. 578
6. नानक-वाणी, जयराम मिश्र, राग प्रभाती विभास, असटपदीआ 2, पृ. 792
7. नानकवाणी, जयराम मिश्र, राग मारु, महला 1, सोलहे 1, पृ. 606
8. नानक-वाणी, जयराम मिश्र, रागु घनासरी, महला 1, सबद 9, पृ. 416
9. नानक-वाणी, जयराम मिश्र, जपुजी, पउड़ी 24, पृ. 90
10. नानक-वाणी, जयराम मिश्र, राग आसा, चउपदे, घरु 2, पृ. 246
11. नानक-वाणी, जयराम मिश्र, राग आसा, घरु 2, पृ. 247
12. नानक-वाणी, जयराम मिश्र, सोरठि, असटपदीआ चउतुकी 1, पृ. 398
13. नानक-वाणी, जयराम मिश्र, राग मारु, वार, महला 1, पउड़ी 1, पृ. 667
14. नानक-वाणी, जयराम मिश्र, राग गउड़ी, असटपदीआ, 9, पृ. 227
15. नानक-वाणी, जयराम मिश्र, राग मारू, सोलहे 20, पृ. 659
16. नानक-वाणी, जयराम मिश्र, रागु आसा, महला 1, वार सलोका, पउड़ी 1, पृ. 324

गुरु ग्रंथ साहिब में जेंडर की वास्तविक स्थिति : ऐतिहासिक अध्ययन (गुरु नानक देव के विशेष संदर्भ में)

*मनोज कुमार

* पीएचडी–शोधार्थी (इतिहास एवं सांस्कृतिक विभाग), जामिया मिल्लिया इस्लामिया

परिचय

इस शोध प्रपत्र में सिख इतिहास के अंतर्गत होने वाले प्रभुसत्ता के संघर्ष में महिलाओं की भूमिका एवं उनकी मानवीय व्यक्तिगत चेतना को दर्शाते हुये संघर्ष के समय एवं उनकी शैली, धैर्य और राजव्यवस्थात्मकता के प्रति अपने दायित्व को भली भाति समझना और उसके लिए निरन्तर संघर्ष करना को दर्शाना हैं। जहां महिलाओं की चेतना कदमताल करते हुए एक प्रशिक्षित कमाडंर की श्रेणी में नजर आता है। दरअसल बाबा बंदा बहादुर ने जिस खालसा राज के बीजों को संघर्ष की जमीन में बोया था अभी वे अंकुरित ही हुये थे कि बंदा बहादुर उस संघर्ष का शिकार हो गये। किन्तु इन अंकुरित फसलों को सींचने का कार्य इस पंथ की तत्कालीन महिलाओं ने बखूबी निभाया और शताब्दी के अन्त तक ही जाकर यह बीज परिपक्व फसल की तरह महाराजा रणजीत सिंह के खालसा राज के रूप में दृष्टिगोचर प्रतीत होता है। इसके अतिरिक्त इस शोध प्रपत्र को सहूलियत के लिए दो अलग भागों में बाट कर इसका मूल्यांकन करने की कोशीश की है। पहले भाग मे में सिखों की धार्मिक पुस्तक श्री गुरु ग्रंथ सहिब मे महिलाओं की वास्तविक स्थिति का प्रतिबिंबन करना है। साथ ही दुसरे भाग में सिख धर्म में महिलाओं की नैतिकता, ऐतिहासिक स्थान, उनकी व्यक्तिगत चेतना, स्त्री–पुरुष संबंध और विशेषतः उन विशिष्ट महिलाओं की रणनीतिक शैली की प्रकृति को जानना है जिसका प्रयोग कर उन्होंने अपनी चेतना का प्रमाण दिया। इस प्रकार सिख इतिहास मे महिलाओं की भूमिका को दर्शा कर एक क्षेत्र के इतिहास के सभी पहलुओं को दर्शाना ही शोध का ध्येय होगा।

बीज शब्द – जेंडर, निम्नवर्गीय, चेतना, सशक्तिकरण, नारी नेतृत्व, लिंग भेद, दशमग्रंथ आदि।

श्री गुरू ग्रंथ साहिब में महिलाए और जेंडर

'श्री गुरु ग्रंथ साहिब' सिख धर्म का आधार ग्रंथ है जिसे सिख धर्म अनुयायी एक गुरु के रूप में सम्मान देते हैं। इस ग्रंथ में सिख गुरु साहिबान ने स्त्री को आत्मा का प्रतीक और पुरुष को परमात्मा का रूप मानते हुए ईश्वर की प्राप्ति का सहज मार्ग बताया है। स्त्री–पुरूषों संबधों का जितना स्वभाविक, सदाचारी एवं मनोवैज्ञानिक चित्रण इस महान ग्रंथ में हुआ है, वह अन्यत्र दुर्लभ है। यह वर्णन दिव्य अलौकिक प्रेम का अद्‌भुत उदाहरण कहा जा सकता है जिसमें आत्मा और परमात्मा के संयोग की अभिव्यक्ति गुरु साहिबान की महान उपलब्धि है। इस आलौकिक प्रेम अभिव्यक्ति का एक लौकिक रूप भी है, जिसे सामान्य स्त्री–पुरुष के माधुर्य सम्बन्धों के धरातल पर रख कर स्त्रियों के जीवन के महत्त्व को विश्लेषित किया जा सकता हैं। भौतिक स्तर पर स्त्री पुरुष के जीवन विशेषतः स्त्रिओं के जीवन का जो चित्रण इस महान रचना में हुआ है वह शील, संयम, सदाचार एवं सहनशीलता आदि सदगुणों से परिपूर्ण है।[1]

किन्तु यहाँ यह प्रश्न उठता है कि जब इस तरह की समानता का जिक्र गुरु ग्रंथ साहिब में है तो ऐतिहासिकता में केवल सिख पुरुषों की ही चेतना का प्रयोग क्यों है? जहाँ–तहाँ अगर महिलाओं का जिक्र है भी तो उन्हें धार्मिक आवरणों से ढंका गया हैं। अमूमन दूसरे धर्मो से एक तुलनात्मक अध्ययन किया जाये तो सिख महिलाओं की स्थिति प्रायः दूसरे मजहबों से प्रारम्भ से ही सुव्यवस्थित नजर आती है। किन्तु यह तो धार्मिक स्थिति को दर्शाने के लिये ठीक है परन्तु ऐतिहासिक पहलुओं का लिखित रूप ही सामाजिक एवं सांस्कृतिक रूप से समाज में एक लिंग–भेद जैसे पाटों को भरने में महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह कर सकता हैं। गुरु बाणी में स्त्री–पुरुष की समानता का पता इस सबद से चलता है।

"पुरख मे नारि नारि में पुरखा बूझहू ब्रह्म गियानी।।
धुनि में ध्यान ध्यान महि जानीया गुरुमुख अकथ कहानी।।"[2]

गुरु सहिबान ने स्त्री रूप में बाणी की रचना करके स्त्री के स्वरूप को सम्मान दिया। श्री गुरु नानक साहिब ने स्पष्ट रूप में कहा कि उस स्त्री को कम कैसे समझा जा सकता है, जो बड़े बड़े विद्वानों, महारथियों, योद्धाओं को जन्म देती है। गुरुबाणी में कन्या वध, दाज प्रथा, सती प्रथा आदि की निन्दा की गई है। भारतीय इतिहास में विभिन्न परिर्वतनों के फलस्वरूप धर्म के स्वरूप में परिवर्तन आना स्वाभाविक था क्योंकि धर्म को समाज से बाहर नही रखा जा सकता। धर्म वही है जो मूल्यों को जोड़ने की बात करे। सिख धर्म में साधारण गृहस्थ जीवन को महत्त्व देकर नारी के सम्मान की स्थापना की गई और घर त्याग कर संन्यास लेने वाले पाखंडियों की निंदा की है–

"हाथ कमंडल कापड़ीया मन तरिसना उपजी भारी।।
स्त्री तजि कर काम विआपिया चित्त लाइया पर नारी।।"[3]

इस प्रस्तुत उपदेश से यह साफ जाहिर होता है कि स्त्री की चेतना पुरुष के समान है, बस उसकी पहचान ही उसे एक अलग जाति में रखती हैं। यही नही गुरु सहिबान महिलाओं का संबंध सीधे खुदा से जुड़ा हुआ मानतें हैं। जहाँ महिलायें कई बार खुदा के रूप में ही एक चरित्र निभाते नजर आती हैं। गुरुवाणी का यह उपदेश–

''सतगुरु की ऐसी वडियाई।
पुतर कलतर विचौ गति पाई।''[4]

सिख गुरु साहिबान ने स्त्री को पुरुष के मार्ग का कंटक न मानते हुए उसके लिए गृहस्थ जीवन को उचित माना हैं। उन्होने यह भी माना कि मनुष्य सहज जीवन जीते हुये भक्ति द्वारा ईश्वर को प्राप्त कर सकता है। इस कार्य में स्त्री पुरुष की सहायक होती है। गुरुबाणी स्त्री तथा पुरुष दोनों के अस्तित्व को स्वीकार करती है। दोनों एक ही ईश्वर की उत्पत्ति है और दोनों का महत्त्व भी समान ही हैं। नारी चरित्र में शील, संतोष, संयम तथा नम्रता आदि गुणों को प्रतिष्ठित करते हुए उसे एक आदर्श बेटी, बहन, पत्नी तथा माता बनने का संदेश दिया है। 'श्री गुरु ग्रंथ साहिब' में स्त्री का वर्णन एक रूपक के रूप में हुआ है, जिसमें स्त्री जीवात्मा का प्रतीक हैं। 'श्री गुरु ग्रंथ साहिब' में स्त्री को जितना सम्मान दिया गया है, वह दूसरे धार्मिक ग्रंथ में दुर्लभ है। गुरु साहिबान ने नारी के जिन रूपों का चित्रण किया है उन्हें दो मुख्य शीर्षकों के अन्तर्गत रखा जा सकता है– (क) सामाजिक शिष्टाचार के अनुरूप सदाचार पर आधारित संबध – जैसे बेटी, बहन, सखी, माता तथा सोहागण के संबंध और (ख) सामाजिक शिष्टाचार के प्रतिकूल अनाचार पर आधारित संबंध – जैसे वेश्या, कामिनी एवं दोहागण के संबध।

गुरुबाणी में स्त्री को जीवात्मा का प्रतीक मानते हुए उसके विविध रूपों का चित्रण किया गया है। गुरु सहिबान ने विभिन्न रूपकों तथा प्रतीकों द्वारा जीवात्मा तथा परमात्मा के अलौकिक मिलन के चित्र अंकित किए हैं। इस चित्रण में सामान्य स्त्री–पुरुष के सम्बंधो का जो लौकिक रूप अभिव्यक्त हुआ है वह अद्‌भुत है। इसके अध्ययन से साधारण स्त्री–पुरुष को सद्‌मार्ग पर चलते हुये अच्छा एवं सहज जीवन जीने का उपदेश प्राप्त होता है। गुरुबाणी गृहस्थ में रह कर ईश्वर को प्राप्त करने का मार्ग बताती हैं।[5] इसका कारण सामाजिक परिवेश या स्थितियां हैं जिन्हें नकार पाना स्त्रियों के वश की बात नहीं हैं। विद्वान पाइथागोरस ने माना कि अच्छे सिद्धान्त ही अव्यवस्था, अंधेरा और औरत को जन्म देते हैं। बुरे सिद्धान्तों में जैविक, आर्थिक तथा मनोवैज्ञानिक स्थितियां आती हैं जिनसे स्त्री रूपी जीव का निर्माण होता हैं।[6]

'श्री गुरु ग्रंथ साहिब' में नारी के बेटी रूप का वर्णन लोक–व्यावहारिक तथा सामान्य रूप में हुआ है। श्री गुरु अमरदास जी ने सामाजिक परंपरा के संदर्भ में कहा है कि सिख समाज में स्त्री का चित्रण एक धर्म की शाखा की तरह है। वही श्री गुरु नानक देव न अपनी वाणी जपुजी में सदगुरु की प्रशंसा करते हुए कहा है– **''गुरु ईसर गुरु गोरख बरमा गुरु पार्वती है माई।।''**[7]

गुरु ग्रंथ सहिब में स्त्री की तुलना गुरु, माँ एवं ईश्वर रूप में प्रस्तुति के साथ–साथ इस संबध का लौकिक एवं सामान्य रूप भी मिलता हैं। सिख धर्म में स्त्री को सम्मानजनक स्थान प्राप्त है और पंजाबी समाज में अच्छे मनुष्यों को जन्म देने वाली मां की सराहना अवश्य होती है, है। इस सामाजिक सत्य का उद्‌घाटन गुरुबाणी में अनेक स्थलों में मिलता हैं। आदि ग्रंथ में गुरु अंगद देव जी के वचन हैं– **''कुल ऊधारियों आपणा धन जणेदी माय''** [8]

गुरु ग्रंथ साहिब में भारत के विभिन्न हिस्सों के भिन्न भिन्न भाषाओं के कवियों की रचनायें संकलित हैं। सबसे शुरू के अंशदाता कवि जयदेव 12वीं शताब्दी में हुए और गुरु तेग बहादुर 17वीं शताब्दी में। सबसे शुरू की और अंतिम रचनाओं के मध्य 500 वर्षो के पफासले और क्षेत्रें (जहाँ से यह ली गई हैं) की विभिन्नता के बावजूद, इनमें भाषा की दृष्टि से एक प्रकार की एकता हैं।[9] अंतिम गुरु दशमेश गुरु गोविन्द सिंह ने आदि ग्रंथ का संशोधित और पक्का संस्करण तैयार किया, जिसमें उन्होंने अपने पिता–नौवें गुरु, गुरु तेग बहादुर साहिब की रचनायें भी उचित स्थानों पर समाविष्ट कीं। तभी से आदि ग्रंथ पूर्ण रूप से स्वीकृत रूप से गुरु ग्रंथ रूप में जाना जाने लगा। आदि ग्रंथ का वह संस्करण, जो आज प्रमाणिक समझा जाता है और गुरुद्वारों में पूजा के लिए प्रयुक्त होता है, वह लगभग 6000 सबदों वाला एक वृहद संस्करण है। साथ ही इसके अंशदाताओं को चार श्रेणियों में बाँटा जा सकता है –

(क) सिख गुरु
(ख) हिन्दू भक्त और मुस्लिम सूफी
(ग) भाट
(घ) अन्य अंशदाता।[10]

यहाँ इस अध्याय में गुरु ग्रंथ साहिब का वर्णन के पीछे उद्देश्य यह है कि सात सिख गुरुओं, सोलह भक्तों एवं कई सूफियों के भजन, भाटों की रचनायें एवं अन्य अंशदाताओं जिसमें साथी मरदाना, राम कली सद नामक मरसिया शोकगीत के लेखक सुंदर की रचनायें और सता तथा बलबंद के वार ऊपर वर्णित कुल मिलाकर 937 सबद गुरु ग्रंथ साहिब में संकिलत हैं। सिख गुरुओं ने कर्ममार्ग, ज्ञानमार्ग अथवा भक्तिमार्ग से भी ज्यादा बल नाममार्ग पर दिया।[11] इन विवरणों से यह कहा जा सकता हैं कि इतनी विविधताओं के बाद भी सभी ने महिलाओं के संदर्भ में ऐसा सकारात्मक रुख अख्तियार कर रखा है जो उनके शरीर, आत्मा, एवं सबसे बढ़कर उनकी चेतना को पुरुष के समान अधिकार देता है।

इन विवरणों का प्रयोग कर यह तो मूल्यांकन किया जा सकता है, श्री गुरु ग्रंथ साहिब में जेडर की वास्तविक स्थिति क्या हैं! किन्तु सम्सयाऐ तब खड़ी हो जाती है जब किसी महिला संबंधी विवेचनाओं को अधार बना कर साहित्य या ऐतिहासिक पहलुओं को दर्शाने की कोशीश की जाती है। भारतीय इतिहास लेखन विशेषतः जब हम धार्मिक मामलातों का जिक्र करते हैं तो चाहे वह इतिहास की मुख्य धारा हो या कोई क्षेत्रीय इतिहास, महिलाओं की स्थिति के सम्मुख कुछ समस्यायें भी उठ खड़ी होती है। जैसे स्त्रेतों का न मिल पाना या स्थानीय लोकगीत में महिलाओं का चित्रण या कथा कहानी में उनके चित्रण को मूर्त रूप से दर्शाना, एक नियमबद्ध इतिहास लेखन जैसी तकनीक का ख्याल करते समय हमें फिर दूसरे समकालीन साक्ष्यों को देखना पड़ता हैं।[12]

बहरहाल जिस काल का जिक्र हम कर रहे है उसमें पंजाब की स्थिति भयावह थी। अराजकता ने स्थिति को और बिगाड़ दिया था। ऐसी स्थिति में अपनी चेतना का प्रयोग कर सिख महिलाओं ने राजव्यवस्था में भागीदारी कर के गुरु गोविन्द सिंह और बंदा बहादुर की प्रेरणीय शक्ति एवं उर्जा को बनायें रखा।[13] दरअसल महिलाओं की समझ उनकी चेतना केवल सराहनीय नहीं है, वे भी मानव जाति के अंश के तौर पर ऐतिहासिकता के सभी सोपानों को पूरा कर सकते हैं, जो पुरुष इसी समाज में रह कर करता हैं। किन्तु कई बार ऐसी सामाजिक रूढ़ियों का भी वहन समाज को करना पड़ता है, जिसे न चाहते हुये भी सामाजिक परिवेश में स्वीकार करना पड़ता हैं।[14] यहाँ अहम बात होती है कि पहल कौन करे। लिंग और जेंडर के भेद को स्पष्ट करना नारीवादी चिंतन का एक महत्त्वपूर्ण योगदान है। सेक्स शब्द पुरुष और स्त्री के बीच एक जैविक अर्थ की तरफ इशारा करता है जबकि जेंडर का ताल्लुक उसके साथ मिश्रित गुंथे सांस्कृतिक अर्थों से है।

नारीवादी विमर्श के लिहाज से इस विमर्श को स्पष्ट करना बहुत महत्त्वपूर्ण है क्योंकि महिलाओं की अधीनता को मोटे तौर पर स्त्री–पुरुष के बीच जैविक फर्क के आधार पर ही सही ठहराया जाता हैं।[15] रूसो का विश्वास था कि नारी की राजनैतिक समझ है ही नहीं। जब इतिहास ही नही रहेगा तो शोषण तो होगा ही, तात्पर्य यह है कि किसी रचनात्मक कार्य करने वाले तथा अपनी चेतना का प्रयोग करने वाली स्त्री का न तो इतिहास लिखा गया, अगर उन्होने लिखने का प्रयत्न किया भी होगा तों उन्हें इसका कोई ने तो समर्थन ही मिलता होगा न ही सोचने की स्वतंत्रता। कैरोल पैटमैन बताती है कि इन दार्शनिकों का मानना था कि सामाजिक समझौते से पहले यौनिक समझौता हो गया था। उस समझौते के अनुसार महिलाओं ने अपने नैसर्गिक अधिकार अपनी सुरक्षा के बदले पुरुषों को सौप दिये और महिलायें पुरुषों की आज्ञाकारी बन गई। साथ ही पूँजीवादी अर्थव्यवस्था भी इसी पितृसत्तात्मक ढांचे पर आधारित है तथा इसका उदारवाद भी समर्थन करता था।[16]

पितृसत्तात्मक समाज की रूपरेखा वास्तव में पूर्ण सामुदायिक विकास के लिये भारतीय समाज में प्रारम्भ से ही विवादस्पद रही हैं जहाँ गर्डा लर्नर कहती है कि पितृसत्ता, परिवार में महिलाओं और बच्चों पर पुरुषों के वर्चस्व की अभिव्यक्ति और संस्थागतकरण तथा सामान्य रूप से महिलाओं पर पुरुषों के सामाजिक वर्चस्व का विस्तार है।[17] हाइडी हार्टमान्न के अनुसार पितृसत्ता का आर्थिक आधार केवल परिवार के भीतर, बच्चों के लालन पोषण तक सीमित नहीं हैं। यह उन सभी सामाजिक संस्थाओं संरचनाओं में व्यापत है जो पुरुषों को नारी पर नियंत्रण रखने में सक्षम बनातें हैं।[18] नारी जीवन मे धर्म को दर्शाते हुये तनीका सरकार यह प्रश्न उठाती हैं कि सिद्धान्त और व्यावहारिक अध्ययन के ठोस उदाहरणों में क्या धर्म और स्त्रीत्व तथा जाति को अलग किया जा सकता हैं? प्रत्युतर में वह बताती है कि इतिहासकारों और समाजविदों ने यह सिद्ध कर दिया कि भारतीय धर्म ने ऐसा विभेदीकरण किया है जो हिन्दू जाति–आचारों के काफी करीब हैं और धर्मांतरण करने वालों की पुरानी जातीय स्थितियां बाद की व्यावहारिक जिंदगी में अहम बनी रहती हैं।

हालांकि भारतीय जनजातियां, धर्म आदि ये सभी एक निर्मित शाखा की तरह कार्य करते हैं। जहाँ कई बार स्त्रियों पर धार्मिक कर्त्तव्यों को जबरन थोपा भी जाता हैं।[19] 'स्त्री असमानता के पोषण में धर्मों की भूमिका' पर गोस्वामी कृष्णा के अनुसार धर्म ने एक वर्ग द्वारा तथा एक लिंग द्वारा दूसरे लिंग के शोषण को धार्मिक मान्यता दी। वहीं इस शोषण के विरुद्व आवाज को धार्मिक नैतिकता के नाम पर दबाकर शोषितों के विद्रोह की संभावनाएं भी कम कर दीं।[20] सिख इतिहास लेखन की ओर रूख करे तो सबसे पहले हरि राम गुप्ता सिख महिलाओं के दैनिक दिनचर्या बताते हुये उनकी सादगी, उनके कोमलपन की चर्चा करतें हैं। महिलाओं की गतिविधियों की चर्चा करते हुए उनकी गृहस्थ जीवन की जुझारूपन को दर्शाते है।

सबसे पहले टानी बैलनटाईन धर्म और इतिहास के विषय पर चर्चा करते हुये कहते हैं, ''आधारभुत बौद्धिकता और राजनीतिक विवादित विषय का अध्ययन हमें आस्था और विश्वास और वास्तविक शोध के संबधों का आकलन करने में मदद कर सकता है।''[21] सिख इतिहास से संबधित मान्यताओं में ऐतिहासिकता को दर्शाने वाले डब्लयू–एच– मैक्लॉयड, जिनका रुझान चार से भी ज्यादा दशकों तक सिख धर्म और इतिहास पर रहा है, कहते हैं, कि अपने लेख में स्त्री–प्रतिबंध एवं व्यवहार का आकलन करते हुये, उन्होने अमृतधारी सिख महिलाओं की सामाजिक सुदृढ़ता को दर्शाया है, जहाँ वे कहते है कि उनकी मनः स्थिति इस कदर मजबूत होती है कि सांसारिक कार्य को वह धार्मिक नियमावली से टकराव पैदा नहीं होने देती।

मैक्लायड का यह कहना कि किसी धर्म की उत्कृष्टता के लिए यह जरूरी है कि उससे संबधित सभी आयामों को ऐतिहासिक रूप से कलमबद्व किया जाये। यही नहीं वे सिखों के 'पास्ट' को जानने के लिए 'टैक्चूअल एप्रोच' को भी दर्शाते हुए कहते है कि सिख इतिहास को समझने के लिए यह तरीका ज्यादा तार्किक है। अर्थात मैक्लॉयड का टैकसटुअल ऐप्रोच पाँच नये तरीकों एवं साक्ष्य की बात करता है जिससे सिख इतिहास को जाना एवं समझा जा सकता है।

(क) आन्तरिक सिख इतिहास की समझ
(ख) खालसा केन्द्रित सिख इतिहास
(ग) क्षेत्र केन्द्रित इतिहास
(घ) ब्रहारिक इतिहास
(ड़) प्रवासी सिख इतिहास की समझ।

वह इन पाँच नये तरीकों का प्रयोग सिख इतिहास के विशेष संदर्भ में करते है जिसका प्रयोग वस्तुतः सिख इतिहास के सभी आयामों के निष्कर्ष को जानने के लिए किया जा सकता हैं।[22] हरजोत ऑबराय ने अत्यन्त प्रगतिशील, सांस्कृतिक अध्ययन जो कि उन्नीसवीं सदी के उतरार्द्ध एवं सिख सभा आन्दोलन पर केन्द्रित था, का प्रयोग इतिहास लेखन के लिए किया। वह कहते है कि जैसे वह जन्मसखियों की प्रामाणिकता पर सवालिया निशान लगाते हुए स्पष्ट करते हैं कि गुरु

नानक के जीवन के इतिहास के लिए इसका प्रयोग ऐतिहासिकता को नही दर्शाता।

हालाकिं जे.एस. ग्रेवाल जैसे तार्किक इतिहासकार का कार्य सिख महिलाओं के संदर्भ में विशेष नहीं रहा है किन्तु ग्रेवाल की ऐतिहासिक विचारधारा एवं उनके तर्क धर्म एवं इतिहास का विश्लेषण कराते है। वही क्षेत्रीय परिस्थितिकरण का इतिहास लिख कर वह अपने लेख में प्राचीन काल से अब तक पंजाब की भौगोलिक सामांजस्य को दर्शाते है। जहाँ वे कहते हैं कि यहा, प्रारम्भ से स्त्री पुरुष संबंधों की समानता रही है। विभेदीकरण की नीति पर कुछ अधिक न बोलते हु ग्रेवाल भी उसे आधुनिकता की शिकार मानते हैं। सिख इतिहास लेखन में महिलाओं की स्थिति के ऊपर अपने मत देते हुए टॉनी बैलनटाईन कहतें है कि महिलाओं की स्थिति सिख इतिहास लेखन का कभी हिस्सा ही नही रही। जितने भी सिख इतिहासकार हुए उन्होनें परम्रावादी तथ्यों एवं इतिहास को प्रासंगिक एवं संशोधात्मक रूप से लिखने का प्रयास किया। सिख इतिहास लेखन में बीसवीं शताब्दी तक नई विधाओं को जगह नहीं दी गई।[23]

इस कड़ी में सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य डॉरिश–आर– जॉकबश ने किया, जिन्होनें 2003 में द रिलोकेटिंग जैंडर इन सिख हिस्ट्रीः ट्रांसफोरमेशन, मिनिंग, आईडेनटिटी के माध्यम से सिख इतिहास में महिलाओं के प्रसंग की शुरुआत की। डॉरिश–आर–जॉकबश ने सिख गुरु के समय से प्रारम्भ होते जैंडर वैचारिकता के विकास का परीक्षण करते हुये औपनिवेशिक समय में कुछ नए विचारों के सामन्जस्य को देखा। वे गुरुकाल के समय से लेकर औपनिवेशिक समय में वैचारिकता के विकास मे जैंडर की स्थिति किस मुकाम पर दिखाई देती है इस सम्बन्ध में गम्भीरता से चर्चा करती हैं।

जॉकबश का कार्य पहला कार्य था जिसमें जैंडर अध्ययन के माध्यम से महिलाओं की स्थिति का आकलन किया गया और सिख धर्म में जैंडर के ऐतिहासिक महत्त्व की पुष्टि की। सिंह सभा आन्दोलन का ऐतिहासिक एवं आलोचनात्मक मूल्यांकन औपनिवेशिक ताकतों का महिलाओं के प्रति दृष्टिकोण को दर्शाता है। वे बताती है कि सिंह सभा आन्दोलन का उद्देश्य एक तरह के पुनर्जागरण तथा सिखधर्म के शुद्धिकरण के लिए किया गया था और इसका आधार स्वर्ण युग के गुरु पीरियड को तय किया गया था।

दूसरा जॉकबश ने सिख गुरुओं का आकलन करते हुये जैंडर के अन्तर्गत महिलाओं की स्वतंत्र वैचारिकता को दर्शाया। जहाँ सभी धार्मिक, घरेलू एवं बाहरी कार्यो में स्त्री–पुरुष दोनो समान स्थिति रखते थे। जॉकबश इस तरह का अध्ययन कर एक नई शैली का आकलन भी कर रही थीं। जिसमें माध्यम से शैक्षिक समझ या जिम्मेदारी और पुरानी परंपरा का विरोध किया जा सकता हैं। इस माध्यम से जॉकबश सिख धर्म व उनके रीति रिवाजों के विभिन्न पहलुओं का परीक्षण कर एक नई समझ को दर्शाती है। जिसमें दो महत्त्वपूर्ण बिन्दु उभरकर सामने आते हैं – 1– नोवल रिचयूल का विकास तथा 2– शैक्षिक व्यवस्थाओं का वृहदीकरण। इसके अलावा जॉकबश सिखधर्म की विचारधारा को उसके उद्भव से लेकर आज तक के उसके रीति रिवाजों और आस्था भाव का आकलन करती हैं।[24]

मूल्यांकन

इस प्रकार प्रस्तुत विवरणों के अनुसार जो नये तथ्य उभर कर सामने आये इससें यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि सिखों के सर्वोच्च धार्मिक ग्रंथ श्री गुरु ग्रंथ साहिब में किसी तरह से महिलाओं के सामान्य एवं सामाजिक रूप से किसी तरह से कोई पाबंदी नहीं हैं। इसके अलवा किसी विशेष तरह की सामाजिक रवायतें भी नहीं हैं जिसके ऐवज में यह कहा जा सके की सिख धर्म में कोई विशेष कार्य महिलाओं के लिए निश्चित किया गया है। सिख धर्म की शुरुआत ही सामाजिक समानता से हुई जहाँ महिलाओं के लिये अमुमन यह शब्द सुना जाता है कि सिखी में महिलाएं सिख समाज एवं पंथ की आंतरिक भाग का महत्त्वपूर्ण हिस्सा हैं। किन्तु यह समानता, यह आंतरिक हिस्सा प्रायः साहित्यों एवं ऐतिहासिक विधाओं से कोसों दूर दिखाई देता है।

बीसवी शताब्दी के अन्तिम तीन दशक सिख इतिहास खासकर सिखो में मिहलाओं की भूमिका को लेकर वर्षों से छाये उस कोहरे में सूर्य के प्रकाश की तरह थे जिनसे अवश्य ही नई चेतना, नई ऐतिहासिक एवं अंतर्विषयक शोधों की मुखालफत कर शोधार्थियों की वैचारिकता को स्वतंत्र किया। द्वितीय बर्कशायर कान्फ्रेन्स में परिणाम स्वरूप सिख इतिहास में महिलाओं को धीरे धीरे उनकी समानता का हक मिलने लगा जो कि गुरुसाहिबान ने प्रारम्भ से ही दिया था। यह सत्य है कि धर्म में वर्णित विचारो का प्रयोग लोग सिर्फ नियमों के तौर न करके उसका निर्वाह अपने लाभ के लिये करते हैं। क्योकि किसी की ऐतिहासिकता को शोध के बाद दर्शा कर हम ऐतिहासिक एवं मानवीय जिम्मेदारियों का तो निर्वाह कर सकते है किन्तु इसमे दो राय नहीं है कि हम उस विषय को वो हक दिला सके जो उसके मूल में निहित थे। जिस प्रकार प्रभुसता के संघर्ष में महिलाओं की भूमिका एवं उनकी चेतना का प्रयोग हुआ वह केवल भूमिका की तरह नहीं था। क्योंकि यह शब्दावली तो मिसिंग एप्रोच को दर्शाने के लिए प्रायः इतिहासकारो एवं शोधार्थियों के द्वारा किया जाता है किन्तु सिख इतिहास के संघर्ष से महिलाओं की चेतना तो कभी मिसिंग ही नही रही।

संदर्भ सूची

1 हरजीत कौर अरोड़ा, सिखज्म एंड द स्टेटस ऑफ वूमैन– सिख सिप्रिट, पेज संख्याः 51 http:/k/kwww.bsingh.dsl.pipex.com/kkhalsa/knews51.htm.

2 श्री गुरू ग्रंथ साहिब, (वार आसा महला 1) पृष्ठ 27

3 एच. एस. भाटिया, ऐनसाइकलोपैडिक हिस्ट्री ऑफ सिख एंड सिखिजम, पेज सं. 29, श्री गुरू ग्रंथ साहिब (मारू महला 1) पृष्ठ 110.

4 एस.एस. बेदी, (संपा–)वूमैन इन द फाल्क सेयिंगस ऑफ पंजाब– इन एस. सेन गुप्ता, एवं वूमैन इन इन्डियन फाल्कलोर, कलकताः इन्डियन पब्लिकेशनस,

1969, पेज सं. 167–76. श्री गुरू ग्रंथ साहिबः(धनासरी महला 1) पेज सं. 661.

5 हरि सिमरन कौर, श्री गुरू ग्रंथ साहिब में चित्रित स्त्री–पुरष सम्बन्धों का लौकिक महत्व, कल्पना प्रकाशन, नई दिल्ली, 2010, पेज सं. 46.65.

6 regentsprep.org/kRegents/kglobal/kvocab/ktopicf.cm. new.qbgm&umc.org/kmissionstudies/kindiapkaistan/kglossary2/k

7 श्री गुरु ग्रंथ सहिबः (जपुजी सहिब) पृष्ठ 4, पोथी 1– विभिन्न धर्मो में वर्णित स्त्री धर्म की चर्चा से यह तथ्य सामने आता है कि समान्यतः नारियां पुरषों की अपेक्षा धर्म को अधिक महत्व देती है। भारत की सामाजिक मान्यातयें और परम्परायें विभिन्न धार्मिक बंधनो पर आधारित रही हैं जिनका सबसे अधिक प्रभाव भारतीय नारी के जीवन पर पड़ता है। किसी भी धर्म या समाज की स्त्री की चेतना सिर्फ उसके स्त्रीत्व पर ही निर्भर नहीं करती हैं।

8 वहीः (महला 2 पौड़ी) पृष्ठ सं 1, जो व्यक्ति अपने सद्गुणों से अपनें वंश और देश का उद्धार करतें है उन्हें जन्म देने वाली स्त्री भी स्त्रीत्व का ध्यान रख पाती है। इस तरह नारी की भूमिका सिख पंथ में सदा से ही महत्वपूर्ण रही हैं , जहाँ स्त्री को गुरू, माँ, और ईश्वर के तुल्य माना गया है। इस प्रकार के तथ्य यह दर्शाते है कि पन्द्रहवीं शताब्दी सें लेकर अठारवीं शताब्दी तक महिलाओं की स्थिति में कुछ खास बदलाव नहीं आये थें, किन्तु बीसवी शताब्दी में ऐतिहासिकता एवं सिख समाज में पैतृकता के भाव तेजी से बढ़े जहाँ आवश्य ही महिलाओं की स्थिति में फेरबदल हुये।

9 कवलजीत कौर भाटिया, कोन्टरिब्यूशन ऑफ सिख वुमैन टू सिख सोसाइटी– पी.एच.डी. थीसिस– चंडीगढ़ः पंजाब यूनिवरसिटि, 1989, पृ.सं.143–56.

10 खुशवंत सिंह, सिखों का इतिहास, वाल्यूम 1, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी, नई दिल्ली पृ.सं. 303–308.

11 वही, पृ.सं. 313–318.

12 बरार दिलिप कौर, रोल ऑफ वूमैन इन सिख सोसाइटि– इन सिख वूमैन सेमीनार, वीलोडेल, 1985 पृ.सं. 45–47.

13 ग्रिफन द्वारा लिखित लॉ ऑफ इनहैरिटैन्स टू चीफशिप 51इस स्थिति का वर्णन एक समकालिन इतिहासकार ने, जिसे टॉड ने बताया कि वे जुझारू थे।

14 निहार रंजन राय, द सिख गुरू एंड सिख सोसायटीः ए स्टडी इन सोशल अनालिसिस, पंजाबी यूनिवर्सिटी, पटिआला, 1970.

15 नैली आउडशोर्न, बियान्ड द नेचुरल बॉडी, राउटलेज,न्यू योर्क, 1994,आमुख भाग.

16 कैरोल पैटिमैन, 'फेमनिस्ट क्रिटिक ऑफ द पब्लिक डाईकोटोमी' इन डिसोआर्डर ऑफ वूमैनः डेमोक्रेसी, फेमनिस्ट एंड पोलिटिकल थियोरी, कैम्ब्रिज, पोलिटी प्रेस, 1989 पेज सं 118–140.

17 गैरडा लरनर, फिक्रएशन ऑफ पैर्टिआरकीय, न्यू योर्क, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1986– एलिसन जैग्गर आदि का मानना है कि सेक्स और जेंडर एक दूसरे के साथ द्वंद्वात्मक और अविभाज्य रूप से संबधित हैं और कि नारीवादियों द्वारा शुरूआत में जो वैचारिक परिभाषा दी गई थी वह एक खास बिंदु के बाद नहीं टिक पाती हैं। जैग्गर के अनुसार, इंसान का हाथ श्रम का औजार नही हैं, श्रम की उपज भी हैं। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि, स्त्री का शरीर का बनावट भी सामाजिकों बंधनों और सौंदर्य के मानकों द्वारा निर्धारित किया गया हैं। (http:/k/kwwwf.reeessays.cc/kdb44/ksmu273273.shtml)

18 हाइडी हार्टमान्न, फ्रैडिकल फैमिनिजम एंड फेमिनिस्ट रैडिकैलिज्मय, काउनर कलचरल ऐसेयस, वेसलिसियन यूनिवर्सिटी प्रेस 1992.

19 तनिका सरकार (संपा), ''वूमैन एंड हिन्दु राइट्स'', एन–डी– पॉल प्रेस, 1995.

20 गोस्वामी कृष्णा, संत काव्य में नारी, रोहतक, शांति प्रकाशन, 1989.

21 टॉनी बैलनटाईन, टैकसचर ऑफ द सिख पॉस्ट, ऑक्सफोर्ड यूनिवरसिटी प्रेस, पृष्ठ संख्या 17–21.

22 डब्लयू.एच. मैक्लॉयड, जैंडर एंड सिख पंथ, ''सख ऑफ द खालसा, ए हिस्ट्री ऑफ द खालसा रहित'', ऑक्सफोर्ड यूनिवरसिटी प्रेस, ओईपी 2005.

23 टॉनी बैलनटाईन, टैकसचर ऑफ द सिख पॉस्ट, ऑक्सफोर्ड यूनिवरसिटी प्रेस, पृष्ठ संख्या 23–29.

24 डॉरिश आर. जॉकबश, (अनु.) रिलोकेटिंग जैंडर इन सिख हिस्ट्रीः ट्रांसफोरमेशन, मिनिंग, आईडेनटिटी, ओईपी, नई दिल्ली, 2003 आमुख 9–12. (संपादित, सिखईजम एंड वूमैनः हिस्ट्री, टैक्सट एंड ऐक्सपिरियन्स, ओईपी, नई दिल्ली, 2010 आमुख से उद्धृत)

एक नूर ते सब जग उपजया

*आशा रानी

* हिन्दी विभाग, पी.जी.डी.ए.वी. कॉलेज (सांध्य), दिल्ली

भक्ति आन्दोलन की महान संत परम्परा में गुरु नानक देव जी अपना विशिष्ट स्थान रखते हैं, जिन्होंने अपने महान व्यक्तित्व और काव्य–वाणी से सम्पूर्ण युग को सन्देश देने का अद्भुत कार्य किया। नानक जी का गौरव उनके विलक्षण व्यक्तित्व, दूरदर्शिता, युग के प्रति जागरूकता, आमजन से सरोकार, लोक संग्रह की भावना, आडम्बरों के प्रति विद्रोह व घट–घट में व्याप्त उस परमसत्ता के महीन तत्व से जुड़ा है। विश्व की महान विभूतियां समय और काल से परे होती हैं जिनकी महानता उनके विचारों द्वारा युगों–युगों तक जन जीवन को जागृत करती है तथा राष्ट्र एवं जगत का मार्ग प्रशस्त करती है। जब देश भेदभाव और विदेशी हमलावरों के आक्रमणों से आक्रांत था तब मानवता को जीवन के सही उद्देश्यों का बोध कराने गुरु नानक जी विश्वभर की चार बड़ी यात्राओं (उदासियों) के लिए निकले। उन्होंने चारों दिशाओं में घूमते हुए त्रस्त मनुष्यों के दुखों को न केवल सुना बल्कि उनको उभरने के उपाय भी बताये। सारी मनुष्यता को उन्होंने बताया की ईश्वर एक है, वही सत्य है, वह सभी में वास करता है और हम सबमें उसी का अंश हैं। अतः सबसे बड़ा धर्म मानवधर्म है। आज विश्व में श्री गुरु नानक देव का नाम समाज में समता लाने, विखंडित राज्यों को एकसूत्र में बांधने, नये समाज का निर्माण करने और उनकी मानवतावादी दृष्टि के लिए जाना जाता है। भाई गुरदास जी ने उनके लिए सही कहा "सतगुरु नानक प्रगटिया, मिटी धुंध जग चानण होया" यानि उनके आगमन से अंधकार मिट गया, जिससे एक ईश्वरीय सन्देश प्रवाहित होता है।

देश की धार्मिक–सामाजिक एवं परवर्ती युग में राजनीतिक स्थिति को प्रभावित करने वाले सिख पंथ का प्रमुख स्थान है जिसकी स्थापना गुरुनानक ने की, बाद में नौ गुरुओं ने उसे परिवर्धित और संगठित किया। संतों ने एक स्वच्छ समाज एवं पवित्र धर्म की संस्थापना हेतु लोकमंगल की कामना से प्रेरित हो कर तत्कालीन समाज में व्याप्त कुरीतियों एवं बाहरी आडम्बरों पर प्रहार किया। नानक ने कबीर की तरह धार्मिकदृसामाजिक आचारदृ व्यवहार व कर्मकाण्ड पर चोट करते हुए 'व्यक्ति' कल्याण को विशेष महत्त्व दिया। "विचारों और आचारों की दुनिया में परिवर्तन लाने वाले गुरु नानक किसी का दिल दुखाये बिना तथा किसी पर आघात किये बिना कुसंस्कारों को नष्ट करने की शक्ति रखते हैं। जहां एक ओर उन्होंने मानव के सामाजिक दुखों का अनुभव किया वहीं दूसरी ओर अंधविश्वासों और गलत मान्यताओं को दूर करने का प्रयास भी किया। भेद–भाव से ऊपर उठ कर वे हिन्दू मुसलमानों को समान दृष्टि से देखते थे। कबीर की तुलना नानक में खंडनदृमंडन की प्रवृति यद्पि कम रही है। सामाजिक तथा धार्मिक क्षेत्र में एकेश्वरवादी, मूर्तिपूजा का विरोध, हिन्दू–मुस्लिम एकता और सच्ची पवित्र भक्ति उनका ध्येय रहा है। विषम परिस्थितियों में उन्होंने मनुष्य की अंतर्निहित शक्ति को जगाया व उनके विचारों में कहीं भी संकीर्णता या क्षुद्रता न थी। ऐसी स्थिति में शताब्दियों से पददलित निम्न जातियों को बन्धनों से मुक्त होने की अपार प्रेरणा नानक से मिली क्यूंकि कबीर की तरह नानक ने जाति–प्रथा के विविध पहलुओं पर कस कर प्रहार किया।१

नानक द्वारा प्रवर्तित इस पंथ ने देश की जनता को एक नई दिशा प्रदान की जिसमें समानता, बंधुता, ईमानदारी और सृजनात्मक शारीरिक श्रम के द्वारा जीविकोपार्जन की नयी समाज–व्यवस्था पर जोर दिया गया था। वास्तव में मानव की श्रम शक्ति से समाज में उसके स्थान का निर्धारण होना तय हुआ। देश के सामाजिक–धार्मिक व्यवस्था पर पड़े नानक के व्यापक प्रभाव का मूल्यांकन करते हुए प्रसिद्ध पुरातत्ववेत्ता कनिंघम ने लिखा है, "नानक ने सुधार के सच्चे सिद्धांतों का बड़ी सूक्ष्मता के साथ साक्षात्कार किया और ऐसे व्यापक आधार पर धर्म की नींव रखी जिसके द्वारा गुरु गोविंदसिंह ने अपने देशवासियों में एक नवीन राष्ट्रीयता की भावना को जन्म दियाद्य उत्तम सिद्धांतों को ऐसा व्यावहारिक रूप दिया कि उनके धर्म में छोटीदृबड़ी जातियों को जीवन के सभी क्षेत्रों में समान मर्यादा प्राप्त हुई।"२

मानवीय मूल्यों की स्थापना के उद्देश्य से संतों ने जिस जाति–पाति के भेद को मिटाने का प्रयास किया था उसे गुरुनानक ने विशेष संबल दिया। वर्ण व्यवस्था पर लगातार चोट करके वाले भक्ति आन्दोलन ने सभी जातियों के लिए भक्ति का द्वार खोल दिया था और "जात–पात पूछे न कोई, हरि को भजै सो हरि को होई", जैसा नारा देकर सभी को एक धरातल पर प्रतिष्ठित करने की पुरजोर कोशिश की। जब व्यक्ति उसकी सर्वव्यापकता को हृदय से स्वीकार करता है तब वह किसी भी प्राणी के प्रति हिंसा करने से दूर रहता है।

समाज में सद्भावना ,सुख एवं शांति का वातावरण निर्मित होता है।

गुरु नानक ने सभी बन्धनों को तोड़कर मानव की एक ही जाति बनाने का प्रयास किया "एक पिता एकस के हम बारिक"। सभी संतों की वाणी और शिक्षाओं का यही सार है कि हर मनुष्य में उसी परमतत्त्व का अंश है, वह कण–कण में समाया है लेकिन पाखंड–प्रपंचों में पड़ा मनुष्य इस सत्य को आज तलक नहीं समझ पाया। बल्कि समय के साथ उन प्रपंचों की जडें और ज्यादा अन्धकार में धँसती नज़र आ रही हैं। आज भी हिन्दू–मुस्लिम वैमनस्य बढ़ता ही जा रहा है। ऐसे में नानकदेव जी के इस अनमोल शब्द की कितनी जरुरत महसूस होती है...

"अव्वल अल्लाह नूर उपाया, कुदरत दे सब बन्दे,
एक नूर ते सब जग उपजया, कौन भले कौन मंदे!!

गुरु नानक अपना सम्बन्ध देश के निम्न से निम्नतर व्यक्तियों के साथ मानते थे, सम्पन्न व्यक्तियों से सम्बन्ध बनाने में उन्हें गौरव का अनुभव नहीं होता था, यह उनकी श्रेष्ठता थी। समाज में चारों ओर असंतोष, उदासीनता, भाग्यवादिता का बोलबाला था, हताश और निराश जनता ईश्वर की शरण को ही मुक्ति का द्वार मान रही थी। ऊंच–नीच और जातिवाद में बंटे समाज में बहिष्कृत तथा तिरस्कृत शूद्रों का जीवन मृतक समान था। नानक छुआछूत में विश्वास नहीं रखते थे। वे तो सभी को एक परमात्मा की संतान मानते थे और जाति पूछने की मनाही करते थे। वे चाहते थे कि प्रत्येक मनुष्य में सभी वर्णों के धर्मों का समन्वय हो अर्थात् उसमें पांडित्य, शौर्य, दान, सेवा का सम्मिश्रण हो। नानक ने मानवदृमानव की बराबरी के लिए अर्थ को महत्त्व नहीं दिया था उन्होंने ऐसे समाज की कल्पना की थी ––– "जिसमें किसी के पास अधिक धन न हो और न ही इतने धन की कमी हो कि पेट भरने के लिए मनुष्य घर–घर अपमानित होता रहे। वाही मनुष्य सुखी है जिसके पास आवश्यकतानुसार धन है। यह आज सत्य प्रतीत होता है कि समान आर्थिक वितरण से ही समाज में एकता और आनंद की स्थापना हो सकती है।"३ उनकी आस्था थी कि जहाँ पर निम्न लोगों के साथ सद्व्यवहार होता है वहां खुद ईश्वर होता है। इसलिए उनका संरक्षण करना जरूरी है।

नीचा अंदरि नीच जाति, नीचों अति नीचु!
नानक तिन के संगि सधि, बडिया सिउ किआ रीस!!४

गुरु नानक ने निम्न वर्गों के उद्धार के साथ नारी वर्ग के सम्मान की भी रक्षा की। उस समय स्त्रियों को केवल भोग की वस्तु माना जाता था। उनकी दशा अछूत व खरीदे हुए दासों जैसी थी जिन्हें कोई अधिकार प्राप्त नहीं था और अनादर हो रहा था। नानक ने उन्हें पुरुषों की बराबरी का दर्जा दिया, नारी की निंदा करने वालों को कहा कि नारी अनिन्दनीय है और वह हमारे जीवन की धुरी हैद्य उसी के कारण सामाजिक, सांसारिक सभ्यता चल रही है। नारी को जो सम्मान उन्होंने दिया वे बाकी संत कवि नहीं दे पाए। यह उनका मौलिक चिन्तन है जिसने मध्यकाल में मानवता की सच्ची राह दिखायी।

भंडी जमीऐ भंडी निंमीऐ भंडी मंगणु वीआहु।
भंडहु होवै दोस्ती भंडहु चलै राहु।
भंडु मुआ भंडु भालिऐ भंडी होवे बंधानु।
सो किउ मंदा आखीऐ जितु जमहि राजान।
भंडहु ही भंडु ,ऊपजै भंडै बाझु न कोई।
नानक भंडै बाहरा एको सचा सोइ।५

गुरु नानक की वाणी का केंद्र बिंदु जनकल्याण था। उनके यहाँ हिन्दू, मुस्लिम, सिख, ईसाई, स्त्री–पुरुष सभी को ईश्वर की प्राप्ति का बराबर अधिकार था क्यूंकि परमात्मा का रूप विश्व के समग्र पदार्थों में समान रूप से है। उसका अंश सब जीवों के शरीरों में विभिन्न होते हुए भी आत्मा के रूप में विरजमान है। नानक जी ने समकालीन समाज के अभिन्न अंग मानव के हृदय परिवर्तन के माध्यम से समाज परिष्कार के प्रयत्न किये। उनकी दृष्टि में विशाल हृदय, सहिष्णु, मानवता का पुजारी और धर्मान्धता, संकीर्णता, ढोंग, जर्जित कर्मकांडों से ऊपर उठा व्यक्ति ही सही होता है। गुरु नानक जी ने उत्तम आचरण को ही श्रेष्ठ मानाद्य उन्होंने महसूस किया कि जब तक मनुष्यों के बीच प्रेम नहीं होगा, तब तक सभी जीवों के प्रति सहानुभूति का विस्तार असंभव है, इसलिए उन्होंने लोकमंगल की दृष्टि से विनम्रता, क्षमा, दया, करुणा, मैत्रीभाव इत्यादि सद्गुणों के विकास पर बल दिया। उन्होंने हिन्दुओं और मुसलमानों दोनों को ही चेतावनी देते हुए कहा कि निरी बातों से बहिश्त या स्वर्ग की प्राप्ति नहीं हो सकती, उसके लिए शुद्ध आचरण जरूरी है। सच्चे और सुच्चे मार्ग पर चलकर ही इस भवसागर से निजात मिलेगी, झूठी बातें करने से झूठ की प्राप्ति होगी। उनके साहित्य में कर्म और श्रम का सौन्दर्य मिलता है, परायी वस्तु को छूना वे पाप मानते थे।

"हकु पराइया नानका उसु सूअर उसु गाइ।
गुरु पीरु हामा ता भरे जा, मुरदारू न खाइ।।" ६

गुरु नानक और अन्य संत कवियों ने एक ऐसे लोकधर्म की प्रतिष्ठा की जिसने सामन्ती व्यवस्था को बहुत कमजोर किया। धर्म पर से पुरोहितों की जकडबंदी तोड़कर जुलाहों, किसानों, कारीगरों, अछूतों और गरीबों को यह एहसास दिलाया कि उनका काम पुरोहितों और शास्त्रों के बिना भी चल सकता है और सहज रूप से भी उस परम परमेश्वर की प्राप्ति हो सकती है। इस मध्ययुगीन आन्दोलन ने विभिन्न धर्मों वाले जनदृसमुदायों की एक ऐसी संस्कृति का विकास किया जो सामन्ती उत्पीड़न के खिलाफ़ लड़ने का मार्ग प्रशस्त करती है। रामविलास शर्मा के अनुसार "संत साहित्य में मानव मात्र की समानता की भावना एक मूल सूत्र की तरह विद्यमान है, विभिन्न धर्मों, जातियों और वर्गों में बंटे हुए समाज में निर्धन जनता यह विश्वास प्रकट किये बिना न रह सकी कि सभी मनुष्य भाई–भाई हैं। संत साहित्य शोषण से त्रस्त जनता की इस आंकाक्षा को प्रकट करता है कि ऐसे समाज का निर्माण हो, जिसमें ऊँच–नीच का भेद न हो, जिसमें सताने वाले राजा न हों, धर्म के ठेकेदार न हों, समाज व्यवस्था का आधार प्रेम हो, जहाँ लोग रोग और अकाल से न मरें, जहाँ स्त्रियों और पुरुषों के लिए एक से नियम हों।"७

गुरु नानक ने अपनी कविता में धर्म की सरल और व्यावहारिक बातों को जनता के सामने रखा। धर्म से जो भी प्राप्त होता है, वह उसमें आचार और नीति के कारण ही प्राप्त होता है। इसी कारण नानक ने अपना सारा ध्यान आचार और नीति पर दिया है। सत्य से भी

ऊपर उन्होंने आचरण को माना है। जहाँ भी उन्होंने अन्याय होता देखा, उसका खुलकर विरोध किया। गुरु नानक की वाणी में धार्मिक आडम्बरों, अवतारवाद, मूर्तिपूजा, हिंसा, धार्मिक पुस्तकों के ज्ञान एवं तर्को की अस्वीकृति है। धार्मिक अंधविश्वासों को दूर करने का जीवनपर्यन्त अनथक प्रयास किया। संत कबीर की तरह नानक ने सहज भक्ति को मानते हुए हृदय की पवित्रता, मन की शुद्धता और सहजता पर विशेष बल दिया। गुरु जी के समय हिन्दू–मुसलमान दोनों ही अपने नैतिक मूल्यों से च्युत हो चुके थे और साम्प्रदायिकता की गर्त में जा चुके थे। इसलिए मानवीय मूल्यों के लिए उन्होंने अपनी वाणी में कुछ आदर्श साधकों की परिकल्पना की, जो बाहरी आडम्बरों से दूर हों और सहजता को जीवन का मूल मानते हों। गुरु नानक देव जी की विश्वदृष्टि का मूलाधार उनके द्वारा दिया गया "जपुजी साहिब" का मन्त्र है ३

"एक ओंकार, सतिनाम, करता, पुरखु, निरभउ।
निरवैर,अकाल मूरती, अजूनी, सैभं, गुरु प्रसादि।"
आदि सचु जुगादि सचु। है भी सचु नानक होसी भी सचु।।
सोचै सोचि न होवई जे सोची लख वार।
चुपै चुप न होवई जे लाइ रहा लिव तार।
भुखिआ भुख न उतरी जे बंना पुरीआं भार।
सहस सिआणपा लख होहि, त इक न चलै नालि।
किव सचियारा होईये , किव कूड़ै तुटै पालि।
हुकमि रजाई चलणा नानक लिखिआ नालि।"८

नानक जी ने जो अखण्ड आरती लिखी है, वह पूरी सृष्टि की वंदना करती है।उन्होंने यह आरती पूर्वी भारत की उदासी के दौरान जगन्नाथ पुरी मंदिर में उच्चरित की थी। इस आखंड आरती को गाते हुए उन्होंने परम्परागत आरती से हटकर सम्पूर्ण सृष्टि को ही उस परम परमेश्वर के आगे नतमस्तक दिखाया है। उस परमेश्वर की इतनी विराट और सहज आरती करने में ब्रह्माण्ड की हर वस्तु अपनी शक्ति और समर्थता से जुटी हुई है, ऐसे अनाडम्बर,सहज और निरेह आत्मसमर्पण के आगे तन–मन खुदबखुद विनत हो जाता है जिसके लिए किसी कृत्रिम साधनों की कोई आवश्यकता नहीं। इसके माध्यम से उन्होंने पंडितों के दिखावे की प्रक्रिया पर प्रश्नचिन्ह लगाया था। कुदरती आरती का रूपक बांधकर उन्होंने मनुष्य के चरित्र को भी महान बनाने की प्रेरणा दी। सम्पूर्ण सृष्टि में जब सब कुछ उसी से संचालित है तो फिर आडम्बरों की क्या जरूरत ? नानक जी ब्राह्मणों के दिखावों ,जपमाला तिलक पर अपने बाणों से प्रहार करते रहे। भक्ति के नाम पर फैले इन प्रपंचों का विरोध कर वे गरीबों और निम्नवर्गों में आये हीनताबोध को दूर करने की चेष्टा करते हैं।अपनी इसी सोच को साकार करने के लिए 'लंगर' और 'संगत' लिए उन्होंने 'संगत' और 'लंगर' का भाव विकसित किया ताकि बिना धर्म ,जाति,नस्ल,अमीर,गरीब,नीच–ऊंच, वर्ण,भेदभाव के सब लोग एक साथ उस परम परमेश्वर की आराधना कर सकें और उच्च विचारों को धारण कर सकें।गुरु नानक की इसी विराट संकल्पना को देखते हुए रवीन्दनाथ टैगोर ने नानकदेव जी की अखण्ड आरती को 'विश्वगान' कहा है।

"गगन में थालु, रवि चंदु–दीपक बने,
तारिका मंडल जनक मोती,
धूप मलआनलों पवणु चवरो करे,
सगल बनराइ फूलंत जोती
कैसी आरती होइ।।
भवखंडना तेरी आरती।।
अनहत सबद बाजंत भेरी।।६

प्रकृति को वे मनुष्य के लिए प्राणदायक तत्व मानते हैं। उनके जहाँ प्रकृति ही मनुष्य और ईश्वर के बीच अटूट सम्बन्ध की कड़ी है। नानक जी ने प्रकृति और मनुष्य में 'पवणु गुरु पाणी पिता, माता धरत महत' जैसे घनिष्ठ और अटूट संबंधों को माना है।

नानक ने मुसलमानों के आडम्बरों का भी खंडन किया और सच बोलना, हक की कमाई करना, सरबत का भला माँगना, नीयत को साफ़ रखना और परमात्मा की महिमा की प्रशंसा करने को पांच वक्त की नमाज़ माना। इन नमाज़ों के साथ जब ऊंची करनी मिल जाए तभी कोई सच्चा मुसलमान हो सकता है।

जे रतु लगै कपडै जामा होई पलीतु।
जो रतु पीवहि माणसा तिन किउ निरमलु चीतु।।१०

हमारे गुरु, पीर, पैगम्बर सब अपनी शिक्षाओं में मनुष्यता की ख़ैर माँगते रहे, सरबत दा भला कहते रहे लेकिन हम आज भी उनकी शिक्षाओं को अपने जीवन में अमल में नहीं ला पाए। एक नूर ते सब जग उपजया के भाव को फैलाने वाले श्री गुरु नानक देव जी ने तो अपना सारा जीवन अहंकार और अंधकार को चीरकर प्रेम का पाठ पढ़ाने में ही लगा दिया। उनका 'एक पिता एकस के हम बारिक' उपदेश हमें शिक्षा देता है कि दुनिया में सभी इंसान एक समान हैं, हम सब एक ही पिता की संतान हैं। यह निर्विवाद है कि आज विश्व को गुरु की शिक्षाओं को आत्मसात कर अपना, समाज और राष्ट्र निर्माण का मार्ग प्रशस्त करने की कितनी जरूरत है। हमारी सारी आस्था और विश्वास मनुष्यता के प्रति होनी चाहिए। आज सबसे बड़ा संकट मनुष्यता के ऊपर ही है। इसमें कोई संदेह नहीं कि सियासतदानों, सांप्रदायिक ताकतों, विधि–विधानों ने मनुष्य को उसके लक्ष्य और प्रकृति से बहुत दूर धकेल दिया है जो सबकी चिंता का विषय होना चाहिए परन्तु ओछी राजनीति हर जगह हावी है। मानव कल्याण करने की बजाए अपने निजी स्वार्थों के वशीभूत होकर समता, न्याय और दूसरों के आदर–सम्मान को बुरी तरह से कुचला जा रहा है और यहाँ तीनों का अभाव होगा वहाँ मानव प्रेम की तलाश करना बेमानी है। आज नैतिक पतन, आदर्शहीनता, स्वार्थ, भ्रष्टाचार, संगदिली सर्वत्र व्याप्त है ऐसे में कोई उम्मीद नज़र नहीं आती। राजनीति हो अथवा धर्म वर्चस्व की लड़ाई हर जगह चल रही है। मानवीय अस्मिता की चिंता न धर्म को है न राजनीति को और जब दोनों ही पतनशीलता की ओर अग्रसर होते हैं तो अपना विश्वास खो देते हैं। आज हम इसी संकट के दौर से गुजर रहे हैं जिसमें आमजन के लिए कोई सहर नज़र नहीं आ रही जो उनके जीवन को कोई दिशा दे सके। इसलिए गुरुओं की शिक्षाओं की हमें हर पल जरूरत महसूस होनी चाहिए ताकि किसी के साथ कुछ अनुचित न कर सकें। बुरा कार्य करने के बारे में न सोचें और न किसी को सताएँ। नानक जी कहते भी हैं "मंदे कम्मी नानका, जस तस मंदा होए"। उस

सर्वशक्तिमान ईश्वर की भक्ति करने वालों को किसी का भय नहीं होना चाहिए क्यूंकि जगत का कर्ता, वह निरंजन पुरुष सब जगह और सब प्राणी मात्र में मौजूद है। सदा क्षमाशीलता माँगनी चाहिए। मेहनत और ईमानदारी से कमाई करके उसमें से जरूरतमंद को भी कुछ देना चाहिए। लोभ और लालच से बचना चाहिए। उनका दिया ज्ञान आज भी उतना ही प्रासंगिक है। गुरु नानक का जीवनदर्शन पूरी तरह से मानवतावादी है। सम्पूर्ण संसार के प्राणियों में मज़हबों, वर्णों, जातियों से ऊपर उठकर एकताम्कता का दिव्य सन्देश देती वाणी ने विभिन्न धार्मिक संकीर्णता में जकड़े लोगों को एक वृहद सन्देश दिया है। यदि उस सन्देश के कुछ अंशों को भी अपने जीवन में इसे उतार पाएं तो मुझे लगता है कि हमारा जीवन सफल है। इस सहज सरल मार्ग को प्रशस्त कितना जरूरी है ...

माटी एक सकल संसारा, बहुविधि भांडे घढ़े कुम्भारा।
पञ्च तत्वु मिल देही का आकार, घट वद को करें विचारा।।११

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि मनुष्यता के अनन्य समर्थक, समाज सुधारक, मानव सेवा को परमार्थ मानने वाले गुरु नानक जी की जनकल्याण और विश्व एकता की भावना अतुलनीय, अद्‌भुत और अनुकरणीय हैं। उन्होंने अपने समय में तत्कालीन सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक और पूंजीवादी व्यवस्था की वास्तविकता को देखकर समाज में बराबरी और समता की जो अलख जगायी तथा समाज के उत्थान के लिए जो योग्दान दिया महत्त्वपूर्ण व अतुलनीय है। जब मनुष्य इतने मत–मतान्तरों में उलझा हुआ है ,उस एक परम शक्ति को भूल रहा है जिसकी सब संतानें हैं, ऐसे में उनकी शिक्षाओं और उपदेशों की प्रासंगिकता और भी बढ़ गयी है। आज जब पूरा विश्व गुरु जी के ५५०वें प्रकाशपर्व को बड़े सत्कार और सम्मान से मना रहा है तो उनकी श्रेष्ठता और प्रासंगिकता स्वयंसिद्ध है। सरबत का भला मांगने,विश्व बंधुत्व की भावना को बढ़ाने वाले नानक जी निस्संदेह सच्चे अर्थों में मानवधर्म के पैरोकार थे जिन्होंने अपनी वाणी से इसे प्रमाणित किया। उनके लिए हर जीव का जन्म एक ही नूर से हुआ है चाहे वो अपने व्यवहार में अच्छा है या बुरा। इसलिए उस कुदरत के लिए उनके जीवन में अथाह प्रेम है और उसकी रची रचनाओं के प्रति भी। अमृत समान परमात्मा के नाम की असलियत का स्वरूप वही जान सकता है जो अमृत का व्यापारी होता है और नानक जी सच्चा सौदा करने वाले सच्चे व्यापारी थे। " अमृत की सार सोई जाणे ,जि अमृत का बापारी"

संदर्भ सूचीः

१. भक्तिकाल का आधुनिक संदर्भ, संप. संतोष कुमार चतुर्वेदी, साहित्य भंडार इलाहबाद , पृष्ठ संख्या ३६
२. वही ....
३. गुरु रविदास और गुरु नानक :तुलनात्मक अध्ययन, उमेश कुमार, नयी दिल्लीःगौतम बुक सेंटर ,पृष्ठ १०६
४. गुरुग्रन्थ साहिब, राग सिरी, महला–१, पृष्ठ १५
५. गुरु ग्रन्थ साहिब, महला–१, पृष्ठ ४७३
६. नानक वाणी राग माझ, अंग १४१
७. भक्ति आन्दोलन और काव्य, गोपेश्वर सिंह,नयी दिल्लीः वाणी प्रकाशन, पृष्ठ २६
८. नानक वाणी–जपुजी, पृष्ठ ७६
६. नानक वाणी........
१०. नानक वाणी, पृष्ठ १७८७

मनुष्यता की केन्द्रीय धुरी हैं गुरु नानक के विचार

*डॉ. हरीश अरोड़ा

* हिन्दी विभाग, पी.जी.डी.ए.वी. कॉलेज (सांध्य), दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

भारत की यह पवित्र धरती संतों और महात्माओं की धरती है। उनके विचारों की शुचिता ने ही भारतीय संस्कृति को विश्व में श्रेष्ठतम और औदात्यपूर्ण बनाए रखा है। इनके विचारों के आलोक में ही भारतीय जीवन की सांस्कृतिक विराटता को आध्यात्मिकता का आश्रय मिला। अध्यात्म की इस अद्वितीय-परम्परा ने भारत और भारतीयता को जीवन्त बनाए रखा। इन्हीं महान संतों की शृंखला में सन् 1469 में एक दिव्य आत्मा ने नानक के रूप में भारत में जन्म लिया। उनके जन्म के समय का भारत ऐसा था, जिसमें भारतीय समाज मुगल आतताइयों के अत्याचारों और यातनाओं से पीड़ित था। उस समय एक ओर तो भारतीय समाज में 'अध्यात्म और मनुष्यता' केन्द्रीय धुरी थे, इन्हीं के आलोक में भारतीय जीवन-मूल्यों के संरक्षण का कार्य किया जा रहा था। वहीं दूसरी ओर अध्यात्म की विभिन्न प्रक्रियाओं में कुरीतियों और आडम्बरों के कारण भारत की सांस्कृतिक चेतना में परिवर्तन भी आ रहा था। ऐसे में नानक जैसे संतों ने भारतीय समाज को एक नई दिशा दिखाने का कार्य किया। वे समाज को अपने दृष्टि-बोध से एक ऐसी दार्शनिक चेतना से परिचित कराते दिखाई देते हैं जिसका मूल तो भारतीय दर्शन में ही है किन्तु उसकी नवीन संरचना तात्कालिक समाज की अपनी चैतन्यता में विद्यमान थी।

धार्मिक एवं सामाजिक रूढ़ियों की रुग्णता से मुक्ति के आग्रही संत कवियों ने जैसे भारतीय समाज में नवीन चेतना का संचार किया। इन कवियों ने अपनी रचनाओं में शासक वर्ग की सत्ता के विरुद्ध अपनी लेखनी के स्थान पर परमपिता परमेश्वर की सत्ता के प्रति अपनी अभिव्यक्ति को अधिक प्रश्रय दिया। वैसे भी 'संतन को कहा सीकरी सो काम' की विचारणा पर चलने वाले संत कवियों ने गृहस्थ जीवन जीते हुए भी अपनी इच्छाओं और आकांक्षाओं का विसर्जन कर दिया था। वे यथार्थ जगत में रहते हुए भी मोह-माया के बन्धनों से मुक्त कम संसाधनों में भी संतुष्ट थे। उन्होंने अपनी आत्मा का परमात्मा के प्रति समर्पण कर दिया था।

वैश्वीकरण के इस दौर में जहाँ सम्पूर्ण विश्व में हिंसा और अशांति का आधिपत्य है; व्यक्ति समाज के मध्य भावनात्मक सम्बन्ध क्षीण होते जा रहे हैं ऐसे में भारतीय समाज और विश्व को उन महान संदेशों की आवश्यकता है जिनसे मनुष्यता और नैतिक मूल्यों को बचाया जा सके। तकनीकी और विकास की अंधी दौड़ में मनुष्य का जीवन यांत्रिक होता जा रहा है। तार्किकता ने आस्था और भक्ति पर प्रश्न उठाने आरम्भ कर दिए हैं। बौद्धिक चेतना अपने चरम पर पहुँचकर संवेदनाओं को कटघरे में खड़ा करने का यत्न कर रही है। वहीं दूसरी ओर दलित और वंचित समाज की वर्तमान स्थिति अत्यन्त विकट बनी हुई है। ऐसे में गुरुनानक देव की वाणी और उनके विचार न केवल भारतीय समाज में चेतना का संचार करते दिखाई देते हैं बल्कि आत्मबल भी प्रदान करती है।

गुरु नानक देव के विचारों की आधारभूमि भारतीय जीवन चेतना से निर्मित हुई। भारत की आध्यामिक चेतना की दार्शनिक विरासत को आगे बढ़ाते हुए गुरु नानक ने भारतीय जीवन मूल्यों को संरक्षित और प्रचारित करने का महती कार्य किया। गुरबचन सिंह तालिब के अनुसार - 'गुरु नानक उस पंथ का प्रचार कर रहे थे जिसका जन्म और विकास देश की मिट्टी में हुआ, जो मानो चिरन्तन

सत्य की दैविक झाँकी के रूप में भारतीय मानस के सामने प्रकट हुआ। इसके समस्त अनिवार्य आधारतत्व तथा विश्वास ऐसे हैं जो सामान्य रूप से उस औसत हिन्दू को मालूम होंगे जिसका विकास अपनी आध्यात्मिक पम्परा को थोड़ा-बहुत समझते हुए हुआ होगा; तथा जिसने अपने ही लोगों के वातावरण से अपने आध्यात्मिक, आत्मिक तथा नैतिक विचारों को प्राप्त किया होगा, न कि आधुनिक शिक्षा से प्राप्त युक्तिपरक (rationalised) धारणाओं से जो विभिन्न स्तरीय बुद्धि वाले लोगों में यथानुसार बंटो रहती है।"[1]

शायद इसी कारण ही भाई गुरुदास जी ने गुरु नानक को अवतारी पुरुष कहा है। जैसे भारतीय पौराणिक गाथाओं में ईश्वर के सगुण रूप की अभिव्यंजना करते हुए कवियों ने उनके अवतारी रूप का वर्णन किया है। उसी तरह भाई गुरुदास ने अपनी 'वार' में नानक को अवतारी प्रभु मानते हुए कहा है –

सुणी पुकार दातार प्रभु गुरु नानक जग माँहि पठाया।
चरन धोई रहिरासि करि चरनामृतु सिक्खा पीलाया।।
x x x x x
कलिजुग बाबे नारिआ, सतिनाम पढ मंत्र सुणाया।
कलि तारण गुरु नानक आया।।[2]

वास्तव में गुरु नानक देव केवल संत कवि नहीं थे। व अपने समय के समाज की कुरीतियों और रूढ़-परम्पराओं के विरुद्ध संघर्ष भी करते थे। इतना ही नहीं तात्कालिक शासक वर्ग की अनीतियों के विरुद्ध वे स्पष्ट रूप से अपने विचार रखा करते थे। इसीलिए वे अपने समय के क्रांतिकारी कवि कहे जाते थे। उनकी स्पष्टवादी विचारणा के कारण तत्कालीन शासक वर्ग भी उनके रुष्ट हो गया था। वे तत्कालीन व्यवस्था पर न केवल कटु प्रहार करते वरन् उसका यथार्थ वर्णन भी करते हैं। वे कहते हैं –

कलि काती राजे कासाई
धरम पंख करि उडरिआ
कूड़ु अमावस सचु, चन्द्रमा
दीसे नाहीं कह चड़िआ।[3]

अर्थात् कलियुग तो एक छुरी के समान है जिसमें राजा कसाई बन चुका है। धर्म पंख लगाकर समाज से उड़कर चला गया है। झूठ और असत्य की काली भयावह अमावस रात चारों ओर है लेकिन सत्य का चन्द्रमा कहीं भी चढ़ता हुआ दिखाई नहीं दे रहा।

वे हिन्दू समाज में संघर्ष की भावना को जागृत करने के लिए तत्पर थे। अत्याचार के विरुद्ध संघर्ष न करने और पलायनवादी सोच अपनाने के कारण हिन्दुओं पर आक्रमणकारियों के अत्याचार निरन्तर बढ़ रहे थे। अपनी अहिंसावादी नीति के कारण भारतीय संघर्ष करने के स्थान पर जुल्म सहने के आदि हो गए थे –

रत्त पीने राजे सिरे उपरि रखी अहि ऐवै जापै भाऊ।
लंबु पापु दुइ राजा महता कूडु होइआ सिरकार।
कामु नबु सदि पूछिए वहि वहि करे बीचारु
अंधी रयति गियान विहूंनी माहि भरे मुरदास।[4]

स्वामी दयानन्द सरस्वती ने 'सत्यार्थ प्रकाश' में लिखा – 'यह सच है कि जिस समय नानक जी पंजाब में हुए थे, उस समय पंजाब संस्कृत विद्या से सर्वथा रहित, मुसलमानों से पीड़ित था। उस समय उन्होंने लोगों को बचाया।'[5] गुरु नानक ने अपनी वाणी में हिन्दू और मुस्लिम संस्कृति के मध्य संघर्ष की प्रतिक्रियाओं को अनेक स्थलों पर अभिव्यक्ति दी गई है। मुगल बाबर भारत पर आक्रमण कर भारतीय स्त्रियों और बच्चों पर अत्याचार करने लगा तब वे आक्रोश व्यक्त करते हुए लिखते हैं –

'पाप की जंज लै काबुलहु धाइआ।
जोरी मंगे दान ले लालो।
सरमु धरमु दुइ छय खलोए कूडू,
फिरे परधानु ए लालो
काजी ब्राह्मण की गल थकी,
अगद पडै सैतानु वै लालो।'[6]

अर्थात् 'हे लालो। वह (बाबर) पाप की बारात लेकर काबुल से दौड़ा आया है और सबसे बलपूर्वक धान ले रहा है। शर्म और धर्म दोनों छिपकर खड़े हो गये हैं प्रधानता मिथ्या को प्राप्त हो गई है। काजियों और ब्राह्मणों को कोई नहीं पूछता। विवाह के मंत्र शैतान पड़ते हैं।'

लेकिन गुरु नानक सामाजिक समरसता और प्रेम के महान उपासक थे। वे संवाद पर बल देते थे। समकालीन समस्याओं के आलोक में गुरु नानक की वाणी को रखा जाए तो उनकी वाणी काविचार मनोवैज्ञानिक रूप से समाज की चिन्ताओं को दूर करता है। वह समय विभिन्न जातियों और सम्प्रदायों का समय था। ऐसे में प्रेम भी स्वत: ही प्राप्त नहीं किया जा सकता था। नानक कहते हैं –

जउ तउ प्रेम खेलण का चाउ।
सिरु धरि तली गली मेरी आउ।[7]

अर्थात् यदि तुम वास्तव में प्रेम का खेल खेलना चाहते हो, तो अपनी हथेली पर अपना सर रखकर आओ, तभी तुम मेरे सत्य के मार्ग पर अपना पैर बढ़ा सकते हो।

गुरु नानक देव ने भी उस परमसत्ता को मूल चेतना स्वीकार किया है। वे इस परमसत्ता को ही 'सत्य' मानते हैं। उनके अनुसार इस मूल चेतना से इतर कुछ भी नहीं है। सब कुछ इसी चेतना का अंश है। यथा –

आपीनै आपु साजिओ आपीनै रचिओ नाउ।
दुयी कुदरति साजीऐ करि आसणु डिठो चाउ।
दाता करता आपि तूं तुसि देवहि करहि पसाउ।
तू जाणोई सभसै दे लैसहि जिंदु कवाउ।
करि आसण डिठो चाउ।[8]

उनका मत है कि इस परम चेतना का न तो कोई आरम्भ है और न ही अंत। इसी रचना किसी अन्य ने नहीं की बल्कि यह स्वयं से ही निर्मित है। यह तो स्वयं ही ज्योति-पुंज है, परम देव है। जो अपने जीवन में इस परम-देव को पहचान लेता है वह भी ज्योर्तिमान होकर देव पद को प्राप्त हो जाता है। इस परमसत्ता का कोई रूप नहीं है। यह निराकार, अनुभवातीत परम देव सबको जीवन देता है और सभी इस सत्ता में वास करते हैं।

दीवा बलै अंधेरा जाइ।
वेद पाठ मति पापा खाइ।
उगवै सुरु न जापै चंदु।
जह गिआन प्कासु अगिआनु मिटंतु।।
वेद पाठ संसार की कार।
पढ़ि पढ़ि पंडित करहिं वीचार।
बिनु बूझे सभ होई खुआर।
नानक गुरमुखि उतरसि पार।[9]

जैसे दीपक के जलने पर अंधकार स्वयं ही नष्ट हो जाता है। वेद पाठ पाप वाली बुद्धि को खा जाता है। सूर्य के उदय होने पर, चन्द्रमा दिखाई नहीं देता, जहाँ ज्ञान का प्रकाश होता है वहाँ अज्ञान स्वत: ही मिट जाता है। अब तो वेद पाठ सांसारिक व्यवहार बन गया है। इन्हें पढ़कर पंडित विचार तो करते हैं किन्तु उस समझते नहीं। बिना समझे वे अपने ज्ञान को भी व्यर्थ करते हैं। नानक कहते हैं कि गुरु द्वारा ही इसके पार उतरा जा सकता है।

मानव सभ्यता के विकास के साथ-साथ मनुष्य की धार्मिक चेतना समय-समय पर अपने अस्तित्व का आभास कराती है। वर्तमान समय में मनुष्य सत्ता की अंधेरी गलियों में इस तरह खो गया है कि उसे यदि जीवन में शांति और आनन्द का अनुभव चाहिए तो उसे स्वयं को परमसत्ता के प्रति समर्पित करना ही होगा। आधुनिक जीवन में संघर्ष और हिंसा की चुनौतियों पर आध्यात्मिकता द्वारा ही विजय प्राप्त की जा सकती है। इसीलिए वे मनुष्य की आंतरिक शुचिता पर बल देते हैं। आंतरिक पावित्र्य के कारण मनुष्य का मन विभिन्न हिंसात्मक विचारों से दूर होकर स्वयं को जानता है। तभी तो नानक ने कहा कि जो अपने अस्तित्व को जान लें वही ईश्वर रूपी हीरे को भी प्राप्त कर सकता हैं –

आपु वीचारै सु परखे हीरा।
एक दष्टि तारेगुर पूरा
गुरु मानै मन ते मनु घीरा
ऐसा साहु सराफी करै।
साचि नदरि एक लिव तरै।। रहाऊ।।
पूंजी नामु निरंजन सारु।
निरमलु साचिरता पैकारु
सिफति सहज घरि गुरु करताऊ
आसा मनसा सबदि जलाए।
राम नराइणु कहै कहाए।[10]

वास्तव में आधुनिक जीवन में भी बहुसंख्यक आर अलसंख्यक वगों के मध्य संघर्ष दिखाई दे रहा है। समाज के लोगों को सुपीरियरिटी और इंटीरियरिज़्म जैसी जटिल मानसिक व्याधियों ने घेर लिया है। इन व्याधियों से गुरु नानक देव ने सुल्तानपुर लोधी के साथ वियाना नदी की घटना के माध्यम से 'न हिन्दू न मुस्लिम' कहकर बहुत पहले पार पाने का संदेश दिया था। इस संदेश में प्रत्येक व्यक्ति को समान अधिकारों का विचार परिलक्षित होता है। गुरु नानक का मत रहा कि मनुष्य या तो गुरुमुखी (भगवान का प्रेमी) होता है फिर मनमुखी (स्वयं का अभिमानी)। वे मानते थे कि गुरुमुखी व्यक्ति ही भगवान को समर्पित हो पाता है और मानवता के रास्ते पर चल सकता है। आधुनिक युग की आपाधापी में मनुष्य जिस प्रकार मनमुखी होने की ओर अग्रसर है ऐसे में गुरु नानक के आदर्श विचार

नानक-दर्शन के रूप में विश्व समाज को गुरमुखी होने के लिए प्रेरित करते हैं।

वर्तमान समाज के लिए आर्थिक सुदृढ़ता मानवीय मूल्यों से बढ़कर हो गई है। बाजार की नीतियों ने आधुनिक मनुष्य को अपनी भुजाओं में कैद कर लिया है। ऐसे में मानवीय मूल्यों के ह्रास और हीन प्रवृत्तियों के प्रति नानक मनुष्य को सचेत करते हुए कहते हैं कि हरि रूपी व्यापारी से बड़ा कौन हो सकता है। उसका नाम जपने से ही इन सारी बाधाओं से मुक्ति मिल सकती है –

वणजु करहु वणजारिहो वखरु लेहु सभालि।
तैसी वसतु विसाहीऐ जैसी निबहै नालि।
अगै साहु सुजाणु है ऐसी वसतु सभालि।
भाई रे रामु कहहु चितु लाइ।

X X X X

खोटे जाति न पति है खोटि न सीझसि कोइ।
खोटे खोटु कमावणा आइ गइआ पति खोइ।
नानक मनु समझाईऐ गुर कै सबदि सालाह।
रामनाम रंगि रतिआ भारु न भरमु तिनाह।
हरि जपि लाहा अगला निरभउ हरि मन माह।।[11]

आधुनिक समय में राजनीति और बाज़ार की की वितण्डावादी स्थितियों ने मनुष्य की सांस्कृतिक चेतना को क्षीण कर दिया है। मनुष्य का बाह्य और आंतरिक विचारों में कोई सामंजस्य नहीं है। नानक ऐसे मनुष्य समाज को सद्मार्ग पर चलने की प्रेरणा देते हैं। वे मनुष्य को उत्तम विचारों और कर्मों वाले उत्कृष्ट मार्ग के निर्माण के लिए प्रेरित करते हैं जिससे यह सम्पूर्ण विश्व मनुष्य के रहने योग्य हो सके –

अछल छलाई नह छलै नह घाउ कटारा करि सकै।
जिउ साहिबु राखै तिउ रहै इसु लोभी का जिउ टलपलै।
बिनु तेल दीवा किउ जलै।
पोथी पुराण कमाईऐ।
भउ वटी इतु तनि पाईऐ।
सचु बूझणु आणि जलाईऐ।
इहु तेलु दीवा इउ जलै।
करि चानणु साहिबु तउ मिलै।
इतु तनि लागै बाणीआ।
सुखु होवै सेव कमाणीआ।
सब दुनीआ आवण जाणीआ।
बिचि दुनिआ सेव कमाईऐ।
ता दरगह बैसणु पाईऐ।
कहु नानक बांह लुडाईऐ।[12]

वास्तव में गुरु नानक के विचारों के केन्द्रिकता में मनुष्य और मनुष्तया विद्यमान हैं। मुगल आतताईयों से संघर्ष की प्रेरणा देने के साथ-साथ हिन्दू और मुसलमानों के बीच प्रेम की विराटता का दृष्टिबोध गुरु नानक के विचारों में सर्वत्र दिखाई देता है। नानक क विचारों के आलोक से ही समस्त विश्व में एक अलौकिक प्रकाश विद्यमान हुआ। भाई गरुदास जी सही ही कहा –

सतिगुर नानक प्रगटिआ मिटी धुंध जग चानण होआ।
जिउँ कर सूरज निकलिआ तारे छपे अंधेर पलीआ।।[13]

संदर्भ

1. गुरुबचन सिंह तालिब, 'गुरु नानक और उनका पंथ', गुरु नानक : जीवनी, युग एवं शिक्षाएं, प्रधान संपादक गुरमुख निहालसिंह, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, पृष्ठ 66
2. वारा भाई गुरु दास जी, वार 1, पउडी 23
3. माझ दी वार, पृष्ठ 145
4. आसा दी वार 115, पृष्ठ 469
5. स्वामी दयानन्द सरस्वती, सत्यार्थ प्रकाश, आर्य प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ठ 348
6. नानक वाणी, जयराम मिश्र, मित्र प्रकाशन, इलाहाबाद, पृष्ठ 140
7. आदि ग्रंथ, पृष्ठ 1412
8. वार आसा, पृष्ठ 1
9. नानक वाणी, जयराम मिश्र, मित्र प्रकाशन, इलाहाबाद, पृष्ठ 471
10. नानक वाणी, जयराम मिश्र, मित्र प्रकाशन, इलाहाबाद, पृष्ठ 284
11. नानक वाणी, जयराम मिश्र, मित्र प्रकाशन, इलाहाबाद, पृष्ठ 123
12. नानक वाणी, जयराम मिश्र, मित्र पकाशन, इलाहाबाद, पृष्ठ 130
13. वारा भाई गुरुदास जी, वार 1, पउडी 27

भारतीय संत, श्री गुरुनानक देव और उनके सामाजिक, सांस्कृतिक सरोकार

*डॉ. अरूण घोगरे

* सहयोगी प्राध्यापक एवं हिन्दी विभागाध्यक्ष, बी. एस. पाटील महा., परतवाड़ा

प्रस्तावना :

ग्यारहवीं शताब्दी से ही भारत पर विदेशी शासकों की काली छाया मँडराने लगी। इससे हमारी सांस्कृतिक मान्यताओं को गहरा धक्का लगा। आक्रमणकारी प्रायः लुटेरे और अत्याचारी होते थे। वे यहाँ की सम्पत्ति लूटते, लोगों को सताते और उन्हें पकड़कर दास बनाते थे। पंद्रहवी शताब्दी के करीब मुगलों का शासन देश में स्थापित हो गया। मुगलों ने हमारी संस्कृति, धर्म और स्त्रियों पर अत्याचार कर इन्हें भ्रष्ट कर दिया। भारत की जनता के मन में निराशा व्याप्त थी। ऐसे विकट समय में अनेक संतों, समाजसुधारकों, मनीषियों ने अपने विचारों का प्रचार एवं प्रसार किया। इनकी दूरदर्शिता के कारण उन्होंने ऐसी ही भाषा को अपनी भाव–धारा के प्रचार का साधन बनाया था जो सारे देश में बोली और समझी जाती थी। यही कारण था कि उत्तर प्रदेश के कबीर, पंजाब के नानक, सिन्ध के सचल, कश्मीर के लल्लद्यद, बंगाल के बाउल, असम के शंकरदेव, महाराष्ट्र के तुकाराम और ज्ञानेश्वर तथा गुजरात के अखा एवं दयाराम तथा दक्षिण के वेमना, तिरुवल्लुवर अक्कादेवी और आलवार आदि संतों ने जिस सांस्कृतिक एकता को आधार बनाकर अपने काव्य की रचना की थी। इनके संदेश में कहीं भी भाषागत विघटन का स्वर नहीं था, बल्कि उत्तर से दक्षिण तक पूर्व से पश्चिम तक समान रूप से समादृत होती थी। इसी संदर्भ में गुरुनानक देव जी का प्रदेय विशेष उल्लेखनीय है।

गुरुनानक जी ने धर्म, संस्कृति और स्त्रियों पर हो रहे अत्याचारों का घोर विरोध किया। वे अंत तक इन तीनों की स्थापना पर बल देते रहे। धार्मिक आडंबरों का भी जोरदार खंडन किया। वे भारतीय समाज का उत्थान सत्य, अहिंसा और परमोधर्म के माध्यम से करना चाहते थे। इन्हें निर्गुण काव्यधारा का संत माना जाता है परंतु संगुण ब्रह्म के अस्तित्व का भी खंडन वे नहीं करते। गुरुनानक के विचारों का प्रतिपादन करते हुए श्री जयराम मिश्र लिखते हैं – ''गुरुनानक देव ने निर्गुण ब्रह्म के निरूपण में निषेधात्मक शैली का सहारा लिया है और सगुण ब्रह्म के प्रतिपादन में विधि शैली का।''[1]

उन्होंने निर्गुण ब्रह्म का प्रतिपादन बड़ी ही रोचक और मौलिक शैली में किया है –

''अरबद नरबद धुँधूकारा ।....
वेद कतेब न सिंमृत सासत ।

पाठ पुराण उदै नहीं आसत ।''[2]

इसी तरह गुरुनानक देव ने ईश्वर के सगुण स्वरूप का विराट चित्रण किया है –

''गगनमैं थालु रवि चंदु दीपक बने तारिका मंडल जनक मोती ।

धूपु मलआनलो, पवणु चवरो करै, सगत बनराइ फूलँत जोती ।''[3]

ईश्वर के निर्गुण और सगुण स्वरूपों के अतिरिक्त गुरुनानक देव ने उनके उभय स्वरूपों को माना है। उनके अनुसार ब्रह्म निर्गुण भी है और सगुण भी। यही मत जयराम मिश्र का भी है – ''वह निर्गुण व सगुण दोनों ही एक साथ है।''[4] गुरुनानक देव कहते हैं – ''अविगतो निरमाइलु उपजे निरगुण ते सगुण थीआ।''[5] वे धार्मिक आडंबर के घोर विरोधक थे। उनका मानना था कि मूर्ति पूजा व्यर्थ है। जो अंधे, गँवार, गूँगे और मूर्ख हैं, वे ही पत्थर पूजा करते हैं। जल में डूबने वाला पत्थर हमें सागर में डूबने से कैसे बचा सकता है –

''अंधे गूंगे अंध अंधारें, पत्थर ले पूजहि मुगध गंवारा,

ओहि जा आपि डुबे तुम कहा तारण हार ।''[6]

मुगलकाल में नारी पर हो रहे अत्याचार और पुरुष प्रधान समाज की प्रताड़ना की वे निंदा करते हुए कहते हैं –

''स्त्रियाँ मूर्ख और पुरुष शिकारी – जालिम हो गए हैं ।''[7]

इस संदर्भ की पुष्टि करते हुए जयराम मिश्र लिखते हैं – ''गुरुनानक देव ने हिन्दू जाति के उपेक्षित नारी समाज को गौरव के आसन पर बिठाने की चेष्टा की।''[8]

मुगलकाल में मुसलमान ही अत्याचारी नहीं थे वरन् सवर्ण हिन्दुओं का अत्याचार उससे भी अधिक था। उच्च वर्ण के लोगों ने शूद्रों को अछूत मान लिया और उन्हें उनके अधिकारों से वंचित कर दिया। उनके मंदिर प्रवेश पर रोक लगा दी गई। शूद्रों की परछाई तक से सवर्ण अपवित्र हो जाते थे। इस बात को भी गुरुनानक देव ने उजागर किया है –

''जाणहु जोति न पूछहु जाती आगै जाति न हे ।''[9]

पुरातनकाल से ही कुछ ऐसे लोग हैं जो धर्म को अपनी स्वार्थ सिद्धि का साधन मानते हैं। धर्म का प्रदर्शन मात्र करते हैं, आचरण नहीं। ऐसे लोगों की गुरुनानक देव घोर निंदा करते हैं –

''पड़ि पुसतक संधिआ बादं । सिल पूजसि बगुल समाधं ।।

मुखि झूठ विभूखण सारं ।''[10]

तत्कालीन प्रशासनिक व्यवस्था में व्याप्त भ्रष्टाचार का विरोध करते हुए वे कहते हैं कि कलयुग में लोग कुत्ते समान हो गए हैं। रिश्वत लेकर अपनी ईमानदारी का डंका पीटते हैं। ऐसे बेशर्मों का पर्दाफाश करते हुए वे कहते हैं –

''राजे सीह मुकदम कुते। जाइ जगाइन बैठे सुते।
चाकर नहदा पाइन्हि घाउ। रितु पितु कुतिहो चटि जाहु।
जिथै जीआं होसी सार। नकीं बढ़ीं लाइत बार।''[11]

निष्कर्ष

अंततः कहा जा सकता है कि गुरुनानक देव संत, समाजसुधारक, महान देशभक्त, धर्म प्रवर्तक, आडंबर, अत्याचार और भ्रष्टाचार के विरोधक, वैराग्य और भक्ति की प्रतिमूर्ति तथा

तत्कालीन युग–पुरुष थे। उन्होंने सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक राजनीतिक, सांस्कृतिक और मनोवैज्ञानिक पहलुओं का यथार्थ की कसौटी पर अवलोकन किया। आवश्यकता पड़ने पर उनका प्रचंड विरोध किया, जहाँ सुधार की गुंजाइश थी, वहाँ निर्देश–उपदेश भी दिए। उनके इन महान कार्यों का प्रभाव उत्तर भारत पर ही नहीं वरन् आज पूरा विश्व उनकी दूरदर्शिता का कायल है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. नानक वाणी – जयराम मिश्र – पृ. 47
2. नानक वाणी – मारू सोलहे 15
3. नानक वाणी – घनासरी, सबद 9
4. नानक वाणी – जयराम मिश्र – पृ. 49
5. नानक वाणी – रामकली, सिध गोसटि, पउड़ी 24
6. नानक वाणी – पृष्ठ 125
7. सारंग की वार – सलोक – 22
8. नानक वाणी – जयराम मिश्र – पृ. 9
9. रागु आसा, महला 1, सबद 3
10. नानक वाणी – आसा की वार, सलोक 28
11. नानक वाणी – मरवार की वार, सलोक 13